बिमल मित्र

खण्ड : 1

यह नर-देह
बह जाता जल में ·
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह
उड़ाता पवन इसे है

यह नारी
इसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में···

—बिल्वमंगल
(गिरीशचंद्र घोष)

प्रियवर नथमल केडिया

को

सस्नेह

आलाप

दुनिया के तमाम लोगों के जीवन में एक ऐसा वक्त आता है, जब अपने पूरे अतीत की परिक्रमा करने की इच्छा होती है। आदमी को अतीत की तभी याद आती है जब उसका भविष्य छोटा होने लगता है। कम उम्र में आदमी के लिए अतीत कोई अहमियत नहीं रखता। उस समय उसके लिए भविष्य ही सब कुछ होता है। तब उस कम उम्र के दौरान वह सब कुछ की कामना करता है—सुख-समृद्धि-सौभाग्य की कामना करता है। उसकी इन दुर्लभ कामनाओं के बीच एक शक्तिशाली प्रत्याशा जुड़ी रहती है—ऐसी प्रत्याशा जो उसे तमाम बाधा-विघ्नों को पार करने की सीख देती है, जो उसे बाधा-विघ्नों की परवाह न करने की तालीम देती है। लेकिन जैसे ही आधी जिन्दगी गुजर जाती है, प्रत्यय का आगमन होता है। यही वजह है कि दुनिया के तमाम लोगों का जीवन प्रत्याशा और प्रत्यय का समन्वय है। प्रत्याशा लांघकर प्रत्यय में पहुंचने पर ही मनुष्य को परित्राण मिलता है।

ये बातें हैं निवारण चाचा की। छुटपन में निवारण चाचा संदीप को बहुत प्यार करते थे। कहते—अभी तुम इन बातों का अर्थ नहीं समझ सकोगे बेटा। जब मेरी उम्र के हो जाओगे तो समझोगे। अब वह खुद भी बूढ़ा हो चुका है। और-और लोगों की निगाह में बूढ़ा ही है, जबकि अपनी दृष्टि में वह अब भी छोटा ही है।

निवारण चाचा इसके बाद कहते, "पहले तुम चालीस साल के हो जाओ तब इस पर गौर करना जो मैं अभी कह रहा हूं। अभी तुम लोगों की सिर्फ उम्मीद करने की उम्र है, लिहाजा अभी सिर्फ उम्मीद करते रहो—हां, सिर्फ उम्मीद करते रहो, और कुछ भी नहीं—"

सच, तब कितने कुछ की उम्मीद की थी संदीप ने। उसे उम्मीद थी कि एक दिन वह बेड़ा पोता स्कूल से निकल कलकत्ता के कॉलिज में पढ़ने जाएगा। कॉलिज में बी॰ ए॰ की परीक्षा देगा। और उसके बाद? उसके बाद वह वकील बनेगा। कलकत्ता की कचहरी में जाकर वकालत करेगा। गरीबों की भलाई करेगा।

अब यह सोचकर उसे हैरानी होती है कि इतनी-इतनी चीजों के रहने के बावजूद उसने वकील ही बनना क्यों चाहा था? हो सकता है वकील का लिबास देखकर। डाक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर या किसी अन्य पेशे के आदमी का कोई बंधा-बंधाया लिबास नहीं होता। लेकिन वकीलों के शरीर पर एक काला कोट,—— है। बेड़ा पोता के चटर्जी-परिवार का छोटा लड़का वकील था। हर रोज

स्टेशन से गाड़ी पकड़ काला कोट चढ़ाए कलकत्ता जाता। रात काफी गुजर जाने के बाद घर लौटता। संदीप उस चटर्जी बाबू की तरफ गौर से ताकता रहता। वह कब उस तरह का काला कोट पहन डेली पैसेंजरी करेगा! बेड़ापोता के तमाम आदमी उसकी ओर गौर से ताकेंगे! आश्चर्य, कितनी अजीब-अजीब आकांक्षाएं रहती हैं आदमी के छुटपन में!

संदीप सोचने लगा, मनुष्य का छुटपन ही शायद सबसे अधिक सुख का समय होता है। उस समय दुनिया के लोग कितने अच्छे लगते थे! तब संदीप के हिसाब से वेड़ापोता ही दुनिया था। और कलकला? उसने कलकत्ता का सिर्फ नाम ही सुना था। कलकत्ता जाने का सपना देखा करता। वह कभी सशरीर वहां नहीं गया था। जबकि वेड़ापोता से कलकत्ता था ही कितना दूर! ट्रेन पर सवार हो दो घंटे के दरमियान कलकत्ता पहुंचा जा सकता था। सिर्फ बारह आना खर्च करने से ही कलकत्ता पहुंच सकता था। लेकिन उस वक्त उसे बारह आना पैसा देता ही कौन?

मां चटर्जी परिवार के घर में काम करती। चटर्जी बाबुओं का कितना बड़ा मकान था? कितने आदमी, कितने नायब और गुमाश्ते! इसी चटर्जी परिवार का छोटा लड़का काशीनाथ बाबू वकील था। उसकी बैठक में शाम के वक्त कितने मोवक्किल आते! दूर से ही उस ओर गौर से देखता रहता संदीप। सोचता, किसी दिन वह काशीनाथ बाबू की तरह वकील बन जाए तो उसका जीवन सार्थक हो जाए।

कहां वकील और कहां बैंक का मैनेजर!

भाग्य की कितनी बड़ी विडंबना है यह!

संदीप ने अलीपुर सेंट्रल जेल की ओर मुड़कर देखा। उसने वहां कितने साल गुजारे हैं?

उसे कुछ भी याद नहीं था। कब वह वहां घुसा और कितने दिन, कितने बरसों के बाद ज़ेलखाने से बाहर निकला, इसका हिसाब करने लगे तो हैरान हो जाएगा। आज माना वह जेल से छूटकर चला आया है लेकिन वह करेगा ही क्या? उसे अपनी पूरी ज़िन्दगी जेल में बितानी पड़ती तो भी उसे कोई एतराज न था। आज छुटकारा पाने पर वह करेगा ही क्या? वह कहां जाएगा? कहां जाकर टिकेगा?

ट्राम-रास्ते पर तब बहुत सारी गाड़ियां, बसें और हांफती हुई ट्रामें आ-जा रही थीं। पहले सड़क पर इतनी गाड़ियों की भीड़ नहीं हुआ करती थी। इन कई बरसों के दरमियान कलकत्ता में इतना बदलाव आ गया है?

उसी सड़क पर वह चंद लमहों तक चुपचाप खड़ा रहा।

कहीं से किसी ने पुकारा, "ऐ संदीप!"

संदीप ने आवाज की ओर मुखातिब होकर देखा। यहां इतने बरसों के बाद किसने उसका नाम लेकर पुकारा? किसने उसे पहचान लिया?

जिस भलेमानस ने पुकारा था, उसने करीब आकर कहा, "ओह सॉरी! गलती हो गई। मैंने संदीप लाहिड़ी को पुकारा था, अन्यथा न लें।"

संदीप ने कहा, "मैं भी तो संदीप हूं—संदीप लाहिड़ी।"

भलेमानस ने कहा, "नहीं, वह संदीप हम लोगों के बंगवासी कॉलेज के इवनिंग सेक्शन का फ्रेंड था।"

संदीप बोला, "मैंने भी बंगवासी कॉलेज के इवनिंग सेक्शन में पढ़कर बी० ए० पास किया है।"

"हो सकता है, अन्यथा न लें।"

वह भलामानस चला गया। आश्चर्य ! संदीप को भी आश्चर्य लगा था। नाम, पदवी, कॉलेज, सेक्शन सब-कुछ एक है। ऐसा आमतौर पर नहीं होता। लेकिन संदीप के जीवन मे ऐसी अजीब-अजीब घटनाएं घटित हुई हैं जिनके बारे में कहने से किसी को विश्वास नहीं होगा और यह जो इस सेंट्रल जेल से वह निकलकर आया है, उसके अन्दर ही क्या कोई कम आश्चर्यजनक घटनाएं घटी हैं ? जेलसुपर खुद आकर बीच-बीच में पूछता, "आप कैसे हैं मिस्टर लाहिड़ी ?"

जेल के एक कैदी के प्रति जेल का सुपर इतना सम्मान क्यों प्रदर्शित करता था ? फिर जेलसुपर क्या तमाम घटनाओं से अवगत था ?

कौन जाने ! संदीप लाहिड़ी लेकिन शुरू मे ही जेल के तमाम कानूनों का पालन करता रहा था। और-और कैदियों के मानिन्द संदीप भी साधारण कैदी के अलावा और कुछ नहीं था। उसे विशेष रियायत दी जाए, इसका दावा उसने कभी नहीं किया था। उसे जो कुछ खाने को दिया जाता, बगैर किसी प्रकार की कोई आपत्ति किए खा लेता। उसे जो काम करने को दिया जाता, सिर झुकाकर वही काम करता। जेलखाने में ऐसा आज्ञाकारी कैदी शायद कभी किसी ने नहीं देखा था।

अब वह क्या ट्राम पर बैठ जाए ? नहीं, पैदल चलना जितनी दूर तक संभव हो सकेगा, वह पैदल ही चलेगा। रुपया अलबत्ता उसकी जेब में है। बहुत सारे रुपये हैं। शायद सैकड़ों या हजारों रुपये। जेल के दफ्तर के नियम के अनुसार काम करने की बाबत जितने रुपये उसने प्रति माह की दर से कमाया है, वे रुपये इतने सालों तक उसके नाम से जमा होते रहे थे। जेल की अवधि समाप्त होने के बाद तमाम रुपये उसे दे दिए गए थे। चलने के दौरान अब भी वह अपनी जेब में नोटों की गड्डियों का अनुभव कर पा रहा है। संदीप को लगा, नोटों की ये गड्डियां नोट नहीं बल्कि कांटों की गड्डियां हैं। रुपये मानों काटे बनकर उसके जिस्म में चुभ रहे हों।

एक मकान की बगल मे जाने के दौरान एक अजीब चीज पर उसकी नज़र पड़ी। मकान की चौड़ी और लम्बी दीवार पर कालतोर से कुछ लिखा हुआ है।

संदीप वहां खड़ा होकर दीवार पर की लिखावट पढ़ने लगा। लिखा हुआ है :

संघर्ष की चोटों से निरंकुश शासकों के
अर्द्ध फासीवादी संत्रा के खड्ग को भोथरा कर दो॥

उसे लगा, कि ये शब्द हाल ही में लिखे गए हैं। अब भी कोलतार का रंग अच्छी तरह नहीं सूखा है। संदीप ने उस मकान के ऊपर से नीचे तक के हिस्से को ध्यान से देखा। अहा ! दीवार पर नया कीमती रंग चढ़ाया गया है। इतना खूबसूरत मकान ! लगता है हाल ही में काफी पैसा खर्च कर बनवाया गया है। इस तरह कोलतार से लिखकर किन लोगों ने इसे बर्बाद कर दिया ? उस लिखावट के

नीचे और भी बहुत सारे शब्द छोटे-छोटे अक्षरों में लिखे हुए हैं। उन शब्दों की ओर देखने पर समझ में नहीं आया कि उनका अर्थ क्या है। सिर्फ उसी मकान की नहीं आसपास के तमाम मकानों की यही हालत है। संदीप को लगा, पहले किसी मकान की दीवार पर यह सब लिखा हुआ नहीं रहता था। इन कई सालों के दरमियान एकाएक कौन निरंकुश शासक बनकर बैठ गया? कौन-सी पार्टी?

संदीप को याद आया, उन लोगों के बेड़ापोता में एक बार निवारण चाचा वगैरह ने मिलकर गिरीशचन्द्र घोष के 'विल्वमंगल' यात्रा का अभिनय किया था। उसके पहले हर दीवार पर हाथ से लिखे गए इश्तहार चिपका दिए गए थे। एक आने का टिकट था। बेड़ापोता के चटर्जी परिवार के अभिभावक को यात्रा-थियेटर करने का बड़ा ही शौक था। चटर्जी भवन में सरस्वती पूजा, दुर्गा पूजा मनाई जाती थी। उस उपलक्ष्य पर चटर्जी परिवार के सदस्य चन्दे के रूप में मोटी रकम देते थे। हर दीवार पर हाथ से लिखे हुए पोस्टर टांग दिए जाते। आगामी दुर्गा पूजा के महाअष्टमी के दिन बेड़ापोता यात्रा पार्टी का अभिनय होगा। स्थान: स्कूल भवन का मैदान। टिकट का मूल्य: हर आदमी एक आना। नाटक: 'विल्वमंगल'।

याद है, चटर्जी साहब का लड़का काशीनाथ चिन्तामणि की भूमिका में उतरा था और निवारण चाचा विल्वमंगल की भूमिका में। वह अभिनय अब भी संदीप को याद है। एक दृश्य में 'थाको' और 'चिन्तामणि' ने प्रवेश किया। चिन्तामणि ने पूछा, "तुम कैसे नदी तैरकर आए?"

विल्वमंगल वेशधारी निवारण चाचा ने कहा, "लकड़ी के इस कुंदे के सहारे।"

चिन्तामणि वेशधारी काशीनाथ ने कहा, "अरे यह क्या, यह तो शवदेह है!"

इस पर निवारण चाचा चौंक उठे। बोले---

"यह नर-देह
बह जाता जल में
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह
उड़ाता पवन इसे है
यह नारी
इसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में,
हाय, तब प्राण दे रहा किसे हूं
किसके हित शव का करता आलिंगन!
बांध सुदृढ़ बंधन में रखता हूं छाया में।
वह उषा, वह जो छाया
मिथ्या, हां मिथ्या है यह सब
देख रहा हूं आज मैं निविड़ अंधेरा
मैं हूं किसका, कौन है मेरा?..."

बचपन में विल्वमंगल की उन बातों को सुनते-सुनते वह मंत्रमुग्ध हो जाता था। भूल जाता कि वह विल्वमंगल नहीं, निवारण चाचा हैं। निवारण चाचा की

वे बातें संदीप के जीवन में आज इतने दिनों के बाद इस तरह सत्य कैसे हो गई? यह बात सही है कि उसके जीवन के लिए सारा कुछ मिथ्या है! हां, मिथ्या, मिथ्या, मिथ्या! यह सारा कुछ। यह नारी इसका भी परिणाम यही नश्वर इस जग में। उस दिन के निवारण चाचा की बातें इतने दिनों के बाद इस तरह सच हो जाएंगी, इसे कौन जानता था? सच, किसको खातिर वह इतने दिनो तक, इतने बरसो तक जेल की सजा भुगतता रहा? वास्तव मे सारा कुछ मिथ्या है। छोटे बाबू यानी दादी मा का पोता सौम्य मुखर्जी भी मिथ्या है। सौम्य मुखर्जी को ही उन दिनों घर के नौकर-चाकर, रसोइया, महरी, दरवान वगैरह छोटे बाबू कहकर पुकारते।

इसके अलावा मल्लिकजी की याद आई। आज उसे महसूस हो रहा है कि इस विशाल भवन की तरह मल्लिकजी भी मिथ्या हैं। हालांकि मल्लिकजी दया न दर्शाते तो गरीब घर का लड़का होने के कारण कलकत्ता शहर आने पर उसे कोई आश्रय मिलता? जिसकी मां दूसरे के घर रसोई पकाकर पैसा कमाती है वह गरीब न हो तो दुनिया में और कौन गरीब होगा? मा को उम्मीद थी, संदीप बडा होने पर ढेर सारा पैसा कमाएगा। मा का सपना था, उसका संदीप वकील बने—क्योंकि वकील होने पर चटर्जी भवन के काशीनाथ बाबू की तरह वह भी प्रचुर पैसा कमाएगा। काशीनाथ बाबू की पत्नी की तरह संदीप की बीवी भी खूबसूरत होगी। तब मां को दूसरे के घर रसोई पकाने का काम नही करना पडेगा।

सेकेंडरी परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद कॉलिज मे प्रवेश पाने की बारी आई?

लेकिन बेड़ापोता में तो कोई कॉलिज नही है। कॉलिज मे पढ़ना है तो कलकत्ता जाना होगा। मगर संदीप कहां रहेगा वहा? कॉलिज में पढने का माहवारी खर्च कौन देगा? कम से कम पाच-छह रुपया तो लगेगा ही। वह रकम कौन देगा? ट्यूशन कर अलबत्ता कुछ पैसा कमाया जा सकता है। लेकिन ट्यूशन करने के लिए भी तो कलकत्ता में डेरा होना नितात आवश्यक है। डेरे का किराया, खाने-पीने के खर्च वगैरह के लिए पैसे चाहिए।

फिर?

शुरू में जिस दिन संदीप बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए नंबर मकान का पता ढूढ़कर पहुंचा तो उसने मन में कल्पना भी न की होगी कि यह मकान ही उसके जीवन के गति-पथ को परिवर्तित कर देगा। इसी मकान की वजह से वह वकील बनने के बजाय नेशनल यूनियन बैंक का मैनेजर बन गया। इसी मकान ने उसे सीख दी कि रुपये से जिस प्रकार सुख का कोई तअल्लुकात नही, उसी प्रकार रुपये से मनुष्यत्व का भी कोई तअल्लुकात नही है। और अगर मनुष्यत्व ही न रहे तो मनुष्य और जानवरो में कौन-सा अन्तर रह जाएगा?

निवारण चाचा का पत्र थमाते ही मल्लिकजी ने उसे पढकर कहा, "अरे, तुम बेड़ापोता से आए हो?"

उसके बाद असहाय की तरह बोले, "बगैर पहले से कुछ सूचना दिए एकाएक चले आए?"

याद है, उसी दिन पहले-पहल उसने इस कलकत्ता को इतनी गम्भीर और

है। और केवल संतान-संतति देखने से ही काम नहीं चलेगा, माता-गृह-बंधु-सुख का विचार करने के निमित्त जातक-जातिका के चतुर्थ स्थान का बलाबल भी देखना पड़ता है। उसके बाद द्वितीय पति एक ओर जहां धनपति होता है वहीं दूसरी ओर निधन पति भी होता है।

पहले दिन विचार समाप्त नहीं हो सका। गुरुदेव बोले, "एक ही दिन में विचार समाप्त नहीं हो सकेगा बिटिया। और दो दिन लगेंगे। बड़ी ही जटिल जन्मपत्री है।"

दादी मां ने पूछा, "किसकी जन्मपत्री जटिल है गुरुदेव? पात्र की या पात्री की?" गुरुदेव ने दोनों जन्मपत्रियों की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए कहा, "विंशोत्तरी मतानुसार जातक-जातिका दोनों की जन्मपत्री में राज घोटक फलादेश है। लेकिन अष्टोत्तरी का भी विचार करना है। अष्टोत्तरी के मतानुसार जातक के मध्यवय में रिष्टि का लक्षण है।"

"इसका मतलब? मेरे पोते का प्राण खतरे में है क्या?"

गुरुदेव बोले, "आज रहे, आराम करने के बाद विस्तार के साथ सोचकर बताऊंगा। दो दिन और समय लगेगा।"

सो समय भले ही लगे, लेकिन यह देखना है कि अगर कहीं कोई बाधक तत्व है तो फिर उसका प्रतिकार करना है।

अन्तत: लगातार दो दिनों तक गुरुदेव दोनों जन्मपत्रियों पर विचार करने के बाद अंतिम निष्कर्ष पर पहुंचे और दक्षिणा के रूप में मोटी रकम ले पुनः वाराणसी चले गए। जाने के समय और-और प्रतिकारों के साथ ही एक और बात कह गए।

"यह कन्या कहां रहती है?"

दादी मां बोलीं, "खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन में। अपने चाचा के पास।"

"चाचा की आर्थिक स्थिति कैसी है?"

दादी मां बोलीं, "वह बड़ा ही गरीब है। विशाखा के साथ-साथ मां भी अपने देवर के लिए भार-स्वरूप है।"

गुरुदेव बोले, "कन्या के एकादश में चतुर्थ पति और सप्तम पति बृहस्पति तुंग में है। अत: अर्थ-भाग्य अच्छा है। उस बृहस्पति लग्न के तृतीय स्थान में वृश्चिक दृष्टिपात कर आत्मीय स्वजनों से शुभ संबंध स्थापित करेगा और मकर में सप्तम दृष्टिपात कर लग्न के पंचम मीन में सम्मान, संतान-संतति के शुभ की सूचना दे रहा है और नवम में दृष्टिपात कर स्वामी का मंगल करेगा।"

यह कहकर वे जरा चुप हो गए। उसके बाद कुछ सोचकर फिर से बोले, "सप्तम पति ही सप्तम को देख रहा है, यह बड़ा ही शुभ योग है।"

दादी मां बोलीं, "आपने बताया कि मेरे पोते को मध्यवय में एक ग्रह है।"

गुरुदेव बोले, "अभी तुम्हारे पोते की उम्र कितनी है बिटिया?"

"सौम्य की उम्र? अभी तो उसने सोलहवें में कदम रखा है। अभी स्कूल में ही पढ़ता है।"

गुरुदेव बोले, "फिर अभी बहुत देर है। उस समय देखा जाएगा। अभी से उतने बाद वाले समय के बारे में सोचकर क्या होगा? लेकिन एक बात कहना

चाहता हूं।"

"क्या गुरुदेव ?"

"तुम्हें अपनी भावी पौत्रवधू का नाम बदलना होगा।"

"उसके बदले कौन-सा नाम रखिएगा, बताइए।"

"स्वरवर्ण के प्रथम अक्षर 'अ' से नामकरण करने से शुभ होगा।"

दादी मा बोली, "अ अक्षर से आप ही एक नाम चुनकर बता दें।"

गुरुदेव बोले, "फिर विशाखा के बदले अलका नाम रखो बिटिया।"

अन्ततः यही नाम रखने का निर्णय लिया गया। तभी से नाम हो गया विशाखा के बदले अलका।

यह सब आज से बहुत पहले की बात है। मल्लिकजी ने यह सब कहानी सुनाई थी। संदीप तब सब मिलाकर बेड़ापोता से इस मुखर्जी भवन के मल्लिकजी के लिए एक हाड़ी घी ले कॉलेज में पढ़ने आया था। इसी लोहे के गेट की बाईं तरफ मल्लिकजी का कमरा था। उसी के फर्श पर रात के समय संदीप सोता और दिन-भर मल्लिक साहब की फरमाइशें पूरी करने के वास्ते खटता रहता। मल्लिकजी काफी उम्रदार हो चुके थे। तब उनकी काम करने की शक्ति क्षीण हो गई थी। दादी मा से कह-सुनकर मल्लिकजी ने ही यह इंतजाम कराया था। दादी मा ने मल्लिकजी की बात मान ली थी। बोली थी, "ठीक है, मुनीमजी, आपने चूंकि कहा है तो फिर उसे यहा ले आइए।"

मल्लिकजी ने कहा था, "मेरा जाना-पहचाना लड़का है, वह भी ब्राह्मण ही है। बाप जिन्दा नहीं है, मा को दूसरे के घर मे रसोई पकाने से जो पैसा मिलता है, उसी से लड़के को पाल-पोस रही है।"

"नाम क्या है ?"

"संदीप कुमार लाहिड़ी।"

"ठीक है। चोर-उचक्का न होगा तो यहा खाना मिलेगा और पंद्रह रुपये। इस पर तैयार हो जाएगा न ?"

मल्लिकजी ने कहा, "खुशी से राजी हो जाएगा। यह नौकरी मिल जाएगी तो उसे जीने का सहारा मिल जाएगा। उसकी मां का भी दुख दूर हो जाएगा।"

यही है शुरुआत। इसी व्यवस्था के अन्तर्गत संदीप का कलकत्ता आने और इस सामने के मकान के जीवन-प्रवाह से घनिष्ठ रूप मे जुड़ने का इतिहास है।

मल्लिकजी संदीप को अपने दफ्तर में रख बाह्य भवन में उसके खाने-पीने का इंतजाम करने के लिए चले गए। और संदीप मल्लिकजी के पलग पर बैठ कमरे के इर्द-गिर्द नजर दौड़ाने लगा। कितने कागज-पत्तर, कितने कत्थई खाते, कितनी जमा-खर्च की वहियां रैक पर तह-दर-तह रखी हुई हैं, इसका कोई अंत नही। इसी के अन्दर उसे दिन पर दिन बिताना है, सोना है और रात के समय यही से बगवासी कॉलेज पढ़ने के लिए जाना है। पढ़कर बी० ए० पास करना है। उसके बाद कानून की परीक्षा पास कर वह मां को ले आएगा और इसी कलकत्ता मे किराये का मकान लेकर जीवन व्यतीत करेगा। यह उसका सपना है, इसी सपने

को वह हकीकत का जामा पहनाएगा और उसके वाद'''उसके वाद'''उसके वाद'''

अचानक किसी की आवाज़ सुनकर वह चिहुंक उठा।

"आप कौन हैं जनाव ? ऊपर की तरफ गौर से क्या देख रहे हैं ?"

सपने का सारा जाल टूटकर विखर गया। सुदूर व्यतीत की दुनिया से एक ही क्षण में छिटककर वर्त्तमान के यथार्थ के शिलाखंड पर आकर गिर पड़ा हो जैसे।

"आप कौन हैं ? ऊपर की तरफ गौर से क्या देख रहे हैं ?"

एक तो उसका यह लिवास, उस पर कई दिनों से दाढ़ी नहीं वनाई है, इसीलिए शायद उस पर संदेह हो रहा है। संदीप ने उस ओर ध्यान से देखा। एक ही नहीं, वल्कि कई आदमी संदेह भरी निगाहों से उसकी ओर ताक रहे हैं। उसकी वात का उत्तर दिए वग़ैर संदीप वारह वटे ए नंवर मकान के सामने से हट गया। उन्हें दोप देने से कोई फायदा नहीं। वे लोग इस युग के नौजवान हैं। उन लोगों को उस जमाने की वातें मालूम नहीं हैं। इस मकान की विपरीत दिशा में, जहां अव सोने-चांदी की दुकान है, पहले एक खाने-पीने की दुकान थी। उस समय खाने की चीजों की वहुत ही विक्री होती थी। मिठाई के साथ पकौड़े भी वेचे जाते। और वह जो दीवार से लगी पान-वीड़ी-सिगरेट की दुकान है, उस समय उसका अस्तित्व नहीं था। इस सड़क का कितना-कुछ वदल गया है ! उन्हें यह मालूम नहीं होगा कि यहां एक दिन आधी रात के समय कितना वड़ा पैशाचिक कांड हो गया। उस जमाने के जो लोग थे, सवके सव उस कांड को देखने के लिए इकट्ठे हो गए थे। वे लोग अव भी जिन्दा ही होंगे। लेकिन अव वरामदे पर वैठे अड्डेवाजी करने की उम्र नहीं होगी उनकी। अभी यहां के मुहल्लों में जो लोग दलवद्ध होकर अड्डेवाजी करते हैं, उस घटना के वारे में सुनेंगे तो चौंक उठेंगे। नए-नए युग आते हैं और पुराने युग रद्दी की टोकरी में फेंक दिए जाते हैं। लेकिन क्या वे रद्दी की टोकरी में चले जाते हैं ? जो सूरज हर रोज़ उगकर अस्त हो जाता है और फिर नया जन्म ले आकाश में विराजमान हो जाता है, उसे क्या रद्दी की टोकरी में फेंका जा सकता है ? कोई है वैसा शक्तिशाली व्यक्ति या प्रतिष्ठान ?

नहीं, इन नौजवानों में से कोई इस घटना के वारे में नहीं जानता और न ही जानना चाहता है। लेकिन अपनी आंखों से न देखने पर भी संदीप ने इस घटना के वारे में सुना है और अखवारों में पढ़ा भी है। आज अन्दाजा लगाकर ठीक उसी जगह खड़ा हुआ था। लेकिन सड़क के लोगों के वेवजह के तकाजे के कारण वहां ज्यादा देर तक रुक नहीं सका। हालांकि लोगों को अगर इस वात की जानकारी हो जाती कि वह स्वयं भी उस दिन के खून-खरावे की वारदात से जुड़ा हुआ था, तो हो सकता था, वे अवाक् हो जाते।

घड़ी की सुई रात के कितने पहर की सूचना दे रही है ? रात का एक या दो या तीन वज चुके होंगे। निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। क्योंकि तव मुहल्ले का कोई भी जगा हुआ नहीं था। जव वात फैली तो उस समय संभवतः सवेरे के चार वज रहे होंगे। सरदियों की भोर के चार का मतलव है, उस समय चारों तरफ अंधेरा फैला हुआ था।

दक्षिण भारत के अधिवासी इनकम टैक्स ऑफिसर मिस्टर वरदराजन गुरुस्वामी बराबर भोर चार बजे प्रातः भ्रमण के लिए निकलते हैं। उस दिन भी उसी तरह भ्रमण करने के खयाल से निकले थे। अपने सेंट्रल एवेन्यू के निवास-स्थान से निकल हर रोज जिस तरह बिडन स्ट्रीट पकड़ कर्नवालिस स्क्वायर की तरफ घूमने निकलते थे, उस दिन भी निकले थे। हाथ में एक छड़ी थी। सड़क सुनसान। कहीं कोई भी नहीं। वह मन ही मन कुछ सोचते हुए जा रहे हैं।

एकाएक सड़क पर एक भारी लंबी जैसी चीज पड़ी देख ठिठककर खड़े हो गए। ध्यान से देखने लगे। यह क्या है? वहां कौन-सी चीज पड़ी हुई है? किसने कौन-सी चीज फेंक दी है?

कुछ देर बाद ही समझ गए कि यह एक आदमी है। एक आदमी सड़क पर तिरछे पड़ा हुआ है। हो सकता है लेटा हुआ है, सो रहा है—

लेकिन सड़क पर कोई क्या इस तरह सोता है? खासकर सरदियों के इस मौसम में? सिर झुकाकर गौर से देखने की कोशिश करते ही मिस्टर गुरुस्वामी चौंककर दो कदम पीछे हट गए। यह आदमी तो मर गया है! इस समय उन्हें क्या करना चाहिए, समझ में नहीं आया।

अपने इर्द-गिर्द नजर दौड़ाकर उन्होंने देखा। कहीं कोई नहीं था। तमाम लोग ठंड की जड़ता के कारण रजाई-कंबल ओढ़, खिड़कियां और दरवाजे बन्द कर आराम से सो रहे हैं।

अचानक कर्नवालिस स्ट्रीट की तरफ से आती हुई एक गाड़ी के हेडलाइट की रोशनी से वह चीज स्पष्ट दिख गई। लेकिन सिर्फ एक सेकेंड के लिए ही। उसके बाद गहरा अंधेरा उतर आया।

उस एक सेकेंड के दरमियान ही वे समझ गए कि यह एक शव है, लेकिन पुरुष का नहीं, एक महिला का शव है।

मिस्टर गुरुस्वामी ने ऊपर की ओर ध्यान से देखा। जिस मकान के नीचे मृत देह पड़ी हुई है, उसके ऊपर एक तीन-मंजिले भवन का छज्जा है। वह छज्जा मकान से तकरीबन तीन फीट फुटपाथ की तरफ बाहर निकला हुआ है। लगता है वहीं से किसी ने मृत देह को फेंक दिया है। या फिर उस महिला ने छत से कूदकर आत्महत्या कर ली है···

मिस्टर गुरुस्वामी इस भयंकर खोज की दहशत से थरथर कांप रहे थे। उन्होंने मकान के सामने के गेट के करीब खड़े खंभे पर लिखे मकान के नम्बर को पढ़ा। उन्हें पता था कि इस अंचल का थाना कहां है।

रात के आखिरी पहर का थाना। थाने के आदमी ठंड से सिकुड़े हुए हैं। जो लोग ड्यूटी पर तैनात हैं वे भी रात्रि-जागरण के कारण थककर चूर हो गए हैं। ठंड की जड़ता के साथ-साथ अनिद्रा की जड़ता का चिह्न भी उनके चेहरे पर है। ऐसे में गुरुपद स्वामी को देखकर उन्हें ऊब का अहसास हुआ।

"ओ० सी० हैं?"

एक आदमी ने कहा, "वे क्वार्टर में सोए हुए हैं।"

मिस्टर गुरुस्वामी ने कहा, "एक केस के बारे में लिखाने आया था।

"केस? किस तरह का केस?"

"एक एक्सिडेंट केस।"

"किस तरह का एक्सिडेंट ?"

मिस्टर गुरुस्वामी बोले, "एक्सिडेंट है या मर्डर या सुसाइड, कह नहीं सकता। लेकिन मैंने अपनी आंखों से जो देखा है, उसी के बारे में रिपोर्ट करने आया हूं।"

"आपका मकान कहां है ? आप कहां रहते हैं ? आपका नाम क्या है ?"

मिस्टर गुरुस्वामी ने अपने फ्लैट का पता और सड़क का नाम बताया। उसके बाद बताया कि वे कौन हैं और कौन-सा काम करते हैं। बोले, "मैं कलकत्ता का एक इनकम टैक्स ऑफिसर हूं।"

इससे लगता है थोड़ा-बहुत प्रभाव पड़ा। पुलिस का आदमी ज़रा तनकर बैठ गया। बोला, "आप बैठिए सर, बैठ जाइए, खड़े क्यों हैं ? ठहरिए, डायरी का खाता निकालता हूं।"

यह कहकर गरम कंबल फेंक, खाता निकाल लिखने लगा।

"आपने अपना क्या नाम बताया ?"

"वरदराजन गुरुस्वामी।"

"इनकम टैक्स आफिसर ? किस डिविजन के ?"

सारा कुछ लिख लिया। उसके बाद मिस्टर गुरुस्वामी ने बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट में महिला की जो एक लाश देखी है उसका ब्योरा दर्ज किया।

"चेहरा कैसा है ?"

"अंधेरा रहने की वजह से अच्छी तरह नहीं देख सका।"

"देह का रंग कैसा है ?"

"यह भी नहीं देख सका।"

"उम्र ?"

"मुझे जो लगा यही बता सकता हूं। पन्द्रह भी हो सकती है और पच्चीस भी—आप लोग अभी जाकर देख सकते हैं। लाश अब भी वहीं पड़ी हुई होगी।"

काम खत्म कर मिस्टर गुरुस्वामी थाने से बाहर निकल आए। उसके बाद क्या हुआ, उन्हें मालूम नहीं हो सका।

संदीप को याद है, यह खबर पढ़कर वह चौंक उठा था। लेकिन अलका को इसके बारे में कुछ नहीं बताया था। क्योंकि बहुत दिन पहले देखा हुआ यात्रा का वह दृश्य उसके सामने तैरने लगा था। निवारण चाचा का वह अभिनय, विल्व मंगल की वह उपलब्धि, वह प्रज्ञा, वह खेदजनक स्वगत भाषण आदि क्या भूलने लायक वस्तुएं हैं ? जीवन-भर के लिए वह कहानी उसके मन में गुंथी हुई है। इसीलिए बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के उस मकान के सामने खड़े होकर स्मरण करने लगा—

> यह नरदेह
> बह जाता जल में
> नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृंगाल
> या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है
> यह नारी—इसका भी परिणाम यही
> नश्वर इस जग में···

विस्तार

दो-तीन दिन में ही संदीप इस घर की स्थितियों से परिचित हो गया। मां को भी वेहापोता के पते पर खत डाल दिया। खत में लिखा—पूजनीयां मां, सादर प्रणाम। मैं सकुशल कलकत्ता पहुंच गया हूं। मल्लिकजी को तुमने जो घी भेजा था, उससे वे बहुत प्रसन्न हुए। मेरे लिए चिन्ता नही करना। मैं यहा सानन्द हूं। एक-दो दिन मे मैं रात्रिकालीन कालेज में दाखिला ले लूंगा। अब तक लिखना-पढ़ना शुरू नही किया है। बाबू लोगों ने बताया है, वे मुझे हर महीने पन्द्रह रुपया देंगे। आज्ञाकारी संदीप कुमार लाहिड़ी। खत के ऊपरी हिस्से मे पता और तारीख लिख दी।

संदीप को मालूम था, मां चिट्ठी नही पढ़ पाएगी। चटर्जी भवन के किसी आदमी से पढवा लेगी या फिर निवारण चाचा से भी पढ़वा सकती है। गाव में ऐसे कितने आदमी हैं जो लिखना-पढना जानते हो। उसके जैसा कितने आदमी हैं जो सेकेंडरी परीक्षा पास हों !

मल्लिकजी ने पूछा, "तुमने मां को चिट्ठी लिख दी है ?"

"हां।" संदीप ने कहा।

मल्लिकजी ने कहा, "आज बंगवासी कॉलेज में दाखिला लेना है न ? तुम्हारे पास पैसा है ? दाखिला लेने के समय कुछ रुपया तो देना ही होगा।"

संदीप ने कहा, "अभी मेरे पास रुपये नहीं हैं। जब तनख्वाह मिलेगी, उसी समय दाखिला लूंगा।"

"लेकिन उस वक्त कॉलेज मे खाली स्थान न रहे तो ? ऐसी हालत में तुम्हारा एक साल बर्बाद हो जाएगा। इससे बेहतर यही है कि मैं तुम्हे रुपया दे दूं। उस रकम से आज ही दाखिला ले लो, बाद में तनख्वाह मिलेगी तो धीरे-धीरे कर्ज चुका देना।"

मल्लिकजी ने उसे तीस रुपये दिए। संदीप उन रुपयो को हाथ में लिए कुछ देर तक बेचैन जैसा रहा। इसके पहले अपनी ज़िन्दगी में इतने सारे रुपये एक साथ उसने कभी नहो देखे थे। मां चटर्जी भवन में नौकरी करने के बावजूद महीने में इतने रुपये नही कमा पाती है। रुपयों के अलावा मां अपने लड़के के लिए कभी-कदा सब्जी या केला-मूली ले आती। संदीप को तभी से मालूम है कि धनी-मानी लोग कितना-कुछ खाते हैं और कितने आराम से जीवन जीते हैं। यही वजह है कि मां सोचती कि उसका संदीप भी एक दिन चटर्जी परिवार के छोटे लड़के काशीनाथ

की तरह वकील बनेगा। वकील बनकर उसका लड़का ढेर सारा पैसा कमाएगा। उन सुख के दिनों के सपने देखकर वह मुंह बन्द रखकर सारा दुख-कष्ट झेल लेती।

मल्लिकजी बोले, "जानते हो संदीप, तुम्हारे पिताजी, निवारण और मैं बहुत ही अंतरंग मित्र थे। हम पूरा वक्त एक साथ बिताते थे। हम एक साथ मिलकर यात्रा में अभिनय करते। तुम्हारे पिताजी 'फिमेल पार्ट' करते। बिल्वमंगल नाटक में तुम्हारे पिता 'पगली' की भूमिका में उतरते। तुम्हारे पिताजी का कण्ठ बड़ा ही सुरीला था। तुम्हारे पिताजी के द्वारा गाया गया गीत 'उठना-गिरना प्रेम के तूफान से, आकर्षित हो प्राण बह रहा, कहां ले जा रहा जाने कौन' अब भी कानों में गूंज रहा है।"

संदीप को आज भी मल्लिकजी की वे बातें याद हैं। मल्लिकजी ने यह भी कहा था, "उस समय तुम्हारे पिताजी बहुत बीमार थे। मैं और निवारण उसे देखने गए। तुम्हारे पिता का उतना भारी-भरकम शरीर कई दिन के दरमियान सूखकर बिलकुल दुबला-पतला हो गया था। निवारण ने सामने जाकर मुंह झुकाकर पूछा, 'कैसे हो हरिपद ?'

"तुम्हारे पिता ने बोलना चाहा परन्तु शुरू में उसके मुंह से आवाज नहीं निकली। उसके बाद बहुत तकलीफ के साथ कहा : 'निवारण, संदीप की तुम लोग देखभाल करना।'

"तुम्हारे पिताजी के ये ही अंतिम शब्द थे। उसके बाद और कोई बात नहीं बोल सके थे। कैसे क्या हो गया, किसी को पता नहीं चला। एक सप्ताह पहले तक तुम्हारे पिताजी हम लोगों से बातें करते थे। इसीलिए कहा जाता है आदमी की दस दशाएं होती हैं।"

संदीप को तब इन बातों की कोई जानकारी नहीं थी। उस समय वह बहुत छोटा था। समझने-बूझने की उम्र नहीं थी उसकी। लेकिन निवारण चाचा ने पिताजी के अनुरोध की रक्षा की है। जब मल्लिकजी नौकरी पाकर कलकत्ता आ रहे थे, उस समय निवारण चाचा ने ही संदीप के बारे में याद दिला दी थी। बोले थे, "तुम तो कलकत्ता जा रहे हो परमेश, वहां जाने के बाद संदीप के बारे में कुछ सोचना।"

वही परमेश मल्लिक मल्लिकजी हैं। मल्लिकजी ने निवारण चाचा की बात का पालन किया है। मल्लिकजी बोले, "तुम्हारे खाने के बारे में अन्दर जाकर महाराज से कह आता हूं। तुम खाओगे और मैं भी—"

उसके बाद बोले, "तुम बैठे रहो, मैं एक काम कर एकाध घंटे में चला आऊंगा।"

संदीप ने कहा, "मैं अकेले बैठकर क्या करूंगा ! इससे तो अच्छा यही रहेगा कि मैं भी आपके साथ चलूं बशर्ते आपको कोई आपत्ति न हो।"

"नहीं, आपत्ति क्यों होगी, चलना है तो चलो। बाद में तुम्हें अकेले ही यह सब काम करना होगा। धीरे-धीरे अपना सारा बाहरी काम तुम्हीं पर छोड़ दूंगा।"

संदीप तत्क्षण तैयार हो गया। विडन स्ट्रीट से निकल मल्लिकजी संदीप के साथ एक बस पर चढ़ गए। बस में खचाखच भीड़ है, खड़े होने की भी जगह नहीं

है। फिर भी उस भीड में मल्लिकजी ने खड़े होने की जगह बना ली। संदीप भी मल्लिकजी की बगल में जाकर खड़ा हो गया।

मल्लिकजी ने बस का किराया दिया। बोले, "देख लो, जिस बस पर हम सवार हुए हैं उसका नंबर है दो। याद रखना—"

संदीप ने बाहर की ओर देखने की कोशिश की। लेकिन भीड के कारण बाहर का कुछ दिखाई नहीं पड़ा।

थोड़ी देर बाद एक स्थान पर बस आकर जब रुकी तो मल्लिकजी ने कहा, "उतरो संदीप, हमें यहीं उतरना है। इस स्थान का नाम है धर्मतल्ला। जो कुछ कह रहा हूं, याद रखना। एक दिन ऐसा आनेवाला है कि मैं तुम्हारे साथ नहीं आऊंगा। तब रास्ता पहचान कर तुम्हें अकेले ही आना है, समझे?"

बस से उतर संदीप ने चारो तरफ निगाह दौड़ाई। इतनी भीड! यहां इतने-इतने लोगो की भीड़ है? बेडापोता के रथ के मेले में भी आदमी की इतनी बडी भीड़ नही होती है। संदीप आश्चर्यचकित हो चारो तरफ ध्यान से देखने लगा।

मल्लिकजी बोले, "वह देखो, वह जो दो-मंजिला बस आ रही है, उसके माथे पर तीन नंबर लिखा हुआ है। हमे उसी बस पर सवार होना है। जल्दबाजी मत करना, धीरे-धीरे चढ़ना। तुम पहले पहल कलकत्ता आए हो, यहां का रंग-ढंग अलग है। यह कलकत्ता तुम लोगों का बेडापोता नहीं है। यहा के लोग एक-दूसरे की तरक्की बरदाश्त नही कर पाते। यहां के लोग एक-दूसरे को लगडी मार आगे बढने की कोशिश में रहते हैं। अभी तुम्हें कैसा लग रहा है?"

संदीप बोला, "बिलकुल ठीक।"

"दूसरी बस मे चल सकोगे?"

संदीप ने कहा, "हा।"

दूसरी बस के आने के पहले ही मल्लिकजी ने संदीप का हाथ कसकर पकड़ लिया, जब तमाम मुसाफिर बस के अंदर चले गए तो मल्लिकजी ने संदीप के साथ उसके अंदर प्रवेश किया। मल्लिकजी संदीप की बगल में खडे रहे। पूछा, "किसी तरह की कोई तकलीफ महसूस नही कर रहे हो न?"

संदीप ने कहा, "नही।"

मल्लिकजी बोले, "आहिस्ता-आहिस्ता सब कुछ बरदाश्त करने लगोगे। अभी कलकत्ता चूंकि नए-नए आए हो, इसीलिए असुविधा हो रही है। मैं जब पहले-पहल कलकत्ता आया था तो मुझे भी इसी तरह की असुविधा का सामना करना पड़ा था। इसके बारे में सोचकर तुम अपना मन खराब मत करना।"

संदीप इस बात का क्या उत्तर दे! बोला, "अभी हम लोग कहां चल रहे हैं?" मल्लिकजी ने कहा, "खिदिरपुर। मैं हमेशा यहा नहीं आया करूंगा। मैं हर महीने एक बार खिदिरपुर आया करता हूं। तुम्हें अबकी आने-जानेवाली सड़क की पहचान करा रहा हू। इसके बाद तुम्हे ही महीने में एक बार खिदिरपुर आना होगा।"

संदीप बोला, "क्यों? मुझे क्यों आना होगा?"

"बताऊंगा-बताऊंगा, सब कुछ बताऊंगा। इन्ही कामों के लिए दादी मा से

कहकर तुम्हें मंगाया है। मेरी उम्र काफी हो चुकी है, इस उम्र में यह सब करना मेरे लिए क्या संभव ? तुम्हें आगे चलकर यही सब काम करना है।"

संदीप ने कहा, "कौन-सा काम ?"

"हां-हां, बहुत ज़रूरी काम है। हर महीने खिदिरपुर के सात नम्बर मनसा-तल्ला लेन के मकान में राजुबाला देवी को एक सौ रुपया पहुंचाना होगा।"

संदीप को लगा, वह जैसे परिकथा का किस्सा सुन रहा हो। कहां बेड़ापोता में उसने जन्म लिया और कहां भाग्य के फेर से कलकत्ता के विडन स्ट्रीट के एक विख्यात खानदान के घर चला आया है और फिर कहां किस भाग्यचक्र के कारण वह खिदिरपुर के सात नम्बर मनसातल्ला लेन के एक मकान में चला आया ! इस खिदिरपुर के सात नम्बर मनसातल्ला लेन की एक लड़की से उसका जीवन एक दिन जुड़कर एकाकार हो जाएगा, उसकी क्या वह उस दिन कल्पना कर सका था ? या मल्लिकजी ही क्या इसकी कल्पना कर सके थे ?

यह सच है कि किसी देश, जाति और समाज की तरह ही आदमी का जीवन भी संभवत: नाना प्रकार की शृंखलाओं में बंधकर एक अनिश्चित और अमोघ परिणिति की ओर बढ़ जाता है। और, इस अनिश्चित और अमोघ परिणिति की ओर बढ़ने का संघर्ष ही संभवत: जीवन है। लेकिन इस अमोघ परिणिति की ओर बढ़ने का बीज मनुष्य के जन्म के प्रारंभ काल से ही रहता है। वरना वह बेड़ापोता गांव से कलकत्ता आया ही क्यों ? और अगर आया तो किस संपर्क से मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली की भतीजी विशाखा के पास आया ?

तपेश गांगुली का किराये का मकान सात नंबर मनसातल्ला लेन खिदिरपुर में है। तीन नंबर बस डिपो में आकर रुकी तो उतरने में कोई तकलीफ नहीं हुई।

मल्लिकजी बोले, "इस बस का आखिरी पड़ाव यही है। इस जगह का नाम है खिदिरपुर। समझे ? इस जगह को अच्छी तरह देख लो, पहचान लो। अगले माह में तुम्हें यहीं हर महीने आना है। देखो, कहीं गलती मत कर बैठना। गलती से इसके उसके हाथ में रुपया मत दे देना। ऐसा करोगे तो तुम्हारी नौकरी चली जाएगी।"

"किसे रुपया देना होगा ?"

"कहा न, कि तपेश गांगुली के हाथ में देना है। दादी मां ने मुझे नकद एक सौ रुपया दिया है जो मेरी जेब में है।"

यह कहकर अपने कुरते की ओर इशारा किया।

संदीप ने पूछा, "किस चीज़ की बाबत रुपया देना है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "यह जानने से तुम्हें कौन-सा लाभ होगा ? तुम्हें जो कुछ कह रहा हूं, वही सुनो। हर महीने की पहली तारीख को दादी मां से एक सौ रुपया लेकर इस मनसातल्ला लेन के सात नंबर मकान के तपेश गांगुली को दे आना है।"

संदीप ने कहा, "रुपया देकर दस्तखस्त करा लेना होगा ?"

"हां, दस्तख़त तो कराना ही होगा। तपेश बाबू एक कागज पर लिख देंगे कि रुपए मिल गए हैं। लिखकर वे नीचे हस्ताक्षर कर देंगे। वह कागज ले जाकर दादी मां को दिखाना होगा। तभी तुम्हें फुर्सत मिलेगी।"

यह एक अजीब ही तरह की नौकरी है। सारा कुछ रहस्यपूर्ण जैसा लगा। मनसातल्ला लेन के बाशिन्दे का नाम है तपेश गांगुली और बिडन स्ट्रीट के मकान के बाशिन्दों की पदवी है मुखर्जी। देवीपद मुखर्जी। देवीपद मुखर्जी का देहान्त कब हो चुका है, पता नहीं। उसीकी विधवा-पत्नी दादी मां कहलाती हैं। वे हर महीने मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली को एक सौ रुपया क्यों भेजती हैं?

यह क्या कर्ज अदायगी है? किस चीज का कर्ज? उतने बड़े घर की गृहिणी मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली के पास कर्ज लेने जाएंगी?

तब तक सात नंबर मकान आ गया था।

मल्लिकजी बोले, "यह देखो, मकान की दीवार पर मकान नंबर लिखा हुआ है। अच्छी तरह देख लो, पहचान लो, इसके बाद तुम्ही को यह काम करना है। गलती से दूसरे मकान में मत चले जाना।"

संदीप ने देखा, मकान की दीवार पर सात नंबर चिपका हुआ है—मल्लिकजी सदर दरवाजे की कुंडी खटखटाने लगे।

खैर, यह सब बात अभी रहे। इस घटना के पहले घटी घटना का शुरू मे ब्योरा प्रस्तुत कर लूं।

बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए भवन के मालिक मुखर्जी परिवार के मुख्य सदस्य एक ही दिन मे नही हुए थे। उस समय देश के प्रभु अंग्रेज थे। 1690 ई० मे जो अंग्रेज कलकत्ता की गगा के बाबूघाट के पास पालतने जहाज से उतरकर किस तरह धीरे-धीरे यहां के राजा बनकर बैठ गए, इसकी कहानी मेरे 'बेगम मेरी विश्वास' उपन्यास में है। अभी उसे नए सिरे से कहने की जरूरत नही। उस समय देवीपद मुखोपाध्याय के आदि पुरखे बांग्ला देश के ही किसी फलते-फूलते गांव में आकर बस गए थे। उस अज्ञात, अविख्यात वंश का इतिहास किसी ने लिखकर नही रखा है। दिन के बाद दिन, महीने के बाद महीने, साल के बाद साल और युग के बाद युग कहां और कैसे बीते हैं, इसका विवरण टुकडो में बहुत सारे लोग लिखकर चले गए हैं। उसके बाद जब कलकत्ता आबाद हुआ और अंग्रेज जमकर बैठ गए तो व्यवसाय-वाणिज्य की शुरुआत हुई। व्यवसाय-वाणिज्य के फलने फूलने पर बैंक की आवश्यकता हुई। बैंक के मालिक विलायत में रहते हैं। यहां से जो माल-असबाब विलायत जाते हैं, उसका हिसाब बैंक के लेजर मे रहता है। उसके बाद दिन-दिन अंग्रेजो का व्यवसाय तरक्की करने लगा। उस समय किरानियो की जरूरत पड़ी। किरानी का काम कौन करेगा? बुलाओ हिन्दुस्तानियो को। उन्हें लिखना-पढ़ना सिखाओ। लिखना-पढ़ना सिखाकर किरानी तैयार करने के लिए स्कूल-कालेज चाहिए। स्कूल-कालेज बनाने के पहले शिक्षक चाहिए। विलायत से कुछेक अंग्रेज शिक्षक आए। वे ही लिखना-पढ़ना सिखाने लगे। अंग्रेजों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए डाक्टर-वैद्य चाहिए और इसके लिए चाहिए मेडिकल कॉलेज। कारखाना चलाने के लिए इंजीनियर चाहिए। उसी समय से झुण्ड-दर-झुण्ड गांव के लोगों ने कलकत्ता आना शुरू कर दिया। गाव के युवजन कलकत्ता का रास्ता-घाट बाजार देखकर विस्मय से अभिभूत हो गए। वे लोग भी अच्छी नौकरी पाने

की उम्मीद में एक-एक कर स्कूल-कॉलेज में भर्ती होने लगे। किसी-किसी ने मेडिकल कॉलेज या इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लिया। ज्यादातर गांव के ही गरीब लड़के थे। इसी तरह कितने ही साल गुजर गए। कितने ही युग बीत गए, कितने ही लाट साहब और बड़े लाट साहब आकर चले गए। ऐसे में अपनी तकदीर बदलने के ख्याल से यहां एक और युवक आया। उनका नाम था देवीपद मुखर्जी। देवीपद मुखर्जी कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिल हो गया। हाथ में एक भी पैसा नहीं, लेकिन बड़ा आदमी बनने की महत्त्वाकांक्षा। उसी महत्त्वाकांक्षा को अपना पाथेय बनाकर हर रोज़ चार मील पैदल चलकर कालेज जाता है और एक मेस में रहकर किसी तरह जीवन जीता है और साथ ही मेस की टूटी तख्त पर लेटकर लाखों रुपए का सपना देखता है।

वही देवीपद मुखर्जी आज के बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट—भवन का मालिक है।

यह कैसे संभव हुआ?

इसके पीछे भी एक अथक संघर्ष का इतिहास है। उस युवक ने गांव से भेजे गए पांच रुपए पर निर्भर कर जीवन बिताते हुए जब इंजीनियरिंग फाइनल की परीक्षा दी तो उसने सोचा कि अब उसका संघर्ष आखिरी दौर में पहुंच चुका है।

लेकिन फाइनल परीक्षा में देवीपद मुखर्जी फेल हो गए।

इससे उसे कितना धक्का लगा था, कितनी निराशा हुई थी उसे, इसकी कोई कल्पना नहीं कर सकता। देस के मकान पर नई ब्याही पत्नी है। उस समय एक पोस्ट कार्ड की कीमत थी एक पैसा। पैसे के अभाव में वे एक पत्र तक लिख नहीं सके। और परीक्षा में नाकामयाब होने के बाद पत्र लिखने का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता। देवीपद मुखर्जी मेस से भोर चार बजे ही निकल जाते। दिन-भर पूरे शहर में मारे-मारे फिरते। उसके बाद जब मेस लौटते तो काफी रात हो जाती। उसके बाद फिर भोर होते न होते निकल जाते। बीच-बीच में सोचते, आत्महत्या करने से कैसा रहेगा! जिस जीवन से कोई काम नहीं हो सकता, उसे रखने से लाभ ही क्या? कभी-कभी इच्छा होती कि बालीगंज स्टेशन-प्लेटफार्म के ओवर ब्रिज से चलती हुई गाड़ी के सामने कूद पड़ें। लेकिन वैसा कर नहीं पाते।

ऐसे में एक दिन चिड़ियाखाने में घूम रहे थे। यों ही, निरुद्देश्य। वक्त गुज़ारने के अलावा और कोई मकसद नहीं था। अचानक देखा, एक जगह झील पर लोहे का एक पुल बनाया जा रहा है। वे वहां रुककर खड़े हो गए। एक ओवरसीयर काम की देख-रेख कर रहा था।

वे वहां खड़े होकर उन लोगों का काम देखने लगे।

वे लोग किसी भी हालत में लोहे की बीम नहीं लगा पा रहे हैं। लोहे की वह बीम नहीं लगेगी तो पुल भी तैयार नहीं होगा। तीन घंटे हो गए मगर उन्हें सफलता नहीं मिल रही है। जितने भी कुली-मजदूर हैं सभी माथा-पच्ची कर रहे हैं। ओवरसीयर बहुत माथा-पच्ची करने के बावजूद कुछ कर नहीं पा रहा है।

जब तीसरे पहर के तीन बज गए तो देवीपद मुखर्जी सामने आकर बोले, "आप लोग एक गलती कर रहे हैं।"

ओवरसीयर ने पूछा, "कौन-सी गलती?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "बीम को बगल में लगाने के बजाय बीच में लगाएं तो देखिएगा सब ठीक हो जाएगा।"

शुरू में देवीपद मुखर्जी की बात पर किसी को यकीन नहीं हुआ। लेकिन उनके कथनानुसार काम करते ही आसानी से वह काम संपन्न हो गया। इंजिनीयरिंग की भरपूर जानकारी न हो तो ऐसा नहीं हो सकता।

थोड़ी देर बाद ही चिड़ियाखाने में बड़े साहब आकर हाजिर हो गए। बोले, "क्यों, इस काम को करने में इतना विलंब क्यों हो गया? सवेरे आकर देख गया था कि काम बहुत आगे बढ़ चुका है।"

ओवरसीयर ने साहब को सलाम करते हुए कहा, "इस लोहे को बीम को लगाना किसी भी हालत में संभव नहीं हो पा रहा था।"

"तो बीम अब कैसे लगाई गई?"

ओवरसीयर बोला, "इस भले आदमी ने बताया तो फिर काम बन गया।"

यह कहकर बगल में खड़े देवीपद मुखर्जी की ओर इशारा किया।

साहब ने देवीपद मुखर्जी की ओर देखा।

बोले "हू आर यू? तुम कौन हो?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "मेरा नाम देवीपद मुखर्जी है।"

साहब ने वह काम देखकर खुद भी महसूस किया था कि यह साधारण आदमी के वश की बात नहीं है। उनके ओवरसीयर, मिस्त्री और मजदूर पहले ढेर सारे काम कर चुके हैं। लेकिन इस तरह का पुल उन लोगों ने कभी नहीं बनाया था।

साहब ने पूछा, "तुम इंजीनियर हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैं इंजीनियर नहीं हूं।"

"फिर तुम्हें यह तकनीक कैसे मालूम हुई? यह तो मेरा वेटरन ओवरसीयर भी नहीं जानता।"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाई की है।"

"ओह, तुम इंजीनियरिंग स्टूडेंट हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाई की है मगर फाइनल परीक्षा में फेल हो गया हूं।"

साहब ने देवीपद के कपड़े-लत्ते की ओर ध्यान से देखा। समझ गए, यह बहुत ही गरीब घर का लड़का है। पूछा, "तुम क्या फिर से परीक्षा दोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "एक बार और पढ़ूं इसके लिए मेरे पास पैसा नहीं है।"

"नौकरी करोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "मुझे अब नौकरी देगा ही कौन?"

साहब ने कहा, "मैं तुम्हें नौकरी दूंगा।"

यह कहकर एक छपा हुआ कार्ड देवीपद मुखर्जी की ओर बढ़ा दिया।

देवीपद मुखर्जी ने छपे हुए कार्ड को लेकर पढ़ा। सुप्रसिद्ध इंजीनियरिंग फर्म, "सैक्सबी ब्रदर्स लिमिटेड। इनकॉर्पोरेटेड इन इंगलैंड।" उसके नीचे क्लाइव स्ट्रीट का पता और साहब का नाम लिखा हुआ है। मैकडोनल्ड सैक्सबी।

देवीपद मुखर्जी तब भी उस स्थिति को ठीक से हृदयंगम नहीं कर सके थे।

की उम्मीद में एक-एक कर स्कूल-कॉलेज में भर्ती होने लगे। किसी-किसी ने मेडिकल कॉलेज या इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लिया। ज्यादातर गांव के ही गरीब लड़के थे। इसी तरह कितने ही साल गुजर गए। कितने ही युग बीत गए, कितने ही लाट साहब और बड़े लाट साहब आकर चले गए। ऐसे में अपनी तकदीर बदलने के ख्याल से यहां एक और युवक आया। उनका नाम था देवीपद मुखर्जी। देवीपद मुखर्जी कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिल हो गया। हाथ में एक भी पैसा नहीं, लेकिन बड़ा आदमी बनने की महत्त्वाकांक्षा। उसी महत्त्वाकांक्षा को अपना पाथेय बनाकर हर रोज चार मील पैदल चलकर कालेज जाता है और एक मेस में रहकर किसी तरह जीवन जीता है और साथ ही मेस की टूटी तख्त पर लेटकर लाखों रुपए का सपना देखता है।

वही देवीपद मुखर्जी आज के बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट—भवन का मालिक है।

यह कैसे संभव हुआ?

इसके पीछे भी एक अथक संघर्ष का इतिहास है। उस युवक ने गांव से भेजे गए पांच रुपए पर निर्भर कर जीवन बिताते हुए जब इंजीनियरिंग फाइनल की परीक्षा दी तो उसने सोचा कि अब उसका संघर्ष आखिरी दौर में पहुंच चुका है।

लेकिन फाइनल परीक्षा में देवीपद मुखर्जी फेल हो गए।

इससे उसे कितना धक्का लगा था, कितनी निराशा हुई थी उसे, इसकी कोई कल्पना नहीं कर सकता। देस के मकान पर नई ब्याही पत्नी है। उस समय एक पोस्ट कार्ड की कीमत थी एक पैसा। पैसे के अभाव में वे एक पत्र तक लिख नहीं सके। और परीक्षा में नाकामयाब होने के बाद पत्र लिखने का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता। देवीपद मुखर्जी भेस से भोर चार बजे ही निकल जाते। दिन-भर पूरे शहर में मारे-मारे फिरते। उसके बाद जब मेस लौटते तो काफी रात हो जाती। उसके बाद फिर भोर होते न होते निकल जाते। बीच-बीच में सोचते, आत्महत्या करने से कैसा रहेगा! जिस जीवन से कोई काम नहीं हो सकता, उसे रखने से लाभ ही क्या? कभी-कभी इच्छा होती कि बालीगंज स्टेशन-प्लेटफार्म के ओवर ब्रिज से चलती हुई गाड़ी के सामने कूद पड़ें। लेकिन वैसा कर नहीं पाते।

ऐसे में एक दिन चिड़ियाखाने में घूम रहे थे। यों ही, निरुद्देश्य। वक्त गुज़ारने के अलावा और कोई मकसद नहीं था। अचानक देखा, एक जगह झील पर लोहे का एक पुल बनाया जा रहा है। वे वहां रुककर खड़े हो गए। एक ओवरसीयर काम की देख-रेख कर रहा था।

वे वहां खड़े होकर उन लोगों का काम देखने लगे।

वे लोग किसी भी हालत में लोहे की बीम नहीं लगा पा रहे हैं। लोहे की वह बीम नहीं लगेगी तो पुल भी तैयार नहीं होगा। तीन घंटे हो गए मगर उन्हें सफलता नहीं मिल रही है। जितने भी कुली-मजदूर हैं सभी माथा-पच्ची कर रहे हैं। ओवरसीयर बहुत माथा-पच्ची करने के बावजूद कुछ कर नहीं पा रहा है।

जब तीसरे पहर के तीन बज गए तो देवीपद मुखर्जी सामने आकर बोले, "आप लोग एक गलती कर रहे हैं।"

ओवरसीयर ने पूछा, "कौन-सी गलती?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "बीम को वगल में लगाने के बजाय बीच में लगाएं तो देखिएगा सब ठीक हो जाएगा।"

शुरू में देवीपद मुखर्जी की बात पर किसी को यकीन नहीं हुआ। लेकिन उनके कथनानुसार काम करते ही आसानी से वह काम संपन्न हो गया। इंजिनीयरिंग की भरपूर जानकारी न हो तो ऐसा नहीं हो सकता।

थोड़ी देर बाद ही चिड़ियाखाने में बड़े साहब आकर हाजिर हो गए। बोले, "क्यों, इस काम को करने में इतना विलंब क्यों हो गया? सवेरे आकर देख गया था कि काम बहुत आगे बढ चुका है।"

ओवरसीयर ने साहब को सलाम करते हुए कहा, "इस लोहे की बीम को लगाना किसी भी हालत में संभव नहीं हो पा रहा था।"

"तो बीम अब कैसे लगाई गई?"

ओवरसीयर बोला, "इस भले आदमी ने बताया तो फिर काम बन गया।"

यह कहकर बगल में खड़े देवीपद मुखर्जी की ओर इशारा किया।

साहब ने देवीपद मुखर्जी की ओर देखा।

बोले "हू आर यू? तुम कौन हो?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "मेरा नाम देवीपद मुखर्जी है।"

साहब ने वह काम देखकर खुद भी महसूस किया था कि यह साधारण आदमी के वश की बात नहीं है। उसके ओवरसीयर, मिस्त्री और मजदूर पहले ढेर सारे काम कर चुके हैं। लेकिन इस तरह का पुल उन लोगों ने कभी नहीं बनाया था।

साहब ने पूछा, "तुम इंजीनियर हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैं इंजीनियर नहीं हू।"

"फिर तुम्हें यह तकनीक कैसे मालूम हुई? यह तो मेरा वेटरन ओवरसीयर भी नहीं जानता।"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाई की है।"

"ओह, तुम इंजीनियरिंग स्टूडेंट हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाई की है मगर फाइनल परीक्षा में फेल हो गया हूं।"

साहब ने देवीपद के कपड़े-लत्ते की ओर ध्यान से देखा। समझ गए, यह बहुत ही गरीब घर का लड़का है। पूछा, "तुम क्या फिर से परीक्षा दोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "एक बार और पढूं इसके लिए मेरे पास पैसा नहीं है।"

"नौकरी करोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "मुझे अब नौकरी देगा ही कौन?"

साहब ने कहा, "मैं तुम्हे नौकरी दूंगा।"

यह कहकर एक छपा हुआ कार्ड देवीपद मुखर्जी की ओर बढ़ा दिया।

देवीपद मुखर्जी ने छपे हुए कार्ड को लेकर पढा। सुप्रसिद्ध इंजीनियरिंग फर्म, "सैक्सबी ब्रदर्स लिमिटेड। इनकॉर्पोरेटेड इन इंगलैंड।" उसके नीचे क्लाइव स्ट्रीट का पता और साहब का नाम लिखा हुआ है। मैकडोनल्ड सैक्सबी।

देवीपद मुखर्जी तब भी उस स्थिति को ठीक से हृदयंगम नहीं कर सके थे।

की उम्मीद में एक-एक कर स्कूल-कॉलेजमें भर्ती होने लगे। किसी-किसी ने मेडिकल कॉलेज या इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लिया। ज्यादातर गांव के ही गरीब लड़के थे। इसी तरह कितने ही साल गुजर गए। कितने ही युग बीत गए, कितने ही लाट साहब और बड़े लाट साहब आकर चले गए। ऐसे में अपनी तकदीर बदलने के ख्याल से यहां एक और युवक आया। उनका नाम था देवीपद मुखर्जी। देवीपद मुखर्जी कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिल हो गया। हाथ में एक भी पैसा नहीं, लेकिन बड़ा आदमी बनने की महत्त्वाकांक्षा। उसी महत्त्वाकांक्षा को अपना पाथेय बनाकर हर रोज़ चार मील पैदल चलकर कालेज जाता है और एक मेस में रहकर किसी तरह जीवन जीता है और साथ ही मेस की टूटी तख्त पर लेटकर लाखों रुपए का सपना देखता है।

वही देवीपद मुखर्जी आज के बारह बटे ए विडन स्ट्रीट—भवन का मालिक है।

यह कैसे संभव हुआ?

इसके पीछे भी एक अथक संघर्ष का इतिहास है। उस युवक ने गांव से भेजे गए पांच रुपए पर निर्भर कर जीवन बिताते हुए जब इंजीनियरिंग फाइनल की परीक्षा दी तो उसने सोचा कि अब उसका संघर्ष आखिरी दौर में पहुंच चुका है।

लेकिन फाइनल परीक्षा में देवीपद मुखर्जी फेल हो गए।

इससे उसे कितना धक्का लगा था, कितनी निराशा हुई थी उसे, इसकी कोई कल्पना नहीं कर सकता। देस के मकान पर नई ब्याही पत्नी है। उस समय एक पोस्ट कार्ड की कीमत थी एक पैसा। पैसे के अभाव में वे एक पत्र तक लिख नहीं सके। और परीक्षा में नाकामयाब होने के बाद पत्र लिखने का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता। देवीपद मुखर्जी मेस से भोर चार बजे ही निकल जाते। दिन-भर पूरे शहर में मारे-मारे फिरते। उसके बाद जब मेस लौटते तो काफी रात हो जाती। उसके बाद फिर भोर होते न होते निकल जाते। बीच-बीच में सोचते, आत्महत्या करने से कैसा रहेगा! जिस जीवन से कोई काम नहीं हो सकता, उसे रखने से लाभ ही क्या? कभी-कभी इच्छा होती कि बालीगंज स्टेशन-प्लेटफार्म के ओवर ब्रिज से चलती हुई गाड़ी के सामने कूद पड़ें। लेकिन वैसा कर नहीं पाते।

ऐसे में एक दिन चिड़ियाखाने में घूम रहे थे। यों ही, निरुद्देश्य। वक्त गुज़ारने के अलावा और कोई मकसद नहीं था। अचानक देखा, एक जगह झील पर लोहे का एक पुल बनाया जा रहा है। वे वहां रुककर खड़े हो गए। एक ओवरसीयर काम की देख-रेख कर रहा था।

वे वहां खड़े होकर उन लोगों का काम देखने लगे।

वे लोग किसी भी हालत में लोहे की बीम नहीं लगा पा रहे हैं। लोहे की वह बीम नहीं लगेगी तो पुल भी तैयार नहीं होगा। तीन घंटे हो गए मगर उन्हें सफलता नहीं मिल रही है। जितने भी कुली-मजदूर हैं सभी माथा-पच्ची कर रहे हैं। ओवरसीयर बहुत माथा-पच्ची करने के बावजूद कुछ कर नहीं पा रहा है।

ज़ब तीसरे पहर के तीन बज गए तो देवीपद मुखर्जी सामने आकर बोले, "आप लोग एक गलती कर रहे हैं।"

ओवरसीयर ने पूछा, "कौन-सी गलती?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "बीम को बगल में लगाने के बजाय बीच में लगाएं तो देखिएगा सब ठीक हो जाएगा।"

शुरू में देवीपद मुखर्जी की बात पर किसी को यकीन नहीं हुआ। लेकिन उनके कथनानुसार काम करते ही आसानी से वह काम संपन्न हो गया। इंजिनीयरिंग की भरपूर जानकारी न हो तो ऐसा नहीं हो सकता।

थोड़ी देर बाद ही चिड़ियाखाने में बड़े साहब आकर हाजिर हो गए। बोले, "क्यों, इस काम को करने में इतना विलंब क्यों हो गया? सवेरे आकर देख गया था कि काम बहुत आगे बढ़ चुका है।"

ओवरसीयर ने साहब को सलाम करते हुए कहा, "इस लोहे की बीम को लगाना किसी भी हालत में संभव नहीं हो पा रहा था।"

"तो बीम अब कैसे लगाई गई?"

ओवरसीयर बोला, "इस भले आदमी ने बताया तो फिर काम बन गया।"

यह कहकर बगल में खड़े देवीपद मुखर्जी की ओर इशारा किया।

साहब ने देवीपद मुखर्जी की ओर देखा।

बोले "हु आर यू? तुम कौन हो?"

देवीपद मुखर्जी बोले, "मेरा नाम देवीपद मुखर्जी है।"

साहब ने वह काम देखकर खुद भी महसूस किया था कि यह साधारण आदमी के वश की बात नहीं है। उसके ओवरसीयर, मिस्त्री और मजदूर पहले ढेर सारे काम कर चुके हैं। लेकिन इस तरह का पुल उन लोगों ने कभी नहीं बनाया था।

साहब ने पूछा, "तुम इंजीनियर हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैं इंजीनियर नहीं हूं।"

"फिर तुम्हें यह तकनीक कैसे मालूम हुई? यह तो मेरा वेटरन ओवरसीयर भी नहीं जानता।"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढाई की है।"

"ओह, तुम इंजीनियरिंग स्टूडेंट हो?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "नहीं सर, मैंने इंजीनियरिंग कॉलेज में पढाई की है मगर फाइनल परीक्षा में फेल हो गया हूं।"

साहब ने देवीपद के कपड़े-लत्ते की ओर ध्यान से देखा। समझ गए, यह बहुत ही गरीब घर का लड़का है। पूछा, "तुम क्या फिर से परीक्षा दोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "एक बार और पढ़ूं इसके लिए मेरे पास पैसा नहीं है।"

"नौकरी करोगे?"

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "मुझे अब नौकरी देगा ही कौन?"

साहब ने कहा, "मैं तुम्हें नौकरी दूंगा।"

यह कहकर एक छपा हुआ कार्ड देवीपद मुखर्जी की ओर बढा दिया।

देवीपद मुखर्जी ने छपे हुए कार्ड को लेकर पढा। सुप्रसिद्ध इंजीनियरिंग फर्म, "सैक्सबी ब्रदर्स लिमिटेड। इनकॉर्पोरेटेड इन इंगलैंड।" उसके नीचे क्लाइव स्ट्रीट का पता और साहब का नाम लिखा हुआ है। मैकडोनल्ड सैक्सबी।

देवीपद मुखर्जी तब भी उस स्थिति को ठीक से हृदयंगम नहीं कर सके थे।

-फटी आखों से साहव की ओर देखा। साहव वोले, "कल सवेरे नौ वजे मेरे पते पर मुलाकात कर सकते हो?"

देवीपद मुखर्जी वोले, "हां सर, मिलूंगा।"

उसके वाद साहव अपने स्टाफ से वातचीत कर वाहर खड़ी गाड़ी में जाकर ठ गए।

देवीपद मुखर्जी दूसरे दिन ठीक नौ वजे सैक्सवी व्रदर्स लिमिटेड, इनकॉर्पोरेटेड न इंगलैण्ड के दफ्तर में जाकर हाजिर हुए। सूचना मिलने पर साहव ने अंदर बुला लिया।

देवीपद मुखर्जी ने जैसे ही कमरे के अंदर प्रवेश किया, साहव वोले, "सिट डॉउन मुखर्जी।"

देवीपद मुखर्जी कुर्सी पर वैठकर वोले, "गुड मॉर्निंग।"

"येस गुड मार्निंग। कल तुम्हारा काम देखकर मैं वहुत खुश हूं। मैं तुम्हें आज और अभी नौकरी दे सकता हूं। तुम करोगे?"

देवीपद मुखर्जी कृतज्ञता से विभोर हो गए। वोले, "सर नौकरी मिल जाएगी तो मैं आपका चिर आभारी रहूंगा। मैं वहुत ही गरीव आदमी हूं।"

मैकडोनल्ड साहव ने कहा, "मुखर्जी, मैं तुमसे एक वात कह रहा हूं ध्यान से सुनो। नौकरी देने से तुम्हारा कौन-सा उपकार होगा? तुम्हें तनख्वाह ही कितनी मिलेगी—मान लो, एक सौ, दो सौ या पांच सौ रुपया महीना। उससे ज्यादा तो नहीं। लेकिन मान लो, मैं शुरू में तुम्हें एक कॉन्ट्रैक्ट देता हूं—छोटा ही सही, उसके वाद धीरे-धीरे वड़े-वड़े कॉन्ट्रैक्ट दूंगा तो तुम स्वयं एक इंजीनियरिंग फर्म खोल लोगे। सोचकर देखो, उस समय तुम महीने में कितने हजार रुपए कमा सकते हो। ठीक से सोचकर देखो कि तुम नौकरी करोगे या सव-कॉन्ट्रैक्ट लोगे।"

उस दिन देवीपद मुखर्जी ने यह पहचानने में गलती नहीं की थी कि नौकरी वड़ी है या व्यवसाय। और चूंकि गलती न की थी इसीलिए मुखर्जी परिवार के लोगों के पास इतनी संपत्ति है, इतना वोल-वाला है उन लोगों का। उसी क्लाइव स्ट्रीट पर सैक्सवी व्रदर्स लिमिटेड खड़ा है। वह देवीपद मुखर्जी अव जीवित नहीं हैं। कम्पनी अव भी मौजूद है लेकिन उसका नाम वदल गया है। नाम रखा गया है सैक्सवी मुखर्जी एण्ड कम्पनी, इण्डिया लिमिटेड। उसके मालिक तीन व्यक्ति हैं। पहला, देवीपद मुखर्जी की विधवा पत्नी श्रीमती कनक लता देवी, दूसरा, देवीपद मुखर्जी का द्वितीय पुत्र मुक्तिपद मुखर्जी और तीसरा, स्वर्गीय देवीपद मुखर्जी के ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गीय शक्तिपद मुखर्जी का इकलौता वेटा श्री सौम्य मुखर्जी।

लेकिन सौम्य मुखर्जी अभी नावालिग है। वालिग होने पर वह भी कम्पनी का एक डाइरेक्टर हो जाएगा। श्रीमती कनक लता देवी इन्तजार में हैं कि कव वह वालिग हो। उसके वालिग होते ही दादी मां उसकी शादी कराकर निश्चिन्त हो जाना चाहती हैं।

•

यह है विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन का प्राचीन इतिहास। और सिर्फ प्राचीन ही नहीं, वल्कि वर्तमान का इतिहास। आदि-अन्तहीन मनुष्य का जो इतिहास इ

कलकत्ता मे तीन सौ वर्ष पहले शुरू हुआ था, लगता है इतने दिनों के बाद अब वह आज पूरा होने जा रहा है। आज बेड़ापोता से हरिहर लाहिड़ी का लड़का संदीप लाहिड़ी इस घर में आया है।

शाम को संदीप मल्लिकजी से सुनी बातों के सन्दर्भ में सोच रहा था। वह कहां आ गया? शायद यह भी एक बेड़ापोता ही है। बेड़ापोता का ही एक बृहद संस्करण।

मल्लिकजी बोले, "तुम ज़रा बैठो, मैं पूजा करके आता हूं।"

संदीप ने पूछा, "पूजा कहा कीजिएगा? इस घर में देवी-देवता हैं?"

"क्या कह रहे हो तुम! मंदिर है, देवी-देवता हैं। देवी-देवता न हों तो दादी मां क्या एक पल भी जिन्दा रह सकती हैं?"

मल्लिकजी चले गए और तत्क्षण कासे का घंटा बजने लगा, शंखध्वनि होने लगी। बेड़ापोता में भी चटर्जी भवन में शाम को इसी तरह पूजा-पाठ होता, कासे का घंटा बजता, शंखध्वनि होती और मा घर लौटने के दौरान केले के पत्ते मे खीरा-केला-चकोतरा या ईख के दो-चार टुकड़े और भीगे हुए मूग प्रसाद के रूप में ले आती।

मां कहती, "यह प्रसाद खा ले, खाने के बाद हाथ मे अपना माथा छू लेना। देवता का प्रसाद है। इसे खाने से पुण्य होता है। और खाते हुए मन ही मन कहो, प्रभु, मेरा मंगल करो।"

मां के कथनानुसार संदीप वही काम करता। कहता, 'प्रभु, मेरा मंगल करो।' हो सकता है उसी प्रभु की इच्छा मे उसे कलकत्ता आने का अवसर मिला है। इस कलकत्ता मे न आया होता तो क्या इस विडन स्ट्रीट, इस धर्मतल्ला और खिदिरपुर के इस मनसातल्ला लेन को देख पाता?

लेकिन मनसातल्ला लेन का तपेश गागुली भला आदमी नही है।

संदीप ने घर लौटने के दौरान यही बात कही। बोला, "मल्लिक चाचा, आप जो कुछ कहें, तपेश गागुली अच्छे आदमी नही लगते हैं।"

दरवाजे की कुंडी खटखटाते ही भद्दी आवाज में चिल्लाते हुए पूछा, "कौन? कौन दरवाज़ा ठेल रहा है?"

मल्लिकजी बोले, "मैं हूं तपेश बाबू, मैं—"

"मैं का मतलब? मैं कौन? मैं का क्या कोई नाम नही है?"

मल्लिकजी बोले, "मैं परमेश मल्लिक हू—विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन का मुनीम।"

"ओह!"

यह कहकर तपेश गागुली ने दरवाज़ा खोल दिया। संदीप ने देखा, तपेश गांगुली एक अंगोछा पहने है। शायद नहाने-धोने जा रहा है। गले में एक मैला जनेऊ।

बोले, "आइए-आइए, चलिए भीतर चलकर बैठिए। मैं बहुत देर तक आपका इन्तज़ार करता रहा। सोचा, शायद आज आप नहीं आइएगा, आखिर में स्नान करने जा रहा था।"

मल्लिकजी बोले, "ऐसा कहीं हो सकता है? आज महीने की पहली तारीख

है। मैं क्यों नहीं आता ? मुझे दादी मां ने कड़ी हिदायत दी है कि महीने की पहली तारीख को आपको किसी भी हालत में रुपया दे आना है। दादी मां के आदेश की भला अवहेलना कर सकता हूं ?"

तपेश बाबू बोले, "थोड़ी देर हो गई न, इसीलिए सोच रहा था···"

मल्लिकजी इस बीच जेब से रुपये निकालते हुए बोले, "बस में इतनी भीड़ थी गांगुलीजी कि क्या कहूं ! धर्मतल्ला के मोड़ पर तीन नम्बर बस पर चढ़ने के दौरान यह तो गिर ही पड़ा था। इसकी पीठ पर चढ़कर लोगों ने इसे कुचल दिया। यह पहले-पहल कलकत्ता आया है, इस तरह बस पर चढ़ने की इसे आदत नहीं है।"

"यह कौन है ?"

मल्लिकजी ने संदीप की तरफ इशारा करके कहा, "यह मेरे दोस्त का लड़का है, मैं इसे अपने भतीजे जैसा समझता हूं। इसके पिताजी मेरे दोस्त थे।"

तपेश गांगुली ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है भाई ?"

"संदीप कुमार लाहिड़ी।"

तपेश गांगुली बोले, "लिखाई-पढ़ाई कहां तक की है ?"

संदीप बोला, "हायर सकेंडरी पास कर चुका हूं, अब कलकत्ता में बी० ए० पढ़ूंगा। अभी तक दाखिला नहीं लिया है।"

मल्लिकजी बोले, "वह अभी कुछ दिन पहले आया है। अभी तक कलकत्ता की किसी चीज की उसे जानकारी नहीं है। वह देखिए, बस पर चढ़ने के दौरान धक्कम-धुक्का में किस तरह कुरता फट गया ! आपका घर पहचान ले, इसी खातिर उसे आज अपने साथ ले आया हूं।"

तपेश गांगुली बोले, "हां, कलकत्ता बहुत ही गई-गुज़री जगह है। मुझे लगता है, यहां का समाज ज्यादा दिनों तक टिक नहीं सकेगा।"

संदीप ने पूछा, "क्यों ?"

तपेश गांगुली बोले, "उम्र होने पर यह बात तुम्हारी समझ में आएगी। दर-अ: यहां का समाज बड़ा ही संवेदनशील है। इतना संवेदनशील समाज शायद ; दुनिया में कहीं नहीं होगा। यहां अगर कोई उन्नति करना चाहता है तो लोग उसे थप्पड़ मारकर बिठा देने की कोशिश करते हैं। जब जिस पार्टी के हाथ में सत्ता रहती है लोग उसी पार्टी के तलवे सहलाते हैं। और जब उस पार्टी के हाथ से सत्ता चली जाती है···"

मल्लिकजी ने इस प्रसंग को यहीं रोक दिया। बोले, "आप नहाने जा रहे हैं···आपको ज्यादा देर यहां रोककर नहीं रखूंगा।"

यह कहकर तपेश गांगुली को कुछ नोट देते हुए बोले, "अच्छी तरह गिन लीजिए।"

तपेश गांगुली जीभ का थूक उंगली में लगाकर एक-एक नोट गिनने लगे। एक बार गिनना खत्म हो गया तो दुबारा गिनकर देखा। उसके बाद निश्चिन्तता की सांस ली। लेकिन एक रुपये के एक नोट की ओर बार-बार देखने लगे। एक बार ऊपर उठाकर देखते हैं तो दूसरी बार नीचे झुकाकर। किसी भी हालत में संदेह दूर नहीं हो रहा। बोले, "यह नोट कैसा-कैसा तो लगता है मुनीम जी—इसे

ज़रा बदल दें।"

मल्लिकजी बोले, "लाइए देखूं।"

यह कहकर तपेश गांगुली की तरह ही नोट को घुमा-फिराकर देखा।

देखने के बाद निश्चिन्त होकर बोले, "यह नोट तो ठीक ही है—आप निश्चिन्तता के साथ ले सकते हैं।"

तपेश गांगुली बोले, "नहीं मुनीम जी, उस बार आपने पांच रुपये का एक नोट जो दिया था, उसके कारण बड़ी परेशानी उठानी पड़ी थी। कोई लेना नहीं चाहता था। सबने कहा, यह नोट नहीं लेंगे।"

मल्लिकजी बोले, "मैंने तो दूसरे महीने उस नोट को बदल दिया था—उस नोट को तुड़ाने में मुझे कोई असुविधा नहीं हुई थी—एक ही बात पर ले लिया।"

तपेश गांगुली बोले, "आप लोगों की बात ही जुदा है मुनीमजी। आप लोग बड़े आदमी हैं। आप लोगों की बात बाज़ार के लोग मानेंगे। हम लोगों की बात कौन मानेगा?"

मल्लिकजी बोले, "अच्छा, मुझे वह नोट दे दीजिए, और दूसरा ले लीजिए।"

यह कहकर खराब नोट ले एक दूसरा नोट दे दिया।

बोले, "अब हुआ तो?"

तपेश गांगुली खुश हो गए। बोले, "आपने आने में देर कर दी इसलिए ऑफिस जाने में मुझे देर हो गई।"

मल्लिकजी बोले, "मुझे आने में देर क्यों हो गई, यह तो बता ही चुका हूं। बहरहाल, बहू रानी कैसी हैं, यह तो बताइए।"

इस बीच तपेश गांगुली ने खाते पर रुपया-प्राप्ति की बाबत हस्ताक्षर कर दिया।"

उसके बाद चिल्लाकर पुकारा, "ओ भाभी, विडन स्ट्रीट से मुनीमजी आए हैं, विशाखा को भेज दो।"

खबर शायद घर के अंदर पहुंच चुकी थी। तपेश गांगुली की आवाज़ सुनते ही दो-तीन लड़कियां आकर उपस्थित हुईं। सभी की उम्र आठ-दस साल के बीच है। उनमें से एक लड़की देखने में बेहद खूबसूरत है। बाकी दोनों देखने में साधारण हैं। पता चल गया कि पहले से ही फ्रॉक पहनाकर तैयार करके रखा था।

"नमस्कार करो, मुशीजी को नमस्कार करो।"

तपेश गांगुली के आदेश पर सबों ने मल्लिकजी के चरणों का स्पर्श कर प्रणाम किया। सभी खासी चंचल हैं। उनमें से जो सबसे खूबसूरत है वह ज़रा अलग ही किस्म के स्वभाव की है। उसके पूरे शरीर में अलग से लज्जामिश्रित नम्रता का एक भाव चस्पां है।

मल्लिकजी ने उसी से पूछा, "कैसी हो बहूरानी?"

लड़की ने गरदन हिला दी। यानी वह अच्छी है।

"तुम्हारी तबियत ठीक है तो? मैं जैसे ही घर लौटकर जाऊंगा, दादी मां पूछेंगी कि अलका कैसी है। उस समय मुझे जवाब देना ही होगा। इसलिए पूछ रहा था—"

तपेश गांगुली बोले, "आप अलका क्यों कह रहे हैं मुनीमजी, उसका नाम तो

है। मैं क्यों नहीं आता ? मुझे दादी मां ने कड़ी हिदायत दी है कि महीने की पहली तारीख को आपको किसी भी हालत में रुपया दे आना है। दादी मां के आदेश की भला अवहेलना कर सकता हूं ?"

तपेश बाबू बोले, "थोड़ी देर हो गई न, इसीलिए सोच रहा था···"

मल्लिकजी इस बीच जेब से रुपये निकालते हुए बोले, "बस में इतनी भीड़ थी गांगुलीजी कि क्या कहूं ! धर्मतल्ला के मोड़ पर तीन नम्बर बस पर चढ़ने के दौरान यह तो गिर ही पड़ा था। इसकी पीठ पर चढ़कर लोगों ने इसे कुचल दिया। यह पहले-पहल कलकत्ता आया है, इस तरह बस पर चढ़ने की इसे आदत नहीं है।"

"यह कौन है ?"

मल्लिकजी ने संदीप की तरफ इशारा करके कहा, "यह मेरे दोस्त का लड़का है, मैं इसे अपने भतीजे जैसा समझता हूं। इसके पिताजी मेरे दोस्त थे।"

तपेश गांगुली ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है भाई ?"

"संदीप कुमार लाहिड़ी।"

तपेश गांगुली बोले, "लिखाई-पढ़ाई कहां तक की है ?"

संदीप बोला, "हायर सकेंडरी पास कर चुका हूं, अब कलकत्ता में बी० ए० पढ़ूंगा। अभी तक दाखिला नहीं लिया है।"

मल्लिकजी बोले, "वह अभी कुछ दिन पहले आया है। अभी तक कलकत्ता की किसी चीज की उसे जानकारी नहीं है। वह देखिए, बस पर चढ़ने के दौरान धक्कम-धुक्का में किस तरह कुरता फट गया ! आपका घर पहचान ले, इसी खातिर उसे आज अपने साथ ले आया हूं।"

तपेश गांगुली बोले, "हां, कलकत्ता बहुत ही गई-गुज़री जगह है। मुझे लगता है, यहां का समाज ज्यादा दिनों तक टिक नहीं सकेगा।"

संदीप ने पूछा, "क्यों ?"

तपेश गांगुली बोले, "उम्र होने पर यह बात तुम्हारी समझ में आएगी। दर-असल यहां का समाज बड़ा ही संवेदनशील है। इतना संवेदनशील समाज शायद इस दुनिया में कहीं नहीं होगा। यहां अगर कोई उन्नति करना चाहता है तो लोग उसे थप्पड़ मारकर बिठा देने की कोशिश करते हैं। जब जिस पार्टी के हाथ में सत्ता रहती है लोग उसी पार्टी के तलवे सहलाते हैं। और जब उस पार्टी के हाथ से सत्ता चली जाती है···"

मल्लिकजी ने इस प्रसंग को यहीं रोक दिया। बोले, "आप नहाने जा रहे हैं···आपको ज्यादा देर यहां रोककर नहीं रखूंगा।"

यह कहकर तपेश गांगुली को कुछ नोट देते हुए बोले, "अच्छी तरह गिन लीजिए।"

तपेश गांगुली जीभ का थूक उंगली में लगाकर एक-एक नोट गिनने लगे। एक बार गिनना खत्म हो गया तो दुबारा गिनकर देखा। उसके बाद निश्चिन्तता की सांस ली। लेकिन एक रुपये के एक नोट की ओर बार-बार देखने लगे। एक बार ऊपर उठाकर देखते हैं तो दूसरी बार नीचे झुकाकर। किसी भी हालत में संदेह दूर नहीं हो रहा। बोले, "यह नोट कैसा-कैसा तो लगता है मुनीम जी—इसे

ज़रा बदल दें।"

मल्लिकजी बोले, "लाइए देखू।"

यह कहकर तपेश गांगुली की तरह ही नोट को घुमा-फिराकर देखा।

देखने के बाद निश्चिन्त होकर बोले, "यह नोट तो ठीक ही है—आप निश्चिन्तता के साथ ले सकते हैं।"

तपेश गांगुली बोले, "नहीं मुनीम जी, उस बार आपने पांच रुपये का एक नोट जो दिया था, उसके कारण बड़ी परेशानी उठानी पड़ी थी। कोई लेना नहीं चाहता था। सबने कहा, यह नोट नहीं लेंगे।"

मल्लिकजी बोले, "मैंने तो दूसरे महीने उस नोट को बदल दिया था—उस नोट को तुड़ाने में मुझे कोई असुविधा नहीं हुई थी—एक ही बात पर ले लिया।"

तपेश गांगुली बोले, "आप लोगों की बात ही जुदा है मुनीमजी। आप लोग बड़े आदमी हैं। आप लोगों की बात बाजार के लोग मानेंगे। हम लोगों की बात कौन मानेगा ?"

मल्लिकजी बोले, "अच्छा, मुझे वह नोट दे दीजिए, और दूसरा ले लीजिए।"

यह कहकर खराब नोट ले एक दूसरा नोट दे दिया।

बोले, "अब हुआ तो ?"

तपेश गांगुली खुश हो गए। बोले, "आपने आने में देर कर दी इसलिए ऑफिस जाने में मुझे देर हो गई।"

मल्लिकजी बोले, "मुझे आने में देर क्यों हो गई, यह तो बता ही चुका हूं। बहरहाल, बहू रानी कैसी हैं, यह तो बताइए।"

इस बीच तपेश गांगुली ने खाते पर रुपया-प्राप्ति की बाबत हस्ताक्षर कर दिया।"

उसके बाद चिल्लाकर पुकारा, "ओ भाभी, विडन स्ट्रीट से मुनीमजी आए हैं, विशाखा को भेज दो।"

खबर शायद घर के अंदर पहुंच चुकी थी। तपेश गांगुली की आवाज़ सुनते ही दो-तीन लड़कियां आकर उपस्थित हुईं। सभी की उम्र आठ-दस साल के बीच है। उनमें से एक लड़की देखने में बेहद खूबसूरत है। बाकी दोनों देखने में साधारण हैं। पता चल गया कि पहले से ही फ्रॉक पहनाकर तैयार करके रखा था।

"नमस्कार करो, मुंशीजी को नमस्कार करो।"

तपेश गांगुली के आदेश पर सबों ने मल्लिकजी के चरणों का स्पर्श कर प्रणाम किया। सभी खासी चंचल हैं। उनमें से जो सबसे खूबसूरत है वह जरा अलग ही किस्म के स्वभाव की है। उसके पूरे शरीर में अलग से लज्जामिश्रित नम्रता का एक भाव चस्पा है।

मल्लिकजी ने उसी से पूछा, "कैसी हो बहूरानी ?"

लड़की ने गरदन हिला दी। यानी वह अच्छी है।

"तुम्हारी तबियत ठीक है तो ? मैं जैसे ही घर लौटकर जाऊंगा, दादी मां पूछेंगी कि अलका कैसी है। उस समय मुझे जवाब देना ही होगा। इसलिए पूछ रहा था—"

तपेश गांगुली बोले, "आप अलका क्यों कह रहे हैं मुनीमजी, उसका नाम तो

विशाखा है—यह नाम मेरे भैया ने रखा था, मतलव यह कि विशाखा के पिता ने ही यह नाम रखा था ।"

मल्लिकजी ने कहा, "दादी मां ने उसका यह नया नाम रखा है । अपने हिसाव के खाते में मैं अलका नाम ही लिखता हूं । दादी मां का यही हुक्म है ।"

उसके वाद अलका से पूछा, "तुम्हारी मां सकुशल हैं न ?"

लड़की ने गरदन हिलाई । यानी हां ।

तपेश गांगुली ने सवसे कहा, "अव तुम लोग यहां से चले जाओ ।"

मल्लिकजी ने पूछा, "अलका की लिखाई-पढ़ाई चल रही है न ?"

तपेश गांगुली वोले, "चलेगी क्यों नहीं ? लिखाई-पढ़ाई नहीं करेगी तो स्कूल में भर्ती कराया ही क्यों ? रुपया क्या इतना सस्ता है ?"

मल्लिकजी वोले, "कृपया ज़रा निगरानी रखिएगा । यहां से जाते ही दादी मां मुझसे वार-वार वहूरानी के वारे में पूछेंगी । हां, एक वात । उसे दूध, फल वगैरह दे रहे हैं न ?"

तपेश वावू वोले, "दूध-फल-छेना नहीं दे रहा हूं तो क्या एक सौ रुपया खुद ही डकार रहा हूं ?"

"नहीं, मेरे कहने का मतलव यह नहीं है । मैं जनाव हुक्म का वन्दा हूं । मुझे घर जाकर जिन वातों का जवाव देना है, वही कह रहा हूं ।"

तपेश गांगुली वोले, "वात तो सही है । लेकिन एक वात आपसे कह रहा हूं, आप जाकर दादी मां से मेरा यह निवेदन कह दीजिएगा ।"

"कहिए, क्या कहना है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "दादी मां आपके मारफत जो हर महीने एक सौ रुपया भेजती हैं उससे खर्च पूरा नहीं पड़ता । आप खुद ही सव कुछ देख रहे हैं । दिन-व-दिन देश की हालत वदतर होती जा रही है । वाज़ार जाने पर चीज़ों की कीमत सुनकर दिमाग खराव हो जाता है । हम पहले आठ आना सेर की दर से दूध खरीदते थे । वही दूध अव ढाई रुपया सेर विकने लगा है । आपकी वहूरानी को कैसे उतना दूध दूं, आप ही वताइए । जितना दूध खरीदता हूं, आपकी वहूरानी को ही पीने दे देता हूं । उस पर है फल वगैरह । आलू, मामूली आलू भी अव वारह आना सेर मिलता है । हमारे जैसे आदमी, जो नौकरी कर पेट भरते हैं, उन लोगों की कैसी वदतर हालत हो गई है, इस पर सोचकर देखें । अपने वाल-वच्चों को न खिलाकर सव कुछ आपकी वहूरानी को खिला देता हूं । मेरी लड़कियां आपकी वहूरानी की ओर एकटक देखती रहती हैं । वाप होने के वावजूद मुझे यह भी देखना पड़ रहा है । फिर भी मैं कहता हूं—सावधान, विशाखा के खाने की ओर मत ताकना । लेकिन अभी चूंकि उम्र कम है, इसलिए वे दूध पीने को रोने लगती हैं । वे भी दूध पीना चाहती हैं । वे भी छेना खाना चाहती हैं । यह है हालत ! आप ज़रा दादी मां को सव कुछ समझ कर कहिए । कहिएगा, मैंने यह सव कहने को कहा है । अगर हर महीने एक सौ के वदले डेढ़ सौ रुपया देना स्वीकार लें तो ज़रा सुविधा हो ।"

मल्लिकजी ने कहा, "ठीक है, मैं दादी मां से यह सव वात कहूंगा ।"

"हां, कहिएगा । वे सारा कुछ आप लोगों की वहूरानी के लिए दे रही हैं ।

इसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं। देखिए, भैया के मर जाने के बाद इतने दिनों से मैं ही उन लोगों का भरण-पोषण कर रहा हूं। इसमे भी तो खर्च है।"

इसके बाद मल्लिकजी रुके नही, उठकर खड़े हो गए। साथ ही संदीप भी उठकर खड़ा हो गया।

घर के बाहर आ मल्लिकजी बोले, "अच्छा, चलता हूं। इसे देख लीजिए। अगले महीने मैं नही आऊंगा, यही आएगा। इसका नाम संदीप कुमार लाहिड़ी है।"

तपेश गांगुली बोले, "आप मेरी बात याद रखिएगा। एक सौ रुपये के बदले एक सौ पचास रुपया दिया जाए, इस सम्बन्ध मे अपनी दादी मा से कहिएगा।"

इसके बाद मल्लिकजी नही रुके थे। तीन नंबर बस पकड़ दोनों एक साथ बिडन स्ट्रीट चले आए थे।

तब भी पूजा के कासे का घटा बज रहा था। बीच-बीच मे शखध्वनि हो रही थी। कमरे में अकेले बैठकर सदीप आकाश-पाताल सोच रहा था। हो सकता है मा अभी बेड़ापोता के चटर्जी भवन का काम समाप्त कर घर लौट आई हो और सदीप के बारे में ही सोच रही हो। सदीप भी मा को छोड़कर कभी इस तरह घर से बाहर नही रहा है।

कुछ देर बाद पूजा के बाजे की आवाज़ थम गई। मल्लिकजी लौट आए। बोले, "चलो सदीप, हम खाना खा आएं।"

सदीप को ज़ोरो की भूख लगी थी। मल्लिकजी हमेशा अकेले ही खाना खाते थे, आज उनके साथ सदीप आया है। दोपहर मे उसने भर पेट खाना खाया था, फिर भी भूख लग गई है उसे। बडे लोगों का मकान है। कितने ही आदमी यहा खाना खाते हैं। दिन-रात अनगिनत लोगों के लिए खाना पकाया जाता है। रसोईघर के पास एक और बड़ा कमरा है। ज़रूरत पडने पर वहा पचास व्यक्ति एक साथ खाने के लिए बैठ सकते हैं। लकड़ी के पीढे बिछे हुए हैं और उनके सामने केले के पत्ते पर दाल-भात-सब्ज़ी।

खाना खाते-खाते मल्लिकजी बोले, "खाने मे शरम मत करना संदीप। जिस चीज़ की ज़रूरत पडे, मागकर खा लेना।"

सदीप बोला, "देखिए मल्लिक चाचा, सवेरे मनसातल्ला लेन के जिस मकान मे गया था, वहा के तपेश गागुली भले आदमी जैसे नही लगे।"

मल्लिकजी बोले, "इन बातो पर तुम माथापच्ची मत करो। आदमी चाहे भला हो या बुरा, इससे तुम्हारा क्या आता-जाता है? तुम नौकरी करोगे, वेतन लोगे और हुक्म की तामील करोगे। बस, झंझट खत्म!"

सदीप ने पूछा, "आपने उस आदमी को एक सौ रुपया क्यो दिया?"

मल्लिकजी बोले, "दादी मा का यही हुक्म है।"

"लेकिन क्यों? ये लोग बड़े आदमी हैं और वे लोग गरीब! दादी मा उन लोगों के घर मे रुपया क्यो भेजती है?"

मल्लिकजी के कमरे के अन्दर ही सदीप के सोने का इंतज़ाम किया गया था।

फर्श पर तोशक बिछा हुआ है। उस पर चादर और सिरहाने एक तकिया।

रफ्ता-रफ्ता काफी रात हो गई। बाहर की आवाज़ कम होने लगी। कभी-कभी बिडन स्ट्रीट पर चलती हुई गाड़ी के हॉर्न की आवाज़ आती है और सो भी काफी अन्तराल के बाद।

सहसा ऊपर से एक महिला के गले की आवाज़ आई।

"गिरिधारी—"

नीचे के एक-मंजिले से एक पुरुष-कंठ की आवाज सुनाई पड़ी, "जी हुज़ूर—"

"गेट बंद करो।" तत्क्षण लोहे के गेट के बन्द होने की घर्घराहट सुनाई पड़ी।

मल्लिकजी बोले, "रात के नौ बज चुके हैं।"

संदीप ने पूछा, "नौ बजे गेट बन्द क्यों कर दिया गया मल्लिक चाचा?"

मल्लिकजी बोले, "दादी मां का हुक्म है कि ठीक रात नौ बजे गेट बन्द कर दिया जाए।"

"गिरिधारी कौन है?"

"मुखर्जी भवन का दरबान। दादी मां का हुक्म है, रात नौ बजे के बाद कोई घर के बाहर नहीं रह सकता। चाहे वे मुक्तिपद बाबू हों या सौम्य बाबू। सभी को रात नौ बजे के बीच घर लौटकर बिछावन पर सो जाना पड़ेगा। यह दादी मां का हमेशा से चला आ रहा हुक्म है। अगर गिरिधारी रात नौ बजे के बाद गेट खोल देगा तो उसकी नौकरी चली जाएगी।"

मुक्ति बाबू और सौम्य बाबू कौन हैं, संदीप को तब उस बात की जानकारी नहीं थी।

थोड़ी देर बाद ही मल्लिकजी की नाक बजने लगी। पता चल गया कि वे सो गए हैं।

रात क्रमशः गहरी हो गई। बाहर चारों तरफ सन्नाटा रेंगने लगा। मुकम्मल मकान जैसे नींद की बांहों में खो गया। न केवल यह मकान, बल्कि मुकम्मल कलकत्ता शहर जैसे आहिस्ता-आहिस्ता नींद में मशगूल हो गया।

लेकिन न जाने क्यों, संदीप को नींद नहीं आ रही है। जगी हुई हालत में वह आकाश-पाताल सोचने लगा। बेड़ापोता में मां भी शायद अभी जगी हुई ही होगी। जगकर संदीप के बारे में ही सोच रही होगी। मनसातल्ला लेन के मकान की भी याद आई। तपेशचन्द्र अच्छा आदमी नहीं है। अच्छा क्यों नहीं है, इस सम्बन्ध में वह कोई युक्ति पेश नहीं कर सकता। लेकिन उसने जो कुछ महसूस किया, मल्लिक चाचा से वही कहा था। दादी मां किसके लिए तपेश गांगुली को हर महीने रुपये भेजती हैं? उस विशाखा के दूध के लिए? वह छेना खा सके, इसीलिए? लड़की मगर देखने में बहुत ही सुन्दर है। लज्जा की एक विनम्रता उसके नाक-नक्श पर अलग से चस्पां है।

अचानक किसी आवाज़ से संदीप चौंक पड़ा। वह किस चीज़ की आवाज़ है?

कोई गेट खोल रहा है क्या? लेकिन नौ बजे के बाद गेट खोलने का नियम नहीं है। दादी मां की कड़ी हिदायत है। अवाक् हो संदीप ध्यान से सुनने लगा।

हां, यह तो गेट खोलने की ही आवाज है !

संदीप ने पुकारा, "मल्लिक चाचा, मल्लिक चाचा—"

मल्लिकजी की नाक ज़ोर से बज रही है और वे गहरी नींद में सोए हुए हैं। संदीप के द्वारा पुकारे जाने पर भी उनकी नाक का बजना खत्म नहीं हुआ। दिन-भर उन्हें कड़ी मेहनत करनी पड़ी है।

संदीप को एक तरह का सन्देह हुआ। वह चुपचाप बिस्तर से उठकर खड़ा हो गया। उठने के बाद आहिस्ता-से दरवाज़े की सिटकनी खोली। मल्लिकजी की नाक तब भी ज़ोरों से बज रही थी। दरवाज़ा खोल बाहर आंगन में आया। यहीं पूजा का दालान है। उस ओर जाने में भय लगने लगा कि कहीं कोई देख न ले, बाईं ओर मल्लिकजी का दफ्तर है। उसकी बगल से सदर की ओर जाने का रास्ता। संदीप धीरे-धीरे उस ओर गया और जाने के बाद देखा, दरवाज़ा खुला हुआ है। दरवाज़े के सूराख से उसने देखा, कोई गाड़ी चलाते हुए बाहर जा रहा है। उस आदमी के मुंह में एक जलती हुई सिगरेट है। उस सिगरेट की रोशनी से जितना कुछ दिखाई पड़ा उसमें पता चला कि उस आदमी की देह का रंग धपधप गोरा है। लेकिन उम्र ज़्यादा नहीं है। कहा जा सकता है कि संदीप का ही हम-उम्र है। गाड़ी चलाकर जैसे ही वह बाहर चला गया, गिरिधारी ने लोहे का फाटक बन्द कर दिया और उसके बाद ताला लगा दिया।

दादी मां की कड़ी हिदायत के बावजूद गिरिधारी ने रात नौ बजे के बाद गेट क्यों खोल दिया ? अभी रात के तकरीबन दस बजे गाड़ी अगर बाहर गई तो फिर कब वापस आएगी ? कितनी रात में वापस आएगी ? और गाड़ी गई ही तो कहां गई ? इतनी रात में कलकत्ता में तो सभी सो रहे होंगे। अभी कोई जगा हुआ नहीं होगा। लेकिन असली सवाल है कि वह कौन है ! मुक्तपद बाबू ?—दादी मां का छोटा लड़का ? या सौम्य बाबू—सौम्य मुखर्जी ?—दादी मां का पोता ? कौन है वह ?

बहुत सोचने-विचारने के बाद भी संदीप किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सका। बाहरी तौर पर जिस घर के इतने सख्त नियम-कानून हैं, उसकी आड़ में क्या इतने अनियम का सिलसिला चल रहा है ? अगर वह सौम्य मुखर्जी है तो इतनी कम उम्र में इतनी रात में वह कहां जा सकता है ?

संदीप सदर दरवाज़े को पार कर मल्लिकजी के दफ्तर की बगल से होकर जानेवाले रास्ते को तय कर पूजा के दालान में आया। वहां भी कहीं कोई जगा हुआ नहीं है। वहां से दबे पांवों संदीप अपने कमरे में चला आया। उस समय भी मल्लिकजी की नाक उसी रफ्तार से बज रही थी। बिना किसी तरह की कोई आवाज़ किए उसने कमरे के अन्दर की सिटकनी बन्द कर दी और अपने बिस्तर पर निढाल पड़ गया। उसके बाद उस सीमाहीन अंधेरे में आंखों की पलकें खोल ऊपर की ओर निहारने लगा। उसे महसूस हुआ कि उसके खुद के एकाकी जीवन की तरह ही संपूर्ण कलकत्ता अपनी आंखें खोल उसकी ओर अपलक निहार रहा है।

शुरू में संदीप को थोड़ा-बहुत आश्चर्य होता। इतना बड़ा मकान ! बेड़ापोता में इतना बड़ा एक भी मकान नहीं है। इतना ज़रूर है कि बेड़ापोता से कलकत्ता की तुलना नहीं की जा सकती। कलकत्ता की तरह इतने आदमी बेड़ापोता में कहां

हैं ? कलकत्ता में कौन कहां जाता है, कौन किस मकसद से चक्कर काटता है, कुछ भी समझ में नहीं आता। कलकत्ता के पड़ोस के मकान के लोग अपने पड़ोसी तक को नहीं पहचानते।

निवारण चाचा ने पहले ही सावधान कर दिया था।

बोले थे, "कलकत्ता जा रहे हो, वहां ज़रा सावधानी से घूमना-फिरना। कहीं जाना हो तो मल्लिक चाचा से पूछकर जाना।"

आने के समय मां रो दी थी। लेकिन इससे लड़के का कहीं अमंगल न हो, यह सोचकर आंखों के आंसू पल्लू से पोंछकर चेहरे पर असफल हंसी लाने की कोशिश की थी। संदीप की भी आंखें भर आई थीं लेकिन कलकत्ता जाने की खुशी में तमाम तकलीफें बरदाश्त कर ली थीं।

बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मकान में कुछ दिन बिताने के बाद संदीप इस मकान के नियम-कानून से परिचित हो गया। इस घर की मालकिन दादी मां हैं। दादी मां के हुक्म के मुताबिक ही इस घर का सारा काम-धाम चलता है। मानो इस घर की घड़ी की सुइयां भी दादी मां के हुक्म के बगैर चल नहीं सकतीं। दादी मां बेशक तीन-मंजिले पर रहती हैं मगर एक-मंज़िले-दो-मंज़िले का हर प्राणी उनके आदेश पर उठता-बैठता है। एक-मंज़िले या दो-मंज़िले के नल के नीचे अगर कोई पानी बर्बाद करता है तो तीन-मंज़िले पर दादी मां को इसकी भनक मिल जाती है। चिल्लाकर कहती हैं, "ऐ कालीदासी, दो-मंज़िले के नलघर में कौन पानी बर्बाद कर रहा है ?"

दो-मंज़िले की दाइयों की सरगना कालीदासी है। दो-मंज़िले में अगर कोई गैरकानूनी काम होता है तो इसके लिए कालीदासी ज़िम्मेदार ठहराई जाती है। एक-मंज़िला की ज़िम्मेदारी फुल्लरा पर है। एक-मंज़िले के तमाम अच्छे-बुरे काम की जवाबदेही फुल्लरा को ही देनी पड़ती है। तीन-मंज़िले से ही दादी मां चिल्लाकर कहती हैं "अरी फुल्लरा, एक-मंज़िले के सभी कमरों में धूना जलाया गया है या नहीं ?"

एक-मंज़िले में जो पश्चिममुखी ठाकुरबाड़ी है वहां देवी सिंहवाहिनी की प्रतिमा है। ठाकुरबाड़ी का पूरा काम-धाम कामिनी महरी के ज़िम्मे है। नित्य-पूजा का तमाम बंदोबस्त हुआ है या नहीं, इसकी निगरानी उसे रखनी पड़ती है। पूजा के फूल-बिल्वपत्र की आपूर्ति का भार कंदर्प पर है। चाहे वह देखने में कंदर्प जैसा न हो, मगर उसके मां-बाप ने उसका नाम रखा है कंदर्प। वह ठीक से फूल-बिल्वपत्र दे जाता है या नहीं, यह देखने का भार कामिनी पर है। अगर आपूर्ति नहीं करता है तो कामिनी तीन-मंज़िले पर जाकर दादी मां से शिकायत करती है।

दादी मां कंदर्प से पूछती हैं, "आज तुमने फूल-बिल्वपत्र देने में देर क्यों कर दी ?"

कंदर्प कहता है, "आज मुझे क्षमा कर दें दादी मां। आज सवेरे पानी बरस रहा था, इसलिए थोड़ी देर हो गई। अब कभी देर नहीं करूंगा दादी मां।"

दादी मां कहती हैं, "अब मैं तुम्हें क्षमा नहीं कर सकती कंदर्प। इस तरह की देर तुमने पहले भी की है और तुमने माफी मांगी थी—"

"दादी मां, उस बार मैं बीमार हो गया था।"

दादी मां कहती हैं, "तुम बीमार थे, यह क्या देवी-देवता सुनेंगे ? तुम बीमार पड़ोगे तो देवी-देवता की पूजा बंद रहेगी ? इसके चलते मेरे देवी-देवता निराहार नही रहेंगे ? उनकी नित्य-पूजा हर रोज़ नियम से ही होती रहेगी, चाहे पानी बरसे या कोई बीमार ही क्यो न हो जाए।"

कंदर्प तब चिरौरिया करने लगता है। कहता है, "अब कभी ऐसा नहीं करूंगा दादी मा। मैं माफी मांगता हूं—"

दादी मां कहती हैं, "अगर फिर इस तरह की गफलत होगी तो क्या करोगे ?"

कंदर्प कहता है, "अब बीमार पड़ूंगा तो अपने लड़के को भेज दूंगा।"

"तुम्हारे लड़के की उम्र क्या है ?"

"दस साल का है। मुझे एक ही लड़का है। इस लड़के के पहले जितनी भी संतानें हैं सब लडकियां ही हैं।"

दादी मां कहती हैं, "ठीक है, अबकी तुम्हें क्षमा कर दिया। फिर अगर किसी दिन गफलत करोगे तो मैं दूसरा आदमी रख लूंगी, यह कहे देती हूं।"

यह सब दो-मंजिले एक-मंजिले और ठाकुरबाडी की दाइयो से संबंधित मसले हैं। लेकिन तीन-मंजिले का ?

दादी मां की खास नौकरानी दादी मां के साथ तीन-मंजिले पर ही रहती है। उसका नाम बिन्दु है। बिन्दु पिछले तीस बरसो मे दादी मां की सेवा करती रही है। बिन्दु अपना अतीत भूल चुकी है, भविष्य के बारे में भी नहीं सोचती। वह सिर्फ वर्तमान के बारे मे ही सोचती है। वर्तमान को लेकर ही वह खुश है। कब से बिंदु इस घर में दादी मा की सेवा कर रही है, यह बात भी भूल चुकी है। याद रखने लायक उसे वक्त ही नही मिलता। सच, उसे समय मिल सकता है कैसे ? उसे क्या एक ही काम है ? भोर तीन बजे सोकर उठना पडता है। उसे भोर के बजाय रात ही कहना चाहिए। रात तीन बजे जब बिन्दु सोकर उठती है तो पूरे कलकत्ता में अंधेरा फैला रहता है ? दादी मां भी उसी समय सोकर उठ जाती है। नीद टूटते ही दादी मा पुकारती हैं, "बिंदु—"

बिंदु तैयार ही रहती है। तैयार होकर रहना ही बिंदु की नौकरी है। इतने दिनों से बिंदु इसी तरह तैयार रहती आई है। इसी तरह तैयार रहने के कारण ही अभी तक बिंदु की नौकरी बरकरार है।

तीन-मंजिले पर सुधा नाम की एक और नौकरानी है। तीन-मंजिले की पूरी जिम्मेदारी सुधा पर है। वह मझले बाबू, मंझली बहूरानी और उनके बाल-बच्चों की देखरेख करती है। सुधा कहती है, "बिंदु मजे में है। दादी मां के हुक्म की तामील करते ही उसे छुट्टी मिल जाती है। सारी परेशानी तो मुझे ही उठानी पड़ती है। इतने-इतने लोगों की फरमाइशें पूरी करते-करते मेरी देह ही टूट गई।"

यह बात बिंदु के कान मे पहुंचती है तो वह चिल्ला उठती है, "चुप रह हरामजादी, चुप रह। एक तुझे ही देह है और बाबू लोगो को देह नही है ? तेरी बात सुनकर मेरे कलेजे में आग लग जाती है।"

दादी मां के कान में यह सब बात नही पहुचती। दादी मा जब नीचे एक-मंजिले मे देवी को प्रणाम करने जाती हैं तो उस समय बिंदु और सुधा की आवाज़

सप्तम पर पहुंच जाती है। लेकिन दादी मां की आवाज़ कान में पहुंचते ही खामोशी खिंच आती है।

दादी मां ने कहा, "कौन है री विंदु ? किसके साथ इतनी बातें कर रही थी ?"

विंदु झटपट दादी मां की तरफ बढ़कर बोली, "मैं कहां किसी से बातचीत कर रही थी ?"

ऐसा हो सकता है। दादी मां वयोवृद्ध हो चुकी हैं। हो सकता है दो-मंजिले की कालीदासी की आवाज़ सुनी हो। पूरे मकान के ज़र्रे-ज़र्रे से वे परिचित हैं। किसी जमाने में दादी मां कम से कम चालीस बार तीन-मंजिले से उतरकर नीचे आतीं और ऊपर जाती थीं। उस समय उम्र कम थी। देखरेख करने के लिए भी कम आदमी थे। उनके पति देवीपद मुखर्जी सवेरे ही दफ्तर के काम से निकल जाते, उस समय घर की निगरानी रखने का उनके पास वक्त नहीं था। सास का देहांत कम ही उम्र में हो चुका है। ससुर उनके पहले ही दुनिया से चल बसे थे। तभी से घर का सारा कारोबार दादी मां के हाथ में है।

इस मुखर्जी भवन के मुनीम मल्लिकजी भी उसी समय से हैं।

संदीप यह सब नहीं जानता था लेकिन मल्लिकजी इन घटनाओं को देख चुके हैं। मल्लिकजी की उम्र जब संदीप के बराबर थी, तभी से वे इस घर के मुलाजिम हैं। अभी संदीप जिस तरह मल्लिकजी से काम सीख रहा है, मल्लिकजी भी उस समय तत्कालीन मुनीमजी से काम सीख रहे थे। उसके बाद देखते-देखते मल्लिक-जी काफी उम्र के हो गए और इस घर का माहौल भी बदल गया। एक दिन इस घर के मालिक देवीपद मुखर्जी एकाएक इस दुनिया से चल बसे। तभी मल्लिकजी को लगा था, इस घर की परमायु संभवतः समाप्ति पर पहुंच गई है, इस घर का इतिहास, लगता है, बीच राह में ही रुक गया है।

लेकिन नहीं, रुका नहीं। देवीपद मुखर्जी के दो लड़के थे। तब तक दोनों बड़े हो गए। बड़े का नाम है शक्तिपद, दूसरे का मुक्तिपद। ये लोग बाप के कारोबार की देखरेख करने लगे—सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कंपनी इंडिया लिमिटेड। बहुत बड़ा कारोबार है। कर्मचारियों की संख्या भी अनगिनत है। बड़े-बड़े इंजीनियर से लेकर प्यून तक शक्तिपद और मुक्तिपद के अधीन कार्यरत हैं। ऑफिस और फैक्टरी के काम की देखरेख लड़के करते हैं और गृहस्थी के काम-धंधे की निगरानी दादी मां रखती हैं। जिस तरह ऑफिस और फैक्टरी के कर्मचारी लड़कों के अधीन हैं उसी तरह घर के तमाम लोग दादी मां के अधीन हैं। तमाम लोग का मतलब लड़के, लड़कों की पत्नियां, नौकर, दाई, दरबान, मल्लिकजी और संदीप। घर में सबके ऊपर एक ही है और वे हैं दादी मां।

दादी मां ही हर्त्ता-कर्त्ता विधाता हैं। उन्हीं की बात पर सभी उठते-बैठते हैं। यही वजह है कि दादी मां जब ऊपर से चिल्लाती हैं, "ओ कालीदासी-काली-दासी, दो-मंजिले के नलघर का पानी कौन बर्बाद कर रहा है ?"

ऐसे में सभी संत्रस्त हो उठते हैं। फिर उस समय संत्रस्त हो उठते हैं जब तीन-मंजिले से दादी मां चिल्लाती हैं, "अरी फुल्लरा, एक-मंजिले के सभी कमरों में धूना जलाया गया है या नहीं ?"

काम-काज के मामले में कोई लापरवाही करेगा तो दादी मां उसे क्षमा नहीं करेंगी, यह सबको मालूम है और इसीलिए सभी उनसे डरते हैं।

और मल्लिकजी ?

मल्लिकजी को भी इसी नियम का पालन करना पड़ता है। मल्लिकजी के कामकाज पर भी दादी मां कड़ी नजर रखती हैं। हर रोज एक निश्चित समय में मल्लिकजी को खाता लेकर दादी मां के पास जाना पड़ता है। बिंदु हमेशा दादी मां के पास ही रहती है।

मल्लिकजी एक-मंजिले की सीढ़ियां चढ़कर दो-मंजिले पर जाते हैं और उसके बाद सीधे तीन-मंजिले पर। वहां जाकर निर्धारित समय पर पुकारते हैं, "बिंदु, ओ बिंदु—"

बिंदु को मालूम है कि यह मल्लिकजी के गले की आवाज है। दादी मां को भी मालूम है कि मल्लिकजी हर रोज इसी समय हिसाब का खाता लेकर आते हैं। एक दिन पहले किस-किस मद में क्या-क्या खर्च हुआ है, मल्लिकजी खाता देखकर बता देते हैं। बाजार खर्च डेढ़ सौ रुपया। डेढ़ सौ रुपये के दायरे में ही आलू-बैंगन-परवल से शुरू कर मछली-पान-तेल-नमक-जर्दा वगैरह मंगाए जाते हैं। उसके बाद किसी दिन अगर राजमिस्त्री का काम चलता है तो सीमेंट-ईंट-चूना-सुर्खी और लकड़ी खरीदने का खर्च रहता है। उसके बाद महीने के आखिर का खर्च है। मसलन, इस घर के कर्मचारियों का वेतन। कंदर्प के फूल-बेल-पत्ते का हिसाब। किसी की खांसी की दवा के मद में खर्च या ट्राम-बस का किराया। इसके बाद पेट्रोल के खर्च का हिसाब। हर खर्च के रुपये-आने-पाई का सही-सही ब्यौरा। जमा से नाम के जोड़ का घटाव कर जो बाकी बचता है, उसकी मोटी रकम के नीचे दादी मां एक लकीर खींचकर हस्ताक्षर कर देती हैं। गृहस्वामी की मृत्यु के बाद से यही नियम चलता आ रहा है।

उस दिन भी मल्लिकजी रोकड़ बही बगल में दबाए बोले, "चलो संदीप, मेरे साथ चलो।"

संदीप बोला, "कहां ?"

मल्लिकजी ने कहा, "दादी मां के पास। जमा-खर्च का हिसाब दादी मां को दिखाना है।"

वही पहली बार एक-मंजिला तय कर दो-मंजिले और फिर दो-मंजिले से तीन-मंजिले पर जाना था। जिसे अंत:पुर कहा जाता है, वही। एक-मंजिले की नौकरानी फुल्लरा ने मुंशीजी को ऊपर जाते देखकर कुछ नहीं कहा। दो-मंजिले पर पहुंचते ही कालीदासी बोल पड़ी, "कौन ? कौन आ रहा है ?"

मल्लिकजी बोले, "मैं हूं, मैं मुनीमजी।"

"जाइए मालिक, ऊपर जाइए।"

नौकरानियों को सारा कुछ मालूम है। दो-मंजिला तय कर तीन-मंजिले पर पहुंचते ही सुधा बोल उठी, "कौन ? कौन है ?"

हर दिन के रुटीन में बंधा-बंधाया काम। फिर भी कैफियत के तौर पर मल्लिकजी को कहना पड़ा, "मैं हूं री सुधा—मैं—"

जवाब सुनते ही सुधा दादी मां की खास नौकरानी को पुकारती है, "बिंदु,

मुनीमजी आए हैं। आइए—"

मल्लिकजी के पीछे-पीछे संदीप भी जा रहा था। यह पहली बार दादी मां को अपनी आंखों से देखने का मौका है। दादी मां यद्यपि वयोवृद्ध हो चुकी हैं, लेकिन देखने पर पता चल जाता है कि उनकी देह में भरपूर शक्ति है। इसी देह को लेकर दादी मां हर रोज़ ठाकुरवाड़ी में देवी को प्रणाम करने जाती हैं और पूजा समाप्त होने पर तीन तल्ले पर चली आती हैं। देह पर तसर की बिना किनारी की एक साड़ी है। देह के रंग से तसर का रंग एकाकार हो गया है। ऐसी गोरी हैं दादी मां!

दादी मां पश्मीने के एक आसन पर बैठी हुई थीं। मल्लिकजी सामने बिछी एक दरी पर जाकर बैठ गए। संदीप भी बगल में बैठ गया।

संदीप पर नज़र पड़ने पर दादी मां बोलीं, "यह लड़का कौन है?"

मल्लिकजी बोले, "यह संदीप है, बेड़ापोता से आया है। इसी के बारे में आपसे कहा था।"

इसके बाद संदीप से कहा, "प्रणाम करो, दादी मां को प्रणाम करो।"

संदीप ने दादी मां के सामने फर्श पर माथा टेककर प्रणाम किया। उसके बाद हाथों को अपने माथे से छुलाकर पूर्ववत् बैठ गया।

दादी मां ने पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"संदीप कुमार लाहिड़ी।"

"मां-बाबूजी हैं?"

संदीप ने कहा, "बाबूजी नहीं हैं, मां है।"

बाकी बातें मल्लिकजी ने बताईं, "यह लड़का बड़ा ही गरीब है। इसके पिता के मरने के बाद इसकी मां ने दूसरे के घर में कमाकर इसे पाला-पोसा है। आपको सब कुछ पहले ही बता चुका हूं।"

इसके बाद ज़्यादा कहने की ज़रूरत नहीं पड़ी। मल्लिकजी रोकड़ बही लेकर बैठ गए। दादी मां ने सारा कुछ ध्यान से सुना। उसके बाद जमा राशि के खाने में एक लकीर खींचकर नीचे हस्ताक्षर कर दिया। मल्लिकजी का काम खत्म हो गया। मल्लिकजी बोले, "और एक बात कहनी है दादी मां—"

"क्या?"

मल्लिकजी ने कहा, "कल संदीप को अपने साथ ले खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन तपेश गांगुली के घर गया था। इसके बाद तो इसी को रुपया ले जाकर देना है। सो तपेश गांगुली ने एक बात कही।"

"क्या कहा?"

"बोले, जिन्सों की कीमतें इस कदर बढ़ रही हैं कि आपके द्वारा हर महीने दी जानेवाली एक सौ रुपये की राशि से काम नहीं चलता। उस एक सौ की राशि को बढ़ाकर डेढ़ सौ करने के बारे में आपसे कहने को कहा है।"

"एक सौ रुपये में ग्यारह साल की लड़की का खर्च क्यों नहीं चलता?"

मल्लिकजी ने कहा, "तपेश बाबू ने जो कुछ कहा था, वही आपको बताया। अब आप जो कहिएगा, वही करूंगा।"

"आप क्या करने कहते हैं?" दादी मां ने पूछा।

मल्लिकजी ने कहा, "आप मालकिन हैं, जो करने कहिएगा, वही करूंगा।"

दादी मां ने कहा, "अच्छा ठीक है, चूंकि बहूरानी के चाचा ने कहा है इसलिए अगले महीने से पच्चीस रुपया और बढ़ा दीजिए। एक चीज पर ध्यान रखिएगा कि उस रुपये से बहूरानी के चाचा-चाची अपने बाल-बच्चों को न खिलाएं।"

मल्लिकजी ने कहा, "अगर खिलाएगा ही तो इसका पता हमें कैसे चलेगा ? फिर तो बहूरानी को पूछकर देखना होगा। और-और लोगों के सामने पूछा नहीं जा सकता। यह भी हो सकता है कि बहूरानी को पानी मिलाया हुआ दूध पिलाता हो और शुद्ध दूध अपने बाल-बच्चों को देता हो।"

दादी मां ने कहा, "आप बहूरानी को एकान्त में बुलाकर पूछिएगा। पूछिएगा, उस दिन किस चीज के साथ भात खाया है। मांस-मछली-फल वगैरह देता है या नहीं, यह भी पूछिएगा। शुद्ध दूध, फल, मांस-मछली न दिए जाएंगे तो सेहत कैसे अच्छी रहेगी ?"

मल्लिकजी ने कहा, "बात तो सही है।"

"मैं जब विशाखा को बहू बनाकर लाऊंगी तो लोग बहू को देखकर क्या कहेंगे ! मैं तो बहूरानी को देख चुकी हूं, देह में इतना रूप है मगर देखने से पता चल जाता है कि अच्छा खाना नहीं मिलता। विधवा मां, देवर के सिर का बोझ है। कौन खाने को देगा ? इसीलिए तो घी-दूध-मांस-मछली खाने के लिए महीने में एक सौ रुपया निर्धारित कर दिया था। आप कह रहे हैं तो महीने में और पच्चीस रुपये बढ़ा दीजिएगा।"

यही बात तय हुई। मल्लिकजी उठकर खड़े हो गए। उनका तब दैनिक निर्धारित काम समाप्त हो चुका था। सदीप भी मल्लिकजी के साथ ही उठकर खड़ा हो गया। जिस रास्ते से वे तीन-मंज़िले पर गए थे, उसी रास्ते से एक-मंज़िले पर मल्लिकजी के कमरे में पहुंचे। मल्लिकजी को तब ज़रा हल्केपन का अहसास हो रहा था। दादी मां के पास हिसाब लेकर जाना ही मल्लिकजी का दिन-भर का सबसे ज़रूरी काम है। वही जब निर्विघ्न खत्म हो गया तो चिन्ता की कौन-सी बात ?

कुछ देर बाद सदीप ने पूछा, "अच्छा मल्लिक चाचा, आप तपेश गांगुली को एक सौ रुपया क्यों दे आए ? वे इन रुपयों को लेकर क्या करेंगे ?"

मल्लिकजी तब एक दूसरा खाता लेकर बैठे हुए थे। बोले, "हर महीने उन्हें यह रकम लेकर पहुंचानी पड़ती है, दादी मां का यही हुक्म है।"

सदीप ने पूछा, "क्यों ? वे क्या इस घर के वेतनभोगी आदमी हैं ?"

मल्लिकजी बोले, "अरे, नहीं-नहीं। वे वेतनभोगी नौकर क्यों होने लगे ? वे रेल में नौकरी करते हैं। वह उनकी भतीजी के लिए···"

"उनकी भतीजी ?"

"हां, तपेश बाबू की भतीजी। उनकी भतीजी को दादी मां अपनी पौत्र वधू बनाकर इस घर में ले आएंगी।"

"तपेश बाबू की भतीजी की उम्र क्या है ?"

"यही दसेक साल। या ज्यादा से ज्यादा ग्यारह।"

संदीप ने हैरत में आकर कहा, "इतनी कम उम्र की लड़की को दादी मां

अपने घर ले आएंगी ?"

मल्लिकजी ने उत्तर दिया, "नहीं, अभी शादी नहीं होगी।"

"कब होगी ?"

"अभी बहुत देर है। दादी मां अभी से रिश्ता तय करके रख रही हैं। अभी से हर महीने एक सौ रुपया दे रही हैं ताकि उन रुपयों से भतीजी को अच्छी-अच्छी चीजें खिलाएं और अच्छे मास्टर को रखकर उसे लिखाएं-पढ़ाएं। जो लड़की मुखर्जी भवन की बहू बनकर आएगी उसे हर दृष्टि से योग्य होना चाहिए, उसे देखकर कोई निन्दा न कर सके।"

मल्लिकजी की ज़बान से उन बातों को सुनकर संदीप मानो सपनों के बीच से गुज़रकर एक अनाविष्कृत देश में पहुंच गया। दादी मां के जिस पोते से तपेश बाबू की भतीजी की शादी होगी, वह कहां है। संदीप ने उसे देखा नहीं है। वह देखने में कैसा है ? उसकी उम्र क्या है ? वह क्या करता है ? स्कूल या कॉलेज कहां पढ़ता है ?

हाथ में तीस रुपया लिए संदीप दूसरे ही दिन सड़क पर निकला। गिरिधारी गेट के पास खड़ा था। गेट के पास ही उसका कमरा है। वहीं वह रहता और सोता है। वहीं वह एक छोटे से चूल्हे पर खाना पकाता और जब थोड़ी-सी फुर्सत मिलती तो चट से खाना खा लेता। अकेले रहते-रहते जब उसे ज़रा एकान्त मिलता तो एक पुराना मैला जैसा तुलसीदास का रामचरितमानस पढ़ता। शुरू में गिरिधारी उससे कुछ नहीं कहता। लेकिन जिस दिन उसे पता चला कि संदीप मल्लिकजी के देस का आदमी है और उसकी मालकिन का काम करने के लिए ही आया है तो उसी दिन से वह अदब के साथ पेश आने लगा, क्योंकि उसे हर महीने मुनीमजी के कमरे में जाकर अपनी तनख्वाह लेनी पड़ती है। गिरिधारी देख चुका है, वहां संदीप मुनीमजी के पास रहता है। रुपया गिनकर देता है। लिहाजा ऐसे आदमी को सलाम करना उसके भाग्य के लिए बेहतर ही साबित होगा। तभी से गिरिधारी संदीप के घर आने या घर से बाहर जाने के दौरान सलाम करने लगा था। संदीप ने एक दिन पूछा, "अच्छा गिरिधारी, यह तो बताओ कि मुझे देखते ही तुम सलाम क्यों करते हो ?"

गिरिधारी बोला, "हुज़ूर, आप बड़े आदमी हैं।"

"मैं बड़ा आदमी हूं ?"

गिरिधारी ने कहा, "बेशक। आप तो मेरे मालिक हैं हुज़ूर।"

संदीप ने कहा, "नहीं-नहीं तुम मुझे सलाम मत किया करो। मैं बहुत गरीब आदमी का लड़का हूं। पेट के कारण नौकरी करने कलकत्ता आया हूं और लिखाई-पढ़ाई···तुम और मैं एक जैसे हैं।"

फिर भी गिरिधारी संदीप की बात मानने को राजी नहीं होता। कहता, "हुज़ूर, आप रात नौ बजे के पहले ही घर वापस आ जाया करें। दादी मां की हिदायत है कि रात नौ बजे गेट बन्द कर देना है।"

संदीप ने पूछा, "रात नौ बजे के बाद तुम गेट नहीं खोलोगे ?"

"नहीं हुज़ूर। दादी मां का यही हुक्म है।"

संदीप को ठीक रात के नौ बजे दादी मां के गले की जो आवाज़ सुनाई पड़ी

थी, उसका स्मरण हो आया। तीन-मंजिले में दादी मा चिल्लाती, "गिरिधारी, गेट बन्द कर दो।"

गिरिधारी को इस बात का ख्याल रखना पड़ता है कि कब रात के नौ बज गए। वह नीचे से चिल्लाता है, "गेट बन्द कर दिया दादी मां।"

तीन-मंजिले पर दादी मां गिरिधारी की बात सुनकर निश्चिन्त हो जाती हैं। तब दादी मां के सोने का वक्त हो जाता है। उस समय बिन्दु दादी मा के पैरों के पास बैठ उनका पांव दबाने लगती है। दिन-भर की मेहनत के बाद थकावट के कारण दादी मां का शरीर नींद से अवश हो जाता है। रात के आखिरी पहर, तीन बजे उन्हें फिर सोकर उठना है। चौबीस घण्टे के दरमियान छह घण्टे की यह नींद इस वय के लिए पर्याप्त है। तीन बजे उठकर दादी मां तैयार हो जाती हैं। यह उनकी हमेशा से चली आ रही आदत है—जब देवीपद मुखर्जी जिन्दा थे तभी से। यह बहुत पहले की बात है। देवीपद मुखर्जी को भी तब अलस्सुबह जगना पड़ता था। उन्हें ढेर सारा काम रहता था। उन्होंने तब मैकमर्थी मुखर्जी एण्ड कम्पनी इंडिया को नए सिरे से उस वक्त तैयार किया था। उनका कारखाना बेलुड़ में है लेकिन दफ्तर डलहौजी स्क्वायर में। इतनी बड़ी फैक्टरी की उन्होंने स्थापना की है, यह कहना गलत होगा। कहा जा सकता है कि मैकडोनल्ड साहब ही उनके सिर पर यह कंपनी रखकर चले गए हैं। उन दिनों चिन्ता से उन्हें रात में नींद नहीं आती थी। उस जमाने में इतनी बड़ी गृहस्थी की देखरेख दादी मां अकेले ही करती थीं। एक ओर एक-मंजिले दो-मंजिले और तीन-मंजिले के नियमों को बरकरार रखना और दूसरी ओर ठाकुरबाड़ी की मूर्ति सिंहवाहिनी का पूजा-पाठ और उसके साथ बाबूघाट जाकर गंगा-स्नान करना। चाहे आंधी आए, पानी बरसे या भूकंप ही क्यों न हो, हर रोज सवेरे तीन बजे जगकर पांच बजे तक बाबूघाट जाकर गंगा-स्नान करना अत्यन्त आवश्यक था।

गंगा-स्नान करने के लिए जाने के दौरान अचानक एक दिन दादी मा को इस लड़की का पता चला। छोटा गोरा-चिट्टा शरीर। उम्र ज्यादा से ज्यादा नौ-दस या ग्यारह साल। उससे अधिक नहीं। गाड़ी से उतर दादी मा बाबूघाट के दालान में गई है। उनका वेतनभोगी पंडा है। उन पर नजर पड़ते ही दशरथ दूसरे यजमानों को छोड़ शुरू में दादी मां की अभ्यर्थना करता है।

उस दिन भी दशरथ ने और-और दिनों की तरह ही कहा, "आइए दादी मा, आइए—"

यह कहकर वह उठकर खड़ा हो गया। दूसरे किसी और यजमान पर नजर पड़ने पर दशरथ उठकर उसकी इस तरह अभ्यर्थना नहीं करता। दादी मा जैसा सम्पन्न कोई दूसरा यजमान भी इस कलकत्ता में नहीं है उसका। उस समय दशरथ के चाहे जितने भी यजमान क्यों न हों, दशरथ उन्हें एक किनारे हटा देता है। उसे सिर्फ माहवारी तनख्वाह मिलती हो, ऐसी बात नहीं। हर साल पूजा के समय दशरथ बिडन स्ट्रीट भवन से आकर मल्लिकजी से एक धोती और एक अंगोछा ले जाता है। इसके अलावा रथ के समय, स्नान-यात्रा के दिन भी उसे चार-पांच रुपए बख्शीश मिलता है। यह उसकी ऊपरी आय है। इसके अतिरिक्त संकट की घड़ी में हाथ फैलाने पर दादी मा उसे निराश नहीं करती।

उस दिन शायद कोई विशेष योग था, इसलिए बाबूघाट में बहुत सारे लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई थी। भीड़ में ज्यादातर औरतें ही थीं। उस दिन भी दशरथ ने दादी मां की अभ्यर्थना की। और-और दिनों की तरह बिन्दु भी साथ ही थी। दशरथ के पास ही वह लड़की खड़ी थी।

दादी मां ने दशरथ से कहा, "बिन्दु, दशरथ से पूछो कि यह लड़की कौन है।"

सचमुच लड़की की तरफ से आंख हटाना मुश्किल हो गया है। बिन्दु ने दशरथ से पूछा तो उसने बताया कि वह इस लड़की को नहीं पहचानता। उसकी मां उसे यहां रखकर गंगा नहाने गई है। थोड़ी देर बाद ही उसकी मां यहां आएगी।

लड़की देखने में हालांकि बहुत सुन्दर है लेकिन पता चल जाता है कि गरीब घर की है। देह का फ्रॉक पुराना है। दादी मां ने लड़की के पास जाकर पूछा, "मुन्नी, तुम लोग कहां रहती हो?"

लड़की ने कहा, "खिदिरपुर में।"

"खिदिरपुर में कहां? घर का पता क्या है?"

लड़की डरी नहीं। बोली, "सात नंबर मनसातल्ला लेन—"

दादी मां ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है बिटिया?"

लड़की बोली, "पहले मेरा नाम अलका था। स्कूल में दाखिला लेने के बाद मेरे चाचा ने मेरा अलका नाम बदल कर विशाखा रख दिया।"

दादी मां ने पूछा, "क्यों?"

लड़की बोली, "उस समय मेरे पिताजी का देहान्त हो गया था, इसीलिए चाचाजी ने नाम बदल दिया।"

"तुम्हारे पिताजी नहीं हैं?"

"नहीं, सिर्फ मां है।"

दादी मां ने पूछा, "तुम लोग क्या अपने चाचा के पास रहती हो?"

विशाखा ने उत्तर दिया, "हां।"

"तुम्हें और भाई-बहन नहीं हैं?"

"नहीं।"

"तुम्हारे चाचा को बाल-बच्चे नहीं हैं?" दादीजी ने पूछा।

"हां, मेरी एक चचेरी बहन है, उसका नाम है बिजली। उसी के नाम से मिलता-जुलता मेरा नाम विशाखा रखा गया है।"

"तुम्हारे घर में सब मिलकर कितने आदमी हैं?"

विशाखा बोली, "मैं, मेरी मां, मेरे चाचाजी, मेरी चचेरी बहन बिजली और मेरी चाचीजी, कुल मिलाकर पांच जने।"

"तुम्हारे चाचा का नाम क्या है बिटिया?"

विशाखा बोली, "श्री तपेश कुमार गांगुली।"

"तुम लोग ब्राह्मण हो? तुम्हारे चाचाजी क्या करते हैं? नौकरी?"

"हां।"

"कहां नौकरी करते हैं?"

"रेल के दफ्तर में।"

"कितना वेतन मिलता है ?"

विशाखा ने कहा, "यह मुझे मालूम नहीं।"

बात सही ही है, छोटी-सी इस दुधमुंही बच्चा को चाचा के वेतन की जानकारी कैसे हो सकती है ! वास्तव में दादी मा को यह बात पूछनी ही नहीं चाहिए थी। तब चारों तरफ लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई थी। और-और दिन इतनी भीड़-भाड़ नहीं होती। अब देर होने से, हो सकता है, स्नान ही न कर सकें। चारों तरफ आदमी के सामने इतनी समस्याएं हैं और वे समस्याएं जितनी ही बढ़ती जा रही हैं लोगों का स्नान-ध्यान भी उतना ही बढता जा रहा है। और सिर्फ गंगा-स्नान ही नहीं, दादी मा ने देखा है चाहे कालीघाट का मंदिर हो या दक्षिणेश्वर का मंदिर, हर जगह पूजा करनेवालों की भीड़ बढ़ती ही जा रही है। लोगों की भीड़-भाड़ से निकल उन्होंने किसी तरह गंगा-स्नान कर लिया। उसके बाद बिन्दु को साथ ले सड़क पर खड़ी अपनी गाड़ी में जाकर बैठ गईं।

बिन्दु से कहा, "दशरथ के पास फिर वह लड़की दिखाई नहीं पड़ी। वह क्या चली गई ? तूने देखा था ?"

बिन्दु ने कहा, "हां, अपनी मा के साथ चली गई।"

एक साधारण-सी मुलाकात। उसी छोटी-सी मुलाकात के दौरान दादी मा के मन पर उस लड़की ने जैसे एक अमिट रेखा खींच दी हो। घर में उस दिन भी मल्लिकजी एक-मंजिले से दो-मंजिले पर आए। कालीदासी ने दो-मंजिले से तीन-मंजिले की सुधा को ज्यों ही यह सूचना दी, बिन्दु आकर मुनीमजी को दादी मा के पास ले गई। दादी मा तैयार होकर ही बैठी थीं। दादी मा के सामने बैठ मल्लिकजी ने और-और दिनों की तरह ही रोकड़-बही निकाल पढ़कर सुनाया। अन्यान्य दिनों की तरह ही दादी मा ने जमा-नाम के अंक के नीचे लकीर खींचकर हस्ताक्षर कर दिया। उसके बाद मल्लिकजी बाकायदा हिसाब के कत्थई खाते को बगल में थामे जाने की तैयारियां करने लगे। लेकिन दादी मा ने जाने से मना किया। बोलीं, "एक बात कहनी है मुनीमजी, थोड़ी देर और बैठिए।"

मल्लिकजी बैठ गए। दादी मा ने कहा, "आज सवेरे गंगा नहाने के लिए जाने पर गंगाघाट पर एक लड़की पर नजर पड़ी। अद्‌भुत सुन्दरी थी, देखकर मेरे मन-प्राण आनंद से भर गए। उम्र होगी दस या ग्यारह साल। देखकर लगा कि गरीब घर की लड़की है। मैंने नाम पूछा तो बताया कि उसका नाम विशाखा है। विशाखा गांगुली। सुनकर लगा कि उन लोगों के घर से हम लोगों के घर का शादी-ब्याह का रिश्ता हो सकता है। सो सोचा, अपने पोते से विशाखा की शादी करा दूं तो कैसा रहे—"

"पात्री की उम्र कितनी बताई आपने ?"

दादी मा ने कहा, "यही दस या ग्यारह, उससे ज्यादा नहीं। लेकिन शादी मैं अभी नहीं कराऊंगी, बातचीत तय कर लूंगी। जब सुना कि हम लोगों के घर से उन लोगों का रिश्ता हो सकता है तो यह बात मेरे ध्यान में आई। ऐसी सुन्दर लड़की, हो सकता है बाद में न मिले। इसके अलावा पात्री जब बड़ी हो जाएगी तो कलकत्ता का कोई दूसरा बड़ा आदमी उसका वह रूप देखकर, हो सकता है उसे

अपने लड़के की दुल्हन बनाकर ले जाए। तब ? तब क्या होगा ? आपका कहना क्या है ?"

मल्लिकजी बोले, "मैं क्या कहूं दादी मां, आप जो अच्छा समझें वही कीजिए।"

"फिर भी आपकी राय जानना चाहती हूं। आप तो इतने बरसों से इस घर में हैं, आप सब कुछ देख चुके हैं और देख रहे हैं। घर के स्वामी को भी आप देख चुके हैं। आपसे इस घर का कुछ छिपा हुआ नहीं है। आप ही बताइए कि अभी से पात्री पसंद करना ठीक रहेगा या नहीं।"

मल्लिकजी क्या कहें ! सिर्फ इतना ही कहा, "हां ज़रूर, बहुत अच्छी बात है।"

दादी मां बोलीं, "गृहस्वामी ज़िन्दा रहते तो मैं इन सब बातों के बारे में नहीं सोचती। उनकी गृहस्थी थी, वे जो ठीक समझते वही करते। मेरे छोटे लड़के मुक्ति का उदाहरण लें। मुक्ति की वे शादी कराकर दुनिया से विदा हुए हैं, उसका क्या नतीज़ा हुआ इसे तो आप जानते ही हैं। कहां चले गए शक्ति और उसकी पत्नी और कहां हैं अब मुक्ति और उसकी पत्नी। मेरी गृहस्थी चलाने की साध हमेशा के लिए खत्म हो गई। अब मैं इतने बड़े मसान में धूनी जलाकर बैठी हुई हूं। इसीलिए तय किया है, अब मैं उस गलती को नहीं दुहराऊंगी। गलती जो होने को थी, हो चुकी है। अबकी मैं गुरुदेव को बुलाकर पात्री की जन्मपत्री दिखा लूंगी और जांच-परखकर गरीब घर की सुन्दर लड़की लाकर उससे सौम्य की शादी करा दूंगी। कहिए, ठीक काम कर रही हूं या नहीं।"

मल्लिकजी अब कह ही क्या सकते हैं ! मालकिन जो कुछ कह रही हैं उससे अलग हटकर कुछ कहने का अधिकार नहीं है उन्हें। वे इस घर के परिवार के सदस्य नहीं हैं। वे मात्र एक मासिक वेतनभोगी कर्मचारी हैं। उनका कोई व्यक्तिगत मतामत नहीं होना चाहिए, खासतौर से ब्याह-शादी के मामले में।

दादी मां बोली, "आप तो कुछ भी नहीं बोल रहे हैं।"

"आपने जो कुछ सोचा है, वही कीजिए। छोटे मुन्ने का ब्याह खूब सोच-समझकर ही करना चाहिए, नहीं तो फिर छोटे बाबू जैसी घटना हो जाएगी।" मल्लिकजी ने कहा।

दादी मां ने कहा, "हां, यही कहिए। गृहस्वामी इतने अक्लमंद होने के बावजूद लड़कों की ऐसी शादियां करा गए कि मेरी तो हालत खराब हो गई। अब जान भले ही चली जाए पर मैं बड़े आदमी के घर से लड़की लाने नहीं जा रही हूं, यह कहे देती हूं। उफ्, कैसी बहू ले आए थे गृहस्वामी कि जिस लड़के को मैंने जन्म दिया, उसे एकदम से पराया बनाकर रख दिया !"

बात करते-करते दादी मां का गला ईषत् रुंध गया। फिर भी वह रुंधे गले से ही कहने लगीं, "ऐसी पिशाचिन मां है कि पोता-पोती को दादी से मिलने को एक बार इस घर में भेजती तक नहीं। मेरा कहना है, यदि मैं शादी नहीं कराती तो तुझे कहां मिलता ऐसा पति ? मुनीमजी, आप ही बताइए मैं क्या गैर वाजिब बात कह रही हूं ? मुझे भी तो पोता-पोती को देखने की लालसा होती है। पूजा के अवसर पर भी इस घर में कदम नहीं रखा।"

मल्लिकजी ने सान्त्वना भरे स्वर में कहा, "लेकिन मंझले बाबू तो आते हैं, मंझले बाबू तो पूजा के समय आपको प्रणाम कर जाते हैं—"

दादी मां बोलीं, "कौन? आप किसकी बात कर रहे हैं? मुक्ति? मुक्ति क्यों नहीं आएगा, गुनू! गृहस्वामी कम्पनी खड़ी कर गए, इसीलिए तो आज उन्हें भोजन नसीब हो रहा है। इसी में अब भी नवाबी कर पा रहे हैं। आपने सुना ही होगा कि छोटी बहू ने भी फिर एक नई गाड़ी खरीदी है। लड़के और बहू दोनों को दो-दो गाड़ियां और दो-दो ड्राइवर हैं—यह सब किसकी बदौलत हो रहा है? कौन रुपये दे रहा है? किसके लिए मकान खड़ा हुआ? क्यों, इस घर में क्या जगह नहीं थी? इस घर में क्या रहने की जगह नहीं थी?"

दादी मा की यह जलन, यह गुस्सा बहुत पुराना है। जितनी बार यह प्रसंग छिड़ा है, उतनी ही बार दादी मा ने मल्लिकजी को यह सब बातें सुनाई हैं। मुनीमजी को यह सब सुनने की जरूरत ही क्या है? वे इस घर के कौन होते हैं? वे तो मात्र एक वेतनभोगी कर्मचारी हैं। वे तो पराए हैं।

मल्लिकजी को याद है, जब मुक्तिपद के मकान का बनना शुरू हुआ, उस समय दादी मा गुस्से से बावली हो गई थीं। कहा था, "क्यों, इस मकान में रहने में तुम्हें जगह की कमी महसूस हो रही थी? नया मकान बनवाने की राय तुम्हें किसने दी, गुनू? छोटी बहूरानी ने?"

मुक्तिपद ने कहा था, "तुम यह क्यों नहीं समझती मा कि प्रोपर्टी बढ़ाना अच्छी बात है। बैंक में रहेगा तो रुपये की कीमत बढ़ेगी नहीं। कुछ ही दिनों में रुपये की कीमत घटते-घटते पाच पैसे के बराबर हो जाएगी—इसके बजाय प्रोपर्टी में इनवेस्ट करने से रुपये फलते-फूलते रहेंगे।"

दादी मा ने कहा था, "यह सब तुम्हें किसने बताया है? तुम्हें यह अक्ल किसने दी है, गुनू। छोटी बहू ने?"

मुक्तिपद ने कहा, "नहीं, उसने नहीं, सोलिसिटर ने यह उपाय बताया है।"

दादी मा ने कहा था, "तुम्हारी निगाह में आज सोलिसिटर ही सब कुछ है और मैं कुछ भी नहीं? तुम्हारे सोलिसिटर ने यह कहा है कि प्रोपर्टी बनाकर अपनी गृहस्थी अलग बसा लो? खैर, जो अच्छा समझो, वही करो, मेरे सामने यह सब सफाई पेश करने की दया मत करो। सीधे कहो कि तुम अपना घर और हांडी अलहदा करना चाहते हो।"

इसके बाद दो-मंजिले और तीन-मंजिले में कोई मानसिक या हार्दिक संबंध नहीं रहा। और आर्थिक संबंध? आर्थिक संबंध का सवाल पैदा ही नहीं होता, क्योंकि गृहस्वामी बहुत पहले ही पक्का इन्तजाम कर गए थे। मुखर्जी भवन के मालिक देवीपद मुखर्जी कम्पनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर थे। उनकी पत्नी कनकलता देवी जिस तरह कम्पनी की एक डाइरेक्टर हैं, उसी तरह उनका बड़ा लड़का शक्तिपद मुखर्जी और उनकी स्त्री तथा छोटा लड़का मुक्तिपद मुखर्जी और उनकी पत्नी भी डाइरेक्टर हैं। सब मिलाकर इस मैक्सवी मुखर्जी एण्ड कम्पनी, इण्डिया लिमिटेड के पांच डाइरेक्टर हैं। ये पांच जने इस संपत्ति के मालिक हैं।

आश्चर्य है, आदमी मन ही मन कितने सपने देखते हैं, कितने सपनों के जाल बुनते हैं! मल्लिकजी को आज भी याद है, जिस दिन मैकडोनल्ड साहब बड़े बाबू

के हाथ में कम्पनी सौंपकर विलायत चले जा रहे थे, उस दिन साहब को वड़े बाबू ने इसी मकान में एक पार्टी दी थी। सिर्फ साहब को ही नहीं, वल्कि पुरानी विलायती कम्पनी के जितने भी अंग्रेज़ डाइरेक्टर थे, सभी को इस पार्टी में निमंत्रित किया गया था। साहबों के साथ मेमसाहबों को भी बुलाया गया था। केलना के होटल के मालिक को खाने-पीने की सामग्री का ऑर्डर दिया गया था। पार्टी में कितनी तरह की व्हिस्की, ब्राण्डी, बियर और सोडे की बोतलें आई थीं, इसका कोई हिसाब नहीं। सिर्फ शराब ही नहीं, उसके साथ तरह-तरह के मांस—चिकेन, मटन, बीफ। इसके अलावा बिरयानी, पोलाव, तंदूरी, प्रॉन और सैण्डविच तथा परिज और अन्त में पुडिंग। मल्लिकजी ने अपनी तत्कालीन अल्प वय में उन चीज़ों का नाम भी नहीं सुना था। और सिर्फ खाना-पीना ही चला था? साथ में बैण्ड पार्टी थी। विडन स्ट्रीट अंचल का कोई भी आदमी उस रात के आखिरी पहर तक विलायती वाजे-गाजों के कारण सो नहीं सका था। एक ओर पार्टी चल रही थी और दूसरी ओर आकाश में फुलझड़ियां उड़ रही थीं और साथ ही आतिशबाज़ी भी चल रही थी। कोई पटाका ज़मीन पर फट जाता और कोई आसमान में उड़-कर फटता। फटकर तारकों की माला बन आकाश में तैरते हुए ज़मीन पर उतर जाता। कितनी चमक-दमक, कितना तड़क-भड़क लिए था वह दृश्य!

उस विलायती कंपनी के मालिक देवीपद मुखर्जी के बनने के बाद उनका बड़ा लड़का बालिग हो गया, उसकी शादी हुई और घर में दुल्हन आई। बालिग होते ही वह कंपनी का डाइरेक्टर बन गया, उसकी पत्नी भी डाइरेक्टर बन गई।

लेकिन सास से बहू का बनाव नहीं हुआ। ससुर के द्वारा पसन्द की गई बहू सास के मनोनुकूल साबित नहीं हुई। घर में अशांति शुरू हो गई। बाहर बड़े आदमी का वैभव था और अन्दर दबी हुई आग। बाहर से कोई समझ नहीं सका। लेकिन कैंसर की तरह वह अन्दर ही अन्दर समूचे शरीर में फैलने लगी।

इसके बाद जब मुक्तिपद बड़ा हुआ तो नियमानुसार वह भी डाइरेक्टर हो गया। कुछ दिनों के बाद उसकी भी शादी हुई। लेकिन सास से उस बहू का भी बनाव नहीं हुआ।

ठीक उसी समय घर के मालिक देवीपद मुखर्जी की आकस्मिक मृत्यु हो गई।

उसी दिन से दादी मां के जीवन की अमावस्या का आरम्भ हुआ।

उसके बाद से इस मुखर्जी भवन में जिस अविश्वसनीय कहानी की शुरुआत हुई, उसी पर आधारित है 'यह नरदेह'—यह बृहत् उपन्यास।

लेकिन वह बात अभी नहीं, बाद में बताऊंगा।

•

संदीप ने पूछा, "इसके बाद क्या हुआ?"

परेश मल्लिक के मित्र का लड़का है यह संदीप। संदीप लाहिड़ी। यही संदीप लाहिड़ी भाग्य के किस कल-कब्जे के ताने-बाने में पड़कर, इस मुखर्जी भवन से जुड़कर, बलहीन-तिरस्कृत और जर्जर होकर बुझ जाएगा, यह बात क्या वह उस समय जानता था? जानता तो हो सकता है दो मुट्ठी अन्न के लिए कलकत्ता नहीं आता। आता भी तो इस अभिशप्त मकान की चारदीवारी में प्रवेश नहीं करता।

मल्लिकजी बात करते-करते संभवतः खुद भी अतीत के जाल में फंस गए, इसीलिए थोड़ा-बहुत अन्यमनस्क हो गए थे। एकाएक संदीप के प्रश्न से उनकी चेतना लौट आई।

सच, बीते दिनों की परिक्रमा बड़ी ही मधुर होती है। चाहे वह सुख के बीते हुए दिन हों या दुख के, वे मिठास लिए हुए होते हैं। मनुष्य की उम्र जितनी ही बढ़ती जाती है, वह उतना ही अतीत के दायरे में चक्कर लगाना शुरू कर देता है। परमेश मल्लिक की घर-गृहस्थी की साधें पूरी नहीं हुई थीं, उनकी खुद की इच्छाएं भी अधूरी रह गई थीं। वे जिस परिवार में घनिष्ठ रूप में जुड़ गए थे, उस परिवार के उत्थान-पतन के बीच आदमी के जीवन के इतिहास का एक टूटा हुआ हिस्सा देखकर चले गए। और जो कुछ उनके लिए अनदेखा रह गया था, उसे देखने के लिए बेडापोता में सदीप लाहिड़ी नामक एक आदमी बारह बटे ए सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी लिमिटेड, इंडिया के मकान के अन्तःपुर में रह गया।

मल्लिकजी से सुनी बातें अब भी सदीप को याद हैं। यह भी याद है कि मल्लिकजी उसी दिन तीसरे पहर विडन स्ट्रीट-भवन से खिदिरपुर गए थे। खिदिरपुर पहुंचने पर मनसातल्ला लेन खोजने में देर नहीं हुई थी। उस सड़क का सात नंबर मकान भी ढूंढ़ने में मिल गया था। एक पुराना रंग झड़ा हुआ पीले रंग का मकान। मकान के सदर के दरवाज़े फटकर कई टुकड़ों में बंट गए हैं। देखने से लगता है, धक्का लगाने ही दोनों पल्ले गिर पड़ेंगे और घर का अन्तःपुर राहगीरों की आंखों के सामने पड़कर एकबारगी बेआबरू हो जाएगा। फिर भी मल्लिकजी दरवाज़े की कुंडी हिलाकर खटखटाने लगे।

अन्दर से एक जनाना आवाज़ आई, "कौन है?"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं—"

अनजाने गले की आवाज़ रहने के कारण परिचय पाए बगैर किसी ने दरवाज़ा नहीं खोला। सिर्फ इतना ही कहा, "आप कौन हैं?"

"आप मुझे पहचान नहीं सकेंगी, मैं विडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के घर से आया हूं।"

अब दरवाज़ा खुल गया। एक विधवा स्त्री दरवाज़ा खोलकर खड़ी हो गई।

मल्लिकजी ने कहा, "इस मकान में तपेश कुमार गंगोपाध्याय नामक कोई सज्जन रहते हैं?"

महिला का चेहरा घूंघट से आधा ढंका हुआ है। बोली, "हां, वे मेरे देवर हैं। वे ऑफिस गए हैं, अब तक लौटे नहीं हैं।"

"वे किस ऑफिस में काम करते हैं?"

महिला बोली, "रेल के ऑफिस में।"

"कब आने पर उनसे मुलाकात हो सकती है?"

महिला बोली, "थोड़ी देर बाद ही आ जाएंगे। आप आधा घंटा बाद आइएगा।"

मल्लिकजी क्या करें; उनकी समझ में नहीं आया। इतनी दूर आने के बाद फिर लौटकर चले जाएं? अच्छा तो यही रहेगा कि यहीं कहीं आसपास चक्कर लगाते रहें और आध घंटे के बाद पुनः आएं। यह तय कर वे जाने के [illegible]

हो गए। लेकिन उसके पहले ही अड़चन पड़ गई। पीछे से एक आदमी ने पूछा, "आप कौन हैं ?"

अव मल्लिकजी ने अपना चेहरा घुमाकर देखा—पैंट-शर्ट पहने एक आदमी एकटक दृष्टि से उनकी ओर ताक रहा है। दोनों एक-दूसरे को देख रहे हैं, परन्तु पहचान नहीं पा रहे हैं। उस आदमी ने पूछा, "आप किससे मिलना चाहते हैं ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं सात नम्बर मनसातल्ला लेन के तपेश कुमार गांगुली से मिलने आया हूं।"

उस आदमी ने कहा, "हां, मैं ही तपेश गांगुली हूं। आपका शुभ नाम ?"

मल्लिकजी वोले, "मेरा नाम परमेशचन्द्र मल्लिक है। मैं विडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन का मैनेजर हूं, यानी मुनीमजी। उन लोगों के परिवार के तमाम खर्च वगैरह का हिसाव रखना ही मेरा काम है। आपने 'सैक्सवी मुखर्जी एण्ड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड' का नाम सुना है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां।"

"मैं उसी मकान से आ रहा हूं।"

"लेकिन उन लोगों का मकान तो वेलुड़ में है।" तपेश गांगुली ने कहा।

"हां," मल्लिकजी वोले, "जिन्होंने वेलुड़ में मकान वनवाया है उनका नाम है मुक्तिपद मुखर्जी। गृहस्वामी देवीपद मुखर्जी के देहान्त के वाद शक्तिपद मुकर्जी मैनेजिंग डाइरेक्टर वने थे। लेकिन वे ज़िन्दा नहीं रहे। उनकी पत्नी भी कुछ दिनों के वाद दुनिया से विदा हो गई। उनके एक लड़का है, नाम है सौम्य मुखर्जी। अभी उनकी उम्र कम है। वही पोता और गृहस्वामी की विधवा-पत्नी विडन स्ट्रीट के मकान में रहते हैं। मैं उसी मकान से आया हू—"

तपेश गांगुली ने पूछा, "मां के ज़िन्दा रहते हुए ही छोटा लड़का अलग क्यों हो गया ?"

मल्लिकजी ने कहा, "देखिए, उन लोगों की फैक्टरी वेलुड़ में है, इसीलिए फैक्टरी के करीव ही मकान वनवाया है ताकि फैक्टरी के काम-धंधे की देख-रेख में सहूलियत हो। लिहाजा पोता और विधवा मां को लेकर ही विडन स्ट्रीट का यह घर-संसार है। दो ही प्राणी हैं मगर उन्हीं के लिए कितने ही नौकर-चाकर, दाई-महरी और महाराज हैं। ठीक वैसे ही जैसा कि वड़े लोगों के घर पर हुआ करते हैं। मैं उसी मकान से आपकी भतीजी के रिश्ते के लिए आया हूं।"

तपेश गांगुली समझ नहीं सके। पूछा, "रिश्ता ? किस चीज़ का रिश्ता ?"

मल्लिकजी ने कहा, "शादी का।"

तपेश गांगुली जैसे आसमान से गिर पड़े हों, "शादी का रिश्ता ? आप यह क्या कह रहे हैं जनाव ? मेरी भतीजी के व्याह का रिश्ता ? आप क्या पागल हो गए हैं ? मेरी भतीजी की उम्र क्या है, जानते हैं ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां सव कुछ जानता हूं। आपकी भतीजी का नाम, उम्र वगैरह सारा कुछ जानता हूं।"

"वताइए तो क्या नाम है ?"

"विशाखा।"

"उम्र ?"

"दस या ग्यारह साल—"

तपेश गांगुली ने आश्चर्य में आकर पूछा, "आपको यह सब कैसे मालूम हुआ, बताइए तो।"

मल्लिकजी ने कहा, "मेरी दादी मां कल गंगा नहाने बाबूघाट गई थीं। वहीं आपकी भतीजी को देखा और देखकर उन्हें इतनी अच्छी लगी कि विशाखा से उसका नाम-धाम, उसके चाचा का नाम मालूम कर आज सवेरे मुझे बुला भेजा और तीसरे पहर आपके घर पर जाने को कहा।"

तपेश गांगुली को तब भी कुछ समझ में नहीं आया। बोले, "विशाखा उन्हें पसन्द आ गई, यह मानता हूं, लेकिन शादी का रिश्ता किससे? पात्र कौन है?"

मल्लिकजी ने कहा, "पात्र और कोई नहीं, दादी मां का पोता सौम्य मुखर्जी है। मैकमबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड का एक भागीदार।"

तपेश गांगुली को मानो इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। आनन्द की अधिकता से सांस रुकने जैसी हालत हो गई। वे एकाएक बोल पड़े, "इस तरह आप सड़क पर क्यों खड़े हैं? छि छि, इस गरमी में कोई खड़ा रह सकता है भला? आप पसीने से तर-बतर हो गए हैं। चलिए-चलिए, अन्दर चलिए। चलकर पंखे के नीचे बैठिएगा।"

यह कहकर मल्लिकजी का हाथ थाम उन्हें खींचते हुए सदर दरवाजा पार कर एकबारगी सामने के छोटे से आंगन में चले आए। वहीं से पुकारने लगे, "अरे, सब लोग कहां चले गए। हम लोगों के कमरे में दो प्याली चाय भेज दो। ओ भाभी, अभी तुरन्त दो प्याली चाय का पानी चूल्हे पर चढ़ा दो।"

यह कहकर मल्लिकजी को खींचते हुए बगल के एक कमरे में घुस गए। कमरे के अन्दर पलग पर दुनिया-भर का बिछावन गोलाकार रखा हुआ है। मच्छरदानी का एक तरफ का हिस्सा खुला हुआ और बाकी हिस्सा विपरीत दिशा की दीवार से झूलती हुई हालत में दिख रहा है। मल्लिकजी कमरे के अन्दर चले तो गए जरूर, मगर बैठें कहां यही सोच रहे थे। तपेश बाबू ने इस बीच हक्का-बक्का हो कमरे के बिजली के पंखे को पूरी रफ्तार में चला दिया है। इस खयाल से कि मल्लिकजी को तनिक आराम का अहसास हो। इतने बड़े एक अभिजात वर्ग के सज्जन को रास्ते में खड़ा कर उन्होंने तकलीफ दी है—यह सोचकर आत्म-ग्लानि से वे संकुचित हो उठे।

मल्लिकजी को अपनी आवभगत में वृद्धि देखकर बड़ा ही मजा आ रहा था। हो सकता है, ऐसा ही हुआ करता है। हो सकता है क्यों, ऐसा होना ही स्वाभाविक है। उन्हें इसमें मजा क्यों मिल रहा है? तपेश बाबू को उन्होंने स्वर्ग की चाबी लाकर दी है। मल्लिकजी को भी अगर ऐसी स्थिति से गुजरना पड़ता तो वे भी इसी तरह घबरा जाते।

तब तक चाय आ चुकी थी। तपेश गांगुली ने चाय से भरी एक प्याली अपने हाथ से उनकी ओर बढ़ा दी और बोले, "पहले चाय पीजिए, उसके बाद काम की बात होगी—"

मल्लिकजी ने चाय की प्याली ली तो जरूर मगर गौर किया कि इस घर की दरिद्रता केवल कमरे के असबाब तक ही सीमित नहीं है, चाय की प्याली तक में

जैसे उसके स्पर्श का निशान है। उन्हें लगा, उनके यहां इस घर में आने का असली कारण अब तक निश्चय ही इस घर की आबोहवा में फैल चुका है। वरना अन्दर इतनी फुसफुसाहट-बुड़बुड़ाहट का दौर चलता ही क्यों?

मल्लिकजी बोले, "देखिए तपेश बाबू, मैं काम की बातें कर चला जाना चाहता हूं, वहां मेरा बहुत-सारा काम पड़ा हुआ है।"

तपेश बाबू ने कहा, "कहिए, काम की बात क्या करनी है।"

"आप मुझे अपनी भतीजी विशाखा के पिताजी का नाम, मां का नाम और विशाखा की जन्म-तिथि, जन्म का समय और जन्म-स्थान एक कागज़ पर लिख दें। उसे लेकर मैं चला जाऊंगा।"

तपेश बाबू ने कहा, "ठहरिए, मैं अभी आया।"

तपेश बाबू घर के अन्दर चले गए। मल्लिकजी के कान में तपेश बाबू के चिल्लाने की आवाज़ अन्दर से आई, "भाभी, ओ भाभी, विशाखा की जन्म-तिथि, समय और पिता का और अपना नाम लिखकर दो, कहां गई तुम? ओ भाभी!"

मल्लिकजी उस बन्द कमरे के अन्दर बहुत देर तक बैठे रहे। घर के अन्दर से तब बहुत सारी जनाना आवाज़ें आ रही थीं। लेकिन उनकी बातें साफ-साफ सुनाई नहीं पड़ीं। थोड़ी देर बाद तपेश बाबू एक कागज़ लेकर आए और उनके साथ छोटे-छोटे फ्रॉक पहने दो लड़कियां। उम्र दस-ग्यारह के बीच। कागज़ लेकर मल्लिकजी ने उसे अपने कुरते की जेब में रख लिया। उसके बाद उठकर खड़े हो गए।

तपेश गांगुली ने कहा, "आप उस कागज को एक बार पढ़कर नहीं देखिएगा, मुनीमजी?"

मल्लिकजी ने कहा, "उसे देखने पर मेरी समझ में क्या आएगा? मैं इसे ले जाकर सीधे अपनी मालकिन को दे दूंगा, उन्हें जो मर्जी होगी, करेंगी।"

तपेश बाबू ने कहा, "नहीं-नहीं, मैं इस मकसद से नहीं कह रहा हूं। उन दोनों की ही जन्मतिथि दी गई है। एक मेरी खुद की लड़की बिजली की और दूसरी मेरी भतीजी विशाखा की।"

"मैंने आपकी लड़की की जन्मतिथि तो मांगी नहीं थी।"

तपेश बाबू बोले, "आपने भले ही नहीं मांगी हो, लेकिन आपने मेरी भतीजी की शादी ठीक कर दी तो मेरी लड़की के लिए कोई इंतजाम नहीं कर सकिएगा?"

मल्लिकजी बोले, "देखिए, यह कोई शादी नहीं है, अभी से वे एक पात्री पसंद कर रख लेना चाहती हैं। इसके अलावा और कुछ नहीं—"

उसके बाद अचानक एक लड़की का हाथ थाम उसे खींचकर लाते हुए सामने लाकर खड़ा कर दिया और बोले, "यह देखिए, यह मेरी लड़की बिजली है। यह क्या खूबसूरत नहीं है? मेरी भतीजी से यह क्या कम खूबसूरत है? विशाखा तो इसी के पास खड़ी है। इसे देखिए और उसे भी। आप ही विचार करें कि कौन अधिक रूपसी है। चेहरे पर ज़रा-सा क्रीम-पाउडर लगा देने से एकबारगी मेम-साहब की बच्ची-जैसी लगेगी। बोलिए, अपनी आंखों से देख अच्छी तरह विचार करके बोलिए। इसलिए नहीं कह रहा हूं कि वह मेरी लड़की है। विशाखा से मेरी बिजली क्या कम सुन्दर है?"

मल्लिकजी कुछ कहें कि तपेश गांगुली फिर बोल पड़े, "आपकी दादी माँ क्या हर रोज गंगा नहाने जाती हैं?"

"हां।"

"किस घाट पर?"

मल्लिकजी ने कहा, "बाबूघाट।"

"ठीक है, मैं भी हर रोज अपनी लड़की को लेकर बाबूघाट जाया करूंगा। जाने पर किसी दिन मुलाकात हो ही जाएगी।"

मल्लिकजी अब रुके नहीं, पांवों में जूते डाल वहां से सीधे मनसातल्ला लेन पकड़ बस के रास्ते पर आकर उन्होंने इत्मीनान की सांस ली।

और इधर तपेश बाबू घर के अन्दर चिल्लाने लगे, "कहां हो जी? अरी बिजु, तेरी मां कहां है?"

अन्दर से पत्नी की आवाज आई, "क्या हुआ? यहीं तो हूं, सांड़ की तरह चिल्ला क्यों रहे हो? क्या हुआ?"

बिजली ने मां को खोजकर निकाला। बोली, "मां यहां है बाबूजी।"

तपेश गांगुली एकाएक अपनी आवाज में धीमापन लाकर बोले, "तुम्हारी जेठानी की लड़की की शादी तो बहुत बड़े आदमी के घर में पक्की हो गई—"

उसके बाद सहसा याद आया कि उनकी लड़की बिजली खड़ी हो सब कुछ सुन रही है। बोले, "ए, तू क्या कर रही है यहां? क्यं? जा यहां से भाग जा।"

हमेशा के अभाव के घर-संसार में अचानक स्वच्छ पानी के ज्वार ने आकर जैसे सब कुछ को चंचल बना दिया हो। सारी घटनाओं का विवरण प्रस्तुत कर तपेश गांगुली ने हताशा की एक लम्बी सांस ली। बोले, "देखो, तुम्हारी जेठानी ने गंगा नहाने के लिए जाने पर अपना काम कैसे सहेज लिया और तुम? तुम अगर एक दिन भी जेठानी के साथ बाबूघाट जाती तो बिजली के लिए भी कोई न कोई उपाय निकल आता—"

तपेश गांगुली बोले तो जरूर परन्तु दूसरी ओर से कोई प्रत्युत्तर नहीं मिला। जिस तरह सिर पर तकिया रखे लेटी थी, उसी तरह लेटी रही। तपेश गांगुली ने पूछा, "क्या हुआ? फिर बीमार हो गई क्या?"

फिर भी बिजली की मां की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला। तपेश बाबू शादी होने के बाद से ही अपनी पत्नी की बीमारी से परेशान हैं। इतने दिनों तक उनकी गृहस्थी जो चल रही है, उसका श्रेय उनकी भाभी को है। बड़े भाई की मृत्यु के बाद से रानी को और अधिक सुविधा मिल गई है। अब रानी को गृहस्थी का कोई काम अपने हाथ से नहीं करना पड़ता। रानी सदैव अपनी बीमारी लेकर परेशान रहती है। लिहाजा तपेश गांगुली को डॉक्टर के पीछे महीने में ढेर सारा रुपया खर्च करना पड़ता है। तपेश बाबू ने दुबारा पुकारा, "रानी, तुम्हें क्या हुआ है, बताओ न। डॉक्टर बुलाऊं? बात का उत्तर दो न—ओ रानी!"

यह कहकर रानी के सिर पर हाथ रखकर देखना चाहा कि बदन गरम है या ठंडा। लेकिन रानी ने एक ही झटके में उनका हाथ परे ठेल दिया और बोली, "तुम्हारे कारण तो तंग-तंग आ गई। एक तो यों ही सिर दर्द से मरे जा रही हूं और उस पर तुम्हारी बड़बड़ाहट ''तुम क्या मुझे शान्ति से मरने भी न दोगे?"

यह कहकर करवट लेकर लेट गई।

तपेश गांगुली कुछ देर वहां खड़े रहने के बाद ऊबकर कमरे से चले जाने को उद्यत हुए। रसोईघर के पास उस समय भाभी शायद दाल चुन-फटक रही थीं।

तपेश बाबू वहां खड़े हो गए और बोले, "भाभी, तुम क्या कल बाबूघाट स्नान करने गई थीं?"

"हां, कल तुम्हारे भैया का वार्षिक श्राद्ध था, इसीलिए..."

"तुम क्या विशाखा को अपने साथ ले गई थीं?"

"हां; क्यों?"

तपेश बाबू ने कहा, "ये जो भले आदमी आए थे, जिनके लिए मैंने चाय बनाने को कहा था, उन्हें तुम जानती हो? कलकत्ता के एक करोड़पति घर के मैनेजर हैं। उस घर की मालकिन ने तुम्हारी लड़की को देखा था। देखकर बहुत ही पसंद किया है और इसीलिए तुम्हारी विशाखा से अपने पोते की शादी कराने के लिए आदमी भेजा था। इसीलिए तुम्हारी लड़की की जन्म तिथि वगैरह दिया।"

"मेरी विशाखा की शादी?"

"नहीं, शादी नहीं, बल्कि अभी से पोते के लिए पात्री पसंद करके रखना चाहती हैं। तुम्हारी तकदीर कितनी अच्छी है भाभी और तुम्हारी देवरानी?"

इस बात का उत्तर कोई नहीं देता है और न ही कोई इसकी प्रत्याशा करता है। तपेश बाबू अपना दुख जाहिर कर निश्चिन्त हो गए। इससे ज़्यादा क्या कर सकते हैं। उन्हें पूरी दुनिया पर गुस्सा आने लगा। जैसे सभी मिलकर उनके खिलाफ साजिश कर रहे हों। तपेश बाबू की आंखों में आंसू आ गए।

उस रात उन्हें ठीक से नींद भी नहीं आई। विस्तर पर लेटे-लेटे सिर्फ करवटें ही बदलते रहे। कब रात बीत गई, पता नहीं चला। जब भोर के समय अंधेरा पतला हो गया तो देखा, बगल में रानी गहरी नींद में खोयी हुई है।

आहिस्ता-आहिस्ता वे बिस्तर छोड़कर उठ गए। किसी प्रकार की आवाज़ नहीं की। इसलिए कि कहीं पत्नी की नींद टूट न जाए। और-और दिन वे उठकर पत्नी को जगा देते थे। लेकिन उस दिन क्या से क्या हो गया! कहीं किसी घर से मल्लिक नामक एक व्यक्ति आकर नपी-तुली जिन्दगी जीने की उनकी नियमबद्ध गति में एक विस्मयकारी आवेग और रोमांच की लहर जगाकर आंखों से ओझल हो गया।

उस दिन भी उन्होंने घर-गृहस्थी का काम किया तो ज़रूर लेकिन आदमी के मानिन्द नहीं। वे कुछ ही घण्टों में जैसे मशीन हो गए। जल्दी-जल्दी भात के कौर मुंह में डाल सड़क पर निकल आए। और-और दिन तपेश बाबू पच्छिम की तरफ जाकर बस पर चढ़ते हैं। यही उनका हमेशा से चला आ रहा नियम है। उसी ओर रेल का विशाल कार्यालय है। उसी कार्यालय में उन्होंने आधी जिन्दगी गुज़ार दी है। इतने दिनों से वह इसी काम को मन लगाकर करते आए हैं। अब उन्हें महसूस हुआ कि वे ठगे गए हैं। भाग्य का देवता उन्हें केवल ठुकराते ही आए हैं। बस डिपो की तरफ जाकर वे चंद लमहों तक खामोशी में डूबकर खड़े रहे। जेहन में तरह-तरह की चिन्ताएं मंडराने लगीं। वे कहां जाएंगे? दफ्तर?

लेकिन नहीं, रेल के दफ्तर में कोई अगर काम न करे तो भी रेलगाड़ी चलती

रहेगी। तपेन गांगुली के अभाव के कारण रेलगाड़ी का चक्का जाम नहीं होगा। लेकिन विशाखा के पात्र जैसा उसकी लड़की के लिए अगर कोई धनी-मानी पात्र नहीं मिलेगा तो उनकी गृहस्थी का चक्का ही जाम हो जाएगा। कहीं किसी दूसरी ओर ताकने के बजाय वे सीधे धर्मतल्ला जानेवाली एक बस पर सवार हो गए।

बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट भवन में तब दैनिक काम-धाम की गाड़ी तेज रफ्तार में चल रही थी। देवीपद मुखर्जी के जमाने से ही यह सिलसिला चल रहा है। बीच में छोटे लड़के भुविनपद के सपरिवार इस मकान को छोड़ बेलुड़ के नए मकान में चले जाने पर भी उसके चलने के वेग में कोई व्यतिक्रम नहीं आया है। एक-मंजिले की पुल्लरा से दो-मंजिले की कालीदासी की उस तरह झड़प होती रहती है, तीन-मंजिले की सुधा से बिन्दु का झगड़ा पहले की तरह ही चल रहा है। कंदर्प हर रोज की तरह फूल पहुंचा गया है। ठाकुरबाड़ी के मन्दिर की नौकरानी कामिनी इस बीच मन्दिर धो-पोंछकर साफ कर चुकी है और पत्थर की शिला पर रक्त-चन्दन घिस रही है। और, सदर के गेट से घुसते ही बाईं तरफ जो कमरा है, उसके अंदर बैठ मल्लिकजी बत्तई खाता खोल हर रोज की तरह जमा-खर्च के हिसाब-किताब में व्यस्त हैं। ठीक उसी समय किसी के पैरों की आहट सुन सिर ऊपर की तरफ उठाया। देखा, गिरिधारी है।

गिरिधारी ने कहा, 'हुजूर, एक आदमी आपसे मिलना चाहता है।"

"कौन? नाम क्या है?"

गिरिधारी ने कहा, "गांगुली बाबू।"

"गांगुली बाबू कौन? कहां से आया है?"

"खिदिरपुर से।" गिरिधारी ने बताया।

अब मल्लिकजी की बात समझ में आई। मनसातल्ला लेन से तपेश गांगुली उनसे मिलने आए हैं। लेकिन कल ही तो उनसे मिलकर पात्री की जन्मतिथि ले आए हैं। उसे अब भी दादी मां को नहीं दिखाया है। इसी बीच वे अचानक आ धमके?

मल्लिकजी ने कहा, "ठीक है, तुम गांगुली बाबू को यहां ले आओ—" कहा तो जरूर लेकिन मन-ही-मन सोचा, तपेश गांगुली सुबह-सुबह क्यों आ धमके? उनका दफ्तर क्या बन्द है? लेकिन कुछ और सोचने के पहले ही गिरिधारी तपेश बाबू को अपने साथ उनके कमरे में ले आया।

तपेश बाबू को लगा, उन्होंने जैसे किसी नई दुनिया में प्रवेश किया है। गेट के बाहर से ही उन्होंने मकान को ऊपर से नीचे तक के हिस्से को देख लिया था। लेकिन अन्दर के बाहरी हिस्से में जैसे ही पहुंचे उन्हें लगा कि अलादीन का आश्चर्यजनक चिराग जिस तरह किसी अलौकिक शक्ति से किसी आदमी को पानी के नीचे के प्रासाद-पुरी में पहुंचा देता है, यह भी ठीक वैसा ही कुछ करिश्मा है। एक क्षण के लिए अपने किराये के सात नम्बर मनसातल्ला लेन के मकान से इस विशाल भवन का एक तुलनात्मक विवेचन उनके जेहन में पैदा हुआ। उनकी भतीजी की शादी इसी घर में होगी। यह सोचने पर उन्हें तकलीफ का अहसास

हुआ।

"क्या हुआ, आप एकाएक क्यों चले आए ?"

मल्लिकजी के गले की आवाज़ से तपेश बाबू के सपने का जाल चिन्दी-चिन्दी हो गया।

"आज आपका ऑफिस नहीं है ?"

तपेश बाबू तब तक पलंग पर बैठ चुके थे। बोले, "हम लोगों का रेल का दफ्तर है, काम कुछ खास नहीं रहता। एक दिन न जाऊंगा तो कोई हर्ज नहीं होगा। आपके पास यों ही चला आया हूं। मेरी भतीजी का तो बेड़ा पार कर दिया, साथ ही मेरी लड़की का भी बेड़ा पार कर दीजिए।"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं क्या बेड़ा पार करने का मालिक हूं ? मैं एक साधारण आदमी हूं, पेट के कारण दूसरे के घर में नौकरी कर जिन्दगी गुजार दी। आप बल्कि ईश्वर का स्मरण करें, वे ही आपका बेड़ा पार लगा देंगे—"

तपेश बाबू को ऐसा लगा जैसे उनकी आंखों में आंसू आ जाएंगे। बोले, "फिर भी आप अपनी दादी मां से कहिएगा कि मेरी लड़की के लिए भी कोई इंतज़ाम कर दें।"

मल्लिकजी को कहना पड़ा कि वे वैसा ही करेंगे। बोले, "आप इतना विचलित मत होइए। अभी आप घर जाइए, बाद में···"

अचानक ऊपर से सुधा की आवाज़ आई, "अरी ओ फुल्लरा, मुनीमजी को ऊपर भेज दे, दादी मां बुला रही हैं।"

एक-मंजिले की फुल्लरा ने कमरे के सामने जाकर पुकारा, "ऊपर दादी मां बुला रही हैं।"

मल्लिकजी ने व्यस्तता के साथ कहा, "तीन-मंज़िले से दादी मां ने बुला भेजा है, मैं चलता हूं गांगुली बाबू। आपको दुबारा कष्ट उठाकर आने की ज़रूरत नहीं, कोई खबर होगी तो आप तक पहुंचा दूंगा। चलता हूं—"

फिर भी तपेश बाबू ने कहा, "ज़रा बैठूं ?"

"नहीं-नहीं, बेवजह बैठे क्यों रहिएगा ? आप अभी जाएं। मैं तो कह ही चुका हूं कि कोई खबर रहेगी तो आपके पास पहुंचा आऊंगा—मैं चलता हूं—"

यह कहकर वे वहां रुके नहीं, रोकड़ बही लेकर ऊपर की ओर जाने के लिए कमरे के बाहर कदम रखा। कैश बोक्स की चाबी कमरे में है या नहीं, इसे देख लिया और उसके बाद सीढ़ियां चढ़ने लगे। कोई उपाय न देख तपेश गांगुली सदर दरवाज़े को पार कर सड़क पर चले आए।

बीसवीं शताब्दी का मध्यकाल बड़ा ही बेतरतीब है। उसके पहले एक हजार वर्ष मोटे तौर पर शांति से ही व्यतीत हुए हैं। तीन-चार वर्षों के लिए जो अशांति पैदा हुई थी, वह नाममात्र की है। उसकी वजह से दुनिया के लोगों को अन्न के लिए तरसना नहीं पड़ा था। उस मैकडोनल्ड साहब के मैकडोनल्ड कंपनी का पूरा लाभांश पाने में लंदन के शेयर होल्डरों को कोई असुविधा नहीं हुई थी। उनकी ब्रेकफास्ट टेबुल पर ठीक समय पर हालैंड से मक्खन पहुंच जाता, भारत से चाय

और ब्राजिल से कॉफी पहुंच जाती। सोरा तैयार करने के लिए कच्चा माल बर्न कंपनी के आयरन और खदान से यथासमय पहुंच जाता। क्यूबा से चीनी जाती थी। कैलिफोर्निया से संतरा जाता, पेरु से चांदी। ब्रिटिश एम्पायर को किसी प्रकार की असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता था। उनकी तड़क-भड़क, शान-शौकत में कोई कमी नहीं आती। उनके सम्मान को कोई चोट नहीं पहुंचती।

लेकिन अब स्थिति दूसरी ही तरह की है। अब वही ब्रिटेन, वही रूल ब्रिटेनिया खाद्य पदार्थ के अभाव में तीसरी दुनिया में रूपांतरित हो गया है। दुनिया में जहां भी जितने काले चमड़े के लोग हैं वे सिर उठाकर कह रहे हैं : अयं अहम भो, अर्थात् मैं आ गया हूं। हम भी आदमी हैं, हमें भी पेट है, हमें भी भूख लगती है। यह सब कहानी बहुत पहले की है। 1918 ई० के 11 नवम्बर को प्रेसिडेन्ट विलसन ने कहा था : "अब डर की कोई बात नहीं है। मार्न. । अब आर्मिस्टिस हो गई है। हम लोगों ने मिलकर लीग आफ नेशन्स (राष्ट्रसंघ) तैयार किया है। अब इस विश्व में शांति की स्थापना होगी। लेकिन आश्चर्य की बात है, उस समय प्रेसिडेन्ट विलसन को यह मालूम था कि सोवियत रूस के गोकुल में लेनिन नामक एक अविख्यात-अज्ञात व्यक्ति है जो विद्रोह का झंडा लेकर खड़ा हो जाएगा? या 1885 ई० में जिसे सबने मिलकर गिरफ्तार कर सेन्टहेलना द्वीप में कैदी बनाकर रखा था, एक दिन 1938 ई० में जर्मनी का चांसलर बनकर 1939 ई० में धरती पर भूकंप मचा देगा? उस दिन किसी ने कल्पना नहीं की थी कि ब्रिटेन-फ्रांस-इटली के जितने भी उपनिवेश एशिया में हैं, वे अचानक एक दिन उनके हाथ से निकल जाएंगे।

इतिहास की उन कहानियों को संदीप बेहापोता के चटर्जी भवन के पुस्तकालय में बैठकर पढ़ता। दूसरे-दूसरे लड़के जब पांच कौड़ी दे और चारु बंद्योपाध्याय के उपन्यास और कहानियां पढ़ते, संदीप तब उन पुस्तकों को पढ़ने में मशगूल रहता। उसे बार-बार याद आता कि क्यों चटर्जी भवन के लोग धनी-मानी व्यक्ति हैं और क्यों उसकी मां गरीब है। क्यों उसकी मां चटर्जी भवन में दाई का काम करती है।

उसने एक दिन अपनी मां से पूछा था, "हम गरीब क्यों हैं मां?"

मां लड़के की बात सुनकर अवाक् हो जाती। कहती, "बाप रे, तेरे दिमाग में यह सब चिंता क्यों आती है? किसने तुमसे यह सब कहा है?"

संदीप कहता, "कहेगा कौन? मैं क्या देख नहीं पाता? मुझे क्या आंखें नहीं हैं?"

मां कहती, "तुम लोगों के स्कूल में यह सब पढ़ाया जाता है?"

संदीप को गुस्सा आ जाता। कहता, "स्कूल में क्यों पढ़ाएगा? मैं चटर्जी भवन में जाकर सब कुछ देखता हूं। हां, सब कुछ। चटर्जी बाबुओं की मां-बहुएं कितनी साफ-सुथरी साड़ियां पहनती हैं—"

सच, संदीप चटर्जी भवन में जाकर देखता कि वहां बिजली की बत्तियां जल रही हैं, सिर के ऊपर पंखे चल रहे हैं। गर्मियों में पंखे के नीचे बैठने से कितना आराम मिलता है! जरा भी गरमी नहीं लगती। उन लोगों के घर में इतनी

रोशनियां और पंखे क्यों हैं और उनके घर में इतना अंधेरा क्यों फैला रहता है, गरमी का इतना वोलवाला क्यों रहता है ?

मां कहती, "तुम अच्छी तरह लिखो-पढ़ो, अच्छी तरह लिखोगे-पढ़ोगे तो तुम भी ढेर सारा रुपया कमाओगे। उस समय तुम चटर्जी भवन की तरह अपने मकान में विजली की वत्तियां और पंखे लगवाना। उस समय कोई मना नहीं करेगा।"

उस समय न तो मां जानती थी और न ही संदीप कि क्यों एक व्यक्ति सुखी-सम्पन्न होता है और क्यों दूसरा व्यक्ति गरीव होता है। उन दोनों को मालूम नहीं था कि रुपया उपार्जन का मूल उत्स शिक्षा-दीक्षा के सागर से खोदने की वस्तु नहीं है। रुपया कमाने के उत्स का खजाना वहुत गहरे में छिपा रहता है। उसे खोजकर वाहर निकालने के लिए इतिहास के समुद्र में गोते लगाना पड़ता है। लेकिन वह समुद्र कहां है ?

विडन स्ट्रीट भवन में लेटे-लेटे संदीप अक्सर सपने की तरह वेड़ापोता मां के पास पहुंच जाता। वेड़ापोता में शायद अभी छप्पर से वरसात का पानी चू रहा होगा। उसी घर में शायद मां जगकर संदीप के वारे में ही सोच रही होगी। कल-कत्ता आने के दिन मां वहुत रोई थी। कहा था, "वहां सावधानी से रहना वेटा। मल्लिक चाचा की वात मानना।"

संदीप की आंखें क्या आर्द्र नहीं हुई थीं ? लेकिन मां के सामने संदीप रोया नहीं था। संदीप को रोते देखती तो हो सकता है मां और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगती।

मां के अन्तिम शब्द थे, "पहुंचकर चिट्ठी भेजना वेटा।"

तव तक गाड़ी खुल चुकी थी। ट्रेन के गतिमान चक्कों की आवाज़ को भेदकर मां के अन्तिम शब्द उस समय भी उसके कानों में गूंज रहे थे। वार-वार आवाज़ गूंज रही थी : 'पहुंचकर चिट्ठी लिखना वेटा—पहुंचकर चिट्ठी लिखना—'

'पहुंचकर चिट्ठी लिखना वेटा'—यह वात अकेले रहने पर संदीप के कानों में अव भी गूंजती रहती है।

उस दिन अकेले होने के कारण वे शब्द उसके कानों में गूंज रहे थे। अचानक कहीं कोई आवाज़ हुई। कमरे में एक पलंग पर मल्लिकजी नींद में वेखवर हैं। वे सोए हुए हैं, इसका अहसास उनकी सांसों की गति से हो रहा है। वे दिन-भर कड़ी मेहनत करते हैं, लिहाजा गहरी नींद आना स्वाभाविक है।

संदीप को इतनी सहजता से नींद क्यों नहीं आती ? जवकि कॉलेज से लौटने के दौरान ज़ोरों से नींद आने लगती है। ऐसा महसूस होता है जैसे घर पर पहुंचते ही वह सो जाएगा। लेकिन लेटने पर नींद नहीं आती। कहीं से हज़ारों तरह की चिन्ताएं आकर जेहन में समा जाती हैं।

'उस दिन कॉलेज से लौटने के दौरान वह कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ के पास एक जगह ठिठककर खड़ा हो गया। देखा, फुटपाथ पर एक जगह एक फ्रेम में वंधे साइनवोर्ड पर कुछ लिखा हुआ है। चारों तरफ अंधेरा उतर आया है। उस तरफ कितने ही रेडीमेड कपड़ों की दुकानों की कतारें खड़ी हो गई हैं। देश के विभाजन के वाद जो लोग विस्थापित होकर कलकत्ता आए हैं, उन्होंने कतारवद्ध दुकानें

घोल सी हैं। सभी दुकानें बास और नारियल-ताड़ के पत्तों से तैयार की गई हैं। ऊपरी हिस्सा तिरपाल से ढंका हुआ है ताकि बरसात का पानी न गिर सके या धूप अन्दर न पहुंच सके।

रात नौ बजे के बाद ही मुखर्जी भवन के गेट पर ताला जड़ दिया जाता है। लिहाजा कॉलेज से निकलने के बाद यह सब बहुत देर तक देखने का वक्त नहीं मिलता है। मगर कोई-कोई वैसी भी चीज रहती है कि देखे बगैर रहा नहीं जाता।

मुश्किल यही है कि थोड़ी-सी देर हो जाती है तो मल्लिकजी पूछते हैं, "इतनी देर तक क्या कर रहे थे ? तुम्हें आते न देखकर मुझे डर लगने लगा था। लगता है, पैदल चलकर ही पूरे रास्ते की दूरी तय की है।"

संदीप ने कहा, "हा, रास्ते में एक जगह रुक जाना पड़ा था।"

"क्यों ? क्या हुआ था ?"

"एक जगह एक अजीब चीज देखी—ठीक मिर्जापुर रोड और कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ पर।" संदीप ने कहा।

"वहा क्या हो रहा था ?"

उसे याद है उस सड़क के मोड़ पर वेदी जैसा एक स्थान है। वहा बिजली की एक बत्ती जल रही है। बगल में ढेर सारे फूल बिखरे हुए हैं और धूपदान में धुना जल रहा है। साइनबोर्ड पर लिखा है :

श्री श्री जगन्माता ने सपने में आदेश दिया है कि यदि विश्व में शाति की स्थापना करनी है तो इस देवस्थान मे प्रत्येक दिन पूजा-पाठ और यज्ञ-याजन का अनुष्ठान करो। ईश्वर के उस आदेश के पालन हेतु हमे यथासाध्य सहायता करें।

सोम—ब्रह्मा मगल—विष्णु बुध—महेश्वर
बृहस्पति—लक्ष्मी शुक्र—सन्तोषी मा शनि—अनिवारणीय देवता

पुजारी : भूतनाथ दास (भुतो)

संदीप वही बहुत देर तक खड़ा होकर साइनबोर्ड मे जो कुछ लिखा था, पढ़ रहा था। सामने एक तांबे की थाली में ढेर सारे सिक्के पड़े हुए थे। संदीप ने इस तरह का दृश्य पहले कभी नहीं देखा था। कलकत्ता के अजूबे और इस तरह का लिखा हुआ दृश्य उसने कही नहीं देखा था।

उस जगह को छोड़ वह चला आ रहा था, अचानक कहीं से एक आदमी उसके सामने आकर खड़ा हो गया। सांड जैसा शरीर। हाथ में गोदना गुदा हुआ। कमीज की बांह मुड़ी हुई थी इसलिए गोदना साफ-साफ दिख रहा था। उस जगह से संदीप हट ही रहा था कि उस आदमी ने कहा, "क्या हुआ दादा, कुछ मदद नहीं की ?"

संदीप ने कहा, "मैं गरीब आदमी हूं, मदद करने लायक मेरी हालत नहीं है ?"

आदमी बोला, "स्वप्न मे आदेश प्राप्त पूजा है, विश्व-शान्ति के लिए ही पूजा हो रही है। इसमें हम लोगो का कोई स्वार्थ जुड़ा हुआ नहीं है, सबके मंगल के लिए ही मांग रहे है। सामर्थ्य नहीं भी हो तो कम से कम एक रुपया तो देते

जाइए—मात्र एक रुपया। कितनी ही चीजों में कितना खर्चा हो जाता होगा और अच्छे काम के लिए एक रुपया देने में भी आपत्ति ही रही है ? सिनेमा देखने में भी तो बहुत पैसा खर्च हो जाता है—"

इतना कहने के बाद संदीप को थोड़ी बहुत शर्म महसूस हुई। वह सिनेमा नहीं देखता, यह मामूली बात भी कह नहीं सका। पॉकेट में हाथ डाल, एक दुअन्नी निकालकर तांबे की थाली में डाल दी और सीधे घर की ओर कदम बढ़ाया।

पूरी घटना के बारे में सुनकर मल्लिकजी ने कहा, "तुम्हारा दो आना पैसा गया न ? यह तुम्हारा बेड़ापोता नहीं, कलकत्ता है कलकत्ता। तुम जैसे देहाती लड़कों को ठगने के लिए गुण्डे पूरे शहर में जाल बिछाए हुए हैं। उस दिन देखा नहीं कि बस पर चढ़ने के दौरान तुम्हें ठेलकर किस तरह कुचल दिया ! इसके अलावा अभी तक तुम्हें तनख्वाह भी नहीं मिली है।"

संदीप अब क्या कहे ! सिर्फ इतना ही कहा, "मुझे चूंकि मां की याद आ गई इसीलिए पैसा दे दिया।"

"क्यों, तुम्हारी मां ने क्या कहा था ?"

"कहा था, जब मुसीबत आए तो भगवान का स्मरण करना।"

"भगवान तो हमीं लोगों के घर में हैं।" मल्लिकजी ने कहा।

संदीप समझ नहीं सका। पूछा, "इस घर में ? इस घर में भगवान कहां हैं ?"

मल्लिकजी ने कहा, "इस घर में तो हर रोज सिंहवाहिनी की पूजा होती है। सिंहवाहिनी भी भगवान ही है। भगवान नहीं है क्या ?"

बात तो सच है। बात याद आ गई। समूचे मकान में निस्तब्धता तैर रही है। संदीप पुनः मां के बारे में सोचने लगा। शायद मां अब तक सोई नहीं होगी। जगकर केवल उसके बारे में सोचती होगी। कल सवेरे ही मां को एक पत्र लिखना होगा। मां ने आने के समय कहा था, "कलकत्ता पहुंचते ही एक चिट्ठी डाल देना बेटा।"

मां ने जितने भी पत्र लिखे हैं, सबों को वह सहेजकर रखे हुए था। बीच-बीच में वह मां की चिट्ठियां निकालकर पढ़ता जबकि उनमें से कोई पत्र मां के हाथ का लिखा हुआ नहीं है—चटर्जी भवन की बहू से मां ने लिखवाया है।

अचानक अंधेरे का माहौल ज़रा चंचल हो उठा।

"कौन ?"

एक बार सोचा, हो सकता है यह मन का भ्रम हो। लेकिन कुछ दिन पहले भी तो इसी तरह की आवाज हुई थी। तो क्या आज भी छोटे बाबू घर से निकल रहे हैं ?

संदीप आहिस्ता से पलंग से उठकर खड़ा हो गया। बगल के पलंग की ओर गौर से देखा। मल्लिक चाचा नींद में मशगूल हैं। उसके बाद दबे पावों कमरे का दरवाजा खोलकर बाहर निकला। अन्दर सारा कुछ अंधेरे में लिपटा है। बरामदे पर कहीं से रोशनी का एक टुकड़ा आकर तैर रहा है। बरामदा पार करने के बाद दाहिनी ओर बाह्य भवन का रास्ता मिलता है। उस तरफ का सदर दरवाज़ा खुला हुआ क्यों है ? वहां की सिटकिनी तो बराबर बन्द रहती है।

संदीप ने धीरे से दरवाज़े को ज़रा-सा खोलकर बाहर की तरफ झांककर

देखा। झाकने पर उसे दिखाई पड़ा कि गिरिधारी ने लोहे का गेट खोल दिया है। छोटे बाबू गाड़ी को ठेलते हुए सड़क पर ले गए। उसके बाद गाड़ी का दरवाजा खोल अन्दर बैठे। इंजन स्टार्ट करते ही गाड़ी सर्र से निकल गई। गिरिधारी ने इसके पहले ही दरवाजा बन्द कर दिया है। इस तरह गेट बन्द किया कि आवाज न हो।

संदीप अचकचाकर कुछ देर तक वहीं खड़ा रहा। उसे लगा, छोटे बाबू शायद जानते हैं कि वे एक गलत काम कर रहे हैं, इसी वजह से इतनी सावधानी बरत रहे हैं। हालांकि दादी मां का हुक्म था कि ठीक रात नौ बजे गिरिधारी गेट बन्द कर दिया करे। फिर! फिर क्या?

इसके बाद पिछली रात जैसा किया था, वैसा ही किया। दबे पावों पुनः बरामदा पार कर अपने कमरे में चला आया। मल्लिकजी अब भी गहरी नींद में खोए हुए हैं। उन्हें कुछ पता नहीं चला। संदीप उसी तरह चुपचाप सो गया।

लेकिन नींद—नींद क्या इतनी आसानी से आती है? ठीक ऐन मौके पर तरह-तरह की बातें, तरह-तरह की चिन्ताएं उसके ज़ेहन में आ भीड़ लगाकर इकट्ठी हो गईं। इतनी रात में छोटे बाबू कहां निकले? और निकले तो कब घर वापिस आएंगे? उनके लौटने पर रात के कितने पहर बीत जाएंगे? आश्चर्य! छोटे बाबू क्या हर रोज इसी तरह करते हैं?

पहले दिन जब इस घटना को देखा था तो इसी तरह आश्चर्यचकित हुआ था। सबेरे नींद टूटने के बाद मल्लिक चाचा से पूछने में संदीप को संकोच का अनुभव हुआ था। सिर्फ इतना ही पूछा था, "अच्छा मल्लिक चाचा, उस दिन जो आपके साथ खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के हलेन बाबू के घर पर गया था, उस घर की लड़की का ब्याह इस घर के किसके साथ होगा?"

"इस घर के छोटे बाबू से।" मल्लिक चाचा ने कहा था।

"छोटे बाबू? छोटे बाबू कौन?"

"इस घर की दादी मा का पोता। छोटी मा के बड़े लड़के का बेटा।"

"बड़ा लड़का कहा रहता है?"

"बड़े लड़के का देहांत हो चुका है। बड़े लड़के की पत्नी भी मर चुकी है। उस एक लड़के के सिवा और कोई नहीं है उन लोगों का।"

फिर भी संदीप की समझ में कुछ नहीं आया। पूछा था, "इसी छोटे बाबू का ही नाम क्या सौम्य है? इसी लड़के के साथ क्या खिदिरपुर की लड़की की शादी होगी?"

इस पर मल्लिक चाचा मुसकाकर बोले थे, "तुम्हें इतनी बातों की जरूरत क्या है? तुम यहा नौकरी करने आए हो, मन लगाकर नौकरी करते रहो। घर की अन्दरूनी बातों को सुनना क्यों चाहते हो?"

इसके बाद संदीप और कुछ नहीं बोला था। मल्लिक चाचा बोले थे, "लो, इस जमा-खर्च के खाते को लेकर हिसाब लगा दो कि कितना जमा और कितना खर्च है।"

घर की अंदरूनी बातों के संदर्भ में संदीप ने अलबत्ता और कुछ नहीं कहा था, लेकिन उसे याद है कि बाद में वह इस छोटे बाबू और उस विशाखा के जीवन से

पूरे तौर पर जुड़ गया था।

लेकिन वह तो आज से बहुत बाद की बात है। यथासमय उस प्रकरण पर प्रकाश डाला जाएगा। यहां इतना ही कहना अहम् है कि उस रात वह अपने पलंग पर कब नींद की बांहों में खो गया था, इसका स्मरण नहीं है।

आज इतने दिनों के बाद उन दिनों की बात सोचने पर संदीप को लगा, क्यों उसने इस तरह इस घर के चप्पे-चप्पे में स्वयं को विलीन कर दिया था, क्यों वह बिडन स्ट्रीट के लोगों के प्रत्येक रक्तकण से इस तरह एकाकार हो गया था? उससे अंततः उसे कौन-सा फायदा हुआ था? ऐसा न होता तो इतने दिनों तक उसे कारागार के छिद्रहीन परिवेश में यातना नहीं जीनी पड़ती।

उस दिन तपेश गांगुली के चले जाने के बाद मल्लिकजी उठकर खड़े हो गए। तब संदीप घर नही लौटा था। यह सब उस युग की कहानी है, उन दिनों की कहानी है। मल्लिकजी बातचीत कर रहे थे। कहानी सुन-सुनकर संदीप ने पूछा, "उसके बाद? उसके बाद क्या हुआ चाचाजी?"

बाबूघाट के पंडा दशरथ के सामने जिस नाटक की शुरुआत हुई थी, उसीका प्रथम अंक और प्रथम दृश्य तब चल रहा था।

मल्लिकजी ने कहा, "उसके बाद क्या करता, तपेश गांगुली के चले जाने के बाद मैंने तीन-मंजिले के दादी मां के कमरे के अन्दर प्रवेश किया।"

दादी मां ने पूछा, "आप गए थे?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, गया था।"

"देखने पर कैसा घर लगा?"

"बहुत ही गरीब आदमी की घर-गृहस्थी है। तपेश गांगुली रेल में मामूली नौकरी करते हैं। उनके अपनी भी एक लड़की है, उसका नाम बिजली है और भतीजी का नाम विशाखा। मुझसे जो कुछ बताया गया उससे पता चला कि तपेश गांगुली की लड़की से मिलता-जुलता उसका नाम विशाखा रखा गया है।" उसके बाद बोले, "और एक कारण है। पात्री का जन्म वैशाख महीने में हुआ है। वैशाख महीने में सूर्य जब विशाखा नक्षत्र में रहता है और पूर्णिमा समाप्त होती है तभी उस लड़की का जन्म हुआ है। यह सुनकर सोचा, बड़ी ही सुलक्षणा है।"

दादी मां बोलीं, "आप कन्या की जन्मतिथि, समय वगैरह ले आए हैं?"

मल्लिकजी ने उत्तर दिया, "हां, यह लीजिए। इसमें सब कुछ लिखा है। उनसे सुनकर मैंने सारा कुछ लिख लिया है।" यह कहकर कागज़ दादी मां की ओर बढ़ा दिया।

दादी मां बोलीं, "इसे लेकर मैं क्या करूंगी? आप ही अच्छी तरह अपने पास रख लें। उसके बाद आज ही गुरुदेव को काशी पत्र लिखकर भेज दें कि वे एक दिन के लिए यहां चले आएं। यह भी लिख दें कि बहुत जरूरी काम है। इसके अलावा गुरुदेव को राह-खर्च के लिए पांच सौ रुपये मनीऑर्डर कर दें।"

मल्लिकजी बोले, "जी हां, यही करूंगा।" यह कहकर ज़रा रुके, उसके बाद बोले, "और एक बात कहनी है।"

"क्या, कहिए।"

"उन लोगों के पास सिर्फ दो ही कमरे हैं। उन्हीं दो कमरों में वे लोग पांच जने किसी तरह रहते हैं। घर का पुराना किराया तीस रुपया ही है। पुराना किरायेदार रहने की वजह से ही इतना सस्ता मकान मिल गया है। तरेश गांगुली हालांकि रेल-ऑफिस में काम करते हैं पर वेतन बहुत कम मिलता है। रेल के दफ्तर के किरानी हैं, इसलिए मुझसे कह रहे थे कि विशाखा के बदले उन्हीं की लड़की को पसन्द कर लें—"

दादी मां बोलीं, "यह क्या ! जिसे मैंने अपनी आंखों से देखकर पसन्द किया है उसे ही अपनी पौत्रवधू बनाऊंगी।"

मल्लिकजी ने कहा, "है तो आखिर पैसे की तंगी का मारा, इसीलिए ईर्ष्या हो रही है। आज सुबह भी मेरे पास आए थे।"

"आज सुबह ? आज सुबह आए थे ? यहां, इस मकान में ?"

मल्लिकजी बोले, "हां दादी मां। अपने ऑफिस जाने के बजाय खिदिरपुर से सीधे बिडन स्ट्रीट चले आए थे।"

"क्यों ? उन्हें क्या जरूरत थी ?"

"मुझे याद दिलाने आए थे कि कहीं मैं भूल न जाऊं। बड़े ही गरीब आदमी हैं न, इस घर में भाई की लड़की की शादी हो जाएगी, एक दिन वही भतीजी इस घर की बहू बन जाएगी, यह सोचने पर उन्हें बहुत तकलीफ हो रही है, और क्या ! कह रहे थे कि उनकी लड़की को भी इस घर की बहू बना लिया जाए।"

"आपने क्यों नहीं कहा कि मुझे एक ही पोता है।"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं सब कुछ बता चुका हूं, फिर भी वे जान नहीं छोड़ रहे हैं।"

दादी मां ने कहा, "वह आदमी तो अच्छा नहीं मालूम हो रहा है।"

मल्लिकजी ने कहा, "असली बात है दादी मां, अभाव में आदमी का स्वभाव नष्ट हो जाता है। उनके साथ भी यही बात है।"

इसके बाद बोले, "गरीब भतीजी को सहारा मिल रहा है, यह देखकर इतनी ईर्ष्या हो रही है ? हालांकि अपना सगा भाई ही था। भाई जिन्दा नहीं है इसलिए तो उसे खुश ही होना चाहिए था। खैर, मैं तमाम खबरें ले आया हूं, जिनकी हमें जरूरत है।"

दादी मां ने कहा, "अब मेरी ओर से गुरुदेव को एक पत्र काशी भेज दीजिए —और मनीऑर्डर से पांच सौ रुपये भेजना नहीं भूलिएगा। वे आकर कन्या की जन्मपत्री तैयार कर जो राय देंगे, वही करूंगी। अगर वे बताएंगे कि वह हमारे सौम्य के लिए पात्री होने के उपयुक्त है तो मैं हर महीने मनसातल्ला लेन के घर की लड़की की विधवा मां को एक सौ रुपया भेजा करूंगी, जिससे कि उसे दूध-मक्खन-घी मांस-मछली दिए जाएं और उसका शरीर तंदुरुस्त रहे। एक सौ रुपये में काम नहीं चलेगा ? आपका क्या कहना है ?"

"क्यों तन्दुरुस्त नहीं रहेगा ?" मल्लिकजी ने कहा, "मजे से एक सौ रुपये से काम चल जाएगा।"

"लेकिन पहले लड़की की जन्मपत्री देखनी है कि कैसी है ? उसी पर [illegible]

कुछ दारमदार है।"

उसके बाद दादी मां पुनः बोलीं, "आपने कहा था कि आपके दोस्त का एक विश्वासी लड़का है और उसे आप यहां ले आएंगे—आपने बताया था कि वह ब्राह्मण का लड़का है—"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, मेरे दोस्त का ही लड़का है। उसका नाम संदीप लाहिड़ी है। उसके पिता का नाम था हरिपद लाहिड़ी। मेरा वह दोस्त कम उम्र में ही मर गया। मिट्टी के एक मकान के अलावा कुछ नहीं है उसके पास। लड़के की मां ने वेड़ापोता के ज़मींदार के घर रसोई पकाने का काम कर उसे पाला-पोसा है। मैट्रिक की परीक्षा पास कर अब दूर के एक कॉलेज में आइ० ए० पढ़ रहा है। परीक्षा के बाद ही उसे यहां ले आऊंगा। यहां आकर रात में बी० ए० की पढ़ाई करेगा और मेरे काम में भी हाथ बंटाएगा!"

"हां, ठीक है, फिर उसे ठीक समय पर आने को कह दें। उसके कॉलेज की फीस मैं दूंगी, उसके साथ हाथ-खर्च के लिए भी कुछ मिलेगा और यहां खाने-पीने का इन्तज़ाम तो है ही। इससे आपको भी थोड़ी सहूलियत होगी और उसकी भी भलाई होगी।"

मल्लिकजी को मन-ही-मन बेहद ख़ुशी हुई। इतने दिनों के बाद वे हरिपद के लड़के के लिए कुछ कर पा रहे हैं, यही उनके लिए खुशी की बात है। यही बात मल्लिकजी ने वेड़ापोता के निवारण को लिख भेजी। निवारण चिट्ठी पढ़ सीधे संदीप के घर गए और पुकारा, "संदीप की मां, ओ संदीप की मां, घर में हो?"

वह एक रविवार था। कॉलेज में छुट्टी थी। संदीप घर पर ही था। उसने बाहर आकर देखा—निवारण चाचा हैं। बोला, "मां तो घर में नहीं है चाचाजी।"

निवारण चाचा बोले, "न है तो तुम्हीं से बताए जा रहा हूं। तुम्हें कलकत्ता जाना है!"

कलकत्ता! एकाएक हाथ में स्वर्ग मिल गया हो, ऐसी हालत हो गई उसकी। बोला, "कलकत्ता तो मैं जाना चाहता हूं, लेकिन मुझे यह सुयोग कौन देगा?"

निवारण चाचा बोले, "हम लोग देंगे। तुम्हारे पिता की मृत्यु के समय हमने आश्वासन दिया था कि तुम्हारी मां के साथ-साथ तुम्हारी भी हम देखरेख करेंगे—लो तुम्हारे मल्लिक चाचा ने मुझे यह पत्र भेजा है।"

यह कहकर वह चिट्ठी संदीप की ओर बढ़ा दी। संदीप चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते रो दिया। उसकी रुलाई देख निवारण चाचा सकते में आ गए।

बोले, "अरे, तुम क्यों रो रहे हो? क्यों रो रहे हो? लो, यह देखो—"

संदीप ने रोते हुए कहा, "आप लोग मुझे इतना प्यार करते हैं! आप लोगों का यह कर्ज़ मैं कैसे अदा करूंगा चाचाजी?"

यह कहकर चाचाजी के चरणों की धूल लेने जा रहा था। निवारण चाचा ने रोककर उसे कलेजे से लगा लिया। बोले, "छिः, रोना नहीं चाहिए, रोना नहीं चाहिए, इसमें रोने की कौन-सी बात है! जब तक हम ज़िन्दा हैं, तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं।"

संदीप की रुलाई उस वक्त भी रुकी नहीं थी।

निवारण चाचा उसकी पीठ को सहलाते हुए समझाने लगे, "इतनी कम उम्र में ही टूट जाने से कहीं काम चलता है? सामने कितना बड़ा भविष्य पड़ा हुआ है तुम्हारा! अभी केवल उम्मीद करते रहो! इस कम उम्र में अतीत तुच्छ है, असली चीज है भविष्य। जब तुम मेरी उम्र के हो जाओगे तो अतीत के बारे में सोचना। अभी केवल उम्मीद के बल पर आगे बढ़ते जाओ।"

सो उसी दिन के उस पत्र से उसके यहां आने का सूत्रपात हुआ।

उस अंधेरे में एक आदमी के गीत की आवाज उसके कानों में आई। लगता है वह पियक्कड़ आदमी है। इतनी रात में गीत गाते हुए जा रहा है—

आया था इस विश्व में
भजने को हरि-नाम
माया-तृष्णा-लोभ से
रह न सका निष्काम

इसी विडन स्ट्रीट को पकड़ लोग नीमतल्ला के मसान-घाट मुरदे ढोकर ले जाते। यह आदमी शायद नीमतल्ला के मसान-घाट से शराब पीकर लौट रहा था। उस दिन जो गीत उसे पियक्कड़ का असम्बद्ध प्रलाप जैसा लगा था, आज इतने बरसों के बाद सदीप को लगा, उसके जीवन के लिए इससे बढ़कर सच्चाई और कुछ नहीं है। उस दिन का वह पियक्कड़ जैसे अनजाने ही सदीप के भावी जीवन की चरम दुर्दशा का संकेत देकर उसे सचेतन बनाना चाहता था। सचमुच, सदीप बेड़ापोता से क्या करने के ख्याल से कलकत्ता आया था और आखिर में उसकी कितनी करुण और भयावह परिणति हुई थी! उस बात की कल्पना करने से अब उसका कलेजा दहलने लगता है। अब लगता है, क्यों वह कलकत्ता आया था? सच, वह मरने क्यों आया था?

दादी मा की चिट्ठी पाकर एक दिन मुखर्जी परिवार के गुरुदेव आए थे। यह सब कहानी सदीप ने मल्लिकजी से सुनी है। काशी के पंडित एवं द्रष्टा श्री श्री महागुरु पांडेय दादी मा के गुरुदेव हैं। आमतौर पर गुरुदेव किसी के घर नहीं जाते। कहा जा सकता है, किसी को दीक्षा भी नहीं देते। वे गंगा के किनारे अपने आश्रम में ही साल-दर-साल अकेले ही बिता रहे हैं। सभी शिष्यों को उनके पास जाने की अनुमति भी नहीं मिलती। बरसात के मौसम में जब गंगा का पानी बढ़ जाता है, तब भी वे अपना आश्रम नहीं छोड़ते। जब गंगा का पानी बहुत बढ़ जाता है तो वे एक नौका पर चले जाते हैं। महागुरु पांडेय से दादी मा के साक्षात्कार के पीछे एक इतिहास है।

यह बहुत साल पहले की बात है। उस समय दादी मा की हालत बदतर थी। दादी मा के सुख के इतिहास से सभी परिचित थे। जानते थे कि वे करोड़पति आदमी की पत्नी हैं। उनके पति देवीपद मुखर्जी अत्यन्त कर्मठ व्यक्ति थे। साधारण स्थिति से उबरकर ऊंचाई तक पहुंचे हैं। बेलुड़ के 'सैक्सबी मुखर्जी इंडिया लिमिटेड कंपनी' नामक विराट् कारखाने के मालिक हैं। उनके कारखाने में तैयार किए गए माल की खपत न केवल भारत बल्कि संपूर्ण विश्व में होती है। उसके बाद है मिडल ईस्ट के बाजार। भारत सरकार को इस कारखाने से मोटी रकम राजस्व के तौर पर मिलती है। कुल मिलाकर जिसे सफल-सार्थक आदमी

कहा जाता है उसके नमूना हैं देवीपद मुखर्जी। उनकी फैक्टरी में जितने आदमी काम करते हैं उनके अन्नदाता हैं वे। इसीलिए समाज और संसार में वे सम्माननीय व्यक्ति थे।

लेकिन जिस तरह सभी को एक दिन सारे बंधन तोड़कर इस दुनिया से विदा हो जाना पड़ता है, उसी तरह एक दिन उन्हें भी विदा हो जाना पड़ा।

उस दिन दादी मां इतनी बड़ी विपत्ति के चंगुल में फंसने के बावजूद टूटी नहीं थीं। बड़ा लड़का शक्तिपद और उनकी पत्नी भी जिस दिन एक नाबालिग लड़का छोड़ विदा हो गए थे, उस दिन भी वे टूटी नहीं थीं। क्योंकि तब भी उन्हें भरोसा था अपने छोटे लड़के मुक्तिपद पर। उन्हें लगा था, मुक्तिपद के रहते उनके लिए डरने की कौन-सी बात है?

लेकिन शादी होने के कुछ साल बाद ही वह अलग होकर अपने नए बने मकान में चला गया। दादी मां को यही सबसे पहला आघात पहुंचा। तब संबल के नाम पर मात्र वह नाबालिग पोता सौम्य रह गया। उस समय कलकत्ता दादी मां के लिए असह्य जैसा हो गया था। तब सौम्य के स्कूल में गर्मी की छुट्टियां थीं। उस समय उनकी ऐसी हालत थी कि कलकत्ता से कहीं चली जाएं तो राहत की सांस लेने का मौका मिले। मन ही मन तय किया, पोते को अपने साथ ले काशी जाएंगी।

मल्लिक जी काशी गए और वहां किराये पर मकान ले लिया। उसके बाद एक दिन दादी मां पोते के साथ काशी चली गईं। साथ में विन्दु, सुधा, रसोइया, नौकर वगैरह गए। वहां जाने पर हर रोज सवेरे असिघाट स्नान करने जातीं। साथ में विन्दु रहती। वहां नहाकर बाहर आने के बाद अचानक महागुरु पांडेय के आश्रम जाकर विश्वनाथ को गंगाजल डालने गईं। वहीं एकाएक गुरुदेव के दर्शन हो गए। उन्हें देखने पर उनके मन में विचार जगा—अरे, तुम्हारे देवता ये रहे, इन्हें प्रणाम करो।

प्रस्तर की विश्वनाथ की प्रतिमा पर जल डालकर उन्होंने प्रार्थना की। उसके बाद यथारीति हर रोज की तरह घर लौट आईं।

रात के समय पोते को बगल में ले बिस्तर पर वे गहरी नींद में विभोर हैं। अचानक देखा, स्वयं विश्वनाथ उनके सामने उपस्थित हैं। दादी मां ने अपनी आंखों से बाघंबर पहने विश्वनाथ की मूर्ति को देखा। हाथ में त्रिशूल, भाल पर भस्म की त्रिवली। एक सर्प बाबा के गले में लिपटा है और वह सामने दादी मां की ओर देख रहा है और बार-बार जीभ काढ़ रहा है।

दादी मां क्या कहें, समझ में नहीं आया। बाबा की ओर निर्वाक् दृष्टि से ताकती रहीं। कुछ देर बाद अचानक बाबा बोले, "क्या री, तूने यह क्या किया? सोना फेंक कर आंचल में गांठ बांध ली?"

दादी मां क्या कहें, समझ में नहीं आया। उस समय उनका सर्वांग थर-थर कांप रहा था। अंततः बहुत कष्ट से मुंह से एक वाक्य निकला, "मुझसे बहुत बड़ा अपराध हो गया है बाबा, क्या करना होगा, बता दीजिए।"

बाबा बोले, "तू मेरे सामने आकर चली गई, मुझे पहचान नहीं सकी?"

दादी मां ने कहा, "मुझे क्षमा कर दें बाबा। मैं अभागिन हूं—"

बाबाजी ने बाधा देते हुए कहा, "तेरे भाग्य में बहुत दुख है बेटी, बहुत दुख—"

दादी मा बाबा के चरणों पर पछाड़ खाकर गिर पड़ी और फूट-फूट कर रोने लगी। बाबा ने उन्हें सदय बनाते हुए अपना त्रिशूल उठाया।

बोले, "अब बाबा को पहचानने में गलती मत करना बेटी।"

यह कहकर उन्हें क्षमा कर जा रहे थे। दादी मां ने उनके चरणों को कसकर पकड़ लिया। कहने लगी, "मैं आपको क्योंकर पहचानूंगी बाबा, यह बात बताते जाइए।"

बाबा ने जाते हुए कहा, "तू सिंहवाहिनी की पूजा करती है न?"

"हां बाबा, करती हूं। हर रोज पूजा करती हू।"

"कल सवेरे गगा नहाने के बाद जब मेरे आश्रम में तू मूर्ति को जल डालने आएगी तो तुझे देखने को मिलेगा कि अपनी प्रस्तर-मूर्ति के सामने मैं बैठा हुआ हूं।"

"क्या देखकर तुम्हें पहचानूंगी?" दादी मा ने पूछा।

बाबा बोले, "मेरे भाल पर त्रिवली चिह्न दिखाई पड़ेगा, और सामने की बेदी पर एक कमल फूल पड़ा रहेगा। समझ जाना कि मैं ही वह हूं।"

यह कहकर बाबा अदृश्य हो गए। और तत्क्षण दादी मा की नीद टूट गई। उन्होंने अंधेरे मे चारों तरफ ध्यान से देखा। कही कोई नहीं, सिर्फ सौम्य उनकी बगल मे गहरी नीद मे सोया हुआ है।

उस रात उन्हें फिर नीद नही आई। रात रहते ही उठकर उन्होंने बिन्दु को पुकारा, "उठो बिन्दु, गगा की तरफ चलना है।"

बिन्दु ने चारों तरफ नजर दौड़ाकर देखा और बोली, "अब भी अंधेरा है माताजी। अभी तो रिक्शावाला भी नही आएगा।"

दैनंदिन गगास्नान के लिए रिक्शेवाले को महीनेभर के लिए ठीक किया गया था। वह तो हर रोज अपने स्वार्थ के लिए ही भोर चार बजे आकर घंटी बजाता। दादी मा स्नान कर लेतीं तो घर पहुंचा जाता।

लेकिन उस दिन दादी मा ने बिन्दु को पुकारा तो उस समय चार भी नही बजे थे। सिर्फ साढ़े-तीन बजे का ही वक्त था।

तो भी दादी मा की ताकीद पर बिन्दु को बाहर निकलना पड़ा। दादी मां बोली, "आज जरा हड़बड़ी है, इसीलिए इतनी सुबह जा रही हूं। सड़क पर जाने पर कोई न कोई रिक्शावाला मिल ही जाएगा।"

और सचमुच मिल गया।

अग्निघाट तब वीरान और सूना था। और-और दिनों की तरह भीड़-भाड़ नही थी।

उस दिन देर तक स्नान न हो सका। मन में बेचैनी थी। क्या होगा, क्या होगा, जैसा भाव था। स्नान कर लोटे में जल ले जब बाबा के मंदिर में आई तो वे मन की उत्तेजना को दबाकर नही रख सकी। मंदिर मे क्या देखने को मिलेगा, केवल यही चिन्ता थी। जब मंदिर मे प्रवेश किया तो नथुने में एक प्रकार की सुगंध आई। सोचा, अंदर धूना जलाया गया है। लेकिन कहां, कही भी धूना नही जल

रहा है। फिर आज इतनी सुगंध कहां से आ रही है?

देखा, पुजारी पद्मासन में वैठ आंख वंद किए मूर्ति की ओर देख रहे हैं। लगा, पुजारी के शुद्ध-पवित्र शरीर से ही यह अतीन्द्रिय सुगंध आ रही है। उसके वाद पुजारी के सामने की वेदी पर आंखें जाते ही दादी मां चौंक पड़ीं। तरह-तरह के फूलों के वीच एक अधखिला श्वेत कमल है।

दादी मां अव खड़ी नहीं रह सकीं। वे उस पुजारी के चरणों पर गिर पड़ीं।

पुजारी का ध्यान टूट गया। वे चिल्ला उठे।

"कौन? कौन है? तू क्या चाहती है?"

दादी मां चेतना खो वैठीं। उनके किस पाप के कारण मुक्तिपद उन्हें छोड़कर सपरिवार चला गया? यदि इसके कारण उनका कोई अपराध हो तो वे प्रायश्चित करने को तैयार हैं। तुम्हें मुझे जो सजा देनी हो, दो वावा। मैं सिर नवाकर सव कुछ अंगीकार कर लूंगी। या तो तुम मेरे मन को शांति दो या मुझे स्वीकार कर लो। मुझे अंगीकार करने पर अगर मेरे घर-संसार में सुख-शांति लौट आए तो तुम मुझे अंगीकार कर लो।

इसके वाद उन्हें तनिक भी चेतना न थी। वे वहीं अचैतन्य होकर पड़ी हुई थीं। जव उन्हें होश आया तो देखा, वे अपने घर में अपने विछावन पर लेटी हैं और डॉक्टर वैठकर उनकी जांच कर रहा है।

यह सव वहुत पुरानी वातें हैं। लेकिन ये वातें किसी को भले ही याद न हों, मगर दादी मां को याद हैं और उनकी चहेती नौकरानी विन्दु को भी याद हैं।

उसी समय काशी से कलकत्ता तार भेजा गया—मल्लिकजी के पास। तार भेजा गया कि टेलिग्राम मिलते ही काशी के पते पर पचास हजार रुपये भेजने का इन्तज़ाम कर दें। वहुत ज़रूरी काम है।

टेलिग्राम मिलते ही मल्लिकजी सीधे मंझले वावू के डलहौजी स्क्वायर के हेड ऑफिस गए। टेलिग्राम मंझले वावू को दिखाते ही उन्होंने एक आदमी के मार्फत तुरन्त पचास हज़ार रुपया मां के पास भेज दिया।

रुपया मिलते ही दादी मां ने वह रकम तत्क्षण गुरुदेव को जाकर दे दी। श्री श्री महागुरु पांडेय ने उन रुपयों को अपने हाथ से छुआ तक नहीं, वगल में एक शिष्य था उसे देकर निश्चिन्त हो गए।

वोले, "वावा की पूजा का भोग चढ़ाओ।"

दादी मां ने कहा, "आपका मंदिर टूट गया है, इन रुपयों से मंदिर की मरम्मत करा लें। मंदिर का और अधिक सुंदर ढंग से निर्माण करा लें।"

महागुरु ने कहा, "मैं वावा के मंदिर की मरम्मत करनेवाला कौन हूं री विटिया? वावा का मंदिर है, अपना मंदिर मरम्मत कराने को उन्होंने रुपया दिया, फिर किसी दिन मंदिर की मरम्मत करा लेंगे? तू और मैं कौन होते हैं वेटी? हम लोग तो मात्र हेतु हैं विटिया, मात्र हेतु हैं।"

दादी मां ने तव अपना सारा दुख महागुरु के चरणों पर उंडेल दिया।

अपनी पूरी जिन्दगी की कहानी सुनाकर महागुरु से आशीर्वाद मांगा। लेकिन महागुरु पांडेयजी के मन पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

लेकिन आश्चर्य, ईश्वर की लीला क्या है, कौन जाने? अचानक एक दिन

उन्होंने इस नश्वर देह को त्याग दिया। शिष्यों की मंडली रोते-रोते बेहाल हो गई। लेकिन पुजारी का आसन कभी खाली नहीं रहता, रहना भी नहीं चाहिए। उस आसन पर एक शिष्य विराजमान हुए। वे ही सभी के गुरु बने। उन्हें ही सब लोग महागुरु कहकर संबोधित करने लगे। दादी मां एक दिन उनके पास जाकर रो दीं। बोलीं, "मेरा क्या होगा गुरुदेव ?"

महागुरु बोले, "देह रहने पर एक दिन देह त्यागकर चले जाना पड़ता है, यही ईश्वर की लीला है।"

"लेकिन मुझे उनसे दीक्षा लेने की इच्छा थी।" यह कहकर सपने में देखी बातों की विस्तार से चर्चा की।

महागुरु सब कुछ सुनने के बाद बोले, "तुम्हें दीक्षा लेने की इतनी अभिलाषा है तो मैं ही तुम्हें दीक्षा दूंगा। तू राजी है ?"

"हां, मैं राजी हूं।" दादी मां ने कहा।

उसके बाद एक शुभ दिन देखकर दादी मां ने दीक्षा ली। दीक्षा लेकर महा-गुरु को प्रणाम किया और बोलीं, "गुरुदेव, अब मुझे तृप्ति का अनुभव हो रहा है। आप मुझे आशीर्वाद दें।"

महागुरु ने कहा, "मैं आशीर्वाद देनेवाला कौन होता हूं ? बाबा ही तुम्हें आशीर्वाद देंगे।" यह कहकर उन्होंने बाबा का पदोदक दादी मां के माथे पर छिड़क दिया। दादी मां बेहद खुश हुईं। इसके बाद पोते की गरमियों की छुट्टी जब खत्म हो गई तो उसे लेकर मंदिर गईं। महागुरु ने पूछा, "यह कौन है ?"

"मेरा बड़ा लड़का था, उसी का यह बेटा है। मेरा छोटा लड़का मुझे छोड़-कर अलग हो गया है। इसलिए मेरा यह पोता ही मेरी एकमात्र उम्मीद और भरोसा है। इसके भविष्य के बारे में सोचकर ही मुझे रात में नींद नहीं आती। भविष्य में इसके भाग्य में क्या है, आप दया कर बता दें। इसके मां-बाप नहीं हैं, इसीलिए मुझे बड़ा डर लगता है —"

गुरुदेव ने सौम्य के दाहिने हाथ को अपने हाथ में लेकर कुछ देर तक देखा। उसके बाद सौम्य का हाथ छोड़कर बोले, "इसके लिए होशियार रहने की जरूरत है बेटी।"

यह सुनकर दादी मां भय से चिहुंक उठीं। बोलीं, 'क्यों बाबा ? बताइए, क्या देखा ?"

"इसका भाग्य जरा खराब है।"

दादी मां रो दीं। रोते-रोते बोलीं, "यह जिन्दा रहेगा तो ?"

गुरुदेव बोले, "तेरा पोता जरूर ही जिन्दा रहेगा, लेकिन इसकी शादी के समय मुझे जरा खबर भेजना।"

इसके बाद गुरुदेव ने और कुछ नहीं कहा था। बहुत दबाव डालने पर भी कुछ कहने को राजी नहीं हुए थे। उस समय उनके पास ज्यादा वक्त भी नहीं था। सौम्य की छुट्टियां समाप्त हो गई थीं, इसलिए दादी मां काशी छोड़ सबके साथ कलकत्ता लौट आई थीं। लेकिन कलकत्ता आने पर भी गुरुदेव की बातें कांटे की तरह बेधती रही थीं। यह वजह है कि घर गृहस्थी के रोजाना काम के बीच उन्हें हमेशा गुरुदेव की बातें याद आ जातीं। वे हमेशा सौम्य की चौकसी करती रहतीं।

यही वजह है कि उन्होंने रात के ठीक नौ बजे गिरिधारी को गेट बन्द करने का हुक्म दिया था। उद्देश्य था, सौम्य रात के वक्त घर से बाहर न जा सके। इसके अलावा वे सौम्य के छुटपन से ही उसकी शादी के लिए एक पात्री चुनकर रखने की बात सोच रही थीं। लिहाजा गंगा-घाट जाने पर जब एक खूबसूरत लड़की पर उनकी नजर पड़ी तो उसी समय तय किया कि लड़की अगर उनकी जात-बिरादरी की होगी तो उससे अपने पोते की शादी करा देंगी। उसी मतलब से लड़की के घर सब कुछ पता लगाने को भेजा था। उसके बाद लड़की का जन्म-वर्ष, जन्म-तिथि, जन्म-समय और जन्म-स्थान का उल्लेख करते हुए मल्लिकजी को गुरुदेव के पास पत्र लिख देने को कहा। और वक्त की बर्बादी न हो, इस खयाल से गुरुदेव को अपने साथ लाने के लिए मल्लिकजी को कलकत्ता से काशी भेज दिया।

यह सब अतीत की कहानी है। मल्लिकजी अतीत की कहानी ही कह रहे थे।

संदीप ने पूछा, "इसके बाद? इसके बाद क्या हुआ चाचाजी?"

उसके बाद की उतनी बातें क्या संक्षेप में कही जा सकती हैं? और गुरुदेव को कलकत्ता के मानी-गुणी सम्पन्न व्यक्ति के घर में लाना क्या इतना आसान था? लेकिन भाग्य की कितनी असीम कृपा है कि उन्होंने इस बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए नंबर मकान में पदार्पण किया। समूचे घर में चहल-पहल मच गई। घर में दादी मां और पोते के अलावा है ही कौन जो उथल-पुथल मचाए? बाकी जो लोग इस घर में हैं वे तो घर के सदस्य नहीं हैं। सभी वेतनभोगी कर्मचारी हैं। लेकिन उनके लिए भी कोई कम परेशानी की बात नहीं है। घर के मालिक तो हुक्म देकर ही छुट्टी पा लेते हैं, काम-काज तो उन वेतनभोगी कर्मचारियों को ही करना है।

गुरुदेव दया कर आएंगे, अत: उनकी सेवा में कोई त्रुटि नहीं होनी चाहिए। जरा भी भूल-चूक नहीं होनी चाहिए! गुरुदेव के लिए विशेष बिछावन खरीदकर लाना पड़ा। नया पलंग, नया गद्दा, नई तोशक, नई चादर, नया तकिया। सब कुछ नया। उसके बाद राजमिस्त्री से घर के अन्दर-बाहर, सामने और पीछे की तरफ नए सिरे से सफेदी करानी पड़ी। उस पर हैं पूजा के बर्त्तन इत्यादि। गुरुदेव के बैठने के लिए कालीन और कसीदा कढ़ा हुआ आसन मंगाया गया। सुबह से शाम तक किसी को दम लेने की फुर्सत नहीं है। सभी को चिन्ता लगी है। कब कौन-सी त्रुटि या गलती हो जाए, कोई नहीं कह सकता। गलती होने से माफी नहीं मिलेगी, तुरन्त नौकरी से हटा दिया जाएगा। गुरुदेव और ईश्वर क्या भिन्न हैं? गुरुदेव रुष्ट हो जाएं तो ईश्वर भी रुष्ट हो जाएंगे। तीन-मंजिले से दादी मां बिन्दु के जरिए दो-मंजिले की कालीदासी को हुक्म देती हैं, बिन्दु के बदले सुधा भी बीच-बीच में हुक्म देती है। कालीदासी एक-मंजिले की फुल्लरा को हुक्म देती है। वह ठाकुरवाड़ी की कामिनी के पास हुक्म पहुंचाती है और कामिनी वह हुक्म ठाकुर-बाड़ी के पुरोहित को पहुंचा आती है। जो कंदर्प हर रोज ठाकुरबाड़ी में सवेरे फूल और बेलपत्ता पहुंचा आता है, उस पर पुरोहित रौब गालिब करते हैं। पुरोहित ने कंदर्प से कहा है कि वह हर रोज ज्यादा फूल, बेलपत्ता और दूब ले आए। फिर भी कंदर्प कम फूल ले आता।

उस दिन फूल देखकर पुरोहित गुस्से से आग-बबूला हो गए। बोले, "क्या बात है कंदर्प, फूल इतना कम क्यों है? इतना कम फूल दोगे तो दादी मां से जाकर शिकायत करूंगा। याद रखना, तुम्हारा पैसा काट लिया जाएगा।"

कंदर्प ने हाथ जोड़कर माफी मांगी, "अबकी माफ कर दें पुरोहितजी, आज बहुत बारिश हो रही थी, इसलिए बाजार नहीं जा सका। अबकी मुझे माफ कर दें सरकार!"

पुरोहितजी बोले, "तो फिर मेरा जुर्माना दे। दे जुर्माना—"

कंदर्प गरीब आदमी है। आदम दादा के वक्त से चली आ रही दर है फूल की। तीन पुश्तों से इस घर में फूलों की आपूर्ति करता आ रहा है। फूलों की आपूर्ति की दर बढ़ाने के लिए कहने पर ब्राह्मण देवता खफा हो जाते हैं। ऐसे पुरोहितजी को पावने की दस्तूरी देनी पड़ती है। कंदर्प को महीने के आखिर में तीस रुपया मिलता है। उसमें से पुरोहित को पांच रुपया देना पड़ता है। इससे भी ब्राह्मण देवता खुश नहीं रहते। कहा था, "अब देना मुश्किल हो गया है पुरोहितजी, फूल का बाजार बड़ा टाइट है। पहले के दाम में अब कोई फूल देना नहीं चाहता।"

पुरोहित ने कहा, "तो फिर तुम्हें मेरी दस्तूरी भी बढ़ानी होगी।"

"कितनी दस्तूरी दूंगा, बताइए?" कंदर्प ने कहा, "और एक रुपया बढ़ाने से काम चल जाएगा तो?"

"धत्त पट्ठे, जिन्सों का दाम आकाश छू रहा है, एक रुपया बढ़ाने से क्या होगा?"

"अच्छा, तो फिर दया कर डेढ़ रुपया ले लीजिएगा।"

इस पर भी पुरोहित का मन द्रवित नहीं हुआ। सच, रुपये के मामले में पुरोहितजी बड़े ही कड़ियल हैं। कंदर्प ने कहा, "आप पुराने यजमान होने के बावजूद इस तरह की बातें कर रहे हैं? फिर हम कहां जाएं पुरोहितजी? फिर तो हमारी जान ही निकल जाएगी, हां, जान ही निकल जाएगी।"

लेकिन पुरोहितजी एक बार जो कुछ कह देते हैं उससे टस से मस तक नहीं होते। वे जो कहते हैं वही करते हैं। फूलों की आपूर्ति की दर तीस से बढ़कर चालीस रुपया हो गई, लेकिन उनकी दस्तूरी पांच रुपये से बढ़कर [एकबारगी दुगुनी हो गई। यानी पांच रुपये से दस रुपया।

सो इतने दिनों के बाद जब कि गुरुदेव घर पर आ रहे हैं तो कंदर्प को फूल-बेलपत्ते की अधिक मात्रा में आपूर्ति करनी होगी। ऐसे में उसने पैसे की रकम बढ़ाने की पुरोहितजी के पास अर्जी पेश की।

पुरोहित बोला, "मुनीमजी कलकत्ता लौटकर आएंगे तो मैं यह काम करा दूंगा, लेकिन मेरे पावने की बात याद रहेगी न?"

गुरुदेव के आने के पहले ही दादी मां के हुक्म पर नौकर-चाकर, महरियों को नए कपड़े-अंगोछे दिए गए। जैसे घर में शादी-ब्याह के उत्सव की शुरुआत हो रही हो। यह सब अलग से मिल रहा है। असली उपलक्ष्य है पोते की शादी के लिए पात्री का निर्वाचन।

अंततः सचमुच ही मल्लिकजी गुरुदेव को साथ ले कलकत्ता लौट आए। पहले

के इन्तज़ाम के मुताबिक ठीक समय पर हावड़ा स्टेशन पर गाड़ी भेज दी गई थी। मल्लिकजी गुरुदेव के साथ प्लेटफार्म पर उतरे। सामने ही गाड़ी खड़ी थी, गुरुदेव के साथ उसके अन्दर बैठ गए।

और उसी दिन सवेरे से ही बारह बटे ए विडन स्ट्रीट भवन के ऊपर नौबत का सुर बजने लगा। उस दिन नौबत का स्वर सुनकर इस मुहल्ले के तमाम लोग सवेरे-सवेरे चौंक पड़े। उस समय सड़क से जो लोग जा रहे थे, वे भी चंद लमहों के लिए वहां ठिठककर खड़े हो गए। मुखर्जी भवन में क्या हुआ है ? अचानक अभी नौबत क्यों बज उठी ? किसी की शादी है ? नहीं, यह कैसे हो सकती है ? इस महीने में हिन्दू घर में शादी कहीं हो सकती है ? फिर क्या बात है ? कुतूहल-वश लोग जानने को उत्कंठित हो उठे। कोई पूजा है ? नहीं, यह भी कैसे हो सकती है ? इस महीने में तो कोई पूजा नहीं है। तो क्या लड़का या लड़की का अन्न-प्राशन है ? नहीं, यह भी कैसे हो सकता है ? उस घर में तो कोई छोटा बाल-बच्चा नहीं है। फिर ?

एक घर के गिर्द मुहल्ले के तमाम लोगों के मन के अन्दर एक अदम्य प्रश्न उत्कंठा से चंचल होकर निःशब्द छटपटाने लगा। कौन ? क्या ? क्यों ?

चाप राशि में जब सूर्य रहता है तो विशाखा नत्रक्ष में पूर्णिमा समाप्त होती है। उस दिन पैदा हुई थी इसलिए विशाखा नाम रखा गया था। तो भी उसके लिए योगमाया के मन में बड़ा ही भय बना रहता था। वह लड़की क्या ज़िन्दा रहेगी ? इस लड़की ने तो जनमते ही बाप को मार डाला है। भविष्य में उस लड़की के भाग्य में क्या है, कौन जाने ! इसीलिए मां समय-असमय सभी दृश्य-अदृश्य देवताओं को प्रणाम करती, "प्रभो, मेरे भाग्य में जो होने को है, वह हो, लेकिन तुम मेरी लड़की के लिए कोई आश्रय ढूंढ़ दो। तुमने उसे मेरी गोद में दिया है तो उसके भले-बुरे का तुम्हें ही खयाल करना है। मैं अनाथिनी हूं प्रभु ! उसकी देख-रेख करनेवाला कोई नहीं है। मेरे पैतृक वंश में भी कोई नहीं है। मुझे अपने देवर के घर में चाहे कितने ही लात-जूते क्यों न पड़ें, मुझे कितनी ही तकलीफ क्यों न झेलनी पड़े, लेकिन वह सुख से रहे। उसका सुख ही मेरा सुख है प्रभु, तुमसे और कुछ नहीं मांगती हूं, कुछ नहीं मांगती हूं।"

लेकिन विशाखा को यह मालूम नहीं कि उसकी जैसी दुखिया औरत दुनिया में और कोई नहीं है। यह बात मुंह खोल किसी से कहने का उपाय भी नहीं है।

किसी-किसी दिन लड़की मां के पास आ बिसूरने लगती है।

योगमाया तब चूल्हे पर पतीली में दाल पका रही थी। लड़की की रुलाई से रसोई पकाने में बाधा पड़ी। पूछा, "रो क्यों रही है ?"

"मुझे जलेबी नहीं दी।"

योगमाया ने कहा, "किसने ?"

विशाखा बोली, "चाचीजी ने।"

योगमाया बोली, "नहीं देने दो। मैं तुम्हें जलेबी दूंगी। रोओ मत, छिः रोते नहीं—"

"तो तुम्ही दो।"

योगमाया बोली, "अभी जलेबी कहां मिलेगी? बाद में तुम्हें दूंगी।"

विशाखा हठ करने लगती है, "बाद में नहीं, अभी दो।"

योगमाया कहती है, "नहीं बेटी, ऐसा नहीं करते, छिः अभी जलेबी कहां मिलेगी? बाद में तुम्हें जलेबी खरीद दूंगी। ठीक है न?"

उसी वक्त बिजली दांत से जलेबी काटती हुई रसोईघर के पास आई। विशाखा को दिखाकर जलेबी खाने लगी।

विशाखा ने कहा, "वह देखो मां, बिजली जलेबी खा रही है, मुझे नहीं दे रही—"

बिजली ने कहा, "मैं तुझे जलेबी क्यों दूंगी? यह जलेबी तो मेरी मां ने खरीद दी है।"

योगमाया वहां पूर्ववत् बैठी रही और साड़ी के आंचल से लड़की का मुंह ढंक दिया, जिससे कि उसकी लड़की बिजली का जलेबी खाना नहीं देख सके। बोली, "छि, उस तरफ नहीं देखना चाहिए।"

विशाखा तब जी-जान से साड़ी के आंचल से अपना सिर निकालने की कोशिश कर रही थी। लेकिन योगमाया जोर से अपनी लड़की का सिर दबाए हुए है। लेकिन तो भी वह जलेबी का शोक भूल नहीं पा रही है।

बोली, "तुम मुझे जलेबी क्यों नहीं दोगी? मैंने क्या किया है?"

आखिर में योगमाया ने लड़की के सिर पर जोर से एक तमाचा लगाते हुए कहा, "मुंहजली, अपने बाप को तो खा चुकी हो, अब मुझे भी खाकर रहोगी···"

तमाचा खाकर विशाखा जोर-जोर से रोने लगी। अब तक जो धीमी आंच सुलग रही थी, उसमें जैसे और ईंधन डाल दिया गया। वह चिल्ला-चिल्लाकर इस तरह रोने लगी कि कान फट जाएं।

इस पर योगमाया ने बिजली की ओर ताकते हुए कहा, "तुम यहां से हट जाओ बेटी, ओट में चली जाओ। मेरी अच्छी बिटिया, चली जाओ—उसे जलेबी मत दिखाओ।"

बिजली भी कम नहीं है। रोती हुई अपनी मां के पास चली गई। मां तब एक चटाई पर लेट सिनेमा की पत्रिका देख रही थी। लड़की को रोते देख अचकचा कर बोली, "क्या हुआ री? क्या हुआ? किसने मारा?"

"बड़ी मां···"

रुलाई के कारण बिजली के मुंह से पूरी बात नहीं निकल सकी।

मां ने पूछा, "बड़ी मां ने मारा है? क्यों मारा? तूने क्या किया था?"

बिजली की आंखों से तब अजस्र आंसुओं की धारा बह रही थी। किसी तरह उसके मुंह से निकला, "मैंने कुछ नहीं किया था, जलेबी खा रही थी।"

"जलेबी खाने से कोई मारता है?" मां ने कहा।

बिजली ने निश्छल भाव से कहा, "सच, मैंने कुछ नहीं किया था, सिर्फ जलेबी खा रही थी।"

मां चटाई छोड़ बड़ी तकलीफ से उठकर खड़ी हुई और बोली, "तेरी बड़ी मां कहां है?"

"रसोईघर में, वो रही—"

मां लड़की को लेकर रसोईघर की ओर गई और बोली, "दीदी, तुमने बृहस्पतिवार के इस वर्जित दिवस में मेरी लड़की को मारा ?"

उस समय भी विशाखा योगमाया की गोद में मुंह रखकर रो रही थी। वह बोली, "मैंने बिजली को कहां मारा है ?"

"तुमने नहीं मारा तो बिजली ने क्या यों ही मुझसे शिकायत की ?"

योगमाया ने कहा, "नहीं बहन, मैंने नहीं मारा है, मेरी बात पर यकीन करो। मैंने विशाखा को मारा है, बिजली से इतना ही कहा था कि यहां से जाकर उसकी आंखों की ओट में जलेबी खाए।"

"तो तुम यह कहना चाहती हो कि मेरी बिजली ने झूठ कहा है ?"

योगमाया ने कहा, "मैं यह क्यों कहूंगी बहन ! यह कहने का मुझे क्या हक है ? हक रहता तो ईश्वर क्या मेरे भाग्य से खिलवाड़ करता ?"

यह कहकर योगमाया ने अपने पल्लू से आंखें पोछीं। लेकिन योगमाया के आंसू देखकर रानी को गुस्सा आ गया। बोली, "हां रोओ, ज़ोर-ज़ोर से रोओ, जिससे कि गृहस्थ का अमंगल हो, जिससे कि तुम्हारी ही तरह मेरी भी तकदीर में आग लग जाए। चाहे कोई जाने या न जाने पर मैं जानती हूं कि तुम मुझसे कितना जलती हो। हां, इतना कहे देती हूं, अगर मेरी तकदीर में आग लगेगी तो तुम भी उस आग से बच नहीं सकोगी—और सिर्फ तुम ही नहीं, तुम्हारी विशाखा को भी उस आग से कोई बचा नहीं सकेगा—यह जान लो—"

यह कहकर रानी जिस तरह तेज कदमों से आई थी उसी तरह तेज़ कदमों से अपने कमरे में चली गई।

योगमाया अब बरदाश्त नहीं कर सकी। विशाखा को अपनी गोद से एक हाथ दूर सरकाकर उसकी पीठ पर दनादन मुक्के-घुस्से बरसाने लगी और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी, "मर जा तू। तू मर क्यों नहीं जाती ? इतने-इतने लोग मर रहे हैं और तू मरती नहीं ! तू अपने बाप को खा चुकी है अब मुझे खा। मुझे क्यों नहीं खाती ? तुझे इतनी भूख है ? इतने-इतने लोगों को यम खा रहा है और तुझे खाता नहीं ? यम क्या अंधा है ? मर, मर जा तू, और तुझे यम अगर नहीं खाता तो मुझे क्यों नहीं खा लेता ?"

विशाखा जितना मार खा रही थी, योगमाया उतनी ही जीवन से हताश होती जा रही थी। योगमाया की चिल्लाहट से मुहल्ले के लोग भी दहशत में आ गए हैं। हो सकता था, घटना जानने के लिए वे घर के अन्दर घुस आते, लेकिन उसके पहले ही देवरानी ने विशाखा को आकर पकड़ लिया था।

बोली, "क्या कर रही हो दीदी ? तुम क्या मुहल्ले के लोगों के सामने हमें बेइज्जत करना चाहती हो ? तुम्हारा मतलब क्या है, सुनूं ? तुम विशाखा को मारकर मुझे सबक सिखाना चाहती हो ? तुम सोचती हो कि मैं कुछ नहीं समझती ?"

आमतौर से योगमाया शांत स्वभाव की औरत है। पति की मृत्यु के बाद से और भी अधिक गुमसुम रहने लगी है। लेकिन न जाने अचानक क्या हुआ कि उसके सिर पर भूत सवार हो गया। एक मामूली-सी जलेबी के चलते स्थिति

इतनी गंभीर हो जाएगी, इसकी कल्पना देवरानी ने नहीं की थी और न बिजली या विशाखा ने। तब तक देवरानी विशाखा और बिजली को लेकर अपने कमरे में जा चुकी थी।

यह सब बीते दिनों की बातें हैं। यह सब घटनाएं यद्यपि बीच-बीच में घटित होतीं, लेकिन सबे अरसे तक खिंचतीं नहीं थीं।

मगर बीच में क्या से क्या हो गया, लड़की को अपने साथ ले बाबूघाट गंगा नहाने के लिए जाने पर विशाखा किसकी आंखों में जंच गई थी, भगवान जाने!

उसी दिन से देवरानी की तबीयत और ज्यादा खराब रहने लगी। उस दिन से योगमाया और अधिक गुमसुम रहने लगी। और उसी दिन से देवर का मिजाज और अधिक चिड़चिड़ा हो गया।

विशाखा कभी-कभी बिस्तर पर लेटकर पुकारती, "मां, ओ मां—"

योगमाया कहती, "क्या हुआ? मुझे पुकार क्यों रही है?"

विशाखा कहती, "मुझे नींद नहीं आ रही। डर लगता है।"

"क्यों, डर क्यों लग रहा है?"

विशाखा कहती, "तुम मुझे बाहों में भर लो, कसकर बाहों में भर लो।"

योगमाया अपनी लड़की को बाहों में भरकर लाड़ करती।

इस पर भी विशाखा को नींद नहीं आती।

अचानक थोड़ी देर बाद विशाखा कहती, "सुना है, मेरी शादी होनेवाली है मां।"

योगमाया चौंक उठती। पूछती, "तुमसे किसने कहा?"

विशाखा चुप हो जाती। योगमाया ने कहा, "बता, तुझसे किसने कहा?"

विशाखा डर के कारण इस सवाल का कोई जवाब नहीं देती है। योगमाया ने दुबारा सवाल किया, "जवाब क्यों नहीं दे रही? बता, तुझे शादी की बात किसने कही?"

विशाखा ने कहा, "चाचाजी ने।"

"चाचाजी ने तुझसे कहा है?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, चाचाजी और चाचीजी आपस में बात कर रहे थे, मैंने सुन लिया।"

"चाचाजी और चाचीजी क्या बातें कर रहे थे?"

"कह रहे थे, जहां मेरी शादी होगी, वहां चाचाजी गए थे। वह एक विशाल भवन है। वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं, उन लोगों के घर में बहुत बड़ी गाड़ी है। उन लोगों के पास ढेर सारा रुपया है, बहुत सारे नौकर-नौकरियां, दरबान और मंदिर हैं उन लोगों के घर में। मंदिर में हर रोज पूजा होती है—"

योगमाया बोली, "और क्या कहा?"

"बोले कि चाचाजी ने उन लोगों के घर में बिजली की भी शादी करने की बात की थी, लेकिन वे लोग राजी नहीं हुए। इस वजह से चाचीजी बहुत क्रोधित हो गई हैं।"

"किस पर क्रोधित हो गई हैं?" योगमाया ने पूछा।
"तुम पर।"
योगमाया ने कहा, "क्यों, मुझ पर क्रोधित क्यों हो गई है? मैंने क्या किया है?"
विशाखा बोली, "लगता है, मैंने गलत सुना। शायद उन्हीं लोगों पर गुस्सा गये हैं।"
योगमाया बोली, "सो जो मर्जी हो करे, अव तुम सो जाओ।"
थोड़ी देर के वाद विशाखा बोली, "मैं लेकिन उन लोगों के घर नहीं जाऊंगी।"
योगमाया ने कहा, "कौन तुम्हें उन लोगों के घर जाने को कह रहा है? तुम्हें मर्जी न हो तो मत जाना।"
विशाखा बोली, "मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी मां।"
योगमाया ने कहा, "तुमने लड़की होकर जन्म लिया है, शादी के वाद तो तुम्हें ससुराल जाना ही होगा विटिया।"
विशाखा ने मां को कसकर पकड़ लिया।
वोली, "नहीं मां, मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी।"
"यह सव वात अभी तुम मत सोचो।" योगमाया ने कहा, "अव तुम सो जाओ।"
कुछ देर वाद ही विशाखा चुपचाप नींद में मशगूल हो गई। योगमाया ईश्वर का स्मरण करने लगी, "प्रभो! इस लड़की के अलावा मेरा कोई नहीं है। तुम उसका ध्यान रखना प्रभु!"
उसके वाद वह खुद भी नींद की वांहों में खो गई।

उस दिन सवेरे सात वजे ही सात नम्बर मनसातल्ला लेन के सदर दरवाज़े की कुंडी खटखटाने की आवाज हुई। भीतर से तपेश गांगुली ने पूछा, "कौन?"
"मैं विडन स्ट्रीट से आ रहा हूं। मुनीमजी—"
तपेश गांगुली ने झट से दरवाज़ा खोल दिया। देखा, मल्लिकजी खड़े हैं। पूछा, "क्या वात है?"
मल्लिकजी वोले, "आपकी भाभी और भतीजी को लिवाने के लिए आया हूं। दादी मां के गुरुदेव काशी से आए हैं, वे आपकी भतीजी को देखना चाहते हैं।"
तपेश गांगुली के मुंह से कोई शब्द नहीं। उन्हें जैसे अपने कान पर विश्वास न हो रहा हो। उन्होंने कहा, "आइए मल्लिकजी, आप वाहर सड़क पर क्यों खड़े हैं? अन्दर आइए—"
मल्लिकजी पहले दिन की तरह ही अन्दर जाकर वैठ गए। वही पहलेवाला पलंग, विछावन गोलाकार रखा हुआ। हर जगह गन्दगी का ढेर।
"भाभी, ओ भाभी, भाभी कहां हैं? विडन स्ट्रीट भवन से वे लोग तुम लोगों को लिवाने के खयाल से आए हैं।"
उनकी वातें विजली की रफ्तार में घर के अन्दर फैलकर एक तूफान जैसा

माहौल तैयार कर देंगी, उसकी तपेश गांगुली ने कल्पना नहीं की थी। योगमाया के कानों से जैसे ही ये शब्द टकराए, वह सिहर उठी। सोचा, लगता है अब सिर पर गाज गिर पड़ेगी।

कमरे के अन्दर से रानी बोली, "क्या कहा ? कौन आया है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन से यहां गाड़ी भेजी गई है—"

रानी जैसे रोग भोगने के बाद स्वस्थ हो गई हो। बोली, "क्यों ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "भाभी और विशाखा को वे लोग कुछ देर के लिए ले जाना चाहते हैं।"

"क्यों ?"

"वे अगर ले जाना चाहते हैं तो मैं क्या कर सकता हूं ?"

रानी बोली, "बड़ी दीदी चली जाएगी तो रसोई कौन पकाएगी ? मुझसे नहीं हो सकेगा, यह कहे देती हूं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "फिर मैं मल्लिकजी से क्या कहूं ?"

"तुम्हें जो ठीक जंचे, वही जाकर कहो।"

अचानक पीछे से एक आवाज आई, "देवरजी—"

तपेश गांगुली ने देखा, रसोईघर से निकल भाभी पीछे की तरफ आकर खड़ी हो गई है। रानी ने भी देखा। तपेश गांगुली के कुछ कहने के पहले ही योगमाया बोली, "तुम कह दो देवरजी, कि मैं नहीं जाऊंगी।"

"क्यों भाभी, क्यों नहीं जाओगी ?"

योगमाया बोली, "नहीं, मैं नहीं जाऊंगी। गृहस्थी के ढेर सारे काम पड़े हुए हैं। मेरे चले जाने पर कौन करेगा ?"

"सचमुच नहीं जाओगी ?"

योगमाया बोली, "हां, सचमुच नहीं जाऊंगी, तुम उन लोगों से यही कह दो।"

तपेश गांगुली ने कहा, "लेकिन वे लोग बहुत धनी-मानी व्यक्ति हैं, यह मालूम है ? मैं खुद ही उस दिन उनके घर पर जाकर देख आया हूं। इतने बड़े आदमी के घर के लड़के से तुम्हारी लड़की का रिश्ता होगा, यह तो तुम्हारे लिए सौभाग्य की बात है।"

योगमाया अब वहां खड़ी नहीं रही। रसोईघर की ओर जाती हुई बोली, "*मेरा सौभाग्य ! सौभाग्य रहता तो मेरी तकदीर में इस तरह आग लगती ?*"

"क्या बोली ? क्या बोली, दीदी ? क्या बोली तुम ?"

यह कहते हुए रानी बिस्तर छोड़कर चली आई। उसके बाद रसोईघर के ओसारे पर आकर बोली, "तुम जलती क्यों हो दीदी ? तुम इतना जलती क्यों हो ? बार-बार जली हुई तकदीर का हवाला क्यों देती हो, यह क्या मैं समझती नहीं ? मुझसे अगर तुम्हें इतना रश्क है तो आज से तुम्हें गृहस्थी का कोई काम करना नहीं है। कौन तुम्हें इतना काम करने को कहता है ? भगवान ने मेरी देह तोड़ दी है इसीलिए तुम्हारी इतनी खुशामद होती है। बहरहाल, आज से ही मैं करछी-छलनी चलाऊंगी, जूता सिलाई से चण्डी पाठ तक करूंगी। लो उठो, बिस्तर पर जाकर

लेट जाओ। खाने के वक्त तुम्हें पुकार लूंगी। उस समय तुम दया कर, थोड़ा-सा तकलीफ उठाकर मेरा उद्धार कर देना—उठो-उठो बड़ी दी, उठो—"

योगमाया जो काम कर रही थी, करती रही।

रानी ने कहा, "क्यों, उठ क्यों नहीं रही हो? कह रही हूं, उठ जाओ—" यह कहकर योगमाया के हाथ से छलनी लेने की कोशिश की, लेकिन उसे अपने हाथ में थामे योगमाया उठकर खड़ी हो गई। बोली, "बहन, तुम मुझे सुबह-सुबह बिना रुलाए छोड़ोगी नहीं? भगवान साक्षी हैं बहन, कि मैंने तुमसे कभी ईर्ष्या नहीं की है, नहीं की है। अगर की होगी तो मेरा सिर इस तरह फट जाए, फट जाए, फट जाए—"

यह कहकर बगल की दीवार पर ठक्ठक् अपना सिर पटकने लगी और तत्क्षण कपाल फटकर टप-टप कर खून गिरने लगा। हो सकता था और खून गिरता मगर इसके पहले ही तपेश गांगुली ने भाभी का हाथ पकड़कर उसे खींच लिया। बोले, "यह क्या कर रही हो भाभी? तुम क्या पागल हो गई हो?"

योगमाया उस समय वहां खड़ी होकर अपने एक हाथ से बिना किनारी की साड़ी के पल्लू से आंख ढंककर रो रही थी। तपेश गांगुली ने कहा, "उधर कमरे के अन्दर मुखर्जी भवन के मुनीमजी सारा कुछ सुन रहे हैं।"

रानी बोली, "सुनने दो, सुनकर क्या करेंगे? सुनने दो कि जिसकी लड़की से अपने घर के पोते का रिश्ता कायम करने जा रहे हैं, उसकी मां कितनी दबंग है; कितनी झगड़ालू। अपने कान से ही सुन लें तो इसमें हानि ही क्या है?"

तपेश गांगुली ने उसे रोकते हुए धीमी आवाज में कहा, "उफ्, इतना चिल्लाओ मत, सुन लेंगे। वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं।"

रानी कुछ कहने जा रही थी लेकिन इसके पहले ही मुहल्ले के स्कूल से बिजली और विशाखा चिल्लाती हुई घर के अन्दर आईं। इसी तरह वे हर रोज घर लौटने के दौरान आजादी की खुशियों के कारण चिल्लाती हुई वापस आती हैं।

मगर घर के तमाम लोगों को रसोईघर में एकसाथ इस हालत में देखकर ठिठककर खड़ी हो गईं। उनके मुंह की बात जैसे मुंह में ही रह गई।

विशाखा ने कहा, "यह क्या मां, तुम्हारे कपड़े में खून क्यों है?"

किसी ने उसकी बात का जवाब नहीं दिया। सभी उस समय जैसे गूंगे हो गए थे।

"यह क्या मां, तुम्हारा माथा फटकर खून क्यों टपक रहा है?"

योगमाया अब बरदाश्त नहीं कर सकी, एकाएक रुद्र मूर्त्ति धारण कर वह विशाखा को मारने को उतारू हो गई। एक ही क्षण में लड़की के बालों की लटें पकड़कर उसे खींचते हुए आंगन में फेंक दिया और चिल्ला उठी, "कलमुंही, तुझे मरने की जगह नहीं मिलती? मुझे दुःख-तकलीफ देने के लिए तू मेरे पेट से क्यों पैदा हुई? मर जा, मर जा तू—"

विशाखा इस अप्रत्याशित आघात और बेवजह की सजा से गला फाड़-फाड़कर रोने लगी। रानी ने जल्दी-जल्दी ओसारे से आंगन में उतर विशाखा को गोद में लेते हुए तपेश से कहा, "देख लिया न अपनी भाभी का कांड! यह तो यही हुआ कि दाई को मारकर बहू को सबक सिखाना। सोचा है, मैं कुछ भी नहीं समझती।

अजी, मैं भी समझती हूं, मैं भी समझती हूं। दुनिया में कोई बेवकूफ नहीं है बड़ी दी, कोई इतना बेवकूफ नहीं है।"

बातचीत के बीच ही एकाएक बाहर के कमरे में मल्लिकजी के गले की आवाज आई। मल्लिकजी ने कहा, "ओ गांगुलीजी, अब कितनी देर है? मैं बहुत देर से बैठा हुआ हूं। वहां मुझे ढेर सारे काम करने हैं—"

तरंग गांगुली ने कहा, "लो, मल्लिकजी पुकार रहे हैं।"

उसके बाद मल्लिकजी को सम्बोधित करते हुए चिल्लाकर कहा, "अभी आया, अब देर नहीं है।"

योगमाया की ओर मुखातिब होकर तरंग गांगुली ने कहा, "भाभी, तुम तैयार हो जाओ। विशाखा को एक साफ फ्रॉक पहना दो। बड़े आदमी का घर है, बहुत बड़ा भाग्य होने पर ही ऐसे घर में रिश्ता होता है—जाओ, अब देर मत करो—"

यह कहकर तुरन्त मल्लिकजी के कमरे में चले गए।

योगमाया तब भी ज्यों-की-त्यों खड़ी थी। रानी ने विशाखा को कमरे में से जाकर एक अच्छा-सा फ्रॉक पहना दिया, बालों में कंघी कर लाल रंग का एक रिबन सिर के बालों पर फूल बनाकर बांध दिया।

बिजली ने कहा, "उसी को सजा-संवार रही हो, और मुझे नहीं सजाओगी?"

रानी ने कहा, "दूंगी-दूंगी, तुम्हें भी सजा दूंगी। विशाखा अभी तुरन्त जाने-वाली है, इसीलिए पहले उसे सजा रही हूं।"

बिजली की समझ में यह बात नहीं आई। पूछा, "वह कहां जा रही है?"

"वह श्याम बाजार जा रही है।"

"श्याम बाजार—"

यह कहकर वह वहां खड़ी नहीं रही। कमरे से निकलकर देखा, बड़ी दी अब भी ज्यों-की-त्यों खड़ी है।

बोली, "क्या हुआ बड़ी दी? तुम अब भी तैयार नहीं हुई? जल्द-से-जल्द तैयार हो जाओ—"

योगमाया ने इतनी देर के बाद कहा, "मैं नहीं जाऊंगी।"

"नहीं जाओगी! क्यों नहीं जाओगी?"

"मेरी मर्जी—"

रानी ने कहा, "समझी, तुम मुझे अपमानित करना चाहती हो। ठीक है, अगर यही करना चाहती हो तो मैं यह बता देना चाहती हूं कि मुझ पर गुस्सा कर वहां नहीं जाओगी तो आज मैं इस घर का पानी तक नहीं पिऊंगी—मैं भी इस घर में तुम्हारी आंखों के सामने निराहार रहकर मर जाऊंगी। देखना है, तुम किस तरह मुझे अपमानित करना चाहती हो।"

जो योगमाया अब तक पत्थर की नाई अचल खड़ी थी, इस बात से वह जैसे सचल हो उठी। बोली, "बहन, मैं चली जाऊंगी तो घर का काम कौन करेगा? तुम लोग क्या खाओगी?"

रानी बोली, "तुम मर जाओगी तो सोचती हो कि किसी को भी खाना नसीब नहीं होगा? तुम मर जाओगी तो आसमान में सूर्य-चन्द्रमा नहीं उगेंगे? अगर उस

वक्त भी उगेंगे तो फिर तुम्हारे मर जाने के वाद भी यह घर-संसार चालू हालत में रहेगा, यह जान लो।"

इसके उत्तर में योगमाया कुछ नहीं वोली। खामोश रही। रानी ने कहा, "जाओ, अव वात को तूल मत दो। वे भलेमानस वैठे हुए हैं। तुम एक साफ कपड़ा पहन लो। इस मैले फटे-चिट्टे कपड़े को पहने वहां जाकर अपने देवर को वेइज़्ज़त मत करो।" यह कहकर देवरानी वहां से चली गई।

संदीप तव नहीं जानता था कि घर-संसार किसे कहते हैं—चाहे वह वड़े आदमी का घर-संसार हो या भिखमंगे की। विदूपक सजने को ही जो लोग जीवन की सार वस्तु समझते हैं, वे ही घर-संसार संवारते हैं। वेड़ापोता में भी संदीप कितने ही घर संसार देख चुका है। चटर्जी भवन के अन्दर भी संदीप कितनी ही वार जा चुका है। चटर्जी भवन में सास-वहू में छोटी-मोटी वातों पर कितनी ही वार मनमुटाव हो चुका है। मां को भी चटर्जी भवन की मालकिन से क्या कोई कम झिड़कियां सुननी पड़ी हैं? मां के हर काम में चटर्जी भवन की मालकिन खोट निकालती ही रहती थी।

चटर्जी भवन की मालकिन कहतीं, "अरी, तुम इस तरह काम करती हो।"

चटर्जी भवन के रसोईघर में वैठी संदीप की मां खाना पकाते हुए कहती, "मैंने क्या किया माताजी?"

"क्या नहीं किया है, पहले मुझसे यह पूछो—मछली के छिलके के हाथ से दूध की कड़ाही क्यों छू दी? तुम जात-धरम नहीं रहने दोगी—तुम्हारे कारण तो मैं भारी परेशानी में पड़ गई हूं।"

कव मां ने मछली के छिलके के हाथ से दूध की कड़ाही छुई है या कव हाथ से मछली के छिलके छुए हैं, मां को याद नहीं रहता। लेकिन उस वक्त किया ही क्या जा सकता था!

मालकिन कहतीं, "ठीक है, वह दूध अव नाली में ढाल दो वेटी। पहले मेरा जात-धरम वचे तव तुमसे वातें करूंगी।"

सचमुच ही आखिर में पांच सेर दूध नाली में फेंक दिया गया था। मां को तव जरा ममता भी हुई थी। तभी मां को संदीप की याद आ जाती। लड़के को मां थोड़ा-सा दूध भी कभी पीने को नहीं दे पाती, उस दूध को नाली नें फेंकने से मां को कष्ट नहीं होगा भला!

इस तरह की वारदात एक ही दिन होती हो, ऐसी वात नहीं। प्रायः हर रोज़ होती और हर रोज लड़के के चेहरे की ओर देखकर मां सारा दुख-कष्ट मुंह वन्द कर वरदाश्त कर लेती।

वीच-वीच में इससे विपरीत घटनाएं भी घटित होतीं। चटर्जी गृहिणी की ज़वान जितनी तेज़ थी, उतनी ही दया-ममता भी उसके हृदय से वीच-वीच में छलक पड़ती।

"तुम किस तरह की औरत हो वेटी? कल घर में इतनी खीर पकाई गई, उस खीर को खाकर कुत्ते-विल्ली तक ख़त्म नहीं कर सके, फेंककर छींट दिया, और तुम अपने लड़के के लिए ज़रा-सी भी नहीं ले जा सकीं? ऐसी मां तो मैंने दुनिया में

नहीं देखी है। कोई दम या पाप नहीं, एक ही लड़का है, उसकी भी इतनी अवहेलना ?"

मन, मा एक तरह से गूंगी ही थी। चाहे निंदा-प्रशंसा-अभियोग ही क्यों न हो, किसी से भी विचलित होने से मां को भाग्य-देवता की ओर से मनाही थी। मां के भाग्य-देवता ने मानो मां को शुरू में ही सतर्क कर दिया था कि सिर झुकाकर न्याय-अन्याय, आनंद-विषाद को स्वीकारते हुए सामने की ओर अग्रसर होने का नाम ही जीवन है। यदि जीत हासिल हो तो उससे आनंद से सराबोर नहीं होना चाहिए और पराजय हासिल होने पर भी स्वयं को अपमानित महसूस नहीं करना चाहिए। दुख-सुख, आनंद-विषाद में जो अविचल रह सके उसे ही स्थितप्रज्ञ कहा जाता है। संदीप की मा भी उसी तरह की एक धीर बुद्धि स्त्री थी। आज जो संदीप यहां इस जीवन-स्तर पर पहुंचा है, इसकी शिक्षा उसे अपनी मा से ही मिली है।

लेकिन उस समय संदीप को मन ही मन बहुत तकलीफ का अहसास होता। कहता, "मा, तुम्हें ये लोग उस तरह झिड़कियां देते हैं और तुम उन लोगों की किसी बात का जवाब क्यों नहीं देती ? तुम्हें बहुत डर लगता है क्या ?"

मा कहती, "तूने कैसे सुन लिया ?"

संदीप कहता, "मैं उस समय उन लोगों के घर के अन्दर लाइब्रेरी में बैठकर किताब पढ़ रहा था। उन लोगों के घर की बुढ़ी तुमसे क्या कह रही थी, मैं सब सुन रहा था।"

"सुना है तो अच्छा ही किया है।"

"तुम्हें कोई कुछ कहता है तो मुझे बुरा लगता है, यह तुम क्यों नहीं समझती ?" संदीप कहता।

मां कहती, "तू इतना गुस्सा क्यों जाता है ? तुझे गुस्साना नहीं चाहिए।"

"वह, तुम्हें खरी-खोटी सुनाएगी तो मुझे गुस्सा नहीं आएगा ? तुम तो मेरी मा हो।"

मा कहती, "कहने दो उन्हें, उससे मेरे बदन में कहीं फफोले नहीं पड़े हैं।"

संदीप कहता, "तुम क्योंकि कुछ नहीं कहती, इसीलिए वे लोग तुम्हें झिड़कियां सुनाते हैं। मैं रहता तो दिखा देता—"

उस समय मा बेटे को सांत्वना देती, "तू जब पढ़-लिखकर बड़ा होगा, ढेर सारा पैसा कमाकर मेरे हाथ में देगा, तो उन लोगों को सारी बातों का जवाब देना हो जाएगा। मैं तो हर रोज भगवान से यही कहती हूं। कहती हूं : ईश्वर, तुम मेरी विनती स्वीकारो ! संदीप के सिवा मेरा कोई नहीं है। वह बड़ा होकर मेरे सभी अपमानों और दुखों का बोझ दूर कर दे, प्रभु ! सभी उसे देखकर कह सकें कि– उसकी मा ने दूसरे के घर में रसोई पकाकर उसे पाला-पोसा है। और सिर्फ पाला-पोसा ही नहीं है, ऐसा आदमी बनाया है जो बेड़ाडोंगा के तमाम लोगों के मुख उज्ज्वल कर रहा है।"

अब सोचने पर संदीप को हंसने का मन करता है। मा तो कुछ भी नहीं जानती थी। और जानती ही कैसे ? जीवन-भर मा गृहस्थी के लिए खटती रही और संदीप के पिता के मर जाने पर दूसरे के घर में काम कर जीवन बिताया। जानने का कोई मौका ही नहीं मिला है मा को। यही वजह है कि मा नहीं जानती

थी कि रुपया-पैसा होने से ही कोई इंसान नहीं हो जाता। मां यह भी नहीं जानती थी कि रुपये-पैसे से मनुष्यता का कोई सरोकार नहीं है। क्योंकि दुनिया में कितने ही ऐसे महापुरुष हो गए हैं जिनके पास एक भी पैसा नहीं था। इसके अलावा सिर्फ मां को दोष देने से लाभ ही क्या है? दुनिया के तमाम लोगों की एक ही धारणा है। आज तक संदीप जितने लोगों से मिल चुका है, उनकी धारणा यही है कि रुपया-पैसा ही सब कुछ है। तुम्हारे पास अगर पैसा है तो मैं तुम्हारा सम्मान करूंगा। मुझे तुम्हें कोई कर्ज नहीं देना है, तुम्हें सम्मानित कर सकूं, सिर्फ इसका एक मौका दो मुझे। क्योंकि तुम पैसेवाले हो। लेकिन संदीप की मां?

मां वाकई नहीं जानती थी कि रुपया न रहने की यातना से रुपया रहने की यातना कहीं तीव्रतर और असह्य है। इस साधारण सच्चाई को जानने के लिए संदीप बेड़ापोता से कलकत्ता आकर बिडन स्ट्रीट के इस मकान में टिका था। और उसके संपूर्ण जीवन को इस मकान के लोगों के सुख-दुख के साथ एकाकार हो जाना पड़ा था। लेकिन उससे कौन-सा लाभ हुआ था?

हां, सिर्फ एक ही सांत्वना है कि लाभ-हानि के हिसाब-किताब के कारण जीवन-देवता को कोई परेशानी नहीं उठानी पड़ रही है। उसकी इच्छा चूंकि हिसाब-किताब के परे है अत: आड़ में खड़े होकर प्रणाम करना ही मनुष्य का एकमात्र कर्त्तव्य है।

यही कारण है कि संदीप जीवन-भर उस अदृश्य जीवन-देवता के समस्त आदेशों को मुंह बन्द कर सहता आ रहा है। और चूंकि सहता आ रहा है इसीलिए आज वह अतीत की वादियों की सैर कर पा रहा है। सच, वह क्या था, और अब क्या हो गया! दरअसल जिन्दगी में कुछ होना ही होगा, यह बेमानी है। वह महामानव के जुलूस का एक दरिद्र साझीदार हो सका है, यही क्या कुछ कम है?

बेड़ापोता में देर कर घर लौटने पर मां बिगड़कर कहती, "अब तक तू कहां था रे? मैं कब से भात परोसे बैठी हूं—तुझे क्या तनिक भी अक्ल नहीं? कहां गया था?"

दरअसल वह उस समय चटर्जी बाबुओं के घर की लाइब्रेरी में किताब पढ़ने में व्यस्त रहता।

चटर्जी बाबुओं के घर में इतनी किताबें हैं, इसकी जानकारी उसे कैसे हुई? अक्सर वह मां की खोज में उस घर के अन्दर जाता था। मां एकबारगी अंत:पुर के आखिरी छोर पर रसोईघर में रहती। वहां धूप-रोशनी और हवा नहीं पहुंचती। सदर दरवाजे से अन्त:पुर के रसोईघर की तरफ जाने के लिए आउट हाउस की बैठक, लाइब्रेरी, तोशाखाना पार कर बहुतेरे लोगों की निगाह से बचकर जाना पड़ता।

एक दिन वह उसी तरह सदर दरवाजे से घुसकर बैठक के सामने से जा रहा था कि देखा, बगल के कमरे की दीवार की आलमारी में कतारबद्ध किताबें सजी हुई हैं। उन पर चमड़े की जिल्द है और सुनहरे अक्षरों में पुस्तकों के नाम लिखे हुए हैं।

संदीप अब अपना लोभ संभाल नहीं सका। वह रफ्ता-रफ्ता कमरे के अन्दर घुस गया। एक किताब लेकर उसने देखा—पुस्तक पर सुनहरे अक्षरों में लिखा

है—श्री भैरवचन्द्र चट्टोपाध्याय—बेड़ापोता। पुस्तक का नाम : 'साधक कवि रामप्रसाद', लेखक : श्री योगेन्द्रनाथ गुप्त।

यह रामप्रसाद कौन है ? कौन है यह योगेन्द्रनाथ गुप्त ?

पुस्तक के पृष्ठों को उलटते ही देखा, अन्दर बहुत सारी कविताएं लिखी हुई हैं। उसे लगा कि साधक कवि ने मां के बारे में ही लिखा है—

भला न मेरा किसी काल में
भला अगर होता मेरा तो
मन क्यों चलता बुरी राह पर ?

उसके बाद और एक जगह लिखा हुआ है :

मन, तू सोच रहा क्यों इतना
मातृहीन शिशु सोचे जितना।
अरे, काल से बड़ा काल जो महाकाल है
वह भी मां के शुचि चरणों पर झुककर खड़ा विनीत

ये शब्द सदीप के मन में अमिट छाप छोड़ गए। इतने युग पहले साधक कवि रामप्रसाद को उसके मन की बातों की जानकारी कैसे हो गई थी ? सदीप खुद भी तब सोच रहा था, उसने गरीब के घर में जन्म लिया है, आनेवाले दिनों में उसकी स्थिति क्या होगी ? चटर्जी बाबुओं के घर में पैदा हुआ होता तो कुछ और ही बात होती। लेकिन वह गरीब घर में पैदा हुआ है। और-और लड़कों के बाप-चाचा-मामा कितने ही अपने आदमी हैं। लेकिन उसका कोई नहीं है, सिवाय मां के। और मां भी दूसरे के घर में नौकरानी का काम कर पेट भरती है। ऐसे लड़के का भविष्य क्या हो सकता है ? पुस्तक पढ़कर उसे थोड़ी-बहुत शान्ति का अहसास हुआ। उसे भी कहने की इच्छा हुई - 'मन, तू सोच रहा क्यों इतना ? मातृहीन शिशु सोचे जितना। अरे, काल से बड़ा काल जो महाकाल है / वह भी मां के शुचि चरणों पर झुककर खड़ा विनीत।'

पढ़ते-पढ़ते सदीप उस दिन जैसे किसी और ही दुनिया में चला गया था। उस समय वह समयातीत की स्थिति में पहुंच गया था। समय क्या कभी स्थिर खड़ा रहता है ? यह सूर्य, ये ग्रह-चन्द्र-सितारे, यह विश्व-ब्रह्माण्ड क्या एक पल के लिए भी रुके रहते हैं ? ऐसा क्या कभी होता है कि रात के बाद भोर न हो, दिन का वक्त हो और सूर्य उगे ही नहीं ? ऐसा होना कभी सम्भव है तो सदीप के जीवन में भी उस दिन वैसा ही हुआ था। यही पहला अवसर था। कब शाम हुई, कब रात हुई, कब रोशनी जली, कुछ भी ख्याल नहीं था।

"कौन ? यहां कौन है ?"

सपने की दुनिया से जैसे उसे किसी ने उठाकर धरती की जमीन पर फेंक दिया। तब उसे होश आया कि वह चटर्जी भवन की लाइब्रेरी में बैठा हुआ है।

सदीप ने आंख उठाकर देखा—काशीबाबू हैं। काशीनाथ चट्टोपाध्याय दरवाजे के सामने खड़े हैं।

"अरे दाखू, इस कमरे में कौन बैठा हुआ है ? तुम लोगों की नजर कहीं किसी तरफ नहीं रहती, जो-सो कमरे के अन्दर घुसकर बैठ जाता है। तुम लोगों की नजर नहीं पड़ती ? अरे दाखू, तुम लोग कहां हो ?"

काशी बाबू का नौकर आवाज सुनकर कहीं से दौड़ा-दौड़ा आया। उसके बाद संदीप को देखकर कहा, "छोटे बाबू, यह हम लोगों की ब्राह्मण दीदी का लड़का संदीप है।"

संदीप डर से कांपते हुए उठकर खड़ा हो गया।

"तुम हम लोगों की ब्राह्मण दीदी के लड़के हो?"

"जी हां!" संदीप ने कहा।

दासू ने कहा, "वह अपनी मां को खोजने आया है।"

"तुम अपनी मां को खोजने आए हो?"

संदीप ने कहा, "जी हां!"

"तुम्हारा नाम क्या है?"

संदीप ने कहा, "संदीप कुमार लाहिड़ी।"

"तुम्हारे पिताजी का नाम?"

"ईश्वर हरिपद लाहिड़ी।"

"तुम लोग कितने भाई-बहन हो?"

संदीप ने कहा, "मेरे भाई-बहन नहीं हैं।"

"तुम स्कूल में पढ़ते हो?"

"हां।"

"किस क्लास में?"

"क्लास नाइन में।"

काशीनाथ बाबू खोद-खोदकर और भी बहुत सारी बातें पूछने लगे।

आखिर में पूछा, "तुम कौन-सी किताब पढ़ रहे थे?"

संदीप ने हाथ की किताब काशीनाथ बाबू की ओर बढ़ा दी। काशीनाथ बाबू ने देखा। बोले, "तुम यह किताब पढ़कर समझ रहे थे?"

संदीप ने कहा, "हां।"

काशीनाथ बाबू ने पूछा, "तुम और किताबें पढ़ना चाहते हो?"

संदीप ने कहा, "जी हां।"

काशीनाथ बाबू ने कहा, "ठीक है, अब तुम्हें जब भी पढ़ने की इच्छा हो तो दासू से कहना। दासू दरवाजा खोल देगा, उसके बाद तुम्हें जब तक मर्जी हो, पढ़ना। कोई तुमसे कुछ नहीं कहेगा, जाओ, अब तुम अपनी मां के पास चले जाओ—तुम्हारी मां रसोईघर में है।"

दासू ने कहा, "छोटे बाबू, ब्राह्मण दीदी नहीं हैं, वे घर चली गई हैं।"

मां घर चली गई है! यह सुनकर संदीप का मन चंचल हो उठा। उसके मुंह से और कोई शब्द नहीं निकला। वह दौड़ता हुआ घर की ओर जा रहा था, किन्तु काशीनाथ बाबू की बात पर फिर खड़ा हो गया।

"अरे सुनो, और एक बात—"

"क्या?" संदीप ने कहा।

काशीनाथ बाबू ने बुलाकर कहा, "बड़े होकर तुम क्या बनना चाहते हो?"

यह सवाल सुन संदीप निरुत्तर हो गया। वाकई उसने कभी यह नहीं सोचा है कि बड़ा होकर क्या बनेगा। कुछ बनने के लिए वह मन-ही-मन प्रस्तुत

भी नहीं है। इस बात ने तब उसके जेहन में तूफान पैदा कर दिया था। यह एक अजीब ही तरह का तूफान है। साधक रामप्रसाद के मस्तिष्क में भी उसी तरह का तूफान कई बार पैदा हुआ था। रामप्रसाद के दिमाग में भी बहुत सारे प्रश्नों के तूफान पैदा होते। तूफान आते ही रामप्रसाद खाते के पन्ने पर लिख डालते :

मा, मेरा भाग्य ही दोषी
ऐहिक सुख में मस्त रहा मैं
नहीं जा सका वाराणसी
करना मा अन्नपूर्णा के दर्शन
मेरे भाग्य में क्यों एकादशी—

काशीनाथ बाबू ने जब देखा, यह छोटा लड़का उनकी बात का कोई जवाब न दे पा रहा है तो उन्होंने अधिक दबाव नहीं डाला। सिर्फ इतना ही कहा, "अभी से तय कर लो कि बड़े होकर क्या बनोगे। एक बार तय कर लो, उसके बाद से उस विषय से संबंधित पुस्तकें पढ़ना, समझे ?"

किसे बड़ा होना या किसे छोटा होना कहते हैं, सदीप तब यह नहीं जानता था। यही वजह है कि उस दिन वह काशीनाथ बाबू की बातों का कोई उत्तर नहीं दे सका था। केवल भावशून्य आंखों से काशीनाथ बाबू की ओर ताकता रहा था।

बालक के हतप्रभ चेहरे को देखकर काशीनाथ बाबू के मन में संभवतः तनिक ममता जग गई थी, इसीलिए बोले, "बहरहाल, इन सब बातों पर तुम अभी माथा-पच्ची मत करो। अभी तुम सिर्फ पढ़ते रहो, किताबें पढ़ते रहो —"

यह सब कहकर काशीनाथ बाबू शायद चले जा रहे थे, लेकिन सदीप की बात पर फिर खड़े हो गए। सदीप ने पूछा, "अच्छा, ये भैरवचंद्र चट्टोपाध्याय कौन हैं जिनका नाम किताब की जिल्द पर लिखा हुआ है ?"

"भैरवचंद्र चट्टोपाध्याय ?"

"हां।" सदीप ने कहा।

काशीनाथ बाबू ने कहा, "भैरवचंद्र चट्टोपाध्याय मेरे दादाजी के पिता थे। वे ही इन पुस्तकों को पढ़ते थे, उन्होंने ही ये पुस्तकें खरीदी थीं। यह जो अभी तुम लोगों का घर देख रहे हो, उसकी शुरुआत उसी समय हुई थी। उनके पहले यह सब कुछ भी नहीं था। वे बचपन में बहुत गरीब थे। अभी तुम लोग जितने गरीब हो, मेरे दादाजी के पिता भी उतने ही गरीब थे।"

"उसके बाद ? उसके बाद कैसे धनी-मानी हुए ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा, "मन के जोर से।"

"मन के जोर का मायने ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा, "दरअसल सब कुछ मन ही है। मन के जोर से आदमी सब कुछ हो सकता है। तुम यदि सोचो कि तुम्हें बहुत बड़ा वकील बनना है तो मन के जोर से बहुत बड़े वकील बन जाओगे। या तुम सोचो कि तुम्हें बहुत बड़ा डॉक्टर बनना है तो तुम मन के जोर से बहुत बड़े डॉक्टर बन जाओगे।"

सदीप ने पूछा, "भैरवचंद्र चट्टोपाध्यायजी कैसे बड़े आदमी हुए थे ? आपने तो बताया कि वे बहुत गरीब थे।"

काशीनाथ बाबू के पास तब शायद ज्यादा वक्त नहीं था। बोले, "वह बहुत

लंबी दास्तान है, कहने में बहुत वक्त लगेगा। तुम किसी दूसरे दिन मेरे पास आना, तब मैं तुम्हें सारा कुछ बताऊंगा।"

यह कहकर वे अब वहां खड़े नहीं रहे। अन्दर की ओर चले गए।

संदीप उसके बाद वहां बहुत देर तक खड़ा रहा। दासू ने आकर जब लाइब्रेरी के कमरे में ताला बन्द कर दिया तो उसे होश आया। तब भी उसके मन में साधक कवि रामप्रसाद की पंक्तियां गूंज रही थीं :

मां, मेरा भाग्य ही दोषी
ऐहिक सुख में मत्त रहा मैं
नहीं जा सका वाराणसी
वरना मां अन्नपूर्णा के रहते
मेरे भाग्य में क्यों एकादशी

मल्लिकजी ने पूछा, "क्या हुआ संदीप, तुम सो गए क्या ?"

संदीप बोला, "नहीं, मैं सोया नहीं हूं चाचाजी, सोच रहा हूं—"

"क्या सोच रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "बेड़ापोता की याद आ रही है।"

मल्लिकजी बोले, "मां के लिए मन उदास हो गया है ? इतना मत सोचा करो, सोचोगे तो कुछ कर नहीं पाओगे। दिन-भर तुम परेशान रहे हो, अब सो जाओ।"

संदीप ने पूछा, "इसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ चाचाजी ?"

"किस चीज के बाद ?"

"यही जो आपने बताया कि मन्नसातल्ला लेन से आप विशाखा और उसकी मां को बिडन स्ट्रीट के मकान में लाने गए थे। वह राजुबाला देवी लड़की को साथ लेकर आई थीं ?"

मल्लिकजी ने कहा, "विशाखा की मां का नाम राजुबाला देवी नहीं है। उसकी दादी मां ने यह नाम रखा था, लेकिन उसके बाप ने नाम रखा था योगमाया।"

"आपके कत्थई खाते में तो राजुबाला ही लिखा हुआ है !"

मल्लिकजी ने कहा था, "मेरे कत्थई खाते में राजुबाला नाम ही है। कत्थई खाते को खोलने पर देखोगे कि उसमें राजुबाला नाम ही लिखा हुआ है, उस नाम को बदला नहीं गया।"

संदीप भी जब कत्थई खाते में हिसाब लिखने का काम करता तो वह भी राजुबाला के नाम ही हमेशा एक सौ रुपया माहवार खर्च के मद में लिखता। अंततः वह एक सौ रुपये की राशि बढ़ते-बढ़ते पांच-छह सौ तक आ गई थी। और सिर्फ पांच-छह सौ ही नहीं। किसी-किसी महीने एक हजार-दो हजार तक की राशि हो जाती। उस वक्त की बात ही दीगर थी। उस समय योगमाया देवी भी कितने सुख से रह रही थी ! उसके और उसकी लड़की के बदन में लगाने के लिए कीमती साबुन और लड़की के बालों में लगाने के लिए जवा कुसुम तेल मंगाए जाते। खाने के लिए देहरादून का चावल। और भी कितने ही खाने-पीने के कीमती सामान। वह सब खाद्य पदार्थ संदीप ने तब अपने जीवन में नहीं खाया था। लेकिन दादी मां

के हुक्म पर संदीप को सारा कुछ खरीद देना पड़ता था।

दादी मां कहतीं, "देखो, उन लोगों को कोई कष्ट नहीं होना चाहिए, कोई असुविधा नही होनी चाहिए।"

इसके बाद दादी मां कहतीं, "देखो, रुपये के लिए चिन्ता मत करना, जितना भी रुपया लगे, मैं दूंगी—"

याद है, एक दिन मौसीजी ने कहा था, "देखो बेटा, इतने आराम से हमें रखा है तुम्हारी दादी मा ने, लेकिन अपने जमाई को मैं एक बार भी देख नहीं सकी। किसी दिन मेरे जमाई को ला नही सकते?"

संदीप सचमुच ही एक दिन छोटे बाबू को अपने साथ मौसीजी के पास ले आया था। वह एक अजीब वाकया था।

मगर यह सब बात अभी रहे, क्योंकि यह बहुत बाद की बात है। मल्लिकजी जिस दिन राजुबाला देवी और विशाखा को लेकर विडन स्ट्रीट के मकान में आए उस समय दिन के ग्यारह बज रहे थे। गाड़ी जैसे ही गेट से मकान के अन्दर आई, मल्लिकजी नीचे उतरे। उसके बाद पीछे का दरवाजा खोलकर बोले, "आइए माताजी, आप लोग उतर जाइए।

विशाखा मानो सपना देख रही हो। सामने की तरफ के आसमान की ओर आंख उठाकर देखने पर लगता है यह बहुत ही पुराना मकान है। इतना बड़ा मकान उसने खिदिरपुर में नही देखा है। आस-पास कितने ही लोग घूम-फिर रहे हैं। अचानक सिर के ऊपर शहनाई बज उठी।

विशाखा ने मा से पूछा, "मा, यहा शहनाई क्यो बज रही है? किसी की शादी हो रही है क्या?"

मां ने कहा, "तू चुप रह—बातें मत कर—"

मा ने विशाखा को एक साफ-सुथरा फ्रॉक पहना दिया है।

मल्लिकजी ने कहा, "इधर आओ बिटिया, इधर—"

मल्लिकजी उन्हें किस रास्ते से ले गए, योगमाया समझ नही सकी। सीढ़ियां चढ़ के दो-मंजिले पर गए और दो-मंजिले की सीढ़िया चढ़ एकबारगी तीन-मंजिले पर पहुंच गए। तीन-मंजिले पर कितने मर्द, कितनी औरतें हैं!

एक जगह पहुंचने के बाद मल्लिकजी बोले, "दादी मा, उन्हें ले आया हू।"

अन्दर से आवाज आई, "उन्हें भीतर ले आइए।"

योगमाया अन्दर गई। उनके पीछे-पीछे विशाखा। विशाखा जो कुछ भी देखती है, उसे आश्चर्य होता है। कमरे के अन्दर एक व्यक्ति पर सभी की नजरें टंगी हैं। एक गेरुआधारी व्यक्ति है, जिसका सिर मुड़ा हुआ है। फर्श पर गलीचा बिछा हुआ है। चारों तरफ धूप की सुगन्ध।

एक बूढ़ी जैसी औरत ने योगमाया को अपने पास बुलाया, "बेटी, तुम क्या विशाखा की मां हो?"

योगमाया बूढ़ी के चरणों का स्पर्श करने जा रही थी, लेकिन बूढ़ी बोली, "पहले गुरुदेव को प्रणाम करो बेटी, तभी मुझे प्रणाम करना हो जाएगा।"

योगमाया ने ऐसा ही किया। इस घर के गुरुदेव ने कुछ कहकर उसे आशीर्वाद दिया। विशाखा ने मां की ओर देखा तो पाया कि वह रो रही है।

दादी मां बोलीं, "तुम रो क्यों रही हो बिटिया ? मत रोओ।"

मां ने पल्लू से आंखें पोंछ लीं। विशाखा उस दिन समझ नहीं सकी थी कि उसकी मां इतना क्यों रो रही है।

दादी मां ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या राजुबाला है ?"

मां बोली, "मेरी दादीजी ने मेरा नाम राजुबाला रखा था और मेरे पिताजी ने योगमाया।"

"और तुम्हारी लड़की का नाम ?"

"उसके पिताजी ने अलका नाम रखा था। लेकिन मेरे देवरजी ने उसका नाम विशाखा रखा है। क्योंकि वह जिस दिन पैदा हुई थी, उस दिन वैशाख महीने की पूर्णिमा का अंत हो रहा था।"

दादी मां ने गुरुदेव को सारा कुछ विस्तार से बताया। गुरुदेव तब विशाखा की जन्मपत्री देख रहे थे और बीच-बीच में आंख उठाकर विशाखा की ओर भी देख लेते थे। वह बड़ी ही जटिल गणना थी। उस जन्मपत्री के भले-बुरे पर बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी वंश का भला-बुरा निर्भर करता है। इसके पहले कभी देवीपद मुखर्जी ने अपने दोनों लड़के के विवाह के पूर्व पात्र-पात्री की जन्मपत्री पर विचार करने की बात नहीं सोची थी। उसका जो बुरा नतीजा निकला, वे उसे हालांकि बगैर देखे विदा हो गए लेकिन उनकी पत्नी कनकलता देवी उसे देख रही हैं। बड़ा लड़का शक्तिपद और उसकी पत्नी एक नाबालिग लड़का छोड़कर दुनिया से चल बसे हैं। दूसरा लड़का और उसकी पत्नी अलबत्ता मरे नहीं हैं, लेकिन घर छोड़कर अलग हो गए हैं। वे लोग इस घर को छोड़, अपना अलग से मकान बनवाकर वहीं वास कर रहे हैं। बाकी बच गया है वही एकमात्र माता-पिता विहीन नाबालिग पोता सौम्य। सौम्य के भविष्य के बारे में ही कनकलता देवी हर वक्त चिन्तित रहती हैं ! सौम्य जिन्दा रहेगा या नहीं, सौम्य की पत्नी कैसी होगी—यही उनकी एकमात्र चिन्ता है। अब कन्या तो पसंद हो गई है, जात-कुल मिल गया है। लेकिन जन्मपत्री या पोटक विचार ?

गुरुदेव ने पूछा, "यह कन्या कहां रहती है ?"

दादी मां बोलीं, "खिदिरपुर मनसातल्ला लेन में। अपने चाचा के पास।"

"पिता ?"

"पिता जीवित नहीं है।"

"चाचा की हालत कैसी है ?"

दादी मां बोलीं, "चाचा बहुत ही गरीब हैं। विधवा मां अपनी इस लड़की के साथ उनके सिर का बोझ बन गई है।"

गुरुदेव बोले, "लेकिन कन्या के एकादश में चतुर्थ पति है और सप्तम पति बृहस्पति उच्च स्थान में अवस्थित है। अत: अर्थ और बंधुभाग्य अच्छा है। वही बृहस्पति लग्न के तृतीय स्थान वृश्चिक में बंधु क्षेत्र पर दृष्टिपात कर आत्मीय-कुटुम्बों से शुभ संपर्क स्थापित करेगा और मकर में सप्तम दृष्टिपात कर संतान-संतति की शुभ सूचना दे रहा है और मीन में अपने घर में दृष्टिपात कर स्वामी का भी शुभ करेगा—"

यह कहकर ज़रा रुक गए। उसके बाद जाने क्या सोचकर फिर बोले, "सप्तम

पति सप्तम को देख रहा है, यह बड़ा ही शुभ योग है—"

दादी मां ने कहा, "आपने तो बताया था कि मेरे पोते की मध्यवय में एक ग्रह है।"

गुरुदेव ने पूछा, "अभी तुम्हारे पोते की उम्र क्या है बेटी?"

"सौम्य की उम्र? वह तो अभी कुल मिलाकर सोलह वर्ष का हुआ है। अब भी स्कूल में पढ़ता है।"

गुरुदेव बोले, "फिर तो अभी बहुत देर है। यह उस समय देखा जाएगा। अभी से उसके बाद की बात सोचकर क्या होगा? हां, एक बात कहना चाहता हूं।"

"क्या बात गुरुदेव?"

लेकिन उसके बाद सदर्भ बदलकर मल्लिकजी की ओर देखकर बोले, "मुनीम-जी, आप इन दोनों को दो-मंजिले पर ले जाकर खिलाने-पिलाने का इन्तजाम करें।"

खाने की बात कान में जाते ही योगमाया तनिक विचलित हो उठी। हो सकता है, कुछ कहने जा रही थी, लेकिन उसके पहले ही दादी मा बोल पड़ी, "बेटी, तुम लोग मेरे सगे-सम्बन्धी जैसी हो। कोई एतराज मत करो, मेरे यहां जो कुछ आयोजन हुआ है, वह गुरुदेव का प्रसाद है। प्रसाद खाने में आपत्ति नही करनी चाहिए बेटी। इसके अलावा कुछ ही दिनों में तुम लोगों से हम लोगों का नजदीकी रिश्ता कायम होने जा रहा है।"

इसके बाद आपत्ति का कोई सवाल पैदा हो ही नहीं सकता।

मल्लिकजी दोनों को लेकर दो-मंजिले पर चले आए। दो-मंजिले का हिस्सा पूरे तौर पर खाली ही पड़ा रहता है। पहले तीन-मंजिले पर बड़े लड़के का कमरा था। उसके मरने के बाद सौम्य अब तीन-मंजिले के उस कमरे में रहता है।

दो-मंजिले पर मंझला लड़का रहता था। वह जब अपने मकान में चला गया तो उसके बाद से यहां कोई नही रहता। तो भी घर-दरवाजा, असबाब वगैरह साफ-सुथरा रखने के लिए कालीदासी वहां मौजूद रहती है। कालीदासी को ही दो-मंजिले की जिम्मेदारी सौंपी गई है। गुरुदेव के इस मकान में आने के बाद दूसरे-दूसरे तल्लों की तरह इस दो-मंजिले की भी सफेदी कराई गई है। और-और तल्लों की तरह दो-मंजिले की खिड़कियों और दरवाजों को भी रंगाया गया है।

कमरे के अन्दर प्रवेश करते ही योगमाया ने देखा, फर्श पर चादी की थालिया, कटोरे और गिलास सजे हुए हैं। कालीदासी सारी चीजों के साथ तैयार थी। योग-माया और विशाखा को देखकर बोली, "आइए माताजी, यहां हाथ धो लीजिए।"

कमरे से सलग्न पानी का इंतजाम है, साथ में तौलिया और साबुन है।

योगमाया और विशाखा यह सब जितना देखती हैं, उतना ही आश्चर्य होता है उन्हें। विशाखा के पिता की याद आते ही योगमाया की आंखें छलछला आई। वे अगर जीवित होते तो उन्हें आज कितनी सान्त्वना मिलती!

इतने प्रकार की खाने की सामग्री विशाखा ने अपनी जिन्दगी में नही देखी है। मा की बगल में बैठी विशाखा अब भी थाली की ओर देख रही है। मा भी चुपचाप थाली के सामने बैठी हुई है।

मल्लिकजी उस समय भी सामने खड़े थे। बोले, "अब शुरू कीजिए।"

विशाखा ने मां की ओर देखते हुए कहा, "यह पूरा खाना मेरे लिए है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां-हां बहूरानी, यह सब तुम्हारा है। शरमाना मत, -भर खा लो। ज़रूरत होने पर और दिया जाएगा, समझीं ? जल्द-से-जल्द खा , पूरियां ठंडी हो जाएंगी।"

विशाखा के सिर के ऊपर पंखा घूम रहा था। ज़रा-भी गर्मी महसूस नहीं हो ही। उन लोगों के मनसातल्ला लेन में रोशनी है परन्तु पंखे नहीं। एक पंखा है लेकिन वह चाचा के कमरे में है। विशाखा ने मां की ओर ताकते हुए कहा, "पंखे के तले बैठकर खाने में बड़ा मज़ा आता है ! आता है न मां ?"

योगमाया ने खाते हुए कहा, "खाने के वक्त उतनी बातें नहीं करनी चाहिए, चुपचाप खा लो।"

विशाखा को पूरी खाना बड़ा ही अच्छा लग रहा था। बहुत दिनों से उसने पूरी नहीं खाई है।

एकाएक बोल उठी, "मां, यह देखो, दाल में किसमिस है।"

योगमाया बोली, "रहने दो, इस तरह लोभी की नाईं बातें नहीं करनी चाहिए।"

मल्लिकजी के कान में यह बात पहुंची। बोले, "और थोड़ी-सी दाल लोगी बहूरानी ?"

विशाखा ने कहा, "दाल नहीं, सिर्फ किसमिस लूंगी।"

योगमाया बोली, "छिः, तुम मांग-मांगकर खा रही हो ? मांगकर खाने में शर्म नहीं लगती ? मैंने क्या तुमसे नहीं कहा था कि मांगकर नहीं खाना चाहिए ?"

मल्लिकजी ने तत्क्षण महाराज को दाल के किसमिस लाकर देने को कहा। महाराज करछी में किसमिस भरकर ले आया और विशाखा की थाली में डाल दिया।

विशाखा खाने लगी। इस तरह खाने लगी जैसे ज़माने से खाना नहीं खाया हो।

बगल से मां ने कान में फुसफुसाकर कहा, "असभ्य की तरह क्यों खा रही हो ? धीरे-धीरे खा नहीं सकतीं ?"

धीरे-धीरे कहने पर भी यह बात मल्लिकजी के कान में पहुंच गई। बोले, "उसे इतना डांट क्यों रही हो बेटी ? बहूरानी अभी बच्ची ही है, उसे जैसे मर्ज़ी हो खाने दो। यहां तो कोई बाहरी आदमी नहीं है—हम लोग सभी घर के ही आदमी हैं। और दो दिन के बाद तो वह हम लोगों के घर की बहू ही हो जाएगी—"

उसके बाद ज़रा चुप रहने के बाद फिर बोले, "और दो अदद पूरियां दूं बेटी ?"

इसके उत्तर में विशाखा ने कहा, "मछली नहीं है ?"

योगमाया को तीव्र लज्जा के भाव ने दबोच लिया। इस तरह की लड़की को लेकर किसी के घर में खाने के लिए जाना तो खतरे से खाली नहीं है।

योगमाया के कुछ कहने के पहले ही मल्लिकजी बोले, "नहीं बिटिया, यह गुरुदेव का प्रसाद है। उन्होंने खाकर प्रसाद बना दिया है, आज घर में सभी य

प्रसाद खाएंगे। आज से कुछ दिनों तक हम निरामिष भोजन ही करेंगे।"
उसके बाद थोड़ी देर के बाद फिर बोले, "अब दही लाने को कहूं—"
विशाखा बोली, "दही ? दही है ? मीठा दही ?"
मल्लिकजी ने हंसते हुए कहा, "हां, मीठा दही—"
विशाखा ने कहा, "मैं मीठा दही खाना बेहद पसन्द करती हूं—"
मल्लिकजी ने कहा, "ठीक है, मैं तुम्हें दो कटोरा मीठा दही दूंगा—जितना भी मीठा दही खा सकोगी, लाकर दूंगा।"
रसोइया दो कटोरा दही लाकर दे गया।
विशाखा कटोरे में हाथ डुबाकर दही खाने लगी।
उसके बाद संदेश आया। संदेश का आकार देखकर विशाखा को आश्चर्य हुआ। बोली, 'देखो मां, कितने बड़े-बड़े संदेश हैं! हम लोगों के खिदिरपुर के संदेश कितने छोटे होते हैं।"
योगमाया लड़की की हरकत देखकर शर्म से अधमरी होती जा रही थी।
विशाखा बोली, "दही में संदेश मिलाकर खाना मैं बेहद पसंद करती हूं।"
अब की बिना अनुमति लिए मल्लिकजी ने दो संदेश डाल दिए। बोले, "खाओ, जितना भी संदेश तुम खा सकती हो, खाओ—"
विशाखा बोली, "फिर और दही देना पड़ेगा।"
"दूंगा।"
यह कहकर मल्लिकजी ने और एक कटोरा दही लाकर देने को कहा।
विशाखा ने मां की ओर देखकर कहा, "तुम थोड़ा और दही लो न मां।"
"चुप रहो, बड़-बड़ मत करो…तुम्हारे कारण मैं तो परेशान हो गई—"
इसके बाद एक-एक कर राजभोग, गुलाबजामुन और मिहिदाना आए।
योगमाया बोली, "इतना क्यों दे रहे हैं?"
मल्लिकजी बोले, "खाओ बिटिया। इससे कोई खराबी नहीं होगी, यह गुरुदेव का प्रसाद है।"
विशाखा बोली, "मां भले ही न ले, पर मुझे दीजिए।"
योगमाया को अब बरदाश्त नहीं हुआ। बोली, "यह तेरी कैसी हरकत है! तुझे क्या जरा-भी शर्म नहीं लगती? तू मुझे बगैर बेइज्जत किए नहीं छोड़ेगी? तेरे पेट में क्या राक्षस समा गया है?"
मां की फटकार सुन विशाखा को जैसे होश आया। मुंह लटकाकर मल्लिकजी की ओर देखा।
मल्लिकजी ने कहा, "तुम कुछ और लोगी बहूरानी? शर्म मत करो। जो खाने की इच्छा हो, मुंह खोलकर कहो—मैं सब कुछ लाकर दूंगा।"
"मुझे थोड़ा-सा और मीठा दही…"
लेकिन बात खत्म होने के पहले ही योगमाया बाएं हाथ से लड़की का झोंटा पकड़ उसे फर्श पर पटकने जा रही थी कि तभी मल्लिकजी ने योगमाया का हाथ पकड़ लिया।
बोले, "छि: बिटिया, उसे बेवजह क्यों मार रही हो? बहूरानी जब तुम्हारी उम्र की हो जाएगी तो देखना, तुम्हारी ही तरह उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं

निकलेगा। इत्ती-सी लड़की को दुनियादारी की समझ ही कितनी हो सकती है?"

योगमाया बोली, "आप नहीं जानते इसीलिए कह रहे हैं। देवर के घर में किसी तरह मुंह सिए टिकी हुई हूं। घर में मुझे जो फजीहत सहनी पड़ती है. वह मैं ही जानती हूं या फिर भगवान जानते हैं। लेकिन घर से बाहर निकलने पर भी अगर मुझे शर्म से सिर झुकाना पड़े तो मैं कैसे ज़िन्दा रह सकती हूं, आप ही बताइए।"

तब विशाखा रोए जा रही थी। वह समझ नहीं सकी कि किस कारण उसे यह सजा दी गई। उसने कौन-सा अपराध किया है कि मां ने यह सजा दी।

उधर तीन-मंज़िले के कमरे में गुरुदेव तब भी जन्मपत्री का विवेचन करने में मग्न हैं। गुरुदेव ने भावी पात्री की जन्मपत्री को देखते हुए कहा, "कन्या पितृहंत्री है—"

दादी मां बोलीं, "अच्छी तरह जन्मपत्री देखिए बाबा। मैं इसी कन्या से अपने पोते सौम्य की शादी कराना चाहती हूं।"

गुरुदेव बोले, "फिर सौम्य की जन्मपत्री का विचार करके देखूं। अर्थात् पोटक-विचार···"

दादी मां ने थोड़ी देर बाद पूछा, "पोटक-विचार करने पर क्या देखा गुरुदेव?"

गुरुदेव ने पहले लग्नपति का अवस्थान देखा, उसके बाद अष्टम पति का अवस्थान और अष्टम भाव देखा। बड़ा ही कठिन विचार है। उसके बाद सप्तम भाव और सप्तम पति। जातक-जातिका का पंचम भाव भी देखना आवश्यक है। क्योंकि दम्पत्ति की संतान-संतति का भला-बुरा सब कुछ पंचम पति और पंचम भाव पर निर्भर करता है। और सिर्फ संतान-संतति देखने से ही काम नहीं चलेगा, माता-गृह-बन्धु-सुख का विचार करने के लिए जातक-जातिका के बलाबल को भी देखना चाहिए। उसके बाद द्वितीय पति एक ओर जैसा धनपति है वहीं दूसरी ओर निर्धन-पति भी है।

बोले, "एक दिन में विचार करना खत्म नहीं होगा बेटी, और दो-तीन दिन लगेंगे। बड़ी ही जटिल जन्मपत्री है।"

दादी मां ने पूछा, "किसकी जन्मपत्री जटिल है गुरुदेव?—पात्र का या पात्री का?"

गुरुदेव ने कहा, "विंशोत्तरी मतानुसार जातक-जातिका दोनों की जन्म-पत्रियों का ही राज-पोटक फलादेश है। लेकिन अष्टोत्तरी मतानुसार भी तो विचार करना है। अष्टोत्तरी मतानुसार जातक की मध्यवय में रिष्टि का लक्षण है—"

"इसका मतलब? मेरे पोते की जान जाने का भय है क्या?"

गुरुदेव बोले, "आज रहे, बाद में आराम करने के बाद विस्तार से सोचकर बताना होगा। और दो-तीन दिन का समय लगेगा।"

"सो समय लगे, परन्तु यह देखिएगा कि कहीं अगर कोई बाधक तत्व है तो

उसका प्रतिकार भी आपको करना होगा।"

अन्ततः दोनों जन्म-पत्रियों का विचार गुरुदेव ने समाप्त किया। उन्होंने यथारीति दक्षिणा के रूप में मोटी रकम ली। उसके बाद मल्लिकजी गुरुदेव को अपने साथ ले वाराणसी पहुंचा आए।

जाने के वक्त गुरुदेव बोले, "कुछ सोचना नहीं बेटी, मैं आश्रम जाकर तुम्हारे पोते के कल्याण के लिए होम-यज्ञ करूंगा—सब ठीक हो जाएगा।"

संदीप तब भी एकाग्र चित्त से बीते दिनों की बातें सुन रहा था। पूछा, "इसके बाद ?"

कहा जा सकता है कि विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन के बाबू लोग एक तरह से पुराने जमाने के आदमी थे। इस मुखर्जी भवन के सुख-समृद्धि से परिपूर्ण होने के कुछ दिन बाद से ही मल्लिकजी इस घर में हैं। उन्होंने देवीपद मुखर्जी का आरंभिक युग नहीं देखा था। जब इस मकान का निर्माण हुआ था, उस जमाने को भी नहीं देखा था। जब इस घर में सिंहवाहिनी की मूर्ति की स्थापना की गई थी उस समय भी वे इस घर में नहीं आए थे। बेड़ापोता में जिस साल भयंकर बाढ़ आई, खेत-खलिहान, घर, गांव, स्कूल वगैरह बाढ़ में डूब गए तो उस समय जिसको जहां मौका मिला, जान बचाने को भाग खड़ा हुआ। चटर्जी भवन के निवासी पैसे वाले आदमी हैं। बेड़ापोता के बाहर भी उनके घर-द्वार हैं। उन्होंने वहीं जाकर ज़िन्दगी और जायदाद की रक्षा की। लेकिन जिन लोगों के लिए कहीं भी सिर टिकाने की जगह नहीं है, वे कहां जाएं ? उनमें से कुछ असम के चाय-बागान में कुली-मजदूर का काम करने चले गए और कुछ लोग कलकत्ता की राह-बाट में भीख मांगने चले गए। वह एक ऐसा वक्त था कि कौन कहां गया, इसका हिसाब भी कोई नहीं रख सका। साथ ही कितने लोग मौत के मुंह में समा गए, इसका भी पता नहीं चला। उसी समय मल्लिकजी किसी तरह इस मकान में दाखिल हो गए। शुरू में तनख्वाह कम थी। लेकिन उन्होंने कोई आपत्ति नहीं की थी।

देवीपद मुखर्जी ने कहा, "कितना रुपया मिलने से आपका काम चल जाएगा ?"

उस दिन मल्लिकजी ने मुखर्जी साहब के चरणों का स्पर्श कर उन्हें प्रणाम किया था। तनख्वाह की बात तब उन्हें याद ही नहीं थी। उन्हें सिर्फ सिर टिकाने के लिए थोड़ी-सी जगह और दो वक्त के भोजन की आवश्यकता थी। इतना ही मिल जाए तो वे खुश हो जाएंगे, ऐसी थी उस समय उनकी हालत।

उन्होंने कहा था, "रहने और खाने का इंतजाम हो जाए तो मैं इसी से सन्तुष्ट हो जाऊंगा, और कुछ नहीं चाहिए मुझे—"

तब देवीपद मुखर्जी का सौभाग्य सूर्य ज़िन्दगी के दरमियानी आसमान में था। व्यवसाय, सुख्याति, अर्थबल, स्वास्थ्य इत्यादि हर दृष्टि से वे कलकत्ता के बंगाली समाज के बीच सबसे अगली पंक्ति में थे। उनकी कृपा-दृष्टि पाते ही तमाम लोग अपने को धन्य समझते थे। वैसे व्यक्ति के पास आश्रय पाना निहायत देवता की दया के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है ?

लिहाजा वे इसी घर में रह गए। शुरू में गृहिणी के छोटे-मोटे काम करते, जरूरत पड़ने पर बाजार जाते और रसोई के सरो-सामान की खरीददारी करते। वे बाजार से सरो-सामान लाने लगे तो बाजार-खर्च कम होने लगा। गृहिणी ने सोचा, यह लड़का ईमानदार है। लिहाजा उसी समय से गृहस्वामी और गृहिणी की मल्लिकजी के प्रति आस्था बढ़ने लगी। धीरे-धीरे उन्हें एक दिन इस मुखर्जी भवन के मुनीम का पद प्राप्त हो गया। और तभी से परिवार के आमद-खर्च की तमाम जिम्मेदारी उन्हें सौंप दी गई।

इसके बाद कितनी ही घटनाएं घट चुकी हैं इस परिवार के इतिहास में। वह सब कितनी ही विपत्तियों, दुख, शोक और दुर्भाग्य का इतिहास है। देवीपद का देहान्त हुआ, उसके बाद बड़े लड़के शक्तिपद का और उसके कुछ दिनों बाद उसकी पत्नी का। इसके बाद मंझला लड़का मुक्तिपद इस घर को छोड़ सपरिवार अपने नए बने मकान में चला गया। जिस घर-संसार का दादी मां ने अपने हर रक्त-कण से निर्माण किया था, उसी घर-संसार को उन्होंने जीवितावस्था में अपनी आंखों से उजड़ते देखा है। लेकिन वे खुद टूटी नहीं थीं। उनका कोई नहीं है, आज वे अकेली हैं। फिर भी उनके साथ एकमात्र सहायक ये मल्लिकजी हैं।

इसलिए जब भी बात छिड़ती, वे मल्लिकजी से कहतीं, "मुझे अब जिन्दा रहने की ख्वाहिश नहीं है मल्लिकजी। एक ही काम करने को बाकी रह गया है मेरे लिए, वह काम हो जाएगा तो मुझे छुट्टी मिल जाएगी।"

मल्लिकजी पूछते, "कौन-सा काम दादी मां ?"

"मेरे सौम्य की शादी। सौम्य का अच्छी तरह ब्याह हो जाए तो मुझे छुट्टी मिल जाएगी मुनीमजी। उसके बाद गुरुदेव का स्मरण कर हंसते हुए इस संसार से विदा हो जा सकती हूं—"

आश्चर्य ! दादी मां को तब कतई पता नहीं था कि सौम्य का विवाह ही उनके जीवन में चरम विपर्यय के रूप में उभरकर आएगा।

सौम्य की शादी के पहले उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी कि और कितनी मुसीबतें उनका इंतजार कर रही हैं। सचमुच दुनिया के विवाह के इतिहास में उस शादी के कारण जो दुर्घटना घटी वह शायद कभी किसी के ब्याह में कहीं नहीं घटित हुई है।

लेकिन वह बात अभी रहे।

इसके पहले गुरुदेव के विदा होने के दिन के घटनाक्रम पर प्रकाश डालना आवश्यक है। दादी मां ने यथारीति उस दिन भी गुरुदेव के चरणों को धोकर अपने बालों से पोंछ दिया। गुरुदेव उस दिन भी बदस्तूर विशाखा की जन्मपत्री लेकर बैठे हुए थे। जन्मपत्री देखते हुए कहा था, "एक बात कहना चाहता हूं बेटी—"

"क्या गुरुदेव ?"

"तुम्हें अपनी भावी पौत्रवधू का नाम बदलना होगा।"

"उसके बदले कौन-सा नाम रखूं। बताइए।"

गुरुदेव ने कहा, "स्वरवर्ण के प्रथम अक्षर अ से नामकरण करने से अच्छा रहेगा।"

दादी मां ने कहा, "फिर 'अ' अक्षर से आप ही कोई नाम चुन दें।"

गुरुदेव ने कहा, "तो फिर 'विशाखा' के बदले 'अलका' नाम रख दो बिटिया।"

सो यही नाम रखने का निर्णय लिया गया। उस समय से 'विशाखा' नाम बदलकर 'अलका' रखा गया।

याद है, उस दिन मल्लिकजी जब राजुबाला देवी और विशाखा को घर पहुचाने के ख्याल से दो-मंजिले पर गए तो देखा, विशाखा रो रही है।

मल्लिकजी ने पूछा, "विशाखा रो क्यों रही है बेटी? उसे क्या हुआ?"

योगमाया ने कहा, "मुहजली की यही हालत है। वह मुझे जब तब सता-सता कर मार नही डालेगी तब तक छोड़ेगी नही। जिन्दगी-भर मुझे सताती रही है और अब भी सता रही है।"

मल्लिकजी ने विशाखा की ओर देखते हुए पूछा, "क्या हुआ, बताओ तो बिटिया। मुझे बताओ कि तुम्हे क्या चाहिए?"

विशाखा तब भी रो रही थी। योगमाया ने कहा, "वह कह रही है कि शादी नही करेगी।"

मल्लिकजी ने कहा, "तुमसे शादी करने को कौन कह रहा है? अभी शादी नही होने जा रही है। तुम जब बड़ी हो जाओगी तो तुम्हारी शादी होगी। वह तो बहुत साल बाद होने जा रही है। अभी इसके बारे में क्यों सोच रही हो? चलो, तुम्हें घर पहुचा आए, गाड़ी खड़ी है।"

विशाखा ने रोते हुए कहा, "मैं मा को छोड़ कही नही जाऊंगी।"

योगमाया लड़की से कहने लगी, "मुहजली, मैं क्या तेरे साथ तेरी ससुराल जाऊंगी? तू क्या यही कहना चाहती है? किसी की मा किसी लड़की के साथ उसकी ससुराल जाती है?"

विशाखा बोली, "मैं हमेशा तुम्हारे पास रहूगी मा। तुम्हे छोड़कर मैं कही नही जाऊंगी।"

योगमाया को गुस्सा आ गया। बोली, "इतनी बड़ी हो गई और अब तक बचकाना नही गया तेरा! तेरा नखरा देखकर मेरे बदन में आग लग जाती है।"

मल्लिकजी ने अब बात बढ़ने नही दी। बोले, "चलिए-चलिए, आप लोगों को देर हो रही है, जल्द-से-जल्द आप लोगों को घर पहुचा आऊ। चलो बेटी, चलो—"

इसके बाद सभी उठकर खड़े हो गए। दो-मंजिले से एक-मंजिले पर आने पर दाहिनी ओर सिंहवाहिनी देवी का मंदिर मिलता है। उसके सामने आगन। आगन के सामने बाह्य भवन का दरवाजा। वहा गाड़ी में ड्राइवर इन्तजार कर रहा था।

मल्लिकजी ने दरवाजा खोल दोनों को गाड़ी के पीछे की सीट पर बिठा दिया और खुद ड्राइवर की बगल में जाकर बैठ गए। उसके बाद गाड़ी चल दी। ड्राइवर को मालूम है कि यहां किस इलाके में इन लोगों को लेकर जाना है। वह गाड़ी स्टार्ट कर बड़ी सड़क पर चला आया और उसके बाद सीधे खिदिरपुर। गाड़ी स्टार्ट होते ही योगमाया अपना कुतूहल दबाकर नही रख सकी। पूछा, "मल्लिकजी, विशाखा की जन्मपत्री देखकर गुरुदेव ने क्या बताया?"

मल्लिकजी ने पीछे की तरफ चेहरा घुमाकर कहा, "गुरुदेव? गुरुदेव ने तो

आपकी लड़की की जन्मपत्री देखकर बताया कि बहुत ही अच्छी है।"

"खाक अच्छी रहेगी! जन्मपत्री अगर अच्छी होती तो पैदा होते ही लड़की बाप को क्यों खा जाती? इसके जनमते ही मेरी तकदीर फूट गई। इसी लड़की की वजह से ही मुझे देवर के घर में महरी का काम करना पड़ता है।"

मल्लिकजी ने कहा, "सो हो सकता है। लेकिन आपकी लड़की का स्वामी-भाग्य बहुत अच्छा है।"

"स्वामी-भाग्य अच्छा कैसे है?"

मल्लिकजी ने कहा, "स्वामी-भाग्य कैसे अच्छा है, यह मैं कैसे जान सकता हूं बेटी? मैं तो जन्मपत्री विचार करना नहीं जानता। गुरुदेव ने मेरे सामने जो कुछ कहा, वही बता रहा हूं।"

उसके बाद जरा चुप रहने के बाद फिर बोले, "और इसके अलावा आपने तो खुद अपनी आंखों से देखा कि आपके दामाद का कितना बड़ा मकान है। कितने महाराज, कितने नौकर-दाई हैं, कितना बड़ा पूजा का दालान है। और अगर आप खानदान की बात करें तो इतने नामी-गिरामी खानदान कलकत्ता में कितने हैं, आप ही बताइए? इन जायदादों की मालकिन तो किसी दिन आपकी ही लड़की होगी। एक बार उस समय की बात सोचकर देखें! आपकी लड़की ही दादी मां को क्यों जंच गई? और आप ठीक उसी घाट पर उसी समय लड़की को लेकर नहाने के लिए गई ही क्यों? कलकत्ता में क्या गंगा का और कोई दूसरा घाट नहीं था? बताइए?"

योगमाया ने कहा, "न मालूम क्या होगा!"

मल्लिकजी ने कहा, "इतना मत सोचिए, जो होगा मंगल ही होगा। भगवान पर भरोसा रखिए। वे मंगलमय हैं, वे जो कुछ करेंगे, मंगल के लिए ही करेंगे।"

एकाएक विशाखा रोने लगी। बोली, "मैं शादी नहीं करूंगी मां—"

योगमाया ने आक्रोश में आकर कहा, "तू चुप रह मुंहजली! रोना बंद कर।" उसके बाद मल्लिकजी से कहा, "लड़की आपकी दादी मां को पसंद आई है न?"

मल्लिकजी ने कहा, "मेरी दादी मां को तो पहले ही पसन्द आ गई थी। इसी वजह से तो आप लोगों के खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के घर पर मुझे पात्री की जन्म-तिथि, वगैरह जानने के लिए भेजा था। इसी वजह से हजारों रुपये खर्च कर गुरुदेव महाराज को काशी से बुलाया गया है।"

योगमाया कुछ देर तक चुप्पी साधे रही, उसके बाद फिर पूछा, "शादी कब होगी?"

मल्लिकजी ने कहा, "उसमें अभी बहुत देर है। अभी दादी मां का पोता भी छोटा ही है। पहले उसकी शादी की उम्र हो जाए तब तो। उसके बाद पात्र खानदानी कारोबार में शामिल होगा। और इस बीच आपकी लड़की को लिखा-पढ़ाकर दादी मां मुखर्जी परिवार के योग्य बना लेंगी।"

योगमाया ने कहा, "लिखना-पढ़ना सिखाएगा ही कौन? लिखाने-पढ़ाने में आजकल क्या कम खर्च होता है? मेरा देवर इसके लिए राजी नहीं होगा।"

मल्लिकजी ने कहा, "आपके देवर के राजी न होने से भी कुछ हर्ज नहीं है। उन्हें अपनी जेब से कुछ खर्च नहीं करना है। आपकी लड़की के खाने-पीने, लिखाई-

पढ़ाई से शुरू कर फ्रॉक-जूता-मोजा-गाड़ी-ब्लाउज वगैरह में जो खर्च बैठेगा वह हम लोगों की दादी मां देंगी। इसलिए कि मुखर्जी भवन की पौत्रवधू मुखर्जी परिवार के बिलकुल योग्य हो सके। जिसमें कि लोग बहू देखकर यह न कह सकें कि यह दरिद्र परिवार से बहू उठाकर ले आई है दादी मां। उनकी भी तो कोई इज्जत है! शादी के समय कलकत्ता के और भी पंद्रह-बीस घरों के बड़े आदमी आएंगे। उनके सामने उन्हें अपना सिर न झुकाना पड़े, यह भी तो देखना है। विशाखा अगर चाहेगी तो उस्ताद रखकर उसे संगीत की भी तालीम दी जाएगी।"

योगमाया मुग्ध होकर सारी बातें सुन रही थी।

बोली, "ऐसा! मेरी लड़की संगीत की तालीम लेगी?"

मल्लिकजी ने कहा, "इसमें आपको कौन-सा एतराज है? इसके लिए आपको रुपया खर्च नहीं करना होगा। दादी मां रुपया देंगी। दादी मां को क्या रुपये की कमी है? दादी मां तो मुखर्जी-मेंबसबी कंपनी की एक डाइरेक्टर भी हैं। आपने मुखर्जी-मेंबसबी कंपनी का नाम नहीं सुना है?"

योगमाया ने कहा, "नहीं।"

"अरे, फिर मैं कह रहा हूं क्या? बालिग होने पर आपका दामाद भी एक डाइरेक्टर बन जाएगा। आपके दामाद को भी कारोबार के सिलसिले में कितने ही देश-विदेशों की यात्रा करनी होगी। साथ में आपकी लड़की भी जाएगी—"

"मेरी लड़की भी जाएगी?"

मल्लिकजी ने कहा, "जाएगी नहीं? मंझले बाबू तो अपनी पत्नी को लेकर कितनी ही जगह जाते हैं।"

"मेरी लड़की कहां-कहां जाएगी?"

मल्लिकजी ने कहा, "लंदन, पेरिस, बर्लिन, स्विटजरलैण्ड और टोकियो वगैरह आपके दामाद के साथ आपकी लड़की भी जाएगी।"

"जहाज से जाएंगे?"

मल्लिकजी कहा, "जहाज से क्यों, हवाई जहाज से जाएंगे। मतलब एरोप्लेन से। आजकल जहाज से विदेश जाने का रिवाज नहीं है। आप यह सब अभी नहीं सोचिए। पहले शादी हो जाए तब आप यह सब सोचिएगा।"

अचानक विशाखा फिर रो दी। बोली, "मैं शादी नहीं करूंगी मां! मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी।"

योगमाया ने दुबारा झिड़क दिया, "चुप रह मुंहजली, चुप हो जा। मैं तुम्हारे भले के लिए मर रही हूं और···"

ठीक उसी समय गाड़ी खिदिरपुर के सात नंबर मनसातल्ला लेन के मकान के पास आकर रुक गई। उस समय गाड़ी अपनी मंजिल पर पहुंच चुकी थी।

संदीप मन लगाकर कहानी सुन रहा था। पूछा, "उसके बाद?"

लेकिन उसके बाद का भी तो उसके बाद होता है। संदीप को अपने कलकत्ता आने के पहले की बात सुनने में बहुत ही अच्छा लगता। पहले की बात का मतलब

है इतिहास। वेड़ापोता के चटर्जी वाबुओं के घर की लाइब्रेरी में बैठ संदीप इतिहास की ही ज्यादातर पुस्तकें पढ़ता।

लेकिन वे पुस्तकें उसे अच्छी क्यों लगतीं?

इस 'क्यों' का उत्तर वह स्वयं भी नहीं जानता था। स्कूल के दूसरे लड़के जब पांचकौड़ी दे की लिखी हुई 'नीलवसना सुंदरी' और 'हत्याकारी कौन' पुस्तकें पढ़ते, उस समय वह विनसेंट स्मिथ की पुस्तक पढ़ता, गिब्बन की पुस्तक पढ़ता, कॉटन साहव की पुस्तक पढ़ता, टॉड साहब का 'राजस्थान का इतिहास' पढ़ता। उस समय उसे लगता कि वह पूरी दुनिया को अपनी आंखों के सामने देख रहा है। उसे यह सब पुस्तकें पढ़ने में क्यों अच्छी लगतीं, वह खुद भी समझ नहीं पाता। क्यों और किसलिए किसी जाति का उत्थान होता है और क्यों और किसलिए किसी देश का पतन होता है, उसे जानकर उसका मन रोमांचित हो उठता। चटर्जी वाबू लोग क्यों इतने अमीर हैं और संदीप जैसे लोग क्यों इतने गरीब हैं, इसकी जानकारी हासिल करने पर भी उसे अच्छा लगता। इतिहास के पतन-उत्थान की इस तरह की कहानियां उसके हृदय को आंधी की तरह झकझोर देतीं।

इसके वादवाले महीने में संदीप को ही रुपया लेकर खिदिरपुर के मनसातल्ला के मकान में जाना पड़ा। एक सौ पच्चीस रुपया। दस के दस और पांच रुपये के पांच नोट लेकर। मल्लिकजी अच्छी तरह धोती के छोर में बांध देते। कहते, "खूब सावधानी से जाना वेटे! इतने सारे नोट लेकर जा रहे हो, देखना, कहीं खो न जाएं।"

संदीप कहता, "नहीं, खोऊंगा नहीं चाचाजी।"

मल्लिकजी कहते, "कलकत्ता तुम्हारा वेड़ापोता नहीं है, यहां राह-बाट में चोर-उचक्कों और गुण्डों और बदमाशों के अड्डे हैं। यहां के आदमी बहुत खोटे हैं, यह जानते हो? यहां कोई किसी का भला बरदाश्त नहीं कर पाता। जाओ दुर्गा श्री हरि—"

उस समय कलकत्ता में वे ही उसके एकमात्र हितैषी और शुभचिंतक थे। सिवाय मल्लिकजी के संदीप और किसी को अच्छी तरह पहचानता भी नहीं था। उसने भी मल्लिकजी का अनुकरण करते हुए मन-ही-मन 'दुर्गा श्री हरि' शब्दों का उच्चारण किया। मानो, 'दुर्गा श्री हरि' का उच्चारण न करने से उसकी यात्रा अशुभ हो जाएगी।

अब उस वात को सोचता है तो उसे हंसी आती है। इतने दिनों के बाद संदीप ने महसूस किया है कि उस समय जैसा अशुभ उसके जीवन में कभी नहीं आया था।

घर से चलने पर पहले की तरह ही धर्मतल्ला में बस बदलनी पड़ी। लेकिन अबकी किसी ने उसे धक्का मारकर पैरों से रौंदा नहीं। वह आसानी से बस पर चढ़ने लगा। और वस जब खिदिरपुर जाकर आखिरी पड़ाव पर पहुंची तो वह आहिस्ता से वस से उतर गया। यहां आने के वाद बस और आगे नहीं जाएगी। यहां उसके सफर का आखिरी छोर है। उसके बाद वह सात नंबर मनसातल्ला लेन के घर की ओर चल पड़ा। घर के सामने जाते ही संदीप ने देखा—वही

लड़की खड़ी है—यही विशाखा नामक लड़की।
विशाखा ने संदीप को पहचान लिया। संदीप को देखकर हंस दी।
संदीप ने कहा, "हंस क्यों रही हो? तुमने मुझे पहचान लिया?"
विशाखा ने कहा, "पहचानूंगी नहीं? तुम तो पिछले महीने उस बूढ़े के साथ आए थे।"
संदीप ने कहा, "बूढ़ा क्यों कह रही हो? वे मेरे चाचा लगते हैं।"
विशाखा ने कहा, "तुम्हारे चाचा हैं तो मेरा क्या! बूढ़े को बूढ़ा नहीं कहूंगी तो क्या बच्चा कहूं?"
संदीप ने कहा, "तो भी नहीं कहना चाहिए। एक दिन सबको बूढ़ा होना ही है। और तुम भी क्या इसी तरह हमेशा बच्ची ही रहोगी? एक दिन तुम भी तो बूढ़ी हो जाओगी। एक दिन तुम्हारी शादी होगी—"
विशाखा ने कहा, "तुम कुछ भी नहीं जानते। मुझसे मां ने कहा है, मैं अभी *जितनी छोटी हूं, बाद में भी उतनी ही छोटी रहूंगी। मां क्या कभी झूठ बोलती है?* मां ने कहा है, शादी होते ही लड़की ससुराल चली जाती है। मैं ससुराल नहीं जाऊंगी—"
संदीप लड़की की बात पर हंस दिया और पूछा, "तुम्हारी मां कहां हैं?"
विशाखा ने कहा, "मैं जानती हूं कि तुम किसलिए आए हो।"
"मैं क्या करने आया हूं?"
"मेरी मां को रुपया देने। तुम लोगों के घर में एक लड़का है, उससे मेरी शादी होगी। मैं सबकुछ सुन चुकी हूं।"
संदीप ने कहा, "तुमने ठीक ही सुना है। अब अपनी मां को जरा बुला दो। जाकर कहो, मैं बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के घर से आया हूं।"
तभी अलका की ही हमउम्र एक लड़की वहां आकर हाजिर हुई। कहा, "कौन है री विशाखा? तू किससे बातें कर रही है?"
अलका ने कहा, "देखो न, मेरा नाम विशाखा है और इन लोगों ने बदलकर *अलका रख दिया है। देखो, कितना भद्दा-सा नाम रख दिया है—"*
लड़की बोली, "तुम लोगों ने इसका अलका नाम क्यों रखा है? इसका नाम तो विशाखा है। और मेरा नाम बिजली—"
संदीप ने कहा, "मैंने नहीं बदला है। नाम बदला है दादी मां के गुरुदेव ने। उन्होंने बताया है, अलका नाम रखने से उसका जीवन सुखी होगा।"
"सुखी होगा का मायने?"
संदीप ने कहा, "यह सब मैं नहीं जानता। तुम अपनी मां से जाकर कहो कि मैं रुपया देने आया हूं।"
अचानक अंदर से पुरुष-कंठ की आवाज आई, "कौन है? तुम लोग किससे बातें कर रही हो?"
यह कहकर वह जैसे ही बाहर आया, संदीप ने देखा, यह वही आदमी है जो पिछले महीने दिखाई पड़ा था। वही गांगुलीजी। संदीप को बुलाकर अंदर ले गए। पिछली बार मल्लिकजी के साथ आकर जिस कमरे में बैठा था, उसी कमरे में।

उसी दिन जैसा गन्दा, मैला-कुचैला कमरा!

तपेश गांगुली के पीछे-पीछे विशाखा और बिजली भी कमरे में चली आई थीं।

तपेश गांगुली ने कहा, "रुपया ले आए हो भाई?"

संदीप ने कहा, "हां, ले आया हूं। अलका की मां कहां है? राजुबाला देवी?"

"कितना रुपया ले आए हो?"

संदीप ने कहा, "आपने एक सौ रुपये की रकम बढ़ाकर डेढ़ सौ कर देने की बात कही थी, लेकिन हमारी दादी मां ने पच्चीस रुपया बढ़ा दिया है। मैं एक सौ पच्चीस रुपया लेकर आया हूं। मुनीमजी ने मुझसे कहा है कि राजुबाला के हाथ में रुपये दूं—किसी दूसरे के हाथ में देने से मना किया है।"

तपेश गांगुली कुछ देर तक मौन रहे। मुंह से जैसे कोई बात ही नहीं निकल रही हो।

उसके बाद बोले, "क्यों? मुझे वह रुपया देने से मैं क्या रुपया मार लूंगा?"

संदीप बोला, "मुझे यह मालूम नहीं। मुझसे मुनीमजी ने जो कुछ कहा था, वही बता रहा हूं।"

तपेश गांगुली इसके उत्तर में और क्या कहें! थोड़ी देर बाद विशाखा से कहा, "अपनी मां को बुला ला। कहना कि बिडन स्ट्रीट के मकान से नए मुनीमजी माहवारी रुपया लेकर आए हैं। अपनी मां को बुला ला।"

विशाखा के पहले बिजली ही दौड़कर अन्दर चली गई।

तपेश गांगुली ने कहा, "चाय मंगाऊं? चाय पियोगे?"

संदीप ने कहा, "नहीं; मैं गांव का लड़का हूं, चाय नहीं पीता।"

"अच्छी बात है, चाय न पीना ही अच्छा है। चाय ही क्यों, किसी भी तरह के नशे का सेवन करना अच्छी बात नहीं है। मेरी ही बात लो, मैं किसी तरह का नशा नहीं करता। नशा करने का मतलब है रुपये का श्राद्ध करना। यह सब अमीरों को शोभा देता है—"

यह कहकर तपेश गांगुली अन्दर चले गए। आमतौर से महीने की पहली तारीख को ही यह मकान उत्सव का चेहरा पहन लेता है। उसी दिन बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के घर से एक सौ रुपया आता है। यह एक सौ रुपया अतिरिक्त आय है। इसके लिए कभी किसी को परिश्रम नहीं करना पड़ता है। किसी की खुशामद भी नहीं करनी पड़ती है। सच, यह अतिरिक्त आय है। महीने की पहली तारीख को ही तपेश गांगुली के घर में मांस पकता है, महीन चावल की खीर पकायी जाती है। रुपया असल में विशाखा के सूत्र से आता है, लेकिन उसका उपभोग सब लोग मिल-जुलकर करते हैं। इस सन्दर्भ में योगमाया के द्वारा किसी तरह का अभियोग करना तो दूर की बात, मुंह खोलकर कभी कुछ कहती भी नहीं। एक तो विधवा औरत उस पर इस मकान में बगैर किराया चुकाए रहने का मौका मिल रहा है और दो वक्त खाना नसीब हो रहा है, यही पर्याप्त है। विशाखा के लिए हर महीने इतने रुपये आ रहे हैं, इस वजह से कोई थोड़ी-सी कृतज्ञता प्रकट करे, ऐसा नहीं होता। बल्कि और अधिक रुपया क्यों नहीं आ रहा है, इसी के सम्बन्ध में देवर दबाव डालना चाहता है। जैसे योगमाया अगर अपने मुंह से कहे तो रुपये

की संख्या बढ़ जाए।

तपेश गांगुली बीच-बीच में कहते, "तुम जरा कह नहीं सकती भाभी, कि वे लोग और पचास रुपये बढ़ा दें तो सहूलियत हो। यह कहने में दोष ही क्या है?"

योगमाया कहती, "मेरी तरफ से तुम्हीं कह दो। मैं औरत हूं। मेरा कहना क्या ठीक रहेगा?"

तपेश गांगुली कहते, "तुम विनाया की मां हो, तुम्हारे कहने से न होगा तो क्या मेरे कहने से होगा? मैं तो बहुत बार कह चुका हूं—"

योगमाया जानती थी कि यह अक्लमंदी असल में उसके देवर की नहीं, देवरानी की है। एक सौ रुपये की इस आय के होने ही देवरानी ने गृहस्थी का काम-काज एक तरह से छोड़ ही दिया है। उसी समय से देवरानी के सिर में रह-रहकर दर्द हो जाता है। तभी से उसकी कमर में दर्द होना शुरू हो गया है। घर में कोई जेठानी बोझ बनकर रहे तो कोई देवरानी भला स्वस्थ रह सकती है? या तो बदन का दुखना या सिर में दर्द होना लगा ही रहता है। इस सन्दर्भ में योगमाया ने मुंह खोलकर कभी कुछ भी नहीं कहा है।

लेकिन रुपया? लेकिन रुपये के सम्बन्ध में वह मुनीमजी से कैसे कहे? रुपया हर महीने दे रहा है यही तो काफी है। अगर किसी दिन रुपया देना बन्द कर दे तो योगमाया कह ही क्या सकती है? मुखर्जी भवन की दादी मां ने क्या ऐसा कोई वादा किया है कि वह नियम से हर महीने साल-दर-साल इसी तरह रुपये देती रहेंगी?

इसीलिए योगमाया से कहलाने का तपेश गांगुली का प्रयास सफल नहीं हुआ है।

रानी ने पति से कहा था, "क्यों कहेगी, सुनूं? कहकर अपनी जबान क्यों खराब करेगी? तुम तो दो व्यक्तियों के खाने-पहनने का खर्च दे ही रहे हो, तो फिर कहकर अपनी इज्जत क्यों बिगाड़े? तुम्हें इज्जत न भी हो सकती है, लेकिन बड़ी दी की तो कोई इज्जत है।"

तपेश गांगुली ने कहा था, "तुम ठीक कह रही हो, मैं समझ रहा हूं—"

रानी ने कहा था, "तुम खाक समझोगे। मेरे मरने पर ही शायद तुम्हारे दिमाग में थोड़ी बुद्धि आएगी।"

लेकिन कम रुपया है यह कहकर लेने में कभी किसी ने एतराज नहीं किया है। बल्कि मल्लिक साहब के द्वारा रुपया लाने पर चाय और बिस्कुट से उनकी खातिरदारी की गई। क्योंकि अगर रुपया आना बंद हो जाए तो? कुछ न देने के बनिस्बत कुछ देना ही बेहतर है।

लेकिन उस बार पहले-पहल ईश्वर का स्मरण कर तपेश गांगुली यह बात मल्लिकजी से कह बैठे।

इसीलिए पचास रुपया न बढ़ाकर पच्चीस रुपये की रकम बढ़ा दी है। यही क्या कम है? इस पच्चीस रुपये में तपेश गांगुली की एक जोड़ा चप्पल हो जाएगी या रानी का एक कीमती ब्लाउज हो जाएगा। जो भी फायदा हो जाए, उसे छोड़ क्यों जाए?

तपेश गांगुली ने योगमाया के पास जाकर कहा, "देखो भाभी, तुमने उन लोगों

ने रुपये की बावत बातें ही नहीं कीं। आखिरकार मुझे ही मुंह खोलना पड़ा। यह देखो, बुढ़िया ने अबकी रुपये की रकम बढ़ा दी है।"

योगमाया बोली, "कितना ?"

"कितना ? और कितना, पच्चीस रुपये। पच्चीस रुपया ही क्या कम है ! एक ही झटके में गला उतारना ठीक नहीं रहता, जरा धीरज रख धीरे-धीरे गला काटना पड़ता है। इससे हाथ को सुख का अहसास होता है। अभी पच्चीस रुपया बढ़ा है, इसके बाद धीरे-धीरे एक मुश्त दो सौ रुपये लूंगा।"

उसके बाद हाथ का कागज़ और कलम योगमाया को देते हुए बोले, "लो, यहां हस्ताक्षर कर दो—"

योगमाया ने हर बार की तरह किसी तरह हस्ताक्षर कर दिया। हस्ताक्षर करने के बाद ही योगमाया का कर्त्तव्य समाप्त। अब फिर रसोई पकाने का काम। कमरे की तरफ जाती हुई बोली, "चाय का पानी चूल्हे पर चढ़ा दिया है, उन लोगों के मुनीमजी को जरा बैठने को कहो देवरजी।"

तपेश गांगुली ने कहा, "नहीं, चाय नहीं बनानी है। वह क्या पहलेवाले मुनीमजी हैं, यह तो नौजवान है। मैं पहले ही पूछ चुका हूं, चाय पीने की आदत नहीं है इसे।"

सामने के बरामदे से जाने के दौरान रानी से मुलाकात हो गई। हर महीने की पहली तारीख को रानी इन रुपयों के इन्तजार में रहती है। तपेश गांगुली जैसे ही करीब पहुंचे, रानी ने पूछा, "कितना दिया ?"

तपेश गांगुली ने पूरी रकम रानी के हाथ में सौंपते हुए कहा, "गिन लो, एक सौ पच्चीस रुपये हैं। दस रुपये के दस नोट और पांच रुपये के पांच नोट। कुल मिलाकर एक सौ पच्चीस रुपये। मेरे सामने गिन लो—"

हर दफा इसी तरह होता आ रहा है। जिसके नाम पर रुपया आता है, वह रुपये की शक्ल तक देख नहीं पाती। देखने की इच्छा रहने पर भी देख नहीं पाती। उसे सिर्फ काम करना पड़ता है। काम के सिवा कुछ सोचना उसके लिए जैसे पाप हो। लिहाजा उन रुपयों को लेकर क्या किया गया, किस तरह खर्च हुए, वह यह भी नहीं सोचना चाहती। भगवान ने जैसे उसे सोचने को मना कर दिया है।

सिर्फ रात ही उसके अकेले की होती है।

उन्हीं रातों में योगमाया जैसे स्वयं को ढूंढ़कर खोज निकालती है। उस समय उसे अपने पति की याद आती है। पति ने एक दिन कहा था, "देखो योगमाया, मैं अगर किसी दिन इस दुनिया से विदा हो जाऊंगा तो तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं। मेरा भाई तपेश तो है। उसे मैंने ही बचपन से पाला-पोसा है। वह तुम्हारी देखभाल करेगा—"

उस दिन पति की बात पर योगमाया रोई नहीं थी, आज उसके चले जाने पर भी नहीं रोती। सुख-दुख को एक जैसा समझकर बरदाश्त कर लेती है। उसके भगवान को अगर किसी दिन उन पर प्रसन्न होने की इच्छा होगी तो होंगे और न होने की होगी तो नहीं होंगे। इसके लिए वह किसी के खिलाफ शिकवा-शिकायत नहीं करेगी। केवल यही विश्वास लेकर जीवन का आखिरी दौर गुजार देगी। ईश्वर मंगलमय हैं। वे जो कुछ करते हैं, मंगल के लिए ही करते हैं।

तपेश गांगुली ने रात में कहा, "क्यों जी, तुम सो गईं क्या?"

"अब क्या है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "तुम बहुत दिनों से कह रही थीं कि कान का एक जोड़ा झुमका बनवाओगी। सो अब तो कुछ रुपये आ गए हैं, बनवा लो न।"

रानी बोली, "नहीं-नहीं, इतना लाड़ जताने की जरूरत नहीं। बहुत हो चुका।"

तपेश गांगुली बोले, "इतना बिगड़ क्यों रही हो? मैंने गुस्से की कौन-सी बात कही है?"

रानी ने झुंझलाकर कहा, "आधी रात में कटे घाव पर नमक छिड़कने की जरूरत नहीं। तुमसे जब शादी हुई तो उसी वक्त मैं समझ गई कि मेरी तकदीर फूट गई।"

तपेश गांगुली ने पत्नी की बात पर परेशान होकर कहा, "उफ्, क्या किया है मैंने, यह बताओगी नहीं?"

रानी बोली, "दया कर अब चुप रहोगे?"

तपेश गांगुली बोला, "यह तो भारी मुश्किल की बात है। मेरी बात भी नहीं सुनोगी और न अपनी भी कुछ कहोगी। फिर मैं क्या करूं? मैं क्या कहूं, कम-से-कम यह तो बता दो—"

"तुम्हें कुछ नहीं करना है, बस इतनी दया करो कि मुझे सोने दो।" यह कहकर रानी दूसरी ओर मुंह घुमाकर लेट गई।

ऐसा पहली दफा हुआ हो, ऐसी बात नहीं। जिस दिन बिडन स्ट्रीट के मकान के मल्लिकजी आकर विशाखा के ब्याह का प्रस्ताव रख गए हैं, उसी दिन से रानी ऐसी हो गई है। अच्छी बात कहने पर भी झगड़ा करने पर उतारू हो जाती है। जो भी मर्जी होती है, कहकर लड़कियों के सामने अपमानित करने लगती है। ऑफिस जाकर मन लगाकर काम करे, इसका भी उपाय नहीं। वहां काम करने के दौरान घर की बात सोचकर तपेश गांगुली अनमने जैसे हो जाते। गहना खरीदने की बात भी सुनना नहीं चाहती, साथ ही लाड़ जताने से भी बिदक जाती है।

चूंकि भाभी हैं, इसीलिए तपेश गांगुली को ठीक समय पर खाना मिल जाता है। ठीक समय पर ऑफिस जा पाते हैं। रेल का दफ्तर होने से यदा-कदा जाने में भले ही विलम्ब हो जाए, मगर हमेशा विलम्ब से जाने से काम तो नहीं चलेगा। दिन में कम-से-कम एक बार तो ऑफिस जाना ही होगा। इसी ऑफिस की बदौलत उनकी रोजी-रोटी चल रही है, शान-शौकत चल रही है, लौकिकता का निर्वाह हो रहा है। ऑफिस ही उनके लिए लक्ष्मी है। यह ऑफिस ही उनकी मांग का सिन्दूर है। इस सिन्दूर के चलते वे अब भी दुनिया में तनकर खड़े हैं। अगर वह न रहता तो?

तपेश गांगुली इस मुद्दे पर सोच भी नहीं पाते। उस स्थिति के बारे में सोचते ही उनका सिर दुखने लगता है। नहीं, अब उन बातों पर सोचने की जरूरत नहीं। वे सवेरे की बात भूलने की कोशिश करते। लेकिन भूलना क्या इतना आसान है? भूल पाते तो वे बहुत पहले ही घर-संसार छोड़ जंगल में चले जाते। और जंगल भी क्या अब पहले जैसा जंगल है? अब तो कलकत्ता शहर ही जंगल हो गया है। जंगल में जिस तरह बाघ-सिंह-भालू चक्कर काटते हैं, उसी तरह आए दिन

कलकत्ता में भी तो बाघ-सिंह-भालू चक्कर काटते हैं। कलकत्ता शहर के बाघ-सिंह-भालू जंगल के बाघ-सिंह-भालू से ज़्यादा खौफनाक हैं। हर रोज़ बाज़ार जाने पर तपेश गांगुली को ऐसा ही महसूस होता है। वे सभी के चेहरे की ओर गौर से देखते हैं। वे बाहर से आदमी जैसे ही लगते हैं लेकिन अन्दर से?

बगल से रानी के खर्राटे की आवाज़ आ रही है। तपेश गांगुली को पता चल गया कि रानी नींद में मशगूल हो गई है। सच, औरतों को मौज-ही-मौज है! जितनी भी परेशानियां हैं, मर्दों को उनका मुकाबला करना पड़ता है। पत्नी को गहने-जेवर, साड़ी-ब्लाउज देने पर भी उसके अनुग्रह का पात्र बनना नामुमकिन है। जाए, जहन्नुम में जाए सब कुछ, जहन्नुम में जाए यह घर-गृहस्थी। आदमी को घर बसाने की ललक क्यों रहती है, पता नहीं! पहले पता रहता तो कौन साला घर बसाता!

विडन स्ट्रीट के मकान से मल्लिकजी के इस घर में आने के बाद से ही तपेश गांगुली की दुनिया विषाक्त जैसी हो गई थी।

लेकिन कितनी तुच्छ थी वह घटना! कितनी मामूली और कितनी नगण्य!

इतने दिनों के बाद, इतनी वारदातों के बाद संदीप को लगा, इस तुच्छ, मामूली और नगण्य घटना ने उसके जीवन में कैसे एक दुखद गड़बड़ी पैदा कर दी! संदीप क्यों इस विपर्यय में फंसकर एकबारगी बर्बाद हो गया! और सिर्फ संदीप ही क्यों, कौन ऐसा था जो उलझ नहीं गया था? दादी मां, सौम्य मुखर्जी, तपेश गांगुली, रानी गांगुली, विशाखा उर्फ अलका, राजुबाला देवी उर्फ योगमाया, मल्लिकजी—कोई ऐसा नहीं था जो इससे अछूता रहा हो।

संदीप को याद है, उस दिन तपेश गांगुली को रुपये देकर वह घर से बाहर निकल आया था।

पीछे से तपेश गांगुली दरवाज़ा भिड़ाने आया था।

बोला, "अगले महीने फिर पहली तारीख को आ रहे हो न भाई?"

संदीप ने कहा, "हां, ज़रूर आऊंगा।"

"तो भैया, ज़रा सवेरे आना, समझे?"

"क्यों? आपको ऑफिस जाने में देर हो गई क्या?"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां, तब इतना ज़रूर है कि हम लोगों का रेल का दफ्तर है। कोई खास काम नहीं रहता। लेकिन ऑफिस एक बार हाज़िरी तो देनी ही है। इसीलिए कह रहा हूं, इसके बाद ज़रा सवेरे आने की कोशिश करना। और अगर हो सके तो एक सौ पच्चीस रुपये की रकम को बढ़वाकर एक सौ पचास करा दो। यही कहना—"

संदीप ने कुछ नहीं कहा था। तपेश गांगुली ने दरवाज़ा बन्द कर दिया था। संदीप मनसातल्ला लेन के मकान से निकल बस पकड़ने के लिए ट्राम-रास्ते की ओर जा रहा था। अचानक घर के पिछवाड़े की तरफ से किसी ने पुकारा, "ऐ संदीप, संदीप—"

वहां उसी रूप में विशाखा को देखकर संदीप अवाक् हो गया। अचानक वह

वहां कैसे आ गई ? उसका नाम लेकर उसे पुकार रही है ! लड़की बड़ी ही परिपक्व मालूम होती है ।

संदीप आगे बढ़कर लड़की के पास गया। पूछा, "क्या हुआ ? तुम मुझे पुकार रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "हां, तुम्हारा नाम संदीप है न—"

संदीप ने कहा, "हां, लेकिन तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?"

विशाखा ने हसते हुए कहा, "मुझे सब-कुछ मालूम है।"

"क्या मालूम है ?"

विशाखा ने कहा, "पिछली बार तुम उस बूढ़े के साथ आए थे। अबकी से तुम्हीं रुपये लाकर मां को दिया करोगे।"

संदीप ने कहा, "हां।"

विशाखा ने कहा, "तुम इस दफा एक सौ रुपये के बदले एक सौ पच्चीस रुपये दे गए हो।"

संदीप विशाखा की बुद्धि देखकर चकित रह गया।

बोला, "तुम तो सब-कुछ जानती हो।"

"हां, मैंने तो बताया ही है कि सब-कुछ जानती हूं। और क्या जानती हूं, बताऊं ?"

संदीप ने कहा, "बताओ।"

"तुम जो रुपया दे गए, उस रुपये से क्या होगा, जानते हो ?" विशाखा ने पूछा।

"क्या ? क्या होगा ?"

विशाखा ने कहा, "तुम लोगों के द्वारा दिए गए सभी रुपयों को चाचाजी ने बक्से में जमा करके रखा है। उन जमा किए हुए रुपयों से अब चाचीजी के लिए एक जोड़ा झुमके बनेंगे।"

"सच ?"

"हां, अभी कान के झुमके बनेंगे। बाद में चाचीजी के लिए सोने का एक हार बनवाया जाएगा…"

यह कहकर विशाखा बोली, "जरा झुको, झुको ना—"

संदीप समझ नहीं सका कि विशाखा उसे झुकने को क्यों कह रही है।

"झुककर क्या करूंगा ?" संदीप ने पूछा।

विशाखा ने कहा, "तुम्हारे कान में एक बात कहूंगी—जरा झुक जाओ ना।"

संदीप अब वाकई झुककर खड़ा हो गया। विशाखा ने अपने हाथों से संदीप का सिर पकड़ लिया। उसके बाद सिर को अपने मुंह के पास लाकर कान में फुसफुसाते हुए कहा, "किसी से मत कहना, समझे ? कहो कि किसी को बताओगे नहीं—"

संदीप उसी तरह सिर झुकाए बोला, "किसी से नहीं कहूंगा।"

"पहले कसम खाओ। बोलो, मां काली की कसम—"

संदीप ने कहा, "हां, मां काली की कसम खाकर कह रहा हूं कि किसी से नहीं बताऊंगा।"

"अपनी दादी मां से भी नहीं कहना होगा।"

"नहीं, दादी मां से भी नहीं कहूंगा, वादा करता हूं।"

विशाखा ने कहा, "फिर सुनो, तुम्हारी दादी मां हर महीने इतने सारे रुपये ती हैं। लेकिन तुम्हारे छोटे बाबू से मेरी शादी नहीं होगी।"

संदीप चौंक उठा बोला, "यह क्या? क्यों? छोटे बाबू से तुम्हारी शादी क्यों हीं होगी?"

"यह मैं नहीं बताऊंगी।" विशाखा ने कहा, "कहने से तुम सबसे कह दोगे।"

यह बात सुनने के लिए संदीप में तब बहुत उत्सुकता जग गई थी। बोला, "मैं वचन देता हूं, किसी से नहीं कहूंगा।"

"तो फिर दुबारा मां काली की कसम खाओ।"

बार-बार कसम खाने की बात सुनकर संदीप को हंसी आ गई। बोला, "अच्छा-अच्छा, दुबारा मां काली की कसम खा रहा हूं कि किसी से नहीं कहूंगा।"

"फिर सुनो —"

यह कहकर विशाखा ने फिर संदीप के सिर को अपने हाथ से पकड़, मुंह और नजदीक लाकर कहा, "मेरी शादी हो जाएगी तो इसके बाद तुम लोग चाचाजी को रुपये नहीं दोगे—तब चाचीजी किन रुपयों से गहना बनवाएंगी?"

बात खत्म होने के पहले घर के अन्दर से जनाना आवाज़ आई, "अरी विशाखा, कहां है तू? अरी ओ विशाखा···"

"अरे मुझे बुला रही है, चलती हूं—"

यह कहकर विशाखा अब वहां खड़ी नहीं रही। एक ही दौड़ में पीछे की खिड़की के दरवाज़े से घर के अन्दर घुस गई।

संदीप चंद लमहों तक खामोशी में डूबा रहा। कब तक उसी स्थिति में खड़ा रहा, कौन जाने! जब उसकी चेतना लौटी तो देखा कि चारों ओर का जो विराट् ब्रह्मांड अब तक निश्छल, स्थिर, स्तब्ध होकर स्थाणु हो गया था वह अब फिर से अपने गति-पथ में घूमने लगा है। संदीप ने देखा, वह खिदिरपुर के सात नम्बर मनसातल्ला लेन के मकान के सामने एकाकी खड़ा है और उसके सामने की सड़क पर झुंड-दर-झुंड आदमी, साइकिल, गाय, रिक्शे, ठेलागाड़ी वगैरह सैलाब की तरह अपने आप बहे जा रहे हैं। इतनी देर के बाद उसे याद आया कि जिस शहर में वह है उसका नाम है कलकत्ता। और यह भी याद आया कि उसका नाम संदीप है—संदीप लाहिड़ी। उसके पिता का नाम हरिपद लाहिड़ी। यह भी याद आया कि वह बेड़ापोता से पढ़ने के लिए कलकत्ता आया है। उसे जहां जिस मकान में आश्रय मिला है, उस मकान का पता है—बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट। वहां दादी मां हैं, मल्लिक चाचा हैं और वह स्वयं भी वहीं रहता है।

यह एक अजीब अहसास है। संदीप को अपनी जिन्दगी में इस किस्म का अहसास यह पहली बार हुआ है। आहिस्ता-आहिस्ता उसने ट्राम-रास्ते की ओर कदम बढ़ाए। चलते-चलते वह उन सुनी हुई बातों पर गौर करने लगा: "मेरी शादी हो जाएगी तो तुम लोग चाचाजी को रुपया देना बंद कर दोगे, ऐसे चाचीजी किन रुपयों से गहने बनवाएंगी?"

ये बातें संदीप के दिमाग में गूंजने लगीं। कब वह बस पर चढ़ा, कब उस

बस का किराया दिया, कब उसने धर्मतल्ला की बस बदली और कब वह विडन स्ट्रीट पहुंचा, कुछ भी उसे याद नहीं था। उसके कानों में सिर्फ एक ही बात गूंज रही थी : मेरी शादी हो जाने के बाद तुम लोग चाचाजी को रुपया देना बन्द कर दोगे, तो फिर चाचीजी किन रुपयों से गहने बनवाएंगी ?

यह पाप ! पतली राह पकड़ संदीप के अनुभव के फ्रेम में केवल एक ही बात चुपके से अंकित हो गयी। वह बात है—यह पाप ! संसार में पाप किसे कहते हैं ?

समाज के अच्छे-बुरे, सुविधा-असुविधा की बातों का विवेचन कर ही हम पाप-पुण्य के अनुपात का निर्णय करते हैं। चरित्र को इस तरह गढ़ते हैं जिससे कि आदमी और समाज के बीच उच्च स्तर पर रह सकें। लेकिन आदमी की आंखों के परे क्या ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां हम तमाम लोगों के प्रवेश पर निषेधाज्ञा जारी कर सोचते हैं कि मेरे 'मैं' को कोई दूसरा नहीं देख रहा है ?

उस दिन खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन से वापस आने के दौरान संदीप को भी ठीक ऐसा ही महसूस हुआ था। वह सोच रहा था, यह जो इतने सारे लोग बस पर सफेद लिबास पहने जा रहे हैं, उनमें से किसी को यह अहसास हो रहा है कि वह अनुताप की आग में जल रहा है !

लेकिन किस चीज का अनुताप ? उसने कौन-सा पाप किया है ?

अक्सर संदीप को इसी तरह की आत्म-ग्लानि होती। किसलिए उसे आत्म-ग्लानि हो रही है, इसका पता उसे नहीं रहता। जब वह बिलकुल छोटा था, उस वक्त भी उसे इस तरह का अहसास होता।

मां कहती, "क्यों रे, चेहरा इस तरह बनाए हुए क्यों है ? तबीयत खराब है ?"

"नहीं।" संदीप कहता।

"तुमसे किसी ने कुछ कहा है ?"

"नहीं।"

"फिर ? भूख लगी है ?"

अन्ततः कोई उपाय न देखकर संदीप झूठ का ही सहारा लेता। कहता, "हां—"

"भूख लगी है तो बताना चाहिए था न।"

मां लड़के को समझ नहीं पाती। असल में संदीप को कोई भी समझ नहीं पाता। शायद उसे कोई समझना नहीं चाहता। चटर्जी भवन का भी कोई समझ नहीं पाता। उसके जैसे लड़के को समझेगा ही कौन ? संदीप को कोई बेवकूफ समझता, कोई अहंकारी और कोई शर्मीले स्वभाव का। असल में वह क्या है, खुद भी समझ नहीं पाता।

अचानक किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा, "ऐ संदीप !"

संदीप ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा। पहले एक तरह का संदेह हुआ, उसके बाद सोचा, यह कैसे संभव हो सकता है !

"मुझे तू पहचान नहीं पा रहा है ?"

"गोपाल ! तू ऐसा किस तरह हो गया ?"

सच, गोपाल कैसा तो हो गया है ! जबकि बेड़ापोता में वह कितना सहज और स्वाभाविक था। गोपाल ने उसे अपनी बांहों में भर लिया। संदीप बेड़ापोता के गोपाल के बारे में सोचने लगा। कितने ही दिन वह गोपाल के साथ नदी के किनारे घूमने जा चुका है। घूमने के लिए जाने पर कभी तीसरा पहर हो जाता और कभी शाम ढलकर रात में बदल जाती। दोनों में से किसी को इस बात का खयाल ही नहीं रहता। सिर्फ गोपाल गपशप किए चलता। कहता, "देखना, एक दिन मैं भाग जाऊंगा। तू किसी से मत बताना।"

"नहीं, किसी से नहीं कहूंगा। लेकिन यहां से भागकर कहां जाओगे ?"

गोपाल कहता, "कलकत्ता।"

"कलकत्ता जाकर कहां ठहरेगा ?" संदीप कहता, "तेरा कलकत्ता में कोई है ?"

"नहीं।"

"नहीं है तो फिर तुझे खाना कौन देगा ? रात में कहां सोएगा ? ठहरने के लिए कोई-न-कोई जगह तो होनी चाहिए।"

गोपाल कहता, "कलकत्ता में ठहरने की जगह की क्या कमी है ? रेल का स्टेशन है, वहां रात में रहूंगा। और खाना ? कलकत्ता जाने से खाने-पीने का किसी को अभाव नहीं रहता। कलकत्ता में रुपयों का अंबार है। रुपये वहां हवा में उड़ते हैं। सिर्फ चुनने की कला जाननी चाहिए।"

संदीप आश्चर्य में आकर गोपाल की बातें सुनता। कलकत्ता में कोई भोजन के अभाव में नहीं मरता। यहां इतने सारे रुपये हैं कि कोई दिन-भर सोया हुआ भी रहे तो रुपये हवा की तरह सनसनाते हुए जेब में घुस जाते हैं। नींद टूटने पर देखता है, दोनों जेब रुपये से भरे हैं। अब होटल जाकर उन रुपयों से जो भी मर्जी हो, खरीदकर खा लो। कितना खाओगे, खाओ न, कोई तुम्हें मना नहीं करेगा। कोई तुमसे यह नहीं पूछेगा कि इतने सारे रुपये तुम्हें कहां मिले।

संदीप पूछता, "वहां चोर-डाकू नहीं हैं ? कोई रुपया चुराएगा नहीं।"

गोपाल कहता, "चोरी करेगा ही क्यों ? रुपये का अभाव रहता है तभी तो आदमी चोरी करता है। वहां किसी को रुपये की कमी नहीं है।"

संदीप तब, उस छोटी उम्र में गोपाल की बातों पर विश्वास कर लेता। संदीप भी अगर किसी तरह कलकत्ता जाने में सफल हो जाएगा तो वह अपनी मां को भी साथ लेता जाएगा। फिर मां को दूसरे के घर में रसोई पकाने का काम नहीं करना पड़ेगा। वह और मां दोनों जने होटल जाकर दाल-भात-तरकारी खरीदकर खा लेंगे और आराम से सो रहेंगे। और कुछ नहीं करना पड़ेगा। उस वक्त इतनी तकलीफ उठाकर लिखने-पढ़ने का काम जारी नहीं रखना पड़ेगा। इम्तिहान में कष्ट उठाकर परीक्षा भी पास नहीं करनी होगी। उस समय उन्हें बहुत आराम मिलेगा।

उसके बाद एक दिन गोपाल से मुलाकात होने पर संदीप ने पूछा था, "क्यों, तू कलकत्ता क्यों नहीं गया ?"

गोपाल ने कहा था, "ठहर, पहले बाप को मरने दे—"

गोपाल की मां जिन्दा नही थी, लेकिन बाप था। बाप को दमे की बीमारी थी। दमे की बीमारी मे कितनी तकलीफ होती है, सदीप को यह मालूम था। रात में बहुधा जब चारो तरफ सन्नाटा घिर आता तो उस समय गोपाल के पिता की खांसी की आवाज से मुहल्ले के तमाम लोगों की नींद टूट जाती। गोपाल के भाई-बहन नही थे। वह बूढ़ा आदमी हाट के दिन हाट जाकर मिट्टी के घड़े और हांड़ी बेचता। दूसरे दिन लोगो के घर-घर का चक्कर लगाकर कितनी ही चीजों की फेरी करता। कोई बधी-बधाई चीज नही बेचता। सभी लोग गोपाल के प्रति दया-माया प्रदर्शित करते। लोग पुकारते, "हाजरा बूढ़ा— "

हाट के पास जहा स्थायी दुकानें है, वहां एक दुकान की दीवार के पास छप्पर खड़ा कर बाप-बेटे रहते। मांग-चाग कर जो कुछ भी मिल जाता उसी से वक्त मिलने पर हाजरा बूढ़ा रसोई पका लेता।

स्कूल के लड़के गोपाल से ज्यादा हेल-मेल नही बढ़ाते। मास्टर भी गोपाल की तरफ ध्यान नही देता। गरीबों पर ध्यान देता ही कौन है? सदीप पर भी कोई ध्यान नही देता। इसमे बिगड़ने या गुस्सा करने की कौन-सी बात है! सदीप ने इसे ही स्वाभाविक जानकर स्वीकार कर लिया था। गोपाल ने भी स्वीकार कर लिया था। और यही इसी बिन्दु पर दोनों एक जैसे थे। इसी सादृश्य की बुनियाद पर उन लोगों की घनिष्ठता टिकी थी। लेकिन सदीप जब काशीबाबू के घर के पुस्तकालय मे बैठ किताब के पन्नो में अपनी जिन्दगी की नाकामी की ग्लानि भूलने की कोशिश करता, गोपाल तब रुपयों का सपना देखता। हजारों, लाखों रुपये के सपने। उन रुपयो के सपने जिन्हें कमाने के लिए किसी तरह की शिक्षा-दीक्षा या परिश्रम की जरूरत नही पड़ती।

सदीप का गोपाल से हिलना-मिलना उसकी मा पसन्द नही करती, मा कहती, "तू उस हाजरा बूढ़े के लड़के से इतना हेल-मेल क्यो बढ़ाता है?"

सदीप कहता, "कौन कहता है कि मैं हाजरा बूढ़े के लड़के से हिलता-मिलता हू?"

"कहेगा कौन? उस दिन वह तुम्हे खोजने यहा हमारे घर आया था।"

इसके बाद संदीप ने गोपाल को अपने यहा आने से मना कर दिया था। कहा था, "तू भई, अब मेरे घर पर मत आना।"

"क्यो?" गोपाल ने पूछा था।

सदीप ने कहा था, "मेरी मा ने तुमसे मिलने को मना कर दिया है।"

"क्यों? मै गरीब हू इसी वजह से?"

"हां।"

गोपाल ने कहा था, "अच्छा, ठीक है, किसी दिन मैं तुम्हारी मा को दिखा दूगा कि मै भी आदमी हू, मेरे पास भी पैसा है। अगर रुपये का होना ही दुनिया मे सबसे बड़ा गुण है तो मैं रुपया कमाकर तेरी मा को दिखा दूगा। दिखा दूगा कि अमीर किसे कहते है। मैं किसी दिन कलकत्ता जाऊगा, देख लेना—"

उस समय कौन जानता था कि गोपाल सचमुच ही कलकत्ता चला जाएगा। बूढ़े गरीब बाप को बेहाला मे छोड़कर सचमुच ही कलकत्ता चला जाएगा।

और आखिरकार यही हुआ था।

एक दिन गोपाल पर किसी की नज़र नहीं पड़ी। उसके वाद से गोपाल स्कूल भी नहीं आया। उसे ढूंढ़ने के लिए संदीप भी एक दिन गोपाल के घर पर गया था। लेकिन उस समय उसके घर पर कोई नहीं था। गोपाल का वाप भी नहीं था। संभवतः सामान वेचने वाजार गया था।

उसके वाद फिर कभी गोपाल से उसकी मुलाकात नहीं हुई थी। संदीप के जीवन से गोपाल विलकुल अलग हो गया था। संदीप ने सोचा था, उसके जीवन से गोपाल हमेशा-हमेशा के लिए खो गया। और गोपाल का वाप ? वह हाजरा बूढ़ा ?

उस हाजरा बूढ़े की कितनी वेधक परिणति हुई थी ! एक दिन अचानक हाट के दिन स्थायी दुकानों की ओर से एक तरह की वदवू आकर लोगों के नथुनों से टकराई। किस चीज़ की वदवू है ? किसी को अन्दाज़ा नहीं लगा कि किस चीज़ की वदवू है। उसके वाद देखने को मिला कि हाजरा बूढ़े के घर में लाखों चींटियां कतारवद्ध होकर प्रवेश कर रही हैं। इतनी चींटियां किस स्वादिष्ट वस्तु को खाने घर के अन्दर गईं ? दरवाज़ा अन्दर से वन्द है।

हाट के लोगों ने अन्ततः सावर की चोट से दरवाज़ा तोड़ दिया। सारहीन लकड़ी का दरवाज़ा था। एकवार धक्का देते ही दो टुकड़ों में वंट गया। दरवाज़ा टूटते ही लोगों ने आश्चर्य में आकर देखा, अन्दर हाजरा बूढ़ा मर गया है। उसका पूरा जिस्म सड़कर ढोल जैसा हो गया है। लाखों-करोड़ों चींटियां मृत शरीर पर रेंग रही हैं। कव हाजरा बूढ़े की मौत हो गई, किसी को पता नहीं चला था।

संदीप अपने साथियों के साथ झुंड वनाकर देखने गया था। उस समय सवको गोपाल की याद आई थी। गोपाल होता तो इस तरह की वारदात नहीं होती। गोपाल होता तो कम-से-कम मरने के पहले बूढ़े के मुंह में पानी तो देता। हो सकता था, दवा का इन्तज़ाम भी करता।

लेकिन तव यह सव सोचने का वक्त नहीं था। जो होने को था, हो चुका था। उसी दिन वेड़ापोता की हाट के लोगों ने आपस में चंदा कर गोपाल के पिता की अंत्येष्टि कर दी थी। और उसके वाद वे लोग सारी वातें भूल गए थे। संदीप के मन से गोपाल की स्मृति धुल-पुंछ गई थी।

उसी गोपाल से इतने दिनों वाद भेंट हो जाएगी, इस पर यकीन करना मुश्किल है। इसलिए गोपाल को देखकर वह दंग रह गया था।

संदीप ने पूछा, "तू कहां रहता है—कलकत्ता में ?"

वचपन में गोपाल ने ही कहा था, कलकत्ता में रुपये उड़ते रहते हैं, वस, चुनने की कला जाननी चाहिए। कलकत्ता में हावड़ा स्टेशन पर ही सोकर जीवन विता दिया जा सकता है, मकान किराए पर लेने की ज़रूरत नहीं पड़ती। वही गोपाल कितने दिन पहले ही यहां आ गया है। वह अवश्य ही स्टेशन के प्लेटफार्म पर रहता होगा।

गोपाल ने कहा, "तू कहां रहता है ?"

संदीप ने कहा, "मैं तो विडन स्ट्रीट के मकान में रहता हूं। वारह वटे ए विडन स्ट्रीट। वेड़ापोता के परमेश मल्लिक मेरे पिता के दोस्त थे, उन्होंने ही मुझे वहां रहने की जगह दी है।"

गोपाल ने पूछा, "नौकरी करते हो ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, उसे नौकरी नहीं कही जा सकती। बंगवासी कॉलेज से बी० ए० में पढ़ रहा हूं और उस घर का छोटा-मोटा काम कर दिया करता हूं। इसीलिए कॉलेज के फीस और हाथ खर्च के लिए थोड़ी-बहुत रकम मिलती है, इसके अलावा खाना और रहना भी मैं हो जाता है। लेकिन तू कलकत्ता में क्या करता है? नौकरी?"

गोपाल ने कहा, "धत ! नौकरी करने से कहीं अमीर बना जा सकता है? मैं व्यवसाय करता हूं।"

"व्यवसाय!"

यह कहकर संदीप ने गोपाल की ओर संदिग्ध दृष्टि से देखा। गोपाल जिस किस्म की शर्ट-पैण्ट पहने है, बहुत पैसा न हो तो वह सब खरीदना मुश्किल है। पोशाक वगैरह देखते ही पता चल जाता है कि गोपाल ने व्यवसाय कर बेहिसाब रुपया-पैसा कमाया है।

संदीप ने पूछा, "किस तरह का व्यवसाय?"

गोपाल ने इस बात को नजर-अन्दाज करते हुए कहा, "यह बात तेरी समझ में नहीं आएगी। लाखों रुपये के कई तरह के व्यवसाय हैं। मैं बस-ट्राम पर नहीं चढ़ता, मेरे पास अपनी गाड़ी है।"

"तेरे पास गाड़ी है!"

"गाड़ी न हो तो कलकत्ता जैसे शहर में कहीं आना-जाना संभव है? गाड़ी बिगड़ गई है इसीलिए कारखाने में छोड़ आया हूं। जब तक मरम्मत नहीं हो जाती है तब तक बस-ट्राम पर चढ़ने की तकलीफ उठानी होगी।"

जरा रुककर फिर बोला, "और गाड़ी भी पुरानी हो गई है, इसीलिए सोच रहा हूं कि एक और नई गाड़ी खरीद लूं।"

संदीप को गाड़ी के बारे में कोई धारणा नहीं है। बेवकूफ की तरह पूछा, "एक गाड़ी की कीमत कितनी होती है जी?"

गोपाल ने लापरवाही के लहजे में कहा, "यही ग्यारह-बारह हजार के करीब।"

संदीप उसकी बात सुनकर चौंक उठा। ग्यारह-बारह हजार रुपये की बात गोपाल ने ऐसे लहजे में कही जैसे रुपये की यह रकम उसके लिए कोई अहमियत न रखती।

"तू अपना पता बता दे, मैं किसी दिन तुम लोगों के घर पर जाऊंगा।"

"इसके पहले मैं तुम लोगों के घर पर किसी दिन जाऊंगा। मैं कब कहां रहता हूं, इसका कोई ठिकाना नहीं।"

संदीप ने कहा, "तेरे पिताजी की मृत्यु हो चुकी है, इसका तुझे पता है?"

यह सुनकर गोपाल को आश्चर्य नहीं हुआ, सिर्फ इतना ही कहा, "किसी बात !"

संदीप ने कहा, "हां, तुम्हें मालूम नहीं था?"

"नहीं तो।" गोपाल ने कहा।

संदीप ने कहा, "वह बहुत ही दुखद घटना थी —"

गोपाल ने कहा, "यह कौन-सी नई बात है? उम्र होने पर आदमी मरता ही है।"

संदीप को घोर आश्चर्य हुआ। अपने पिता की मृत्यु की खबर सुनकर भी कोई इस तरह निर्लिप्त रह सकता है! बोला, "आखिर में क्या हुआ था, पता है?"

"और क्या होगा! ज़रूर ही कोई बीमारी वगैरह हुई होगी। बुढ़ापे में सभी को बीमारियां होती हैं।"

"नहीं, ऐसी बात नहीं, वाकया कुछ और ही है।"

गोपाल ने कहा, "यह सुनकर अब क्या करूंगा?"

"फिर भी सुनना अच्छा रहेगा।"

"क्यों? सुनना क्यों अच्छा है?"

संदीप ने कहा, "चाहे जो हो, आखिर थे तो तुम्हारे पिता ही।"

यह सुनकर गोपाल ने कहा, "देख, तुझे मैं पहले भी कह चुका हूं और अब भी कह रहा हूं। दुनिया में कोई किसी का नहीं होता। सो चाहे बाप हो या मां, भाई हो या बहन, असली चीज़ है..."

अस्फुट स्वर में कहा, "रुपया—"

संदीप को बोलने का मौका न देकर गोपाल फिर बोला, "भगवान-वगवान बेकार की चीज है। कोई कुछ भी नहीं है। रुपया रहे तो सारा कुछ हाथ में है। रुपया रहेगा तो मां-बाप, भाई-बहन, बेटा-बेटी सभी तुझे प्यार करेंगे।"

बस एक जगह आकर ज्यों ही रुकी, गोपाल बाहर की ओर देखकर चौंक पड़ा। कहा, "मैं चलता हूं जी, मुझे यहीं उतरना है।"

गोपाल वहीं उतर गया। उसके बाद सड़क पर खड़ा होकर बोला, "किसी दिन तेरे घर पर चलूंगा। जाऊंगा..."

तब तक बस खुल चुकी थी। संदीप चलती हुई बस में बैठे-बैठे गोपाल की बातें याद करने लगा। गोपाल यानी हाजरा बूढ़े के लड़के की बात। गोपाल ने स्कूली शिक्षा नहीं के बराबर हासिल की, लेकिन कलकत्ता शहर में वह रुपया पैदा कर रहा है, और सिर्फ रुपये ही पैदा नहीं कर रहा है, गाड़ी भी है उसके पास। गाड़ी खरीदने में तो ढेर सारा पैसा लगता है। गोपाल इतना रुपया कैसे कमाता है? अगर वह व्यवसाय करता है तो किस चीज़ का व्यवसाय? व्यवसाय की उसे किसने तालीम दी? व्यवसाय करने के लिए भी तो तालीम लेनी पड़ती है। बहुत सोचने-विचारने पर भी उसका सोच किसी नतीजे पर नहीं पहुंचा। बस तब भी बेरोक-टोक सामने की ओर दौड़ रही थी।

दो दिन तक संदीप सोचता रहा कि मनसातल्ला लेन की बात वह मल्लिक चाचा से कहे या न कहे। और कहेगा तो मल्लिक चाचा क्या सोचेंगे! उसका काम है उस घर में जाकर रुपये पहुंचा आना। इससे ज़्यादा कोई अधिकार नहीं है उसे। वह मात्र वाहक है। उसका एकमात्र काम है रुपये लेकर मनसातल्ला लेन के मकान पर जाना और तपेश गांगुली को रुपये दे देना।

लेकिन वह एक साधारण-सा काम बाद में चलकर असाधारण हो जाएगा, काश, संदीप को इसका पता होता! काश! उसे इसकी भनक मिल जाती!

मल्लिक चाचा ने सिर्फ इतना ही पूछा था, "रुपये दे आए तो?"

"हां।" संदीप ने कहा था।

"फिर हस्ताक्षर किया हुआ कागज दे दो—हिसाब के खाते में दर्ज करना है।"

संदीप से कागज लेकर मल्लिक चाचा ने रोकड़-बही में राजुबाला देवी के नाम दर्ज कर दिया। यह खर्च है। इस खर्च को बही में दर्ज करना है और हर रोज दूसरे-दूसरे खर्चों के साथ पूरे खर्च का ब्यौरा दादी मां को जाकर देना है। जमा और नाम के ब्यौरे को सुनकर दादी मां रोकड़-बही को उस तारीख के पृष्ठ पर एक लकीर खींचकर हस्ताक्षर कर देंगी।

उस दिन भी मल्लिकजी बाकायदा और-और दिनों की तरह रोकड़-बही लेकर गए थे। लौटकर आने पर मल्लिक चाचा अपने लेखा के काम में व्यस्त हो जाते हैं। उसी समय संदीप अपने कॉलेज की किताब लेकर पढ़ने बैठता है। उसके बाद दूसरे-दूसरे काम खत्म कर खाना खाने का इन्तजाम हो जाने पर खा लेता है। लेकिन उस दिन मल्लिक चाचा तीन-मंजिले से जल्द ही लौटकर आए। बोले, "ओ संदीप, तुम्हें बुला भेजा है।"

बुलावा आया है! किसलिए बुला भेजा है, संदीप की समझ में नहीं आया। संदीप के प्रश्नवाचक चेहरे को देख मल्लिक चाचा बोले, "यों मुंह बिचकाकर क्या देख रहे हो? तुम्हें दादी मां बुला रही हैं।"

"दादी मां? मुझे बुला रही हैं? क्यों?"

"तुम खिदिरपुर गांगुली बाबू के घर जाकर रुपये दे आए हो, उस सम्बन्ध में तुमसे कुछ पूछेंगी नहीं?"

संदीप ने कहा, "मैं तो आपको बता ही चुका हूं कि वहां जाकर मैं किसे रुपये दे आया हूं। सतीश बाबू की भाभी का हस्ताक्षर आपके पास तो जमा ही कर चुका हूं।"

"उसे देने से क्या होगा? दादी मां यह बात तुम्हारी जबान से सुनना चाहती हैं।"

उसके बाद मल्लिकजी के साथ संदीप को भी जाना पड़ा। फुल्सरा, काली-दासी, सुधा को पार कर एकबारगी दादी मां की खास नौकरानी बिन्दु के सीमा-क्षेत्र में।

बिन्दु ने ज्यों ही सूचना दी, दादी मां बैठक में आईं। मल्लिक चाचा और संदीप खड़े थे। बोलीं, "बैठिए मल्लिकजी!"

यह कहकर पहले खुद बैठ गईं। उन्हें बैठते देखकर मल्लिक चाचा और संदीप सामने बैठ गए।

मल्लिकजी ने ही परिचय करा दिया, "यह है संदीप। मनसातल्ला लेन जाकर संदीप ही सतीश गांगुलीजी को एक सौ पच्चीस रुपया दे आया है। अपनी रोकड़-बही में इसे दर्ज कर लिया है।"

संदीप ने उठकर दादी मां के चरणों का स्पर्श किया। संदीप को लगा, दादी मां उसके व्यवहार से सन्तुष्ट हैं। पूछा, "तुम जाकर रुपया दे आए हो?"

"हां।" संदीप ने कहा।

"रुपया पाकर बहूरानी के चाचाजी कुछ बोले?"

"नहीं।" संदीप ने उत्तर दिया।

दादी मां ने कहा, "मैंने जो पच्चीस रुपया बढ़ा दिया है, इससे वे खुश हुए ?"

संदीप ने कहा, "वह समझ नहीं सका।"

"एक सौ के बदले एक सौ पच्चीस रुपया पाकर खुश नहीं हुए ?"

संदीप ने कहा, "जबान से तो कुछ नहीं कहा। ज़रूर ही खुश हुए होंगे। खुश न होते तो ज़रूर ही कुछ कहते—"

"मेरी बहूरानी तुम्हारे सामने आई थी ?"

संदीप क्या कहे, समझ में नहीं आया। बाहर के कमरे में बैठ संदीप ने गांगुली जी के अन्तःपुर की बहुत सारी बातें सुनी थीं। उसके बाद खिड़की का दरवाज़ा खोल बाहर निकलकर विशाखा ने उसके कान में जो कुछ कहा था, उसे याद है। और सिर्फ याद ही नहीं था, बल्कि उस वक्त भी उसके सामने, उसके शरीर और मन में वे बातें बार-बार गूंज रही थीं। यही लग रहा था कि अब भी वह कान से सुन रहा है—"मालूम है, मेरे चाचा और चाचीजी तुम्हारे घर के लड़के से मेरी शादी नहीं होने देंगे—"

संदीप ने आश्चर्य में आकर पूछा था, "क्यों, क्यों नहीं होने देंगे ?"

शादी हो जाने के बाद तुम्हारे घर की मालकिन हर महीने इतने रुपये नहीं भेजा करेंगी। शादी के बाद इस तरह हर महीने रुपया आना बन्द हो जाएगा—"

"बन्द तो हो ही जाएगा—"

विशाखा ने कहा था, "रुपया आना बन्द हो जाएगा तो चाचीजी किन रुपयों से गहने बनवाएंगी ?"

इसके बाद विशाखा से और कोई बात नहीं हुई थी। संदीप बस पर सवार होकर चला आया था। और उसी दौरान बेड़ापोता के गोपाल से मुलाकात हो गई थी। गोपाल रुपया कमाने कलकत्ता चला आया था। और मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली ने भी अपनी भतीजी की शादी के कारण रुपया कमाने का रास्ता खोज निकाला है। कलकत्ता के तमाम लोग फिर क्या रुपया कमाने के उपाय में ही चक्कर काट रहे हैं ?

दादी मां ने फिर पूछा, "तुम क्या सोच रहे हो ? बातें क्यों नहीं कर रहे ? बहूरानी पर तुम्हारी नज़र पड़ी थी ? बहूरानी तुम्हारे सामने आई थी ?"

"हां।" संदीप ने कहा।

"तुम्हें वह देखने में कैसी लगी ?"

संदीप ने कहा, "अच्छी ही लगी।"

"तुमसे बहूरानी की कोई बातचीत हुई ?"

संदीप इस सवाल के जवाब में क्या कहे ? बस, इतना ही कहा, "नहीं।" झूठ बोलने में उसके शब्द गले में मानो अटक रहे हों।

दादी मां बोलीं, "अच्छा जाओ, इसके बाद वाले महीने में पहली तारीख को जब जाना तो उस समय तुम बातचीत करना, समझे ? बहूरानी चाहे बोले या न बोले, तुम खुद उससे बातें करना।"

संदीप ने एकाएक कहा, "मैं क्या बातें करूंगा ?"

"पूछना, बहूरानी कैसी है। कहना कि दादी मां जानना चाहती हैं कि दूध पी

रही है या नहीं, साग-सब्जी, फल वगैरह खा रही है या नहीं—यही सब। और यह भी पूछना कि लिखाई-पढ़ाई कैसी चल रही है! सारी बातें पूछना, समझे? सिर्फ रुपया ही पहुंचाने जाते हो? ऐसी बात नहीं। रुपया तो मनीऑर्डर से भी भेजा जा सकता है। मनीऑर्डर से न भेजकर तुम्हारे हाथ से भेजने का उद्देश्य यही है कि तुम बहूरानी को देखकर आओगे, उससे बातें करोगे। सब जरूरी बातें पूछनी हैं, इसी मकसद से तुम्हें भेजा जाता है—समझे?"

सदीप ने शांत-शिष्ट लड़के की तरह सिर हिलाकर कहा, "हां, समझ गया।"

उसके बाद मल्लिक चाचा के साथ सीढ़ियां उतरते हुए तीन-मंजिले से खजांचीखाने में आया। अपने कमरे में आ मल्लिक चाचा बोले, "तुम कैसे लड़के हो जी? तुम सिर्फ रुपया देकर ही चले आए? कुछ बोले-बतियाए नहीं?"

सदीप अपराधी की नाईं चुपचाप खड़ा रहा। कुछ भी नहीं बोला। दरअसल विशाखा से जो कुछ बातचीत हुई थी, वह किसी से कैसे कहे!

मल्लिकजी ने फिर कहा, "यह जो हर महीने इतने सारे रुपये भेजे जा रहे हैं, उन रुपयों को कौआ खा रहा है या बगुला - यह देखना नहीं है क्या? यह सब कहने की भी तुम्हें तालीम देनी होगी? तुम्हें तो अपनी बुद्धि है—तुम अब कोई बच्चे नहीं हो।"

सदीप ने पूछा, "मैं विशाखा के चाचा से यह सब कैसे पूछूं? सुनकर विशाखा के चाचा बिगड़ेंगे नहीं? वे अगर हमें जली-कटी सुनाने लगें तो?"

मल्लिक चाचा बोले, "अगर जली-कटी सुनाएंगे तो तुम्हारे शरीर में क्या फफोले उभर आएंगे?"

संदीप खामोश रहा। उसके बाद बोला, "मुझसे गलती हो गई—"

मल्लिक चाचा बोले, "नहीं-नहीं, अन्यथा मत लेना। यह सब काम जरा अक्लमन्दी से करना पड़ता है—"

मल्लिक चाचा के पास ज्यादा वक्त नहीं था। वे पुनः हिसाब के गोरखधन्धे में डूब गए।

स्कॉट लेन से कॉलेज से निकल संदीप आमहर्स्ट स्ट्रीट चला आया। इस सड़क से आते रहने के कारण सभी रास्ते उसे जबानी याद हो गए थे। यह बहुत कुछ आदमी के जीवन की तरह है। पैदा होने के बाद जरा होश आते ही आदमी बहुत कुछ देखकर उन चीजों का अभ्यस्त हो जाता है। निर्धारित समय पर सूर्य का उदय-अस्त होना, गरमियों में पसीने से तर हो जाना, सरदियों में चुभती हुई ठंडी हवा से ठिठुरना आदि घटनाएं आदमी के मन में कोई प्रभाव छोड़ नहीं पातीं। सम्पूर्ण विश्व के सभी नियम और नीतियां उसकी निगाह में एकरस जैसी हो जाती हैं।

लेकिन कुछेक ऐसे लोग हैं जिनके मन में सवाल उठता है कि सूर्य क्यों उगता है, क्यों डूबता है? क्यों सूर्य गरमियों में इतनी आग बरसाता है और सरदियों में उसी सूर्य का प्रकाश इतना मधुर क्यों लगता है?

जिनके मन में ये सवाल पैदा होते हैं वे ही कोपरनिकस और गैलीलियो बनते हैं। वे ही न्यूटन और आइन्स्टाइन होते हैं।

उस दिन संदीप के मन में केवल यही प्रश्न जग रहा था। क्यों दादी मां मनसातल्ला लेन के घर इतने रुपये हर माह भेजती हैं ? इस विशाखा में दादी मां ने ऐसा कौन-सा सौन्दर्य देखा है ?

और वह सौम्य यानी सौम्य मुखर्जी ? दादी मां का पोता ?

आदमी के बारे में भी संदीप में वैसा ही कुतूहल है। एक आदमी से दूसरे आदमी में क्यों इतना अन्तर रहता है ? ठीक एक ही जैसे दो व्यक्ति नहीं होते। जितने भी आदमी हैं उतनी ही तरह के स्वभाव हैं उनके। दो व्यक्तियों का एक-जैसा स्वभाव क्यों नहीं होता ? क्यों बेड़ापोता में हाजरा बूढ़े जैसा दूसरा आदमी नहीं था ? भैरव चट्टोपाध्याय के तमाम वंशधर एक जैसे क्यों नहीं हैं ? कोई वकील है तो कोई बैठे-बैठे सूद का पैसा क्यों खाता है ? उसकी मां जिस तरह रसोई पकाने जाती है, मुहल्ले के किसी और आदमी की मां दूसरे के घर रसोई पकाने नहीं जाती है।

और इस बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए नंबर मकान में जो लोग रहते हैं वे इतने नौकर-चाकर क्यों पाल रहे हैं ?

उस दिन संदीप की नज़र एकाएक मुन्ना बाबू पर पड़ गई। उतने बड़े मकान पर रंग-रोगन चढ़ाया जा रहा था। कुछेक राजमिस्त्री बांस का मचान बनाकर उस पर बैठे थे और मकान की शक्ल में तब्दीली ला रहे थे। यह काम हर साल एक बार किया जाता है।

संदीप बाहर के गेट से अन्दर घुस रहा था, निकट ही कोई एक आदमी खड़ा होकर शायद राजमिस्त्रियों के काम का पर्यवेक्षण कर रहा था।

संदीप पर नज़र पड़ते ही पूछा, "कौन अन्दर जा रहा है ? आप कौन हैं ?"

संदीप ठिठककर खड़ा हो गया। उस सज्जन को गौर से देखा। उसके बाद बोला, "मैं संदीप हूं।"

"संदीप !" भलेमानस पहचान नही सके। बोले, "संदीप ? संदीप का मतलब ?"

गिरिधारी दरबान ने आगे बढ़कर कहा, "हुज़ूर, ये मुनीमजी के अपने आदमी हैं।"

कहा जा सकता है कि यही मुन्ना बाबू से संदीप का पहला परिचय था। सिर्फ पहला परिचय ही नहीं बल्कि पहले-पहल रू-ब-रू होना।

संदीप ने कहा, "मेरा पूरा नाम संदीप लाहिड़ी है। मैं मल्लिकजी के काम-धाम में हाथ बंटाता हूं और रात में बंगवासी कॉलेज में बी० ए० की पढ़ाई करता हूं और मल्लिकजी के साथ रहता हूं।"

"ओह !"

संदीप ने गौर से देखने के बाद महसूस किया कि मुन्ना बाबू सचमुच ही सुदर्शन व्यक्ति हैं। इनकी मनसातल्ला लेन की विशाखा से शादी होने से सचमुच ही फबेगा। इतने सुन्दर चेहरे का आदमी संदीप ने इसके पहले नहीं देखा था।

"आपका देश कहां है ?"

संदीप ने कहा, "आपने बेड़ापोता गांव का नाम सुना है ?"

"हां।"

"आपके घर में कौन-कौन है ?"

संदीप बोला, "सिवाय माँ के मेरा कोई नहीं है। मेरे बचपन में ही पिताजी का देहांत हो गया था। मैंने पिताजी को नहीं देखा है।"

सौम्य बाबू ने पूछा, "घर की हालत अच्छी है ?"

संदीप ने कहा, "मेरी माँ बहुत ही गरीब है। अपने गाँव के चटर्जी भवन में रसोई पकाने का काम कर माँ ने मुझे लिखाया-पढ़ाया है।"

"ओह—"

यह कहकर कुछ सोचा। उसके बाद दूसरी ओर निगाह से जाकर राज-मिस्त्रियों का काम देखने लगे। लेकिन संदीप ने जैसे ही कदम आगे बढ़ाया अचानक पूछ बैठे, "और एक बात सुनते जाइए।"

संदीप ने पूछा, "मुझे पुकार रहे हैं ?"

"हाँ, आपने अपना नाम क्या बताया ?"

"संदीप कुमार लाहिड़ी।"

संदीप अब वहाँ खड़ा नहीं रहा। इसी से मनसातल्ला लेन की विशाखा की शादी होगी! उस विशाखा से जिसके मामा को संदीप उस दिन माहवारी तनख्वाह दे आया था! इसी शादी के लिए दादी माँ को इतनी दुश्चिन्ता है! इतनी गुरुदेव-भक्ति, इतने सारे रुपये-पैसे का खर्च, इतना गंगा-स्नान! इससे जुड़े हुए भविष्य के बारे में सोचकर दादी माँ इतनी उद्विग्न हैं! यह जितनी भी जगह-जमीन-जायदाद है उसका मालिक यही व्यक्ति है!

संदीप को जैसे विश्वास ही नहीं हो रहा था। जिस विशाखा के लिए वह गिरिरपुर जाकर रुपया दे आया है, जिस विशाखा ने उसके कान में कहा है कि उसके बाबाजी यह शादी नहीं होने देंगे, उसी विशाखा से इसकी शादी होगी! यह सब सोचते-सोचते संदीप मानो सोच के समुद्र में गोते लगाने लगा। वह अगर बेलोना से इस कलकत्ता में नहीं आता तो यह चीज देख नहीं पाता। संदीप को कलकत्ता आए एक लम्बा अरसा गुजर चुका है, पर सौम्य मुखर्जी जैसे खूबसूरत चेहरे का आदमी उसने नहीं देखा था।

मल्लिकजी उस समय नौकर-चाकरों से खर्च का हिसाब-किताब समझ रहे थे। जो कदमें पूजाघर में देवी के लिए फूल-बेलपत्ता दे जाता है, जो दशरथ गंगा के बाबूघाट में दादी माँ के कपाल पर चंदन का टीका लगाता है, उन लोगों की हरेक माँग और फरियाद उन्हें प्रत्येक दिन सुननी पड़ती है। उन लोगों की माँगें जिस तरह मल्लिकजी को कमोबेश मान लेनी पड़ती हैं, उसी प्रकार उन लोगों की बहुत सारी शिकवा-शिकायतों का भी निदान खोजना पड़ता है—किसी की तनख्वाह बढ़ाने की माँग सुननी पड़ती है, किसी की शिकायत की छानबीन करनी पड़ती है, किसी की बीमारी का इलाज कराना पड़ता है। उस पर मकान मरम्मत के लिए बाकायदा चूना—सुर्खी, सीमेण्ट मंगाने का काम भी उन्हें ही करना पड़ता है।

संदीप कमरे के एक किनारे खड़ा होकर यही सब देख रहा था। मल्लिकजी से यह सब बात करने के लिए मौके की तलाश में था। जिस मल्लिक की शादी के लिए मल्लिक बाबा को इतनी परेशानी उठानी पड़ रही है, जिसकी शादी के

लिए मल्लिक चाचा को काशीधाम जाकर दादी मां के गुरुदेव को कलकत्ता लाकर फिर उन्हें काशीधाम पहुंचाना पड़ा था, उस सौम्य मुखर्जी को संदीप ने अपनी आंखों से देख लिया, यही समाचार सुनाने की उसे इच्छा हो रही है।

लेकिन मल्लिक चाचा का सुबह का वक्त इसी तरह की व्यस्तता में व्यतीत होता है। उनके अनमनेपन से अगर कोई त्रुटि रह जाए तो उन्हें उसकी कैफियत दादी मां को देनी होगी।

संदीप वहां लंबे अरसे तक खड़ा रहकर इंतजार करता रहा। यह सब रोजाना घटनेवाली घटनाओं को देखकर उसकी आंखें इसका अभ्यस्त हो चुकी थीं। इस घर में इतने दिनों तक लगातार रहने के कारण संदीप समझ गया था कि जो लोग मल्लिकजी के पास आते थे उनका मात्र एक ही सरोकार था और वह था रुपये का सरोकार। शायद रुपये की जंजीर से ही सभी सर्वांग एक-दूसरे के अंचल के छोर से बंधे थे। और तभी संदीप समझ गया था कि दुनिया के तमाम लोगों को तमाम लोगों से जोड़नेवाला सूत्र एकमात्र रुपया ही है। और वह जो बेड़ापोता गांव से बारह बटे ए विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन में आया है और उसे जो खाने और रहने की सुविधा मिली है, उसके पीछे भी रुपया ही है। सिर्फ वही नहीं, दुनिया के तमाम युवक और युवतियां एक-दूसरे से रुपये के बंधन में ही बंधे हुए हैं। वरना विशाखा से सौम्य की शादी क्यों होने जा रही है? विशाखा की विधवा मां ने एक बार भी यह जानना नहीं चाहा है कि जिससे उसकी इकलौती लड़की की शादी होने जा रही है, वह कैसा आदमी है और देखने में कैसा है। जमाई को योगमाया देवी ने देखने की भी इच्छा प्रकट नहीं की है। देखना तो दूर की बात, देखने का अधिकार भी शायद उसे नहीं है। केवल यह जानकर ही खुश होना पड़ा था कि भावी जमाई के पास अगाध पैसा है और वह रुपया रहना ही उसका सबसे बड़ा गुण है। पात्र का चेहरा कैसा है, चरित्र कैसा है, उम्र कितनी है, यह मुझे जानने की जरूरत नहीं। मैं महज इतना ही जानना चाहती हूं कि जिस घर में, जिस खानदान में मेरी विशाखा की शादी होनेवाली है, उस घर की बहू होने के बाद मेरी लड़की को पैसे की तंगी का सामना न करना पड़े। मेरी लड़की सुख-स्वच्छंदता से खा-पहन सके, बस, इतना ही चाहिए मुझे।

संदीप के मन में तभी से एक प्रश्नचिह्न तैरता रहता। वह प्रश्नचिह्न उसे केवल धमकियां देता रहता। कहता : "तुम भी इस घर के दूसरे-दूसरे नौकरों की तरह एक नौकर हो। तुम्हें यह सब जानने का अधिकार नहीं है, इस घर के पोते की चाहे जिससे शादी हो, इस संबंध में तुम्हारे मन में किसी प्रकार का कुतूहल होना गलत है। तुम्हारा काम है सिर्फ हुक्म की तामील करना। तुम आंख-मुंह बंद कर केवल आदेश का पालन करते रहो, यही तुम्हारी भाग्यलिपि है।

काम की भीड़-भाड़ में मल्लिकजी से यह सवाल करने का मौका नहीं मिला। लेकिन वह सवाल मन को निरंतर बेधता रहा। मौका मिला तो तीसरे पहर जब कि मल्लिक चाचा अकेले में विश्राम कर रहे थे। दिन भर के परिश्रम के बाद मल्लिकजी तब संभवतः थककर चूर हो गए थे। संदीप ने उनके सामने बैठकर पूछा, "मल्लिक चाचा, पूरे मकान में राजमिस्त्री क्यों काम कर रहे हैं?"

मल्लिक चाचा बोले, "यह तो हर साल होता है। इस घर का हमेशा से यही

नियम रहा है।"

"इसमें तो ढेर सारा रुपया खर्च होता होगा?"

मल्लिक चाचा बोले, "सो तो होता ही है। रुपया तो खर्च करने के लिए बना है।"

"रुपया रहे तो क्या उसे बर्बाद किया जाए?"

मल्लिक चाचा बोले, "किसने तुमसे कहा कि इसमें रुपया बर्बाद होता है?"

संदीप बोला, "मकान तो नया था, पांच साल बाद राजमिस्त्री लगाने से काम चल सकता था। तब इतने सारे रुपये बच जाते।"

मल्लिक चाचा सुनकर हंस दिए और बोले, "देखो संदीप, तुम चूंकि बच्चे हो इसीलिए तुमने इस तरह की बात कही। जब तुम भारी उमरदार हो जाओगे तो समझोगे कि कभी-कभी बहुत रुपया खर्च करने से फायदा भी बहुत होता है। इस मुखर्जी भवनवालों के पास जो इतना पैसा है, वे जितने रुपये बर्बाद करेंगे उन्हें उतना ही लाभ होगा।"

"इसका मतलब? रुपया बर्बाद करने से रुपये का फायदा कैसे होगा?"

"यह सब अभी तुम्हारी समझ में नहीं आएगा।"

"कब समझ में आएगा?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "जब तुम और बड़े हो जाओगे, जब घर-संसार बसा लोगे तो समझोगे कि हमारे देश में इनकम टैक्स नामक एक चीज है। उस इनकम टैक्स के कानून के मुताबिक तुम जितना भी रुपया खर्च करोगे, जितनी शराब पियोगे, जितना रुपया उड़ाओगे तुम्हें गवर्नमेंट से उतनी ही टैक्स की सुविधा मिलेगी, तुम्हें टैक्स से रियायत मिलेगी। रियायत पाने का मतलब है लाभ। बात समझ में आई?"

संदीप की समझ में कुछ भी नहीं आया। बेवकूफ के मानिन्द मल्लिक चाचा की तरफ ताकता रहा। अब अचानक वह बात याद आ गई। संदीप ने कहा, "मल्लिक चाचा, आज इतने दिनों के बाद इस घर के मुन्ना बाबू को देखा—सौम्य बाबू को—"

"कहां?"

"यह जो मकान में रंग-रोगन लगाया जा रहा है, उसके सामने खड़े होकर मिस्त्रियों के काम का पर्यवेक्षण कर रहे थे। मुझसे पूछा कि मैं कौन हूं।"

"तुमने क्या कहा?"

संदीप ने कहा, "मैंने सबकुछ बताया। अच्छा चाचाजी, अबकी खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन की जिस लड़की के चाचा को मैं रुपया दे आया, उसी लड़की से इनकी शादी होनेवाली है? सौम्य बाबू देखने में तो बहुत ही सुंदर हैं। दोनों की जोड़ी खूब फबेगी।"

यह सुनकर मल्लिक चाचा खुश नहीं हुए। बोले, "तुम इन बातों के संबंध में सिर क्यों खपाते हो? किससे किसकी शादी होने से फबेगा या नहीं फबेगा, यह सब सोचकर तुम्हें कौन-सा लाभ होनेवाला है?"

संदीप ने कहा, "मैं सोच नहीं रहा। सिर्फ आपसे कह रहा हू—"

"नहीं, तुम्हें यह सब कहना नहीं है और न ही इसकी चर्चा करनी है।"

बातें कहने के दौरान बाधा पड़ी। राजमिस्त्री ने कमरे के अंदर आकर कहा, "मुनीमजी, हमें चार बोरा सीमेण्ट चाहिए।"

मिस्त्री और भी बहुत सारी काम की बातें कहने लगा। लेकिन संदीप को यह सब सुनना अच्छा नहीं लगा। वह इस कमरे को छोड़ दूसरे कमरे में चला गया। उसके सामने उस समय भी सौम्य का चेहरा तैर रहा था। आदमी इतना सुंदर भी हो सकता है!

उस दिन संदीप कॉलिज से ठीक वक्त पर ही वापस आ गया था। कॉलेज में भी हर क्षण संदीप सौम्य मुखर्जी का चेहरा ही याद आता रहा। उस दिन गोपाल को देखकर जिस तरह दंग रह गया था, यह भी वैसी ही स्थिति है। कॉलेज में उसके बहुत सारे दोस्त हो गए थे। तरह-तरह के युवक। उनमें से ज्यादातर नौकरी-पेशा हैं। दिन के वक्त नौकरी करते हैं और रात में कॉलेज में पढ़ते हैं। लेकिन उनसे ज्यादा बातचीत करने का उसके पास वक्त नहीं रहता। विडन स्ट्रीट भवन में रात नौ बजे के पहले वापस आ जाना पड़ता है, वरना गिरिधारी गेट बन्द कर देगा।

मल्लिक चाचा कहते, "ज़रा और पहले नहीं आ सकते? तुम्हारे लिए खाना ढंककर रखना पड़ता है।"

संदीप कहता, "फिर तो ट्राम-बस से आना होगा, बेकार का पैसा खर्च करना अच्छा नहीं लगता।"

बात तो तर्कसंगत है। संदीप स्कॉट लेन से अक्सर एक तरह से दौड़ते हुए ही आता। अमहर्स्ट स्ट्रीट पकड़कर आने से काफी समय की बचत हो जाती। अमहर्स्ट स्ट्रीट के फुटपाथ से होकर आने के दौरान वह दुकान की घड़ियों की ओर ताकता। घड़ी की सुई जितनी ही नौ की तरफ बढ़ती जाती उसकी चलने की गति में उतनी ही तीव्रता आ जाती। उसके बाद घर का गेट पार कर आंगन में घुसते ही इत्मीनान की एक लंबी सांस लेता।

गिरिधारी कहता, "आप आ गए बाबूजी?"

संदीप के साथ-साथ गिरिधारी भी इत्मीनान की सांस लेता। तब तक सिंह-वाहिनी के मंदिर में नित्य पूजा हो चुकी होती। उसके बाद ही खाना-पीना। खाने में ज़्यादा वक्त नहीं लगता। लेकिन उसके बाद नींद नहीं आती। रोशनी बुझाकर मल्लिकजी सो जाते। संदीप भी उसी कमरे में सोता। थोड़ी देर बाद मल्लिक चाचा की नाक बजने लगती। लेकिन संदीप की आंखों से नींद कतराती रहती। उस समय दुनिया-भर की चिन्ता उसके दिमाग में समा जाती। कभी मां की याद आती। मां संभवतः अब तक चटर्जी भवन से भात लाकर खा चुकी होगी और बरतन वगैरह मांजकर सो चुकी होगी।

ऊपर से सहसा दादी की मां आवाज़ आती, "गिरिधारी, गेट बंद कर दो।"

उसके बाद लोहे का गेट बंद करने की आवाज होती। उस वक्त पूरे मकान में निस्तब्धता मंडराने लगती। उस समय संदीप को लगता, किसी के इशारे पर इतना

बड़ा मकान जैसे एक मुल्लुपुरी में रूपान्तरित हो गया है। वह चुपचाप लेटा रहता। उसके बाद कितना वक्त गुजर जाता, कौन जाने! हो सकता है अभी रात के दस या ग्यारह बज रहे हैं। ठीक उसी समय मोड़े का गेट खोलने की पुनः आवाज होती।

उस दिन भी उसी तरह की आवाज हुई। लेकिन उस दिन संदीप बिस्तर पर चुपचाप लेटा नहीं रह सका। बगल में ही मल्लिक चाचा की नाक बज रही है। वह दबे पांवों बिस्तर से नीचे उतरा। उसके बाद आहिस्ता-से दरवाजे की कुंडी खोल बाहर आकर खड़ा हो गया। चारों तरफ अंधेरा तैर रहा है। देखा, बाहर के गैरेज का दरवाजा खोल गिरिधारी एक गाड़ी को ठेलते हुए गेट के बाहर सड़क पर ले आया। बगल में ही सौम्य बाबू सूट-बूट पहने खड़े हैं। गाड़ी जैसे ही बाहर रास्ते पर आई सौम्य बाबू गाड़ी के अंदर जाकर बैठ गए और उसे चलाते हुए ले गए—इस तरह कि कोई आवाज न हो।

गिरिधारी गेट बंद करने जा रहा था, लेकिन संदीप पर नजर पड़ते ही भकभका उठा।

संदीप बोला, "गिरिधारी— "

गिरिधारी ने कहा, "आप सबकुछ देख रहे थे बाबूजी ?"

संदीप ने पूछा, "यह क्या गिरिधारी ? मुन्ना बाबू यहां से गए हैं न ?"

गिरिधारी ने कहा, "आप अब तक सोए नहीं थे ?"

संदीप ने कहा, "मैं सो रहा था लेकिन अचानक गेट खुलने की आवाज सुनकर मेरी नींद टूट गई।"

गिरिधारी ने गेट बंद कर ताला लगा दिया। कहा, "किसी से कहिएगा नहीं बाबूजी। मुनीमजी को मालूम नहीं होना चाहिए।"

संदीप ने पूछा, "इतनी रात में सौम्य बाबू कहां गए ?"

अंधेरे में ही संदीप ने देखा, भय से गिरिधारी का चेहरा उतर गया है। संदीप ने फिर पूछा, "बताओ न गिरिधारी, मुन्ना बाबू इतनी रात में कहां गए ?"

गिरिधारी ने भयभीत होकर इस बात को नजरअन्दाज करना चाहा। जैसे उसने बहुत बड़ा गुनाह किया हो, ऐसा ही था उसके चेहरे का भाव। संदीप ने कहा, "दादी मां ने तो तुम्हें हर रोज रात नौ बजे गेट बन्द करने का हुक्म दिया है ?"

गिरिधारी ने कहा, "क्या करूं बाबूजी, मैं तो हुक्म का बन्दा हूं। माताजी तो रात नौ बजे गेट बंद करने का हुक्म देती हैं लेकिन मुन्ना बाबू ? मुन्ना बाबू भी मेरे मालिक हैं। मुन्ना बाबू हुक्म दें तो मैं उस हुक्म को मानने से इनकार कर सकता हूं ? वे दोनों ही तो मेरे मालिक हैं।"

इसका कोई उत्तर संदीप को नहीं सूझा। संदीप उत्तर देता ही क्या ? संदीप की अपनी हालत भी गिरिधारी जैसी ही है। दादी मां भी उसकी मालकिन हैं और सौम्य बाबू भी उसके मालिक हैं। जिस दिन दादी मां नहीं रहेंगी उस दिन तो सारी संपत्ति के मालिक यही मुन्ना बाबू—यही सौम्य बाबू—हो जाएंगे। यही सौम्य बाबू—विशाखा से जिनकी शादी होने की बात पक्की हो गई है। उस वक्त ? उस वक्त क्या होगा ? उस वक्त के बारे में ही तो सोचकर गिरिधारी को

करना होगा। गिरिधारी ही क्यों, संदीप को भी तो अपने भविष्य के वारे में कर अभी से काम करना होगा।

संदीप ने पूछा, "अभी जो सौम्य वावू गए तो फिर वापस कव आएंगे?"

गिरिधारी ने कहा, "यह मैं कैसे वता सकता हूं? रात के तीन भी वज सकते कभी-कभी रात के चार भी वज जाते हैं।"

"फिर तो तुम्हें रात-भर जगकर रहना पड़ता होगा?"

"सो तो होता ही है वावूजी। लेकिन मैं क्या करूं? हमीं लोग तो मालिक के सली नौकर हैं।"

संदीप की उत्सुकता और वढ़ गई। पूछा, "रात में मुन्ना वावू कहां जाते हैं?"

गिरिधारी ने कहा, "ईश्वर जाने, मुन्ना वावू कहां जाते हैं!"

वात तो सच ही है। संदीप को लगा, सचमुच गिरिधारी को कैसे मालूम हो सकता है कि मुन्ना वावू कहां जाते हैं। गिरिधारी तो एक अदना नौकर है। और संदीप भी तो एक नौकर के अलावा कुछ भी नहीं।

फिर भी कुतूहल क्या इतनी आसानी से दूर होता है? विस्तर पर लेटे-लेटे संदीप सोचने लगा कि सौम्य वावू इतनी रात में कहां जाते हैं? रात में उन्हें कौन-सा काम रहता है? इस तरह का कौन-सा काम हो सकता है कि दादी मां से छिपकर, वगैर किसी को जताए, इतने अमीर घर का लड़का आधी रात में घर से निकल जाता है और रात वीतने के वाद, सुवह होने के पहले ही छिपकर घर वापस आ जाता है? सौम्य वावू कहां जाते हैं? जहां जाते हैं वहां किस चीज़ का आकर्षण है? रुपये का या लड़कियों का? संदीप के इस कुतूहल का उत्तर कौन देगा?

उसके दूसरे दिन वाद से ही संदीप के पूरे मन में एक अजीव किस्म का गलत कुतूहल मंडराता रहा। फिर क्या यही मुन्ना वावू की पहचान है! यानी इसी का नाम सौम्य है—सौम्य मुखर्जी। मुखर्जी सँवसवी इंडिगा लिमिटेड के एक डाइरेक्टर की। इसी की शादी के लिए दादी मां ने खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन में एक पात्री को पसंद कर रखा है! इसी के लिए पसंद की गई पात्री को इतने वरसों से माहवारी तनख्वाह दादी मां देती रही हैं!

संदीप के मन में एक किस्म का खटका पैदा हुआ। यही अगर पात्र है तो किस तरह का पात्र है! घर के कानून के मुताविक इस घर में रात नौ वजे के वाद कोई प्रवेश नहीं कर सकता और न ही वाहर जा सकता है। फिर?

यदि इतनी रात में कोई इस घर से निकल वाहर जाता है तो दादी मां को क्या इसका पता है? या फिर दादी मा को ही सूचित करने के वाद ही मुन्ना वावू वाहर जाते हैं! वाहर निकलने के दौरान गाड़ी की आवाज़ क्यों नहीं होती? क्यों गाड़ी की इंजिन वंद कर उसे ठेलते हुए वाहर निकालना पड़ता है?

तो फिर गिरिधारी को सारी वातों की जानकारी होगी। गिरिधारी तो हुक का वंदा है। उसके लिए दादी मां जिस तरह मालकिन हैं उसी तरह मुन्ना वावू भ मालिक हैं। वह कैसे मुन्ना वावू की आज्ञा का उल्लंघन कर सकता है?

संदीप लगातार कई दिनों तक इस घटना पर नजर रखे रहा। मल्लिक बाबा जब बिस्तर पर लेटकर खर्राटे भरने लगते हैं तो संदीप बिस्तर छोड़कर खड़ा हो जाता है। हर रात उसी घटना की पुनरावृत्ति होती है। हर रात अंधेरे में गिरिधारी का गेट खोल देना और उसके बाद गाड़ी को ठेलते हुए सड़क पर पहुंचा देना और हर रात सौम्य बाबू का गाड़ी में बैठ इंजिन स्टार्ट कर धुआं उड़ाते हुए चला जाना।

हालांकि संदीप जब कॉलेज से लौटता है तो गिरिधारी तब कितना विनम्र और भला जैसा लगता है! जैसे तली हुई मछली उलटकर खाना भी नहीं जानता हो।

कहता है, "राम-राम बाबूजी, राम-राम—"

संदीप भी जवाब में कहता है, "राम-राम गिरिधारी, राम-राम—"

जो गिरिधारी रात में घूस खाकर गैर कानूनी काम करता है, सवेरे उसे देखने पर नहीं लगता कि वह इतने बड़े वर्जित गुनाह का अपराधी है। उसके चेहरे पर उस गुनाह की कोई निशानी नहीं रहती। उस समय वह नहा-धोकर, भीगा कपड़ा पहन शुद्ध होकर अपनी कोठरी में बैठकर तुलसीदास का रामचरित मानस पढ़ता है।

सीय राममय सब जग जानी।
करउं प्रनाम जोरि जुग पानी।।

उसके गले के स्वर में तब कितनी भक्ति, कितनी कातरता रहती है! जैसे वह भक्ति से गद्गद होकर रो देगा। लेकिन रात में उसका दूसरा ही रूप रहता है, दूसरा ही चेहरा! वह उस समय दूसरे ही आदमी का चेहरा पहन लेता है।

उस दिन एक कांड हो गया।

संदीप कॉलेज से निकल तेज कदमों से चला आ रहा था। नौ बजे के पहले ही वह बिडन स्ट्रीट के मकान में पहुंच जाए, उसी की चिन्ता थी उसे। अचानक अमहर्स्ट स्ट्रीट के पास आते ही चारों तरफ शोर-शराबे की आवाज सुन वह चौंक उठा। सड़क पर बहुत सारे लोगों की भीड़ है। आसपास पुलिस लाठी से लोगों को खदेड़ रही है। पुलिस के द्वारा खदेड़े जाने पर युवकों का एक दल एक तरफ भागकर चला जाता है तो ठीक उसी समय दूसरी तरफ से एक दूसरा दल आकर पुलिस पर रोड़े बरसाता है। एक ओर पुलिस है तो दूसरी ओर युवकों का दल। दोनों के बीच पड़कर संदीप दिशा का ज्ञान खो बैठा। वह रात नौ बजे के पहले घर कैसे वापिस जाएगा? अगर गेट बन्द हो जाए? अगर उसे घर के बाहर रात के लिए बाध्य होना पड़े तो? वह क्या खाएगा? कहां सोएगा? कलकत्ता शहर में उसका कोई ऐसा जाना-पहचाना मित्र नहीं है जहां जाकर वह रात बिता सके। उसके पास कुछेक रेजगारी के सिवा और कुछ नहीं है। रात में खोजने-ढूंढने पर कुछेक चाय की दुकानें या पंजाबियों के ढाबे गिने हुए मिल सकते हैं। लेकिन जेब में कम से कम दो-तीन रुपये न हों तो वह कौन-सा चेहरा लेकर उसके अन्दर जा सकता है।

एक आदमी बगल से दौड़ता हुआ भाग रहा था, संदीप ने उससे पूछा, "यहां क्या हुआ है भाई साहब?"

आदमी ने भागते हुए कहा, "भाग जाइए, पुलिस अभी तुरन्त गोली चलाएगी—"

पुलिस क्यों गोली चलाएगी, उस आदमी ने यह नहीं बताया। उतना कुछ कहकर ही वह अंधेरे में एक ही लमहे के दरमियान ओझल हो गया। इधर-उधर और कुछ लोगों को भागते और शोर मचाते देखकर संदीप के मन में एक प्रकार का भय समा गया। फिर क्या वह अमहर्स्ट स्ट्रीट छोड़ दूसरे रास्ते से जाए? आस-पास उत्तर की ओर जाने के लिए बहुत सारी संकरी गलियां हैं। किसी गली में वह घुस जाए क्या?

लेकिन इस अंधेरी रात में अनजानी गली में घुसने पर वह अगर किसी मुसीबत में पड़ जाए तो क्या होगा? बड़ी सड़क पर फिर भी कुछ न कुछ दिखाई पड़ता है। सामने और पीछे की तरफ बहुत सारे लोगों, ट्रामों और बसों की भीड़ है। वह अगर किसी मुसीबत में फंस जाएगा तो कोई न कोई उसे बचाने के लिए आ सकता है। लेकिन टेढ़ी-मेढ़ी अंधी गली में कोई अगर उसका खून भी कर दे तो कौन देखेगा! किसी के देखने के पहले ही वह मरकर भूत हो जाएगा। फिर?

संदीप ने निर्णय लिया, नहीं, वह उस रास्ते से नहीं जाएगा। सियालदह होकर प्रफुल्लचंद्र राय रोड से भी बिडन स्ट्रीट जाया जा सकता है। कर्नवालिस स्ट्रीट से भी जाया जा सकता है। हां, कर्नवालिस स्ट्रीट से ही जाना बेहतर रहेगा।

एकाएक कहीं बंदूक से गोली छूटने की आवाज़ हुई। कहीं कोई विकट आवाज़ होते ही कबूतरों के झुंड जिस तरह फटाफट पंख फैलाए उड़ते हुए जहां जिस ओर मौका मिलता है, भाग जाते हैं, उसी तरह सड़क से होकर जो आदमी जा रहे थे, उन्होंने अब देर नहीं की—जिसे जिस तरफ भी रास्ता मिला, उसी तरफ दौड़ते हुए भाग गया। महात्मा गांधी रोड में तब ट्राम-बस नहीं चल रही थी। सामने-पीछे, उत्तर-दक्खिन कहीं कोई नहीं है। सोने-चांदी की जो दुकानें इतनी रात तक भी खुली रहती हैं, हंगामे की भनक पाकर उन दुकानों के दुकानदारों ने दरवाज़े बन्द कर दिए हैं। चारों तरफ का माहौल देखकर संदीप को दहशत ने दबोच लिया। रात नौ बजे के पहले वह घर पहुंच नहीं सकेगा। अगर रात नौ बजे के पहले पहुंचना है तो उसे टैक्सी से जाना पड़ेगा। लेकिन टैक्सी के किराए का पैसा कहां से लाएगा? कम से कम चार-पांच रुपये तो लगेंगे ही। हो सकता है, उससे भी ज्यादा की मांग करे। उतना पैसा संदीप कहां से देगा?

कोई और उपाय न देखकर वह पैदल ही महात्मा गांधी रोड पकड़ सीधे कॉलेज स्ट्रीट की ओर जाने लगा। वहां से बिडन स्ट्रीट की ओर जाने में कम से कम बीस मिनट तो लग ही जाएंगे। उस समय भी मुकम्मल सड़क दहशत के गुंजलक में लिपटा हुआ था। इक्के-दुक्के लोग नज़र आ रहे हैं। कहा जा सकता है कि सभी रास्तों पर लोगों का आना-जाना कम हो गया है। थोड़ी देर बाद ही सड़कें सन्नाटे में डूब जाएंगी। उसके पहले ही उसे बिडन स्ट्रीट पहुंचना है।

कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ पर कॉरपोरेशन के बाजार के पास आते ही एक आदमी ने उसके सामने आकर पूछा, "उस ओर क्या हुआ है, बता सकते हैं भाईसाहब?"

संदीप ने कहा, "क्या हुआ है, कह नहीं सकता। अलबत्ता इतना सुनने में

आया कि पुलिस से मारपीट हुई है।"

आदमी समझ नहीं सका। पूछा, "किसलिए मारपीट हो रही है ?"

संदीप ने कहा, "यह मालूम नहीं। तब हां, उस ओर न जाना ही बेहतर है। पुलिस गोली चला सकती है।"

"क्यों ? क्या हुआ है ?"

किसी एक दूसरे आदमी ने कहा, "सरकारी बस के नीचे एक छोटा बच्चा दब गया है, इसीलिए मुहल्ले के लड़कों ने रास्ता बन्द कर दिया है। इसी सूचना के आधार पर पुलिस आई थी—"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद गाड़ी-घोड़ा सब बन्द।"

जो आदमी सियालदह की तरफ जा रहा था, यह बात सुनकर उसने उस तरफ जाने की कोशिश नहीं की। बोला, "फिर हावड़ा ही लौटकर चला जाऊं—"

पीछेवाला आदमी बोला, "अजी साहब, इतना डरने से कहीं काम चलता है ! कलकत्ता में वास करने से इस तरह के खून और जख्मों का सिलसिला चलता ही रहेगा, ऐसा होने पर क्या लोग हाथ पर हाथ धरे घर में बैठे रहेंगे ? चोर-डाकू, साधु-महंत सब-कुछ मिलाकर ही तो यह कलकत्ता है।"

यह कहकर वह आदमी अपने काम पर चला गया और जिस आदमी ने पहले सवाल किया था, उसने उसके बाद क्या किया, संदीप देख नहीं सका। यों भी देर हो चुकी है, उस पर अगर सबकी बात सुननी पड़े तो किसी का काम-धाम नहीं चल सकता।

संदीप सीधे कर्नवालिस स्ट्रीट पकड़ उत्तर की तरफ जाने लगा। आज रात मानो जैसे बहुत ही जल्द गहरा गई है, सन्नाटे में लिपट गई है। संदीप सामने का रास्ता पकड़ तेज कदमों से चलने लगा।

अचानक बगल से एक गाड़ी आकर उसके सामने रुक गई।

पूछा, "कौन है ? तू संदीप है न ?"

संदीप ने हैरत में आकर पूछा, "कौन ?"

"तू संदीप है न ?"

संदीप ने कहा, "हां, मेरा नाम संदीप है—आप कौन हैं ?"

"अरे, तू मुझे पहचान नहीं सका ? मैं गोपाल हूं—"

गोपाल हाजरा ! गोपाल गाड़ी से उतर पड़ा। उसका हाथ अपने हाथ में थाम लिया। बहुत दिनों पर मुलाकात हुई है, इसलिए बहुत खुश है।

संदीप ने पूछा, "तू कहां जा रहा है ?"

गोपाल ने कहा, "मुझे हर जगह का चक्कर लगाना पड़ता है। एक दिन तुमसे खिदिरपुर के बस में मुलाकात हुई थी। तू इधर इतनी रात में कहां जा रहा है ?"

"मैं कॉलेज से घर लौट रहा हूं।" संदीप ने कहा।

"इतनी रात में ?"

"रात ही में तो मेरा कॉलेज चलता है। लेकिन घर लौटने के दौरान एकाएक रुक जाना पड़ा। अमहर्स्ट स्ट्रीट होकर घर लौट रहा था, अचानक पुलिस गोली

चलाने लगी। लिहाजा घर लौटने में देर हो गई। इस ओर बस-ट्राम भी नहीं चल रही है, इसीलिए पैदल जा रहा हूं—"

गोपाल ने कहा, "तू देहात का लड़का है, इसीलिए इतना डर गया। कलकत्ता में कुछ दिनों तक रहेगा तो इन सबों का आदी हो जाएगा। आ, गाड़ी में आकर बैठ जा।"

"किसकी गाड़ी है?"

संदीप को शायद थोड़ा-बहुत संकोच हो रहा था। तभी उसे याद आया गोपाल के पास गाड़ी है। उसी दिन उसके मुंह से सुना था। उस बात का सबूत अभी सचमुच ही मिल गया।

गाड़ी चल पड़ी। संदीप ने पूछा, "इतनी रात में तू कहां जा रहा है?"

गोपाल ने कहा, "मैं हर रोज़ रात के समय ही गाड़ी से चक्कर लगाता हूं—"

"तू रात में चक्कर क्यों लगाता है?"

"रात में घूमना-फिरना ही मेरा काम है।" गोपाल ने कहा।

गोपाल रात में चक्कर लगाता है—इस तरह की बात उसने कभी किसी के मुंह से नहीं सुनी थी। पूछा, "रात में तुझे इतना कौन-सा काम रहता है?"

गोपाल ने कहा, "चल, चलकर देख ले। सारा कुछ अपनी आंखों से देख लेना—"

गाड़ी चलते-चलते एक जगह रुककर खड़ी हो गई। वह एक चौराहा है। गाड़ी के रुकते ही कहीं से एक पुलिस आकर वहां खड़ी हो गई। गोपाल ने उससे कुछ कहा। क्या कहा, संदीप समझ नहीं सका। लेकिन एक बात सोचकर संदीप एक बहुत बड़ी समस्या में उलझ गया। पुलिस से गोपाल की इतनी घनिष्ठता क्यों है?

गाड़ी फिर सामने की ओर बढ़ने लगी। संदीप को घूमने में बड़ा ही अच्छा लग रहा था। वह सिर्फ बेड़ापोता के पहले के गोपाल के बारे में सोच रहा था। उस दिन का वह गरीब आदमी का बेटा एकाएक अमीर कैसे हो गया, जब कि शिक्षा-दीक्षा के मामले में वह बिल्कुल शून्य है? तो क्या बगैर पढ़े-लिखे भी पैसा कमाया जा सकता है? फिर मां क्यों उसे दूसरी ही तरह की बात कहती थी? उसकी मां ने तो उसे सीख दी थी कि मन लगाकर अच्छी तरह लिखने-पढ़ने से चटर्जी बाबुओं की तरह वह भी बेशुमार पैसे का मालिक हो जाएगा। उन रुपयों से वह मां को कलकत्ता ले जाकर रखेगा। उस समय संदीप कलकत्ता में किराए पर मकान ले लेगा और मां के साथ वह आराम से उस घर में रहेगा। मगर इतने दिनों के बाद गोपाल को देखकर उसके सभी सपने और आदर्श टूटकर चकनाचूर हो गए।

एक और चौराहे के पास आने पर गाड़ी दुबारा रुककर खड़ी हो गई। गाड़ी थमते ही कहीं से एक पुलिस का आदमी आकर गोपाल के पास रुका और गोपाल ने अपनी जेब में हाथ डालकर नोटों की एक गड्डी निकालकर पुलिस के आदमी के हाथ में थमा दी। पुलिस के आदमी ने चुपचाप गोपाल को एक सलामी ठोंकी। उसके बाद गोपाल फिर गाड़ी चलाते हुए सामने की तरफ बढ़ने लगा।

एक बात संदीप कतई नहीं समझ सका कि पुलिस से संदीप का इतना हेल-मेल क्यों है? यह भी नहीं समझ सका कि गोपाल इस रात के वक्त हर जगह पुलिस

को क्यों रुपया दे रहा है।

आखिर में संदीप चुप नहीं रह सका। पूछा, "बीच-बीच में गाड़ी रोककर पुलिस को तू क्या देता है? रुपया?"

"क्यों, तू यह पूछ क्यों रहा है?"

संदीप ने कहा, "मैंने तो सबकुछ देखा। आखिर पुलिस में तेरा इतना सबंध क्यों है? पुलिसवाले बार-बार तुमसे रुपये क्यों ले रहे हैं?"

गोपाल ने कहा, "उन्हें बहुत कम वेतन मिलता है। उससे उनका खर्च नहीं चलता। इसीलिए मैं अक्सर रुपए देकर उनकी मदद करता हूं।"

"तेरे पास इतना रुपया आया कहां से? तू क्या नौकरी करता है?"

"मैं नौकरी नहीं करता, व्यवसाय करता हूं।" गोपाल ने कहा।

"उस व्यवसाय से इतना रुपया कमा लेते हो?"

"अरे, व्यवसाय में ही तो रुपया है, नौकरी से आदमी कमा ही कितना सकता है?"

"तू किस चीज का व्यवसाय करता है?"

गोपाल ने कहा, "यह सब तुम्हें किसी दूसरे दिन बताऊंगा। तू खुद व्यवसाय करना चाहता है तो बता।"

संदीप ने कहा, "व्यवसाय करने के लिए भी तो रुपये की जरूरत पड़ती है। मुझे उसके लिए रुपया कहां से मिलेगा? मुझे कौन रुपया देगा? इसके अलावा मैंने अभी तक ठीक से लिखाई-पढ़ाई भी नहीं की है।"

"लिखाई-पढ़ाई? क्या कह रहा है तू? मैं ही कितना लिखा-पढ़ा हुआ हूं? रुपया कमाने से लिखाई-पढ़ाई का कौन-सा रिश्ता है?"

संदीप को नई बात सुनने को मिली। मां तो उससे बराबर कहती आई है कि वह लिखाई-पढ़ाई करेगा तो उसे बड़ी नौकरी मिलेगी और बड़ी नौकरी मिलेगी तो वह बेशुमार पैसा कमाएगा। फिर गोपाल क्यों दूसरी ही तरह की बात कह रहा है?"

एकाएक गोपाल ने कहा, "तूने श्रीपति मिश्र का नाम सुना है?"

श्रीपति मिश्र? बहुत सोचने के बाद भी संदीप को श्रीपति मिश्र का नाम याद नहीं आया। बोला, "श्रीपति मिश्र कौन हैं? कहां के प्रोफेसर? किस कॉलेज में पढ़ाते हैं?"

"धत्त! तुझे किसी भी बात की जानकारी नहीं है। तू कुछ नहीं कर पाएगा।"

गोपाल संदीप के भविष्य के बारे में सोचकर हताश हो गया। बोला, "सच, तू कुछ नहीं कर पाएगा। अरे, प्रोफेसरों को तू पैसेवाले समझता है। हम तो उन्हें आदमी भी नहीं समझते।"

"क्यों?"

"जिनके पास रुपया-पैसा नहीं है हम उसे आदमी ही नहीं समझते। वे जानवर हैं—"

संदीप फिर भी कुछ समझ नहीं सका। बोला, "फिर आदमी कौन लोग हैं?"

"आदमी हैं तो श्रीपति मिश्र। श्रीपति मिश्र मालदा जिले के निवासी हैं।

लिखा-पढ़ा बिलकुल नहीं है। तीन बार मैट्रिक की परीक्षा दी थी और तीनों बार फेल कर गए। देश के तमाम लोग उन्हें हेय दृष्टि से देखते थे। कोई उनकी ओर नज़र उठाकर भी नहीं देखता था। उन्हें भोजन नसीब हो रहा है या नहीं, इस संबंध में भी कोई मायापच्ची नहीं करता था। आखिर में जब चुनाव जीतकर मिनिस्टर बन गए तब लोगों ने उन्हें सिर आंखों पर उठा लिया।

"क्यों? मिनिस्टर हो जाने से बहुत पैसेवाला हो जाता है?"

"नहीं होता क्या? तू क्या बक रहा है?"

"लेकिन सुना है मिनिस्टरों की तनख्वाह बहुत ज्यादा नहीं होती। ज्यादा से ज्यादा पांच सौ या छह सौ।"

"तू पागल है—घनघोर पागल!" गोपाल ने उसके संबंध में अपनी धारणा व्यक्त की।

संदीप ने कहा, "मिनिस्टरों के अधीन जो अफसर नौकरी करते हैं, सुना है, उन्हें महीने में दो हज़ार या तीन-चार हज़ार तनख्वाह मिलती है। मिनिस्टरों से उन्हें चार-पांच गुना ज्यादा वेतन मिलता है।"

गोपाल ने कहा, "यह सब गांधी-युग की बातें तू भूल जा। वह सब बेतुकी बातें ताक पर रहने दे—"

"क्यों? ये लोग भी तो कांग्रेस पार्टी के आदमी हैं।"

"धत्त! तीन बार मैट्रिक परीक्षा में फेल मालदा ज़िले के श्रीपति मिश्र महीने में कितने रुपए कमाते हैं, मालूम है?"

"कितने?"

"कम-से-कम पचास हज़ार रुपए।"

संदीप यह सुनकर चिहुंक उठा और बोला, "कैसे? रिश्वत लेकर? श्रीपति मिश्र क्या रिश्वत लेते हैं?"

"धत्त!"

संदीप की बात का जवाब देने के पहले ही गाड़ी एक और दूसरे चौराहे पर आकर खड़ी हुई और पहले की तरह ही एक पुलिस वर्दीधारी आदमी बगल में आकर खड़ा हुआ। गोपाल ने पहले की तरह ही पुलिसकर्मी के हाथ में मुट्ठी-भर नोट थमा दिए और गोपाल को सलामी दागकर अपनी जगह पर जाकर खड़ा हो गया।

संदीप सब कुछ ध्यान से देख रहा था और गोपाल से सुनी हुई बातों पर सोच रहा था। कलकत्ता आने पर जैसे उसका दिव्य चक्षु खुल गया हो। उसे कलकत्ता आए हुए इतने दिन हो गए लेकिन इस तरह की घटनाओं का उसने कभी साक्षात्कार नहीं किया था और न ही किसी से सुना था। फिर क्या कलकत्ता में सभी लोग बुरे हैं? सभी लोग क्या रिश्वत लेते हैं?

संदीप ने कहा, "एक बात बताओगे गोपाल? यह जो तुम पुलिसवालों को रुपये दे रहे हो वह क्या रिश्वत है?"

"किसने तुमसे कहा कि यह रिश्वत है?" गोपाल ने कहा।

"लेकिन रिश्वत नहीं है तो आखिर है क्या? उन रुपयों के लिए किसी ने तुम्हें रसीद नहीं दी। मैं एक भले आदमी के घर जाकर उन्हें हर महीने एक सौ पच्चीस रुपये दे आता हूं। वे तो रसीद देते हैं—"

गोपाल ने कहा, "जो लोग रसीद देते है वे ही रसीद देते हैं। जो लोग इंटेलिजेंट हैं वे रसीद नहीं देते।"

"लेकिन मैंने तो सुना है, रुपया देने पर रसीद न ली जाए तो वह रिश्वत है—"

गोपाल ने कहा, "तुझे नाममात्र की भी जानकारी नहीं है। जिसे दान कहकर दे रहा हूं उसकी रसीद अगर मांगी जाए तो उसे दान नहीं कहा जाएगा। कालीघाट में मां काली को कितने ही लोग रुपये चढ़ाते हैं, उसके लिए क्या मां काली कोई रसीद देती हैं? या पंडों से ही कोई रसीद की मांग करता है?"

जरा चुप रहने के बाद गोपाल फिर बोला, "अरे, कुछ दिन तक तू कलकत्ता में रह तो फिर तुझे भी दिव्य ज्ञान प्राप्त हो जाएगा। तू अब भी पहले जैसा ही देहाती है। पता है, इतना भला होना अच्छा नहीं होता, दुनिया में भले लोगों को बेहद दुर्गति का सामना करना पड़ता है—"

इतनी देर के बाद जैसे मानो एकाएक संदीप के नशे की जड़ता दूर हुई हो। गोपाल की कलाई घड़ी की ओर देखकर वह चिहुंक उठा। अब क्या होगा?

"तेरी घड़ी ठीक है जी?"

गोपाल ने कहा, "क्यों? अभी तो साढ़े ग्यारह बज रहे हैं। यह तो इलेक्ट्रोनिक सिप्जिन कोआटर्ज घड़ी है, डेढ़ हजार रुपये में इसे खरीदा है। खराब क्यों होगी?"

संदीप तब भय से थर-थर कांप रहा था। "मेरा सत्यानास हो गया भाई—"

"क्यों, क्या सत्यानास हुआ तेरा?"

"हम लोगों के घर का सदर फाटक रात नौ बजे बन्द हो जाता है। गिरिधारी दरबान ठीक नौ बजे गेट में ताला बन्द कर देता है। मैं घर के अन्दर कैसे जाऊंगा?"

भय से बातें करते-करते संदीप रो दिया।

गोपाल ने कहा, "एक रात तू घर के अन्दर नहीं जाएगा तो तेरी कौन-सी हानि हो जाएगी?"

"मेरा खाना ढका हुआ रखा होगा। मल्लिक चाचा चिन्तित होंगे।"

गोपाल ने कहा, "कलकत्ता शहर में खाने का कौन-सा अभाव है? क्या खाएगा, बता। बकरा, मुर्गी, बीफ, हैम—रुपया फेंकने से कलकत्ता में किसी भी वक्त खाने की चीजें मिल जाती हैं। और भूख से बेहाल होकर तू रो दिया? चल, तुझे अभी चौरंगी के होटल में ले जाता हूं। देखना, वहां लोग मेरी कितनी खातिरदारी करेंगे। चल—" यह कहकर गोपाल ने गाड़ी घुमाते हुए कहा, "बता, किस होटल में खाएगा?"

संदीप में अब गोपाल की बात का उत्तर देने की ताकत नहीं है। वह इस समय बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन के बारे में ही सोच रहा है। इतनी देर कर घर लौटने की घटना कभी घटित नहीं हुई है। सच, मल्लिक चाचा क्या सोच रहे होंगे! कलकत्ता शहर में हमेशा लोग गाड़ी से दब जाते हैं, हमेशा पुलिस की गोली के शिकार होते हैं। उसके बाद है रास्ते की रुकावट। कोई-न-कोई बहाना होना चाहिए, किसी भी मुहल्ले के लोग सड़क पर लेटकर ट्राम-बस के आने-जाने के रास्ते

को रोक देते हैं और तत्क्षण पुलिस आकर अन्धाधुन्ध गोलियां चलाने लगती है। संदीप कलकत्ता के लिए नया आदमी है। इस कलकत्ता के नियम-कानूनों से संदीप अवगत नहीं है। यही वजह है कि मल्लिक चाचा बराबर संदीप को सतर्क करते रहते हैं और कहते हैं, "खूब सावधानी से रहना संदीप, खूब सावधानी से कॉलेज आना-जाना। यह कलकत्ता शहर है, तुम लोगों का वेड़ापोता नहीं। यहां कोई किसी का भला वरदाश्त नहीं कर पाता। कॉलेज से निकल इधर-उधर ताक-झांक मत करना, सीधे घर चले आना—"

यह नहीं, खाने-पीने के वारे में भी सावधान कर दिया है। "कभी कहीं किसी दुकान में कुछ नहीं खाना चाहिए। चाय की दुकान और होटलों की यहां भरमार है। सड़क के किनारे ही वहुत सारे लोग गर्द-गुबार में वैठकर रोटी-सब्जी वनाते हैं और कितने ही लोग वेंच पर वैठकर वह सव खाते हैं। कलकत्ता भी एक तरह का पुरीधाम है। मगर तुम वह सव मत खाना। भूख लगे तो भी वह सव मत खाना, समझे? हर वक्त याद रखो कि यह कलकत्ता शहर है। कलकत्ता वंगालियों का शहर है और वंगालियों जैसे पाजी तुम्हें सारे हिन्दुस्तान में नहीं मिलेंगे। वंगाली ही वंगाली के सबसे वड़े दुश्मन होते हैं। ये वंगाली ही किसी दिन रामकृष्ण परम-हस को गाली-गलौज करते थे, ये वंगाली ही किसी दिन गायखोर कहकर विवेकानन्द की निन्दा करते थे। ये वंगाली ही सुभाष वोस को हिटलर का दलाल कहते थे…"

एकाएक गाड़ी में एक झटका लगते ही संदीप यथार्थ की दुनिया में लौट आया। संदीप ने देखा, एक विशाल इमारत के सामने गोपाल ने अपनी गाड़ी रोक दी है। कहा, "यहीं उतरना है संदीप—"

संदीप ने पूछा, "यह हम लोग कहां आ गए भाई?"

गोपाल ने कहा, "तूने कहा था कि तुझे भूख लगी है इसीलिए…"

उसके वाद संदीप की ओर देखकर गोपाल अवाक् हो गया। वोला, "तू क्या रो रहा है?"

संदीप रुलाई के आवेग के कारण कुछ जवाव नहीं दे सका। गोपाल वोला, "तू रो क्यों रहा है?"

संदीप ने कहा, "इतनी रात हो गई, अव मैं घर कैसे जाऊंगा?"

गोपाल ने कहा, "पहले तू अन्दर चलकर खाना खा ले; उसके वाद यह सव सोचना। रो मत, आंखें पोंछ ले। तुझे रोते देखकर होटल के लोग क्या सोचेंगे!"

संदीप ने आंखों के आंसू पोंछकर कहा, "मैं मल्लिक चाचा से क्या कहूंगा भाई? जव पूछेंगे कि रात में मैं कहां था तो क्या जवाव दूंगा?"

"सो सव वाद में सोचना, अभी चल, अन्दर चल—"

याद है, गोपाल के साथ अन्दर जाने पर संदीप को लगा था, जैसे वह अरवी उपन्यास के किसी आश्चर्यजनक शहर के अन्दर चला आया है। रात के कलकत्ता के अंधेरे में इतनी तड़क-भड़क और रोमांच हो सकता है, उसकी क्या उस समय वह कल्पना कर सका था! विधवा गरीव मां के भीरु पुत्र होकर जन्म लेने के अपराध के कारण जीवन-भर दु:खवोध की यातना सहते हुए जीवित रहना ही उसकी नियति है। गोपाल ने उसे उस दिन स्वप्न-लोक के परिदृश्य का साक्षात्कार

क्यों कराया था ?

संदीप ने अन्दर जाकर चारों तरफ आंखें दौड़ाई और वह बेचैन हो उठा। बोला, "मुझे यह कहां ले आया भाई ? यह कौन-सा होटल है ?"

गोपाल ने कहा, "इतने जोर-जोर से बातें मत कर। लोगों को सुनाई पड़ेगा।"

"क्यों, यहां क्या होता है ?"

गोपाल बोला, "चल, उस खाली मेज पर जाकर बैठ जाएं—"

उस समय अन्दर मर्दों और औरतों की छेड़खानी चल रही थी। संदीप देख रहा था और सोच रहा था—यह कौन-सा कलकत्ता है ? इस कलकत्ता की दरिद्रता का रूप वह सात नम्बर मनसातल्ला लेन वाले मकान में देख चुका है। और वैभव का रूप देख चुका है बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-सँसबी इण्डिया लिमिटेड के भवन में। लेकिन यह ? फिर कलकत्ता के कितने चेहरे हैं ?

और ये लड़कियां जो हुल्लड़बाजी कर रही हैं, उछल-कूद रही हैं, चिल्ला रही हैं और गिलास के लिए युवकों में छीना-झपटी कर रही हैं, कौन हैं ? उन गिलासों में लाल और नीले रंग के कौन-से पदार्थ हैं ? वे लोग क्या पी रही हैं ?

अचानक गोपाल की आवाज सुन संदीप की चेतना वापस आई।

"क्या बात है ? खा क्यों नहीं रहा है ?"

इतनी देर के बाद संदीप की नजर पड़ी कि मेज के सामने एक तश्तरी में उसके लिए कुछ रखा हुआ है। संदीप ने पूछा, "यह क्या है ?"

"तूने बताया था न कि तुझे भूख लगी है, इसीलिए तेरे लिए खाना लाने कहा था। तू तो भूख से बेहाल होकर बच्चों की तरह रो दिया था।"

संदीप ने कहा, "मैं भूख से बेहाल होकर नहीं रोया था, भय के कारण रो दिया था।"

"किसी चीज के भय से ?"

"वहीं बाबू लोगों के फाटक बन्द हो जाने के भय से। रात नौ बजे उन लोगों का फाटक बन्द हो जाता है इसीलिए—"

उसके बाद तश्तरी की ओर देखकर पूछा, "यह क्या है ?"

गोपाल बोला, "नान। नान का मायने रोटी।"

संदीप ने कहा, "यह किस तरह की रोटी है ?"

गोपाल ने कहा, "इस तरह की रोटी तूने पहले कभी नहीं खाई होगी, यह अलग ही तरह की रोटी है। खाकर देख, बहुत ही अच्छा लगेगी।"

"और यह क्या है ? यह किस चीज की सब्जी है ?"

"यह सब्जी नहीं, मांस है।" गोपाल ने कहा, "मांस का सींक कबाब।"

संदीप को फिर भी दुविधा का अहसास हुआ। पूछा, "किस चीज का मांस ?"

"चिकेन का।"

"चिकेन का मतलब ?"

गोपाल बोला, "तेरे चलते बड़ी मुश्किल का सामना करना पड़ रहा है। चिकेन का मतलब मुर्गी का।"

संदीप ने कहा, "मुर्गी ? मुर्गी का मांस तो मैं खाता नहीं—"

"नहीं खाता है तो फिर एक दिन खाकर देख ले। मुर्गी खाने से जात नहीं

चली जाएगी। सभी लोग खाते हैं।"

संदीप बोला, "नहीं भाई, मेरी मां सुनेगी तो बहुत बिगड़ेगी—मां ने बताया है, ब्राह्मण का लड़का मुर्गी खाए तो जात चली जाती है—"

गोपाल ने इस बात का विरोध नहीं किया। तिरस्कार की हंसी हंसते हुए बोला, "तेरे जैसे लड़के इस देश में पैदा होंगे तो देश रसातल में चला जाएगा। ले, जल्दी-जल्दी खा ले। मुझे जल्दबाजी है।"

संदीप ने कहा, "सच कह रहा हूं भाई, मैं यह सब नहीं खाऊंगा। मैं सिर्फ ये दो रोटियां ही खा लूंगा। थोड़ा-सा दूध मिल जाता तो अच्छा रहता—"

"क्यों, दूध से क्या होगा?"

"मैं दूध में रोटी डुबोकर खाता।"

गोपाल ने कहा, "दूध की बात कहने से ये लोग हंसने लगेंगे।"

"क्यों?"

"जो लड़कियां गिलास में लेकर जो चीज पी रही हैं, यहां वही चीज मिलती है।"

संदीप ने पूछा, "वह क्या है?"

"शराब।"

संदीप को यह सुनकर आश्चर्य हुआ। बोला, "लड़कियां यहां शराब पीती हैं?"

"लड़किया ही तो आजकल ज्यादा शराब पीती हैं।" गोपाल ने कहा।

यह सुनकर संदीप मुंह बाए आश्चर्य से देखने लगा। बोला, "सच?"

गोपाल ने कहा, "देख रहा हूं, तूने कलकत्ता का अब भी कुछ नहीं देखा है।"

सचमुच तब उसने कलकत्ता का कुछ भी नहीं देखा था। उसने बिडन स्ट्रीट का कलकत्ता देखा था और उसके बाद खिदिरपुर का मनसातल्ला लेन देखा था। साथ ही वहां के कुछ लोगों को देखा था। और जो कुछ नहीं देखा था, उनके बारे में थोड़ा-बहुत मल्लिक चाचा से सुना था। जो कुछ बाकी रह गया था उसे बंगवासी कॉलेज जाने और वहां से वापस आने के दौरान भीख मांगने का एक नया तरीका मिर्जापुर स्ट्रीट में देखा था—जहां विश्वशान्ति यज्ञ के नाम पर देवता-देवी की पूजा का आयोजन किया जा रहा था। सोचा था, उसने पूरे कलकत्ता शहर को देख लिया है।

लेकिन इस कलकत्ता के इस नजारे का बेड़ापोता में होने की कल्पना वह क्या कर सका था? यहां इतनी रात में हुड़दंग मचाकर लड़कियां जो शराब पी रही हैं, उसके बारे में सपने में भी कभी सोचा था?

दूध चूंकि यहां नहीं मिलता, इसलिए संदीप सूखी रोटी ही खाने लगा। कुछ-न-कुछ तो खाना ही है।

गोपाल ने पूछा, "तू सींक कबाब नहीं खाएगा?"

संदीप ने कहा, "वह सब खाऊंगा तो मुझे उलटी हो जाएगी। तू ही वह सब खा ले—मैंने जूठा नहीं किया है।"

गोपाल ने कहा, "ठीक है, तू नहीं खाएगा तो मैं ही खा लेता हूं। घर जाकर तो मुझे खाना खाना ही है।"

"तुझे देर तो नहीं हो रही? घर का दरवाज़ा कहीं बन्द तो नहीं हो जाएगा?"

गोपाल ने कहा, "मैं ख़ुद अपने घर का मालिक हूं, मुझे जब भी मर्ज़ी होगी, घर वापस जाऊंगा।"

"तू क्या हावड़ा स्टेशन के प्लेटफ़ार्म पर ही रात गुज़ारता है?"

"धत्त! देख रहा हूं, तुझे तो वही सब बचपन की बातें अब भी याद हैं!"

"लेकिन तूने पुलिसवालों को उतना सारा रुपया इतनी रात में क्यों दिया? वे लोग तुम्हारा कौन-सा काम करते हैं?"

"यह सब तुझे किसी दूसरे दिन बताऊंगा। उन्हीं लोगों के कारण ही सारा कुछ हुआ है। उन्हीं लोगों के कारण आज मेरे पास गाड़ी और घर है—"

फिर भी संदीप की समझ में कुछ नहीं आया। गोपाल की तरफ़ मुंह बाए देखता रहा। बोलना चाहा···

लेकिन कुछ कहने के पहले ही कमरे की तमाम रोशनियां एकाएक गुल हो गईं। पूरे कमरे में जितने भी औरत-मर्द थे, सभी शोरगुल और हो-हल्ला करने लगे। कोई-कोई सिसकारी देने लगा और किसी-किसी ने शीशे के गिलास को दीवार पर दे मारा। शीशे का गिलास टूटते ही झन्न-से आवाज़ हुई। कमरे के अन्दर एक बीभत्स कांड शुरू हो गया।

संदीप ने पूछा, "क्यों भई, बत्तियां एकाएक गुल क्यों हो गईं? चोरी-डकैती होगी क्या?"

गोपाल ने कहा, "डर मत, यह कोई ख़ास बात नहीं है।"

"मतलब?"

गोपाल ने कहा, "यह एक किस्म का तमाशा है। अब देख कि क्या होता है—"

कुछ देर तक अंधेरा रहने के बाद बत्तियां फिर जल उठीं। संदीप ने देखा, तुरन्त ही कमरे के माहौल में एक तरह की तब्दीली आ गई। जो जहां बैठा था, अब वह वहां नहीं है। किसी औरत के बदन में ब्लाउज नहीं है और किसी-किसी के बाल बेतरतीब हो गए हैं।

इसी स्थिति के बीच एक जगह ज़ोरों से चिल्लाने की आवाज़ हुई। कोई आदमी शराब के नशे में धुत्त होकर फ़र्श पर लुढ़क पड़ा है। संदीप घोर चिन्ता में डूब गया।

गोपाल ने कहा, "यह कोई बात नहीं है, यहां इस तरह की घटना होती ही रहती है।"

"वह आदमी लुढ़ककर गिर पड़ा क्या?"

गोपाल ने कहा, "इसके बारे में चिन्ता मत कर, नशे में चूर होने पर जो होता है, वही हुआ है। शराब पीना कोई बुरी बात नहीं, लेकिन इतना पीना क्या कोई अच्छी बात है!"

संदीप ने कहा, "शराब पीने से होश ही न रहे तो फिर आदमी यह चीज़ पीने क्यों जाता है?"

"जिनके बाप-दादों के पास बेशुमार पैसे हैं, वे क्या करें? पैसा न फूंकेंगे तो

क्या करेंगे ?" गोपाल ने कहा।

"किसी आश्रम वगैरह में भी तो दान कर सकते हैं। रामकृष्ण आश्रम को दे सकते हैं, अच्छे काम में खर्च होगा।"

गोपाल बोला, "उठ, अब चलें—"

संदीप उठने ही जा रहा था कि भीड़ की तरफ नज़र पड़ते ही उसका चेहरा फक् पड़ गया। कुछ लोगों ने मिलकर एक आदमी को उसके पैरों पर खड़ा कर दिया है। उस आदमी पर नज़र पड़ते ही संदीप चौंक पड़ा।

"मुन्नाबाबू हैं न ?"

गोपाल ने कहा, "उस तरफ क्या देख रहा है ? उस तरह का कांड यहां हर रोज़ होता है, तू चला आ।"

संदीप लम्बे डग भरता हुआ उस तरफ बढ़ गया। गोपाल भी हारकर उसके पीछे-पीछे जाने लगा। भीड़ के पास जाकर संदीप ने आदमी को धर-पकड़कर उठा लिया।

गोपाल ने कहा, "तू किसे थामे हुए है ?"

संदीप बोला, "अपने मुन्नाबाबू को—"

"मुन्नाबाबू कौन हैं ?"

हमारे ब्रिडन स्ट्रीट के मकान की दादी मां का पोता—मुन्नाबाबू। "मुखर्जी सैक्सबी इंडिया लिमिटेड के डाइरेक्टर। मैं तो उन्हीं लोगों के घर में रहता हूं।"

इतनी देर के बाद गोपाल को भी ताज्जुब हुआ।

बोला, "फिर तेरे घर का मालिक भी इस नाइट-क्लब में आता है ?"

संदीप ने कहा, "पहले मुझे यह मालूम नहीं था। भाग्यवश तू मुझे यहां ले आया तो देखने का मौका मिला।"

और भी बहुत सारे लोग उस समय मुन्नाबाबू को थामे हुए थे। संदीप को देखकर उन्हें हैरानी हुई। पूछा, 'आप कौन हैं ? हू आर यू ?"

सौम्यबाबू तब भी थोड़े-बहुत होश में थे। सौम्यबाबू ने संदीप को कसकर पकड़ते हुए कहा, "अरे ब्रदर, तुम भी यहां ?"

संदीप तब दोनों हाथों से कसकर सौम्य को थामे था। बोला, "चलिए, आप मेरे साथ चलिए। मैं आपको पकड़कर ले चलता हूं।"

सौम्यबाबू ने लड़खड़ाती आवाज में कहा, "मगर तुम यहां ब्रदर क्यों आए हो ? फिर तुम भी क्या डूबकर पानी पीते हो—तुम भी सिंकिंग सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर ? सभी लोग डूबकर पानी पीते हैं—कलजुग में यह क्या हो रहा है ब्रदर कलकत्ता में ?"

इस बात का उत्तर देना बेकार है। संदीप सौम्यबाबू को दोनों हाथों से थाम-कर खींचते हुए सीढ़ी की तरफ ले जाने लगा।

गोपाल कुछ देर तक इस स्थिति का जायजा लेता रहा। उसके बाद जब समझा कि संदीप अपने घर के मालिक को लेकर ही अधिक व्यस्त है तो उम्मीद छोड़ अपने रास्ते की तरफ गया। रहने दो, संदीप को अपने मुन्नाबाबू को लेकर रहने दो, अब वह अपने काम-धंधे की निगरानी कर सकता है। संदीप अब भी पहले ही जैसा उजबक है। आश्चर्य, अब तक इस उम्र में भी वह नाबालिग ही

है ! दुनियादारी में कितना बदलाव आ गया है, इसका उसे खयाल ही नहीं ! धिक्कार है ऐसे लोगों पर !!

सीढ़िया उतर रास्ते पर आते ही गोपाल ने देखा, संदीप अपने मालिक को पकड़ उसे गाड़ी के अन्दर बिठा रहा है।

गोपाल अब वहां खड़ा नहीं रहा। गाड़ी का इंजिन चालू कर अपने गंतव्य पथ की ओर रवाना हो गया।

संदीप तब सौम्य बाबू के कारण व्यस्त था। संदीप ने पूछा, "अब कैसे घर जाइएगा मुन्ना बाबू ? गाड़ी चलाकर ले जा सकिएगा ?"

सौम्य ने हंसते हुए कहा, "क्या कह रहे हो ब्रदर ! मैं तो हर रोज अपनी गाड़ी चलाता हूं। तुम क्या मेरे घर चलोगे ? डरने की बात नहीं है ब्रदर, लेकिन ताल के मामले में मैं ठीक हूं, कभी बेताल नहीं होता—"

संदीप ने कहा, "चलिए।"

नशे में चूर रहने के बावजूद सौम्य बाबू सचमुच ही होश में थे। सौम्य बाबू बेशक गाड़ी चला रहे थे किन्तु बगल में बैठे सौम्य को बड़ा ही डर लग रहा था। अगर अचानक किसी दूसरी गाड़ी को धक्का मार दें तो ? अगर कोई आदमी दब जाए तो ? फिर क्या होगा ? सौम्य बाबू के मुंह में तब जलती हुई सिगरेट थी और हाथ स्टीयरिंग पर।

गाड़ी सीधे जा रही थी। इतना जरूर है कि सौम्य बाबू के पैर लड़खड़ा रहे थे, परन्तु हाथ सधे हुए थे। सौम्य बाबू सचमुच ही मंजे हुए ड्राइवर हैं।

सौम्य बाबू ने गाड़ी चलाते-चलाते पूछा, "क्या, डर लग रहा है क्या ब्रदर ?"

संदीप मन-ही-मन चाहे जो कुछ कहे, लेकिन जबान से कहा, "नहीं।"

"[illegible]

जाओगे, [illegible]

सो मरन [illegible]

संदीप इस बात का क्या जवाब दे ! इसके बाद सौम्य बाबू फिर बोले, "क्या ब्रदर डूब-डूबकर पानी पीते हो ? मतलब कि सिंकिंग-सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर ?"

संदीप को अच्छी तरह याद है, उस दिन सौम्य बाबू रास्ता पहचानते हुए सीधे गाड़ी लेकर चले आए थे। और, संदीप बगल में बैठा सोच रहा था कि यह कैसा दैविक विधान है ! दादी मां ने अपने इसी पोते की शादी के लिए हजारों रुपये खर्च कर गुरुदेव को मनाकर जन्मपत्री दिखाई। इसी के लिए मनसातल्ला लेन के घर की विशाखा का चुनाव किया, अपनी पौत्रवधू बनाने की खातिर। और उसी की मां उन्हें इसी के निमित्त हर महीने एक सौ पच्चीस रुपया भेज रही है ? यह पियक्कड़ सौम्य बाबू ही क्या उनके वंश का दिया जलाएगा ? उनके वंश का मुख उज्ज्वल करेगा ?

लेकिन दादी मां ने तो नियम-कानून की पाबन्दी लगा दी थी। इसीलिए तो गिरिधारी को रात नौ बजे गेट बन्द कर ताला बन्द करने का आदेश दिया है। मगर उनका पोता ही यदि उस कानून को तोड़कर घर के बाहर जाकर रात बिताते हैं तो इसके लिए क्या वे जिम्मेदार हैं !

तत्क्षण संदीप के सामने विशाखा का चेहरा तिर आया। संदीप ने जैसे अपने कानों से यह वात सुनी—'तुम्हारे छोटे मुन्ना वावू से मेरी शादी नहीं होगी—'

'क्यों ?'

विशाखा ने कहा था, 'मेरी शादी हो जाएगी तो तुम लोग मेरे चाचा को हर महीने रुपया देना वन्द कर दोगे। उस समय मेरी चाचीजी किन रुपयों से अपने लिए गहने वनवाएंगी ?'

एकाएक गाड़ी वारह ए विडन स्ट्रीट भवन के सामने आकर खड़ी हुई। गाड़ी रुकते ही मुन्ना वावू गाड़ी से उतरकर डगमगाते कदमों से अन्दर घुस गए। तभी गिरिधारी ने गेट खोलकर वाहर आते ही संदीप को देखा तो वह आश्चर्यचकित हो उठा।

वोला, "वावूजी, आप ?"

लेकिन उस समय ज्यादा वोलने या उसकी वात का उत्तर देने का वक्त नहीं था। संदीप ने सौम्य वावू के दोनों हाथों को पकड़ उन्हें घर के अन्दर घुसा दिया।

सौम्य वावू उस समय भी लड़खड़ाती आवाज़ में कह रहे थे, "ब्रदर, फिर तुम भी हमीं लोगों की जमात के हो ? तुम भी शराव पीते हो ?"

यह कहकर पियक्कड़ की तरह फिक्-फिक् हंसने लगे।

उस दिन सवेरे योगमाया विशाखा को अपने साथ लिए गंगा के वावूघाट गई हुई थी। विशाखा को व्रत करने की शिक्षा देनी पड़ती है। जिस दिन से मुखर्जी भवन की दादी मां ने विशाखा के नाम हर महीने रुपये भेजना शुरू किया है, उसी दिन से विशाखा के व्रत-पालन की शुरुआत हुई है।

विशाखा वार-वार विरोध करते हुए कहती, "मैं वह सव जो-सो नहीं वकूंगी।"

योगमाया कहती, "मुंहजली, मैं तो तेरे भले के लिए ही कहती हूं वरना मुझे यह ज़ुर्रत क्यों उठानी पड़ती।"

उसके वाद लड़की से कहती, "वोल, मेरे साथ-साथ दुहराती जा—

सीता जैसी सती वनूंगी
पति मिलेगा राम सरीखा
कौशल्या-सी सास मिलेगी
दशरथ जैसा ससुर मिलेगा
देवर मुझको लक्ष्मण जैसा—"

विशाखा चेहरा लटकाए वैठी थी, कुछ वोल नहीं रही थी।

योगमाया ने डांटा, "क्यों री मुंहजली, मुंह सिए क्यों वैठी है ? गूंगी है क्या ? वोल—"

वावूघाट में चारों तरफ लोगों की भीड़ रहती है। उस दिन भी योगमाया लड़की को साथ ले घाट पर आई थी। घर पर आकर इस तरह के व्रत का समापन करने से तरह-तरह के सवाल उठ सकते हैं। इसीलिए जिस दिन समय और सुयोग

मिलता है, योगमाया विशाखा को लेकर गंगा के बाबूघाट आती है। यहां आकर घाट के एक किनारे बैठ लड़की से व्रत कराती है। भगवान ने लड़की के भाग्य से अगर एक वर का जुगाड़ कर दिया है तो लड़की अपने भाग्य के दोष से उसे कहीं खो न दे। सुयोग और सुविधा मिलते ही योगमाया मन-ही-मन ईश्वर से गुहार करती है : "भगवान, तुमने दया की है तो इतना जरूर खयाल रखना कि मेरी विशाखा शादी के बाद सुखी होवे। मेरे सिवा विशाखा का कोई नहीं है, तुम उसकी रक्षा करो, रक्षा करो भगवान—।"

मगर लड़की पर मां का कोई असर नहीं पड़ता। मां की एक बात पर भी ध्यान नहीं देती। लड़की कहती, "तुम भगवान की इतनी गुहार क्यों करती हो, सुनूं? भगवान क्या कान से सुन पाते? तुम्हारे भगवान तो बहरे हैं—"

"चुप रह मुंहजली! देवी-देवता को गाली देने से तेरा क्या भला होगा?"

विशाखा भी हार माननेवाली नहीं है। कहती है, "तुम्हारे भगवान यदि इतने अच्छे हैं तो मेरे पिताजी का देहान्त क्यों हो गया? तुम्हें चाचीजी क्यों इतनी खरी-खोटी सुनाती हैं? क्यों तुम्हें दूसरे के घर में रसोई पकानी पड़ती है?"

"चुप रह मुंहजली, सोटे से तेरा दांत तोड़ दूंगी। जितना बड़ा मुंह नहीं, उतनी बड़ी बात! भगवान अगर सुन नहीं पाते हैं तो फिर किसने तुम्हारे लिए वर का जुगाड़ कर दिया? किसने इतने बड़े आदमी के घर तेरी शादी का रिश्ता तय कर दिया? किसने किया, बता?"

विशाखा कहती है, "तुम इसी खुशी में मगन रहो। मेरी शादी क्या उस घर में होगी?"

"क्यों, होगी क्यों नहीं? तूने तो उन लोगों के घर जाकर देख लिया है। काशी से गुरुदेव ने आकर बताया है कि वहां तेरी शादी होगी ही।"

"खाक होगी! मेरी शादी वहां नहीं होगी।"

"किसने तुमसे कहा कि नहीं होगी?"

विशाखा कहती है, "क्यों होगी? शादी होते ही वे लोग चाचा जी को माहवारी रुपया देना बन्द कर देंगे। हर महीने एक सौ पच्चीस रुपया आना बन्द हो जाएगा तो चाचीजी कैसे गहने बनवाएंगी?"

यह सब बात सुनने में योगमाया को अच्छी नहीं लगती। कहती है, "इत्ती-सी बच्ची की बड़े-बुजुर्गों जैसी बात! लड़कियों का बड़े-बुजुर्गों जैसा बतियाना ठीक नहीं होता। समझ गई, तेरे कपाल में बहुत दुख है—तो फिर मैं क्या कर सकती हूं या मेरे ईश्वर ही क्या कर सकते हैं! देखना, तुझे अपनी इस तरह की बातों के चलते ही जलकर मरना होगा, यह बात आज मैं कहे देती हू—"

फिर भी योगमाया प्रयास करने से बाज नहीं आती। किसी दिन खूब सवेरे ही नींद टूट जाती है तो विशाखा को लेकर गंगा के बाबूघाट जाकर व्रत कराती। कितने प्रकार के व्रत हैं, इसका क्या कोई अन्त है? हर मास, हर ऋतु में अलग-अलग किस्म के व्रत। विशाखा समझ नहीं पाती और न समझना चाहती कि उन व्रत-कथाओं का अर्थ क्या है, तो भी मां से मार खाने के भय से करती जाती। 'पुण्य जलाशय व्रत', 'कुल कुलती व्रत', 'शिवरात्रि व्रत', 'षष्ठीदेवी पचमी व्रत', 'रामनवमी व्रत', 'जल संक्रांति व्रत'. 'अक्षय तृतीया व्रत', 'सत्यनारायण व्रत',

'हितसाधिनी व्रत'—व्रत-कथा का कोई अंत है भला !

सारे व्रत मां को ज़बानी याद हैं। लेकिन देवर के घर में व्रत-कथा का उपाय नहीं है। तरह-तरह के आदमी तरह-तरह के सवाल करेंगे। योगमाया के खुद के जीवन में व्रत-कथा की स्तुति का कोई अच्छा फलाफल चरितार्थ नहीं हुआ था। भले ही उसके जीवन में अच्छा फल चरितार्थ न हुआ हो, लेकिन विशाखा के जीवन में चरितार्थ हो। विशाखा पति-पुत्र-कन्या लेकर जिससे कि घर-गृहस्थी चला सके। यही वजह है कि योगमाया गंगा के बाबूघाट पर अपनी लड़की से व्रत कराती है। कहती है, "बोले, मेरे साथ-साथ बोल—

सीता जैसी सती बनूंगी
पति मिलेगा राम सरीखा
कौशल्या-सी सास मिलेगी
देवर मुझको लक्ष्मण जैसा···"

हर रोज़ भोर-वेला में बाबूघाट में स्नान, पूजा, आह्निक, जप-तप करने के लिए लोग जमा हो जाते हैं। लेकिन इस बीच विशाखा का व्रत-पाठ समाप्त हो जाता है। विशाखा चारों तरफ आंखें दौड़ाकर कहती है, "मां, वे लोग हमारी ओर देख रहे हैं।"

"देखने दो, इससे तुम्हारा क्या आता-जाता है ?" योगमाया कहती है।

विशाखा कहती है, "वे लोग देखते हैं तो मुझे शर्म लगती है।"

योगमाया फिर भी एक ही उत्तर देती है, "देखने दे— मैं जो कह रही हूं, तू यही दोहराती जा—"

योगमाया को हर रोज़ स्नान करने के लिए जाने का सुयोग नहीं मिलता। जिस दिन घर में गृहस्थी के काम-धाम का ज़्यादा दबाव रहता है, उस दिन योगमाया को व्रत करने का समय नहीं मिलता। घर में योगमाया को क्या एक ही काम रहता है ? खाने-पीने के लिए कुल मिलाकर पांच जने हैं। पांच ही जने होने से क्या होगा, काम तो सिर्फ एक ही आदमी को करना पड़ता है। राशन की दुकान से हफ्ते में एक बार राशन लाना पड़ता है। राशन लाने कौन जाएगा ? कौन चक्की से गेहूं पिसवाने जाएगा ? केरोसिन तेल की दुकान में कतार में किसे खड़ा होना है ? कौन महीने-भर की बिजली का बिल देने जाएगा ? बस, एक योगमाया ही है जिसे यह सब काम करना पड़ता है। बाज़ार से गृहस्वामी भले ही सरो-सामान ले आते हैं, लेकिन कौन सब्ज़ी काटेगा ? कौन मछली काटेगा ? इन कामों को योगमाया को ही करना है। इसके बाद इतने लोगों के बनियान, रूमाल, जांघिये, तौलिए, तकिए के गिलाफ, साया और ब्लाउज़ों को साबुन से कौन फींचेगा ? योगमाया। खाना खाने के बाद बरतन, करछी, छलनी, सड़ासी कौन मांजेगा ? योगमाया।

इतना काम करने के बावजूद योगमाया अपनी देवरानी का मन जीत नहीं पाती है। उसे बहुत दिन पहले की विशाखा के पिता की बातें याद आतीं।

विशाखा के पिता मरने के पहले कह गए थे, "देखो बड़ी बहू, मैं तुम्हारे लिए कुछ रखकर नहीं जा पा रहा हूं तो इसके लिए तुम चिन्ता मत करना। मेरा भाई तपेश तो है ही। मैंने अपनी सारी कमाई खर्च कर तपेश को लिखाया-पढ़ाया है, उसे

योग्य बनाया है। यार बेटे के लिए जो कुछ करता है, पिताजी के न रहने पर मैंने बड़े भाई के नाते पिता का ही फर्ज पूरा किया है। सरकारी दफ्तर में उसे स्थायी काम पर नियुक्त करा दिया, उसकी शादी करा दी। वह तुम्हारी देखरेख करेगा, तुम्हारे लिए डरने की कोई बात नहीं—"

बहुतों के पति जीवित नहीं रहते। योगमाया ने सुना है, पति के न रहने पर पुराने जमाने में उसकी पत्नी भी मृत्यु का वरण कर लेती थी। यही अच्छा था ! पीड़ा का अहसास होता था, लेकिन कुछ क्षणों के लिए ही। मगर यह दर्द, यह यातना तो हमेशा जीनी पड़ती है। यह भी क्या एक किस्म का सती-दाह नहीं है ?

जितनी भी परेशानी है, इस विशाखा की वजह से ही। काश, विशाखा लड़की के बदले लड़का होती ! तो फिर भविष्य की कोई उम्मीद रहती। लड़के के बड़े होने पर उसकी शादी करने के बाद बहू से सेवा पाने का एक क्षीण भरोसा भी रहता। लेकिन लड़की ? चूंकि लड़की है इसलिए उसकी शादी की समस्या है। उस समस्या का समाधान कौन करेगा ?

यही वजह है कि योगमाया विशाखा को उसके छुटपन में ही गंगाघाट ले जाकर छिप-छिपकर व्रत कराती।

शुरू-शुरू में विशाखा कहती, "बिजली तो व्रत नहीं करती, फिर मैं क्यों करूं ?"

योगमाया कहती, "वह चाहे न करे, पर तुम किया करो।"

"मेरे स्कूल की कोई लड़की व्रत नहीं करती—चाहे वह बिजली हो, शिप्रा हो, वासन्ती हो या वंदना हो। सिर्फ मैं ही क्यों करूं ?"

योगमाया कहती, "उनके अपने-पराए हैं। वे क्यों करें ? उनके पिता, भाई और बहन हैं। लेकिन तुम्हारा कोई नहीं है बिटिया। जिसका कोई नहीं, उसके लिए भगवान हैं। इसीलिए तुम्हें व्रत करने कहती हूं—"

"मेरा कोई क्यों नहीं है मां ?"

योगमाया कहती, "हर आदमी के क्या अपने लोग जीवित रहते हैं बेटी ? तुम व्रत करती जाओ, देखना, जब तुम्हारी घर-गृहस्थी हो जाएगी तो सब कुछ हो जाएगा। पति होगा, ससुर होगा, सास होगी, देवर होगा, बाल-बच्चे होंगे—धन-जन से तुम्हारा संसार गुलजार हो जाएगा। सोना, चांदी, हीरे, मोती से तुम्हारा घर उजागर हो जाएगा।"

विशाखा कहती, "तुम छुटपन में व्रत करती थी ?"

"हां, मेरी मां भी मुझसे व्रत कराती थी।"

"फिर तुम्हारी शादी क्यों नहीं हुई ?"

इस पर योगमाया कहती, "अब बातें मत करो, काफी रात हो चुकी है। अब सो रहो। कल तुम्हें फिर अपने साथ ले गंगाघाट जाना है। कल तुम्हें फिर व्रत करना है।"

इसी तरह चल रहा था। ऐसे में ही विशाखा विडन स्ट्रीट के मुखर्जीभवन की मालकिन की आंखों में जच गई थी। व्रत करने के बाद विशाखा जब दशरथ पंडा के पास अकेली खड़ी थी, उस समय वहां आकर बिन्दु उसका नाम, उसके बाबा का नाम, घर का पता वगैरह पूछकर चली गई थी। और उसके बाद ही

परमेश मल्लिक खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के मकान में गए थे और विशाखा की जन्मपत्री मांगकर ले गए थे।

उसके वाद जव उस घटना की जानकारी देवरानी को प्राप्त हो गई तो वह अक्सर वीमार रहने लगी। उसका वदन दर्द से टूटने लगा, उसके सिर में दर्द होना शुरू हो गया। तव से रानी ने भी विजली से व्रत कराना शुरू कर दिया। व्रत करने से अगर वड़े आदमी के घर में सम्वन्ध पक्का होता है तो फिर विजली भी व्रत करे।

एक दिन रानी ने कहा, "तुम्हारी लड़की के साथ अगर विजली भी व्रत करे तो तुम्हारी कोई क्षति नहीं होगी वड़ी दी। विजली तो तुम्हारे संगे देवर की लड़की है! मानती हूं, मैं पराई हूं, दूसरे के घर से आई हूं, मगर तुम्हारा देवर तो दूसरे के घर से नहीं आया है। वह भी तो तुम्हारे ही ससुर का वेटा है और विजली भी तो तुम्हारे ससुर की ही पोती है। उसने कौन-सा गुनाह किया कि उसका तुम खयाल ही नहीं रखतीं? और, अगर खर्च वगैरह की वात कहो···"

योगमाया ने देवरानी की वात में वाधा डालते हुए कहा, "इस तरह की वातें मत करो वहन। इससे मेरी विशाखा को पाप होगा। देवरजी ने हम लोगों के लिए जो कुछ किया है, उसका कर्ज़ क्या मैं ज़िन्दगी में उतार पाऊंगी? ईश्वर ने मुझे क्या वह सामर्थ्य दी है?"

रानी वोली, "इतना रोओ मत वड़ी दीदी, इतना रोना रोकर गृहस्थ का अमंगल मत करो। वहुत हो चुका—"

इसके वाद योगमाया ने इस वात की चर्चा नहीं की थी।

सो एक जने का व्रत करना जैसा है, दूसरे का भी वैसा ही है। उसके वाद योगमाया जव भी गंगा के वावूघाट जाती, दोनों को अपने साथ ले जाती। दोनों को व्रत कराना सिखाती। विशाखा को जितना अच्छा दूल्हा मिला है, विजली को भी मिले। इससे देवरानी भी खुश होगी।

तभी से सवेरे-सवेरे घर में चहल-पहल मच जाती। देवरानी विजली को सजा-संवार देती और विशाखा को उसकी मां योगमाया सजा-संवार देती। स्वास्थ्य अच्छा रहता तो हो सकता था, विजली की मां भी विजली को अपने साथ लेकर जाती। लेकिन चूंकि यह संभव नहीं था, इसीलिए जेठानी पर ही भरोसा करना पड़ता।

स्नान कर विजली जैसे ही घर आती, रानी उससे पूछती, "किसी ने तुझसे कुछ पूछा था?"

विजली कुछ समझ नहीं पाती। कहती, "क्या पूछेगा?"

रानी कहती, "जो लोग घाट पर स्नान करने गए थे, उनमें से किसी ने तुमसे कुछ भी नहीं पूछा? तुम्हारे पिता का क्या नाम है, कहां किस मुहल्ले में रहती हो—यह सव किसी ने नहीं पूछा तुमसे?"

विजली कहती, "नहीं।"

रानी कहती, "यह क्या, तुझे इतने सलीके से सजा-संवार दिया, सिल्क का फ्रॉक पहना दिया, फिर भी किसी ने कुछ नहीं पूछा?"

छोटी-सी लड़की, मां के इस प्रश्न का कारण समझ नहीं पाती। हर रोज़

कहती, "अगर कोई कुछ नहीं पूछता है तो मैं क्या करूं ?"

"क्यों, घाट पर दूसरे-दूसरे लोग काफी तादाद में नहीं थे क्या ? बड़े घर की कोई बूढ़ी औरत स्नान करने नहीं आई थी ?"

बिजली कहती, "यह मैंने देखा नहीं था।"

रानी बिगड़कर कहती, "यह तुम देखोगी ही क्यों ? जैसी मेरी फूटी तकदीर है वैसी ही है मेरी यह शोख लड़की ! सभी मुझे सता-सताकर मार डालेंगे, सभी छोड़ेंगे।"

यह कहकर व्याकुल हो जाती और बिस्तर पर जाकर निढाल पड़ जाती।

उस दिन सवेरे से ही मल्लिकजी के कमरे में लोगों का तांता लगा हुआ था। माहवारी वेतन का दिन। एक-एक कर हर कर्मचारी आकर मुनीमजी से वेतन लेकर जा रहा है। यह वेतन लेने का सिलसिला केवल सुबह तक जारी नहीं रहता, एक तरह से दिन-भर चलता रहता। जब जिसे काम से फुर्सत मिलती, आकर ले जाता। सबसे पहले मंदिर का पुरोहित आता। उसे सुबह के वक्त कोई काम नहीं रहता, जो भी काम रहता वह तीसरे पहर के बाद से ही। सवेरे कंदर्प फूल बेलपत्ता लेकर आता। वह सब हर रोज हिसाब करके ले लेता और बेंत की टोकरी में रख कामिनी को दे देता। यह सब फूल-बेलपत्ते दिन-भर कामिनी के जिम्मे रहते। उसके बाद आरती आदि जो करने को होता, पुरोहित करता। वह पांच मिनट का काम रहता। यह काम होते ही कामिनी को सारा काम सौंपकर पुरोहित अपने काम पर चला जाता। उस समय दूसरे मुहल्ले के किसी घर में छोटी-मोटी पूजा का आयोजन चलता। इससे पुरोहित को कुछ अतिरिक्त आय हो जाती।

मल्लिकजी ने उस दिन भी सबको महीने भर का वेतन दिया। एक-एक कर कामिनी, गिरिधारी, एकमंजिले की फुलरा, दो-मंजिले की नौकरानी कालीदासी, तीन-मंजिले की सुधा और दादी मां की खास नौकरानी बिन्दु आए। आने को कोई बाकी नहीं रह गया। इसके बाद बहुत देर के बाद बाबूघाट का पंडा दशरथ आया। जिसको जो प्राप्य राशि है, मल्लिकजी ने दे दी। काम का दबाव जब कुछ कम हुआ तो संदीप की याद आई।

अरे हां, संदीप तो कल रात घर नहीं लौटा था ! शाम के समय वह हर रोज की तरह कॉलेज गया हुआ था। उसके बाद तो वह नहीं आया था !

पूजा घर में शाम के वक्त आरती के दौरान तीन-मंजिले से दादी मां ने नीचे आकर हर रोज की तरह पूजा-पाठ देखा और देवी को प्रणाम करके चली गईं। उसके बाद सबको प्रसाद बांटा गया। उसके बाद घड़ी में क्रमशः सात, आठ और नौ बजे। उसके बाद रसोईघर से दोनों जनों को खाने के लिए बुलाहट आई। मल्लिकजी और संदीप का खाना परोसा दिया गया है।

मल्लिकजी बोले, "महाराजजी, संदीप तो अभी तक आया नहीं। आएगा तो हम दोनों एक साथ खाना खाएंगे।"

महाराज बोला, "आप खा लीजिए वरना हमारा काम सिमट नहीं पाएगा।

का खाना ढंककर रख दूंगा। वे आकर खा लेंगे।"
ात तो सही है। बहुत सोचने-विचारने के बाद उन्होंने खाना खाकर महाराज
ही दे दी। लेकिन मन में चिन्ता घुमड़ती रही। ऐसा तो कभी नहीं होता
संदीप बराबर रात नौ बजे के आस-पास ही घर लौट आता था। वह जानता
ठीक नौ बजे गिरिधारी फाटक बन्द कर देता है। फिर भी उसे देर हो रही

आखिर में उन्होंने गिरिधारी को पुकारा। बोले, "गिरिधारी, संदीप बाबू तो
ी तक घर लौटकर नहीं आए। तुम तो घड़ी देखकर ठीक रात नौ बजे गेट बन्द
र दोगे। उसके बाद अगर बाबू घर लौटते हैं तो फिर क्या होगा?"

गिरिधारी इस बात का क्या उत्तर दे!

मल्लिकजी बोले, "हो सकता है बाबू को कहीं रुक जाना पड़ा हो। आजकल
हां क्या हो जाएगा, कहा नहीं जा सकता। बाहर से किसी को कुछ मालूम भी
हीं हो पाता है। सो अगर मैं सो भी जाऊं तो ज़रा गेट खोल देना। समझे?"

गिरिधारी ने कहा, "मैं गेट खोल दूंगा—आप चिन्ता नहीं कीजिए।"

यह कहकर गिरिधारी चला गया था। फिर भी मल्लिकजी चिन्ता किए बगैर
कैसे रह सकते हैं? दिन-भर के कठोर परिश्रम के कारण नींद से आंखें बोझिल हो
जाती हैं। लेट तो गए ज़रूर मगर कानों को सतर्क रखा। दूसरे के लड़के को अपने
पास लाकर रखा है, अगर वह किसी विपत्ति में फंस जाता है तो दोष उन्हीं पर
मढ़ा जाएगा। आजकल बात-बात पर जिस तरह बम और पटाके छूटते हैं इसकी
वजह से किस पर कौन-सी आफत आ जाए, पहले से कुछ कहा नहीं जा सकता।
तरह-तरह की बातें सोचते-सोचते कब वे गहरी नींद में खो गए, उन्हें याद नहीं
रहा। सवेरे घर के कामगारों और कर्मचारियों को वेतन देने का पैसा वे दोपहर में
ही बैंक से निकालकर ले आए थे।

और उसके बाद जब उनकी नींद टूटी तो सुबह का उजास फैल चुका था।
रात में उन्हें कोई पता नहीं चला था। एकदम से मुरदे की तरह सो गए थे। उसके
बाद जल्दी-जल्दी मुंह-हाथ-पैर धोकर सुबह के सारे काम निबटाकर जैसे ही कोपा-
गार में आए, कंदर्प आकर हाज़िर हो गया। कंदर्प के जाने पर पुरोहित आया।
उसके बाद एक-एक कर कामिनी, फुल्लरा, कालीदासी, सुधा, विन्दु और गिरिधारी
आए तथा अंगूठे का निशान देकर मासिक वेतन ले गए।

गिरिधारी पर नज़र पड़ते ही उन्हें संदीप की याद आ गई। पूछा, "अच्छा
गिरिधारी, संदीप क्या कल रात घर लौटा था?"

गिरिधारी इस बात का तत्क्षण कुछ उत्तर नहीं दे सका।

मल्लिकजी ने फिर पूछा, "लौटा था या नहीं?"

यह कहकर कुछ चिन्तित हो गए। दूसरे के लड़के को अपने पास लाकर रखने
से इसी तरह की मुसीबत का सामना करना पड़ता है। सिर्फ खाने-पीने-पहनने का
ही इन्तज़ाम नहीं करना है, उसके भले-बुरे की भी तो जिम्मेदारी उठानी है।

उसके बाद बोले, "कहां गया वह! ऐसा तो कभी नहीं होता था। गाड़ी के
नीचे दब गया या पुलिस ने पकड़ लिया या अस्पताल चला गया बम-गोली की
चोट से ज़ख्मी होकर? आजकल तो कलकत्ता में सब कुछ मुमकिन है।"

इतनी देर बाद गिरिधारी ने कहा, "बाबूजी घर लौट आए हैं, मुनीम बाबू।"
"घर लौट आया है? कहां है? कब लौटा? रात में या सवेरे?"
"कल रात दो बजे।" गिरिधारी ने बताया।
"रात दो बजे?"
"जी हुजूर।"
"यह तुमने बताया क्यों नहीं था?"
गिरिधारी अपराधी के मानिन्द मुनीमजी के सामने चुपचाप खड़ा रहा।
"कहां, सदीप कहां है?"
गिरिधारी ने कहा, "बाबूजी मेरे कमरे में सोए हुए हैं।"
"तुम्हारे कमरे में? क्यों?"
गिरिधारी ने कहा, "मालकिनजी को मालूम हो जाएगा तो बिगड़ेंगी, इसी-लिए बाबूजी को चुपके से अपने कमरे में सुला दिया हुजूर।"
यह सुनकर मल्लिकजी बहुत देर तक खामोशी में डूबे रहे। उसके बाद चेतना लौटने पर पूछा, "घर आने में देर क्यों हुई, इसके बारे में संदीप ने कुछ बताया था?"
"सो तो पूछा नहीं था, हुजूर।" गिरिधारी ने कहा।
मल्लिकजी ने पूछा, "अभी वह कहां है?"
गिरिधारी ने कहा, "वे अब भी मेरे कमरे में सोए हुए हैं।"
मल्लिकजी ने कहा, "अच्छा ठीक है। अभी जगाने की जरूरत नहीं। नींद टूटने पर मेरे पास भेज देना।"

यह सब कितने पहले की बात है! लेकिन अब भी संदीप को प्रत्येक छोटी-मोटी घटना याद है। उस बारह बटे ए, बिडन स्ट्रीट के मकान में वह कितने दिन, महीने और साल गुजार चुका है! कितने आनन्द-विषाद, कितने सुख-दुख और कितनी आशाओं और भय के बीच जीवन जी चुका है, उसकी एक-एक बात अभी उसे याद आ रही है। उस दिन गिरिधारी ने जब उसे जगाया तो वह हड़बड़ाकर उठ बैठा था। सोचा, वह कहां सोया हुआ है! गिरिधारी का कमरा कोई खास बड़ा नहीं है। एक या ज्यादा से ज्यादा दो आदमी उस कमरे में रह सकते हैं। कमरे के अन्दर गिरिधारी के तरह-तरह के सामान भी थे। कहा जा सकता है कि एक ही कमरे के अन्दर उसकी पूरी गृहस्थी थी। वह वहां सिर्फ सोता ही नहीं है बल्कि गृहस्थी भी चलाता है—रसोई पकाता है, रामचरित मानस का पाठ करता है, आराम करता है। एक वाक्य में कहा जाए तो वह कमरा ही उसकी दुनिया था। संदीप बहुत बार गिरिधारी के कमरे के अन्दर जा चुका है। कई दिन उसका रामचरित मानस पढ़ना देख-सुन चुका है। लेकिन इस तरह कभी रात नहीं गुजारी थी।
पिछली रात की बात याद आते ही संदीप को शर्म ने दबोच लिया।
इस तरह घर के बाहर रात बिताने का उसके लिए पहला मौका था। सौम्य मुखर्जी से मात्र कई दिन पहले मुलाकात हुई थी। घर पर राजमिस्त्री काम कर

रहे थे, उस काम की देखरेख करने के दौरान सौम्य बाबू ने पूछा था, "आप कौन हैं ? क्या चाहते हैं ?"

संदीप इस मकान में इतने दिन गुज़ार चुका है फिर भी घर के मालिक संदीप को पहचान नहीं सके ?

आखिर में गिरिधारी ने ही संदीप का परिचय बताया था। कहा था, "वह मुनीमजी के देस का आदमी है।" इसके बाद सौम्य बाबू और कुछ नहीं बोले थे।

लेकिन कल रात ?

कल रात उसी सौम्य बाबू की एक अलग ही पहचान थी। जो आदमी घर पर इतना गंभीर रहता है, वही आदमी नाइट क्लब में दूसरा ही चेहरा पहन लेता है ?

संदीप को याद है कि सौम्य बाबू ने कहा था,"यह क्या ब्रदर, आप भी यहां ! आप भी सिंकिंग-सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर ?"

यानी आप भी क्या डूबकर पानी पीते हैं ?

सौम्य बाबू ने क्या सोचा, कौन जाने ! संदीप घटनाचक्र के एक अनिवार्य आवर्त्त में फंसकर वहां गया था, यह उसे कौन समझाएगा ? कलकत्ता के किस अंचल में गोपाल उसे ले गया था, किस नाइट क्लब में खिलाने ले गया था, इसकी उसे जानकारी नहीं है। इतना उसे अवश्य याद है कि वहां बहुत सारे युवक और युवतियां थे, वे हुड़दंग मचाते हुए शराब की चुस्कियां ले रहे थे। और जब एकाएक कमरे की रोशनी बुझ गई तो उस समय हंसी का कितना रेला, कितनी हुल्लड़बाज़ी और शोर-शराबा मच गया था ! ऐसा लग रहा था जैसे तमाम लोगों के शोर-शराबे से मुकम्मल मकान फटकर मलबे में बदल जाएगा।

याद है, नान खाते-खाते संदीप भयभीत हो उठा था।

उसने डरकर गोपाल से पूछा था, "यह क्या हो रहा है गोपाल ? मारपीट हो रही है क्या ? हम लोगों को तो नहीं मारेंगे ?"

गोपाल ने कहा था, "धत्त ! यह तो मौज़-मस्ती का दौर चल रहा है। वे लोग तो मौज़ में आकर ऐसा कर रहे हैं।"

"घर की रोशनी एकाएक गुल क्यों हो गई ?"

गोपाल ने कहा था, "उन लोगों ने जान-सुनकर बत्तियां बुझा दी हैं।"

"क्यों, जान-सुनकर क्यों बुझा दी हैं ?"

गोपाल ने कहा था, "यही तो मज़ा है—"

"क्यों, मज़ा क्यों है ?"

गोपाल बोला, "बस, मजा ही मजा है। अभी युवकों का दल युवतियों के जिस्म को छू-छा रहा है। कौन किसके जिस्म को छू रहा है, कोई देख नहीं रहा। एक-दूसरे को पहचान भी नहीं रहा है कि कुछ कहे—"

"इसके बाद क्या होगा ?"

गोपाल ने कहा था, "इसके बाद ही एक सीटी बज उठेगी और सीटी की आवाज़ सुनते ही सभी सावधान हो जाएंगे। तब तमाम लोग साधु-संन्यासी हो जाएंगे। जैसे वे तली हुई मछलियां उलटकर खाना नहीं जानते।"

थोड़ी देर बाद वैसा ही हुआ। अंधेरे में कहीं सीटी बज उठी और तत्क्षण घर

मे रोशनियां जल उठीं। अंधेरा होते ही संगीत की जो लहरी समाप्त हो गई थी, वह फिर से मुखर हो उठी। तभी संदीप के कान में एक चीख तैरती हुई आई। लोग-बाग जब चीख के केन्द्र-स्थल पर पहुंचे तो देखा, एक आदमी नशे से चूर होकर घर में गिर पड़ा है।

संदीप देखने जा रहा था कि कौन इस तरह चीख उठा है।

लेकिन गोपाल ने कहा था, "उस ओर भूलकर भी मत जाना।"

"क्यों? चल न, देखें कि वहां क्या हुआ है।"

गोपाल ने कहा था, "किसी ने किसी को ठेलकर गिरा दिया होगा। ऐसा यहां हर रोज होता है। तू इन बातों पर ध्यान मत दे—"

परन्तु संदीप ने गोपाल की बात नहीं मानी थी। जिस जगह लोगों की भीड़ इकट्ठी थी वहां जाकर झांकते ही उस नजारे को देखकर आश्चर्यचकित हो गया था। यह तो उन्हीं लोगों के घर के मुन्ना बाबू हैं! सौम्य बाबू!!

सौम्य बाबू को इस हालत में देखकर संदीप कैसे चुप रह सकता है! कहा था, "अरे गोपाल, यह तो हमारे घर के मुन्ना बाबू हैं।"

"मुन्ना बाबू कौन? कहां के मुन्ना बाबू?"

संदीप ने कहा था, "मैं जिस मकान में रहता हूं, उसी मकान के मालिक सौम्य बाबू। सौम्य मुखर्जी। ये यहां क्यों आए हैं?"

"तू उसे छोड़ दे। ये लोग अमीर घर के बिगड़े हुए लड़के हैं, यहां शराब पीकर मौज मनाते हैं—लड़कियों को लेकर शराब के नशे में धुत्त होने के लिए आते हैं। चला आ—"

संदीप ने कहा था, "नहीं भाई, तू घर चला जा, मैं सौम्य बाबू के पास रहता हूं।"

यह कहकर संदीप सौम्य बाबू के हाथों को पकड़ किसी तरह घर ले आया था। भाग्य अच्छा था कि संदीप बाबू को ज्यादा चोट नहीं लगी थी। ज्यादा चोट लगती तो खुद गाड़ी नहीं चला पाते।

उसके बाद मकान के दरवाजे के पास आते ही गिरिधारी की नजर पड़ी थी। उसने तुरन्त गेट खोल दिया था और मुन्ना बाबू को धर-पकड़कर अन्दर ले गया था। संदीप भी बगल में ही था। उसके बाद गिरिधारी ने गाड़ी को किसी तरह ठेल-ठालकर गैरेज के अन्दर कर दिया था।

संदीप तब भी समझ नहीं सका था कि वह क्या करे!

गिरिधारी मुन्ना बाबू को कमरे में पहुंचाकर आने के बाद बोला, "बाबूजी, आप मुन्ना बाबू के साथ यहां गए थे?"

उस बात का जवाब देने के पहले संदीप ने पूछा था, "मुनीमजी ने तुमसे मेरे बारे में पूछताछ की थी गिरिधारी?"

गिरिधारी ने कहा था, "हां बाबूजी, मुनीमजी ने कई दफा आपके बारे में पूछताछ की थी।"

"मुनीमजी कमरे का दरवाजा खुला रखकर सोए हुए हैं?"

"मैं देखकर बताता हूं।"

यह कहकर गिरिधारी अंधेरे में ही अन्दर जाकर देख आया था और कहा था,

"नहीं बाबूजी, दरवाजा बन्द कर दिया है।"

बन्द करना स्वाभाविक ही है। मल्लिकजी के पास ढेर सारे रुपये रहते हैं। दरवाज़ा खोलकर रखने से रुपया खो जाने का भय रहता है। रात में शायद मल्लिकजी जगकर बहुत देर तक संदीप के लिए इन्तज़ार करते रहे। उसके बाद काफी रात गुज़र जाने के बाद जब वह नहीं आया तो बेचारा बूढ़ा आदमी जगा हुआ नहीं रह सका। दरवाज़े की सिटकनी बन्द कर सो गए होंगे।

गिरिधारी ने कहा था, "आप बाबूजी, मेरे कमरे में सोइएगा?"

"तुम्हारे यहां जगह है?" संदीप ने कहा था।

गिरिधारी ने कहा था, "रामजी कृपा करेंगे तो जगह का कौन-सा अभाव रहेगा बाबूजी? मगर आपको थोड़ी-बहुत तकलीफ होगी।"

अन्ततः संदीप को किसी तरह की तकलीफ का सामना नहीं करना पड़ा था। कब और कैसे रात सुबह में तब्दील हो गई, संदीप को इसका पता तक न चला था। सवेरे तंद्रा के दौरान पिछली रात की सारी बातों का स्मरण हो आया था। उस समय सौम्य बाबू की वे बातें उसके कानों में गूंज रही थीं—"यह क्या ब्रदर, आप भी सिंकिंग सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर? आप भी डूबकर पानी पीते हैं?"

उसके बाद जब कमरे की खिड़की के छिद्र से धूप के चकत्ते रेंगने लगे थे, संदीप हड़बड़ाकर बिस्तर पर उठकर बैठ गया था।

एकाएक गिरिधारी आया था और संदीप को जगा हुआ पाकर बोला था, "आपकी नींद टूट गई बाबूजी?"

संदीप ने कहा था, "छिः, कितनी बेला ढल गई! तुमने मुझे पुकारकर क्यों नहीं जगा दिया गिरिधारी? मल्लिकजी अभी क्या कर रहे हैं?"

गिरिधारी ने कहा, "आज हम लोगों के वेतन का दिन है न, इसीलिए सवेरे से ही लोग अपना-अपना वेतन ले रहे हैं।"

हां, आज ही तो वेतन का दिन है—महीने की पहली तारीख। आज ही उसे खिदिरपुर जाना है—सात नंबर मनसातल्ला लेन के मकान में जाकर विशाखा के रुपये उसकी मां को जाकर दे आना है।

याद है, उस दिन मल्लिकजी सचमुच ही बेहद खफा हो गए थे। बोले थे: "छिः-छिः, तुममें तनिक भी दायित्व-बोध नहीं है। तुमने एक दफा भी घर के बारे में नहीं सोचा! तुम्हारी मां ने तुम्हें मेरे पास भेजा है और तुम कलकत्ता आकर इस तरह गंवार के मानिन्द घर के बाहर रात गुजार आए? तुमने एक बार भी मेरे बारे में नहीं सोचा? पिछली रात तुम्हारे बारे में सोचते रहने के कारण बहुत देर तक मुझे नींद ही नहीं आई। आखिर कब तक जगा रहता, हारकर कमरे की सिटकनी बन्द कर दी। मेरे कैशबॉक्स में कितने रुपये रहते हैं, इसका पता तुम्हें है ही। इसके अलावा आज घर के तमाम लोगों के वेतन का दिन है। उसके लिए बैंक से रुपया निकालकर कैशबॉक्स में रखा था। हां, यह तो बताओ कि तुम कहां थे? कॉलिज से लौटने में तुम्हें इतनी देर क्यों हो गई? कहां गए थे?"

संदीप ने मल्लिकजी को पूरी घटना सुनाई थी। मल्लिक चाचा शुरू से ही

भाग्यशाली रहे हैं। सब सुनने के बाद बोले थे, "उसके बाद ?"

संदीप ने कहा था, "अमहर्स्ट स्ट्रीट में तब पुलिसवाले गोलियाँ चला रहे थे, इसी वजह से बस वगैरह का चलना बन्द था। ऐसे में क्या करता ! सोचा, कर्नवालिस स्ट्रीट पकड़ पैदल ही चला जाऊंगा। पैदल चल रहा था कि एकाएक गोपाल से मुलाकात हो गई। गोपाल को आप जरूर ही पहचानते होंगे—"

"गोपाल ! कौन गोपाल ?"

"हम लोगों के बेड़ागाँव में हाजरा बूढ़ा रहता था, वह बाजार में साग-सब्जी बेचता था। उसी का लड़का। हम लोगों के साथ स्कूल में एक क्लास में पढ़ता था।"

मल्लिकजी ने कहा, "वह कलकत्ता कैसे आ गया ?"

संदीप ने कहा, "मालूम नहीं। वह कलकत्ता आकर बहुत बड़ा आदमी बन गया है—ढेर सारा रुपया कमा लिया है। एक गाड़ी भी खरीदी है उसने।"

मल्लिकजी ने कहा, "गाड़ी खरीदी है ? गाड़ी की कीमत तो बहुत अधिक होती है ! इतना रुपया उसे कहां मिला ?"

"मालूम नहीं।"

"उसके बाद ?"

संदीप कहने लगा, "उसके बाद अचानक ध्यान में आया कि रात के नौ बज चुके हैं। मालूम था कि रात नौ बजे गिरिधारी मकान का गेट बन्द कर देता है। उस समय मैं बहुत चिन्तित हो उठा। उसने कहा, चिन्ता की कौन-सी बात है। वह अभी तुरन्त खाने का इन्तजाम कर देगा और यह कहकर वह मुझे एक होटल में ले गया।"

मल्लिकजी बोले, "अरे ! वह तुम्हें खिलाने के लिए होटल में ले गया और तुम भी चले गए ? उसके बाद क्या हुआ ? तुमने वहां खाना खाया ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

मल्लिकजी बोले, "छि: छि, तुमसे होटल में कैसे खाना खाया गया ? मैं इतने दिनों से कलकत्ता में हूं मगर एक दिन भी होटल में खाना नहीं खाया है। होटल का अंदरूनी हिस्सा कैसा होता है, आज तक, इस बुढ़ापे की सरहद पर पहुंचने पर भी नहीं देखा है। क्या खाया तुमने ?"

"नान।" संदीप ने कहा।

"नान का मायने ? नान किस किस्म की चीज है ?"

"मुझे भी यह मालूम नहीं था। गोपाल ने बताया, नान एक किस्म की रोटी है जो मैदे से बनाई जाती है।"

"उसकी कीमत कितनी है ?"

संदीप ने कहा, "इसके बारे में मुझे पता नहीं है।"

"कीमत तुमने चुकाई ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, मेरे पास पैसा था ही कहां ? गोपाल ने ही कीमत चुकाई। उसके साथ मुर्गी का सीक कबाब दिया था, मगर मैंने खाया नहीं। गोपाल ने उसे खा लिया।"

"उसके बाद ?"

संदीप बोला, "उसके बाद मैं उठकर आनेवाला ही था कि चारों तरफ शोर-

गुल मच गया और घर अंधेरे में डूब गया। और उस अंधेरे के बाद जब दुबारा बत्तियां जलीं तो देखा, एक जगह बहुत सारे लोग इकट्ठे हैं। क्या हुआ है, यह देखने के लिए जब करीब गया तो देखा कि हमारे घर के मुन्ना बाबू हैं—"

यह सुनते ही मल्लिकजी चौंक उठे। बोले, "मुन्ना बाबू? क्या कह रहे हो तुम? मुन्ना बाबू? हम लोगों का सौम्य? इस घर की दादी मां का पोता?"

"हां, सौम्य बाबू।"

"तुमने उन्हें पहचाना कैसे? तुमने तो उन्हें कभी नहीं देखा था।"

संदीप ने कहा, "मैंने उन्हें इसके पहले देखा था।"

"कहां? कहां देखा था?"

"हम लोगों के इसी मकान में। कुछ दिन पहले वे मकान के सामने खड़े होकर राजमिस्त्रियों के काम की निगरानी कर रहे थे। उस समय उन्होंने पूछा था कि मैं कौन हूं, मैं इस मकान में क्या करता हूं। मैंने उन्हें सारा कुछ बताया था। उसके बाद फिर कभी किसी दिन उनसे मुलाकात नहीं हुई थी। अचानक कल वहां मुलाकात हो गई—"

"उन्होंने तुम्हें पहचाना?"

"उस वक्त उनके सिर से खून टपक रहा था। शराब की झोंक में फर्श पर गिर पड़ने के कारण उन्हें शायद बहुत चोट लगी थी।"

"शराब? मुन्ना बाबू ने शराब पी थी?"

संदीप ने कहा, "हां, गोपाल ने बताया कि यहां सभी शराब पीने के लिए ही आते हैं। वहां बहुत सारी औरतें भी थीं।"

"औरतें भी शराब पी रही थीं?"

संदीप ने कहा, "हां।"

सब कुछ सुनने के बाद ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मल्लिकजी घोर आश्चर्य में डूब गए हैं, साथ ही उनके मन को कष्ट भी पहुंचा है। बहुत देर के बाद पूछा, "वह होटल कहां है, किस जगह?"

संदीप ने कहा, "यह बताना मुश्किल है। मैं कलकत्ता की तमाम सड़कों को पहचानता नहीं। गोपाल गाड़ी चलाकर मुझे ले गया था, इसीलिए गया था। उसने बताया कि यह एक नाइट क्लब है।"

"नाइट क्लब? नाइट क्लब का मायने?"

संदीप ने कहा, "इसकी जानकारी मुझे कैसे हो सकती है? नाइट क्लब क्या चीज है, वहां सभी लोग क्यों जाते हैं, मुझे इसकी जानकारी नहीं है।"

यह सुनकर मल्लिकजी चिन्तित हो उठे। आखिर में पूछा, "उसके बाद? उसके बाद नाइट क्लब से घर कैसे आए?"

"गाड़ी से। सौम्य बाबू किसी तरह गाड़ी चलाते हुए घर आए। उसके बाद गिरिधारी सौम्य बाबू को पकड़कर ऊपर ले गया। मैंने देखा, आपके कमरे का दरवाजा बंद है। गिरिधारी ने अपने कमरे में सो रहने को कहा।"

कुछ देर के बाद मल्लिकजी बोले, "तुमने बहुत बड़ी गलती की है संदीप। बहुत बड़ी गलती। यहां तुम्हारी मां ने मुझ पर विश्वास कर तुम्हें भेजा है। यह कलकत्ता एक अजूबा है। खासकर तुम्हारे जैसे कम उम्र के नौजवानों के लिए।

यहां अगर कोई बर्बादी की राह पर कदम रखना चाहे तो उसके लिए रास्ता बिलकुल खुला है। साथ ही अगर कोई सत्पथ पर चलकर उन्नति करना चाहे तो उसके लिए भी रास्ता खुला हुआ है। यह सब व्यक्ति-व्यक्ति की मनोवृत्ति पर निर्भर करता है। अगर तुम अपना भला चाहो तो मैं जो कहूं वही किया करो। तुम इस मुखर्जी भवन के आश्रित हो। इन लोगों का भला ही तुम्हारा भला और बुरा ही तुम्हारा बुरा है। यह बात गांठ में बांध लो। सौम्य बाबू चाहे शराब पीते हों या और कुछ, उस ओर तुम्हें ध्यान नहीं देना है। जिन्होंने तुम्हारी भलाई की है, हर वक्त उन लोगों की मंगल-कामना करना। यह जान लो कि इनकी भलाई में ही तुम्हारी भलाई और बुराई में ही तुम्हारी बुराई है। अगर ऐसा न करोगे तो तुम नमकहराम कहलाओगे। तुम भविष्य में इस घर में रहो चाहे न रहो, लेकिन जब तक जिन्दा रहना इस घर की अच्छाई की ही कामना करना, इस घर के रहनेवालों के भले की चाह करना। तुम प्राणों पर भी खेलकर इस घर की इज्जत की रक्षा करना, समझे? मेरी बातें ताउम्र याद रखना! तुम्हारी मां ने तुम्हारे भले के लिए ही मेरे पास भेजा है, इसीलिए तुमसे यह सब कह रहा हूं··· मेरी आज की बातें याद रखोगे तो तुम्हारा ही भला होगा, हां, तुम्हारा ही—"

जिन्दगी के चार हिस्सों में से तीन-चौथाई पार करने के बाद आज सदीप यदि पीछे की तरफ मुड़कर देखना चाहे तो वह क्या देखेगा? वह बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन की मंगल-कामना करता आया है या अमंगल-कामना? जिन लोगों ने उसके दुख के दिनों में उसकी भलाई की थी, उसे आश्रय और अन्न देकर उसके तत्कालीन दिनों को सहज-सरल बनाया, उसने उनकी भलाई चाही है या बुराई? कितने ही दुख-तकलीफ झेलकर, अपमानों को बरदाश्त करते हुए वह बराबर उन लोगों के भले की ही कामना करता आया है। केवल अपने प्राणों से ही नहीं, बल्कि अपना सारा कुछ निछावर कर उसने उन लोगों की इज्जत बचाई है।

मल्लिकजी आज जिन्दा होते तो सदीप उनके पास जाकर उनके चरणों का स्पर्श करते हुए कहता, "मल्लिक चाचा, मैंने आपकी उस दिन की बातों की रक्षा की है, सिर्फ प्राणों से ही नहीं, बल्कि अपना सारा कुछ लुटाकर मुखर्जी भवन के सम्मान की रक्षा की है। अब बताइए कि मैं क्या कर सकता हूं? अब मैं कितना दे सकता हूं? मेरे लिए देने को क्या बाकी रह गया है?"

अब भी मल्लिकजी की आखिरी बातें कानों में गूंज रही हैं—"आज मेरी बात मानोगे तो तुम्हारा भला ही होगा संदीप, हां, भला ही होगा···"

याद है, इसके बाद मल्लिकजी ने कहा था, "आज महीने की पहली तारीख है, यह बात तुम्हें याद है न? आज मुझे ढेर सारा काम था। इस घर के तमाम लोगों का माहवारी वेतन दे दिया है। आज तुम्हें अभी तुरंत खिदिरपुर के मनसा-तल्ला लेन जाकर योगमाया देवी का माहवारी पावना दे आना है। तुम जल्द-से-जल्द तैयार हो जाओ, देर करने से सपेश बाबू दफ्तर चले जाएंगे। आज उनके दफ्तर में भी तो वेतन का दिन है।"

संदीप को इस बात की याद आ गई। आज उसे पिछले महीने की तरह ही

विशाखा के घर जाना है। वह तुरंत तैयार हो गया। मल्लिकजी ने गिनकर एक सौ पच्चीस रुपये संदीप को दिए। बोले, "सावधानी से जाना बेटा, समझे? कल की रात की तरह कहीं कोई वाकया न हो जाए। जल्द-से-जल्द वापस आ जाना। तुम आओगे तो फिर हम एक साथ बैठकर खाना खाएंगे। तुम जब तक लौटकर न आओगे, मैं तुम्हारे इन्तज़ार में छटपटाता रहूंगा—देर मत करना—।"

उसके बाद घर से निकलने के दौरान भी संदीप को सावधान कर दिया। बोले, "यह कलकत्ता शहर है, कोई तुम्हारा बेड़ापोता नहीं। यहां के तमाम लोग चोर-डाकू हैं। अगर किसी को भनक लग गई कि तुम्हारे पास रुपया है तो फिर तुम जान लेकर घर वापस नहीं आ सकोगे।"

उसके बाद अदृश्य देवता को संबोधित करते हुए कहा, "दुर्गा श्री हरि, दुर्गा श्री हरि—"

संदीप ने जूते पहन सड़क पर कदम बढ़ाए।

मल्लिकजी बिलकुल उसकी मां जैसे थे। संदीप की मां भी हमेशा संदीप को सावधानियां बरतने को कहती। मां भी कहती, "खूब सावधानी से जाना बेटे—"

और किसी अदृश्य देवता को संबोधित कर कहती, "दुर्गा श्री हरि—"

मल्लिकजी और उसकी मां चाहे संदीप के कितने ही बड़े शुभैषी क्यों न हों, पर संदीप का भाग्य देवता उन आशीर्वचनों को सुनकर आंखों की ओट में चुपके से मुस्कराते थे, उसकी क्या वह कल्पना कर सका था? आज संदीप को लगता है, अगर वह उस दिन बेड़ापोता छोड़ कलकत्ता के इस बिडन स्ट्रीट के भवन में न आता तो शायद उसके जीवन की धारा दूसरी ही दिशा में प्रवाहित होती। संदीप आज जो जीवन जी रहा है वह इस तरह के जीवन जीने के बजाय दूसरी ही तरह का जीवन जीता।

खिदिरपुर के सात नंबर मनसातल्ला लेन के मकान में यों भी पहली तारीख को चहल-पहल का वातावरण रहता। हर महीने की पहली तारीख को जिस तरह तपेश गांगुली रेल के दफ्तर में वेतन पाते, उसी तरह सवेरे ही मल्लिकजी निश्चित समय पर माहवारी पावना तपेश गांगुली को दे आते। चाहे कितना ही आंधी-पानी क्यों न आए, कितनी ही कड़ाके की ठंड क्यों न पड़े, दुनिया में चाहे कितना ही भूकंप क्यों न आए, दोनों तरफ से रुपया पाने में किसी प्रकार का व्यतिक्रम नहीं होता था। हर महीने की पहली तारीख को सवेरे-सवेरे बाज़ार से दाढ़ी बनवाकर घर आते, स्नान करते और मल्लिकजी की उम्मीद में रास्ते की तरफ ताकते रहते। एक मिनट की भी देर हो जाती तो दरवाजा खोल, ट्राम के रास्ते की तरफ तीर्थ के कौवे की तरह ताकते रहते। कितने ही लोग आते-जाते मगर मल्लिकजी दिखाई नहीं पड़ते। बहुत देर के बाद जब काफी फासले पर मल्लिकजी की शक्ल दिख जाती तो घर के अन्दर घुस जाते। चिल्लाकर कहते, "भाभी, मल्लिकजी आ गए!"

उस समय खुशियों की रौ में वे अपने सोने के कमरे के अन्दर भी चले जाते। कहते, "अजी, उठो-उठो मल्लिकजी आ गए।"

रानी कहती, "मल्लिकजी आ गए तो मैं क्या करूं? नाचूं?"

रानी का उत्तर तपेन बाबू में आनन्द के उत्साह पर जैसे एक बाल्टी ठंडा पानी डाल देता। वे हवा से फटे हुए बैलून की तरह पिचक जाते। कहते, "उफ, मेरी हर बात पर तुम इस तरह फुंफकार क्यों उठती हो? मैंने तुम्हारी कौन-सी हानि की है?"

रानी तत्क्षण ताने मारती हुई कहती, "चुप हो जाओ। एक तो सुबह से ही मेरा सिर दर्द कर रहा है उस पर तुम्हारा बड़बड़ाना···"

तपेन गांगुली चेहरा लटकाकर कमरे से बाहर निकल आते। उन्हें यह सोच-कर रुलाई आती कि इतना करने के बावजूद अपनी पत्नी को वे खुश नहीं कर पाते हैं। मल्लिकजी के द्वारा दी गई पूरी रकम हाथ में थमा देने के बावजूद रानी के मन में जिस प्रकार वे अपने लिए कोई स्थान नहीं बना पाते, दफ्तर की पूरी रकम हाथ में थमा देने के बावजूद उसी तरह उसके मन को जीत नहीं पाते थे। रानी के मन को कैसे खुश किया जाए, उसे सम्भवतः रानी के विधाता-पुरुष को भी मालूम नहीं था।

उस दिन सुबह ही रानी रसोईघर के ओसारे के सामने आकर खड़ी हो गई। बोली, "यह तो बताओ दीदी, कि मेरी बिजली क्या तुम्हारे देवर की लड़की नहीं है?"

योगमाया उस वक्त देवर के दफ्तर के लिए चावल-सब्जी पकाने में व्यस्त थी। बोली, "मुझसे कह रही हो बहन?"

"तुम्हें नहीं कह रही हूं तो उस मुहल्ले के नाजिर की मौसी से कह रही हूं? यह कहे देती हूं दीदी, मेरी छाती पर ही बैठकर मेरी नाक काटोगी तो मैं यह नहीं होने दूंगी—"

योगमाया ने कहा, "तुम क्या कह रही हो बहन, मेरी समझ में ठीक से नहीं आ रहा।"

"सो तुम समझोगी कैसे?" रानी ने कहा, "समझोगी तो मैं सुखी हो जाऊंगी?"

योगमाया ने कहा, "जरा साफ-साफ बताओ बहन कि मैंने कौन-सी गलती की है।"

"गलती तुमने नहीं, मैंने की है बड़ी दी। लगता है, पिछले जनम में मैंने बहुत सारी गलतियां की थीं जिनका फलाफल इस जनम में भोग रही हूं। वरना इतने-इतने पैसे में रहने के बावजूद मैं इस घर की बहू होती ही क्यों?"

योगमाया ने चूल्हे से कड़ाही फर्श पर उतारकर कहा, "तुम्हारे पैरों पड़ती हूं बहन, तुम मुझे साफ-साफ बताओ कि मुझसे कौन-सी गलती हो गई है। अगर मैंने जान-बूझकर कोई गलती की है तो जमीन पर नाक रगड़कर तुमसे माफी मांगूंगी, और भगवान से हाथ जोड़कर कहूंगी कि मुझे नरक में भी जगह नहीं मिले।"

तभी तपेन गांगुली नहा-धोकर आए। बोला, "फिर क्या हुआ तुम लोगों को? आज सुबह से ही तुम लोगों ने झगड़ना शुरू कर दिया?"

रानी ने पति को डांटते हुए कहा, "तुम हम लोगों की बातचीत के बीच दखलन्दाजी करने क्यों आते हो? तुम्हें दफ्तर जाना है तो जाओ—मर्द होकर तुम औरतों की बातचीत के बीच टपकने क्यों आते हो?"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह गृहस्थी क्या सिर्फ तुम दोनों की ही है? मेरी गृहस्थी नहीं है? घर-संसार की परेशानी मुझे भी बरदाश्त करनी पड़ती है नहीं?"

रानी बोल पड़ी, "तुम घर-संसार की कौन-सी परेशानी बरदाश्त करते हो, सुनूं? तुम्हारी भाभी हर रोज़ अपनी लड़की को गंगाघाट पर ले जाकर जो व्रत करा रही है, इसका पता तुम्हें है?"

"व्रत? किस चीज़ का व्रत?"

रानी बोली, "व्रत के बारे में अगर कुछ जानते ही नहीं तो फिर दखलन्दाजी करने की ज़रूरत ही क्या है? विशाखा की शादी अच्छे घर में अच्छे पात्र से हो सके इस मकसद से तुम्हारी भाभी लुक-छिपकर गंगाघाट में उससे व्रत कराती है। क्यों, तुम्हारी अपनी लड़की बिजली का किसी अच्छे घर के सुपात्र से ब्याह नहीं होना चाहिए? वह क्या बाढ़ के पानी में बहकर आई है? वह क्या तुम्हारी भाभी की कोई नहीं है? वह क्या परायी है?"

इतनी बातें एक साथ कहने के कारण रानी हांफने लगी। इस बात के उत्तर में तपेश गांगुली क्या कहे? किसके पक्ष और किसके विरोध में बोले, कुछ समझ नहीं सका।

लिहाजा योगमाया की ओर देखते हुए बोला, "भाभी—"

लेकिन सहसा सदर दरवाज़े की कुंडी खटखटाने की आवाज़ आई। तपेश गांगुली बोले, "शायद बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन से रुपया देने···"

यह कहकर झगड़ा शान्त करते हुए सदर दरवाज़े की ओर दौड़कर अपनी जान बचाई।

बोले, "आ रहा हूं भाई, आ रहा हूं—"

हर महीने की पहली तारीख तपेश गांगुली की इसी तरह बीतती है। जैसे तमाम झंझट-झमेले जान-सुनकर उसी दिन एकाएक खड़े हो जाते हैं। उन्हें हर पल ऐसा महसूस होता, कि मुखर्जी भवन का आदमी आया था और पुकारने पर उत्तर न पाने के कारण वापस चला गया।

लेकिन अन्ततः उनकी प्रतीक्षा सार्थक साबित हुई है। उन्हें रुपया मिल जाता है। यही वजह है कि जैसे ही कुंडी खटखटाने की आवाज़ हुई, उन्होंने सोचा, ज़रूर ही बिडन स्ट्रीट भवन से आदमी आया होगा। वे दरवाज़े की तरफ जाते हुए कहने लगे, "आ रहा हूं, आ रहा हूं, आज इतनी देर क्यों हुई?"

मगर यह मुखर्जी भवन का आदमी नहीं है।

दरवाज़ा खोलते ही तपेश गांगुली के चेहरे पर निराशा पुत गई। बोले, "अरे, तुम हो? तुम नए आदमी हो क्या? सदर दरवाज़े से क्यों? खिड़की के दरवाज़े से आओ।"

दरअसल यह कोयले की दुकान का आदमी है। एक बोरा कोयला लेकर आया है।

"ओ भाभी, कोयला लेकर आया है, खिड़की का दरवाज़ा खोल दो।"

घर-गृहस्थी के सारे काम का बोझ है एकमात्र योगमाया पर। घर में झाड़ू लगाना, रसोई पकाना, बरतन मांजना, कोयला तोड़ना, बड़े से लेकर छोटे तक

का मसाला पीसना, तरकारी काटना वगैरह सारा काम इसी को करना पड़ता है।

उस दिन विशाखा को व्रत कराने के सन्दर्भ में इस घर में जो शोर-शराबा मचा था, उस वक्त भगवान ने कोयलेवाले को भेजकर उस भयावह स्थिति को नया मोड़ लेने से कुछ क्षणों के लिए रोक दिया था। तरेश गांगुली ने जाने के दौरान कहा था, "भाभी, तुम जिस तरह विशाखा से व्रत कराती हो उसी तरह बिजली से भी कराओ। जो भी खर्च-वर्च होगा, मैं दूंगा।"

योगमाया बोली, "खर्च-वर्च की चर्चा मत करो देवरजी, विशाखा यद्यपि मेरी बेटी है, पर बिजली भी मेरे लिए अपनी बेटी से कोई कम नहीं है।"

रानी कुछ बोलने जा रही थी लेकिन तरेश गांगुली ने उसे चुप कराते हुए कहा, "ठीक है भाभी, कल सवेरे से तुम विशाखा के साथ बिजली को भी लेते जाना? ले जाओगी न?"

योगमाया ने कहा, "व्रत करने के लिए तकलीफ उठाकर गंगाघाट जाने की जरूरत ही क्या है देवरजी? घर में भी तो बैठकर व्रत किया जा सकता है।"

"फिर तुम तकलीफ उठाकर विशाखा के साथ गंगाघाट क्यों जाती हो?"!

योगमाया बोली, "तकलीफ क्या जान-सुनकर उठाती हूं? घर में व्रत करने में बहुत सारे झमेले हैं। अगर कहन कहे तो मैं घर में ही व्रत करूं? मेरी मां तो मुझसे घर में ही व्रत कराती थी।"

इसी बीच तपेश गांगुली खाना खा चुका है। रानी की तरफ देखकर बोला, "कहां हो जी तुम?"

रानी इसके पहले ही हमेशा की तरह अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट गई थी। तरेश गांगुली मुंह-हाथ-पैर धोकर उसी कमरे में गए। बोले, "क्यों जी, तुम लेट गईं क्यों? खाने क्यों नहीं गीं? बिजली को विशाखा के साथ घर में ही व्रत करना है न?"

रानी बोली, "कौन कहां क्या करेगा, मैं क्या जानूं? मैं कौन होती हूं?"

तरेश गांगुली ने कहा, "तुम कौन होती हो का मतलब? तुम्हीं तो इस घर की असली मालकिन हो। तुम्हारे परामर्श के बिना इस घर का कोई काम होता है? तुम ही तो सब-कुछ हो।"

बहुत देर तक वहां खड़े रहने के बावजूद तरेश गांगुली को रानी से कोई उत्तर न मिला तो वे बोले, "क्यों जी, मेरी बात सुनाई पड़ रही है? बिजली क्या घर में व्रत करेगी?"

रानी ने सुना या नहीं, बहुत देर तक इन्तजार करने पर भी इसका पता न चला।

तरेश गांगुली ने दुबारा कहा, "कहो, तुम्हारा क्या कहना है।"

रानी बोली, "मैं इस घर की कौन होती हूं? तुम मुझसे क्यों पूछ रहे हो? तुम इस घर के मालिक हो, तुम जो कहोगे वही होगा।"

अब तरेश गांगुली के पास खड़े रहने का वक्त नहीं है। हर हालत में दफ्तर जाना है क्योंकि आज वेतन मिलनेवाला है। बोले, "ठीक है, मैं यही कह देता हूं—"

यह कहकर वे रसोईघर की तरफ गए और योगमाया से बोले, "भाभी, अब से तुम घर पर ही व्रत कराना। आज तनख्वाह का दिन है, मैं दफ्तर जा रहा हूं। अगर विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन से वह नौजवान रुपया देने आए तो तुम हस्ताक्षर कर ले लेना। हां, रुपया गिनकर लेना जिससे कि ठीक-ठीक एक सौ पच्चीस रुपया रहे। आज तुम्हारे व्रत के निमित्त बाज़ार से कुछ खरीदकर लाना है?"

योगमाया ने जब बताया कि किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है तो तपेश गांगुली सड़क पर निकल आए। सड़क पर कदम रखते ही रोज़-ब-रोज़ की तरह उन्होंने महसूस किया कि किस उद्देश्य से उन्होंने गृहस्थी बसायी थी, कौन जाने! भैया जबरन उसकी शादी कर उन्हें मुसीबत में धकेल गए हैं। इसका पता होता तो कौन साला शादी करता!

सामने की तरफ से एक बस आते ही वे उस पर सवार हो गए। चलती हुई बस के पायदान पर आधा पैर रखकर किसी तरह लटक गए। उन्हें लगा, इस तरह झूलती हुई हालत में जिस दिन वे बस से गिरकर दम तोड़ देंगे, उसी दिन उन्हें शान्ति मिलेगी। उसके पहले नहीं। कहीं उसका कोई नहीं है जो उन्हें शांति और सुकून दे सके। जैसी है साली पत्नी वैसी ही है यह साली गवर्नमेंट। सब साले एक जैसे हैं।

बस तब लटके हुए तपेश गांगुली को लेकर सामने की तरफ लंबी-लंबी सांसें ले भागी जा रही थी···

विशाखा जानती थी, वह नौजवान उस दिन उसके घर आएगा ही। वह बगैर किसी को जताए खिड़की का दरवाज़ा खोल सड़क की ओर खड़ी-खड़ी ताक रही थी।

संदीप भी बस से उतरकर सात नंबर मकान की ओर बढ़ रहा था। आज उसे थोड़ी देर हो गई है। कल उसे गिरिधारी की तंग कोठरी में रात गुज़ारनी पड़ी है। वहां न तो हवा थी और न ही हाथ-पैर फैलाकर सोने की जगह। कहा जाए तो एक तरह से उसने पूरी रात नाइट क्लब में बिताई है।

संदीप ने नाइट क्लब शब्द इसके पहले नहीं सुना था। उसके लिए वह उन दिनों नई चीज़ थी। दुनिया में कहीं कोई इस तरह की चीज़ हो सकती है, इसकी उसने कल्पना भी न की थी। संदीप ने बेड़ापोता के चटर्जी बाबुओं के भवन के पुस्तकालय में ढेर सारी पुस्तकें पढ़ी हैं, उनमें बहुत कुछ सीखा है, जाना है। लेकिन नाइट क्लब! दुनिया में और कहीं नाइट क्लब है या नहीं, संदीप कह नहीं सकता। मगर कलकत्ता शहर में है, इसे बगैर देखे वह क्या यकीन कर पाता?

सारा कुछ सुनने के बाद मल्लिकजी का चेहरा गम्भीर हो गया था। शुरू में कुछ बोले नहीं। लेकिन बहुत देर के बाद कहा था, "वहां जाकर तुमने अच्छा नहीं किया।"

संदीप क्या स्वेच्छा से नाइट क्लब गया था? गोपाल उसे जबरन न ले गया होता तो वह जाता?

मल्लिकजी ने कहा था, "उन स्थानों में भले आदमी नहीं जाते।"

"मगर गोपाल जो गया था?"

मल्लिकजी ने कहा था, "गोपाल को मैं पहचानता नहीं। मुझे मालूम नहीं कि वह भला आदमी है या नहीं।"

संदीप ने कहा था, "उसके पास बेशुमार पैसा है।"

"बेशुमार पैसा होने से ही कोई भला आदमी होता है, यह तुमसे किसने कहा है? वह क्या करता है?" मल्लिकजी ने पूछा था।

संदीप ने कहा था, "यह मुझे मालूम नहीं। हां, इतना जरूर देखा था कि सड़क के हर मोड़ पर वह पुलिसवालों को पैसा दे रहा था।"

"पुलिसवालों को क्यों पैसा दे रहा था? घूस दे रहा था?"

संदीप ने कहा था, "यह मैं नहीं जानता।"

मल्लिकजी ने कहा था, "अगर मालूम नहीं है तो उसकी ओर से सफाई क्यों पेश कर रहे हो? वह जरूर ही छिपे तौर पर कुछ गलत काम करता है। वरना वह इस तरह पुलिसवालों को पैसा देता ही क्यों? इतनी रात में पुलिसवालों को पैसा देने के पीछे उसका कौन-सा मकसद हो सकता है? ये लोग गोपाल के कौन होते हैं?"

संदीप इस सवाल का कोई जवाब नहीं दे सका था। मल्लिकजी ने कहा था, "खैर, यह जान लो कि नाइट क्लब में कोई भला आदमी नहीं जाता।"

संदीप ने कहा था, "लेकिन वहां बगैर गए पता ही नहीं चलता कि हमारे इस घर के छोटे बाबू वहां जाया करते हैं। छोटे बाबू भी तो···"

संदीप को बीच में ही टोकते हुए मल्लिकजी बोले थे, "छोटे बाबू ही क्या तुम्हारे आदर्श हैं? तुम गरीब बेवा औरत के लड़के हो और छोटे बाबू हैं करोड़-पति। छोटे बाबू से तुम्हारी तुलना हो सकती है? छोटे बाबू ने जो कुछ किया है, तुम भी क्या वही सब करोगे? छोटे बाबू के पास रुपये-पैसे हैं, वे अपनी मर्जी से रुपये उड़ाएंगे, उन्हें जब जो इच्छा होगी, करेंगे। लेकिन यह मत भूलना कि हम गरीब हैं, गरीब की तरह रहेंगे। तुम्हें इस घर में रहने को ठौर मिला है, खाना मिल रहा है। तुमने इन लोगों का नमक खाया है, इसलिए तुम्हें इनका गुणगान करना ही होगा। अगर ऐसा न करोगे तो नमकहरामी होगी, यह जान लो।"

इसके बाद संदीप और कुछ नहीं बोला था। और, मल्लिकजी को भी ढेर सारे काम करने थे। लेकिन संदीप भी क्या काफी कुछ कहना नहीं चाहता था? वह जानना चाहता था कि मनुष्यता के मापदंड की दृष्टि से गरीब और अमीर का क्या अलग-अलग इंसाफ किया जाएगा? यानी अमीरों की आदमीयत और गरीबों की आदमीयत क्या अलग-अलग किस्म की है? यदि यह सही है तो उन दो किस्म के लोगों के खून के रंग भी अलग-अलग तरह के होंगे, देह के रंग भी अलग-अलग तरह के होने चाहिए। लेकिन उन लोगों के चटर्जी बाबू लोग भी तो अमीर हैं, फिर उन लोगों की देह के रंग काले क्यों हैं? संदीप बाबू बड़े आदमी हैं और उन्हें नाइट क्लब जाने का अधिकार है तो फिर संदीप को नाइट क्लब जाने का अधि-कार क्यों नहीं है? नाइट क्लब जाना यदि कोई अपराध है तो छोटे बाबू और संदीप दोनों इस अपराध से वंचित नहीं हैं। मेरा शरीर काला है तो उसे आग में

जलने में ज़्यादा देर लगेगी, और छोटे बाबू गोरे हैं तो उनके शरीर को आग में जलने में कम वक्त लगेगा ?

विडन स्ट्रीट से बस पर चढ़कर आने के दौरान संदीप यही सब बातें सोच रहा था। यह भी सोच रहा था कि वह जिन लोगों के घर में पैसा देने जा रहा है, उस घर की विशाखा से सौम्य बाबू की शादी होगी—उस सौम्य बाबू से जो पिछली रात शराब पीकर औरतों के साथ मौज़ मना रहा था ? आश्चर्य ! यह शादी क्या सुखद होगी ? इस शादी से विशाखा क्या सुखी हो सकेगी ?

दूसरे ही क्षण उसे लगा कि वह यह सब क्यों सोच रहा है ? उसे यह सब सोचने की ज़रूरत ही क्या है ? मल्लिकजी का कहना वाकई सच है कि छोटे बाबू को जो मर्ज़ी होगी, करेंगे, जहां मर्ज़ी होगी, जाएंगे, जिससे मर्ज़ी होगी शादी करेंगे, इन बातों के सम्बन्ध में तुम्हें सोचने की ज़रूरत ही क्या है ? तुम गरीब बेवा औरत के लड़के हो, तुम्हें इस मकान में ठौर दिया गया है, यही काफी है। तुम लिख-पढ़कर नौकरी करोगे, मां को खिलाओगे—इसी के बारे में सोचो। इसके अलावा और कुछ सोचना तुम्हारे लिए गुनाह है।

बस तेजी से भागी जा रही थी। संदीप ने खिड़की से बाहर की तरफ झांकते हुए दूसरी बात सोचने की कोशिश की। उसके बाद अचानक एक घटना घट गई। जोरों से एक धक्का लगते ही बस रुक गई और बस के तमाम मुसाफिर चिहुंक उठे। क्या हुआ ? क्या हुआ ? क्या हुआ ? हल्ला बोलते हुए तमाम लोग सड़क पर उतर पड़े।

इस बीच हज़ारों आदमी सड़क पर इकट्ठे हो चुके हैं, उन्होंने बस को चारों तरफ से घेर लिया है। लोग चिल्ला रहे हैं—"मारो, मारो साले को—"

"साले को खींचकर सड़क पर ले आएं।"

संदीप की बुक पॉकेट के अन्दर एक सौ पच्चीस रुपये हैं। मल्लिकजी ने बाकायदा सावधानी से जाने को कहा है। कहा है, "यह कलकत्ता शहर है, यहां किसी पर विश्वास मत करना। बंगाली बड़े ही शैतान होते हैं। तुम गांव से आए हो, इसका पता चलते ही वे तुम्हारी जेब काट लेंगे। जिस तरफ लोगों का मजमा दिख पड़े उस तरफ हर्गिज मत जाना।"

लेकिन तब शायद यह बात संदीप के ध्यान से उतर गई थी। वरना और-और लोगों की तरह वह बस से सड़क पर उतरता ही क्यों ? और उतरा तो लोगों की भीड़-भाड़ के बीच गया ही क्यों ? वह भीड़ चीरकर एकदम से सामने की तरफ बढ़ा ही क्यों ?

"साले को बस से नीचे उतारकर ले आओ—यह साला बस चलाना नहीं जानता।"

कुछ लोग बस के कण्डक्टर को पकड़कर उसे घूंसे मारने लगे। कोई कण्डक्टर के बाल कसकर पकड़े हुए है, कोई उसके गले को कसकर दबाए हुए है और कोई उसकी शर्ट पकड़कर खींच रहा है। इस बीच एक आदमी ने जैसे ही उसके कंधे के रुपये-पैसे के थैले को छीनना चाहा कि रुपये-पैसे झनझनाते हुए कोलतार की सड़क पर छिटककर गिर पड़े।

उन्हें सब लोग क्यों मार रहे हैं, इसका पता थोड़ी देर बाद चला। शुरू में

संदीप की नजर उस तरफ गई ही नहीं थी। थोड़े से फासले पर लोगों की एक और भीड़ इकट्ठी है। संदीप ने उस ओर जाकर झांककर देखा और देखते ही उसका पूरा शरीर दहशत से सिहर उठा। देखा, एक आदमी बस के चक्के से कुचल गया है और उसके गिर्द खून का सैलाब फैला हुआ है। उसका जिस्म कीचड़ की तरह आसपास बिखरा हुआ है।

"क्या हुआ है साब ? क्या हुआ है ?"

हरेक के चेहरे पर एक जैसा ही कुतूहल है। मानो, एक जैसा कुतूहल ही आकाश, वायु, अंतरिक्ष, इधर से तैरते हुए तमाम लोगों को पीड़ित कर रहा है और कह रहा है—"क्या हुआ है साब ? क्या हुआ है ?"

आश्चर्य की बात है, संदीप की निगाह उस तरफ नहीं गई थी। उसी ओर असली चीज है। इतनी मारपीट, उद्वेग, कुतूहल, इतने प्रश्न, इतने कोलाहल—सबका केन्द्र यही था।

संदीप ने यहां भी झांककर देखा। एक फूलों से ढकी कीमती अर्थी पर एक लाश पड़ी हुई है। श्मशान जाने के दौरान अर्थी ढोनेवाले शायद जरा सुस्ताने के ख्याल से अर्थी को सूरज की रोशनी में रखकर बैठे हुए हैं।

"नहीं सा'ब, नहीं। इस मुरदे को मसान ले जाने के दौरान ही तो वह आदमी बस से कुचलकर मर गया।"

"क्यों ?"

एक दूसरे आदमी ने दया कर स्थिति का ब्यौरा प्रस्तुत किया।

"पैसे का लालच किसे नहीं होता है सा'ब ? सभी तो पैसे के लोभी होते हैं। पैसे को दोष यों ही दिया जाता है ? पैसे के चलते ही तो दुनिया चल रही है।"

फिर भी कुछ पल्ले नहीं पड़ रहा था। संदीप ने एक अर्थी ढोनेवाले आदमी के पास जाकर पूछा, "क्या हुआ है सा'ब ?"

उस आदमी ने संदीप को गौर से देखा। उसके बाद पूछा, "आप कौन हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं इस बस पर सवार होकर खिदिरपुर जा रहा था। बस जैसे ही रुकी, हम लोग नीचे उतर आए।"

बगल में ही एक आदमी खड़ा था। लगा, मुरदा उसके किसी निकट के सगे-सम्बन्धी का है। उसने शांत स्वर में कहा, "हम लोगों के सामने से होकर एक लड़का मुरमी छिड़कते हुए आ रहा था, साथ ही पांच और दस-पैसे के सिक्के भी फेंके जा रहे थे। सड़क के लड़कों के बीच उन पैसों को बटोरने की होड़-सी लग गई थी। तभी आप लोगों की दो-मंजिली बस ने आकर···"

बात अधूरी रह गई। इस बीच पुलिस की गाड़ी पर चढ़कर पुलिसकर्मी आ चुके हैं।

"भागो-भागो, यहां से भाग जाओ।"

पुलिसकर्मियों का दल लाठी लिए भीड़ खदेड़ने के वास्ते आगे बढ़ा। और-और लोगों की तरह संदीप भी वहां से हट गया। हर जगह तब निर्जनता फैल गई। संदीप ने दूर से भिखमंगे के कुचले विकृत चेहरे की ओर देखा। उस समय उसके अवयव नामक वस्तु का कहीं नामोनिशान नहीं था। सिर्फ गोश्त के कुछ टुकड़े और चारों तरफ खून फैला हुआ। आश्चर्य की बात है, वह लड़का एक

मिनट पहले यह नहीं जानता था कि उसका यह पैसा चुनना आखिरी चुनने में तब्दील हो जाएगा। और, उस मुरदे के वाद उसे भी मसान ले जाया जाएगा।

उस ओर देखकर किसके मन में क्या भाव जगा, कौन जाने! लेकिन संदीप को अपने वचपन में देखे गए निवारण चाचा के 'विल्वमंगल' के अभिनय का वही दृश्य याद आ गया—

यह नर-देह
वह जाता जल में
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह
उड़ाता इसे पवन है
यह नारी
इसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में...

अपने वचपन के उस काल के दौरान संदीप ने उन शब्दों का अर्थ क्या समझा था, कितना समझा था, उसे याद नहीं। पर सड़क पर कीमती अर्थी पर लिटाए गए मुरदे और वस के तले कुचले हुए लड़के के मांस के लोथड़े को देखकर उसे लगा कि अव इतने दिनों के वाद उन शब्दों का अर्थ पूरे तौर पर उसकी समझ में आ गया। कि यह देह, जिसके लिए आदमी इतना अहंकार, इतना घमंड करता है, उसकी अंतिम परिणति एकमात्र यही है। पिछली रात नाइट क्लव जाकर जिन लोगों को औरतों के जिस्म से खिलवाड़ करते देखा था, उनकी भी यही परिणति होगी। यह जो खिदिरपुर की विशाखा है, उसकी भी किसी दिन यही परिणति होगी, विडन स्ट्रीट के सौम्य वावू की भी यही परिणति होगी। इस मसान में आकर सभी को एक ही विछावन पर लेटकर मिट्टी में मिल जाना पड़ेगा। यह जो योगमाया देवी हैं, वे विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन की दौलत देखकर अपनी लड़की की शादी रचाने को राज़ी हो गई थीं! एक वार भी पता नहीं लगाया कि दादी मां के पोते का कैसा स्वभाव और चरित्र है। पता नहीं लगाया कि दादी मां का पोता देखने-सुनने में कैसा है, उसकी सेहत कैसी है। सिर्फ दौलत देखकर ही उन्होंने स्वयं को धन्य माना था। सिर्फ रुपया-पैसा देखकर ही सोचा था, विशाखा का जीवन सुखी हो जाएगा। लेकिन सव कुछ का अंत तो यही है! विल्वमंगल जमाने पहले 'नरदेह' की इस परिणति के वारे में सोचकर विचलित हो उठा था, इसके वारे में इन लोगों ने तो कभी कुछ नहीं सोचा। इस मामूली तुच्छ नरदेह की तृप्ति के वारे में सोचकर लोग रात-दिन हलचल में डूवे रहते हैं। इस मामूली तुच्छ नरदेह की तृप्ति के वारे में ही सोचकर विशाखा के घर में जेठानी और देवरानी ईर्ष्या की आग में जलती रहती हैं।

फिर?

अचानक एक जगह आकर वस और आगे नहीं वढ़ी। और तभी संदीप को खयाल आया वस में एकमात्र वही वैठा हुआ है। और कोई नहीं है। कव वस वदलकर वह दूसरी वस में वैठा था, उसकी उसे याद नहीं। सड़क के वीच गाड़ी से कुचले मांस-पिंड और कीमती अर्थी पर फूलों से ढंके शव को देखकर वह जिस

भावना में तल्लीन हो गया था, उसका खुमार अब दूर हुआ। उसे इसका अहसास हुआ कि बस खिदिरपुर पहुंच चुकी है। वह झटपट बस से नीचे उतर गया। सतीश गांगुली, हो सकता है उसके इन्तजार में अब भी खड़े हों। सामने की एक दुकान की घड़ी की ओर देखते ही वह चौंक उठा। अभी दिन के साढ़े ग्यारह बज रहे हैं। अब तक तो सतीश गांगुली दफ्तर जा चुके होंगे। उसे पता ही नहीं चला कि कब और कैसे इतना वक्त गुजर गया।

"बाप रे! अब तुम आए?"

संदीप एकदम से चौंक उठा। देखा, विशाखा है। विशाखा सतीश बाबू के मकान के खिड़की-दरवाजे के सामने अकेली खड़ी है।

"तुम्हें क्या हो गया था? नींद में मशगूल थे क्या? मेरे चाचाजी बहुत देर तक बैठे-बैठे तुम्हारा इन्तजार करते रहे। आखिर में दफ्तर चले गए। हम लोगों ने भी सोचा, आज तुम रुपया देने नहीं आओगे।"

संदीप बोला, "तुम्हारे चाचाजी नहीं हैं? फिर आज रुपये किसे दूं?"

विशाखा बोली, "किसे दोगे, मैं यह क्या जानूं?"

"तुम नहीं जानोगी तो और कौन जानेगा? यह रुपया तो तुम्हारे लिए ही है।"

"मेरे लिए? रहने दो! यह रुपया तो चाचीजी के लिए है। उस बार तो मैं बता ही चुकी हूं।"

संदीप बोला, "रुपया चाहे जिसके लिए हो, मुझे जो हुक्म दिया गया है, मैं वही करूंगा। उस रुपये से तुम्हारी चाचीजी चाहे गहने बनवाए या और कुछ करें, मैं मुलाजिम हूं। रुपये देकर तुम्हारी मां से हस्ताक्षर कराने के बाद मैं निश्चिन्त हो जाऊंगा।"

विशाखा ने एक बार चारों तरफ ध्यान से देखा और बोली, "तुम इतने जोर-जोर से क्यों बोल रहे हो? सभी सुन लेंगे।"

"सुनने से मेरा क्या होगा? मैं कोई गलत काम नहीं कर रहा।"

"सुनने से तुम्हारी कोई क्षति नहीं होगी, क्षति होगी तो मेरी ही।"

"क्यों, तुम्हारी कौन-सी क्षति होगी?"

विशाखा बोली, "सुन लेगी तो चाचीजी मां से फिर झगड़ा करेगी। मां को खरी-खोटी सुनाएगी।"

"क्यों, तुम्हारी मां ने कौन-सा गुनाह किया है?"

विशाखा बोली, "सारा दोष तो मां का ही है।"

"क्यों?"

विशाखा बोली, "यह तुम समझते नहीं? मैं मां की बेटी क्यों हुई, यही तो असली गुनाह है।"

संदीप बोला, "यह क्या? तुम अपनी मां की बेटी होकर पैदा हुई हो, इसमें गुनाह की कौन-सी बात है?"

विशाखा बोली, "तुम बच्चे हो, इसलिए बात तुम्हारी समझ में नहीं आएगी। पहले बड़े हो जाओ, तब समझोगे।"

संदीप बोला, "तुम भी तो बच्ची हो, फिर बात तुम्हारी समझ में कैसे आई?"

मिनट पहले यह नहीं जानता था कि उसका यह पैसा चुनना आखिरी चुनने में तब्दील हो जाएगा। और, उस मुरदे के बाद उसे भी मसान ले जाया जाएगा।

उस ओर देखकर किसके मन में क्या भाव जगा, कौन जाने! लेकिन संदीप को अपने बचपन में देखे गए निवारण चाचा के 'विल्वमंगल' के अभिनय का वही दृश्य याद आ गया—

यह नर-देह
बह जाता जल में
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और श्रृगाल
या चिता-भस्म की तरह
उड़ाता इसे पवन है
यह नारी
इसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में...

अपने बचपन के उस काल के दौरान संदीप ने उन शब्दों का अर्थ क्या समझा था, कितना समझा था, उसे याद नहीं। पर सड़क पर कीमती अर्थी पर लिटाए गए मुरदे और बस के तले कुचले हुए लड़के के मांस के लोथड़े को देखकर उसे लगा कि अब इतने दिनों के बाद उन शब्दों का अर्थ पूरे तौर पर उसकी समझ में आ गया। कि यह देह, जिसके लिए आदमी इतना अहंकार, इतना घमंड करता है, उसकी अंतिम परिणति एकमात्र यही है। पिछली रात नाइट क्लब जाकर जिन लोगों को औरतों के जिस्म से खिलवाड़ करते देखा था, उनकी भी यही परिणति होगी। यह जो खिदिरपुर की विशाखा है, उसकी भी किसी दिन यही परिणति होगी, विडन स्ट्रीट के सौम्य बाबू की भी यही परिणति होगी। इस मसान में आकर सभी को एक ही बिछावन पर लेटकर मिट्टी में मिल जाना पड़ेगा। यह जो योगमाया देवी हैं, वे विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन की दौलत देखकर अपनी लड़की की शादी रचाने को राजी हो गई थीं! एक बार भी पता नहीं लगाया कि दादी मां के पोते का कैसा स्वभाव और चरित्र है। पता नहीं लगाया कि दादी मां का पोता देखने-सुनने में कैसा है, उसकी सेहत कैसी है। सिर्फ दौलत देखकर ही उन्होंने स्वयं को धन्य माना था। सिर्फ रुपया-पैसा देखकर ही सोचा था, विशाखा का जीवन सुखी हो जाएगा। लेकिन सब कुछ का अंत तो यही है! विल्वमंगल जमाने पहले 'नरदेह' की इस परिणति के बारे में सोचकर विचलित हो उठा था, इसके बारे में इन लोगों ने तो कभी कुछ नहीं सोचा। इस मामूली तुच्छ नरदेह की तृप्ति के बारे में सोचकर लोग रात-दिन हलचल में डूबे रहते हैं। इस मामूली तुच्छ नरदेह की तृप्ति के बारे में ही सोचकर विशाखा के घर में जेठानी और देवरानी ईर्ष्या की आग में जलती रहती हैं।

फिर?

अचानक एक जगह आकर बस और आगे नहीं बढ़ी। और तभी संदीप को खयाल आया बस में एकमात्र वही बैठा हुआ है। और कोई नहीं है। कब बस बदलकर वह दूसरी बस में बैठा था, उसकी उसे याद नहीं। सड़क के बीच गाड़ी से कुचले मांस-पिंड और कीमती अर्थी पर फूलों से ढंके शव को देखकर वह जिस

भावना में तल्लीन हो गया था, उसका खुमार अब दूर हुआ। उसे इसका अहसास हुआ कि बस खिदिरपुर पहुंच चुकी है। वह झटपट बस से नीचे उतर गया। तपेश गांगुली, हो सकता है उसके इन्तजार में अब भी खड़े हों। बगल की एक दुकान की घड़ी की ओर देखते ही वह चौंक उठा। अभी दिन के साढ़े ग्यारह बज रहे हैं। अब तक तो तपेश गांगुली दफ्तर जा चुके होंगे। उसे पता ही नहीं चला कि कब और कैसे इतना वक्त गुजर गया।

"बाप रे! अब तुम आए?"

संदीप एकदम से चौंक उठा। देखा, विशाखा है। विशाखा तपेश बाबू के मकान के खिड़की-दरवाजे के सामने अकेली खड़ी है।

"तुम्हें क्या हो गया था? नींद में मशगूल थे क्या? मेरे चाचाजी बहुत देर तक बैठे-बैठे तुम्हारा इन्तजार करते रहे। आखिर में दफ्तर चले गए। हम लोगों ने भी सोचा, आज तुम रुपया देने नहीं आओगे।"

संदीप बोला, "तुम्हारे चाचाजी नहीं हैं? फिर आज रुपये किसे दूं?"

विशाखा बोली, "किसे दोगे, मैं यह क्या जानूं?"

"तुम नहीं जानोगी तो और कौन जानेगा? यह रुपया तो तुम्हारे लिए ही है।"

"मेरे लिए? रहने दो! यह रुपया तो चाचीजी के लिए है। उस बार तो मैं बता ही चुकी हूं।"

संदीप बोला, "रुपया चाहे जिसके लिए हो, मुझे जो हुक्म दिया गया है, मैं वही करूंगा। उस रुपये से तुम्हारी चाचीजी चाहे गहने बनवाए या और कुछ करें, मैं मुलाजिम हूं। रुपये देकर तुम्हारी मां से हस्ताक्षर कराने के बाद मैं निश्चिन्त हो जाऊंगा।"

विशाखा ने एक बार चारों तरफ ध्यान से देखा और बोली, "तुम इतने जोर-जोर से क्यों बोल रहे हो? सभी सुन लेंगे।"

"सुनने से मेरा क्या होगा? मैं कोई गलत काम नहीं कर रहा।"

"सुनने से तुम्हारी कोई क्षति नहीं होगी, क्षति होगी तो मेरी ही।"

"क्यों, तुम्हारी कौन-सी क्षति होगी?"

विशाखा बोली, "सुन लेंगी तो चाचीजी मां से फिर झगड़ा करेंगी। मां को खरी-खोटी सुनाएंगी।"

"क्यों, तुम्हारी मां ने कौन-सा गुनाह किया है?"

विशाखा बोली, "सारा दोष तो मां का ही है।"

"क्यों?"

विशाखा बोली, "यह तुम समझते नहीं? मैं मां की बेटी क्यों हुई, यही तो असली गुनाह है।"

संदीप बोला, "यह क्या? तुम अपनी मां की बेटी होकर पैदा हुई हो, इसमें गुनाह की कौन-सी बात है?"

विशाखा बोली, "तुम बच्चे हो, इसलिए बात तुम्हारी समझ में नहीं आएगी। पहले बड़े हो जाओ, तब समझोगे।"

संदीप बोला, "तुम भी तो बच्ची हो, फिर बात तुम्हारी समझ में कैसे आई?"

विशाखा बोली, "उम्र में छोटी होने से क्या होगा ! अक्ल के लिहाज़ से मैं तुमसे बड़ी हूं।"

कितने आश्चर्य की बात है ! यह लड़की क्या कह रही है ! यह लड़की सिर्फ अक्लमंद ही नहीं, बल्कि नंबरी शैतान है !

संदीप अब हंस दिया। विशाखा बोली, "तुम हंस क्यों रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "तुम्हारी बात सुनकर हंस रहा हूं। इतनी कम उम्र में तुम इतनी अक्लमंद कैसे हो गई ?"

विशाखा बोली, "तुम्हें तो मां नहीं है। मां होती तो तुम भी मेरी ही तरह अक्लमंद होते।"

"किसने कहा कि मेरी मां नहीं है ?"

"मां है ?"

"हां, मेरी मां देस में है।"

विशाखा ने कहा, "तुम्हारी मां को क्या उनकी देवरानी खटाते-खटाते परेशान कर मारती है ? तुम्हारी चाची क्या तुम्हारी मां से झगड़ती रहती है ? तुम्हारी मां के क्या मेरी जैसी एक लड़की है ? अपनी मां की देख-रेख करने के लिए कम-से-कम तुम तो हो, लेकिन मेरी मां को मेरे अलावा और कौन है ?"

बातें करते-करते विशाखा का चेहरा दयनीय जैसा हो गया।

विशाखा फिर कहने लगी, "तुम्हारी शादी हो जाएगी तो तुम अपनी बीवी को लेकर अपने ही घर में रहोगे लेकिन मैं ? मेरी शादी होगी तो मैं ससुराल चली जाऊंगी। अपने पति के पास रहूंगी। और मां ? मैं पति के साथ चली जाऊंगी तो मां किसको लेकर रहेगी ? मां की देखभाल कौन करेगा ? मेरी मां कितनी तकलीफ झेल रही है, यह तुम सोच भी नहीं सकते। जानते हो, जब मां एकांत में होती है तो सिर्फ रोती रहती है।"

संदीप इस बात का कोई जवाब नहीं दे सका। वह भौंचक-सा इस लड़की की ओर ताकता रहा। सोचने लगा, इसी से शादी होगी नाइट क्लब में देखे हुए विडन स्ट्रीट के सौम्य मुखर्जी की !

एकाएक विशाखा ने कहा, "मेरी बात सुनकर कहीं तुम गुस्सा तो नहीं गए ?"

"नहीं।" संदीप ने कहा।

"फिर चुप क्यों हो ? तुम्हें मैंने बेवकूफ कहा है, बुरा मत मानना। मां मेरे लिए कितनी चिन्तित रहती है, यह तुम सोच भी नहीं सकते। मां रात-दिन मेरे लिए चिन्तित रहती है।"

संदीप ने पूछा, "क्यों ?"

"वाह जी वाह, चिन्तित क्यों नहीं रहेगी ? जिस लड़की का बाप मर चुका हो, उसके बारे में मां नहीं सोचेगी तो और कौन सोचेगा ? पिताजी होते तो वे ही सोचते, पर पिताजी नहीं रहे।"

संदीप ने कहा, "मेरे भी पिताजी जिन्दा नहीं हैं।"

"तुम लड़के हो। तुम्हारे मां-बाप न हों तो भी तुम्हारा कोई नुकसान नहीं होगा। मैं लड़की हूं। मां का कहना है, बेटा घर भरता है और लड़की घर

उगाहनी है।"

जरा रुककर विशाखा ने संदीप के चेहरे पर आंखें टिकाकर शायद इसका जायजा लेना चाहा कि वह विशाखा की बातें समझ पा रहा है या नहीं। उसके बाद बोली, "बहरहाल, तुम लड़की होते तो इन बातों को समझ पाते—मैं सदर दरवाजा खोल देती हूं, तुम मां को जाकर रुपये दे आओ।"

यह कहकर विशाखा भीतर जा रही थी लेकिन संदीप ने पुकारा, "सुनो, विशाखा, सुनती जाओ—और एक बात सुनकर जाना।"

विशाखा ने गर्दन घुमाकर कहा, "इतना चिल्ला क्यों रहे हो? सभी सुन लेंगे।"

संदीप ने कहा, "सुनने में दोष ही क्या है?"

"अरे, तुम तो बिल्कुल गंवार हो! क्या कहना है, कहो।"

संदीप ने कहा, "मैं कह रहा था कि जिस मकसद से मैं रुपया देने आता हूं, जिससे तुम्हारी शादी होगी, उसका चेहरा कैसा है, तुम जानती हो? उसे तुमने कभी देखा है?"

अबकी विशाखा हंस दी। बोली, "बाप रे, तुम कितने बेवकूफ हो! शादी के पहले कहीं दूल्हे को देखना चाहिए? एकबारगी शुभदृष्टि के समय पहले-पहल देखा जाता है।"

"तुम्हें देखने की इच्छा नहीं होती?"

विशाखा बोली, "मेरी मां ने कहा है, मुझे बहुत ही अच्छा दूल्हा मिलेगा।"

"क्यों?"

"इसलिए कि मैं व्रत करती हूं।"

"व्रत? व्रत का मतलब?"

"बाप रे! तुम व्रत का मतलब भी नहीं समझते? तुम किस गांव के भूत हो? मुझसे मां हर रोज व्रत कराती है। दस पुतले का व्रत। यह व्रत मैं बचपन से ही करती आ रही हूं। मां का कहना है, मैं चूंकि यह व्रत करती हूं इसीलिए इतने बड़े आदमी के घर मेरी शादी का रिश्ता तय हो रहा है।"

"कैसे व्रत करती हो?"

विशाखा ने सारी बातों की व्याख्या की, "मां चौरठ से जो दस पुतले आंक देती है, उन पर दूब रखकर मैं मंत्र पढ़ती हूं।"

"कौन-सा मंत्र पढ़ती हो?"

विशाखा बोली, "मैं कहती हूं—

अबकी मरकर नारी हूंगी, पति मिलेगा राम सरीखा
अबकी मरकर नारी हूंगी, सीता जैसी सती बनूंगी
अबकी मरकर नारी हूंगी, कौशल्या-सी सास मिलेगी
अबकी मरकर नारी हूंगी, भोजन रांधूंगी द्रौपदी-सी
अबकी मरकर नारी हूंगी, दुर्गा जैसी हूंगी सुहागिन
अबकी मरकर नारी हूंगी, धरती जैसी भार सहूंगी···"

संदीप ने कहा, "इसके बाद? चुप क्यों हो गई? इसके बाद और नहीं है?"

विशाखा ने कहा, "इसके बाद नहीं बताऊंगी।"

"क्यों?"

"यह व्रत सवेरे नहीं, तीसरे पहर करना चाहिए। अभी तीसरा पहर नहीं हुआ है। अब से तीसरे पहर ही करूंगी। कहीं कोई देख न ले, इस खयाल से मां के साथ गंगाघाट पर जाकर किया करती थी। अब घर पर ही करूंगी।"

संदीप को बड़ा ही मज़ा आ रहा था विशाखा की बातें सुनकर। बोला, "क्यों, गंगाघाट ने कौन-सा दोष किया है?"

"गंगाघाट पर ठीक से व्रत नहीं हो पा रहा था। व्रत करने के लिए चौरठ के पिण्ड की ज़रूरत पड़ती है। घाट पर मां को चौरठ के पिण्ड कहां मिलेंगे?"

"यह व्रत करने से क्या होता है? अच्छा दूल्हा मिलता है?"

"हां।"

यह कहकर विशाखा हंस दी। बोली, "व्रत करने के कारण मुझे बड़ा ही अच्छा दूल्हा मिला है, इसलिए बिजली भी अब मेरी ही तरह व्रत किया करेगी। इसके चलते चाचीजी ने मेरी मां से बहुत ही झगड़ा-टंटा किया है।"

"क्यों? झगड़ा क्यों किया है?"

विशाखा ने कहा, "झगड़ा क्यों नहीं करेगी। चाचीजी ने कहा है, बिजली क्या बाढ़ में बहकर आई है? उसके लिए भी एक अच्छा-सा दूल्हा चाहिए। मुझे अच्छा दूल्हा मिला है इसलिए चाचीजी बहुत जलती हैं।"

"चाचीजी किससे जलती हैं?"

"मां के अलावा और किससे जलेगी? इसके कारण मेरी मां आज खूब रोई है।"

संदीप ने अब असली बात का जिक्र किया, "तुम फल वगैरह खाती हो?" फल, दूध, घी, मछली, मांस वगैरह तुम्हें खाने को मिलते हैं?"

"बाप रे! मैं यह सब क्यों खाऊंगी? कौन मुझे खाने को देगा?"

संदीप ने कहा, "क्यों नहीं खाओगी? यही सब खाने के वास्ते ही हमारी दादी मां हर महीने तुम्हारी मां के पास रुपये भेजती हैं। मैं जैसे ही घर लौटकर जाऊंगा, दादी मां मुझसे यह सब बातें पूछेंगी। उस वक्त मैं क्या जवाब दूंगा?"

विशाखा बोली, "मैं सिर्फ भात, सब्जी और रोटी खाती हूं।"

"और मांस-मछली?"

"नहीं, मैं यह सब नहीं खाती।" विशाखा ने उत्तर दिया।

"मांस-मछली, फल, दूध, दही, घी कुछ भी नहीं खाती?"

"नहीं।"

संदीप घर के खिड़की-दरवाज़े पर खड़ा होकर यह सब पूछ रहा था, लेकिन चौकसी के साथ। डर लग रहा था कि कहीं कोई देख न ले। लेकिन यहां विशाखा को एकान्त में पाकर यह सब बात न पूछे तो और कब पूछेगा, कब इन बातों को पूछने का मौका मिलेगा?

पूछा, "अभी तुम्हारी बहन कहां है?"

विशाखा बोली, "कौन? बिजली? चाचीजी बिजली को नहला रही हैं।"

संदीप ने कहा, "और तुम? तुम आज नहाओगी नहीं?"

"मैं तो तड़के ही मां के साथ जाकर गंगा नहा आई हूं। अब दुबारा नहाऊं?"

"और तुम्हारी मां?"

"मां अभी रसोई पका रही है। मां दिन-भर काम ही करती रहती है। कभी रसोई पकाती है, कभी बर्तन मांजती है, कभी घर-दरवाजे में झाड़ू लगाती है, कभी साबुन से कपड़े फींचती है—घर का सारा काम मां अकेले ही करती है। मां को कभी फुर्सत ही नहीं मिलती। इसके अलावा मां को दुकान से राशन लाना पड़ता है, कोयला लाना पड़ता है, किरोसिन तेल लाना पड़ता है।"

संदीप ने कहा, "मैं जब घर वापस जाऊंगा तो फिर दादी मां से क्या कहूंगा? तुम्हें फल, दूध, मांस, मछली, अण्डा, घी, मक्खन वगैरह खाने को नहीं मिलता है, यह बात बताऊंगा तो?"

"कहना, बिजली सब कुछ खाती है और मैं सिर्फ रोटी, चावल और सब्जी खाती हूं।"

"और बिजली क्या खाती है?"

"मेरे लिए रात में रोटी बनती है और बिजली व चाचीजी के लिए पराठे।"

बातचीत का सिलसिला चल ही रहा था कि एकाएक भीतर से आवाज आई, "अरी ओ मुंहजली, कहां गई?"

इसके बाद खामोशी खिंच आई और विशाखा तत्क्षण लापता हो गई।

संदीप अब क्या करे? बहुत देर तक वहां अवाक् खड़ा रहा। सोचा, कैसे वह यह सब बात दादी मां से कहेगा? दरअसल यह सब कहना ठीक रहेगा या नहीं, वह तय नहीं कर पाया। यह सब सुनने के बाद यदि शादी का प्रस्ताव स्थगित कर दिया जाए तो? अगर यह रिश्ता टूट जाए? ऐसी हालत में किसकी क्षति होगी? दादी मां की या तरेश गांगुली की? तरेश गांगुली हर महीने इतने सारे रुपये पाने से वंचित हो जाएंगे। और दादी मां क्या करेंगी? पोते के लिए दूसरी पात्री की तलाश करेंगी? पोते की शादी दूसरी जगह कर देंगी? पर इतनी अच्छी जन्मपत्री किस लड़की की है? फिर तो उन्हें कुछ दूसरा ही इन्तजाम करना होगा। इतने दिनों का इतना कुछ समाधान अब केवल संदीप की एक बात पर निर्भर करता है। फिर वह क्या घर जाकर दादी मां से झूठी बातें कहे?

सिर पर तीखी धूप पड़ रही है। विश्व-ब्रह्माण्ड की तमाम समस्याओं और चिन्ताओं ने जैसे एकजुट होकर संदीप पर धावा बोल दिया। विशाखा ने अन्दर जाकर मां से कुछ कहा था या नहीं, कौन जाने! लेकिन दरवाजे की कुंडी खट-खटाते ही दरवाजा खुल गया। वहां एक महिला का चेहरा दिख पड़ा। उस चेहरे पर एक कुतूहल-भरा प्रश्न टंगा है।

"तुम क्या भैया, विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन से आए हो?"

संदीप ने कहा, "हां, आप जरा तरेश गांगुली साहब से जाकर कह दें कि मैं इस महीने का रुपया लेकर आया हूं।"

महिला ने कहा, "वे तो तुम्हारा इन्तजार करते-करते दफ्तर चले गए। आज दफ्तर में उन्हें माहवारी तनख्वाह मिलने वाली है न, इसीलिए चले गए।"

"आप कौन हैं?"

"मेरा नाम योगमाया देवी है। मैं विशाखा की मां हूं।"

संदीप ने कहा, "पहले तो बराबर आपके नाम से ही रुपया आता था। रुपया चाहे जो ले, मगर दस्तखत तो आप ही करती थीं। अबकी भी आपके नाम से ही

रुपया भेजा गया है। आप रुपया लीजिएगा ?"

"ज़रा अंदर आकर बैठो भैया। मैं अपनी देवरानी को बुलाकर ले आती हूं।"

संदीप पहले की तरह ही उस कमरे के तख्ते पर बैठ गया, जिस पर मोड़कर रखा हुआ मैला बिस्तर पड़ा हुआ था। संदीप ने चारों तरफ गौर से देखा। कमरे की पहले ही जैसी खस्ता हालत है। दोपहर होने को है मगर अब तक फर्श पर झाड़ू नहीं लगाया गया है। गृहस्थी का सारा काम निबटाने के बाद संभवतः विशाखा की मां ही यह काम करेगी। सहसा एक और महिला ने उस कमरे में प्रवेश किया। उसकी कलाइयों में सोने की चूड़ियां हैं, गले में सोने का हार, मांग में सिन्दूर।

संदीप उठकर खड़ा हो गया। बोला, "आप ही क्या विशाखा की चाचीजी हैं ?"

महिला बोली, "हां भैया। तुम रुपये ले आए हो ? दो।"

संदीप ने रुपया बढ़ाते हुए कहा, "यहां मौसीज़ी को हस्ताक्षर करने को कह दीजिएगा।"

संदीप ने आज पहली बार विशाखा की चाची को देखा। समझ गया कि यही औरत मौसीजी से झगड़ा करती है। विशाखा को मिलनेवाले रुपयों से ही इस महिला के गहने-जेवरात बनवाए गए हैं। दादी मां की ओर से हर माह जितने रुपये आए हैं, उन रुपयों से इस महिला ने अपनी साध और कामनाएं पूरी की हैं। उनमें से एक भी रुपया विशाखा की जरूरत के लिए नहीं खरचा गया है।

अचानक बिजली और विशाखा दोनों कमरे के अन्दर आईं। बिजली बोली, "तुमने आज इतनी देर क्यों कर दी ? मेरे पिताजी तुम पर बहुत बिगड़े हुए हैं।"

"क्यों ?" संदीप ने पूछा।

बिजली बोली, "वो जो बूढ़ा आता था, वह कितनी जल्दी आता था।"

संदीप ने कहा, "आज मैं जिस बस से आ रहा था, उससे एक आदमी कुचल गया। लिहाजा दूसरी बस पकड़ने में मुझे देर हो गई।"

उसके बाद वह लड़की बोली, "तुम देर करके आए, इसलिए आज हम मांस नहीं खा सके।"

संदीप के देर करके आने से इस घर के लोगों का मांस खाने से कौन-सा ताल्लुक है, यह समझने में संदीप को कोई असुविधा नहीं हुई।

बिजली बोली, "पिताजी भी बगैर मांस खाए दफ्तर चले गए।"

संदीप ने पूछा, "तुम लोगों को मांस खाने में बहुत अच्छा लगता है ?"

"मांस खाने में अच्छा क्यों नहीं लगेगा ? मांस खाना सभी पसन्द करते हैं। तुम्हें क्या मांस खाना अच्छा नहीं लगता ?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

बिजली ने पूछा, "अण्डा ?"

बिजली की बगल में विशाखा चुपचाप खड़ी थी। बिजली ने उससे कहा, "देख रही हो न, इस आदमी को मांस, अण्डा वगैरह खाना अच्छा नहीं लगता। विशाखा भी तुम्हारी तरह यह सब नहीं खाती।"

"तुम यह सब नहीं खातीं ?"

लेकिन विशाखा का जवाब सुनने के पहले ही उसकी चाची कमरे में आ धमकी। बोली, "तुम लोग शोरगुल क्यों कर रही हो ? जाओ, यहां से भागो।"

यह कहकर रुपये की रसीद जैसे ही उसके हाथ में थमायी, वह उठकर खड़ा हो गया। उसके बाद जिस रास्ते से संदीप ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया था उसी से बाहर निकलकर चला आया। बाहर तब तीखी धूप रेंग रही थी। उसे लगा, विशाखा से और थोड़ी देर बातचीत कर पाता तो अच्छा रहता। पूरा इतिहास सुन नहीं सका। लेकिन सारी बात जानने में तो बहुत वक्त लगेगा। कम-से-कम एक महीने तक विशाखा से उसकी मुलाकात नहीं हो पाएगी। फिर ? फिर क्या उसे इतने दिनों तक इन्तजार करते रहना पड़ेगा ?

"ऐ, सुनो।"

संदीप ने कुल मिलाकर गली पार कर बड़ी सड़क की तरफ कदम रखा ही होगा कि तभी पीछे से विशाखा की आवाज सुनाई पड़ी, "ऐ, सुनो।"

संदीप ने मुड़कर देखा, विशाखा खिड़की-दरवाजे के सामने खड़ी है।

संदीप ने धीरे-धीरे कदम बढ़ाकर देखा, यह विशाखा जैसे पहले की विशाखा न हो। यह जैसे कोई दूसरी ही विशाखा हो। चेहरा गम्भीर जैसा, आंखें डबडबायी हुई। कहां गया विशाखा का वह हंसता हुआ चेहरा ! कहां गई उसकी आखों की वह भंगिमा।

"क्या हुआ ? तुम पुकार क्यों रही थी ?"

विशाखा बोली, "और करीब आओ, चुपके से एक बात बताऊंगी।"

"कहो।"

विशाखा ने उसी तरह धीमी आवाज में कहा, "देखो, मैंने तुमसे जो कुछ कहा है, वह सच नहीं है। मैं सब कुछ खाती हूं। चाचीजी मुझे सब कुछ खाने को देती हैं। मैं मांस, मछली, अण्डे, दूध, मक्खन, सेब, अंगूर बेदाना वगैरह सब कुछ खाती हूं और तुम्हारी दादी मां जो रुपये भेजती हैं, उनमें चाचीजी के सोने के गहने, कान के झुमके, कलाई की चूड़ियां, वगैरह नहीं बने हैं। उन रुपयों से मेरे पहनने को फ्रॉक-साड़ी, पैर के जूते, मेरा खाना-पहरावा सारा कुछ चलता है। अपनी दादी मां से कहना कि मेरी चाचीजी मुझे बेहद प्यार करती हैं, मेरी मां को भी प्यार करती हैं···"

संदीप को महसूस हुआ, वह दिन के वक्त भी जैसे सपना देख रहा हो। बोला, "मगर थोड़ी देर पहले जो तुमने कहा था कि बिजली के लिए पराठे बनते हैं और तुम्हारे लिए रोटी। तुमने जो बताया था कि मांस, अण्डे वगैरह खाना तुम्हें अच्छा नहीं लगता।"

"वह सब झूठी बात है। मैंने तुम्हें सब कुछ झूठ बताया था।"

यह कहकर विशाखा ने चुपके से दरवाजा बन्द कर दिया और घर के अन्दर चली गई।

संदीप के कानों में विशाखा की अन्तिम बातें गूंजने लगीं—"मैं सब कुछ खाती हूं, चाचीजी मुझे सब कुछ खाने देती हैं। मैं मांस-मछली, अण्डे, फल, दूध, घी, मक्खन, सेब, अंगूर बेदाना खाती हूं। तुम लोगों की दादी मां जो रुपये भेजती हैं, उनसे चाचीजी के सोने के गहने, कान के झुमके, कलाई की चूड़ियां, गले का

नहीं वने हैं। उन रुपयों से मेरे पहनने के लिए फ्रॉक-साड़ी, मेरे पैर के जूते, खाना-पहनना सारा कुछ चलता है। अपनी दादी मां से कहना कि मेरी वीजो मुझे वेहद प्यार करती हैं, मेरी मां को भी प्यार करती हैं...''

स दिन वह जव विडन स्ट्रीट के मकान में लौटकर आया तो सचमुच ही वहुत देर गई थी। दोपहर एक तरह से ढल चुकी है—गरमी की दोपहर। कलकत्ता की कोलतार की सड़क वीच-वीच में पिघल गई है। पैर के जूते कोलतार पर पड़ने से वहुत वार अटक गए थे।

घर के सामने आते ही संदीप ने देखा, एक विशाल गाड़ी खड़ी है। गाड़ी के ड्राइवर के वदन पर खाकी वर्दी है, सिर पर सफेद पगड़ी। चेहरे पर खासी वड़ी-वड़ी मूंछें। यह किसकी गाड़ी है। इस तरह की गाड़ी और इस तरह का ड्राइवर इस मकान में उसने इसके पहले कभी नहीं देखा था। कौन आया है?

और-और दिनों की तरह गिरिधारी अन्दर नहीं था। एकवारगी वाहर वाकायदा एटेनशन की मुद्रा में खड़ा है। क्या हुआ? एकाएक वह मालिक का इतना वफादार कैसे हो गया? किसकी गाड़ी है?

फिर भी संदीप पर नज़र जाते ही गिरिधारी ने हाथ उठाकर वाकायदा सलाम किया।

संदीप ने हाथ उठाकर नमस्कार करते हुए पूछा, ''यह किसकी गाड़ी है? घर पर कौन आया है?''

गिरिधारी ने कहा, ''वड़े साहव। मेरे वड़े मालिक।''

''वड़े मालिक का मतलव? वड़े मालिक तुम्हारे कौन होते हैं?''

''आप जानते नहीं? वड़े मालिक हावड़ा से आए हैं—दादी मां का छोटा लड़का—''

दादी मां का छोटा लड़का! यानी दादी मां का छोटा वेटा! फिर क्या वे देवीपद मुखर्जी के छोटे लड़के मुक्तिपद मुखर्जी हैं—सैक्सवी मुखर्जी एंड कंपनी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर? सौम्य मुखर्जी के चाचा! उन लोगों के वेलुड़ के कारखाने के मालिक। इस मकान के वैभव और इतिहास के मालिक! संदीप इन्हीं का अन्न खाता है। इसका मतलव यह कि इस मकान के मल्लिक चाचा से शुरू कर कामिनी, फुल्लरा, कालीदासी, सुधा, विन्दु, इस घर के रसोइए, नौकर-चाकर, कंदर्प, वावूघाट के दशरथ वगैरह के अन्नदाता।

अन्नदाता को एक वार देखने की संदीप के मन में ख्वाहिश जगी। उसने सिर्फ उनका नाम ही सुना है। और सिर्फ नाम ही नहीं, उनके वारे में वहुत कुछ सुन है। दादी मां के वड़े लड़के शक्तिपद के वाद ही उनकी पैदाइश हुई थी। उ दिनों देवीपद मुखर्जी के सौभाग्य का सूर्य चमक रहा था। समाज, कार्य-स्थल चारों तरफ उनको मान-सम्मान और खातिरदारी वढ़ रही थी—यहां तक लाट साहव अक्सर उन्हें दावत पर वुलाते थे। उनकी कृपा के लिए लोग-वाग उन इर्द-गिर्द मंडराते रहते। साथ ही उनकी फैक्टरी में दिन-व-दिन उत्पादन वढ़ जा रहा था। लंदन, फ्रांस, जर्मनी में उनके ब्रांच ऑफिस थे। उस जमाने में

उन्हें अक्सर विदेश जाना पड़ता था। दो-तीन बार दादी मां भी उनके साथ विदेश जा चुकी हैं। उस खानदान में एक-एक कर दो लड़कों का जन्म लेना मात्र शुभ का संकेत नहीं था, बल्कि भविष्य के संबंध में निश्चिन्त होने जैसी एक घटना थी।

आदमी की किस्मत जब जगती है तो शायद इसी तरह सैलाब की तरह आती है। एकदम से दोनों किनारे लबालब भर जाते हैं। उस समय उसे किसी भी तरह रोका नहीं जा सकता है।

शक्तिपद के जन्म के समय ऐसे धूमधाम से खुशहाली मनाई गई थी कि उसकी स्मृति आज भी हर मुहल्ले के लोगों के दिल में ताजा है। उस दावत में लाट साहब तक को शरीक होना पड़ा था। विलायत के मैकडोनल्ड साहब को भी निमंत्रित किया गया था। कलकत्ता का कोई भी ऐसा संभ्रान्त न था जिसे निमंत्रित न किया गया हो।

लेकिन दूसरी बार? मुक्तिपद के पैदा होने पर?

उस बार का तामझाम पहले वाले तामझाम को भी मात दे गया था। एक-दो दिन नहीं, लगातार एक हफ्ते तक उस उत्सव का सिलसिला चलता रहा था। कलकत्ता के हर मुहल्ले के लोगों को पता चल गया था कि मुखर्जी परिवार को द्वितीय पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई है। उन दिनों कलकत्ता की जानकारी का अर्थ था पूरे भारत की जानकारी प्राप्त होना। मल्लिक चाचा तब इस घर में नए-नए आए थे। बताया था—"जानते हो, उस समय स्वदेशी आन्दोलन का युग था। एक ओर जहां सभी लोग अंग्रेजों के खिलाफ थे, वहीं दूसरी ओर कुछ लोग स्वदेशी आंदोलन में भाग ले रहे थे। तमाम लोग अंग्रेजों को इस मुल्क से बाहर खदेड़ना चाहते थे। तुम लोगों ने वह जमाना नहीं देखा है।"

संदीप ने यद्यपि देखा नहीं है लेकिन सुना है अवश्य। उस समय जो युद्ध छिड़ा था तो कलकत्ता पर बम बरसाया गया था। जापानियों ने बम गिराया था। कलकत्ता के बहुत सारे आदमी कलकत्ता छोड़कर जहां-तहां भाग गए थे। उसके बाद देश में अकाल पड़ा था। सब-कुछ सुनी-सुनाई बातें हैं। उसके बाद हिन्दू-मुसलमानों में झड़प, मारपीट और कत्लेआम की वारदातें। इन सारी कारगुजारी के पीछे अंग्रेजों का हाथ था। हिन्दुओं और मुसलमानों में झड़प हो तो अंग्रेजों को ही फायदा है। ऐसे हालात में उन्हें यह मुल्क छोड़कर नहीं जाना पड़ेगा, यही उनका मकसद था।

उस युग में करीब-करीब तमाम लोग जब अंग्रेजों को भगाने का तोड़-जोड़ कर रहे थे, सुभाष बोस कलकत्ता से भागकर जापान के रेडियो से अंग्रेजों के खिलाफ जहर उगल रहे थे। लेकिन उस समय भी मुखर्जी वंश के लोग अंग्रेजों के पक्षधर थे। उस समय भी इस इमारत के कमरों की दीवारों पर बड़े लाट और लाट साहब की तस्वीरें टंगी थीं, इस घर के मर्द अंग्रेजी तौर-तरीकों से कोट-पैंट पहनते थे। उस समय इस घर के बाशिन्दे मन और प्राणों से अंग्रेजों का कीर्तन करते थे।

उस घर का मंझला लड़का पहले जिस तरह अंग्रेजों का अनुकरण करते हुए अदब-कायदे और चाल-चलन की नकल करता था, अब भी वह उसी तौर-तरीकों से चल रहा है। देवीपद मुखर्जी जिस तरह अक्सर विलायत जाते, आज के युग में

मुक्तिपद भी अक्सर इंगलैंड, अमरीका, जर्मनी, अफ्रीका और ईजिप्ट जाते हैं।

संदीप घर के अन्दर गया। ठाकुरबाड़ी पार कर मल्लिकजी के कमरे के पास पहुंचने पर पाया कि वहां ताला लगा हुआ है। कहां गए वे ?

एकाएक पीछे से किसी ने पुकारा, "आप कहां थे बाबू ?"

संदीप ने गरदन घुमाकर देखा तो रसोइघर पर नज़र पड़ी।

"देर होते देखा तो मैंने आपका भात ढंककर रख दिया है।"

संदीप ने पूछा, "मुनीमजी कहां हैं ?"

रसोइया बोला, "उन्होंने भी खाना नहीं खाया है। आज मंझले बाबू आए हैं। वे ऊपर गए हैं, बुलावा आया था।"

खैर, अब लौटने में देर होने की अब उसे कैफियत नहीं देनी पड़ेगी। अच्छा ही हुआ है। दरअसल यह क्योंकि उसकी नौकरी है तो हर काम के लिए मालिक को उससे कैफियत मांगने का हक है। वहां जाकर संदीप रुपये दे आया है या नहीं, तपेश बाबू ने कुछ कहा है या नहीं। बहूरानी को दूध, घी, फल, दही, मांस-मछली खाने को मिलते हैं या नहीं और अगर मिलते हैं तो उसकी सेहत में सुधार हुआ है या नहीं— इस तरह की बहुत सारी बातों का जवाब उसे अभी तुरन्त देना होगा। और अगर इसके लिए अभी बुलावा न आए तो चाहे कल या परसों उसे अवश्य ही उत्तर देना होगा। तब ?

तब संदीप क्या कहेगा ? उस समय वह क्या जवाब देगा ?

हो सकता है दादी मां पूछें, "बहूरानी से कुछ बातें हुईं ?"

इसके उत्तर में वह क्या कहेगा ? वह 'हां' कहेगा या 'नहीं' ? यदि हां में उत्तर दे तो हो सकता है दीदी मां पूछें, "क्या बातें हुईं ?"

इसका भी वह क्या उत्तर देगा ? कहने को तो बहुत कुछ है। कहना होगा कि बहूरानी ने दो बार दो तरह की बातें कही हैं। एक बार कहा है कि उन एक सौ पच्चीस रुपयों से घर के तमाम लोग मांस-मछली, अंडे, दूध, घी, दही और फल खाते हैं, और-और लोग पराठे खाते हैं और वह कुछ भी नहीं खाती है। बिजली की पत्तल में मांस-मछली डाले जाते हैं और उसे निरामिष खाना खाना पड़ता है।

इनमें से कौन-सी बात कहने से दीदी मां खुश होंगी। सच कहने से या झूठ कहने से ? अगर संदीप बता दे कि तपेश गांगुली रुपये लेकर अच्छी-अच्छी चीजें खाते हैं और अपनी पत्नी के लिए सोने के गहने बनवाते हैं तो फिर क्या नतीजा निकलेगा ? फिर क्या शादी का रिश्ता टूट जाएगा ? अगर शादी का यह रिश्ता टूट जाता है, बगैर मेहनत किए हर महीने की एक सौ पच्चीस रुपये की आमदनी का स्रोत बंद हो जाएगा। उस समय किसके मत्थे दोष मढ़ा जाएगा ? उस समय हो सकता है वे दौड़े-दौड़े मल्लिकजी के पास आएं और उन्हें सुनने को मिले कि संदीप ने ही भंडाफोड़ किया है तो प्रश्न खड़ा होगा कि संदीप को इसकी सूचना कैसे प्राप्त हुई। संदीप से यह सब किसने कहा ? ऐसी हालत में विशाखा पर संदेह किया जाएगा और उसे जुल्मों का शिकार होना होगा। विशाखा से प्रतिशोध लेने के खयाल से विशाखा की मां योगमाया देवी पर और अधिक ज़ोर-जुल्म ढाए जाएंगे।

रसोइया बोला, "खाना परोस दिया है, आकर खा लीजिए।"

रसोईघर के एक कोने में खाना खाने के दौरान संदीप बहुत तरह के विचारों में गोते लगाने लगा।

पूछा, "अच्छा, यह तो बताओ महाराज, कि तुम्हारे मंझले बाबू का अचानक इतने दिनों के बाद आगमन क्यों हुआ है?"

रसोइया बोला, "मंझले बाबू तो अक्सर आते हैं। दादी मा भी तो कारोबार के मालिकों में से एक हैं। उनसे सलाह-मशविरा करने के लिए अक्सर आना पड़ता है।"

"तुम्हारा घर किस देश में है महाराज?"

रसोइया बोला, "कटक जिला—"

"तुम इस घर में कितने दिनों से काम कर रहे हो?"

"मंझले बाबू जब इस घर को छोड़कर चले गए, उसके एक साल पहले से इस घर में हूं। *दादी मां जब जगन्नाथ महाप्रभु के दर्शन करने गई थीं, उस वक्त वे* मुझे यहां ले आई थीं।"

सच, रसोइया बड़ा ही भला आदमी है। संदीप को बड़े जतन से खिलाता है। खुशकिस्मती से ही ऐसा आदमी मिलता है। दादी मा की किस्मत अच्छी है कि उन्हें दशरथ, कंदर्प और इस रसोइए जैसे भलेमानस मिले हैं। इसके अलावा मल्लिकजी जैसा ईमानदार आदमी। वरना दादी मां जान-सुनकर हज़ारों रुपये का हिसाब-किताब रखने का भार मल्लिकजी पर सौंपती ही क्यों?

"थोड़ा-सा और भात लीजिएगा बाबू?"

संदीप बोला, "नहीं, तुम लोग खाना खा चुके?"

"नहीं बाबू, मुनीमजी ने खाना नहीं खाया है। उनके पहले मैं कैसे खाना खा लूं?"

संदीप बोला, "तुम लोग बड़े ही अच्छे आदमी हो महाराज। तुम, गिरिधारी, दशरथ, कंदर्प सभी भलेमानस हैं। मुनीमजी भी भले आदमी हैं और दादी मा भी भली औरत।"

रसोइया बोला, "आप भी भले आदमी हैं। आप चूंकि भले हैं इसलिए आपको सबके अन्दर अच्छाई दिख पड़ती है।"

संदीप बोला, "मैं सिर्फ एक आदमी हूं और कुछ भी नहीं। हम कितने गरीब हैं, तुम यह नहीं जानते महाराज। कहूंगा तो तुम्हें यकीन नहीं होगा। मेरी मां ने दूसरे के घर में रसोइयादारिन का काम कर मुझे लिखाया-पढ़ाया है।"

कहते-कहते संदीप की आवाज़ में शायद थोड़ी बहुत गंभीरता आ गई थी। यही वजह है कि महाराज ने कहा, "बाबू, सबकुछ जगन्नाथ की दया है। उनकी दया से आप बड़े आदमी होइएगा, और भी बड़े होइएगा…"

उसके बाद एक लमहे तक चुप रहने के बाद फिर बोला, "मेरी दादी मा बहुत दुखित रहती हैं बाबू, बड़े ही दुख में हैं वे…"

"क्यों, दादी मा दुखी क्यों हैं? दादी मा को किस चीज़ का दुख है?"

महाराज बोला, "वह एक लंबी दास्तान है बाबू।"

संदीप ने कहा, "दास्तान क्या है, मुझे बताओ न महाराज।"

महाराज ने कोई जवाब नहीं दिया।

संदीप फिर भी हार मानने को तैयार नहीं हुआ। पूछा, "दादी मां के दुख की बातों का तुम्हें कैसे पता चला महाराज?"

महाराज बोला, "दादी मां की खास नौकरानी बिन्दु मेरी सगी बहन है।"

यह सुनकर संदीप अवाक् रह गया। बोला, "बिन्दु तुम्हारी सगी बहन है?"

महाराज बोला, "हां, वह मेरी बड़ी बहन है—मेरी विधवा बहन। यहां आने के बाद मैं अपनी दीदी को ले आया। दीदी से सुनने को मिला है, दादी मां का मन दुख से भरा हुआ है, वे बहुत ही दुखी हैं···दौलत रहने से ही आदमी सुखी नहीं हो जाता। इसीलिए दादी मां के भाग्य में दुख ही दुख है···"

सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कंपनी इंडिया लिमिटेड के संस्थापक चाहे जो भी हों, लेकिन फिलहाल इसके मालिक के तौर पर लोग जिन्हें जानते हैं वे हैं दादी मां के मंझले लड़के एम० पी० मुखर्जी—यानी मुक्तिपद मुखर्जी। स्वर्गीय देवीपद मुखर्जी के समक्ष लक्ष्मी सहज रूप में अवतरित हुई थीं लेकिन मुक्तिपद के समक्ष उतने सहज रूप में अवतरित नहीं हुई हैं। क्योंकि अंग्रेजों के शासन के दौरान व्यवसाय करना जितना आसान था, आजादी के बाद उतना आसान नहीं रहा। सिर्फ कानून की पाबन्दी ही नहीं, टैक्स के मामले में भी देशी सरकार ने कारगर कानून बना दिए। इस तरह के कानून बना दिए कि देश में कोई बहुत दौलतमन्द न रह सके। दौलतमन्दों को नीचे उतारकर आम लोगों के दर्जे में लाना होगा। गरीबों को ऊपर उठाने की हममें चूंकि शक्ति नहीं है तो देश में लोकशाही लाने की खातिर दौलतमन्दों को ही खींचकर नीचे ले आओ। उनकी गरदन पर करों का बोझा लाद दो। उनके खिलाफ यूनियनों के झमेले खड़े कर दो। मेहनतकशों से हड़ताल कराओ, मेहनतकशों से उनका घेराव कराओ। घेराव कराने से उनके कारबारों की तालाबन्दी हो जाने दो, कारोबार बन्द हो जाने दो। लाखों फैक्टरियां बन्द हो जाएं। उनकी आमदनी में कमी आने से ही वे श्रमिक-वर्ग की श्रेणी में आ जाएंगे। तभी वास्तविक जनतंत्र का आगमन होगा। अंग्रेज पूंजीपति थे और हम हैं प्रजातंत्रवादी, साम्यवादी। हम डेमोक्रेटिक सोशलिस्ट हैं। हम किसी को दौलतमन्द नहीं होने देंगे।

सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कंपनी इंडिया लिमिटेड पर भी इसका प्रभाव पड़ा। उस कानून की पाबंदी की लहर ने उस कंपनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर एम० पी० मुखर्जी को भी अछूता नहीं छोड़ा। उस समय बड़ा लड़का एम० पी० मुखर्जी और उनकी पत्नी का देहान्त हो चुका था। जिन्दा है तो केवल उनका नाबालिग पुत्र सौम्य मुखर्जी। वह जब तक नाबालिग रहेगा तब तक उसके लिए कंपनी का डाइरेक्टर होना नामुमकिन है, लेकिन उसके प्रभुत्व के देख-रेख का भार विधवा दादी मां श्रीमती कनकलता मुखर्जी पर रहेगा। उन लोगों के एवज में फैक्टरी और दफ्तर का काम-काज सौम्य मुखर्जी के चाचा एम० पी० मुखर्जी चलाएंगे।

इतने दिनों तक कंपनी में जो भी झंझट-झमेले खड़े होते थे, उसका भार एकमात्र मुक्तिपद को ही ढोना पड़ा है। जब भी फैक्टरी में श्रमिक-संकट खड़ा हुआ

है, श्रमिक अशांति ने ज़ोर पकड़ा है, हड़ताल हुई है, घेराव किया गया है, दफ्तर के काम से जब भी बाहर जाना पड़ा है, उस समय मुक्तिपद मुखर्जी ने ही सबकुछ की बागडोर संभाली है। जब कभी चैंबर्स ऑफ कॉमर्स का कान्फ्रेंस हुआ है, तब उन्हें बहुत बार उसका प्रेसिडेंट बनने का मौका मिला है। घर और बाहर की सारी ज़िम्मेदारी मुक्तिपद मुखर्जी को अकेले ही संभालनी पड़ी है।

मगर अब कुछ और ही बात है। और सौम्य मुखर्जी बालिग हो गया है। अब उसे चाचा के कामों की भागीदारी निभानी है। अब सौम्य मुखर्जी को फुलटाइम डाइरेक्टर बनना होगा।

दादी मां ने सारा कुछ सुना। बोलीं, "तुम क्या इसीलिए आए हो?"

मुक्तिपद बोला, "मां, तुम समझ नहीं रहीं। मुझे कितने ही झमेलों का सामना करना पड़ता है, वक्त मिल नहीं पाता।"

दादी मां बोलीं, "तुम्हें एक बार टेलीफोन करने का भी वक्त नहीं मिलता? एक बार यह जानने की भी इच्छा नहीं होती कि मां जिन्दा है या मर गई? तुम्हें इतना काम है?"

मुक्तिपद ने कहा, "तुम तो बस एक ही बात को दोहराती रहती हो। मैं यहां था कि खोज-खबर लेता? तुम्हारा रुपया ठीक वक्त पर भेजने को दफ्तर को ताकीद कर दी थी। अपने सेक्रेटरी को मैंने तो यह स्टैंडिंग ऑर्डर दे रखा है।"

"अपना स्टैंडिंग ऑर्डर अपने पास रख। तू क्या अपनी जेब से मुझे रुपया दे रहा है? वह तो मेरा रुपया तू मुझे ही दे रहा है। तू यह सब वाहियात बातें किसे कह रहा है?"

मुक्तिपद ने विनम्रता से कहा, "तुम यों ही बिगड़ जाती हो।···"

दादी मां बोली, "बिगड़ूंगी नहीं? तू यह सब किसे सुना रहा है? मैं क्या कुछ भी नहीं जानती?"

"अरे, मैं कह रहा था···"

दादी मां बोली, "तू यह सब अपने दफ्तर के अफसरों को समझाना। मुझे समझाने के लिए आने की जरूरत नहीं।"

मुक्तिपद ने कहा, "जर्मनी जाने के पहले तो मैं आया था।"

"यह तो आज से तीन महीने पहले की बात है।"

"उसके बाद वहां से स्टेट्स जाना पड़ा था, वहां से लंदन-पेरिस होते हुए मिडल ईस्ट गया था। वहां से···"

दादी मां बोली, "रहने दे। इतनी लंबी फेहरिस्त पेश करने की जरूरत नहीं। मैं भी उस तरह कितने ही बार दौरे पर जा चुकी हूं, मगर तेरी तरह घर की बात भूली नहीं हूं। मुझे टेलेक्स से भी खबर भेज सकते थे। तुम लोग जब छोटे थे तो लंदन-पेरिस से तुम लोगों की खोज-खबर नहीं ली थी? अब हाथ में कच्चा पैसा आ जाने से तू लाट साहब बन गया है। मालूम है, किसके पैसे से तेरा खाना-पीना चल रहा है? अभी तू मुझे खिला रहा है या मैं तुझे खिला रही हूं?"

इसका उत्तर सुनने के लिए ही दादी मां बोली, "जिन्दगी में मैं किसी की तावेदार बनकर नहीं रही और अब भी नहीं रहूंगी। जब तक जिन्दा रहूंगी, तब तक किसी की दान-दक्षिणा लेना नहीं चाहती। यह मत सोचना कि मैं तुम लोगों

ा पर निर्भर रहूंगी या किसी दूसरे की कमाई से मेरा पेट भरेगा।"

"मां, तुम दया की बात का जिक्र क्यों कर रही हो?"

"चुप रह, अब बकवास मत कर। तुम लोगों ने क्या सोचा है? सोचा है कि ामी नहीं हैं तो मैं भूखों मर जाऊंगी!"

मुक्तिपद ने कहा, "मां तुम..."

"चुप रह। बात करने में तुझे शरम नहीं लगती? मैंने बहुत सारे मर्द देखे र तेरे जैसा औरत का गुलाम नहीं देखा है..."

मुक्तिपद ने कहा, "मां, तुम ऐसी हरकत करोगी तो मैं फिर चला जाऊंगा... ा रहा हूं।"

"तूने क्या सोचा है कि तू चला जाएगा तो मैं निराहार रहूंगी?"

"निराहार रहने की बात क्यों उठ रही है मां..."

दादी मां बोलीं, "तू चला जाएगा, यह भय क्यों दिखा रहा है? मैं तेरी मां ूं, तू जब पैदा हुआ था तो तेरा वजन मात्र पांच पौंड था। डॉक्टर का कहना था, यह लड़का नहीं बचेगा। मैं भी जिद्दी औरत हूं। मैंने कहा था, मैं इसे ज़िन्दा रखूंगी ही। तेरी उम्र जब तक साल-भर की नहीं हो गई, मैं दिन या रात कभी सोई नहीं। कितनी ही नर्सों, डॉक्टरों और दवाइयों का इन्तजाम कराया था। नर्सिंग होम के तमाम लोग मेरे कारनामे देखकर हैरान थे। उन्होंने कहा था, अपनी ज़िन्दगी में उन्होंने कभी ऐसी मां नहीं देखी है।"

एक क्षण चुप रहकर दादी मां फिर कहने लगीं, "अब सोचती हूं, जो कुछ किया था, गलत ही किया। सोचती हूं, उस दिन तेरा गला दबाकर मार देती तो अच्छा होता। फिर मुझे इतनी तकलीफ नहीं झेलनी पड़ती।"

मुक्तिपद अब तक खड़े-खड़े बातें कर रहा था, अब दोनों हाथ से सिर थामकर सोफे पर बैठ गया।

दादी मां बोलीं, "क्या हो गया तुझे? लगता है, मेरी तीखी-कड़वी बातें तुझे अच्छी नहीं लगीं। तेरा सिर दर्द करने लगा?"

मुक्तिपद ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। जिस प्रकार हाथों से सिर को दबाए बैठा था, उसी प्रकार बैठा रहा। मुक्तिपद के जीवन के हर क्षण की कीमत करोड़ रुपया है। लेकिन उस क्षण उसने महसूस किया, करोड़ों रुपये चाहे पानी में बह जाएं परन्तु उनके बदले वह दादी मां से कुछेक करोड़ रुपये उपार्जित करके ही जाएगा।

"क्या हुआ, सिर का दर्द कम नहीं हुआ? माथे पर ज़रा अमृतांजन लगा दूं?"

"नहीं।"

दादी मां बोलीं, "क्यों, बहूरानी का जिक्र किया तो तेरा सिर दर्द करने लगा?"

इस पर भी मुक्तिपद को कुछ न बोलते देखकर दादी मां ने बिन्दु को पुकारा। बोलीं, "अरी बिन्दु, मेरी अमृतांजन की शीशी लाकर मुझे दे जा।"

बिन्दु ने अमृतांजन की शीशी लाकर जैसे ही दादी मां को लाकर दी, दादी मां उससे थोड़ा-सा मलहम निकाल अपने लड़के के कपाल पर लगाने लगीं। जब

मुक्तिपद छोटा था उस समय भी इसी तरह मलहम लगा देती थी। उस समय लड़का आराम पाकर अपनी मा की गोद मे सो जाता। इतने दिनों के दिन, इतनी उम्र में भी वही मुक्तिपद फिर से छोटा लड़का होकर उनके पास लौट आया है।

मुक्तिपद ने सोफे के पीछे सिर टिकाकर आख बंद करते हुए कहा, "मां, जरा मल्लिकजी को बुलवा लो।"

"क्यो ? उसे बुलाकर क्या करना है ?"

"जरा हिसाब-किताब समझ लूगा।"

बिन्दु को आदेश दिया गया कि वह मुनीमजी को बुला लाए।

बिन्दु ने सुधा को आदेश दिया और सुधा ने कालीदासी को। कालीदासी ने फुल्लरा को। फुल्लरा एक-मंजिले के खजांचीखाने में खबर पहुंचा आई।

मुक्तिपद ने पूछा, "सौम्य कहा है ?"

"क्यो ? उसे बुलाकर क्या होगा ? वह खाना खाकर शायद अपने कमरे में होगा।"

मुक्तिपद ने पूछा, "सौम्य आजकल क्या करता है ?"

"क्या करता है का मतलब ?"

मुक्तिपद ने कहा, "कहने का मतलब यह कि इक्ज़ामिनेशन तो खत्म हो चुका है। अब वह क्या करता है ?"

दादी मा ने कहा, "खाता-पीता है और सोता है। रात नौ बजे सदर गेट बन्द हो जाता है। उसके पहले ही वह घर लौटकर खा-पीकर सो रहता है। उसकी बाबत तू इतना कुछ क्यों पूछ रहा है ? वह ज़िन्दा है या मर गया, इस सम्बन्ध मे तो इतने दिनों से कोई पूछताछ नही की।"

मुक्तिपद बोले, "अब वह बालिग हो चुका है। अब उसे ऑफिस जाना चाहिए। उसे एक बार बुलवाओ न।"

दादी मां बोली, "बुलवाऊ ?"

उसे तत्क्षण बुलाया गया। इतने दिनों बाद चाचा आए हैं और उसे बुला रहे है, यह सुनकर फौरन जग गया। वह पूरी रात जगकर बिताता है, दादी मा को यह मालूम नही है। सौम्य सीधे दादी मा के कमरे के अन्दर आया।

मुक्तिपद ने सौम्य की ओर निहारते हुए कहा, "तुम्हारा चेहरा इस तरह क्यो दिख रहा है ? तुम इतनी देर तक सो रहे थे ?"

शर्म से सौम्य जरा सिकुड़-सा गया। बोला, "जरा नींद आ गई थी।"

मुक्तिपद बोले, "तुम्हें कोई काम-धाम नही है, इसी वजह से इतना सोते हो। तुम्हारी दादी मां कह रही थी कि तुम रात नौ बजे के बाद तुरन्त सो जाते हो। तुम्हें इतनी नींद क्योंकर आती है ? तुम्हें तो डॉक्टर से मशविरा करना चाहिए। तुम्हें जरूर ही किसी-न-किसी बीमारी ने धर दबोचा है।"

सौम्य ने सिर झुकाकर कहा, "नही, मुझे कोई बीमारी नही है।"

"कोई बीमारी नहीं है तो फिर इतनी देर तक सोते क्यो हो ? मैं किसी भी दिन रात बारह बजे के पहले सोने नही जाता और भोर चार बजते न बजते बिस्तर छोड़कर चला आता हूं। अपनी इस उम्र मे भी मैं दसियो आदमी का काम

अकेले करता हूं। अब मैं भी उम्रदार हो चुका हूं, अब तुम काम-काज समझ लो।"

सौम्य ने सब-कुछ सुना पर बोला कुछ भी नहीं।

मुक्तिपद ने कहा, "अभी-अभी मैं पूरी दुनिया का चक्कर लगाकर लौटा हूं। चार महीने से मुझे ज़रा भी आराम नहीं मिला है। इन कई महीने के दरमियान घर के किसी आदमी की खोज-खबर लेने का मुझे अवकाश नहीं मिला। लन्दन में सिर्फ एक जगह बैठकर अपने ऑफिस में काम करने का मौका मिला है। बस, उन दो दिनों के दौरान ही रात में ज़रा सो सका हूं। अगर तुम यह सब काम-काज कर सको तो मैं बेलुड़ की फैक्टरी की देखरेख अच्छी तरह कर सकता हूं।"

उसके बाद एक लमहे तक खामोश रहने के बाद फिर कहना शुरू किया, "कल तुम हम लोगों के हेडऑफिस आ सकोगे?"

सौम्य और क्या कह ही सकता है! बोला, "जाऊंगा।"

"फिर तुम कल ठीक साढ़े नौ बजे हम लोगों के हेडऑफिस पहुंच जाना। उसके बाद मैं तुम्हें वहां से बेलुड़ की फैक्टरी ले जाऊंगा। अभी से सब काम-काज समझ लो। अगर मैं किसी दिन बीमारी की चपेट में फंस जाऊं तो ऐसी हालत में तुम्हीं देख-रेख करोगे। तुम अब बालिग हो चुके हो। तुम भी अब से हम लोगों के फुल-फ्रेजेड डाइरेक्टर बन जाओगे।"

सौम्य चाचा की सारी बातें सुन रहा था। उसके चाचाजी ने फिर कहना शुरू किया, "फिर अभी तुम जाओ। सब मिलाकर अभी तुम नींद से जगे हो। अब तुम्हें ज्यादा देर तक रोककर नहीं रखूंगा। यह बात याद रखना जाओ।"

कमरे से उठकर जाने के बाद सौम्य को लगा कि उसकी जान में जान लौट आई।

बिंदु सिर पर पल्लू रख कमरे के अन्दर आई और बोली, "बाहर मुनीमजी आकर खड़े हैं। आने कहूं?"

दादी मां बोलीं, "हां, भेज दे।"

मल्लिकजी अब तक कमरे के बाहर खड़े थे। सुबह से वे संदीप के इन्तज़ार में थे। बड़े ही तड़के एक सौ पच्चीस रुपये संदीप को थमाकर तपेश गांगुली के घर भेजा था। दफ्तर जाने के पहले ही उन्हें यह रकम मिल जाए, इसकी व्यवस्था की थी उन्होंने। मगर सवेरे के दस बज गए, फिर ग्यारह और उसके बाद बारह। संदीप लौटकर नहीं आया। कलकत्ता वह नया-नया आया है, इसलिए भय होना स्वाभाविक है। बस में चढ़ने-उतरने के दौरान धक्का लगने से गिर पड़ना असंभव नहीं है।

जब वे इन्हीं विचारों में डूबे हुए थे, एकाएक महाराज आया और सूचना दी, "मुनीमजी, मंझलेबाबू आए हैं।"

मंझले बाबू! मंझले बाबू के आने की खबर सुनकर मल्लिकजी ने समझा, आज उनका दोपहर का भोजन नहीं हो सकेगा।

महाराज बोला, "आप अभी तुरन्त खाना खाकर जाइएगा?"

मल्लिकजी ने तुरन्त एक कुरता पहना और बोले, "नहीं, अब खाना-पीना मेरा नहीं हो सकेगा। कब मंझले बाबू की बुलाहट आ जाए, इसका कोई ठीक है?

मंझले बाबू के जाने के बाद ही खाना खाऊंगा। इसके अलावा सदीप भी अब तक नहीं आया है। वह कहीं बस मे तो दब नहीं गया ! वह आएगा तो एक साथ ही खाना खाएंगे।"

बहुत देर से वे हिसाब-किताब का खाता लेकर तैयार थे। जब तीन-मंजिले से बुलाहट आई तो तत्क्षण वहां चले गए। जाने पर सुनने को मिला, मुन्ना बाबू अन्दर गए हुए हैं। एक व्यक्ति कमरे के अन्दर हो तो दूसरे का न जाना ही शिष्टाचार है। लिहाजा कमरे के बाहर इन्तजार करते रहे। उसके बाद मुन्ना बाबू जैसे ही बाहर निकलकर आए, बिन्दु ने आकर पुकारा, "आइए मुनीमजी, चले आइए।"

मल्लिकजी पर नजर पड़ते ही मझले बाबू ने पूछा, "क्या हाल-चाल है? सब कुशल है न?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, आपके आशीर्वाद से सब ठीक-ठाक ही है।"

मझले बाबू ने सीधे काम की बातें छेड़ दी, "आपको एक बात कहने को बुलवाया है। दो महीने पहले ऑफिस से आपके पास दादी मा के नाम से एक लाख रुपये भेजे गए थे उन्हे आपने रोकड़ मे दर्ज नही किया है न? जल्दीबाजी की वजह से मैं आपसे कहना भूल गया था।"

मल्लिकजी फौरन रोकड़ के पन्ने को निकालते हुए बोले, "उन रुपयो को घर आते ही मैंने दादी मा के हवाले सौंप दिया था।"

दादी मा बगल मे ही खड़ी थी। बोली, "हां, मैंने उन रुपयों को गिनकर रख लिया था।"

मल्लिकजी ने इस बीच रोकड़ के उस खास पन्ने को निकालकर मंझले बाबू के सामने रखते हुए कहा, "यह देखिए, यहा मैंने उन रुपयों को जमा के मद मे दर्ज कर लिया है।"

"नही, उसे काट दें।"

यह कहकर अपने पोर्टफोलियो से डॉट पेन निकाल पूरी लिखावट को रगड़कर काट दिया। जब देखा ऊपर से कुछ दिख नही रहा है, तो उन्होंने निश्चिन्तता की सांस ली। उसके बाद बोले, "अब टोटल भी काट दीजिएगा। नए सिरे से टोटल कर लीजिएगा। रोकड़ पर कब किसकी नजर पड़ जाए, कोई ठीक नहीं। इनकम टैक्सवाले देख लें तो···"

उसके बाद मल्लिकजी से कहा, "अच्छा, अब आप जा सकते है। अब से कौन-सा फिगर पोस्टिंग करना होगा और कौन-सा नही, इसकी जानकारी मुझसे प्राप्त कर लीजिएगा।"

मल्लिकजी ने सिर हिलाकर हामी भरी और कमरे से बाहर चले गए।

दादी मा की ओर निहारते हुए मुक्तिपद बोले, "जिस तरफ मैं ध्यान नही देता, वहीं गड़बड़ी पैदा हो जाती है। यही वजह है कि तुमसे कह रहा हूं, सौम्य अब फैक्टरी जाना शुरू कर दे।"

दादी मां खामोशी में डूबी रही।

मंझले बाबू उठकर खड़े हो गए और बोले, "अच्छा, चलता हू। फिर किसी दिन आऊंगा।"

दादी मां वोलीं, "इतनी फिज़ूल की वातें क्यों करता है ?"

"फिज़ूल की वातें ?"

"फिज़ूल की वातें नहीं तो और क्या ? मैंने क्या कभी तुम्हारी किसी वात पर यकीन किया है कि अव यकीन करने लगूं ?"

मुक्तिपद वोला, "लगता है, अव भी मेरे प्रति तुम्हारा आक्रोश खत्म नहीं हुआ है।"

दादी मां वोलीं, "आक्रोश तभी समाप्त होगा जव मैं मर जाऊंगी।"

इसके वाद ज़रा रुककर फिर वोलीं, "हां, एक वात वताए देती हूं मुक्ति ! मेरे मरने की सूचना पाने पर एक वार देखने चले आना—भूलना नहीं।"

"तुम इस तरह की वात क्यों कह रही हो ?"

दादी मां वोलीं, "कहूंगी क्यों नहीं ? तू राक्षसी के हाथ पड़ गया है। वह क्या तुझे छोड़नेवाली है ? उफ़, गृहस्वामी ने कैसी लड़की से तेरी शादी का रिश्ता तय किया था ! उस औरत ने किसी दिन मेरी हड्डी-पसली तोड़ दी थी। अव देखना, तेरी हड्डी-पसली भी तोड़ने के वाद ही तुझे छोड़ेगी।"

यह सव वातें मुक्तिपद के लिए पुरानी हो चुकी हैं, इसलिए कहा, "अव चलता हूं मां।"

यह कहकर सचमुच ही जाने लगा था लेकिन किसी वात की याद आते ही दोवारा सोफे पर वैठ गया। वोला, "हां, एक ज़रूरी वात तुमसे कहना भूल गया था, हालांकि वही कहने आया था। तुम सौम्य की शादी करने को तैयार हो ?"

दादी मां ने हैरत के साथ पूछा, "शादी ? एकाएक शादी की वात !"

मुक्तिपद ने कहा, "सौम्य तो अव वड़ा हो चुका है। इसी उम्र में शादी होना अच्छा होता है। एक अच्छी-सी पात्री है। तुम कहो तो लड़की दिखाने का इन्तजाम करा दूं।"

"तू एकाएक सौम्य की शादी के लिए इतनी माथापच्ची क्यों करने लगा ? इसमें तेरा कौन-सा स्वार्थ जुड़ा हुआ है ?"

"स्वार्थ क्या रहेगा ? भैया नहीं रहे, लिहाजा मुझे ही चारों तरफ की निगरानी रखनी है। इसके अलावा तुम्हें भी एक संगिनी की ज़रूरत है। घर में वहू आएगी तो हर वक्त तुम्हारी सेवा में लगी रहेगी।"

दादी मां हंस दीं—व्यंग्य की हंसी थी वह। वोलीं, "सेवा ? सेवा वहुत हो चुकी है। तेरी वीवी ने मेरी जो सेवा की है उसका धक्का अव तक संभाल नहीं सकी हूं। अव पोते की वहू आकर मेरी सेवा करेगी, यही मेरे भाग्य में लिखा था ! उतनी सेवा मैं वरदाश्त नहीं कर पाऊंगी। उतनी सेवा मेरी फूटी किस्मत को नहीं सुहाएगी। तू वल्कि जहां जा रहा है, वहीं जा—"

मुक्तिपद ने कहा, "मां, मैं आज यही वात कहने आया था।"

"क्यों, वता तो सही। सौम्य के विवाह के मामले में तू इतनी उत्सुकता क्यों दिखा रहा है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "एक नई पार्टी को मिड्ल ईस्ट में पांच सौ करोड़ रुपये का एक ठेका मिला है। हमीं लोगों की जात का है—वे लोग चटर्जी हैं। लड़की भी काफी पढ़ी-लिखी है—एम० ए० पास किया है इस वार।"

दादी मां ने आश्चर्यचकित होकर कहा, "पांच सौ करोड़ रुपये के ठेके से शादी का कौन-सा ताल्लुक है?"

"मेरा कहना है कि लड़की के बाप के व्यवसाय के बारे में भी तुम्हारे लिए जानकारी प्राप्त करना जरूरी है। उन लोगों की आर्थिक स्थिति कैसी है, यह तो जानना हमारे लिए आवश्यक है। इसके अलावा—"

"इसके अलावा क्या?"

"इसके अलावा अगर यह शादी हो जाती है तो वे लोग ठेके के थर्टी पर्सेंट ऑर्डर हम लोगों के 'सेवसवी मुखर्जी' फर्म को भी देंगे। पांच सौ करोड़ रुपये का थर्टी पर्सेन्ट कितने करोड़ रुपये होते हैं, इस पर तुम एक बार सोचकर देख लो।"

दादी मां कुछ बोलें कि इसके पहले ही मुक्तिपद ने फिर कहना शुरू किया, "एक बात और। यह है लेबर की बात। आजकल लेबर ट्रबल हम लोगों के बंगाल का सबसे बड़ा 'हेडेक' है। चटर्जी का बड़ा लड़का ट्रेड यूनियन का लीडर है। वे लोग हाथ में रहेंगे तो हमें कितनी सहूलियत होगी, इस पर गौर करो। एक ही ढेले से दो चिड़ियों का शिकार किया जाएगा। हमारा फर्म उस दृष्टि से सुरक्षित हो जाएगा।"

दादी मां कुछ देर तक हैरानी के साथ अपने लड़के के चेहरे पर आंखें टिकाए रही। मुक्तिपद ने पूछा, "क्या हुआ? क्या सोच रही हो?"

दादी मां बोली, "मैं सोच रही हूं, यह किस तरह की अवनति का आगमन हो रहा है। गृहस्वामी जीवित होते तो तेरे गाल पर थप्पड़ मारकर तुझे घर से निकाल देते।"

मुक्तिपद ने कहा, "पिताजी का जमाना और हमारा जमाना एक नहीं है मां। तुम ठीक से समझ नहीं पा रही।"

"अच्छी तरह समझ गई हूं। तू चुप रह, और ज्यादा बोलेगा तो मैं भी तुझे थप्पड़ मारकर घर से निकाल दूंगी, यह कहे देती हूं। भतीजे की शादी होगी, उसमें भी रुपये चाहिए। तू मुझे लालच दिखा रहा है, तेरी यह हिम्मत!"

"मां, तुम घर के अन्दर रहती हो, यही वजह है कि तुम्हें कुछ पता नहीं है। मुझे इसके चलते पूरी दुनिया का चक्कर लगाना पड़ता है, रात-दिन करोड़पतियों के साथ कान्फ्रेन्स करना पड़ता है, मिनिस्टरों को पार्टी देनी पड़ती है। मुझे किस परेशानी के हद से गुजरना पड़ता है, तुम यह नहीं समझती।"

दादी मां ने कहा, "तू मां से जहां-तहां की बातें मत कर। मैं तेरी मां हूं, यह ध्यान में रख।"

मुक्तिपद बोला, "खैर जाने दो, तुम सुनना नहीं चाहती तो मैं फिर नहीं कहूंगा। फिर भी इतना बता देना चाहता हूं कि आजकल मुझे नींद नहीं आती। नींद की टिकिया लेने पर ही नींद आती है। यही वजह है कि पागल जैसा होकर तुम्हारे पास चला आया हूं—तुम भी भगा दे रही हो तो फिर मैं क्या कर सकता हूं?"

दादी मां बोली, "रुपये-पैसे के बारे में जरा कम सोचा कर, तभी नींद आएगी।"

मुक्तिपद बोला, "यह सब अब होनेवाला नहीं है। अब काफी वक्त गुजर

चुका है।"
"तो फिर मेरी तरह सवेरे गंगा नहाने जाया कर।"
मुक्तिपद बोला, "नहीं मां, अब एक ही उपाय है तुम्हारे हाथ में।"
"क्या?"
"तुम सौम्य की शादी मिस्टर चटर्जी की बेटी से करा दो। फिर देखोगी मुझे नींद की टिकिया नहीं लेनी पड़ेगी। रुपये तो मिलेंगे ही, साथ ही साथ लेवर-ट्रबल भी दूर हो जाएगा।"
दादी मां बोलीं, "नहीं, यह किसी भी हालत में नहीं हो सकता—मैं किसी हालत में इस बात पर राजी नहीं हो सकती। गृहस्वामी तुम लोगों की शादी कराकर जो पाप कर गए हैं, मैं उस गलती को नहीं दोहराऊंगी।"
"फिर? फिर सौम्य की शादी नहीं कराओगी?"
दादी मां ने कहा, "मैं गरीब आदमी के घर से सौम्य के लिए बहू ले आऊंगी।"
"यह क्यों?"
"हां, तेरी औरत ने तुझे जिस तरह मुझसे छीन लिया है, सौम्य की पत्नी को मैं ऐसा करने नहीं दूंगी। ऐसे घर से पोते के लिए बहू ले आऊंगी जो हमेशा मेरी तावेदार बनकर रहेगी। वह मुझसे सौम्य को छीनकर अपना घर-संसार अलग नहीं बनाएगी।"
मुक्तिपद ने कहा, "लेकिन गरीब घर की लड़की लाने से उसके मां-बाप, भाई-बहन वगैरह अगर तुम्हारे सिर के भार बन जाएं तो?"
दादी मां ने कहा, "इससे भी कुछ नहीं बिगड़ेगा। कम-से-कम वे तेरी बीवी की तरह मेरी गरदन पर चढ़कर मेरा गला नहीं टीपेंगे।"
मुक्तिपद ने अब चुप्पी साध ली।
थोड़ी देर बाद कहा, "तो तुम मेरी पार्टी के घर में सौम्य को नहीं ब्याहोगी?"
"नहीं।" दादी मां का उत्तर था।
"तुम्हारा आखिरी फैसला यही है?"
दादी मां बोलीं, "हां, मेरा आखिरी फैसला यही है।"
एक लमहे के लिए खामोशी खिंच गई। उसके बाद दादी मां, शान्त स्वर में बोलीं, "मैंने सौम्य की शादी तय कर दी है।"
मुक्तिपद जैसे आसमान से नीचे गिर पड़े हों। बोले, "सौम्य की शादी तय कर दी है? कहां? कब शादी होने जा रही है?"
दादी मां बोलीं, "पात्री के बाप नहीं हैं, विधवा मां है।"
"उनकी गृहस्थी का खर्च कैसे चलता है?"
दादी मां बोलीं, "मां अपनी बेटी के साथ देवर के गले का भार बनी हुई है। देवर रेल में किरानी की नौकरी करता है।"
मुक्तिपद के चेहरे पर विरक्ति, घृणा और अवहेलना की रेखाएं उभर आईं। बोला, "यह क्या, हमारे खानदान के नाम पर तुम बट्टा लगाओगी? मेरे दफ्तर के अफसरान क्या कहेंगे? उन्हें मैं कैसे अपना मुंह दिखाऊंगा? इससे तो बेहतर यही

था कि मुझसे कहतीं। हमारी कम्पनी के कितने ही अफसरों की लड़कियां थीं, उनमें से किसी से मैं सौम्य की शादी का रिश्ता तय कर देता। उनमें से किसी की लड़की से सौम्य का विवाह करने से वह स्वयं को धन्य समझता। उस शादी में तुम्हें ढेर सारा दहेज मिलता। कुछ काले पैसे मिल जाते—"

दादी मां चिल्ला उठीं। दरअसल वह जैसे चिल्लाहट न होकर दादी मां की एक खौफनाक चीख हो। बोली, "चुप रह, बिलकुल चुप हो जा।"

मुक्तिपद मुखर्जी, सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर, मानो सकते में आ गए—आर्तनाद सुनकर भयभीत हो उठे। भय से थर-थर कांपने लगे।

दादी मां दुबारा तेज आवाज में बोलीं, "चुप रह, बिलकुल चुप हो जा।"

उसके बाद बोली, "सोचा था, लिख-पढ़कर तू इंसान हो गया है। अब देख रही हूं कि तू गदहा बन गया है—बिलकुल गदहा। जा, मेरे घर से निकल जा। मेरी नजरों से दूर हो जा—मैं तेरा चेहरा तक देखना नहीं चाहती। निकल-निकल, मेरे सामने से हट जा।"

मुक्तिपद अब वहां खड़े नहीं रह सके। सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी इण्डिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर एम० पी० मुखर्जी वहां से सीधे निकल, तेज कदमों से सीढ़ियां उतरते हुए एक-मंजिले पर चले आए और गाड़ी के अन्दर घुस आत्म-रक्षा के खयाल से बोल पड़े, "ऑफिस।"

ड्राइवर ने जैसे ही गाड़ी स्टार्ट की, वह अमरीकी गाड़ी अपनी दूर की मंजिल तक पहुंचने के लिए तेज रफ्तार से भागने लगी। गिरिधारी ने साहब को एक लम्बा सैल्यूट किया, पर साहब की दृष्टि उस पर पड़ी ही नहीं जैसे। अपमान-लज्जा-घृणा से उसके साहब आहत और विध्वस्त हो गए हैं, यह बात बिहार के छपरा जिले के एक तुच्छ गांव के अधिवासी गिरिधारी सिंह की समझ में नहीं आया।

मल्लिकजी ज्यों ही रोकड़-बही लेकर लौटे कि रसोइया आकर हाजिर हुआ। बोला, "आप आ गए? चलिए, खाना खा लीजिए।"

मल्लिकजी बोले, "संदीप अब तक लौटकर क्यों नहीं आया? इतनी देर होने की बात तो न थी। उसे इतनी देर क्यों हो रही है?"

रसोइया बोला, "संदीप बाबू तो आ गए हैं, अभी वे खाना खा रहे हैं।"

"कहां है?"

यह कहकर वे रसोइए के साथ रसोईघर की ओर चले गए। संदीप उस वक्त भी खाना खा रहा था। मल्लिकजी ने अपनी जगह पर बैठकर पूछा, "तुम कब आए? मैं तुम्हारे लिए बैठे-बैठे बहुत देर तक इन्तजार करता रहा। आखिर में बहुत दिनों के बाद मंझले बाबू का यहां आगमन हुआ। उनके द्वारा बुलाए जाने पर मैं ऊपर चला गया था। अभी-अभी वापस आया हूं। तुम्हें घर वापस आने में इतनी देर क्यों हो गई?"

संदीप ने कहा, "जिस बस से हम जा रहे थे उसके तले एक आदमी दब गया।

लोगों ने हमें नीचे उतार दिया।"

"हाय बेचारा ! उसके बाद ?"

"उसके बाद दूसरी बस पर सवार होने में और एक घंटे की देर हो गई।"

मल्लिकजी खाना खाते हुए बोले, "आखिरकार मनसातल्ला लेन के मकान में पहुंच गए थे न ?"

संदीप तब तक खाना खा चुका था। बोला, "हां।"

"तपेश गांगुली से मुलाकात हुई थी ?"

"नहीं।" संदीप ने उत्तर दिया।

"यह क्या ! मुलाकात नहीं हुई ? फिर रुपया क्या वापस ले आए ?"

"नहीं। दे दिया। तपेश गांगुली को आज माहवारी तनख्वाह मिलनेवाली थी। लिहाजा वे दफ्तर चले गए थे। रुपया मैं विशाखा की मां को दे आया।"

"रसीद ले आए हो ?"

"हां। मेरे कुरते की जेब में है।"

"अच्छा, तुम जाकर हाथ धो लो। मैं खाना खाकर कमरे के अन्दर आ रहा हूं।"

संदीप ने नलघर के अन्दर हाथ-मुंह धोया और वहां से चला गया। उसे चिंता सताने लगी। मल्लिक चाचा अगर सारी बातें पूछें तो वह क्या जवाब देगा ? कहने को तो बहुत कुछ है। मनसातल्ला लेन के सात नम्बर मकान की खिड़की-दरवाज़े पर खड़ी होकर विशाखा ने जो कुछ बताया था, सारा कुछ कहना पड़ेगा। विशाखा को मांस-मछली, फल, दूध, दही, घी वगैरह खाने को नहीं दिया जाता है, यह बात भी बताई थी विशाखा ने। हालांकि बिजली को सारा कुछ खाने को मिलता है। जिस दिन घर में सबके लिए रोटी बनाई जाती है, उस दिन बिजली के लिए परांठे बनाए जाते हैं और उसी के पास बैठकर विशाखा सूखी रोटियां खाती है। दोनों के लिए दो तरह के इन्तज़ाम हैं। जबकि दादी मां जो रुपया देती हैं वह विशाखा के लिए ही देती हैं। बिजली या और किसी दूसरे व्यक्ति के लिए नहीं। विशाखा किसी दिन इस घर की दुलहन बनकर आएगी, वह इस घर की गृहिणी बनेगी। विशाखा के स्वास्थ्य, लिखाई-पढ़ाई, खाने-पहनने को रुपये की कोई कमी न हो, इसी उद्देश्य से दादी मां इतने रुपये देती हैं। अगर ऐसा न हो तो फिर रुपया देने से लाभ ही क्या है ?

खाना खाकर मल्लिकजी कमरे में आए। चूंकि आज मंझले बाबू आए थे इसलिए खाना खाने में बहुत देर हो गई। आते ही कहा, "अब बताओ कि उन लोगों ने क्या कहा ? बहूरानी से मुलाकात हुई थी ?"

"हां।" संदीप ने कहा।

"कोई बातचीत हुई ?"

संदीप तय नहीं कर पाया कि क्या कहना अच्छा रहेगा। सच बात भी तो कभी-कभी आदमी को कड़वी लगती है। अप्रिय सत्य कहना क्या उचित है ? यह सुनकर यदि मल्लिक चाचा क्रोधित हो उठें तो ? दादी मां अगर असन्तुष्ट हो जाएं ? ऐसी हालत में उसकी यह नौकरी रहेगी ? नौकरी चली जाएगी तो उसकी लिखाई-पढ़ाई का सिलसिला कैसे चलेगा ? उसे कहां से रुपये मिलेंगे ? इसके

अलावा अगर उसे नौकरी से हटा दिया जाए तो वह क्या इस मकान में रह पाएगा ? ऐसी स्थिति में उसे किराए का मकान लेना होगा। किराए पर मकान लेने में ढेर सारे रुपयों की जरूरत पड़ेगी। वह रुपया उसके पास कहां से आएगा ? गोपाल का पता उसे मालूम होता तो उससे जाकर पूछता कि इतने रुपये उसके पास कहां से आते हैं। शिक्षा-दीक्षा के बगैर भी अगर कलकत्ता में रुपया कमाया जा सकता है तो फिर इतने सारे युवक कॉलेज में क्यों पढ़ते हैं ?

मल्लिकजी बोले, "क्यों, चुप क्यों हो गए ? क्या सोच रहे हो ?"

"नहीं, कुछ भी नहीं।" सदीप ने कहा।

"फिर मेरी बात का उत्तर क्यों नहीं दे रहे हो ? दादी मां ने मुझे बुलाकर कहा है, बहूरानी से तुम्हारी मुलाकात हुई है या नहीं, तुमसे कोई बातचीत हुई है या नहीं, बहूरानी मांस-मछली, दूध, फल, छेना खाती है या नहीं। तुम्हें अपने पास ले आने को कहा है। वे तुमसे सारी बातों की पूछताछ करेंगी।"

सदीप को डर का अहसास होने लगा। अगर दादी मां यही सब सवाल करें तो उस हालत में सदीप क्या उत्तर देगा ?

अचानक फुलरा कमरे के अन्दर आई। बोली, "मुनीमजी, दादी मां आपको बुला रही हैं।"

मल्लिकजी ने कहा, "लो सुन लो, दादी मा का बुलावा आया है। चलो-चलो, ज्यादा देर मत करो—तुम्हारे लिए ही वे बैठी हुई हैं। उनका पूरा दिन झमेलों के बीच गुजरा है। सवेरे मझले बाबू से दादी मां की बहुत झड़प हुई है। लिहाजा उनका मूड बिगड़ा हुआ है। उनकी हर बात का सही-सही उत्तर देना, समझे ? फालतू बातें मत करना।"

उसके बाद दुबारा बदन पर कुरता डाला। कमरे के दरवाजे पर ताला लगाकर बोले, "चलो।"

यह कहकर सामने के बरामदे की तरफ कदम बढ़ाए। सदीप भी उनके पीछे-पीछे चलने लगा। उसे ऐसा लगा जैसे वह फांसी का मुजरिम हो। फांसी का मुजरिम जिस तरह फांसी के तख्ते की तरफ बढ़ता है, सदीप भी उसी तरह सामने की ओर बढ़ने लगा।

सदीप को अब भी लगता है, वह पापी है। उसने पाप ही तो किया था। पाप किए बगैर कहीं ऐसा होता है ? आदमी की आंखों की ओट में पाप न किया जाए तो वह क्या पाप नहीं है ? हम केवल आदमी के बाहरी हिस्से को देखकर फैसला करते हैं। लेकिन ड्राइंग रूम के आदमी क्या वाकई इंसान होते हैं ? अन्दर महल के लोगों के वे क्या सगोत्र हैं ?

उस दिन के बाद कितने ही महीने, कितने ही साल गुजर चुके हैं। कितने ही सम्मान, अपमान, प्रशंसा, निंदा, आशा और निराशा ने जिस प्रकार उसे आमन्त्रित किया है उसी प्रकार उस पर आक्रमण भी किए हैं। लेकिन उनसे क्या उसमें कोई मौलिक परिवर्तन आया है ? जब उसके पास रुपये-पैसे नहीं थे, उस समय वह जैसा था, रुपया-पैसा हो जाने पर क्या दूसरी तरह का हो गया था ? तब क्या उसने दूसरा ही चेहरा पहन लिया था ? दूसरे सम्प्रदाय का अनुयायी हो गया था ?

जीवन जीने के क्रम में सदीप ने इस दुनिया में केवल दो किस्म के लोगों के

को स्वीकार किया है—उन दो में से एक है इंसान और दूसरा हैवान। का चेहरा पहनकर जो मनुष्येतर जीवन जैसा व्यवहार करता है हम उसे ानुस कहते हैं। वे आसमान से नहीं टपकते, बल्कि यहीं फूलते-फलते हैं। कि मनुष्य समाज में जन्म लेते हैं इसलिए उनका चेहरा मनुष्य जैसा होता स तरह के आदमी साफ-सुथरे कपड़े, चुस्त-दुरुस्त कोट-पैंट पहनते हैं इसलिए वाग उन्हें भद्र पुरुष के रूप में रेखांकित करते हैं।

संदीप जिन्दगी-भर इंसानों और हैवानों से मिलता-जुलता रहा है, लेकिन नों को इंसान समझने की कभी गलती नहीं की है।

उदाहरण के तौर पर गोपाल को लिया जा सकता है। गोपाल यानी गोपाल जरा। उसने खुले हाथों खर्च किया है, गाड़ी पर घूमता-फिरता रहा है वह। चा है, पैसे के बल पर दुनिया के पाप-पुण्य, मान-सम्मान वगैरह को जीत लेगा। गर ऐसा ही होता तो इस बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए नंबर भवन के मालिक ौर सैक्सबी एण्ड कंपनी के डाइरेक्टर सौम्य मुखर्जी की यह दुर्दशा क्यों होती? ह अशिक्षित, बेड़ापोता का पितृहीन गोपाल जिस समुदाय का है, उसी समुदाय का है यह शिक्षित, सद्वंश की सन्तान सौम्य मुखर्जी। उसी वर्ग के हैं ये दोनों। संदीप के लिए दोनों के वजूद एक ही स्तर, एक ही दर्जे के हैं।

वरना गोपाल और सौम्य मुखर्जी की परिणति एक जैसी होती ही क्यों?

इस 'क्यों' का उत्तर संदीप को मालूम है, लेकिन वह अभी नहीं बाद में बताया जाएगा। उसके लिए इस कहानी को धीरज रखकर शुरू से सुनना पड़ेगा।

अब उसी आरम्भ या शुरुआत की बातें बताता हूं :

दादी मां का वह दिन अत्यधिक मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न के दौर से गुज़रा है। जिस तरह सवेरे-सवेरे गंगा नहाने बाबूघाट जाती हैं, उस दिन भी गई थीं। उसके बाद घर लौटकर जप-तप और आह्णिक किया था। उसके बाद हर रोज़ जो कुछ नाश्ते में लेती हैं, वही लिया था। थोड़ा-सा फल, छेना और दूध। उसके बाद पूरे मकान के काम-धाम की देखरेख का सिलसिला चला था। उसी समय उन्हें नौकरानियों के अभाव, अभियोग और सुख-सुविधा के बारे में सुनना पड़ा था। सुनकर बाकायदा, सब कुछ का समाधान ढूंढ़ निकाला था। उसके बाद मुनीमजी निर्धारित समय पर रोकड़-बही लेकर जमा-खर्च का हिसाब-किताब समझाने आए थे। यह काम भी खत्म हो चुका था। यह सब दैनिक कार्यसूची में शामिल है। उसके बाद दोपहर में उनका निरामिष खाना रसोइया ले आया था। उनका खाना जैसे खाना नहीं, बल्कि नियम का पालन हो जैसे। लेकिन उस दिन उस नियम-पालन के दौरान ही मुक्तिपद आ धमके।

उसके बाद मुक्तिपद से बातचीत करते-करते एक बार सौम्य को बुलवा भेजा गया, उसके बाद मुनीमजी की बुलाहट हुई। उसके बाद सौम्य के विवाह के सन्दर्भ में चर्चा चली। इस बीच कभी तो मुक्तिपद को प्यार किया, मां की तरह स्नेहवश उसके कपाल पर अमृतांजन लगाया और फिर कभी गृह की मालकिन की हैसियत से उसे भला-बुरा कहा। अंत में लड़के को अपमानित कर घर से निकाल दिया।

यह सब घटना या दुर्घटना दादी मां के जीवन के लिए कोई नई बात नहीं है। दादी मां के कठोर शासन से यह गृहस्थी चलती रही है। लेकिन उनके विधवा होने

के बाद से उस शासन में तापमान यन्त्र का पारा मानो क्रमशः और ऊँचे उठकर अन्तिम बिन्दु तक पहुंचने-पहुंचने पर है। जाहिर है, इसी वजह से पूरी इमारत उनकी झुंझलाहट से कितनी ही बार घबराहट से सिमट-सी गई है।

लेकिन इतने सारे काम रहने के बावजूद सौम्य की याद उनके ध्यान से नहीं उतरी है। उन्हें याद आ गया है कि आज महीने की पहली तारीख है। मनसातल्ला लेन जाकर माहवारी पैसा दे आना है। वह रुपया क्या दिया जा चुका है?

बिन्दु ने आते ही सूचना दी—मुनीमजी अभी अपने कमरे में बैठे हैं और उनके साथ है वही नौजवान।

अदर कदम रखते ही दादी मां ने पूछा, "रुपया दे आए?"

"हां, दे आया हूं।" संदीप ने उत्तर दिया।

"तुम दे आए? बहूरानी के चाचा क्या बोले?"

"चाचा से मुलाकात नहीं हुई। उनका भी तो आज वेतन पाने का दिन है, इसलिए वे घर में नहीं थे। मेरे पहुंचने के पहले ही वे दफ्तर जा चुके थे।"

दादी मां ने पूछा, "तुम्हें जाने में देर हो गई थी?"

"हां।"

"देर क्यों हुई?" दादी मा ने पूछा।

मल्लिकजी ने संदीप की ओर से उत्तर दिया, "यह जिस बस पर चढ़कर जा रहा था, उसके नीचे एक आदमी दब गया। इसीलिए बस बदलने में देर हो गई।"

दादी मां ने पूछा, "फिर रुपया तुम किसे दे आए?"

संदीप ने कहा, "बहूरानी की मा को।"

"बहूरानी की मा कुछ बोली? खुश हुई?"

संदीप ने कहा, "हां, चेहरा देखने पर लगा कि बहूरानी की मा इससे खुशी हुई है।"

"उसके बाद? बहूरानी पर नजर पड़ी?"

संदीप क्या जवाब दे, समझ नहीं सका। क्या कहने से उसकी नौकरी बरकरार रहेगी, साथ ही विशाखा की भी कोई क्षति नहीं होगी, यह सोचकर तय नहीं कर पाया।

एकाएक बोला, "नहीं।"

दादी मां बोली, "यह क्या! तुम इतनी दूर गए और बहूरानी से बगैर मिले चले आए? तुमसे तो मैंने कह दिया था कि तुम पूछना, मैं हर महीने जो रुपये भेजती हूं, उसमें वह मांस-मछली, फल, दूध, घी, छेना वगैरह खाती है या नहीं।"

संदीप चुप्पी ओढ़े रहा। वह क्या कहे। वह क्या जवाब दे!

दादी मां ने इसके बाद कहा, "मैंने तुमसे यह सब पूछने नहीं कहा था?"

"हां।" संदीप ने कहा।

"फिर यह पूछा क्यों नहीं?"

संदीप चुपचाप खड़ा रहा।

"क्या हुआ? जवाब क्यों नहीं दे रहे हो?"

संदीप ने कहा, "मैंने पूछा नहीं।"

दादी मां गुस्सा कर बोली, "अरे, तुम तो अजीब लड़के हो! पूछा क्यों

नहीं ?"

संदीप ने कहा, "पूछने का वक्त नहीं मिला।"

"वक्त नहीं मिला का मतलब ? एक बात पूछने में कितना वक्त लगता है ?"

संदीप तब दादी मां के जिरह के दबाव से अन्दर-ही-अन्दर कांप रहा था। बोला, "रुपया लेते ही बहूरानी की मां अन्दर चली गईं, इसीलिए और कुछ पूछने का मुझे वक्त नहीं मिला।"

दादी मां बोलीं, "उन्हें तुमने बुलाया क्यों नहीं ? क्यों नहीं कहा कि तुम्हें कुछ बातें पूछनी हैं—क्यों नहीं कहा कि दादी मां ने पूछने कहा है ? कहने में तुम्हें शरम लगी या भय ?"

संदीप ने जरा सोचकर कहा, "शर्म महसूस हुई।"

दादी मां बोलीं, "मुनीमजी, आपके देस का यह लड़का तो बड़ा ही शर्मीला लग रहा है। इससे तो मेरा कोई काम नहीं हो सकेगा।"

मल्लिकजी संदीप की बातों से स्वयं पसोपेश में पड़ गए। संदीप से कहा, "तुम्हें शर्म महसूस हुई ? क्यों ? किस बात की शर्म ? यह तो बिलकुल मामूली-सी बात है। यह बात कहने में तो लज्जा का कोई कारण नहीं होना चाहिए। तुम्हें शर्म क्यों महसूस हुई, बताओ।"

संदीप कोई जवाब नहीं दे सका। मल्लिकजी ने फिर कहा, "बताओ, चुप क्यों हो गए ?"

उस दिन की बात सोचने पर संदीप को अब भी शर्म का अहसास होता है। उस समय वह इतने लजीले स्वभाव का क्यों था ? क्यों उसे सच कहने में दुविधा महसूस हो रही थी ? विशाखा की असली बातें कहने में उसे क्या डर लगा था ? विशाखा की क्षति होने का भय ? विशाखा की कोई क्षति होती है तो उसे किस क्षति का सामना करना होगा ? विशाखा से उसका कौन-सा रिश्ता है ? और अगर लज्जा का ही अनुभव हुआ तो किस बात की लज्जा ? विशाखा ने तो अपने घर की सारी बातें खुलकर बता दी थीं। वह सब बात बाहरी आदमी के सामने बोलना उचित नहीं है। फिर विशाखा ने क्यों घर की सारी अन्दरूनी बातें एक ही सांस में निश्छल तौर पर बता दीं ?

वह सब कहने में विशाखा को तनिक भी संकोच का अनुभव नहीं हुआ। फिर क्या उसने सोचा था कि संदीप विशाखा के द्वारा कही गई बातें हू-ब-हू दादी मां से जाकर कहे ? सारा कुछ संदीप के लिए रहस्यमय हो उठा था। संदीप को डर लगा था कि अगर वह चाचीजी के अत्याचार की बात दादी मां से जाकर कह दे तो हो सकता है विशाखा की शादी के रिश्ते में दरार पड़ जाए। संदीप मानो चाहता था कि दादी मां के पोते से विशाखा की शादी हो।

दादी मां के गले की आवाज़ सुनकर संदीप की चेतना वापस आ गई। दादी मां मल्लिकजी से कहने लगीं, "आप एक काम करें मल्लिकजी। इस लड़के से कोई काम नहीं हो सकेगा। एक बार आप खुद बहूरानी के घर जाइए।"

उसके बाद अपनी बात सुधार कर बोलीं, "इसे भी अपने साथ ले जाइए। इसके लिए भी तो यह सीखना ज़रूरी है कि किससे किस तरह की बातें की जाएं। आप जाकर बहूरानी और उसकी मां को जाकर उन्हें मेरे पास ले आइए। मैं खुद

ही उनसे पूछकर देखूंगी कि मेरे द्वारा भेजे गए रुपये उन पर खर्च होता है या दूसरे पर।"

यह प्रस्ताव सुनकर मल्लिकजी अवाक् हो गए। बोले, "बहूरानी और उनकी मां दोनों को ले आऊंगा?"

"हां।" दादी मां ने कहा।

"आज ही जाऊं?"

दादी मां ने एक क्षण सोचा। उसके बाद बोलीं, "नहीं, आज बृहस्पतिवार है। बृहस्पतिवार निषिद्ध दिन होता है। आज जाने की जरूरत नहीं।"

"फिर कल जाऊं?"

दादी मां एक क्षण सोचती रहीं और उसके बाद बोलीं, "नहीं, कल मेरा सौम्य दफ्तर जानेवाला है। अभी मंझले बाबू आकर सौम्य को कल से दफ्तर जाने कह गए हैं, इसलिए मैं सवेरे व्यस्त रहूंगी। और परसों तो इतवार है। शनिवार दिन अच्छा नहीं होता। आप सोमवार को जाइए। ड्राइवर से पहले से ही कहकर रख दीजिएगा। वह आप दोनों को ले जाएगा और विशाखा व उसकी मां को ले आएगा। वे लोग यहीं खाना खाएंगे। खाना-पीना खत्म होने के बाद वह उन लोगों को पहुंचा आएगा।"

मल्लिकजी सारा कुछ समझ गए। बोले, "आपने जो कुछ कहा है, वही करूंगा।" यह कहकर मल्लिकजी कमरे से निकल बाहर चले आए। उनके पीछे-पीछे संदीप भी नीचे उतरकर चला आया।

पहले से ही सारा इन्तजाम ठीक था। ठीक नौ बजे सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की गाड़ी बारह बटे ए विडन स्ट्रीट की इमारत के सामने आकर खड़ी हुई। ड्राइवर के यूनिफार्म पर लाल रेशमी धागे की एम्ब्रोइडरी में मोनोग्राम किए हुए दो अक्षर हैं—एस० आर० एम०। यानी सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कंपनी।

दादी मां ने पहले से ही अपने पोते को सूचित कर दिया था। लेकिन सवेरे गंगा नहाकर लौटने के बाद जप-तप-आह्निक करने के बाद जब वे अपने पोते के कमरे के पास गईं तो उस वक्त देखा, अन्दर से दरवाजा बन्द है। घड़ी तब सुबह के सात बजा रही थी। वह रात नौ बजे खा-पीकर सोया है और अब दिन के सात बज रहे हैं। इतनी देर तक कोई आदमी सो सकता है!

दादी मां जोर-जोर से दरवाजा ठेलते हुए बोलीं, "अरे सौम्य, उठ।" बहुत देर तक दरवाजा ठेलने के बाद सौम्य उठा।

दादी मां बोलीं, "क्यों, तू कब तक सोता रहेगा? आज तुझे दफ्तर जाना है। याद नहीं है यह बात? रात नौ बजे तू सोने गया था और अब उठ रहा है? कितने बज रहे हैं, पता है?"

सौम्य ने क्या सोचा, कौन जाने! लेकिन दादी मां के सामने कुछ बोला नहीं।

दादी मां ने विन्दु से कहा, "बिन्दु, सुधा से कह दे कि वह रसोईघर जाकर खबर पहुंचा आए कि आज मुन्ना जल्दी खाना खाएगा। वह खा-पीकर आज नौ

साहब आएं या पुराने साहब ही रहें, हमारी तकदीर में कोई बदलाव नहीं आएगा।"

शुक्र है, यह सब बात कभी कंपनी के मालिकों के कान में नहीं पहुंचतीं। क्योंकि सामने आने पर सभी और ही तरह की बातें करते हैं। एक व्यक्ति आकर कहता है, "सर, मैं यहां के डिसपैंच सेक्शन का बड़ा बाबू हूं। अगर कोई फाइल न मिले तो मुझे बुलवा लें। मैं तीस साल से यहां काम कर रहा हूं।"

सौम्य ने इस तरह की बातें अनेकों की ज़बान से सुनीं। कोई डिसपैंच सेक्शन का बड़ा बाबू है, कोई आयात-निर्यात विभाग का चीफ सुपरिंटेंडेंट, कोई लिगल डिविजन का एडवाइजर और कोई फाइनेंस डिविजन का चीफ एकाउन्टेंट। इस तरह के और कितने ही आदमी हैं। सभी ने एक तरह की ही बातें कहीं—सभी ने नए डाइरेक्टर के काम-काज में सहायता प्रदान करने का वादा किया। एक-एक कर तमाम लोगों ने अपनी-अपनी फाइल लाकर दिखाई। हरेक के कहने का मतलब यही था कि वह अकेले ही दफ्तर चला रहा है। हरेक ने जाने के दौरान श्रद्धा के साथ उनके प्रति शुभकामना प्रकट की।

इसके बाद बेलुड़ की फैक्टरी। यह एक विशाल कार्य-स्थल है। अन्दर इतनी आवाज हो रही है जैसे कान फट जाएगा। सौम्य को इस बात का भी अहसास हुआ कि उन लोगों का जो ऐश्वर्य है उसके मूल में एकमात्र उसके दादा देवीपद मुखर्जी की सूझ-बूझ और समझदारी का हाथ है। वे ही कंपनी को उसकी साधारण स्थिति से इस उन्नत स्थिति तक ले आए थे।

मुक्तिपद उसे लेकर जहां भी गया, वहां के तमाम कर्मचारियों ने लंबी सलामी दागी। जैसे तमाम लोग धर्मपुत्र युधिष्ठिर हों। उसके बाद उसे अपने कमरे में लाकर बैठ गए।

बोले, "सब देख लिया न। देखकर तुम्हें क्या लगा?"

सौम्य ने कहा, "ट्रिमेंडस!"

"बाहर से देखने में ऐसा ही लगता है। लेकिन बैलेंस सीट देखोगे तो तुम्हें असली हालत का पता चलेगा। उसे एक दिन में समझ नहीं सकोगे। बहुत दिनों तक पढ़ने के बाद थोड़ी-बहुत जानकारी प्राप्त होगी। आज तुमने जिन लोगों को देखा उनमें से हरेक नवरी शैतान है। यह जान लो। उनमें से कोई तुम्हारा शुभ-चिंतक नहीं है। आजकल जिस तरह का लेबर-ट्रबल चल रहा है, इससे पता नहीं चलता कि कब तक इस तरह चलाया जा सकेगा। क्योंकि यहां का गवर्नमेंट हमारे खिलाफ है। उनकी राय में हम पूंजीवादी हैं, कैप्टलिस्ट हैं। उनकी राय है, हम वर्करों को एक्सप्लाएट कर रहे हैं—"

इस तरह की बहुत सारी बातें हुईं। सौम्य के लिए यह पहला दिन है, लिहाजा थोड़ी-बहुत बातें उसकी समझ में आईं और बाकी थोड़ी-बहुत समझने में वह नाकाम रहा।

चाचा बोले, "अभी तुम्हारी उम्र कम है, यही वजह है कि उतना समझ नहीं पा रहे हो। लेकिन यह जान लो कि यह सब जिम्मेदारी अकेले अपने कंधे पर लेने के बाद से मैं रात में ठीक से सो नहीं पाता। आइ एम नाउ एन इनसोमनिएक। तुम कल्पना कर सकते हो? अब मुझे दवा पीकर सोना पड़ता है। इसीलिए मैं तुम्हें

अपने हेल्पिंग हैंड की हैसियत से ले आया हूं।"

उस दिन मुक्तिपद मुखर्जी ने और बहुत-सी बातें कही थीं। वह सब बात बाद में सौम्य मुखर्जी को याद ही नहीं रही। लेकिन जितने दिनों तक वह कम्पनी जाता रहा है, उसे समझने में उतनी ही देर लगी है। दिन-भर सारा कुछ देखने के बाद उसने महसूस किया था कि कम्पनी को चालू हालत में रखने के लिए चाचा के साथ उसे भी जी तोड़ परिश्रम करना होगा। उसकी विचक्षणता, परिश्रम और व्यावसायिक बुद्धि पर ही उसकी खुद की और परिवार के तमाम लोगों की सुरक्षा निर्भर करेगी।

मुक्तिपद बोले, "इस विचक्षणता, परिश्रम और व्यावसायिक बुद्धि के अतिरिक्त और एक चीज़ आवश्यक है।"

"वह क्या?" सौम्य ने पूछा।

मुक्तिपद बोले, "आदमी पहचानने की कला।"

"आदमी पहचानने की कला का मतलब?"

"यह नहीं जानते? दुनिया में सबसे मुश्किल काम है आदमी की पहचान। हर कोई क्या आदमी पहचानने की कला में दक्ष होता है?"

सौम्य इस बात को ठीक से समझ नहीं सका।

मुक्तिपद बोले, "एक ही दिन में तुम सब कुछ समझ नहीं सकोगे। असल में हम सभी भलेमानस हैं। क्योंकि हम लोग सभी कोट-पैंट पहनकर घूमते हैं। लेकिन ऐसा होने से क्या हम सभी भलेमानस बन गए? इनमें से कितने लोग फोरटुवण्टी, कितने विश्वासघाती, और कितने धोखाधड़ी के कारोबार करनेवाले हैं, इसका हिसाब रखना बड़ा ही मुश्किल काम है। मैंने जीवन में बहुत सारे ऐसे आदमी देखे हैं जो रामकृष्ण मिशन को लाखों रुपये का दान देते हैं। खोज-खबर लेने पर पता चला है कि उनमें से बहुतेरे लोग काले बाज़ारिए भी हैं। इसके अलावा ऐसे भी आदमियों को देखा है जो जिन्दगी में झूठ नहीं बोले हैं पर खोज-खबर लेने पर पता चला है कि वे नाइट-क्लब जाकर रात बिताते हैं। और ऐसे भी आदमी देखे हैं जो सवेरे नींद खुलते ही रामकृष्ण परमहंस देव के चित्र के सामने आधे घण्टे तक जप करते हैं और तब दिन के काम शुरू करते हैं। लेकिन दफ्तर में दोनों हाथ से रिश्वत लेते हैं..."

तीसरे पहर की चाय पीने के दौरान यह सब वार्त्तालाप चल रहा था।

सौम्य ध्यान लगाकर चाचा की बातें सुन रहा था। यह है उसका दफ्तर के पहले दिन का अनुभव। मुक्तिपद ने इसके बाद फिर कहना शुरू किया, "अंग्रेजी में 'ऑनेस्टी' नामक एक शब्द है, यह तुम जरूर ही जानते होगे। लेकिन हम हैं बिजिनेसमैन। हमारी ऑनेस्टी से आम लोगों की ऑनेस्टी का बहुत बड़ा अन्तर है। हमारी ऑनेस्टी से डिक्शनरी की 'ऑनेस्टी' का कोई मेल नहीं है। तुम अगर डिक्शनरी की ऑनेस्टी का अर्थ मुखस्थ कर व्यवसाय चलाना चाहोगे तो व्यवसाय डूब जाएगा।"

सौम्य ने सब कुछ सुना, पर अपनी कोई राय जाहिर नहीं की।

मुक्तिपद ने अपना कथन जारी रखा, "इसका कारण क्या है? कारण यह है कि डिक्शनरी से हमारे जीवन का कोई ताल-मेल नहीं है। हम लोगों की जिन्दगी

में बहुत बदलाव आ चुका है, लेकिन डिक्शनरी नहीं बदली है। इसीलिए एक की जिन्दगी से दूसरे की जिन्दगी का इतना फासला है। मान लो, अपने बिजनेस के स्वार्थ के लिए तुम्हें एक बहुत बड़ी पार्टी को 'एण्टरटेन' करना है, तुम्हें उसे खिलाना-पिलाना है। तुम उससे डेढ करोड़ रुपये का काम वसूल लोगे। वहा अगर वह पार्टी तुम्हें ह्विस्की ऑफर करे तो तुम क्या कहोगे कि मैं ह्विस्की नहीं पीता? ऐसा कहोगे तो तुम्हारा काम कामयाब नहीं हो सकेगा। इच्छा न रहने पर भी तुम्हें बेझिझक ह्विस्की के घूट हलक के नीचे उतारना पड़ेगा। इसी का नाम है बिजिनेस अनिस्टी—"

इसके बाद मुक्तिपद फिर कहने लगे, "एक बात और। घूस लेना या घूस देना दोनो गैर कानूनी है। गैर कानूनी नहीं है?

"हा।"

"लेकिन बिजनेस के स्वार्थ के नाते तुम्हे घूस देना ही होगा। घूस न दोगे तो आज की दुनिया मे तुम पगु बन जाओगे। यह अभी-अभी की बात है कि जापान के प्राइममिनिस्टर तानका को चार साल की रिगरस इंपजमेंट की सजा दी गई है, साथ ही दो करोड रुपये का फाइन भी किया गया है। इसकी जानकारी है तुम्हें?"

सौम्य ने कहा, "नही।"

"यह क्या! तुम अखबार भी नहीं पढते? सवेरे नौ बजे तक तुम बिस्तर पर पडे-पडे नींद लेते रहोगे तो फिर इन बातो की जानकारी कैसे होगी? अखबार पढा करो। वह भी एक किस्म का एजुकेशन है। तानका के पहले क्या किसी जापानी प्राइममिनिस्टर ने घूस नहीं ली है? ली है, लेकिन पकडा नहीं गया। अन्तर बस इतना ही है। घूस इस प्रकार लेना और देना होगा कि पकड में न आए। आजकल तमाम दुनिया का हरेक ऑफिसियल घूस लेता है। घूस न लेने से कोई काम नही बनेगा—यह जान लो।"

अचानक मुक्तिपद के मन मे जैसे एक सदेह जग पडा। बोले, यह सब सुनने मे तुम्हे अच्छा लग रहा है? ठीक-ठीक बताओ।"

सौम्य को यह सब सुनना अच्छा नहीं लग रहा था। लेकिन उसने कहा, "अच्छा लग रहा है।"

मुक्तिपद ने कहा, "खैर, यह सब आज इतना ही। तुम काम करते-करते खुद ही सब समझ लोगे। मगर एक और बात बताए देता हू, काम की बात।"

सौम्य ध्यान लगाकर सुनने लगा।

मुक्तिपद बोले, "तुम्हारी शादी के बारे में कहना है। देखो, शादी भी आजकल एक किस्म का बिजिनेस है। हो सकता है तुम्हे इस पर यकीन न हो। मगर फैक्ट इज फैक्ट। मेरे कहने का मतलब है कि तुम्हें एक दिन शादी करनी ही है। तुम किस तरह की शादी करना चाहते हो? बिजिनेस वाइज मैरेज या इमोशनल मैरेज? फिर तुम्हे खुलासा ही बताता हू—हम लोगों की एक पार्टी है जिसने मिड्ल ईस्ट मे तकरीबन पाच सौ करोड़ डॉलर का एक ऑर्डर सिक्योर किया है। उसके एक अच्छी खूबसूरत लड़की है। मैं चाहता हूं, उस लडकी से तुम्हारी शादी हो, क्योकि इसके कारण हम लोगो के फर्म को अन्तत उस ऑर्डर का एक पोर्शन मिल जाएगा। इसका मतलब यह कि लगभग डेढ सौ करोड डॉलर का हमें प्रोफिट—

होगा। यदि यह शादी करने से हमें डेढ़ सौ करोड़ डॉलर का प्रोफिट मिलता है तो उस प्रोफिट का हिस्सा तुम्हें भी तो मिलेगा। व्हाट डू यू थिंक? इस विषय में तुम्हारी क्या राय है? यह प्लान कैसा है? तुम क्या इसे 'एप्रूव' करते हो?"

यह कहकर मुक्तिपद ने सौम्य के चेहरे पर अपनी आंखें टिका दीं। थोड़ी देर तक देखने के बाद बोले, "तुम्हें अभी तुरन्त इसका 'रिप्लाई' नहीं देना है। तुम इस पर सोचकर देख लो। तुम तो अब हर रोज़ ऑफिस आओगे। इस बीच ठीक से सोचकर जवाब देना। वैसी हड़बड़ी की कोई बात नहीं है।"

इस बीच तीसरे पहर की चाय का दौर खत्म हो चुका था। अब मुक्तिपद उठकर खड़े हो गए। इस बीच उनका बहुत ही कीमती वक्त बर्बाद हो चुका है। रुपयों की सांकल से उनके तमाम घण्टे बंधे हुए हैं। रात के वक्त भी रुपये-पैसे के सन्दर्भ में सोच पाते तो अच्छा रहता, मगर आजकल न सोने से उन्हें तकलीफ होती है। सवेरे माथा चकराने लगता है, इसलिए इच्छा न रहने पर भी सोने के पहले उन्हें ड्रग का सेवन करना पड़ता है। काश, जग पाते तो मुक्तिपद और कई करोड़ डॉलर उपार्जित कर सकते थे! लेकिन डॉक्टर की मनाही है। डॉक्टर ने कहा है, रुपये से बढ़कर जीवन है। लेकिन सच्चाई क्या यही है?

सच्चाई तो यही है कि हर कोई रुपये के पीछे ही भाग रहा है। एकमात्र गोपाल को ही दोष क्यों दिया जाए! सैक्सबी मुखर्जी एंड कंपनी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर मुक्तिपद मुखर्जी से देड़ापोता के गोपाल का क्या कोई अन्तर है? चाहे रुपये की बात हो या शक्ति की बात! और रुपये का ही तो अर्थ है शक्ति। जो आदमी कलकत्ता शहर के बीच नाइट क्लब चलाता है वह भी तो रुपये के लिए ही चला रहा है। रुपया कमाने के लिए मुक्तिपद मुखर्जी जो कुछ कर रहे हैं, नाइट क्लब का मालिक भी औरत और शराब के द्वारा वही काम कर रहा है। बदनामी केवल नाइट क्लब मालिकों के मत्थे मढ़ी जाती है, बदनामी केवल तपेश गांगुली जैसे लोगों के मत्थे मढ़ जाती है।

सात नम्बर मनसातल्ला लेन के मकान में उसी दिन से व्रत-पालन का सिलसिला शुरू हुआ था। पहले गंगा के बाबूघाट जाकर अकेले विशाखा व्रत करती थी, उसके बाद से योगमाया को उतना कष्ट नहीं झेलना पड़ा है। अब घर में ही व्रत कराने का उस पर भार सौंपा गया है। बिजली और विशाखा एक साथ व्रत करती हैं। व्रत करने में भी थोड़ा-बहुत खर्च होता है। चाहे जितना ही मामूली खर्च हो, वह तो घर का ही खर्च है। और किसी दूसरे खर्च का मामला होता तो देवरानी की तबीयत खराब हो जाती, देह-हाथ दुखता, सिर चकराता, कितनी ही तरह की बहानेबाजी का सिलसिला चलता। लेकिन इसमें उसका स्वार्थ है। विशाखा की तरह बिजली के लिए भी अगर कोई धनी-मानी पात्र मिल जाए तो फिर सारा खर्च सार्थक हो जाए।

योगमाया जो कुछ कहती जाती है, विशाखा और बिजली उसे दोहराती जाती हैं :

सीता जैसी सती बनूंगी

पति मिलेगा राम सरीखा
कौशल्या-सी सास मिलेगी
दशरथ जैसा ससुर मिलेगा।
देवर मुझको लक्ष्मण जैसा
दुर्गा जैसी सुहागिन होऊंगी
अन्नपूर्णा-सी राधूंगी भोजन
कुंती जैसी जननी बनूंगी
गंगा जैसी शीतल
लक्ष्मी जैसी प्यारी बनूंगी
शची जैसी इन्द्राणी बनूंगी।
भक्ति-भाव से पूजूं मैं देवता-चरण
मनोवांछा पूर्ण करो देव-देवीगण।

सवेरे नहा-धोकर गीले चौरट में भगवती, हरि और महादेव के चरणों को आंककर वे दोनों पूजा करती हैं। योगमाया कहती, "इस व्रत को करने के बाद खाना खाना। खाली पेट में, उपवास करते हुए इस व्रत को करना पड़ता है—यह मालूम है न?"

बिजली ने कुछ दिन पहले से व्रत करना शुरू किया है। वह पूछती, "यह व्रत करने से क्या होता है बड़ी मां?"

योगमाया कुछ कहे कि इसके पहले ही विशाखा एक ही सांस में बता देती है—"यह करने से सब कष्ट दूर हो जाता है, पिता के वंश का गौरव बढ़ता है, अच्छा घर-वर मिलता है।"

कुछ दिनों से यही क्रम चल रहा था, एकाएक उस दिन सदर दरवाजे की कुंडी खटखटाए जाने की आवाज सुनकर बिजली ने अन्दर से चिल्लाकर पूछा, "कौन है?"

पिताजी के अलावा और कौन हो सकता है! तपेश गांगुली बाजार गए हैं, शायद वे ही बाजार से लौटकर आए हैं। लेकिन दरवाजा खोलते ही बिजली अवाक् हो गई। देखा, उस दिन का वही बूढ़ा है और उसके पीछे वही खूबसूरत जैसा नौजवान! वह दौड़कर भीतर गई और बोली, "बड़ी मां, विशाखा की ससुराल से वे लोग आए हैं— वह बूढ़ा और वह खूबसूरत जैसा नौजवान।"

रानी के कान में यह बात पहुंच चुकी है। उसने पूछा, "कौन है री?"

बिजली ने दुबारा उसी बात को दोहराया, "विशाखा की ससुराल का वह बूढ़ा और वह खूबसूरत जैसा नौजवान।"

रानी का चेहरा एकाएक गम्भीर हो गया। बोली, "तुम लोग बड़ी मां को जाकर बुला लाओ। कहना, बाबूजी नहीं हैं, बाजार गए हैं। बड़ी मां को कहो कि उनसे मिल लें।'

योगमाया ने कमरे के पास आकर कहा, "मैं कैसे जाऊं बहन?"

रानी बोली, "तुम्हारे कुटुम्ब के घर के लोग आए हैं। तुम नहीं जाओगी तो क्या मैं जाऊं?"

योगमाया बोली, "ठीक है, मैं ही जाती हूं।"

होगा। यदि यह शादी करने से हमें डेढ़ सौ करोड़ डॉलर का प्रोफिट मिलता है तो उस प्रोफिट का हिस्सा तुम्हें भी तो मिलेगा। व्हाट डू यू थिंक? इस विषय में तुम्हारी क्या राय है? यह प्लान कैसा है? तुम क्या इसे 'एप्रूव' करते हो?"

यह कहकर मुक्तिपद ने सौम्य के चेहरे पर अपनी आंखें टिका दीं। थोड़ी देर तक देखने के बाद बोले, "तुम्हें अभी तुरन्त इसका 'रिप्लाई' नहीं देना है। तुम इस पर सोचकर देख लो। तुम तो अब हर रोज़ ऑफिस आओगे। इस बीच ठीक से सोचकर जवाब देना। वैसी हड़बड़ी की कोई बात नहीं है।"

इस बीच तीसरे पहर की चाय का दौर खत्म हो चुका था। अब मुक्तिपद उठकर खड़े हो गए। इस बीच उनका बहुत ही कीमती वक्त बर्बाद हो चुका है। रुपयों की सांकल से उनके तमाम घण्टे बंधे हुए हैं। रात के वक्त भी रुपये-पैसे के सन्दर्भ में सोच पाते तो अच्छा रहता, मगर आजकल न सोने से उन्हें तकलीफ होती है। सवेरे माथा चकराने लगता है, इसलिए इच्छा न रहने पर भी सोने के पहले उन्हें ड्रग का सेवन करना पड़ता है। काश, जग पाते तो मुक्तिपद और कई करोड़ डॉलर उपार्जित कर सकते थे! लेकिन डॉक्टर की मनाही है। डॉक्टर ने कहा है, रुपये से बढ़कर जीवन है। लेकिन सच्चाई क्या यही है?

सच्चाई तो यही है कि हर कोई रुपये के पीछे ही भाग रहा है। एकमात्र गोपाल को ही दोष क्यों दिया जाए! सैक्सबी मुखर्जी एंड कंपनी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर मुक्तिपद मुखर्जी से बेड़ापोता के गोपाल का क्या कोई अन्तर है? चाहे रुपये की बात हो या शक्ति की बात! और रुपये का ही तो अर्थ है शक्ति। जो आदमी कलकत्ता शहर के बीच नाइट क्लब चलाता है वह भी तो रुपये के लिए ही चला रहा है। रुपया कमाने के लिए मुक्तिपद मुखर्जी जो कुछ कर रहे हैं, नाइट क्लब का मालिक भी औरत और शराब के द्वारा वही काम कर रहा है। बदनामी केवल नाइट क्लब मालिकों के मत्थे मढ़ी जाती है, बदनामी केवल तपेश गांगुली जैसे लोगों के मत्थे मढ़ जाती है।

सात नम्बर मनसातल्ला लेन के मकान में उसी दिन से व्रत-पालन का सिलसिला शुरू हुआ था। पहले गंगा के बाबूघाट जाकर अकेले विशाखा व्रत करती थी, उसके बाद से योगमाया को उतना कष्ट नहीं झेलना पड़ा है। अब घर में ही व्रत कराने का उस पर भार सौंपा गया है। बिजली और विशाखा एक साथ व्रत करती हैं। व्रत करने में भी थोड़ा-बहुत खर्च होता है। चाहे जितना ही मामूली खर्च हो, वह तो घर का ही खर्च है। और किसी दूसरे खर्च का मामला होता तो देवरानी की तबीयत खराब हो जाती, देह-हाथ दुखता, सिर चकराता, कितनी ही तरह की बहानेबाज़ी का सिलसिला चलता। लेकिन इसमें उसका स्वार्थ है। विशाखा की तरह बिजली के लिए भी अगर कोई धनी-मानी पात्र मिल जाए तो फिर सारा खर्च सार्थक हो जाए।

योगमाया जो कुछ कहती जाती है, विशाखा और बिजली उसे दोहराती जाती हैं:

सीता जैसी सती बनूंगी

पति मिलेगा राम सरीखा
कौशल्या-सी सास मिलेगी
दशरथ जैसा ससुर मिलेगा।
देवर मुझको लक्ष्मण जैसा
दुर्गा जैसी सुहागिन होऊंगी
अन्नपूर्णा-सी राधूंगी भोजन
कुंती जैसी जननी बनूंगी
गंगा जैसी शीतल
लक्ष्मी जैसी प्यारी बनूंगी
शची जैसी इंद्राणी बनूंगी।
भक्ति-भाव से पूजूं मैं देवता-चरण
मनोवांछा पूर्ण करो देव-देवीगण।

सवेरे नहा-धोकर गीले चौरठ मे भगवती, हरि और महादेव के चरणों को आंककर वे दोनो पूजा करती है। योगमाया कहती, "इस व्रत को करने के बाद खाना खाना। खाली पेट मे, उपवास करते हुए इस व्रत को करना पड़ता है—यह मालूम है न ?"

बिजली ने कुछ दिन पहले से व्रत करना शुरू किया है। वह पूछती, "यह व्रत करने मे क्या होता है बडी मा ?"

योगमाया कुछ कहे कि इसके पहले ही विशाखा एक ही सास में बता देती है—"यह करने से सब कष्ट दूर हो जाता है, पिता के वंश का गौरव बढ़ता है, अच्छा घर-वर मिलता है।"

कुछ दिनो से यही क्रम चल रहा था, एकाएक उस दिन सदर दरवाजे की कुंडी खटखटाए जाने की आवाज सुनकर बिजली ने अन्दर से चिल्लाकर पूछा, "कौन है ?"

पिताजी के अलावा और कौन हो सकता है! तपेश गांगुली बाजार गए है, शायद वे ही बाजार से लौटकर आए है। लेकिन दरवाजा खोलते ही बिजली अवाक् हो गई। देखा, उस दिन का वही बूढ़ा है और उसके पीछे वही खूबसूरत जैसा नौजवान। वह दौड़कर भीतर गई और बोली, "बडी मा, विशाखा की ससुराल से वे लोग आए है— वह बूढा और वह खूबसूरत जैसा नौजवान।"

रानी के कान मे यह बात पहुच चुकी है। उसने पूछा, "कौन है री ?"

बिजली ने दुबारा उसी बात को दोहराया, "विशाखा की ससुराल का वह बूढ़ा और वह खूबसूरत जैसा नौजवान।"

रानी का चेहरा एकाएक गम्भीर हो गया। बोली, "तुम लोग बडी मा को जाकर बुला लाओ। कहना, बाबूजी नही है, बाजार गए है। बडी मा को कहो कि उनसे मिल लें।'

योगमाया ने कमरे के पास आकर कहा, "मैं कैसे जाऊ बहन ?"

रानी बोली, "तुम्हारे कुटुम्ब के घर के लोग आए है। तुम नही जाओगी तो क्या मैं जाऊं ?"

और वह मैला कपड़ा बदलने के लिए अन्दर चली गई। ठीक उसी वक्त बाज़ार की झोली थामे तपेश गांगुली ने अन्दर प्रवेश किया।

उन दोनों पर आंखें जाते ही तपेश गांगुली के चेहरे पर भरपूर मुस्कराहट घिर आई।

"अरे, आप लोग आ गए? मेरे लिए यह कितने भाग्य की बात है! आइए-आइए, अन्दर चलकर बैठिए। मैं बाज़ार गया था। अरे, कहां हो तुम लोग? ओ भाभी, चाय बनाओ, चाय। मुखर्जी भवन के आदमी आए हुए हैं।"

यह कहकर बाज़ार की झोली अन्दर फेंककर बाहर चले आए। बोले, "बताइए, क्या हाल-चाल है? आप लोगों की दादी मां सकुशल हैं तो?"

मल्लिकजी बोले, "हां, ईश्वर के आशीर्वाद से वे सकुशल हैं। आज आपके पास एक खास काम से आया हूं। दादी मां ने विशाखा और उनकी मां को एक बार अपने घर पर बुलाया है।"

"आप लोगों के घर पर बुलाया है? अचानक ऐसा क्यों?"

मल्लिकजी ने कहा, "यह मैं कैसे बता सकता हूं? हम तो हुक्म के बंदे हैं। दादी मां बोलीं, बहुत दिनों से उन्हें बहूरानी को देखने की इच्छा हो रही है। गुरुदेव के आने पर ही एक झलक देखा था। इसीलिए एक बार बहूरानी को देखने की इच्छा हुई है।"

"सो विशाखा को ले जाइए, लेकिन भाभी को क्यों ले जाइएगा?"

मल्लिकजी बोले, "दादी मां ने कहा है, विशाखा छोटी लड़की है, इसलिए उसकी मां को भी साथ में ले आना। आज दोपहर वे दोनों वहीं खाना खाएंगी।"

तपेश गांगुली बोले, "इस घर का रसोई वगैरह का काम अभी बाकी ही है। वह सब काम कौन करेगा?"

मल्लिकजी तत्काल इस बात का जवाब नहीं दे सके, इसलिए बोले, "देखिए, मुझे जो हुक्म मिला है, वही आपसे बताया। उन्हें ले जाने के लिए साथ में गाड़ी भी ले आया हूं।"

तपेश गांगुली बोले, "ठीक है, मैं एक बार अन्दर जाकर पूछ आता हूं।"

यह कहकर वे अन्दर चले गए। लेकिन अन्दर रानी के पास जाने पर देखा, उसका चेहरा गंभीर है। उसके सामने यह प्रस्ताव रखते ही बोली, "मुझसे क्यों पूछ रहे हो? मैं कौन होती हूं? वे लोग जिन्हें लिवाने आए हैं उनसे ही जाकर कहो।"

रसोईघर जाकर तपेश गांगुली बोले, "भाभी, तुमने सुना? विशाखा और तुम्हें ले जाने को उस मकान से आदमी आए हैं, तुमने यह सुना? तुम्हें और विशाखा को वहीं खाना खाने का न्योता दिया गया है। तुम लोगों के लिए गाड़ी आई है।"

योगमाया के कान में बात पहुंची या नहीं, पता नहीं चला। तपेश गांगुली ने दुबारा कहा, "भाभी, मैं क्या कह रहा हूं, तुम सुन नहीं रहीं?"

योगमाया बोली, "मैं नहीं जाऊंगी देवरजी। मुझे यहां ढेर सारा काम है। मैं चली जाऊंगी तो यह सब कौन संभालेगा?"

विशाखा वहीं खड़ी थी। वह बोली, "मां मैं जाऊंगी, वे लोग मुझे लिवाने

आए हैं।"

योगमाया ने कहा, "चुप रह मुहजली।"

उसके बाद देवर की ओर मुखातिब होकर बोली, "तुम उन लोगो से कह दे देवरजी, मैं नही जा पाऊगी और न ही मेरी लड़की जाएगी।"

रानी अब चुप न रह सकी। कमरे से आंधी की तरह बाहर आकर बोली, "तुम क्यो नही जाओगी बडी दीदी? अपने भावी कुटुंब के घर न जाकर तुम हमारे मुख पर कालिख पोतोगी? तुम्हारा यही मतलब है? अगर तुम हम लोगो से इतन रश्क करती हो तो मैं अपना गला सामने कर देती हू, लो पोत दो। तुम्हें जितनी मर्जी हो कालिख लगा दो, मैं चू तक नही करूंगी।"

यह कहकर रसोईघर की ओर अपना मुखडा बढ़ाकर त्रिभग मुरारि जैसी खड़ी हो गई।

तपेश गागुली को यह हरकत अच्छी नही लगी, अत वह बोला, "उफ़, क्या कर रही हो!"

रानी पति की ओर देख तनकर खडी हो गई और बोली, "चुप रहो, तुम किस किस्म के मर्द हो यह मुझे अच्छी तरह मालूम है। जांघिये पर धोती पहनने से ही कोई मर्द नही हो जाता। पास मे फूटी कौडी तक नही और यह नवाबी!"

तपेश गागुली पर चाहे कितनी ही तरह की बदनामी क्यो न मढी जाए लेकिन उनके बडे-से-बडे दुश्मन भी यह नही कहेंगे कि वे बदमिजाज है। पत्नी की बात के उत्तर में उन्होंने कहा, "ठीक है, मैं उन लोगों से कह देता हू कि वे नही जा पाएगी।"

लेकिन पत्नी इस पर भी खामोश नहीं हुई। बोली, "जाओ, जाकर यही कह आओ। मुझे अपमानित करने पर तुम्हारे मान-सम्मान मे अगर वृद्धि हो तो जाकर यही करो। मैं अब कुछ नही कहूगी।"

"तो फिर क्या करू, बताओगी?" तपेश गागुली ने पूछा।

रानी बोली, "तुम उन लोगों से क्या कहोगे, यह भी मुझे ही बताना होगा? फिर तुम मर्द क्यों हुए?"

तपेश गागुली ने कहा, "यह तो भारी परेशानी है। मैं क्या कहू, तुम यह भी नही बताओगी और न ही मेरी मर्जी के मुताबिक काम करने दोगी।"

"तुम क्या कच्ची उम्र के बच्चे हो कि बात करने का तौर-तरीका सिखा दू? तुम क्या यह नही जानते कि क्या कहने से गृहस्थ का मान-सम्मान बढ़ सकता है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "तुम्ही बता दो न कि क्या कहने से गृहस्थ का मान-सम्मान बढ़ सकता है।"

रानी ने कहा, "तो फिर तुम घर के भीतर बैठे रहो और मैं कोट-पैंट पहन ऑफिस जाया करूंगी।"

तपेश गागुली कुछ बोलने जा रहे थे लेकिन उसके पहले ही योगमाया बोली, "तुम उन लोगों से कह दो देवरजी, कि हम अभी नहीं आ पाएगी।"

हजली, मर जा—"

मां की मार खाकर विशाखा ओसारे से छिटककर नीचे आंगन में गिर पड़ी और चिल्लाकर रो उठी। योगमाया उस समय भी उसे पूर्ववत् गालियां दे रही थी, "रो, और ज़ोर से रो, रो-रोकर मुहल्ले के लोगों को इकट्ठा कर ले। मुहल्ले के लोग आकर देख लें कि मेरी कोख से कैसी शैतान लड़की पैदा हुई है।"

रानी ने क्षण-भर में ही आंगन में जाकर विशाखा के हाथ पकड़ लिए। परन्तु इस बीच विशाखा के सिर से टप-टप खून टपकने लगा है।

तपेश गांगुली बोले, "उफ्, यह कैसी मुसीबत आकर खड़ी हो गई! फौरन वहां टिंचर आइडिन लगा दो। जल्द-से-जल्द।"

रानी विशाखा को कमरे की तरफ ले जाती हुई पति से बोली, "देखा तो, अपनी आंखों से ही तुमने राक्षसी मां की हरकत देख ली—मेरी बात पर तुम्हें विश्वास नहीं होता।"

उसके बाद विशाखा को सांत्वना देती हुई बोली, "रो मत, चुप रह। कितनी बदनसीब है तू! ऐसी राक्षसी मां के पास क्यों जाती है तू! मेरे साथ आ।"

उसके बाद कमरे के अन्दर से चिल्लाकर बोली, "अजी, ज़रा इधर आओ, मेरे बक्से से ज़रा रुई निकाल दो।"

योगमाया उस समय भी रसोईघर के बरामदे पर प्रस्तर की मूर्त्ति की नाईं खड़ी थी। टिंचर आइडिन की जलन से विशाखा तब और जोर-जोर से चिल्ला रही थी। वह जितनी चिल्ला रही है योगमाया अपने अन्दर उतनी ही यातना का अनुभव कर रही है। अचानक रानी ने योगमाया के सामने आकर कहा, "मुंह बाए क्यों खड़ी हो? क्या सोच रही हो? देवर के मुंह पर कालिख लगाए बिना तुम्हारा खाना हजम नहीं हो रहा है? जाओ, फटाफट मुंह-हाथ धोकर मैला कपड़ा उतार कर दूसरा पहन लो और अपनी लड़की के बालों में कंघी कर उसे एक साफ-सुथरा कपड़ा पहना दो।"

इसके बाद रानी फिर बोली, "क्या हुआ? कान में आवाज़ नहीं पहुंच रही है? लड़की के सिर से खून बहाने से भी तुम्हें होश नहीं आ रहा है? तुम मां हो या राक्षसी? तुम अगर अपनी लड़की को मारना ही चाहती हो तो अपनी आंखों के सामने मैं यह नहीं होने दूंगी—यह तुमसे कहे देती हूं। लड़की का खून करना है तो किसी दूसरी जगह जाकर करो—इस घर में किसी भी हालत में नहीं।"

योगमाया तब भी बोली, "मैं उन लोगों के घर नहीं जाऊंगी।"

रानी बोली, "अच्छा दीदी, यह बताओगी कि तुम मुझे और कितना कष्ट देना चाहती हो? अपने घर में तुम्हें जो कुछ करना है करो, मगर कुटुंब के घर हमारी इज्जत उतारे बगैर तुम्हारा काम नहीं चल रहा है? मुझे तो सिर्फ दो ही हाथ हैं—एक हाथ में ढाल और दूसरे में तलवार। मैं किस हाथ से लड़ूंगी? क्या तुम्हारे पैरों पड़ूं, यही तुम्हारा मतलब है? अगर यही चाहती हो तो करने को तैयार हूं।"

यह कहकर झट से वह योगमाया के पैर छूने जा रही थी, लेकिन इसके पहले ही उसने रानी के हाथ पकड़ लिए। बोली, "छिः-छिः, यह क्या कर रही हो?"

"तो कहो कि जाऊंगी।"

योगमाया बोली, "लेकिन देवर के लिए ऑफिस का खाना, गृहस्थी के काम-धाम…"

रानी बोली, "दीदी, मैं अभी मरी नहीं हूं। मरने पर तुम्हें क्या कोई खबर नहीं भेजी जाएगी, तुम यही कहना चाहती हो?"

योगमाया बोली, "जबान से ऐसी बात नहीं निकालनी चाहिए बहन! छि:…"

संदीप को सारी बातें याद हैं। वह कुछ भी नहीं भूल सका है। किसने उसे प्यार किया है, किसने उसे दुतकारा है, किसने उसे छला है, किसने उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की है, किसने उसे चोट पहुंचाई है, किसने उसकी अवहेलना की है—सारा कुछ याद है उसे। इतना याद रखना क्या अच्छा होता है? लेकिन उसे याद रहता ही क्यों है? वह क्यों भूल नहीं पाता?

उस दिन दादी मा ने विशाखा की मां से जो कुछ पूछा था और योगमाया देवी ने उत्तर में जो कुछ कहा था—संदीप को वह सब याद है। मृत्यु या बादलों को कोई याद नहीं रखता लेकिन जीवन और सूरज को याद रखता है। चूंकि मृत्यु को याद नहीं रखता, इसीलिए जीवन आज भी आगे की ओर बढ़ रहा है। बादलों को कोई याद नहीं रखता इसीलिए आज भी धरती सूर्य के चारों तरफ घूम रही है। इतने असत्य, घृणा, भर्त्सना, यातना और अवहेलना के बावजूद संदीप ने जिसका आरम्भ देखा था, उसका अन्त भी देख रहा है। आदमी की यह जो देह है यानी नरदेह—जिस देह के चलते इतने मान, अभिमान, अहंकार, विवाद, कलह और समस्याएं हैं, वे सब एक दिन आग में जलकर खाक हो जाते हैं। लेकिन तो भी क्या मान, अभिमान, अहंकार, विवाद, कलह और समस्याओं का यह सिल-सिला रुकने का नाम ले रहा है?

उन दिनों चूंकि संदीप को इतनी समझ और जानकारी नहीं थी इसीलिए जो कुछ उसने देखा है, उस पर उसे आश्चर्य होना पड़ा है। आश्चर्य और विस्मय लेकर ही वह तब जीवन की परिक्रमा कर रहा था। जीवन की परिक्रमा करने के उद्देश्य से वह बेड़ापोता से नदी बनकर निकला था और आज समुद्र में परिवर्तित हो गया है।

जीवन में अनगिनत यातनाएं सहते-सहते दादी मा ने सोचा था, वे तमाम यातनाओं से ऊपर उठ चुकी हैं। लेकिन शायद वह नहीं जानती थीं कि सुख का किसी दिन अन्त हो सकता है मगर यातनाओं का अन्त नहीं होता। जीवन के अन्तिम दिन के अन्तिम क्षण तक यातनाएं मनुष्य के बोध का पीछा करती रहती हैं।

दादी मा ने शुरू में ही पूछा, "तुम्हारे सिर में क्या हुआ है बिटिया?"

योगमाया कुछ कहे कि उसके पहले ही विशाखा ने बताया था, "मेरी मा ने मारा है।"

"यह क्या! तुमने उसे क्यों मारा था?"

योगमाया ने कहा, "बेहद शरारत करती है, बड़ी ही शरारती लड़की है यह।"

विशाखा की ओर देखकर दादी मां ने पूछा, "तुमने शरारत की थी ?"

"नहीं, मैंने शरारत नहीं की थी।" विशाखा ने कहा।

योगमाया ने अपनी लड़की को डांटते हुए कहा, "शरारत करने के बाद अब कह रही हो कि मैंने शरारत नहीं की थी ? तुमने शरारत न की तो मैंने क्या तुम्हें बेवजह मारा ?"

विशाखा ने तत्क्षण प्रतिवाद करते हुए कहा, "मैंने कब शरारत की थी ? तुम्हीं तो चाचीजी से झगड़ रही थीं।"

"मैं चाचीजी से झगड़ रही थी तो तुम्हारी कौन-सी हानि हो गई ?"

दादी मां ने योगमाया की ओर ताकते हुए कहा, "देवरानी से तुम्हारा झगड़ा होता है ?"

योगमाया के उत्तर के पहले ही विशाखा बोल उठी, "हां, मेरी मां से चाचीजी का हर रोज़ झगड़ा होता है।"

योगमाया शायद लड़की से कुछ कहने जा रही, थी, लेकिन उसके पहले ही उसे रोकते हुए दादी मां बोलीं, "वह अभी बिलकुल बच्ची है, उसे तुम क्यों फट-कार रही हो बेटी ? उस तरह का झगड़ा हर घर में होता है। ननद-भाभी में, जेठानी-देवरानी में किस घर में झगड़ा नहीं होता ? मेरे घर में भी झगड़ा-टंटा होता था।"

योगमाया यह सुनकर थोड़ा-बहुत आश्चर्यचकित हो गई थी।

दादी मां बोलीं, "लगता है, मेरी बात सुनकर तुम्हें अचरज हो रहा है।"

योगमाया बोली, "आप लोग कितने बड़े आदमी हैं..."

दादी मां बोलीं, "यह गरीब-अमीर की बात नहीं है बेटी। झगड़े के मामले में गरीब और अमीर एक जैसे होते हैं। बल्कि अमीरों के घर में ही ज़्यादा झगड़े होते हैं। अपनी मंझली बहू से मेरी जमकर तकरार होती है। बाद में अपना मकान बनवाकर जब वह अलग हो गई तो मुझे चैन की सांस लेने का मौका मिला। अब उन लोगों से मेरा कोई रिश्ता नहीं है—यह तो है मेरी हालत।"

लमहे-भर चुप रहने के बाद दादी मां फिर बोलीं, "खैर, यह सब फालतू बात रहे। तुम लोग खाना खा लो।"

खाना शायद बहुत पहले ही तैयार हो चुका है। मल्लिकजी उन्हें बगल के एक कमरे में ले गए। दादी मां भी आकर उनके सामने बैठ गईं। बहुत दिनों के बाद विशाखा को इस प्रकार की खाने की सामग्री देखने को मिली।

खाना खाने के लिए बैठते ही विशाखा बोली, "मां देखो, इन लोगों ने पूरी खाने को दी है।"

योगमाया बोली, "बातें मत करो। चुपचाप खाना खाओ।"

विशाखा बोली, "मैं ढेर सारी पूरियां खाऊंगी।"

योगमाया ने डांटा, "कहा न, कि बातें नहीं करनी चाहिए।"

यह बात दादी मां के कान में पहुंची। बोलीं, "तुम जितनी भी पूरियां लोगी, दूंगी। खाने में संकोच मत करना। तुम और पूरी लोगी ?"

"मैं पूरी खाना बेहद पसंद करती हूं।" विशाखा ने कहा।

"ठीक है ! महाराज, मेरी बहूरानी को और चार अदद पूरियां दो।"

दादी मां के कहने पर और पूरियां लाई गईं। योगमाया ने आहिस्ता से अपनी लड़की से कहा, "छिः, तुम इतनी छिछोरी क्यों हो?"

दादी मां बोली, "तुम उसे इतना फटकार क्यों रही हो बेटी। यह तो इस घर के अंग जैसी है। भरपेट खाने दो न।"

विशाखा बोल उठी, "हम लोगों के घर में हर रोज पूरियां बनती हैं, लेकिन मां मुझे किसी दिन खाने नहीं देती है। मां मुझे सिर्फ रोटी ही देती है।"

"क्या, तुम्हें रोटी क्यों देती है?"

विशाखा ने कहा, "पूरी खाना चाहती हूं तो मां कहती है, तुम्हें पूरी नहीं खानी चाहिए। जितनी भी पूरियां बनती हैं, बिजली खाती है। न तो पूरी देती है, न मांस, न रबड़ी, न संदेश और न रसगुल्ला वगैरह। घी के साथ भात खाना मुझे बहुत अच्छा लगता है, मगर मां मेरे भात में घी नहीं डालती है।"

उसकी बातें सुनकर दादी मां के चेहरे पर गंभीरता तिर आई। योगमाया की तरफ ताककर उन्होंने पूछा, "क्यों बेटी? तुम मेरी बहूरानी को मांस, मछली, घी-दूध-रबड़ी खाने क्यों नहीं देती हो?"

विशाखा बोली, "मैंने कितनी ही बार मांगा है पर मां ने एक बार भी खाने नहीं दिया।"

"क्यों बेटी, तुम मेरी बहूरानी को यह सब खाने नहीं देती हो? मैं तो हर माह बहूरानी के लिए ही रुपए भेजती हूं। क्यों खाने नहीं देती हो?"

विशाखा ने कहा, "उन रुपयों से चाचीजी गहने बनवाती हैं।"

"गहने बनवाती हैं? तुम्हारी चाची? यह क्या?"

योगमाया का सिर लज्जा से झुक गया है। काश, वह जमीन के नीचे समा पाती तो राहत की सांस ले पाती। ऐसा दयनीय हो उठा उसके चेहरे का भाव।

दादी मां ने मल्लिकजी की ओर देखा और बोलीं, "मुनीमजी, मैं इन लोगों के मुंह से यह सब क्या सुन रही हूं? आप तो इतने दिनों से उन लोगों के घर जा रहे हैं, मगर यह सब तो एक बार भी नहीं बताया। मेरे रुपये क्या इतने सस्ते हैं? मेरे रुपये से वे लोग मौज उड़ा रहे हैं, यह तो मुझसे किसी ने नहीं बताया। हर बार आपसे कहा था, मेरी बहूरानी कैसे रह रही है, यह पूछकर मुझसे बताइएगा, लेकिन आपने मुझे यह सब नहीं बताया। आपने तो हर बार मुझसे आकर कहा है, बहूरानी मजे में है। यह क्या मजे में रहने का नमूना है? अब यह सब क्या सुनने को मिल रहा है? बहूरानी मुझसे यह सब बात क्यों कह रही है? बहूरानी नहीं कहती तो मुझे कुछ पता ही नहीं चलता।"

उसके बाद एक क्षण सदीप की ओर ताकती हुई बोली, "और तुम?"

सदीप को अब तक यही भय दबोचे हुए था। अब वह थरथर कांपने लगा।

दादी मां बोलीं, "और तुम? तुम भी तो इस काम से दो बार जा चुके हो, लेकिन तुमने भी मुझे कुछ नहीं बताया। फिर तुम्हें बहूरानी के घर क्यों भेजा जाता था? तुम लोग क्या उन लोगों के घर हवा खाने जाते हो? यह सब खबर अगर नहीं ला सकते तो मनीऑर्डर से भी तो मैं रुपया भेज सकती थी! तुम लोगों के आने-जाने का किराया भी तो मुझे ही देना पड़ता है। मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दे रहे? कहो, तुम्हें क्या कहना है। कहो—"

विशाखा बीच में ही बोल पड़ी, "मैंने उसे बताया था।"
दादी मां ने पूछा, "किससे बताया था? क्या बताया था?"
विशाखा ने उंगली से इशारा करते हुए कहा, "उससे?"
"उससे का मानी? संदीप से?"
विशाखा बोली, "हां।"
दादी मां ने संदीप से कहा, "तुमसे बहूरानी ने कहा है?"
संदीप पहले से ही थर-थर कांप रहा था। अब वह और अधिक भयभीत हो उठा। क्या उत्तर दे सोच न पाने के कारण उसने कहा, "हां।"
दादी मां को अब गुस्सा आ गया। बोलीं, "यह क्या? बहूरानी ने तुमसे सब कुछ कहा था और तुमने मुझे बताया नहीं! तुम कैसे आदमी हो?"
उसके बाद मल्लिकजी की ओर देखते हुए बोलीं, "आपने यह किस तरह का आदमी दिया है? आपने तो बताया था कि वह आपके देस का आदमी है। बड़ा ही ईमानदार और गरीब! और यह है उसके काम का नमूना!"
मल्लिकजी इस बात का क्या उत्तर दें, समझ नहीं सके। लेकिन विशाखा ने ही उसे मुसीबत से बचा लिया। बोली, "नहीं, मैंने वह सब नहीं कहा था। मैंने शुरू में कहा था, मैं घी, दूध, मांस वगैरह नहीं खाती लेकिन बाद में कहा—मां मुझे घी, दूध, मांस-मछली सब कुछ देती है। उन रुपयों से मेरी चाचीजी गहने नहीं बनवाती हैं..."
"यह क्या?"
दादी मां जैसे रस्साकशी में फंस गई हों। बोलीं, "जाने दो, मैं यह सब सुनना नहीं चाहती। ऐसे गरीब लोगों को रुपया-पैसा मिलने से खर्च होना स्वाभाविक है। और एक काम करें मल्लिकजी।"
मल्लिकजी यों भी सकते में आ गए थे। बोले, "क्या करना है, बताइए।"
दादी मां बोलीं, "हम लोगों का तीन नंबर रसेल स्ट्रीट का मकान खाली पड़ा हुआ है न?"
"हां।" मल्लिकजी बोले, "मुकदमा दायर कर किरायेदार को निकालने के बाद किराये पर नहीं लगाया गया है। केवल एक दरबान है वहां जो पहरेदारी करता है।"
दादी मां बोलीं, "उसे अब किराये पर नहीं लगाना है। आप मंझले बाबू से कह दीजिएगा। यों वह आएगा तो मैं भी कह दूंगी। अब बहूरानी और उसकी मां वहीं रहेंगी। वे लोग आराम से रह सकें, इसका इन्तजाम कर दें।"
मल्लिकजी बोले, "तो फिर उस फ्लैट में सफेदी करानी होगी।"
"सो तो करानी ही है। जितना रुपया लगे, कैश से ले लें।"
मल्लिकजी बोले, "लेकिन सिर्फ सफेदी कराने से ही काम नहीं चलेगा। दरवाजे और खिड़कियों को रंगवाना भी पड़ेगा।
"रंगवा दें।"
मल्लिकजी बोले, "मगर वे सोएंगी कहां? इसके लिए दो पलंग की भी जरूरत होगी। इसके अलावा आलमारी, ड्रेसिंग टेबल, कुर्सी, मेज से शुरू कर गृहस्थी की तमाम चीजों की जरूरत पड़ेगी।"

दादी मां ने कहा, "जो-जो मंगेगा सो तो करना ही होगा। वे लोग तो देवर के घर से कोई सामान नहीं ला पायेंगे और न ही उन्हें लाने दिया जाएगा। आप पूरे मकान को सजा-संवारकर उन्हें यहां से आइएगा। ज्यादा देर मत कीजिएगा। ऐसा कीजिए कि एक महीने का अरसा बीतने के पहले ही वे सात नंबर मनसातल्ला लेन के मकान को छोड़कर रसेल स्ट्रीट के मकान में चले आएं।"

मल्लिकजी ने कहा, "जी हां।"

दादी मां ने कहा, "और एक बात। सिर्फ मकान को सजाने-संवारने से काम नहीं चलेगा। झाड़ू-पोंछा लगाने और रसोई पकाने के लिए भी तो नौकर-महरी की जरूरत पड़ेगी। साथ-साथ इसका भी बन्दोबस्त कर दें। बहुत ही ईमानदार आदमी होना चाहिए—चोरी न करे, इसका खयाल रखिएगा। अब पता चला, इतने दिनों तक हर महीने मोटी रकम पानी में बहती रही। तकदीर में नुकसान लिखा हो तो रोका जा सकता है···"

इस बीच विशाखा और उसकी मां खाना खा चुकी हैं।

दादी मा ने मल्लिकजी से कहा, "मैंने जो-जो कहा, याद रखिएगा। भूलिएगा नहीं। अब इन लोगों को गाड़ी से घर पहुंचा दें। जाइए—"

योगमाया के मन का खुमार जैसे तब भी दूर नहीं हुआ हो। योगमाया क्या कहे, समझ में नहीं आया।

दादी मा बोलीं, "जाओ बिटिया। अब तक मैं मुनीमजी से जो कुछ कहती गई सुन लिया न? अब बहूरानी को अच्छी-अच्छी चीजें खिलाना। मांस-मछली, दूध-दही, घी। अब रोटी मत खाना बहूरानी। बहूरानी के लिए पूरियां बना देना। जाओ बिटिया।"

योगमाया के मुंह से तब शब्द आकर भी अटक गए थे। उसकी आंखों से झर-झर आंसू टपक रहे थे। वह विशाखा को अपने साथ ले मल्लिकजी के साथ सीढ़ियां उतरने लगी···

संदीप तब छोटा था। लेकिन बिलकुल छोटा नहीं। तब वह अच्छा-बुरा, गुण-दोष, गरीब-अमीर, पाप-पुण्य, सब-कुछ समझने लगा था। स्कूल के लड़के जब फुटबॉल और क्रिकेट के खेल में मशगूल रहते, उस समय वह काशीबाबू के घर जाकर उनके पुस्तकालय में किसी किताब में खोया रहता। उसके बाद जब उसकी मां काशीबाबू के घर के काम-काज खत्म कर भात और सब्जी लिए घर लौटती तो संदीप भी उसके साथ लौट आता। तब वे दोनों जने भात और सब्जी खाते।

मा पूछती, "अरे, बाबू के घर में तू इतना क्या पढ़ता रहता है? स्कूल की पाठ्य पुस्तकें?"

संदीप कहता, "हां।"

सुनकर मां बेहद खुश होती। लड़का लिख-पढ़कर चटर्जी बाबू वगैरह की तरह धनी-मानी होगा, उन लोगों के जैसा उसके पास मकान होगा, ढेर सारा रुपया कमाएगा वह और काशीबाबू जैसा वकील बनेगा—मां को इससे ज्यादा क्या चाहिए। मां की बस एक यही इच्छा है कि वह अपने जीवन-काल में वह सुख

और ऐश्वर्य देख ले।

मां अपने लड़के का उत्तर सुनकर कहती, "हां बेटा, यही करो। लिख-पढ़कर चटर्जी बाबू वगैरह की तरह अमीर बनो।"

संदीप इस बात का कोई उत्तर नहीं देता। असल में वह स्कूल की किताबें पढ़ने के बजाय जो बाहरी किताबें पढ़ता है, मां को यह मालूम नहीं था।

"और बेटा, तुम उस छोकरे से हिलना-मिलना नहीं।"

"किस लड़के के बारे में कह रही हो?"

"वो उस छोकरे से—हाजरा बूढ़े के आवारा लड़के से। शायद उसका नाम गोपाल है। उससे तुम्हारा इतना हेल-मेल क्यों है? वह क्या तुम्हें राजा बना देगा?"

मां नहीं जानती थी कि दुनिया में सिर्फ बुरे ही नहीं, भले भी हैं। भले-बुरे, गरीब-अमीर हैं इसीलिए यह धरती इतनी सुन्दर और विचित्र है। इस विचित्रता के बीच जो आदमी समानता खोज कर निकाल पाने में समर्थ होता है, वही महान है। यहां गोपाल रहेगा, काशीबाबू रहेंगे, सौम्यबाबू रहेंगे, मल्लिकजी रहेंगे, तपेश गांगुली भी रहेंगे। सभी के अन्दर यदि एक कण भी मनुष्यत्व हो तो उस मनुष्यत्व को मूल्य देना होगा, मर्यादा देनी होगी— तभी तुम इस धरती पर जीवन जीने का अधिकार पा सकोगे।

काशीबाबू ने एक दिन एक पुस्तक उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "इस किताब को पढ़ा है?"

संदीप ने गौर से देखा, एक पतली-सी किताब है। जिल्द पर इसका नाम लिखा है—'ईशोपनिषद्'।

उसके अन्दर संस्कृत के श्लोक हैं और उनके नीचे बंगला अनुवाद है। देखा, एक जगह लिखा हुआ है—नचिकेता यम से कह रहे हैं: "हे यमराज, आपके द्वारा वर्णित भोग्य वस्तुएं कल तक रहेंगी या नहीं, यह अनिश्चित है। ये सभी भोग मनुष्य की इंद्रियों का तेज नष्ट कर देते हैं। जीवन भी क्षणस्थायी है। अतएव अश्व, रथ, नृत्य-गीतादि आप जो देना चाहते हैं, अपने पास ही रख लें।"

उस समय संदीप उन शब्दों का अर्थ नहीं समझ सका था। लेकिन अब इस उम्र की मंज़िल पर पहुंचने के पश्चात् उसे लग रहा है कि उन बातों की तरह सच्ची बातें संभवतः और कहीं नहीं लिखी गई हैं और न ही कभी लिखी जाएंगी। यदि वह यहां न आता, इस बिडन स्ट्रीट की इमारत में न रहता तो उन बातों का अर्थ इस तरह स्पष्ट तौर पर क्या समझ न पाता?

आश्चर्य की बात है, उस दिन दादी मां के आदेशानुसार विशाखा और उसकी मां को रसेल स्ट्रीट लाने का इन्तज़ाम पुख्ता हो गया। विशाखा जिस घर में पैदा होकर बड़ी हुई है, उस सात नंबर मनसातल्ला से जड़ उखाड़कर नए मकान में लाना क्या इतना आसान है! और सिर्फ जड़ ही नहीं, बल्कि जड़ के साथ-साथ प्राण-रस भी उस परिवेश से जुड़ा हुआ था। जिस ज़मीन पर इतने दिनों तक मां-बेटी पलती रहीं, वह ज़मीन इसके बाद पांवों के नीचे से खिसक जाएगी।

लेकिन इससे भी बड़ी-बड़ी बातें हैं। उनके बारे में भी सोचना ज़रूरी है। हर महीने विशाखा के खाने-पहनने और शिक्षा-दीक्षा के लिए जो रुपये आते हैं, उ

उपयोग और लोग नहीं कर पाएंगे। उस समय पूरी रकम योगमाया को मिल जाएगी।

यह सोचने में तो अच्छा लगता है पर जब शुरू-शुरू में चर्चा छिड़ेगी तो फिर क्या होगा!

तूफान आने के पहले कोई क्या यह कल्पना कर सकता है कि किसका कितना नुकसान होगा?

संदीप को अब भी उन दिनों की बातें याद हैं। नईजगह तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान में कुछ नहीं था। न था कोई पलंग और न ही कोई बिस्तर। सारा कुछ नए सिरे से खरीदना होगा। है तो पुराना मकान लेकिन बड़ा ही मजबूत है। उन दिनों के बाजार की जो दर थी, उस लिहाज से सस्ते ही में मिल गया था। तीन-मंजिला मकान। सिर्फ पहली मंजिल में कुछ किरायेदार थे। सो भी पहली मंजिल के कमरों में नहीं, चारों तरफ की खाली जमीन में। एक चीनी की बाल काटने की दुकान भी थी। वे लोग कितने दिनों से वहां रह रहे थे, इसकी जानकारी किसी को नहीं थी। मकान खरीदने के बाद एक शुभ तिथि देखकर दादी मां ने गृह-प्रवेश की औपचारिकता भी पूरी कर ली थी। गृहस्वामी की मंशा थी, यहां कोई कारोबार करेंगे। कारोबार के लिहाज से जगह अच्छी है। ऊपर के कमरों में मैनेजर का क्वार्टर रहेगा और दूसरी मंजिल पर ऑफिस।

लेकिन अन्ततः इस योजना का कार्यान्वयन नहीं हो सका। क्योंकि उसके बाद ही उनका देहावसान हो गया था। तब से उसमें ताला जड़ा हुआ था। लगातार एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी—इस तरह की मुसीबतों का दौर चलता रहा और दादी मां के ध्यान से उस मकान की बात उतर गई थी।

अप्रिय काम का भार पड़ा संदीप पर ही।

रोते-रोते जब योगमाया मनसातल्ला लेन से बाहर चली आई थी, उस समय भी वह नहीं जानती थी कि वे स्वर्ग जा रही हैं या नरक। सिर्फ योगमाया ही नहीं, किसी को यह बात मालूम नहीं थी। हर आदमी घर बदलता है। हर रोज चाहे न भी बदले लेकिन जिन्दगी में किसी न किसी वक्त सभी आदमी को घर बदलना पड़ता है। औरतें तो सबसे ज्यादा घर बदलती रहती हैं। मायके से ससुराल हमेशा के जाने-पहचाने घर को किस तरह अनायास ही छोड़ मायके से ससुराल चली जाती है! उसके बाद पति का घर ही एक दिन किस तरह हमेशा के पहचाने घर के रूप में बदल जाता है!

उस समय मकान को खासे-अच्छे ढंग से सजा-संवार दिया गया था। तब यह नहीं कहा जा सकता था कि यह एक सूना खाली पड़ा मकान था।

योगमाया को बहुत ही पसन्द आया था। बोली, "वाह, बड़ा ही खूबसूरत मकान है!"

मरम्मत के बाद वाकई वह मकान देखने में खूबसूरत लगने लगा था। उस जमाने के अनुसार बड़े-बड़े कमरे। अंग्रेजों के जमाने का पुराना मकान। लकड़ी की शहतीरें। सीढ़ियां भी लकड़ी की ही बनी हुई, लकड़ी की ही रेलिंग। नए सिरे से रंगाया गया था। विशाखा चारों तरफ घूम-घूमकर देख रही थी। इतना बड़ा मकान न तो कभी उसने देखा था और न ही उसकी मां ने। गरीब घर में पैदा हुई

र ऐश्वर्य देख ले।

मां अपने लड़के का उत्तर सुनकर कहती, "हां बेटा, यही करो। लिख-पढ़कर टर्जी बाबू वगैरह की तरह अमीर बनो।"

संदीप इस बात का कोई उत्तर नहीं देता। असल में वह स्कूल की किताबें ढ़ने के बजाय जो बाहरी किताबें पढ़ता है, मां को यह मालूम नहीं था।

"और बेटा, तुम उस छोकरे से हिलना-मिलना नहीं।"

"किस लड़के के बारे में कह रही हो?"

"वो उस छोकरे से—हाजरा बूढ़े के आवारा लड़के से। शायद उसका नाम गोपाल है। उससे तुम्हारा इतना हेल-मेल क्यों है? वह क्या तुम्हें राजा बना देगा?"

मां नहीं जानती थी कि दुनिया में सिर्फ बुरे ही नहीं, भले भी हैं। भले-बुरे, गरीब-अमीर हैं इसीलिए यह धरती इतनी सुन्दर और विचित्र है। इस विचित्रता के बीच जो आदमी समानता खोज कर निकाल पाने में समर्थ होता है, वही महान है। यहां गोपाल रहेगा, काशीबाबू रहेंगे, सौम्यबाबू रहेंगे, मल्लिकजी रहेंगे, तपेश गांगुली भी रहेंगे। सभी के अन्दर यदि एक कण भी मनुष्यत्व हो तो उस मनुष्यत्व को मूल्य देना होगा, मर्यादा देनी होगी— तभी तुम इस धरती पर जीवन जीने का अधिकार पा सकोगे।

काशीबाबू ने एक दिन एक पुस्तक उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा, "इस किताब को पढ़ा है?"

संदीप ने गौर से देखा, एक पतली-सी किताब है। जिल्द पर इसका नाम लिखा है—'ईशोपनिषद्'।

उसके अन्दर संस्कृत के श्लोक हैं और उनके नीचे बंगला अनुवाद है। देखा, एक जगह लिखा हुआ है—नचिकेता यम से कह रहे हैं: "हे यमराज, आपके द्वारा वर्णित भोग्य वस्तुएं कल तक रहेंगी या नहीं, यह अनिश्चित है। ये सभी भोग मनुष्य की इंद्रियों का तेज नष्ट कर देते हैं। जीवन भी क्षणस्थायी है। अतएव अश्व, रथ, नृत्य-गीतादि आप जो देना चाहते हैं, अपने पास ही रख लें।"

उस समय संदीप उन शब्दों का अर्थ नहीं समझ सका था। लेकिन अब इस उम्र की मंज़िल पर पहुंचने के पश्चात् उसे लग रहा है कि उन बातों की तरह सच्ची बातें संभवत: और कहीं नहीं लिखी गई हैं और न ही कभी लिखी जाएंगी। यदि वह यहां न आता, इस बिडन स्ट्रीट की इमारत में न रहता तो उन बातों का अर्थ इस तरह स्पष्ट तौर पर क्या समझ न पाता?

आश्चर्य की बात है, उस दिन दादी मां के आदेशानुसार विशाखा और उसकी मां को रसेल स्ट्रीट लाने का इन्तज़ाम पुख्ता हो गया। विशाखा जिस घर में पै[illegible] होकर बड़ी हुई है, उस सात नंबर मनसातल्ला से जड़ उखाड़कर नए मकान [illegible] लाना क्या इतना आसान है! और सिर्फ जड़ ही नहीं, बल्कि जड़ के साथ-स[illegible] प्राण-रस भी उस परिवेश से जुड़ा हुआ था। जिस ज़मीन पर इतने दिनों तक [illegible] बेटी पलती रहीं, वह ज़मीन इसके बाद पांवों के नीचे से खिसक जाएगी।

लेकिन इससे भी बड़ी-बड़ी बातें हैं। उनके बारे में भी सोचना ज़रूरी है। [illegible] महीने विशाखा के खाने-पहनने और शिक्षा-दीक्षा के लिए जो रुपये आते हैं, उ[illegible]

उपयोग और लोग नहीं कर पाएंगे। उस समय पूरी रकम योगमाया को मिल जाएगी।

यह सोचने में तो अच्छा लगता है पर जब शुरू-शुरू में चर्चा छिड़ेगी तो फिर क्या होगा!

तूफान आने के पहले कोई क्या यह कल्पना कर सकता है कि किसका कितना नुकसान होगा?

सदीप को अब भी उन दिनों की बातें याद हैं। नईजगह तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान में कुछ नहीं था। न था कोई पलंग और न ही कोई बिस्तर। सारा कुछ नए सिरे से खरीदना होगा। है तो पुराना मकान लेकिन बड़ा ही मजबूत है। उन दिनों के बाजार की जो दर थी, उस लिहाज से सस्ते ही में मिल गया था। तीन-मंजिला मकान। सिर्फ पहली मंजिल में कुछ किरायेदार थे। सो भी पहली मंजिल के कमरों में नहीं, चारों तरफ की खाली जमीन में। एक चीनी की बाल काटने की दुकान भी थी। वे लोग कितने दिनों से वहां रह रहे थे, इसकी जानकारी किसी को नहीं थी। मकान खरीदने के बाद एक शुभ तिथि देखकर दादी मां ने गृह-प्रवेश की औपचारिकता भी पूरी कर ली थी। गृहस्वामी की मंशा थी, यहां कोई कारोबार करेंगे। कारोबार के लिहाज से जगह अच्छी है। ऊपर के कमरों में मैनेजर का क्वार्टर रहेगा और दूसरी मंजिल पर ऑफिस।

लेकिन अन्ततः इस योजना का कार्यान्वयन नहीं हो सका। क्योंकि उसके बाद ही उनका देहावसान हो गया था। तब से उसमें ताला जड़ा हुआ था। लगातार एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी—इस तरह की मुसीबतों का दौर चलता रहा और दादी मां के ध्यान से उस मकान की बात उतर गई थी।

अप्रिय काम का भार पड़ा संदीप पर ही।

रोते-रोते जब योगमाया मनसातल्ला लेन से बाहर चली आई थी, उस समय भी वह नहीं जानती थी कि वे स्वर्ग जा रही हैं या नरक। सिर्फ योगमाया ही नहीं, किसी को यह बात मालूम नहीं थी। हर आदमी घर बदलता है। हर रोज चाहे न भी बदले लेकिन जिन्दगी में किसी न किसी वक्त सभी आदमी को घर बदलना पड़ता है। औरतें तो सबसे ज्यादा घर बदलती रहती हैं। मायके से ससुराल हमेशा के जाने-पहचाने घर को किस तरह अनायास ही छोड़ मायके से ससुराल चली जाती हैं! उसके बाद पति का घर ही एक दिन किस तरह हमेशा के पहचाने घर के रूप में बदल जाता है!

उस समय मकान को खासे-अच्छे ढंग से सजा-संवार दिया गया था। तब यह नहीं कहा जा सकता था कि यह एक सूना खाली पड़ा मकान था।

योगमाया को बहुत ही पसन्द आया था। बोली, "वाह, बड़ा ही खूबसूरत मकान है!"

मरम्मत के बाद वाकई वह मकान देखने में खूबसूरत लगने लगा था। उस जमाने के अनुसार बड़े-बड़े कमरे। अंग्रेजों के जमाने का पुराना मकान। लकड़ी की शहतीरें। सीढ़ियां भी लकड़ी की ही बनी हुई, लकड़ी की ही रेलिंग। नए सिरे से रंगाया गया था। विशाखा चारों तरफ घूम-घूमकर देख रही थी। इतना बड़ा मकान न तो कभी उसने देखा था और न ही उसकी मां ने। गरीब घर में पैदा हुई

वयं देख ले।

अपने लड़के का उत्तर सुनकर कहती, "हां वेटा, यही करो। लिख-पढ़कर
वावू वगैरह की तरह अमीर वनो।"

दीप इस वात का कोई उत्तर नहीं देता। असल में वह स्कूल की कितावें
वजाय जो वाहरी कितावें पढ़ता है, मां को यह मालूम नहीं था।

"और वेटा, तुम उस छोकरे से हिलना-मिलना नहीं।"

"किस लड़के के वारे में कह रही हो?"

"वो उस छोकरे से—हाजरा वूढ़े के आवारा लड़के से। शायद उसका नाम
ल है। उससे तुम्हारा इतना हेल-मेल क्यों है? वह क्या तुम्हें राजा वना
?"

मां नहीं जानती थी कि दुनिया में सिर्फ वुरे ही नहीं, भले भी हैं। भले-वुरे,
व-अमीर हैं इसीलिए यह धरती इतनी सुन्दर और विचित्र है। इस विचित्रता
वीच जो आदमी समानता खोज कर निकाल पाने में समर्थ होता है, वही महान
। यहां गोपाल रहेगा, काशीवावू रहेंगे, सौम्यवावू रहेंगे, मल्लिकजी रहेंगे, तपेश
गुली भी रहेंगे। सभी के अन्दर यदि एक कण भी मनुष्यत्व हो तो उस मनुष्यत्व
ो मूल्य देना होगा, मर्यादा देनी होगी— तभी तुम इस धरती पर जीवन जीने का
धिकार पा सकोगे।

काशीवावू ने एक दिन एक पुस्तक उसकी ओर वढ़ाते हुए कहा, "इस किताव
को पढ़ा है?"

संदीप ने गौर से देखा, एक पतली-सी किताव है। जिल्द पर इसका नाम
लिखा है—'ईशोपनिषद्'।

उसके अन्दर संस्कृत के श्लोक हैं और उनके नीचे वंगला अनुवाद है। देखा,
एक जगह लिखा हुआ है—नचिकेता यम से कह रहे हैं: "हे यमराज, आपके
द्वारा वर्णित भोग्य वस्तुएं कल तक रहेंगी या नहीं, यह अनिश्चित है। ये सभी
भोग मनुष्य की इंद्रियों का तेज नष्ट कर देते हैं। जीवन भी क्षणस्थायी है। अतएव
अश्व, रथ, नृत्य-गीतादि आप जो देना चाहते हैं, अपने पास ही रख लें।"

उस समय संदीप उन शब्दों का अर्थ नहीं समझ सका था। लेकिन अव इस
उम्र की मंज़िल पर पहुंचने के पश्चात् उसे लग रहा है कि उन वातों की तरह
सच्ची वातें संभवतः और कहीं नहीं लिखी गई हैं और न ही कभी लिखी जाएंगी।
यदि वह यहां न आता, इस विडन स्ट्रीट की इमारत में न रहता तो उन वातों का
अर्थ इस तरह स्पष्ट तौर पर क्या समझ न पाता?

आश्चर्य की वात है, उस दिन दादी मां के आदेशानुसार विशाखा और उसकी
मां को रसेल स्ट्रीट लाने का इन्तज़ाम पुख्ता हो गया। विशाखा जिस घर में पैदा
होकर वड़ी हुई है, उस सात नंवर मनसातल्ला से जड़ उखाड़कर नए मकान में
लाना क्या इतना आसान है! और सिर्फ जड़ ही नहीं, वल्कि जड़ के साथ-साथ
प्राण-रस भी उस परिवेश से जुड़ा हुआ था। जिस ज़मीन पर इतने दिनों तक मां-
वेटी पलती रहीं, वह ज़मीन इसके वाद पांवों के नीचे से खिसक जाएगी।

लेकिन इससे भी वड़ी-वड़ी वातें हैं। उनके वारे में भी सोचना जरूरी है। हर
महीने विशाखा के खाने-पहनने और शिक्षा-दीक्षा के लिए जो रुपये आते हैं, उनका

उपयोग और लोग नहीं कर पाएंगे। उस समय पूरी रकम योगमाया को मिल जाएगी।

यह सोचने में तो अच्छा लगता है पर जब शुरू-शुरू में चर्चा छिड़ेगी तो फिर क्या होगा!

तूफान आने के पहले कोई क्या यह कल्पना कर सकता है कि किसका कितना नुकसान होगा?

संदीप को अब भी उन दिनों की बातें याद हैं। नईजगह तीन नंबर रोस स्ट्रीट के मकान में कुछ नहीं था। न था कोई पलंग और न ही कोई बिस्तर। सारा कुछ नए सिरे से खरीदना होगा। है तो पुराना मकान लेकिन बड़ा ही मजबूत है। उन दिनों के बाजार की जो दर थी, उस लिहाज से सस्ते ही में मिल गया था। तीन-मंजिला मकान। सिर्फ पहली मंजिल में कुछ किरायेदार थे। सो भी पहली मंजिल के कमरों में नहीं, चारों तरफ की खाली जमीन में। एक चीनी की पान काटने की दुकान भी थी। वे लोग कितने दिनों से वहां रह रहे थे, इसकी जानकारी किसी को नहीं थी। मकान खरीदने के बाद एक शुभ तिथि देखकर दादी मां ने गृह-प्रवेश की औपचारिकता भी पूरी कर ली थी। गृहस्वामी की मंशा थी, वहां कोई कारोबार करेंगे। कारोबार के लिहाज से जगह अच्छी है। ऊपर के कमरों में मैनेजर का क्वार्टर रहेगा और दूसरी मंजिल पर ऑफिस।

लेकिन अन्ततः इस योजना का कार्यान्वयन नहीं हो सका। क्योंकि उसके बाद ही उनका देहावसान हो गया था। तब से उसमें ताला जड़ा हुआ था। लगातार एक के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी—इस तरह की मुसीबतों का दौर चलता रहा और दादी मां के ध्यान से उस मकान की बात उतर गई थी।

अप्रिय काम का भार पड़ा संदीप पर ही।

रोते-रोते जब योगमाया मनसातल्ला लेन से बाहर चली आई थी, उस समय भी यह नहीं जानती थी कि वे स्वर्ग जा रही हैं या नरक। सिर्फ योगमाया ही नहीं, किसी को यह बात मालूम नहीं थी। हर आदमी घर बदलता है। हर रोज चाहे न भी बदले लेकिन जिन्दगी में किसी न किसी वक्त सभी आदमी को घर बदलना पड़ता है। औरतें तो सबसे ज्यादा घर बदलती रहती हैं। मायके से ससुराल हमेशा के जाने-पहचाने घर को किस तरह अनायास ही छोड़ मायके से ससुराल चली जाती है! उसके बाद पति का घर ही एक दिन किस तरह हमेशा के पहचाने घर के रूप में बदल जाता है!

उस समय मकान को खासे-अच्छे ढंग से सजा-संवार दिया गया था। तब यह नहीं कहा जा सकता था कि वह एक सूना खाली पड़ा मकान था।

योगमाया को बहुत ही पसन्द आया था। बोली, "वाह, बड़ा ही खूबसूरत मकान है!"

मरम्मत के बाद वाकई वह मकान देखने में खूबसूरत लगने लगा था। उस जमाने के अनुसार बड़े-बड़े कमरे। अंग्रेजों के जमाने का पुराना मकान। लकड़ी की शहतीरें। सीढ़ियां भी लकड़ी की ही बनी हुई, लकड़ी की ही रेलिंग। नए सिरे से रंगाया गया था। विशाखा चारों तरफ घूम-घूमकर देख रही थी। इतना बड़ा मकान न तो कभी उसने देखा था और न ही उसकी मां ने। गरीब घर में पैदा हुई

थी इसलिए मन में कोई दुख था या नहीं, कौन जाने ! उत्तर दिशा के बरामदे की रेलिंग पकड़ चारों तरफ के कलकत्ता की शक्ल देखकर बोली, "ओह ! कलकत्ता कितना बड़ा है, देखो मां।"

मां भी अपलक सारा कुछ देख रही थी।

बोली, "मेरे भाग्य में इतना सुख भी था बेटा !"

उसके बाद ज़रा चुप रहने के बाद फिर बोली, "इस लड़की की शादी हो जाने के बाद मरने पर भी मुझे कोई दुख नहीं होगा। यह सब मेरी लड़की का भाग्य है ! विशाखा के पिता यदि स्वर्ग से देख रहे होंगे तो उन्हें भी अवश्य ही खुशी हो रही होगी।"

संदीप ने कहा था, "दादी मां से जाकर कहूंगा कि यह मकान आप लोगों को खूब पसन्द आया है।"

"हां-हां बेटा, तुम उनसे जाकर कहना कि उन्होंने हमारी जो भलाई की है उसे मैं किन शब्दों में प्रकट करूं !"

इतने बड़े-बड़े कमरे दुनिया में किसी मकान में हो सकते हैं, इसकी कल्पना भी नहीं की थी विशाखा की मां ने। उसे विश्वास करने में भी भय का अहसास हो रहा था। योगमाया घूम-घूमकर सपने देख रही है या यह सब उसकी कल्पना है !

संदीप भी इस घर के सरो-सामान को देखकर चकित हो रहा था। पोते की बहू की सुख-सुविधा के लिए इतने रुपये खर्च किए गए हैं ! यह मकान इतने दिनों से खाली पड़ा हुआ क्यों था ? इस तरह के हज़ारों आदमी कलकत्ता शहर में हैं जो किसी आश्रय के अभाव में फुटपाथ पर खुले आसमान के तले सोकर रात बिताते हैं। और बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी परिवार के पास इतने रुपये हैं कि इतने दिनों तक इस मकान को खाली रखा ? यहां कम से कम एक-डेढ़ सौ व्यक्ति आराम से सो सकते हैं।

विशाखा की मां ने पूछा था, "अच्छा यह तो बताओ कि दादी मां हमें इस मकान में कितने दिनों तक रहने देंगी ?"

"आप लोगों की जब तक मर्जी हो, यहां रहें।" संदीप ने कहा था।

योगमाया ने कहा था, "इस मकान को किराए पर लगाया जाए तो एक मोटी रकम की आमदनी हो सकती है।"

संदीप ने कहा था, "सो तो हो ही सकती है। लेकिन मुखर्जी परिवार के लोगों को रुपये-पैसे की कोई कमी नहीं है। उनके पास बहुत पैसा है।"

योगमाया ने पूछा था, "उन लोगों के पास कितने रुपये हैं बेटा ?"

संदीप ने कहा था, "इसका पता मुझे क्योंकर चलेगा मौसीजी ? मैं खुद भी तो गरीब की संतान हूं। आप लोगों की तरह मैं भी गरीब हूं।"

"तुम्हारे घर पर कौन-कौन हैं ?"

"देस में मेरी सिर्फ एक विधवा मां है, इसके अलावा मेरा अपना कोई सगा-सम्बन्धी नहीं है।"

"और कोई नहीं है ?"

"नहीं।"

योगमाया ने पूछा था, "ननिहाल?"

"नहीं, ननिहाल भी नहीं है। ननिहाल को मैंने कभी अपनी आंखों से नहीं देखा है। कब उनकी मृत्यु हुई थी, मुझे यह भी मालूम नहीं।"

संदीप की बात सुन योगमाया को बड़ा ही दुख हुआ। योगमाया को लगा, यह नौजवान जैसे उसी के गोत्र का हो, उसी की विशाखा जैसा हो। विशाखा के पिता जिस तरह नहीं है, संदीप की भी यही हालत है। उसकी विशाखा जैसा ही बदकिस्मत है यह?

"तुम्हारी मां कहां रहती है?"

संदीप ने कहा, "बेड़ागोला में, हमारे देस में।"

"वहां उनका खर्च-वर्च कैसे चलता है?"

संदीप ने कहा, "मां बेड़ागोला के जमींदार चटर्जी बाबुओं के घर में रसोई पकाती हैं, वे ही लोग खाना देते हैं। मैं जब तक बेड़ागोला में था, मेरे दोनों वक्त का खाना चटर्जी भवन से ही मां ले आती थी।"

"और अब? अब भी तुम्हारी मां वहां नौकरी करती है?"

"हां।"

"तुम मां को चिट्ठी-पत्री लिखते हो?"

संदीप ने कहा, "हां, हर महीने लिखता हूं। मेरी चिट्ठी नहीं मिलती है तो मां चिन्तित हो जाती है।"

योगमाया बोली, "चिन्तित होना स्वाभाविक है। मां का दिल है, चिन्तित नहीं होगी? तुम तो फिर भी लड़के हो। बड़े होने पर मां के पास चले जाओगे और उन्हीं के साथ रहोगे। शादी होगी तो बहू और बाल-बच्चे लेकर तुम्हारी मां घर-संसार बसाएगी। ऐसी हालत में पराये घर में रसोई नहीं पकानी होगी। पराये के घर के निवाले निगलने में जो तकलीफ होती है, उसे मुझसे बढ़कर कोई नहीं जानता।"

संदीप ने कहा, "आपको अब वह दुख नहीं जीना पड़ेगा। अब आप अपने जमाई के पास रहेंगी। जमाई कोई पराया नहीं होता।"

योगमाया बोली, "यह सब मत कहो बेटा। कहावत है—जर, जमाई, भानजा, तीन नहीं अपना।"

संदीप ने कहा, "मगर यह तो आपका उस किस्म का जमाई नहीं है मौसी जी। इतने पैसे वाले जमाई कितने लोगों के होते हैं? ये लोग इतने बड़े आदमी हैं कि इनके घर पर कितने आदमी खाते हैं, इसका कोई हिसाब नहीं। आपके जमाई का बेलुड़ में जो कारखाना है, वहां हजारों लोग खटकर पेट पालते हैं। यह भी तो आपकी जमाई की बदौलत ही हो रहा है। आपकी लड़की भी बेलुड़ के कारखाने की मालकिन बन जाएगी।"

योगमाया बोली, "तुम यह मत कहो बेटा।"

"क्यों, यह बात क्यों नहीं कहूं? मैं क्या झूठ कह रहा हूं?"

योगमाया कुछ देर तक खामोश रही। उसके बाद एक लम्बी सांस लेकर बोली, "तुम यह मत कहो बेटा, मुझे सचमुच ही बड़ा डर लग रहा है।"

"आपको डर क्यों लगता है मौसीजी? आपकी लड़की खूबसूरत

लड़की खूबसूरत है इसीलिए तो इतने बड़े आदमी के घर में उसकी शादी होने जा रही है।"

योगमाया बोली, "तुम लड़के हो, इसीलिए यह सब कहा। मैं बचपन से ही एक बात सुनती आ रही हूं—जो अत्यन्त चतुर होता है उसे खाना नसीब नहीं होता और जो अति सुन्दर होती है उसे खसम नहीं मिलता। यही सोचकर मुझे डर लगता है, और कोई दूसरी बात नहीं।"

यह सुनकर संदीप को उस दिन की नाइट-क्लब की वारदात की याद आ गई। अत्यंत चतुर को भात नहीं मिलता और अति सुन्दरी को खसम नहीं मिलता! लेकिन बहुतेरे ऐसे व्यक्ति भी हैं जो शादी के बाद अच्छे रास्ते पर चलने लगते हैं। यही वजह है कि बड़े आदमी गरीब की लड़की को बहू बनाकर अपने घर ले आते हैं। मल्लिक चाचा ने तो उससे यही बात कही है।

संदीप ने कहा, "आप इसके बारे में फिक्र नहीं करें मौसीजी।"

योगमाया बोली, "चिन्ता क्या यों ही करती हूं बेटा। जीवन में बहुत कुछ देखा-परखा है, बहुत बार छली गई हूं और काफी तकलीफ उठाई है। तुम्हारी मां की तरह मुझे भी कोई बेटा होता तो मैं क्या चिन्ता करती? जानते हो, लड़कियां घर शून्य करती हैं और लड़के घर पूर्ण करते हैं।"

"आप फिर यह सब सोचने लगीं?"

योगमाया बोली, "मैं नहीं सोचूंगी तो कौन सोचेगा बेटा? विशाखा के क्या बाप या कोई भाई है? तीनों लोक में हमारा कोई नहीं है।"

"और चाहे कोई न हो, पर सिर के ऊपर भगवान तो है!" संदीप ने कहा।

योगमाया ने कहा, "जो लोग घर में सगे-सम्बन्धी थे, उन्होंने कभी हमारी देखरेख नहीं की। तुम लोगों की दादी मां ने मेरी जैसी गरीब विधवा की लड़की को क्यों पसन्द किया, कौन जाने! भगवान की लीला कौन समझ सकता है बेटा!"

संदीप ने सांत्वना भरे स्वर में कहा, "बात तो सही है। मेरी ही बात लें। मैं कहां था और भगवान की इच्छा से कलकत्ता शहर चला आया—यह सोचते ही मैं आश्चर्य में डूब जाता हूं।"

योगमाया ने कहा, "तुम तो लड़के हो बेटा, तुम्हारे लिए चिन्ता की कौन-सी बात है? और मैं? एक बार मेरे बारे में सोचो तो सही। जब अठारह साल की थी तो विधवा हो गई। उसके बाद से ही देवर की गृहस्थी का सारा काम-काज कर रही थी और देवरानी की लात, झाड़ू की मार बरदाश्त कर रही थी। अचानक भगवान मुझे कहां ले आए! यह अच्छा हुआ या बुरा, समझ नहीं पा रही हूं।"

"अच्छा ही होगा मौसीजी। भगवान जो कुछ करते हैं मंगल के लिए ही करते हैं। वरना आपने कभी क्या सोचा होगा कि रसेल स्ट्रीट के इस मकान में रहने के लिए आएंगी?"

योगमाया बोली, "लेकिन मेरी लड़की? यह लड़की ही तो मेरे गले का कांटा है।"

संदीप बोला, "उस लड़की के ब्याह का पात्र तो ठीक हो चुका है। अब आपके लिए चिन्ता की कौन-सी बात है?"

योगमाया बोली, "हमारे देस में एक कहावत है बेटा। शायद तुम वह नहीं जानते।"

"क्या?"

योगमाया बोली, "लड़की का नाम फेली, पराया ले गया और यम भी आकर ले गया।"

उस दिन योगमाया की बातें संदीप को ठीक से समझ में नहीं आई थी। लेकिन बाद में उसने महसूस किया है कि इस तरह के सत्य से संदीप का कभी साक्षात्कार नहीं हुआ था। सचमुच, विशाखा अगर लड़की के बजाय लड़का होती तो मौसीजी के लिए सोचने की कौन-सी बात थी?

इतने दिनों के बाद आज महसूस कर रहा है कि मौसीजी की बात कितनी मर्मान्तिक सत्य थी। इस उपन्यास की जो कहानी कहने बैठा हूं, उसे एक तरह से विशाखा के जीवन की मर्मान्तिक कहानी ही कहा जाएगा। सिर्फ विशाखा के जीवन की ही कहानी नहीं, उसके साथ संदीप के जीवन की भी हृदयस्पर्शी कहानी है। एक दिन किस बुरी घड़ी में विशाखा संदीप से तन-मन से जुड़ गई थी और क्यों संदीप ने विशाखा की भलाई के लिए अपने तमाम स्वार्थों को तिलांजलि दे दी थी? इस बात का उत्तर कौन देगा? उसके उत्तर के लिए वह किस देवता से प्रार्थना करेगा?

आज संदीप का कोई नहीं है। हर आदमी के अन्दर का 'मैं' नामक जो कंगाल विश्व की समस्त वस्तुओं को अपना कहकर छाती से चिपकाए रखना चाहता है वह बेशक अब विदा हो चुका है, पर दुनिया तो है, घर-संसार तो है। घर-संसार लम्बे अरसे तक रहता है, केवल अहं चला जाता है। उसे कोई नहीं लेता। इतने दिनों तक जेल में बिताने के बाद आज वह संभवतः अहं से ऊपर उठ चुका है। वरना वह इतना निस्पृह होने में समर्थ क्यों हो रहा है? आज का संदीप उन दिनों के संदीप को निस्पृह दृष्टि से स्पष्ट तौर पर देख रहा है।

उस दिन के बाद से संदीप को सात नंबर मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली के घर पर नहीं जाना पड़ा था। इसकी वजह से उसकी मेहनत में कमी आ गई थी लेकिन मानसिक अशान्ति बढ़ गई थी। विडन स्ट्रीट से सीधे धर्मतल्ला के मोड़ पर आने से ही काम चल जाता या फिर पार्क स्ट्रीट के मोड़ पर उतरने से ही। बाकी रास्ता पैदल जाना पड़ता। लेकिन ज्यादा दूर नहीं, मिनट पांचेक का रास्ता। उसके बाद दाहिनी तरफ घूमते ही तीन नम्बर रमेल स्ट्रीट का मकान। उत्तर-मुखी। दूसरी और तीसरी मंजिल पर चढ़ने के लिए लकड़ी की सीढ़ियां।

मौसीजी और विशाखा के साथ एक महरी भी रखी गई थी—दिन-रात का काम करने की खातिर। वही शैल महरी दरवाजा खोल देती थी। अक्सर संदीप उसका नाम लेकर ही पुकारता, "शैल, ओ शैल—"

पति के जिन्दा रहने के दौरान योगमाया को हमेशा महरी का क[illegible] पड़ता था, उसके बाद पति के मरने के बाद भी महरी का काम क[illegible] छुटकारा नहीं मिला था। उसी स्त्री के भाग्य में इतना सुख होगा, इस[illegible]

भी नहीं की जा सकती है।

शुरू में मौसीजी जरा अवाक् हो गई थीं। कहा था, "मुझे महरी की जरूरत ही क्या है बेटा? केवल दो जनों की गृहस्थी है, यह काम मैं अकेले कर लूंगी।"

संदीप ने कहा था, "नहीं मौसीजी, दादी मां ने कहा है, रसोई बनाना, बर्तन मलना, घर में झाड़ू लगाना वगैरह बहुत सारे काम हैं। उसके बाद कपड़ा-लत्ता फींचना। काम की क्या कोई कमी है? आपको कोई काम नहीं करना है। दादी मां ने मुझसे कहा है।"

मौसीजी ने कहा था, "फिर मैं दिन-भर बैठे-बैठे क्या करूंगी? काम न करने से मैं गठिया की मरीज हो जाऊंगी।"

संदीप ने कहा था, "ज़िन्दगी-भर आप खटती रही हैं। अब इस उम्र में ज़रा आराम ही कर लें तो हर्ज क्या है?"

मौसीजी ने कहा था, "नहीं बेटा, उतना सुख अच्छा नहीं होता। हरेक का भाग्य क्या सारा सुख बरदाश्त कर पाता है? मैं गरीब हूं, गरीब की तरह चलना ही मेरे लिए अच्छा है।"

उस समय से शैल ही सारा कुछ करती। बाज़ार से सामान लाने से शुरू कर, रसोई पकाने, झाड़ू लगाने, बर्तन मांजने वगैरह सभी काम। उसकी माहवारी तनख्वाह विडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन से आती। संदीप रुपये लाकर शैल को देता। शैल उन रुपयों को लेकर रसीद पर अंगूठे का निशान लगा देती। वह रसीद मल्लिकजी के खर्च के खाते में जमा हो जाती। योगमाया के हाथ में वह गृहस्थी के खर्च की पूरी रकम दे जाता। गृहस्थी रहने पर मोटी रकम खर्च हो जाती है—चाहे वह गृहस्थी दो जनों की हो या दस जनों की। खर्च भी कोई कम नहीं। दूध, कोयला, चावल-दाल, अनाज, साग-सब्जी, मसाले, किरोसिन से शुरू कर तमाम चीजें खरीदनी पड़ती हैं। छोटी गृहस्थी हो तो उसका खर्च कम होगा, इसका कोई मानी नहीं। किसी महीने तीन सौ रुपये खर्च होते और किसी महीने चार सौ।

उसके अलावा और एक मोटी रकम खर्च होती और वह गाड़ी के मद में।

दादी मां का हुक्म है, बहूरानी गाड़ी से स्कूल जाएगी और गाड़ी से ही घर वापस आएगी। इसीलिए ड्राइवर नियम से यहां आता है। बहूरानी पैदल स्कूल जाए, दादी मां को यह पसन्द नहीं। जो एक दिन दौलतमन्द घर की बहू बनने जा रही है उसके लिए कहीं पैदल चलकर जाना उचित नहीं। इससे मुखर्जी घर की इज्जत में बट्टा लगेगा।

इस नई गृहस्थी की देखरेख का काम संदीप पर थोपा गया। एक तरह से इस घर की सारी जिम्मेदारियों का मालिक बना दिया गया। रुपये की जितनी जरूरत हो मुनीमजी से लो लेकिन इस घर की सारी जवाबदेही संदीप पर है।

इसके पहले जो काम था, वह आसान था। महीने में सिर्फ एक दिन मनसा-तल्ला लेन जाकर माहवारी रकम तपेश गांगुली के हाथ में सौंप देना। पर यह हर रोज का काम हर रोज नींद से जगकर तैयार होने के बाद इस मकान में चला आना पड़ता। आते ही मौसीजी से पूछना पड़ता कि वे कैसी हैं या फिर नींद आई थी या नहीं या रुपये-पैसे की कोई जरूरत है या नहीं। संदीप अलबत्ता कुछ अधिक रुपये जेब में लेकर आता। मौसीजी को जरूरत नहीं हो सकती है लेकिन कहीं

विशाखा को जरूरत रहे तो ! स्कूल में यदि उसे भूख लगे तो कुछ खरीदकर खा सकती है। या तो आइसक्रीम या पेस्ट्री। संदीप ने विशाखा को खराब चीज खरीदकर खाने से मना कर दिया है। आस-पास की खराब चीजें खरीदकर खाने से स्वास्थ्य पर उसका बुरा असर पड़ेगा। ऐसी हालत में विशाखा को फटकार नहीं सुननी होगी; दादी मां संदीप को ही फटकारेंगी।

यही नहीं, इसके सिवा है डॉक्टर।

मासिक वेतन पानेवाला डॉक्टर है। वह आकर बहूरानी के शरीर की जांच कर जाएगा। विशाखा की जीभ और पेट की जांच करेगा। जांच करके देखेगा, विशाखा का वजन बढ़ रहा है या नहीं। अगर वजन कम हो जाता है तो कोई दवा खिलाने का आदेश दे जाता है। उस दवा की कीमत चाहे पांच रुपया हो या पचीस रुपया, उसे खरीदकर खिलाना होगा। मोटी बात है, बहूरानी को तन्दुरुस्त रखना है, चाहे जैसे भी हो। अगर डॉक्टर कहे कि हवा-पानी बदलने के लिए जाना उचित है तो यही करना होगा। बगल में ही पुरी है, या काशी, या मधुपुर या देवघर। काशी में तो गुरुदेव ही रहते हैं। वे भगवान के समकक्ष हैं। उनके पास जाना हो तो सारा इन्तजाम एक ही क्षण में हो जाएगा, किसी प्रकार की असुविधा का सामना नहीं करना पड़ेगा। अगर कहो तो मुनीमजी फौरन गुरुदेव को टेलिग्राम कर देंगे।

उस दिन भी संदीप ने रसेल स्ट्रीट के मकान की तीसरी मंजिल पर जाकर पुकारा, "मौसीजी, मौसीजी—"

अन्दर कोई जोर-जोर से बातें कर रहा था। संदीप समझ नहीं सका कि कौन इस तरह बोल रहा है। मर्द के गले की आवाज है, जब कि इस घर में कोई मर्द नहीं रहता।

शैल ने ही दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खुलते ही संदीप ने देखा, तपेश गांगुली बैठे हुए हैं।

संदीप को देखते ही पूछा, "कहो भाई, कैसे हो?"

संदीप ने पूछा, "आपका हाल-चाल क्या है?"

तपेश गांगुली बोले, "अरे, हम लोगों की बात छोड़ो। इतने दिन एक साथ बिताए हैं, इसलिए भाभी को देखने के लिए जरा चला आया। तुम्हारी दादी मां कैसी हैं?"

संदीप बोला, "अच्छी हैं। आज आपका दफ्तर खुला हुआ नहीं है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे हम लोगों के दफ्तर की बात छोड़ो, दफ्तर न जाने से भी काम चल जाता है। तुम कॉलेज में पढ़ते हो न? आज तुम्हारा कॉलेज नहीं है?"

"मेरा कॉलेज रात में चलता है। मुझे हर रोज सवेरे एक बार यहां आना पड़ता है, इस घर के हर मामले की देखरेख करनी पड़ती है। दादी मां का कहना है कि हर रोज एक बार यहां की खबर उनके पास पहुंचा आऊं।"

"बहुत अच्छी बात है। देखो, सब भाग्य की बात है भाई। वरना जिन्दगी-भर खून-पसीना बहाकर मैं जो नहीं कर सका, इन लोगों को प्राप्त हो गया।"

यह सब कहते-कहते तपेश गांगुली की आंखें छलछला आईं। मानो, भाभी

का सौभाग्य देखकर उन्हें बड़ा ही कष्ट हो रहा हो।

उसके बाद बोले, "खैर चाहे जो हो, सुनने को मिला है, तुम्हारी दादी मां ने भाभी के लिए बहुत कुछ किया है।"

"हां, आपने ठीक ही सुना है।" संदीप ने कहा।

"इन लोगों की इस महरी को तुम लोग कितनी तनख्वाह देते हो?"

संदीप ने कहा, "तीस रुपया। उसके अलावा खाना-पीना, रहने की जगह सारा कुछ।"

"ती-स रुपये! इतना अधिक!"

संदीप ने कहा, "इससे कम में आजकल कोई महरी या नौकर नहीं मिलता है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "सब तकदीर की बात है भाई, तकदीर की बात। मैं रेल के दफ्तर में काम कर आज तक घर के लिए कोई महरी या नौकर नहीं रख सका।"

संदीप ने कहा, "हां, आपको बहुत तकलीफ झेलनी पड़ती है।"

तपेश गांगुली को मानो संदीप की बातों से थोड़ी-बहुत सांत्वना मिली। जैसे वे ज़रा उत्साहित हो उठे। बोले, "दुख की बात और किससे कहूं या सुनेगा ही कौन! भाभी मेरे बारे में सब कुछ जानती हैं।"

योगमाया ने कहा, "तुम इतनी चिन्ता मत करो देवरजी, मत करो। यहां आने पर मैं भी क्या बहुत अच्छा अनुभव कर रही हूं? मैं सब कुछ समझती हूं। यहां आने पर भी हर वक्त तुम्हीं लोगों की याद आती रहती है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैं क्या यह नहीं जानता? यहां आने के दिन तुम कितना रोई थी, यह मैं भूला नहीं हूं। यही वजह है कि मैं तुम्हारी देवरानी से कहता हूं कि मेरी भाभी इस घर की लक्ष्मी थी। जिस घर की लक्ष्मी ही बाहर चली जाए, उस घर में शान्ति रह सकती है?"

योगमाया ने कहा, "लगता है, तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "तबीयत कैसे अच्छी रह सकती है? आधे दिन तक तो मुझे उपवास ही करना पड़ता है।"

"क्यों, उपवास क्यों करना पड़ता है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "खाना कैसे मिले? तुम जब तक हमारे घर में थी, तब तक मैं कितने आराम में था। तुम ठीक वक्त पर मेरे लिए चावल पका देती थीं। एक दिन भी मुझे दफ्तर जाने में देर नहीं हुई थी।"

योगमाया के चेहरे पर दहशत की छाया तिर आई। बोली, "अब क्या देर हो जाती है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "देर नहीं होगी? कहा जा सकता है कि हर रोज़ देर हो जाती है। तुम्हारी देवरानी सवेरे देर से सोकर उठती है। बाज़ार से सरो-सामान लेकर जब लौटता हूं तो तुम्हारी देवरानी को गहरी नींद में पाता हूं। औरत होने के बावजूद इतनी नींद कहां से आती है, कौन जाने! तब मैं खुद चूल्हे में कोयला डालकर आग सुलगाता हूं। जब आग की लपटें दहकने लगती हैं तो तुम्हारी देवरानी दया कर चूल्हे पर चाय का पानी चढ़ाती है। चाय पीने के बाद

जब नींद का खुमार दूर होता है तो वह स्नानघर जाती है। तुम्हीं बताओ भाभी, पहले चाय बननी चाहिए या मेरे दफ्तर के लिए भात ? पहले कौन चीज, तुम्ही बताओ।"

योगमाया बोली, "हाय, तुम्हे तो बड़ा ही कष्ट है !"

तपेश गागुली ने कहा, "अपने कष्ट की बाबत तुम्हें बताया ही कितना है ? और कितने कष्ट की बात कहूं ! सारा कुछ कहूं तो सातों काण्ड रामायण की कहानी हो जाएगी। इसीलिए तो कह रहा था कि तुम थी हमारे घर की लक्ष्मी। तुम जब से इस घर में चली आई हो, उसी दिन से हम लोगों का घर श्रीहीन हो गया है। आदमी कब तक बगैर खाए रह सकता है, तुम्ही बताओ।"

योगमाया के मुह से हाहाकार निकल पड़ा, "बाप रे ! तुम कब तक बगैर खाए दफ्तर जाओगे देवरजी ?"

"और अब कितने दिन ! अब शायद ज्यादा दिनो तक जिन्दा नही रहूंगा। जिन्दा रहने की मुझे इच्छा भी नही है। मुझे सिर्फ एक ही चिन्ता है—मेरे मरने के बाद बिजली की देख-भाल कौन करेगा। उसी के लिए मैं चिन्तित रहता हूं।"

योगमाया ने कहा, "अभी···अभी तुम खाना खाकर आए हो या नही ?"

तपेश गागुली ने कहा, "खाना ? मुझे खाना कौन देगा ? घर में रसोई पकेगी तभी तो खाऊंगा। मेरे घर मे तुम्हारे जैसे कितने आदमी हैं जो मेरे खाने-पीने की बात सोचें ? मैंने खाना खाया या नही, यह देखनेवाला आदमी मेरे घर में नही है।"

योगमाया ने कहा, "तो फिर आज यही खाना खा लो।"

यह कहकर योगमाया ने शैल को पुकारा। बाहर की दुकान से चार रसगुल्ले लाने को कहा। कहा, "अभी थोड़ी-सी मिठाई खा लो। इसके बाद तुम्हें हम लोगो के साथ भात खाना होगा।"

"नही-नही, तुम्हे मेरे लिए इतना कष्ट नही उठाना चाहिए।"

योगमाया बोली, "इसमे कष्ट की कौन-सी बात है ? संदीप को देख रहे हो न, वह बड़ा ही अच्छा लड़का है। वही हर रोज हमारा हाल-चाल पूछ जाता है। उसके रहने से हमे कोई कष्ट नही होता है।"

तपेश गागुली ने संदीप की ओर देखते हुए कहा, "तुम बहुत ही अच्छा काम कर रहे हो भाई। तुम्हे बहुत पुण्य मिल रहा है। तुम्हारी आयु लंबी हो, ईश्वर से यही प्रार्थना करता हू।"

संदीप ने कहा, "आप मेरी इतनी बड़ाई क्यो कर रहे हैं ? मुझे कोई श्रेय नही है। दादी मा ने मुझे जो कुछ करने का हुक्म दिया है, वही कर रहा हूं। इससे अधिक कुछ भी नही।"

"यह तुम लोगो की दादी मा का तो अपना मकान है। इसका किराया तो देना नही पड़ता है।"

संदीप ने कहा, "नही।"

तपेश गागुली ने पूछा, "तुम्हारी दादी मा को इन लोगो के पीछे हर महीने कितना खर्च करना पड़ता है ?"

संदीप ने कहा, "इसका हिसाब मैं नही रखता, मुनीमजी रखते हैं।"

"फिर भी अंदाज़न ? दो सौ या तीन सौ ?"

"उससे भी ज़्यादा। किसी-किसी महीने पांच-छह सौ तक हो जाता है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह क्या ? पांच-छह सौ ? मैं तो खून-पसीना वहाने के वाद भी महीने-भर में इतना नहीं कमा पाता हूं। भाग्य की वात है भाई, भाग्य की !"

संदीप ने कहा, "इसके वाद खर्च और भी वढ़ जाएगा।"

"क्यों, खर्च क्यों वढ़ जाएगा ?"

संदीप ने कहा, "दादी मां ने कहा है, इसके वाद एक मास्टर रखना होगा विशाखा को पढ़ाने के लिए। वह मास्टर सिर्फ वंगला, गणित और दूसरे-दूसरे विषय पढ़ाएंगे। इसके अलावा विशाखा को अंग्रेज़ी पढ़ाने के लिए एक मेमसाहव नियुक्त की जाएगी। अंग्रेज़ी की तालीम देनेवाली मेमसाहव हफ्ते में दो वार आएगी। वह महीने में तीन सौ रुपये वेतन लेगी।"

इस वीच शैल प्लेट में चार रसगुल्ले रख गई। एक प्याली चाय भी। रसगुल्लों पर नज़र जाते ही तपेश गांगुली की आंखों में चमक आ गई। झट से एक रसगुल्ला मुंह में डालकर वोला, "वाह-वाह, तुम लोगों के मुहल्ले का रसगुल्ला तो वड़ा ही मीठा है।"

रसगुल्ला कभी नमकीन या तीता नहीं, मीठा ही होता है, यह वात जैसे तपेश गांगुली ने अपनी ज़िन्दगी में पहले-पहल जाना हो। वोले, "तुम लोगों के इस मुहल्ले की हर चीज़ अच्छी है। कव से रसगुल्ला नहीं खाया है, याद नहीं है।"

योगमाया ने तपेश गांगुली की जवान से इस मुहल्ले के रसगुल्ले की प्रशंसा सुनकर कहा, "और रसगुल्ले लोगे देवरजी ?"

तपेश गांगुली ने मानो अनिच्छा से कहा, "और दोगी ?"

इस सवाल का जवाव दिए वगैर योगमाया ने और चार रसगुल्ले शैल से मंगा दिए।

तपेश गांगुली ने कहा, "आह, फिर रसगुल्ला मंगवाने की ज़रूरत ही क्या थी ?"

यह कहकर दुवारा रसगुल्ला मुंह में डालने लगे। रसगुल्ला खाते हुए वोले, "रसगुल्ले की प्रशंसा की है तो इसका यह अर्थ नहीं कि इतने सारे रसगुल्ले खाने पड़ेंगे।"

यह कहकर फिर एक रसगुल्ला मुंह में डाल लिया।

उसके वाद संदीप की ओर ताकते हुए वोले, "फिर तो विशाखा के कारण तुम्हारी दादी मां के काफी रुपये खर्च हो जाएंगे।"

संदीप ने कहा, "विशाखा को अपने पोते से व्याहना है इसीलिए उसको अच्छी तरह लिखने-पढ़ने की तालीम दिलाना चाहती हैं।"

उसके वाद एक पल रुककर फिर वोला, "उन लोगों के पास वेशुमार पैसा है और पोता भी एक ही है, इसलिए उसे अपने वेटे की दुलहन वनाने के लिए पैसा तो खर्च करना ही होगा।

"अच्छा तो यह वताओ कि उन लोगों के पास कितने रुपये हैं। इतने रुपये

आदमी के पास कैसे आते हैं ? हम लोगों के पास रुपये कहां आते हैं, जबकि हम रुपये के लिए हाय-हाय करते रहते हैं। सच-सच बताओ, उन लोगों के पास कितने रुपये हैं ?"

संदीप ने कहा, "यह मैं कैसे बता सकता हूं ?"

"फिर भी अन्दाजन कितने रुपये हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं गरीब आदमी हूं, यह कैसे बता सकता हूं ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "ईश्वर की अक्ल देखो, हम रुपयों के अभाव में घर में एक नौकर या महरी तक नहीं रख पाते, रुपये के अभाव में लड़की को अच्छा खाना भी नहीं मिला पाते और न ही लिखा-पढ़ा पाते हैं। और ईश्वर सारा पैसा उनके घर में डाल देते हैं। यह किस तरह का ईश्वर है, बताओ तो सही ! यह कैसा अन्धा इन्साफ है ?"

तब संदीप के पास ज्यादा वक्त नहीं था। उसने कहा, "अच्छा मौसीजी, चलता हू, कल फिर आऊंगा।"

और वह सदर दरवाजा खोल बाहर निकल आया। सीढ़ियां उतरने के दौरान उसने महसूस किया कि इतना वक्त यों ही जाया हो गया। तपेश गांगुली से फालतू बातें करता रहा। रुपये से ही जो लोग मनुष्यता का विवेचन करते हैं, उन पर संदीप को हमेशा क्रोध आता रहा है। आखिर गोपाल और तपेश गांगुली में कौन-सा अन्तर है ? अन्तर बस इतना ही है कि गोपाल के पास अगाध पैसा है और तपेश गांगुली के पास पैसे नहीं हैं। मगर स्वभाव ? मनोवृत्ति ?

कान में आवाज आई, "ओ भाई, सुन रहे हो—?"

संदीप ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा और हैरत में आ गया। देखा, तपेश गांगुली उसे पुकारते हुए पीछे से दौड़े-दौड़े आ रहे हैं।

तपेश गांगुली करीब आकर हांफने लगे। बोले, "तुम्हें एक बात कहनी है भाई।"

"मुझे ? कौन-सी बात ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "गोपनीय बात है, इसलिए तुम्हें चुपके से कह रहा हू। तुम तो भाई, मेरी हालत से अच्छी तरह वाकिफ हो। मुझे भाई सब कुछ कटने के बाद तनख्वाह के तौर पर हर माह साढ़े तीन सौ रुपये मिलते हैं। उसी से गृहस्थी का खर्च चलाना पड़ता है। इस जमाने में इतनी छोटी रकम से गृहस्थी चलाई जा सकती है, तुम्हीं बताओ। चीजों की कीमत जिस अनुपात से बढ़ती जा रही है, उससे क्या आए दिन गृहस्थी चलाई जा सकती है ?"

संदीप ने कोई जवाब नहीं दिया।

तपेश गांगुली ने कहा, "विशाखा के लिए तुम्हारी दादी मां मास्टर रखेंगी, यह तुम बता चुके हो। सो मुझे ही बतौर मास्टर रखने कहो।"

"आप विशाखा को पढ़ाइएगा ? क्या पढ़ाइएगा ?"

"तुम जो भी कहोगे, पढ़ाऊंगा।" तपेश गांगुली ने कहा, "तुम तो जानते ही हो भैया, कि मैं बी० ए० पास हूं। मैं क्या पढ़ा नहीं पाऊंगा ?"

"आप अंग्रेजी पढ़ा सकिएगा ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "क्या कह रहे हो तुम ? मैंने अंग्रेजी में ऑनर्स किया

है। रेल में नौकरी करता हूं तो क्या एक लड़की को अंग्रेजी नहीं पढ़ा सकूंगा ?"

संदीप ने कहा, "लेकिन दादी मां की इच्छा है कि उनकी बहूरानी एक अंग्रेज मेम साहब से अंग्रेज़ी सीखे। बाद में विशाखा को अपने पति के साथ विलायत भी तो जाना होगा ?"

"विशाखा क्या विलायत जाएगी ?"

संदीप ने कहा, "जाएगी नहीं ? मुखर्जी बाबुओं का विलायत में भी दफ्तर है। मेमसाहब से अंग्रेज़ी सीखेगी तो विशाखा को किसी भी तरह की असुविधा का सामना नहीं करना होगा।"

यह सुनकर तपेश गांगुली के नथुने से निराशा की एक लंबी सांस निकल आई। बोले, "बंगला सिखाऊंगा। स्कूल में बंगला में मैं बराबर फर्स्ट आया करता था। मैं बंगला सिखा सकता हूं।"

संदीप ने कहा, "विशाखा अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ती है, इसलिए बंगला पढ़ने की उसे ज़रूरत पड़ेगी या नहीं, मैं कह नहीं सकता।"

तपेश गांगुली ने कहा, "सो ज़रूरत न हो पर गणित तो हर स्कूल में है। मैं गणित भी पढ़ा सकता हूं। मैं विशाखा को गणित अच्छी तरह सिखा सकता हूं।"

संदीप इसका क्या उत्तर दे, समझ नहीं सका। थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोला, "ठीक है, मैं सोचकर बाद में बताऊंगा।"

तपेश गांगुली ने कहा, "बाद में नहीं भाई। तुम मेरे छोटे भाई जैसे हो; तुम्हें मेरा यह उपकार करना ही होगा। वरना मैं मर जाऊंगा, हां, मर जाऊंगा।"

संदीप ने कहा, "देखिए, मुझे कहना व्यर्थ है। मैं मुखर्जी भवन के एक नौकर के सिवा और कुछ नहीं हूं। मेरी बात की क्या कीमत !"

अब तपेश गांगुली एक हरकत कर बैठे। झट से संदीप का एक हाथ पकड़ लिया। उसके बाद उनकी आंखों से टप-टप आंसू की बूंदें टपकने लगीं। बोले, "तुम मुझे बचा लो भाई, वरना मैं सपरिवार मौत के मुंह में समा जाऊंगा। और अगर यह न कर सको तो कम से कम मेरी लड़की के लिए भी एक ऐसे ही पात्र का जुगाड़ कर दो।"

संदीप भारी मुश्किल में फंस गया। बोला, "मैं तो आपको कह ही चुका हूं…"

तपेश गांगुली ने एकाएक बुक पाकेट से पांच रुपये का एक नोट निकाल संदीप के हाथ में ठूंस दिया।

संदीप हतप्रभ जैसा हो गया। बोला, "यह क्या कर रहे हैं आप ? यह क्या कर रहे हैं ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं है। तुम भी गरीब हो और मैं भी। मैं तुम्हें पांच रुपया मिठाई खाने के वास्ते दे रहा हूं। इसके अलावा और कोई बात नहीं है।"

संदीप को अब गुस्सा आ गया। बोला, "आप मुझे घूस दे रहे हैं ? मुझे आप…"

तपेश गांगुली ने कहा, "नहीं-नहीं, तुम इसे घूस क्यों समझ रहे हो? तुम भी तो भैया मेरी तरह नौकरी पर पलनेवाले आदमी हो। गुस्साओ नहीं—सुनो-सुनो—"

लेकिन संदीप अब वहां नहीं रुका। बगैर किसी ओर देखे संदीप तपेश गांगुली को रसेल स्ट्रीट पर छोड़कर चला आया था। एक बार भी पीछे की तरफ मुड़कर नहीं देखा था। अन्ततः कुछ रुपयों के लोभ में तपेश गांगुली ने उसे घूस देने की पेशकश की थी! संदीप क्या इतना छोटा, नीच और निकम्मा है? संदीप क्या···?

बहरहाल, वह सब बात बाद में बताई जाएगी।

याद है, तब विशाखा ने नए-नए स्कूल में दाखिला लिया था। उसके लिए गाड़ी का इतजाम किया गया था। सवेरे ब्रिडन स्ट्रीट के मकान से ड्राइवर गाड़ी लेकर तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान के पोर्टिको के नीचे आकर खड़ा होता और विशाखा उसी गाड़ी पर सवार हो स्कूल जाती। जब तक स्कूल में छुट्टी नहीं हो जाती, गाड़ी वहीं खड़ी रहती। स्कूल की छुट्टी के बाद विशाखा को ड्राइवर घर पहुंचा जाता तभी उसे छुट्टी मिलती।

सात नंबर मनसातल्ला लेन के मकान से जीवन जीने के तौर-तरीकों से तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान के जीवन जीने के तौर-तरीके बिलकुल भिन्न थे। इस मकान में योगमाया को सवेरे-सवेरे जगकर देवरानी के लिए न तो चाय बनानी पड़ती है और न ही देवर के दफ्तर जाने के चावल-दाल और सब्जी बनाने की जल्दबाजी रहती है। शैल ही सबकुछ करती है। इस घर के कमरों में झाड़ू लगाना, बर्तन माजना, कपड़ा फीचना से शुरू कर बाजार करना, रसोई पकाना वगैरह-वगैरह। शैल स्वभाव से भी बड़ी भली है। उसे जो तनख्वाह मिलती है दादी मा समय पर भेज देती हैं। लेकिन काम करने के दौरान उसके चेहरे पर शिकन तक नहीं आती। सबसे बड़ी बात है, चोरी करने की उसे लत नहीं है।

योगमाया बोलते-बोलते रो देती है। कहती है, "इतना सुख मेरे भाग्य को बरदाश्त होगा बेटा?"

संदीप सात्वना देता है, "आप चिंता नहीं करें मौसीजी। अपनी मा से भी मैंने यही कहा है, उन्हें भी चिंता से दूर रहने को कहा है। मेरी मा भी मेरे बारे में सोचती रहती है।"

विशाखा जैसे ही गाड़ी पर चढ स्कूल जाती है, योगमाया की चिंता की शुरुआत तभी से हो जाती है। कहीं रास्ते में गाड़ी किसी दूसरी गाड़ी से टकरा न जाए। कहीं कोई दुर्घटना न हो जाए! कहीं लड़की पर कोई मुसीबत न आ जाए!

विशाखा जब तक स्कूल से लौटकर नहीं आती है तब तक मौसीजी को चैन नहीं मिलता है। जब विशाखा घर लौटती है तो योगमाया अपनी लड़की की ओर देखकर कहती है, "तू आ गई तो जान में जान आ गई बेटी।"

विशाखा कहती है, "बड़ी भूख लगी है, खाना दो मा।"

खाना तैयार ही रहता है। फिर भी योगमाया कहती है, "पहले हाथ-मुंह-पैर

तो धो ले तब न खाना खाएगी।"

विशाखा बगैर हाथ-मुंह-पैर धोए खाना चाहती है। आखिर में योगमाया को खुद ही बेसिन के पास जाकर विशाखा के हाथ-पैर और मुंह धुलवाना पड़ता है कहती है, "ससुराल जाकर इस तरह शरारत मत करना। नहीं तो सभी तुम्हारी निंदा करेंगे—कहेंगे बहू रानी की मां ने उसे कुछ नहीं सिखाया है।"

विशाखा कहती है, "जब शादी होगी तो देखा जाएगा।"

योगमाया कहती है, "तुममें यही खोट है। तुम जिद्द पर अड़ जाती हो। जिद्द करना तुम्हारा एक बुरा स्वभाव है। ससुराल जाकर तुम जब जिद्द करोगी तो तुम्हारी दादी मां मेरी निंदा करेंगी।"

विशाखा कहती है, "दादी मां तो बूढ़ी हैं, वह क्या हमेशा जिंदा रहेगी…?"

योगमाया कहती है, "छिः, ऐसा नहीं कहते। याद रखो, दादी मां तुमसे उम्र में बड़ी हैं। अपने से बड़ों की निंदा नहीं करनी चाहिए।"

विशाखा तब चुप हो जाती है। इस बीच विशाखा की अंग्रेजी की मेमसाहब आ धमकती है। उस समय विशाखा की पढ़ाई शुरू हो जाती है। मेमसाहब अच्छी बंगला बोल नहीं पाती। टूटी-फूटी हिंदी और बंगला से अपना काम चला लेती है।

विशाखा ने पूछा था, "आपको मैं क्या कहकर पुकारूं?"

मेमसाहब का नाम है मिस मेरी। मिस मेरी ने कहा था, "मैं तुम्हारी अंटी हूं। तुम मुझे अंटी कहकर संबोधित करना।"

तभी से वह सभी के लिए अंटी मेमसाहब हो गई। योगमाया भी उसे अंटी कहकर ही संबोधित करती। अंटी के आते ही उसके लिए चाय का इंतजाम किया जाता। सिर्फ चाय ही नहीं, नाश्ते का भी प्रबंध रहता।

कहां वह सात नंबर मनसातल्ला लेन का मकान और कहां यह तीन नंबर रसेल स्ट्रीट की इमारत! योगमाया ने क्या कभी इसकी कल्पना की थी? दुख के दिनों में कौन कल्पना कर सकता है अनदेखे भविष्य के ऐश्वर्य की संभावनाओं की! गरमियों की तपिश में कौन सावन के श्याम समारोह की कल्पना कर सकता है? लेकिन कभी-कभी उसके विपरीत भी घटित होता है। रामायण के राम ने कभी क्या कल्पना की थी कि किसी दिन उसे अयोध्या छोड़कर वनवास करना होगा? लेकिन राम यदि वनवास नहीं करता तो रावण का क्या वध होता? और रावण का वध नहीं होता तो हम रामायण पढ़ नहीं पाते। इसीलिए लगता है, रामायण पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त होगा, इसी उद्देश्य से राम को अयोध्या छोड़कर वनवास की यातना सहनी पड़ी थी। उसी तरह योगमाया अपनी लड़की विशाखा को साथ ले सात नंबर रसेल स्ट्रीट की इमारत में अगर नहीं आई होती तो संभवतः 'नरदेह' उपन्यास भी नहीं लिखा जाता।

एक दिन अंटी मेमसाहब रसेल स्ट्रीट की इमारत से जैसे ही बाहर निकल रही थी कि संदीप उस मकान में घुसते हुए दिख पड़ा। बीच रास्ते में ही मुलाकात हो गई।

संदीप पर नजर पड़ते ही अण्टी मेमसाहब बोली, "गुड मॉनिंग बाबू।"

"गुड मॉनिंग!" संदीप ने भी कहा।

उसके बाद पूछा, "आपकी छात्रा की पढ़ाई-लिखाई कैसी चल रही है ?"

अंटी मेमसाहब बोली, "वेरी गुड, बिलकुल ठीक।"

उसके बाद बोली, "बाबू, एक बात, इज इट ए फैक्ट कि विशाखा की शादी हो जाएगी ?"

संदीप ने कहा, "हां-हां, इट इज ए फैक्ट।"

अंटी मेमसाहब बोली, "क्यों ? व्हाइ ? इतनी कम उम्र में शादी होना क्या अच्छा है ? किससे शादी होगी ?"

"एक मल्टी मिलिओनियर से—एक करोड़पति से।"

यह सुनकर मेमसाहब का चेहरा बुझ गया। बोली, "फिर मेरी नौकरी भी तो चली जाएगी बाबू—"

हर महीने दो सौ रुपये वेतन के रूप में मिलते हैं। यह क्या आसान बात है। उसके लिए दुखित होना स्वाभाविक है।

संदीप ने सांत्वना देते हुए कहा, "उस शादी में अभी बहुत देर है। पहले विशाखा की शादी के लायक उम्र हो जाए। अभी आप यह सोच क्यों रही हैं ?"

उसकी बात सुनकर मेमसाहब ने इत्मीनान की सांस ली।

सहसा एक गाड़ी से एक आदमी के गले की आवाज़ आई, "हैलो मेरी !"

अंटी मेमसाहब ने उस गाड़ी की तरफ देखकर कहा, "हैलो।"

इसके बाद अंटी मेमसाहब उस गाड़ी की तरफ बढ़ ही रही थी कि उससे गोपाल नीचे उतरा।

गोपाल को देखकर संदीप को आश्चर्य हुआ। गत रात उसने गोपाल को अंधेरे में देखा था और अब देख रहा है खुले आसमान के तले दिन की रोशनी में।

"अरे संदीप, तू मुझे पहचान नहीं पा रहा है ? मैं गोपाल हूं, गोपाल हाजरा।"

संदीप ने पूछा, "तू अचानक ?"

गोपाल बोला, "अचानक क्यों ? मैं तो रोज हर जगह का चक्कर लगाता हूं। मेरी से तेरी जान-पहचान कैसे हुई ?"

संदीप ने कहा, "वह विशाखा को अंग्रेज़ी सिखाती है।"

"विशाखा ? विशाखा कौन है ?"

अंटी ने सब-कुछ बताया। उसके बाद बोली, "यह जो तीन नंबर मकान है, उसी में मेरी स्टूडेंट रहती है।"

गोपाल ने पूछा, "तुमसे इस घर का कौन-सा सरोकार है ?"

संदीप ने कहा, "मैं बिडन स्ट्रीट के जिस मकान में रहता हूं, उस घर के युवक से इस घर की लड़की की शादी होगी।"

"सौम्य से ? सौम्य मुखर्जी से ?"

"हां।"

अंटी मेमसाहब ने कहा, "वह एक मल्टी मिलिओनियर है।"

गोपाल ने कहा, "मल्टी मिलिओनियर हो सकता है पर वह है एक डिबॉच, लंपट। हर रोज चौरंगी मुहल्ले के नाइट क्लब में शराब पीता है, मेमसाहबों के साथ मौज-मस्ती मनाता है। तू तो उस दिन सब कुछ अपनी आंखों से देख चुका है। खैर, शादी कब होने वाली है ?"

संदीप ने कहा, "सो बहुत दिन बाद होगी। अभी उनके खर्च से ही उस
ड़की को यहां रखा गया है, लिखाया-पढ़ाया जा रहा है, अदब-कायदे की
लीम दी जा रही है, संगीत सिखाया जा रहा है। बहुत गरीब घर की लड़की है
—"

अंटी मेमसाहब बोली, "मैं उसे अंग्रेजी सिखाती हूं। शादी होने के बाद वह
या मुझसे अंग्रेजी सीखेगी? मेरी दो सौ रुपये की नौकरी चली जाएगी। तब
क्या होगा?"

गोपाल ने अभयदान करते हुए कहा, "तुम्हें इसके लिए चिंता नहीं करनी
है। तुम्हारे लिए डरने की कौन-सी बात है?"

इस बीच अंटी मेमसाहब और गोपाल गाड़ी में बैठ चुके थे। गोपाल ने गाड़ी
के दरवाजे से गरदन निकालकर कहा, "तू अभी क्या कर रहा है?"

संदीप ने कहा, "बी० ए० की परीक्षा देकर अभी बैठा हुआ हूं।"

"अब क्या करने का विचार है?"

संदीप ने कहा, "पास कर गया तो कानून की पढ़ाई करूंगा या फिर किसी
नौकरी की तलाश करूंगा। देखा जाए क्या होता है!"

तब तक गाड़ी चल चुकी है। गोपाल ने चलती हुई गाड़ी से कहा, "तू व्यर्थ
ही नौकरी करने जा रहा है, नौकरी में क्या पैसा है? इससे तो तेरी जिंदगी
बिगड़ जाएगी।"

उसके बाद गाड़ी गोपाल और अंटी मेमसाहब को लेकर धुआं उगलती हुई
सर्र से पार्क स्ट्रीट की तरफ चली गई। संदीप खड़े-खड़े अपलक गाड़ी की ओर
निहारता रहा।

बहुत देर तक अपलक देखते रहने के बावजूद उसके विस्मय का असर दूर नहीं
हुआ। न सिर्फ गोपाल, बल्कि अंटी मेमसाहब के कारण भी उसे हैरत हुई। इन
दोनों के संबंध और सरोकार के बारे में सोचकर उसके विस्मय की मात्रा दूनी हो
गई। गोपाल और अंटी मेमसाहब के हिलने-मिलने का सिलसिला कैसे और कब से
शुरू हुआ है? इसके पीछे कौन-सा रहस्य है?

वास्तव में क्या सब लोग रुपये के पीछे जी-जान से भाग रहे हैं? रुपया-पैसा
क्या जीवन के लिए इतना अपरिहार्य है? विशाखा की लिखाई-पढ़ाई जैसे कोई
अहम सवाल नहीं है। उसकी शादी हो जाने के बाद मेमसाहब की दो सौ रुपये की
नौकरी चली जाएगी, यही अहम सवाल है।

संदीप जब बेड़ापोता में था, उस समय यह बात उसके सामने उभर कर नहीं
आई थी। उस जमाने में जब हाजरा बूढ़े की लाश देखने के लिए लोगों की भीड़
इकट्ठी हो गई थी, उस समय सभी की आंखों में प्रश्न उभर आया था कि हाजरा
बूढ़े को किसने मार डाला?

किसी ने कहा, "जरूर ही कोई चोर हाजरा बूढ़े के घर में घुसा होगा।"
बाकी लोग उसकी बात सुनकर हंस पड़े थे। हाजरा बूढ़े के पास क्या है कि उसकी
झोंपड़ी में चोर घुसेगा?

"तो फिर सांप ने डंस लिया होगा।"
ऐसा हो सकता है। आसपास जहां जंगल है वहां सांप का होना असंभव न

है। हो सकता है, झोंपड़ी के सूराख में घुसकर सांप ने हाजरा बूढ़े को काट लिया हो।

अगर यह बात नही है तो फिर हाजरा बूढ़े की मौत का क्या कारण हो सकता है?

याद हो, उस दिन उस दुर्घटना के कारण बहुतों ने माथापच्ची की थी। किसी एक की युक्ति दूसरे को पसन्द नही आई थी। वह वारदात हरेक के लिए रहस्यपूर्ण हो गई थी। आखिर में चटर्जी भवन के काशी बाबू ने सबकुछ सुनने के बाद कहा था, "मैं जानता हूं कि किसने हाजरा बूढ़े को मारा है, किसने उसका खून किया है···"

संदीप ने पूछा था, "किसने?"

काशीनाथ बाबू कुछ देर तक गंभीर रहने के बाद बोले थे, "मेरी बात पर तुममें से किसी को विश्वास नही होगा।"

संदीप को उनकी बातें रहस्यपूर्ण लगी थी, उसकी उत्सुकता और बढ़ गई। पूछा, "बताइए न किसने किया है? किसने हाजरा बूढ़े का खून किया है?"

काशीनाथ बाबू ने कहा, "जिन लोगों ने महात्मा गांधी की हत्या की थी उन्हीं लोगों ने हाजरा बूढ़े का खून किया है।"

संदीप समझ नही सका। कहा था, "महात्मा गांधी की हत्या तो नाथूराम गोडसे ने की थी। उसे तो फांसी दे दी गई थी। वह यहा हाजरा बूढ़े को मारने कैसे आएगा?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "तुम इस लाइब्रेरी की एक किताब पढ़ोगे तो सारी बात तुम्हारी समझ मे आ जाएगी।"

संदीप ने पूछा था, "कौन-सी किताब?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "द ट्रायल एंड डेथ ऑफ सोक्रेटिस—इस पुस्तक को पढ़ते ही समझ जाओगे कि हमारी यह दुनिया भले आदमी को बरदाश्त नही कर पाती। The world does not tolerate absolute truth*····"

संदीप ने कहा था, "हाजरा बूढ़ा तो इंसान नही था।"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "लेकिन वह शैतान भी नही था। इस दुनिया का नियम यह है कि या तो सोक्रेटिस की तरह तुम पूरे इंसान बनो या फिर महाराज नंद कुमार की तरह बुरा आदमी। हम लोगों की तरह जो बीच के आदमी हैं उनके लिए इतिहास को कोई परवाह नही।"

संदीप तब बहुत कम उम्र का था। इन बातों का अर्थ तब उसकी समझ मे नहीं आया था। लेकिन कलकत्ता आने ही उसे पैसा कमाने की तरह-तरह की धोखाधड़ी देखने को मिली। कोई सड़क के नुक्कड़ पर धूप-धूना जलाकर 'विश्व शांति यज्ञ' करने का एलान कर पैसा कमाने की चेष्टा करता है तो कोई मृतक का वस्त्र पहन गृहस्थो के घर-घर जाकर मातृऋण से उन्मुक्त होने के बहाने पैसे मांगता है। रुपया-पैसा कमाने के तौर-तरीके के आविष्कार का नमूना देखकर हैरानी होती है।

---

* यह दुनिया संपूर्ण सत्य को बरदाश्त नही कर पाती।

बारह बटे ए विडन स्ट्रीट की इमारत के सामने एक दिन ऐसी ही घटना घटी थी।

संदीप सवेरे तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान की तरफ जाने को निकला ही था कि तभी एक दरिद्र आदमी से मुलाकात हो गई।

"बाबू, ज़रा रहम कीजिए।"

संदीप ने चौंककर उस आदमी की तरफ देखा। उम्र ज्यादा नहीं है। चेहरे पर कई दिन से न बनाने से खूंटीदार दाढ़ी उग आई है, सिर पर तेलहीन बेतरतीब बाल। देखने से ही पता चल जाता है कि सूतक की ज़िम्मेदारी निभाने के लिए बेहाल है।

"मेरे बाबूजी का देहांत हो गया है, कृपया कुछ मदद दें।"

स्वभावतया संदीप के मन में दया उपज आई थी। जेब में हाथ डालकर वह टटोल रहा था। लेकिन कुछेक छुट्टे पैसे के अलावा कुछ नहीं था। संदीप अपने पिता को देख नहीं सका था। बोला, "आप ज़रा रुक जाइए, मैं आपको घर से लाकर रुपया देता हूं।"

यह कहकर वह जैसे ही अन्दर गया, मल्लिकजी की उस पर दृष्टि पड़ी। बोले, "तुम फिर वापस क्यों चले आए?"

संदीप ने कहा, "एक भला आदमी भीख मांग रहा है।"

"भीख? किस चीज़ की भीख?"

संदीप ने कहा, "भले आदमी के पिता का देहांत हो गया है। मेरे पास रुपया नहीं है। दो रुपये दीजिएगा? अगले महीने आपको दे दूंगा।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "चलो, देखें किस तरह का भला आदमी है?" यह कहकर हाथ के कागज-पत्तर रख बाहर के रास्ते पर आए। वह आदमी तब भी भीख की उम्मीद में खड़ा था। मल्लिकजी पर नज़र पड़ते ही उसने भागने की कोशिश की। मगर उसके पहले ही पकड़ लिया गया।

बोले, "तुम्हारे पिता का देहांत हो गया है? साल में कितनी बार तुम्हारे पिता की मृत्यु होती है? फौरन बताओ।"

वह आदमी चिरौरी करने लगा, "मुझे छोड़ दें बाबू, अब मैं ऐसा नहीं करूंगा। मुझे छोड़ दें···"

लेकिन मल्लिकजी ने उसे छोड़ा नहीं। पुकारने लगे, "गिरिधारी, गिरिधारी—"

गिरिधारी उस वक्त अपने घर में खाना खा रहा था। उसी हालत में दौड़ा हुआ आया और आकर उस आदमी को पकड़ लिया।

मल्लिकजी बोले, "तुम घर के भीतर क्या कर रहे थे? देख नहीं पाते कि घर के सामने कौन आता-जाता है?"

गिरिधारी ने कहा, "मैं खाना खा रहा था हुजूर।"

"तुम्हारे लिए खाना ही बड़ी चीज़ है? अगर मैं अभी दादी मां से जाकर कह दूं तो तुम्हारी नौकरी बरकरार रहेगी?"

गिरिधारी को शर्मिन्दगी का अहसास हुआ, साथ ही साथ भय का भी। बोला, "मुझसे गलती हो गई मुनीमजी, मुझे माफ कर दें···"

उसके बाद उस आदमी का अपराध जाने बगैर उसके गले को कसकर पकड़ लिया।

लेकिन मल्लिकजी ने उसे रोकने के प्रयास में कहा, "छोड़, छोड़ दो, उसके गले को छोड़ दो।"

गिरिधारी ने जैसे ही उसका गला छोड़ा वह पछाड़ खाकर मल्लिकजी के पैरों पर गिर पड़ा, "मुझे नहीं मारें बाबूजी, नहीं मारें। अब मैं यह काम नहीं करूंगा।"

"मालूम है, मैं तुझे पुलिस के हाथों सुपुर्द कर सकता हूं।" उसके बाद बोले, "ठहरो, मैं आता हूं।"

यह कहकर घर से एक रुपया लेकर आए और उसे देते हुए कहा, "लो, रुपया लो और अब यहां से रफूचक्कर हो जाओ। अब कभी तुम्हें यहां देखा तो पुलिस के हवाले कर दूंगा। जाओ, यहां से भागो।"

वह आदमी लमहे भर में दौड़ता हुआ आंखों से ओझल हो गया। मल्लिकजी अब वहां खड़े नहीं रहे। गिरिधारी भी छुटकारा पाकर अपने घर में चला गया। संदीप भी आहिस्ता-आहिस्ता मल्लिकजी के कमरे में चला आया।

मल्लिकजी बोले, "क्या हुआ, तुम रसेल स्ट्रीट गए नहीं ?"

संदीप ने कहा, "आपसे एक बात पूछनी है। आपने उस आदमी को रुपया क्यों दिया ?"

"रुपया ? रुपया क्यों दिया ?"

मल्लिकजी ने कहा, "इसलिए दिया कि वह गरीब है···"

"मगर वह तो धोखेबाज है।"

मल्लिकजी ने कहा, "वह चूंकि गरीब है इसीलिए धोखाधड़ी का काम करता है। वह गरीब न होता तो धोखेबाज भी नहीं होता।"

संदीप को तो भी मल्लिकजी का तर्क समझ नहीं आया।

मल्लिक चाचा ने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए बताया, "गरीब होना अभिशाप हो सकता है मगर वह कोई गुनाह नहीं है। उसे किसने गरीब बनाया है ? बताओ, उसे किसने गरीब बनाया है ?"

संदीप इस बात का उत्तर नहीं दे सका।

मल्लिक चाचा ने खुद ही इस प्रकार का उत्तर दिया, "हम लोगों ने।"

"इसका मानी ?"

मल्लिक चाचा बोले, "इसका मतलब तुम अभी नहीं समझ सकोगे। बहुतेरे लोग बुढ़ापे में भी नहीं समझ पाते। तुम तुरन्त वहां चले जाओ।"

संदीप तो भी स्थिर होकर खड़ा रहा।

मल्लिक चाचा बोले, 'क्या हुआ ? तुम खड़े रह गए ? रसेल स्ट्रीट नहीं जाना है ?"

संदीप ने फिर भी वहां से हिलने-डुलने का नाम नहीं लिया।

मल्लिकजी बोले, "क्या हुआ ? तुम मुझसे कुछ कहना चाहते हो ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

"क्या कहना है, कहो।"

संदीप ने स्वयं को संयत करते हुए कहा, "कुछ दिन पहले एक वारदात हुई है···!"

"किस तरह की वात ? खुलासा वताओ। कहने में डर क्यों हो रहा है ?"

"डर नहीं रहा हूं। यही सोच रहा हूं कि कहना ठीक होगा या नहीं।"

संदीप की दुविधा देखकर मल्लिक चाचा को ऊब का अहसास हुआ। वोले, "फिर मत कहो।"

संदीप ने कहा, "न:, आपसे कहना ही अच्छा रहेगा। कुछ दिन पहले रसेल स्ट्रीट के मकान में मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली आए थे। मुझसे वहीं मुलाकात हो गई।"

"उसके वाद ?"

संदीप ने कहा, "उन्होंने मुझे रुपया देना चाहा।"

"रुपया ! किस चीज़ के लिए ?"

संदीप ने कहा, "इसलिए कि अपने मुन्ना वावू से विशाखा की शादी कराने के वजाय मैं विजली से शादी कराने की वात दादी मां से कहूं।"

"इसका मतलव घूस दे रहे थे ?"

संदीप ने जो सोचा था, वही नतीजा हुआ। मल्लिक चाचा ·यह सुनकर गुस्सा गए।

वोले, "उस आदमी की यह हिम्मत ! तुम्हें घूस देना चाहते थे ? सोचा है कि तुम्हें घूस देकर अपना काम निकाल लेंगे ? "तुमने क्या कहा ?"

संदीप वोला, "मैं राजी नहीं हुआ। मैं उनका रुपया उनके हाथ में ही सौंपकर चला आया।"

"यह कितने दिन पहले की वात है ?"

"पंद्रह-वीस दिन पहले की घटना है।"

"इतने दिनों तक वताया क्यों नहीं ?"

संदीप ने कहा, "मुझे डर लग रहा था।"

"किस वात का डर ? सच कहने में तुम डर क्यों रहे थे ? वताओ, किस चीज का डर ?"

संदीप ने कहा, "डर इस वात का कि कहीं मेरी नौकरी न चली जाए।"

"नौकरी जाने की वात ही तुम्हारे लिए वड़ी वात हो गई ? जिसके मातहत तुम काम कर रहे हो, जो तुम्हारे अन्नदाता हैं, उनका भला पहले देखोगे या अपनी नौकरी जाने का डर देखोगे ! तुम्हारे लिए कौन वड़ा है ?"

संदीप खामोश रहा।

उसके वाद मल्लिक चाचा वोले, "जाओ, अभी जाओ, तुम्हें देर हो जाएगी। वहां से लौटने के वाद सोचा जाएगा कि क्या करना उचित है। जाओ।"

वहां से टलने के वाद संदीप को जैसे चैन की सांस लेने का मौका मिला। वह तेज़ कदमों से आगे वढ़ता हुआ आदमियों की भीड़ में समा गया।

मैकडोनल्ड साहब कंपनी बेचने के समय देवीपद मुखर्जी से कह गए थे, "देखो मुखर्जी, हम तो जा रहे हैं ज़रूर मगर तुम लोग अमन-चैन से नहीं रह सकोगे।"

"क्यों ?" देवीपद मुखर्जी ने पूछा था।

"क्योंकि इस युद्ध के बाद तुम लोगों के घर-घर में एक दूसरी तरह का युद्ध छिड़ जाएगा और वह होगा गृह युद्ध। उस गृहयुद्ध यानी सिविल-वार के वक्त तुम लोगों को हमारी याद आएगी।"

"क्यों ?"

"क्योंकि तुम लोगों का देश मल्टी कल्चर देश है। किसी दिन हमने बन्दूक का भय दिखाकर इस देश को एक सूत्र में बांधा था। लेकिन हम लोगों के चले जाने के बाद तुम लोग फिर से मल्टी कल्चर देश के रूप में परिणत हो जाओगे। ऐसे में हिन्दुओं से मुसलमानों की लड़ाई छिड़ जाएगी। अरब देशों से मुसलमानों के हाथ में पेट्रो डॉलर आएगा और अमरीका से इंडिया गवर्नमेंट के हाथ में। ऐसी हालत में रूस भी खामोश नहीं बैठा रहेगा। वह यहां के सी० पी० आई० के लीडरों के पास रूबल भेजेगा। उस समय दुनिया का बैलेंस ऑफ पॉवर बर्बाद हो जाएगा और एक नई दुरवस्था पैदा हो जाएगी। ऐसे हालात में डॉलर-रूबल और पेट्रो डॉलर हथियाने के लिए भारतीयों में छीना-झपटी शुरू हो जाएगी। सो बी केयरफुल; तब तुम लोगों के लिए यह बिजनेस चलाना मुश्किल हो जाएगा।"

मैकडोनल्ड साहब के जाने के बाद देवीपद मुखर्जी ने उस तरह की किसी मुसीबत का अनुमान नहीं किया था। लेकिन थोड़ा-बहुत जो अनुमान उनके अंदर पनप रहा था वह आहिस्ता-आहिस्ता सच्चाई में बदलने लगा। इतने दिनों के पुराने दोस्त इंडिया और चीन के बीच गड़बड़ी की शुरुआत हो गई। उसके बाद भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु हो गई।

एक बार लंदन जाने पर मिस्टर मैकडोनल्ड से मुलाकात हुई।

मिस्टर मैकडोनल्ड ने कहा, "मैंने जो कहा था सच हुआ या नहीं ?"

"हां।" देवीपद मुखर्जी ने कहा।

मैकडोनल्ड ने कहा, "दरअसल भारत छोड़ने के पहले हमने इसी तरकीब को अमल में लाया था। कश्मीर हमेशा तुम लोगों के गले का कांटा बना रहेगा। कश्मीर का 'इश्यू' ही भविष्य की लड़ाई का मुख्य कारण बनेगा। देखना, तुम्हें हम कभी चैन से नहीं रहने देंगे।"

और अन्ततः वही हुआ था।

इसके बाद देवीपद मुखर्जी की मृत्यु हो गई थी। शक्तिपद मुखर्जी ने कंपनी का भार अपने कंधे पर ले लिया था। वे भी ज्यादा दिनों तक जिन्दा नहीं रहे। उनकी जगह पर आए मुक्तिपद मुखर्जी।

ऐसा होने से भी इतिहास अचल नहीं रहा। 1965 में लड़ाई छिड़ गई। इंगलैंड और अमरीका से ही भारत को हथियार खरीदने पड़े। उस समय सोवियत रूस ने विश्वस्त दोस्त के नाते खुले हाथों मदद की।

बाहर जब यह लड़ाई और हथियारों के लेन-देन का सिलसिला चल रहा था, उस समय इस देश के निवासी सरो-सामान की बढ़ती कीमतों से परेशान होकर जीवन-यात्रा के एक दूसरे मोर्चे पर बलि के बकरे बन रहे थे। चारों तरफ़ हड़ताल,

लॉक आउट और क्लोजर के धक्कों से बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों के सदर दरवाजे बन्द करने की स्थिति आ गई।

उस समय न जाने कहां से रातों-रात अनगिनत पार्टियों का उदय हो गया। लोगों की भलाई करने का संकल्प ले सभी नेता बनकर बैठ गए। पहले जो एक पार्टी थी वह टुकड़ों में बंटकर तीन-चार पार्टियों में बंट गई। पहले जहां एक लीडर था, बंटवारे के बाद हजारों नेता हो गए। सबकी जबान पर एक ही बात, एक ही नारा था—"मालिकों का जुल्म नहीं सहूंगा, नहीं सहूंगा। मालिकों का हुक्म नहीं सुनूंगा, नहीं सुनूंगा।" रातों रात स्वयं को नेता के पद पर आसीन कर उन्होंने मजदूरों के हितैषी के रूप में आत्म-प्रचार करना शुरू कर दिया। पीछे से कौन उन लोगों के लिए रुपयों का इन्तजाम कर रहा है, किसके पैसे से नेताओं के पास गाड़ी और मकान हो रहे हैं, इस प्रश्न को कभी किसी ने नहीं उछाला। सिर्फ नेताओं के पीछे-पीछे जुलूस निकाल, नारे लगाते हुए लोग-बाग परमार्थ की तलाश करने लगे।

और तब मुक्तिपद क्या कर रहे थे?

सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के मालिक मुक्तिपद मुखर्जी एक बार किसी एक पार्टी के लीडर को पैसा देते तो दूसरी बार किसी दूसरी पार्टी के लीडर को। सभी मेरे अपने हैं, कोई मेरे लिए पराया नहीं है, मैं हरेक के दल में हूं। इसका मायने मैं किसी के दल में नहीं हूं।

इस हालत में फंसकर जब फर्म संभालने में वे खुद को असमर्थ महसूस करने लगे तो सौम्य का स्मरण हो आया। दफ्तर के जितने बड़े अफसर हैं सभी कर्मचारी हैं। यानी पांच हजार रुपया वेतन पानेवाला आदमी भी कर्मचारी ही है। लेकिन, किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता, सभी को रुपये चाहिए। देखते-देखते अमरीका के डॉलर, इंगलैंड के पौंड, फ्रांस के फ्रां, इटली के लीरा, जापान के ऐन का मूल्य ऊंचा उठने लगा और भारत के रुपये के मूल्य में तेजी से गिरावट आने लगी। एक रुपये का मूल्य कम होकर साठ पैसे के बराबर हो गया।

मुक्तिपद तब होश में आए। बुलावा मिलने पर एक दिन घर में डॉक्टर आया।

से घूम-फिर आइए। यह बेशक एक मैकोनोजिअन प्रेशर है। जिसे हम पंक्यालन प्रेशर कहते हैं। इसकी एकमात्र दवा है सब कुछ भूल जाने की कोशिश करना।"

मुक्तिपद चटर्जी ने कहा, "भूलने की कोशिश कैसे करूं? हमारे 'कनसर्न' में हजारों आदमी हैं, उनके बारे में भी तो मुझे सोचना होगा।"

"तो फिर एक अदद कंपोज लिया कीजिए।"

मुक्तिपद मुखर्जी ने कहा, "मेरा भतीजा अगर वयस्क होता तो उस पर कुछ काम का भार छोड़--"

"तो फिर यही कीजिए मिस्टर मुखर्जी। आपकी उम्र बढ़ रही है, अभी से रत्ता-रत्ता सब कुछ की जिम्मेदारी छोड़ना उचित है।"

सो यही से सूत्रपात हुआ। दफ्तर के काम से कॉन्टिनेंट चले गए। हर जगह बिजनेस की बात। केवल रुपया-आना-पाई और पौंड-शिलिंग-पेंस। जीवन-भर यही करते आए हैं। भारत के बाहर जाकर भी यही किया। उसके बाद एक दिन रात में उन्हें नींद ही नहीं आई। कई दिनों तक सिर में दर्द रहा। उसके बाद भारत लौट आए। लेकिन तब भी बहुत सारे काम बाकी थे। उसके बाद जर्मनी गए। वहां से स्टेट्स। सिर के दर्द से छुटकारा नहीं मिला। डॉक्टर से परामर्श किया। ढेर सारी दवा लिख दी उसने। लेकिन ऐसे कब तक चलेगा!

यही वजह है कि भारत लौटकर आते ही विडन स्ट्रीट के मकान में गए—मा के पास। लेकिन मा भी तो कैसे स्वभाव की हो गई है! कुछ देर बैठकर ही बैलुड़ के मकान में चले आए। कुछ भी अच्छा नहीं लगा।

नंदिता ने करीब आकर पूछा, "क्या हुआ? आज अभी लौटकर चले आए?"

मुक्तिपद ने कहा, "आज विडन स्ट्रीट के मकान में गया था।"

"यह क्या? एकाएक?"

"एकाएक मां के पास चला गया था।"

नंदिता ने कहा, "बुढ़िया ने मेरी भरपूर शिकायत की होगी?"

"हां, वही पुरानी बातें।"

नंदिता ने कहा, "मुझे जो गाली-गलौज किया, वह तुम्हें बहुत अच्छा लगा होगा?"

"नहीं, मेरा सिर दर्द करने लगा।"

नंदिता ने कहा, "ठीक हुआ है, बहुत ही अच्छा! राइटली सर्व्ड! मैंने तुम्हें बुढ़िया के पास जाने से मना किया था, फिर भी चले गए। मुझे गाली देना सुनने में तुम्हें अच्छा लगता है, इसीलिए गए।"

"नहीं-नहीं, यह बात नहीं है।"

"यह बात नहीं है तो फिर गए ही क्यों? वहां जाने से ही तो तुम्हारा सिर दर्द करने लगता है। यह तो कोई नई बात नहीं है। बहुत-सी सासें देखी हैं बाबा, लेकिन तुम्हारी मां जैसी सास कभी किसी ने नहीं देखी होगी। बुढ़िया और कितने दिनों तक जिन्दा रहेगी, बताओ तो! और कितने दिनों तक हमें परेशान करती रहेगी?"

मुक्तिपद ने कहा, "जानती हो, मां से एक नई बात सुनने को मिली। मा सौम्य की शादी कराने जा रही है।"

लॉक आउट और क्लोजर के धक्कों से बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों के सदर दरवाजे बन्द करने की स्थिति आ गई।

उस समय न जाने कहां से रातों-रात अनगिनत पार्टियों का उदय हो गया। लोगों की भलाई करने का संकल्प ले सभी नेता बनकर बैठ गए। पहले जो एक पार्टी थी वह टुकड़ों में बंटकर तीन-चार पार्टियों में बंट गई। पहले जहां एक लीडर था, बंटवारे के बाद हजारों नेता हो गए। सबकी जबान पर एक ही बात, एक ही नारा था—"मालिकों का जुल्म नहीं सहूंगा, नहीं सहूंगा। मालिकों का हुक्म नहीं सुनूंगा, नहीं सुनूंगा।" रातों रात स्वयं को नेता के पद पर आसीन कर उन्होंने मजदूरों के हितैषी के रूप में आत्म-प्रचार करना शुरू कर दिया। पीछे से कौन उन लोगों के लिए रुपयों का इन्तजाम कर रहा है, किसके पैसे से नेताओं के पास गाड़ी और मकान हो रहे हैं, इस प्रश्न को कभी किसी ने नहीं उछाला। सिर्फ नेताओं के पीछे-पीछे जुलूस निकाल, नारे लगाते हुए लोग-बाग परमार्थ की तलाश करने लगे।

और तब मुक्तिपद क्या कर रहे थे ?

सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के मालिक मुक्तिपद मुखर्जी एक बार किसी एक पार्टी के लीडर को पैसा देते तो दूसरी बार किसी दूसरी पार्टी के लीडर को। सभी मेरे अपने हैं, कोई मेरे लिए पराया नहीं है, मैं हरेक के दल में हूं। इसका मायने मैं किसी के दल में नहीं हूं।

इस हालत में फंसकर जब फर्म संभालने में वे खुद को असमर्थ महसूस करने लगे तो सौम्य का स्मरण हो आया। दफ्तर के जितने बड़े अफसर हैं सभी कर्मचारी हैं। यानी पांच हज़ार रुपया वेतन पानेवाला आदमी भी कर्मचारी ही है। लेकिन, किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता, सभी को रुपये चाहिए। देखते-देखते अमरीका के डॉलर, इंगलैंड के पौंड, फ्रांस के फ्रां, इटली के लीरा, जापान के ऐन का मूल्य ऊंचा उठने लगा और भारत के रुपये के मूल्य में तेज़ी से गिरावट आने लगी। एक रुपये का मूल्य कम होकर साठ पैसे के बराबर हो गया।

मुक्तिपद तब होश में आए। बुलावा मिलने पर एक दिन घर में डॉक्टर
।

डॉक्टर ने पूछा, "आपको क्या हुआ ?"

मुक्तिपद ने रक्तचाप का परीक्षण कराने हेतु बायां हाथ आगे बढ़ा दिया।

रक्तचाप की माप करने के बाद डॉक्टर बोला, "सिस्टोलिक इतना बढ़ क्यों गया ?"

मुक्तिपद बोला, "कई दिनों से ठीक से नींद नहीं आ रही।"

"नींद क्यों नहीं आ रही है ? ऑफिस के काम-काज में झंझट चल रही थी ?"

मुक्तिपद ने कहा, "काम रहेगा तो झंझटें रहेंगी ही। झंझट रहने पर भी नींद आए, एक ऐसी ही दवा मुझे दें।"

डॉक्टर ने कहा, "जरा 'कैलस' यानी कठोर होने की कोशिश करें।"

"कैलस कैसे होऊं ?"

डॉक्टर ने कहा, "अगर कैलस नहीं हो सकते हैं तो कुछ दिनों के लिए कहीं

से घूम-फिर आइए। यह बेशक एक साइकोलॉजिकल प्रेशर है। जिसे हम फंक्शनल प्रेशर कहते हैं। इसकी एकमात्र दवा है सब कुछ भूल जाने की कोशिश करना।"

मुक्तिपद चटर्जी ने कहा, "भूलने की कोशिश कैसे करूं? हमारे 'कनसर्न' में हजारों आदमी हैं, उनके बारे में भी तो मुझे सोचना होगा।"

"तो फिर एक अदद कंपोज लिया कीजिए।"

मुक्तिपद मुखर्जी ने कहा, "मेरा भतीजा अगर वयस्क होता तो उस पर कुछ काम का भार छोड़—"

"तो फिर यही कीजिए मिस्टर मुखर्जी। आपकी उम्र बढ़ रही है, अभी से रखा-रखना सब कुछ की जिम्मेदारी छोड़ना उचित है।"

सो यहीं से सूत्रपात हुआ। दफ्तर के काम से कॉन्टिनेंट चले गए। हर जगह बिजनेस की बात। केवल रुपया-आना-पाई और पौंड-शिलिंग-पेंस। जीवन-भर यही करते आए हैं। भारत के बाहर जाकर भी यही किया। उसके बाद एक दिन रात में उन्हें नींद ही नहीं आई। कई दिनों तक सिर में दर्द रहा। उसके बाद भारत लौट आए। लेकिन तब भी बहुत सारे काम बाकी थे। उसके बाद जर्मनी गए। वहां से स्टॉकहोम। सिर के दर्द से छुटकारा नहीं मिला। डॉक्टर ने परामर्श किया। ढेर सारी दवा लिख दी उसने। लेकिन ऐसे कब तक चलेगा!

यही वजह है कि भारत लौटकर आते ही बिडन स्ट्रीट के मकान में गए—मां के पास। लेकिन मां भी तो कैसे स्वभाव की हो गई है! कुछ देर बैठकर ही बेन्टिंक के मकान में चले आए। कुछ भी अच्छा नहीं लगा।

नंदिता ने करीब आकर पूछा, "क्या हुआ? आज अभी लौटकर चले आए?"

मुक्तिपद ने कहा, "आज बिडन स्ट्रीट के मकान में गया था।"

"यह क्या? एकाएक?"

"एकाएक मां के पास चला गया था।"

नंदिता ने कहा, "बुढ़िया ने मेरी भरपूर शिकायत की होगी?"

"हां, वही पुरानी बातें।"

नंदिता ने कहा, "मुझे जो गाली-गलौज किया, वह तुम्हें बहुत अच्छा लगा होगा?"

"नहीं, मेरा सिर दर्द करने लगा।"

नंदिता ने कहा, "ठीक हुआ है, बहुत ही अच्छा! राइटली सर्व्ड! मैंने तुम्हें बुढ़िया के पास जाने से मना किया था, फिर भी चले गए। मुझे गाली देना सुनने में तुम्हें अच्छा लगता है, इसीलिए गए।"

"नहीं-नहीं, यह बात नहीं है।"

"यह बात नहीं है तो फिर गए ही क्यों? वहां जाने से ही तो तुम्हारा सिर दर्द करने लगता है। यह तो कोई नई बात नहीं है। बहुत-सी सासें देखी हैं बाबा, लेकिन तुम्हारी मां जैसी सास कभी किसी ने नहीं देखी होगी। बुढ़िया और कितने दिनों तक जिन्दा रहेगी, बताओ तो! और कितने दिनों तक हमें परेशान करती रहेगी?"

मुक्तिपद ने कहा, "जानती हो, मां से एक नई बात सुनने को मिली। मां सौम्य की शादी कराने जा रही है।"

"सौम्य की शादी ! कब ? कहां ? मुझे परेशान नहीं कर सकी तो अब किसको
ाकर परेशान करेगी ?"

मुक्तिपद ने कहा, "यह एक अजीब ही दास्तान है।"

"क्या ?"

मां ने कहा, "पहले की कोई बहू उन्हें पसंद नहीं आई इसलिए खुद ही पसंद
कर बहू ले आएगी।"

नंदिता बोली, "अब किसकी तकदीर फूटेगी, कौन जाने ! अहा..."

"अबके बहुत गरीब घर से लड़की ला रही है। सुना, लड़की के बाप नहीं है,
मां विधवा है। चाचा के सिर का भार है। चाचा रेल का किरानी है।"

नंदिता कुछ कहे कि इसके पहले ही मुक्तिपद ने कहा, "मैंने कहा, मेरी एक
पार्टी है जिसने मिड्ल ईस्ट में पांच सौ करोड़ रुपये का एक ऑर्डर सिक्योर किया
है। उसकी लड़की से सौम्य की शादी करने से हमें लगभग थर्टी पर्सेंट ऑर्डर मिल
सकता है। यह सुनकर मां गुस्से में आकर बोली : तू मुझे रुपये का लोभ दिखा रहा
है ?...सुन लो उनकी बात ! मैंने तो हम लोगों के फर्म के भले के लिए ही कहा
था। इसके अलावा लड़की का चाचा एक लेबर यूनियन का लीडर है। आज के
ज़माने में एक ही साथ आधा राज्य और राजकुमारी तथा दूसरी ओर लेबर
यूनियन का को-ऑपरेशन—यह क्या कोई मामूली बात है ! लेकिन मां मानने को
तैयार नहीं हुई, मैं क्या करूं ! मुझे कितना काला धन मिल जाता ! इससे मां को
भी कितनी सहूलियत होती ! यह कहते ही मां झुंझला उठी। बुढ़ापा आने से
शायद आदमी इसी तरह का हो जाता है, उस समय अपना भला समझ नहीं पाता।"

नंदिता बोली, "तुम्हारी मां तो शुरू से इसी तरह की है। माना, अब मां बूढ़ी
हो गई है, मगर मैंने पहले भी तो उसे देखा है—हमेशा हठी किस्म की रही है।
बहुत पाप करने पर ही इस किस्म की सास मिलती है। जैसे वह सास नहीं, राक्षसी
हो...मुझे क्या बुढ़िया ने कम सताया है ? ऐसी सास को दूर से ही नमस्कार !"

मुक्तिपद बोला, "बहरहाल, कल से मैंने सौम्य को दफ्तर आने कहा है।"

"दफ्तर आने क्यों कहा है ?"

"अब वह वयस्क हो चुका है। वह भी तो एक डाइरेक्टर है। वह दफ्तर
आएगा तो मुझे थोड़ी-सी राहत मिलेगी।"

"फिर तो पोते से बुढ़िया को दफ्तर का सारा भेद मालूम हो जाएगा।"

"होगा तो हो। मैं कर ही क्या सकता हूं !" मुक्तिपद ने कहा।

नंदिता कुछ कहने जा रही थी, पर इसके पहले ही टेलीफोन घनघना उठा।
मुक्तिपद टेलीफोन से किसी से बातें करने लगे। उसके बाद बोले, "अच्छा, अभी
जा रहा हूं।"

नंदिता ने पूछा, "तुम अभी तुरन्त बाहर जाओगे ?"

"हां, नागराजन ने बुलाया है।"

नंदिता बोली, "अब कौन-सा काम आ गया ?"

मुक्तिपद बोले, "इनकम टैक्स का एक ज़रूरी पत्र आया है इसीलिए..."

"इनकम टैक्स तुम्हारी जान लेकर छोड़ेगा।" नंदिता बोली।

मुक्तिपद बोले, "क्या करूं, बताओ ? उन लोगों को इतने पैसे खिला रहा

फिर भी उनका पेट नही भरता। यही वजह है कि सौम्य को ऑफिस से आ रहा हूं। अब मुझसे संभालना मुश्किल हो गया है।"

यह कहकर वे वहां रुके नही, जल्दी-जल्दी नीचे उतरकर गाड़ी में बैठ गए। मुक्तिपद के जीवन का अर्थ जैसे गाडी ही हो। मुक्तिपद की मुकम्मल जिन्दगी जैसे गाड़ी की तरह ही तेज रफ्तार से चल रही है। कब उन्होंने जमीन पर पैर रखे हैं, उन्हें याद ही नही है। अगर किसी दिन मुक्तिपद की मौत होगी तो यह मौत या तो हवाई जहाज या मोटर गाड़ी मे ही होगी। जीवन की बीमा मोटी रकम की करा चुके हैं। हवाई जहाज पर चढ़कर उड़ने के दौरान अगर सांस रुक जाती है या दुर्घटना से मृत्यु हो जाती है तो इसके लिए भी मोटी रकम देकर रिस्क कवर करा लिया गया है। हर साल उसका नवीकरण कराया जाता है। फिर भी हमेशा एक चिन्ता घेरे रहती है। अगर पूछा जाए—किस चीज की चिंता? उसके जवाब में मुक्तिपद कुछ बता नही पाएंगे। रुपये-पैसे की चिन्ता? लेकिन यह तो है ही नही।

एक बार हवाई जहाज से यात्रा करने के दौरान वे रैक से एक पत्रिका निकाल समय गुजारने के ख्याल से बैठे थे। तब लंच हो चुका था। सभी अपनी-अपनी सीट पर पीठ टिकाए आराम कर रहे थे। अकस्मात् एक पृष्ठ पर आंखें जाते ही दृष्टि उस पर केंद्रित हो गई।

एक तस्वीर के नीचे एक कविता लिखी हुई है। तस्वीर मे एक बूढ़ा आदमी चुपचाप आराम कुर्सी पर निढाल पड़ा हुआ है। घड़ी तब रात के दो बजा रही है पर उस आदमी को नींद नही आ रही है।

मुक्तिपद ने उस आदमी की ओर अपलक निहारा। उस आदमी के बैंक म अनगिनत रुपये जमा है, घर के अन्दर कीमती फर्नीचर है। ऐशोआराम की कोई कमी नही, फिर भी उसे नींद नही आ रही है।

नींद क्यों नही आ रही है, इसका उल्लेख तस्वीर मे कही नही है—सिर्फ उसके नीचे बड़े-बड़े अक्षरो मे यह सब लिखा हुआ है—

By money one can buy bed but not sleep
By money one can buy books but not brains
By money one can buy food but not appetite
By money one can buy finery but not a beauty
By money one can buy a house but not a home
By money one can buy medicine but not health
By money one can buy luxuries but not culture
By money one can buy amusement but not happiness
By money one can buy religion but not salvation.*

---

* पैसे से आदमी पलंग खरीद सकता है, नींद नही। पैसे से आदमी पुस्तकें खरीद सकता है, मस्तिष्क नही। पैसे से आदमी भोजन खरीद सकता है, भूख नही। पैसे से आदमी शृंगार खरीद सकता है, सौन्दर्य नही। पैसे से आदमी मकान खरीद सकता है, पारिवारिक सुख से भरा निजी भवन नही। पैसे से→

हीं कविता समाप्त हो गई है।

मुक्तिपद उस उड़ते हुए वायुयान में बैठकर उस पर सोचने लगे। एक बार नहीं, अनेक बार। सच, रुपये से कीमती बिस्तर खरीदा जा सकता है लेकिन नींद? नींद क्या कोई रुपये से खरीद सकता है? रुपये से हर आदमी दवा खरीद सकता है, लेकिन स्वास्थ्य? स्वास्थ्य क्या कोई रुपये से खरीद सकता है? धर्म भी रुपये से खरीदा जा सकता है, लेकिन मोक्ष? मोक्ष किस बाजार में खरीदने जाएगा?

पढ़ते-पढ़ते मुक्तिपद को लगा था, उनके पास सिर्फ धन-दौलत है, उनकी सिर्फ उम्र ही बढ़ती गई है, लेकिन उन्हें ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। लेकिन इस उम्र में इस ज्ञान की प्राप्ति से उसे कौन-सा लाभ हुआ? बहुत पहले इस कविता को पढ़ते तो हो सकता था, उनका उपकार होता। किन्तु अब बहुत देर हो चुकी है।

गाड़ी से जाने के दौरान मुक्तिपद को बहुत दिन पहले की पढ़ी इस कविता की याद आ गई। गाड़ी लेकर जब डलहौजी स्क्वायर के दफ्तर में पहुंचे, तब देखा उन पर नज़र पड़ते ही तमाम लोग सिर झुकाकर उन्हें सलाम कर रहे हैं।

यह सलामी ही उनके जीवन के लिए काल साबित हो गई है। पहले यह सलामी उन्हें बहुत अच्छी लगती। कुछ दिन पहले तक यह सलामी पाकर उन्हें खुशी हुई है। लेकिन आज बिडन स्ट्रीट के मकान पर जाकर मां से बातचीत करने के बाद पहले की पढ़ी हुई कविता का स्मरण आते ही उन्हें सारा कुछ बेस्वाद लगने लगा। जिस धन-दौलत से कोई मूल्यवान वस्तु नहीं खरीदी जा सकती, उस तुच्छ धन-दौलत के पीछे वे क्यों भाग रहे हैं?

नागराजन कागज़-पत्तर लेकर तैयार था। मुक्तिपद ने ज्यों ही कमरे में प्रवेश किया, वह उठकर खड़ा हो गया। जब मुक्तिपद बैठा तो वह भी बैठा।

मुक्तिपद ने पत्र देखते हुए पूछा, "कानूनगो देख चुका है?"

"हां। उसने देखकर बताया कि यह रकम हमें चुकानी है।"

कानूनगो का मतलब बिजिनेस कानूनगो। सैक्सबी मुखर्जी एंड कंपनी का टैक्स-एडवाइजर। भारत का एक विख्यात कर-विशेषज्ञ।

मुक्तिपद बोले, "एक बार कानूनगो से टेलीफोन पर संपर्क करो।"

कानूनगो से संपर्क स्थापित किया गया। मुक्तिपद ने कहा, "तुमने कहा है कि बारह लाख तीस हजार की इस रकम का हमें भुगतान करना है?"

दूसरे छोर से कानूनगो ने कहा, "हां सर, पेमेंट करना ही होगा।"

मुक्तिपद ने पूछा, "क्यों? एक्सपेंडिचर नहीं दिखाया गया है?"

"तो फिर बैकडेट दर्ज कर सत्रह लाख रुपये का वाउचर सबमिट करन होगा। उस रकम का वाउचर सबमिट करने से हमें पूरी राहत मिल जाएगी।"

मुक्तिपद को गुस्सा आ गया। बोले, "यह बात नागराजन से कहना चाहि था न। हम बाहर गए हुए थे तो इसका मानी यह नहीं कि तुम लोग हाथ पर ह धरे बैठे रहो। यह मामला भी क्या मैनेजिंग डाइरेक्टर को देखना होगा?

→आदमी दवा खरीद सकता है, स्वास्थ्य नहीं। पैसे से आदमी विलासिता ख सकता है, संस्कृति नहीं। पैसे से आदमी मनोरंजन खरीद सकता है, आ नहीं। पैसे से आदमी धर्म खरीद सकता है, मोक्ष नहीं।

तुम लोगों को किसलिए रखा गया है ?"

कानूनगो चुप हो गया। इस बात का कोई जवाब उसकी जबान से बाहर नहीं निकला।

मुक्तिपद बोले, "ठीक है, बैकडेटेड वाउचर सबमिट कर दिया जाएगा। इस संबंध में बाद में कोई पत्र न आए, इसकी कार्रवाई करना।"

यह कहकर मुक्तिपद ने रिसीवर रख दिया। उसके बाद कई जगह फोन करने लगे। दो घंटे के दरमियान सत्रह लाख रुपये के वाउचर जुगाड़ करने का इंतजाम हो गया। सीमेंट, रोड़े, बालू, लोहे की छड़ें वगैरह कुछेक टन माल खरीदने एवं भुगतान करने की पक्की रसीदें। इसके साथ है मोटी रकम का लेबर चार्ज। इस चार्ज की कोई रसीद इनकम टैक्स ऑफिस को दिखाने की जरूरत नहीं है। कागज-कलम से दो घंटे के दरमियान एक जादू जैसा काम हो गया। जिस इमारत को कभी तोड़ा नहीं गया है, कागज-पत्तर में दिखाया गया कि उस इमारत के पुराने हो जाने के कारण पूरी तरह तोड़कर उसी जमीन पर नई इमारत खड़ी की गई है, सत्रह लाख तीस हजार रुपये खर्च करके।

यह भी टैक्समैन एक्सपर्ट की एक गजब की बाजीगरी है।

मुक्तिपद उस दिन दफ्तर के किसी दूसरे काम में खुद को दत्तचित्त नहीं कर सके। सीमेंट, रोड़े, बालू और लोहे की छड़ों के डीलर खुद आकर पिछली तारीख के वाउचर लिखकर दे गए, साथ ही रेवन्यू स्टैंप पर अपने हस्ताक्षर भी कर दिए। उसके बाद वे जो रकम अपने बाएं हाथ की जेब में भर कर ले गए उसका कोई हिसाब किसी के लेजर बही में नहीं लिखा गया। इस प्रकार बारह लाख के टैक्स डिमांड नोटिस को सत्रह लाख रुपये के खर्च की खोखली दस्तावेज दिखाकर पूरे तौर पर रद्द करा दिया गया।

दिन-भर किसी को लंच लेने की फुर्सत नहीं मिली।

घर से नंदिता ने टेलीफोन से ताकीद की थी, "क्या हुआ ? तुम लंच लेने नहीं आओगे ?"

"नहीं।" मुक्तिपद ने कहा था।

"क्यों ? फिर तो तुम्हारी तबीयत खराब हो जाएगी।"

मुक्तिपद ने कहा था, "अभी मुझे मरने की भी फुर्सत नहीं है। आज हमारे यहां किसी ने लंच नहीं किया है। वक्त मिलने पर सब लोग होटल में लंच ले लेंगे। तुम खा लो, मेरे लिए इन्तजार मत करो।"

घड़ी ने जब रात के आठ बजाए तो मुक्तिपद को दिन-भर में पहली बार सिगरेट सुलगाने का मौका मिला। सुलगाने के बाद छाती का भार हल्का कर धुएं का एक लंबा गुबारा छोड़ा। मुक्तिपद ने महसूस किया, एक फूंक में उनकी जैसे एक दशक की आयु बढ़ गई। आह, कितने आराम का अहसास हो रहा है ! अगर इस मामले में गफलत करते तो कंपनी की बारह लाख रुपये की रकम बर्बाद हो जाती।

नागराजन का भी दिन झंझट-झमेलों में मुकम्मल हुआ है। वह भी दिन-भर मालिक के साथ काम करने में व्यस्त रहा। कानूनगो कुछ घंटों के लिए अपने एक क्लाइंट के काम से निकल गया था। वह किसी का कर्मचारी नहीं है। उसका

हीं कविता समाप्त हो गई है।

मुक्तिपद उस उड़ते हुए वायुयान में बैठकर उस पर सोचने लगे। एक बार
हां, अनेक बार। सच, रुपये से कीमती बिस्तर खरीदा जा सकता है लेकिन नींद ?
नींद क्या कोई रुपये से खरीद सकता है? रुपये से हर आदमी दवा खरीद सकता
है, लेकिन स्वास्थ्य ? स्वास्थ्य क्या कोई रुपये से खरीद सकता है? धर्म भी रुपये
से खरीदा जा सकता है, लेकिन मोक्ष ? मोक्ष किस बाजार में खरीदने जाएगा ?

पढ़ते-पढ़ते मुक्तिपद को लगा था, उनके पास सिर्फ धन-दौलत है, उनकी
सिर्फ उम्र ही बढ़ती गई है, लेकिन उन्हें ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। लेकिन इस उम्र
में इस ज्ञान की प्राप्ति से उसे कौन-सा लाभ हुआ ? बहुत पहले इस कविता को
पढ़ते तो हो सकता था, उनका उपकार होता। किन्तु अब बहुत देर हो चुकी है।

गाड़ी से जाने के दौरान मुक्तिपद को बहुत दिन पहले की पढ़ी इस कविता की
याद आ गई। गाड़ी लेकर जब डलहौजी स्क्वायर के दफ्तर में पहुंचे, तब देखा उन
पर नजर पड़ते ही तमाम लोग सिर झुकाकर उन्हें सलाम कर रहे हैं।

यह सलामी ही उनके जीवन के लिए काल साबित हो गई है। पहले यह
सलामी उन्हें बहुत अच्छी लगती। कुछ दिन पहले तक यह सलामी पाकर उन्हें
खुशी हुई है। लेकिन आज विडन स्ट्रीट के मकान पर जाकर मां से बातचीत करने
के बाद पहले की पढ़ी हुई कविता का स्मरण आते ही उन्हें सारा कुछ बेस्वाद लगने
लगा। जिस धन-दौलत से कोई मूल्यवान वस्तु नहीं खरीदी जा सकती, उस तुच्छ
धन-दौलत के पीछे वे क्यों भ.ग रहे हैं ?

नागराजन कागज-पत्तर लेकर तैयार था। मुक्तिपद ने ज्यों ही कमरे में प्रवेश
किया, वह उठकर खड़ा हो गया। जब मुवितपद बैठा तो वह भी बैठा।

मुक्तिपद ने पत्र देखते हुए पूछा, "कानूनगो देख चुका है ?"

"हां। उसने देखकर बताया कि यह रकम हमें चुकानी है।"

कानूनगो का मतलब बिजिनेस कानूनगो। सैक्सबी मुखर्जी एंड कंपनी का
टैक्स-एडवाइजर। भारत का एक विख्यात कर-विशेषज्ञ।

मुक्तिपद बोले, "एक बार कानूनगो से टेलीफोन पर संपर्क करो।"

कानूनगो से संपर्क स्थापित किया गया। मुक्तिपद ने कहा, "तुमने कहा है कि
बारह लाख तीस हजार की इस रकम का हमें भुगतान करना है ?"

दूसरे छोर से कानूनगो ने कहा, "हां सर, पेमेंट करना ही होगा।"

मुक्तिपद ने पूछा, "क्यों ? एक्सपेंडिचर नहीं दिखाया गया है ?"

"तो फिर बैंकडेट दर्ज कर सत्रह लाख रुपये का वाउचर सबमिट करन
होगा। उस रकम का वाउचर सबमिट करने से हमें पूरी राहत मिल जाएगी।"

मुक्तिपद को गुस्सा आ गया। बोले, "यह बात नागराजन से कहना चाहि
था न। हम बाहर गए हुए थे तो इसका मानी यह नहीं कि तुम लोग हाथ पर हा
धरे बैठे रहो। यह मामला भी क्या मैनेजिंग डाइरेक्टर को देखना होगा ? ि

→आदमी दवा खरीद सकता है, स्वास्थ्य नहीं। पैसे से आदमी विलासिता ख
सकता है, संस्कृति नहीं। पैसे से आदमी मनोरंजन खरीद सकता है, आ
नहीं। पैसे से आदमी धर्म खरीद सकता है, मोक्ष नहीं।

तुम लोगों को किसलिए रखा गया है ?"

कानूनगो चुप हो गया। इस बात का कोई जवाब उसकी जबान से बाहर नहीं निकला।

मुक्तिपद बोले, "ठीक है, बैकडेटेड वाउचर सबमिट कर दिया जाएगा। इस संबंध में बाद में कोई पत्र न आए, इसकी कारवाई करना।"

यह कहकर मुक्तिपद ने रिसीवर रख दिया। उसके बाद कई जगह फोन करने लगे। दो घंटे के दरमियान सत्रह लाख रुपये के वाउचर जुगाड़ करने का इंतजाम हो गया। सीमेंट, रोड़े, बालू, लोहे की छड़ें वगैरह कुछेक टन माल खरीदने एवं भुगतान करने की पक्की रसीदें। इसके साथ है मोटी रकम का लेबर चार्ज। इस चार्ज की कोई रसीद इनकम टैक्स ऑफिस को दिखाने की जरूरत नहीं है। कागज-कलम से दो घंटे के दरमियान एक जादू जैसा काम हो गया। जिस इमारत को कभी तोड़ा नहीं गया है, कागज-पत्तर में दिखाया गया कि उस इमारत के पुराने हो जाने के कारण पूरी तरह तोड़कर उसी जमीन पर नई इमारत खड़ी की गई है, सत्रह लाख तीस हजार रुपये खर्च करके।

यह भी टैक्समैन एक्सपर्ट की एक गजब की बाजीगरी है।

मुक्तिपद उस दिन दफ्तर के किसी दूसरे काम में खुद को दत्तचित्त नहीं कर सके। सीमेंट, रोड़े, बालू और लोहे की छड़ों के डीलर खुद आकर पिछली तारीख के वाउचर लिखकर दे गए, साथ ही रेवन्यू स्टैंप पर अपने हस्ताक्षर भी कर दिए। उसके बाद वे जो रकम अपने बाएं हाथ की जेब में भर कर ले गए उसका कोई हिसाब किसी के लेजर बही में नहीं लिखा गया। इस प्रकार बारह लाख के टैक्स डिमांड नोटिस को सत्रह लाख रुपये के खर्च की खोखली दस्तावेज दिखाकर पूरे तौर पर रद्द करा दिया गया।

दिन-भर किसी को लंच लेने की फुर्सत नहीं मिली।

घर से नंदिता ने टेलीफोन से ताकीद की थी, "क्या हुआ ? तुम लंच लेने नहीं आओगे ?"

"नहीं।" मुक्तिपद ने कहा था।

"क्यों ? फिर तो तुम्हारी तबीयत खराब हो जाएगी।"

मुक्तिपद ने कहा था, "अभी मुझे मरने की भी फुर्सत नहीं है। आज हमारे यहां किसी ने लंच नहीं किया है। वक्त मिलने पर सब लोग होटल में लंच ले लेंगे। तुम खा लो, मेरे लिए इन्तजार मत करो।"

घड़ी ने जब रात के आठ बजाए तो मुक्तिपद को दिन-भर के [illegible] सिगरेट सुलगाने का मौका मिला। सुलगाने के बाद छाती का भार हल्का [illegible] का एक लंबा गुबारा छोड़ा। मुक्तिपद ने महसूस किया, एक [illegible] एक दशक की आयु बढ़ गई। आह, कितने आराम का अहसास हो रहा है [illegible] इस मामले में गफलत करते तो कंपनी की बारह लाख रुपये [illegible] जाती।

नागराजन का भी दिन झंझट-झमेलों में मुकम्मल हुआ है। [illegible] मालिक के साथ काम करने में व्यस्त रहा। [illegible] क्लाइंट के काम से निकल गया था। वह [illegible]

काम है पार्टी को कर के संबंध में सलाह-मशविरा देना। जरूरत पड़ने पर वह उच्च अधिकारियों को भी अपने हाथ में कर सकता है। उसे रुपये देने से वह करदाताओं के हाथ में आसमान का चांद भी लाकर दे सकता है।

"थोड़ा-सा ड्रिंक करोगे नागराजन ?"

नागराजन क्या कहे तत्काल फैसला नहीं कर सका। अपने 'सर' को उसने कभी इस तरह की असहाय अवस्था में नहीं देखा है। वह बोला, "सर, आप कह रहे हैं तो मैं ड्रिंक कर सकता हूं। लेकिन आपको घर जाने में देर हो जाएगी सर।"

मुक्तिपद बोले, "होने दो। अभी मुझे घर जाने की इच्छा नहीं हो रही है। तुम्हें अगर घर जाने में देर हो रही हो तो तुम बेशक···"

नागराजन बोला, "नहीं-नहीं, मैंने तो आपके बारे में सोचकर कहा था।"

नागराजन ने गौर से सर की ओर देखा। कितने ही सालों से वह मिस्टर मुखर्जी को देखता आ रहा है। लेकिन किसी भी दिन उन्हें अच्छी तरह पहचान नहीं सका था। कभी-कभी लगा था, यह आदमी बड़ा ही स्वार्थी है और कभी लगा है कि बड़ा ही उदार है।

मुक्तिपद बोले, "जानते हो नागराजन, अबकी वाशिंगटन जाने पर मैं बहुत ही अस्वस्थ हो गया था, इसीलिए एक डॉक्टर के पास गया था। उस डॉक्टर ने मेरी जांच करने के बाद क्या कहा, जानते हो ? कहा कि मुझे कोई बीमारी नहीं है। जो भी बीमारी है वह मन की है···"

नागराजन ने कहा, "बात तो सही है, सारी बीमारी मन की ही है।"

"तुम कह रहे हो कि मुझे मन की बीमारी है ?"

"हां सर, आपको कोई बीमारी नहीं है।"

"मुझे क्या लगता है, जानते हो नागराजन ? लगता है, हमेशा तो मैं जिन्दा नहीं रहूंगा। हमेशा कोई जिन्दा रहता भी नहीं। एक दिन सबको इस धरती से विदा हो जाना पड़ता है। मैं चला जाऊंगा तो कोई मुझे याद नहीं रखेगा। मुझे सब लोग भूल जाएंगे।"

नागराजन ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। उत्तर देने को है ही क्या जो उत्तर दे ?

मुक्तिपद बोले, "डॉक्टर ने आखिर में मुझसे क्या कहा, जानते हो नागराजन ?"

"क्या सर ?"

"कहा, मुझे रुपये की चिन्ता दूर करनी है। चौबीस घंटे के दरमियान कभी रुपये के बारे में नहीं सोचना है।···लेकिन रुपये की न सोचूं तो फिर मैं दिन-भर क्या सोचूं ? रुपये के बारे में नहीं सोचूंगा तो मेरी इस कंपनी में जितने आदमी काम करते हैं, उनका पेट कैसे भरेगा ? कंपनी को आमदनी होगी तभी तो मैं उन्हें वेतन दे सकूंगा। इतने दिनों के बाद आज मैं मां से मिलने बिडन स्ट्रीट गया था। मेरी मां ने भी रुपये की बात सोचने से मुझे मना किया। लेकिन देखो, आज सवेरे ही इनकम टैक्स का एक डिमाण्ड नोटिस पाकर तुम लोगों ने मुझे बुला भेजा और इस कदर फिक्र में डाल दिया कि आज न तो मैं खाना खा सका और न तुम ही।"

नागराजन ने कोई जवाब नहीं दिया। सामने बैठकर सिर्फ सुनता रहा।

मुक्तिपद ने अपना कथन जारी रखा, "अभी घर जाऊंगा तो वहां भी मुझे सिर्फ रुपये की बात ही सुननी होगी। घर में लोग शांति से रहना चाहते हैं। रुपये के अलावा भी तो कोई दूसरी बात कही जा सकती है, जो सुनने में अच्छी लगे। लेकिन मेरी पत्नी की जबान पर भी यही बात रहती है, जबकि मुझे रुपये-पैसे की कोई कमी नहीं है। अपनी फैमिली के लिए मैंने कभी रुपये-पैसों की कोई कमी नहीं रहने दी है। जिसने जो मांगा है, दिया है। लेकिन मैं? मेरे अन्दर जो 'मैं' है, उसे तुम लोगों में से कोई जिस तरह पहचान नहीं पाता, उसी तरह मेरे घर का भी कोई नहीं पहचानता।"

अचानक फिर टेलीफोन आया।

नागराजन ने रिसीवर उठाकर पूछा, "कौन?"

ऑपरेटर ने कहा, "मिस्टर मुखर्जी के घर से रिंग आया है।"

मुक्तिपद ने रिसीवर लेकर कहा, "हां-हां, मैं अभी आ रहा हूं।"

टेलीफोन का रिसीवर रख मुक्तिपद बोले, "देख लिया न नागराजन! यही मेरी जिन्दगी है। अब घर जाना ही होगा।"

यह कहकर सर उठकर खड़े हो गए और बोले, "जानते हो नागराजन, इस कलकत्ता में पहली इंपोर्टेड गाड़ी हमारे घर में ही आई थी, पहली इनवर्टरी हमारे ही घर में आई थी, दुनिया की जो कुछ भी लक्जरीज बाजार में नई-नई आई थी, वह सब पहले-पहल कलकत्ता में हमारे ही घर आई थीं। हमारे पास इतनी दौलत है। लेकिन मेरे बाबूजी देवीपद मुखर्जी का जब देहांत हो गया तो उस समय उनकी उम्र थी पैंतालीस वर्ष। मेरे दादा का जब देहावसान हुआ तो वे पचीस साल के थे। और मैं? मेरी उम्र अभी सैंतीस साल है। मैं कितने दिनों तक जिन्दा रहूंगा? रुपयों ने ही सबकी जान ली है, अब शायद मेरी भी वही जान ले लेगा।"

ड्राइवर तैयार ही था।

मुक्तिपद गाड़ी में बैठकर बोले, "नागराजन, इतनी देर तक मैं तुमसे क्या कहता रहा, मुझे याद नहीं। हां, एक बात। फॉरगेट इट ऑल, सब भूल जाओ।"

ड्राइवर गाड़ी चालू करने जा रहा था। अचानक मुक्तिपद को असली बात की याद आ गई। बोले, "हां, तुम्हें एक बात कहना भूल गया था नागराजन। कल से मेरे भैया का लड़का डिप्टी डाइरेक्टर की हैसियत से काम करने आ रहा है। मेरे बगलवाले कमरे को खाली करके रखना। सारा इंतजाम ठीक होना चाहिए। सवेरे ही एक टेलीफोन लाइन के एक्सटेंशन का इंतजाम हो जाना चाहिए। और एक नेम-प्लेट। उसमें लिखा रहेगा—एस० मुखर्जी, डिपुटी डाइरेक्टर, ओके?"

"ओके सर!" नागराजन ने कहा।

बात समाप्त होने के पहले ही गाड़ी की इंजिन घरघरा उठी और उसके बाद मिस्टर मुखर्जी आंखों से ओझल हो गए।

तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान में बहुत देर से सुबह होती है। मनसातल्ला लेन के मकान में तड़के ही हो जाती। रात में चाहे अच्छी तरह नींद आए या न आए,

अंधेरा रहते ही योगमाया को उठ जाना पड़ता। उस समय विशाखा को लेकर बाबूघाट की गंगा के किनारे जाना पड़ता। वहां यथासंभव जल्द-से-जल्द स्नान कर घर लौटना पड़ता। पहले लड़की से व्रत कराने का काम था। बाद में बिजली और विशाखा दोनों को घर पर ही कराने का यद्यपि इंतज़ाम हो गया था, फिर भी दूध लाने, रसोई पकाने, देवर को ठीक समय पर भात देने का काम था। दिन-भर उसे फुर्सत नहीं मिलती।

लेकिन रसेल स्ट्रीट के इस मकान में? बाहर का सारा काम-धाम शैल करती है। बाहर से जो लोग पढ़ाने आते हैं उन लोगों का वेतन हालांकि विडन स्ट्रीट से आता है लेकिन नाश्ते-पानी का इंतज़ाम योगमाया को ही करना पड़ता है। पढ़ाने के लिए क्या एक ही आदमी आता है?

अंटी मेम साहब सवेरे आती है। वह विशाखा को अंग्रेज़ी सिखाती है। उसके बाद अंटी मेमसाहब जब चली जाती है तो विशाखा को स्कूल जाने की तैयारियां करनी पड़ती हैं। स्कूल ले जाने के लिए विडन स्ट्रीट से गाड़ी लाकर ड्राइवर एक-मंज़िले के पोर्टिको के नीचे इंतज़ार करता रहता है। उसके बाद तीन बजे गणित की शिक्षिका आती है। तीसरे पहर चार बजे वह चली जाती है तो नाच सिखाने वाली मास्टरनी आती है। उसके साथ तबला या ढोल बजाने के लिए एक युवक आता है।

विशाखा की लिखाई-पढ़ाई और नृत्य का शिक्षण ठीक से चल सके, इसके लिए दादी मां की तरफ से कोशिश या रुपये-पैसे की कोई कमी नहीं रहती है।

बीच-बीच में विशाखा थकावट महसूस करने लगती। उस समय उसे नींद आने लगती। वह योगमाया की गोद में मुंह छिपाकर सोना चाहती।

योगमाया कहती, "क्यों री, सो रही है क्या?"

विशाखा कहती, "मुझे बड़ी नींद आ रही है मां।"

योगमाया कहती, "अभी तुम्हारी गणित की शिक्षिका आने वाली है।"

विशाखा कहती, "दीदी जी आएं तो कह देना, मैं सो रही हूं।"

योगमाया कहती, "छि:, इस तरह की बात जुबान पर नहीं लानी चाहिए। जानती नहीं, तुम्हारे लिए दादी मां कितना रुपया खर्च कर रही हैं। अच्छी तरह लिखोगी-पढ़ोगी तभी तो तुम्हारा पति तुम्हें प्यार करेगा। तुम्हारे पति कितने अच्छे हैं। इतना अच्छा पति किसी को नसीब हुआ है?"

विशाखा इस बात का कोई उत्तर नहीं देती। उसी हालत में मां की गोद में मुंह छिपाए शायद अनदेखे पति के चेहरे की कल्पना करने लगती।

कहती, "मां, किसी दिन मनसातल्ला लेन के घर चलो न।"

"क्यों, वहां जाकर क्या होगा? वहां जाकर तू क्या करेगी?"

विशाखा कहती, "बिजली के साथ जी-भर खेलूंगी।"

योगमाया कहती, "अब क्या तुम्हारे खेलने के दिन हैं? अब तो तुम बड़ी हो चुकी हो।"

"खेलने की उम्र नहीं है तो क्या है?"

"अब तुम बड़ी हो चुकी हो। कुछ दिन बाद तुम्हारी शादी होगी। अभी तुम सिर्फ लिखो-पढ़ो वरना शादी के बाद पति आकर जब देखेगा कि तुम लिखना-

पढ़ना नहीं जानतीं, नाचना नहीं जानतीं तो उस वक्त तुम्हारी निंदा करेगा।"

विशाखा कहती, "निंदा करेगा तो करने दो। मैं भी पति से बातें नहीं करूंगी, केवल झगड़ा ही करूंगी।"

"छि:, इस तरह की बात नहीं कहनी चाहिए। पति से क्या झगड़ना चाहिए?"

विशाखा कहती, "मेरी निंदा करेगा तो मैं झगड़ूंगी नहीं?"

बातचीत करने के दौरान गणित की शिक्षिका आ जाती। उसकी शादी नहीं हुई है। हफ्ते में तीन दिन पढ़ाने आती है और उसके लिए उसे बतौर माहवारी तनख्वाह दो सौ रुपये मिलते हैं। गणित की शिक्षिका होने के बावजूद दूसरे विषय भी पढ़ा जाती है।

शुरू में इस घर में आने पर सारा कुछ सुनकर वह महिला अवाक् हो गई थी। इस तरह की घटना किसी के जीवन में घटित हो सकती है, यह बात उसकी कल्पना के परे थी। कहा था, "इस तरह की घटना किसी आदमी के जीवन में घटने की बात नहीं सुनी है मैंने। यह तो बहुत कुछ उपन्यास जैसा लगता है मौसीजी। आपने अपने भावी दामाद को अपनी आंखों से देखा है?"

"नहीं, देखूंगी कैसे? उस वक्त तो वह छोटा था। मेरी लड़की छोटी थी और दामाद भी छोटा था।"

"और अब?"

"अब लड़की बड़ी हो चुकी है। दामाद भी बड़ा हो चुका होगा। सुना है, अब दामाद दफ्तर जाने लगा है।"

शिक्षिका का नाम है जयंती। जयंती भी विशाखा की तरह ही गरीब घर में पैदा हुई थी। उसके बाद अपनी कोशिश से लिखाई-पढ़ाई की है, एम० ए० पास किया है। लेकिन मां-बाप जिन्दा नहीं हैं। बहुत सारे भाई-बहनों के साथ गृहस्थी चला रही है। दिन-भर हड्डी तोड़ मेहनत करने के बाद जो पैसे कमाती है, सबके सब भाई-बहनों के लालन-पालन में ही खर्च हो जाते हैं। एक स्कूल में नौकरी करती है। वह नाममात्र को। वहां काम कम है, छुट्टी अधिक पर मोटी तनख्वाह। साल में लगभग छह महीने छुट्टी ही रहती है। फिर भी शादी की बात सोचने का उसे अवकाश नहीं मिलता। इतने घरों में सवेरे-तीसरे-पहर छात्राओं को पढ़ाने जाती है, लेकिन कहीं समय पर न तो इतना वेतन मिलता है और न ही इस तरह का नाश्ता कोई खाने को देता है। सिर्फ जयंती ही खुश नहीं है, अंटी मेमसाहब और नृत्य शिक्षिका भी खुश हैं।

दिन-भर कड़ी मेहनत करने के बाद विशाखा रात में गहरी नींद की बांहों में खो जाती है। उस समय योगमाया अपने हाथ से विशाखा को खाना खिलाने बैठती है। ऐसे में विशाखा पहले की विशाखा हो जाती है। उस समय वह किसी भी हालत में खाने को राजी नहीं होती।

कहती है, "मुझे नींद लग रही है, अब खाना नहीं खाऊंगी।"

ऐसे में योगमाया उसे गोद में लेकर दुलारती है। बड़ी मुश्किल से उसकी नींद टूटती है। योगमाया कहती है, "छि:, न खाने से तुम दुबली हो जाओगी। पति निंदा करेगा।"

विशाखा कहती है, "मैं शादी नहीं करूंगी।"

"यह बात नहीं कहनी चाहिए।" योगमाया कहती है, "लड़की की शादी न ना क्या अच्छा है? शादी होने पर तुम्हारा पति तुम्हें कितनी अच्छी-अच्छी ाड़ियां देगा, कितने अच्छे-अच्छे गहने देगा, कितने सारे रुपये-पैसे देगा—"

विशाखा कहती है, "दीदीजी ने तो शादी नहीं की है लेकिन वह कितनी अच्छी-अच्छी साड़ियां पहनती हैं! उसका तो पति नहीं है।"

योगमाया लड़की को दुतकारती है, "फिर दीदीजी की तरह तुम जिन्दगी-भर अनव्याही ही रहो। ऐसे में तुम्हें भी हमेशा घर-घर जाकर दीदीजी की ही तरह लड़कियों को पढ़ाकर रुपया कमाना होगा।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहती है, "अरे, यह जो इतना बड़ा मकान है, यह जो इतना मांस-मछली, दही, रबड़ी खाने को मिलता है, यह सब किसकी बदौलत? कौन इसके लिए रुपये देता है?"

विशाखा को मालूम नहीं था। कहती, "कौन?"

योगमाया कहती, "क्यों तुम्हें मालूम नहीं कि कौन देता है? और कौन; तुम्हारा पति ही देता है।"

"मेरा पति?"

"हां री मुंहजली, हां! तुम्हारा पति ही सारा खर्च चला रहा है।"

विशाखा कहती, "इतना खर्च क्यों कर रहा है?"

"क्यों कर रहा है, इसका पता तुम्हें शादी के बाद ही चलेगा। शादी होने के बाद समझोगी कि मैं तुम्हारे लिए क्यों इतना सोचती थी। उस समय तुम मुझे बिलकुल भूल जाओगी, पति को छोड़कर मेरे पास कभी आना नहीं चाहोगी। यही नहीं, पति के साथ तुम देश-विदेश का भ्रमण करोगी, हवाई-जहाज पर चढ़कर दूर-दूर का सफर करोगी। ऐसी हालत में मेरी याद भी तुम्हें नहीं आएगी। उस वक्त तुम मुझे बिलकुल भूल जाओगी।"

सुनते-सुनते विशाखा कब चुपचाप नींद में खो जाती, उसका पता उसे खुद भी नहीं चलता। लेकिन योगमाया को नींद नहीं आती। वह बहुत देर तक जगक विशाखा के बारे में सोचती रहती। विशाखा के पिता के बारे में भी सोचती। मर के पूर्व विशाखा के पिता ने उससे जो बातें कही थीं उनकी याद आती। उस बाद एक ऐसा वक्त आता कि नींद उसे अपने सीने में दबोच लेती।

सवेरे इस घर की खोज-खबर लेने संदीप आता। इस घर की तमाम ज़रू की पूर्ति करना और यहां के हाल-चाल की सूचना देना उसके काम के दाय था। वह रोज दादी मां को यहां का हाल-चाल बताता था।

दादी मां पूछतीं, "अभी बहूरानी की तबीयत कैसी है?"

संदीप कहता, "बिलकुल ठीक।"

"मांस-मछली, अण्डे, दूध नियम से खाती-पीती है न?"

संदीप कहता, "हां।"

"इस हफ्ते वज़न लिया गया था? वजन कुछ बढ़ा है?"

संदीप कहता, "हां, मैं डॉक्टर साहब को लेकर गया था। उन्होंने बत सप्ताह एक किलो बढ़ा है।"

"और मास्टरनियां किस तरह पढ़ा रही हैं ?"
संदीप ने कहा, "अबकी क्लास में फोर्थ पोजिशन आया है।"
"क्यों, फर्स्ट क्यों नहीं हो सकी ? लगता है, मास्टरनियों का ही दोष है। महीने में ढेर सारे रुपये लेती हैं। वह सब यों ही पानी में बह रहा है ? तुम किसलिए हो ? तुम तो मास्टरनियों से कह सकते हो। तुम मेरी ओर से उन्हें कह देना, इसके बाद बहूरानी फर्स्ट नहीं आई तो उन्हें झाड़ू मारकर निकाल दूंगी। उन्हें निकालकर दूसरी मास्टरनिया रखूंगी। तब मज़ा चखेंगी। मेरे पैसे को क्या उन्होंने सस्ता समझ लिया है ?"
सप्ताह में एक बार संदीप विशाखा के शरीर की जांच कराने के लिए डॉक्टर ले आता। भूख लग रही है या नहीं, खान। हजम हो रहा है या नहीं, वजन बढ़ रहा है या नहीं—इन बातों की जाच करना ही डॉक्टर का काम था। वह सब कुछ का परीक्षण करने के बाद जो रिपोर्ट देता, उसके बारे में दादी मा को जाकर कहना पड़ता।
डॉक्टर हफ्ते में एक दिन आता पर संदीप को हर रोज़ एक बार रसेल स्ट्रीट के मकान में आना पड़ता।
अंटी मेमसाहब ने एक दिन संदीप से पूछा था, "तुम गोपाल को कैसे पहचानते हो ?"
संदीप ने कहा था, "वह मेरे गांव का लड़का है। हम स्कूल में सहपाठी थे।"
उसके बाद संदीप ने पूछा था, "गोपाल से तुम्हारी कैसे जान-पहचान हुई ?"
अंटी मेमसाहब ने कहा था, "ओ, हि इज़ ग्रेट—"
गोपाल 'ग्रेट' क्यों है, इसे मेमसाहब ने खुलासा नहीं किया था। अंटी मेम साहब के चले जाने के बाद योगमाया ने पूछा था, "तुम अंटी मेमसाहब से अंग्रेजी में क्या बतिया रहे थे बेटा ?"
संदीप ने कहा, "अपने एक दोस्त के बारे में उससे दरियाफ्त कर रहा था।"
योगमाया ने कहा, "तुमसे एक बात पूछूं बेटा ?"
संदीप ने कहा, "पूछिए।"
योगमाया ने कहा, "मालूम नहीं, कहना ठीक रहेगा या नहीं।"
संदीप ने कहा, "आप कहिए, मैं अन्यथा नहीं लूंगा।"
योगमाया बहुत दिनों से सोच रही थी, पूछूं या नहीं। लेकिन उस दिन बात को दबाकर नहीं रख सकी।
बोली, "बात यह है बेटा, कि तुम हम लोगों का भला-बुरा सब कुछ देख रहे हो। तुम्हारी दादी मा ने हमारे लिए किसी चीज की कमी नहीं रहने दी है। यह समझती हूं कि हमारे लिए उनके हजारों रुपये पानी की तरह बह रहे हैं। अब यह सोचने पर हैरानी होती है कि खिदिरपुर में देवर के घर कितना कष्ट उठाना पड़ा है। सो यह सब तो तुम्हारी दादी मा के कारण ही संभव हुआ, इसीलिए पूछ रही थी—"
"कहिए, आपको जो कुछ कहना है। मुझसे कहने में आप किसी तरह का संकोच नहीं करें मौसीजी। आप मुझे अपने लड़के जैसा समझें।"
योगमाया ने कहा, "देखो बेटा, विशाखा तो अब काफी बड़ी हो चुकी है।

उसकी शादी कब होगी, इसका पता तो तुम्हारी दादी मां को ही है। बस, मेरा एक ही अनुरोध है।"

"कहिए, आपका क्या अनुरोध है।"

योगमाया ने कहा, "अपने दामाद को देखने की मुझे तीव्र इच्छा होती है।"

संदीप ने कहा, "इस तरह की इच्छा होना स्वाभाविक है।"

योगमाया ने कहा, "पता चलने पर तुम्हारी दादी मां यदि गुस्से में आ जाएं तो फिर जरूरत नहीं है।"

संदीप ने कहा, "आप विशाखा की मां हैं, दामाद को देखने की इच्छा आपको होनी ही चाहिए।"

योगमाया ने कहा, "तुम्हारी दादी मां को एतराज हो तो फिर जरूरत नहीं है।"

संदीप ने कहा, "सौम्य बाबू को एक बार इस मकान में ले आऊं?"

"तुम ला सकोगे बेटा?"

संदीप ने एक क्षण सोचने के बाद कहा, "मैं कोशिश करूंगा।"

"मगर तुम्हारी दादी मां को पता चल जाए तो हो सकता है उन्हें क्रोध आ जाए। ऐसे में हमें कहीं इस घर से निकाल न दें···तुम बल्कि···"

संदीप ने कहा, "सौम्य बाबू तो आजकल हर रोज आफिस जाते हैं।"

"हर रोज आफिस जाते हैं?"

"हां।"

योगमाया बोली, "फिर एक काम करो न बेटा। दामाद जब ऑफिस जाए या ऑफिस से लौटने लगे तो इस घर के सामने से जाने कहो। मैं घर के सामने रास्ते पर खड़ी रहूंगी और एक झलक देख लूंगी।"

संदीप बोला, "बात तो कोई बेजा नहीं है। लेकिन वचन देने से असमर्थ हूं। आप तो जानती ही हैं कि मैं उस घर में नौकरी करता हूं। ऐसा कुछ करना संभव नहीं है जिसकी वजह से सबको पता चल जाए।"

योगमाया ने कहा, "तुम्हें अपने लड़के जैसा समझकर ही मैंने यह कहा है बेटा। कोई और होता तो मैं हिम्मत कर पाती! जाहिर है, नहीं हो पाती। लोग पूछते हैं, मैंने दामाद को देखा है या नहीं इसीलिए···"

"कौन पूछता है?"

"मसलन विशाखा को गणित पढ़ाने के लिए जयंती मास्टरनी आती है। उसकी अब तक शादी नहीं हुई है। उसने पूछा था कि मैंने दामाद को देखा है या नहीं। यही वजह है कि देखने की बड़ी ही इच्छा होती है।"

"आपके दामाद को यहां इस मकान में ले आऊं तो?" संदीप ने कहा।

योगमाया के हाथ में आकाश का चांद जैसे आ गया हो, इस तरह की मुख-मुद्रा हो गई उसकी। बोली, "तुम दामाद को इस घर में ले आओगे! क्या कह रहे हो बेटा यह! तुम ला सकोगे?"

संदीप मन ही मन कुछ सोचने लगा। उसके बाद वहां से जाने के पहले बोला, "मैं इस पर जरा सोच लूं मौसीजी। उसके बाद आपको बताऊंगा। पहले ही आपको सूचित कर दूंगा।"

योगमाया ने उसे सावधानी बरतने का निर्देश देते हुए कहा, "देखना बेटा, किसी को यह बात मालूम नहीं होनी चाहिए।"

संदीप सीढ़ियां उतरते हुए बोला, "नहीं, किसी को पता नहीं चलेगा। आपके लिए डरने की कोई बात नहीं, मैं पहले ही आपके पास खबर पहुंचा जाऊंगा।"

बिडन स्ट्रीट भवन में लौट आने पर भी संदीप के मन से यह बात दूर नहीं हुई। सौम्य बाबू को वह कैसे रसेल स्ट्रीट के मकान पर ले जाएगा! सौम्य बाबू अगर उसकी बात न मानें! सौम्य बाबू से उसका मालिक और नौकर का रिश्ता है। मालिक क्या नौकर की सुनेगा?"

घर आते ही मल्लिक चाचा बोले, "तुम्हारी मा ने तुम्हें चिट्ठी लिखी है, यह लो।"

मा की चिट्ठी! मा के पास से चिट्ठी आने की बात सुनकर संदीप एकबारगी दूसरा ही आदमी हो गया। खबर मिलते ही जैसे उसे आकाश का चांद मिल गया हो।

मामूली पोस्टकार्ड में लिखा हुआ एक पत्र।

मा ने लिखा है: "मुन्ना, तुम्हारे पास होने की खबर सुनकर बेहद खुशी हुई। यह खबर मिलते ही मैं मा शीतला के मंदिर जाकर पूजा कर आई। तुम्हारी तबीयत कैसी है, सूचित करना। मैं मालिक के घर काम करने जाती हूं तो सभी तुम्हारे बारे में पूछते रहते हैं। तुम्हारे पास होने की खबर सुनकर मालिक के परिवार के तमाम लोगों ने खुशियां मनाई हैं। अब क्या करने का विचार है, पत्र देकर सूचित करना। अपनी सेहत का ध्यान रखना। अपने मल्लिक चाचा से मेरा प्रणाम कहना। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह तुम्हें महान बनाए, तुम्हारी दिन-ब-दिन तरक्की हो। तुम्हारी तरक्की होगी तो मुझे गौरव का अनुभव होगा। शुभ-कांक्षिणी—मा।"

मा ने यद्यपि यह पत्र भेजा है परन्तु लिखवाया है चटर्जी बाबुओं की बहू से। मां खुद लिखना-पढ़ना नहीं जानती इसलिए संदीप का पत्र मिलने पर मा उसे मालिक के घर जाकर पढ़वा लेती है।

मल्लिक चाचा बोले, "अब मा के पास एक चिट्ठी भेज दो। लिख दो कि तुम्हें यहां कोई असुविधा नहीं हो रही है। आज ही लिख दो।"

याद है, उस उम्र में मा का पत्र पाकर उसे इतनी खुशी होती कि उसे जाहिर करना उसके लिए मुश्किल था। सचमुच, बचपन ही आदमी के जीवन का सबसे अच्छा समय होता है। बड़े होने पर संदीप ने बेशुमार रुपये-पैसे कमाए हैं, उसे यश सम्मान मिला है, लेकिन बचपन में मा का एक मामूली-सा खत पाकर उसे जो सुख प्राप्त हुआ है, वह सुख-प्राप्ति बाद फिर कभी नहीं हुई।

उस दिन मा को पत्र लिख उसे मुख्य डाकघर की पत्र-पेटी में डालकर जब संदीप घर लौटा तो उस समय सिंहवाहिनी मंदिर में कांसे के घंटे की आवाज के साथ धूमधाम से आरती उतारी जा रही थी। दादी मा स्वयं तीन-मंजिले से उतर आरती का आयोजन देख रही थीं। आरती के बाद प्रणाम किया। बगल में बैठी बिन्दु ने भी प्रणाम किया। उसके बाद सबको प्रसाद बांटा गया।

रसोइया मल्लिक चाचा के कमरे में भी प्रसाद ले आया।

मल्लिक चाचा ने पूछा, "मां को चिट्ठी लिख दी ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

मल्लिक चाचा बोले, "तुम्हारी मां ने जिन्दगी में किसी को न तो छला और न ही किसी को ठेस पहुंचाई है। तुम्हारी मां का भला ही होगा, देख लेना।"

बात क्या सही है ? संदीप ने खुद से कई वार सवाल किया है। सचमुच क्या जो लोग जिन्दगी में किसी को नहीं छलते, किसी को ठेस नहीं पहुंचाते, उनका क्या भला ही होता है ?

लेकिन गोपाल ? गोपाल तो ठीक इसके विपरीत कहा करता था।

गोपाल कहता, "विना किसी को छले इतिहास में कोई भी महान नहीं हो सका है।"

संदीप उस समय गोपाल की वात सुनकर अवाक् हो जाता। वह गहराई में डूबकर हरेक के बारे में सोचता। उस समय इस विडन स्ट्रीट के वावुओं को उसने नहीं देखा था। वड़े आदमी के रूप में वह चटर्जी वावुओं को ही पहचानता था। लेकिन चटर्जी वावुओं के बड़े होने का इतिहास न वह जानता था और न ही उसे जानने की इच्छा होती थी।

संदीप ने एक वार मां से पूछा था, "मां, चटर्जी परिवार के लोग इतने दौलतमंद कैसे हुए ?"

मां लड़के का प्रश्न सुनकर अवाक् हो जाती। कहती, "वे कैसे दौलतमंद हुए, इसकी जानकारी मुझे कैसे हो सकती है।"

संदीप मां का यह जवाब सुनकर खुश नहीं होता। दुवारा पूछता, "हम गरीब क्यों हैं मां ? तुम्हें उनके घर महरी का काम क्यों करना पड़ता है ?"

मां अपने वेटे का यह प्रश्न सुन घोर आश्चर्य में खो जाती। अन्ततः रुककर कहती, "मैंने पूर्वजन्म में वहुत पाप किया था, इसीलिए इस जन्म में इतनी गरीब हूं।"

संदीप मन ही मन अपने आपसे सवाल करता—पाप क्या है ? पाप किसे कहते हैं ? झूठ बोलना पाप है ? चोरी करना महापाप है ? स्कूल की पाठ्य पुस्तक में तो यही लिखा हुआ है।

गोपाल कहता, "स्कूल की किताबों में सारा कुछ झूठ लिखा रहता है। चोरी न करते तो देश के राजा-रजवाड़े वड़े आदमी हो पाते ? दूसरों को छलकर ही जमींदार लोग दौलतमंद हुए हैं।"

संदीप कहता, "किताबों में झूठी वातें क्यों लिखी रहती हैं ?"

गोपाल कहता, "किताबें तो सरकार लिखवाती है। सरकार जैसा लिखने को कहती है, लोग रुपया पाकर वही सव लिखते हैं।"

संदीप पूछता, "सरकार का मतलव क्या है रे ?"

"अरे, तू यह भी नहीं जानता ? पहले जिस प्रकार राजा-रजवाड़े हुआ करते थे, अव वैसे ही सरकार है। यह जो पुलिस, चौकीदार और दरोगा देख रहे हो, ये ही लोग हमारी गवर्नमेंट, हमारी सरकार हैं। ये लोग हमें जो करने कहेंगे, वही करना होगा।"

उसके बाद ज़रा रुककर गोपाल आहिस्ता-से कहता, "एक साल पहले बेड़ापोता मे डकैती हुई थी, उसकी याद है ?"

संदीप को याद था। कहा, "हा, याद है। केशव बाबू के गोदाम से डाकुओ ने चालीस हज़ार रुपया लूट लिया था।"

गोपाल ने कहा, "किन लोगों ने यह डकैती की थी, बता तो ?"

"और कौन, डाकुओ ने।"

"धत्त, तुझे कुछ भी मालूम नही।"

"किन लोगो ने ?"

गोपाल ने कहा, "गवरमेंट ने डकैती कराई थी।"

संदीप की समझ में नही आया। बोला, "इसका मतलब ?"

गोपाल ने कहा, "इसका मतलब तू समझ नही सका ? गवरमेंट का मतलब एक आदमी नही, बल्कि कई आदमी। जब वे देश के राजा बनना चाहते हैं तो दलबंदी करते हैं। वे दलबंदी करके सबसे कहते हैं : तुम लोग हमे वोट दो। लेकिन रुपये न हों या रुपये न कमा सकें तो देश के लिए कैसे मेहनत करेंगे ? उन्हें भी तो खाने-पीने और पहनने के लिए रुपये की ज़रूरत है। खाली पेट से देश-सेवा का काम नही चल सकता। ऐसी हालत में वे डाका डालते हैं।"

संदीप उन दिनो बड़ा ही अबूझ था। गोपाल की बात उसे ज़रा भी समझ मे नही आई। बोला, "कहा डाका डालते हैं ?"

"हर जगह। पहले स्वदेशी आन्दोलन के ज़माने मे लोग जिस तरह अंग्रेज़ों के खजाने लूटते थे, अब आज के युग में देश के लोगों के गोदाम लूटते हैं। लूट के उन रुपयो से वे मंत्री बनते हैं। वे लोग हम जैसे गरीबों की जेब काटकर अपनी जेब भरते हैं।"

"मंत्री ? मंत्री हम लोगो की जेब काटते हैं ?"

गोपाल ने कहा, "हा रे गोबरगणेश ! मन्त्री ही तो इस युग के राजा-रजवाड़े हैं। मन्त्री बनने के लिए बेशुमार पैसा खर्च करना पड़ता है, बहुत सारे गुंडों को पालना पड़ता है। अन्त में जब वे मन्त्री बन जाते हैं तो वे उन गुंडों को नौकरी देते हैं। नौकरी देकर उन गुंडो की रोज़ी-रोटी चलाने के लिए उन्हें मजबूर होना पड़ता है।"

आज इतने दिनो के बाद मल्लिक चाचा की बातें सुनकर उसे उन दिनो के गोपाल की सारी बातें याद आ गई।

खाना खाकर संदीप अपनी जगह पर लेटा हुआ था। बचपन के उस गोपाल से इतने दिनों के बाद कलकत्ता आने पर मुलाकात हो जाएगी, उसकी तब उसने कल्पना नही की थी। गोपाल को इतना रुपया कहा मिला कि वह मोटरगश्ती करता रहता है ? फिर वह क्या मंत्री बन गया है ? गुंडा बन गया है ? क्यो वह सड़क के हर मोड़ पर पुलिसकर्मियो को नोटों की गड्डिया दिए चलता है ? क्यो वह नाइट क्लब में शराब पीने जाता है ? सौम्य बाबू जैसे दौलतमदों से कैसे उसकी जान-पहचान हो जाती है ? जो श्रीपति मिश्र तीन बार मैट्रिक की परीक्षा फेल कर मंत्री बन गया है, उससे वह क्यो मिलता-जुलता रहता है ? और उस आंटी मेम साहब से, जो विशाखा को अंग्रेज़ी पढ़ाती है, गोपाल की जान-पहचान कैसे हुई ?

ल ने तो अंग्रेज़ी के फर्स्ट बुक तक की पढ़ाई नहीं की है, फिर भी अंग्रेज़ी
नेवाली मेमसाहब से उसकी घनिष्ठता कब और कैसे हुई?

अचानक कानों में वही पुरानी आवाज़ आई। सौम्य बाबू क्या अब भी रात
छुप-छिपकर बाहर निकलते हैं?

संदीप ने अंधेरे में मल्लिक चाचा की ओर गौर से देखा। तब वह गहरी नींद
ए हुए थे, उनकी नाक ज़ोर-ज़ोर से बज रही थी। वह आहिस्ता-आहिस्ता
बिस्तर छोड़ उठकर खड़ा हो गया। सौम्य बाबू तो अब मैक्लवी मुखर्जी कम्पनी
के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं। सवेरे नहा-धोकर खाना खाने के बाद हर रोज़
दफ्तर जाते हैं। दिन-भर दफ्तर के काम में व्यस्त रहते हैं। इसके बावजूद रात में
बाहर निकलते हैं? तब सोते कैसे होंगे? बगैर सोए आदमी कब तक जिन्दा रह
सकता है?

मौसीजी की भी याद आई। मौसीजी एक बार अपने दामाद को देखना चाहती
हैं। देखने की इच्छा होना स्वाभाविक है।

और विशाखा?

विशाखा को भी अपने पति को देखने की इच्छा होती होगी। विशाखा भी तो
अब पहले की विशाखा नहीं है। उसमें भी समझदारी आ गई है। उसे पता चल
गया है कि उन लोगों के रसेल स्ट्रीट के मकान और गृहस्थी का खर्च, उसकी
मास्टरनियों के वेतन, स्कूल जाने की गाड़ी और स्कूल में पढ़ने का माहवारी शुल्क
वगैरह उसकी भावी ससुराल से आते हैं। वहीं के बाशिन्दे उन लोगों के तमाम
खर्च की पूर्ति करते हैं। लेकिन जिस आदमी से उसकी शादी होगी, उसे न तो
उसने देखा है और न ही उसकी मां ने।

योगमाया ने एक दिन पूछा था, "जिससे मेरी लड़की की शादी होने जा रही
है, उसे तुमने देखा है बेटा?"

संदीप ने कहा था, "हां, देखा है।"

"मेरा दामाद कैसे स्वभाव का है?"

संदीप क्या जवाब दे, यह वह तय नहीं कर सका था। इतना ही कहा था,
"उन लोगों के पास बेहिसाब पैसा है। इतने पैसे कि आप कल्पना भी नहीं कर
सकतीं।"

"देह का रंग कैसा है?"

"गोरा।"

"मेरी विशाखा की देह के रंग से भी ज्यादा साफ? या विशाखा की देह
रंग से फीका?"

अब की भी संदीप समझ नहीं सका था कि क्या उत्तर दे। कुछ देर तक सो
के बाद कहा था, "हम लोगों के छोटे बाबू विशाखा से भी ज्यादा गोरे हैं।"

यह सुनकर विशाखा खुश ही हुई थी। खुशी के साथ-साथ उसे आश्चर्य
हुआ था। बोली थी, "मुझसे भी ज्यादा साफ? फिर क्या अंग्रेज़ का बच्चा है
यह सुनकर मौसीजी ने विशाखा को डांट दिया था, "चुप रह मुंहजली
बात ज़बान से नहीं निकालनी चाहिए, वही बात अपनी ज़बान से निकाल
है? छि:—"

सदीप ने कहा था, "उसे मत डाटें मौसीजी। उम्र कम है, कहना कुछ और चाहती थी, लेकिन कह गई कुछ और ही।"

"तुम चुप रहो।"

मौसीजी ने संदीप को बोलने से रोकते हुए कहा था, "तुम चुप रहो भैया। उसको उम्र क्या कम है? तुम क्या कह रहे हो? उसकी उम्र में हमारी शादी हो गई थी। किससे क्या कहना चाहिए, अब तक यह भी सीखा। शादी के बाद उसकी क्या हालत होगी, बताओ तो! उस समय उसके ससुरालवाले मुझे बदनाम करते चलेंगे। कहेंगे, कैसी मा है जो शिष्टाचार तक नही सिखाया। उस समय क्या होगा?"

विशाखा को मजा आ रहा था। बोली थी, 'मैंने कौन-सी बुरी बात कही है? अंग्रेज का बच्चा कहकर मैंने कौन-सा गुनाह किया है?"

"देख लिया न बेटा! मेरी बेटी कह रही है--कौन-सा गुनाह किया है! अरी मुहजली, तू क्या मुझे जिन्दगी-भर जला-जलाकर मारती रहेगी और मरने के बाद ही चैन की सास लेने देगी? अपनी भलाई किसमे है, तूने अब भी नही सीखा? अपने भले की बात अब कब सीखेगी? पता नही, तेरी इस खोपड़ी में कब अक्ल आएगी! मेरे मरने के बाद?"

इस तरह का झगड़ा अक्सर होता और सदीप को लाचार होकर यह सब सुनना पड़ता।

वह कहता, "आप उसे इतना मत दुतकारें मौसीजी। वह छोटी लड़की है, अभी उसे समझ ही कितनी है?"

यह कहकर बहुधा चला आता।

लेकिन सीढ़िया उतरने के दौरान ऊपर से अकस्मात् विशाखा के गले की आवाज आती, "ऐ, सुनो।"

संदीप ऊपर की ओर ताकते हुए पूछता, "क्या बात है? मुझसे कुछ कहना चाहती हो?"

विशाखा इशारा करती, ऊपर चले आओ।

संदीप चुपचाप ऊपर चला जाता। विशाखा दो-तीन सीढ़िया नीचे उतर आती और धीमे स्वर मे पूछती, "मेरा पति क्या देखने में तुमसे भी सुन्दर है?"

विशाखा की बात सुनकर संदीप के चेहरे पर लाली उमड आती। उसकी बात का क्या उत्तर दे, समझ नहीं पाता। केवल अवाक् होकर एकटक विशाखा के चेहरे की ओर ताकता रहता।

और लमहे-भर में विशाखा एक हरकत कर बैठती। एकाएक संदीप के चेहरे *पर आहिस्ता-से एक थप्पड़ लगाकर कहती, "बेवकूफ कहीं के!"*

यह कहकर दनादन ऊपर जाकर सदर दरवाजे को धड़ाम से बन्द कर देती और अन्दर अदृश्य हो जाती। संदीप बेवकूफ की नाईं सीढ़ी के बीच खड़ा का खड़ा रह जाता।

उस समय भी मल्लिक चाचा खर्राटे भर रहे थे। संदीप उस अंधेरे में जगकर बीते दिनों की बातें मन-ही-मन सोच रहा था। विशाखा ने उसे बेवकूफ क्यों कहा? संदीप क्या सचमुच ही बेवकूफ है? संदीप गरीब हो सकता है, लेकिन उसने कौन-

सा ऐसा काम किया कि विशाखा ने उसे बेवकूफ कहा ?

उस दिन भी रात गहराने पर लोहे का गेट खोलने की पहले ही जैसी घरं-घरं आवाज हुई।

फिर क्या सौम्य बाबू अब भी रात में घर से बाहर निकलते हैं ? अभी तो सौम्य बाबू मैक्लवी मुखर्जी एण्ड कम्पनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं। अब तो सौम्य बाबू ऑफिस जाकर दिन-भर काम करते रहते हैं। फिर रात में कैसे निकलते हैं ?

संदीप बिस्तर छोड़ आहिस्ता-आहिस्ता उठा। उसके बाद दबे पांवों दरवाजे की सिटकनी खोल बाहर आकर खड़ा हो गया। चारों तरफ एक जैसा ही दृश्य है। अंधेरे में लिपटा हुआ सन्नाटे से भरा माहौल। संदीप ने देखा, गिरिधारी धीरे-धीरे गाड़ी को ठेलते हुए बाहर सड़क पर ले जा रहा है। सड़क पर गाड़ी आते ही सौम्य बाबू उसके अन्दर बैठ गए और इंजन स्टार्ट करते ही वह लमहे-भर में आंखों से ओझल हो गई।

गिरिधारी ने तत्क्षण गेट बन्द कर दिया।

अंधेरे में भी संदीप गिरिधारी की आंखों को धोखा नहीं दे सका। संदीप दरवाजा बन्द करने जा ही रहा था कि गिरिधारी ने उससे कहा, "क्यों बाबूजी, आप अब तक सोए नहीं हैं ?"

संदीप बोला, "छोटे बाबू क्या अब भी पहले की तरह ही रात में बाहर रहते हैं ?"

गिरिधारी बोला, "हां बाबूजी, आप किसी से मत कहिएगा। मेरी नौकरी चली जाएगी। मगर..."

मैक्लवी मुखर्जी एंड कंपनी इंडिया लिमिटेड सिर्फ भारत तक ही सीमित नहीं है, विश्व-भर में उसकी शाखाएं हैं। शुरू में अंग्रेज यहां आकर सिर्फ कच्चा माल ही नहीं ले जाते थे बल्कि उससे तरह-तरह की मशीनें बनाकर देश-विदेश में उन्हें बेचते थे। जो लोग गरीब थे उनके हाथ भी उन मशीनों को बेचकर रुपये पैदा करते थे और उन रुपयों को अपनी जन्मभूमि की तिजोरियों में भरते थे। इससे उनकी जन्मभूमि न केवल दौलतमंद हुई है, बल्कि वहां के लोगों के रहन-सहन का स्तर भी ऊंचा हो गया है। पहले जो सूखी रोटी खाते थे, उन्हें मक्खन भी खाने को मिलने लगा। उन रुपयों से उनके देश में कपड़े बनाने की मशीनें बनीं। उन कपड़ों को जिन जहाजों पर लादकर विदेश भेजने लगे, वे जहाज भी कल-पुर्जों के जहाज में रूपांतरित हो चुके थे।

यानी अधिक पैसा होने से जो नतीजा होता है, उनके साथ भी वही हुआ। कहने का मतलब है, ज्यादा पैसा होने से खर्च करने की प्रवृत्ति भी बढ़ जाती है। वैसी हालत में धनीमानियों के मन में घर बैठे-बैठे उन रुपयों को भोगने की इच्छा होती है। तब मैकडोनल्ड साहब जैसे लोगों के सगे-संबंधियों को काम करने की इच्छा नहीं होती। बैठे-बैठे आराम करने की ही इच्छा होती है। पूरी रकम भारत से ही आती थी। लेकिन उनके लिए भारत पहले जैसा भारत नहीं रहा। जब लड़ाई

छिड़ी तो उनके देश में भी उसकी चिनगारी फैल गई। इस दौरान भारत में कुछेक ऐसे लोग पैदा हुए जिन्होंने अंग्रेजों के देश से ही अंग्रेजी की तालीम ली और अंग्रेजों के अदब-कायदे अपनी आंखों से देखकर यह समझ गए कि इस अदब-कायदे और ऐशो-आराम का रहस्य क्या है। उन्हें यह समझने में देर न हुई कि इस ऐशो-आराम के पीछे भारत में उनके अन्याय और शोषण की भूमिका रही है।

इस शोषण के रहस्य का पता उस समय किन लोगों को लगा था ?

पता चल गया था अरविन्द घोष, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मोहनदास करमचन्द गांधी और सुभाषचन्द्र बोस जैसे लोगों को। उन्होंने ही स्वदेश लौटकर सारे रहस्यों का पर्दाफाश कर दिया। इन रहस्यों के पर्दाफाश हो जाने ही भारतवासियों को अपनी दीन-हीन अवस्था का पूरे तौर पर पता चल गया।

अब वे सीना तानकर खड़े हो गए। उसके बाद युद्ध समाप्त होने पर जब अंग्रेजों ने देखा कि पैंतालीस लाख भारतीय सैनिक, जो अंग्रेजों की ओर से लड़ रहे थे, उन्हें अंग्रेजों के अन्याय का पता चल गया है और उनमें असंतोष फैल रहा है तो ब्रिटिश सरकार ने लॉर्ड माउन्टबेटन को भेजा।

भारत दो टुकड़ों में बंट गया और साथ ही अंग्रेजों के कारोबार का भी बंटवारा हो गया। उसके बाद 'मैकडोनल्ड मैकमनी' छोड़ मैकडोनल्ड साहब ने अपनी कंपनी बेच दी और स्वदेश लौट गया।

और देवीपद ? देवीपद मुखर्जी ?

वे मैकडोनल्ड साहब की कुर्सी पर आसीन हो गए।

इस बीच अंग्रेजों का रक्त और उनके अदब-कायदे मुखर्जी परिवार की मेद-मज्जा में अपना आसन जमा चुके थे।

देवीपद मुखर्जी के बाद आए शक्तिपद मुखर्जी और मुक्तिपद मुखर्जी। उसके बाद अब आए हैं सौम्य मुखर्जी—देवीपद मुखर्जी का इकलौता पोता। उनके साथ ही अय्याशी, शराब और औरतों के नशे ने प्रवेश किया।

तीन पुरखों से चली आ रही एक बंगाली कंपनी ने बर्बादी की ओर कदम बढ़ाना शुरू कर दिया।

उस दिन सौम्य यथासमय दफ्तर जा रहा था। एक क्रॉसिंग के मुहाने पर आते ही ट्रैफिक की लाल बत्ती जल उठी और गाड़ी का ब्रेक लेना पड़ा। आगे और पीछे बहुत सारी गाड़ियां रुककर खड़ी हो गई।

"हैलो मिस्टर मुखर्जी !"

सौम्य ने उस ओर मुड़कर देखा। एक दूसरी गाड़ी पर मिस्टर हाजरा है।

मिस्टर हाजरा ने पूछा, "कहां जा रहे हैं ?"

सौम्य ने कहा, "ऑफिस।"

मिस्टर हाजरा अवाक् हो गया।

पूछा, "ऑफिस ? ऑफिस का मतलब ? कौन-सा ऑफिस ?"

"अपने सैकसबी मुखर्जी कंपनी के ऑफिस।"

मिस्टर हाजरा मानो ठीक से समझ नहीं सका। मिस्टर मुखर्जी यद्यपि दौलतमन्द आदमी की संतान है लेकिन वह उन्हीं लोगों के साथ नाइट क्लब में अड्डेबाजी करता है। उसने कब से ऑफिस जाना शुरू कर दिया है ?

सौम्य ने कहा, "मैं अपने फर्म का डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर हूं। किसी दिन मुझसे मिलिएगा।"

"कहां मिलूं?"

"हम लोगों के डलहौजी स्क्वायर के दफ्तर में।"

ज़्यादा देर तक बातें नहीं हो सकीं। अकस्मात् ट्रैफिक की लाल बत्ती हरी बत्ती में बदल गई। साथ ही सारी गाड़ियां हॉर्न बजाते आगे बढ़ गईं।

दोनों के क्लब की जान-पहचान उसी दिन घरेलू परिचय के दायरे में चली आई।

उसी दिन तीसरे पहर गोपाल सौम्य के दफ्तर पहुंच गया। सैंक्सबी मुखर्जी के गेट के अन्दर जाते ही लिफ्ट है। दीवार पर एक सूची टंगी हुई है कि किस मंजिल में कौन-सा दफ्तर है।

लिफ्ट से ऊपर जाकर तीन-मंजिले पर पहुंचते ही रिसेप्शन काउंटर है। वहां एक खूबसूरत युवती बैठी थी।

गोपाल ने उसी से पूछा, "मिस्टर मुखर्जी हैं?"

"कौन मुखर्जी? सीनियर या जूनियर?"

"जूनियर।"

युवती ने एक स्लिप बढ़ा दिया। उसमें गोपाल ने नाम और अपना परिचय लिख दिया। उसके बाद आने का उद्देश्य भी लिख दिया। तत्क्षण गोपाल की बुलाहट आ गई। शीतल आबोहवा में देह को आराम महसूस हुआ।

सौम्य ने नए-नए कार्यभार संभाला है। रफ्ता-रफ्ता काम-काज समझ रहा है। अगर समझ न पाए तो भी उसे समझना होगा। मिस्टर नागराजन ने हर चीज़ की तालीम दी है। लेकिन हिसाब-किताब का काम आसान नहीं है, अतः उसे एक दिन में समझना मुश्किल है।

ठीक उसी वक्त मिस्टर हाजरा ने प्रवेश किया।

"गुड आफ्टरनून!"

"गुड आफ्टरनून!"

न केवल मिस्टर हाजरा अवाक् हैं बल्कि मिस्टर मुखर्जी भी अवाक् हो गए हैं। आज ही सवेरे सड़क पर मुलाकात हुई है और तीसरे पहर मिस्टर हाजरा आ धमका।

गोपाल ने कहा, "कल रात भी तो आपसे क्लब में मुलाकात हुई थी, उस समय आपने कुछ नहीं बताया।"

सौम्य ने कहा, "उस वक्त कहने का मूड ही कहां था!"

"बात तो सही है।"

यह कहकर गोपाल ने एक सिगरेट सुलगाई। बोला, "आपको यहां देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। अब तो आप एडल्ट, मेजर हैं, अब आपका क्या प्रोग्राम है?"

"प्रोग्राम और क्या रहेगा? पहले जैसा था, अब भी वैसा ही रहूंगा। यह तो मेरा पैटर्नल ऑफिस है, अब मैं भी इसका एक मालिक हूं।"

गोपाल ने कहा, "तब तो इस ऑकेजन को आज क्लब में सेलिब्रेट करना चाहिए।"

"सो तो करना ही होगा।"

गोपाल ने कहा, "विश यू गुडलक ! मैंने तो सुना है, आपके लिए मंगेतर का इंतजाम हो चुका है।"

"किसने कहा ?"

एक आदमी से सुनने को मिला।

सौम्य ने पूछा, "वह कौन है ? किससे सुना है ?"

गोपाल ने कहा, "वह मेरे गांव का एक युवक है।"

"उसे कैसे पता चला ?"

गोपाल ने कहा, "वह आपके मकान में ही रहता है।"

"हम लोगों के मकान में रहता है ? वह कौन है ? नाम क्या है ?"

गोपाल ने कहा, "आप उसे नहीं पहचानिएगा। वह एक गरीब लड़का है—बहुत ही गरीब।"

सौम्य बोला, "यह क्या, हमारे घर में रहता है और मैं उसे पहचानता नहीं ?"

"उसका नाम मंदीप है। आप उसे कैसे पहचानिएगा ? आपके घर में जितने आदमी हैं, आप क्या सबको पहचानते हैं ?"

बात तो सच है। सिर्फ उसके घर में ही नहीं, बल्कि उसकी फैक्टरी और दफ्तर में कितनी ही जगह कितने सारे लोग काम करते हैं। वह क्या सबको पहचानता है ? नहीं, यह संभव नहीं है। बोला, "उसने क्या कहा ?"

गोपाल बोला, "छोड़िए इन फालतू बातों को। वह आपके घर में नौकर जैसा रहता है।"

"बताइए न, उसने कहा क्या है।"

गोपाल ने कहा, "तीन नंबर रसेल स्ट्रीट में आप लोगों का एक मकान है। उसी घर में वह लड़की है, जिससे आपकी शादी होने वाली है।"

सौम्य यह सुनकर कुछ देर तक चुप्पी साधे रहा। उसके बाद बोला, "आपने सचमुच ही सुना है ?"

"सचमुच ही नहीं सुना है तो कहता ही क्यों ?"

यह कहकर फिर बोला, "इस फालतू बात को छोड़िए। अच्छा, अब मैं चल रहा हूं। आप आज क्लब आ रहे हैं न ? मैं आपके लिए 'वेट' करूंगा।" यह कहकर वह उठकर खड़ा हो गया।

"आप खड़े क्यों हो गए ?" सौम्य ने पूछा।

गोपाल बोला, "अब मुझे जाना है। मुझे मिस्टर मिश्र से मिलना है।"

"मिस्टर मिश्र कौन हैं ?"

गोपाल ने कहा, "आप मिस्टर मिश्र को नहीं पहचानते ? श्रीपति मिश्र, हम लोगों के मिनिस्टर।"

"वे आपके मित्र हैं ?"

गोपाल बोला, "हां, एक सर्टिफिकेट की जरूरत है। इसी के लिए उनके पास जा रहा हूं।"

"किस चीज का सर्टिफिकेट ?"

गोपाल ने कहा, "एक बिहारी मुसलमान बांगला देश से भारत आया है। उसे एक राशन कार्ड की जरूरत है। इसके लिए वह मुझसे बहुत चिरौरी कर रहा है।"

सौम्य बोला, "राशन कार्ड लेकर वह क्या करेगा?"

गोपाल बोला, "राशन कार्ड नहीं रहेगा तो कोई उसे नौकरी नहीं देगा। राशन कार्ड दिखाकर ही वोटर बन पाएगा। अब यहां राशन कार्ड ही सबसे बड़ी वस्तु है—"

बात समाप्त होने के पहले ही सीनियर मुखर्जी ने कमरे में प्रवेश किया। यानी सौम्य के चाचा ने। आकर सामने की कुर्सी पर बैठ गए।

पूछा, "तुम्हें ऑफिस में कैसा लग रहा है?"

सौम्य ने कहा, "बिलकुल ठीक।"

मुक्तिपद ने कहा, "ठीक लगना तो नहीं चाहिए, फिर भी तुम्हें ठीक क्यों लगा? तुम कुल मिलाकर कॉलिज से निकले हो. इसी बीच यह काम ठीक लगना तो कोई अच्छी बात नहीं है।"

सौम्य अपने चाचा की बातों का अर्थ नहीं समझ सका। सच्चाई यही है कि उसे यह काम अच्छा नहीं लगा था। कल पूरी रात उसने जगकर बिताई है। सवेरे के वक्त थोड़ी-सी नींद ली है। चीफ एकाउन्टेंट मिस्टर नागराजन उसे डेबिड-क्रेडिट समझाने आया था। लेकिन वह कुछ भी नहीं समझ सका। करोड़ों रुपये का बैलेंस सीट उसे निरर्थक जैसा लगा था। हजारों आदमी उन लोगों की फैक्टरी में काम कर अपनी घर-गृहस्थी का खर्च चला रहे हैं, असली बात यही है। जो लाभ हो रहा है वह कंपनी के डेवलपमेंट फंड में जमा हो रहा है। थोड़ा-बहुत शेयर-होल्डरों को दिया जाता है। यह सब जानकर उसे कौन-सा लाभ होगा?

मुक्तिपद बोले, "इसके बाद तुम्हें एक बार हम लोगों की बेलुड़ फैक्टरी जाना है। आज पहला दिन है, इससे अधिक तुम्हें काम नहीं करना है।"

यह कहकर खड़े हो गए। जाने के पहले बोले, "यू कैन टेक रेस्ट नाउ। अभी तुम घर जाकर आराम कर सकते हो।"

यह कहकर वे चीफ एकाउंटेन्ट के कमरे में चले गए।

पूछा, "नागराजन, मेरा डिप्टी तुम्हें कैसा लगा?"

नागराजन ने कहा, "जूनियर मुखर्जी बड़े ही इंटेलिजेंट हैं सर।"

दुबारा वही असत्य, वही खुशामद। जिन्दगी भर अपने मालिकों की खुशामद करते-करते नागराजन आज चीफ एकाउंटेंट के पद पर पहुंचा है। देवीपद मुखर्जी के कार्य-काल के दौरान नागराजन एक मामूली किरानी था। शक्तिपद मुखर्जी के कार्य-काल में खुशामद करने के कारण ही उसे तरक्की मिली थी। अब मुक्तिपद मुखर्जी की खुशामद करने के कारण ही वह चीफ एकाउंटेंट के पद पर पहुंच गया है। इसके बाद सौम्य की खुशामद करना शुरू कर दिया है। यह है नागराजन का असली व्यक्तित्व। लेकिन फर्म की एक-एक बात की उसे जानकारी है। उसे धोखा देना किसी के वश की बात नहीं है। उसी के हाथ में मुक्तिपद के जीवन की ताली है। वह चाहे तो मालिक को फंसा सकता है। तमाम अंदरूनी रहस्य वह ऑडिटर को जना दे सकता है। इसलिए वह जितनी तनख्वाह की मांग करता है, मुक्तिपद

को देना पड़ता है। नागराजन जिन्दा रखना चाहे तो मुक्तिपद जिन्दा रह सकते हैं, नागराजन मारना चाहे तो मुक्तिपद जिन्दा नही रहेंगे। यह एक अजीब ही गणित की बाजीगरी है। इस बाजीगरी को बरकरार रखने के लिए एक ओर नागराजन और दूसरी ओर बिजिनेस कानून गो की मुट्ठी गरम करनी पड़ती है। यानी मोटी रकम देनी पड़ती है। लेकिन इसमे भी मुक्तिपद के जीवन में शांति नहीं है। उसके बाद है नंदिता की मांग। वह अक्सर कॉन्टिटेंट जाती है और औरतो के साथ खरीददारी करती है। जो नाइटी भारत मे तीन सौ रुपये मे मिलती है उसे स्टेट्स में खरीदती है तीन हजार रुपये मे। कस्टम के बिल का भुगतान मुक्तिपद मुखर्जी करते हैं। खर्च किसी का हो मौज मनाऊंगा मैं! बाहर का आदमी सोचता है, मुक्तिपद मुखर्जी कितने खुशहाल हैं। ईश्वर का यह सबसे बड़ा मजाक है।

"हैलो!"

नागराजन ने टेलीफोन का रिसीवर मुक्तिपद को थमा दिया।

"सर, आपके घर का कॉल है।"

मुक्तिपद ने जो सोचा था, वही बात है। बोला, "अभी हम लोगों का एक कान्फेंस चल रहा है। अभी बहुत व्यस्त हू'''मुझे जाने मे थोड़ी देर होगी'''"

यह कहकर रिसीवर यथास्थान रख दिया। उसके बाद नागराजन से पूछा, "अच्छा नागराजन, आदमी शादी क्यों करता है, बता सकते हो? आदमी किस-लिए शादी करता है?"

नागराजन इस बात का क्या उत्तर दे! अपने मालिक के मुह से वह यह बात बहुत बार सुन चुका है। उसने कहा, "आप घर जाइए सर। हर वक्त दफ्तर की बात सोचते रहिएगा तो आपकी तबीयत और खराब हो जाएगी।"

मुक्तिपद मुखर्जी ने नागराजन की बातें सुनकर कहा, "ठीक कह रहे हो नाग-राजन तुम ठीक ही कह रहे हो। तुम्ही लोग सुख से हो नागराजन। जिनके पास दौलत, है, उनके दुख-कष्ट का कोई अन्त नही। मेरे पिताजी की मृत्यु कम उम्र में हो गई, मेरे दादा का भी देहावसान कम उम्र मे हो गया था। अब मेरी बारी है। अब सौम्य ऑफिस आ रहा है। उसकी भी यही परिणति होगी'''तुम ठीक ही कह रहे हो। अब मैं घर चलता हू।"

और वे उठकर खड़े हो गए।

बड़े साहब लिफ्ट से नीचे उतरेंगे। लिफ्टमैन ने नजर पड़ते ही उन्हें एक लंबी सलामी दी। इसके पहले वह उनके पिता को भी सलाम करता था, भाई को भी। उन्हें भी सलाम करता है। अब सलामी के लिए एक आदमी की और वृद्धि हो गई। ये ही लोग वास्तव मे दुनिया में सुख से जीवन जी रहे हैं।

मुक्तिपद ने देखा, अन्दर सौम्य है।

पूछा, "यह क्या, तुम अब तक ऑफिस में क्या कर रहे थे?"

सौम्य ने कहा, "फाइलें देख रहा था।"

मुक्तिपद ने सोचा, "उसकी जो हालत हो गई है, सौम्य की भी किसी दिन यही हालत हो जाएगी। पूछा, "फाइलों को देखने से तुम्हें कुछ समझ में आया?"

सौम्य बोला, "आज पहला दिन है, इसलिए कुछ समझ में नहीं आया।"

"हम लोगों के ऑडिटर की वार्षिक रिपोर्ट तुमने पढ़ी है ? जिसे कि पिछले साल तमाम शेयर-होल्डरों को भेजा गया था ?"

"देखी है।"

"क्या देखा ?"

सौम्य ने कहा, "पिछले साल की तुलना में इस साल कम प्रोफिट हुआ है। पिछले साल इक्यूटी शेयर में डिविडेंड दिया गया था—प्रति शेयर एक रुपया अस्सी पैसा। अबकी एक रुपया साठ पैसा दिया जा रहा है। प्रोडक्शन में डिफिसिट हुआ है। लेबर ट्रबल के कारण प्रोडक्शन में फोर्टी परसेन्ट की कमी आ गई है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "प्रोडक्शन में कमी क्यों आ गई है ?"

सौम्य ने कहा, "खासकर लेबर ट्रबल के कारण और उसके साथ है इलेक्ट्रिक फेल्योर।"

मुक्तिपद सौम्य का उत्तर सुनकर खुश हुए। बोले, "वेरी गुड, लेकिन—"

तब तक लिफ्ट ग्राउण्ड फ्लोर पर आ चुका था। मुक्तिपद बात के सिलसिले को जारी रखते हुए बोले, "लेकिन असली कारण दूसरा ही है।"

सौम्य ने चाचा के चेहरे पर आंखें टिका दीं। यानी इसका मतलब ?

"असली कारण है घूस।"

"घूस ?"

मुक्तिपद ने कहा, "हां। बाद में बेशक तुम्हें सारी बातों का पता चल जाएगा। अभी इतना जान लो कि इसका कारण पॉलिटिकल है।"

सौम्य ने पूछा, "पॉलिटिकल क्यों ?"

मुक्तिपद कहने लगे, "हम लोगों के यहां जितनी भी पालिटिकल पॉर्टियां हैं, उनके तमाम लीडरों को घूस देना पड़ता है। कलकत्ता में छह-सात पार्टियां हैं। मुझे सभी पार्टी के लीडरों और उनके शागिर्दों को घूस देना पड़ता है।"

सौम्य ने पूछा, "सभी पार्टियों को घूस क्यों देना पड़ता है ? जो पार्टी सत्ता में है उसे ही घूस देने से तो काम निकल जा सकता है।"

मुक्तिपद बोले, "तुम अभी कोरे हो, इसी वजह से यह कह रहे हो। पुराने हो गए होते तो फिर यह बात नहीं कहते। कब कौन-सी पार्टी सत्ता में आ जाएगी, यह कहना मुश्किल है। इसीलिए हम भविष्य की बात सोचकर सभी पार्टियों को घूस देते हैं। सिर्फ हमीं नहीं, बिड़ला, टाटा, गोयनका, माहीन्द्रा सभी यही करते हैं।"

सौम्य ने पूछा, "ऑडिट रिपोर्ट में उसे किस मद में दिखाया जाता है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "ध्यान से देखोगे तो पता चलेगा कि 'इनकम एण्ड एक्सपेंडिचर इन फॉरेन एक्सचेंज' नामक एक आइटम है। वहां देखोगे, लिखा है, एक्सपेंडिचर, टेकनिकल सर्विस एण्ड कॉन्सलटेशन फीज, इन्टरेस्ट एण्ड कमीशन और अदर्स। दरअसल उसी स्थान में धोखाधड़ी की जा सकती है।"

उसके बाद इस प्रकरण को समाप्त कर मुक्तिपद बोले, "यह सब बाद में तुम्हारी समझ में आएगा। आज रहे, मैं चलता हूं।"

यह कहकर वे चले गए।

सौम्य अपनी गाड़ी में जाकर बैठ गया। उसके बाद गाड़ी सेंट्रल एवन्यू होकर

चलने लगी। चाचा की बातें जेहन में गूंजने लगीं। सभी पार्टियों के लीडरों और उनके अनुयायियों को घूस देनी पड़ती है!

गाड़ी सेंट्रल एवन्यू होकर जा रही थी। सौम्य ने देखा, दीवार पर अलकतरे से मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा है—

"हलदिया में जहाज निर्माण कारखाना बनाना होगा"

सौम्य ने एक दूसरी दीवार में लिखा हुआ देखा:

"केन्द्र के कल-कारखाने में केन्द्रीय पुलिस रखना बन्द करो"

एक और जगह लिखा हुआ था:

"केन्द्र की आमदनी का पचहत्तर फीसदी भाग
राज्य सरकार को देना होगा"

इतने दिनों तक दीवार की इन लिखावटों पर सौम्य की नजर नहीं पड़ी थी। चाचा से बातें करने पर इन लिखावटों का अर्थ जैसे उसकी समझ में आ गया:

"कांग्रेस के काले हाथों ने कितने लोगों की हत्या की है
उसे भूलने से काम नहीं चलेगा"

और एक जगह लिखा हुआ है:

"खूनी सी० पी० एम० को अब एक भी वोट नहीं दो"

सौम्य इतने दिनों तक कॉलेज जाता रहा है, मौज-मस्ती मनाने को नाइट क्लब जाता रहा, लेकिन दीवार पर लिखी रहने के बावजूद इन बातों की ओर उसका ध्यान नहीं खिंचा था। आज मानो चाचा की बात सुनकर उसने कलकत्ता को नए सिरे से पहचाना।

मिस्टर हाजरा की याद आ गई। श्रीपति मिश्र नामक किसी मिनिस्टर से यह किसी व्यक्ति के राशन कार्ड के लिए सर्टिफिकेट लाने जाएगा। लेकिन राशन कार्ड के लिए सर्टिफिकेट की जरूरत क्यों पड़ती है?

मिस्टर हाजरा की याद आते ही सौम्य को एक और बात याद आ गई।

विडन स्ट्रीट जाकर बारह बटे ए नंबर इमारत के अन्दर अभ्यस्त गति से घुस गया।

यहां भी उसे सलामी मिलती है।

गिरिधारी सिंह जैसे लोग अब भी अनुशासन के प्रतीक हैं। इसी वजह से उन लोगों के घर में किसी शिक्षित व्यक्ति को नहीं रखा जाता है।

गाड़ी से उतरते ही सदर फाटक के सामने एक अजनबी पर दृष्टि पड़ते ही उसने गरदन घुमाकर देखा। अजनबी ने उसे नमस्कार किया।

"कौन?"

सौम्य बाबू उसे पहचान लेंगे, सदीप ने अलबत्ता ऐसी उम्मीद नहीं की थी। सदीप कई दिनों से सोच रहा था कि सौम्य बाबू से किसी तरह की बातचीत की जाए। शादी एक दिन होगी ही। शुभ दृष्टि के दौरान वर और वधू एक दूसरे को पहली बार देखेंगे, यही तो हमेशा से होता आ रहा है।

लेकिन मौसीजी अगर इसके पहले ही अपने दामाद को देखना चाहें तो यह क्या कोई गैरवाजिब चाह है? वह इकलौती बेटी की विधवा मां है। अपने दामाद को देखना चाहेंगी, यह तो स्वाभाविक ही है। वे दूर से देखेंगी। इसके अलावा

और कुछ भी नहीं। इससे कौन-सी क्षति हो जाएगी।

"कौन ?"

संदीप दो डग आगे बढ़ आया।

"आप कौन हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं इसी घर में रहता हूं।"

किसी दिन इसी सौम्य बाबू के साथ नाइट क्लब से एक ही गाड़ी पर बैठकर रात के तीन बजे इसी मकान में लौटकर आया था, यह याद कराना निरर्थक है। उस वक्त क्या वे स्वाभाविक स्थिति में थे !

जब एक रात के लिए संदीप सौम्य से घनिष्ठता के सूत्र में जुड़ गया था, उस समय बात दूसरी ही थी। तब सौम्य बाबू ने नशे की झोंक में कहा था, 'क्या ब्रदर, तुम भी सिंकिंग-सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर। तुम भी ब्रदर डूबकर पानी पीते हो ?'

सौम्य बाबू की बात से संदीप शायद बहुत घबरा गया था। उसकी ज़बान से आवाज़ नहीं निकल रही थी। सौम्य बाबू के पास भी फालतू आदमी से फालतू बातें करने का वक्त नहीं था। सौम्य बाबू और कुछ बोले बगैर घर के अंदर चले गए थे।

इसके अलावा रात में क्लब जाना है। मिस्टर हाजरा को वे वचन दे चुके हैं। उसके लिए शाम से तैयारी करना ज़रूरी है।

क्रांति जब आती है तो शायद इसी तरह चुपचाप आती है। शुरू में किसी को पता नहीं चलता है और चलता भी है तो वह मौजूदा स्थिति से तालमेल रखते हुए चलता है। तालमेल रखकर चलने में बहुत तरह की सुविधाएं हैं। लोग सोचते हैं, झंझट-झमेलों में क्यों फंसा जाए ! जैसा चल रहा है, चलने दो। तुम्हारे कोप का भाजन बनने से फायदा ही क्या ? मैं तुम्हारी शांति में खलल नहीं डालूंगा, तुम मेरी शांति में खलल मत डालना। अगर कहीं कोई अन्याय होता है, अगर कहीं कोई गैरकानूनी काम होता है तो तुम भी आंखें बन्द किए रहो और मैं भी आंखें बन्द किए रहूंगा।

बंगालियों की जीवन-धारा का यही चिरंतन इतिवृत्त रहा है। इस इतिवृत्त ने आज बंगालियों के ऐतिह्य का स्वरूप ले लिया है। चूंकि ऐतिह्य का स्वरूप ले लिया है। इसलिए जब कोई सिरफिरा बंगाली इसका अपवाद होना चाहता है तो सभी बंगाली एकजुट होकर उसका विनाश करने को तत्पर हो जाते हैं।

बंगाली जाति का स्वभाव रास्ते के लावारिस कुत्ते जैसा होता है। आसमान के चांद के उदय-अस्त में सड़क के लावारिस कुत्तों का कोई सरोकार नहीं है। तो भी देखने को मिलता है कि सड़क के लावारिस कुत्ते आकाश में चांद को उगते हुए देखकर भौंकने लगते हैं और विरोध प्रकट करते हैं। विद्यासागर, रवीन्द्रनाथ, विवेकानंद, शरतचंद्र, सुभाष बोस आदि के प्रति बंगाली जाति ने ही ज़हर उगला है।

रहा था, "बैंक का मैनेजर होने के बावजूद आपने बैंक से नब्बे मास्र रुपये की चोरी क्यों की ?"

संदीप ने अत्यंत शांत स्वर में कहा था, "रुपयों के प्रति मुझमें लोभ जग गया था।"

"लेकिन आपके घर-संसार में तो कोई नहीं है, आपके मा-बाप, भाई-बहन, पत्नी-बाल-बच्चे नहीं हैं। फिर रुपयों के प्रति आपको लोभ क्यों हुआ ?"

संदीप इस बात का क्या जवाब दे। उसने वकील के जिरह के जवाब में कुछ नहीं कहा था। लोभ क्या सिर्फ मां-बाप, भाई-बहन और पत्नी के होने में ही होता है ? आदमी तो दुनिया में सब-कुछ पाना चाहता है—चाहे आवश्यकता रहे या न रहे। लोभ भी तो शत्रु के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

"मेरी बात का जवाब दीजिए।"

संदीप ने कहा था, "हिटलर का भी तो कोई सगा नहीं था, फिर भी उसे लड़ाई छेड़कर इतने सारे देश जीतने का लोभ क्यों हुआ था ?"

इसके बाद स्टैंडिंग काउंसिल ने कहा था, "अच्छा, एक और बात पूछ रहा हूं, ठीक-ठीक उत्तर दीजिएगा।"

"कहिए।"

वकील ने कहा था, "विशाखा देवी उर्फ अलका देवी को आप पहचानते हैं ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

"अच्छा, यह तो बताइए कि विशाखा देवी से आपकी शादी हुई थी ?"

संदीप के अतीत-वर्तमान-भविष्य की बुनियाद जैसे एक ही धक्के से एकबारगी थर-थर कांपने लगी थी।

"यहां इस नीचे की जगह में आपने तो अपना हस्ताक्षर नहीं किया है ?"
मानो एक ही झटके में संदीप सपने की दुनिया से एकबारगी यथार्थ की दुनिया में आकर धड़ाम से गिर पड़ा हो। मन इस तरह बेतरतीब क्यों हो जाता है ?

नहीं, यह अदालत नहीं, कलकत्ता यूनिवर्सिटी है। याद है, उस समय वह लॉ कालेज में दाखिला लेने के लिए रुपया जमा कर रहा था। उसकी बराबर यही इच्छा थी कि वह कानून की परीक्षा पास कर बेहापोता के काशीनाथ बाबू जैसा वकील बनेगा। वकील बनकर मां की आशा-आकांक्षा की पूर्ति करेगा। इतने दिनों के बाद वह लॉ कॉलिज में भर्ती हुआ। लेकिन उस समय भी उसे सिर्फ यही याद आ रहा था कि सौम्य बाबू ने उसे पहचाना ही नहीं तो ऐसी हालत में वह मौसीजी से क्या कहेगा ? आदमी क्या शराब पीने से ही भला बन जाता है और शराब न पीने से बुरा हो जाता है ? उस समय तो सौम्य उसका जिगरी दोस्त बन गया था। कहा था, 'अरे ब्रदर, तुम भी आखिर सिंकिंग-सिंकिंग ड्रिंकिंग वाटर…'

उस समय सौम्य बाबू उसका कितना अंतरंग बन गया ! और आज पहचाना तक नहीं ! सौम्य बाबू तब दरवाजे से घुसकर अंदर चले गए थे।

गिरिधारी अब तक पूरी घटना का जायजा ले रहा था। संदीप के चेहरे पर निराशा की छाप देखकर अवाक् हो गया। पूछा, "क्या हुआ बाबूजी ?"

संदीप ने कहा, "तुमने तो देख लिया गिरिधारी, अपनी आंखों से ही देख लिया।"

गिरिधारी इसका क्या जवाब दे !

बस इतना ही कहा, "साहब लोगों की बात जाने दीजिए बाबूजी।"

संदीप ने कहा, "नहीं, मैं यह नहीं कह रहा था। तुम तो जानते ही हो कि उस रात तीन बजे मैं ही तुम्हारे छोटे बाबू के साथ एक ही गाड़ी पर बैठकर घर लौटा था। उस समय तुम्हारे छोटे बाबू मेरे प्रति कितनी अंतरंगता दिखा रहे थे।"

"वो बात जाने दीजिए बाबूजी, हम लोग तो उनके नौकर हैं।"

लेकिन उस समय संदीप या सौम्य क्या यह जानता था कि भविष्य में एक दिन इसी सौम्य को अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए संदीप के ही पांव पकड़ने होंगे !

संभवत यह भी ईश्वर का एक मजाक है। आदमी का ईश्वर भी शायद आदमी से एक किस्म का मजाक करना चाहता है। नहीं तो उस विशाखा के साथ एक दिन संदीप के विवाह के पीढ़े पर क्यों बैठना पड़ता ! संदीप के साथ विशाखा को क्यों विवाह के सात फेरे लगाने पड़ते ?

इसे ईश्वर के मजाक के अलावा और क्या कहा जा सकता है !

जर्मन कवि और दार्शनिक गेटे ने एक पुस्तक में कहा है, इतिहास को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। एक है विश्वास का युग और दूसरा अविश्वास का। विश्वास का युग देदीप्यमान, सफल और गतिशील होता है और जिस युग में अविश्वास का बोलबाला रहता है वह युग मलिन और बांझ रहता है। वे अध्याय इतिहास की पृष्ठभूमि में रहते हैं और लोग उन्हें भूल जाते हैं।

आदमी के साथ भी यही नियम है।

जीवन में जिन्होंने मान-सम्मान अर्जित किया है वे किसी-न-किसी विश्वास से अटूट रूप में जुड़े हुए रहे हैं। जिन्हें किसी चीज पर विश्वास नहीं है वे जीवन के आवर्त्त में फंसकर तल में समा जाते हैं।

कॉलिज में पढ़ने के दौरान उसे एक मित्र ने एक किताब दी थी। उसी पुस्तक में यह बात लिखी हुई थी।

उस पुस्तक में बर्ट्रेण्ड रसेल के जीवन के बारे में विस्तार से लिखा हुआ था।

बर्ट्रेण्ड रसेल की पुस्तक पढ़ बहुत सारे लोग क्रोधित हो उठते। कोई कहता वह पलायनवादी और संशयवादी है और किसी चीज़ पर उसे आस्था नहीं है। लेकिन उसके मरने के बाद लोगों ने विश्वास करना शुरू कर दिया कि वह अपने विश्वास के ज़ोर पर पाठकों को अनायास अपनी पुस्तक की आखिरी पंक्ति पर्यन्त पढ़ने को बाध्य कर सकता है।

उस पुस्तक को पढ़कर संदीप ने कितनी ही बार खुद से सवाल किया है, "वह खुद क्या है ? विश्वासी या अविश्वासी ?"

इस दुनिया में तो ढेर सारे आदमी थे, हैं और रहेंगे भी। लेकिन उनमें से कितने अपने अक्षय कृतित्व के कारण अविस्मरणीय रहेंगे ?

संदीप साधारण निम्न वित्त के एक साधारण परिवार का युवक है। उसके द्वारा कोई अक्षय कृतित्व संपन्न करना संभव है ?

संदीप एक ऐसे युग में पैदा हुआ है जिसमें आदमी चाहे जैसे हों, वे पैसा कमाना चाहते हैं और अपने इस उपार्जन को ही श्रेष्ठ कृतित्व समझते हैं।

दरअसल बाहर से देखा जाए तो संदीप भी उसी श्रेणी का एक सदस्य है। खुद जूठन पर पलकर वह बड़ा हुआ है और अब लॉ कॉलेज का एक छात्र है। उसका भी मकसद वही है कि वह कानून की परीक्षा पास कर काशीनाथ बाबू की तरह वकालत करेगा और उन्हीं के जैसा धनी-मानी बनेगा। और-और लोगों की तरह उसकी भी किसी दिन शादी होगी, बाल-बच्चे होंगे, घर-संसार होगा। उसके बाद कलकत्ता शहर मे वह एक मकान बनवाएगा। यानी बंगालियों का जो जन्म से ही सपना हुआ करता है, वही करेगा।

उसके बाद ?

उसके बाद एक गाड़ी।

और उसके बाद ?

उसके बाद का भी तो एक 'उसके बाद' हुआ करता है। लेकिन उसके बारे में कोई नहीं सोचता। सोचता क्यों नहीं ? फिर क्या धरती के आदि-अन्त की बात नहीं सोचना है, सिर्फ आगत के बारे मे ही सोचना चाहिए ?

तीसरे पहर चार बजे संदीप का क्लास शुरू होता है और पांच बजे खत्म हो जाता है। मात्र एक घंटे का क्लास। यानी करीब-करीब दिन-भर छुट्टी ही रहती है।

बिडन स्ट्रीट से कलकत्ता युनिवर्सिटी पैदल जाना वैसी कोई बड़ी बात न थी। संदीप पैदल चलता हुआ कॉलेज जाता और पैदल चलता हुआ ही कॉलेज से वापस आता।

जिस दिन सड़क से होकर कोई जुलूस जाता, संदीप फुटपाथ पर खड़ा होकर उस ओर निहारता। किस चीज का जुलूस है ? किन लोगों का जुलूस है ?

जहाँ कोई अन्याय या अत्याचार होता है, तभी तो जुलूस निकलता है। लाल कपड़े पर जुलूस का उद्देश्य लिखा होता। लाल कपड़े को दो लाठियों में बांध ऊपर उठाकर ले जाया जाता।

एक सज्जन को अपनी बगल में देखकर संदीप ने पूछा, "यह किस चीज का जुलूस है, बता सकते हैं जनाब ?"

उस सज्जन ने कहा, "कम्युनिस्टों के अलावा और किसका हो सकता है ?"

यह कहकर विरक्ति के साथ वह एक दूसरी भीड़ में खो गया।

जुलूस के सामने का आदमी तब चिल्ला रहा था—

तानाशाह अमरीका वियेतनाम छोड़ो—
छोड़ो, छोड़ो वियेतनाम छोड़ो

और दल के तमाम लोग उसके स्वर से स्वर मिलाकर चिल्ला रहे हैं :

वियेतनाम छोड़ो
वियेतनाम छोड़ो
छोड़ो-छोड़ो वियेतनाम छोड़ो।

आश्चर्य, संदीप सचमुच ही अवाक् हो गया। यही कुछ साल पहले संदीप ने बेड़ापोता में कुछ दूसरी बात सुनी थी। यह उनके बचपन की बात है। उस स

वहां गाने-बजाने का एक समारोह हुआ था। कलकत्ता के एक दल ने बेड़ापोता जाकर 'नवान्न' नामक एक थियेटर किया था। उसके बाद उन लोगों ने एक कोरस गीत गाया था :

"कॉमरेड धारण करो अस्त्र, धारण करो अस्त्र
आजादी की लड़ाई में आज हम नहीं अकेले
क्रांतिकारी सोवियत। दुर्जय महाचीन
साथ हैं अंग्रेज, निर्भीक अमरीका···"

यह कैसे हुआ ? किसी जमाने का निर्भीक अमरीका सहसा इन कई बरसों के दरमियान तानाशाह अमरीका क्यों बन गया ? कैसे बन गया ?

जहन्नुम में जाए यह सब ! संदीप भीड़ चीरकर सड़क देखता हुआ कॉलेज की तरफ जाने लगा। बाहरी दुनिया के आंधी-पानी को देखकर डरने से उसका काम नहीं चलेगा। अपने लिए उसे खुद ही रास्ता बनाना है। मां के अलावा उसके लिए दुनिया में कोई अपना नहीं है। उसके जीवन का यही सार तत्व है। दलबंदी कर हंगामा मचाया जा सकता है, मुहिम भी शुरू की जा सकती है। लेकिन इंसान बनना ? इंसान बनने के लिए उसे अकेले ही चलना होगा। दलबंदी से ईश्वरचंद्र विद्यासागर नहीं बना जा सकता है, विवेकानंद भी नहीं बन सकता है। दलबंदी कर कोई सुकरात नहीं बन सका है, ईसामसीह नहीं बन सका है। अलबत्ता उनके नाम पर दल बना है। बाद में दल बांधकर कभी लोगों ने विवेकानंद और कभी ईसामसीह की जयगाथा गाई है।

इतिहास की शिक्षा यही है। जिसने इतिहास की शिक्षा स्वीकार की है, उसने अकेले चलने के व्रत की शुरुआत की है।

उसी दिन यह वाकया हुआ।

कॉलेज से निकल संदीप उसी रास्ते की दूरी तय कर रहा था। अचानक सड़क के मोड़ पर अवस्थित पान की एक दुकान से उसके कानों में शब्दों के कुछ टुकड़े आए।

"कल तो तुम्हें पांच रुपया दिया था।"

एक आदमी ने कहा, "जी हां।"

"तो फिर आज भी पांच रुपये रख लो।"

एक दूसरे व्यक्ति ने कहा, "लेकिन वे लोग और रुपये मांगते हैं।"

"वह बात बाद में होगी, आज पांच रुपये लो।"

उस समय चारों तरफ झुटपुट अंधेरा छितर चुका था। अचानक उस आदमी पर नजर पड़ते ही संदीप चिहुंक उठा। अरे, यह तो गोपाल है !

गोपाल भी संदीप को देखकर चौंक पड़ा।

"अरे, तू ?"

गोपाल जैसे बहुरूपिया हो। अजीब रूप और पोशाक में उसे देखकर पहले भी संदीप अवाक् हो चुका है। आज वह बिलकुल एक दूसरे ही लिबास में है। ऊपर से नीचे तक खादी का कुरता और धोती। जैसे कोई कांग्रेसी नेता हो।

संदीप को देखकर गोपाल उसका हाथ पकड़ आगे की ओर बढ़ा। पूछा, "तू कहां जा रहा है ?"

मंदीप ने कहा, "मैं भी तो यही पूछने जा रहा था कि तू कहा जा रहा है।"

गोपाल बोला, "और कहां जाऊंगा ? अपने धंधे के लिए चक्कर काट रहा हूं।"

"कौन-सा धंधा ?"

"रुपये के अलावा और किस धंधे के लिए आदमी चक्कर लगाता है, तुम्हीं बताओ ? हर आदमी तो पैसे के लिए ही चक्कर लगाता है। आदमी का पैसे के अलावा और कोई धंधा नहीं हो सकता।"

मंदीप के मन में उत्सुकता कुलबुलाने लगी।

बोला, "आदमी के लिए वाकई और कोई धंधा नहीं हो सकता ?"

गोपाल ने कहा, "किसी के लिए कोई और धंधा नहीं हो सकता। जो वकील है वह सिर्फ पैसे के लिए ही वकालत करता है, जो डॉक्टर है वह पैसे के लिए ही डॉक्टरी करता है और जो लीडर है वह भी पैसे कमाने के लिए ही लीडरी करता है…"

उसके बाद अपनी बात कहना बंद कर पूछा, "खैर, यह बता कि तू आजकल क्या कर रहा है ?"

मंदीप ने कहा, "मैं अभी कॉलिज में पढ़ रहा हूं। अभी वहीं से आ रहा हू।"

गोपाल ने कहा, "तू भी तो पैसा कमाने के लिए ही वकालत पढ़ रहा है।"

मंदीप को थोड़ी-बहुत शर्मिन्दगी का अहसास हुआ। उसके मुंह से कोई जवाब नहीं निकला।

उसके बाद कहा, "तू पान की दुकान पर क्या कर रहा था ?"

गोपाल ने कहा, "पानवाले पट्ठे को पैसा दे रहा था।"

"पैसा दे रहा था ? क्यों ? उसका बकाया था ?"

"धत्त ! आजकल क्या कोई उधार देता है कि बकाया चुकाने जाऊंगा ?"

मंदीप ने कहा, "पहले तो तू रात में सड़क के हर मोड़ पर पुलिसकर्मी को रुपये देता था। मुझे सबकुछ याद है।"

गोपाल ने हंसते हुए कहा, "अब पुलिसकर्मी सड़क के मोड़ पर पैसे नहीं लिया करते।"

"क्यों ?"

"इसके चलते उनकी बदनामी फैल रही थी। लिहाजा उन्होंने अब दूसरा इंतजाम कर लिया है। अब हर सड़क के बड़े-बड़े मोड़ पर पान की दुकानों में रुपये देने का बंदोबस्त किया गया है। मैं जिन पानवालों को रुपया दे आया वे रात में किसी वक्त उन लोगों से हिसाब कर रुपये ले जाएंगे। हमेशा हर पानवाले को पाच रुपया दिया करता था, लेकिन अब वे आठ रुपये की माग करते हैं।"

मंदीप ने कहा, "मगर तू रुपया क्यों देता है ? पुलिसकर्मियों को रुपये देने से तुम्हें कौन-सा फायदा होता है ? मैं कहां किसी को रुपया देता हू।"

गोपाल ने कहा, "मेरा जो कारोबार है उसमें पुलिस को रुपया दिए बगैर काम चलना मुश्किल है।"

"तेरा कौन-सा कारोबार है ?"

गोपाल ने कहा, "मेरा कारोबार क्या एक ही है ! हजारों किस्म के कारोबार

हैं मेरे। देखते नहीं कि रात-दिन हर समय मुझे गाड़ी लेकर चरखी की तरह घूमना पड़ता है।"

संदीप बोला, "यही तो देख रहा हूं। तुझसे हमारे घर के सौम्य बाबू से जैसी घनिष्ठता है वैसी ही घनिष्ठता है रसेल स्ट्रीट की मेमसाहब से।"

गोपाल को सहसा जैसे एक बात की याद आ गई।

कलाई की घड़ी की ओर देखते ही वह यूं कूद पड़ा जैसे सांप पर उसकी नज़र पड़ी हो।

बोला, "लो! तुझसे बातचीत करते-करते बिलकुल भूल ही गया था।"

"क्या भूल गया है?"

"अरे, आज शाम छह बजे श्रीपति बाबू से मेरा एपॉयन्टमेंट है। जा, सब गड़बड़ हो गया।"

संदीप ने तो भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। बोला, "मेरी बात का जवाब देकर जा। रसेल स्ट्रीट की मेमसाहब से तेरी जैसी घनिष्ठता है वैसी ही सौम्य बाबू से। यह कैसे हुआ, तू बता जा भाई।"

जैसे कोई भूली हुई बात उसे याद आ गई हो, ऐसे ही अन्दाज़ में गोपाल ने कहा, "अचानक एक बात याद आ गई। तुझे कहना भूल गया था···"

"क्या?"

"तुम लोगों के बिडन स्ट्रीट के सौम्य बाबू के दफ्तर उस दिन गया था। अब तो तुम लोगों के सौम्य बाबू सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर हो गए हैं।"

संदीप बोला, "इसकी जानकारी मुझे है।"

"छोकरे की तकदीर अच्छी है। कसम ईश्वर की, उन लोगों के पास बेशुमार पैसे हैं। लेकिन सबके सब काला धन है।"

संदीप अवाक् हो गया। पूछा, "काला धन? काला धन का मायने?"

गोपाल ने कहा, "काला धन न हो तो पार्टियों को इतना पैसा दे सकता है?"

"किन पार्टियों को देता है?"

"सभी पार्टियों को। यहां जितनी भी पार्टियां हैं सबको देता है। कब कौन-सी पार्टी के हाथ में सत्ता आ जाए, यह पहले से कहा नहीं जा सकता। इसीलिए अभी से हरेक पार्टी को मोटी रकम खिलाता है···"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोला, "ख़ैर, इन बातों को छोड़ो। सौम्य बाबू से उस दिन तेरी चर्चा की थी।"

"मेरी?"

"हां जी, हां। कहा, आपके रसेल स्ट्रीट के मकान में एक लड़की रखी गई है। सुना है, उसी से आपकी शादी होने जा रही है।

"उसके बाद मुझसे पूछा कि यह बात मुझे किससे मालूम हुई। मैंने तेरा नाम बताया। वे तुम्हें पहचान ही नहीं सके।"

संदीप ने कहा, "मुझे पहचानेंगे कैसे? मेरे जैसे बहुत सारे लोग उस घर में रहते हैं। कितने लोगों को पहचानेंगे? याद है, एक दिन तेरे नाइट क्लब से सौम्य बाबू को पकड़-धरकर और गाड़ी पर बिठाकर मैं घर वापस ले आया था···"

"हां, अच्छी तरह याद है।"

संदीप ने कहा, "विशाखा की मां एक दिन अपने दामाद को देखना चाहती है..."

"क्यों ?"

संदीप ने कहा, "वह लड़की की मां है, दामाद का चेहरा कैसा है, यह देखने की इच्छा नहीं होगी ? तू एक बार सौम्य बाबू को उन लोगों के तीन नंबर रसेल स्ट्रीट ले जा सकेगा ?"

गोपाल ने कहा, "जान-पहचान है नहीं और मैं उन्हें उन लोगों के घर ले चलूं ?"

"इससे क्या आता-जाता है ?"

गोपाल बोला, "तू खुद भी तो सौम्य बाबू से यह बात कह सकता है।"

संदीप ने कहा, "मुझे कहने में शर्म लगती है भाई। इसके अलावा मेरी बात सौम्य बाबू मानेंगे ही क्यों ? मैं कौन होता हूं ? एक दिन कहने जा रहा था मगर मुझे डर लगने लगा। यू देखा जैसे पहचानते ही नहीं हो मुझे।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "रात नौ बजे के बाद सौम्य बाबू तो हर रोज छुपकर गाड़ी लिए तुम लोगों के क्लब जाते हैं। किसी दिन तू ही सौम्य बाबू से कहना।"

"ठीक है, मैं कहूंगा।" गोपाल बोला।

यह कहकर कलाई घड़ी की तरफ देखकर दुबारा चौंक उठा। बोला, "चलूं श्रीपति बाबू के घर। काफी देर हो गई।" और वह गाड़ी पर बैठकर चला गया। उसके जाने के बाद संदीप को एकाएक उस बात की याद आ गई कि अटी मेमसाहब से गोपाल का कैसे परिचय हुआ, यह तो पूछ ही नहीं सका।

लेकिन तब वक्त नहीं था, काफी देर हो चुकी थी। गोपाल की गाड़ी तब बहुत दूर जाकर अदृश्य हो गई थी...

उस दिन रसेल स्ट्रीट के मकान में पहुंचते ही मौसीजी ने पूछा, "क्यों बेटा, मेरे दामाद को दिखाने का क्या हुआ ? उसे मेरे घर कभी नहीं ले आए।"

संदीप ने कहा, "मैं कोशिश कर रहा हूं, आप चिन्ता मत करें।"

मौसीजी बोली, "जानते हो बेटा, कल एक बहुत बुरा सपना देखा था।"

"सपना ?"

मौसीजी बोली, "लेकिन मैं सपने की बात किसी से नहीं कहूंगी। हां, मेरा मन बहुत उदास है। मैं तुम्हारे आने का इंतजार कर रही थी।"

कितने दिनों से मौसीजी को सौम्य बाबू को देखने की ख्वाहिश हो रही है, उसका कोई ठीक नहीं। कौन ऐसी सास है जो अपने दामाद को देखना नहीं चाहती ? जिसके हाथ में सारा कुछ सौंप देगी और सौंपने के बाद निश्चिन्तता का अनुभव करेगी, वैसे व्यक्ति को एक बार देखने की इच्छा प्रकट करना कोई अन्याय नहीं है।

लेकिन संदीप काफी कुछ कोशिश करने के बावजूद इसका इंतजाम नहीं कर पा रहा है। इसके कारण उसके मन में दुख का भी एक अहसास था।

मल्लिकजी ने एक दिन पूछा, "तुम इतने उदास क्यों दिख रहे हो संदीप ? तुम्हें क्या हुआ है ? तबीयत ठीक है न ?"
संदीप बोला, "ठीक है।"
"फिर क्या मां के लिए तुम्हारा मन उदास है ?"
संदीप ने उस बात का कोई जवाब नहीं दिया था।
मल्लिकजी ने कहा था, "कॉलिज में छुट्टी होने पर एक बार जाकर मिल आओ। बहुत दिनों से तुम्हारी मां ने तुम्हें नहीं देखा है।"
संदीप ने कहा था, "तो फिर रसेल स्ट्रीट के मकान में कौन जाएगा ?"
बात सच है। संदीप का तो यह हर रोज़ का काम है। उसे हर रोज एक बार जाना होगा। वहां जाकर विशाखा और उसकी मां से मिलना होगा। हर रोज की गृहस्थी को सुचारु रूप से चलाने का काम भी तो कोई कम नहीं है। निश्चित समय पर निश्चित स्थान से दूध लाना होगा। शुद्ध दूध न हो तो बहूरानी की तबीयत खराब हो जाएगी। दादी मां का आदेश है, गाय को घर के सामने मंगाकर शैल के सामने दुहाना होगा। नहीं तो ग्वाला दूध में पानी मिला देगा।
और सिर्फ दूध ही क्यों ? बाज़ार से जो साग-भाजी लाई जाए उसे नमकीन पानी से धोने के बाद ही रसोई पकाई जाए। फिनाइल से हर रोज घर धोना-पोंछना होगा। मेहतर हर रोज़ आकर ब्लिचिंग पाउडर से बाथरूम साफ करेगा।
इन नियमों का ठीक से पालन हो रहा है या नहीं, इसके देखने का दायित्व संदीप पर है।
रसेल स्ट्रीट से लौटने के बाद संदीप निर्धारित समय पर इसकी रिपोर्ट दादी मां को जाकर देता है।
दादी मां पूछती हैं, "गाय दुहने के दौरान शैल खड़ी रहती है न ?"
संदीप कहता है, "हां।"
"कल डॉक्टर ने आकर बहूरानी के शरीर का परीक्षण किया है न ? वज़न लिया है ?"
संदीप हर बात का सकारात्मक उत्तर देता है। दादी मां के आदेश का ठीक से पालन हो सके, इसमें संदीप कोई त्रुटि नहीं रहने देता है। संदीप रोज-ब-रोज़ उस मकान के सब कुछ की सूक्ष्मता से जांच-पड़ताल करता।
काम करने के लिए मात्र एक ही व्यक्ति है और वह है शैल। और एक आदमी रखा जाए तो बेशक अच्छा रहे। लेकिन मर्द कामगार रखने से काम नहीं चलेगा। मर्द नौकर रखने में दादी मां को एतराज है।
दादी मां कहती : "घर में कोई लड़का नहीं है। और एक महरी रख दी जाए तो काम चले।"
लेकिन वैसी विश्वस्त महरी कहा मिलेगी ?
रुपया-पैसा बड़ी बात नहीं है। विश्वासी के साथ-साथ खटने वाली भी होनी चाहिए। ऐसी औरत कहां मिलेगी ?
मौसीजी को इसके पहले मनसातल्ला लेन में कमरतोड़ परिश्रम करना पड़ता था। तपेश गांगुली सिर्फ बाजार से सामान ला देते थे और वह इसलिए कि दूसरे को बाजार करने भेजेंगे तो वह फालतू खर्च कर बैठेगा। लेकिन दुकान से राशन,

कोयला-उपले, किरोसिन लाने से शुरू कर घर में झाड़ू लगाना, रसोई पकाना, बर्तन माजना वगैरह मौसीजी की कार्यतालिका में शुमार था।

लेकिन इस घर में ?

दादी मां ने कह रखा था : यह सब काम बहूरानी की मां को नहीं करना है। बहूरानी की देख-भाल करना ही उनका मा का प्रमुख काम होगा।

मौसीजी पूछतीं, "तो फिर क्या तसवीर की बीवी की नाई सज-धजकर चुपचाप बैठी रहूंगी ? ऐसी हालत में तो मेरे हाथ-पैर और कमर में गठिया हो जाएगा।"

सदीप कहता, "आप चुपचाप क्यों बैठे रहिएगा, विशाखा की देखभाल करना भी तो एक काम है। वह क्या खाएगी, कौन-सी साड़ी पहनकर स्कूल जाएगी, स्कूल से लौटने के बाद कौन-सी साड़ी पहनेगी, इन सबों का इंतजाम करना भी तो एक काम है···काम क्या आपका एक ही है मौसीजी ? इसके अलावा जो लोग काम करेंगे, उन्हें ताकीद करने के लिए भी तो किसी की जरूरत है। आप यही काम करें··"

इतना आराम रहने के बावजूद योगमाया को किसी-किसी रात नींद नहीं आती है। योगमाया को जैसे विश्वास ही नहीं होता कि यह सब सुख की बात है। पहले की तरह अहलेसुबह जगने की अब जरूरत नहीं पड़ती। सारा कुछ शैल ही करती है। शैल ही सवेरे जगकर नीचे जाती है और ग्वाले से दूध दुहवाकर ले आती है। उसके बाद वही चूल्हा सुलगाती है।

रात में जब विशाखा और शैल सो जाती है तो योगमाया को किसी-किसी रात नींद नहीं आती। और नींद न आने पर बीते दिनों की याद आने लगती है। जाने के पहले उसके पति को शायद इस बात का अहसास हो गया था कि अब दुनिया से कूच करने का वक्त आ गया है। उस समय कहा था . "तुम कुछ चिन्ता मत करना। मेरी मा की कोख से पैदा हुआ मेरा भाई सपेश है। वह तुम्हारी देख-रेख करेगा। मैंने ही उसके लिए नौकरी की तलाश की है, मैंने ही उसकी शादी कराई है। वह है तो फिर तुम्हारे लिए चिन्ता की कौन-सी बात है ?" वह आदमी कहा चला गया ! कहा चला गया उसका प्यारा देवर ! आज इस विडन स्ट्रीट की मालकिन ही उसकी सगी जैसी हो गई। यह भी भाग्य का एक अजीब खेल है !

लेकिन उसका दामाद ? विशाखा से जिसकी शादी होने वाली है वह सौम्य—सौम्यपद मुखर्जी ? जिसके पैसे का कोई अन्त नहीं, जो अपनी कपनी के काम से हर साल विलायत जाता है, उसी से विशाखा की शादी होगी। शादी होने के बाद विशाखा भी उसके साथ विलायत जाएगी।

इन सुख की बातों की क्या कल्पना की जा सकती है ?

फिर भी इन सुखों की कल्पना करना योगमाया को अच्छा लगता है। सोचती है, भगवान जरूर ही हैं। योगमाया ने जो विशाखा से इतने दिनों तक व्रत कराया है, यह हो सकता है उसी का नतीजा हो।

सवेरे से ही विशाखा को तरह-तरह के काम रहते है। यही कारण है कि योगमाया ही विशाखा को झकझोरकर जगाती है। कहती है, "उठो बिटिया, तुम्हें स्कूल जाने में देर हो जाएगी। उठो—"

नी आसानी से क्या विशाखा की नींद टूटती है? लेकिन उसी तरह विशाखा को हर दिन जगाना पड़ता है। विडन स्ट्रीट के की दादी मां ने जो-जो खिलाने को कहा है, योगमाया वही सब उसे खिलाती हले मनसातल्ला लेन में जो लड़की पूरी खाने के लिए बेताब हो जाती थी, पूरी खाते-खाते उसे ही अरुचि होने लगती है। दूध-दही-रबड़ी के प्रति जिस की को इतना लोभ था, उसे ही अब यह सब जबरन खिलाना पड़ता है।
सो चाहे हो, लेकिन विशाखा अब बड़ी हो गई है, वह स्कूल में पढ़ रही है, जी, गणित और नृत्य की उसे तालीम मिल रही है, यह कोई कम बात नहीं है। सातल्ला लेन के देवर के घर में रहती तो यह सब क्या हो पाता! मुहल्ले की न्यान्य गरीबों के घर की लड़कियों की तरह अशिक्षित ही रह जाती। और उसके द किसी तरह गरीब घर के किसी लड़के से उसकी शादी कर दी जाती। एक सहाय, बेसहारा विधवा ऐसा पात्र कहां से खोज कर लाती?

एक दिन उसका देवर तपेश गांगुली फिर आए थे।

चाहे जो हो, है तो सगा देवर ही। विधवा होने के बाद उसी देवर ने तो उसे आश्रय दिया था।

तपेश गांगुली के आते ही शैल को उनके लिए मिठाई लाने को जाना पड़ा।

योगमाया ने पूछा, "घर का हाल-चाल क्या है देवरजी? सब ठीक है न?"

तपेश गांगुली बोले, "ठीक कैसे कहूं? तुम्हारे आने के बाद से तुम्हारी देवरानी और अधिक चिड़चिड़े मिजाज की हो गई है। अब मुझे अच्छा नहीं लग रहा भाभी। अब मुझे जिन्दा रहने की भी इच्छा नहीं होती। सोचता हूं, किसके लिए गृहस्थी का भार संभाले हूं! क्यों उस समय शादी की थी! कभी-कभी मुझे आत्महत्या करने की इच्छा होती है भाभी। मैं तुमसे सच कह रहा हूं, अब मुझे जीने की इच्छा नहीं हो रही है।"

योगमाया ने तपेश गांगुली को अपने सामने बिठाकर भरपेट खाना खिलाया। बोली, "इतनी चिन्ता मत करो देवरजी। इतना सोचोगे तो तुम टूट जाओगे।"

"चिन्ता क्या जान-बूझकर करता हूं भाभी?"

तपेश गांगुली को हमेशा जीवन के प्रति वितृष्णा रही है। कारण एक ही है। और वह है अर्थाभाव। पैसे के लिए उन्हें न केवल अपनी पत्नी से बल्कि तमाम लोगों से दुतकार सुननी पड़ी है। उसके बाद भाई के मरने और उसके फलस्वरूप भाभी और उसकी नाबालिग लड़की का भार कन्धे पर पड़ने से वह अभाव तीव्रतर हो गया था।

हालांकि कुछ साल तक भाग्य के जोर से उसे थोड़ी-सी सुख-सुविधा हासिल हुई थी।

खाने के दौरान तपेश गांगुली ने पूछा था, "विशाखा कहां है?"

योगमाया ने कहा था, "वह स्कूल गई है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "बहुत दिनों से उसे देखा नहीं है। अब कितनी ब हुई है?"

योगमाया ने कहा, "उम्र तो किसी की एक जगह ठिठककर नहीं रह

उसने फ्रॉक पहनना छोड़ दिया है। अब वह साड़ी पहनती है।"

"फिर तो बिजली जैसी हो गई होगी। बिजली भी अब साड़ी पहनती है। लेकिन साड़ी की कीमत के बारे में सुनकर तो मैं भौंचक-सा रह गया। एक छोटी-सी लड़की की साड़ी की कीमत तीस रुपया बताना है।"

योगमाया बोली, "आजकल हर चीज की कीमत बढ़ती जा रही है।"

तपेश गांगुली बोले, "कीमत तो बढ़ रही है मगर उस अनुपात से हम लोगों के वेतन में वृद्धि नहीं हो रही है।"

योगमाया बोली, "उस दिन उस घर में विशाखा की साल गिरह पर साड़ी और ब्लाउज भेजा गया था। मैंने पूछा तो बताया, उस साड़ी की कीमत दो सौ रुपया है। सुनकर ऐसा लगा जैसे मैं आकाश से नीचे गिर पड़ी हूं।"

तपेश गांगुली बोले, "तुमने पूर्व जन्म में बहुत पुण्य किया होगा भाभी इसी-लिए···"

योगमाया बोली, "यह बात मत कहो देवरजी। भगवान न करें कि मेरी जैसी अभागिन पैदा हो। पैदा होते ही पिताजी चल बसे और उसके बाद तुम्हारे भैया भी चले गए।"

यह कहते ही योगमाया की आंखों से टप-टप आंसू चूने लगे।

तपेश गांगुली बोले, "फिर भी तो भगवान ने बाद में चलकर तुम पर दया की लेकिन मेरे भगवान की हरकत देखो। मैं भगवान को कितना पुकारता हूं लेकिन भगवान एक बार भी मेरी ओर नजर उठाकर नहीं देखते।"

"और दो रसगुल्ले दूं देवरजी ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "तुम तो जानती ही हो भाभी कि मैं रसगुल्ला खाना कितना पसंद करता हूं। लेकिन उससे भी ज्यादा मैं एक चीज पसंद करता हूं।"

योगमाया ने हंसकर कहा, "वह क्या ? रुपया ?"

तपेश गांगुली भी हंस दिया। बोला, "तुम कैसे समझ गईं भाभी ?"

योगमाया ने उठकर कमरे के कोने में रखी आलमारी के पल्ले को चाबी से खोला। उसके बाद कुछेक रुपये निकाल तपेश गांगुली के हाथ में देती हुई बोली, "इन रुपयों को तुम रख लो देवरजी···और रसगुल्ले दे रही हूं, जरा रुक जाओ।"

तपेश गांगुली तब रुपये गिन रहे थे। गिनकर बोले, "पचास रुपया दिया ? हां, रसगुल्ला मैं खा रहा हूं। तुम्हें सच बताऊं, आज तुम्हारी देवरानी ने खाना ही नहीं पकाया।"

योगमाया अवाक् हो गई? पूछा, "क्यों? देवरानी ने खाना क्यों नहीं पकाया ?"

तपेश गांगुली बोले, "तुम्हारे चले आने के बाद से महीने में पंद्रह दिन मुझे बगैर भात खाए दफ्तर जाना पड़ता है।"

योगमाया ने कहा, "यह बात पहले ही कहनी चाहिए थी। आज तुम यहीं खाना खा लो। आज तुम्हें मेरे घर में खाना खाकर ही जाना होगा।"

तपेश गांगुली ने कहा, "मुझे क्षमा करो भाभी। मैं बल्कि दूसरे दिन आकर खाना खा लूंगा। इसके बदले मैं तुमसे एक दूसरी चीज की मांग कर रहा हूं। बताओ, दोगी ?"

के पहले ही वोली, "आप लोगों के लिए हल्के नाश्ते का इंतज़ाम करूं···"

अवकी सौम्य ही वोले, "नहीं-नहीं, यह सव करने की ज़रूरत नहीं।"

योगमाया वोल उठी, "क्यों वेटा, आपत्ति क्यों कर रहे हो ? यह सव जो कुछ देख रहे हो, सव कुछ तो तुम्हारी दादी मां का ही दिया हुआ है। विशाखा को तुमसे व्याहने के लिए दादी मां ने पसंद करके रख लिया है। उन्हीं की वदौलत तो हमें खाना मिल रहा है।"

तपेश गांगुली भी वोल पड़े, "हां-हां, भाभी ठीक ही कह रही हैं। तुम्हारी दादी मां हर रोज़ गंगा नहाने जाती थीं और मेरी भाभी भी जाती थीं। वहीं मेरी भतीजी को देखकर तुम्हारी दादी मां ने उसे अपने पोते से व्याहने के लिए पसंद किया था।"

उसके वाद ज़रा रुककर वोले, "यह जो मैं रसगुल्ला खा रहा हूं, वह भी तो तुम्हारी दादी के द्वारा दिए गए पैसे से ही खरीदा गया है।"

योगमाया वोली, "यही नहीं, यह जो घर है यह भी तो तुम्हीं लोगों का घर है। तुम्हारी दादी मां ने हमें इस घर में रहने दिया है इसीलिए तो हम यहां रह पा रहे हैं। यह पलंग, सोफा, आलमारी, वर्तन, आईना वगैरह जो कुछ देख रहे हो, सव कुछ तो तुम्हीं लोगों का है। तुम लोग थोड़ा-सा खाने में आपत्ति मत करो।"

सौम्य वावू की तरफ से गोपाल हाजरा ने कहा, "अभी हम कुछ नहीं खाएंगे मौसीजी। थोड़ी देर पहले ही सौम्य वावू खाना खाकर चले हैं। मैं इसलिए जवरन खींचकर ले आया कि आप इन्हें देखना चाहती थीं।"

योगमाया ने पूछा, "तुम लोगों को कैसे पता चला कि मैं अपने दामाद को देखना चाहती हूं।"

गोपाला वोला, "आपके यहां संदीप नामक एक युवक रहता है, उसी से सुनने को मिला कि आप अपने दामाद को देखना चाहती हैं।"

योगमाया वोली, "मैं तो वेटा, वाप-मरे लड़की की मां हूं। मुझे तो जानने की इच्छा होती है कि जिसके हाथ में अपनी लडकी को सौंपने जा रही हूं, वह कैसा लड़का है, देखने में कैसा है।"

गोपाल वोला, "अव तो उसे देख लिया। अव आपको पसंद आया ?"

योगमाया वोली, "मैं वड़ी ही दुखिया औरत हूं वेटा। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा है कि मेरी जैसी गरीव औरत का इस तरह का राजकुमार जैसा दामाद होगा। मेरी लड़की ने पूर्वजन्म में वहुत पुण्य किया होगा, जभी तो ऐसे घर-वर से उसका रिश्ता जुड़ रहा है।"

गोपाल वोला, "आपके दामाद न केवल रूप में वल्कि गुण में भी राजकुमार हैं।"

योगमाया की आंखों से टप-टप आंसू चूने लगे। पल्लू के छोर से आंखें पोंछ कुछ कहने जा रही थी, लेकिन इसके पहले ही तपेश गांगुली वोल उठे, "अरे, तुम रो क्यों रही हो भाभी ? अव तो तुम्हें खुशियां मनानी चाहिए। तुम्हारे दामाद घर पर आए हैं और तुम रो रही हो ? रोने से लड़की-दामाद का अमंगल होता है, इसका तुम्हें पता नहीं ?"

योगमाया अव और ज़ोर से रो दी। अपनी रुलाई के आवेग को वह किसी भी

हालत में रोककर नहीं रख सकी। उसके बाद स्वयं को जरा संयत करके बोली, "तुम्हारे भैया मेरा सुख देखकर नहीं जा सके, इसका मुझे जो दुख है, उसे तुम नहीं समझ पाओगे देवरजी।"

तपेश गांगुली बोले, "अगर रोना ही है तो तुम बाद में रोना। घर में तुम्हारे दामाद बैठे हुए हैं और तुम रो रही हो! उन लोगों के चले जाने के बाद तुम्हें जितनी भी मर्जी हो, रोना। उस समय तुम्हें कोई मना नहीं करेगा। उस समय तुम जी-भर रो लेना। अभी कुटुंब घर से आदमी आए हैं, उनका मुंह मीठा कराओ। तुम इतनी कंजूस सास क्यों हो?"

गोपाल बोला, "ऐसा कीजिएगा तो हम उठकर चले जाएंगे मौसीजी।"

तपेश गांगुली बोल उठे, "अरे भैया, इतने शरमाने की क्या जरूरत है? तुम लोगों के नाम पर मुझे भी कुछ मिल जाएगा। मिष्टान्नमितरे जनाः..."

उनकी बात किसी को अच्छी नहीं लगी। लेकिन तपेश गांगुली को तनिक भी लज्जा का अनुभव नहीं हो रहा है।

बोला, "यह सब तो तुम्हीं लोगों के पैसे से हो रहा है भाई, इसमें शरमाने की कोई बात नहीं है।"

सौम्यपद ने गोपाल से कहा, "चलिए।"

गोपाल बोला, "जिस मकसद से हम आए वह नहीं हो सका मिस्टर मुखर्जी।"

उसके बाद योगमाया की ओर देखकर बोला, "सदीप दिख नहीं रहा है। वह कहां है? वह कब आता है?"

योगमाया बोली, "और-और दिन वह बहुत पहले ही आ जाता था। आज अब तक नहीं आया है। शायद कहीं किसी काम से उसे रुकना पड़ा है।"

गोपाल बोला, "वह आए तो कह दीजिएगा—गोपाल सौम्यपद बाबू को लेकर आज यहां आया था।"

तपेश गांगुली को देर हो रही थी। उन्हें भी कम-से-कम एक बार ऑफिस तो जाना ही होगा। रेल का ऑफिस होने से भी ज्यादा नागा करने से काम नहीं चल सकता।

वह उठकर बोला, "मैं चलता हूं भाई। मुझे कम से कम एक बार ऑफिस जाकर अपना चेहरा दिखाना होगा।"

तपेश गांगुली जा रहे थे। योगमाया बोली, "फिर आना देवरजी।"

तपेश गांगुली बोले, "जरूर आऊंगा, न आने पर जाऊंगा कहां? अब तो तुम्हीं पर मुझे भरोसा है।"

यह कहकर वे दरवाजा खोल बाहर चले गए।

इसके बाद योगमाया बोली, "बेटा, तुम लोगों की दादी मां ने हमारे लिए जो कुछ किया है, किसी ने भी किसी दूसरे के लिए नहीं किया है। मेरी लड़की ने पूर्व जन्म में शायद बहुत पुण्य किया होगा, इसीलिए भगवान ने हमें इतना सुख दिया।"

सौम्यपद ने कहा, "तो फिर हम चलते हैं।"

योगमाया ने कहा, "तुम लोगों ने तो एक भी दाना मुंह में नहीं डाला, बैठे भी नहीं। तुम लोगों के काम की बड़ी हानि कर दी मैंने। तुम लोग और थोड़ी देर नहीं बैठोगे बेटा? हो सकता है मेरी विशाखा अभी तुरन्त आ जाए।"

गोपाल ने कहा, "हम बैठ सकते थे लेकिन सौम्य बाबू बड़े काम-काजी आदमी हैं।"

उसका कथन समाप्त होने के पूर्व ही मौसमी हवा की एक झलक की तरह विशाखा ने प्रवेश किया। उसका पूरा बदन पसीने से लथपथ हो गया है। धूप की तपिश से चेहरा लाल हो गया है। सवेरे हल्का-सा नाश्ता करके निकली थी, अब उसे जोरों से भूख लगी है। हर दिन वह इसी तरह थकावट से चूर होकर घर लौटती है। आते ही वह मां की गोद में लेट जाती है। उस समय उसके लिए ठंडा शर्बत या कच्चे नारियल का पानी मौजूद रहता है। शैल पहले से ही इसका इंतजाम करके रखती है।

उस दिन भी बगैर किसी ओर ताके वह आकर मां की गोद में लेट गई।

शैल तैयार ही थी। वह एक गिलास में कच्चे नारियल का पानी ले आई और सामने रख दिया। योगमाया ने उसकी देह की साड़ी को सहेज उसे ठीक से ढंक दिया। बोली, "अब कच्चे नारियल का पानी पी लो बेटी।"

विशाखा उस वक्त भी मां की गोद में आंख मूंदे पड़ी थी।

योगमाया ने उसे उठाते हुए कहा, "देखो बेटी, कौन लोग आए हैं। देखो-देखो, आंखें उठाकर देखो।"

विशाखा ने आंख मूंदे ही पूछा, "कौन ? चाचाजी ?"

"नहीं-नहीं, चाचाजी नहीं, दूसरा आदमी। तुम उठकर बैठो।"

अब उसने आंखें खोलकर देखा। देखा, कमरे में दो अजनबी बैठे हुए हैं।

योगमाया ने विशाखा की देह की साड़ी सहेजते हुए कहा, "उन लोगों को प्रणाम करो बेटी।"

विशाखा अवाक् हो गई। जिनसे जान-पहचान ही नहीं है, उन्हें वह प्रणाम क्यों करेगी, यह बात विशाखा की समझ में नहीं आई।

पूछा, "ये लोग कौन हैं मां ?"

योगमाया बोली, "तुममें यही एक बुरी लत है। हर बात में बहसबाजी ! जो कह रही हूं, वही करो। जाओ, प्रणाम करो।"

फिर भी विशाखा कुछ समझ नहीं सकी। मां ने तो कभी किसी को इस तरह प्रणाम करने नहीं कहा था।

इस बीच कच्चे नारियल का पानी पिलाकर शैल अन्दर जा चुकी है।

योगमाया ने दुबारा कहा, "जाओ, प्रणाम कर आओ।"

विशाखा ने दोनों व्यक्तियों की ओर गौर से देखा।

बोली, "ये लोग कौन हैं मां ?"

योगमाया बोली, "ये लोग तुम्हारी ससुराल के आदमी हैं। ये लोग तुम्हें देखने आए हैं। ये लोग तुम्हारे गुरुजन हैं। जाओ, जाकर प्रणाम कर आओ, प्रणाम करना चाहिए।"

गुरुजन शब्द सुनकर विशाखा अनमनी जैसी हो गई।

योगमाया के कान के पास मुंह लाकर धीमे स्वर में बोली, "मेरे साथ जिसकी शादी होगी ?"

"हां।"

विशाखा ने धीमे स्वर में पूछा, "मेरा वर कौन-सा है? गोरे रंग का आदमी?"

योगमाया बोली, "अब जाओ, प्रणाम कर आओ—पैर छूकर प्रणाम करो।"

अब विशाखा ने आपत्ति नहीं की। सीधे सौम्य बाबू के पास जाकर पैर छूकर प्रणाम किया। उसके बाद गोपाल को भी प्रणाम करने जा रही थी, लेकिन गोपाल ने मना कर दिया, "अरे नहीं-नहीं, मुझे प्रणाम करने की जरूरत नहीं। मैं कोई नहीं हूं।"

योगमाया बोली, "प्रणाम करने दो बेटा, उसे पुण्य होगा।"

प्रणाम का प्रकरण किसी प्रकार समाप्त कर विशाखा ने शर्म से अपना चेहरा योगमाया की गोद में छिपा लिया।

गोपाल बोला, "आपकी लड़की बड़ी शर्मीली है मौसीजी।"

योगमाया ने लड़की के अपराध को ढंकने के उद्देश्य से कहा, "मेरी लड़की बाहर के किसी आदमी से नहीं मिलती-जुलती, इसीलिए जरा लजा गई है।"

गोपाल बोला, "बहुत अच्छी बात है। लज्जा ही तो औरतों का आभूषण है।"

योगमाया बोली, "शादी के बाद सब ठीक-ठाक हो जाएगा। अभी ज्यादा उम्र नहीं है, इसीलिए जरा सकपका गई है।"

गोपाल बोला, "शादी के बाद आपकी लड़की को भी तो आपके दामाद के साथ अमरीका, जर्मनी, जापान, इंगलैंड, फ्रांस वगैरह देशों की हवाई जहाज से यात्रा करनी होगी।"

योगमाया बोली, "इसीलिए ही तो मेरी लड़की को अंग्रेजी की तालीम दी जा रही है, खाना खाने के लिए कांटे-चम्मच के इस्तेमाल की तालीम दी जा रही है। दादी मां मेरी लड़की को मास्टर रखकर सिखा रही हैं और हजारों रुपये खर्च कर रही हैं।"

गोपाल बोला, "यह सब नहीं सीखेगी तो मुखर्जी परिवार की बहू नहीं बन पाएगी। कितने ही साहबों-मेमसाहबों को होटल ले जाकर पार्टी देनी पड़ेगी। उस वक्त आपकी लड़की के शर्माने से तो काम नहीं चलेगा।"

सौम्य बाबू अब तक एक शब्द भी नहीं बोले थे। कहने को जो कुछ था, गोपाल ने ही कहा था। कहा जा सकता है कि सदीप के अनुरोध पर गोपाल ही उसे खींचकर लाया है। अब कलाई-घड़ी की ओर ताककर खड़े हो गए।

बोले, "चलिए मिस्टर हाजरा, बहुत देर हो गई।"

गोपाल ने कहा, "हां, अच्छा मौसीजी, हम चल रहे हैं।"

योगमाया बोली, "बड़ा ही अच्छा लगा बेटा। बहुत दिनों से मेरी साध थी, जिनके पैसे से खा-पी रही हूं, उसे एक बार अपनी आंखों से देखूं। तुमने मेरी यह साध पूरी कर दी बेटा। लेकिन मेरे मन में एक दुख रह गया। तुम लोग इतनी तकलीफ कर आए मगर मेरे घर में मुंह मीठा भी नहीं किया।"

गोपाल ने कहा, "आपकी मीठी बातें सुनीं इसी से हम लोगों का मुंह मीठा हो गया।"

यह कहकर अपने मजाक पर खुद ही हो-हो कर हंस पड़ा। उसके बाद वे जब

गोपाल ने कहा, "हम बैठ सकते थे लेकिन सौम्य बाबू बड़े काम-काजी आदमी हैं।"

उसका कथन समाप्त होने के पूर्व ही मौसमी हवा की एक झलक की तरह विशाखा ने प्रवेश किया। उसका पूरा वदन पसीने से लथपथ हो गया है। धूप की तपिश से चेहरा लाल हो गया है। सवेरे हल्का-सा नाश्ता करके निकली थी, अब उसे जोरों से भूख लगी है। हर दिन वह इसी तरह थकावट से चूर होकर घर लौटती है। आते ही वह मां की गोद में लेट जाती है। उस समय उसके लिए ठंडा शर्बत या कच्चे नारियल का पानी मौजूद रहता है। शैल पहले से ही इसका इंतज़ाम करके रखती है।

उस दिन भी बगैर किसी ओर ताके वह आकर मां की गोद में लेट गई।

शैल तैयार ही थी। वह एक गिलास में कच्चे नारियल का पानी ले आई और सामने रख दिया। योगमाया ने उसकी देह की साड़ी को सहेज उसे ठीक से ढंक दिया। बोली, "अब कच्चे नारियल क़ा पानी पी लो बेटी।"

विशाखा उस वक्त भी मां की गोद में आंख मूंदे पड़ी थी।

योगमाया ने उसे उठाते हुए कहा, "देखो बेटी, कौन लोग आए हैं। देखो-देखो, आंखें उठाकर देखो।"

विशाखा ने आंख मूंदे ही पूछा, "कौन ? चाचाजी ?"

"नहीं-नहीं, चाचाजी नहीं, दूसरा आदमी। तुम उठकर बैठो।"

अब उसने आंखें खोलकर देखा। देखा, कमरे में दो अजनबी बैठे हुए हैं।

योगमाया ने विशाखा की देह की साड़ी संहेजते हुए कहा, "उन लोगों को प्रणाम करो बेटी।"

विशाखा अवाक् हो गई। जिनसे जान-पहचान ही नहीं है, उन्हें वह प्रणाम क्यों करेगी, यह बात विशाखा की समझ में नहीं आई।

पूछा, "ये लोग कौन हैं मां ?"

योगमाया बोली, "तुममें यही एक बुरी लत है। हर बात में बहसबाजी ! जो कह रही हूं, वही करो। जाओ, प्रणाम करो।"

फिर भी विशाखा कुछ समझ नहीं सकी। मां ने तो कभी किसी को इस तरह प्रणाम करने नहीं कहा था।

इस बीच कच्चे नारियल का पानी पिलाकर शैल अन्दर जा चुकी है।

योगमाया ने दुबारा कहा, "जाओ, प्रणाम कर आओ।"

विशाखा ने दोनों व्यक्तियों की ओर गौर से देखा।

बोली, "ये लोग कौन हैं मां ?"

योगमाया बोली, "ये लोग तुम्हारी ससुराल के आदमी हैं। ये लोग तुम्हें देखने आए हैं। ये लोग तुम्हारे गुरुजन हैं। जाओ, जाकर प्रणाम कर आओ, प्रणाम करना चाहिए।"

गुरुजन शब्द सुनकर विशाखा अनमनी जैसी हो गई।

योगमाया के कान के पास मुंह लाकर धीमे स्वर में बोली, "मेरे साथ जिसकी शादी होगी ?"

"हां।"

विशाखा ने धीमे स्वर में पूछा, "मेरा वर कौन-सा है? गोरे रंग का आदमी?"

योगमाया बोली, "अब जाओ, प्रणाम कर आओ—पैर छूकर प्रणाम करो।"

अब विशाखा ने आपत्ति नहीं की। सीधे सौम्य बाबू के पास जाकर पैर छूकर प्रणाम किया। उसके बाद गोपाल को भी प्रणाम करने जा रही थी, लेकिन गोपाल ने मना कर दिया, "अरे नहीं-नहीं, मुझे प्रणाम करने की जरूरत नहीं। मैं कोई नहीं हूं।"

योगमाया बोली, "प्रणाम करने दो बेटा, उसे पुण्य होगा।"

प्रणाम का प्रकरण किसी प्रकार समाप्त कर विशाखा ने शर्म से अपना चेहरा योगमाया की गोद में छिपा लिया।

गोपाल बोला, "आपकी लड़की बड़ी शर्मीली है मौसीजी।"

योगमाया ने लड़की के अपराध को ढंकने के उद्देश्य से कहा, "मेरी लड़की बाहर के किसी आदमी से नहीं मिलती-जुलती, इसीलिए जरा लजा गई है।"

गोपाल बोला, "बहुत अच्छी बात है। लज्जा ही तो औरतों का आभूषण है।"

योगमाया बोली, "शादी के बाद सब ठीक-ठाक हो जाएगा। अभी ज्यादा उम्र नहीं है, इसीलिए जरा सकपका गई है।"

गोपाल बोला, "शादी के बाद आपकी लड़की को भी तो आपके दामाद के साथ अमरीका, जर्मनी, जापान, इंगलैंड, फ्रांस वगैरह देशों की हवाई जहाज से यात्रा करनी होगी।"

योगमाया बोली, "इसीलिए ही तो मेरी लड़की को अंग्रेजी की तालीम दी जा रही है. खाना खाने के लिए कांटे-चम्मच के इस्तेमाल की तालीम दी जा रही है। दादी मां मेरी लड़की को मास्टर रखकर सिखा रही हैं और हजारों रुपये खर्च कर रही हैं।"

गोपाल बोला, "यह सब नहीं सीखेगी तो मुखर्जी परिवार की बहू नहीं बन पाएगी। कितने ही साहबों-मेमसाहबों को होटल ले जाकर पार्टी देनी पड़ेगी। उस वक्त आपकी लड़की के शर्माने से तो काम नहीं चलेगा।"

सौम्य बाबू अब तक एक शब्द भी नहीं बोले थे। कहने को जो कुछ था, गोपाल ने ही कहा था। कहा जा सकता है कि संदीप के अनुरोध पर गोपाल ही उसे खींचकर लाया है। अब कलाई-घड़ी की ओर ताककर खड़े हो गए।

बोले, "चलिए मिस्टर हाजरा, बहुत देर हो गई।"

गोपाल ने कहा, "हां, अच्छा मौसीजी, हम चल रहे हैं।"

योगमाया बोली, "बड़ा ही अच्छा लगा बेटा। बहुत दिनों से मेरी साध थी, जिनके पैसे से खा-पी रही हूं, उसे एक बार अपनी आंखों से देखूं। तुमने मेरी यह साध पूरी कर दी बेटा। लेकिन मेरे मन में एक दुख रह गया। तुम लोग इतनी तकलीफ कर आए मगर मेरे घर में मुंह मीठा भी नहीं किया।"

गोपाल ने कहा, "आपकी मीठी बातें सुनीं इसी से हम लोगों का मुंह मीठा हो गया।"

यह कहकर अपने मजाक पर खुद ही हो-हो कर हंस पड़ा। उसके बाद वे जब

सीढ़ियां उतरने जा रहे थे, योगमाया बोली, "फिर आना बेटा, मौसीजी को भूल मत जाना।"

गोपाल ने कहा, "संदीप से कह दीजिएगा कि हम आए थे।"

योगमाया ने दरवाज़े की सिटकनी बन्द कर दी।

इतना वक्त कैसे गुज़र गया, योगमाया इसका अहसास नहीं कर सकी।

योगमाया का इतने दिनों का सपना सार्थक होगा, इसकी कल्पना क्या आज नींद टूटने के बाद भी किसी ने की थी? यह सब सोचते-सोचते योगमाया कब भावनाओं के फ्रेम की एक निर्जीव तसवीर जैसी हो गई थी, इसे वह महसूस नहीं कर सकी थी। विशाखा की पुकार सुनकर उसमें सजीवता आई।

"मां, मुझे खाना नहीं दोगी? मुझे क्या भूख नहीं लगी है?"

अब योगमाया ने महसूस किया, बात तो सही है। विशाखा बहुत पहले ही स्कूल से आ चुकी है। अब तक कच्चे नारियल का पानी पीने के अतिरिक्त और कुछ नहीं खाया है।

शैल को झट से खाना लाने को कहा। शैल ही बाज़ार करती है, वही रसोई पकाती है। और सिर्फ बाज़ार करने या रसोई पकाने का काम ही नहीं करती, बल्कि गृहस्थी का भी सारा काम वही करती है। विशाखा कौन-कौन-सी चीज़ें खाना पसन्द करती है, शैल को इसकी जानकारी है। साथ ही वह यह भी जानती है कि उसके मासिक वेतन, खाने-पीने और रहने की ज़िम्मेदारी यद्यपि दादी मां ढो रही हैं लेकिन सब कुछ का लक्ष्य है वह नन्हीं-सी लड़की विशाखा। विशाखा ही इतनी बड़ी इमारत की मालकिन बनेगी। अत: विशाखा के भले-बुरे के साथ उन लोगों का भला-बुरा एकाकार हो गया है। यही कारण है कि विशाखा जो-जो खाना चाहती है, शैल वही सब चीज़ें बाज़ार से ले आती है और खाना पकाकर खिलाती है।

विशाखा के खाने के सामने बैठकर योगमाया ने पूछा, "आज अपने पति को देख लिया न बेटी? उसी से तुम्हारी शादी होगी, समझीं?"

विशाखा ने कोई जवाब नहीं दिया। वह खाना खाने में मशगूल रही।

योगमाया दुबारा बोली, "वर देखने में कैसा लगा? अच्छा?"

विशाखा बोली, "खाक अच्छा है!"

"क्यों, अच्छा क्यों नहीं है?"

विशाखा ने कहा, "मैंने पैर छूकर प्रणाम किया तो आशीर्वाद भी नहीं दिया।"

योगमाया बोली, "अरे, तुम यह क्या रही हो! आशीर्वाद न दे तो आदमी बुरा हो जाता है? दो दिन बाद जिससे शादी होगी, उसे आशीर्वाद क्यों देगा? तेरे चौदह पुरखों का भाग्य है कि ऐसे वर से तुम्हारी शादी होने जा रही है। तुम्हारी बहन बिजली को ऐसा वर मिलता तो वह अपने भाग्य की कितनी सराहना करती!"

विशाखा बोली, "जाओ-जाओ, मैं भी गली-कूचे की उपेक्षित लड़की नहीं हूं। शादी करके वह क्या मुझे जन्म-जन्मांतर से मुक्ति दिला देगा?"

योगमाया उसकी बातें सुनकर दंग रह गई।

बोली, "क्या बोली, एक बार और बोलो तो।"

विशाखा बोली, "शादी कर वह मुझे क्या जन्म-जन्मांतर से छुटकारा दिला देगा?"

योगमाया बोली, "यह सब बोलने की तुझे किसने सीख दी है री मुंहजली! विलायती स्कूल में पढ़ने का यही नतीजा है!"

विशाखा बोली, "तुम मुझे हमेशा 'मुंहजली' कहकर गाली क्यों देती हो?"

योगमाया बोली, "तुझे क्यों गाली देती हूं, काश, तू समझ पाती! तू जब मां बनेगी तो महसूस करेगी कि बाप-मरे लड़की की मां होना कितना कष्टदायक है।"

यह कहने के बाद योगमाया को शायद अपनी गलती का अहसास हुआ और इसीलिए अपने अपराध को हल्का करने के खयाल से बोली, "अरे, मैं क्या से क्या कह गई! तू अन्यथा मत लेना। मैंने तुमसे जो कुछ कहा है, उसे भूल जा। मैं आशीर्वाद देती हूं बेटी, कि तुम सुखी होओ। मेरी तकदीर के चलते मुझे जो कष्ट हुआ है, होने दो, मगर तुम्हें कोई···"

बात समाप्त होने के पहले ही दरवाजे का कॉलिंग बेल बज उठा।

गीता ने जैसे ही दरवाजा खोला, संदीप अन्दर आया। संदीप योगमाया को देखकर अवाक् हो गया। बोला, "यह क्या, आपको क्या हुआ मौसीजी? आपकी तबीयत खराब है क्या? आंख-मुंह सूजा हुआ जैसे क्यों दिख रहा है?"

विशाखा बोली, "मां मुझसे झगड़ रही थी।"

"झगड़ रही थी? क्यों? तुमने क्या किया था?"

"यह बात तुम मां से ही पूछो।"

योगमाया बोल पड़ी, "आज तुम लोगों के मकान की दादी मां का पोता आया था।"

"कौन? सौम्य बाबू?"

योगमाया बोली, "हां, आज उसके साथ तुम्हारा एक दोस्त गोपाल भी आया था।"

संदीप चौंक उठा। उसे जैसे यकीन ही नहीं हो रहा है। बोला, "कौन? गोपाल? गोपाल हाजरा? हम लोगों के सौम्य बाबू को अपने साथ लेकर आया था? उसके बाद? उसके बाद क्या हुआ?"

विशाखा बोली, "तुम लोगों के बड़े बाबू बड़े ही घमंडी हैं, चाहे तुम उनकी बड़ाई क्यों न करो।"

"क्यों, घमंडी क्यों?"

विशाखा बोली, "मैं क्या नन्हीं बच्ची हूं जो आदमी पहचानने में गलती कर बैठूं! तुम लोगों के घर की उस बुढ़िया का जो पोता है, उसने सोचा है कि वे लोग बड़े हैं तो हमें बिलकुल खरीद लिया है—"

"क्यों, क्या हुआ? मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है।"

योगमाया बोली, "तुम उसकी बात पर ध्यान मत दो बेटा। बहुत सारी लड़कियां देखी हैं मगर मैंने ऐसी लड़की नहीं देखी है।"

तो भी संदीप कुछ समझ नहीं सका। बोला, "बताइए न, उसने क्या किया है?"

योगमाया बोली, "देखो, वे लोग अचानक आ धमके। उस समय तो मुझे ऐसा लगा जैसे सिर पर बिजली गिर पड़ी हो। उन लोगों से कितनी ही बार कहा, लेकिन बोले कि खाना खाकर आए हैं। उसके बाद विशाखा स्कूल से आ गई—"

"उसके बाद ?"

"मैंने अपनी लड़की से सिर्फ इतना ही कहा था कि उसे प्रणाम करो। दो दिन बाद ही जिससे शादी होनेवाली है, उसे प्रणाम करने की बात कहकर मैंने कौन-सी गलती की है, तुम्हीं बताओ।"

संदीप ने कहा, "आप इसे गलती क्यों कह रही हैं ? आपने तो ठीक ही कहा था। बहरहाल, अब बताइए, दामाद कैसा लगा ? आपको पसन्द आया तो ?"

योगमाया बोली, "मेरी पसन्दगी या नापसन्दगी का सवाल पैदा ही नहीं होता बेटा। मेरी लड़की को दया कर वे अपने घर जो ले जा रहे हैं, यही तो ऐसा लग रहा है कि मेरे हाथ में जैसे स्वर्ग आ गया हो। लेकिन मेरी विशाखा उन्हें कैसी लगी, मुझे यही जानने की इच्छा हो रही है बेटा।"

"वे लोग कुछ कह गए ?"

"नहीं।"

संदीप ने कहा, "और गोपाल ? गोपाल कुछ नहीं बोला था ?"

योगमाया ने कहा, "गोपाल तो तुम्हारा ही दोस्त है। तुम्हीं एक बार गोपाल से पूछकर पता लगाओ कि मेरे दामाद को विशाखा कैसी लगी।"

संदीप ने कहा, "ठीक है, मैं यथाशीघ्र गोपाल से मिलूंगा और पता लगाने की कोशिश करूंगा।"

"हां, ऐसा ही करो बेटा। मैं उस खबर का बेसब्री से इन्तजार करती रहूंगी।"

इसके बाद संदीप को और कोई काम नहीं था। और-और दिनों की अपेक्षा वह थोड़ी देर से आया है। मल्लिकजी के जरूरी काम से उसे एक बार बाजार भी जाना है।

बोला, "चलता हूं मौसीजी, कल फिर ठीक वक्त पर पहुंच जाऊंगा।"

सीढ़ियां उतरने के दौरान संदीप को बेड़ापोता की याद आ गई थी। बहुत दिनों से मां के पास से कोई पत्र नहीं आया है। पत्र भेजने में मां कभी इतनी देर नहीं करती है। हो सकता है, पत्र लिखनेवाला सही आदमी न मिल रहा हो। कई दिनों से उसे मां को देखने की तीव्र इच्छा हो रही थी। लेकिन कॉलेज में भले ही छुट्टी हो मगर मल्लिकजी के काम का तो कोई अन्त नहीं है। अब मल्लिकजी काफी उम्र के हो चुके हैं। अब पहले की नाईं दौड़-धूप नहीं कर पाते। इसीलिए दादी मां ने मल्लिकजी के कुछ कामों का भार संदीप पर थोप देने का आदेश दिया है।

"ऐ, सुनो।"

अचानक ऊपर से विशाखा के गले की आवाज सुनकर संदीप ठिठक कर खड़ा हो गया। ऊपर की ओर देखा। विशाखा रेलिंग से झुककर उसकी ओर निहार रही है।

संदीप ने पूछा, "मुझसे कुछ कहना है ?"

विशाखा दनादन सीढ़ियां उतर उसके सामने आई और बोली, "तुम भोंदूराम हो।"

यह कहकर वहां खड़ी नहीं रही। जिस तरह दनादन सीढ़िया उतरकर नीचे आई थी, उसी तरह सीढ़िया चढ़कर ऊपर चली गई और धड़ाम से दरवाजा बन्द कर दिया।

संदीप वहीं उसी सीढ़ी पर खड़े-खड़े आकाश-पाताल, विश्व-ब्रह्मांड के तमाम अचनों की तलाश करने लगा। विशाखा के इस अप्रत्याशित व्यवहार के रहस्य-जाल को वह किसी भी तरह भेद नहीं सका।

विशाखा की उस दिन की बातों ने उसे बहुत बार सोचने को विवश किया है, उसे घोर यातना दी है, बहुत सारी निद्राहीन रातों में उसे तोड़-मरोड़कर रख दिया है। लेकिन बहुत सोचते रहने पर भी संदीप को भावना का कोई कूल-किनारा नहीं मिला है।

विशाखा ने उसे इस तरह चोट क्या पहुंचाई? क्यों उसने आक्रामक रवैया अपनाया? उसने कौन-सा अपराध किया है?

यह बात बहुत बार विशाखा से पूछने की इच्छा हुई है उसे। लेकिन अन्ततः उस बात का उत्तर विशाखा की जबान से निकालने में असमर्थ रहा है।

विशाखा ने कहा था, "तुम कुछ बोल क्यों नहीं रहे हो?"

संदीप ने कहा था, "क्या बोलूं?"

विशाखा ने कहा था, "तुमने कहा था कि तुम्हें मुझसे कुछ कहना है।"

संदीप ने कहा था, "अभी तो मुझे याद नहीं आ रहा। मैंने कहा था क्या?"

विशाखा ने यह सुनकर हंसते हुए कहा था, "ऐसा भुलक्कड़ स्वभाव लेकर तुम वकालत कैसे करोगे?"

संदीप इस बात का उस दिन कोई जवाब नहीं दे सका था। आंखें झुकाकर घर लौट आया था। लेकिन मल्लिकजी की आंखों को धोखा नहीं दे सका था।

मल्लिकजी ने कहा था, "तुम्हें क्या हुआ है संदीप? कई दिनों से देख रहा हूं, तुम अनमने जैसा होकर कुछ सोचते रहते हो। मां के लिए तुम्हारा मन बेचैन है क्या?"

संदीप अपने मन की हालत की बात किससे कहे? कौन उसके मन की बात समझेगा? वह खुद भी तो अपने आपको समझ नहीं पाता है। वह खुद भी तो अपने आपको पहचान नहीं पाता है। वह पराए की दया पर जी रहा है, फिर उसके सुख-दुख की बात क्या! वह तो इस घर का नौकर है। ये लोग जिस दिन उसे घर से निकाल देंगे उसी दिन उसे यह सब छोड़कर चला जाना होगा। हो सकता है उसे फिर बेड़ापोता जाकर पराए के अन्न पर जीवन जीना पड़े। यहां इस घर में वह पराए के अन्न पर जीवन जी रहा है, वहां बेड़ापोता में भी उसे पराए के अन्न पर जीवन जीना होगा। उससे तो यहीं अच्छा है—बिडन स्ट्रीट का यह मकान।

चूंकि वह बिडन स्ट्रीट आया था इसीलिए उसे जीवन की यह जटिलता देखने

को मिली। यहां न आता तो वह विशाखा को देख पाता ! या इस तरह विशाखा से घनिष्ठ रूप से जुड़ पाता !

लेकिन विशाखा उसकी कौन है ?

दो-तीन दिन बाद संदीप पुन: रसेल स्ट्रीट के मकान में गया। शुरू में तनिक संकोच का अहसास हुआ था। इन दो दिनों की अनुपस्थिति की वह क्या कैफियत देगा, मुख्यत: इसी की चिंता थी।

यही वजह है कि मौसीजी के सवाल के जवाब में उसने कहा, "मेरी तबीयत कुछ खराब थी।"

"तबीयत खराब थी ? डॉक्टर से दिखाया था ?"

संदीप की तबीयत खराब होने की बात सुनकर मौसीजी के द्वारा बेचैनी जाहिर किए जाने पर उसे आश्चर्य हुआ था। उसकी मां के सिवा दुनिया में और कौन है जो उसकी तबीयत के बारे में इतनी दुश्चिन्ता प्रकट करे ?

संदीप ने कहा था, "ऐसी कोई बात नहीं, मामूली बीमारी थी। डॉक्टर बुलाने की ज़रूरत नहीं पड़ी।"

मौसीजी ने कहा था, "ज़रा सावधानी से रहा करो बेटा। तुम्हारी तबीयत खराब होगी तो हमारी देखभाल कौन करेगा ? तुम देखभाल करते हो, इसीलिए हम निश्चितता से रह पाती हैं। तुम्हारे भरोसे ही हम यहां पड़े हुए हैं।"

संदीप ने कहा, "मल्लिक चाचा ने पूछा है, दामाद आपको पसन्द आया ?"

मौसीजी डर गईं। बोलीं, "तुम्हारे मल्लिक चाचा को दामाद के आने की बात का कैसे पता चला ?"

"मैंने बताया है।"

मौसीजी बोलीं, "फिर तो तुम्हारी दादी मां को भी इस बात का पता चल गया होगा ?"

"नहीं-नहीं, उन्हें कैसे पता चलेगा ? वह तो गोपाल ही उन्हें अपने साथ ले आया था। गोपाल हम लोगों के बेड़ापोता का आदमी है। गोपाल सौम्य बाबू का भी दोस्त है। दामाद आपको पसन्द आया या नहीं, यह बताइए।"

मौसीजी बोलीं, "तुम पसन्द होने की बात कह रहे हो ? आकाश का चांद किसी के हाथ में आ जाए तो वह उसे नापसन्द कर सकता है भला ?"

संदीप यह सुनकर खुश हुआ। खुश होने पर भी मन के अन्दर एक कांटा बिंध गया। किस चीज़ का कांटा ? कांटा क्यों ? फिर क्या मौसीजी के द्वारा सौम्य बाबू को पसन्द करना संदीप के लिए नापसन्दगी का सवाल है ?

मौसीजी बोलीं, "इतना सुख ईश्वर करे मेरे भाग्य को बरदाश्त हो बेटा ! भगवान से मेरा गुहार करना, मेरा व्रत करना वगैरह सार्थक हो गया है। अब मेरी कोई चाह नहीं है।"

संदीप ने कहा, "ज़िंदगी में आपने किसी की हानि नहीं की है, आपका भला नहीं होगा तो किसका होगा ?"

सब ईश्वर की मर्ज़ी है। योगमाया को जीवन में बहुत दुख सहने पड़े हैं। वे दुख ऐसे हैं जिन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता। उन दुखों में सबसे दुर्वह था विशाखा के पिता की मृत्यु का आघात। सौभाग्य की बात है कि योगमाया के पिता

को यह दुख देख कर नहीं जाना पड़ा था, क्योंकि विशाखा के पिता की मृत्यु के पहले ही योगमाया के पिता की मृत्यु हो गई थी।

योगमाया बोली, "मेरी लड़की तुम्हारे सौम्य बाबू को पसन्द आई या नहीं, इसके बारे में कुछ पता चला ?"

संदीप ने कहा, "यह बात मैं सौम्य बाबू से सीधे नहीं पूछ सकता हूं।"

योगमाया बोली, "बात तो सही है। तुम सीधे पूछोगे तो दूसरों के कान में यह बात पहुंच जाएगी। ऐसा होना ठीक नहीं रहेगा। इसके अलावा…"

संदीप ने पूछा, "इसके अलावा क्या ?"

योगमाया बोली, "देखो बेटा, शुभ काम में अड़गा लगानेवालों की कोई कमी नहीं है। मेरे देवर को तो तुम पहचानते हो। पराए शत्रु से घर का शत्रु ज्यादा खतरनाक होता है।"

संदीप ने कहा, "मुझे सब कुछ मालूम है मासीजी। आपको और कहने की जरूरत नहीं। उन्होंने मुझसे कितनी ही बार बिजली के विवाह के लिए पात्र ढूंढ़ देने का आग्रह किया है।"

योगमाया बोली, "रहने दो बेटा, उन पुरानी बातों को दोहराने से फायदा ही क्या ! मैं तो भगवान से यही कहती हूं कि हे भगवान, तुम सभी का मंगल करो, सभी का अभाव दूर कर दो—सभी की भलाई ही में मेरी भलाई है।"

संदीप बोला, "आप चूंकि भली हैं इसीलिए सबका भला चाहती हैं। लेकिन दुनिया में सभी लोग आप जैसे नहीं हैं। मेरी मां भी आपकी ही जैसी हैं।"

योगमाया बोली, "अपनी मां को एक बार ले आओ। मैं उनसे मिलना चाहती हूं।"

संदीप बोला, "मौसीजी, हम लोगों के बेड़ापोता में मां जिस चटर्जी भवन में रसोई पकाने का काम करती हैं, वहां ढेर सारी किताबें हैं। वहां एक पुस्तक में मैंने एक बात पढ़ी थी। वह यह कि जब तक आदमी में दुख अनुभव करने की क्षमता रहेगी, तब तक उसमें सुख अनुभव करने की भी क्षमता रहेगी। यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी थी और यही वजह है कि अब भी याद है। आपको देखकर मुझे उस बात की याद आ गई।"

योगमाया बोली, "मैंने लिखने-पढ़ने की कोई खास तालीम नहीं ली है बेटा। मैं मन ही मन जो ठीक समझती हूं, वही करती हूं।"

उसके बाद जरा रुककर पूछा, "उस मकान का क्या हाल-चाल है बेटा ? सब लोग मजे में है न ? तुम्हारी दादी मां ?"

संदीप ने कहा, "आपके घर से तो वहीं जाऊंगा। वहां जाकर दादी मां के सामने सारा ब्यौरा प्रस्तुत करूंगा। यहां आपसे जो-जो बातें हुईं, सारा कुछ बताऊंगा। विशाखा कैसी है, उसकी लिखाई-पढ़ाई कैसी चल रही है, इसका ब्यौरा भी उनके सामने प्रस्तुत करना होगा। हर हफ्ते डॉक्टर ने उसे देखकर क्या रिपोर्ट दी है, यह भी बताना है। और अभी जो विशाखा परीक्षा दे रही है, उसका फलाफल भी उन्हें बताना होगा। हर रोज यह सब खबर उनके पास पहुंचाने के बाद ही मुझे छुट्टी मिलती है।"

योगमाया को इसकी जानकारी है। संदीप बोला, "दादी मां को आज और

क्या कहना है, बताइए।"

योगमाया बोली, "कहने लायक कोई नई बात मुझे याद नहीं आ रही। कल भी तुम आ रहे हो। अगर किसी नई बात की याद आएगी तो तुम्हें बताऊंगी।"

उसके बाद बोली, "हां, एक बात तुम्हें कहे देती हूं बेटा। मेरा दामाद जो इस घर में आया था, इसकी जानकारी तुम्हारी दादी मां को नहीं होनी चाहिए। मल्लिक चाचा से भी कह देना कि वे न बताएं।"

संदीप बोला, "आप इतना डर क्यों रही हैं मौसीजी? सौम्य बाबू से विशाखा की शादी होगी ही।"

योगमाया बोली, "पता नहीं बेटा, मुझे क्यों इतना डर लगता रहता है। मेरा भाग्य खोटा है न। जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती है तब तक मुझे आराम नहीं मिलेगा··"

बातचीत के दौरान ही विशाखा ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया।

संदीप और योगमाया दोनों जने उसे देखकर अवाक् हो गए। योगमाया बोली, "इतनी जल्दी छुट्टी हो गई?"

संदीप ने पूछा, "आज इतने पहले क्यों चली आई?"

विशाखा ने कहा, "आज तुम लोगों के सौम्य बाबू पर नज़र पड़ी।"

"सौम्य बाबू? हम लोगों के बिडन स्ट्रीट के सौम्य बाबू पर? उन्हें कहां देखा?"

"स्कूल से निकल रही थी तभी···"

उसके बाद योगमाया से बोली, "मुझे बड़ी भूख लगी है मां, खाना दो।"

योगमाया उठकर खड़ी हो गई। बोली, "दे रही हूं बाबा। ज़रा पंखे के नीचे बैठकर आराम कर लो, कपड़े-लत्ते बदल लो, तब न खाओगी।"

विशाखा बोली, "कौन-सी साड़ी पहननी है, यह बताओगी नहीं?"

योगमाया बोली, "इतनी बड़ी हो गई हो! कौन-सी साड़ी पहनोगी, यह भी मुझे ही बताना होगा? ऐसी लड़की से तो मैं परेशान हो गई हूं!"

यह कहकर उठ रही थी, लेकिन उसके पहले ही अपने कमरे के अन्दर जाकर विशाखा ने साड़ी बदलने के ख्याल से सिटकनी बंद कर दी।

संदीप ने कहा, "सुना न मौसीजी, विशाखा ने क्या कहा?"

"क्या कहा?"

"आपने विशाखा की बात नहीं सुनी? उस मकान के छोटे बाबू से विशाखा की आज मुलाकात हुई थी—"

योगमाया मानो आकाश से नीचे गिर पड़ी हो। बोली, "यह क्या? मेरे दामाद से? विशाखा की मुलाकात हुई थी? कहां? कब?"

संदीप ने कहा, "आपने नहीं सुना? विशाखा ने घर आते ही यह बात बताई थी।"

योगमाया बोली, "लगता है, इतने सारे झमेलों के बीच रहते-रहते मैं बहरी हो गई हूं। लेकिन मुलाकात कहां हुई थी?"

इस बीच शैल विशाखा का खाना ले आई है। यह नाश्ता है। भात खाने का दौर बाद में चलेगा। खाना रखकर शैल अपने काम से रसोईघर की ओर चली गई।

संदीप ने स्वीकार करते हुए बताया कि चूंकि विशाखा पसन्द आ गई है, इसीलिए सौम्य बाबू स्कूल गए थे।

योगमाया ने अपनी लड़की से पूछा, "तेरी बात सुनकर दामाद क्या बोला ?"

विशाखा ने कहा, "बोलेगा क्या ! मैं क्या इतनी सस्ती हूं कि तुम्हारा दामाद जो कहेगा, वही करूंगी ? अभी क्या हमारी शादी हुई है कि उसकी बात पर उठूंगी-बैठूंगी ?"

योगमाया बोली, "अरी, इतना अहंकार ठीक नहीं है, हां, ठीक नहीं है। औरतों के लिए इतना अहंकार ठीक नहीं है। उतना बड़ा लंकेश्वर रावण था, मगर अहंकार के कारण उसे अन्त में कष्ट से प्राण त्यागना पड़ा। और यह जो तू इस घर में बैठी है वह भी तो मेरे दामाद का ही है। वह जो तू जिस गाड़ी में बैठकर रोज़ स्कूल जाती है वह भी तो मेरे दामाद का ही है। यह जो तुझे दूध पीने और सन्देश खाने को मिल रहा है, यह सब तो दामाद के पैसे से ही खरीदा गया है।"

संदीप की ओर देखकर योगमाया बोली, "तुम्हारा क्या कहना है बेटा ? मैंने क्या कोई गलत कहा है ? तुम कुछ क्यों नहीं बोल रहे हो ?"

संदीप इस बात का क्या उत्तर दे ! योगमाया के इतने सपनों, आशाओं और इच्छाओं पर वह कैसे अंकुश लगाए ?

तब तक विशाखा खा चुकी थी। वह उठने जा रही थी। योगमाया बोली, "क्यों, तू कुछ बोल क्यों नहीं रही है ?"

विशाखा ने कहा, "मैं क्या बोलूं ?"

योगमाया बोली, "हां या नहीं, कुछ तो कहना ही चाहिए। कल अगर दामाद फिर तुम लोगों के स्कूल में आए और तुझसे घूमने के लिए जाने को कहे तो ऐसी हालत में तू क्या कहेगी ?"

विशाखा बोली, "सो कल की बात कल सोची जाएगी। आज इस पर सोचकर माथा क्यों खपाऊं ?"

"बाप रे ! सुन लो मेरी बिटिया रानी की बात ! सुना बेटा, तुमने सुना ? मेरी लड़की की बात सुनी ?"

संदीप ने किसी बात का उत्तर नहीं दिया।

योगमाया बोली, "मैं लड़की के बारे में सोचते-सोचते मरी जा रही हूं और वह कहती है, कल की बात कल सोचूंगी। सुनो, मेरी लाड़ली बेटी की बात !"

संदीप को देर हो रही थी।

बोला, "मैं अब चलता हूं मौसीजी।"

योगमाया बोली, "अभी तुम्हें यहां से जाकर दादी मां से मिलना है और यहां की सारी बातें बतानी हैं—"

संदीप बोला, "सो तो मुझे हर रोज़ कहना पड़ता है। न कहने से दादी मां विदु को बुलाने भेजेंगी।"

"आज की इस बात की भी चर्चा करोगे ? विशाखा के स्कूल जाकर तुम्हारे सौम्य बाबू का उससे भेंट करने की बात का उल्लेख करना क्या उचित होगा ? इस

उसके बाद की हालत संदीप ने अपनी आंखों से देखी थी। और अब कलकत्ता आकर देवीपद मुखर्जी भवन का खंडहर अपनी आंखों से देख रहा है।

हर आदमी के अन्दर एक मन होता है जिसे कोई देख नहीं पाता। उसी तरह आदमी के अन्दर और एक वस्तु होती है और वह है कंकाल। उसे भी कोई देख नहीं पाता।

लेकिन कोई-कोई ऐसा होता है जिसकी दृष्टि वहां तक पहुंच जाती है। उदाहरण के लिए, चिंतामणि की बात पर बिल्वमंगल ने देखा था। जिस दिन उसने पहले-पहल देखा था, उसी दिन बोल उठा था—

यह नरदेह
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है
यह नारी, उसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में—

याद है, दादी मां ने उस दिन जब देखा कि उनकी यह साध की गृहस्थी चरमराकर धराशायी होकर बर्बाद हो गई तो उसी समय महसूस किया कि इस दुनिया में माया के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उस समय उन्होंने भी ठाकुर बिल्वमंगल की तरह मन ही मन कहा था—

यह नरदेह
नोच नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है
यह नारी, उसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में—

लेकिन अंत देखने के पहले उन्हें क्यों ये बातें याद नहीं आई थीं? यह साधारण-सी बात याद आने में इतनी देर क्यों हुई थी? पहले जब वे हर दिन सवेरे-सवेरे बिन्दु को अपने साथ ले गंगा नहाने जाती थीं, उस समय इस 'नरदेह' की उन्हें याद क्यों नहीं आई थी?

शायद इसका एकमात्र कारण यह है कि सभी इस विश्व में वर्तमान में ही वास करते हैं। एकमात्र वे ही भविष्य में वास करते हैं जिनके पास दूरदृष्टि होती है। इसलिए जब यह बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट की इमारत मरुभूमि जैसा असहनीय हो उठा तो वे चिल्लाकर गाली-गलौज करने लगीं। कहने लगीं, "दूर हो जाओ, सभी मेरे सामने से दूर हो जाओ—"

वह कितना बेधक दृश्य था! दादी मां तब और उम्रदार हो चुकी थीं, पूरा मन और शरीर बिलकुल नाकाम हो चुका था लेकिन रौब-दाब में कोई कमी नहीं आई थी। अपनी आंखों से वे पति की मृत्यु देख चुकी हैं, लड़के और उसकी पत्नी की मृत्यु देख चुकी हैं। छोटा लड़का बहुत पहले से ही अलग रहने लगा था। वह लड़का भी पंगु हो चुका था, लेकिन दादी मां के रौब-दाब में कोई कमी नहीं आई थी।

जो दाई-नौकर, अतिथि-अभ्यागत एक दिन दादी मां को दो मीठी बातें सुनाए बगैर जल-ग्रहण तक नहीं करते थे उन्हीं में अब बदलाव आ गया था। आंखों की

ओट में वे कहने लगे थे—"कब तक यह मनहूस बुढ़िया जिन्दा रहेगी !"

लेकिन ऐसा क्यों हुआ ?

ऐसा क्यों हुआ, इसे जानने के लिए बहुत दिनों तक इंतजार करना होगा। हां, शुरुआत कैसे हुई इसका ब्योरा यहां प्रस्तुत किया जा सकता है।

ऐसा होगा, इसकी कल्पना किसी ने पहले से नहीं की थी। बैशाख का आंधी-पानी आता है तो वह क्या कभी पहले से सूचना देकर आता है ?

यह भी वैसी ही बात है।

जब टेलीफोन आया तो सभी नींद में मशगूल थे। मुक्तिपद उस दिन जरा देर से आए थे। आमतौर पर उसे देर नहीं हुआ करती है। डॉक्टर ने उन्हें देर तक सोने से मना किया था। मगर फैक्टरी का काम मुक्तिपद न देखेंगे तो और कौन देखेगा ?

"सर, मैं नागराजन बोल रहा हूं।"

"क्या बात है ? इतनी रात में ?"

"सर, लंदन ऑफिस से टेलेक्स आया था—"

"टेलेक्स ? क्यों ?"

"सर, मिस्टर मेठा चल बसे—कमललाल मेठा।"

कुछ देर तक चुप्पी। किसी तरफ से कोई भी शब्द नहीं। दोनों के मुंह में जैसे ताला जड़ दिया गया हो।

मुक्तिपद को लगा, उनका डायास्टोलिक प्रेशर जैसे एकाएक बढ़ गया हो। पूरे जिस्म की शिराएं मानो खट-खट आवाज कर रही हों। वही खराब लक्षण ! इतने परिश्रम के बाद रात की नींद में व्याघात पहुंचता है तो ऐसा ही होता है।

लेकिन इसमें नागराजन का कोई दोष नहीं है। मैक्सवी मुखर्जी कंपनी की फैक्टरी चाहे दिन हो या रात कभी बंद करने का नियम नहीं है। वहां तीन शिफ्ट काम चलते रहते हैं। वहां चीफ इंजीनियर है, उसका डिप्टी है। वहां रात-दिन अलग-अलग नामक चीज नहीं है। यह खबर पहले वहीं पहुंची थी। वहां से मिस्टर नागराजन को सूचित किया गया था। मिस्टर नागराजन को हिदायत दी गई थी, अगर वैसा कोई एस० ओ, एस-मैसेज हो तो मैनेजिंग डाइरेक्टर को सूचित करने में किसी तरह की दुविधा महसूस न करें—चाहे वह दिन का वक्त हो या आधी रात का।

कमललाल बहुत ही प्रतिभाशाली व्यक्ति था। लेकिन बड़े ही शांत स्वभाव का। कुल मिलाकर पांच साल पहले उसने शादी की थी। पहले लंदन ऑफिस बदनाम था। हमेशा लायबेलिटी का बोलबाला रहता था। लाभ की बात तो दूर, हमेशा नुकसान ही उठाना पड़ता था। उसके बाद मेठा ने जब से चार्ज लिया तो फायदा ही होता रहा। मुक्तिपद जब कभी लंदन जाते तो देखते कमललाल जी-तोड़ परिश्रम कर रहा है।

मुक्तिपद ने एक बार कहा था, "कमललाल, तुम कभी छुट्टी पर नहीं जाते ?"

कमललाल ने कहा था, "रेस्ट ?"

"हां।"

"रेस्ट क्यों लूंगा सर?" कमललाल ने कहा था, "काम ही तो मेरा रेस्ट है—चुपचाप बैठे रहने से ही मेरी सेहत बिगड़ जाती है। काम करने से ही मैं फिट रहता हूं।"

अजीब बात! सभी अगर कमललाल जैसे होते तो भारत के लिए दुश्चिन्ता की कोई बात न थी। मुक्तिपद देखता, उसके दफ्तर में सभी लोग देर से पहुंचते। कितना कम काम कर जितना अधिक पैसा कमाया जाए, उसी ओर सबका ध्यान था। कभी-कभी लगता, कमललाल को अगर कलकत्ता के दफ्तर में लाकर बिठाया जाए तो शायद कुछ काम हो। लेकिन ऐसी हालत में लंदन के ऑफिस के काम-काज की देख-रेख कौन करेगा?

कभी-कभी मुक्तिपद सोचते, उनका स्वास्थ्य यदि कमल लाल जैसा रहता तो बड़ा ही अच्छा होता। ऐसा स्वास्थ्य जो लाख परिश्रम क्यों न किया जाए, मगर खराब नहीं हो। ब्लड प्रेशर, कॉलेस्टोरल या शूगर की बीमारी नहीं होगी। चौबीस घंटा खटते रहने पर भी नींद नहीं आएगी। काश, ऐसा होता तो मुक्तिपद कंपनी को पहले की तरह ही खड़ी कर देते!

"सर, आपको मेरी बात सुनाई पड़ रही है?"

मुक्तिपद बोले, "हां, सोच रहा हूं···"

"अन्यथा नहीं लीजिएगा सर, आपकी नींद तोड़कर यह सूचना दी।"

मुक्तिपद बोले, "नहीं-नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। अब मुझे क्या करना है? मिसेज मेठा को रिंग करूं?"

"मेरी समझ में रिंग न करना ही अच्छा रहेगा।"

"क्यों?"

"जो कुछ करना है कल सलाह-मशविरा करने के बाद करेंगे। आप अब सोने जाइए सर, मैं रिसीवर रख रहा हूं।"

"नहीं नागराजन, अब मुझे नींद नहीं आएगी। मैं सिर्फ एक बात सोच रहा हूं, जिसका हेल्थ इतना अच्छा था, जो आदमी उतना परिश्रम कर सकता था, उसे अचानक इस तरह का दिल का दौरा क्यों पड़ा। क्या हुआ था?"

"इसकी सूचना नहीं मिली है। मैंने ऐसा एक केस देखा था। चौदह साल का एक लड़का दिल का दौरा पड़ने से मर गया था।"

"यह क्या?"

नागराजन ने कहा, "आपने ही तो सर एक दिन कहा था—लाइफ इज बट एन एम्प्टी ड्रिम*···बहरहाल, मैं लाइन काट रहा हूं। आप सो रहिए।"

तब तक नंदिता की भी नींद टूट गई थी। बोली, "किसकी मृत्यु हो गई?"

मुक्तिपद ने कहा, "हमारे लंदन ऑफिस के चीफ कमललाल मेठा की। बेचारा मात्र पैंतीस साल का था। पत्नी है और एक बच्चा।"

उसके बाद जरा सोचकर मुक्तिपद बोले, "अब मुझे नींद आ रही है, बड़-बड़ मत करो। तुम भी सो रहो।"

नन्दिता करवट लेकर लेट गई।

---

* जीवन महज एक सपना है।

मुक्तिपद इसके बाद कुछ नहीं बोले। नंदिता यह सबकुछ समझ नहीं पाएगी। वह फिर से पहले की ही तरह नींद में मशगूल हो जाएगी। सच, वे लोग मजे में हैं। हां, सभी मजे में हैं। किसी को कोई दुश्चिन्ता नहीं। सभी आराम से सो रहे हैं। सिर्फ कोई-कोई ऐसा आदमी है जो सो नहीं पाता। कोई-कोई आदमी पेड़ में फूल खिलने के शब्द के इंतजार में जगकर बैठा रहता है, आसमान से एक सितारे के छिटककर गिरने की उम्मीद में सारी रात आंखें खोले बैठा रहता है। ऐसा भी पागल है जो लहर कब थमेगी, इसे देखने की उम्मीद में समुद्र के किनारे बैठकर जीवन बिता देता है। धरती के चारों तरफ सूर्य घूम रहा है या सूर्य के चारों तरफ धरती घूम रही है, यह देखने के लिए ऐसे लोग जिन्दगी गुजार देते हैं। सभी इस किस्म के लोगों को पागल ही कहते हैं।

इस दुनिया में ऐसे लोगों के साथ ही नंदिता जैसे लोग भी हैं। तो फिर यह धरती किनके लिए घूमती है? उन पागलों के लिए या नंदिता जैसे लोगों के लिए। घूमती है उन पागलों के लिए ही। वे पागल ही हमेशा इस दुनिया को सामने की तरफ बढ़ाकर ले जा रहे हैं।

सवेरे नींद टूटने पर नंदिता बोली, "तुम्हारा चेहरा इस तरह बुझा-बुझा जैसा क्यों लग रहा है? क्या हुआ?"

मुक्तिपद बोले, "कल सारी रात मैं सो नहीं सका।"

"सोओगे कैसे? आधी रात तक जगकर ऑफिस का काम करोगे तो तबीयत खराब होगी ही। तुम्हारे अफसर इतने पाजी हैं, उन्हें हटा नहीं सकते? जब-तब टेलीफोन क्यों करते हैं? अगर कोई मर जाता है तो उसके लिए हमें परेशान होना होगा? कहीं किसी की मौत हो जाने से हमारी दुनिया क्या अचल हो जाएगी?"

मुक्तिपद इन बातों का क्या उत्तर दें! वह नहीं जानती कि सभी के मंगल में ही उन लोगों का मंगल निहित है। अपने स्वार्थ के लिए ही हमें कमललाल जैसे लोगों को जिन्दा रखना है।

उसके बाद सवेरे से कितने ही फोन आते रहे। एक के बाद दूसरा। सभी की जबान पर सहानुभूति के शब्द हैं। जैसे कमललाल की मृत्यु के कारण सभी शोकाकुल हैं। अचानक सभी लोग जैसे अत्यंत उदार, दयालु और परोपकारी हो उठे हैं। रातों-रात सभी चरित्रवान साधु और स्वार्थहीन आदमी बन गए हैं।

और-और दिनों के बनिस्बत उस दिन मुक्तिपद जरा पहले ही ऑफिस पहुंच गए। पहुंचते ही नागराजन के साथ बंद कमरे में सलाह-मशविरा करने लगे। दुनिया में जो भी बड़े-बड़े निर्णय लिए गए हैं वे बंद दरवाजे के अंदर ही। जापान पर एटम बम गिराने का निर्णय लिया गया तो वह भी बंद दरवाजे के अंदर ही। चर्चिल, ट्रूमैन और स्टालिन, इन तीनों व्यक्तियों ने बंद दरवाजेवाले कमरे में यह निर्णय लिया था। निर्णय लिया गया कि 1945 ई० के 5 अगस्त, रविवार के सवेरे हिरोशिमा पर बम बरसाया जाएगा।*

---

* हिरोशिमा पर बड़े बम का वर्षण, अगस्त पांच, सात बजकर पंद्रह मिनट शाम को, वाशिंगटन समय के अनुसार। पहली रिपोर्ट से पता चलता है पूरी सफलता मिली।

दूसरे ही दिन हुआ। नियमानुसार तीन-मंजिले पर दादी मां के कमरे में जाने पर उसे बिंदु ने बताया, आज दादी मां के पास वक्त नहीं है, उनकी तबीयत खराब है। आज दादी मां उसके मुंह से रसेल स्ट्रीट का ब्योरा नहीं सुनेंगी।

"तो फिर कल आऊं?"

बिन्दु ने कहा, "हां।"

यह कहकर वह अपने काम पर चली गई।

इस तरह की घटना इसके पहले कभी घटित नहीं हुई थी। यह पहला मौका है। संदीप सोचकर इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सका कि लंदन ऑफिस के मिस्टर मेठा के मरने से इस घर की दादी मां या मल्लिक चाचा का मन या तबीयत खराब होने का कौन-सा तुक है! और सिर्फ दादी मां या मल्लिक चाचा का ही मन उदास नहीं हो गया है, बल्कि पूरे घर के माहौल में एक बदलाव जैसा आ गया है। उस दिन दादी मां सान्ध्य आरती के समय नीचे उतरी ही नहीं। दोपहर में मंझले बाबू एक बार इस घर में आए थे। आकर सीधे तीन-मंजिले पर दादी मां के पास चले गए थे। उसके बाद दरवाजा बन्द कर वे लोग बहुत देर तक बातचीत करते रहे थे। इतनी कौन-सी बातचीत चल रही थी? पहले मां से बातचीत करने के दौरान मंझले बाबू कभी इस तरह दरवाजा बन्द नहीं करते थे।

गिरिधारी तो बिलकुल मामूली आदमी है लेकिन उसके भी आश्चर्य की कोई सीमा न थी। संदीप पर नजर पड़ने पर पूछा था, "क्या हुआ है बाबूजी?"

संदीप ने कहा था, "मुझे क्योंकर मालूम होगा गिरिधारी कि क्या हुआ है। तुम तो पुराने आदमी हो, तुम्हें तो मुझसे अधिक जानकारी होनी चाहिए।"

"नहीं बाबूजी। हम तो साधारण आदमी हैं। बड़ी-बड़ी बातों का हमें कैसे पता चले?"

बात तो सच है। बड़े लोगों के घर की अन्दरूनी बातों का घर के नौकर-चाकर, महरी, दरबान वगैरह को कैसे पता चलेगा?

संदीप ने कहा, "सुनने में आया है, मालिक के लंदन-ऑफिस के बड़े साहब की मृत्यु हो गई है।"

फिर भी गिरिधारी की समझ में कुछ नहीं आया। चाहे कोई बाबू मरे या जिन्दा रहे, उससे न तो उसे कोई लाभ है और न ही कोई नुकसान। उन लोगों की नौकरी रह भी सकती है और न भी रह सकती है। वे लोग तो शादी के घर के कचरे में पड़े जूठे केले के पत्ते की तरह हैं। या तो आंधी उड़ा ले जाएगी या फिर गाय-बैल खाएंगे।

और सच कहा जाए तो संदीप भी उसी श्रेणी का है। वह भी तो इस घर का एक नगण्य, जूठन पर पलनेवाला प्राणी है। उसे ज तक के लिए पनाह मिली है तब तक ही वह यहां ठहर सकता है। वह अवधि समाप्त होते ही उसे भी एक दिन इस घर को छोड़ देना पड़ेगा।

लॉ कालेज में पढ़ने के दौरान एक नए युवक से उसकी दोस्ती हो गई। वह मध्यवित्त घर का गरीब लड़का था। दुख से भरी गृहस्थी के बारे में उसे जानकारी है। उसने खुद ही अपना नाम बताया—सुशील। सुशील सरकार।

अचानक एक दिन बातचीत के दौरान पूछा, "आप किस पार्टी के मेम्बर हैं?

कांग्रेस ?"

संदीप यह सवाल सुनकर भौंचक-सा रह गया। इस तरह का सवाल कोई कर सकता है, संदीप ने यह सपने में भी नहीं सोचा था। बोला, "मैं किसी पार्टी का मेम्बर नहीं हूं।"

"यह क्या ? आप किसी भी पार्टी के मेम्बर नहीं हैं ?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

सुशील बोला, "फिर आपको नौकरी कैसे मिलेगी ? आपको कोई नौकरी नहीं देगा।"

संदीप ने कहा, "क्यों ? पार्टी का मेम्बर हुए बगैर नौकरी नहीं मिलेगी ?"

सुशील ने कहा, "नहीं, आप शायद गांव के रहने वाले हैं, इसीलिए आपको मालूम नहीं है। आपका घर कहां है ?"

संदीप ने कहा, "बेड़ापोता में। यहां से तीन घंटे का रास्ता है।"

सुशील ने कहा, "आपकी शादी हो चुकी है ?"

संदीप ने कहा, "क्या कह रहे हैं आप ! मेरी खुद की कोई आमदनी नहीं, उस पर शादी ! शादी कर पत्नी को क्या खिलाऊंगा ?"

सुशील ने कहा, "आपने एम० ए० की पढ़ाई क्यों नहीं की ? प्राइवेट से भी एम० ए० पास किया जा सकता है। आजकल कारसपॉन्डेंस कालेज खुल गया है। महज़ सात-आठ सौ रुपये खर्च करने से एम० ए० की डिग्री मिल जाती है।"

संदीप हंसकर बोला, "मेरे पास उतने रुपये नहीं हैं, मैं गरीब आदमी हूं—रुपया कहां मिलेगा ?"

सुशील बोला, "एम० ए० पास कर स्कूल का मास्टर बनने के लिए भी तो आपको पार्टी का मेम्बर बनना पड़ेगा।"

"क्यों ?"

सुशील ने कहा, "आप यह नहीं जानते ? आजकल स्कूल की नौकरी में ही ज़्यादा फायदा होता है।"

संदीप को मालूम नहीं था। बोला, "कौन-सा फायदा ?"

"यह आप नहीं जानते ? साल में छह महीने की छुट्टी और नौकरी में घुसते ही लगभग एक हज़ार रुपया मासिक वेतन। लेकिन पार्टी की बैंकिंग होनी चाहिए।"

संदीप ने कहा, "मैंने तय किया है कि कोर्ट में प्रैक्टिस करूंगा, एडवोकेट बनूंगा।"

"वकील ? वकालत में पैसा नहीं है। आपको किसने यह सलाह दी ?"

संदीप ने कहा, "बेड़ापोता में मेरी मां जिनके घर में काम करती है, उनका नाम है काशीनाथ चाटुर्ज्या। वे हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करते हैं। शुरू में मैं उनका जूनियर होकर काम सीखूंगा।"

छुट्टी के बाद दोनों एक साथ सड़क पर निकले। सुशील ने पूछा, "आपको किधर जाना है ?"

"नार्थ की तरफ।"

सुशील बोला, "मैं साउथ की तरफ जाऊंगा। चलिए, एकाध सिगरेट चलकर पिएं।"

संदीप ने हैरत में आकर कहा, "आप सिगरेट पीते हैं ? सिगरेट पीना, सुना है, शरीर के लिए बड़ा ही हानिकारक होता है। पैकेट पर लिखा रहता है।"

सुशील बोला, "वैसा तो चारों तरफ कुछ न कुछ लिखा रहता है। यह सब मानकर चलें तो फिर हो गया।"

संदीप ने कहा, "नहीं ही पी तो हर्ज ही क्या है ? यह तो भात नहीं है कि बिना खाए काम नहीं चल सकता।"

सुशील बोला, "यदि आप यही कहना चाहते हैं तो बताइए कि इतनी बड़ी-बड़ी जो सिगरेट की कम्पनियां हैं, वे क्या दिवालियां हो गई हैं ? बड़े आराम से चल रही हैं, हज़ारों-लाखों आदमी उन कंपनियों में नौकरी करते हैं। उन्हें उन नौकरी से हटाया नहीं जा रहा है।"

यह कहकर एक सिगरेट संदीप की ओर बढ़ाते हुए बोला, "लीजिए, एक सिगरेट पीजिए। एक अदद सिगरेट पी लीजिएगा तो आपकी जात नहीं चली जाएगी। न तो आप पार्टी मेम्बर बनिएगा और न ही सिगरेट पीजिएगा। ऐसी हालत में जीने से फायदा ही क्या ?"

संदीप बोला, "नहीं ऐसी बात नहीं है। मां को मालूम हो जाएगा तो वह बिगड़ेगी। मेरे पिताजी नहीं हैं, मां के अलावा दुनिया में मेरा अपना कोई नहीं है। मां के सामने मैंने प्रतिज्ञा की थी कि कलकत्ता जाने पर मैं न तो बीड़ी पिऊंगा, न सिगरेट और न शराब।"

"ऐसा ? तो फिर इतने नियमों का पालन करते हुए आप वकालत कैसे कीजिएगा ?"

संदीप बोला, "यह तो बाद की बात है। पहले वकील बन लूं—"

एक सड़क के मोड़ पर आकर सुशील बस में बैठ गया और संदीप एक सड़क से पैदल चलता हुआ बिडन स्ट्रीट की तरफ बढ़ने लगा।

बहुत दिन पहले 1945 ई० के 17 जुलाई को जर्मनी के पॉट्सडॅम शहर के एक बन्द कमरे में *तीन इतिहास पुरुष ट्रूमैन, चर्चिल और स्टालिन ने मिलकर जो* निर्णय लिया था उसी के फलस्वरूप हिरोशिमा के सिर पर दुनिया के पहले अणु बम का विस्फोट हुआ था।

इसके कारण पूरी दुनिया में कितनी हलचल मच गई थी !

और चूंकि यह निर्णय लिया गया इसीलिए संदीप के जीवन में एक घोर संकट अप्रत्याशित रूप में उतर आया।

लेकिन यह सब बात अभी रहे। बन्द कमरे में दोनों जने जो बातचीत कर रहे थे, *वही यहां बता रहा हूं। इस घर के रसोइए की बहन बिन्दु ने उस दिन सारा* कुछ सुना था।

दादी मां की बात सुनते-सुनते मुक्तिपद की आवाज़ तब गंभीर हो गई थी। कहा था, "तुम्हारी वजह से ही सौम्य आज ऐसा हो गया है। तुमने इतना दुलार-प्यार कर उसका दिमाग खराब कर दिया है।"

दादी मां बोली, "तू तो सिर्फ मेरा ही दोष देखता है, ज़रा अपने बारे में सोच-

कर तो देख। तू भी क्या इंसान बन सका है ? तेरी पत्नी…"

मुक्तिपद ने टोकते हुए कहा, "देखो, अभी यह सब सुनने का वक्त मेरे पास नहीं है। मैं तुमसे जो कुछ कहने आया था वही कहता हूं—मैं चाहता हूं सौम्य कुछ दिनों के लिए लंदन जाए।"

दादी मां बोलीं, "वह क्यों जाएगा ? तू खुद क्यों नहीं चला जाता ?"

मुक्तिपद बोला, "तुम मुझसे जाने को कह रही हो ? मैं कैसे जाऊं, बताओ तो ? यहां मेरा अभी सालाना बजट तैयार हो रहा है, मैं इंडिया में न रहूंगा तो वह सब बर्बाद हो जाएगा। कब मेरी जरूरत पड़ जाए, इसका कोई ठिकाना है ? क्यों सौम्य अगर जाए तो इसमें कौन-सा दोष है ?"

दादी मां बोलीं, "वह अभी बच्चा है, अकेले विदेश कैसे जाएगा ?"

"क्या कह रही हो तुम ? उस उम्र में मैं क्या अकेले चक्कर नहीं लगाता था ?"

दादी मां बोलीं, "तुमने अपने बाबूजी और मेरे साथ चक्कर लगाया था। वह अकेले कैसे जाएगा ?"

मुक्तिपद बोले, "एक तो सौम्य कम्पनी का डाइरेक्टर हो चुका है, दूसरे, कमललाल का देहान्त हो गया है, इसलिए कम-से-कम एक डाइरेक्टर का जाना निहायत जरूरी हो गया है। इसके अलावा उसके यहां रहने से कोई फायदा नहीं है, वह तो आधे दिन तक ऑफिस ही नहीं आता।"

"यह क्या ! वह दफ्तर नहीं जाता है ?"

"नहीं। यह देखो, आज मैंने ऑफिस में उसकी तलाश की, नागराजन ने बताया, आज वह ऑफिस ही नहीं आया है।"

"ऑफिस नहीं गया है तो फिर कहां गया ?"

मुक्तिपद बोले, "यह वही जाने। इतनी उम्र हो चुकी लेकिन अब तक उसमें दायित्व-बोध नहीं आया है। यही वजह है कि मैं उसे ऑफिस के हर डिपार्टमेंट में घुमा-घुमाकर काम-काज सिखा रहा हूं। मुझे लगता है, लंदन ऑफिस जाने से वह बहुत काम सीख लेगा।"

दादी मां बोलीं, "ठीक है, तब जाए। लेकिन उसके पहले मैं उसकी शादी करा दूंगी।"

"शादी ?"

"हां, शादी। लड़की ठीक कर ही ली है। उसकी शादी कराए बगैर मैं उसे लंदन नहीं जाने दूंगी—"

मुक्तिपद बोले, "लेकिन उसमें तो बहुत वक्त लगेगा। शादी तो एक ही दिन में नहीं हो जाएगी। तब तक मेरा लंदन ऑफिस कैसे चलेगा ? मैं ज़्यादा दिनों तक उसकी शादी का इन्तजार नहीं कर पाऊंगा।"

दादी मां बोलीं, "मैं कहे देती हूं, उसकी शादी कराए बगैर मैं किसी भी हालत में उसे बाहर नहीं भेज सकती। उसकी शादी हो जाएगी और वह अपनी पत्नी के साथ विदेश जाएगा।"

"लेकिन तब तक मेरा काम कैसे चलेगा ? कहने से ही तो शादी नहीं हो जाएगी। और इस महीने तो शादी की कोई तिथि भी नहीं है। मेठा की मृत्यु हो

गई है, यहा क्या हो रहा है, इसका भी पता नहीं चल रहा है।"

दादी मां बोली, "राजा के मरने पर राज-पाट क्या नहीं चलता? तुम्हारे पिताजी के मरने से कंपनी क्या बन्द हो गई?"

मुक्तिपद बोले, "देखो, मैं तुमसे बहस करना नहीं चाहता। मैंने जो ठीक समझा, तुमसे कहा। अब तुम्हारी जो मर्जी हो वही करो।"

दादी मां बोली, "मेरा अन्तिम फैसला यही है कि सौम्य की शादी होने के बाद ही वह अपनी पत्नी के साथ लंदन जाएगा। उसके पहले नहीं।"

उसके बाद दादी मां बोलीं, "हां, इतना जरूर है कि मैं मेमसाहब रखकर बहूरानी को अंग्रेजी की तालीम दिलवा रही हूं, संगीत और लिखाई-पढ़ाई की शिक्षा दिला रही हूं। यह सब क्यों कर रही हूं? इसलिए कि सौम्य के साथ विलायत जाने पर बहूरानी को मुश्किलों का सामना न करना पड़े।"

मुक्तिपद बोले, "तो फिर यही करो। जो कुछ करना है जल्द-से-जल्द करो। देर नहीं होनी चाहिए।"

दादी मां बोली, "ठीक है, मैं गुरुदेव के पास काशी खबर भेज रही हूं, वे जो कहेंगे, वही होगा।"

इसके बाद से ही गड़बड़ी की शुरुआत हुई।

एक मामूली अफसर के आकस्मिक देहावसान से एक प्रतिष्ठान की बुनियाद लड़खड़ाने लगेगी, इसका प्रमाण सैवसबी मुखर्जी कंपनी के लिए यह पहला नहीं है। इसके पहले भी बहुत बार ऐसा हो चुका है। 1914 ई० का प्रथम महायुद्ध का कारण भी तो ऐसी ही साधारण घटना थी। उसके बाद 1939 ई० में?

1939 ई० में युद्ध शुरू होने के एक साल बाद इसी तरह की एक साधारण घटना हॉलैण्ड में घटित हुई थी।

तब जर्मनी हॉलैंड पर आक्रमण कर चुका था। हॉलैंड गरीब मुल्क है। उस मुल्क ने कभी कल्पना तक न की थी कि उसका पड़ोसी देश उस पर आक्रमण करेगा।

आदमी का सबसे बड़ा दुश्मन कौन है? उसका दुश्मन, लोभ, विलासिता, पाप या मनमानापन नहीं है। ये सब आदमी के दुश्मन नहीं हैं। आदमी का सबसे बड़ा दुश्मन आदमी ही है। जर्मन ने अपने आपके प्रति जितनी दुश्मनी की है उतनी दुश्मनी रूस, अमरीका या फ्रांस ने उससे नहीं की है।

हॉलैंड के सेनाध्यक्ष ने तुरन्त एक मीटिंग बुलाई। सभी मिलिटरी ऑफिसर उस मीटिंग में आए।

एक जेनरल ने कहा, "जर्मनी जैसे बड़े शत्रु का मुकाबला करने की ताकत हममें कहां है?" एक-दूसरे जेनरल ने कहा, "मेरी तो यही राय है कि जितनी जल्द हो सके जर्मनी से सन्धि कर लेनी चाहिए।"

तब चर्चा-परिचर्चा में बहुत समय नष्ट हो रहा था। उतना सोचने का वक्त नहीं था उनके पास। सेनाध्यक्ष ने कहा, "कोई अपना प्राण निछावर करने को तैयार नहीं है?"

बहुत देर तक निस्तब्धता छाई रही। उसके वाद एक जेनरल ने कहा, "मैं अपना प्राण न्योछावर करने को तैयार हूं।"

"लेकिन आप लोग? आप लोग क्या प्राण निछावर करने को तैयार नहीं हैं?"

उसके वाद वहां जितने जेनरल मौजूद थे, उन्होंने कहा, "हम लोग प्राण निछावर करने को तैयार हैं। हम देश के लिए मर मिटेंगे।"

तब हॉलैण्ड देशवासी घर-द्वार छोड़कर भाग रहे थे। चारों तरफ एक ठहराव जैसी हालत आ गई थी। सड़क पर वस या जन-वाहन नहीं था। चारों तरफ बेचैनी का एक माहौल था।

उस संकट की घड़ी में देश पर एक और संकट आ गया। अचानक एक ही क्षण में देश की तमाम वत्तियां गुल हो गईं। पूरे मुल्क में विजली की आपूर्ति वंद हो गई। बिजली का बन्द होने का मतलब है सब-कुछ का वंद हो जाना। यानी रोशनी नहीं है और उसके साथ पंखे का चलना और जल की आपूर्ति भी बन्द हो गई है। अस्पताल, दफ्तर, कारखाने, फौजी छावनी सभी अचल अवस्था में पड़ गए।

ऐसी हालत क्यों हुई? किसने किया? यह भी क्या जर्मनी का एक भितर-घात हमला है? फिर क्या देश के अन्दर कोई कुइसलिंग है? कोई विभीषण है?

यदि इस तरह के लोग हैं तो उन्हें खोज कर निकालो और सजा दो। उन्हें फांसी के फंदे पर लटका दो।

लेकिन वैसे लोगों का पता नहीं चल सका। देश के अन्दर तलाशी का काम चलने लगा। महारानी के देश का यह भितरघात कोई बरदाश्त नहीं करेगा। यदि अपराधी नहीं पकड़ा जाता है तो पावर हाउस को मरम्मत करने का वन्दोवस्त करो। क्योंकि हमें रोशनी चाहिए, हवा चाहिए, पानी चाहिए। हम ज़िंदा रहना चाहते हैं। हम जर्मनी का मुकावला करना चाहते हैं।

"उसके वाद? उसके बाद क्या हुआ?"

याद है, वहुत दिन पहले वेड़ापोता में एक दिन संदीप काशीवावू से यह कहानी सुन रहा था। काशीनाथ वावू को चुप होते ही संदीप ने पूछा था, "उसके वाद? उसके बाद क्या हुआ?"

काशीनाथ वावू ने कहा था, ये वारदातें ही इतिहास की सीख हैं। इस इतिहास से जो आदमी सबक नहीं लेता है लोग उसे ही अनपढ़ कहते हैं। वह चाहे बी० ए० डी-लिट् पदवीधारी क्यों न हो, लेकिन अशिक्षित है। यही वजह है कि जर्मनी के एक कवि कह गए हैं—It is from history we learn that we do not learn from history.*

संदीप तव हॉलैण्ड की घटना सुनने के लिए उतावला हो गया था।

"उसके वाद क्या हुआ? रोशनी आई?"

काशीनाथ वावू वोले, "यह भी एक अजीब कहानी है। जब कहीं किसी अपराधी का अता-पता न चला तो सहसा मालूम हुआ कि गलती कहां है।"

---

* इतिहास पढ़कर भी हम उससे कोई सबक नहीं लेते।

संदीप ने पूछा, "गलती कहां थी ?"

"गलती बिलकुल साधारण-सी थी। देखने को मिला कि पावर हाउस का एक स्क्रू ढीला हो गया है।"

"एक स्क्रू ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा, "हां, वह एक मामूली चीज थी। वह मामूली चीज ही देश को विनाश के कगार पर ले आई थी। यह जो हम लोगों का भारत है, हमारे इस भारत की जो यह बदतर हालत है, इसके पीछे भी एक साधारण कारण है।"

संदीप ने पूछा था, "वह कारण क्या है ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "चरित्र।"

"चरित्र ?"

"हां, हमारे भारत के लोगों का चरित्र नष्ट हो गया है।"

संदीप ने पूछा था, "चरित्र का अर्थ क्या है ?"

काशीनाथ बाबू ने उस दिन कहा था, "देखो, डिक्शनरी में चरित्र के अनेक प्रकार के अर्थ लिखे हुए हैं—स्वभाव, रीति-नीति, आचार-आचरण वगैरह। लेकिन यह बात नहीं है। चरित्र का असली अर्थ जीवन-भर ढूंढोगे तभी मिलेगा—इसके पहले नहीं।"

यह सब बहुत पहले की बात है। उसके बाद बहुत सारे साल गुजर चुके हैं। बचपन के बेडापोता को छोड़ वह कितने ही दिन पहले कलकत्ता आ चुका है। तभी से वह खोज रहा है कि 'चरित्र' शब्द का अर्थ क्या है। जो पराये की भलाई करता है, जो पराये के दुख से विचलित हो उठता है, जो समाज की सेवा करता है, उसे ही चरित्रवान मनुष्य कहा जाता है ? या फिर जो शराब पीता है, जो अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए झूठ का सहारा लेता है, जो आदमी का खून करता है, उसे ही चरित्रहीन कहा जाता है ?

लेकिन काशीनाथ बाबू ने कहा था, जीवन-भर तलाश करते रहोगे तभी 'चरित्र' शब्द का अर्थ समझ सकोगे। आज संदीप भी तो काफी उम्रदार हो चुका है, पर क्या वह 'चरित्र' शब्द का अर्थ समझ सका है ? अब भी वह इसका अर्थ नहीं समझ सका है तो फिर कब समझेगा ?

याद है, मुखर्जी-भवन के लन्दन ऑफिस के मैनेजर कमललाल मेठा के मरने के बाद ही पूरे परिवार में जैसे एक हलचल की शुरुआत हो गई। सौम्य बाबू क्या विलायत जाएंगे ? जाने के पहले क्या विशाखा से उनकी शादी हो जाएगी ?

यह बात मल्लिक चाचा के कान में भी पहुंची। दादी मां ने एक दिन मल्लिक चाचा को बुला भेजा।

मल्लिक चाचा दादी मां के पास ज्यों ही पहुंचे कि वे बोलीं, "आपको एक काम करना है मुनीमजी।"

मल्लिक चाचा बोले, "कहिए, कौन-सा काम है ?"

"गुरुदेव के पास एक चिट्ठी काशी भेजनी है। बहुत ही जरूरी चिट्ठी है। लिखना होगा, मैं अपने पोते सौम्य की शादी करने जा रही हूं। पात्री पसंद की ही जा चुकी है। आप सौम्य और बहूरानी की जन्मपत्री की नकल कराकर भेज दें।

उनसे पूछिए कि जल्द से जल्द विवाह की कोई शुभतिथि है या नहीं। और उसके साथ प्रणामी के मद में पांच सौ रुपया भेज दीजिएगा।"

मल्लिकजी दादी को दैनिक आय-व्यय का ब्योरा बताकर चले आए और उनके द्वारा बताए गए तथ्यों का उल्लेख करते हुए काशी चिट्ठी भेज दी।

बोले, "तुम रसेल स्ट्रीट के मकान जाने पर इन बातों की चर्चा मत करना, समझे?"

इस बात का उल्लेख करने से विशाखा की कौन-सी क्षति होगी या दादी मां को कौन-सा फायदा होगा, संदीप यह बात समझ नहीं सका। बोला, "कहना नहीं है?"

"नहीं। इतने पहले से कहने से फायदा ही क्या है? देखा जाए, काशी से गुरु-देव क्या लिखकर भेजते हैं।"

मल्लिकजी ने मुस्कराकर उसके बाद कहा, "इसके अलावा बात तो अभी पक्के तौर पर नहीं हुई है। मान लो शादी अभी नहीं होती है—"

"क्यों? शादी क्यों नहीं होगी? सारा बन्दोबस्त तो पक्का हो गया है।"

मल्लिक चाचा बोले, "इस घर की शादी तो इस तरह नहीं होती कि वचन दिया और चट से शादी हो गई। जोड़-तोड़ करने और सबको खबर भेजने में ही तीन-चार महीने लग जाएंगे। कितने लोगों को निमंत्रित करना है, इसका कोई ठिकाना है! पूरे कलकत्ता के लोग आएंगे। तो भी एक ही दिन में सारा कुछ समाप्त नहीं हो जाएगा। कम-से-कम तीन दिन तक लोग खाना खाएंगे। पहले भी देख चुका हूं। यह दूसरे घर की जैसी शादी नहीं है। यहां शादी का दिन तय होते ही हरेक को एक नया कपड़ा मिलेगा। तुम्हें भी एक नई धोती या पैंट जो चाहोगे मिलेगी। यह सब जब होगा, तुम देखोगे ही।"

संदीप बहुत कुछ कहना चाहता था। कहना चाहता था कि सौम्य बाबू विशाखा के स्कूल जाकर उससे बातचीत कर आए हैं। उसके सामने घूमने के लिए जाने का प्रस्ताव रखा था। लेकिन यह सब न कहना ही अच्छा रहेगा। पता नहीं, मल्लिक चाचा क्या सोचें।

मल्लिक चाचा बोले, "अब तुम जाओ। मैं पोस्ट ऑफिस जाकर मनीऑर्डर कर आता हूं।"

शर्ट-पैंट पहन संदीप ने बाहर की तरफ कदम बढ़ाए।

मुक्तिपद मुखर्जी उसी दिन से व्यस्तता में डूब गए। दुनिया में कोई हमेशा-हमेशा के लिए ज़िन्दा रहने को नहीं आता है। एक दिन उसे जाना ही पड़ता है।

लेकिन कमललाल की मौत उस तरह की मौत नहीं है। सिर्फ आकस्मिक मृत्यु के कारण ही यह एक अस्वाभाविक घटना नहीं है, बल्कि इस कंपनी के एक दृढ़ स्तम्भ होने के कारण भी यह एक अस्वाभाविक घटना है। एक बात में कहा जाए तो वह ऊर्जा का स्रोत था। कंपनी हर तरह से कमललाल की ऋणी है। कमललाल ने हर तरह से इस कंपनी को फायदा पहुंचाया था। सौम्य लंदन जाकर रातों-रात कंपनी की आर्थिक उन्नति को आगे बढ़ा सकेगा, इसकी उम्मीद नहीं है। तो भी

उसे इसलिए भेजा जा रहा है कि वह सारी बातों का जायजा लेकर सही निर्णय पर पहुंच सकेगा। और इसके अलावा हर चीज के बारे में एक आइडिया होना बेहतर रहेगा। शरीर में व्यवसायी का खून है, सौम्य के जीवन के लिए सबसे बड़ी पूंजी यही है। इसे ही वंश-परम्परा कहा जाता है। बाकी जो कुछ बदलाव आता है, वह बहुधा समाप्त भी हो जाता है।

मुक्तिपद ने सौम्य के बारे में पूछा कि वह ऑफिस आया है या नहीं।

"नहीं सर।"

पूछताछ करने पर मुक्तिपद को पता चला कि सौम्य अक्सर दफ्तर आता ही नहीं। मां से पूछने पर पता चला कि वह निश्चित समय पर गाड़ी लेकर दफ्तर के लिए निकलता है।

नागराजन से पूछा तो उसने बताया, "मिस्टर मुखर्जी तो ठीक समय पर ही ऑफिस आते हैं सर। मैंने अपनी आंखों से देखा है। चिट्ठी-पत्र जो आते हैं, मैं उन्हें दस्तखत करने के लिए देता हूं। वे भी उन्हें पढ़कर हस्ताक्षर कर देते हैं।"

"देखने पर तुम्हें क्या अंदाजा लग रहा है?"

"मुझे तो वे बड़े ही इंटेलिजेंट लगते हैं।"

"किसी दिन वह क्या इस कंपनी को अकेले चला पाएगा?"

"बेशक। मैं तो बता ही चुका हूं कि वे बड़े ही इंटेलिजेंट हैं।"

"यह जो उसे लंदन भेज रहा हूं, वह क्या अकेले तमाम बिजनेसों को मैनेज कर पाएगा?"

"आप क्या कह रहे हैं सर! मैं कह रहा हूं, आप देखिएगा कि वे सब कुछ को सही रास्ते पर ला देंगे।"

मुक्तिपद बोले, "लेकिन सुना है, वह हर रोज नियम से ऑफिस नहीं आता है।"

नागराजन ने एक क्षण सोचा। क्या कहे, समझ नहीं सका। उसके बाद बोला, "नहीं सर, आते हैं, उसके बाद किसी-किसी दिन कुछ देर तक ठहरने के बाद बाहर निकल जाते हैं। उसके बाद ऑफिस नहीं लौटते हैं।"

"कहां जाता है, तुम्हें मालूम है?"

"नहीं सर।" नागराजन ने कहा, "मुझे यह कैसे मालूम होगा? वे मेरे मास्टर हैं, मैं उनका सर्वेण्ट होकर यह बात कैसे दरियाफ्त कर सकता हूं?"

मुक्तिपद को नागराजन से सौम्य के बारे में और बहुत सारी बातों की चर्चा करने की इच्छा होती है। लेकिन उनके पास इतना वक्त कहां है? लोगों का एक झुंड सवेरे से मैनेजिंग डाइरेक्टर से मुलाकात करने के लिए इंतजार करता रहता है। मुक्तिपद से तरह-तरह के निवेदन करने आते हैं। कोई ठेका चाहता है, कोई बकाया राशि का भुगतान। कोई नौकरी चाहता है, कोई पदोन्नति। कोई उन्हें कॉकटेल पार्टी में निमन्त्रित करने को आता है। कोई सिर्फ उनकी खुशामद करने के खयाल से ही आता है। सभी का रिश्ता पैसे से जुड़ा हुआ है। मुक्तिपद का जीवन रुपये के बंधन में कसकर बंधा हुआ है।

उस पर है फर्म की उन्नति का प्रयास। वहां कठोर नियम और अनुशासन की जरूरत है। उसके लिए बहुत सारे अफसर हैं। उन सबों को मोटी तनख्वाह

लती है। मुक्तिपद को खुद इस्पात के सम्बन्ध में अभिज्ञता नहीं है, लेकिन जो
स्पात तैयार करनेवाले कारीगर हैं, उनसे कैसे काम लिया जाए, मुक्तिपद यह
ानते हैं। और वह जानकारी ही असली जानकारी है। इस मामले में मुक्तिपद
ा कोई मुकावला नहीं कर सकता।

उस दिन श्रीपति मिश्र आए।

पहले से सूचित करके ही आए हैं। साथ में गोपाल है। मुक्तिपद मिनिस्टर
पर नज़र पड़ते ही व्यस्त हो उठे।

मिस्टर मिश्र बोले, "आपके पास एक खास काम से आया हूं। पता नहीं,
आपसे कितनी सहायता मिल पाएगी।"

मुक्तिपद बोले, "यह क्या? मैंने क्या इसके पहले आप लोगों की सहायता
नहीं की है? जब जो करने कहा है, मैंने किया है।"

उसके बाद गोपाल हाजरा की तरफ देखते हुए पूछा, "आप कौन हैं?"

मिस्टर मिश्र बोले, "आप मेरे पी० ए० गोपाल हाजरा हैं।"

गोपाल हाजरा ने नमस्कार किया, मुक्तिपद ने भी हाथ जोड़कर नमस्कार
किया। गोपाल बोला, "आपका भतीजा मिस्टर सौम्य मुखर्जी मेरा मित्र है।"

श्रीपति बाबू बोले, "आप तो जानते ही हैं कि निकट भविष्य में हम लोगों का
जेनरल इलेक्शन होने जा रहा है और हमारे वोलियन्टर हम लोगों के आसरे
उत्सुकता से बैठे हुए हैं। पार्टी फण्ड की हालत भी कोई अच्छी नहीं है। आप जानते
ही हैं कि कितनी बड़ी बाढ़ का प्रकोप रहा। सेंटर से हमने जितनी मदद की आशा
की थी, मिली नहीं।"

मुक्तिपद बोले, "आपको कितने रुपये चाहिए, यही बताइए। मैं हेल्प करने
को तैयार हूं।"

श्रीपति बाबू बोले, "सारी बात खुलासा कर आपसे न कहने से आप समझ
नहीं सकिएगा। इतने दिनों तक जो लोग हमारे काम करते आ रहे हैं उनमें से सभी
को हम एमप्लायमेंट नहीं दे सके हैं। उस पर हज़ारों आदमी बांगला देश से हर
रोज़ सरहद लांघकर वेस्ट बेंगॉल आ रहे हैं, उनके कारण भारी समस्या में पड़
गया हूं।"

मुक्तिपद बोले, "आप ज़रा बैठ जाएं, मैं आ रहा हूं।"

यह कहकर वही किया जो इसके पहले नहीं किया था। बगल वाले कमरे में
नागराजन के पास गए। नागराजन मैनेजिंग डाइरेक्टर को देखकर अवाक् हो
गया।

बोला, "क्या सर, आप?"

मुक्तिपद बोले, "वह स्कॉउन्ड्रल फिर आ धमका है।"

"कौन? कौन-सा स्कॉउन्ड्रल?"

"वही वैस्टर्ड श्रीपति मिश्र। पट्ठा तीन बार मैट्रिक फेल कर मिनिस्टर क्या
बना है कि लगता है मेरा सिर खरीद लिया है।"

मुक्तिपद तब गुस्से से थर-थर कांप रहे थे। बोले, "हम लोगों का रजिस्टर
एक बार देखो तो। पहले कितना रुपया पार्टी को दिया जा चुका है?"

नागराजन ने पूरे खाते को उलट-पुलटकर देखने के बाद कहा, "यही तो लिख

हुआ है। तीन लाख सत्तर हजार रुपये की एन्ट्री है।"

"किस तारीख में ?"

"पिछले अगस्त की तीस तारीख में।"

"इस बीच फिर से पार्टी फण्ड के लिए चन्दा मांगने चला आया। इतना हरामजादा है! लोग इन्हें क्यों वोट देते हैं, मालूम नही।"

नागराजन ने कहा, "सर, आप ठंडे दिमाग से काम लें। दिमाग गरम करने से इन लोगों की कोई हानि नही होगी। आपका ही ब्लडप्रेशर बढ़ जाएगा।"

मुक्तिपद बोले, "तुम ठीक कह रहे हो नागराजन! मगर क्या करूं, बताओ तो! जिसे वोट देता हूं वही इस तरह का स्काउण्ड्रल हो जाए तो फिर हम फैक्टरी कैसे चलाएंगे? बहरहाल, जो होने को है, होगा।"

नागराजन ने पूछा, "कितना लिखूं सर?"

मुक्तिपद बोले, "अबकी एक लाख दो, क्रॉस मत करना।"

चेक लिखना खत्म होने के बाद मुक्तिपद उसे लेकर अपने चेम्बर में आए और श्रीपति बाबू को दिया।

चेक पर लिखे रुपये की रकम को देख मन ही मन बहुत नाराज हुए। लेकिन बोले कुछ भी नहीं। कुर्सी छोड़ उठकर खड़े हो गए। बोले, "चलू, मुझे एक जरूरी काम है।"

गोपाल उठकर पीछे-पीछे बाहर चला आया।

श्रीपति बाबू ने गाड़ी पर बैठते ही कहा, "देख रहे हो गोपाल, तुम्हारे मित्र की कंपनी का मालिक कितना बड़ा स्कॉउन्ड्रल है!"

गोपाल ने पूछा, "कितना दिया सर?"

"सिर्फ एक लाख! मैं खुद आया फिर भी अधिक नही दिया। इन पूंजीपतियों को जरा भी आंख की लाज नहीं है।"

उसके बाद जरा रुककर बोले, "सैक्सबी में कितने यूनियन है गोपाल?"

"तीन यूनियन हैं सर।"

श्रीपति बाबू बोले, "लेबर ट्रबल करा सकते हो?"

गोपाल बोला, "क्यों नही, आप कहें तो सब करा सकता हूं सर। आप एक बार हुक्म देकर देख लें कि करा सकता हूं या नही।"

श्रीपति बाबू बोले, "तो फिर तुम यही करा दो गोपाल। बगैर यह सब कराए ये लोग काबू में नही आएंगे।"

गोपाल बोला, "ठीक है सर।"

श्रीपति बाबू बोले, "और एक बात। अब और कोई सर्टिफिकेट लेने नही आ रहा है? बांगला देश से लोगों का आना बन्द हो गया क्या?"

गोपाल बोला, "किसने बताया सर कि बन्द हो गया है? इन कई दिनों के दरमियान इस तरफ की देखरेख करते रहने के कारण उस तरफ ध्यान नही दे सका था।"

श्रीपति बाबू बोले, "अब सर्टिफिकेट की रेट कुछ ज्यादा बढ़ा दो। अब हर चीज की कीमत बढ़ती जा रही है, और हमारे सर्टिफिकेट की कीमत मात्र तीस रुपया रहेगी—यह ठीक नही। अब उसकी रेट पचास रुपये कर दो। सर्टिफिकेट

मिलने से ही उन्हें राशन कार्ड मिलेगा, एमप्लॉयमेंट एक्सचेंज में वे अपना नाम दर्ज करा सकेंगे। वोटरों के लिस्ट में भी नाम दर्ज करा सकेंगे। इससे क्या उन्हें कोई कम सहूलियत है? और इलेक्शन के समय वे हमें ही वोट देंगे। इसलिए तुम उस तरफ भी ध्यान रखना।"

इस बीच उनकी गाड़ी राइटर्स विल्डिंग के सामने आ गई है। श्रीपति बाबू जैसे ही नीचे उतरे, चार-पांच पुलिसकर्मियों ने उन्हें लंबी सलामी दी। गोपाल को लेकर गाड़ी विपरीत दिशा की बड़ी सड़क पर आ गई। श्रीपति बाबू के पी० ए० को बहुत काम करना पड़ता है। सिर्फ पार्टी के लिए चन्दा वसूलने का काम ही नहीं करना पड़ता, बल्कि हज़ारों लोगों से मिलना-जुलना और बतियाना पड़ता है। इसके अलावा रात का काम भी कोई कम ज़रूरी नहीं है। उस समय वह सड़क के हर मोड़ के नुक्कड़ पर पुलिसकर्मियों को रुपये बांटते चलता है। कभी-कभी नाइट क्लब भी जाता है। विचित्र आदमी है गोपाल हाजरा। ऐसा न होता तो अन्टी मेम साहब से उसकी जान-पहचान ही कैसे होती?

सड़क पर गाड़ी से जाते-जाते एक जगह पहुंचने पर गोपाल ने गाड़ी रोकने कहा।

दूसरी तरफ के फुटपाथ पर संदीप चुपचाप पैदल चलता हुआ जा रहा था। गोपाल ने उसे पुकारा। चिल्लाकर कहा, "ऐ संदीप, ऐ संदीप, ऐ—"

गोपाल पर आंखें जाते ही संदीप आगे बढ़ आया। गोपाल बोला, "क्यों जी, कहां जा रहा है?"

संदीप ने कहा, "कॉलेज।"

"आ, गाड़ी के अंदर चला आ।"

संदीप जैसे ही गाड़ी पर बैठा, गाड़ी चल पड़ी।

गोपाल ने पूछा, "क्या हालचाल है?"

"तू ठीक है न?"

गोपाल ने कहा, "आज तेरे मालिकों के दफ्तर गया था। अभी वहीं से आ रहा हूं।"

संदीप ने पूछा, "क्यों गया था?"

गोपाल ने कहा, "अपने मिनिस्टर को लेकर गया था।"

"किस मिनिस्टर को?"

"जिसके बारे में तुझे बताया था। श्रीपति मिश्र। पार्टी फण्ड के लिए चन्दा मांगकर ले आया।"

"कौन-सा पार्टी फण्ड?"

गोपाल बोला, "तू बच्चा है, समझ नहीं सकेगा। बहरहाल, तेरा क्या हाल-चाल है?

"रसेल स्ट्रीट फिर गया था तू? अंटी मेमसाहब कैसी हैं? अब भी उनकी नौकरी बरकरार है?"

संदीप ने कहा, "है, लेकिन अब ज्यादा दिनों तक नहीं रहेगी। विशाखा की शादी होनेवाली है।"

गोपाल ने कहा, "विशाखा? विशाखा कौन?"

"अरे, तुझे याद नहीं है ? जिससे सौम्य बाबू की शादी होने की बात है। अब शादी होने जा रही है।"

गोपाल ने कहा, "शादी होने जा रही है ? उस लंपट से ? बर्बादी होकर रहेगी।"

संदीप ने कहा, "क्यों ? उससे तो शादी होने की बात पहले ही पक्की हो चुकी है।"

गोपाल बोला, "उस लड़की के भाग्य में बड़ा ही दुख लिखा है।"

"क्यों ?" संदीप ने पूछा।

"तू नहीं जानता क्या ? चौरंगी के नाइट क्लब जाकर तू तो सारा कुछ अपनी आंखों से देख चुका है। इतना मैं कहे देता हूं, शादी के बाद वह लड़की अवश्य ही सुसाइड कर लेगी—वह लड़की जरूर ही खुदकुशी कर लेगी, तू देख लेना।"

गोपाल की ओर देखकर संदीप ने पूछा, "क्यों ?"

"यह ईश्वर का एक अभिशाप है। तू जानता नहीं कि कहावत है—अत्यन्त चतुर को भात नहीं मिलता और अत्यन्त सुन्दरी को भर्त्तार नहीं मिलता—"

यह सुनकर संदीप के मुंह से बहुत देर तक कोई शब्द नहीं निकला। उसके बाद वह बोला, "लेकिन दादी मां के गुरुदेव ने विशाखा की जन्मपत्री देखकर बताया है कि यह लड़की सुखी होगी। इससे शादी होगी तो सौम्य बाबू का भी भला होगा।"

गोपाल ने कहा, "यह सब जन्मपत्री वगैरह की बात रहने दे। यह सब सिर्फ चालबाजी है। देखना, आखिरकार क्या होता है।"

"आखिर में क्या होगा ? शादी नहीं होगी ?"

गोपाल ने कहा, "चाहे शादी हो या न हो, बड़ी बात यह नहीं है। अंततः उनकी कम्पनी रहती है या जाती है, यही देखना है।"

"कम्पनी नहीं रहेगी, इसका मतलब ?"

गोपाल बोला, "यह बहुत पेचीदी बात है। बाद में तू सब कुछ देखेगा और सब कुछ तेरी समझ में आ जाएगा।"

"अभी बता दे न। तू तो छोटे बाबू को अपने साथ ले रसेल स्ट्रीट गया था। छोटे बाबू को उनकी मंगेतर से मिला आया है। छोटे बाबू ने अपनी मंगेतर को पसन्द किया ?"

"पसन्द क्यों नहीं आएगी ? वैसी खूबसूरत लड़की किसे पसन्द नहीं आएगी ? अब तो विशाखा को देखने के लिए छोटे बाबू तड़पते रहते हैं। देखना, किसी दिन छोटे बाबू उस लड़की के खिंचाव से अकेले ही रसेल स्ट्रीट के मकान पर पहुंच जाएंगे।"

संदीप यह सुनकर खामोश हो गया। उसका इन बातों में रहना उचित नहीं है, और न ही न्यायसंगत है। वह एक अदना गरीब घर का लड़का है, दूसरे के घर के अन्न पर पलनेवाला। दूसरे के हुक्म की तामील करने के लिए ही वह इस दुनिया में पैदा हुआ है। इसके बाहर किसी मामले में उत्सुकता रखना उसके लिए अपराध है।

गोपाल ने एकाएक पूछा, "क्यों जी, तू क्या सोच रहा है ?"
संदीप ने कहा, "कुछ भी नहीं।"
गोपाल ने कहा, "किसी पार्टी का मेम्बर बना है तू ?"
संदीप ने कहा, "नहीं।"
"यह क्या ! अभी तक किसी पार्टी का मेम्बर नहीं बना, फिर तो तेरा 'फ्यूचर' बिलकुल 'डार्क' है। तुझे नौकरी कैसे मिलेगी ?"
संदीप ने कहा, "मेरे लॉ कॉलेज का एक युवक है, उसने भी मुझसे यही कहा था। कहा था, किसी पार्टी का मेम्बर बने बगैर इस युग में नौकरी नहीं मिलेगी।"
"ठीक ही तो कहा है। किसी भी पार्टी का मेम्बर बनने से काम चल जाएगा। लेकिन हां, कभी किसी पार्टी का मेम्बर बनना हो तो प्रभावशाली पार्टी का ही बनना जिससे कि अपने भाग्य को चमका सको।"
संदीप बोला, "मुझे नौकरी नहीं करनी है।"
"नौकरी नहीं करेगा तो क्या करेगा ?"
"हाईकोर्ट में लॉ का प्रैक्टिस करूंगा।"
"इससे तू पैसा कमा पाएगा ?"
संदीप बोला, "यह मालूम नहीं। बेड़ापोता के काशीनाथ बाबू ने कहा है, वे मुझे अपना जूनियर बना लेंगे।"
गोपाल बोला, "वहां भी तुझे पार्टी का मेम्बर बनना पड़ेगा। काशीबाबू किस पार्टी के आदमी हैं ?"
संदीप बोला, "मुझे यह बात मालूम नहीं।"
गोपाल बाबू, "हाईकोर्ट में भी जबर्दस्त पार्टीबाज़ी चलती है। बहरहाल, तुझे जो ठीक समझ में आए वही कर, मैं और क्या कहूं ! लेकिन एक बात अभी से बता देता हूं, अभी से अपना काम सहेज ले। तुम लोगों के बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी लोगों के अब ज्यादा दिन नहीं हैं—"
"ज्यादा दिन नहीं है का मतलब ?"
गोपाल ने कहा, "कहावत है न, कि ज्यादा हाथ-पैर मत बढ़ाओ वरना बर्बाद हो जाओगे। उतनी बाबूगीरी, विलायत वगैरह का चक्कर लगाना, उतना नाइट क्लब जाना—यह सब क्या हमेशा चल सकता है ? नहीं, हमेशा चल नहीं सकता। इसीलिए तुझे पहले से ही सावधान कर देता हूं—समय रहते ही अपनी तकदीर बना ले—"
गोपाल की बात सुनकर संदीप डर गया। पूछा, "इसका मतलब ? मुझे वह मकान छोड़ देना होगा ? मकान छोड़ना पड़ेगा तो मैं कहां जाऊंगा ? सिर्फ मेरी ही बात तो नहीं है। मेरे जैसे बहुत सारे गरीब आदमी हैं, वे लोग कहां जाएंगे ? और हमारे बेड़ापोता के मल्लिक चाचा भी तो हैं। उनका क्या होगा ?"
गोपाल बोला, "तुझे उन लोगों के बारे में नहीं सोचना है, तू अपनी सोच। खुद जिन्दा रहने पर ही दूसरे के बारे में सोचा जा सकता है।"
"लेकिन क्या होनेवाला है ? मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा। उन लोगों की उतनी दौलत, व्यवसाय, विलायत से लेकर अमरीका तक फैला हुआ कारोबार—सारा कुछ क्या बर्बाद हो जाएगा ? ऐसी हालत में विशाखा का क्या

होगा ? उस मकान की हालत बदतर हो जाएगी तो छोटे बाबू और विशाखा क्या करेंगे ? उनका खर्च कैसे चलेगा ?"

तब तक गाड़ी कॉलेज के पास आ गई थी।

गोपाल बोला, "मुझे तो यहीं उतरना है, यह रहा तेरा कॉलेज।"

तो भी संदीप हिला-डुला नहीं। बोला, "सच-सच बता, उन लोगों का क्या सर्वनाश हो जाएगा ?"

गोपाल बोला, "अरे यह तो मैं भारी परेशानी में पड़ गया ! उन लोगों का सर्वनाश होता है तो तेरा कौन-सा नुकसान होने जा रहा है ? तू उन लोगों के बारे में इतना क्यों सोचता है ? उनके भले-बुरे से तेरा कौन-सा सम्बन्ध है ? तू समय रहते ही अपना काम सहेज ले।"

इस पर भी संदीप ने हिलने-डुलने का नाम नहीं लिया। सड़क पर उतरकर जिस स्थिति में खड़ा था, उसी स्थिति में खड़ा रहा। उस समय चेहरा सूखा हुआ था। बोला, "सच कह रहा हूं भाई, उन लोगों के लिए मुझे बहुत डर लग रहा है—"

गोपाल बोला, "तेरे लिए डरने की कौन-सी वजह हो सकती है ?"

संदीप बोला, "उन लोगों का यदि सर्वनाश हो जाए तो फिर क्या होगा ?"

"और क्या होगा, सर्वनाश होने को तो होगा। उससे तेरी कोई हानि नहीं होने जा रही है—"

संदीप बोला, "मगर मौसीजी का अपना कोई नहीं है। विशाखा का सर्वनाश हो जाएगा तो मौसीजी किसके पास जाकर रहेंगी ?"

गोपाल बोला, "रास्ते पर खड़े होकर तेरे साथ बक-बक करने का मेरे पास वक्त नहीं है। मैं चलता हूं।"

यह कहकर उसने ड्राइवर को गाड़ी चलाने को कहा। गाड़ी चलते-चलते संदीप की आंखों से ओझल हो गई। लेकिन संदीप तब भी प्रस्तर की मूर्ति की तरह उसी जगह खड़ा-का-खड़ा रह गया। उसकी आंखों के सामने विशाखा का जीर्ण-शीर्ण कंकाल जैसा निर्जीव चेहरा हवा के झोंके से मानो एक बार इधर और एक बार उधर हिल-डुल रहा है।

उन दिनों की बात सोचकर संदीप को अब हंसने का मन करता है। सच, तब कितना बचपना था उसके अन्दर ! याद है, तब उसमें समझदारी नामक कोई चीज नहीं थी। फिर भी न जाने यह कैसे समझ गया था कि जो लोग पार्टी में रहते हैं उनकी अपनी कोई पहचान नहीं होती। वह यह भी समझ गया था कि हर पार्टी का लीडर यह चाहता है कि उसके दल का कोई सदस्य स्वतन्त्र रूप से कुछ नहीं सोचे। जो लोग सबसे ताल-मेल बिठाकर चल सकते हैं वे ही इस दुनिया की तमाम सुविधाओं का उपभोग कर सकते हैं। उन्हें जिन्दगी में कोई खास तकलीफ नहीं उठानी पड़ती। वे ही लोग किसी न किसी पार्टी के खाते में नाम लिखकर निश्चिन्ततापूर्वक रह सकते हैं।

लेकिन आनेवाली दुनिया का कोई क्या वैसे लोगों को याद रखते हैं ?

याद उन्हें ही रखते हैं जो सभी से ताल-मेल न मिलाते हुए अपनी राह पर चलते हैं। उन्हीं के कारण यह धरती कुछ पग आगे बढ़ती है। और वे ही भावी पीढ़ी को चिर दिन रास्ता दिखाते हैं।

लेकिन अपने स्वतन्त्र चिंतन के कारण उनके कष्टों की कभी कोई सीमा नहीं रहती। उन लोगों के कष्ट, यातना और आत्म-बलिदान ही अन्ततः इतिहास बन जाते हैं। वे ही इतिहास के पन्नों पर अमर रहते हैं।

लेकिन इनके अलावा भी ऐसे लोगों का एक दल है जो किसी भी पार्टी में नहीं रहते और न रहने पर भी वे किसी से किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं चाहते और न ही उन्हें प्रेम, प्यार, स्नेह या ममता मिलती है। उनके लिए समय के इतिहास के पन्ने पर भी स्थान का अभाव रहता है।

ऐसे ही लोगों की हालत सबसे शोचनीय होती है।

संदीप लाहिड़ी भी इसी श्रेणी का एक शोचनीय दृष्टान्त है। अपने दोष के कारण ही वह न तो गोपाल हाजरा बन सका है और न ही सुशील सरकार। और सौम्य मुखर्जी होना तो और दूर की बात है। वह हमारी श्रेणी का भी एक जाना-पहचाना आदमी भी नहीं बन सका है। मात्र एक बैंक की एक मामूली शाखा का एक साधारण मैनेजर बनकर ही उसने ज़िन्दगी गुज़ारी है। इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? वह स्वयं या विशाखा—दोनों में से कौन?

उस दिन सुबह रसेल स्ट्रीट भवन से विशाखा और और दिनों की तरह ही स्कूल गई थी।

हर रोज़ की तरह शैल ने उसका नाश्ता बना दिया था। योगमाया ने नींद टूटते ही स्नान-ध्यान कर सब कुछ का इन्तज़ाम कर दिया था। कौन-सा ब्लाउज़-साड़ी और जूते वह पहनेगी, योगमाया उन चीज़ों को भी हर रोज़ सहेजकर रख देती है। योगमाया ऐसा बहुत दिनों से करती आ रही है। और सिर्फ यही नहीं, विशाखा को सजा-धजाकर स्कूल भेजने के लिए विलासिता के जो भी उपकरण बाज़ार में उपलब्ध हो सकते हैं, दादी मां ने उनका इन्तज़ाम कर दिया है।

उसके बाद उन्होंने लड़की को पुकारा था, "उठ-उठ, देर हो जाएगी। उठ बिटिया, उठ!"

उतनी बड़ी लड़की को उठाकर गरम पानी का इन्तज़ाम कर दिया था। उसके बाद खाना खाने की बारी थी। खाना भी डॉक्टर के प्रेसक्रिप्शन के अनुसार दिया जाता है। योगमाया ने कभी इस तरह के खाने-पीने की चीज़ों का आयोजन नहीं देखा था। कॉर्न-फ्लॉक्स या वेटस पेरिज से ब्रेक फास्ट शुरू होता है। उसके साथ एक चौथाई उबले हुए दो अंडे और कुछ फल। फल में किसी दिन केला रहता है, किसी दिन अंगूर या बेदाना। उनके साथ टोस्ट और मक्खन। किसी-किसी दिन मक्खन के बदले जैम या जेली। उसके बाद बड़े प्याले में एक प्याला दूध। चाय बिलकुल नहीं।

विशाखा यह सब क्या खाना चाहती है! विशाखा को पूरी के साथ कुछ भुजिया खाना अच्छा लगता है। मगर यह सब डॉक्टर की भोजन-तालिका में नहीं है। वह सब अच्छा नहीं होता। इच्छा हो तो दो के बदले चार टोस्ट खाओ, मगर यह सब कभी मत खाना। क्योंकि आजकल घी या तेल शुद्ध नहीं मिलता। टोस्ट

में मिलावट की वह सब चीज देने की गुंजाइश नहीं है।

इसके बाद ड्राइवर गाड़ी लिए नीचे आएगा। गाड़ी आने की खबर नीचे से दरबान आकर पहुंचा जाएगा। ड्राइवर का नाम अरविन्द है। बूढ़ा आदमी है वह। दादी मां युवा ड्राइवर नहीं भेजती। वृद्ध ड्राइवर का होना ही निरापद है। वह विशाखा को स्कूल पहुंचाकर गाड़ी लिए बाहर खड़ा रहता है। उसके बाद छुट्टी होने पर विशाखा को घर पहुंचाकर चला जाता है। यह उसकी रोजाना की ड्यूटी है।

स्कूल से लौटने पर विशाखा थकावट से चूर होकर मां की गोद में लेट जाती है। उस समय उसे एक गिलास कच्चे नारियल का पानी पीना पड़ता है। उसके बाद अंग्रेजी मेमसाहब के चले जाने के बाद दोपहर-भोजन का सिलसिला चलता है। दोपहर के भोजन का भी डॉक्टर ने डायट मेनू बना दिया है। उस मेनू के अलावा और कुछ भी नहीं खाया जा सकता है।

उसके बाद जरा नींद। थोड़ी झपकी। वह अत्यंत जरूरी है।

उसके बाद आती है जमुना दीदीजी। वह बंगला पढ़ाती है, हिसाब बनवाती है, इतिहास पढ़ाती है। इसके अतिरिक्त हफ्ते में एक दिन नाच सिखानेवाली मास्टरनी आती है। और रविवार की दोपहर को वर्क-एडुकेशन चलता है। उस समय विशाखा को अपने हाथ से चित्र बनाना पड़ता है।

उसके बाद शाम के पहले हल्का नाश्ता।

और उसके बाद?

उसके बाद कोई काम नहीं। उस समय गपशप। या तो रेडियो सुनो या कोई आ जाए तो गपशप करो।

उसके बाद रात आठ बजे डिनर। उस डिनर का चार्ट बना हुआ है। किसे खाने से मुटापा नहीं बढ़ेगा, किसे खाने से कोलेस्टरल नहीं होगा, किसे खाने से मधुमेह की बीमारी नहीं होगी। कौन-सी चीज खाने से शरीर की ताकत बढ़ेगी, साथ ही दिमाग भी ठीक से काम करेगा, इसकी पूरी व्यवस्था है।

उस दिन भी नाश्ता कर विशाखा बदस्तूर स्कूल जा चुकी थी। अरविन्द हर रोज की तरह निर्धारित समय पर आकर विशाखा को ले गया था। उसके लिए विशाखा ने सारा इंतजाम करके रखा था। शैल बाजार करने के दौरान एक कच्चा नारियल भी खरीदकर ला चुकी थी।

लेकिन दस बज गए, फिर ग्यारह मगर विशाखा स्कूल से वापस नहीं आई। आज क्या हुआ? विशाखा अब तक स्कूल से लौटकर क्यों नहीं आई है?

शैल ने आकर कहा, "मुन्नी रानी तो अब तक स्कूल से नहीं आई मां जी।"

योगमाया यही बात सोच रही थी। बोली, "मैं भी तो यही सोच रही हूं।" उसके बाद बोली, "एक बार दरबान से जाकर पूछ आओ कि अरविन्द आया है या नहीं?"

"नहीं, दरबान ने बताया, वह गाड़ी लौटकर नहीं आई है।"

"फिर क्या किया जाए? पहले तो ऐसा कभी नहीं हुआ था।"

क्या होगा, कौन जाने! योगमाया के मन में बड़ा ही डर समा गया। विशाखा कहां गई?

उसके बाद वेला खिसककर और आगे बढ़ी। अंटी मेमसाहब ने आकर सब सुना।

बोली, "तो फिर मैं कब तक इन्तज़ार करूं ?"

बात तो सही है। वह तो एक ही जगह काम नहीं करती। उसे और भी दसियों घर जाकर अंग्रेज़ी सिखानी पड़ती है। यहां बैठकर कब तक वह अपना वक्त जाया करती रहे ? सभी के वक्त की कीमत होती है। अत:—अत: अंटी मेमसाहब चली गई।

योगमाया भी खाना नहीं खा सकी। लड़की के आए बगैर मां खा ले यह कैसे संभव हो सकता है ! और जब कि योगमाया ने नहीं खाया तो शैल भी कैसे खाना खा सकती है ?

योगमाया ने शैल से कहा, "तुम खा लो बेटी। तुम बेवज़ह निराहार क्यों रहोगी ? तुम जाकर खाना खा लो।"

लेकिन शैली ने खाना नहीं खाया।

समूचे मकान में सन्नाटा तिर आया। जयंती दीदी देर से आती है। वह भी यह सब सुनकर अवाक् हो गई। पूछा, "पुलिस को सूचना भेजी है ?"

योगमाया ने अब रोना शुरू कर दिया है। बोली, "कौन सूचना देने जाएगा बेटी ? मेरे पास तो कोई आदमी नहीं है।"

जयंती बोली, "वो संदीप बाबू जो आया करते थे, उनके पास एक बार खबर भेजिए न।"

योगमाया बोली, "आज वह भी दिन भर नहीं आया है। और-और दिन सवेरे ही चला आता था।"

"तो फिर बिडन स्ट्रीट के मकान में फोन कर इसकी सूचना भेज दें। इस तरह हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से काम नहीं चलेगा।"

योगमाया बोली, "यह तो समझती हूं बेटी, मगर टेलीफोन कौन करेगा ? और हम लोगों के इस मकान में टेलीफोन है भी नहीं।"

जयंती बोली, "लेकिन उस मकान में खबर भेजना तो ज़रूरी है। उन लोगों की बहू है, वे ही लोग खोज-पड़ताल करेंगे। इसके अलावा खोज-पड़ताल करनेवाले आदमी की उनके यहां कोई कमी भी नहीं है।"

जयंती अब कब तक अपनी छात्रा की प्रतीक्षा करती रहे ! बहुत देर तक प्रतीक्षा करने पर भी जब उसकी छात्रा नहीं आई तो वह उठकर खड़ी हो गई। बोली, "फिर मैं चलती हूं मौसीजी—कल फिर आऊंगी।"

इसके अलावा वह कर ही क्या सकती है ! योगमाया बोली, "हां बेटी, तुम अब कब तक यों ही बैठी रहोगी ? जाओ।"

योगमाया ने तीन-मंजिले के कमरे से रसेल स्ट्रीट की तरफ निगाह दौड़ाई। सड़क से अनगिनत लोग और गाड़ियां जा रही हैं। कोई उत्तर की तरफ और कोई दक्षिण की तरफ। लेकिन कोई भी गाड़ी उन लोगों के तीन नंबर मकान के सामने नहीं रुक रही है।

सहसा नीचे के दरवान ने आकर पुकारा, "मां जी—"

योगमाया दौड़ती हुई आई और कहा, "क्या दरवान ?"

दरबान बोला, "ड्राइवर आया है मां जी, यह रहा।"

ड्राइवर का चेहरा उतरा हुआ है। योगमाया बोली, "क्या हुआ भैया, मेरी लड़की कहां है? दिन-भर मैंने न स्नान किया है और न खाना ही खाया है। तुम्हारे इन्तज़ार में थी। तुम्हें क्या हो गया था?"

अरविन्द ने अपराधी की मुद्रा बनाते हुए कहा, "माताजी, मैंने भी तो खाना नहीं खाया है। गाड़ी लेकर मैं दिन-भर स्कूल के सामने बैठा रहा।"

"क्यों? मेरी लड़की के स्कूल में छुट्टी नहीं हुई है?"

"हां, हो चुकी है मां जी। छुट्टी के बाद मुन्नी बिटिया मेरी गाड़ी की तरफ आ रही थी, अचानक छोटे हुजूर आ गए।"

"छोटे हुजूर? छोटे हुजूर कौन? तुम लोगों के सौम्य बाबू?"

अरविन्द ने कहा, "हां मां जी, छोटे हुजूर ने मुन्नी बिटिया को अपनी गाड़ी पर बिठाया, उसके बाद मुझसे कहा, गाड़ी लेकर यहीं इन्तज़ार करता रहूं। मैं अब तक वहीं खड़ा था।"

योगमाया बोली, "तो अब मेरी लड़की कहां है?"

अरविन्द बोला, "इसकी मुझे जानकारी नहीं है। इतनी देर तक इन्तज़ार करते रहने के बावजूद मैंने जब देखा कि मुन्नी बिटिया नहीं लौट रही है तो यहां चला आया। दिन-भर मैं कोई काम नहीं कर सका। न नहा सका हूं, न खाना खाया है।"

योगमाया इसके बाद क्या कहे, समझ में नहीं आया। तो भी बोली, "तुम्हारे छोटे हुजूर एकाएक स्कूल क्यों आ पहुंचे?"

"यह मैं कैसे जानूंगा मां जी? हम तो छोटे हुजूर के नौकर हैं। वे कुछ कहें तो हम नकार सकते हैं, आप ही बताइए?"

योगमाया बोली, "सो तो सही है भैया, तुम लोग क्या कर सकते हो!"

उसके बाद फिर बोली, "लेकिन मैं लड़की की मां हूं, मुझे तो चिन्ता हो रही है। तुम्हारे घर में भी औरत-बाल-बच्चे हैं। तुम मेरे मन की तकलीफ का अहसास कर सकते हो। तुम्हीं बताओ, इस हालत में मैं क्या करूं! मां होने के नाते मैं चुपचाप बैठी रह सकती हूं?"

अरविन्द अब क्या कहे!

योगमाया बोली, "अभी तो तुम उस मकान में जा रहे हो। तुम सदीप बाबू के पास यह खबर पहुंचा सकते हो? मिलकर कहना कि वह यहां आकर मुझसे मिले। उसके अलावा यहां ऐसा कोई नहीं है जिसे मैं अपना कह सकूं।"

एकाएक पीछे से तपेश गांगुली आ धमके।

"यह क्या भाभी, बात क्या है? तुम यहां खड़ी हो? ये लोग कौन हैं?"

योगमाया बोली, "तुम आए हो? अच्छा ही हुआ। यह है मेरे घर का दरबान और यह है अरविन्द—मेरी लड़की की गाड़ी का ड्राइवर।"

तपेश गांगुली ने उन लोगों की तरफ देखकर पूछा, "ये लोग क्या चाहते हैं?"

योगमाया बोली, "मैं भारी मुसीबत में फंस गई हूं देवरजी। तुम्हें एक काम करना है। हम लोगों के बिडन स्ट्रीट जाकर एक खबर पहुंचानी है। कहना है,

विशाखा सवेरे स्कूल गई थी लेकिन अब तक लौटकर नहीं आई है।"

"क्यों नहीं लौटी है ? किसी के साथ भाग गई विशाखा ?"

योगमाया बोली, "यही तो ड्राइवर खड़ा है, इसी से तुम पूछ लो। उसका कहना है, सवेरे उस मकान के छोटे बाबू स्कूल आकर विशाखा को लेकर कहीं चले गए हैं, उसके बाद···"

"छोटे बाबू कौन ?"

"जिससे विशाखा की शादी होनेवाली है।"

तपेश गांगुली चौंक उठे, "यह क्या! शादी के पहले ही लड़की को लेकर दामाद चला गया ? अब क्या होगा ?"

योगमाया बोली, "मैं भी यही सोच रही हूं। जानते हो, दिन-भर हम खाना नहीं खा सके हैं। न मैंने खाया है और न ही शैल ने। विशाखा बगैर खाए रहे तो हम कैसे खा सकते हैं ? तुम आए तो जान में जान आई। सब तो सुन चुके, अब क्या किया जाए, यही बताओ।"

तपेश गांगुली ने कहा, "पुलिस को इत्तला किया है ?"

योगमाया बोली, "पुलिस को खबर देना क्या ठीक रहेगा ?"

"क्यों, ठीक क्यों नहीं रहेगा ? तुम्हारी लड़की की अभी शादी नहीं हुई है। शादी होने के पहले ही अगर तुम्हारा दामाद लड़की को लेकर भाग जाता है तो किडनैपिंग के चार्ज पर तुम्हारे दामाद को जेल भी जाना पड़ सकता है। मेरी जान-पहचान का एक अच्छा वकील है। तुम कहो तो उस वकील के पास तुम्हें ले जा सकता हूं। चलोगी ?"

योगमाया बोली, "नहीं देवरजी। मेरा दामाद तो ड्राइवर को कहकर ले गया है। कोई लुका-छिपा कर तो नहीं ले गया है। मेरा खयाल है, यह बात पुलिस को न जनाना ही अच्छा रहेगा।"

तपेश गांगुली बोले, "मगर तुम समझ नहीं रही हो भाभी। मैं इस तरह के बहुत सारे केस देख चुका हूं। मान लो, तुम्हारी लड़की कल या परसों घर वापस आती है। ऐसी हालत में तुम्हारा दामाद अगर तुम्हारी लड़की से शादी करने को राजी न हो तो ? उस समय अगर तुम्हारा दामाद कहे कि तुम्हारी लड़की केरेक्टर-लेस है और उस ग्राउंड पर विवाह न करे तो क्या होगा ?"

देवर की बात सुन योगमाया भय और चिन्ता से थर-थर कांपने लगी।

तपेश गांगुली इसके बाद बोले, "ईश्वर न करे कि इस तरह का वाकया हो। अगर इस तरह का वाकया हो जाता है तो फिर तुम क्या करोगी ? तुम विधवा औरत ठहरीं, मैं तुम्हारे पास नहीं हूं, मेरे अलावा तुम्हारा और कोई सगा-संबंधी इस दुनिया में नहीं है, ऐसी हालत में क्या होगा ? एक बार उस स्थिति के बारे में सोचकर देख लो।"

योगमाया क्या कहे, समझ में नहीं आया।

तपेश गांगुली ने इसके बाद फिर कहना शुरू किया, "इसीलिए तो कहता हूं भाभी कि बड़ों की प्रीत बालू की भीत एक जैसी होती है। बड़े आदमी के लड़के से शादी होगी, यह सुनकर तब तुमने ता-थैया नाच शुरू कर दिया था। चटपट गाड़ी पर बैठ मेरे घर से चली आई। मैं कुछ भी नहीं बोला। समझ रही हो भाभी ? मैं

तब सोच रहा था, देखा जाए, कहाँ का पानी कहाँ बहकर जाता है। मैं जानता था, एक दिन ऐसा होकर ही रहेगा।"

अरविन्द और ड्राइवर तब दरवाजे के बाहर चुपचाप खड़े थे। अब नरेश गांगुली का ध्यान उस तरफ गया। बोले, "तुम लोग अब यहाँ क्यों खड़े हो भई? तुम लोग क्या सुन रहे हो? तुम लोग अपने-अपने काम पर चले जाओ। हम देवर-भाभी बातचीत कर रहे हैं। उसके बीच तुम लोग नाक क्यों घुसेड़ रहे हो? तुम लोगों का इस तरह का स्वभाव तो ठीक नहीं—"

इस पर दरबान और ड्राइवर नीचे चले गए।

नरेश गांगुली ने दरवाजे की सिटकनी बंद कर दी। बोले, "देखा न भाभी? इन लोगों की अक्लमंदी पर गौर किया न? हम दोनों प्राइवेट बातें कर रहे थे और ये लोग खड़े-खड़े सुन रहे थे और मजा ले रहे थे।"

योगमाया बोलीं, "उन लोगों की बात छोड़ो देवरजी। ये लोग नौकर-चाकर हैं, उन लोगों को खरी-खोटी सुनाने से फायदा ही क्या?"

नरेश गांगुली ने हामी भरते हुए कहा, "तुम ठीक कह रही हो भाभी, बिलकुल ठीक। नहीं तो तुम भाभी कैसे होतीं! लेकिन तुम्हीं बताओ, मैंने कौन-सी गलत बात कही है? वे लोग बड़े आदमी हो सकते हैं, मगर हम क्या किसीसे कम हैं? दौलतमंद दामाद हो तो उसका सात खून माफ कर दिया जाए?"

योगमाया तब भी विशाखा के बारे में सोच-सोचकर व्याकुल हो रही थीं। बोलीं, "तुम जरा चुप हो जाओ देवरजी। अभी मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा है। आज तक विशाखा ने कभी देर नहीं की थी। क्या करूँ, समझ में नहीं आ रहा है।"

नरेश गांगुली बोल पड़े, "तुम जरा धीरज से काम लो भाभी। मैं फौरन कोतवाली जाकर तुम्हारे दामाद के नाम डायरी करा आता हूँ।"

योगमाया ने उसे रोकते हुए कहा, "नहीं देवर जी, मुझे थोड़ा सोचने का वक्त दो। मेरा सिर चकरा रहा है। यह मुँहजली मुझे इस तरह परेशान करेगी, यह जानती तो मैं प्रसव-घर में ही गला टीप कर उसे मार डालती। और…"

योगमाया की बात समाप्त होने के पहले ही कुंडी खटखटाने की आवाज हुई।

"कौन?"

दरवाजा खोलते ही संदीप पर नजर पड़ी। संदीप के चेहरे पर मुस्कराहट का भाव है। बोला, "मौसीजी, एक सुसंवाद लाया हूँ। सौम्य बाबू से विशाखा की शादी होगी। काशी से गुरुदेव के मुनीमजी ने आज ही पत्र लिखा है, उसके साथ सौ रुपये बतौर प्रणामी भी भेज दिए हैं।"

योगमाया को मानो इस बात पर यकीन ही नहीं हुआ। पूछा, "शादी होगी? कब?"

संदीप बोला, "अभी तिथि निश्चित नहीं हुई है। गुरुदेव जो तिथि और मुहूर्त बताएँगे, उसी तिथि में शादी होगी।"

यह बात सुनकर नरेश गांगुली का चेहरा मुरझा गया।

पूछा "सचमुच ही शादी होगी या झूठी अफवाह है?"

विशाखा सवेरे स्कूल गई थी लेकिन अब तक लौटकर नहीं आई है।"
"क्यों नहीं लौटी है ? किसी के साथ भाग गई विशाखा ?"
योगमाया बोली, "यही तो ड्राइवर खड़ा है, इसी से तुम पूछ लो। उसका कहना है, सवेरे उस मकान के छोटे बाबू स्कूल आकर विशाखा को लेकर कहीं चले गए हैं, उसके बाद···"
"छोटे बाबू कौन ?"
"जिससे विशाखा की शादी होनेवाली है।"
तपेश गांगुली चौंक उठे, "यह क्या ! शादी के पहले ही लड़की को लेकर दामाद चला गया ? अब क्या होगा ?"
योगमाया बोली, "मैं भी यही सोच रही हूं। जानते हो, दिन-भर हम खाना नहीं खा सके हैं। न मैंने खाया है और न ही शैल ने। विशाखा बगैर खाए रहे तो हम कैसे खा सकते हैं ? तुम आए तो जान में जान आई। सब तो सुन चुके, अब क्या किया जाए, यही बताओ।"
तपेश गांगुली ने कहा, "पुलिस को इत्तला किया है ?"
योगमाया बोली, "पुलिस को खबर देना क्या ठीक रहेगा ?"
"क्यों, ठीक क्यों नहीं रहेगा ? तुम्हारी लड़की की अभी शादी नहीं हुई है। शादी होने के पहले ही अगर तुम्हारा दामाद लड़की को लेकर भाग जाता है तो किडनैपिंग के चार्ज पर तुम्हारे दामाद को जेल भी जाना पड़ सकता है। मेरी जान-पहचान का एक अच्छा वकील है। तुम कहो तो उस वकील के पास तुम्हें ले जा सकता हूं। चलोगी ?"
योगमाया बोली, "नहीं देवरजी। मेरा दामाद तो ड्राइवर को कहकर ले गया है। कोई लुका-छिपा कर तो नहीं ले गया है। मेरा खयाल है, यह बात पुलिस को न जनाना ही अच्छा रहेगा।"
तपेश गांगुली बोले, "मगर तुम समझ नहीं रही हो भाभी। मैं इस तरह के बहुत सारे केस देख चुका हूं। मान लो, तुम्हारी लड़की कल या परसों घर वापस आती है। ऐसी हालत में तुम्हारा दामाद अगर तुम्हारी लड़की से शादी करने को राजी न हो तो ? उस समय अगर तुम्हारा दामाद कहे कि तुम्हारी लड़की केरेक्टर-लेस है और उस ग्रांउड पर विवाह न करे तो क्या होगा ?"
देवर की बात सुन योगमाया भय और चिन्ता से थर-थर कांपने लगी।
तपेश गांगुली इसके बाद बोले, "ईश्वर न करे कि इस तरह का वाकया हो। अगर इस तरह का वाकया हो जाता है तो फिर तुम क्या करोगी ? तुम विधवा औरत ठहरीं, मैं तुम्हारे पास नहीं हूं, मेरे अलावा तुम्हारा और कोई सगा-संबंधी इस दुनिया में नहीं है, ऐसी हालत में क्या होगा ? एक बार उस स्थिति के बारे में सोचकर देख लो।"
योगमाया क्या कहे, समझ में नहीं आया।
तपेश गांगुली ने इसके बाद फिर कहना शुरू किया, "इसीलिए तो कहता हूं भाभी कि बड़ों की प्रीत बालू की भीत एक जैसी होती है। बड़े आदमी के लड़के से शादी होगी, यह सुनकर तब तुमने ता-थैया नाच शुरू कर दिया था। चटपट गाड़ी पर बैठ मेरे घर से चली आई। मैं कुछ भी नहीं बोला। समझ रही हो भाभी ? मैं

तब सोच रहा था, देखा जाए, वहां का पानी कहां बहकर जाता है। मैं जानता था, एक दिन ऐसा होकर ही रहेगा।"

अरविन्द और ड्राइवर तब दरवाजे के बाहर चुपचाप खड़े थे। अब तपेश गांगुली का ध्यान उस तरफ गया। बोले, "तुम लोग अब यहां क्यों खड़े हो भई ? तुम लोग क्या सुन रहे हो ? तुम लोग अपने-अपने काम पर चले जाओ। हम देवर-भाभी बातचीत कर रहे हैं। उसके बीच तुम लोग नाक क्यों घुसेड़ रहे हो ? तुम लोगों का इस तरह का स्वभाव तो ठीक नहीं—"

इस पर दरवान और ड्राइवर नीचे चले गए।

तपेश गांगुली ने दरवाजे की सिटकनी बंद कर दी। बोले, "देखा न भाभी ? इन लोगों की अक्लमंदी पर गौर किया न ? हम दोनों प्राइवेट बातें कर रहे थे और ये लोग खड़े-खड़े सुन रहे थे और मजा ले रहे थे।"

योगमाया बोलीं, "उन लोगों की बात छोड़ो देवरजी। ये लोग नौकर-चाकर हैं, उन लोगों को खरी-खोटी सुनाने से फायदा ही क्या ?"

तपेश गांगुली ने हामी भरते हुए कहा, "तुम ठीक कह रही हो भाभी, बिलकुल ठीक। नहीं तो तुम भाभी कैसे होतीं ! लेकिन तुम्हीं बताओ, मैंने कौन-सी गलत बात कही है ? वे लोग बड़े आदमी हो सकते हैं, मगर हम क्या भिखमंगे हैं ? दौलतमंद दामाद हो तो उसका सात खून माफ कर दिया जाए ?"

योगमाया तब भी विशाखा के बारे में सोच-सोचकर व्याकुल हो रही थीं। बोलीं, "तुम जरा चुप हो जाओ देवरजी। अभी मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा है। आज तक विशाखा ने कभी देर नहीं की थी। क्या करूं, समझ में नहीं आ रहा है।"

तपेश गांगुली बोल पड़े, "तुम जरा धीरज से काम लो भाभी। मैं फौरन कोतवाली जाकर तुम्हारे दामाद के नाम डायरी करा आता हूं।"

योगमाया ने उसे रोकते हुए कहा, "नहीं देवर जी, मुझे थोड़ा सोचने का वक्त दो। मेरा सिर चकरा रहा है। यह मुहजली मुझे इस तरह परेशान करेगी, यह जानती तो मैं प्रसव-घर में ही गला टीप कर उसे मार डालती। और··"

योगमाया की बात समाप्त होने के पहले ही कुंडी खटखटाने की आवाज हुई। ।

"कौन ?"

दरवाजा खोलते ही सदीप पर नजर पड़ी। सदीप के चेहरे पर मुस्कराहट का भाव है। बोला, "मौसीजी, एक सुसंवाद लाया हूं। सौम्य बाबू से विशाखा की शादी होगी। काशी के गुरुदेव को मुनीमजी ने आज ही पत्र लिखा है, उसके साथ साथ सौ रुपये बतौर प्रणामी भी भेज दिए हैं।"

योगमाया को मानो इस बात पर यकीन ही नहीं हुआ। पूछा, "शादी होगी ? कब ?"

सदीप बोला, "अभी तिथि निश्चित नहीं हुई है। गुरुदेव जो तिथि और मुहूर्त बताएंगे, उसी तिथि में शादी होगी।"

यह बात सुनकर तपेश गांगुली का चेहरा मुरझा गया।

पूछा "सचमुच ही शादी होगी या झूठी अफवाह है ?"

उनकी बात संदीप को अच्छी नहीं लगी। कहा, "आप ऐसा क्यों बोल रहे हैं ?"

तपेश गांगुली बोले, "बहुत सारे बड़े-बड़े लोगों को देख चुका हूं भाई। सब साले ज़बान से लंबा-चौड़ा हांकते हैं। काम के वक्त काजी और काम खत्म होते ही पाजी हो जाते हैं। मैंने तभी भाभी से कहा था : भाभी बड़े लोगों की बात में मत आना। भाभी ने तब इस गरीब की बात नहीं सुनी और अब पछता रही है।"

संदीप बोला, "मुखर्जी भवन के मालिक उस किस्म के बड़े आदमी नहीं हैं। वे लोग वचन देते हैं तो उसका निर्वाह भी करते हैं। आप व्यर्थ ही डर रहे हैं। शादी वहीं होगी।"

"हो तो अच्छी ही बात है भाई। मैं क्या यह नहीं चाहता कि विशाखा की शादी वहीं हो! मैं तो विशाखा का चाचा हूं, विशाखा का आत्मीय। अब इधर क्या हुआ है, सुना है तुमने ?"

"क्या ?"

"तुम्हारे छोटे बाबू विशाखा को अपने साथ लेकर सवेरे लापता हो गए हैं।"

संदीप मानो आकाश से गिर पड़ा हो। बोला, "मतलब ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "मतलब यह कि मेरी भाभी से भी पूछकर देख लो। विशाखा जो सवेरे स्कूल गई तो फिर अब तक लौटकर नहीं आई है।"

"यह क्या ?"

तपेश गांगुली बोले, "तुम इस तरह चकित क्यों हो रहे हो भाई ?"

संदीप बोला, "आपको इसमें इतना आनन्द क्यों मिल रहा है, बताइए तो सही। बड़े आदमी के घर आपकी भतीजी की शादी हो रही है इससे आपके दिल में बहुत ठेस पहुंच रही है ?"

तपेश गांगुली बोले, "ठीक है, मेरे बारे में अगर तुम्हारी यही धारणा है तो फिर मैं चला जाता हूं। लेकिन हां, यह भी कहे जाता हूं कि इसका अन्त देखकर ही मैं मरूंगा। इसके पहले नहीं।"

यह कहकर वे रुके नहीं। यह पहला दिन था कि तपेश गांगुली बगैर खाना खाए और रुपया लिए इस घर से बाहर चले गए।

योगमाया बोली, "तुमने मेरे देवर से यह सब क्यों कहा बेटा ? चाहे जो हो, है तो आखिर मेरा देवर ही। उसे चिढ़ा देना अच्छा रहा ?"

संदीप ने कहा, "आपके लिए डरने की कौन-सी बात है ? मैं हूं ही। आप मेरी मां के बराबर हैं। अगर मुझे दो जून दो मुट्ठी खाने को मिलेगा तो आप और विशाखा निराहार नहीं रहेंगी। मैं आपसे यह कहे देता हूं।"

योगमाया की आंखों में आंसू भर आए। अनजाने आदमी से इस तरह का निस्वार्थ प्रेम योगमाया को अपने जीवन में नहीं मिला था। और वह भी अकारण। योगमाया को प्रसन्न करने से संदीप को कौन-सा लाभ होगा ?

उसके बाद स्वयं को ज़रा संयत कर योगमाया बोली, "खैर, इन बातों को छोड़ो। अब क्या किया जाए, यह तो बताओ बेटा ? अब कहां खोजा जाए कि विशाखा का पता चले ? कौन विशाखा को खोजकर लाएगा ?"

संदीप बोला, "जो ड्राइवर विशाखा को लेकर स्कूल जाता है, वह कहां है ?"

योगमाया बोली, "वही तो कुछ देर पहले आकर खबर पहुंचा गया है कि मेरा दामाद खुद स्कूल जाकर विशाखा को वहीं से ले गया है।"

सदीप यह सुनकर अवाक् हो गया। बोला, "सौम्य बाबू? सौम्य बाबू विशाखा को लेकर चले गए हैं?"

योगमाया बोली, "गाड़ी का ड्राइवर अभी तो यही बता कर गया है।"

उसके बाद जरा चुप रहकर फिर बोली, "अब क्या करूं, बताओ तो बेटा? शादी के पहले दामाद का यह मिलना-जुलना क्या ठीक है? मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है। तुम आज नहीं थे इसलिए मैं दूर बैठी सिर्फ विशाखा और तुम्हारे बारे में ही सोचती रही। सोचते-सोचते तब से मेरा माथा चकरा रहा है। एक गिलास पानी तक नहीं पिया है आज।"

सदीप बोला, "अभी आप थोड़ा-सा खाना खा लीजिए! आप न खाइएगा तो आपकी विशाखा क्या घर लौटकर चली आएगी?"

योगमाया बोली, "तुम भी यही कह रहे हो? मेरी लड़की बगैर खाए-पिए बाहर रहे और मैं खाना खाऊं? मेरे गले से क्या भात का कौर नीचे उतरेगा? तुम लड़की की मां होते तो ऐसा कर पाते?"

सदीप बोला, "ठहरिए, मैं जरा सोचकर देखूं कि क्या किया जा सकता है..."

योगमाया बोली, "ऐसा होगा यह जानती तो मैं क्या देवर का घर छोड़कर यहां आती? तुमने तो मेरे देवर को देखा। मेरी हालत देखकर उसके चेहरे पर कितनी मुस्कराहट तैर रही थी!"

"उससे जलते हैं तो सोचकर भी हंसी आती ही है मौसीजी। लेकिन तपेश बाबू चूंकि मुझे नहीं जानते हैं इसलिए इस तरह की बात बोल गए। लेकिन हां, मैं भी कहे देता हूं मौसीजी, जब तक मैं इसका अन्त नहीं देख लूंगा तब तक मुकाबले के लिए डटा रहूंगा। विशाखा की कोई हानि होगी तो समझूंगा वह मेरी हानि है। विशाखा का भला होगा तो समझूंगा यह मेरा भला हो रहा है, विशाखा का बुरा होगा तो सोचूंगा यह मेरा बुरा है—आज यह आपको कहे देता हूं।"

सदीप की बात सुनकर योगमाया खुशी से अपनी आंखों के आंसू रोक नहीं सकी। बोली, "तुम इतनी बड़ी बात मुझसे कह गए? मैं जब तक जिन्दा रहूंगी, इसे याद रखूंगी। लेकिन तुमसे मेरा एक ही अनुरोध है बेटा! ईश्वर न करे कि मुझे फिर से देवर के घर जाकर देवरानी के झाड़ू की मार बरदाश्त करनी पड़े। ऐसा होगा तो मैं जिन्दा नहीं रह सकूंगी। मैं बहुत कष्ट के साथ यहां चली आई थी, भगवान मेरी इस आन की रक्षा करें, इससे बढ़कर मेरी कोई कामना नहीं है।"

सदीप ने कहा, "देखूं, मैं क्या कर पाता हूं—"

यह कहकर वह बाहर चला जा रहा था। योगमाया बोली, "तुम कहां जा रहे हो बेटा?"

"मैं खुद नहीं जानता कि कहां जा रहा हूं। लेकिन हाथ पर हाथ धरे यहां बैठे रहने से भी तो काम नहीं चलेगा। कोई न कोई इन्तजाम करना ही होगा। मैं फिर आऊंगा।"

संदीप के चले जाने के बाद दरवाजा बंद कर योगमाया फिर से पूरब तरफ की खिड़की के पास आकर खड़ी हो गई। यहां से रसेल स्ट्रीट साफ-साफ दिख रहा है। योगमाया ने देखा, संदीप घर से निकल सीधे उत्तर की ओर पार्क स्ट्रीट की तरफ जा रहा है। जब तक वह उत्तर दिशा की भीड़-भाड़ में खो नहीं गया, योगमाया तब तक अपलक उसकी ओर ताकती रही। उस वक्त उसे अहसास हुआ, योगमाया लड़की के बजाय लड़का होती तो फिर उसे आज क्या इतनी चिंता होती! ईश्वर ने योगमाया को लड़की के बदले लड़का क्यों नहीं दिया? क्यों विशाखा उनकी लड़की बनकर पैदा हुई?

बिडन स्ट्रीट भवन में दादी मां तीसरे पहर से ही बिन्दु से यह जानना चाहती थीं कि मुन्ना घर लौटकर आया है या नहीं। मुन्ना से उन्हें सख्त ज़रूरत है। लंदन-ऑफिस के कमललाल का देहान्त हो गया है। यह खबर जब से सुनी है, दादी मां के मन में बड़ा दुख है। हाय, इस तरह चला जाएगा, दादी मां ने ऐसा सोचा भी नहीं था! बहुत दिन पहले दादी मां जब लंदन गई थीं, तभी उन्होंने उस युवक को देखा था। तब वह सब मिलाकर नौकरी में भर्ती हुआ था। उसी दिन से उसके प्रति ममता हो गई थी।

याद है, भारत लौटने पर दादी मां ने कमललाल के पास अमावट और बरी भेज दी थी। खाने पर कमललाल को बड़ा अच्छा लगा था। इस बात का उल्लेख उसने एक लंबी चिट्ठी में किया था।

बिन्दु से दादी मां ने कहा, "मुक्तिपद को उसके घर पर एक बार टेलीफोन करो तो।"

दादी मां आम तौर पर खुद टेलीफोन नहीं करतीं—खासतौर से मुक्तिपद के घर पर। मुक्तिपद के घर में बहूरानी अगर टेलीफोन उठाए तो उससे बातें करनी होंगी। वे बहूरानी से जहां तक हो सके, बातचीत करना नहीं चाहतीं। एक शब्द में कहा जाए तो वे बहूरानी का मुंह भी देखना पसन्द नहीं करतीं। कहती हैं, "उस चुड़ैल के कारण ही मुक्तिपद मेरे लिए पराया हो गया है।"

बिन्दु ने बताया, "मंझले बाबू घर पर नहीं है दादी मां।"

दादी मां ने पूछा, "टेलीफोन किसने उठाया था?"

"आपकी बहूरानी ने।"

"ठीक है, अब मुक्तिपद के ऑफिस में टेलीफोन करके देखो।"

बिन्दु को वहां का भी नम्बर मालूम है। नहीं, मंझले बाबू दफ्तर में भी नहीं है।

दादी मां बोलीं, "तो फिर बेलुड़ की फैक्टरी फोन करो।"

अन्ततः वे फैक्टरी में मिल गए। अब दादी मां ने फोन उठाया। बोलीं, "कौन? मुक्ति?"

उस तरफ से आवाज़ आई, "हां मां, मैं मुक्ति हूं। कुछ कहना है?"

दादी मां बोलीं, "सौम्य अब तक घर क्यों नहीं आया है? वह क्या अब भी ऑफिस में है?"

चटर्जी बोला, "आप एक बार घोषाल से मिलिएगा सर!"

मुक्तिपद बोले, "अगर वह मिलना चाहे तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है।"

घोषाल! घोषाल पक्का समाजवादी है। कम-से-कम सबको वह यही बताता
। समाज-सेवा के लिए उसने कितना त्याग किया है, देश के सभी लोग यह
जानते हैं। वह बहुत सारे बड़े-बड़े ऑफिसों के बड़े-बड़े यूनियनों का प्रेसिडेण्ट है।
ऑफिस के कर्मचारियों के लिए ही उसने ज़िन्दगी और जवानी अर्पित कर दी है।
बंगला के अखबारों में तरह-तरह के कारणों से उसका नाम छपा करता है। इसी
नाते वह एक नामी आदमी है—पूरे तौर पर गण्यमान्य।

ऐसे आदमी को अश्रद्धा की दृष्टि से देखे ऐसा आदमी, कहा जा सकता है,
कलकत्ता के उद्योगपति समाज में नहीं है।

कलकत्ता के वंचित-शोषित-पीड़ित श्रमिक वर्ग ने अपने दुख-दर्द और कष्टों
के निवारणार्थ घोषाल को अपने नेता के रूप में स्वीकार कर लिया है। घोषाल
उस शोषित श्रमिक वर्ग का नियामक और रक्षक दोनों है। उसके पास खबर भेजने
से ही वह आ जाएगा, इतना वक्त नहीं है उसके पास। उसके स्वास्थ्य की रक्षा के
लिए श्रमिकों ने उसे घर, गाड़ी, टेलीफोन, टेलीविजिन और विडियो दिए हैं।

आश्चर्य की बात है, इतनी व्यस्तता में फंसे रहनेवाला घोषाल भी दया कर
फैक्टरी में आने को राज़ी हो गया। अगर श्रमिक वर्ग का कुछ उपकार हो सके तो
घोषाल सब कुछ निछावर करने को तैयार है।

घोषाल के आते ही श्रमिकों की नारेबाजी बद हो गई। कमरे में तब कांति
चटर्जी, जसवन्त भार्गव, नागराजन, मुक्तिपद वगैरह थे।

घोषाल ने कमरे के अन्दर घुसते ही सभी की ओर अपना सहयोग का हाथ
बढ़ाया। हंसता हुआ चेहरा। गाल में पान की गिलौरी।

एक कुर्सी पर बैठते हुए बोला, "सुना है, आप लोगों के यहां कुछ गड़बड़ी
चल रही है।"

वर्क्स मैनेजर चटर्जी बोला, "आपको तो सब कुछ मालूम ही है।"

घोषाल बोला, "सिर्फ एक ही यूनियन लेकर तो मेरा काम नहीं चल सकता।
मेरे लिए यही मुश्किल हो गया है, मैं जिस ओर नहीं देखता हूं उधर ही सारा काम
ठप पड़ जाता है।"

मुक्तिपद बोले, "हम लोगों का यह कलकत्ता का सबसे पुराना फर्म है और
हम सभी से ज्यादा बोनस देते हैं। फिर भी वे लोग बार-बार हमीं लोगों के यह
सबसे ज्यादा हंगामा करते हैं।"

घोषाल 'हो-हो' कर निर्लिप्त हंसी हंस दिया। बोला, "मिस्टर मुखर्जी, य
तो नियम है। बड़े वृक्षों को ही अंधड़ का अधिक-से-अधिक उत्पात सहना पड़
है। बड़ी हवा का तो यही दोष है।"

मुक्तिपद बोले, "आप लोग बंगाल में बड़ों को रहने कहां दे रहे हैं? जि
भी बड़े-बड़े लोग थे, वे दूसरे-दूसरे प्रदेशों में अपने कारखाने हटा कर ले ग
बंगाली युवकों को अब बंगाल में नौकरी नहीं मिलेगी।"

घोषाल बोला, "मैं क्या यह नहीं जानता? मैं तो हर वक्त यही सोचता
हूं कि हमारे बंगालियों की क्या दशा होगी? बंगाली युवजनों को न तो बंग

नौकरी मिलेगी और न बंगाल के बाहर। तो फिर वे कहां जाएंगे?"

वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी बोला, "हम लोगों के बारे में जरा सोचिएगा सर! हम भी तो आखिरकार आदमी ही हैं।"

घोषाल बोला, "जानते हैं, इन पट्ठों को समझाते-समझाते मैं हार जाता हूं। मैं तो उन लोगों से यही कहता हूं—अरे जिन्होंने तुम लोगों को पनाह दी है, उनके बारे में भी जरा सोचा करो। वे इतने मूर्ख हैं कि क्या कहूं! मूर्ख न होते तो भला इस तरह की बेहूदी नारेबाजी करते? इसी को कहते हैं सुख से रहना आदमी को बरदाश्त नही होता।"

मुक्तिपद बोले, "आप उन लोगों को यह बात समझा नही सकते?"

घोषाल बोला, "आप यह क्या कह रहे हैं? आप क्या सोचते हैं कि मैंने उनसे यह सब नही कहा है?"

मिस्टर भार्गव बोला, "तो फिर उन लोगों ने चौबीस घंटे तक मेरा घेराव क्यों किया? पुलिस को खबर भेजी गई थी लेकिन एक भी पुलिस कर्मचारी नहीं आया। किसने पुलिस को आने से मना किया था?"

घोषाल बोला, "यह बात है? पुलिस नही आई? आश्चर्य की बात है! फिर देश में क्या कोई सरकार नही है? आप लोगों की बात सुनकर मुझे हैरानी हो रही है। आप लोग कम्पनी में लॉकआउट कर दें। हां, लॉकआउट कर दें। जहां वर्कर लोग अपने अफसरों की बात नही सुनते वहां कारखाने में लॉकआउट कर देने से पट्ठे काबू में आ जाएंगे।"

तब तक चाय-कॉफी स्नैक्स आ चुके थे।

घोषाल बोला, "यह सब करने की कौन-सी जरूरत थी?"

जसवन्त भार्गव बोला, "यह सब मामूली चीज है। थोड़ी-सी लीजिए।"

घोषाल बोला, "इसके पहले तीन बार चाय का दौर चल चुका है। अब मैं चलता हूं। और कई जगह मुझे जाना है।"

मुक्तिपद बोले, "तो फिर उन लोगों के बोनस का क्या होगा?"

घोषाल बोला, "लास्ट इयर जितना बोनस दिया था, इस बार भी उतना ही बोनस दीजिएगा। यह मामू के घर की माग है कि जो चाहेगा मिल जाएगा? किसी हालत में ज्यादा मत दीजिएगा। किसी भी हालत में नहीं—यह मैं कहे देता हूं—"

यह कहकर वरदा घोषाल लंबे डग भरता हुआ सीढ़ियां उतरकर नीचे आ गया। नीचे उसकी गाड़ी इन्तजार कर रही थी। वरदा घोषाल जैसे ही गाड़ी पर बैठा, गाड़ी रवाना हो गई। घोषाल बोला, "चलो कलकत्ता।"

वरदा घोषाल के लिए मंगाई गई चाय, कॉफी स्नैक्स पड़े ही रह गए। उसने एक टुकड़ा भी मुंह में नही डाला। वर्क्स मैनेजर, वेलफेयर ऑफिसर और चीफ एकाउन्टेन्ट ने मुक्तिपद के चेहरे की ओर ताका। किसी की जबान पर भी शब्द नही है।

एकाएक बाहर फिर से सम्मिलित स्वर गूंजने लगा, "इंनक्लाब जिन्दाबाद, मुक्तिपद मुखर्जी मुर्दाबाद, मुर्दाबाद—"

उस ओर वरदा घोषाल की गाड़ी तब तेज रफ्तार से कलकत्ता की ओर दौड़

रही थी। वरदा घोषाल को ढेर सारा काम रहता है। समूचे देश के वंचित-शोषित मनुष्यों का उद्धारकर्त्ता है वरदा घोषाल। इतने सारे लोगों के भले-बुरे की ज़िम्मेदारी जिसके माथे पर है उसके लिए आराम हराम है। दुखियों के बारे में सोचते रहने के कारण उसे रात में नींद नहीं आती। लेकिन कोई उपाय नहीं है। अपने भले-बुरे के बजाय दुखियों के भले-बुरे की बात ही उसे पहले सोचनी है।

वरदा घोषाल की गाड़ी के पेट्रोल की खपत हर रोज़ पन्द्रह से बीस लिटर तक है। सो चाहे हो, रुपये के बारे में सोचने से काम नहीं चलेगा। सबसे पहले आदमी है। आदमी ज़िन्दा रहेंगे तभी समाज ज़िन्दा रहेगा और समाज ज़िन्दा रहेगा तभी देश ज़िन्दा रहेगा। और देश ज़िन्दा रहेगा तभी दुनिया ज़िन्दा रहेगी। इसी वजह से इस दुनिया के लोगों की ज़िम्मेदारी ली है वरदा घोषाल ने। पेट्रोल खर्च की बात सोचने से वरदा घोषाल का काम नहीं चल सकता। चलो, जितनी दूर चलना है चलो, उसकी गाड़ी के पेट्रोल का जुगाड़ करेंगे आम लोग।

गाड़ी आकर जिस मकान के पास पहुंची उसके सामने दो पुलिसकर्मी पहरे पर थे। हर रोज़ एक ही चेहरेवाले पुलिसकर्मी पहरा देते हों ऐसी बात नहीं। उनकी ड्यूटी बदलती रहती है। एक जोड़ा पुलिसकर्मी की जगह दूसरा जोड़ा ड्यूटी बजाने आता है। इससे असुविधा नहीं हो सकती है। वरदा घोषाल की गाड़ी जब मकान के सामने आकर खड़ी हुई तो उन्होंने चुनौती नहीं दी। सलामी दागकर उसका स्वागत किया।

अन्दर के कमरे में जाते ही एक आदमी से मुलाकात हुई। शुरू में पहचान में आया ही नहीं। उसके बाद बोला, "अरे, आप गोपाल बाबू हैं न?"

अब गोपाल हाज़रा की दृष्टि भी उस पर पड़ी।

"अरे आप? सर कहां हैं?"

गोपाल बोला, "चलिए-चलिए, आप ठीक वक्त पर आ गए हैं। सर अकेले हैं।"

इस मकान में दो प्रकोष्ठ हैं। सर बाहरी प्रकोष्ठ में रहते हैं, अन्तःपुर में उनके परिवार के लोग। सामने के प्रकोष्ठ में सर तब एक मेज़ के सामने बैठकर टेलीफ़ोन से बातचीत कर रहे थे।

वरदा घोषाल और गोपाल हाजरा दोनों वहां पहुंचकर दो खाली कुर्सियों पर आसीन हो गए।

सर तब भी बातें किए जा रहे थे, "नहीं-नहीं, यह सब हिसाब का मामला मैं सुनना नहीं चाहता। रुपया दिया या नहीं, यही बताओ—"

उसके बाद थोड़ी देर तक चुप रहे, उसके बाद बोले, "वरदा मेरे सामने बैठा हुआ है, उससे बातें करो—"

यह कहकर रिसीवर वरदा घोषाल की ओर बढ़ा दिया।

वरदा घोषाल बोला, "हां, क्या हुआ? मैं तो पहले ही कह चुका हूं कि रुपया दे तो फिर बातचीत हो सकती है। रुपये की बात कहकर पहले ही वादा कराने की कोशिश करना ठीक नहीं है। मुझे पहले रुपया चाहिए, उसके बाद बातचीत।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहने लगा, "क्या कहा? वही बात दुहरा रहा है? तो फ़िर कहो, सैक्सबी की जो हालत कर दी है, उन लोगों की भी वही हालत

कर डालूंगा। हम अपनी मांग पर डटे रहेंगे। यह वेस्ट बंगाल है, बिहार या कर्णाटक नहीं। यहां हम हर घंटे दल नहीं बदलते हैं। यहां चालाकी करने से हम हड़ताल करा देंगे। क्या कहा ? हड़ताल करने से गरीबों को तकलीफ होगी ? तकलीफ होने दो। गरीबों को कब तकलीफ नहीं झेलनी पड़ी है ? हिन्दू शासन-काल में भी तकलीफ थी। मुगलों और अंग्रेजों के शासन-काल में भी तकलीफ थी। उन लोगों को सदैव तकलीफ थी और रहेगी भी। लिहाजा पहले पार्टी की बात सोचूंगा या गरीबों की ? अपनी फालतू बातें अपने पास ही रखो। वह सब सुनने का अभी मेरे पास वक्त नहीं है। मैं रख रहा हूं—"

और वरदा घोपाल ने झट से रिसीवर रख दिया। अपने मन के सारे गुस्से को उसने जैसे टेलीफोन पर ही उतारा हो।

श्रीपति मिश्र अब तक इन्तजार कर रहे थे।

बोले, "क्या हुआ है ?"

घोपाल बोला, "देखिए न, कह रहा है कि हड़ताल कराने से फेरीवालों और रिक्शावालों को तकलीफ होगी। देखिए तो, किस तरह इडियट जैसा बातें कर रहा है।"

श्रीपति मिश्र बोले, "रुपये की बाबत क्या कहा ?"

"बोला, रुपया नहीं है।"

"रुपया नहीं है ? यह कहा ? बोलने में जबान तक नहीं लड़खड़ाई ? ऐसी हालत में तो तुम्हीं लोगों के यूनियन का हेल्प लेना होगा। लगता है, स्ट्राइक कराए बगैर वे लोग सबक नहीं सीखेंगे।"

घोपाल बोला, "यह काम मुझ पर छोड़ दें सर।"

"और मुखर्जी ने क्या कहा ?"

वरदा घोपाल, "मुक्तिपद मुखर्जी बस एक ही बात पर अड़ा है। बोला : हम लोग फैक्टरी उठाकर हैदराबाद ले जाएंगे लेकिन बोनस नहीं बढ़ाएंगे।"

श्रीपति मिश्र बोले, "उन लोगों ने क्या सोचा है कि हमारी पार्टी निर्जीव हो गई है ?"

वरदा घोपाल, "मैंने भी यही बात उन लोगों से कहा। कहा कि हमारी पार्टी का क्या जनाजा निकल चुका है ? हमारे हाथ में गवर्नमेंट है, हम जो चाहेंगे वही करेंगे। इस मामले में दिल्ली हस्तक्षेप नहीं कर सकती।"

श्रीपति मिश्र बोले, "ठीक है। मैं भी देख लूंगा कि कैसे वह हमारी छाती पर बैठकर मूंग दलता है। गोपाल—"

गोपाल बोला, "कहिए सर।"

"तुम्हें याद है न, कि मुक्तिपद ने उस दिन हम लोगों के साथ कैसा सलूक किया था। मानो, हम भिखमंगे हों। पार्टी फण्ड के चन्दे के लिए मैं खुद गया, फिर भी मुझे सिर्फ एक लाख रुपया दिया—। उस स्काउण्ड्रल को तनिक शर्म भी नहीं लगी। ठीक है। गोपाल, तुमसे जो कह रहा हूं, वही शुरू कर दो। तुम्हारा दोस्त है, यह सोचकर कारवाई करने में ज़रा भी ढील मत बरतना।"

गोपाल, बोला, "आप यह क्या कह रहे हैं सर, मैं नरमी से पेश आऊंगा ?"

श्रीपति बाबू बोले, "हम लोगों के लिए पहले पार्टी है, उसके बाद ही दोस्ती

का स्थान है। दोस्ती के नाते पार्टी के काम में कोई ढिलाई नहीं होनी चाहिए। सुनने में आया है, तुम मुक्तिपद के भतीजे के साथ बहुत चक्कर काटते हो। उस दिन तुम उसे अपने साथ ले रसेल स्ट्रीट या कहीं दूसरी जगह गए थे?"

गोपाल को शर्म महसूस हुई। बोला, "तीन नम्बर रसेल स्ट्रीट गया था। वहां मुक्तिपद मुखर्जी के भतीजे सौम्यपद मुखर्जी से एक लड़की की शादी होने वाली है। वह लड़की देखने गया था, इसीलिए..."

"तुम्हें वह सब कैफियत नहीं देनी है गोपाल। कौन तुमसे कैफियत तलब कर रहा है?"

अब वरदा घोषाल उठकर खड़ा हुआ और बोला, "मैं चलता हूं सर, मुझे फिर एक क्लाइंट के घर जाना है।"

गोपाल बोला, "मैं भी चलता हूं सर।"

श्रीपति बाबू के टेलीफोन की घंटी दुबारा घनघना उठी। श्रीपति बाबू ने रिसीवर उठाकर कहा, "हैलो।"

बेलुड़ की फैक्टरी में तब एक आदमी गाड़ी लिए गेट पार कर अन्दर घुसा। गेट के दरबान ने उसे देखकर सलाम किया।

दरबान का लड़का बाप के पास खड़ा था। पूछा, "वह कौन है बाबूजी?"

दरबान बोला, "वह चटर्जी साहब का डिप्टी अर्जुन बाबू है।"

हां, अर्जुन सरकार का यही परिचय है। वह वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी का डिप्टी है—डिप्टी वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार। वह सिर्फ कांति चटर्जी का डिप्टी ही नहीं, बल्कि मुक्तिपद मुखर्जी का एक विश्वसनीम समाचार-संग्रहकारी भी है। कारखाने का कौन कहां क्या कर रहा है, वह क्या बातें कर रहा है, कौन किस पार्टी का आदमी है, सारी खबरों की जानकारी रहती है अर्जुन सरकार को। वरदा घोषाल की गाड़ी रवाना होते ही वह भी गाड़ी पर सवार हो दूर से उसका पीछा कर रहा था।

मुक्तिपद तब से उसी के इन्तजार में थे। अर्जुन सरकार वहां पहुंचते ही मैनेजिंग डाइरेक्टर के कमरे में गया।

मुक्तिपद ने पूछा, "क्या हुआ? गया था?"

अर्जुन सरकार बोला, "हां सर।"

"उसके बाद?"

"यहां से निकल वरदा घोषाल सीधे श्रीपति मिश्र के घर चले गए। वहां एक घंटा रुकने के बाद गोपाल हाजरा को अपने साथ लिए निकल आए।"

मुक्तिपद बोले, "समझ गया। श्रीपति मिश्र ने ही घोषाल को यहां भेजा था। अच्छा, ठीक है, तुम जाओ, बाद में तुम्हें खबर भेजूंगा। इस बीच कोई खबर मिले तो मुझे सूचित करना।"

अर्जुन चला गया। मुक्तिपद मन-ही-मन सोचने लगे। उनकी योजना के अनुसार अगर काम होता तो यह सब हंगामा नहीं होता। जिस चटर्जी परिवार को मिडल ईस्ट में पांच सौ करोड़ रुपये का ठेका मिला है उसकी लड़की भी एम० ए० पास है। उससे सौम्य की शादी कराने से रुपये की दृष्टि से भी लाभ होता साथ ही लेबर-ट्रबल भी नहीं होता। उसका एक लड़का ट्रेड यूनियन का लीडर है,

लिहाजा इस झंझट से भी छुटकारा मिल गया होता। लेकिन मां की हरकत के बारे मे क्या कहा जाए। कही की एक विधवा की लड़की से सौम्य की शादी की बात पक्की कर ली है।

मुक्तिपद बेलुड़ से अपने घर नही गए।

बोले, "एक बार विडन स्ट्रीट चलो।"

विडन स्ट्रीटवाले मकान मे मां तब कुल मिलाकर सांध्य आरती कर ऊपर आई थी। मुक्तिपद आ धमके। दादी मां उन्हें देखकर अवाक् हो गईं।

पूछा, "अरे तू, किसलिए ?"

"एक बार तुमसे मिलने चला आया।"

"बात क्या है ?"

मुक्तिपद बोले, "सौम्य की शादी के बारे मे बातें करनी हैं।"

दादी मां बोली, "सौम्य की शादी के बारे में ?"

मुक्तिपद बोले, "तुम अगर मेरी जानी-पहचानी पार्टी की लड़की से सौम्य की शादी कराओ तो हमारी कपनी को बेहिसाब सहूलियत होगी।"

दादी मा बोली, "यह तो तू मुझसे पहले ही कह चुका था, आज उस बात की फिर से चर्चा क्यों कर रहा है ?"

"इसलिए कि हमारी कंपनी में नए सिरे से हंगामे की शुरुआत हो गई है।"

"किस चीज़ का हंगामा ?"

मुक्तिपद बोले, "और क्या, बोनस के सबंध मे हंगामा। आज लेबर लीडर *घोषाल फिर आया था। मों तो हमें मौखिक आश्वासन दे गया, मगर अन्दर ही* अन्दर मिनिस्टरो से साठ-गांठ कर स्ट्राइक कराने को मतलब गांठ रहा है। उनकी साजिश से मैं परेशान हो उठा हूं। मैं अब शायद बचूगा नही—"

दादी मा बोली, "यह सब तो हमेशा था और रहेगा भी। तुम्हारे बाबूजी के जमाने में भी था। ऐसा अगर हो ही तो तू जिन्दा क्यों नही रहेगा। कारोबार करना है तो यह सब झंझट-झमेला रहेगा ही। तू मन छोटा क्यो कर रहा है ? इसके चलते मन का सतुलन खो बैठोगे तो मेहनतकशो को ही फायदा होगा।"

मुक्तिपद बोला, "मैं तुमसे इस विषय में चर्चा नही करना चाहता। तुम ठीक से समझ नही सकोगी। तब के जमाने से आज के जमाने की तुलना मत करो। अभी मैं सौम्य की शादी की बाबत बातें करने आया हू।"

दादी मां बोली, "सौम्य की शादी के बारे में फिर नए सिरे से क्या कहना है ? वह बात तो पहले ही पक्की हो चुकी है।"

मुक्तिपद बोले, "तुमने एकदम मे बात पक्की कर ली है ?"

दादी मां बोली, "तू तो जानता है कि अपने पोते से ब्याहने के लिए ही उसे मैंने तीन नम्बर रसेल स्ट्रीट में रखा है और मां व बेटी के गुजारे का खर्च चला रही हू। उन लोगों के लिए मैं महीने मे हजारो रुपये खर्च कर रही हूं। अब उसमे क्या कोई हेर-फेर किया जा सकता है ?"

मुक्तिपद बोले, "नही, मैं यह नही कहता। मेरा कहना है कि इन लोगो के यहां शादी करने के बजाय मेरी पार्टी की लडकी से यदि सौम्य की शादी कराई जाए तो मेरी भलाई होगी, साथ-ही-साथ तुम्हारी भी।"

"मेरा कौन-सा उपकार होगा। सुनूं ?"

मुक्तिपद बोले, "तुमसे तो मैं पहले ही सब-कुछ कह चुका हूं मां। मेरी भलाई और तुम्हारी भलाई क्या अलग-अलग चीज़ है ? मेरा भला होने का मतलब है तुम्हारा भला होना और तुम्हारा भला होने का मतलब है मेरा भला होना। इससे हम लोगों को, कंपनी को और ज़्यादा प्रोफिट होता और अभी जो श्रमिक आंदोलन चल रहा है वह भी नहीं चलता।"

दादी मां बोलीं, "देखो मुक्ति, मैं हमेशा ही अपने वादे पर दृढ़ रहती आई हूं। एक बार जो कह देती हूं उससे तिल-मात्र भी हिलती-डुलती नहीं हूं। चूंकि तू बोल रहा है, इसीलिए मैं सुन रही हू। लेकिन यह जान ले, मेरे निर्णय में कोई फेर-बदल नहीं होने वाला है।"

यह सुनकर मुक्तिपद बहुत देर तक गुमसुम बैठे रहे। उसके बाद उठकर खड़े हो गए और बोले, "अच्छा, तो फिर चलता हूं।"

एकाएक बिन्दु ने दरवाज़े के बाहर से सूचना दी, "दादी मां, मुन्ना बाबू घर लौट चुके हैं।"

"लो, मुन्ना आ गया।"

यह कहकर सौम्य को बुलाने के लिए बिन्दु से कहा। यह खबर सुनकर मुक्तिपद फिर से बैठ गए।

सौम्य के आते ही पूछा, "क्या बात है, आज तुम ऑफिस क्यों नहीं गए ?"

सौम्य बोला, "मैं तो गया था। आप ही नहीं थे।"

"हां, आज मैं बेशक दिन-भर फैक्टरी में था। लेकिन मैंने एक बार हेडऑफिस फोन किया था। लेकिन किसी ने नहीं बताया कि तुम ऑफिस आए हो।"

सौम्य बोला, "मैं ऑफिस से एक दूसरे काम से बाहर चला गया था।"

मुक्तिपद बोले, "आज फैक्टरी में मेरे श्रमिकों ने बेहद हंगामा किया है। बरदा घोषाल आया था, उसे भी सारा कुछ स्पष्ट तौर पर बताया। कल फैक्टरी जाओगे तो तुम्हें सारी बातों की जानकारी प्राप्त होगी।"

उसके बाद संदर्भ बदल मां की ओर ताकते हुए बोले, "मां, तो फिर सौम्य के लंदन जाने के बारे में क्या तय किया ?"

दादी मां बोलीं, "मेरे गुरुदेव का पत्र आने के बाद ही सारा कुछ तय करूंगी। और तुझसे तो कह ही दिया है कि सौम्य की शादी कराए बगैर उसे लंदन नहीं भेजूंगी।"

यह सुनकर मुक्तिपद कुछ हताश जैसे हो गए। खड़े होकर बोले, "खैर, तुम जो ठीक समझो वही करो, इस संदर्भ में मुझे और कुछ नहीं कहना है।"

उसके बाद जाने के दौरान सौम्य की तरफ देखते हुए बोले, "कल एक बार फैक्टरी जाना।"

यह कहकर मुक्तिपद अब रुके नहीं।

एकबारगी तीन-मंज़िले से लंबे डग भरते हुए एक-मंज़िले पर चले आए। उसके बाद एक-मंज़िले की सिंहवाहिनी के मंदिर में। उस समय वहां सांध्य आरती का आयोजन चल रहा था। उस तरफ देखे बगैर बाहर जाने का रास्ता पकड़ सीधे अपनी गाड़ी में आकर बैठ जाए। गाड़ी तत्क्षण मुक्तिपद को लिये सीधे बेलुड़

फैक्टरी की तरफ रवाना हो गई।

बिडन स्ट्रीट भवन मे जब यह दृश्य था तब रसेल स्ट्रीट के मकान में एक दूसरे ही दृश्य की भूमिका चल रही थी। योगमाया ने दिन-भर खाना नही खाया है। और योगमाया जब कि दिन-भर बिना खाए है तो ऐसी हालत में शैल कैसे खाना खा सकती है?

अचानक दरवाज़े की कुंडी की खटखटाहट होते ही योगमाया ने तुरन्त जाकर दरवाजा खोल दिया। संदीप ने कमरे के अन्दर आकर पूछा, "विशाखा आई?"

"नही बेटा, अब तक नही आई।"

संदीप बोला, "उस मकान में खूब शोर-शराबा हो रहा है। आज मुक्तिपद बाबू दादी मां के पास आए थे। आज उन लोगों की फैक्टरी मे बेहद हंगामा हुआ है। उसके बाद सौम्य बाबू आए —"

"उस मकान मे सौम्य बाबू पहुच चुके हैं तो फिर मेरी विशाखा अब भी क्यो नही आई? दोनों तो एक साथ निकले थे। एक आदमी लौटकर चला आया तो [illegible] र लौटेगी—! न जाने बेटा, क्या [illegible]

[illegible] लौटने के बाद जब वह बिडन स्ट्रीट के मकान मे गया था, तभी मल्लिक चाचा बोले थे, "आज मंझले बाबू यहा आए हैं।"

संदीप ने पूछा था, "क्यो?"

"उन लोगो के कारखाने मे हंगामा मच गया है।"

संदीप ने पूछा था, "अब क्या होगा?"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "और क्या होगा? कुछ भी नही। हरेक साल किसी न किसी बात पर झमेला खडा होता है। लेकिन सुना है, मझले बाबू की तबीयत आए दिन ठीक नही रहती है।"

उसके बाद संदीप को जब पता चला कि छोटे बाबू घर लौट आए हैं तब वह दौड़ता हुआ रसेल स्ट्रीट पहुचा। आने पर जब सुना कि विशाखा अब तक वापस नही आई है तो समझ नही सका कि अब क्या किया जाए।

बोला, "तो फिर कोतवाली जाकर रिपोर्ट कर आऊ मौसीजी?"

योगमाया इस बात का क्या जवाब दे! योगमाया इस प्रकार की विपत्ति मे कभी नही फसी थी। कलकत्ता शहर के हालचाल से योगमाया वाकिफ नही है।

सदीप अब रुका नही। बोला, "चलता हू, एक बार थाने से हो आऊ। पुलिस को सूचना दे देना ठीक रहेगा। सूचना देकर अभी तुरन्त चला आऊगा।"

यह कहकर सदीप बाहर निकल आया। थाना पार्कस्ट्रीट मे है। इसके पहले संदीप किसी थाने के अन्दर नही गया था। थाने मे एक कास्टेबल पर नज़र पड़ने पर सदीप ने पूछा, "थाने के बडे बाबू कहा हैं?"

कास्टेबल बोला, "बडे बाबू बाहर निकले हैं। आपको क्या ज़रूरत है?"

सदीप बोला, "एक लड़की रसेल स्ट्रीट से लापता हो गई है, इसलिए डायरी करानी है।"

"तो फिर उस तरफ के कमरे में जाइए, एस० आई० बाबू हैं।"

"मेरा कौन-सा उपकार होगा। सुनूं ?"

मुक्तिपद बोले, "तुमसे तो मैं पहले ही सब-कुछ कह चुका हूं मां। मेरी भलाई और तुम्हारी भलाई क्या अलग-अलग चीज़ है ? मेरा भला होने का मतलब है तुम्हारा भला होना और तुम्हारा भला होने का मतलब है मेरा भला होना। इससे हम लोगों को, कंपनी को और ज़्यादा प्रोफिट होता और अभी जो श्रमिक आंदोलन चल रहा है वह भी नहीं चलता।"

दादी मां बोलीं, "देखो मुक्ति, मैं हमेशा ही अपने वादे पर दृढ़ रहती आई हूं। एक बार जो कह देती हूं उससे तिल-मात्र भी हिलती-डूलती नहीं हूं। चूंकि तू बोल रहा है, इसीलिए मैं सुन रही हूं। लेकिन यह जान ले, मेरे निर्णय में कोई फेर-बदल नहीं होने वाला है।"

यह सुनकर मुक्तिपद बहुत देर तक गुमसुम बैठे रहे। उसके बाद उठकर खड़े हो गए और बोले, "अच्छा, तो फिर चलता हूं।"

एकाएक बिन्दु ने दरवाज़े के बाहर से सूचना दी, "दादी मां, मुन्ना बाबू घर लौट चुके हैं।"

"लो, मुन्ना आ गया।"

यह कहकर सौम्य को बुलाने के लिए बिन्दु से कहा। यह खबर सुनकर मुक्तिपद फिर से बैठ गए।

सौम्य के आते ही पूछा, "क्या बात है, आज तुम ऑफिस क्यों नहीं गए ?"

सौम्य बोला, "मैं तो गया था। आप ही नहीं थे।"

"हां, आज मैं बेशक दिन-भर फैक्टरी में था। लेकिन मैंने एक बार हेडऑफिस फोन किया था। लेकिन किसी ने नहीं बताया कि तुम ऑफिस आए हो।"

सौम्य बोला, "मैं ऑफिस से एक दूसरे काम से बाहर चला गया था।"

मुक्तिपद बोले, "आज फैक्टरी में मेरे श्रमिकों ने बेहद हंगामा किया है। बरदा घोषाल आया था, उसे भी सारा कुछ स्पष्ट तौर पर बताया। कल फैक्टरी जाओगे तो तुम्हें सारी बातों की जानकारी प्राप्त होगी।"

उसके बाद संदर्भ बदल मां की ओर ताकते हुए बोले, "मां, तो फिर सौम्य के लंदन जाने के बारे में क्या तय किया ?"

दादी मां बोलीं, "मेरे गुरुदेव का पत्र आने के बाद ही सारा कुछ तय करूंगी। और तुझसे तो कह ही दिया है कि सौम्य की शादी कराए बगैर उसे लंदन नहीं भेजूंगी।"

यह सुनकर मुक्तिपद कुछ हताश जैसे हो गए। खड़े होकर बोले, "खैर, तुम जो ठीक समझो वही करो, इस संदर्भ में मुझे और कुछ नहीं कहना है।"

उसके बाद जाने के दौरान सौम्य की तरफ देखते हुए बोले, "कल एक बार फैक्टरी जाना।"

यह कहकर मुक्तिपद अब रुके नहीं।

एकबारगी तीन-मंज़िले से लंबे डग भरते हुए एक-मंज़िले पर चले आए। उसके बाद एक-मंज़िले की सिंहवाहिनी के मंदिर में। उस समय वहां सांध्य आरती का आयोजन चल रहा था। उस तरफ देखे बगैर बाहर जाने का रास्ता पकड़ सीधे अपनी गाड़ी में आकर बैठ जाए। गाड़ी तत्क्षण मुक्तिपद को लिये सीधे बेलुड़

फैक्टरी की तरफ रवाना हो गई।

बिडन स्ट्रीट भवन मे जब यह दृश्य था तब रसेल स्ट्रीट के मकान में एक दूसरे ही दृश्य की भूमिका चल रही थी। योगमाया ने दिन-भर खाना नही खाया है। और योगमाया जब कि दिन-भर बिना खाए है तो ऐसी हालत मे शैल कैसे खाना खा सकती है?

अचानक दरवाजे की कुंडी की खटखटाहट होते ही योगमाया ने तुरन्त जाकर दरवाजा खोल दिया। संदीप ने कमरे के अन्दर आकर पूछा, "विशाखा आई?"

"नही बेटा, अब तक नही आई।"

संदीप बोला, "उस मकान मे खूब शोर-शराबा हो रहा है। आज मुक्तिपद बाबू दादी मां के पास आए थे। आज उन लोगों की फैक्टरी मे बेहद हंगामा हुआ है। उसके बाद सौम्य बाबू आए—"

"उस मकान में सौम्य बाबू पहुंच चुके हैं तो फिर मेरी विशाखा अब भी क्यो नही आई? दोनो तो एक साथ निकले थे। एक आदमी लौटकर चला आया तो फिर दूसरा कहां गया? अब विशाखा भी घर लौटेगी—! न जाने बेटा, क्या होगा? मुझे बड़ा ही डर लग रहा है।"

संदीप भी चिन्ता में पड़ गया। कॉलिज मे लौटने के बाद जब वह बिडन स्ट्रीट के मकान मे गया था, तभी मल्लिक चाचा बोले थे, "आज मंझले बाबू यहां आए हैं।"

संदीप ने पूछा था, "क्यो?"

"उन लोगों के कारखाने में हंगामा मच गया है।"

संदीप ने पूछा था, "अब क्या होगा?"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "और क्या होगा? कुछ भी नही। हरेक साल किसी न किसी बात पर झमेला खड़ा होता है। लेकिन सुना है, मझले बाबू की तबीयत आए दिन ठीक नही रहती है।"

उसके बाद संदीप को अब पता चला कि छोटे बाबू घर लौट आए हैं तब वह दौड़ता हुआ रसेल स्ट्रीट पहुंचा। आने पर जब सुना कि विशाखा अब तक वापस नहीं आई है तो समझ नही सका कि अब क्या किया जाए।

बोला, "तो फिर कोतवाली जाकर रिपोर्ट कर आऊं मौसीजी?"

योगमाया इस बात का क्या जवाब दे! योगमाया इस प्रकार की विपत्ति मे कभी नही फसी थी। कलकत्ता शहर के हालचाल से योगमाया वाकिफ नही है।

संदीप अब रुका नही। बोला, "चलता हूं, एक बार थाने से हो आऊं। पुलिस को सूचना दे देना ठीक रहेगा। सूचना देकर अभी तुरन्त चला आऊंगा।"

यह कहकर संदीप बाहर निकल आया। थाना पार्कस्ट्रीट मे है। इसके पहले संदीप किसी थाने के अन्दर नही गया था। थाने मे एक कांस्टेबल पर नजर पड़ने पर संदीप ने पूछा, "थाने के बड़े बाबू कहां हैं?"

कांस्टेबल बोला, "बड़े बाबू बाहर निकले हैं। आपको क्या जरूरत है?"

संदीप बोला, "एक लड़की रसेल स्ट्रीट से लापता हो गई है, इसलिए डायरी करानी है।"

"तो फिर उस तरफ के कमरे में जाइए, एस० आई० बाबू हैं।"

संदीप ने उसके निर्देशानुसार उसी कमरे में प्रवेश किया। जाते ही एक वर्दीधारी व्यक्ति ने पूछा, "आपको क्या चाहिए ?"

संदीप बोला, "एक लड़की खो गई है, इसी के बारे में डायरी करानी है।"

उस शख्स ने एक खाता निकाला। खाते का पन्ना खोलकर बोला, "बताइए, उस लड़की का नाम क्या है ?"

"विशाखा गांगुली।"

"उम्र ?"

उम्र, किस स्कूल में पढ़ती है, मकान का पता, सब कुछ दर्ज करने के बाद उस शख्स ने कहा, "आपको किसी पर शक हो रहा है ?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

"मुहल्ले के किसी युवक से उसका प्रेम-व्रेम था ?"

संदीप ने कहा, "नहीं। लेकिन एक आदमी से उसकी शादी होने वाली थी।"

"वह कौन है ?"

संदीप ने कहा, "उसका नाम है सौम्यपद मुखर्जी, पता बारह बटे ए, बिडन स्ट्रीट। आज भी सवेरे विशाखा स्कूल गई थी। ड्राइवर हर रोज़ उसे गाड़ी से स्कूल पहुंचा जाता था, उसके बाद स्कूल में छुट्टी होने पर उसे गाड़ी पर बिठाकर तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान में ले आता था। लेकिन आज ड्राइवर खाली गाड़ी लेकर लौट आया। उसने बताया, विशाखा उसकी गाड़ी से नहीं आई है। सौम्य बाबू विशाखा को लेकर कहीं चले गए हैं।"

वह शख्स बोला, "जिससे शादी होने वाली है वही तो विशाखा को लेकर चला गया है। फिर आप लोगों के लिए चिन्ता की कौन-सी बात है ?"

संदीप बोला, "अभी उनकी शादी नहीं हुई है। अभी क्या उन लोगों का मिलना-मिलना ठीक है ? इसके अलावा अगर कोई मुसीबत आकर खड़ी हो जाए, तो ?"

"किस तरह की मुसीबत ?"

संदीप बोला, "कुछ कहा नहीं जा सकता। हो सकता है गर्भ रह जाए। ऐसी हालत में सौम्य बाबू क्या उससे शादी करने को तैयार होंगे ?"

थाने के सब-इंस्पेक्टर ने कहा, "आजकल तो अक्सर इस तरह की वारदातें होती हैं। इस तरह के मामले के संबंध में थाने में आप डायरी कराने क्यों आए हैं ?"

संदीप ने कहा, "डायरी क्यों कराने आया हूं यह तो आपको बता ही चुका हूं। आखिर में सौम्य बाबू विशाखा से शादी न करें तो ऐसी हालत में वह लड़की कहीं की न रह जाएगी।"

सब-इंस्पेक्टर बोला, "इस तरह की कितनी ही लड़कियां बर्बाद हो चुकी हैं। इसकी वजह से आजकल क्या कोई फिक्र करता है ?"

उसके बाद बोला, "ठीक है, आप यहां हस्ताक्षर कर दें।"

उसके बाद न जाने क्या याद आया कि पूछ बैठा, "आप कौन हैं ? कहने का मतलब है कि लड़की के आप कौन हैं ?"

संदीप बोला, "मैं कोई नहीं हूं।"

"मतलब ?"

संदीप बोला, "इसका मतलब यह कि लड़की मेरी रिश्तेदार नहीं है।"

सब-इंस्पेक्टर को आश्चर्य हुआ। बोला, "यह क्या जनाब, लड़की आपकी रिश्तेदार नहीं है तो फिर आप डायरी कराने क्यों आए हैं ? आप क्या लड़की के मुहल्ले के बाशिन्दे हैं ?"

संदीप बोला, "नहीं। लड़की के घर में किसी मर्द के न होने से मुझे ही आना पड़ा।"

उस शख्स ने पूछा, "आप कहां रहते हैं ?"

संदीप बोला, "मैं बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट भवन में रहता हूं। सौम्यपद मुखर्जी वहीं रहते हैं।"

"तो आप जिसके घर में रहते हैं उसी के खिलाफ शिकायत दर्ज कराने आए हैं ?"

संदीप बोला, "हां, मैं वहां रहता-खाता हूं और तीन नंबर रसेल स्ट्रीट वाले मकान की विशाखा और उसकी मां की देखभाल करता हूं। यही काम मेरी नौकरी में शुमार है—कहा जा सकता है कि मैं उस मकान की मां और उनकी लड़की का गार्जियन हूं।"

सब-इंस्पेक्टर बोला, "ठीक है, आप यहां इस डायरी के पन्ने पर हस्ताक्षर कर दें।"

उधर जब संदीप पुलिस के थाने में जाकर बातचीत कर रहा था, इस ओर तीन नंबर रसेल स्ट्रीट भवन के दरवाजे की कुंडी खटखटा उठी। दौड़कर जाने के बाद विशाखा पर नजर पड़ते ही योगमाया को ऐसा लगा जैसे वह आसमान से नीचे चली आई हो।

बोली, "तू ?"

विशाखा का चेहरा तब बिलकुल बुझा-बुझा-सा लग रहा था। देखकर लगा, उसे जैसे प्रबल आंधी-तूफान के बीच से गुजरना पड़ा हो। वह उस समय ठीक से खड़ी नहीं हो पा रही थी। वह मां की छाती पर लुढ़क पड़ी। योगमाया ने तत्क्षण उसे अपनी बांहों में भर लिया। उसी तरह बांहों में भरकर विशाखा को ले जाकर बिस्तर पर लिटा दिया। बिस्तर पर लेटते ही विशाखा ने अपनी आंखें मूंद लीं।

योगमाया की नाक में एक अजीब-सी गंध आई।

योगमाया ने कहा, "इतनी देर तक कहां थी तू ? बता कहां थी ?"

विशाखा ने कोई जवाब नहीं दिया, पहले की तरह ही आंखें बन्द किए पड़ी रही।

योगमाया ने फिर कहा, "बात का जवाब क्यों नहीं दे रही है ? बता, अब तक कहां थी ? मैं और शैल बगैर खाए निराहार हैं। तुझे हम लोगों का खयाल ही नहीं था ? बता, कहां गई थी ? अन्टी मेमसाहब, जयंती दीदी और डॉक्टर साहब तुम्हें न पाकर वापस चले गए। बता, तुझे कौन ले गया था ?"

तो भी विशाखा के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला।

योगमाया अपनी लड़की को ठेल-ठेलकर तंग करने लगी। कहने लगी, "मेरी बात का उत्तर नहीं देगी ? नहीं देगी उत्तर ? तुम्हारे मुंह से किस चीज की बू आ

रही है, बता ?"

अब विशाखा के मुंह से एक शब्द निकला, "शराब की।"

"शराब की ? शराब की गंध ? तूने शराब पी है ?"

विशाखा फिर खामोश हो गई। योगमाया ने कहा, "मुंहजली, मेरी कोख से पैदा होकर तूने इस तरह मुझे बर्बाद कर डाला ? बता, क्यों शराब पीने गई ? किसने तुझसे शराब पीने को कहा ? किसने तुझे शराब पिलाई ?"

विशाखा ने अस्फुट स्वर में कहा, "तुम्हारे दामाद ने।"

"मेरे दामाद ने ? मेरे दामाद ने तुझे शराब पीने को दी और तूने पी ली ? शराब पीने में तुझे शर्म नहीं लगी ?"

विशाखा अब खुद भी रोने लगी है। उसकी आंखों से अनवरत आंसू की बूंदें लुढ़क रही हैं।

योगमाया ने अपने पल्लू से विशाखा की आंखों के आंसू पोंछते हुए कहा, "तू शराब पीने क्यों गई ? मेरे दामाद ने तुझे जबरन शराब पिला दी ?"

"हां।"

योगमाया बोली, "मेरे दामाद ने तुझे कहां ले जाकर शराब पिलाई ? दुकान में ?"

विशाखा ने सुबकते हुए कहा, "नहीं, होटल में।"

योगमाया बोली, "दामाद तुझे होटल ले गया था ? होटल जाकर तुम लोग कहां ठहरे ?"

विशाखा तब भी रोए जा रही थी। रोते-रोते बोली, "होटल के एक कमरे में।"

"यह क्या ? होटल के एक कमरे में तुझे ले गया ? उस कमरे में और कौन था ? बता, उस कमरे में और कौन था ? बता, तुम लोगों के अलावा और कौन उस कमरे में था ?"

विशाखा बोली, "और कोई नहीं था।"

"और कोई नहीं था ? उसके बाद ?"

विशाखा चुप हो गई। योगमाया ने फिर पूछा, "उसके बाद ? उसके बाद तूने क्या किया ?"

विशाखा ने अबकी भी कोई उत्तर नहीं दिया।

योगमाया अब अपनी लड़की के झोंटे को झकझोरती हुई बोली, "बताएगी नहीं मुंहजली, जवाब नहीं देगी ? फिर देख, मैं तेरे साथ कैसा सलूक करती हूं ?"

यह कहकर भंडारघर से एक हंसिया ले आई। हंसिया उठाते देख शैल को एक भयंकर दहशत की आहट का अहसास हुआ और वह पीछे-पीछे आकर कहने लगी, "यह क्या कर रही हो मांजी ? क्या कर रही हो ? लड़की का खून करोगी क्या ?"

योगमाया बोली, "जा, तू अपना काम कर।"

यह कह अन्दर से कमरे की सिटकनी बन्द कर दी। इस पर शैल बाहर से चिल्लाने लगी, "माताजी, उसे मत मारो, वह छोटी लड़की है, क्या से क्या कर बैठी है। उसे मारो मत माताजी, दरवाज़ा खोलो।"

योगमाया अभी अपनी लड़की की समस्या में डूबी हुई है। बाहर की कोई आवाज़ उसके कानों में नहीं आ रही है। कह रही है, "बता, होटल के कमरे के अन्दर घुसकर तुम लोगों ने क्या किया? क्या किया, बता?"

विशाखा मां के हाथ में हंसिया देखकर डर गई है। भयभीत स्वर में कहती है, "मुझे मत मारो, मत मारो।"

"तो फौरन बता कमरे के अन्दर जाकर तुम लोगों ने क्या किया?"

"हमने खाना खाया।"

"क्या खाया?"

विशाखा कहती है, "भात, मास, मछली···"

"और क्या खाया?"

विशाखा कहती है, "कॉंटनेंट···"

"और?"

विशाखा गुमसुम हो जाती है और फिर रोने लगती है।

"बता, और क्या खाया?"

"और कुछ भी नहीं?" विशाखा कहती है।

योगमाया पूछती है, "घर में पलंग था?"

"हां।"

योगमाया पूछती है, "पलंग पर लेटी थी?"

विशाखा बहुत देर बाद कहती है, "हां।"

"शराब कब पी?"

"उसी वक्त।"

"लेटे-लेटे पी या शराब पीने के बाद लेटी?"

विशाखा कहती है, "लेटने के पहले।"

"उसके बाद?"

विशाखा उत्तर नहीं दे रही है, यह देखकर योगमाया फिर डांटती है, "बता मुंहजली, उसके बाद क्या हुआ?"

विशाखा के मुंह से किसी भी हालत में इसका जवाब नहीं निकलता है।

"क्यों, जवाब क्यों नहीं दे रही है? अबकी जवाब न दिया तो इस हंसिए से तुझे काट डालूंगी। बता, इसके बाद क्या हुआ।"

विशाखा हंसिया देखकर बोली, "मुझे मारो नहीं मां, मत मारो।"

योगमाया बोली, "तो फिर बता, इसके बाद क्या हुआ? दामाद ने तुझसे क्या किया, बता?"

"मुझे चूमा।"

"उसके बाद?"

उधर दरवाज़े पर उस वक्त कुंडी खटखटाने की आवाज़ होते ही शैल ने दरवाज़ा खोला और देखा कि संदीप है।

संदीप ने अंदर आकर पूछा, "विशाखा आ गयी?"

शैल बोली, "हां, उस कमरे में—"

"और मौसीजी? मौसीजी कहां हैं?"

"मौसीजी भी उसी कमरे में हैं। अन्दर से दरवाजा बन्द कर दिया है।"

संदीप मौसीजी के सोने के कमरे में धक्का लगाने लगा। शैल से पूछा, "मौसीजी कमरे की सिटकनी बन्द कर क्या कर रही हैं?"

शैल बोली, "विशाखा को मार रही हैं।"

संदीप बोला, "क्यों, विशाखा को क्यों मार रही हैं? विशाखा ने क्या किया है? विशाखा दिनभर कहां थी?"

उसके बाद बाहर से ज़ोर-ज़ोर से पुकारने लगा, "मौसीजी, मौसीजी, मैं संदीप हूं। मैं थाना जाकर डायरी कर आया हूं। दरवाज़ा खोलिए। मौसीजी—"

लेकिन तब भी क्या संदीप जानता था कि दैनंदिन यथार्थ के गणित से जीवन के गणित का इतना पार्थक्य है? दो और दो मिलकर चार होता है, यह जितना सच है उसी तरह दो-दो मिलकर पांच भी होता है, इसमें उतनी सच्चाई नहीं है?

अखबारों में जो खबर छपती है वह झूठ नहीं होती। ज्यादातर सच ही होती हैं। लेकिन उन्हीं खबरों को इतिहास के पृष्ठों से लेकर जब चार्ल्स डिकेन्स ने 'ए टेल ऑफ टू सिटीज' नामक उपन्यास लिखा तो वह और भी बड़े सत्य के रूप में रूपांतरित हो गया। फ्रांसीसी विद्रोह एक ऐतिहासिक सत्य है, लेकिन उसी फ्रांसीसी विद्रोह पर लिखा गया 'ए टेल ऑफ टू सिटीज' और अधिक गहरा निविड़ सत्य बनकर खड़ा हो गया है।

इतने दिनों के बाद संदीप को लगता है, जीवन जिस तरह एक सच है, उसी तरह मृत्यु भी एक सच है। तो भी यह जानने के बावजूद कि मृत्यु सत्य है, आदमी को जीवन के प्रति इतनी ममता क्यों होती है? सौम्य बाबू क्या नहीं जानते थे कि जिस जीवन से वे बर्बादी का खेल खेल रहे हैं, वह जीवन नहीं, बल्कि जीवन का एक खंडहर है। वह बहुत कुछ गीत जैसा है। गीत का जब प्रारंभ होता है तो उसी समय पता चल जाता है कि उसका क्या स्वरूप है। उसका एक अंश जब पूरा होकर सम पर लौट आता है तभी समझ में आता है कि कौन-सी रागिनी है और उस गीत का अंतरा किस तरफ मुड़ेगा और उसकी परिणति कैसी होगी।

सौम्य बाबू का भी जीवन क्या उसी तरह का नहीं है?

गोपाल हाजरा बहुत दिन पहले संदीप को नाइट क्लब न ले गया होता तो वह क्या सौम्य बाबू के चरित्र का अंदाजा लगा सकता था?

परन्तु उस समय संदीप को लगा था, यह कम उम्र का धर्म है। उम्र कुछ ज्यादा होते ही उसमें कमी आ जाएगी।

संदीप मन लगाकर दिनभर नियमानुसार काम में व्यस्त रहता था। वह जिस तरह नियमानुसार काम करता था उसी तरह यह भी चाहता था कि हर कोई नियमानुसार अपना-अपना काम करे। बचपन में मां उसे ऐसा ही करने को कहती। संदीप की मां ही उसके लिए आदर्श थी। मां उसे यह सब केवल मुंह-जबानी ही नहीं सिखाती, बल्कि वह भी अपना सारा काम नियम से करती। कहीं किसी तरह का अनियम देखती तो मां को बुरा लगता।

कलकत्ता आने पर संदीप ने देखा, तमाम लोग अनियम का पालन करते हैं।

कलकत्ता में मानो अनियम का पालन करना ही जैसे सबका नियम हो। कॉलेज में जो लोग पढ़ते वे भी नियमित समय पर कॉलेज नही आते। छात्रों के साथ भी यही बात थी। सदीप को यह अच्छा नही लगता।

मा कहती, "और-और लोग चाहे जो करें, करने दो। तुम मन लगाकर नियम से काम करते रहो बेटा। दूसरे की बात पर ध्यान मत देना।"

मा की याद आते ही संदीप को कोई होश नही रहता। मा के पत्र के आने में देर होते ही उसका मन छटपटाने लगता। मा को लिखता—"मा, तुम इतनी देर से पत्र का जवाब क्यो देती हो? तुम्हारी चिट्ठी न पाने से रात में मुझे नीद नही आती। रात मे कॉलेज की किताबें पढ़ते-पढ़ते तुम्हारे चेहरे की याद आ जाती है। अबकी जल्द-से-जल्द जवाब देना।"

मा भी वैसी ही है। लडके की चिट्ठी पाते ही वह भागी-भागी चटर्जी भवन की बहू के पास जाती। कहती, "सदीप की चिट्ठी ज़रा पढ़ दो दीदी।"

उसके बाद जाने-पहचाने किसी भी आदमी से मुलाकात होते ही मां कहती, "जानते हो भैया, मेरा मुन्ना बी० ए० पास कर गया है।"

सदीप ने बी० ए० पास किया या नही, इस सम्बन्ध मे किसी के लिए माथा-पच्ची करने की कोई जरूरत न थी। और न केवल सदीप के पास करने से सम्बद्ध मामले के लिए बल्कि दुनिया से सम्बन्धित किसी मामले के लिए किसी को माथा खपाने की ज़रूरत महसूस नही होती। तमाम लोग तब अपनी-अपनी समस्या के कारण इतने व्यस्त थे कि कौन क्या कर रहा है, इस सम्बन्ध में सोचने का न तो किसी के पास वक्त था और न ही इच्छा। लेकिन मां का ऐसा स्वभाव था कि सभी लोगो को बुलाकर सदीप के समाचार की सूचना देती और इसमे उसको तृप्ति का अहसास होता।

एक बार मा ने लिखा था, उसे सदीप से मिलने की तीव्र इच्छा हो रही है।

संदीप ने पत्र के उत्तर मे लिखा था—"अभी मैं तरह-तरह के कामों के चलते बड़ा ही व्यस्त हूं। मैं यहा नही रहूगा तो इस घर का बडा ही नुकसान होगा। तुम मेरे बारे मे ज्यादा मत सोचा करो मा। मैं अच्छी तरह हू। तुम अपने स्वास्थ्य पर ध्यान रखना। मेरी परीक्षा जल्द ही होने वाली है। दिन के वक्त बहुत काम रहने की वजह से पढ़ने-लिखने का वक्त नही मिलता। रात मे जगकर पढ़ता हू। फुर्सत मिलते ही बेड़ापोता आकर मैं तुम्हे सारा कुछ विस्तार से बताऊगा। मेरे बारे में तुम चिन्ता मत करना। अपने स्वास्थ्य का ख़याल रखना। आज्ञाकारी: सदीप।"

सच, तब सदीप बहुत ही व्यस्त था। क्योकि तब मल्लिकजी कलकत्ता मे नही थे। वे गुरुदेव के पास काशी गए हुए थे। गुरुदेव की चिट्ठी का दादी मा बहुत दिनो से इन्तज़ार कर रही थी। आखिर मे धैर्य खोकर मल्लिकजी से कहा: "आप खुद एक बार वहा जाइए। जाकर मेरी समस्या के बारे में अपने मुह से विस्तार के साथ कहें। वरना वे ठीक से मेरी बात समझ नही सकेंगे।"

अतत. यही इंतज़ाम किया गया। मल्लिकजी एक दिन दुर्गा का स्मरण करते हुए काशी के लिए रवाना हो गए। और तभी से संदीप की व्यस्तता की कोई इयत्ता न रही। कॉलेज की पढ़ाई के साथ-साथ दैनिक कार्यों की नियम-शृंखला के

लन की होड़ चलने लगी। आमदनी का हिसाब लिखने का अलग नियम है, खर्च
का हिसाब लिखने का भी अलग ही नियम। यह सब लिखने का तौर-तरीका जाने
के पहले मल्लिक चाचा ने सिखा दिया था। बोले थे, "मंझले बाबू यदि किसी दिन
दफ्तर बुलाएं तो जाना, समझे ?" यह सुनकर संदीप को भय का अहसास हुआ
था। मंझले बाबू के सामने वह कैसे खड़ा होगा ?

लेकिन कहावत है न, कि जहां बाघ का डर होता है वहीं शाम हो जाती है।
संदीप के साथ भी यही बात हुई। मंझले बाबू ने उस दिन संदीप को बुला भेजा।

उपरले तल से दादी मां ने बुला भेजा। बोलीं, "ऑफिस से मंझले बाबू का
टेलीफोन आया था। तुम्हें एक बार मंझले बाबू के ऑफिस जाना है।"

"कब ?"

दादी मां बोलीं, "अभी तुरन्त। मल्लिकजी नहीं हैं, इसलिए तुम्हारा ही
बुलावा आया है। मंझले बाबू जो कुछ दें, वह लाकर मुझे दे जाना, समझे ?"

संदीप का खाना तब नहीं हुआ था। सो चाहे न हो, मंझले बाबू से मिलने के
बाद खाना खा लिया जाएगा। संदीप उस दिन झटपट तैयार हो गया। तैयार होने
का मतलब है शर्ट-पैंट और जूते पहनना। साथ में एक झोला भी ले लिया।
मल्लिक चाचा जब भी बाहर जाते हैं, इस झोले को अपने साथ ले जाते हैं। झोले
के अंदर चाहे कुछ हो या न हो मगर झोला साथ में होना चाहिए।

हर रोज सवेरे ही नहा-धो लेता है। बाहर निकलने के दौरान उसने भी 'दुर्गा-
दुर्गा' का उच्चारण किया। पता नहीं, मंझले बाबू से क्या बातें होंगी। इसके पहले
न तो रूबरू हुआ है उनके और न ही बातें की हैं। लिहाजा भय का भी अहसास
होने लगा।

उस दिन वह रसेल स्ट्रीट के मकान पर नहीं जा सका। सोचा, मंझले बाबू से
मुलाकात कर वापस आने के दौरान जाने से भी काम चल जाएगा।

लेकिन 'सैक्सबी मुखर्जी कंपनी' का पता लगाकर वहां पहुंचने पर संदीप
अवाक् हो गया। इतनी भीड़, इतने सारे लोग! चारों तरफ लोग धक्कम-धुक्का
कर रहे हैं। उनके हाथों में बड़े-बड़े पोस्टर हैं। उनमें लिखा हुआ है—सैक्सबी
मुखर्जी मुर्दाबाद। किसी-किसी में लिखा हुआ है—मेहनतकशों को मारकर मुनाफे
की लूटपाट नहीं चलेगी, नहीं चलेगी। जो बातें पोस्टरों में लिखी हुई हैं उन्हीं को
ज़ोर-ज़ोर से नारे लगाते हुए माहौल में गर्मी ला रहे हैं। और उसी को देखने के
लिए कलकत्ता के कार्य-व्यस्त इलाके में निकम्मे लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई है।
उन निकम्मों का समारोह देखने की खातिर और भी बहुत सारे निठल्ले वहां आकर
एकत्र हो गए हैं। आश्चर्य! संदीप यह देखकर अवाक् हो गया कि कलकत्ता मे
इतने सारे लोग बेरोजगार आदमी हैं! इतने लोगों को रोज़गार नहीं मिल रहा है
इस कर्ममय शहर में!

संदीप भीड़ से बचकर अपेक्षाकृत थोड़ी दूरी पर जाकर खड़ा हो गया
हालांकि उसके यहां से चले जाने से काम नहीं चलेगा, उसे तो आज मंझले बाबू
मिलना ही है।

इस बीच भीड़ बढ़ते-बढ़ते पूरा अंचल एकबारगी अचल हो दम घुटने जै
स्थिति में बदल गया है। चारों तरफ सिर्फ आदमी के सिर ही दीख रहे हैं। मा

आदमी के सिर पर से पैदल चलते हुए इस पार से उस पार तक जाया जा सकता है। गाड़ियों का आवागमन बहुत पहले से बन्द हो गया है। बस भी नहीं है। लोग क्या करें? फिर क्या शहर में काम-काजी लोगों की अपेक्षा निकम्मों की ही संख्या अधिक है?

"इनक्लाब जिन्दाबाद! इनक्लाब जिन्दाबाद—"

लोगों की भीड़ के साथ-साथ कर्णभेदी चिल्लाहट की आवाज से पूरा मुहल्ला परेशान हो उठा। न कोई किसी दफ्तर में घुस सकता है और न ही किसी दफ्तर से बाहर निकल सकता है। फुटपाथ पर तरह-तरह की खाने की चीजें लेकर बैठने-वाले फेरीवाले भी अपनी-अपनी दुकान बन्द कर और सामान सहेजकर डर से वहां से खिसकने लगे।

बगल के एक आदमी से संदीप ने पूछा, "ये लोग क्या चाहते हैं साब?"

आदमी बोला, "देख नहीं रहे कि कंपनी का यूनियन कंपनी के मैनेजर का घेराव करने आए हैं—

"किस कंपनी? मैकमवी मुखर्जी कंपनी?"

"हां।"

"वे लोग किसका घेराव करेंगे?"

"कंपनी के मालिक का, और किसका? मुक्तिपद मुखर्जी कंपनी के डाइरेक्टर हैं। वे अंदर हैं। इसी वजह से तो यहां इतनी भीड़ है। कंपनी का हेडऑफिस तो यहीं है।"

संदीप बोला, "लेकिन यहां और भी तो दफ्तर हैं, साथ-साथ उनका भी तो घेराव हो गया है। ये लोग उन्हें क्यों कष्ट दे रहे हैं?"

"नहीं तो किसी को भी होश नहीं आएगा। फिर कोई श्रमिकों को ठगने की हिम्मत नहीं कर पाएगा।"

अब संदीप क्या करे? मझले बाबू से बगैर मिले घर वापस चला जाएगा? ऐसी हालत में दादी मां क्या सोचेंगी? संदीप से एक मामूली-सा भी काम नहीं हो पाएगा? ऐसी हालत में संदीप को रखने से फायदा ही क्या है? एक आदमी के खाने में आजकल क्या कोई कम खर्च होता है?

संदीप को लगा, मुकम्मल कलकत्ता शहर इस डलहौजी स्क्वायर में आकर जैसे जमा हो गया हो। बगलवाला आदमी न जाने कहां और कब आंखों से ओझल हो गया। कोई भी एक जगह स्थिर होकर खड़े होने में स्वयं को असमर्थ पा रहा है। इतने-इतने लोगों की भीड़, इतनी विशृंखला, फिर भी कहीं कोई पुलिसकर्मी नहीं! पुलिस क्यों नहीं है?

एकाएक न जाने कहां से युवजनों का एक झुंड आकर उपस्थित हो गया। उनकी ज़बान से 'मारो-मारो' आवाज़ निकल रही है। वे लोग भी संख्या की दृष्टि से कोई कम नहीं हैं। दोनों दल में मार-पीट शुरू हो गई। संदीप किधर भागे समझ नहीं सका। इसी बीच एक बम फटने की आवाज हुई और उस आवाज के साथ ही धुएं के गुबारे फैल गए। जो लोग दूर खड़े होकर मजा लूट रहे थे वे जान बचाने की खातिर भागने लगे।

किसी ने उसे सम्बोधित करते हुए कहा, "भागिए जनाब, भागिए—"

यह सुनकर संदीप भागने लगा, "पूछा, "ये लोग कौन हैं साहब ?"
दौड़ते-दौड़ते वह आदमी बोला, "ये लोग दूसरे यूनियन के आदमी हैं।"
"दूसरे यूनियन का मतलब ?"
इस बात का उत्तर दे, ऐसा निर्बोध नहीं है वह आदमी। जो लोग दूसरे यूनियन का मतलब नहीं समझते वे कलकत्ता के कचरे हैं।

सचमुच तब संदीप दो नंबर यूनियन का अर्थ नहीं समझता था। बहुत बाद में उसकी समझ में आया था। तब संदीप काफी कुछ अनुभवों के बीच से गुजर चुका था और वह एक बैंक का कर्मठ मुलाजिम था। नौकरी में तरक्की पाने के लिए तब वह दिन को न तो दिन और रात को न तो रात समझता था। उस बैंक की नौकरी में भी तब दो यूनियन बनकर तैयार हो चुके थे।

जीवन के लम्बे रास्ते की परिक्रमा के एक चरम सत्य का उसे अहसास हो चुका था। वह यह कि जो हर दिशा से सच्चाई को पकड़कर जीवन जीना चाहता है समाज उसे अबूझ समझता है। यही कारण है कि संदीप को भी इतने दिनों से सभी अबूझ और अबोध ही समझते आ रहे हैं। लेकिन वह खुद जानता है कि वह क्या है। खुद को भली भांति पहचानना हो तो स्वयं को निर्बोध के रूप में पेश करने का बहाना करना पड़ता है, यह बात संदीप किसे समझाएगा और समझेगा ही कौन ? और स्वयं को पहचानने से बढ़कर ज्ञान दुनिया में और क्या हो सकता है ? स्वयं को पहचानने के बाद ही अपने से बड़ों की पहचान की जा सकती है।

मगर यह सब बात अभी क्यों कह रहा हूं ? इससे तो बेहतर यही है कि उस दिन के दुर्योग की घटना का ब्यौरा ही प्रस्तुत करूं। याद है, बहुत दूर से भी बम फटने की विकट आवाज़ कानों में आ रही थी। जैसे यह बम की आवाज़ न होकर तोप छूटने की आवाज़ हो। संदीप ने कभी तोप की गड़गड़ाहट नहीं सुनी है। लेकिन लोगों से सुनने के बाद तोप की गड़गड़ाहट की विकरालता के बारे में उसके मन में एक धारणा बन गई थी।

दूर, डलहौजी मुहल्ले के केन्द्र मे तब धुएं का अंबार ऊपर उठकर फैल रहा था। लोगों की बातचीत से पता चला, पुलिस के जत्थे ने पहुंचकर वहां के हंगामे को शांत कर दिया है।

संदीप ने कहा, "कैसे शांति आई ? लगता है पुलिसवालों ने आकर गोलियां चलाई।"

उस आदमी ने कहा, "नहीं, जो दो यूनियन अब तक टकरा रहे थे, पुलिसकर्मियों ने आकर उन्हें शांत कर दिया है।"

संदीप ने पूछा, "अब उस तरफ जाया जा सकता है ?"
"हां-हां, अब सब कुछ नार्मल है।"
संदीप ने आहिस्ता-आहिस्ता सड़क पर कदम बढ़ाए। अब कहीं से भी बम की आवाज नहीं आ रही है। देखने में आया, अब फिर से दो-चार गाड़ियों का आना-जाना शुरू हो गया है। पहले जो सोचा था, वैसी बात अब नहीं है। थोड़ी देर पहले जो कुछ दूर बम-गोली चले थे, उसका अब कोई चिह्न नहीं है। सारा कुछ सामान्य-स्वाभाविक है। बड़ी सड़क से दुबारा बस का आना-जाना चालू हो गया है।

पैदल चलता हुआ वह फिर मंसने बाबू के ऑफिस के सामने आकर खड़ा हुआ। अब पहले के लोगों की भीड़-भाड़ नहीं है। मंदीर ऑफिस के सामने आ, फाटक पार करता हुआ एकबारगी जैसे ही लिफ्ट के दरवाजे के सामने आकर खड़ा हुआ कि लिफ्ट एक-मंजिले पर चला आया। वहां तब बहुतेरे आदमी खड़े थे। उन लोगों के साथ मंदीर भी भीतर जाकर खड़ा हो गया।

चौथी मंजिल पर पहुंचने के पहले ही मंदीर बोला, "मुझे चौथी मंजिल में उतरना है।"

चौथी मंजिल पर पहुंचते ही लिफ्ट थम गया। मंदीर जैसे ही लिफ्ट से उतरा कि मुशील पर उसकी नज़र पड़ी और वह अवाक् हो गया। मुशील लिफ्ट के अंदर जानेवाला था। मंदीर पर निगाह जाते ही वह भी अवाक् हो गया।

बोला, "आप यहां?"

मंदीर ने पूछा, "आप यहां किसलिए आए हैं?"

मुशील बोला, "मैं नौकरी की तलाश में आया था। और आप?"

मंदीर ने अपने काम के बारे में बताया।

मुशील बोला, "आप अपने लिए 'मैक्सवेल मुखर्जी कंपनी' में एक नौकरी का इन्तजाम तो कर ही सकते हैं। तीसरे पहर लॉ पढ़िएगा और दोपहर में इन लोगों के दफ्तर में काम कीजिएगा।"

मंदीर बोला, "यहां नौकरी करने से मैं बाकी दूसरे काम कब करूंगा? मुझे रसेल स्ट्रीट के एक मकान में जाना पड़ता है। वहां मुझे बहुत सारे काम रहते हैं। उन्हीं कामों के लिए ही तो इन लोगों ने मुझे रखा है।"

"किस तरह का काम?"

मंदीर ने सारा कुछ बताया। विशाखा, सौम्य बाबू और योगमाया देवी के बारे में बताया। उसके बाद बोला, "यहां भी जो आया हूं, यह भी मेरे काम का एक हिस्सा है। मल्लिकजी काशी चले गए हैं, उनके सारे काम अभी मुझे ही करना पड़ता है। काम क्या कोई कम है? काम किए बगैर क्या वे लोग मुझे बिठाकर रहने और खाने देंगे?"

मंदीर से मुशील की बहुत दिनों से जान-पहचान है, लेकिन उसे इन बातों का पता नहीं था।

मंदीर ने पूछा, "लेकिन आप?"

मुशील बोला, "मैं यहां नौकरी की तलाश में आया था। अब बिना नौकरी किए मेरा काम नहीं चल सकता। मुझसे एक आदमी ने वादा किया था, नौकरी दिला देगा। उससे मिलने के ख्याल से ही आया था। उसकी बात पर ही मैं उन लोगों की पार्टी में भर्ती हुआ था। लेकिन यहां आने पर बमबाजी के कारण हट जाना पड़ा। जिससे मिलने आया था वह आज ऑफिस ही नहीं आया है। मैं तीन माह से पार्टी के दादा लोगों के गिर्द चक्कर काट रहा हूं, लेकिन काम नहीं बन पा रहा है। क्या करूं, समझ में नहीं आ रहा। आप अफसरों से कह-सुनकर मुझे कोई नौकरी दिला दें। इतने बड़े आदमी के यहां रह रहे हैं, आप कहिएगा तो मेरा काम बन जाएगा।"

मंदीर हंसते हुए बोला, "आपने ठीक ही आदमी को पकड़ा है। मैं खुद [illegible]

अदना आदमी हूं, उसकी बात कौन सुनेगा ? आपने तो बताया कि आप पार्टी के मेम्बर बन चुके हैं।"

"बना हूं तो ज़रूर। तीन साल से पार्टी के दफ्तर में बेगार खट रहा हूं मगर एक पैसा तक नहीं मिला है ?"

"आपको कौन-सा काम करना पड़ता है ?"

सुशील ने कहा, "राह-बाट में लोगों से भीख मांगकर पार्टी के लिए चंदा वसूलता हूं। उस चंदे को पार्टी के दफ्तर में जमा कर देता हूं।"

"उसके बदले पार्टी क्या देती है ?"

"देगी क्या ? जब पार्टी सत्ता में आएगी तो हमें बड़ी-बड़ी नौकरियां मिलेंगी। इसके अलावा चुनाव के वक्त हमें हाथ-खर्च के लिए काफी पैसा मिलता है।"

"उससे आप लोगों का निर्वाह हो जाता है ?"

सुशील बोला, "निर्वाह नहीं होता। उसके बाद हम मुहल्ले में सार्वजनिक दुर्गा पूजा, काली पूजा करते हैं। उस वक्त हम दो-तीन महीने हंस-खेलकर बिता देते हैं। देखिए, आज मैं यहां नौकरी की तलाश में आया था लेकिन बमबाज़ी की परेशानी के कारण व्यर्थ ही मेरा इतना वक्त बर्बाद हो गया। कोई काम नहीं हो सका।"

संदीप ने कुछ कहना चाहा पर उसकी ज़बान से एक भी शब्द नहीं निकला। मानो, लहकती आग पर पानी गिर पड़ा हो।

संदीप का हाव-भाव देखकर सुशील अवाक् हो गया। पूछा, "क्या हुआ ? आप किसे देख रहे हैं ? उस तरफ क्या है ?"

संदीप ने मानो भूत देखा हो। बोला, "वे मंझले बाबू···"

"मंझले बाबू का मतलब ?"

सुशील ने गौर से देखा। मध्यवयस्क एक कोट-पैंटधारी सज्जन अंदर के किसी कमरे से निकल तेज़ कदमों से लिफ्ट के अंदर चले गए। अन्दर आते ही लिफ्टमैन ने उन्हें सलामी दी और लिफ्ट नीचे चला गया।

संदीप के चेहरे पर तब दहशत की छाप थी। सुशील ने इस पर गौर किया और पूछा, "वे कौन थे ?"

संदीप बोला, "वे ही तो सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर मुक्तिपद मुखर्जी हैं। उन्हीं से मिलने मैं यहां आया था। अब क्या किया जाए ?"

संदीप भय से सिकुड़ गया। सुशील ने सान्त्वना देते हुए कहा, "कहिएगा, ऑफिस के सामने बमबाज़ी होने के कारण आप ठीक समय पर नहीं पहुंच सके।"

संदीप ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। सुशील ने कहा, "आप इनसे कहकर अपने लिए एक नौकरी का इन्तज़ाम कर लीजिए। आपके सामने इतनी सुविधा है।"

लेकिन इस बात से सान्त्वना न मिलने के कारण संदीप लिफ्ट की ओर जाने के बजाय सीढ़ियां उतरने लगा। उसे सिर्फ इसी बात का अहसास होने लगा कि अब क्या होगा। अगर उसकी नौकरी चली जाए ! दादी मां अगर उसे घर से भगा

दें तो ऐसी हालत में वह कहां रहेगा ? क्या खाएगा ? वह अपनी मां की उम्मीद कैसे पूरी करेगा ?

मुक्तिपद ने गाड़ी में बैठते ही ड्राइवर को हुक्म दिया, "चलो बेलुड़।"

मुक्तिपद ने जब से कंपनी का कार्य-भार संभाला है तभी से उसकी मुहिम की शुरुआत हुई है। लेकिन मुक्तिपद नहीं जानते थे कि व्यक्ति-बोध से परिवार-बोध अधिक बड़ा होता है। और व्यक्ति-बोध या परिवार-बोध से भी जो बड़ी चीज है वह है विश्व-बोध। यह विश्व-बोध ही आदमी को खुद की तुच्छ संकीर्णता से ऊपर उठाकर स्वस्थ, सबल और शक्तिशाली बनाता है।

नंदिता भी अक्सर उनसे कहती है, "तुम बहुत बुजदिल हो। इतना कोमल स्वभाव होने से कहीं कारोबार चलाया जा सकता है। तुम और कठोर नहीं हो सकते ?"

मुक्तिपद कहते, "तुम औरत हो, यह सब तुम्हारी समझ में नहीं आएगा।"

नंदिता कहती, "एक बार मुझ पर जिम्मेदारी सौंपकर देख लो कि मैं चला पाती हूं या नहीं। मैं तुम्हारी कुर्सी पर बैठती तो एक ही बात से सभी को 'सैक' कर देती।"

मुक्तिपद कहते, "वे दिन बीत चुके हैं। अब आखें नीली-पीली करने से कोई काम नहीं कराया जा सकता है। यह सब अंग्रेजों के जमाने में चलता था, अब चलना बंद हो गया है।"

नंदिता कहती, "फिर यह क्यों नहीं कहते कि तुममें मालिक बनने की योग्यता नहीं है ?"

इसके बाद नंदिता से बातें करने की मुक्तिपद आवश्यकता महसूस नहीं करते। नंदिता से बल्कि दूसरी बातें करना बेहतर है। नई साड़ी या नए पैटर्न के किसी गहने या हाउसकोट के बारे में ही चर्चा करने से नंदिता को बात समझ में आएगी।

और पिकनिक ?

दादी मां ने शुरू में प्यार से पोती का नाम रखा था प्रीतिमयी। लेकिन नंदिता को यह नाम पसंद नहीं आया था। कहा था, "यह भी कोई नाम में नाम है ?"

इसीलिए नंदिता ने प्रीतिमयी के स्थान पर नाम रखा था पीपी। उस जमाने की बूढ़ी औरतें आज की लड़की के नाम का माहात्म्य क्या समझेंगी ? स्कूल में दाखिला लेने के समय वह नाम बदलकर हो गया पिकनिक मुखर्जी। पीपी को स्कूल में भर्ती कराने के बाद यही नाम चालू हो गया।

सास और बहू में पहले से ही मनोमालिन्य चल रहा था। उस पर नाम बदलने का यह मामूली-सा कारण अचानक एक असाधारण कारण में रूपांतरित हो ग[illegible] बहू चाहे छोटी हो या बड़ी, उनके विस्फोट के लिए दियासलाई की एक [illegible] भी तीली पर्याप्त होती है।

तभी से नंदिता मुक्तिपद से एक ही बात कहती, "तुम एक अलग [illegible] लो।"

मुक्तिपद ने तव कुल मिलाकर स्वतंत्र रूप में कंपनी का भार संभाला था, उसी समय से नंदिता का हठ शुरू हो गया। घुमा-फिराकर बस एक ही वात दोहराती, "तुम एक अलग मकान वनवा लो।"

आखिर में तंग आकर मुक्तिपद ने पूछा था, "अलग से मकान क्यों बनवाने जाऊं ? तुम्हें क्या इस घर में रहने में तकलीफ हो रही है ?"

नंदिता ने कहा था, "तकलीफ हो रही या नहीं, यह तुम नहीं समझोगे। तुम्हें तो पूरा दिन घर में गुजारना नहीं पड़ता है।"

"क्यों, घर में दिन गुज़ारने में तुम्हें कौन-सी तकलीफ होती है ?"

नंदिता कहती, "मैं तो कह ही चुकी हूं कि तुम समझ नहीं पाओगे।"

बहुत दवाव डालने पर भी नंदिता कुछ नहीं बतलाती।

लेकिन बार-बार नंदिता की रुलाई सुनने के बनिस्वत अलग ही मकान बनवाना वेहतर है। अन्ततः मुक्तिपद ने फैक्टरी के पास एक नया मकान बनवाया। दादी मां ने शुरू में बहुत बकझक की थी। लेकिन लड़का अव बड़ा हो गया है और शादीशुदा हैं। उस पर एक लड़की भी पैदा हो चुकी है। वह भी अव कुछ वड़ी हो चुकी है। दादी मां तो इस दुनिया में हमेशा रहने के लिए नहीं आई है। उन्हें भी तो एक दिन इस दुनिया को छोड़कर चला जाना होगा। अतः बड़े पोते सौम्य को लेकर ही रहने लगीं। सौम्य का लालन-पालन अपनी इच्छा के अनु-रूप करने लगीं। मन ही मन सोचा, सोच-समझकर, जन्मपत्री दिखाकर, वर-वधू की विवाहोपयोगी राशि के सर्वश्रेष्ठ योग मिलने के बाद ही सौम्य की शादी कराएंगी। ऐसा होने से सौम्य की पत्नी मंझली बहू की तरह घर छोड़कर अलग नहीं होगी।

इसी कारणवश दादी मां अपने मन के लायक पात्री की तलाश में थीं। उसके बाद जब वह पात्री मिल गई तो उन्हें निश्चिन्तता का बोध हुआ।

ठीक उसी समय लंदन ऑफिस से खबर आई कि वहां के मैनेजर कमललाल मेठा का देहान्त हो गया है। ऐसी हालत में यहां से किसी न किसी को लंदन जाना होगा। किन्तु कौन जाएगा ?

मुक्तिपद ने बताया था, "मैं नहीं जा पाऊंगा, यहां अभी मुझे ढेर सारे काम हैं।"

दादी मां बोली थीं, "तो सौम्य कैसे जा सकता है ? उसे काम-काज की समझ ही कितनी है ?"

"अच्छी तरह समझता है। तुम सोच रही हो, तुम्हारा पोता पहले की तरह ही छोटा है। लेकिन कितना वड़ा हो चुका है, यह तुम समझती नहीं।"

लेकिन दादी मां सौम्य की शादी कराए बिना उसे किसी भी हालत में विलायत भेजने को राजी नहीं हैं। भेजने से हो सकता है दादी मां के सपनों का महल धराशायी हो जाए। इससे बढ़कर दादी मां के जीवन में क्या दुर्घटना हो सकती है ? यह सब सोच-विचार कर उन्होंने मुनीमजी को काशी भेजा है।

गाड़ी से जाने के दौरान मुक्तिपद यही सब सोच रहे थे। यदि सौम्य का लंदन जाना नहीं हो सका तो फिर कौन जाएगा ? किसी न किसी को तो जाना ही है। ऑफिस का काम-काज बंद नहीं रखा जा सकता है।

घर आते ही नंदिता के आश्चर्य की सीमा नहीं रही।

बोली, "यह क्या, तुमने तो कहा था, आज खाना खाने के लिए घर नहीं आ सकोगे।"

"आज दफ्तर में एक हंगामा हो गया।"

"क्या?"

"मत पूछो, बस वही गड़बड़ी! उन लोगों ने आज मेरा घेराव किया था।"

"किन लोगों ने? किस यूनियन ने?"

मुक्तिपद बोले, "एक नंबर यूनियन।"

"तुम लोगों के तो तीन यूनियन हैं। दूसरे-दूसरे यूनियनवाले हालत संभाल नहीं सके?"

मुक्तिपद बोले, "आखिर में दो नंबर यूनियन ने आकर स्थिति को संभाला।"

उसके बाद बोले, "अब संभाल नहीं पा रहा हूं। जानती हो, लंदन ऑफिस किसे भेजूं, यह तय नहीं कर पा रहा हूं। मां वगैरह अपने पोते की शादी कराए उसे भेजने को तैयार नहीं हैं। मैं अकेले कहां-कहां संभालूं? मैं किस मुसीबत से गुजर रहा हूं, यह कोई महसूस नहीं करता। इससे तो बेहतर है रास्ते में भीख मांगना। खाना देने कहो। अभी तुरंत फैक्टरी जाना है। फैक्टरी से किसी ने टेलीफोन किया था?"

"नहीं।" नंदिता ने कहा।

मुक्तिपद बोले, "देखो उन लोगों की हरकत! हेड ऑफिस में इतना बड़ा कांड हो गया और किसी ने इसके बारे में पूछताछ तक न की! तो फिर इतनी मोटी तनख्वाह देकर लोगों का लालन-पालन करने से मुझे कौन-सा फायदा हो रहा है?"

इस बीच खाना आ गया है।

मुक्तिपद ने पूछा, "पीपी अब तक नहीं आई है?"

नंदिता बोली, "अब आएगी। तुम अब खाना खा लो। पीपी आएगी तो मैं उसी के साथ खाना खा लूंगी।"

उसके बाद बोली, "तीसरे पहर तुम्हें वक्त मिलेगा?"

"क्यों?"

नंदिता बोली, "आज तीसरे पहर लाइट हाउस में एक फिल्म-शो है।"

मुक्तिपद बोले, "तुम अकेली चली जाओ, नहीं तो फिर पीपी को साथ ले जाना।"

नंदिता बोली, "इस उम्र में पीपी के लिए यह सब देखना क्या ठीक रहेगा? इसके अलावा उसे लिखना-पढ़ना भी तो है।"

मुक्तिपद बोले, "आजकल तो सभी सबकुछ देखते हैं। कोई किसी चीज़ को देखना बाकी नहीं रखता। सड़क पर जिस तरह के पोस्टर देखता हूं, मेरा सिर शर्म से झुक जाता है। हालांकि देखने को मिलता है, हर रोज हाउसफुल है। छोटे-छोटे बच्चे न देखें तो हाउस कैसे फुल हो सकता है?"

"यही वजह है कि तुम्हें साथ चलने को कह रही हूं।" नंदिता बोली।

मुक्तिपद बोले, "कृपया मुझे छोड़ देने का कष्ट करो। अब मुझसे संभल नहीं

है। देखोगी, किसी दिन सेरिब्रल हेमरेज से चल वसूंगा। अव कितना
लाइजर खाऊं? मैं कोई मशीन नहीं, आदमी हूं।"

नंदिता वोली, "इसलिए तो कह रही हूं, तुम्हें रिलैक्स करना चाहिए। डॉक्टर
तो तुमसे यही करने कहा है।"

मुक्तिपद वोले, "डॉक्टरों की मत पूछो। वे लोग भी अव वैसे ही हो गए हैं।
छ भी हो झट से एक प्रेसक्रिप्शन लिख देंगे। वस, ड्यूटी खतम। तवीयत ज़रा
यादा खराव हो जाए तो कहेंगे नर्सिंग होम चले जाओ। डॉक्टर भी आए दिन
यवसायी हो गए हैं।"

खाने के दौरान ही टेलीफोन की घंटी वज उठी। नंदिता रिसीवर उठाने जा
रही थी पर मुक्तिपद वोले, "नहीं, उठाओ मत, वजने दो। ज़िन्दगी-भर यदि
टेलीफोन ही उठाना पड़े तो जीवन नरक हो जाएगा।"

लेकिन इस वीच घर के नौकर ने टेलीफोन उठा लिया था।

नंदिता ने पूछा, "कौन है? कौन टेलीफोन कर रहा है?"

नौकर वोला, "रांग नंवर।"

"चलो, जान वची।" मुक्तिपद फिर से खाना खाने में तल्लीन हो गए। खाना
खाने के वाद ही फैक्टरी भागना होगा। वहां क्या कांड हो रहा है, कौन जाने!
वैसा कुछ हुआ होता तो नागराजन खवर भेज चुका होता।

अचानक हड़वड़ाती हुई पीपी आई। वह अव भी हांफ रही है। हर रोज़ वह
इसी समय आती है। इस वक्त पिता को देखकर उसे विस्मय के साथ-साथ खुशी
भी हुई।

वोली, "वावूजी, आज कॉजिन को देखा। कॉजिन व्रदर—"

"कॉजिन? कॉजिन का मतलव?"

पीपी वोली, "आपके व्रदर का लड़का।"

"सौम्य को? कहां देखा उसे?"

"अपने स्कूल में।"

"यह क्या! क्यों?"

पीपी के स्कूल में सौम्य के जाने की वात सुनकर मुक्तिपद को आश्चर्य हुआ।
"अभी तो सौम्य को फैक्टरी में होना चाहिए था। ऐसे समय में वह लड़कियों के
स्कूल क्यों जाता है? लड़कियों के स्कूल में कौन-सा काम रहता है?"

पीपी वोली, "मेरे स्कूल में वह जो स्टूडेंड पढ़ती है, मेरा कॉजिन व्रदर उससे
मिलने आया था।"

"कौन स्टूडेंट तुम्हारे स्कूल में पढ़ती है? उसका नाम क्या है?"

पीपी वोली, "मिस विशाखा गांगुली।"

"वह कौन है?"

पीपी गरदन हिलाकर वोली, "मुझे मालूम नहीं। उसी से हमारे कॉजिन व्रदर
की शादी होगी। अभी एंगेजमेन्ट चल रहा है।"

यह क्या! एंगेजमेंट चल रहा है! मुक्तिपद को सहसा मां की वात याद अ
गई। सौम्य से जिसकी शादी होनेवाली है, उसी को तो स्टेट से सव खर्चा वगैर
दिया जा रहा है, यह वात तो मां ही ने उससे कही है। इसी वजह से तो हर मही

इतने सारे रुपये खर्च किए जा रहे हैं। सौम्य क्या ऑफिस का काम छोड़ पीपी वगैरह के स्कूल जाता है?"

नंदिता ने पूछा, "वह लड़की देखने में कैसी है री?"

पीपी ने आँखें बड़ी-बड़ी कर कहा, "नाइस, वेरी नाइस, वेरी स्मार्ट—"

मुक्तिपद ने पूछा, "तुमसे किसने कहा कि मिस गांगुली से तुम्हारे कांजिन ब्रदर की शादी होनेवाली है?"

पीपी बोली, "और कौन, मिस गांगुली ने ही बताया है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "सिर्फ तुमसे ही कहा है या स्कूल की तमाम लड़कियों को बताया है?"

पीपी बोली, "सभी जानती हैं। अंटियों को भी मालूम है। मिस गांगुली ने सबको बताया है।"

नंदिता बोली, "देख रहे हो न हरकत! अपनी मा की करतूत देख लो।"

मुक्तिपद गंभीर हो खाना छोड़कर उठ गए। उन्हें तनिक भी अच्छा न लगा। एक ओर तो मा ने सौम्य को रात नौ बजने के पहले घर लौटने का हुक्म दिया है और दूसरी ओर दिन के वक्त ऑफिस नागा कर सौम्य लड़कियों के स्कूल जाकर मौज-मस्ती मनाता है?

नंदिता बोली, "यही वजह है कि मैं बिडन स्ट्रीट भवन में चली आई। वहां रहने से पीपी भी तुम्हारे भतीजे की तरह ही हो जाती।"

पीपी बोली, "जानती हो, मेरा कांजिन हर रोज स्कूल के सामने गाड़ी लेकर खड़ा रहता है।"

"उसके बाद?"

"उसके बाद मिस गांगुली को लेकर कहां चला जाता है, किसी को पता नहीं चलता।"

मुक्तिपद बोले, "और मिस गांगुली के लिए जो गाड़ी जाती है उसका क्या होता है? उसका ड्राइवर क्या करता है?"

"सो नहीं जानती।"

मुक्तिपद अब खड़े नहीं रहे। देह पर कोट चढ़ाकर बाहर की तरफ बढ़ गए। मुक्तिपद को सारी दुनिया पर क्रोध आया। सिर्फ व्यक्ति विशेष या परिवार विशेष पर ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया पर क्रोध आ गया हो जैसे। मानो, दुनिया के तमाम लोगों ने मुक्तिपद के खिलाफ साजिश करना शुरू कर दिया हो।

नंदिता उनके पीछे आकर खड़ी हुई। बोली, "क्या हुआ, आज ईवनिंग में लाइट हाउस चलोगे?"

मुक्तिपद कुछ कहने जा रहे थे लेकिन तुरन्त अपने-आपको संयत कर लिया। बोले, "वाकई तुम लोग मजे में हो।"

नंदिता इस बात का क्या उत्तर दे, उसकी समझ में नहीं आया। इस बीच मुक्तिपद आंख से ओझल हो चुके हैं। वे घर के सामने खड़ी गाड़ी में बैठ चुके हैं।

ड्राइवर तैयार ही था। साहब ने हुक्म दिया, "चलो फैक्टरी।"

मुक्तिपद किस-किस तरफ चौकसी रखें? हेड ऑफिस, या फैक्टरी, या परिवार, या बिडन स्ट्रीट या लंदन ऑफिस की तरफ? अकेला आदमी जीवन की

...नी दिशाओं को संभाल सकता है ? एक आदमी के दस हाथ तो नहीं होते और ...ा इन मस्तिष्क। आदमी की आयु भी सीमाबद्ध है। देवीपद मुखर्जी की मृत्यु ...तीस साल की उम्र में हुई है, भाई शक्तिपद मुखर्जी की मृत्यु हुई है पच्चीस ...न की उम्र में। अभी मुक्तिपद की उम्र चालीस साल है। अब कितने दिनों तक ...क्तिपद इस मशीन को ढोते रहेंगे ?

गाड़ी सीधे फैक्टरी की ओर जा रही थी, लेकिन मुक्तिपद ने रोकने को ...हा। बोले, "नहीं-नहीं, विडन स्ट्रीट की तरफ चलो। अब फैक्टरी नहीं जाना ...।"

गाड़ी ने मोड़ लिया—पश्चिम से एकबारगी सीधे पूरब को।

•

दादी मां दोपहर से ही छटपटा रही थीं।

कह रही हैं, "बिंदु, अरी बिंदु कहां गई तू ?"

बिन्दु उनके पास ही थी। सामने आकर बोली, "क्या दादी मां, मैं तो यहीं हूं।"

दादी मां को गुस्सा आ जाता है। कहती हैं, "तुम लोग कहां रहती हो ? पुकारने पर जवाब नहीं मिलता है।"

बिंदु बोली, "मैं नीचे खबर पहुंचाने गई थी।"

"क्यों ? तुझे नीचे कौन-सा काम था ?"

बिंदु कहती है, "आपने ही तो कहा था कि नीचे से पता लगा आऊं कि मुनीमजी वापस आए हैं या नहीं।"

"मुनीमजी ? मुनीमजी को बुलाने तुझसे कब कहा था ? मुनीमजी तो काशी गए हुए हैं।"

बिन्दु बोली, "बड़े मुनीमजी को नहीं, छोटे मुनीमजी को। आपने ही तो छोटे मुनीमजी को बुलाने कहा था।"

"तो फिर छोटे मुनीमजी क्यों नहीं आए ?"

बिन्दु बोली, "घर में नहीं हैं तो फिर आएंगे कैसे ?"

बात तो सही है। मुक्तिपद ने छोटे मुनीमजी को बुला भेजा था और इसीलिए दादी मां ने संदीप को जाने को कहा था। मगर इतनी देर क्यों हो रही है ? जाना और आना, इसी में इतनी देर हो रही है ? मन ही मन दादी मां क्षुब्ध हो उठीं। कोई आदमी किसी काम को ठीक से नहीं करेगा ? करेगा भी तो ठीक समय पर सूचित नहीं करेगा ?

अचानक बिन्दु फिर आई। बोली, "दादी मां, मंझले बाबू आए हैं।"

मंझले बाबू ! दादी मां स्तंभित हो उठीं। मुक्तिपद दुबारा एकाएक क्यों आ गया। मंझले बाबू का इस घर में आने का क्या अर्थ है, यह सभी जानते हैं।

मंझले बाबू के इस घर में आने से हमेशा जो होता आ रहा है, वही हुआ चारों तरफ सतर्कता का माहौल छा गया। गिरिधारी ने लंबा सैल्यूट किया। मंझले बाबू गाड़ी से उतर लम्बे डग भरते हुए ऊपर चले गए।

दादी मां तैयार ही थीं। लड़के को देखकर पूछा, "क्या बात है, तू अचान...

आ गया ?"

मुक्तिपद ने कहा, "तुम्हारे पास ही आया हूं। क्यों, आना नहीं चाहिए था क्या ?"

[illegible] और नाम
[illegible] ?"
[illegible]

दादी मा ने कहा, "अपनी परेशानी की बात अपने पास ही रख। दुनिया में किसे परेशानी नहीं है, मुन्नू ? मुझे परेशानी नहीं है ? तमाम परेशानियों का मुकाबला मुझे अकेले ही करना पड़ता है ?"

मकान के नीचे के सदर दरवाजे के पास पहुंचते ही सदीप की नजर मझले बाबू की गाड़ी पर पड़ी। गिरिधारी सीधा खड़ा होकर गेट पर पहरा दे रहा था।

गिरिधारी ने सदीप को सलाम किया।

सदीप ने कहा, "लगता है, मझले बाबू आए हैं गिरिधारी।"

"हां हुजूर।"

"कब आए हैं ?"

गिरिधारी बोला, "थोड़ी देर पहले।"

अब देर करना ठीक नहीं होगा। मझले बाबू संभवतः सदीप से बहुत ही खफा होंगे।

वह बाकायदा खबर भेजकर ऊपर गया। दादी मा के कमरे के सामने बिन्दु पहरेदारी कर रही थी। सदीप को देखकर कहा, "ठहरो बेटा, थोड़ी देर पहले मझले बाबू आकर अन्दर गए हैं।"

सदीप बरामदे पर खड़ा होकर इन्तजार करने लगा। अन्दर दादी मां से मझले बाबू की जो बातचीत चल रही थी, वह कान में आने लगी। सदीप ध्यान से उनकी बात सुनने लगा।

मझले बाबू ने कहा, "जानती हो मा, आज यूनियन के लोगों ने हेड ऑफिस में मेरा घेराव किया था।"

"तुम लोगों के तो तीन यूनियन हैं न ? तुम लोगों की कम्पनी के यूनियन ने रोका नहीं ?"

मझले बाबू बोले, "अन्त में उन लोगों ने अड़चन डाली तभी तो छुटकारा मिला। इसके चलते सुबह कोई काम नहीं हो सका।"

दादी मा ने कहा, "इसके चलते तू इतनी माथापच्ची क्यों करता है ? जब तक फैक्टरी रहेगी, यह सब चलता ही रहेगा। तेरे पिताजी का भी उन लोगों ने बहुत बार घेराव किया था। उन्हें खटाकर तू पैसा कमाएगा और वे लोग क्या तुझे यूं ही छोड़ देंगे ? इसी वजह से तो तेरे पिताजी इतनी जल्दी चल बसे।"

मझले बाबू ने कहा, "देखो मा, तुम चूंकि मेरी मा हो इसी वजह से तुम्हारे सामने इन तकलीफों का बयान करता हूं। सो तुम अगर मेरे दुख की बातें नहीं सुनोगी तो फिर कौन सुनेगा या किसे ही सुनाऊंगा ? यहां तक कि तुम्हारी बहूरानी भी यह सब सुनना पसन्द नहीं करती। उसने केवल रुपया खर्च करने की तालीम ली है, रुपया कमाने की यातना में भागीदारी निभाना नहीं चाहती है।"

दादी मां ने कहा, "वह तुम्हारी यातना की भागीदार क्यों बनेगी? उसे क्या गरज है? तेरी दौलत देखकर ही तो तेरे ससुर ने अपनी लड़की की शादी तुझसे की है। उस समय मैंने तेरे पिताजी को वहां शादी करने से बार-बार मना किया था। लेकिन तुम लोग जिस तरह मेरी बात नहीं मानते उसी तरह उन्होंने भी नहीं मानी थी। अब झमेला बरदाश्त करो।"

मंझले बाबू ने कहा, "आज ऑफिस से घर लौटते ही तुम्हारी बहूरानी को तमाम वारदातों की सूचना दी तो उसने क्या कहा, जानती हो?"

"क्या?"

"बोली, लाइट हाउस में शाम के वक्त किसी हिन्दी फिल्म का शो होनेवाला है, उसे देखने के लिए मुझे उसके साथ चलना होगा। सोच सकती हो यह बात?"

दादी मां बोलीं, "रहने दो, अब यह सब बताने की जरूरत नहीं। काफी हो चुका। मेरे यहां यह सब शैतानी नहीं चलती थी, इसीलिए तुम्हारे साथ अलग ही गृहस्थी बसा ली। लेकिन वह मेरी कौन-सी हानि करेगी? अब तुम जानो! तेरे भाग्य में बहुत तकलीफ है। मैं क्या कर सकती हूं?"

"हां, एक बात और। मैंने मुनीमजी को जो अपने ऑफिस भेजने को कहा था, उसका क्या हुआ? आज वह आया नहीं।"

दादी मां बोलीं, "यह क्या! नहीं गया था?"

"नहीं।"

दादी मां ने अचकचा कर कहा, "आश्चर्य, किसी को किसी काम का भार सौंपकर भी निश्चिन्तता से नहीं रहा जा सकता है!"

उसके बाद पुकारा, "बिन्दु—"

मंझले बाबू बोले, "रहने दो, अभी बिन्दु को बुलाने की जरूरत नहीं। मैं अपने साथ रुपये ले आया हूं, यह लो--"

यह कहकर एक बंडल दादी मां की ओर बढ़ाते हुए कहा, "इसमें पचास हजार कैश है, लो।"

उसके बाद बोले, "सुनो मां, मेरी पीपी ने आज एक बात बताई। पीपी जिस स्कूल में पढ़ती है, सुना है, उसी स्कूल में तुम्हारी बहूरानी पढ़ती है।"

"मेरी बहूरानी? मेरी बहूरानी का मतलब?"

मंझले बाबू बोले, "वह क्या तुम्हारी बहूरानी नहीं है? दो दिन बाद वही लड़की तो तुम्हारे पोते की बीवी होने वाली है। जिसे तुम हमारे रसेल स्ट्रीट के मकान में रखकर पाल रही हो, उसी की बाबत चर्चा कर रहा हूं।"

दादी मां बोलीं, "हां-हां, समझ गई। विशाखा! सौम्य से ही तो शादी होगी। उसे क्या हुआ?"

"वह और पीपी एक ही स्कूल में पढ़ती हैं। पीपी क्या बता रही थी, जानती हो?"

"क्या?"

मुक्तिपद बोले, "सौम्य हर रोज उस स्कूल में जाता है।"

"मेरा सौम्य? वह विशाखा के स्कूल जाता है?"

मुक्तिपद बोले, "पीपी ने तो यही बताया। मेरे एकाउन्टेंट नागराजन ने

बताया है, सौम्य आजकल नियमित तौर पर ऑफिस भी नहीं आता। अब समझ में आया कि सौम्य ऑफिस से निकलकर कहां जाता है।"

दादी मां का चेहरा गम्भीर हो गया।

मुक्तिपद ने इसके बाद कहा, "तुमने तो नियम बना दिया है कि रात नौ बजे गिरिधारी गेट बन्द कर दिया करेगा, जिससे कि तुम्हारा पोता इसके पहले ही घर लौट आए। सो तो हुआ, मगर दिन के वक्त वह क्या करता है यह तो तुम अपनी आंखों से नहीं देख पाती हो। अब इस हालत में तुम क्या करोगी, बताओ?"

अबकी भी दादी मां की जबान से कोई शब्द नहीं निकला। सदीप अब तक खड़ा-खड़ा सब सुन रहा था। अब वह एक तरह की बेचैनी अनुभव करने लगा। उसे डर लगने लगा। अगर कोई उसे इस हालत में देख ले! अगर अचानक वह पकड़ में आ जाए तो! लुक-छिपकर मालिकों की बात सुनना पाप है। इसके अलावा सदीप को यह मालूम है कि सौम्य बाबू विशाखा के स्कूल जाते हैं और उसे गाड़ी पर बिठाकर दूसरी जगह चले जाते हैं। यह सब जानने के बावजूद उसने दादी मां को इसकी सूचना क्यों नहीं दी? उसका तो काम यही है कि रसेल स्ट्रीट के मकान की सारी खबरों की हर रोज दादी मां को सूचना देना। उसने अपने काम में गफलतबाजी की है।

अचानक बिन्दु ने आकर कहा, "मुनीमजी, आपको दादी मां बुला रही हैं।"

सदीप के सिर से पैर तक का हिस्सा थर-थर कांपने लगा। बलि के बकरे की तरह वह अन्दर दाखिल हुआ।

मुक्तिपद ने कहा, "तुम्हीं मुनीमजी के काम की देखरेख करते हो?"

सदीप ने सिर हिलाकर कहा, "हां।"

"आज सवेरे तुम्हें हेड आफिस जाना था। तुम गए क्यों नहीं?"

सदीप बोला, "जी, मैं गया था।"

मुक्तिपद बोले, "झूठ बोल रहे हो? तुम नहीं गए थे?"

सदीप बोला, "जब मैं वहां पहुंचा तो जमकर बमबाजी चल रही थी। गाड़ी, ट्राम, बस आदि का आना-जाना बन्द हो गया था। सब लोग चारों तरफ भाग रहे थे, इसलिए—"

दादी मां बोलीं, "इस उम्र में तुमने इतना झूठ बोलना सीख लिया है? तुम लोगों से क्या एक काम भी नहीं हो सकता? अगर काम करने की मर्जी न हो तो छोड़ दो। मैं किसी को रखकर —"

मुक्तिपद बोले, "हां, मेरे आफिस के सामने बमबाजी चल रही थी। तुम क्या उसी वक्त गए थे?"

बातचीत के दौरान ही बिन्दु कमरे में दाखिल हुई। बोली, "दादी मां, मुनीम जी काशी से आ गए हैं।"

दादी मां बोलीं, "किसने बताया?"

"अभी-अभी दो-मंजिले की कालीदासी ने सूचना दी है।"

दादी मां ने पूछा, "कालीदासी को किससे पता चला?"

बिन्दु ने कहा, "एक-मंजिले की फुल्लरा ने उसे सूचना दी है।"

"काशी की ट्रेन दोपहर में कलकत्ता क्यों पहुंची?"

इस वात का उत्तर विन्दु या कालीदासी या फुल्लरा कैसे दे सकती है !

मुक्तिपद ने पूछा, "मुनीमजी को कहां भेजा था ?"

दादी मां ने कहा, "काशी।"

"क्यों ?"

दादी मां वोलीं, "अरे तुझे कुछ पता ही नहीं ? तुझसे मैं पहले ही वता चुकी हूं, तुझे याद नहीं है। गुरुदेव के पास सौम्य की शादी की तिथि, समय और लग्न के बारे में चिट्ठी भेजी गई थी। सो अभी वे काशी से आए हैं।"

उसके वाद विन्दु से कहा, "जा विन्दु, फुल्लरा से जाकर कह आ कि मुनीमजी सीधे ऊपर चले आएं। मंझले वावू भी यहां वैठे हुए हैं।"

मुक्तिपद ने दादी मां से पूछा, "फिर क्या उसी लड़की से सौम्य की शादी करने जा रही हो ?"

दादी मां वोलीं, "शादी नहीं करूंगी तो क्या यों ही हज़ारों रुपये खर्च कर मैं उस लड़की का पालन-पोषण कर रही हूं ? मेरा पैसा क्या इतना सस्ता है ?"

मुक्तिपद ने संदीप से कहा, "अव तुम व्यर्थ ही क्यों खड़े हो ? जाओ।"

संदीप ने मुक्ति की सांस ली। याद है, उस समय उसे भी यह जानने की इच्छा हो रही थी कि काशी के गुरुदेव ने क्या कहा। सौम्य वावू की शादी के सन्दर्भ में उन्होंने क्या राय दी। विलायत जाने के पहले सौम्य वावू की शादी होगी ?

सीढ़ियां उतरने के दौरान दो-मंज़िले की सीढ़ी पर मल्लिक चाचा से मुलाकात हो जाती है।

संदीप ने कहा, "आपने आने में इतनी देर क्यों कर दी चाचाजी ?"

मल्लिक चाचा वोले, "अरे कुछ मत पूछो, ट्रेन आठ घंटा लेट थी।" यह कह-कर ऊपरी मंज़िल की तरफ जाने लगे।

संदीप ने पूछा, "सौम्य वावू की शादी की तारीख निश्चित हो गई ?"

मल्लिक चाचा वोले, "यह वात तुम्हें वाद में वताऊंगा। चलता हूं —"

यह कहकर वे पूर्ववत् सीढ़ियां चढ़ने लगे।

तपेश गांगुली ने तव भी हिम्मत नहीं हारी थी। वीच-वीच में वह भाभी के पास आता है, रसगुल्ला-गुलाव जामुन खाता है और वैठे-वैठे अपने घर के दुख और दरिद्रता का विस्तार से वखान कर जाता है।

कहता है, "मैंने वहुत पाप किया है भाभी, इसीलिए मुझे इतनी तकलीफ झेलनी पड़ती है। तुम जव तक मेरे पास थीं तव तक मुझे कोई तकलीफ नहीं थी। दांत के रहते दांत का महत्त्व नहीं समझा था, इसलिए आज मुझे यह भोगना पड़ रहा है।"

योगमाया देवर को सांत्वना देती है। कहती है, "तुम दुख मत करो देवरजी। मेरी विशाखा की शादी होते ही मैं तुम्हारे घर लौट जाऊंगी। तव मैं निश्चिन्त हो जाऊंगी। मैं तुम्हारे घर जाकर गृहस्थी का सारा भार अपने कंधे पर ले लूंगी।"

तपेश गांगुली योगमाया के चरणों की धूलि लेकर अपने सिर पर लगाता है।

कहता, "मेरी मां नहीं है भाभी, तुम आशीर्वाद दो कि दफ्तर में मेरी तनख्वाह बढ़ जाए।"

योगमाया कहती, "मैं कौन हूं देवरजी, भगवान को पुकारो। मन से पुकारोगे तो भगवान तुम्हारी इच्छा जरूर पूरी करेंगे। ठहरो, तुम्हें कुछ खाने को देती हूं।"

तपेश गांगुली जब कभी आता, कुछ न कुछ खाए बगैर टलता नहीं था। रसगुल्ले मंगाए जाते और कभी-कभी नमकीन खाने की सामग्री।

तपेश गांगुली कहता, "आज तुम्हारे घर में क्या खाना पका है भाभी ?"

योगमाया कहती, "हम लोगों की गैल ही बाजार करती है। उसे बाजार में जो मिलता है वही लाती है। आज भेकट मछली ले आई थी, उसी का कलिया बनाया था। तुम खाओगे ?"

तपेश गांगुली कहता, "तुम अपने हाथ से उठाकर जो भी दोगी वही मेरे लिए अमृत है। लेकिन कहीं विशाखा के लिए मछली तो कम नहीं हो जाएगी ?"

योगमाया कहती, "नहीं-नहीं, विशाखा एक दिन कम मछली ही खाएगी तो हर्ज ही क्या है ? वह तो कभी-कभी खाना ही नहीं चाहती। मैं जबरन खिलाती हूं।"

तपेश गांगुली कहता, "तुम ठीक काम करती हो। पहले सेहत उसके बाद ही कुछ। तुम तो मुझे भी जबरन खिलाती हो।"

योगमाया कहती, "ठहरो, पहले मैं तुम्हें मछली का कलिया देती हूं, उसके बाद थोड़ी-सी मिठाई।"

इस घर में तपेश गांगुली जब-जब आया है, कुछ न कुछ खाकर ही गया है। एक दिन भी योगमाया ने देवर को बिना खिलाए नहीं छोड़ा है।

तपेश गांगुली कहता, "अहा, क्या लाजवाब है तुम्हारा मछली का कलिया !"

"और थोड़ा-सा भात लोगे देवरजी ?"

तपेश गांगुली कहता, "तुम्हारा भात कहीं कम न हो जाए।"

योगमाया कहती, "तुम क्या बोल रहे हो देवरजी ! तुम्हें भूख लगी है, तुमने मुंह खोलकर खाना मांगा है और मैं तुम्हें बगैर खिलाए जाने दूं ?"

"नहीं, कहने का मतलब है, तुम लोगों का तो नपा-तुला भात पकता है। उस पर एक और आदमी खाए तो कम हो जा सकता है।"

योगमाया कहती, "तुम क्या जो कहते हो देवरजी, उसका कोई ठिकाना नहीं। भात कम हो जाएगा तो फिर से भात पका लेगी।"

उसके बाद कहती, "तुम्हें भरपेट खाना क्यों नहीं मिलता है देवरजी ? मैं जब तक थी तुम्हें बिना खाए नहीं रहना पड़ता था।"

तपेश गांगुली कहता, "उन पुरानी बातों को छोड़ो भाभी। जो जैसी तकदीर लेकर आया है उसे वैसा ही फल भोगना होगा। भरपेट खाना मेरे नसीब में न हो तो मैं क्या करूं ?"

उसके बाद तपेश गांगुली के सामने भात की थाली आती। नए सिरे से मछली का एक टुकड़ा भी आता। और तपेश गांगुली उसे चटपट खाकर खत्म कर देता।

योगमाया पूछती, "आज तुम आफिस नहीं जाओगे ?"

तपेश गांगुली कहता, "जरूर जाऊंगा। लेकिन सरकारी आफिस है न। देर

करके ऑफिस जाने से हम लोगों का कोई नुकसान नहीं होता।"

उसके बाद बाथरूम में हाथ-मुंह धोकर आता और अपनी जगह पर बैठकर कहता, "विशाखा की शादी में कितनी देर है भाभी? बातचीत आगे बढ़ रही है?"

योगमाया कहती, "सुनने में तो आया है कि बातचीत आगे बढ़ रही है। सो सब कुछ तो भगवान की मर्जी पर निर्भर करता है देवरजी। मैं और क्या कहूं? उनकी यदि मर्जी हो तो होगी। हां, तुम्हारी बिजली कैसी है?"

तपेश गांगुली कहता, "बिजली के बारे में क्या कहूं भाभी! लड़की की उम्र जितनी बढ़ती जा रही है मेरी छाती उतनी ही डर से थर-थर कांपती रहती है। क्या होगा, समझ में नहीं आ रहा—"

योगमाया कहती, "उनका स्मरण करो, सब ठीक हो जाएगा।"

"तुम तो यह कहकर निश्चिन्त हो गई। मैं कितना परेशान हूं, यह मैं ही जानता हूं। अब मैं लड़की के मुखड़े की ओर देखने से भी कतराता हूं।"

योगमाया कहती, "लड़की के बाप हो तो परेशानी उठानी ही होगी।"

तपेश गांगुली ने उस दिन आकर कहा, "तुम मेरा एक काम कर दोगी भाभी?"

"क्या, कहो।"

अपनी बात कहने के बाद तपेश गांगुली ने अपनी झोली से एक डिबिया निकाली।

"यह क्या है?"

"यह एक टिन की डिबिया है। यह देखो, डिबिया के ऊपर एक सूराख है। देख रही हो न?"

"हां, देख रही हूं।"

तपेश गांगुली बोला, "अपनी लड़की की शादी के लिए मैंने यह तरीका अपनाया है।" यह कहकर अपना तरीका बताया, "इस टीन की डिबिया के मुंह को मैंने रांगे से बंद कर दिया है।"

योगमाया फिर भी इस बात को ठीक से समझ नहीं सकी। बोली, "इससे क्या होगा?"

तपेश गांगुली बोला, "इसके ऊपर एक लम्बा-सा छेद है, देख रही हो न?"

योगमाया बोली, "यह तो देख रही हूं।"

तपेश गांगुली बोला, "इस छेद से मैं जितनी भी मर्जी होगी, रुपया-पैसा डालूंगा। इस ढक्कन को तोड़े बिना इससे रुपये-पैसे नहीं निकाले जा सकते हैं। इसका मतलब रुपये जमा होते रहेंगे। चाहने पर भी खर्च नहीं किया जाएगा। मान लो, हर रोज कुछ-कुछ रुपये डालता हूं तो कुछ दिन बाद बहुत सारे रुपये इकट्ठे हो जाएंगे। एक महीने में अगर पचास रुपया ही जमा होता है तो साल भर में कितने रुपये जमा हो जाएंगे? साल में छह सौ रुपये। साल में छह सौ रुपये होने से पांच साल में कितने रुपये? तीन हज़ार रुपये। होंगे नहीं?"

योगमाया हिसाब की इतनी पेचीदगी नहीं समझती। बोली, "सो तो होगा ही।"

"तो पांच साल बाद भी अगर बिजली की शादी करू तो कुल मिलाकर मेरे पास तीन हजार रुपये जमा रहेंगे। ठीक है न?"

योगमाया बोली, "सो तो होगा ही।"

तपेश गांगुली बोला, "ऐसी हालत में तीन हजार रुपये के लिए मुझे किसी के सामने हाथ नहीं पसारना होगा। यह क्या मेरा कोई कम फायदा है? कहो?"

योगमाया स्वीकार करने को बाध्य हुई कि यह कोई कम फायदा नहीं है।

तपेश गांगुली बोला, "मैं कई महीनों से रात में बिस्तर पर लेटे-लेटे यही सोचते रहता था कि लड़की की शादी के लिए रुपये का जुगाड़ कहां से करूंगा? कौन मुझे रुपया कर्ज देगा? आखिर में भगवान ने इन्तजाम कर दिया। उसके बाद ही आज सवेरे दुकान जाकर यह डिबिया बनवाकर तुम्हारे पास आया। अब बताओ मेरा तरीका कैसा है? अच्छा नहीं है?"

योगमाया ने बताया कि उसके देवर का तरीका ठीक है।

तपेश गांगुली बोला, "मगर तुम्हारी देवरानी ऐसी मूसट औरत है कि इस डिबिया को घर में रखूंगा तो किसी दिन इसे तोड़कर रुपया निकाल लेगी और उससे कोई न कोई अपना गहना बनवा लेगी। ऐसी हालत में मैं कुछ बोल नहीं पाऊंगा। इसलिए सोचा है, इसे तुम्हारे घर में ही रख जाऊं।"

योगमाया बोली, "रख जाना।"

"हां, तुम भी इस सूराख में अपने सुविधानुसार अपने बचे-खुचे पैसे भी डाल सकोगी। चाहे जो हो, बिजली तो तुम्हारे लिए कोई गैर नहीं है, देवर की लड़की है। उसकी शादी में तुम्हें भी तो आशीर्वाद के रूप में कुछ देना ही होगा। कहो, ठीक कह रहा हूं?"

योगमाया बोली, "सो तो ठीक ही है, बिजली भी तो मेरी कोख की लड़की जैसी ही है।"

यह सुनकर तपेश गांगुली के चेहरे पर भरपूर मुस्कराहट तिर आई। बोला, "भगवान ने कैसी अक्ल जेहन में भर दी, बताओ तो भाभी! बिजली की शादी के वक्त आशीर्वाद स्वरूप तुम्हें देने में अखरेगा नहीं, साथ ही मुझे भी ऑफिस के को-ऑपरेटिव से कर्ज नहीं लेना होगा।"

योगमाया ने पूछा, "बिजली के लिए पात्र ढूंढ़ लिया है तुमने?"

"ढूंढ़ने का मतलब? खोज-पड़ताल कर रहा हूं। अखबारों में बॉक्स नम्बर के साथ विज्ञापन भी दे रहा हूं। लेकिन मेरा भाग्य क्या तुम्हारे जैसा है भाभी?"

तब तक तपेश गांगुली का कार्य सिद्ध हो चुका था।

तपेश गांगुली जैसे लोग कार्य सिद्ध करने के लिए ही दिन-भर चक्कर लगाते हैं और कार्य सिद्ध होते ही रफूचक्कर हो जाते हैं। तपेश गांगुली का खाना भी हो चुका था और अर्थ-प्राप्ति का एक सुनिश्चित रास्ता खोजकर उसका समाधान भी उसने निकाल लिया था। लिहाजा अब उसकी उपस्थिति की कोई जरूरत नहीं थी।

"समझी भाभी, बहुत सारे पात्र आ रहे हैं पर वे दूसरी जात के हैं। ब्राह्मण पात्र कहां लापता हो गए, बताओ तो?"

उसके बाद जरा रुककर बोला, "बहरहाल, तुम भाभी अभी से इस डिबिया

सूराख में रुपया-पैसा डालना शुरू कर दो, समझीं ?"

पीछे से शैल ने आकर पूछा, "मांजी, और एक हांडी भात चढ़ा दूं ?"

योगमाया बोली, "क्यों सारा भात खत्म हो गया क्या ?"

शैल बोली, "हां, आज हमारे लिए कम हो जाएगा ।"

तपेश गांगुली के कानों में बात जाते ही वह बोला, "यह क्या ? मैंने तुम लोगों का सारा भात खत्म कर डाला क्या ? तुम लोगों के लिए भात नहीं बचा है ?"

योगमाया बोली, "नहीं-नहीं, ऐसी कोई बात नहीं । तुम्हें भूख लगी थी, तुमने खाया । फिर से भात पका लिया जाएगा, इसमें हर्ज ही क्या है ?"

"छिः छिः, यह कैसी बात है ! मुझसे कहना चाहिए था कि तुम लोगों के लिए भात कम बचेगा । ऐसी हालत में मैं नहीं खाता ।"

योगमाया बोली, "बलिहारी है तुम्हारी बुद्धि की शैल ! मेरे देवर के सामने भात की चर्चा करनी चाहिए थी ? बाद में भी तो यह कह सकती थी ।"

इस बात के बाद शैल वहां खड़ी नहीं रही ।

तपेश गांगुली बोला, "तुम लोगों का मैंने बहुत बड़ा नुकसान कर दिया भाभी । उफ्, मुझे बिलकुल खयाल ही न रहा —छिः छिः !"

ठीक उसी समय सीढ़ियां चढ़कर संदीप ऊपर आया ।

"क्यों भई, हाल-चाल ठीक है न ?"

उस बात का उत्तर न देकर संदीप बोला, "मौसी जी एक खबर है..."

तपेश गांगुली ने अब टलने का नाम नहीं लिया । पूछा, "कौनसी, खबर भई ? विशाखा की शादी की खबर ?"

संदीप ने कहा, "हां ।"

यह कहकर वह अन्दर चला गया । तपेश गांगुली भी टला नहीं । इतनी बड़ी खबर पूरे तौर पर सुने बिना वह जा नहीं सकता ।

योगमाया सारा कुछ सुनने के लिए उत्कंठित थी । बोली, "खबर क्या है बेटा बताओ, शादी होगी तो—?"

संदीप ने कहा, "नहीं ।"

"नहीं का मतलब ? विशाखा की शादी नहीं होगी ? कितने आश्चर्य की बात है, इतने-इतने कांड के बाद..."

तपेश गांगुली भी खासा उत्तेजित हो गया है । विशाखा की शादी का मामला जैसे उसकी ही सबसे बड़ी जिम्मेदारी हो । बोला, "सचमुच क्या विशाखा की शादी उस घर में नहीं होगी ? सच कह रहे हो ? फिर तो तुमने मुझे गहरी चिन्ता में डाल दिया भाई ।"

संदीप बोला, "ऐसी बात नहीं । शादी वहीं होगी ।"

"इसका मतलब ?"

संदीप ने कहा, "दादी मां ने मुनीमजी को काशी भेजा था, उनकी राय जान- के लिए । अब मुनीमजी गुरुदेव की राय जानकर लौटे हैं ।"

तपेश गांगुली ने पूछा, "गुरुदेव ने क्या राय दी ? शादी नहीं होगी ?"

"नहीं, नहीं होगी ।" संदीप ने बताया ।

तपेश गांगुली बोला, "मुझे तभी मालूम हो गया था । तुम्हें तो मैंने बार-

कहा था भाभी, कि बड़े लोगों के भुलावे में मत आओ। बड़े लोगों की बात पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। कहा नहीं था?"

संदीप ने कहा, "शादी नहीं होगी, यह किसने कहा? शादी होगी।"

"शादी होगी?"

संदीप बोला, "हां, अवश्य ही होगी। गुरुदेव ने स्वयं जन्मपत्री देखकर कहा था, यह शादी होने से वर-वधू दोनों सुखी होंगे। लेकिन पात्र की जन्मपत्री में एक बुरा योग है। इसलिए एक-डेढ़ साल देर करने कहा है।"

"डेढ़ साल बाद?"

यह खबर सुनकर योगमाया का चेहरा मुरझा गया। और डेढ़ साल बाद? तब तक योगमाया क्या जिन्दा रहेंगी? तब तक क्या दादी मां जिन्दा रहेंगी? डेढ़ साल में दुनिया में कितना कुछ परिवर्तन घटित हो सकता है, कितने ही ज्वालामुखी में आग लगकर कितने ही जनपद नष्ट हो जा सकते हैं, आकाश से कितने ही नक्षत्र स्थानच्युत होकर उल्कापात करा सकते हैं। डेढ़ साल का अरसा क्या कोई कम है?

तपेश गांगुली बोला, "तो फिर शादी नहीं होगी, यह तुम देख लेना—। बड़े लोगों की मर्जी, न होने में देर और न जाने में देर।"

संदीप ने ढाढ़स बंधाया, "आप चिन्ता मत कीजिए मौसीजी। सौम्य बाबू जैसे ही विलायत से लौटकर आएंगे शादी की रस्म पूरी होगी। दादी मां ने खुद वादा किया है—"

तपेश गांगुली तब भी खड़ा था। बोला, "भाई, मेरी भी कोई कम उम्र नहीं है, मैं भी बहुत कुछ देख चुका हूं। कहावत है न, बड़ों की प्रीत बालू का बांध। यह भी ऐसी ही बात है।"

संदीप अब स्वयं को संयत नहीं रख सका। बोला, "आपका ऑफिस है न? आप ऑफिस नहीं जाइएगा?"

तपेश गांगुली बोला, "मेरा तो भई सरकारी दफ्तर है। मेरे दफ्तर में बहुत सारे आदमी हैं। मेरे न जाने से भी चक्का जाम नहीं होगा।"

संदीप बोला, "आप लोगों के कारण ही आए दिन रेलगाड़ी ठीक समय पर नहीं चलती है। आप लोगों के कारण ही रेल में इतने एक्सिडेंट होते हैं। दोष तो आप ही लोगों का है और आप लोग बात-बात पर सरकार के मत्थे दोष थोपते हैं।"

तपेश गांगुली शायद इस बात का जवाब देने जा रहा था, लेकिन बीच ही में योगमाया बोल पड़ी, "हां देवरजी, बात तो सही है। हम लोगों के कारण तुम दफ्तर जाने में नागा क्यों करोगे? तुम ऑफिस जाओ, देर हो रही है—। हम लोगों के भाग्य में यदि दुख है तो तुम क्या कर सकते हो?"

इसके बाद तपेश गांगुली को बाध्य होकर जाना पड़ा।

संदीप को जैसे अब निश्चिन्तता का अहसास हुआ हो। बोला, "आपके देवर के कारण अब तक ठीक से बातें नहीं कर पा रहा था। आप लोगों के खिदिरपुर के मकान में चले आने के बावजूद इन लोगों से छुटकारा नहीं मिल रहा है।"

योगमाया बोली, "उन लोगों की बात तुम जाने दो बेटा। विशाखा की शादी

के बारे में क्या-क्या हुआ, यही बताओ।"

संदीप ने विस्तार के साथ सब कुछ बताया। मंझले बाबू अपने कारोबार की वजह से बहुत व्यस्त रह रहे हैं। लंदन ऑफिस के एक बड़े अफसर के आकस्मिक देहावसान के कारण वहां की देखरेख करनेवाला वैसा सुयोग्य व्यक्ति नहीं है। मंझले बाबू वहां जा पाते तो अच्छा रहता, लेकिन यहां कलकत्ता ऑफिस में भी बेहद गड़बड़ी चल रही है। दो यूनियनों के बीच झगड़ा-मारपीट और बमबाज़ी चल रही है। मंझले बाबू का यूनियन के लोगों ने कई घंटे तक ऑफिस में घेराव किया था। इसकी वजह से मंझले बाबू की तबीयत भी ठीक नहीं है। अन्तत: सौम्य बाबू को लंदन भेजने का निर्णय लिया गया है। दादी मां की इच्छा थी, शादी के बाद ही सौम्य बाबू को लंदन भेजा जाए। लेकिन गुरुदेव की जब तक अनुमति नहीं मिल जाती है तब तक वे कुछ नहीं कर सकतीं।"

योगमाया ने पूछा, "गुरुदेव ने जन्मपत्री में कौन-सा दोष देखा ?"

संदीप बोला, "सुना है, सौम्य बाबू की जन्मपत्री में 'काल-सर्प-योग' है। इसीलिए अभी शादी करने से मना किया है।"

"काल-सर्प-योग का मतलब ?"

"इसका मतलब मैं क्योंकर जानूंगा मौसीजी ? मल्लिकजी के मुंह से जो कुछ सुनने को मिला, आपको बताया।"

"वह योग कब कटेगा ?"

"डेढ़ साल बाद। डेढ़ साल बाद शादी होगी तो सारा दोष कट जाएगा।"

डेढ़ साल ! योगमाया का चेहरा मुरझा गया। बोली, "तब तो विशाखा की शादी हो चुकी ! मैंने तो पहले ही कहा था कि मेरे भाग्य में क्या इतना सुख है ? पूर्व जन्म में मैंने भगवान के सामने कितना पाप किया था, इसीलिए इस जन्म में मेरा भाग्य इतना खराब है !"

एकाएक संदीप ने कहा, "आज विशाखा को स्कूल से आने में इतनी देर क्यों हो रही है मौसीजी ? उसके आने का वक्त तो हो चुका है।"

योगमाया बोली, "आजकल उसे आने में अक्सर इतनी देर हो जाया करती है।"

"हां, एक बात—"

यह कहकर संदीप बोला, "उस मकान में एक और बात सुनने को मिली।"

"क्या ?"

अचानक दरवाज़े का कॉलिंग बेल बज उठा। योगमाया बोली, "लगता है, वह आ गई।"

लेकिन दरवाज़ा खोलने पर विशाखा के बदले अरविन्द पर नज़र पड़ी। अरविन्द यानी विशाखा का ड्राइवर।

अरविन्द ने पहले दिन की तरह ही बताया, "मांजी, छोटे बाबू मुन्नीरानी को लेकर गए हुए हैं। मैं घर जा रहा हूं। छोटे बाबू बाद में खुद ही मुन्नीरानी को घर पहुंचा देंगे।"

संदीप ने सब सुना। बोला, "इस तरह क्या हर रोज़ होता है मौसीजी ?"

योगमाया बोली, "हां बेटा, एक दिन और हुआ था।"

संदीप कुछ देर तक खामोश रहा। उसके बाद बोला, "उस घर से तो यही सुनकर आया हूं।"

"क्या सुनकर आए बेटा ?"

संदीप ने कहा, "मंझले बाबू को सारी बातें मालूम हो गई हैं।"

"कैसे ?"

संदीप ने कहा, "मंझले बाबू दादी मां से यही बात कह रहे थे। मंझले बाबू की लड़की जिस स्कूल में पढ़ती है, विशाखा भी उसी स्कूल में पढ़ती है। मंझले बाबू की लड़की ने अपने पिता को बताया है कि सौम्य बाबू हर रोज उन लोगों के स्कूल जाकर विशाखा को गाड़ी में बिठाकर कहीं चले जाते हैं।"

"कहां जाते हैं ?"

"शायद किसी होटल-रेस्टोरेंट में ले जाकर विशाखा से बातें करते हैं। विशाखा ने आपको कुछ बताया है ?"

सोममाया बोली, "हां, इसके पहले के दिन के बारे में बताया था। सुनकर तो मैं बहुत डर गई हूं बेटा। आखिर में यदि शादी में कोई अड़चन आ जाए तो ? तुम्हारी दादी मां ने यह सुनकर क्या कहा ?"

संदीप बोला, "यह मैं सुन नहीं सका। यही वजह है कि मैंने आपसे पूछा था। रोज-ब-रोज सौम्य बाबू से छुप-छिपकर मिलना क्या अच्छा है, आप ही बताइए ?"

सोममाया बोली, "मैं भी तो यही सोचती हूं। मुंहजली को अपने भले-बुरे का ज्ञान नहीं है। ऐसी बेवकूफ लड़की से मैं क्या सलूक करूं बेटा ?"

संदीप भी यही सोच रहा था। उस दिन गोपाल हाजरा के साथ नाइट क्लब जाकर देखे हुए दृश्य की उसे याद आ गई। वैसी प्रकृति के सौम्य बाबू से शादी होने से विशाखा क्या सुखी हो सकेगी ? जो आदमी शराब पीकर नशे में धुत हो जाता है और इतनी रात में घर वापस आता है, उसकी पत्नी का जीवन क्या सुखी हो सकेगा ?

तो फिर 'चरित्र' शब्द का अर्थ क्या है ? शराब पीना और पीकर नशे में चूर हो जाना, नाइट क्लब जाकर अर्धनग्न औरतों के साथ मौज-मस्ती करना क्या चरित्रहीनता नहीं है ? संदीप क्या यह सब जानने के बावजूद सौम्य से विशाखा की शादी का अनुमोदन करेगा ?

उसके बाद उसके मन में ख्याल आया—इन मामलों में अपने आपको उलझाने की उसे आवश्यकता ही क्या है ? वह दूसरे के घर पर नौकरीजीवी बनकर रह रहा है, उसकी मां देस से पराए के घर रसोई पकाकर जीविका चलाती है। एक तरह से वह अनाथ ही है। इन मामलों में माथापच्ची करने की उसे जरूरत ही क्या है ? वह तो अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहा है। वह कोई गोपाल हाजरा नहीं है कि ईमानदारी-बेईमानी के बारे में बगैर सोचे मिनिस्टरों का पिछलग्गू बनना ही अपने जीवन का चरम सत्य समझे। या वह कोई सुशील सरकार भी नहीं है कि किसी पार्टी का मेम्बर बनने को ही जीवन की उन्नति की पहली मंजिल समझे। तो फिर उसका कौन-सा रास्ता है ? वह किस रास्ते पर चलेगा ? किस पथ को वह विश्व का श्रेष्ठ पथ समझकर वरण करेगा ? किस पथ पर अग्रसर होने से वह आदर्श 'चरित्र' की तलाश कर पाएगा ?

काशी वावू ने कहा था, "यह जो हम लोगों के भारत की वदतर हालत है इसके पीछे भी एक साधारण कारण का हाथ है। वह कारण क्या है? विशाल मशीन के वीच एक छोटे-से स्क्रू की तरह—"

संदीप ने पूछा था, "चरित्र के मायने?"

काशीनाथ वावू ने कहा था, "दरअसल हम भारतीयों का चरित्र ही नष्ट हो गया है—चाहे उच्च वर्ग के लोग हों या निम्न वर्ग के। हर जगह उस चीज़ का अभाव है। डिक्शनरी देखने पर पता चलेगा कि चरित्र के कई अर्थ लिखे हुए हैं। जैसे 'स्वभाव', 'रीति-नीति', 'आचार-विचार'। असल में चरित्र का अर्थ यह नहीं है। शराब पीने से ही चरित्र नष्ट नहीं हो जाता, चोरी करने या रिश्वत लेने से ही चरित्र नष्ट नहीं हो जाता। तो फिर 'चरित्र' शब्द का अर्थ क्या है? दूसरे का उपकार करना? दूसरे के दुख से कातर होना? दूसरे की सेवा करना?"

यह भी नहीं तो फिर?

चरित्र शब्द का अर्थ खोजने के लिए जीवन-भर उसकी तलाश करना पड़ेगा। अभी तो वह छोटा है, कमसिन है। अभी वह किस रास्ते का चुनाव करेगा? सभी लोगों के साथ ताल-मेल मिलाते हुए किसी भी पार्टी में घुस जाने से निश्चिन्तता के साथ पूरी ज़िंदगी विताई जा सकती है। वह वही करेगा क्या?—गोपाल हाजरा जो कुछ इतने दिनों से करता आ रहा है और सुशील सरकार जो करना चाहता है, पर कर नहीं पा रहा है, वह भी क्या वही करेगा? नहीं तो और एक रास्ता है। वह रास्ता है सबसे ताल-मेल न मिलाकर चलना। सभी के विरुद्ध खड़े होकर गतानुगतिकता के खिलाफ आमरण संघर्ष करना।

एकाएक सदर दरवाज़े का कॉलिंग वेल वज उठा।

अव शायद विशाखा ही आई होगी।

योगमाया ने दरवाज़ा खोल दिया। उसने जो सोचा था, सही साबित हुआ। विशाखा ही आई है। लेकिन उसका चेहरा यह कैसा हो गया है!

"क्यों री, इतनी देर कैसे हुई?"

विशाखा का सोने के रंग जैसा शरीर धूप से झुलस कर फीका हो गया है।

"क्यों री, वात का जवाव क्यों नहीं दे रही है?"

किताव-कापी, वैग सारा कुछ फेंककर विशाखा ने कहा, "थोड़ा-सा पानी दो।"

शैल तैयार ही थी। उसने झट से कच्चे नारियल का पानी लाकर दिया और विशाखा ने उसे एक घूंट में ही पीकर समाप्त कर दिया। उसके वाद अपने कमरे के भीतर चली गई। योगमाया भी उसके पीछे-पीछे गई। और पूछा, "क्यों री, कहां थी तू? अरविन्द खाली गाड़ी लेकर लौट आया। वता, कहां थी?"

कमरे के अन्दर मां-वेटी के वीच जो वातचीत चल रही थी वह वाहर आ रही थी।

"मेरी वात का जवाव क्यों नहीं दे रही है? कहां गई थी, वता?"

मां के प्रश्न के उत्तर में विशाखा ने कहा, "तुम्हारा दामाद मुझे ले गया था—"

"कहां ले गया था?"

"होटल।"

"तू होटल क्यों गई?"

विशाखा बोली, "मैं क्या करूं? मुझे जबरन—"

"तुझे मालूम नहीं कि अभी तेरी शादी नहीं हुई है? शादी के पहले क्या पति के साथ कहीं जाना चाहिए? लिखना-पढ़ना सीखने के बावजूद तुममें यह अक्ल नहीं आई है?"

उसके बाद जरा रुककर योगमाया फिर बोली, "तेरे चेहरे पर यह किस चीज का निशान है?"

विशाखा के मुंह से इसका कोई उत्तर नहीं निकला।

"बता, तेरे चेहरे पर यह किस चीज का निशान है?"

फिर भी विशाखा ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"बता, मेरी बात का जवाब दे। तेरे गाल से खून क्यों टपक रहा है, बता? तेरे गाल में क्या हुआ? किसी ने नाखून से नोच लिया है?"

फिर भी विशाखा खामोश।

योगमाया शायद अपनी लड़की की पीठ पर दनादन मुक्के बरसाने लगी। उसके बाद शायद उसका झोंटा भी खींचने लगी। तत्क्षण संदीप के कानों में विशाखा की रुलाई की आवाज आई। विशाखा कहने लगी, "उफ्, बाल क्यों खींच रही हो? दर्द कर रहा है, बेहद दर्द···उफ्, छोड़ दो, छोड़ दो···मां छोड़ो।"

संदीप ने एक बार सोचा, वह कमरे के अन्दर जाकर योगमाया के अत्याचार से विशाखा की रक्षा करे। असहाय लड़की को एकांत में पाकर मां मारे, यह कैसे बरदाश्त किया जा सकता है? उसे लगा, योगमाया जैसे विशाखा को न मार रही हो, योगमाया जैसे विशाखा का झोंटा नहीं खींच रही हो, बल्कि सारी चोटें आकर संदीप पर ही बरस रही हों। जैसे विशाखा नहीं बल्कि संदीप ही असहाय यातना का शिकार होकर चिल्ला रहा हो—दर्द कर रहा है, बेहद दर्द, उफ् छोड़ो···छोड़ो, मां छोड़ दो···

"बोल मुंहजली, किसने नोच लिया है? बोल···?"

विशाखा ने कहा, "नोचा नहीं है···"

"नोचा नहीं है तो तेरे गाल से खून क्यों टपक रहा है?"

विशाखा कोई जवाब नहीं देती है।

योगमाया फिर चिल्ला उठी, "बता, तेरे गाल से खून क्यों टपक रहा है?"

विशाखा ने कहा, "उसने मेरा गाल दांत से काट लिया है···"

संदीप अब बाहर खड़ा नहीं रह सका। उसका सिर चकराने लगा। वह फौरन घर से बाहर आ एक लमहे के लिए सीढ़ी के पास खड़ा रहा। उसके बाद दनादन सीढ़ियां उतरकर एकबारगी रसेल स्ट्रीट पर चला आया। उसे काशीबाबू की बात याद आई। 'चरित्र'। वह किस रास्ते पर चलेगा? किस पथ को वह जीवन का श्रेष्ठ पथ समझकर वरण करेगा? किस पथ पर जाने से उसे आदर्श चरित्र का पता चलेगा?

उन दिनों संदीप सोचता, ईश्वर से आवश्यक बातचीत करने के वास्ते एक हॉट-लाइन रहता तो अच्छा होता। एकाएक ज़रूरत पड़ने पर उनसे पूछा जा सकता था कि ऐसा क्यों हुआ या ऐसा होने की कौन-सी ज़रूरत पड़ गई। यह भी पूछा जा सकता था कि इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है? क्या ज़रूरत थी खिदिरपुर मनसा-तल्ला लेन से योगमाया देवी को अपनी लड़की विशाखा को लेकर तीन नम्बर रसेल स्ट्रीट के मकान में आने की? किसने दादी मां से शपथ खिलाई थी कि वे इतना खर्च कर--उन्हें अपने रसेल स्ट्रीट के मकान में लाकर रखें? उससे विधाता के मन की कौन-सी शुभ इच्छा की पूर्त्ति हुई थी?

और अगर ऐसी शुभ इच्छा थी तो उसकी ठीक समय पर पूर्त्ति क्यों नहीं हुई? क्यों और किसके इशारे पर ठीक उसी समय मुखर्जी-भवन के लंदन ऑफिस के मैनेजर कमललाल मेठा की मृत्यु हो गई?

कमललाल मेठा की मृत्यु न हुई होती तो सौम्य मुखर्जी को विलायत जाने की इतनी जल्दबाज़ी नहीं होती। सौम्य बाबू को विलायत जाना पड़ा, इसीलिए संदीप के जीवन में असमय काल-रात्रि उतर आई। और चूंकि काल-रात्रि उतर आई इसीलिए संदीप इतने बरसों तक जेल की सजा भुगतने के बाद आज यहां इस मंज़िल पर पहुंचकर यह कहने में समर्थ हो पा रहा है कि 'चरित्र' कौन-सी चीज़ है।

याद है, उस दिन दोपहर के वक्त रसेल स्ट्रीट की सड़क पर खड़ा होकर वह भावनाओं के सागर में डुबकियां लगाकर पता लगा रहा था कि इसका प्रतिकार क्या है। लेकिन किस चीज़ का प्रतिकार? सौम्य बाबू से विशाखा की शादी अगर पक्की हो गई है तो इस मिलने-जुलने में कौन-सा अन्याय है?

उसके बाद उसे अपने मन में ही इसका उत्तर मिल गया था। आदमी ने खुद ही समाज का निर्माण किया है और उन्हीं आदमियों ने एक आदमी का दूसरे आदमी से संबंध की रीति-नीति का भी निर्धारण किया है। जिस आदमी ने आदमी से आदमी के रिश्ते की रीति-नीति का निर्माण किया है, उसी आदमी को उन रीतियों और नीतियों में तब्दीली लाने का हक है। फिर उसके लिए चिंता की कौन-सी बात है?

दरअसल बात दूसरी ही किस्म की है। हमें जो प्यार करते हैं, स्नेह देते हैं और अपना मंगल चाहते हैं उन्हें स्मरण रखने की जिम्मेदारी हम पर नहीं है। हम सिर्फ उन्हें ही याद रखते हैं जो हमारी अवहेलना करते हैं, निंदा करते हैं, हमसे ईर्ष्या करते हैं।

दुनिया के मानव समाज की यह अद्भुत मानसिकता है।

उस दिन उसे देखकर सुशील सरकार अचकचाकर बोला, "यह क्या, आपको क्या हुआ है? आपका चेहरा ऐसा क्यों हो गया है?"

संदीप ने कहा, "मुझे कुछ भी नहीं हुआ है।"

"देखने पर लगता है रात में आपको ठीक से नींद नहीं आई है।"

संदीप चुप्पी ओढ़े रहा, कुछ उत्तर नहीं दिया। उसके बाद बोला, "आपको कहीं नौकरी-चाकरी मिली?"

सुशील सरकार का मन बहुत दिनों से उदास था। बोला, "हाल ही में इलेक्शन होनेवाला है, उसमें हो सकता है कुछ पैसे जेब में आ जाएं। इन कई दिनों

तब कुछ रुपये मिलेंगे फिर जन का राम।"

"अच्छा, यह तो बताइए, इलेक्शन में आप लोगों में से हरेक को कितने रुपये मिलते हैं ?"

सुशील ने कहा, "यह काम के हिसाब से मिलता है।"

"क्या-क्या काम करना पड़ता है ?"

सुशील बोला, "काम क्या कोई कम रहता है ? जो लोग हट्टे-कट्टे गुंडा टाइप के होते हैं और थोड़ा-बहुत लेक्चर दे सकते हैं, उन्हें शहर के मोड़-मोड़ पर मीटिंग करने के लिए भेजा जाता है। उस मीटिंग में लीडर लोग नहीं रहते। उन लोगों की दर जरा ज्यादा है। उन लोगों को एक दिन का आठ से दस रुपये तक मेहनताना दिया जाता है।"

"और दूसरे-दूसरे नौजवान ?"

"वे लोग गोंद की हांडी लेकर दीवार पर पोस्टर चिपकाने जाते हैं। उन्हें ज्यादा खटना पड़ता है। भोर चार बजे ही उठकर निकलना पड़ता है। उन लोगों में से हरेक को चार से पांच रुपये तक मिलते हैं, जब कि उनका काम उतना आसान नहीं है।"

"और आप ? आपको कौन-सा काम दिया जाएगा ?"

"मेरा काम है दीवार पर लिखना। नेतागण नारे लिखकर देते हैं और हम लोग मकानों की दीवारों पर रंग और कूची से लिखते हैं।"

सदीप ने पूछा, "क्या लिखते हैं ?"

सुशील बोला, "सो सब तो आप लोगों ने देखा होगा। रसा रोड की दीवारों पर जितने भी नारे लिखे हुए हैं, वह सब मैंने लिखा है।"

"एक नमूना पेश कीजिए न।"

"फिर सुनिए—"

यह कहकर सुशील आवृत्ति करने लगा

"रास्ते के मोड़ पर जलाकर लाल बत्ती।
गिद्ध उतार रहे हैं साम्य आरती
जोड़ा बैल को दीवार पर लटका
होंठ चाट कहते हैं वोट दे॥"

सदीप बोला, "वाह, क्या कहने ! यह सब कौन लिखता है ?"

सुशील बोला, "हम लोगों के किराये के कवि हैं, वे लोग ही लिखते हैं। इस तरह के और हैं, सुनिएगा ?

आओ अर्मा, कुसुम-कलि
वायु के बागान में,
जोड़ा बैल को वोट दो प्यारे
तुम्हें मिलेगी नौकरी
चाहे पर खरीदो या साड़ी
यह लो रुपये, अब खरीद लो॥"

सदीप ने पूछा, "इस तरह की कविताओं के लिए पार्टी कितना पैसा देती है ?"

सुशील बोला, "कितना दिया जाता है, यह ठीक से मालूम नहीं है। जो लोग हम लोगों की पार्टी के लिए लिखते हैं वे दूसरी पार्टियों के लिए भी लिख देते हैं। वे लोग किराये के 'पोयेट' हैं।"

इसके बाद ज़रा रुककर फिर बोला, "वोट तो हर रोज़ नहीं होता। पांच साल के बाद एक बार होता है, बस। इसके बाद बेकार बैठे रहना पड़ता है। उसके बाद कब दुर्गा पूजा, कब सरस्वती पूजा, कब काली पूजा और ज्यादा-से-ज्यादा एक बार संतोषी मां की पूजा—यही सब करते तो हम लोगों के दिन बीतते हैं।"

यह कहकर सुशील गम्भीर हो गया।

सुशील की बात सुन संदीप को दुख हुआ। इतने सारे काम करने के बावजूद सुशील को कोई नौकरी नहीं मिल रही। ठीक संदीप जैसी ही हालत है सुशील की।

सुशील बोला, "नहीं, आपकी हालत फिर भी हम लोगों से बेहतर है। मेरी हालत पर एक बार गौर कीजिए। मेरे जैसे कितने ही युवक नौकरी के लिए मारे-मारे फिर रहे हैं, उसका कोई ठीक नहीं। यह जो आप देख रहे हैं, हमारे कॉलिज में लड़के पढ़ते हैं, लेकिन वे क्यों पढ़ रहे हैं, जानते हैं? नौकरी न मिलने से बैठे-बैठे क्या करेंगे, इसीलिए पढ़ाई जारी रखे हुए हैं। और जो पढ़ नहीं पाते हैं वे दादा-गीरी करते हैं और मुहल्ले-मुहल्ले में बमबाजी कर हाजी मस्तान बन रहे हैं—लेकिन देखिए—"

यह कहकर सुशील जरा चुप हो गया, उसके बाद फिर बोला, "यह सब बात पार्टी के दादा लोगों से कहा नहीं जा सकता है। दादा लोग भरोसा देते हैं कि अब की चुनाव जीतकर सबको नौकरी में भर्ती करा देंगे, लेकिन बहुत बार चुनाव हो चुके हैं, दादा लोगों की जीत भी हो चुकी है, लेकिन किसी को नौकरी नहीं मिली—"

संदीप ने सुशील से अपने भाग्य की तुलना की। हां, वह उन लोगों के बनिस्बत बेहतर स्थिति में है। उसकी हालत सुशील से अच्छी है। उसे दैनिक आहार के लिए कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। उसे बूढ़े नाकाम मां-बाप का बोझा नहीं ढोना पड़ता है। उसे सुशील जैसे लोगों की तरह अनब्याही बहनों की ज़िम्मेदारी नहीं उठानी पड़ती। तो फिर उसके मन में इतनी अशांति क्यों है? वह अशांति उसे अपनी अक्षमता की बात सोचकर जीनी पड़ती है या पूरे देश के तमाम सुशील-जैसे लोगों की स्थिति की कल्पना करने की वजह से?

उस दिन हाथीबागान के बाज़ार के पास से आने के दौरान संदीप ने दुबारा देखा कि सड़क के मोड़ पर एक जगह वेदी-जैसी कोई चीज बनी हुई है। उसके ऊपर बिजली की एक बत्ती जल रही है। बगल में बहुत तरह के फूल बिखरे पड़े हैं और धूपदानी में धूना जल रहा है। और उसके ऊपर साइन बोर्ड पर लिखा हुआ है:

श्री श्री जगन्नाथ के स्वप्न के आदेशानुसार
विश्वशांति की स्थापना के निमित्त
इस देवस्थान में प्रत्येक दिन
पूजा-पाठ और यज्ञ-याजन
अनुष्ठित होगा।

ईश्वर के इस आदेश के पालन हेतु
हमें यथासाध्य सहायता करें।
सेवायत : श्री ललित कुमार माइती (लालटू)।

इसके पहले इस तरह का साइनबोर्ड मिर्जापुर स्ट्रीट में टंगा था और अब हाथी-बागान के बाजार के मोड़ पर है। उस बार भी वेदी पर कुछेक अठन्नी-चौवन्नी दस नए पैसे और पांच नए पैसे बिखरे पड़े थे, अबकी भी छुट्टे पैसे बिखरे पड़े हैं। अन्तर बस इतना ही है कि उस बार सेवायत था श्री भूतनाथ दास (भुतो) और अबकी है ललित कुमार माइती (लालटू)।

संदीप बहुत देर तक गौर से साइनबोर्ड की ओर ताकता रहा। हूबहू एक ही नमूना और स्टाइल की लिखावट है। उसी तरह के विश्वशांति के लिए यज्ञ-याजन, जगन्नाथ का सपने में आदेश और ईश्वर के निर्देश का पालन करने के लिए यथासाध्य सहायता का निवेदन। सारा कुछ एक ही जैसा। व्यतिक्रम है तो केवल सेवायत के नाम का। उस बार का सेवायत श्री भूतनाथ दास (भुतो) था और इस बार का सेवायत है श्री ललित कुमार माइती (लालटू)।

संदीप उस लिखावट को पढ़कर आगे बढ़ गया था। अचानक एक लड़के ने पुकारा, "भाई साहब, ओ भाई साहब!"

संदीप ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा और पाया कि पहलेवाले चेहरे का ही आदमी खड़ा है। युवक ने कहा, "क्यों भाई साहब, आपने कुछ चन्दा क्यों नहीं दिया?"

संदीप बोला, "भाई मेरे, मेरी भी हालत तुम्हारी ही जैसी है, नौकरी-चाकरी नहीं करता हूं।"

यह सुनकर युवक हताश नहीं हुआ। बल्कि उत्साहित ही हुआ वह। बोला, "आपको भी नौकरी-चाकरी नहीं मिली है?"

संदीप बोला, "नहीं भाई, नहीं—"

युवक बोला, "मुझे भी नहीं मिली है। आप क्या करते हैं?"

संदीप बोला, "एक आदमी के घर के काम-काज की देखभाल करता हूं, वहां खाने और रहने का कोई खर्च नहीं लगता है। और लॉ कालिज में पढ़ता हूं।"

"तो फिर आप बी० ए० कर चुके हैं। मैं जो कर रहा हूं—"

संदीप बोला, "क्या काम? कहां?"

युवक बोला, "जोड़ासांको के बाजार के मोड़ पर एक अच्छी-सी जगह अब भी खाली पड़ी हुई है, वहां से होकर रोजाना दस-बारह हजार आदमी आते-जाते रहते हैं। वहां मैं आपके लिए एक जगह तैयार कर दे सकता हूं। आप वहां इसी तरह का एक साइनबोर्ड लगा दीजिएगा। दिन-भर में आपको आठ-दस रुपये मिल जाएंगे।"

"रोजाना आठ-दस रुपये?"

"हां, मैं आपको गारंटी देता हूं। खर्च नहीं के बराबर है। इस तरह का साइन-बोर्ड मैं आपको पांच रुपये में बनवा दे सकता हूं। दूसरी जगह तैयार कराइएगा तो वे लोग आपसे बारह रुपये ले लेंगे। बहुत कहने-सुनने पर भी दस रुपये से कम

ं लेंगे। लेकिन मैं पांच रुपये ही में बनवा दूंगा।"

संदीप ने कहा, "इतने कम रुपये में तुम कैसे दोगे?"

युवक बोला, "मेरी जान-पहचान का एक बढ़ई मिस्त्री है। वह मेरी पार्टी का
ादमी है। मैं खुद इसका भार ले लूंगा। अच्छी लकड़ी दे, यह मैं आपको दिखा
ूगा।"

यहां भी पार्टी! यह लालटु भी पार्टीबाज़ी करता है!

संदीप ने पूछा, "इसके अलावा और कुछ खर्च नहीं लगेगा?"

लालटु बोला, "और मात्र पांच रुपया लगेगा?"

"और पांच रुपया किसलिए लगेगा?"

लालटु बोला, "जोड़ासोंको बाज़ार समिति का चन्दा। यह आपको हर महीने
नहीं देना है, एक बार जगह पर दखल जमाने के लिए पेशगी देने से ही काम चल
जाएगा। आप मुझे दस रुपये दे दीजिएगा, मैं सारा काम कर दूंगा। वह जगह
आपके नाम से रिज़र्व हो जाएगी—साथ-साथ साइनबोर्ड भी।"

संदीप बोला, "ठीक है, बाद में किसी दिन आऊंगा। ज़रा सोचकर देख
लूं।"

यह कहकर वह आगे बढ़ने जा रहा था। लालटु बोला, "ज़रा जल्दीबाज़ी
कीजिएगा भाई साब। और भी बहुत सारे लोगों को उस स्थान पर लोभ है। देर
नहीं कीजिएगा वरना—"

संदीप सहमति जताकर वहां से आगे बढ़ आया। अजीब कांड है! हर जगह
पार्टीबाज़ी। ये पार्टियां ही क्या समूचे देश पर किसी दिन अपना दखल जमा लेंगी?
तमाम लोग क्या पार्टी के किराएदार हो जाएंगे! यह सुशील, यह श्री भूतनाथ
दास (भुतो), यह श्री ललित माइती (लालटु) वगैरह ही क्या किसी दिन कलकत्ता
के मालिक होकर बैठ जाएंगे? जिस तरह तीन बार मैट्रिक की परीक्षा में अनुत्तीर्ण
हुए मिनिस्टर श्रीपति मिश्र का पी० ए० गोपाल हाजरा हो गया है, ठीक उसी
तरह? कलकत्ता में अब एक इंच खाली जगह नहीं बचेगी?

मकान के सामने आते ही गिरिधारी ने हर रोज़ की तरह संदीप को सलाम
किया। संदीप ने भी सिर तक हाथ ले जाकर उसके सलाभ का उत्तर दिया। गिरि-
धारी ने सहसा पूछा, "अच्छा बाबूजी, एक बात पूछूं?"

संदीप ने खड़े होकर कहा, "क्या पूछना है, कहो।"

गिरिधारी ने कहा, "सुना है, छोटे बाबू विलायत जा रहे हैं। यह सच है
क्या?"

संदीप ने कहा, "हां गिरिधारी, तुमने सच ही सुना है।"

"कितने दिनों के लिए?"

संदीप ने कहा, "यह मैं बता नहीं सकता गिरिधारी। हां, यह सच है कि छोटे
बाबू विलायत जा रहे हैं।"

यह सुनकर गिरिधारी के चेहरे पर उदासी तिर आई। उदासी का कारण भ
है। इतने दिनों से वह गैर-कानूनी काम करता आ रहा था। नौ बजे सदर गेट प
ताला लगाने का उसे आदेश दिया गया था। घर की मालकिन का यह कड़ा हु
था। गिरिधारी उस हुक्म को न मानकर सौम्य बाबू के लिए रात नौ बजे के ब

भी गेट खोल देता था। इसके लिए सौम्य बाबू गिरिधारी को हर महीने मोटी तनख्वाह देते थे। अब सौम्य बाबू अगर विलायत चले जाते हैं तो उसकी बंधी-बंधाई ऊपरी आय का रास्ता बंद हो जाएगा। लिहाजा उसका उदास होना स्वाभाविक है।

गिरिधारी ने पूछा, "छोटे बाबू कितने दिनों के लिए जा रहे हैं?"

सदीप ने कहा, "मैं यह बता नहीं सकता हूं।"

यह कहकर सदीप मकान के अन्दर चला गया।

मार्क ट्वेन ने अपनी एक किताब में लिखा है—Be good and you will be lone some

यानी दुनिया में जो अच्छे आदमी हैं उन्हें अकेलेपन का जीवन जीना पड़ता है। यही वजह है कि सदीप का भी कभी कोई मित्र नहीं बन सका। चूंकि वह निःसंग है इसी वजह से सभी को देखने की उसे निरपेक्ष दृष्टि मिली है। और सिर्फ [illegible]

[illegible]

को बरकरार रख पाता? उस दिन उसमें किसने साहस भर दिया था? किसने उसे अभयवाणी सुनाई थी? वह थी उसकी शुभ बुद्धि। यह शुभ बुद्धि ही तनहा आदमी को आमरण सजीव बनाए रखती है। सदीप के लिए हमेशा यह शुभ बुद्धि ही एकमात्र पाथेय बनकर कायम रही।

उस दिन भी सदीप अपनी शुभ बुद्धि के साथ तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान में गया था।

यह भी तो उसका एक काम है। काम यानी जिम्मेदारी। इसी जिम्मेदारी के लिए उसे रखा गया है।

"कौन?"

अन्दर क्या कोई नहीं है? और-और दिन शैल या मौसीजी उत्तर देती थीं। वे लोग कहां गईं?

सदीप ने कहा, "मैं सदीप हूं।"

दरवाजा खोलते ही सदीप विशाखा के सामने खड़ा हो गया।

सदीप बोला, "क्या बात है? घर में क्या तुम अकेली ही हो?"

"हां।"

"मौसीजी कहां गईं?"

विशाखा बोली, "अरे, तुम्हें मालूम नहीं कि आज मां का हितसाधिनी व्रत है, इसीलिए मां शैल को अपने साथ ले गई हैं।"

सदीप ने पूछा, "कैसे गईं?"

विशाखा बोली, "अरविन्द गाड़ी लेकर आया था। उसे पहले से ही कहकर रख दिया गया था।"

"और तुम ? तुम स्कूल नहीं गईं ?"

विशाखा बोली, "तुम कितने बेवकूफ हो ? आज पब्लिक होली डे है, यह भी नहीं जानते ? कैलेंडर की ओर गौर से देखो भोंदूराम। लाल तारीख दिख नहीं रही है ?"

बात तो सही है। जो आदमी नौकरी नहीं करता वह लाल तारीख का हिसाब क्यों रखेगा ? फिर तो उसके कॉलिज में भी छुट्टी होगी। आज उसे कॉलिज नहीं जाना है।

संदीप बोला, "तुम्हें अकेली छोड़कर मौसीजी चली गईं ?"

विशाखा बोली, "क्यों, अकेले रहने में डर की कौन-सी बात है ? नीचे तो दरबान हैं ही।"

"लेकिन दरबान तो मर्द है।"

विशाखा बोली, "तुम भी तो मर्द ही हो।"

"मैं ?"

विशाखा हंसने लगी। बोली, "हां, एक बात। तुम मेरी कोई हानि नहीं कर सकते क्या ?"

"मैं तुम्हारी हानि करूंगा ? यह क्या कह रही हो तुम !"

"हां, मर्द औरतों की हर तरह की हानि कर सकता है।"

"मैं भी ? इतने दिनों के बाद तुमने मुझसे ऐसा कहा ?"

विशाखा ने कहा, "मैंने गलत कहा है ?"

संदीप ने कहा, "गलत नहीं कहा है ? तुम्हारी देख-रेख करने के लिए ही तो मुझे रखा गया है।"

विशाखा ने कहा, "लेकिन बहुतेरे लोग रक्षक होकर भी भक्षक बन जाते हैं। बनते नहीं क्या ?"

"बहुतेरे लोग बनते हैं तो मैं भी क्या उसी किस्म का हूं ?"

विशाखा ने कहा, "बहुतेरे बनते हैं तो तुम भी कैसे नहीं बन सकते ? तुम क्या अलग किस्म के हो ?"

संदीप का चेहरा बुझ गया। बोला, "इस बात के बाद मेरे पास कहने को कुछ नहीं है। मैं अब चलता हूं। मौसीजी से कह देना कि मैं आया था।"

विशाखा ने कहा, "तुमने क्या सोचा है कि मैं तुम्हारा रास्ता रोककर खड़ी हो जाऊंगी ? बिलकुल नहीं। मैं उस तरह की लड़की नहीं हूं। मैं न तो तुम्हें जाने कहूंगी और न रुकने ही।"

संदीप कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और बाहर की तरफ कदम बढ़ाते हुए बोला, "देखो विशाखा, तुम्हें एक बात कहे जाता हूं। इतना चालाक और चतुर होना ठीक नहीं होता।"

विशाखा ने कहा, "बात तो सच है। चालाक-चतुर होने से दूसरे के मन की बात का पता चल जाता है, इसीलिए तुम ऐसा कह रहे हो।"

संदीप बोला, "सच, तुम्हें जितना भी देखता हूं मुझे उतना ही आश्चर्य होता है। देखो, जो आदमी सत्य पर जितना ही अटल रहता है, समाज उसे उतना ही नादान समझता है। लेकिन मैं नादान नहीं हूं। मैं सब समझता हूं—"

"तुम सचमुच ही समझते हो ?"
"समझता क्या नहीं ? सब समझता हूं।"
विशाखा बोली, "मगर सब कुछ समझने के बावजूद तुम चुप्पी ओढ़े क्यों रहते हो ? विरोध क्यों नहीं करते ?"
"किस चीज का विरोध ?"
"अन्याय का।"
सदीप कुछ समझ नहीं सका। बोला, "किस चीज का अन्याय ?"
विशाखा बोली, "किस तरह का अन्याय नहीं ? हर तरह का अन्याय—"
सदीप की तब भी उसकी बात समझ में नहीं आई। बोला, "मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा। साफ-साफ कहो..."
विशाखा बोली, "अभी तो तुमने बताया कि तुम नादान नहीं हो, सब समझते हो। फिर तुमसे जो मैं हंसी-मजाक करती हूं, तुम्हें इतनी बुरी-बुरी बातें कहती हूं, इसकी वजह से तुम क्रोधित क्यों नहीं होते, इसका विरोध क्यों नहीं करते ?"
सदीप स्थाणु की तरह खड़ा रहा। बोला, "तुमसे मेरी क्या कोई तुलना हो सकती है विशाखा ?"
"क्यों, तुलना क्यों नहीं हो सकती ?"
सदीप बोला, "देखो, हर आदमी को हर तरह का अधिकार नहीं हो सकता है। मेरी खिल्ली उड़ाने या मुझे गाली-गलौज करने का चूंकि तुम्हें अधिकार है तो इसका मानी यह नहीं कि मुझे क्रोधित होने या विरोध करने का अधिकार है। इसके अलावा..."
"इसके अलावा क्या ?"
सदीप ने कहा, "कहने से तुम बिगड़ोगी तो नहीं ?"
"नहीं, बताओ।"
सदीप ने कहा, "जिससे तुम्हारी शादी होने वाली है, मैं उसका नौकर हूं। या कह सकती हो कि नौकर से भी निचले दर्जे का। एक दृष्टि से मैं तुम्हारे लिए भी वही हूं। तुम्हारे हंसी-मजाक और गाली-गलौज का मैं प्रतिवाद करूं, इतना गंवार मुझे मत समझो। मैं चलता हूं—"
विशाखा ने एकाएक सदीप का एक हाथ पकड़ लिया। पकड़कर उसे अपने पास खींचते हुए कहा, "सरक आओ, यह देखो मेरे गाल में क्या हुआ है। देख रहे हो—"
सदीप विशाखा के गाल पर आंखें जाते ही चिहुंक उठा। बोला, "यह क्या है ? इसे तो इसके पहले कभी नहीं देखा था। यह क्या हुआ है ?"
विशाखा बोली, "तुम्हारे मालिक ने दांत से काट लिया है।"
सदीप हतप्रभ हो गया। बोला, "यह क्या ? क्यों ?"
विशाखा बोली, "प्यार में।"
एकाएक सदर का कॉलिंग बेल बज उठा। विशाखा ने झट से सदीप को दूर ठेल दिया। बोली, "हट जाओ, फौरन हट जाओ, मां आ गई है।"

छोटे-छोटे दुख, छोटे-छोटे सुख, छोटे-छोटे हास और रुदन, छोटी-छोटी प्रसन्नता और छोटे-छोटे विस्मय को अपने साथ लिए जीवन आगे बढ़ता है। किसी ने कहा है, समय तेज गति से आगे बढ़ता जाता है। लेकिन सच्चाई यह नहीं है। समय स्थिर रहता है और हमीं आगे बढ़ते जाते हैं।

सुकरात चले गए, तथागत बुद्ध चले गए, शंकराचार्य, श्री चैतन्य, ईसामसीह, परमहंस देव भी चले गए। लेकिन समय पहले की तरह ही अचल खड़ा है। एक दिन मैं भी उन्हीं लोगों की तरह चला जाऊंगा, लेकिन तब भी समय रहेगा। हम सभी चले जाने के लिए ही जीवित हैं, लेकिन समय क्योंकि जाने वाला नहीं है, इसीलिए जीवित है।

सैक्सबी मुखर्जी इंडिया लिमिटेड पर उस दिन किस दुर्योग का वज्रपात हुआ! एक नहीं, एक के बाद दूसरा। जो मंझले बाबू काम करते-करते काम के दबाव से परेशान हो उठते थे, आखिर मैं उन्हीं मंझले बाबू की पागल जैसी हालत हो गई। हर वक्त बस यही कहते, "अब संभालने में अपने को असमर्थ पा रहा हूं।"

नागराजन हर पत्र लेकर दिखाने आता। तमाम दिल्ली के आवश्यक पत्र। कितनी ही तरह के हुक्म और कितनी ही तरह की धमकियां। ऊपर-नीचे, आस-पास हर दिशा से हुक्म और धमकियां आतीं।

लेकिन जिन्सों की कीमत क्यों बढ़ती है और क्यों स्टाफ का वेतन बढ़ाने का जोरदार दावा किया जाता है, इस सहज गणित को न तो दिल्ली समझती है और न ही राइटर्स बिल्डिंग।

मंझले बाबू कहते हैं, "तुम लिख दो नागराजन कि पॉलिटिकल पार्टियों के दादा लोगों के चंदे के जुल्म को अगर रोका नहीं जाएगा तो हम लोगों के प्रोडक्शन की कीमत बढ़ेगी ही—बढ़ाने को हम बाध्य हैं। कोई इसे रोक नहीं सकता।"

नागराजन ने कहा, "नहीं-नहीं, यह बात मत लिखिए सर। चंदे का जुल्म तो कोई नई बात नहीं है, यह जुल्म तो हर पार्टी के शासन-काल में था। अब भी है और हमेशा रहेगा भी।"

"तो फिर हम मार्केट प्राइस को कैसे ठीक रखेंगे? हम लोगों पर पार्टी के चंदे का जुल्म कम नहीं होगा, बोनस का दबाव भी कम न होगा, तनख्वाह बढ़ाने की मांग में भी कमी नहीं आएगी तो कीमत स्थिर रखना कैसे संभव हो सकता है?"

नागराजन ने कहा, "स्टील ऑथोरिटी तो यह सब जानती है, इस पर भी हम अगर यह दलील पेश करें तो वे हमें जहरीली आंखों से देखना शुरू कर देंगे सर—"

"तो फिर लिख दो कि कलकत्ता में पॉवर शॉटेज के कारण कीमत में वृद्धि करने के अलावा हमारे सामने कोई दूसरा विकल्प नहीं है।"

"लेकिन यह लिखना भी अच्छा नहीं रहेगा। कितने ही फर्म वेस्ट बेंगाल छोड़कर दूसरे-दूसरे प्रदेशों में हटकर चले गए हैं। इससे किसकी हानि हुई है? हानि तो पश्चिम बंगाल की ही हुई है। यहां के स्थानीय लोगों को नौकरी नहीं मिलेगी, यहां की पर व्यक्ति आय में कमी आ जाएगी, यहां का कोई विकास नहीं हो पाएगा। यह क्या कोई अच्छी बात है? समूचे देश के शरीर का सिर, कंधा, पैर, छाती मजबूत रहे और एक हाथ या एक पैर यदि पंगु हो जाए तो देश के हित में

यह क्या अच्छा है ? उस देश के आदमी स्वस्थ और सुखी हो पाएंगे ?"

नागराजन से मैनेजिंग डाइरेक्टर की इस सम्बन्ध में बहुत सारी गोप बातें होती हैं। लेकिन वे किसी निर्णय पर नहीं पहुंच पाते हैं। बीच-बीच में मु पद की तबीयत खराब हो जाती है।

नंदिता पूछती है, "तुम्हारे सदन ऑफिस की क्या खबर है ?"

मुक्तिपद कहते हैं, "सौम्य तो सदन ऑफिस जा ही रहा है।"

नंदिता कहती है, "आखिर में वह नहीं जाएगा।"

"क्यों ? जाएगा क्यों नहीं ?"

नंदिता कहती है, "तुम्हारी मां ही तरह-तरह की बहानेबाजी कर उसे नहीं देगी, देख लेना।"

मुक्तिपद कहते हैं, "नहीं-नहीं, काशी से उसके गुरुदेव ने खबर भेजी। उसकी शादी बगैर कराए उसे सदन भेज दे। अभी उसकी जन्मपत्री में कोई योग है, अभी शादी कराने से उसकी हानि होगी।"

नंदिता कहती है, "ये गुरुदेव ही तुम्हारी मां का सर्वनाश करेंगे, देख लेन

यह सब कोई नई बात नहीं है। इसके पहले भी नंदिता यह सब कई बार चुकी है। मुक्तिपद इन बातों पर ध्यान नहीं देता। लेकिन जब सचमुच ही र के जाने की बात पक्की हो गई तो नंदिता का चेहरा मायूस हो गया।

उस समय मुक्तिपद बोले, "क्या हुआ, तुम तो कह रही थीं कि र विलायत नहीं जाएगा।"

रिकनिक बगल में ही थी। उसी ने इस बात का जवाब दिया, "हां-हां, कॉजिन ब्रदर विलायत जा रहा है।"

नंदिता ने पूछा, "तुझे कैसे मालूम हुआ ?"

"मुझे मिस गांगुली ने बताया।"

"तू उससे बातचीत करती है ?"

रिकनिक बोली, "हां, मिस गांगुली यह खबर सुनकर बेहद मायूस हो है। तेरी यह न्यूज सुनकर मायूस नहीं होगी ?"

यह सब सुनने की ख्वाहिश रहने के बावजूद ज्यादा सुनने का वक्त न मुक्तिपद के पास। सौम्य के जाने का सारा बंदोबस्त मुक्तिपद को ही करना बहुत बार ट्रेनिंग दिया गया है। उसके केवल खाने और ठहरने का काम में क्रम का मुक्तिपद ने बंदोबस्त नहीं किया है, बल्कि उसे ट्रेनिंग भी दे चुके "तुम ज्यादा बातें मत करना क्योंकि जो लोग ज्यादा बातें करते हैं वे सोचते है। तुम ज्यादा सोचना और बातें कम करना। किसी से बातचीत करने के र हमेशा एक बोतल लेकर बैठना। बोतल लेकर बैठने के बाद बीच-बीच में नि से चुस्किया लेना, इसके कारण तुम्हें कम बातें बोलने को बाध्य होना पड़े इसीलिए अंग्रेजी में एक कहावत है— They never taste who always dr They always talk who never thinks और ड्रिंक करने के दौरान करने से पर्मानेन्टी में भी कमी आ जाती है। दो ड्रिंक और काम कर स हो—"

सौम्य ने पूछा, "क्या ?"

मुक्तिपद ने कहा, "तुमने अवश्य ही देखा होगा कि बहुतेरे लोग सिगरेट के बदले पाइप पीते हैं। पाइप से भी व्यक्तित्व में निखार आता है और उसके कारण कम भी बोला जा सकता है। तुम देखोगे, जो लोग पब्लिक के सामने अपनी बाजार-दर में वृद्धि लाना चाहते हैं वे पाइप से कश लेते हैं। इसमें सुविधा यही है कि बात का जवाब देने में देर होने से कोई अन्यथा नहीं लेता है, माप-तोल कर बातें की जा सकती हैं—और सोचने के लिए थोड़ा वक्त भी मिल जाता है।"

इसके बाद है टेबल मैनर्स।

मुक्तिपद सौम्य मुखर्जी के अभिभावक हैं। अतः अभिभावक होने के नाते सौम्य को हर चीज़ की तालीम देना उनके लिए उचित है। "स्पून और फॉर्क से ही वहां सभी लोग खाना खाते हैं। हाथ से खाना मत खाना। शुरू में सूप दिया जाएगा। सूप पीना बड़ा ही मुश्किल है, जानते हो न? कलकत्ता के बहुत सारे होटलों में तुमने लंच-डिनर अवश्य ही लिया होगा। बताओ तो स्पून से कैसे खाओगे?"

सौम्य नहीं जानता है।

"बहुतेरे लोग सूप-प्लेट को बाएं हाथ से थाम उसे झुकाकर पीते हैं, यह बैड मैनर्स है। प्लेट को अपनी ओर उठाकर, सामने की ओर झुकाते हुए पीना। यही नियम है।"

सौम्य खामोश होकर अपने चाचा की बात सुनता है। बात उसकी समझ में आ रही है या नहीं, पता नहीं चलता।

"इसके बाद ऑफिस एफेयर्स। यह मामला ही सबसे मुश्किल है। तुमने तो इतने दिन नागराजन के पास रहकर सब-कुछ की तालीम ली है। डेबिट-क्रेडिट, बैलेंस सीट—सारा कुछ नागराजन ने तुम्हें सिखा दिया है। दक्षिण भारतीय जन्म-जात गणितज्ञ होते हैं। एकाउन्ट की उन्हें तालीम नहीं लेनी पड़ती, यह उनके खून में होता है। अपने लंदन ऑफिस में मैंने एक दक्षिण भारतीय को रखा है, उसका नाम है अयंगर। मैंने अयंगर को भी टेलेक्स कर दिया है, वह तुम्हें हर चीज़ की तालीम दे देगा। देखो, एक बात मुझसे जान लो—व्हाट इज़ टैलेंट?

सौम्य पहले की तरह ही चुप्पी साधे रहा।

मुक्तिपद कहने लगे, "टैलेंट का अर्थ है प्रतिभा। जीवन में उन्नति करने के लिएजो चीज़ अनिवार्य है। एक है 'कैरेक्टर' और दूसरा टैलेंट। कहावत है: Talent is developed in retirement; character is formed in the rush of the world. यह उक्ति है जर्मनी के कवि गेटे की। अगर तुम प्रतिभाशाली होना चाहते हो तो तुम्हें आत्म-निर्वासन का जीवन जीना होगा और अगर चरित्र-वान होना चाहते हो तो तुम्हें मनुष्य की भीड़-भाड़ में जीवन जीना होगा। यानी तुम्हीं को यह सोचकर तय करना है कि तुम क्या होना चाहते हो—प्रतिभाशाली या चरित्रवान—"

मुक्तिपद इस तरह की और बहुत सारी बातें कहने लगे। मुक्तिपद ने अपने खुद के जीवन में जिन बातों को खोजकर निकाला था पर स्वयं पर पूरी तरह चरितार्थ नहीं कर सके थे, उन्हीं बातों को भतीजे को सिखाने की चेष्टा की थी।

आखिर में कहा था, "मैंने जो कुछ जाना और सुना है, तुम्हे बताया। अब तुम अपनी बुद्धि का उपयोग कर जो कर सकते हो, करो। इसके सिवा मैं क्या कहूं! आज रात तुम्हारा प्लेन रवाना होगा, वहा पहुचते ही मुझसे फोन से संपर्क करना। तुम जो देखोगे-सुनोगे मुझे सूचित करना। मैं तुम्हे अपनी सलाह दूंगा।"

उस दिन यही तक बातचीत हुई। और उसी दिन मुक्तिपद सौम्य को दमदम हवाई अड्डे पर पहुंचाकर, उसे छोड़कर चले आए थे।

आदमी तो बहुत कुछ सोचता है लेकिन अन्तत: क्या तमाम आदमी की सारी इच्छाएं मुकम्मल होती हैं? यह जो सैक्सबी मुखर्जी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर एम० मुखर्जी ने अपने भतीजे, कंपनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर एस० मुखर्जी को इतना उपदेश दिया वह क्या फलीभूत हो सका था?

इसका उत्तर अभी नही मिलेगा, उत्तर तभी मिलेगा जब 'नरदेह' उपन्यास समाप्ति पर पहुंचेगा।

इसके पहले दूसरी बात बताता हूं।

उस रात मल्लिकजी एकाएक सदीप को पुकारने लगे, "ओ सदीप, उठो-उठो—"

मल्लिक चाचा की पुकार से संदीप जग गया। बोला, "क्या हुआ मल्लिक चाचा, क्या हुआ?"

मल्लिक चाचा बोले, "अरे उठो-उठो, इधर सारा गड़बड हो गया।"

"कौन-सी गड़बड़ी?"

मल्लिक चाचा बोले, "सौम्य का लदन जाना नही हो सका।"

"क्यो?"

मल्लिक चाचा बोले, "दादी मां मुझे बुला रही हैं। सौम्य बाबू दमदम एयर-पोर्ट से लौट आए हैं। उनके प्लेन मे आज खराबी आ गई है, रवाना नही होगा। कल उड़ेगा।"

यह कहकर वे ऊपर चले गए। ऊपर पहुचते ही दादी मा बोली, "जानते है मुनीमजी, मुन्ना एयरपोर्ट से लौट आया है।"

"हा, यही तो सुनने को मिला, लेकिन मुन्ना बाबू लौट क्यो आए?"

दादी मा बोली, "सुनने में आया, प्लेन की मरम्मत की जाएगी। बहरहाल, इस तरह का वाकया बीच-बीच मे होता है। एक बार मैं अपने पति के साथ जर्मनी गई थी, वहा से लदन आना था कि प्लेन में गड़बड़ी हो गई। हमे एक दिन के लिए रुक जाना पड़ा था। अभी मैंने आपको जिस काम के लिए बुलाया है—"

"कहिए।"

"उधर और एक मुसीबत आकर खडी हो गई है—हम लोगो की बेलुड की फैक्टरी की एक मशीन मे आग लग गई है। मझले बाबू यहा आए थे, टेलीफोन मे यह खबर मिलते ही वे तुरंत गाड़ी लेकर वहां चले गए। इसलिए आपको सवेरे मुन्ना को अपने साथ ले दमदम एयरपोर्ट जाना है।"

मल्लिकजी बोले, "जाऊंगा। कब घर से रवाना होना होगा?"

"ठीक पाच बजे। वहा पहुंचकर आपको तब तक इतजार करना होगा जब तक कि प्लेन रवाना न हो जाए।"

मुक्तिपद ने कहा, "तुमने अवश्य ही देखा होगा कि बहुतेरे लोग सिगरेट के बदले पाइप पीते हैं। पाइप से भी व्यक्तित्व में निखार आता है और उसके कारण कम भी बोला जा सकता है। तुम देखोगे, जो लोग पब्लिक के सामने अपनी बाज़ार-दर में वृद्धि लाना चाहते हैं वे पाइप से कश लेते हैं। इसमें सुविधा यही है कि बात का जवाब देने में देर होने से कोई अन्यथा नहीं लेता है, माप-तोल कर बातें की जा सकती हैं—और सोचने के लिए थोड़ा वक्त भी मिल जाता है।"

इसके बाद है टेबल मैनर्स।

मुक्तिपद सौम्य मुखर्जी के अभिभावक हैं। अत: अभिभावक होने के नाते सौम्य को हर चीज़ की तालीम देना उनके लिए उचित है। "स्पून और फॉर्क से ही वहां सभी लोग खाना खाते हैं। हाथ से खाना मत खाना। शुरू में सूप दिया जाएगा। सूप पीना बड़ा ही मुश्किल है, जानते हो न? कलकत्ता के बहुत सारे होटलों में तुमने लंच-डिनर अवश्य ही लिया होगा। बताओ तो स्पून से कैसे खाओगे?"

सौम्य नहीं जानता है।

"बहुतेरे लोग सूप-प्लेट को बाएं हाथ से थाम उसे झुकाकर पीते हैं, यह बैड मैनर्स है। प्लेट को अपनी ओर उठाकर, सामने की ओर झुकाते हुए पीना। यही नियम है।"

सौम्य खामोश होकर अपने चाचा की बात सुनता है। बात उसकी समझ में आ रही है या नहीं, पता नहीं चलता।

"इसके बाद ऑफिस एफेयर्स। यह मामला ही सबसे मुश्किल है। तुमने तो इतने दिन नागराजन के पास रहकर सब-कुछ की तालीम ली है। डेबिट-क्रेडिट, बैलेंस सीट—सारा कुछ नागराजन ने तुम्हें सिखा दिया है। दक्षिण भारतीय जन्म-जात गणितज्ञ होते हैं। एकाउन्ट की उन्हें तालीम नहीं लेनी पड़ती, यह उनके खून में होता है। अपने लंदन ऑफिस में मैंने एक दक्षिण भारतीय को रखा है, उसका नाम है अयंगर। मैंने अयंगर को भी टेलेक्स कर दिया है, वह तुम्हें हर चीज़ की तालीम दे देगा। देखो, एक बात मुझसे जान लो—व्हाट इज़ टैलेंट?

सौम्य पहले की तरह ही चुप्पी साधे रहा।

मुक्तिपद कहने लगे, "टैलेंट का अर्थ है प्रतिभा। जीवन में उन्नति करने के लिएजो चीज़ अनिवार्य है। एक है 'कैरेक्टर' और दूसरा टैलेंट। कहावत है: Talent is developed in retirement; character is formed in the rush of the world. यह उक्ति है जर्मनी के कवि गेटे की। अगर तुम प्रतिभाशाली होना चाहते हो तो तुम्हें आत्म-निर्वासन का जीवन जीना होगा और अगर चरित्र-वान होना चाहते हो तो तुम्हें मनुष्य की भीड़-भाड़ में जीवन जीना होगा। यानी तुम्हीं को यह सोचकर तय करना है कि तुम क्या होना चाहते हो—प्रतिभाशाली या चरित्रवान—"

मुक्तिपद इस तरह की और बहुत सारी बातें कहने लगे। मुक्तिपद ने अपने खुद के जीवन में जिन बातों को खोजकर निकाला था पर स्वयं पर पूरी तरह चरितार्थ नहीं कर सके थे, उन्हीं बातों को भतीजे को सिखाने की चेष्टा की थी।

आखिर में कहा था, "मैंने जो कुछ जाना और सुना है, तुम्हें बताया। अब तुम अपनी बुद्धि का उपयोग कर जो कर सकते हो, करो। इसके सिवा मैं क्या कहूं ! आज रात तुम्हारा प्लेन रवाना होगा, वहां पहुंचते ही मुझसे फोन से संपर्क करना। तुम जो देखोगे-सुनोगे मुझे सूचित करना। मैं तुम्हें अपनी सलाह दूंगा।"

उस दिन यहीं तक बातचीत हुई। और उसी दिन मुक्तिपद सौम्य को दमदम हवाई अड्डे पर पहुंचाकर, उसे छोड़कर चले आए थे।

आदमी तो बहुत कुछ सोचता है लेकिन अन्ततः क्या तमाम आदमी की सारी इच्छाएं मुकम्मल होती हैं ? यह जो सैक्सबी मुखर्जी इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर एम० मुखर्जी ने अपने भतीजे, कंपनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर एस० मुखर्जी को इतना उपदेश दिया वह क्या फलीभूत हो सका था ?

इसका उत्तर अभी नहीं मिलेगा, उत्तर तभी मिलेगा जब 'नरदेह' उपन्यास समाप्ति पर पहुंचेगा।

इसके पहले दूसरी बात बताता हूं।

उस रात मल्लिकजी एकाएक सदीप को पुकारने लगे, "ओ सदीप, उठो-उठो—"

मल्लिक चाचा की पुकार से सदीप जग गया। बोला, "क्या हुआ मल्लिक चाचा, क्या हुआ ?"

मल्लिक चाचा बोले, "अरे उठो-उठो, इधर सारा गड़बड़ हो गया।"

"कौन-सी गड़बड़ी ?"

मल्लिक चाचा बोले, "सौम्य का लंदन जाना नहीं हो सका।"

"क्यों ?"

मल्लिक चाचा बोले, "दादी मां मुझे बुला रही हैं। सौम्य बाबू दमदम एयरपोर्ट से लौट आए हैं। उनके प्लेन में आज खराबी आ गई है, रवाना नहीं होगा। कल उड़ेगा।"

यह कहकर वे ऊपर चले गए। ऊपर पहुंचते ही दादी मां बोली, "जानते हैं मुनीमजी, मुन्ना एयरपोर्ट से लौट आया है।"

"हां, यही तो सुनने को मिला, लेकिन मुन्ना बाबू लौट क्यों आए ?"

दादी मां बोली, "सुनने में आया, प्लेन की मरम्मत की जाएगी। बहरहाल, इस तरह का वाकया बीच-बीच में होता है। एक बार मैं अपने पति के साथ जर्मनी गई थी, वहां से लंदन आना था कि प्लेन में गड़बड़ी हो गई। हमें एक दिन के लिए रुक जाना पड़ा था। अभी मैंने आपको जिस काम के लिए बुलाया है—"

"कहिए।"

"उधर और एक मुसीबत आकर खड़ी हो गई है—हम लोगों की बेलुड़ की फैक्टरी की एक मशीन में आग लग गई है। मझले बाबू यहां आए थे, टेलीफोन से यह खबर मिलते ही वे तुरत गाड़ी लेकर वहां चले गए। इसलिए आपको सवेरे मुन्ना को अपने साथ ले दमदम एयरपोर्ट जाना है।"

मल्लिकजी बोले, "जाऊंगा। कब घर से रवाना होना होगा ?"

"ठीक पांच बजे। वहां पहुंचकर आपको तब तक इंतजार करना होगा जब तक कि प्लेन रवाना न हो जाए।"

मल्लिकजी बोले, "ठीक है। मैं उसके पहले ही तैयार रहूंगा—"

सचमुच वह एक विपरीत परिस्थिति है। एक ओर फैक्टरी की एक मशीन में आग लगने से वह जल गई और दूसरी ओर ठीक उसी दिन सौम्य के हवाई जहाज़ की मशीन में गड़बड़ी पैदा हो गई।

यह किस चीज़ का संकेत है?

हो सकता है इसी का नाम जीवन हो। हो सकता है, इसी का नाम जगत हो। जब आदमी खुशियों के अतिरेक से हंसता है तो वह कयाश नहीं लगा पाता है कि उसके सामने संभवतः रुलाई भी आ रही है। रुलाई आदमी के अर्थ, ख्याति, सम्मान और प्रभुत्व की परवाह नहीं करती। वह अपने पूरे दावे की पूर्त्ति कराए बगैर किसी को छुट्टी नहीं देती है। वह बहुत निर्दय और निष्ठुर होती है।

यह रुलाई अमंगल तो है ही परन्तु किसी-किसी के लिए मंगलदायक भी साबित होती है। गृहस्थ लोगों के लिए रुलाई बहुत कष्टदायक होती है। बहुत कष्ट पाने पर घर-गृहस्थी चलाने वाले लोग टूट जाते हैं, लेकिन निरासक्त व्यक्ति को इस रुलाई से चेतना की प्राप्ति होती है। विषय-वासना में लिप्त व्यक्ति की रुलाई जितनी विपाक्त होती है, भक्त की रुलाई उतनी ही पवित्र। विषय-वासना में लिप्त आदमी की रुलाई मे ईश्वर असंतुष्ट होते हैं और भक्त की रुलाई से विचलित हो उठते हैं।

इसीलिए परमहंस देव कहते थे,—"रोना अच्छा है, रोने मे कुंभक होता है।"

संदीप ने दोनों तरह की रुलाई देखी है। इसीलिए सबकुछ देखने और अनुभव करने के बाद आज वह दूसरा ही संदीप हो सका है। वह किसे दोष दे? सौम्यबाबू को या विशाखा को? दरअसल दोषी कोई नहीं है, दोषी अगर कोई है तो वह खुद संदीप ही। इसीलिए संदीप ही उन लोगों से अधिक रोया है।

बाहर आग लगने से किसी का कुछ नहीं बिगड़ता है लेकिन जिसके घर में आग लगती है वही जानता है कि अग्नि-ज्वाला कितनी भयंकर होती है। मंझले बाबू मुक्तिपद के पास सबकुछ रहने के बावजूद कुछ भी नहीं था।

चीफ एकाउन्टेंट नागराजन था, वेलफेयर ऑफिसर जसवंत भार्गव था। वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार था। उसकी सहायता करने के लिए किसी स्टाफ की कोई कमी नहीं थी—यहां तक कि टैक्स के मामले में टैक्स स्पेशलिस्ट बिजनेस कानूनगो के रहने के बावजूद उन्हें हर मामले से जुड़ा रहना पड़ता था।

उतनी रात में मुक्तिपद मुखर्जी जब फैक्टरी पहुंचे तो उस समय तमाम लोग वहां उपस्थित थे। फायर ब्रिगेड को समय पर सूचना भेज दी गई थी। उसके कर्मचारी अपने काम में जुट गए थे।

वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी तब थककर चूर हो गया था। उसके आते ही मुक्तिपद ने पूछा, "क्या हुआ था?"

कांति चटर्जी ने कहा, "इनवेस्टिगेशन करने पर आपको सूचित करूंगा सर!"

मुक्तिपद ने पूछा, "शॉर्ट सर्किट के चलते यह सब हुआ क्या?"

कांति चटर्जी ने कहा, "यह किसी भी हालत में नहीं हो सकता है सर। मैं तो रोजाना हर मशीन की चेकिंग रिपोर्ट देखता हूं। मैंने सेक्शन ऑफिसर को स्टैंडिंग

ऑर्डर दे रखा है कि हर रोज हम लोगों का चार्ट भेजा करे। कल भी कोई इररेगुलरटी देखने को नही मिली थी।"

"फिर ऐसा क्यो हुआ ?"

कांति चटर्जी ने कहा, "यह बात मैं अभी नहीं बता पाऊंगा सर। बगैर इनवेस्टिगेशन किए कुछ कहना मुश्किल है।"

उस दुर्घटना-स्थल के केन्द्र मे बैठे रहने के बावजूद मुक्तिपद ने स्वयं को संयत रखने की कोशिश की। किसी भी स्थिति मे विचलित होने से काम नही चलेगा। जो विचलित होता है वह पराजित हो जाता है।

वर्क्स मैनेजर को बुलाकर कहा, "आप इनवेस्टिगेशन कीजिए और करने के बाद रिपोर्ट दीजिए। उसके बाद मैं सोचूंगा कि कौन-सा कदम उठाया जा सकता है।"

उसके बाद जसवंत भार्गव को बुलाकर कहा, "डे-शिफ्ट मे जो मशीन चल रही थी वह मशीन अचानक इस तरह खराब क्यो हो गई ? इस शिफ्ट का इंचार्ज कौन है ?"

इंचार्ज को बुलाया गया। उसका नाम है वेणु गोपाल।

मुक्तिपद के सामने ही वर्क्स मैनेजर ने वेणु गोपाल से पूछा, "तुम्हारी नौकरी के कितने साल हुए ?"

"बीस साल सर।"

"इसके पहले कभी मशीन में आग लगी थी ?"

"नही सर।"

इसके बाद फिर सवाल किया गया, "शिफ्ट शुरू होने के पहले इस मशीन मे कोई कम्प्लेन था ?"

वेणु गोपाल ने कहा, "नही सर, जो वर्कर इससे काम ले रहा था, उसने इस मशीन के सम्बन्ध मे कोई शिकायत नही की थी।"

"आप क्या ड्यूटी पर आते ही रोजाना सारी मशीनों का चेक करते हैं ?"

"हां सर, करता हूं।"

"आज भी उस मशीन की चेकिंग की थी ?"

"हां सर, यह तो मेरी ड्यूटी है। जो भी फोरमैन अपनी ड्यूटी पर आता है वह हरेक की रिपोर्ट पढ़ने के बाद ही काम चालू करता है। अपनी ड्यूटी के बाद मैं भी अपनी ड्यूटी की सारी रिपोर्ट पेश करता था।"

यह सब यांत्रिक काम है। मुक्तिपद को इन कामों के बारे मे कोई जानकारी नही है। उनके बड़े भाई शक्तिपद का भी कोई नही थी और न ही उनके पिता देवीपद मुखर्जी को। फिर भी वे काम चलाते आए हैं और तब कोई गड़बड़ी पैदा नही हुई थी। उस समय जो गड़बड़ी थी वह दूसरी ही तरह की। उस समय राजनीतिक पार्टियां नही थीं। थे तो केवल दलाल और एजेंट। और था अंतर्राष्ट्रीय बाजार। बर्मा, सिलोन, चीन, हांगकांग के अलावा और भी बहुत सारे मार्केट। उन स्थानों मे एजेंसी देने से ही काम चल जाता था। तो भी बीच-बीच मे उन देशों का भ्रमण करना पड़ता था और उसी सिलसिले मे इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस, जापान भी जाना पड़ता था—मार्केट की तलाश में या मार्केट के विकास करने के इरादे

से। इसके लिए हर जगह कॉकटेल पार्टी देनी पड़ती थी। एक बार जेनरल मैनेजर को एक कार भी भेंट करनी पड़ी थी। और जो बाकी था वह है अन्तर्देशीय बाज़ार। उसके अन्तर्गत थी दिल्ली, महाराष्ट्र, मद्रास और केरल की सरकार। रेलवेज भी 'सैक्सबी' के कम माल का क्रय नहीं करती थी। सैक्सबी के द्वारा तैयार किए गए फिश प्लेट, ट्रस, वैगन, कॉम्पोनेंट्स, ट्रैक फिटिंग, स्लिपर्स तब मॉनोपोली बिजनेस थे। अलबत्ता इसके लिए अफसरों को रिश्वत देनी पड़ती थी लेकिन उसकी मात्रा नहीं के बराबर थी। मामूली खर्च होने पर भी उसे प्रोडक्शन के आइटेम में शामिल कर देने से काम चल जाता था।

फैक्टरी से आते-आते रात करीब-करीब समाप्त हो चुकी थी। जब सारी गड़बड़ी दूर हो गई तो मुक्तिपद के घर वापस आने के दौरान अर्जुन सरकार भी गाड़ी के एक किनारे बैठ गया। अर्जुन सरकार यानी कोनफिडेंशियल डिप्टी वर्क्स मैनेजर।

"क्या बात है सरकार?"

गाड़ी तब चल चुकी थी।

अर्जुन सरकार ने कहा, "सर, एक खबर है।"

"क्या?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "यह एक्सिडेंट नहीं है सर।"

"ऐक्सिडेंट नहीं है?"

"नहीं, प्योर सॉबटैज है।"

"सॉबटैज? तुम्हें ठीक से मालूम है?"

"हां सर, मैं सर इसका सबूत पेश कर सकता हूं। यह शिफ्ट इंचार्ज वेणु गोपाल की करतूत है।"

"कैसे समझे?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "वह एक नंबर यूनियन में शामिल हो गया है। उसे पार्टी की ओर से इंस्ट्रक्शन दिया गया है। इसके लिए उसे रुपया भी मिला है।"

"इसका क्या सबूत है? उसे तो मोटी तनख्वाह मिलती है।"

"इससे क्या आता-जाता है सर? आदमी के दिल में रुपये के लालच का कोई अंत होता है?"

मुक्तिपद चिन्ता में डूब गए।

"तुम सबूत पेश कर सकते हो?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "पार्टी से उसे एक लाख रुपया मिला है।"

"इसका सबूत? बैंक का पास बुक?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "नहीं सर, वे लोग इतने बेवकूफ नहीं हैं कि रुपया बैंक में रखेंगे। उसने अपने घर ही में रुपया रखा है। कल ही घर सर्च कराने से रुपया मिल जाएगा। देर करने से रुपया हटा देगा।"

यह भी बड़ा ही गड़बड़ लगता है। घर सर्च कराने पर यदि रुपया न मिले तो फिर क्या होगा!

अर्जुन सरकार बोला, "मैं कह रहा हूं सर, कि रुपया ज़रूर मिल जाएगा।"

"किसने तुम्हें यह सूचना दी है? सोर्स क्या है?"

"उन लोगों के यूनियन का एक मेम्बर।"

"उसने तुम्हें सूचना क्यों दी ?"

अर्जुन सरकार बोला, "वह मेरा एक इनफॉरमर है। मुझसे उसे रेगुलर रुपया मिलता है।"

मुक्तिपद ने मन ही मन कुछ सोचा। वे रात-भर सोए नहीं हैं। थोड़ी देर बाद ही सुबह हो जाएगी। एकाएक पूछा, "लेकिन अर्जुन, सर्च कौन करेगा ?"

अर्जुन सरकार बोला, "और कौन, पुलिस करेगी।"

मुक्तिपद बोले, "पुलिस मगर हमारे पक्ष में नहीं है।"

"इससे क्या आता-जाता है ? रुपया देने से ही वह हमारे पक्ष में हो जाएगी। और अगर आप यह न करना चाहें तो हम इनकम टैक्स डिपार्टमेंट को भी सूचना दे सकते हैं। लेकिन हां, जिससे भी सर्च कराना हो, जल्द से जल्द कराया जाए। एकदम कल ही। नहीं तो ज़रा-सा सुराग मिलते ही हटा लेगा।"

मुक्तिपद ने ज़रा सोचकर कहा, "इतनी जल्दी इनकम टैक्स डिपार्टमेंट कार्रवाई कर सकेगी ?"

अर्जुन सरकार बोला, "यह काम मुझ पर सौंप दें सर। देखूं, मैं कहां तक क्या कर पाता हूं।"

"ठीक है, जो उचित समझो वही करो। अभी मैं कुछ सोच नहीं पा रहा हूं। बहुत थक गया हूं···" यह कहकर वे घर के सामने उतर गए। उसके बाद बोले, "विशु, तू साहब को उनके क्वार्टर पर पहुंचाकर गाड़ी गैरेज में रख देना।"

विशु का मतलब है विश्वनाथ। विशु बोला, "कल सवेरे कब आना है सर ?"

"जिस तरह हर रोज आता है, आठ बजे—"

यह कहकर वे अन्दर चले गए। घड़ी तब सुबह के चार बजा रही थी। आठ बजने में अब कितने घंटे की देर ही है ! विशु गाड़ी को मोड़कर सरकार साहब को अन्दर बिठाकर, दुबारा बेलुड़ की तरफ गाड़ी लेकर चल पड़ा।

सरकार साहब को उनके क्वार्टर में पहुंचाने में भी विशु को कुछ वक्त लग गया। बेलुड़ फैक्टरी की तब जली हुई मशीन की आग बुझ चुकी थी। तब सारा कुछ अंधेरे में डूबा हुआ था। सिर्फ फैक्टरी की दूसरी मशीनों में तब नाइट-शिफ्ट का काम चल रहा था। जिस मशीन में आग लगी थी वह बगल में निश्चल हालत में पड़ी हुई है। उस मशीन के कर्मचारी भी बहुत पहले ही अपने-अपने घर चले गए हैं। आज के लिए उनका काम बन्द है। कल वह मशीन दुबारा चालू हालत में हो सकेगी या नहीं, कहना मुश्किल है।

विशु ने फैक्टरी से काफी फासले पर एक अंधेरे स्थान में गाड़ी ले जाकर, उसे लॉक कर दिया। उसके बाद आहिस्ता-आहिस्ता, अंधेरे में छिपता हुआ, धरामा-धरामा आगे बढ़ने लगा। पूरा शहर नींद की बांहों में लिपटा हुआ है। रात के आखिरी पहर की नींद बड़ी गाढ़ी होती है। कहीं कोई जगा हुआ नहीं है। कुछ जगे हुए लोग हैं भी तो उनकी संख्या नहीं के बराबर है। फिर भी सतर्कता बरतना जरूरी है। विशु को इस तरह आगे बढ़ना है कि किसी को पता न चले। पता चल जाएगा तो सब कुछ मटियामेट हो जाएगा। इसके कारण उसकी नौकरी भी जा सकती है। इस तरह के कामों में जोखिम बना रहता है। लेकिन विशु इसके पहले

भी कितनी ही वार इस तरह का जोखिम उठा चुका है। इससे उसे कम आमदनी नहीं हुई।

कई कदम आगे वढ़ने पर ही फैक्टरी का गेट है। दरवान चौवीसों घंटा पहरा देता रहता है। उसकी नज़र विशु पर पड़ी पर वह कुछ भी नहीं वोला। विशु जैसे लोगों के लिए फैक्टरी का दरवाज़ा हमेशा खुला रहता है। गेट पार करने के वाद दाहिनी तरफ फैक्टरी है और वाईं तरफ कतारवद्ध क्वार्टर। क्वार्टरों का वैरेक। अंग्रेजों के ज़माने की कायम की हुई तमाम व्यवस्थाओं में कोई तव्दीली नहीं आई है। सव कुछ पहले के मालिक के नियम के अनुसार ही चल रहा है।

विशु वेणु गोपाल का क्वार्टर पहचानता है।

शिफट इंचार्ज वेणु गोपाल वावू से विशु की भले ही वाहरी तौर पर घनिष्ठता न हो लेकिन अन्दरूनी तौर पर है।

विशु ठीक जगह पर आकर रुका। लेकिन डिप्टी वर्क्स मैनेजर सरकार साहव के जासूस चारों तरफ फैले हुए हैं। कौन कहां से कव उसे देख ले, उसका कोई ठीक नहीं। घर के सामने की तरफ से न जाकर पीछे की तरफ से जाना अच्छा रहेगा। इससे लुक-छिप कर वातें की जा सकती हैं।

अन्तत विशु ने यही किया।

एक वार कुण्डी खटखटाते ही अन्दर से आवाज़ आई, "कौन ?"

विशु ने सिर्फ इतना ही कहा, "ज़रा दरवाज़ा तो खोलिए।"

"तुम कौन हो ?"

विशु वोला, "वेणु गोपाल साहव हैं ?"

"हां हैं, मगर तुम कौन हो ?"

विशु ने धीमे स्वर में कहा, "मैं विशु हूं।"

अवकी मन्त्र जैसा काम हुआ। दरवाज़े के पल्लों के ज़रा खुलते ही अन्दर की मूर्त्ति वोली, "आओ, अन्दर चले आओ।"

दरवाज़ा तत्क्षण वन्द हो गया।

मूर्त्ति वोली, "यह क्या ? असमय आना क्यों हुआ ?"

विशु वोला, "साहव कहां हैं ? एक ज़रूरी काम है ?"

खवर मिलते ही वेणु गोपाल जिस हालत में था, उसी हालत में वाहर निकल आया। विशु का इस घर के अन्दर आने का मतलव है एक ऊंचे दर्जे के वी० आई० पी० का आना। वेणु गोपाल ने उसे ले जाकर सीधे अपने ड्राइंग रूम के अन्दर विठाया।

वोला, "इतने सवेरे ?"

विशु ने कहा, "मेरी ड्यूटी तो अभी-अभी खत्म हुई है।"

"अभी तुरन्त ? भोर के वक्त ? फिर तो तुम्हें मोटा ओवरटाइम मिलेगा।"

विशु वोला, "मैं उस लिए नहीं आया हूं। एक ज़रूरी काम है।"

"ज़रूरी ?"

"हां, मुखर्जी साहव को घर पहुंचाने के वाद यहां सरकार साहव को पहुंचाने आया था। इसीलिए आपसे मिलने चला आया।"

"कोई खवर है ?"

विशु बोला, "खबर है इसीलिए तो आपके पास आया हूं सर।"

वेणु गोपाल बेहद उत्सुक होकर बोला, "बताओ, खबर क्या है ?"

उसके बाद विशु के प्रति खातिरदारी दिखाने के ख्याल से पूछा, "चाय पियोगे ?"

विशु बोला, "नहीं सर, अभी मैं घर जाकर जरा सोऊंगा। उसके बाद सवेरे आठ बजे फिर ड्यूटी पर जाना है। अभी मेरे पास चाय पीने का वक्त नहीं है।"

"ठीक है, अब यह बताओ कि खबर क्या है ?"

विशु ने जरा सुस्ताने के बाद कहा, "खबर बहुत ही बुरी है सर। मैं गाड़ी चला रहा था और पीछे की सीट पर मुखर्जी साहब और सरकार साहब बैठकर बातें कर रहे थे। मैं ध्यान से सब सुन रहा था और गाड़ी चला रहा था—"

वेणु गोपाल बोला, "उसके बाद ?"

"उसके बाद सरकार साहब कहने लगे कि मशीन में क्यों आग लगी।"

"सरकार साहब ने आग लगने का क्या कारण बताया ?"

विशु बोला, "घर के दरवाजे और खिड़कियां खुली हुई हैं। इस हालत में कुछ कहा नहीं जा सकता है। दीवार के भी कान होते हैं।"

"ठीक है।" वेणु गोपाल ने कमरे की सारी खिड़कियां बन्द कर दीं। उसके बाद दरवाजे की सिटकनी लगा दी।

उसके बाद उन लोगों की बातचीत का एक टुकड़ा भी सुनाई नहीं पड़ा। जब दरवाजा खुला तो विशु के चेहरे पर भरपूर मुस्कराहट थी। उस समय उसके हाथ में बहुत सारे नोट थे। विशु ने नोट के उस पुलिन्दे को सावधानी से अपने कुरते के अन्दर के पॉकिट में डाल दिया।

वेणु गोपाल बोला, "अभी तुम्हें पांच सौ रुपया दिया। लेकिन बाद में और मिलेगा।"

विशु ने वेणु गोपाल को सतर्क कर दिया। बोला, "देखिएगा सर, यह बात किसी को मालूम नहीं होनी चाहिए, वरना मेरी नौकरी—"

वेणु गोपाल ने विशु की पीठ थपथपाते हुए कहा, "अरे, तुम क्या पागल हो विशु ! यह बात कहीं किसी से बताई जा सकती है ?"

इस बात से विशु को निश्चिन्तता का अहसास हुआ और वह घर के बाहर रास्ते पर चला आया। इसके बाद फैक्टरी का गेट पार कर सीधे अपनी गाड़ी के अन्दर जाकर बैठ गया। स्टीयरिंग थाम गाड़ी का एक्सिलेटर दबाते ही गाड़ी तीव्र गति से मुक्तिपद के गैरेज की ओर भागने लगी।

बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट भवन में उस रात दादी को ठीक से नींद नहीं आई। मुन्ना एक बार हवाई अड्डे से लौट आया है। उसे फिर रात के तीन बजे घर से निकलना है।

दादी मां ने रात ही में मुन्ना से कह दिया था, "तू जाकर सो रह, मैं तुझे ठीक वक्त पर जगा दूंगी। तेरे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं है।"

यों भी दादी मां की धारणा है कि उनका मुन्ना रात नौ बजे के पहले ही

घर लौटकर खा-पीकर सो रहता है। उस पर यदि उसे रात तीन बजे विस्तर छोड़कर उठना पड़े तो भारी मुसीवत है।

लेकिन मल्लिकजी को उनसे भी अधिक चिन्ता है। नौकरी की वात है! वे अगर सो जाएं तो फिर क्या कैफियत देंगे?

संदीप बोला, "मैं आपको जगा दूंगा, आप निश्चिन्त रहें।"

मल्लिकजी बोले, "तुम्हारी उम्र कम है, अभी तो तुम लोगों के लिए सोने की उम्र है। मैं बूढ़ा आदमी हूं, मुझे क्या उतनी नींद आती है?"

अन्ततः उस रात कोई नहीं सो सका—ऊपर दादी मां जगी रहीं, नीचे मल्लिकजी और संदीप।

मल्लिकजी बार-बार उठते हैं, दरवाज़ा खोल दीवार पर टंगी घड़ी की तरफ देखते हैं और फिर से लेट जाते हैं।

संदीप पूछता है, "कितने बज रहे हैं चाचा जी?"

मल्लिक जी ज़रा झपकी लेने की कोशिश करते हुए कहते हैं, "यह क्या, तुम अब भी सोए नहीं हो? अभी कुल मिलाकर साढ़े बारह बज रहे हैं, तुम सो रहो।"

संदीप कहता है, "मुझे अब नींद नहीं आएगी।"

"क्यों? तुम्हें क्या हुआ? तुम्हें नींद क्यों नहीं आएगी?"

संदीप कहता है, "मुझे उतनी आसानी मे नींद नहीं आती है।"

"यह क्या? इस उम्र में तुम्हें इतनी कम नींद आती है तो हमारी उम्र के हो जाओगे तो तुम क्या करोगे?"

संदीप कहता है, "ऐसी हालत में मुझे नींद नहीं आती।"

मल्लिक चाचा कहते हैं, "खैर, अब ज्यादा बातें मत करो, अब सोने की कोशिश करो।"

यह कहकर मल्लिक चाचा ने भी ज़रा सोने की कोशिश की परन्तु उन्हें कामयाबी हासिल नहीं हुई। थोड़ी देर बाद फिर उठकर खड़े हो गए। डेढ़ बज रहे हैं। पुनः सोने की कोशिश की। लेकिन नींद आना मल्लिक चाचा के लिए सहज बात नहीं है। एक बार जाकर बाहर से घड़ी देखकर आते हैं और फिर सोने की कोशिश करते हैं। यह न तो नींद है और न ही जागरण। केवल बिस्तर छोड़कर उठने और फिर बिस्तर पर लेटने का क्रम चलता रहता है।

आखिर में संदीप बोला, "ड्राइवर से तो कह ही दिया है, वह पुकारकर जगा देगा। आप इतनी चिन्ता क्यों करते हैं?"

"तुम अब भी जगे हुए हो?"

उसके बाद बोले, "और न जगकर करोगे ही क्या? एक बार दरवाज़ा बन्द करने और फिर खोलने से किसी को नींद आ सकती है? तुम्हारा कोई दोष नहीं है।"

बात सच ही है। ऊपर की मंजिल में दादी मां की भी यही हालत है। दादी मां बार-बार पूछती हैं, "अरी बिन्दु, कितना बजा, देख तो-सही।"

बिन्दु दिन-भर हुक्म की तामील करते-करते हैरान हो गई थी। रात में ज़रा गहरी नींद से सोएगी इसका भी उपाय नहीं है इस बुढ़िया के चलते। उसे भी

बार-बार उठकर घड़ी देखना पड़ता था। और दादी मां से कहना पड़ता कितना बज रहा है। कभी घड़ी में साढ़े बारह का समय होता, कभी डेढ़ और कभी दो। एक बात में कहा जाए तो बिन्दु को भी संदीप की ही तरह जगकर रात बितानी पड़ी।

लेकिन संदीप तब किससे तकरार करे? मल्लिक चाचा से या अपनी किस्मत से?

हालांकि उसे जो आराम इस घर में मिला था उसके लिए उसे दादी मां और मल्लिक चाचा का एहसानमंद होना चाहिए था। फिर भी उसे गुस्सा क्यों आया? असल में आदमी अपनी योग्यता की अपेक्षा अपने दावे की बात ही पहले सोचता है। योग्यता है या नहीं, यह बड़ी बात नहीं है। दुनिया की तमाम उपभोग और आराम की वस्तुओं पर उसका जन्मजात अधिकार है, यही सोचकर वह क्षुब्ध हो उठता है।

इतने दिनों के बाद उन पुरानी घटनाओं के बारे में सोचने पर उसे लज्जा महसूस होती है। संदीप केवल सबके पास अपना दावा ही पेश करता आया है। लेकिन सबको कुछ देने की बात क्या उसके खयाल में आई है?

हाय, इस दुनिया में सभी लेना ही जानते हैं! देने की बात कितने लोग सोचते हैं? कुछेक व्यक्ति लेकर ही स्वयं को कृतार्थ समझते हैं और कुछेक देकर। लेकिन देकर कृतार्थता का अनुभव करने वालों की संख्या में इतनी कमी क्यों आती जा रही है? क्यों कोई किसी से यह नहीं कहता कि तुम लेकर मुझे कृतार्थ करो?

दादी मां ने बार-बार सौम्य को हिदायत दी थी। लेकिन फिर भी उसी बात को दुहराती रहीं, "वहां जाकर कलकत्ता की ही तरह रात नौ बजते न बजते खा-पीकर सो रहना बेटे, समझे?"

सौम्य ने कहा, "हां, यही करूंगा।"

"और यह बड़ा ही ठंडा मुल्क है, हरवक्त गरम कपड़े से शरीर ढककर रखना। समझे? एक बार ठंड लग जाने से तुम्हारे दादा जी को निमोनिया हो गया था। उनका गला बिलकुल बैठ गया था। बहुत सारे डाक्टरों को दिखाने के बाद तबीयत ठीक हुई थी। खूब सावधानी से रहना बेटा। और हर रोज मुझे एक खत भेजते रहना। और अगर यह न हो सके तो कम से कम एक टेलेग्राम करके मुझे सूचित करना कि तुम कैसे हो। वरना मुझे तुम्हारे लिए चिन्ता बनी रहेगी।"

यह सब है उपदेश। इसके अलावा गृह-विग्रह सिंहवाहिनी देवी की एक तसवीर दी।

तसवीर को सौम्य के बैग में रखकर बोलीं, "तू जब जहां भी जाना, इस तसवीर को अपने साथ रख लेना। मां ही हर वक्त तुम्हारी रक्षा करेंगी। हर रोज आंख खुलते ही इस तसवीर को अपने माथे से छुआकर प्रणाम करना। समझे? देखना, सारी विपत्ति दूर हो जाएगी। मैं जब जहां भी जाती थी, इसे अपने साथ रख लेती थी। और एक बात···"

यह कहकर थोड़ी देर चुप रहीं. उसके बाद बोलीं, "और एक बात, उस देश की औरतें बड़ी ही बेहया होती हैं। उन लोगों से मत मिलना-जुलना बेटा। अगर एक बार मालूम हो जाए कि तुम दौलतमंद हो, तुम्हारे पास रुपये हैं तो

तुम्हें नोचकर खा जाएंगी। मैंने अपनी आंखों से सब कुछ देखा है। यही वजह है कि मैंने तुम्हारे दादा जी को कभी अकेले कॉन्टिनेण्ट नहीं जाने दिया था। वे जितने बार भी गए थे, मैं उनके साथ थी। औरतों को कभी उनके पास फटकने नहीं दिया था। वरना वे क्या छोड़ देतीं ? रुपये के लोभ में उन्हें नोचकर खा जातीं। खैर, तुम्हारा उस तरफ कोई झुकाव नहीं है—"

उसके बाद ज़रा सुस्ताकर फिर कहने लगीं, "और शराब ! वह भी एक चीज़ है ! तुम खैर शराब वगैरह नहीं पीते, मैं यह जानती हूं। लेकिन बेटा कहावत है न, कि कब क्या दुर्मति आ जाए ! मैं चूंकि साथ नहीं रहूंगी इस वजह से तुमसे यह सब कह रही हूं। शराब वहां रोटी-दाल की तरह है। खाने के पहले शराब और खाने के बाद शराब। पानी के बदले वे लोग शराब ही पीते हैं। लेकिन तुम बेटा, उस वाहियात चीज़ को होंठ से भी नहीं लगाना। सुना है, उस नशे की एक बार लत लग जाती है तो फिर छूटती ही नहीं। वह आदमी को खाकर ही छोड़ती है।"

सौम्य इन बातों का क्या उत्तर दे ! वह चुप्पी साधे रहा।

दादी मां बोलीं, "बहरहाल, तुम जाकर सो रहो। मैं तुम्हें ठीक समय पर जगा दूंगी। जितना भी समय मिल सके, जाकर सो रहो।"

आधी बात पिछली रात ही कह चुकी थीं। अतः और कुछ कहने को बाकी नहीं था। एकबारगी रात के आखिरी पहर में सौम्य को जगा दिया गया।

ड्राइवर और मल्लिक जी तैयार ही थे। सौम्य ने दादी मां का चरण-स्पर्श किया। दादी मां ने पोते की ठोड़ी पकड़कर चूमा। 'दुर्गा-दुर्गा' कहकर मां का स्मरण किया।

उसके बाद अंतिम बार बोलीं, "जो-जो कहा था, याद है न ?"

"क्या ?"

"बाप रे, इसी बीच भूल गए ? चिड़िया की तरह तुम्हें रटा दिया था और तुम्हें याद नहीं ?"

सौम्य को कुछ भी याद नहीं आ सका।

पूछा, "कौन-सी बात ? मुझे तो ठीक से याद नहीं है।"

दादी मां बोलीं, "इस तरह का भुलक्कड़ स्वभाव लेकर तू ऑफिस कैसे चलाएगा, बताओ तो ? अभी तू लंदन जा रहा है, वहां तेरी देख-भाल कौन करेगा ? वहां तेरा कौन अपना है ?"

यह सब बकवास सुनने का तब सौम्य के पास समय नहीं था। उसे बहुत दिनों तक विदेश में रहना है। लेकिन दादी मां की उम्मीद तो एकमात्र उसी पर टंगी है। अपने इस पोते की उम्मीद पर ही तो वे इतने दिनों तक जीवित हैं। सौम्य के मां-बाप नहीं हैं। उस पोते को पैरों पर खड़ा कर दें तो उन्हें जी-भर सांस लेने का मौका मिले। इसका मतलब है सौम्य की शादी। और वे सौम्य की शादी एक ऐसी लड़की से रचाएंगी जो सौम्य को सही मानी में आदमी बना दे। जो लड़की न केवल सौम्य की देख-भाल करेगी बल्कि उनकी भी सेवा करेगी। उनके घर-संसार में लक्ष्मी और शोभा ले आएगी। उनके भविष्य की पीढ़ी की जननी बनेगी।

दादी मा के मन मे इसी तरह की कितनी ही आशाएं, साधें और आकांक्षाएं थी।

लेकिन आदमी सोचता कुछ है और होता कुछ और ही।

याद है, मल्लिक चाचा रात के उस आखिरी पहर में सौम्य को लेकर दमदम हवाई अड्डे पर गए थे। जब लौटकर आए तो दस बज रहे थे। संदीप ने पूछा, "छोटे बाबू चले गए?"

मल्लिकजी बोले, "हां, गरदन पर से जिम्मेदारी का बोझ उतर गया।"

"प्लेन ठीक वक्त पर ही रवाना हो गया था?"

"हां, कोई असुविधा नहीं हुई।"

यह कहकर वे ऊपर चले गए। दादी मा तब मल्लिक जी के लिए बेचैनी से प्रतीक्षा कर रही थी। मल्लिक जी ज्यो ही उनके पास गए उन्होंने पूछा, "क्या हुआ? ठीक समय पर पहुंच गए थे?"

"हा, कोई असुविधा नहीं हुई।"

दादी मा ने पूछा, "टेलेक्स करने की बात मुन्ना को याद दिला दी थी न?"

मल्लिकजी बोले, "हा, याद करा दी है।"

दादी मा बोली, "ठीक है, आप अभी जाइए।"

यह कहकर उठते ही टेलीफोन की घंटी घनघना उठी। टेलीफोन थामने की ड्यूटी बिन्दु की है। उसने टेलीफोन का रिसीवर रखकर कहा, "दादी मा, आपका फोन है, मझले बाबू बुला रहे हैं।"

मल्लिकजी तब नीचे उतर चुके थे। दादी मा ने रिसीवर उठाकर पूछा, "क्यों रे, तुझे कुछ कहना है क्या?"

दूसरे छोर से मुक्तिपद बोले, "सौम्य चला गया?"

दादी मा बोली, "हा··· तेरी आवाज भर्रायी हुई क्यो है? क्या हुआ है?"

मुक्तिपद बोले, "कल सारी रात मैं सो नही सका था, इसीलिए···"

"क्यों? सो क्यो नही सके? तबीयत ठीक नही है क्या?"

"नही, कल सारी रात फैक्टरी मे था—"

"क्यो सारी रात फैक्टरी मे क्यो था? फिर लेबर-ट्रबल?"

"हां, श्रमिकों ने कल एक मशीन जला दी है, इसी वजह से मुझे वहां रहना पड़ा था। फायर-ब्रिगेड आया था। आग बुझते-बुझते रात के तीन बज गए थे। वहां से लौटने के बाद फिर नींद नहीं आई। तभी से जगा हुआ हू "

दादी मा बोली, "मेरे घर पर भी कोई सो नही सका था।"

"क्यो?"

"वाह, पूछ रहा है कि क्यो? रात तीन बजे सौम्य को जगाना पड़ा था। ऐसे मे किसी को नींद आ सकती है भला? न तो मैं सो सकी, न बिन्दु और न ही मुनीमजी।"

"ठीक वक्त पर चला गया था न? ठीक वक्त पर प्लेन रवाना हो गया था?"

"हां, मुनीमजी अभी आकर खबर पहुंचा गए हैं कि प्लेन ठीक वक्त पर ही रवाना हो गया था। मैंने उसे कहा है कि वहां पहुंचते ही टेलेक्स कर दे। समय

मिलने पर तू लंदन आफिस में एक टेलेक्स कर देना, समझे ?

मुक्तिपद बोला, "मुझे शायद वक्त नहीं मिलेगा मां।"

"क्यों ? तुझे क्या हुआ ?"

"तुम्हें तो सबकुछ बता ही चुका हूं। तुम समझना ही नहीं चाहतीं। मेरी परेशानी तुम नहीं समझोगी तो और कौन समझेगा ? जानती हो मां, हमारी फैक्टरी में वेणुगोपाल नामक एक शिफ्ट इनचार्ज है। सुनने में आया है, किसी से एक लाख रुपया लेकर उसने उस मशीन को जला दिया। सोचकर देखो, ऐसे लोगों को लेकर मुझे काम चलाना पड़ रहा है।"

"उसे किसने एक लाख रुपया घूस दिया, इसके बारे में कुछ पता चला है ?"

मुक्तिपद बोला, "और कौन देगा—दिया है गवर्नमेण्ट ने—"

"यह क्या ? गवर्नमेण्ट कभी घूस देती है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "देती है मां, हां, देती है। आजकल सबकुछ मुमकिन है। गवर्नमेण्ट क्या अपने हाथ से घूस देती है ? दलालों के हाथ से दिलाती है। वे ही लोग तो आजकल सरकार चला रहे हैं।"

"इससे उन्हें क्या फायदा होता है ?"

"वे नहीं चाहते कि कोई बंगाली यहां अपना व्यवसाय चालू रखे। वे नहीं चाहते कि बंगाली युवकों को यहां नौकरी मिले। वे चाहते हैं कि बंगाली व्यवसायी यहां से कारोबार उठाकर ले जाएं।"

दादी मां बोलीं, "तू क्या ऊलजलूल बक रहा है ? बंगाली यहां कारोबार नहीं चलाएंगे तो फिर कहां जाएंगे ?"

मुक्तिपद बोले, "जहन्नुम के सिवा और कहां जाएंगे।"

"तू चुप हो जा, तेरा दिमाग खराब हो गया है, इसीलिए ऊलजलूल बक रहा है।"

मुक्तिपद बोले, "नहीं मां, नहीं। मेरा दिमाग खराब नहीं हुआ है। मैं सच बता रहा हूं। लेबर-लीडर लोग यही चाहते हैं। वे चहते हैं कि हम डरकर उनकी जेब और गरम करें। जिससे कि वे उन पैसों से और अमीर बन जाएं। तुम नहीं जानती मां, कि हर लीडर ने आलीशान इमारत खड़ी कर ली है। पहले उन्हें पैसे के अभाव में खाना नहीं जुटता था, और अब श्रमिकों को भड़काकर वे लोग सभी मल्टी-मिलिओनर हो गए हैं। उनमें से हरेक की कार में आजकल पंद्रह-बीस लीटर पेट्रोल की खपत होती है। इतने रुपये उनकी जेब में कहां से आते हैं ? कौन देता है ? वे लोग एक तरफ गरीबों को मार रहे हैं और दूसरी तरफ हमें भी मारना चाहते हैं। मैं क्या करूं, बताओ तो ?"

दादी मां बोलीं, "तू रात-भर सो नहीं सका है। अब ज़रा नींद ले ले। मैं भी कल सारी रात सो नहीं सकी हूं। बाद में बात करूंगी। अभी रख रही हूं।"

यह कहकर दादी मां ने रिसीवर रख दिया।

उस ओर मुक्तिपद ने रिसीवर रखकर अर्जुन सरकार को टेलीफोन किया। अर्जुन सरकार तब सो रहा था।

मुक्तिपद ने कहा, "क्या हुआ ? वेणुगोपाल के बारे में तुमने कुछ सोचा ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "हां सर, सारा कुछ तय कर लिया है। कल ही वेणु-

गोपाल का घर मर्च किया जाएगा।"

"कल? किस वक्त?"

अर्जुन सरकार बोला, "कल सुबह के पहले ही। आप चिन्ता मत करें सर। उसके बाद जो डेवलपमेंट होगा, उसकी सूचना मैं ठीक वक्त पर आपको दे दूगा।"

मुक्तिपद ने निश्चिन्तता की साग लेकर कहा, "ठीक है, मैं तुम्हारे टेलीफोन-कॉल का इतजार करूगा।"

समुद्र मे जिस तरह लहरें रहती है, इतिहास मे भी आदमी के सिद्धातवाद की लहरें रहा करती हैं। सौ-दो सौ-तीन सौ या हजार वर्षों तक किसी सिद्धांतवाद का सहारा लेकर आदमी आगे बढते है। इसके बाद सौ-दो सौ तीन-सौ या हजार साल तक एक दूसरे सिद्धातवाद का सहारा लेकर पीछे हट जाते हैं।

यह आगे बढना और पीछे हटकर दुबारा सामने की ओर बढने की कोशिश का नाम ही इतिहास है। समुद्र जिस तरह कभी स्थिर नही रहता, इतिहास भी उसी तरह ठिठककर खडा नही रहता।

किसी-किसी आदमी का जीवन भी ठीक इसी प्रकार का होता है।

कोई आदमी आगे बढने के क्रम मे पीछे छूट जाता है, और कोई सम्भवत आगे जाने के क्रम मे सचमुच ही आगे बढ जाता है। उसके बाद जब वह किसी दिन ठिठककर खडा हो जाता है तो दूसरा व्यक्ति सम्भवत वहा से और अधिक आगे बढ़ जाता है।

आदमी के इस उठने-गिरने, सिद्धातवाद के इस आगे बढने और पीछे हटने के क्रम को जो देखना चाहते हैं वे देख पाते है। किन्तु कितने ऐसे व्यक्ति हैं जो देखना चाहते है?

आदमी का जुलूस जब घिसटते हुए आगे बढता है तो उसे दो तरह से देखा जा सकता है। एक, गतिशील जुलूस के बीच शामिल होकर और दूसरा, किसी बरामदे पर खडा होकर। यानी कभी उससे जुडकर और कभी उससे हटकर।

सदीप भी एक दिन बेडापोता से मनुष्य की इस महायात्रा का जुलूस देखने के इरादे से बाहर निकला था। उसने दोनो नजरिये से आदमी को देखा है। कभी उससे जुडकर और कभी उससे अलग होकर। बेडापोता मे काशीनाथ बाबू के पुस्तकालय मे उसने जिन आदमियों को देखा था वह देखना अलग या परोक्ष रूप से देखना था। और कलकत्ता के बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट-भवन मे आकर उसने आदमी को जो देखा था वह जुडकर प्रत्यक्ष तौर से देखना था। कलकत्ता के मल्लिक चाचा, दादी मा, मुक्तिपद मुखर्जी, सौम्यबाबू और उनके साथ ही खिदिर-पुर के मनसातल्ला लेन के तरेश गागुली, विशाखा, योगमाया देवी से शुरू कर सुशील सरकार, गोपाल हाजरा, वरदा घोषाल, श्रीपति मिश्र, अटी मेमसाहब, जयंती दीदी, बिन्दु, गिरिधारी दरबान वगैरह को उसने प्रत्यक्ष तौर पर देखा था।

लेकिन उन सबो को प्रत्यक्ष तौर पर देखकर वह महायात्रा के जुलूस मे कहा

तक आगे बढ़कर गया? वास्तव में वह आगे बढ़ा है या पीछे हटा है? जीवन की रोकड़ बही में लाभ-हानि, प्लस-माइनस के जोड़-घटाव में उसके जमा के पृष्ठ में कितना संचय हो पाया है?

इसका हल भी उसे एक दिन रुपया-आना-पाई का हिसाब करके निकालना होगा। जब तक वह बिडन स्ट्रीट के मकान में रहा है, जितने दिनों तक रात में उसे देर से नींद आई है, उतने दिनों तक वह केवल जोड़-घटाव का ही हिसाब करता रहा है।

सौम्य बाबू के विलायत चले जाने से गिरिधारी को अब रात में जगना नहीं पड़ता है। रात में जगकर न तो सौम्य बाबू के लिए दरवाज़ा खोलना पड़ता है और न ही अन्दर के दरवाजे में ताला लगाना पड़ता है।

संदीप गौर से गिरिधारी की ओर ताकता। छोटे बाबू से हर महीने बख्शीश के तौर पर उसे जो मोटी रकम मिलती थी, वह बन्द हो जाने के कारण वह पहले के बनिस्बत ज़रा गम्भीर हो गया है। माहवारी उपार्जन में कमी आ जाने से ऐसा कौन है जिसका चेहरा गम्भीर न हो जाता हो?

गिरिधारी हर महीने मनीऑर्डर फार्म लेकर संदीप के पास आता। दरभंगा जिले के किसी घोर देहात के एक आदमी के नाम गिरिधारी रुपया भेजता। रामदीन सिंह। ग्राम : भोजपुर। पत्रालय : गंगानगर।

संदीप ने शुरू में पूछा था, "यह रामदीन सिंह तुम्हारा कौन है गिरधारी?"

गिरिधारी ने कहा था, "मेरा बेटा है, हुजूर।"

किसी महीने वह पचास रुपया भेजता और किसी महीने साठ। और कभी किसी महीने चालीस रुपया।

रकम कम होने पर संदीप पूछता, "अबकी इतने कम रुपये क्यों भेज रहे हो गिरिधारी?"

गिरिधारी जवाब देता, "इस महीने कम आमदनी हुई है बाबूजी।"

कभी-कभी सौम्य बाबू शराब के नशे की झोंक में पॉकेट में जितने भी रुपये होते गिरिधारी के हाथ में थमा देते। उस महीने गिरिधारी को ज्यादा आमदनी होती।

यही वजह है कि सौम्य बाबू के विलायत चले जाने से गिरिधारी ज़रा मायूस रहने लगा था। उस समय न तो उसे खाना सुहाता था और न ही सोना। तुलसीदास के दोहे-चौपाई गुनगुनाकर वह दुख-कष्ट, अभाव-अभियोग भूलने की चेष्टा करता।

रसेल स्ट्रीट की मौसीजी भी तबसे उदास और बुझी-बुझी-सी रहने लगी थीं। अब विशाखा को स्कूल से घर लौटने में देर नहीं होती। अब अरविन्द भी निश्चित समय पर विशाखा को स्कूल ले जाता और निश्चित समय पर ही घर लौटाकर ले आता है।

संदीप जैसे ही रसेल स्ट्रीट के घर पर जाता, योगमाया भरपूर उम्मीद लिए बिडन स्ट्रीट के मकान की खबरों के बारे में पूछताछ करती, "उस घर का क्या हाल-चाल है बेटा?"

संदीप कहता, "कोई नई खबर नहीं है मौसी जी।"

"तुम्हारी दादी मा कैसी हैं बेटा ?"

संदीप कहता, "ठीक ही हैं।"

"हम लोगों के बारे में कुछ दरियाफ्त नहीं करती ?"

संदीप कहता, "हर रोज दरियाफ्त करती हैं। यहा की खबर तो मुझे हर रोज वहां पहुंचानी पड़ती है।"

संदीप की यही ड्यूटी है। यह ड्यूटी उसकी शुरू से ही चल रही है। सवेरे रसेल स्ट्रीट के मकान में आ विशाखा का समाचार लेकर दादी मां तक पहुचाना और जरूरत पड़ने पर मल्लिक जी के काम में हाथ बंटाना। तीसरे पहर कॉलेज जाना और शाम को अपनी लिखाई-पढ़ाई का काम करना। इसके अलावा उसे कोई दूसरा काम नही रहता था।

उस दिन योगमाया ने पूछा, "विलायत से तुम्हारे छोटे बाबू ने कोई चिट्ठी लिखी है बेटा ?"

संदीप ने कहा, "दादी मां तो इसी वजह से बहुत चिंतित हैं।"

"लेकिन इतने दिनो मे तो पत्र वगैरह तो आ जाना चाहिए था।"

संदीप ने कहा, "दादी मा ने तो सौम्य बाबू को बार-बार इसके लिए ताकीद की थी। कम-से-कम एक बार तो वहा से फोन कर ही सकते थे। फोन करने से अपनी जेब से तो पैसा खर्च नहीं करना पडता। कपनी से कलकत्ता ऑफिस की हर वक्त टेलीफोन पर बातचीत होती रहती है।"

यह खबर सुनकर योगमाया देवी के मन में दुख पहुचता।

विशाखा बगल मे ही खड़ी होकर सुन रही थी। बोली, "तुम इतनी चिन्ता क्यों करती हो, बताओ तो ? जो विलायत गया है वह दूधमुहा बच्चा नहीं है। नई जगह जाने पर एडजस्ट करने मे थोड़ी देर क्या नही लगेगी ?"

योगमाया बोली, "तू चुप रह, तुझसे बातें करने को किसने कहा ?"

विशाखा बोली, "ठीक ही तो कह रही हूं। मैं क्या भवर मे फस गई हूं कि कोई आकर मेरा उद्धार करे ?"

योगमाया बोली, "मेरी बिटिया रानी की बात सुन रहे हो न बेटा ?"

उसके बाद अपनी लड़की की तरफ देखकर कहने लगी, "अरी मुहजली, तुझे इतना गुमान किस बात है ? मेरे सिवा तो दुनिया मे तेरा कोई नही है, फिर इतना गुमान किस बात का ? तेरे बाप होते तो दीगर बात थी।" तू जिस घर में है, जिस गाडी में घूमती-फिरती है, वह किसकी बदौलत, सुनू ? हर रोज जो निवाला गले के नीचे उतार रही है, उसके लिए रुपयों की आपूर्ति कौन कर रहा है, इसका खयाल है ? सारा पैसा क्या आसमान से टपक रहा है या भूत-प्रेत भेज रहे हैं" ? खामोश क्यो है ? दे, इसका जवाब दे ?"

संदीप ने कहा, "आप चुप रहिए मौसीजी। वह बच्ची है, उसे यह सब क्यों सुना रही हैं ?"

"बच्ची ! तुम मुझे बच्ची की पहचान मत कराओ बेटा। उसकी उम्र मे मेरी शादी हो गई थी, जानते हो ? इस उम्र मे मैं बहू बनकर सिर पर घूघट लिए ससुराल गई थी। तुम मुझे बच्चो की पहचान मत कराओ।"

इसके बाद जरा रुककर मौसी जी दुबारा कहने लगी, 'मेरी लड़की की बात

तुमने सुनी ? कहती है, उसे उद्धार करनेवाले आदमी की कमी नहीं है ! तो फिर यह बता कि तुझे उद्धार करनेवाले कितने आदमी हैं ? तेरी जैसी बाप मरे बेटी का उद्धार कौन करेगा, बता ?उन लोगों को यहां बुला ला, मैं उनकी सूरत देखूं !"

संदीप बोला, "अब आप कुछ मत बोलिए मौसीजी, शांत हो जाइए।"

मौसी जी बोलीं, "मैं क्या यों ही बक-बक करती हूं बेटा ? लड़की की बात सुनकर मेरा मन झुंझला उठता है।"

एकाएक दरवाजे की घंटी बज उठी। संदीप ने दरवाजा खोल दिया। कमरे के अन्दर आते ही तपेश गांगुली की नजर संदीप पर पड़ी। बोला, "क्या भई, हाल-चाल ठीक है न ?"

संदीप ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया।

तपेश गांगुली को बेचैनी का अहसास हुआ। सभी के चेहरे की ओर देखकर बोला, "यह क्या, हरेक का चेहरा गम्भीर क्यों दिख रहा है ? कोई गड़बड़ी हुई है क्या ? शादी का रिश्ता टूट गया क्या ?"

फिर भी किसी के मुंह से कोई शब्द न निकलते देखकर तपेश गांगुली बोला, "क्या बात है, बताओ तो भाभी ? मैंने आकर किसी असुविधा में डाल दिया क्या ?"

योगमाया बोली, "नहीं देवर जी, तुम बैठो।"

तपेश गांगुली बोला, "मैंने आकर यदि किसी असुविधा में डाल दिया हो तो बताओ, मैं तुरन्त चला जाऊंगा। मैं तो यह देखने आया था कि तुम लोग कैसी हो ?"

योगमाया बोली, "नहीं-नहीं, कुछ भी नहीं हुआ है, तुम बैठो। तुम्हारा हाल-चाल ठीक है तो ?"

तपेश गांगुली एक कुर्सी पर बैठ गया और बोला, "हम लोगों का हाल-चाल ! तुम्हारे आने के बाद से हमें ठीक से रहने का मौका ही कहां मिल रहा है ? देख रही हो न, कि मैं कितना दुबला हो गया हूं। आजकल रात में मुझे ठीक से नींद ही नहीं आती है।"

योगमाया बोली, "तो फिर डॉक्टर से क्यों नहीं दिखाते ? तुम्हारी तबीयत ठीक रहेगी तभी न घर के तमाम लोग ठीक से रहेंगे।"

तपेश गांगुली बोला, "यह बात एकमात्र तुम्हीं महसूस करती हो भाभी, घर के लोगों को इसकी परवाह नहीं है। किसी को परवाह होती तो मुझे यह दुख रहता—"

योगमाया बोली, "तुम कुछ खाओगे देवरजी ?"

तपेश गांगुली बोला, "खाने के मामले में मैंने कभी 'ना' कहा है, तुम्हीं कहो ?"

अब योगमाया उठी। संदीप भी उठकर खड़ा हो गया। बोला, "मैं अब चलता हूं मौसीजी, कल फिर आऊंगा।"

यह कहकर दरवाजे की तरफ कदम बढ़ाया। विशाखा दरवाज़ा बन्द करने के लिए उसके पीछे-पीछे गई। बाहर जाते ही किसी के पैरों की आहट सुन संदीप ने जैसे ही मुड़कर देखा, उसकी नज़र विशाखा पर पड़ी।

विशाखा बिल्कुल सीढ़ी के मुहाने पर आकर खड़ी हो गई है। संदीप ने पूछा,

"मुझसे कुछ कहना है ?"

विशाखा ने कोई जवाब नहीं दिया।

संदीप को लगा, विशाखा किसी सोच में डूबी हुई है।

कहा, "कुछ बता नहीं रही हो। कुछ सोच रही हो क्या ?"

विशाखा बोली, "हां, यही सोच रही हूं कि मेरी शादी के बारे में मुझसे अधिक तुम्हीं लोगों को चिन्ता है।"

संदीप बोला, "लड़की की शादी की उम्र हो जाने पर उसके मां-बाप नहीं सोचेंगे तो और कौन सोचेगा ?"

विशाखा बोली, "मेरी मां सोचती है तो सोचें, मगर तुम ? तुम क्यों सोचते हो ? तुम मेरे कौन हो ?"

संदीप बोला, "मैं तुम्हारा कोई नहीं हूं—। तुम्हारी देख-भाल के लिए मुझे खाना-पीना, रहने की जगह और हर महीने पंद्रह रुपया मिलता है, इसीलिए मैं तुम्हारे बारे में सोचता हूं।"

विशाखा बोली, "जब मेरी शादी हो जाएगी तब ? तब क्या होगा ?"

संदीप बोला, "तब और क्या होगा ? तब मेरी नौकरी चली जाएगी।"

विशाखा ने पूछा, "तब तुम किसके बारे में सोचोगे ?"

संदीप इसका क्या उत्तर दे ! जरा सोचने के बाद बोला, "तब तुम्हारे बारे में सोचने का मुझे क्या अधिकार हो सकता है ? तब तुम्हारी शादी हो जाएगी और साथ-साथ मेरी नौकरी भी चली जाएगी।"

विशाखा बोली, "तो फिर लंदन से छोटे बाबू का पत्र न आने से इतना सोच क्यों रहे हो ? पत्र आने में जितनी देर हो उतनी ही अच्छी बात है—"

संदीप बोला, "मैं अपने बारे में नहीं, बल्कि तुम्हारे लिए सोचा करता हूं।"

विशाखा बोली, "यह तो वही बात हुई कि जिसकी शादी होने वाली है उसे कोई खुशी नहीं, मगर अड़ोस-पड़ोस के लोगों को खुशी के मारे नींद नहीं आती। तुम अपनी नौकरी की बात सोचोगे या दूसरे की शादी के बारे में सोचोगे ?"

संदीप बोला, "लेकिन मेरी नौकरी कोई खास अहमियत नहीं रखती। एक जगह की नौकरी चली जाएगी तो दूसरी जगह नौकरी ढूंढ़ लूंगा। लेकिन तुम्हारी शादी ? शादी किसी की भी दो बार नहीं होती। दो बार होना न तो उचित है और न ही वांछनीय है।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "इसके अलावा तुम तो मेरे लिए कोई परायी नहीं हो—"

विशाखा बोली, "परायी नहीं हूं···?"

"नहीं।"

विशाखा बोली, "अरे, परायी नहीं हूं तो कौन हूं ? अपनी ?"

संदीप इसका कुछ उत्तर देने जा रहा था, लेकिन तभी अन्दर से मौसीजी की आवाज आई। मौसी जी कह रही थी, "अरी विशाखा, तू कहां गई···"

मौसी जी की आवाज सुनकर विशाखा का चेहरा घुम गया।

संदीप बोला, "लो, तुम्हें पुकार रही हैं, अब जाओ।"

विशाखा बोली, "खैर, अभी जा रही हूं, लेकिन कल तो तुम्हें यहां नौकरी

करने के लिए आना ही होगा। उस समय इस वात का जवाव पाए वगैर तुम्हें छोड़ूंगी नहीं—"

"किस चीज का जवाव ?"

"यही जो तुमने कहा कि मैं तुम्हारी परायी नहीं हूं..."

उधर मौसीजी ने फिर पुकारा तो विशाखा रुकी नहीं, सीधे घर के अन्दर जाकर दरवाज़ा वन्द कर दिया। संदीप भी रफ्ता-रफ्ता सीढ़ियां उतरने लगा।

कई दिनों से लंदन से मुन्ना का न तो कोई खत आ रहा है न ही टेलेक्स। दादी मां मुन्ना के वारे में सोचते-सोचते वेचैन हो गई थीं। सवेरे जिस तरह वे विन्दु को अपने साथ ले गंगा नहाने जाती थीं, उसी तरह अव भी जाती हैं। वावू घाट में दशरथ पंडा हर रोज़ जिस प्रकार दादी मां को वेलपत्र और फूल देकर मंत्रोच्चार करता था, उसी प्रकार वे भी मंत्रोच्चार करती थीं। एक-मंजिले में जिस प्रकार प्रतिदिन सांध्य-आरती होती थी और दादी मां वहां आकर प्रणाम कर प्रसाद माथे से छुलाती थीं, उसी प्रकार करती हैं। हर रोज घर-गृहस्थी का काम-काज और नियम-कानून पूर्ववत् ही चल रहे थे।

लेकिन घर के नौकर-चाकर, दाई-नौकरानी, दरवान से लेकर मल्लिक और संदीप तक को पता था कि यहां इस घर-संसार के यंत्र के वीच का कहीं कोई एक मामूली-सा स्क्रू जैसे अलग हो गया है। यंत्र ठीक ही है लेकिन उसके प्राणों का स्पंदन धीमा हो गया है। जैसे वहां कोई शृंखला न हो। सवकुछ से वह गायव हो गया हो।

सौम्य वावू इस घर-संसार की कौन-सी अहम भूमिका निभाते थे ?

इस विश्व-ब्रह्माण्ड में जो कुछ आंखों से देखा जा सकता है, उसे सभी आदमी देखते हैं। कभी अपनी आंखों से और कभी न्यूटन के द्वारा ईजाद किए गए टेलीस्कोप की मदद से।

लेकिन मध्याकर्षण शक्ति, जिससे हमारे ग्रह-ग्रहान्तर, जड़-जीव-जंतु का प्रगन जुड़ा हुआ है, उसे क्या कोई देख पाता है ?

इसी वजह से सौम्य वावू का अस्तित्व आंखों से दिखाई न पड़ने के वावजूद पूरा मकान उसी शक्ति के आकर्षण से वंधा हुआ था; उसे ही केन्द्र वनाकर गृहस्थी का सुदर्शन चक्र एक खास गति की शृंखला से आकंपित होकर आवर्तित हो रहा था।

लेकिन सौम्य वावू के चले जाने के दूसरे दिन से ही इस गृहस्थी ने अपनी गति की तीव्रता खो दी। उसकी शृंखला में अड़चन आ खड़ी हुई। वाहर से दिखने के वावजूद संदीप वावू की आंखें उसे प्रत्यक्ष तौर पर देख रही हैं।

संदीप हर रोज की तरह तीन-मंज़िले पर जाकर दादी मां को रसेल स्ट्रीट के मकान की खवरों की सूचना देता।

दादी मां हर रोज की तरह पूछतीं, "वहूरानी कैसी है ?"

संदीप कहता, "विलकुल ठीक।"

इसके वाद दादी मां पूछतीं, "मांस, अण्डा, छेना वगैरह हर रोज खाती

है न?"

मंदीप कहता, "हां।"

"और लिखाई-पढ़ाई कैसी चल रही है?"

संदीप कहता, "लिखाई-पढ़ाई ठीक से कर रही है।"

"अरविंद ठीक समय पर ले जाता है और वापस ले आता है? नियम में किसी प्रकार की कोई ढिलाई नहीं हो रही है न?"

"नहीं।"

दादी मां इस तरह के और बहुत सारे सवाल करती। माहवारी खर्च का रुपया मल्लिक चाचा नियमित तौर पर संदीप के हाथ में थमा देते। संदीप उन रुपयों की रसीद पर अपना हस्ताक्षर कर जिसकी जो प्राप्य राशि होती, दे देता। साथ ही विशाखा का माहवारी फीस भी जाकर दे आता। अंटी मेम साहब और जयंती दीदी का भी माहवारी वेतन दे देता। और घर-गृहस्थी के खर्च की पूरी रकम मौसीजी को दे आता। दूध का दाम, रोजमर्रा के बाजार खर्च से लेकर विशाखा की छोटी-मोटी फरमाइशों, साड़ी-ब्लाउज-साबुन, सेंट, हेयर ऑयल और साथ ही मौसीजी की आवश्यक वस्तुओं का खर्च उन्हीं रुपयों से चलता था।

लेकिन उस दिन संदीप को जो खबर सुनने को मिली उससे उसे महसूस हुआ कि वह आसमान से जैसे नीचे गिर पड़ा हो।

मल्लिक जी दादी मा के सामने हिसाब का ब्योरा प्रस्तुत करने के बाद नीचे आए और सबकुछ बताया। कहा, "दादी मा बेहद अस्वस्थ हैं। विस्तर से उठ ही नहीं पा रही हैं।"

यह खबर सुनकर संदीप भौंचक-सा रह गया। इतने सालों से संदीप इस घर में है मगर कभी यह सुनने को न मिला था कि दादी मा बीमार हैं।

पूछा, "ऐसा क्यों हुआ? छोटे बाबू का कोई पत्र नहीं मिला है इसी वजह से चिंतित रहने से तबीयत खराब हो गई है?"

मल्लिक चाचा बोले, "नहीं, सौम्य बाबू का उन्हें पत्र मिला है और टेलेक्स से भी उनसे बातचीत हुई है।"

"तो फिर अचानक तबीयत कैसे खराब हो गई?"

मल्लिक चाचा बोले, "तबीयत खराब हुई यहां की फैक्टरी की हलचल से। फैक्टरी में भीषण गड़बड़ी चल रही है।"

"फैक्टरी में तो बहुत दिनों से श्रमिक-संकट चल रहा था, उस पर एक दिन दुर्घटना होने से एक कीमती मशीन भी जल गई थी।"

"यह तो मैं पहले ही सुन चुका हूं। उसके बाद? उसके बाद अचानक क्या हो गया?"

मल्लिक चाचा ने उसके बाद की घटना का विवरण प्रस्तुत किया, "वेणु गोपाल नामक एक शिफ्ट-इनचार्ज था, सुनने में आया है, उसने किसी पार्टी से एक लाख रुपया घूस लेकर मशीन में आग लगा दी थी…"

संदीप बोला, "घूस? एक लाख रुपया घूस? किसने इतना रुपया घूस दिया?"

मल्लिक चाचा बोले, "आजकल बेटा, जैसा वक्त आ गया है कि एक लाख

रुपये की घूस कोई बड़ी बात नहीं है। एक लाख अभी हाथ की मैल है···"

संदीप ने पूछा, "घूस क्यों दी ? किसने दी ?"

मल्लिक चाचा बोले, "अभी तुम छोटे हो, बात तुम्हारी समझ में नहीं आएगी। लेकिन तुम्हें छोटा ही कैसे कहूं ! हम लोगों का जमाना होता तो तुम दो बच्चों के बाप हो गए होते···"

ज़रा रुककर फिर बोले, "मैं इतने दिनों से इस घर में हूं मगर कभी इस तरह का कांड नहीं देखा था। दादी मां के मन की हालत कभी ऐसी नहीं हुई थी। कितने ही आंधी-तूफान सिर से गुजर चुके हैं, फिर भी कभी उन्हें हार स्वीकार करते नहीं देखा था। यों भी उनकी मानसिक हालत···"

मल्लिक जी बातें करते-करते गंभीर हो गए। संदीप ने मल्लिक जी के अन्दर इस तरह की बेचैनी कभी नहीं देखी थी। मन-ही-मन वह विचलित हो उठा। इस तरह की कौन-सी घटना घट गई है कि दादी मां और मल्लिक जी दोनों मायूस हो गए हैं !

सहसा एक अप्रत्याशित दिशा से संदीप को दूसरे ही दिन सारी खबरें मालूम हो गई। खबर सुनाई सुशील सरकार ने। सुशील सरकार ने कहा, "कुछ सुनने को मिला है ?"

"क्या ?"

"आपको कुछ सुनने को नहीं मिला ? एक और कंपनी में आज लालबत्ती जल गई।"

"लालबत्ती का मतलब ? कंपनी बन्द हो गई ? कौन-सी कंपनी ?"

सुशील ने कहा, "बेलुड़ की सैक्सबी मुखर्जी कंपनी।"

संदीप का सिर से पैर तक का हिस्सा थर-थर कांप उठा। सैक्सबी मुखर्जी कंपनी का बन्द होने का मतलब है कलकत्ता से उसके जीवन की समाप्ति। अब क्या होगा ? उसकी नौकरी क्या चली जाएगी ? और विशाखा ? विशाखा की शादी का क्या होगा ? सौम्य बाबू यहां नहीं हैं। अतः एक कंपनी का बन्द होने का मानी किसी एक अकेले आदमी का नुकसान नहीं है। इससे हजारों आदमी के जीवन, भरण-पोषण और जीवन-मरण का प्रश्न जुड़ा हुआ है।

सुशील सरकार ने संदीप के निस्प्राण चेहरे की ओर देखकर कहा, "क्या सोच रहे हैं ? यह खबर आप नहीं जानते थे ? अखबारों में भी छपी है।"

संदीप अब क्या कहे ! कहने लायक बात उसके पास हो ही क्या सकती है ! संदीप ने हतप्रभ की नाई यह खबर सुनी और उसके बाद प्रोफेसर के क्लास के भीतर आते ही दोनों ने बातचीत का क्रम रोक दिया। क्लास में जो पढ़ाया गया, उसके कान में उसका एक भी शब्द नहीं पहुंचा। उसका मन मुक्तिपद की दुश्चिन्ता और दुःसंवाद तथा विशाखा के जीवन की अलंघ्य समस्या के इर्द-गिर्द भटकता रहा।

क्लास के बाद जन-समूह के शोर-शराबे से भरी सड़क पर निकलने पर संदीप को ऐसा लगा जैसे संपूर्ण कलकत्ता शहर एकाएक जनशून्य हो गया है। कहीं कोई नहीं है। उस जनविरल सड़क से होकर विडन स्ट्रीट की तरफ कदम बढ़ाने के दौरान उसे महसूस हुआ कि वह सड़क भी जैसे एकाएक और दिनों की अपेक्षा

लम्बी हो गई है। शहर की सड़क तो एक बंधी माप के अन्दर ठहरी हुई होती है। वह रातों-रात न तो छोटी होती है और न बड़ी ही होती है। फिर ऐसा क्यों हुआ? घर पहुंचने में इतना विलंब क्यों हो रहा है?

अचानक एक आदमी ने उसे पुकारा, "सुन रहे हैं?"

संदीप की चेतना जैसे एकाएक लौट आई हो। देखा, एक युवक उसी की तरफ मुखातिब होकर कह रहा है। संदीप ने कहा, "मुझे पुकार रहे हैं?"

युवक बोला, "आप तो आए ही नहीं।"

संदीप बोला, "मैं आपको ठीक से पहचान नहीं पा रहा। आप कौन हैं?"

युवक बोला, "मैं वही हूं जिसने आपसे कहा था कि विश्वशांति का एक साइनबोर्ड सस्ते में बनवा दूंगा।"

संदीप ने चारों तरफ गौर से देखा। यह तो हाथीबागान का मोड़ है। विडन स्ट्रीट के बदले वह इतनी दूर कैसे चला आया? सामने ही रखे हुए उस साइनबोर्ड की ओर दृष्टि जाते ही उसे सारी बातों का स्मरण हो आया। उस साइनबोर्ड पर उसी दिन की तरह लिखा हुआ है—

श्री श्री जगन्माता के स्वप्न के आदेशानुसार
विश्व-शांति की स्थापना के
निमित्त इस देव-स्थान में प्रत्येक दिन
पूजा-पाठ एवं यज्ञ-याजन अनुष्ठित होगा।
ईश्वर के उस निर्देश के पालन हेतु
हमें यथासाध्य सहायता करें।

सोम—ब्रह्मा
मंगल—विष्णु
बुध—महेश्वर
बृहस्पति—लक्ष्मी
शुक्र—संतोषी माँ
शनि—निवारणीय देवता

नीचे सेवायत का नाम लिखा है। उसकी बगल में पुजारी का नाम।

संदीप को सारी बातों का स्मरण हो आया। रुपया कमाने का आजकल कितना कौशल है! दिमाग लगाकर युवकों ने कितने उपाय निकाले हैं! सामने एक तांबे की थाली में बहुत सारे ताजे फूल पड़े हुए हैं। उनके साथ कुछ छुट्टे पैसे। मिर्जापुर स्ट्रीट में उसने जिस तरह का साइनबोर्ड देखा था, यह भी उसी तरह का है।

युवक ने कहा, "आपने तो बताया था कि आपको नौकरी नहीं मिल रही है।"

संदीप ने कहा, "हां।"

"इसीलिए तो आपको जोड़ासांको के बारे में कहा था। वहां बाजार के मोड़ पर इसी तरह का एक खाली स्थान है। आपको खूब सस्ते में इस तरह का एक साइनबोर्ड बनवा दे सकता हूं, लेकिन आपने···"

सदीप अब रुका नहीं। चलने के पहले सिर्फ यही कहा, "अच्छा, मैं किसी दूसरे दिन आऊंगा, अभी चलता हूं···"

यह कहकर फौरन विपरीत दिशा का फुटपाथ पकड़कर घर की ओर बढ़ने लगा।

हां, सचमुच ही तब सैक्सबी कंपनी में अभूतपूर्व अशांति का तूफान चल रहा था।

वेणु गोपाल बहुत पुराना शिफ्ट-इनचार्ज है—बहुत ही अनुभवी इंजीनियर। कंपनी उसकी कीमत पहचानती है। लेकिन वह ऐसा विश्वासघात करेगा, इसकी किसी ने कल्पना नहीं की थी। इतने दिनों का तमाम विश्वास वह खो चुका है। अत: उसे उचित दंड मिलना चाहिए।

अर्जुन सरकार को बहुत दिनों से तरह-तरह के स्रोतों से खबरें मिल रही थीं। मुखर्जी साहब के स्वार्थ की रक्षा की खातिर ही उसे मोटी तनख्वाह देकर रखा गया था। काम बड़ा ही मुश्किल था। लेकिन इतने दिनों से वह उस कठिन काम को अत्यन्त कुशलतापूर्वक चलाते आ रहा है। कौन काम में लापरवाही बरतता है, कौन कम उत्पादन कर रहा है, कौन गलत तरीके से ओवरटाइम ले रहा है, कौन अहाते के बाहर गैर-कानूनी ढंग से माल की आपूर्त्ति कर रहा है, इसका पता लगाकर और उन्हें सजा देकर वह मालिक की नजरों में यश का भागी हो चुका है। इसके फलस्वरूप कंपनी को बहुत फायदा हुआ है।

यही वजह है कि मुक्तिपद मुखर्जी ने आवश्यक सूचनाएं बटोरने के खयाल से अर्जुन सरकार पर इस तरह के कामों की जिम्मेदारी थोपी है।

अबकी भी वही प्रबन्ध किया गया था।

सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के स्टाफ क्वार्टरों के किसी व्यक्ति को पता नहीं था कि उस दिन वेणु गोपाल के घर में एकाएक छापा मारा जाएगा। घर के लोगों की नींद टूटने के पहले ही पुलिस ने कब सादे लिबास में चारों तरफ की घेराबन्दी कर ली है, किसी को इसका पता नहीं था। सदर दरवाजे की घंटी बजते ही घर के कामगार ने दरवाजा खोल दिया।

"कौन ?"

उस समय भी दरवाजे के बाहर से आदमी के गले की आवाज आ रही है, "दरवाजा खोलिए—"

अन्दर से दरवाजा खोलते ही पुलिसकर्मियों का जत्था दनादन अन्दर घुस गया। बाधा देने की कोशिश न की गई हो, ऐसी बात नहीं। लेकिन जिनके पास सर्च-वारंट है, उन्हें कौन बाधा दे सकता है? खबर मिलते ही वेणु गोपाल नींद से जगकर सामने आकर खड़ा हुआ।

"क्या चाहिए ?"

पुलिस के पास इसके जवाब देने का प्रमाण था। उसे जब दिखाया गया तो वेणु गोपाल का मुंह बन्द हो गया। पुलिसकर्मी वगैरह किसी बाधा के हर कमरे में घुस पलंग, आलमारी, भंडारघर, बाथरूम, रसोईघर वगैरह की मुस्तैदी से छान-बीन की गई। आलमारी में कपड़े-लत्तों के अलावा कुछ कागज-पत्तर भी थे। उनकी भी गहराई से छान-बीन की गई।

इस बीच घर के बाहर लोगों का हुजूम खड़ा हो गया है। शुरू में कुछ लोगों का उसके बाद ज्यादा लोगों का। उसके बाद शोर-गुल और नारेबाजी होने लगी। चूंकि लोगों के तमाम अभियोगों की बुनियाद या केन्द्र अदृश्य मुक्तिपद ही हैं इसलिए सारी ही चोट उसके सिर पर ही आकर पड़ी।

ज़ोर-ज़ोर से नारे गूंजने लगे—"मुक्तिपद मुखर्जी, मुर्दाबाद! मुर्दाबाद!!"

उसी तीव्र स्वर में आवाज गूंजी—"मुर्दाबाद, मुर्दाबाद!"

उसके बाद वह आवाज तमाम स्टाफ क्वार्टरों के कोने-कोने में, कारखाने के चप्पे-चप्पे में प्रतिध्वनित हो उठी। जो जहां भी काम-काज में व्यस्त था, वह काम छोड़कर वेणु गोपाल के घर के सामने दौड़ा-दौड़ा आया। उन लोगों ने भी तमाम लोगों के स्वर में स्वर मिलाकर चिल्लाना शुरू कर दिया, "मुर्दाबाद, मुर्दाबाद—"

वह हलचल से भरा एक नाटकीय दृश्य था।

तमाम लोग वेणु गोपाल के घर के अन्दर एक साथ घुसना चाहते हैं। सभी प्रतिवाद के तौर पर चिल्लाकर मुहल्ले को मुखरित कर रहे हैं। सभी कहना चाहते हैं— "यह जुल्म बरदाश्त नहीं करेंगे, यह जुल्म स्वीकार नहीं करेंगे···"

कहीं से खबर मिलते ही लाठीधारी पुलिसकर्मियों का एक जत्था दौड़ा-दौड़ा आया और सभी को तितर-बितर करने लगा। "भागो, यहां से भागो—"

तत्क्षण मधुमक्खियों के छत्ते पर ढेला फेंकने जैसा नजारा आकर खड़ा हो गया। एक तरफ से लाठियां बरसने लगीं और दूसरी तरफ से ढेलेबाजी होने लगी। लाठी, चिल्लाहट, नारों और ईंटों की बौछार के कारण वह स्थान इतनी मुसीबतों से घिर गया कि भागने के सिवा दूसरा कोई विकल्प नहीं रहा। आखिर में जनता की वह भीड़ फैक्टरी में घुस गई। एक और मशीन के आग की लपटों से दहकने से उसका भयंकर परिणाम हुआ। फैक्टरी सुनसान हो गई। जहां भी आदमी दिख जाते, पुलिसकर्मी उन पर आक्रमण करने लगते। कोई आदमी दिख पड़े तो उसे मारो, उसका पीछा करो।

घर में बैठ तब मुक्तिपद मुखर्जी टेलीफोन से वर्क्स मैनेजर की रिपोर्ट सुन रहे थे। पूछा, "उसके बाद? आग बुझाने का प्रबन्ध किया गया है?"

"हां सर, फायर ब्रिगेड को सूचित किया है। वे लोग आ रहे हैं।"

"वेणु गोपाल के घर की क्या हालत है? पुलिस को कुछ मिला?"

वर्क्स मैनेजर बोला, "सर्च अब भी चल रहा है सर, बाद में आपको इत्तला करूंगा।"

मुक्तिपद टेलीफोन रखकर चुपचाप बैठे रहे। सवेरे से रह-रहकर टेलीफोन आ रहा है और वे नये-नये दुःसंवाद सुन रहे हैं।

मुक्तिपद ने एक बार मिसेज के शयन-कक्ष में झांककर देखा। नंदिता खासे आराम से सोई हुई है। उसे कोई चिन्ता नहीं है। कहां से रुपये आ रहे हैं, क्यों रुपये दिए जा रहे हैं, ये रुपये कितने हजार लोगों के रात-दिन के परिश्रम की फसल हैं—यह सब जानने की उसे कोई जरूरत नहीं, और न ही जानने की इच्छा है। जो लोग खटकर देह का पसीना जमीन में बहाकर नंदिता के ऐशो-आराम के लिए रुपयों की आपूर्ति कर रहे हैं, उनकी देख-रेख करने को तो गवर्नमेंट है। गवर्नमेंट ने उन्हीं लोगों के लिए दातव्य चिकित्सालय का निर्माण कराया है,

वीमार पड़ने पर उन्हें वहां मुफ्त में दवा मिलती है, इलाज किया जाता है। इसके अलावा हम जिन प्रतिष्ठानों—जैसे रामकृष्ण मिशन, भारत सेवाश्रम संघ आदि—को चैरिटी देते हैं, वहां तो उन्हें मुफ्त में सेवा प्राप्त होती है। हम क्यों उनके दुख-कष्ट की बात सोचकर अपनी रात की नींद हराम करें? अगर कोई चैरिटेवल ऑर्गेनाइजेशन हमारे पास आता है तो हम उसे भी चंदा देते हैं। उन चंदों के पैसों से वे लोग गरीवों के लिए कितने महत्त्वपूर्ण काम कर रहे हैं, यह क्या तुम लोग अखवारों में नहीं देखते? चंदे के वे पैसे कहां से आते हैं? वह तो हमारे ही द्वारा दी गई रकम है। वे तो हमीं लोगों की मेहनत से कमाए गए पैसे हैं। हम अगर जरा आराम न करें तो हमारी सेहत कैसे अच्छी रहे? और हम कैसे तुम लोगों की सेवा के लिए पैसे का इन्तजाम करें?

मुक्तिपद नंदिता के शयन-कक्ष में खड़े होकर उसे देख रहे थे और सोच रहे थे। नंदिता मजे में है, हां, वहुत मजे में है। दुनिया में ये ही लोग सुखी हैं।

मुक्तिपद वहुत देर तक टेलीफोन के पास इंतजार करते रहे। वे खुद उन लोगों में से किसी को फोन करें क्या? वे टेलीफोन करने जा ही रहे थे कि टेलीफोन की घंटी वज उठी।

"येस?"

उधर से आवाज आई—"मैं सरकार वोल रहा हूं सर।"

"कहो-कहो। मैं तुम्हारे फोन का ही इन्तजार कर रहा था। क्या खवर है?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "यहां वेहद हंगामा मचा हुआ है सर। श्रमिकों के जत्थे फैक्टरी से वाहर निकल आए हैं और पुलिसकर्मियों पर ढेले चला रहे हैं। एक मशीन में उन लोगों ने आग लगा दी थी···"

"उसके वाद? उसके वाद क्या हुआ, फौरन वताओ।"

अर्जुन सरकार ने कहा, "पुलिस ने पहले लाठी चलाई थी, उसके वाद श्रमिकों ने ढेला चलाना शुरू कर दिया तो पुलिस ने फायरिंग शुरू कर दी। अभी चारों तरफ भगदड़ मची हुई है, जिसे जिस ओर भागने का मौका मिल रहा है, भाग रहा है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "कुछ कैजुअल्टी हुई है क्या?"

"अभी कुछ कहना मुश्किल है सर। वाद में आपको सारी सूचना दूंगा···"

मुक्तिपद ने पूछा, "आग बुझ गई है?"

"हां, अभी धुआं ही ज्यादा दिख रहा है। पूरी फैक्टरी धुएं से भर गई है।"

"और वेणु गोपाल के घर में सर्च की कार्रवाई खत्म हो गई है?"

"सुना है, सर्च की कार्रवाई खत्म हो चुकी है।"

"कुछ मिला?"

अर्जुन सरकार वोला, "सुना है, कुछ भी नहीं मिला।"

"कुछ भी नहीं मिला? वह एक लाख रुपये की रकम?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "समझ में नहीं आ रहा है कि उन रुपयों को उसने कहां हटाकर रख दिया। हो सकता है किसी ने पहले ही उसके पास खवर पहुंचा दी हो···"

"लेकिन खवर कौन पहुंचाएगा? इस खवर की जानकारी तो मेरे और

तुम्हारे सिवा किसी को भी नहीं थी। अगर मर्च करने पर रुपया न मिले तो फिर क्या होगा ?"

अर्जुन सरकार ने अभयदान के स्वर में कहा, "आप चिन्ता नहीं करें सर। जो कुछ होगा, मैं आपको ठीक समय पर सूचित कर दूंगा।"

"ठीक है !"

यह कहकर मुक्तिपद ने रिसीवर रख दिया। दरबान ने आकर सूचना दी, "गाड़ी का ड्राइवर आया है।"

मुक्तिपद बोले, "ठीक है, उसे बैठने कहो, मैं बाद में जाऊंगा।"

विशु बहुत पुराना ड्राइवर है। वह कम पैसे में ही नौकरी में दाखिल हुआ था। अभी उसका वेतन पहले के बनिस्बत कई गुना ज्यादा बढ़ गया है। साथ ही उसके परिवार के सदस्यों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। जिन्सों की कीमत भी उसी अनुपात में बढ़ती जा रही है। वेतन अगर एक गुना बढ़ता है तो जिन्सों की कीमत पांच गुना बढ़ जाती है। बाजार जाने पर विशु क्या खरीदे, क्या न खरीदे, उसका उसे कोई कूल-किनारा नहीं मिलता। वह जिस चीज को हाथ से छूता है, उसी की कीमत उसे आसमान छूती हुई नजर आती है।

बहुत दिन पहले कारखाने के मैदान के सामने वोट की मीटिंग चल रही थी। विशु तब गाड़ी रखकर अन्दर बैठा हुआ था। उसके साहब ऑफिस के अन्दर काम में व्यस्त थे। अचानक कुछ बातें उसके कान में आईं।

जो आदमी भाषण दे रहा था, वह बोल रहा था—"भाइयो, आप लोग सोचकर देखें कि आप किसे चाहते हैं? जो लोग सरकार चला रहे हैं उन्हें या हम लोगों को। जो लोग सरकार चला रहे हैं उनसे आप पूछें कि चीजों की कीमतें आसमान क्यों छू रही हैं ? वे लोग जो चीज खाते हैं, आप लोग भी वही खाते हैं। वे बड़े आदमी हैं तो उनका पेट क्या बड़ा है ? और आप लोग गरीब हैं तो आप लोगों का पेट क्या छोटा है ? बात तो ऐसी नहीं है। शराब की कीमत अगर बढ़ती है तो बढ़े, घी की कीमत बढ़ती है तो बढ़े, मोटर गाड़ियों की कीमत बढ़ती है तो बढ़े, लेकिन चावल-दाल-नमक-कपड़े-लत्ते की कीमत क्यों बढ़ेगी ? आप लोग और हम लोग—जो गरीब हैं—वे जिन चीजों को खाकर जिन्दा रह रहे हैं, उनकी कीमतें क्यों बढ़ेंगी ? यह जो आप लोगों के चीफ मिनिस्टर हैं, जो एक बहुत बड़े देश-भक्त के रूप में अपने आपको पेश करते हैं, जो लोगों से यह कहते चलते हैं कि देश-सेवा के लिए उन्होंने अपना सारा कुछ न्योछावर कर दिया है, उन्हीं चीफ मिनिस्टर महोदय ने हाल में राइटर्स बिल्डिंग के अपने कमरे से संलग्न बाथरूम के लिए एक लाख रुपया खर्च कर उसे सजाया-संवारा है। लेकिन हम मेहनतकश उनसे पूछना चाहते हैं कि हमारे खून-पसीने से कमाए गए एक लाख रुपये लगा-कर उन्हें अपना बाथरूम सजाने-संवारने का अधिकार किसने दिया ? बताइए भाइयो, यह अधिकार उन्हें किसने दिया ? अबकी आपलोग अगर अपना वोट देकर हमें सरकार बनाने का मौका दें तो मैं वादा करता हूं, कि सत्ता में आते ही हमारा पहला काम होगा उस बाथरूम को तोड़कर मलबे में बदल देना⋯"

विशु को याद है, उस भाषण को सुनते ही तमाम लोगों की तालियों की गड़गड़ाहट से वातावरण गूंज उठा था। लेकिन विश्वनाथ वगैरह वोट में जीत

हासिल नहीं कर सके थे। इसलिए उस वादे को निभाने की जरूरत ही नहीं पड़ी थी।

यह बात बहुत दिन पहले की है, मगर विशु को याद है।

अचानक दरबान आया। बोला, "साहब अभी बाहर नहीं निकलेंगे। बाद में निकलेंगे। अभी बैठो।"

साहब चाहे निकलें या न निकलें विशु को गाड़ी लेकर उपस्थित रहना ही है। वह एक मेहनतकश है। उसके दुख और दुर्दशा की बात कोई नहीं समझेगा। उस दिन बाजार जाकर उसने दो रुपया किलो की दर से आलू खरीदा है···

ऊपर तब मुक्तिपद मां को फोन कर रहे थे।

सबकुछ सुनने के बाद मां ने पूछा, "उसके बाद !"

मुक्तिपद बोले, "उसके बाद और क्या; वेणु गोपाल के घर पर सर्च करने से रुपया नहीं मिला।"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद फैक्टरी के स्टाफ ताव में आ गए हैं। काम-काज बन्द कर श्रमिकों का दल नारे लगा रहा है। उनका कहना है, बदनाम करने के खयाल से वेणु गोपाल के घर का यों ही सर्च किया गया। असल में वेणुगोपाल ने एक लाख रुपया घूस लेकर मशीन जला दी है, उसका सबूत है।"

"कौन-सा सबूत है ?"

"मेरे डिप्टी वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार को बहुत ही अच्छे सोर्स से इसका पता चला था—"

दादी मां ने कहा, "घूस लेने के दौरान कोई क्या सबूत रहने देता है ?"

"सबूत यदि नहीं है तो अर्जुन सरकार ने क्या मुझे झूठी खबर दी ? यों ही मुझसे वेणु गोपाल का घर सर्च कराने की बात कही ?"

दादी मां बोलीं, "अगर वेणु गोपाल ने रुपया लिया है तो वह रकम कहां चली गई ? सर्च करने पर वह रुपया क्यों नहीं मिला ? लगता है, किसी ने अवश्य ही वेणु गोपाल को बता दिया है कि उसके घर पर छापामारी होनेवाली है।"

मुक्तिपद बोले, "कौन इसका भंडाफोड़ कर सकता है ? किसी को भी इसकी जानकारी नहीं थी। अर्जुन सरकार ने यह बात मुझे किसी के सामने नहीं बताई थी। मैं जब रात के आखिरी पहर में कार पर बैठकर आ रहा था, उसी समय उसने पहले-पहल यह बात बताई थी। उस समय वहां कोई नहीं था।"

दादी मां बोली, "अब क्या होगा ?"

मुक्तिपद बोले, "क्या होगा, यही तो सोच रहा हूं। यदि यही सिलसिला जारी रहा तो आखिर में फैक्टरी बन्द करने के सिवा और क्या उपाय है ?"

"फैक्टरी बन्द कर देना होगा—इसका मतलब ?"

मुक्तिपद बोले, "बन्द कर देने का मतलब है फैक्टरी में लॉकआउट की घोषणा। देखूं, कब तक वे लोग बगैर खाए रह सकते हैं। लॉकआउट कर देने से उन्हें वेतन भी नहीं मिलेगा।"

दादी मां बोलीं, "इतने दिनों की फैक्टरी है, बन्द करने से सरकार को भी तो नुकसान होगा। गवर्नमेण्ट को टैक्स नहीं मिलेगा। इस संबंध में सरकार कोई

कार्रवाई नहीं कर सकती ? सरकार क्या बैठे-बैठे तमाशा देखेगी ?"

मुक्तिपद बोले, "इसी वजह से तो तुमसे कहा था मां, कि मिस्टर चटर्जी की लड़की से सौम्य की शादी करा दो—"

दादी मा बोलीं, "गवर्नमेण्ट से तेरे चटर्जी की लड़की का कौन-सा ताल्लुक है ?"

"ताल्लुक नहीं है ?"

"बता न, कौन-सा ताल्लुक है ?"

मुक्तिपद बोले, "यह शादी हो जाए तो हम लोगों की फैक्टरी में श्रमिक-आन्दोलन नहीं होगा। आजकल श्रमिक वर्ग ही सबकुछ है। भारत में जितने भी प्रदेश हैं, उनमें से वेस्ट बंगाल ही इंडस्ट्री के लिहाज से सबसे मुटेबल जगह है। इस प्रदेश में कोयला है, इस प्रदेश में अशेष पानी का भण्डार है, इस शहर के बीच ही इतना बड़ा बन्दरगाह है किस प्रदेश में एक साथ इतनी सुविधाएं हैं ? यही कारण है कि अंग्रेजों ने इतनी-इतनी जगहों के रहने के बावजूद इसी का चयन किया था। लेकिन देश आजाद होने के बाद सारा कुछ उलटा-पलटा हो गया। यहां की तमाम इंडस्ट्रियां आज बीमार होकर हांफ रही हैं और दूसरे-दूसरे प्रदेशों की इंडस्ट्रियां तरक्की कर रही हैं।"

दादी मां ने पूछा, "क्यों ?"

"इसका कारण गवर्नमेंट है।"

"गवर्नमेंट को तुम लोग अपनी बातें नहीं बता सकते ? तुम लोगों का तो चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स है। उसके मेम्बरान क्या कर रहे हैं ? बैठे-बैठे सिर्फ सभाएं करते हैं ? वे गवर्नमेंट को समझा नहीं पाते कि इसकी वजह से उसकी आमदनी में कमी आ रही है ?"

मुक्तिपद बोले, "मां, तुम ठीक से समझ नहीं रही हो। तुमने जो जमाना देखा है, आज वह जमाना नहीं रहा। चेम्बर्स ऑफ कॉमर्स चाहे लाख कहे पर कोई सुनवाई नहीं होगी।"

दादी मा बोली, "अगर कुछ कर-धर नहीं पाएगा तो फिर कारोबार बन्द कर दे।"

मुक्तिपद बोले, "ऐसी बात तुम्हारे मुंह से कैसे निकली ? कारोबार बन्द करने से क्या नतीजा होगा, इसकी कल्पना कर सकती हो ?"

दादी मा बोली, "तो फिर गवर्नमेंट को समझाकर कहो कि उसकी आमदनी कम हो रही है।"

मुक्तिपद बोले, "तुम गवर्नमेंट का अर्थ समझती हो ?"

"तू ही बता कि गवर्नमेंट का अर्थ क्या है ?"

मुक्तिपद बोले, "गवर्नमेंट का अर्थ है लेबर-लीडर।"

"लेबर-लीडर ? इसका अर्थ ?"

"हां, आजकल गवर्नमेंट का अर्थ है लेबर-लीडर—"

उसके बाद जरा रुककर फिर कहने लगे, "इसीलिए तो तुमसे मिस्टर चटर्जी की लड़की से सौम्य की शादी कराने को कहा था। उसका बड़ा भाई एक लेबर-लीडर है। मिनिस्ट्री पर उसका जोरदार प्रभाव है। उसी की बात पर मिनिस्ट्री

उठती-बैठती है। इसके अलावा उन लोगों को मिडल ईस्ट में पांच सौ करोड़ रुपये का कॉन्ट्रेक्ट मिला है। वहां सौम्य की शादी करने से एक ही ढेले मे दो चिड़ियों का शिकार किया जा सकता था। सो तुम तो उस समय मेरी बात सुनकर झल्ला उठीं। बताया, तुमने किसी बाप-मरे लड़की से उसकी शादी तय कर दी है और रसेल स्ट्रीट के मकान में उन्हें पाल रही हो···"

दादी मां की तरफ से इस बात का कोई जवाब नहीं आया।

इसके बाद मुक्तिपद बोले, "सो तुम उनका पालन-पोषण करो, इसमें मुझे कोई एतराज नहीं। तुम जो ठीक समझती हो, वही करती हो, इस संबंध में मैं क्या कह सकता हूं? लेकिन अपनी इतनी बड़ी कम्पनी के स्वार्थ की ओर भी तो तुम्हें देखना होगा। यहां के हजारों स्टाफ का भविष्य क्या होगा, इसके बारे में भी तो सोचना होगा—"

अब की भी दादी मां की ओर से कोई जवाब नहीं आया। मुक्तिपद ने फिर कहना शुरू किया, "यह लड़की देखने में सुन्दर है और उस पर एम० ए० पास भी है। और जिस लड़की का भरण-पोषण तुम रसेल स्ट्रीट में कर रही हो, वह देखने में कैसी है, मालूम नहीं। शिक्षा-दीक्षा भी तो कोई खास नहीं है। उसकी लिखाई-पढ़ाई के पीछे तुम महीने में हजारों रुपया खर्च कर रही हो। इससे हम लोगों की कम्पनी को कौन-सा फायदा हो रहा है?"

दादी मां ने इस बात का भी कोई जवाब नहीं दिया।

मुक्तिपद बोले, "क्यों मां, तुम कुछ बोल क्यों नहीं रही हो? क्यों नहीं बोल रही हो? हम लोगों के चटर्जी की लड़की से सौम्य की शादी कराओगी या अपनी उस पालतू लड़की से? जवाब दो—मेरी बात का जवाब दो—"

इस पर भी मां का कोई उत्तर न पाकर मुक्तिपद ने फिर कहा, "मां, ओ मां, मेरी बात का जवाब दो—मां, ओ मां, मां···"

फिर भी मां की तरफ से कोई उत्तर नहीं मिलता है।

मुक्तिपद फिर से मां को बुलाने जा रहे थे, लेकिन एक दूसरे टेलीफोन की घंटी बज उठी और मुक्तिपद ने उसे उठाया।

मुक्तिपद ने कहा, "कहिए।"

कांति चटर्जी ने कहा, "सर, हालात मेरे हाथ से बाहर चले गए हैं। फायर-ब्रिग्रेड पहले ही आ चुका था। अब पुलिस ने लाठी चार्ज करना शुरू कर दिया है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "वेणु गोपाल के घर पर छापा मारने से पुलिस को क्या मिला?"

चटर्जी ने कहा, "कुछ भी नहीं। कुछ न मिलने के कारण लेबर उत्तेजित हो गए हैं। खबर मिलते ही उन लोगों का लीडर आ धमका है।"

"कौन-सा लीडर?"

कांति चटर्जी ने कहा, "वरदा घोषाल।"

मुक्तिपद ने कहा, "ठीक है, अभी रख रहा हूं—"

यह कहकर वे पहले वाले रिसीवर को कान में लगाकर पुकारने लगे, "मां, सुन रही हो? सुन रही हो मां? ओ···मां,···मां···ओ···मां"

मां की ओर से तो भी कोई जवाब नहीं आया।

उन दिनों की बातों का भी संदीप को स्मरण है। दुर्दिन जब सचमुच ही आनेवाला होता है तो उसका पूर्वाभास पहले ही मिल जाता है। राजनीतिक जीवन में जिस तरह की घटना घटित होती है व्यक्ति के जीवन में भी उसी तरह की घटना घटित होती है। 1789 का फ्रांसीसी विद्रोह एक ही दिन में घटित नहीं हुआ था। उसके पहले 1764 ई० में ग्रेट ब्रिटेन में कपड़ा बुनने की मशीन का आविष्कार हो चुका था। 1772 ई० के 22 जून को ग्रेट ब्रिटेन में गुलामी प्रथा को गैर कानूनी घोषित करने का फैसला सुना दिया गया था। 1775 ई० में फ्रांस, स्पेन और नीदरलैण्ड अमरीका से हाथ मिलाकर ग्रेट ब्रिटेन को युद्ध में पराजित कर चुके थे। यह सब पतझड़ है। काल वैशाखी की बरसात के भयंकर होने के पूर्व आंधी के झोंके से गिरे और हवा से उड़े हुए झड़े पत्तों जैसी ही ये सब घटनाएं हुआ करती हैं। अबकी मुखर्जी बाबुओं की मैक्सबी मुखर्जी कम्पनी की फैक्टरी में जो मशीन जलाई गई, पुलिस ने जो लाठीचार्ज किया और श्रमिक आन्दोलन ने जो जोर पकड़ा—यह सब आसन्न उस कालवैशाखी के आगमन के पूर्व की, हवा के झोंके से झड़े पत्तों के उड़ने जैसी मामूली दुर्घटनाएं हैं।

शुरू में जब सुशील सरकार ने संदीप को यह खबर सुनाई थी तो उसने उसके गहरे में झांककर नहीं देखा था। लेकिन दो दिन बाद ही मल्लिक चाचा के चेहरे को देखकर वह सिहर उठा था। शुरू में मल्लिक चाचा ने कुछ बताना नहीं चाहा। बाद में बहुत दबाव डालने पर सबकुछ बताया।

संदीप ने पूछा था, "तो फिर क्या होगा ?"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "और क्या होगा, फैक्टरी जिससे कि बच जाए वही किया जाएगा।"

"फैक्टरी कैसे बचेगी ?"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "लेबर-ट्रबल थमने से फैक्टरी बच जाएगी। चटर्जी फैमिली की लड़की से सौम्य की शादी करा देने से और किसी तरह का लेबर-ट्रबल नहीं रह जाएगा—। क्योंकि पात्री का बड़ा भाई ही लेबर-लीडर है। लेबर-लीडर हाथ में रहेगा तो मंझले बाबू को फिर किसका भय ? लेबर-लीडर का अर्थ ही है गवर्नमेंट।"

मल्लिक चाचा की बात सुनकर संदीप का मन रोने-रोने पर हो गया था।

कहा था, "ऐसे में विशाखा का क्या होगा ?"

उस वक्त मल्लिक चाचा को ज्यादा बातें करना अच्छा नहीं लग रहा था। बोले थे, "उन लोगों का अब और क्या होगा ! वे लोग हमेशा गरीब ही थीं, अब फिर गरीब हो जाएंगी। वो लोग दुबारा खिदिरपुर के उस सात नम्बर मनसातल्ला लेन में मकान में वापिस चली जाएंगी···"

यह सुनने के बाद संदीप के लिए बोलने को क्या रह जाता है !

तो भी संदीप ने साहस का दामन नहीं छोड़ा था। पूछा था, "दादी मां ने क्या इस नई पात्री को देखा है ? सौम्य बाबू से इस पात्री की शादी करने को तैयार

हो गई हैं ?"

मल्लिक चाचा बोले थे, "इन बड़े लोगों के मामले में तुम्हारे लिए चिन्तित होने की कौन-सी बात है, जरा सुनूं तो सही ! तुम्हें तनख्वाह मिलती है, लॉ कॉलेज में पढ़ते हो। तुम अभी इन्हीं बातों के बारे में सोचो। इन बातों के सम्बन्ध में तुम व्यर्थ ही माथापच्ची कर रहे हो। इसकी वजह से तुम्हारी नौकरी तो नहीं जा रही है ···"

"लेकिन विशाखा से यदि सौम्य बाबू की शादी नहीं होगी तो फिर मेरे लिए कोई काम नहीं रह जाएगा। उस समय मैं क्या काम करूंगा ? काम न रहेगा तो मेरी नौकरी चली जाएगी।"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "तुम्हें यह बात नहीं सोचनी है। तुम्हारी नौकरी नहीं जानी चाहिए, यही न ? मैं तुम्हें वचन देता हूं, तुम्हारी नौकरी नहीं जाएगी। इस मकान में इतने आदमी रहते और खाते हैं, ऐसे में तुम्हारे जैसे पंद्रह रुपये माहवारी वेतन पानेवाले आदमी के रहने और खाने से किसी का कुछ नहीं बिगड़ेगा।"

याद है, यह बात सुनकर उस दिन संदीप की दुश्चिन्ता दूर नहीं हुई थी। वह उस दिन सिर्फ अपनी नौकरी जाने के भय से ही चिन्तित हुआ था ? और किसी कारणवश नहीं ? और किसी के बारे में उसने नहीं सोचा था ? और किसी के अनिश्चित भविष्य की चिन्ता से वह कातर नहीं हुआ था ? और किसी के भले-बुरे की दुश्चिन्तता ने उसकी आंखों की नींद नहीं चुरा ली थी ?

असल में यह कालवैशाखी की भीषण वर्षा के पूर्ववर्त्ती क्षणों की चेतावनी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह वही झड़े हुए पत्ते हैं। कालवैशाखी की वर्षा के आगमन के पूर्व ये उड़ते हुए पत्ते ही उसे सतर्कता की वाणी सुना गए थे—"सावधान संदीप, आंधी आ रही है···सावधान हो जा···"

लेकिन वह किस कारणवश सावधान होगा ? कितना सावधान होगा ? क्यों सावधान होगा ?

"हमारे विश्वस्रष्टा ने दुनिया के तमाम जीवों को सम्पूर्ण बनाकर रचा था। इसीलिए पशु-पक्षी, वृक्ष-लता, जलचर-थलचर सारा कुछ सम्पूर्ण हैं। अपवाद के तौर पर केवल आदमी है। आदमी की सृष्टि करने के समय विश्वस्रष्टा ने कहा था : जाओ, एकमात्र तुम्ही को असम्पूर्ण रूप में रच रहा हूं। तुम अपनी चेष्टा, अपने संघर्ष, अपने परिश्रम, त्याग, [illegible] है।

[illegible]

एक दिन कलकत्ता आया था। आने के बाद एक ऐसे मकान में आश्रय लिया था जहां अपार सम्पत्ति और धन था। उस अर्थ की प्रचुरता के बीच उसने एक नई दुनिया का साक्षात्कार किया जो उसके ग्रामीण परिवेश की कल्पना के परे की दुनिया थी। उसी समय उसे शहर की चरम दरिद्रता, वैराग्य और वैभव देखने का अवसर प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त उसे आदमी आदमी के बीच चलनेवाली हर तरह की प्रतियोगिता देखने को मिली—अर्थ की प्रतियोगिता, अनर्थ की प्रतियोगिता, अहंकार की प्रतियोगिता, सत्ता की प्रतियोगिता। यह सब देखकर सदीर ने सोचा—मैं यहां किस जगह चला आया, मेरे इर्द-गिर्द ये किस तरह के लोग हैं। हालांकि मेरी ही तरह से प्रत्येक को दो हाथ, दो पैर और एक सिर है और तमाम लोग इन्हें इंसान के रूप में ही जानते-पहचानते हैं।

यह सोचने लगा कि उसे क्या करना चाहिए, उसका क्या कर्तव्य है, उसका लक्ष्य क्या होना चाहिए। क्या करने से उसकी गणना मनुष्य के रूप में होगी? क्या करने से उसका जन्म सार्थक और सम्पूर्ण होगा? यह इन्हीं प्रश्नों की पड़ताल जीवन-भर करने लगा, खोजने लगा कि कहां उसका प्रारम्भ और कहां उसका अन्त है। आदि-अन्तहीन जो अनन्त है, उसका संधान उसे कहां और कैसे प्राप्त होगा?

और सम्पूर्णता?

किस पथ पर अग्रसर होने से वह सम्पूर्ण हो सकेगा? जब वह इस धरती को छोड़कर चला जाएगा तो क्या और-और लोगों की तरह ही इस संसार को धोखा देकर जाएगा? आदमी के निमित्त क्या तनिक भी सत्य और मंगल रखकर नहीं जा पाएगा? इस सामान्य देह—नश्वर देह—की परिचर्या कर ही जीवन जिएगा?"

उस दिन की चेतावनी के बावजूद संदीप सावधान नहीं हुआ था। लिहाजा उसके अंजाम के लिए वह खुद ही जिम्मेदार है। वरना जिस दिन कॉलेज की परीक्षा पास कर बाहर निकला, उसी दिन वह बिडन स्ट्रीट का मकान छोड़कर बेड़ापोता क्यों नहीं चला गया?

बेड़ापोता में काशीनाथ बाबू ने तो उसे शुरू में ही आश्वासन दिया था। बोले थे, "तुम सों पास करते ही मुझसे मिलना, मैं तुम्हारा सारा इन्तजाम कर दूंगा···"

फिर उसने काशीनाथ बाबू से मुलाकात क्यों नहीं की?

याद है, उन दिनों बिडन स्ट्रीट भवन में दुर्दिन का बेइन्तहा सिलसिला चल रहा था। मल्लिकजी भी बेहद चिन्तित थे। इतने दिनों के समस्त आयोजनों के नष्ट होने से चिन्ता होना स्वाभाविक ही है। अचानक एक दिन के दरमियान सारा कुछ उलटा-पुलटा हो गया। पूरे मकान में एक अजीब किस्म की अवस्था छा गई। नल से पानी गिर रहा है तो रुकने का नाम नहीं ले रहा है। मना करनेवाला कोई नहीं है। रघु बाजार से सरो-सामान खरीदकर ले आया है और रसोईघर के महाराज को दे आया है। लेकिन वह जरूरत से कम है या ज्यादा, यह देखनेवाला कोई नहीं है। मल्लिकजी को भी हिसाब मिलाने की फुर्सत नहीं है। उन्हें दादी मां तरह-तरह के काम से बाहर भेजती रहती हैं। अब उन्हें पहले की तरह फुर्सत नहीं मिलती। मल्लिकजी से मिलने के लिए आने वाले आकर लौट जाते हैं। एक दिन संदीप ने पूछा, "आप जब-तब कहां जाते रहते हैं?"

मल्लिक चाचा बोले, "क्यों?"

संदीप ने कहा, "बहुतेरे आदमी आपसे मिलने के लिए आए थे और लौटकर चले गए···"

"लौटने दो, उन्हें जरूरत होगी तो फिर आएंगे।"

बात तो सही है। इस घर की साख पर कभी किसी को शक नहीं हुआ था। आर्थिक निश्चयता ही इस परिवार की पूंजी है। उसकी बुनियाद में कभी दरार पड़ सकती है, इस तरह की दुश्चिन्ता होने की कभी कोई वारदात नहीं हुई है।

लेकिन गति के द्वारा निर्धारित नियम-कानून से इतिहास भी तो कभी-कभी सामयिक तौर पर पीछे हटता है। पीछे हटकर देख लेता है कि वह कितना आगे बढ़ा है।

उस बार भी वैसा ही हुआ था। फैक्टरी के हंगामे के साथ ही मुखर्जी परिवार में भी एक अनदेखे हंगामे की शुरुआत हो गई थी। सब नियमों के पालन की ओर किसी का ध्यान नहीं था। रोजमर्रा की बंधी-बंधायी सूची में और कई काम अलग से जुड़ गए थे। और उन तमाम कामों का बोझ बूढ़े मल्लिकजी के सिर पर पड़

गया था। वे अकेले आदमी हैं और उम्र के लिहाज़ से बूढ़े हो चुके हैं, इसका खयाल किसी को नहीं था। वे एक बार किसी काम से बाहर निकलते हैं और घर लौटकर किसी तरह दो कौर भात जल्दी-जल्दी निगलकर फिर किसी दूसरे काम से बाहर निकल जाते हैं।

एक दिन मौका मिलने पर सदीप ने मल्लिकजी से पूछा था, "आपको इतना कौन-सा काम रहता है मल्लिक चाचा? लगता है, आजकल आप बहुत ही व्यस्त हैं। कहां जाते रहते हैं?"

मल्लिकजी बदन पर कुरता डालकर बाहर निकल रहे थे। बात करने की फुर्सत नहीं थी उन्हें। बोले, "बहुत झंझट झमेले चल रहे हैं..."

"किस तरह की झंझट चाचाजी?"

"अरे, झंझट क्या एक ही है? कभी कुछ और कभी कुछ हुक्म मिलता है और परेशानी मुझे उठानी पड़ती है..."

"परेशानी क्या है चाचाजी?" संदीप ने पूछा।

मल्लिक चाचा बोले, "तो फिर तुम्हें बताता हूं,' किसी से कहना मत। बड़े लोगों की मति-गति का कोई ठिकाना नहीं। आज कुछ कहते हैं तो कल कुछ और। इतने दिनों से तपेश गांगुली की भतीजी के पीछे कितनी तरह के खर्च हो रहे थे, लेकिन अब दूसरा ही हुक्म मिला है..."

"क्या हुक्म मिला है?"

मल्लिक चाचा बोले, "मेरी परेशानी बढ़ गई है। यहां बालीगंज में कोई एक चटर्जी फैमिली है, उन लोगों के पास मुझे दौड़-धूप करनी पड़ती है—। कहां बिडन स्ट्रीट और कहां बालीगंज! इस बुढ़ापे में इतनी दौड़-धूप करना क्या मेरे बूते की बात है?"

"क्यों, वहां आप दौड़-धूप क्यों कर रहे हैं?"

मल्लिक चाचा बोले, "अपनी मर्जी से क्या दौड़-धूप करता हूं? ऊपर वाले के हुक्म से दौड़-धूप करनी पड़ती है। उन लोगों के घर की लड़की से सौम्य बाबू की शादी का रिश्ता तय किया जा रहा है।"

"यह क्या? विशाखा से सौम्य बाबू की शादी होने की बात पक्की हो चुकी ..।"

मल्लिक चाचा बोले, "जानते हो, कहावत है बड़ों की प्रीत बालू के बांध जैसी होती है। यह भी वैसी ही बात है। बात पक्की करने का अधिकारी क्या आदमी होता है? आदमी कुछ सोचता है और होता है कुछ और ही। इस उम्र में यह सब इतना देख चुका हूं कि अब चौंकता नहीं। मैं सब कुछ समझता हूं। लेकिन जिसके माथे को सांप ने डंस लिया है अब उसे कौन बचाएगा?"

संदीप मन ही मन बेचैन हो उठा। बोला, "लेकिन मैं उन्हें अपना मुंह कैसे दिखाऊंगा?"

"किन लोगों को?"

"रसेल स्ट्रीट की मौसीजी को?"

मल्लिक चाचा इस बात का क्या उत्तर दें! आखिर में बहुत सोचने के बाद बोले, "तुम कर ही क्या सकते हो? तुम तो हुक्म के बंदे हो। तुम और मैं एक

जैसे है। इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं। वे लोग कुछ पूछें तो बताना, तुम्हें कुछ मालूम नहीं।"

सदीप क्या कहे, समझ में नहीं आया। रसेल स्ट्रीट की मौसीजी वगैरह से उसका क्या सिर्फ मालिक और नौकर का रिश्ता है? और कुछ भी नहीं? उसे चूंकि माहवारी तनख्वाह मिलती है तो क्या वह तमाम जिम्मेदारियों से बरी हो गया? वह सिर्फ नौकर ही है, मालिक नहीं?

अचानक उसके ध्यान में आया कि मल्लिक चाचा कब घर से निकल अपने काम पर चले गए हैं, इसका उसे पता नहीं चला। सदीप वहां खड़े-खड़े अपने कर्तव्य और काम के बारे में सोचने लगा। अब क्या करना चाहिए? मौसीजी वगैरह सचमुच ही रसेल स्ट्रीट छोड़कर फिर से खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के किराये के मकान में चली जाएंगी?

मौसीजी बीच-बीच में पूछतीं, "तुम्हारा चेहरा बुझा-बुझा जैसा क्यों दिख रहा है बेटा? तुम्हारी तबीयत खराब है क्या?"

सदीप कहता, "नहीं।"

"बेहारोला से कोई खबर नहीं मिली है क्या? मा की चिट्ठी मिली है?"

"हां मिली है।"

"मां अच्छी है न?"

सदीप बस इतना ही कहता, "हां—"

सदीप इससे ज्यादा कुछ नहीं बोलता। जब कि सदीप पहले मौसीजी और विशाखा से कितना गपशप किया करता था! कितनी ठिठोलियां, कितने अभिनय! यह सब इतनी जल्द क्यों खत्म हो गया? हर महीने उसे वगैर पैसा खर्च किए खाना मिल रहा है तो उसका प्रतिदान करना उसके लिए उचित है और वह उतना-भर ही कर रहा है। उससे ज्यादा कुछ नहीं।

याद है, उस दिन वह कब सड़क पर निकला था, उसका पता उसे खुद भी नहीं था। ऐसा बहुत बार होता है। अनजाने ही सारा काम किए जाना। अपनी ओट में स्वयं को लेकर व्यस्त रहना।

लेकिन ऐसा क्यों होता है?

क्यों होता है, इसे जानने के लिए पहले स्वयं को जानना होगा। यह क्या इतना आसान है? स्वयं को वह पहचानता होता तो क्या इतनी मामूली घटना से विचलित होता! जो लोग सबके बीच स्वयं को देखते हैं और स्वयं के बीच सबको देखते हैं, उन्हीं लोगों के द्वारा ऐसी गलती होना संभव है।

एक जुलूस की आवाज कान में आते ही वह यथार्थ की दुनिया में लौट आया। कुछ लोग सब चिल्ला-चिल्लाकर बोल रहे थे—"बोल हरि, हरि बोल—"

यह आवाज सुनते ही वह सड़क के एक किनारे हटकर चला आया। कुछेक युवक किसी का शव लेकर जा रहे हैं। सदीप ने देखा, पैंट पहने हुए युवकों ने मुर्दे को सड़क पर रख दिया। शायद वे लोग थक गए हैं, जरा आराम करेंगे। सदीप ने उस ओर देखा और दोनों हाथों को जोड़कर मृत्यु को प्रणाम निवेदित

किया। यही मृत्यु है ! मरे हुए आदमी की आंखों पर चश्मा है। चश्मा लगा हुआ क्यों है ? संदीप समझ नहीं सका कि आंखों पर चश्मा क्यों लगा हुआ है। वह आदमी सारा कुछ पीछे छोड़कर जा रहा है तो फिर आंखों पर चश्मा क्यों लगा हुआ है ! तो क्या मृत्यु के बाद आदमी की दृष्टि-शक्ति दुबारा लौट आती है ? मुरदे की ओर ताकते-ताकते संदीप को अपने पिता की याद आ गई। उसके पिताजी चश्मा लगाते थे, मगर उनके शव के साथ चश्मा नहीं ले जाया गया था। मां ने रख लिया था। मरने के दौरान उसके पिताजी इस चश्मे के अलावा कुछ रखकर नहीं जा सके थे। उनकी स्मृति के रूप में ही मां ने उसे रख लिया था। स्मृति-चिह्न के अतिरिक्त उसका कोई मूल्य भी नहीं था। मां बोली थी, "उसे मैंने रख लिया है, उनकी कोई निशानी तो रही नहीं। कोई फोटो रहता तो मैं उसे नहीं रखती।"

बात तो सच है। उस चश्मे के अलावा मां का कोई अवलंबन भी नहीं था।

संदीप ने अपने पिता को नहीं देखा था पर उनके चश्मे को देखा है। इतने दिनों के बाद उस मुरदे की ओर देखने पर उसे सबसे पहले अपने पिता की ही याद आई। यह मृत्यु है ! आदमी की यही परिणति है ! इसी के लिए आदमी में इतनी माया-ममता, ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा, मामला-मुकदमे, अहंकार और रौब का बोलबाला रहता है ! संदीप के पिताजी एक दिन विदा हो चुके हैं, उसके दादा भी एक दिन विदा हो गए हैं। इसी तरह कितने ही आदमी आए हैं और विदा हो चुके हैं। इसके बाद भी कितने ही आदमी इस दुनिया में आएंगे और विदा हो जाएंगे। उन लोगों के आने-जाने का प्रवाह कहीं कोई स्थायी चिह्न रखकर नहीं जा पाएगा। ज्यादा से ज्यादा अपने छोड़े हुए जूते या चश्मा या कपड़े-लत्ते को अपने पास रख अपनी स्मृति को अक्षय-अमर बनाने की कोशिश करेंगे। लेकिन वह भी कितने दिनों तक ? उसके बाद ? उसके बाद क्या होगा ?

"बोल हरि, हरि बोल—"

उस गतिशील जन-प्रवाह में मुरदे ढोने वालों की आवाज़ पुनः हरि-ध्वनि से मुखर हो उठी। अब तक जो लोग मुरदे को अपने कन्धों पर ढो रहे थे उनके बदले अब एक-दूसरे दल ने अपने कन्धे पर उठा लिया है।

संदीप ने गौर किया, पहले के दल के एक युवक ने बगल की एक दुकान से एक सिगरेट खरीदकर उसे दियासलाई से सुलगाया। उसके बाद पैंट के पॉकेट से एक कंघी निकाल अपने बालों को सहेजने लगा।

एक साक्षात् मृत्यु के सामने बालों में कंघी करने के साथ ही अपने चेहरे के चाक-चिक्य पर वह युवक कैसे एकाग्र हो पा रहा है, संदीप इसी को अचकचाकर देखने लगा। ये लोग भी आदमी ही हैं। इन्हें भी हम आदमी ही समझते हैं। इन लोगों को भी एक-एक वोट देने का अधिकार है !

युवक की ओर ताकते-ताकते संदीप शायद थोड़ा-बहुत अन्यमनस्क हो गया था। और थोड़ी-सी देर हो जाती तो एक गाड़ी के नीचे दब जाता। जरा-सा के लिए बच गया।

लेकिन पीछे की तरफ देखकर वह अवाक् हो गया। अरविन्द ! अरविन्द गाड़ी चला रहा है ! और पीछे की सीट में ?

"यह क्या ? तुम इस तरह क्या देख रहे थे ?"

"तुम ? तुम यहां अचानक ?"

विशाखा को देखकर संदीप अचकचा गया। विशाखा स्कूल की छुट्टी के बाद घर लौट रही है।

गाड़ी का दरवाजा खोल विशाखा ने पुकारा, "आओ-आओ, अन्दर चले आओ—"

संदीप जैसे ही अन्दर जाकर बैठा कि अरविन्द ने गाड़ी चालू कर दी।

विशाखा ने कहा, "और जरा-सी देर हो जाती तो तुम दब जाते। इतने ध्यान से क्या देख रहे थे ?"

संदीप ने कहा, "तुमने नहीं देखा ?"

"क्या ?"

संदीप ने कहा, "यह नहीं देखा कि एक युवक ने एक मुरदे को मसान ले जाने के दौरान क्या किया ?"

"क्या किया ?"

संदीप ने कहा, "उस पान की दुकान के आईने में अपना चेहरा देखने लगा और पॉकेट से एक कंघी निकाल अपने बाल सवारने लगा···"

विशाखा ने कहा, "तुम यही देख रहे थे ?"

संदीप ने कहा, "यह क्या देखने लायक नजारा नहीं है ?"

"वाह, उसमें देखने लायक क्या चीज है ?"

संदीप ने कहा, "क्या कह रही हो तुम। देखने लायक नहीं है ? सामने मौत देखकर भी आदमी इस कदर हैवान हो जाए कि उस हालत में आईने के सामने खड़े होकर अपने बालों की खूबसूरती देखे ? इससे बढ़कर क्या अपराध हो सकता है, इसकी मैं कल्पना भी नहीं कर पाता।"

विशाखा बोली, "लगता है, तुम एक पेसिमिस्ट हो—"

संदीप ने हंसते हुए कहा, "देख रहा हूं, तुम्हें अन्टी मेमसाहब खासी अच्छी अंग्रेजी की तालीम दे रही है—"

विशाखा ने कहा, "अच्छी अंग्रेजी सीखे बगैर काम कैसे चलेगा, तुम्हीं बताओ ? तुमने तो कहा है, एक दिन मुझे मिस्टर मुखर्जी के साथ कॉन्टिनेंट का चक्कर लगाना होगा। तब अच्छी अंग्रेजी न बोल पाऊंगी तो निंदा होगी—होगी नहीं ?"

संदीप ने यह सुनकर हंसने की कोशिश की पर हंस नहीं सका। एकाएक उसे मल्लिक चाचा की बात याद आ गई। मल्लिक चाचा ने उस दिन कहा था, "तुम कर ही क्या सकते हो ? तुम और मैं दोनों जने हुक्म के बंदे हैं। वे लोग अगर तुमसे कुछ पूछें तो बताना कि तुम्हें कुछ मालूम नहीं। इसी तरह की भंगिमा करना—"

विशाखा ने कहा, "क्या हुआ ? क्या सोच रहे हो ?"

"न, कुछ भी नहीं।"

विशाखा तनिक और खिसक आई और बोली, "बताओ न संदीप, तुम क्या सोच रहे हो ? तुम अब भी क्या उस 'डेड बॉडी' के बारे में सोच रहे हो ? एक दिन सबको मरना ही है, यह सोचकर क्या अभी से दहाड़ मारकर रोना शुरू

कर दें ?"

संदीप बोला, "मुझे लेकिन हरवक्त उसी बात की याद आती है—"

"किस बात की ?"

"अपने बचपन में मैंने बेड़ापोता में एक यात्रा देखी थी। यात्रा का नाम था 'विल्वमंगल'। तुमने देखी है ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं।"

"उस यात्रा में विल्वमंगल एक आदमी का डेडबॉडी देखकर कह रहा था—

यह नरदेह
वह जाता जल में
नोच-नोच कर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह
उड़ाता इसे पवन है—"

कविता के इस अंश की आवृत्ति रोककर संदीप बोला, "उस दिन यह बात मुझे इतनी अच्छी लगी थी कि कभी भूल नहीं पाता। हमेशा याद रहती है। मैं जब भी कहीं कोई अय्याशी देखता हूं तो लगता है सारा कुछ धोखा-धड़ी है। हम सभी इस शरीर के लिए कितने ही कारनामे करते हैं, इस शरीर के लिए ही हम जीवन-भर व्यस्त रहते हैं, लेकिन यह शरीर ही क्या हम लोगों के लिए सारा कुछ है ?"

विशाखा बोली, "अरे, शरीर ही सब कुछ नहीं है तो और क्या है ? और क्या लेकर व्यस्त रहेंगे ?"

संदीप बोला, "शरीर तो एक दिन श्मशान जाकर जलकर राख में बदल जाएगा, लेकिन दुनिया में और भी तो ऐसी बहुत सारी चीज़ें हैं जो न तो आग से जलकर खाक होतीं और न ही मृत्यु के साथ समाप्त होती हैं।"

विशाखा बोली, "अरे, तुम रात-दिन यही सब सोचा करते हो ?"

संदीप बोला, "हां, सोचता हूं। क्यों, यह सब सोचना क्या बुरा है ?"

विशाखा बोली, "इससे तो बेहतर यही है कि तुम शादी कर लो। शादी न करने से तुम्हारे जेहन में यही सब खयाल आता रहेगा। सोच-सोचकर हो सकता है तुम पागल हो जाओ। सच संदीप, तुम शादी कर लो—"

संदीप बोला, "धत्त ! मुझ जैसे गरीब लड़के से अपनी लड़की की कौन शादी करने को तैयार होगा ?"

"गरीब लड़के की शादी नहीं होती है ? मैं भी तो गरीब हूं। मुझसे तुम्हारे मुखर्जी भवन के लड़के की शादी क्यों होने जा रही है ?"

संदीप बोला, "तुम्हारी बात जुदा है।"

"क्यों ? जुदा क्यों ?"

संदीप बोला, "तुम्हारे पास भले ही रुपया-पैसा न हो लेकिन तुम खूबसूरत हो। रुपये की कमी की पूर्ति सुन्दरता ने कर दी है।"

"मैं खूबसूरत हूं ? क्या कह रहे हो तुम !"

संदीप बोला, "खूबसूरत न होती तो दादी मां कलकत्ता में इतनी लड़कियों के रहने के बावजूद तुम्हें ही क्यों पसन्द करती ? कलकत्ता में क्या और कोई

सकती नहीं थी ?"

"मैं खूबसूरत हूं तो तुम्हें रश्क क्यों नहीं होता ! मुझसे सौम्य मुखर्जी शादी होने जा रही है, इसकी वजह से तुम्हें तो रश्क होना चाहिए था।"

सदीप बोला, "कहा मैं और कहा सौम्य मुखर्जी ! उनसे मेरी कोई तुलना सकती है ?"

विशाखा बोली, "बन्दर को भी तो कभी-कभी मोतियों की माला पहनने इच्छा होती है—"

"मैं उस तरह का बन्दर नहीं हूं—"

विशाखा सदीप के चेहरे की ओर ताककर गम्भीर हो गई। बोली, " गुस्सा गए ?"

सदीप बोला, "अब चुप हो जाओ, तुम लोगों का घर आ गया है—"

अरविन्द ने घर के सामने जैसे ही गाड़ी रोकी, दोनों गाड़ी से नीचे उतर प

उसके बाद सीढ़िया चढ़ने के दौरान सदीप बोला, "तुम अरविन्द के सा यह सब क्यों बोल रही थी ? जानती नहीं कि वह बगला समझ सकता है। क्या सोचेगा, बताओ तो—"

विशाखा बोली, "सोचेगा तो मेरी बला से ! जो सच है, वही कहा है मैंने-

"कौन-सी सच बात थी ?"

विशाखा बोली, "यही कि सौम्य बाबू से मेरी जो शादी होने वाली है इ तुम्हें रश्क हो रहा है। यह क्या झूठी बात है ?"

सदीप ने कहा, "तुम्हें ठीक-ठीक मालूम है कि सौम्य बाबू से तुम्हारी श होने जा रही है ?"

"क्या कह रहे हो तुम ! शादी तो होनी ही है। शादी तय न हो गई होती सौम्य बाबू मेरे स्कूल में जाकर मुझसे इतनी बार मिलते ? शादी न तय हुई हो तो मुझे स्कूल पहुचा देने और स्कूल से लाने के लिए उस मकान से गाड़ी जाती ?"

"न, मेरे कहने का मतलब है कभी-कभी शादी के मडप से भी तो दू उठकर चला जाता है।"

विशाखा बोली, "तुम क्या इसी आनन्द में हो ?"

"आनन्द में नहीं, मैं इसके विपरीत पहलू पर भी सोचता हूं—"

विशाखा बोली,"मैं समझ गई, तुम मन ही मन यही चाहते हो कि शादी यह रिश्ता टूट जाए।"

उसके बाद सदर दरवाजे के पास आते ही विशाखा कॉलिंग बेल बजाने ल

मौसीजी सम्भवत: विशाखा का ही इन्तजार कर रही थी। दरवाजा खो ही विशाखा बोली, "यह देखो मां, किसे ले आई हू।"

मौसीजी विशाखा को देखकर अवाक् हो गई। विशाखा बोली, "जानती मां, सड़क पर सदीप एक मुरदे की तरफ मुह बाए ताक रहा था। मैंने देखा गाड़ी पर बिठाकर ले आई।"

मौसीजी बोली, "बहुत ही अच्छा किया।"

उसके बाद सदीप की तरफ देखकर बोली, "तुम मुरदे की ओर क्यों ताक

थे बेटा ? तुम्हारा क्या कोई रिश्तेदार था ?"

इसका जवाब दिया विशाखा ने। बोली, "क्या कह रहा था, जानती हो ? कह रहा था, सबकी आखिर में यही परिणति होती है।"

उसके बाद जरा चुप रहने के बाद फिर बोली, "इसके अलावा यह कह रहा था कि सौम्य से अगर मेरी शादी नहीं होगी तो फिर क्या होगा ? कभी-कभी शादी के मंडप से भी दूल्हा उठकर चला जाता है—"

मौसीजी ठगी-सी रह गई। बोली, "यह कैसी मनहूस बात है बेटी ! क्यों बेटा, तुमने यह कहा था ?"

इतनी देर बाद संदीप के मुंह से आवाज़ निकली, "नहीं मौसीजी, एक आदमी के मर जाने से मेरा मन उदास हो गया था। मैं आकाश-पाताल सोचने लगा था। सोचा, सभी को एक न एक दिन इसी तरह विदा हो जाना पड़ेगा। उस समय मुझे अपने पिताजी की भी याद आने लगी थी। तभी दूसरी तरफ देखा, उस दल का एक युवक आईने के सामने खड़ा होकर बालों पर कंघी कर रहा है। बताइए तो मौसीजी, ऐसे में किसी को अपने चेहरे का खयाल आता है ? आप ही बताइए ?"

मौसीजी बोली, "नहीं-नहीं, वह सब नहीं देखना चाहिए बेटा। वह सब सोचना भी नहीं चाहिए।"

यह कहते-कहते मौसीजी की आंखें आंसुओं से भीग गई। पल्लू से आंखें पोंछती हुई बोली, "वह सब बात अभी रहने दो बेटा, तुम दूसरी बात बताओ। उस घर का सब समाचार ठीक है तो ? तुम्हारी दादी मां को विलायत से अपने पोते का पत्र मिला है ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

"उन लोगों का कारखाना अब ठीक से चल रहा है ?"

संदीप ने अबकी भी कहा, "हां—"

मौसीजी बोली, "मैं दुख की मारी हूं। कोई आशंका होती है तो भय से सिहर उठती हूं। जिन्दगी में मुझे घोर विपत्ति का सामना करना पड़ा है। विशाखा के पिता की मृत्यु के बाद मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि इतने दिनों तक जीवित रहूंगी और मेरी पितृहीन लड़की को इतना सुख मिलेगा, उसकी इतने बड़े आदमी के घर में शादी होगी—"

यह कहकर मौसीजी ने दुबारा पल्लू से अपनी आंखें पोंछीं।

इस बीच विशाखा साड़ी और ब्लाउज बदलने के खयाल से अपने कमरे के अन्दर जा चुकी है। मौसीजी अचानक संदीप के सामने चली आई। आहिस्ता से कहा, "तुम सच-सच कह रहे हो न बेटा, कोई बुरी खबर नहीं है तो ?"

संदीप ने कहा, "नहीं मौसीजी—"

मौसीजी ने पहले की तरह ही धीमी आवाज़ में कहा, "मेरा दामाद विलायत में सकुशल है तो ? चिट्ठी ठीक वक्त पर आया करती है ? मुझसे छिपाना मत बेटा, सच-सच बताना—"

संदीप ने कहा, "मैं सच कह रहा हूं मौसीजी, सारा समाचार ठीक है।"

लगा, मौसीजी खुश नहीं हुई। उसी तरह धीमे स्वर में कहा, "फिर तुमने विशाखा से वैसा क्यों कहा ? मंडप से दूल्हे के उठकर चले जाने की बात का जिक्र

क्यों किया ?"

सदीप बोला, "विशाखा को मुझे चिढ़ाने में अच्छा लगता है मौसीजी। उसे चिढ़ाने के इरादे से ही कहा था—"

मौसीजी ने कहा, "नहीं बेटा, इस तरह की मनहूस बातें मुंह से मत निकाला करो। ऐसा सोचने से ही मेरी छाती धड़कने लगती है—"

"अच्छा-अच्छा मौसीजी, मैं अब कभी उस तरह की बात नहीं कहूंगा—"

यह कहकर सदीप ने मौसीजी के पैर छूकर क्षमा मांगी और बोला, "मुझे माफ कर दिया न मौसीजी ?"

मौसीजी ने दाहिने हाथ से सदीप की ठोढ़ी पकड़कर उसे चूमा। बोली, "मुझे लड़का नहीं है बेटा, इसलिए तुम्हीं मेरे लड़के के बराबर हो। लड़का चाहे कितनी ही गलती क्यों न करे, लेकिन मां क्या उसे बगैर प्यार किए रह सकती है ?"

सदीप तब स्वयं को संयत नहीं रख सका। तत्काल मौसीजी के पैरों पर मुंह के बल लेटकर रोने लगा।

मौसीजी सदीप को पकड़ उसे खड़ा करने की कोशिश करने लगी। बोली, "यह क्या बेटा, यह क्या कर रहे हो ?"

सदीप उठकर खड़ा हो गया। लेकिन तब उसकी आंखों से अनवरत आंसू की बूंदें टपक रही थीं। इस बीच बगल के कमरे से विशाखा भी बाहर चली आई और यह दृश्य देखकर दंग रह गई। बोली, "यह क्या, सदीप रो क्यों रहा है ? सदीप को क्या हुआ है ?"

इस बात का मौसीजी कुछ जवाब दें कि इसके पहले ही सदीप बाहर निकलने के दरवाजे से दनादन उतरता हुआ एकबारगी सड़क पर चला आया और एक लम्बी सांस ली। उसे लगा कि मौसीजी से झूठी बात कहकर उसने अपने आपको छला है। लेकिन झूठ बोलने के सिवा उपाय ही क्या था ? मल्लिक चाचा ने झूठ बोलने का ही उसे उपदेश दिया था। किन्हीं चटर्जी बाबुओं के घर की लड़की से चूंकि सौम्य बाबू की शादी की बातचीत चल रही है तो जाहिर है विशाखा के जीवन में विपत्ति की घनी घटा घिर रही है। अतः वह किस पहलू को प्राथमिकता दे ? किसके स्वार्थ का वह ख्याल रखे ? अपनी नौकरी का या विशाखा के सुख का ? उसके लिए इन दोनों में से कौन अधिक महत्त्वपूर्ण है ? उसकी निगाह में किसे महत्त्वपूर्ण होना चाहिए ?

याद है, खुद से हजारों बार सवाल करने के बावजूद सदीप को इसका उत्तर नहीं मिला था।

आज इतने दिनों के बाद लग रहा है, सच्चाई को यदि झूठ की जिल्द से मढ़ दिया जाए तो इससे न केवल सच्चाई की प्रताड़ना होती है, बल्कि वह झूठ एक वजनदार पत्थर की तरह दुगुने वेग से आघात करता है।

उस दिन सदीप को भी वैसा ही महसूस हुआ था। सड़क से गुजरने के दौरान उसे बेहद बेचैनी और छटपटाहट का अहसास हुआ था। अन्ततः उसने यह सोचकर खुद को सान्त्वना दी थी कि जिन लोगों के लिए वह इतनी दुश्चिन्ता कर रहा है,

वे जब कि उसके सगे-संबंधी नहीं हैं तो फिर वह इतनी यातना क्यों झेल रहा है ? इससे तो बेहतर यह है कि वह अपनी मां के बारे में सोचे, जो उसके लिए सब कुछ है। अपनी मां से बढ़कर उसके लिए अपना और कौन है ? मां अच्छी तरह है, यही तो उसके लिए सबसे बड़ी खुशी की खबर है। सबसे बड़ी सांत्वना की बात है। अतः न तो उसे कोई दुख है और न ही कोई कष्ट। आज से वह किसी के बारे में नहीं सोचेगा, किसी के सुख-दुख के लिए माथा-पच्ची नहीं करेगा। वह किसी अच्छी नौकरी की तलाश में है और उसी की तलाश में ही लगा रहेगा। अब वह किसी तरफ या किसी की तरफ मुड़कर नहीं ताकेगा।

कुछ दिन पहले उसने एक नौकरी के लिए आवेदन-पत्र भेजा था। वह बैंक की नौकरी थी।

इसकी सूचना सुशील ने दी थी। सुशील सरकार ने।

सुशील ने कहा था, "दरख्वास्त भेजने में दोष ही क्या है ! मैं तो हर दिन अखबार देखकर एक-दो आवेदन-पत्र भेज दिया करता हूं। तीर निशाने पर लगे तो ठीक और न लगे तो भी कोई हर्ज नहीं। असल में कोशिश करने में दोष ही क्या है ? उसके बाद तकदीर में जो है, वही होगा—"

संदीप ने कहा था, "लेकिन मुझे नौकरी कैसे मिलेगी ? मैं किसी पार्टी का मेम्बर नहीं हूं।"

सुशील ने कहा, "अरे, मैं कितनी ही पार्टियों का मेम्बर बना और कितनी ही पार्टियों के मेम्बरशिप से इस्तीफा दे चुका हूं, लेकिन फिर भी मुझे नौकरी क्यों नहीं मिल रही है ? असल में कोशिश करने में दोष ही क्या है ? उसके बाद भाग्य में जो है वही होगा—"

संदीप को सुशील की बात सुनकर आश्चर्य हुआ था। बोला, "आप लोग भी भाग्य पर विश्वास करते हैं ?"

"भाग्य पर विश्वास क्यों नहीं करूंगा ? आप यह क्या कह रहे हैं ! भाग्य ही तो सब कुछ है। सिर्फ मैं ही भाग्य पर विश्वास नहीं करता, हम लोगों की पार्टी के सभी लीडर भाग्य पर विश्वास करते हैं। उनमें से बहुतेरे लोग हाथ में तावीज पहनते हैं, ज्योतिषियों के पास जाकर अपना-अपना हाथ दिखाते हैं…"

"आप यह क्या कह रहे हैं ! ज्योतिषियों की बात सच साबित होती है ?"

सुशील ने कहा, "ज्योतिषियों के लिए यह भी एक पेशा ही है। बीमार पड़ने से आदमी जिस तरह डॉक्टर के पास जाता है, मुकदमा दायर होने पर जिस तरह वकीलों-बैरिस्टरों के पास जाता है, उसी तरह मुसीबत में फंसने पर लोग ज्योतिषियों के पास जाते हैं। इसमें दोष की कोई बात नहीं—"

संदीप ने आश्चर्य के साथ पूछा, "आप सच कह रहे हैं ? मुझे तो विश्वास ही नहीं हो रहा है—"

"अरे, तो फिर मुझसे सुनिए। मैं एक बार अपनी पार्टी के एक लीडर के घर गया था, वे हमेशा कहा करते थे, भगवान-वगवान कुछ नहीं है, वह सब बोगस चीज है। एकमात्र पौरुष ही आदमी को महान बनाता है। हम सोचते, हो सकता है, यही सच हो। लेकिन उस दिन वे घर पर बनियान पहने हुए थे। मैं उस वक्त उनके घर पहुंच जाऊंगा, उन्होंने यह सोचा नहीं था। सो उसी दिन मेरी निगाह

पड़ी कि उनके एक हाथ में तावीज़ है। उसी दिन मैं समझ गया कि लीडर जो कुछ कहते हैं वह धोखाधड़ी है। वे लोग सभी मक्कार हैं—"

"तो आप अब भी पार्टी में क्यों हैं?"

सुशील बोला, "बस सिर्फ़ नौकरी के लिए—पार्टी के हाथ में जब सत्ता आएगी तो सबसे पहले हमीं लोगों को नौकरी मिलेगी—"

सुशील से यह सब बात बहुत बार हो चुकी थी। सुशील ने तभी कहा था, "दरख्वास्त भेजने में आपको आपत्ति क्यों है? उसके बाद भाग्य में जो होगा, वही होगा—"

शुरुआत इसी तरह हुई थी। ऐन मौके पर बैंक की एक नौकरी के लिए आवेदन-पत्र भी भेज दिया था। यह बहुत दिन पहले की बात है। सदीप ने तो इसे कोई महत्त्व नहीं दिया था। लेकिन सचमुच ही उसके आवेदन-पत्र का उत्तर आ जाएगा, यह नहीं सोचा था।

इस आवेदन-पत्र के उत्तर में एक पत्र आया।

याद है, शुरू में उसे इसका कोई पता नहीं था। पर लौटकर आने पर देखा, राजकीय समारोह जैसा दृश्य है। घर के सामने बहुत सारी विलायती गाड़ियां खड़ी हैं। एकाएक इस मकान के सामने इतनी सारी गाड़ियां क्यों खड़ी हैं? तो क्या मझले बाबू आए हैं? लेकिन मझले बाबू की गाड़ी को वह पहचानता है। हरेक गाड़ी नई है और झकाझक चमक रही है। हरेक गाड़ी का ड्राइवर चटकदार लिबास में है। ये लोग कौन हैं?

गिरिधारी गेट के सामने अटेंशन की मुद्रा में खड़ा था। सदीप ने उसी से पूछा, "ये गाड़ियां किन लोगों की हैं गिरिधारी? इस घर में कौन आए हैं? मझले बाबू के दोस्त-मित्र?"

गिरिधारी बोला, "जी हां, साहब के दोस्त-मित्र···"

अन्दर जाने पर बात थोड़ी-बहुत स्पष्ट हुई। मल्लिक चाचा ने ऊपर से नीचे आकर कमरे का ताला खोला। हाथ में कोई सामान ले फिर से ऊपर की तरफ़ जाने लगे। उसी वक्त सदीप पर नज़र जाते ही बोले, "तुम्हारा एक पत्र है। लौटकर आने पर दूंगा।"

यह कहकर सीढ़ियां चढ़ ऊपर जाने के लिए मुड़े।

सदीप ने पूछा, "घर में कौन-कौन आए हैं चाचाजी?"

मल्लिक चाचा को सब बात करने की फ़ुर्सत नहीं थी। जाते-जाते इतना ही कहा, "बालीगंज के चटर्जी वगैरह।"

उसके बाद बोले, "बैठ जाओ, मैं काम ख़त्म कर अभी-अभी आया—"

यह कहकर जो गए तो फिर आने का नाम ही नहीं लिया। सदीप अकेले ही अपने कमरे में बैठा रहा। उसे किसने पत्र भेजा है? सोचकर किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सका। एक मां के अलावा उसे पत्र भेजने वाला कोई दूसरा नहीं है। लेकिन मां का पत्र तो एक दिन पहले ही मिल चुका है। मां उसके पास फिर क्या इतनी जल्दी पत्र भेजेगी?

आदमी जब ख़ुद को लेकर अपने आपमें व्यस्त रहता है तो भाग्य-विधाता शायद आड़ में बैठकर कोई मनसूबा बांधता है। कब के कितने प्रकार के रजों का

पेचीदा हिसाव भाग्य-विधाता के पक्के खाते में लिखा रहता है, इसकी कोई इयत्ता नहीं। उसके जमा-खर्च की हर तरह की संख्या को देखकर वह आदमी का सूक्ष्मतम न्याय करता है। उसका भाग्य-विधाता बीच-बीच में उसे सावधान भी कर देता है। कहता है, "अरे, सावधान हो जा, बिलकुल सावधान—"

जो लोग यह चेतावनी सुन पाते हैं वे सावधान हो जाते हैं और जो सुन नहीं पाते, वे संदीप की तरह बर्बादी के खड्ड में गिरकर समाप्त हो जाते हैं।

संदीप जो आज इस हालत में पहुंचा है, इसका कारण क्या यह नहीं कि उसने भाग्य-विधाता की चेतावनी अनसुनी कर दी थी।

लेकिन यह बहुत बाद की बात है। उसके पहले की भी बहुत-सारी बात कहने को बाकी है। लिहाजा बालीगंज के चटर्जी बाबुओं की कहानी का यहां उल्लेख कर रहा हूं।

अतुल चटर्जी के पुरखों के वंश-वृक्ष की छानवीन करने पर पता चलेगा कि किसी ज़माने में फरीदपुर या पावना जिले के एक साधारण गांव के किसी एक अति-साधारण आदमी ने खुले आसमान के नीचे जन्म लेकर इस धरती को अभिशाप दिया था। और अभिशाप दिया था निराहार रहने के कारण, आश्रयहीनता, अशिक्षा और दुरवस्था के कारण।

लेकिन मनुष्य के विधाता-पुरुष यह सब सुनने के अभ्यस्त रहे हैं। इससे उनका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। इसीलिए उन्होंने इसका कोई प्रतिवाद नहीं किया था। अतुल चटर्जी के भाग्य-विधाता पहले जिस प्रकार निर्विकार थे, उसी प्रकार निर्विकार रहे। गांव की चारदीवारी के अन्दर अतुल चटर्जी के पुरखे पीढ़ी-दर-पीढ़ी गरीबी, आश्रयहीनता, अशिक्षा और दुरवस्था की पीड़ा से अभिशप्त जीवन व्यतीत करते रहे।

ठीक उसी समय एक घोर संकट का आगमन हुआ। किसी साजिश से भारत दो टुकड़ों में बंट गया, उसका वृत्तांत यहां अवान्तर है। यहां सिर्फ इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि इस संकट में फंसकर अतुल चटर्जी भी और-और लोगों की तरह सपरिवार इस शहर के एक छोर पर आकर पछाड़ खाकर गिर पड़े। उस समय उनके पास न तो सिर टिकाने के लिए कोई स्थान था और न ही जीवन-निर्वाह के लिए कोई बंधी-बंधायी आमदनी। किसी तरह तीन-चार सदस्यों का पेट भरने लायक जीविका के लिए वे संघर्ष के मैदान में कूद पड़े। उसके बाद एक दिन अचानक यह मौका भी उन्हें हासिल हो गया।

इसी कलकत्ता में एक संपन्न व्यक्ति का पुत्र किसी काम में जी-जान से लग-कर उन्नति करने के प्रयास में था। लेकिन किसी भी हालत में उसकी कोशिशें कामयाब नहीं हो पा रही थीं। रुपया उसके पास अगाध था परन्तु बुद्धि नहीं थी। सिर्फ तेल रहने से ही दीया नहीं जलता, उसके लिए अनुकूल आबोहवा की भी आवश्यकता पड़ती है। वरना आंधी-पानी से दीया बुझ जाता है।

उस समय उसे वह अनुकूल आबोहवा मिल गई। अतुल चटर्जी के अन्दर उस अनुकूल आबोहवा को पाकर उसने कृतार्थता का अनुभव किया। आज के ये अतुल

चटर्जी ही अनुकूल आबोहवा बनकर उनके निकट जाकर खड़े हुए। और तभी से उन दोनों की सम्मिलित जय-यात्रा का आरंभ हुआ।

मुक्तिपद मुखर्जी की अतुल चटर्जी से पहली मुलाकात मिड्ल ईस्ट के एक पांच सितारा होटल में हुई थी। अतुल चटर्जी का जीवन-वृत्तांत सुनने के दौरान वे इस आदमी को मुग्ध और विस्मय-भरी दृष्टि से देख रहे थे। सारी कहानी सुनने के बाद मुक्तिपद ने पूछा, "आपकी फैक्टरी में लेबर-ट्रबल नहीं होता क्या?"

अतुल चटर्जी ने गर्व के साथ बताया, "नहीं।"

मुक्तिपद बोले, "यह कैसे संभव हुआ?"

अतुल चटर्जी बोले, "मेरा बड़ा लड़का एक नामी लेबर-लीडर है। अपने बड़े लड़के को इसी वजह से मैंने लेबर-लीडर बना दिया है।"

यह सुनकर मुक्तिपद को लगा कि उन्हें अपने संकट से उबरने के लिए जैसे एक रास्ता मिल गया हो। यह बात भी उनके दिमाग में मंडराती रही। अतुल चटर्जी के दो ही सन्तान हैं। बड़ा लड़का लेबर-लीडर है, छोटी सन्तान एक लड़की है। वह एम० ए० में पढ़ रही है। इसलिए सौम्य से उसकी शादी कराने से जिस प्रकार उनकी संपत्ति का एक हिस्सा पाने की संभावना है उसी प्रकार सगे-सम्बन्धी के नाते श्रमिक-संकट से हमेशा के लिए छुटकारा पाने की भी संभावना है।

ऐसा अवसर हर रोज नहीं आता और हो सकता है भविष्य में भी न आए।

इसके बहुत दिन बाद इस बात की चर्चा करते ही अतुल चटर्जी सहर्ष तैयार हो गए। इस पर भी मां ने कोई जवाब नहीं दिया।

मां ने पहले से ही एक अज्ञात वंश की लड़की से शादी कराने का हर प्रकार का पक्का बंदोबस्त कर लिया है।

फिर भी देर होने के बावजूद मां जो इस पात्री को देखने को सहमत हो गई है यही काफी है। मां ने पूछा था, "पात्री कैसी है?"

मुक्तिपद ने कहा था, "तुम्हें तो बता ही चुका हूं मां, कि लड़की एम० ए० पास है।"

"एम० ए० की डिग्री क्या मैं धोकर पियूंगी? मैंने कौन-सी परीक्षा पास की है?"

मुक्तिपद ने कहा था, "मेरे कहने का मतलब यह है कि तुम्हारी खिदिरपुर की पात्री से यह बेहतर है।"

उस पर भी मां ने जब जवाब नहीं दिया तो मुक्तिपद ने कहा था, "तुम एक बार उस लड़की को देख लो—शादी चाहे हो या न हो, देखने में क्या दोष है?"

मां ने कहा था, "मैं उन लोगों के घर लड़की देखने जाऊंगी? तू यह क्या कह रहा है?"

मुक्तिपद ने कहा था, "उन लोगों के घर के बदले कहीं दूसरी जगह भी जाकर लड़की को देख ले सकती हो। पहलेवाली पात्री को देखने के लिए तुम तो गंगा-घाट गई थीं, इस पात्री को भी तुम गंगा-घाट पर ही जाकर देख ले सकती हो। मैं इसका भी बंदोबस्त कर सकता हूं—"

इसके बाद मुक्तिपद ने कहा था, "और अगर इस पर भी राजी न हो तो पात्री का पिता अपनी लड़की को लेकर इस घर में आ सकता है। इसमें तुम्हें कोई

एतराज है?" नहीं। इसमें मां को कोई एतराज नहीं था। आखिर में मल्लिकजी को इसके चलते कई वार पात्री के मकान पर जाना पड़ा था। मुक्तिपद की ख्वाहिश थी, जल्दी-से-जल्दी यदि शादी का शुरूआती दौर मसला तय हो जाए तो सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी श्रमिक-संकट से उवर जाए।

दिन और समय पहले से ही तय हो गया था और इसीलिए पात्री के पिता और भाई लड़की को लेकर इस घर में आए हुए थे। घर में अतुल चटर्जी ने शुरू में ही मां के पैर छूकर प्रणाम किया।

दादी मां बोलीं, "रहने दो बेटा, पैर छूने की ज़रूरत नहीं—"

लेकिन यह कहने से कौन सुनता है? इस बीच अतुल चटर्जी के लड़के ने भी दादी मां के चरणों का स्पर्श किया।

दादी मां ने इस वार भी कहा, "रहने दो बेटा···तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम है सुधीर चटर्जी—"

इस बीच पात्री भी आगे बढ़ आई थी और उसने भी दादी मां के चरणों का स्पर्श किया। इस वार भी दादी मां ने कहा, "रहने दो बेटी,···तुम्हारा नाम क्या है?"

"विनीता।"

"वाह, बड़ा ही अच्छा है नाम तुम्हारा! सुखी होओ बेटी!"

मुक्तिपद सारा कुछ खोजी निगाहों से देख रहा था। वह बहुत दिनों से मां को देखता आ रहा है, अभी भी देखने लगा। लगा, मां पात्री को देखकर प्रसन्न हुई है! चेहरे पर कहीं विरक्ति या वितृष्णा का भाव नहीं है।

अतुल चटर्जी साहबी तौर-तरीके के आदमी हैं। पुरखे भले ही कुछ रहे हों लेकिन आए दिन दुनिया के तमाम देशों में वे मिस्टर चटर्जी के नाम से ही संबोधित किए जाते हैं। उनके मातहत काम करनेवाले उन्हें साहव के रूप में ही जानते हैं। ज़िन्दगी में चाहे जितने कोट-पैंट-सूट पहन चुके हों लेकिन अभी वे धोती और कुरता पहने हुए हैं। दादी मां पुराने ज़माने की है, अतः धोती पहने हुए देखेंगी तो [illegible] होंगी, यही सोचा है।

अतुल चटर्जी ने निखालिस वंगला भाषा में कहा, "मैं वाप होने के नाते अपनी लड़की के वारे में ज्यादा कहना ठीक नहीं समझता मां, फिर भी इतना कह रहा हूं कि मेरी लड़की जैसी लड़की वंगाली समाज में बहुत कम देखने को मिलेगी। एक ओर जहां लिखने-पढ़ने के मामले में अव्वल है, वहीं दूसरी ओर गुरुजनों के प्रति उसमें भक्ति-भाव है। उसी तरह अंग्रेज़ी लिखने-पढ़ने और बोलने में भी अव्वल दर्जे की है। हर साल वह परीक्षा में फर्स्ट होती आई है। ईश्वर के अनंत आशीर्वाद से ही इस तरह की लड़की मिलती है। नाम और काम दोनों में वह विनीता है—"

मुक्तिपद मां के चेहरे की ओर खोजी निगाहों से ताक रहे थे। अब बोले, "और वो जो सुधीर चटर्जी हैं, वे एक लेवर-लीडर हैं। उनके अधीन दस-बारह लाख लेवर हैं। वे लोग इनकी बात पर उठते-बैठते हैं। यही वजह है कि मिस्टर चटर्जी के कम्पनी में कभी लेवर-ट्रबल नहीं हुआ है—"

मां ने पूछा, "कभी लेवर-ट्रबल नहीं हुआ है?"

अतुन चटर्जी बोले, "नहीं माताजी, हम लोगों की कम्पनी पचीस साल पुरानी है। कम्पनी की हिस्ट्री में कभी लेबर-ट्रबल का हमें मुकाबला नहीं करना पड़ा है—"

मां बोली, "हम लोगों की कम्पनी में बेटा, लेबर लोग बहुत हंगामा करते हैं। यही तो मुक्तिपद को देख रहे हो, कितना दुबला हो गया है। जबकि पहले इसकी सेहत कितनी अच्छी थी! आजकल लेबर-ट्रबल के कारण उसका ब्लड-प्रेशर बढ़ गया है। रात में उसे अच्छी तरह से नींद भी नहीं आती। देखो न, अब कम्पनी में हड़ताल शुरू हो गई है। क्या करूं, बताओ तो बेटा?"

सुधीर अब तक बैठे-बैठे सबकी बात सुन रहा था। उसने अमरीका से ऑनर्स के साथ बिजिनेस मैनेजमेंट की डिग्री हासिल की है। गम्भीर स्वभाव का आदमी है वह। अब उसने मुक्तिपद से पूछा, "आप लोगों के यहां कितने यूनियन हैं?"

मुक्तिपद ने कहा, "तीन।"

"आप लोगों के मैनेजमेंट के कितने यूनियन हैं?"

"दो।"

"और बाकी का लीडर कौन है?"

मुक्तिपद ने कहा, "वरदा घोषाल।"

सुधीर बोला, "वह नम्बरी रास्कल है। जानते हैं, कलकत्ता में उसकी पत्नी नाम से तीन लाख की प्रोपर्टी है, अपनी गाड़ी है उसके पास और हर रोज वह पन्द्रह-बीस लिटर पेट्रोल खर्च करता है, मगर कायदे-कानून में इतना माहिर है कि एक भी पैसा इनकम टैक्स नहीं देता..."

"यह कैसे सम्भव होता है?"

सुधीर बोला, "इंडिया के इस कलकत्ता में सब कुछ सम्भव है मिस्टर मुखर्जी। हां, सब कुछ सम्भव है। यहां रेकरिंग हो तो आदमी मर्डर करके भी रिहा हो सकता है। बस, सिर्फ 'टैक्ट' जानना चाहिए। मैंने मिसेज गांधी से एक बार यही कहा था: हम लोगों के कलकत्ता में डेमोक्रेसी नहीं, बल्कि मॉबोक्रेसी है—यानी जिसे गुंडों का राज्य कहा जाता है—"

अतुन चटर्जी ने लड़के की बात से सहमति जताते हुए कहा, "मैं तो इंडिया में एक महीने से ज्यादा रहता भी नहीं। यहां रहने से मेरा काम चलता ही नहीं। सुधीर के रहने के कारण मैं बाहर इत्मीनान से रह पाता हूं।"

सुधीर ने पूछा "वरदा घोषाल अब तक आपसे कितने रुपये ले चुका है?"

मुक्तिपद बोले, "कभी अपने आप आकर ले गया है और कभी गोपाल हाजरा की मारफत। सब मिलाकर बीस लाख तो होगा ही—"

"गोपाल हाजरा? दैट इडिएट द ग्रेट? उन पर कभी यकीन मत करें मिस्टर मुखर्जी—"

"यकीन न करूं तो क्या करूं? वही तो श्रीपति मिश्र का पी० ए० है। गोपाल हाजरा गुस्सा हो जाएगा तो श्रीपति मिश्र भी गुस्सा हो जाएगा। मिनिस्टर अगर मुझ पर गुस्सा हो जाए तो फिर फैक्टरी कैसे चलाऊंगा?"

सुधीर बोला, "आपको पता है मिस्टर मुखर्जी, कि श्रीपति मिश्र [illegible] हायर सेकेंडरी इम्तिहान में फेल हो चुका है?"

मुक्तिपद बोले, "सुनने में तो यही आया है। मिनिस्टर अगर तीन बार हायर सैकेंडरी में फेल करता है तो इसमें दोष नहीं, लेकिन उसके सेक्रेटरी को आइ० ए० एस० पास होना चाहिए। स्ट्रेंज—"

सुधीर बोला, "यह चीज़ नाइजेरिया या घाना में होती तो अवाक् नहीं होता लेकिन इस इंडिया में···"

तब तक नाश्ते का इन्तजाम हो चुका था। दादी मां बोलीं, "अब उठो बेटा, तुम लोग ज़रा मुंह मीठा कर लो।"

मुंह मीठा करने के दौरान भी इसी सन्दर्भ में चर्चा चलती रही। सुधीर चटर्जी चाहे तो बात की बात में सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का श्रमिक संकट दूर कर सकता है—बातचीत से यही निष्कर्ष निकला।

पात्री की पसन्दगी और उसके गुणों की चर्चा का कोई जिक्र नहीं छिड़ा। लेकिन दादी मां को लड़की पसन्द आई है, यह बात समझने में मुक्तिपद या अतुल चटर्जी को देर नहीं लगी। सभी को लगा, सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी अब हड़ताल के चंगुल से बाहर निकल आएगा।

नीचे एक-मंज़िले पर संदीप बेसब्री से इन्तज़ार कर रहा था। आवाज़ सुनकर अन्दाज़ा लग गया कि जो अतिथि बनकर आए थे और जिनके स्वागत-सत्कार का आयोजन चल रहा था, वे गाड़ी लेकर घर लौट गए। इसके बाद मल्लिक चाचा अपने कमरे में आए। संदीप ने मल्लिक चाचा के चेहरे की ओर देखा। उसके बाद मल्लिक चाचा की ओर से कोई जवाब न मिलने पर संदीप ने पूछा, "कौन लोग आए थे चाचाजी ?"

मल्लिक चाचा के चेहरे पर गम्भीरता टंगी हुई है। बोले, "बालीगंज के चटर्जी बाबू वगैरह।"

उसके बाद फिर उसी तरह का गम्भीर चेहरा लेकर बोले, "अतुल चटर्जी अपनी लड़की को दिखाने ले आए थे—"

संदीप के सिर पर जैसे गाज गिर पड़ी हो। कुछ देर तक उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। बहुत देर के बाद पूछा, "दादी मां क्या बोलीं ?"

मल्लिक चाचा बोले, "ज़्यादातर लेबर-ट्रबल के सम्बन्ध में ही बातचीत चलती रही। अतुल चटर्जी का लड़का सुधीर चटर्जी भी उनके साथ था। वह भी एक लेबर-लीडर है। उसने बताया कि वह बरदा घोषाल और गोपाल हाजरा दोनों को पहचानता है। उसने वादा किया कि वह हम लोगों की कम्पनी का लेबर-ट्रबल दूर कर दे सकता है—"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद दादी मां की ओर देखने पर ऐसा लगा जैसे वे उसकी बात से बहुत खुश हुई हैं।"

संदीप को मानो इस बात पर यकीन न हुआ हो। पूछा, "दादी मां सचमुच ही खुश हुईं ?"

मल्लिक चाचा बोले, "खुश होने की बात तो है ही। इतनी बड़ी कम्पनी के

बन्द हो जाने जैसी स्थिति आ गई थी। ऐसे वक्त में आश्वासन पाकर कौन खुश नहीं होगा ?"

संदीप ने पूछा, "दादी मां को पात्री पसन्द आई ?"

"पात्री नापसन्द करने लायक नहीं है।"

"पात्री का नाम क्या है ?"

"विनीता। नाम की विनीता है और बातचीत में भी विनीता। इतने बड़े बाप की बेटी है मगर चाल-ढाल में अहंकार का नामोनिशान तक नहीं है—"

संदीप ने पूछा, "हम लोगों की विशाखा ज्यादा खूबसूरत है या विनीता ?"

मल्लिक चाचा बोले, "यह मैं नहीं बता सकता हूं भई। मैं बूढ़ा आदमी हूं, इतना कुछ क्या मेरी समझ में आता है ?"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोले, "लेकिन इसके चलते तुम अपना सिर क्यों खपा रहे हो ? चाहे जिससे भी सौम्य बाबू की शादी हो, तुम्हारा क्या आता-जाता है ?"

संदीप को भी यही अहसास हुआ। सौम्य बाबू की शादी चाहे जिससे हो, इससे उसका क्या बनता-बिगड़ता है ? लेकिन असलियत यह नहीं है। इतने सालों से, इतने-इतने रुपये खर्च कर जिन्हें रसेल स्ट्रीट के मकान में रखा गया है, यह शादी अगर नहीं होती है तो वे कहां जाएंगी ?

मल्लिक चाचा बोले, "लेकिन दादी मां ने उन्हें बता दिया है कि काशी के गुरुदेव यदि पात्री की जन्मपत्री देखकर इस शादी के लिए सहमति प्रकट करेंगे तभी शादी होगी, वरना नहीं—"

यह सब बहुत दिन पहले की बात है। अब सोचने पर हंसी आती है। सचमुच बचपन में आदमी में कितना बचपना रहता है। देह के साथ-साथ मन भी तब अपरिपक्व रहता है। सौम्य से विशाखा की शादी नहीं होगी, यह सुनकर संदीप को लगा था जैसे किसी आत्मीय के बिछोह के शोक ने उसे ग्रसित कर लिया हो। सोचा जाए तो वैसी कोई बात नहीं थी। विशाखा जिस तरह उसकी कोई नहीं है, उसी तरह विनीता भी कोई नहीं है। किससे किसकी शादी होती है या नहीं, यह उसके जैसे दूसरे के अन्न पर पलनेवाले युवक के लिए कोई समस्या नहीं हो सकती। समस्या थी तो केवल अपने पैरों पर खड़े होने की।

दो दिन बाद ही वह पत्र आया—बैंक की नौकरी के लिए उसने जो आवेदन-पत्र भेजा था, उसका जवाब। उसका आवेदन-पत्र न केवल स्वीकार कर लिया गया है, बल्कि एक निश्चित तिथि में एक निश्चित स्थान पर परीक्षा देने का आदेश मिला है।

यह खबर सुनकर मल्लिक चाचा बेहद खुश हुए। बोले, "बहुत बड़ी खुश-खबरी है, इम्तिहान के पहले कालीबाड़ी जाकर पूजा कर आना।"

याद है, तब वह कितना उत्तेजित, कितना भयभीत हो उठा था ! पिछली रात उसे ठीक से नींद ही नहीं आई। नींद के दौरान बार-बार मां का चेहरा सामने तिर आया। मां ने मानो उसे सपने में ही आशीर्वाद दिया—"तेरे लिए डरने की कोई बात नहीं है। भगवान को पुकारो, तुम्हारी सारी विपदा दूर हो जाएगी—"

परीक्षा देने के लिए जाने के दिन संदीप ने मल्लिक चाचा के चरणों की धूल अपने मस्तक पर लगाई। मल्लिक चाचा बोले, "तुम्हारा कल्याण हो बेटा, कल्याण हो—"

रात में ठीक से नींद नहीं आई तो सवेरे सोकर उठने का सवाल पैदा ही नहीं होता। सचमुच सारी रात वह नींद में जैसे गणित के प्रश्न ही हल करता रहा। कितने कठिन-कठिन सवाल थे वे !

ठनठन कालीवाड़ी के सामने जाकर उसने देवी की तरफ मुंह कर, आंखें बंद कर प्रणाम किया। उसके बाद दक्षिणा के रूप में पॉकेट से चार नए पैसे पीतल की थाली में डाल दिए।

सिर्फ उसी ने ही पैसे चढ़ाए हों, ऐसी बात नहीं। और भी बहुतेरे लोगों ने चढ़ाए थे। आश्चर्य, कितने लोगों को कितने तरह के दुख हैं, कितने लोग कितनी तरह की कामनाएं करते हैं, कितने लोग कितने तरह की मांग करते हैं ! इसका कोई ओर-छोर नहीं। लाखों लोगों की कामनाओं के साथ अपनी कामना को भी जोड़कर संदीप ने निश्चिन्त होने की कोशिश की। उसके बाद एक बस पर नज़र पड़ते ही चढ़ गया और सीधे धर्मतल्ला पहुंच गया। धर्मतल्ला में दूसरी बस पकड़ एकबारगी खिदिरपुर जा पहुंचा।

खिदिरपुर पहुंचते ही उसे विशाखा की याद आ गई। साथ ही विशाखा की उस दिन की बात का भी स्मरण हो आया। विशाखा ने कहा था—"मुझसे सौम्य बाबू की शादी होगी इसलिए तुम्हें रश्क हो रहा है ?" संदीप ने स्वयं को संयत कर लिया। वह सब विचार अभी दिमाग में नहीं आना चाहिए। वह सब विचार आदमी को बर्बादी की तरफ ले जाता है। यह सब नहीं सोचेगा वह। बर्बादी का पथ चौड़ा होता है और उसका दरवाज़ा उससे भी अधिक चौड़ा। कोई यदि अपनी बर्बादी करना चाहता है तो बर्बादी के नगर के सदर दरवाज़े को उसे ठेलना नहीं पड़ेगा—वह तो दिन-रात खुला ही रहता है। ध्वंस-पुरी के सदर दरवाज़े पर कोई दरबान भी नहीं रहता। जिसे मर्ज़ी हो वह निर्विरोध प्रवेश कर सकता है।

•

लेकिन नियति ? किसकी नियति कैसी हो सकती है, यह कौन बता सकता है ? कॉलिज की पुस्तक में उसने एक बात पढ़ी थी। वह बात हमेशा याद रही और रहेगी भी।

Desting is a tyrant's authority for crime and a fool's excuse for failure. राजा जब अत्याचार करता है तो वह शक्ति की दुहाई देता है और बेवकूफ जब पराजित होता है तो वह नियति को दोष देता है।

तीसरे पहर चार बजे जब इम्तिहान खत्म हुआ तब उसका सिर चकरा रहा था। कैसे वक्त गुज़र गया उसका उसे पता नहीं चला। बाहर खुले आसमान के नीचे आने पर उसे ज़रा आराम महसूस हुआ। लेकिन सुशील यानी सुशील सरकार पर उसकी नज़र नहीं पड़ी। उसी ने तो इस नौकरी की बात उसे बताई थी। फिर उसका आवेदन-पत्र क्या नामंज़ूर हो गया ?

पैदल चलता हुआ जब वह एक पान की दुकान के सामने पहुंचा तो दुकानदार

ने उसे पुकारा, "बाबूजी, राशन कार्ड बनवाना है ?"

राशन कार्ड ! बात बिलकुल नई-सी लगी। दुकानदार उसे राशन-कार्ड दे

चाहता है। इस तरह की घटना तो कभी घटित नहीं हुई थी।

संदीप ने कहा, "राशन कार्ड लेकर मैं क्या करूंगा ?"

दुकानदार सुबो पहले खाली बदन बैठा था। वह बोला, "आप पाकिस्तान

आए हैं न ? राशन कार्ड आपके पास रहेगा तो किसी तरह की असुविधा का साम

नहीं करना होगा—"

दुकानदार की इस तरह की क्यों धारणा है, कौन जाने !

संदीप ने कहा, "मेरे पास राशन कार्ड नहीं है।"

अब उस आदमी का उत्साह दुगुना हो गया। ज़रा हिल-डुलकर एक सरक

सर्टिफिकेट उसकी तरफ बढ़ा दिया।

बोला, "यह देखिए, इस पर मिनिस्टर का हस्ताक्षर है।"

संदीप उसे पढ़ने लगा। कोई मंत्री यह कहकर सर्टिफिकेट दे रहा है कि मैं

व्यक्ति को पहचानता हूं और यह आदमी पश्चिम बंगाल में ही पैदा हुआ है।

यह आदमी राशन कार्ड पाने का अधिकारी है।

संदीप को इसका मजमून कतई समझ में नहीं आया।

अचानक और एक आदमी आया और बोला, "लाइए, एक सर्टिफि

दीजिए।"

दुकानदार ने तुरन्त एक सर्टिफिकेट बढ़ा दिया।

उस आदमी ने उसे लेकर पॉकेट से कुछेक रुपये निकालकर दिए। उसके

बिना कुछ बोले दूसरी तरफ चला गया।

संदीप की ओर ताकते हुए दुकानदार ने कहा, "देखा न, सभी खुशी से स

फिकेट ले जाते हैं। और भी बहुत सारी दुकानें यहां हैं लेकिन वहां जाली स

फिकेट मिलते हैं। मेरे पास ही असली सर्टिफिकेट मिलेगा—"

संदीप ने पूछा, "इसे लेकर क्या होगा ?"

दुकानदार ने कहा, "इसे लेकर आप राशन कार्ड बनवा सकते हैं—"

संदीप ने कहा, "मैं एक मकान में रहता हूं वहीं खाता-पीता और सो

हूं।"

दुकानदार ने कहा, 'ऐसी हालत में राशन कार्ड से सस्ते में राशन ले

बाजार में बेच दीजिएगा। इससे आपको बहुत फायदा होगा—"

संदीप मन ही मन कुछ सोचने लगा। दुकानदार ने कहा, "अरे साहब,

तो बिलकुल बेवकूफ जैसे लगते हैं। आपके पास यह रहेगा तो आप वोट दे स

हैं, साथ ही साथ आपको नौकरी भी मिल सकती है। पाकिस्तान से जितने

आते हैं, सभी मेरे पास यह सर्टिफिकेट खरीदते हैं। आप भी ले लीजिए।"

संदीप ने ऊपर की ओर निहारा। दुकान में कोई साइनबोर्ड नहीं है। बाह

देखने पर लगता है, पान-बीड़ी-सिगरेट की दुकान है। इसके अलावा कुछेक र

पानी की बोतलें। लेकिन अन्दर मन्त्री के द्वारा हस्ताक्षर किए गए सर्टिफिकेट

रहे हैं।

"लीजिए न—"

संदीप अब वहां खड़ा नहीं रहा। आश्चर्य है, इतने सारे लोग पाकिस्तान से आकर यहां जमा हो रहे हैं! अपना देश छोड़कर वे लोग यहां क्यों जमा हो रहे हैं? उन्हें क्या वहां तकलीफ हो रही थी?

संदीप पुनः दुकान के सामने आकर खड़ा हुआ। अब दुकानदार के मन में उम्मीद जगी। बोला, "क्या हुआ? आपको सर्टिफिकेट लेना है क्या?"

संदीप ने कहा, "अच्छा, आपसे एक बात पूछना चाहता हूं। वह यह कि पाकिस्तान से इतने सारे लोग क्यों आ रहे हैं? पाकिस्तान में नौकरी क्या नहीं मिलती?"

दुकानदार को इतनी फालतू बातें करने का न तो अवकाश है और न ही इच्छा। बोला, "मुझे कैसे मालूम होगा साब? गवर्नमेंट सब कुछ जानती है, आप गवर्नमेंट से जाकर पूछें।"

दुकानदार का चेहरा और भाव-भंगिमा देखकर ही पता चल गया कि वह झुंझला उठा है।

संदीप ने बस की सड़क की ओर कदम बढ़ाए। यहां आदमी की बेशुमार भीड़ के साथ-साथ हॉकरों की भीड़ है। पूरा फुटपाथ हॉकरों की दुकानों से भरा हुआ है। सामने की तरफ से जाते ही वे लोग हांक लगाते हैं, "आइए भाई साहब, आइए—"

इसके पहले भी संदीप इस मुहल्ले में आ चुका है मगर उस समय ऐसी भीड़ नहीं थी। इतने आदमी भी नहीं थे और न ही इतनी दुकानें।

इन कई बरसों के दरम्यान कलकत्ता की शक्ल इतनी बदल गई। अचानक यहां इतने विलायती, टांजिस्टर और कलाई घड़ियां क्यों और कहां से आ गए?

घर पहुंचते ही मल्लिक चाचा ने पूछा, "क्या हुआ? इतनी देर क्यों लग गई? मैं बहुत चिन्तित हो उठा था। अब तक कहां थे? इम्तिहान कैसा रहा?"

संदीप का चेहरा उतरा हुआ था। मल्लिक चाचा को संदीप का चेहरा देखकर संदेह हुआ। बोले, "अच्छा नहीं रहा क्या?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

मल्लिक चाचा बोले, "इससे मन खराब क्यों कर रहे हो। जीवन में तो पास-फेल लगा ही रहता है, उससे हतोत्साह नहीं होना चाहिए। फिर से कोशिश करो।"

संदीप बोला, "मैं मां के बारे में सोच रहा हूं।"

मल्लिक चाचा बोले, "मां को लिख दो कि चिन्ता नहीं करें, तुम दुबारा इम्तिहान देने जा रहे हो। मन की हिम्मत मत हारो, निराश मत होओ। निराश होना ही पाप है—"

यह कहकर वे हाथ के कागज़-पत्तर संभालने लगे। उसके बाद बोले, "इम्तिहान तो बहुत पहले ही खत्म हो चुका होगा, इतनी देर तक कहां थे? इतनी देर तक क्या कर रहे थे?"

"घूम-फिर रहा था।"

मल्लिक चाचा अचकचा उठे, "घूम-फिर रहे थे का मानी? कहां घूम-फिर रहे थे?"

संदीप ने ब्योरेवार सारी घटना का उल्लेख किया। फुटपाथ पर हॉकरों की कितनी अधिक दुकानें खड़ी हो गई हैं और वे लोग खरीद-फरोख्त करने के लिए आरजू-मिन्नत कर रहे थे। सर्टिफिकेट की भी बिक्री हो रही थी—

"सर्टिफिकेट? किस चीज का सर्टिफिकेट? यूनिवर्सिटी का?"

"नहीं, राशन कार्ड का—"

"राशन कार्ड का सर्टिफिकेट? तुमने नहीं खरीदा है न?"

संदीप ने कहा, "नहीं, मैं क्यों खरीदने लगा? मैं तो इंडियन हूं। सुना है, पाकिस्तान से बहुत सारे लोग भारत आ रहे हैं। वे लोग उस सर्टिफिकेट को दिखा-कर इंडिया के नागरिक और मतदाता बन जाएंगे। मतदाता होने पर यहां नौकरी मिलेगी।"

यह बात सुनकर मल्लिक चाचा को आश्चर्य हुआ। बोले, "देख रहे हो हरकत! तुम लोगों के बहुत बुरे दिन आ रहे हैं बेटा। तुम्हीं लोगों को मुसीबत का सामना करना होगा। हम लोगों की आयु का तीन हिस्सा बीत चुका है और अब थोड़ा बच रहा है, लेकिन तुम लोग क्या करोगे, यही सोचता हूं—"

उसके बाद जरा रुककर फिर कहने लगे, "इस घर की ही बात लो, कहीं कोई गड़बड़ी नहीं थी, सारा कुछ मजे में चल रहा था, एकाएक कहीं से लेबर-ट्रबल की शुरुआत हो गई। मालिक की फैक्टरी और सारी योजनाएं बर्बादी के कगार पर आकर खड़ी हो गईं। दादी मां ने मनसूबा बांधा था कि वह अपनी पसंद की लड़की से पोते की शादी करेंगी, इसके लिए कितना खर्च भी किया। अब किसी एक अमुक चटर्जी की लड़की से पोते की शादी कर रिश्ता तय करना पड़ रहा है। यह भी किस्मत…"

संदीप ने कहा, "नई पार्टी से शादी का रिश्ता तय हो चुका है?"

मल्लिक चाचा बोले, "इसके पहले काशी के गुरुदेव का विचार जानना होगा—"

"आप कब काशी जा रहे हैं?"

मल्लिकजी बोले, "अरे, मैं जाऊं यह क्या झटपट हो सकता है? यहां मेरे कितने सारे काम बाकी पड़े हुए हैं, यह जानते हो? उन कामों को कौन करेगा। असली काम है महीने की पहली तारीख को सभी को वेतन देना। मैं चला जाऊंगा तो उन्हें कौन वेतन देगा? एक ही आदमी की बात तो नहीं है। इतने लोगों के वेतन के अलावा कॉरपोरेशन का टैक्स जमा करना है, बिजली के बिल का भुगतान करना है—जितने भी काम हैं सब खत्म करने के बाद ही तो काशी जाऊंगा। यह सब काम मेरे सिवा और कोई कर नहीं सकेगा—"

उस रात बहुत देर तक चुपचाप लेटे रहने पर भी संदीप को नींद नहीं आई। कलकत्ता में लोगों की संख्या बढ़ रही है, फुटपाथ पर भिखमंगों की भीड़ लगी रहती है। उस पर पाकिस्तान से हजारों आदमी आकर न केवल यहां की जमीन बल्कि नौकरी पर भी दखल जमा रहे हैं। यहां के कल-कारखानों में हड़ताल होने के कारण लाखों लोग बेरोजगार हो रहे हैं, लेकिन बावजूद इसके आदमी का एक दूसरा दल अमुक पार्टीवालों की तरह फूल-फलकर राजा-बादशाह बन बैठे हैं और विलायती शौकिया सामग्रियों को खरीद, समाज में अपना रौब गालिब करने के

लिए बाज़ार गर्म कर रहे हैं ! इसकी परिणति क्या होगी ? इसका अंत कैसे होगा ? ऐसे में संदीप कैसे टिका रहेगा ? वह क्या अन्ततः जोड़ासांको के बाज़ार के मोड़ के फुटपाथ पर श्रीश्री जगन्माता के सपने के आदेशानुसार विश्वशांति-स्थापना के निमित्त'''लिखा हुआ साइनबोर्ड लेकर लोगों की आंख में धूल झोंकेगा ?

उस दिन भी मौसीजी ने पूछा, "उस तरफ से तो कोई सूचना नहीं भेजी जा रही है बेटा। ऐसा क्यों ? वे लोग सकुशल हैं न ?"

संदीप क्या कहे ! सवाल के जवाब में कहा, "हां, सारा समाचार ठीक है—"

"तुम्हारी दादी मां कैसी हैं ?"

"मज़े में हैं।"

"तुम्हारी दादी को विलायत से मेरे दामाद का खत मिला है न ?"

संदीप के लिए झूठ बोलने के सिवा दूसरा विकल्प ही क्या था। बोला, "हां, दादी मां को सौम्य बाबू का पत्र मिला है।"

उसके बाद संदीप ने बाकायदा विशाखा की लिखाई-पढ़ाई के बारे में पूछताछ की। विशाखा की सेहत के बारे में दरियाफ्त किया। सारा कुछ नियमानुसार चल रहा है। जैसा कि पहले चल रहा था। सारी बातों की तहकीकात करने के बाद संदीप जाने को उद्यत हुआ। मौसीजी ने पीछे से पूछा, "और एक बात बेटा ! इम्तिहान कैसा गया, यह तो तुमने बताया ही नहीं।"

संदीप ने कहा, "अच्छा नहीं रहा मौजी जी। शायद पास नहीं कर पाऊंगा।"

मौसीजी का चेहरा उतर गया। बोलीं, "इससे क्या आता-जाता है बेटा। जीवन में तो पास-फेल लगा ही रहता है। यह सोचकर तुम मन उदास मत करो, मन ही मन भगवान को पुकारो—"

संदीप भगवान को पुकारेगा ? यह क्या कह रही हैं मौसीजी ? संदीप को एक बार इच्छा हुई कि कहे—"आप तो मुझे भगवान को पुकारने कह रही हैं, लेकिन भगवान को पुकारने से आपको इसका कोई फल मिला है मौसीजी ? भगवान की गुहार करते-करते आपको कौन-सा फायदा हुआ है, बता सकती हैं ? आपकी विशाखा से क्या सौम्य बाबू की शादी हुई ?"

लेकिन इच्छा होने के बावजूद यह सब बात उसके मुंह से बाहर नहीं निकली। मुंह से भले ही नहीं निकली लेकिन आंखों के आंसू में बदलकर टप-टप कर चूने लगी।

मौसीजी की निगाह उस पर गई। वह संदीप के करीब सरककर आई और अपने पल्लू से उसके आंसू पोंछकर कहने लगी, "छिः बेटा, रोओ मत। मन ही मन ईश्वर का स्मरण करो—"

संदीप अब वहां खड़ा नहीं रह सका। अपने आपको मौसीजी के हाथ से किसी प्रकार छुड़ाकर घर से बाहर निकल सड़क पर चला आया। अभी न तो उसकी दृष्टि कहीं है और न ही ध्यान। सिर्फ एक ही चिंता उसे पीछे से खदेड़ने लगी, सिर्फ एक ही समस्या उसके सिर का बोझ बनकर उसे लीलने लगी। उस चिन्ता और समस्या की बात वह किससे कहे ? अपनी चिन्ता और समस्या की बात की

चर्चा किसके सामने करके यह अपने मन का बोझ हल्का करे ?

घर आते ही संदीप ने देखा, मल्लिक चाचा अपने काम में बुरी तरह व्यस्त हैं। इस समय उन्हें बात करने की भी फुर्सत नहीं है। संदीप पर आंखें जाते ही बोले, "यह लो, तुम्हारी मां की चिट्ठी है।"

मां की चिट्ठी की बात सुनकर संदीप में मानो नए सिरे से प्राण लौट आए। चिट्ठी में मां ने लिखा है—"तुम्हारी चिट्ठी पाकर बड़ी खुशी हुई। तुम्हें बहुत दिनों से नहीं देखा है। तुम्हें देखने की तीव्र इच्छा होती है। न जाने, अब कितने दिनों तक जिन्दा रहूंगी। तुम्हें अपने पैरों पर खड़ा देख पाती तो मरने के दौरान मुझे सुख का अहसास होता। शायद मेरे भाग्य में वह सुख नहीं है। तुम कैसे हो जताना और यह भी लिखना कि इम्तिहान कैसा गया ? इति तुम्हारी अभागिन—मां।"

चिट्ठी हाथ में थामे संदीप चुपचाप सोचता रहा, सोचता रहा। मल्लिक चाचा ने उसका चेहरा देखकर कहा, "क्या हुआ ? मां ने क्या लिखा है ?"

संदीप ने कहा, "मां मुझसे मिलना चाहती है।"

मल्लिक चाचा बोले, "बात तो सही ही है। तुम्हें देखने की इच्छा होना स्वाभाविक है।"

संदीप बोला, "लेकिन इस मकान की अभी यह हालत है, फैक्टरी में अभी हड़ताल चल रही है, आप काशी जा रहे हैं—ऐसे हालात में मेरे चले जाने से काम कैसे चलेगा ?"

मल्लिक चाचा बोले, "यह महीना जब तक खत्म नहीं हो जाता है, मैं काशी नहीं जाऊंगा। न हो तो तुम बीच में एक दिन के लिए बेड़ापोता चले जाओ। तुम्हारा भी तो मां के लिए मन छटपटा रहा है। जाओ, तुम जब तक लौटकर नहीं आओगे, मैं कहीं नहीं जाऊंगा—"

"लेकिन दादी मां क्या मुझे इस समय छुट्टी देंगी ?"

मल्लिकजी बोले, "इस मसय में तुम्हें कुछ नहीं सोचना है। जाओ—एक बार मां से मिलकर उसी दिन वापस चले आना।"

सो, यही इन्तजाम किया गया। कितने दिनों के बाद वह बेड़ापोता जा रहा है ! बेड़ापोता से उसका कितने दिनों का रिश्ता है ! उसकी सांस में जैसे अब भी बेड़ापोता की धूल की गंध समाई हुई है। आंख मूंदने पर वह जैसे बेड़ापोता के वृक्षों तक को अपनी आंखों के सामने देख पाता है। खासकर हाटतल्ली के उस बूढ़े बरगद के दरख्त को। वहां, उस बरगद की जटा पकड़ वह और गोपाल कितने ही दिन झूला झूलते रहे हैं।

संदीप ने मां को पहले से ही कोई सूचना नहीं भेजी थी। मां भी, हो सकता है, उसे देखकर चौंक उठे। और उसके बाद ? संदीप इसकी सहज ही कल्पना कर सकता है कि उसके बाद मां क्या करेगी। जब मां खुशियों के अतिरेक में होती है तो रो देती है। संदीप को देखकर मां हो सकता है आनन्द के आवेग के कारण रो दे। रुलाई के कारण मां की आंखों से जरूर आंसू की धारा बहने लगेगी।

संदीप जब बेड़ापोता पहुंचा तो रात हो चुकी थी। न जाने, मां अभी कहां है? कितने दिन के बाद संदीप देस लौटा है। स्टेशन से दूर हाटतल्ली में बरगद का ऊपरी हिस्सा दिख रहा था। लग रहा था, इन कई सालों के दरमियान बरगद का पेड़ जैसे और भी ऊंचा हो गया हो। ट्रेन से उतर जनशून्य रास्ते में चलते हुए संदीप को लगा, वह जैसे मां की गोद में लौटकर चला आया हो। फर्र-फर्र हवा चल रही है।

बगल से एक बैलगाड़ी जा रही थी। गाड़ी के अन्दर से किसी ने पूछा, "कौन? कौन जा रहा है?"

संदीप ने कहा, "मैं—"

"मैं कौन? नाम नहीं है?"

संदीप ने कहा, "मेरा नाम संदीप लाहिड़ी है।"

तब तक गाड़ी खड़ी हो चुकी थी।

अन्दर के यात्री ने पूछा, "पिता का नाम क्या है?"

संदीप ने कहा, "हरिपद लाहिड़ी।"

"ओ, तुम हरिपद लाहिड़ी के लड़के हो? अभी कहां हो? क्या कर रहे हो?"

संदीप ने अपने बारे में सारा कुछ बताया। वह आदमी बोला, "अच्छी बात है, कलकत्ता में हो। सुनने में आया है, गोपाल हाजरा भी कलकत्ता में ही है। उससे मुलाकात होती है?"

संदीप ने कहा, "जी हां।"

"अच्छी बात है। कोशिश करो कि तुम भी गोपाल हाजरा की तरह बड़े आदमी बन सको। इससे बेड़ापोता का सम्मान बढ़ेगा। अच्छी बात है, अच्छी—"

कौन अभी इतनी बात बोल गया, पता नहीं चला। उसके बाद वह आदमी अपनी बैलगाड़ी सामने की तरफ ले जाने लगा। पहले यह कच्चा रास्ता था अब कोलतार का हो गया है। पहले की तरह अब गर्द-गुबार नहीं उड़ता है। बेड़ापोता की कितनी तरक्की हो चुकी है! पहले चारों तरफ खाली मैदान था। अब जहां-तहां पक्के मकान खड़े हो गए हैं। सड़क पर कलकत्ता की तरह की बिजली की बत्तियां जल रही हैं।

देखते-देखते हाटतल्ली आ गई। वही पुरानी हाटतल्ली। अब वह हाटतल्ली जैसे पहचान ही में नहीं आ रही हो। कुछेक पक्की दुकानें इधर-उधर छितरी हुई हैं। हाटतल्ली तब एक तरह से सूनी थी। उसकी बगल से जाने के दौरान संदीप की निगाह एक विशाल भवन पर पड़ी। वह मकान तीन-मंज़िला है।

वह मकान कब खड़ा हुआ? एक बार मन में देखने का कुतूहल जगा। पहले यहां यह मकान नहीं था।

संदीप आगे बढ़ रहा था कि किसी ने पुकारा, "कौन? कौन जा रहा है?"

बेड़ापोता का यही नियम है कि किसी नए चेहरे के आदमी को देखते ही सवाल किया जाता है, "कौन? कौन जा रहा है? कहां जा रहे हो?" वगैरह-वगैरह।

संदीप ने पीछे मुड़कर देखा तो किसी पर नज़र नहीं पड़ी। उस ओर न देखकर वह फिर अपने घर की तरफ जाने लगा था। अचानक फिर आवाज़ आई,

"कौन ? कौन जा रहा है ?"

संदीप खड़ा हो गया। देखा, हाट के ट्टरबन्द दुकान के सामने के मकान पर एक आदमी लेटा हुआ है। वही उसको आवाज लगा रहा है।

संदीप ने बाकायदा जवाब दिया, "मैं—"

"मैं ? मैं कौन ? क्या नाम है ?"

संदीप बोला, "मैं संदीप कुमार लाहिड़ी हूं।"

संदीप का नाम सुनते ही वह आदमी उठकर बैठ गया। बोला, "अरे संदीप, तू है ?"

संदीप आहिस्ता-आहिस्ता चलकर उस आदमी के पास गया।

अब वह आदमी स्पष्ट तौर पर दिखा। वह कोई वयस्क आदमी नहीं है, बल्कि उसी का एक हमउम्र नौजवान है।

नौजवान बोला, "मुझे देखकर पहचाना नहीं ? मैं हूं जी। तारक पोर—"

संदीप तारक का नाम सुनकर चिहुंक उठा। बोला, "तेरा यह कैसा चेहरा हो गया है ? तू बीमार है क्या ?"

सचमुच, उस मोटे-सोटे तारक का शरीर ऐसा दुबला हो गया है ! इसके बाद पूछा, "यहां क्यों लेटा हुआ है ?"

तारक बोला, "कहां जाऊं ? मुझे तो कोई घर-बार नहीं है।"

"इसका मतलब ? तुम लोगों के मकान को क्या हुआ ?"

तारक बोला, "तुझे कुछ पता नहीं है ? हम लोगों का मकान आग लगने से जल गया—"

"मकान आग से जल गया ? और तुम्हारे मां-बाप-भाई-बहन···वे कहां हैं ?"

"वे लोग भी उसी में जलकर खाक हो गए।"

संदीप बोला, "घर में आग कैसे लगी ? क्या हुआ था ?"

तारक रोने लगा। बोला, "वह एक लम्बी दास्तान है भाई···"

यह कहकर वह हांफने लगा। संदीप बोला, "रहने दो, तुम्हें तकलीफ हो रही है। अभी कहने की जरूरत नहीं।"

तारक का बोलना तो भी बन्द नहीं हुआ, "तू कलकत्ता गया तो बच गया भाई। हम लोग यहां बहुत तकलीफ में हैं। मुझे तू कलकत्ता ले चलेगा भाई ? यहां रहने से मैं मर जाऊंगा—"

संदीप क्या कहे, समझ में नहीं आया। वह खुद भी तो दूसरे के अन्न से पेट पाल रहा है। वह कैसे तारक को कलकत्ता ले जाएगा !

उसने पूछा, "कब तुम लोगों के घर में आग लगी थी ?"

तारक बोला, "वो जो उस बार गांव में वोट हुआ था, उस वोट के पहले ही एक रात किन लोगों ने घर में आग लगा दी, इसका हमें पता नहीं चला भाई। वह जो आलीशान तीन-मंजिला इमारत दिख रही है—"

संदीप ने पूछा, "वह किसका मकान है ? पहले तो वहां वह मकान नहीं था। वहीं तो तुम लोगों का मकान था—"

तारक ने कहा, "हम लोगों की उसी जमीन पर यह मकान खड़ा हुआ है।"

उसके बाद तारक से जो कुछ सुनने को मिला वह बड़ी ही मर्मभेदी घटना

थी। रात दो या तीन बजे एकाएक नींद टूटते ही वे भौंचक से रह गए। लेकिन हालात उन लोगों की समझ में आए कि इसके पहले ही ऊपर का छप्पर चरमराकर उनके माथे पर गिर पड़ा। तब कहां क्या हो रहा है, यह सोचने या समझने की उन्हें फुर्सत ही नहीं मिली। तारक घर के सामने के दरवाजे के बाहर बरामदे पर सोया हुआ था, इसलिए किस तरह खुद को घसीटते बाहर निकल आया था, उसे मालूम नहीं। उसके बाद वह बेहोश हो गया था। उस समय उसकी याददाश्त बिलकुल खो गई थी। बहुत दिनों के बाद जब उसे होश आया तो उसे पता चला कि वह आसनसोल के एक अस्पताल में लेटा हुआ है। उसके मां-बाप-भाई-बहन ? वे उस आग की लपट में जलकर खाक हो गए थे।

"उसके बाद ?"

"उसके बाद और क्या ? उसके बाद से यहीं पड़ा रहता हूं—"

संदीप ने पूछा, "गुज़ारा कैसे चलता है ?"

तारक बोला, "गुज़ारा कैसे होगा ? नहीं हो रहा है—"

"फिर भी एक वक्त बिना खाए काम कैसे चल सकता है ? तुझे कुछ न कुछ खाना ही पड़ता होगा।"

तारक हंसकर बोला, "भूख लगने पर अस्पताल जाकर खून बेच आता हूं। एक बार खून देने से पैंतालीस रुपये मिलते हैं, उस रकम के साथ एक प्याली कॉफी, एक जोड़ा केला और एक उबला हुआ अंडा—"

"लेकिन···"

तारक हंस दिया। बोला, "और लेकिन नहीं···उस तीन-मंज़िले मकान को तू देख रहा है ? वह मकान था इसलिए अब भी ज़िन्दा हूं।"

"इसका मतलब ? वह किसका मकान है ?"

तारक बोला, "शायद तुझे याद नहीं होगा। वह मकान जिसका है वह किसी ज़माने में हमारे साथ एक ही क्लास में पढ़ता था, लेकिन किसी भी हालत में पास नहीं हो सका। वह ऑर्डर दे गया है कि अगर मैं वहां भीख मांगने जाऊं तो मुझे खाली हाथ न लौटाए और न ही मेरे पीछे कुत्ते की ललकारे—"

संदीप बोला, "वह तो भला आदमी मालूम होता है। कौन है वह ?"

तारक बोला, "वही लड़का जो हम लोगों के साथ एक ही स्कूल में पढ़ता था। वह अब कलकत्ता जाकर बहुत बड़ा आदमी हो गया है। लगभग चालीस-पचास लाख रुपये का मालिक है वह। अपनी गाड़ी चलाकर वह यहां अक्सर आता है भाई। मुझ पर नज़र पड़ती है तो दो-चार रुपये भीख दे जाता है।"

"तुम्हें भीख क्यों देता है ?"

तारक बोला, "देगा नहीं ? हमारी ज़मीन को जबरन दखल कर उसने वहां मकान बनवाया है—चाहे जो हो आखिर हया नामक कोई चीज़ भी तो होती है—"

संदीप को तब देर हो रही थी। बोला, "आज हया-शरम कितने लोगों में है ? उसने जो तेरी ज़मीन ले ली और उसमें मकान खड़ा कर लिया तो ज़मीन के एवज में कुछ रुपये नहीं दिए ?"

तारक बोला, "रुपया-पैसा क्यों देगा ? यह तो उसकी पार्टी की तरफ से

जबरन दखल की गई जमीन है। जबरन दखल की गई जमीन का कोई मोल चुकाता है?"

संदीप बोला, "यह तो गजब की बात है। कौन है? वह आदमी कौन है?"

तारक बोला, "तू शायद उसे भूल चुका होगा। उसका नाम है गोपाल हाजरा—"

गोपाल हाजरा !!!

कलकत्ता वापस आने के बाद उस दिन की बेड़ाचांपा की बात वह भूल नहीं सका था। सचमुच एक दिन सारा-का-सारा समूचा देश गोपाल हाजरा जैसे लोगों से ही भर गया। मुल्क आजाद होने के बाद उन्हीं लोगों की तूती बजने लगी। स्वामी विवेकानन्द के नाम पर सड़क का नाम रखा गया, विद्यासागर, महात्मा गांधी के नाम से भी रास्ते का नाम रखा गया। लेकिन उन नामों की आड़ में कितनी ही संभावनाएं अंकुरित होकर नष्ट हो गईं, उसका हिसाब किसी भी खाते में दर्ज नहीं हुआ।

मां शुरू में अवाक् हो गई थी। कहा था, "अरे, तू है?"

कहते-कहते मां वहीं पर बैठी जो उनका स्वभाव है। खुशी से मां की आंखों से आंसू की धारा बहने लगी।

संदीप ने मां को अपनी बांहों में भर लिया। बोला, "मां, तुम रो क्यों रही हो? इतने दिन बाद मैं तुम्हारे पास आया और तुम रो रही हो? जरा हंस दो मां—"

उसकी बात सुनकर मां का रोना दुगुना हो गया। बोली, "मुझे हंसने की बहुत साध होती है बेटा। लेकिन ईश्वर क्या मुझे हंसने दे रहा है? मुझे तो हंसने में भी डर लगता है। हंसने से यही लगने लगता है कि मेरी तकदीर फूट जाएगी—। मेरे भाग्य में अब हंसी नहीं है।"

उसके बाद एक ही लमहे में मां ने अपने आपको संयत कर लिया। बोली, "खैर, यह बता कि तू क्या खाएगा? कब कलकत्ता से चला था, यह बता। दिन-भर तूने कुछ भी नहीं खाया होगा।"

संदीप बोला, "नहीं-नहीं, मैं सवेरे भात खाकर चला था।"

"फिर तो बेड़ाचांपा बहुत पहले पहुंच चुका होगा। अब तक कहां था?"

संदीप बोला, "तारक से उसकी कहानी सुन रहा था—"

"तारक? तारक कौन है? घोष परिवार का वह लड़का?"

संदीप बोला, "हां, वह बहुत तकलीफ में है मां। उसकी तकलीफ की दास्तान सुनते-सुनते देर हो गई—कभी वह मेरे साथ एक ही क्लास में पढ़ता था।"

मां बोली, "तू इतने दिनों बाद आया और हाटतल्ली में बैठे-बैठे तारक की कहानी सुन रहा था? उन सब लड़कों से मेलजोल करने से फायदा ही क्या है? न तो उनके माथे पर छत है और न ही खाने के लिए उनके पास अनाज है—ऐसे आवारा लड़कों से तू इतना मेलजोल क्यों करता है?"

संदीप बोला, "वे लोग भारी विपदा से गुजर चुके हैं मां। उन लोगों के घर

में आग लगने से उसके मां-बाप-भाई-बहन सब जलकर मर गए हैं—। तुम्हें सुनने को नहीं मिला है ?"

उन बातों पर ध्यान न देकर मां ने एक कलसी से एक कटोरा फरकी निकालकर दिया। बोली, "अभी थोड़ी-सी फरकी खा ले, थोड़ा-सा गुड़ भी दे देती हूं—बाद में तेरे लिए भात ले आऊंगी।"

बाद में मां ने पत्थर के कटोरे में थोड़ा-सा गुड़ भी दिया।

संदीप बोला, "तुम इतना व्यस्त क्यों हो रही हो मां ? मैं तुमसे बातचीत करने आया हूं और तुम मुझसे सिर्फ खाने-पीने के बारे में बातें कर रही हो ? मैं क्या यहां खाने के लिए आया हूं ?"

इतनी बात कहने पर भी मां राजी नहीं हुई। "मुझे तो चटर्जी बाबुओं के यहां रसोई पकाने के लिए जाना ही है। साथ में अपने लिए और तुम्हारे लिए भात भी ले आऊंगी। आज मुझे ज्यादा देर नहीं होगी—जाकर तुरन्त लौट आऊंगी।"

मां किसी भी हालत में अपने बेटे की बात मानने को तैयार नहीं हुई और चटर्जी बाबुओं के घर चली गई। मां के जाने के बाद संदीप ने अन्दर से दरवाजे की सिटकनी बंद कर दी। लेकिन चाहकर भी फरकी नहीं खा सका। मां के बारे में सोचकर उसे तकलीफ का अहसास हुआ। मां ने इतनी तकलीफ झेलकर उसे पाला-पोसा है पर वह इतने बरसों के दौरान मां के लिए कुछ कर नहीं सका है, मां का ऋण वह उतार नहीं सका है। पिताजी का यह मकान था—

थोड़ी देर बाद ही कोई दरवाजे पर धक्का लगाने लगा। बाहर से मां की आवाज आई, "अरे मुन्ना, दरवाज़ा खोल—"

दरवाज़ा खोलते ही मां बोली, "अरे, काशी बाबू तुझे एक बार बुला रहे हैं, तुझसे बातचीत करना चाहते हैं—"

"क्यों ?"

"तू बहुत दिनों के बाद देस आया है, इसलिए तुझसे एक बार मिलने की इच्छा प्रकट की, चल।"

याद है, बहुत दिनों के बाद काशी बाबू से मिलकर संदीप को बेहद खुशी हुई थी। बहुत कुछ सीखने का मौका मिला था। चटर्जी बाबुओं का इतना पुराना मकान है। उस मकान में तब थोड़ी-बहुत ध्वंस की छाप नज़र आई थी। बहुत सारी जगहों में दीवार से रेत झड़कर गिर पड़ी थी। इन कई सालों के दरमियान काशी बाबू की उम्र भी जैसे बहुत ज्यादा हो गई हो। उन्होंने संदीप के बारे में सारा कुछ पूछा। कलकत्ता में संदीप को कौन-सा काम करना पड़ता है, मुखर्जी बाबुओं के कर्मचारियों का स्वभाव कैसा है, संदीप दिन-भर क्या करता है—खोद-खोदकर संदीप से सारा कुछ पूछा। आखिर में बोले थे, "देखो भैया, तुम लोगों के बारे में सोचकर मुझे बहुत तकलीफ होती है। हम लोगों ने किसी तरह अपनी ज़िन्दगी बिता दी, लेकिन तुम लोगों के सामने मुसीबत का पहाड़ है। जिस तरह के दिन आ गए हैं, तुम लोग क्या करोगे, यही सोचता हूं—"

संदीप ने कहा, "मैंने आपकी देखादेखी लॉ पास किया है।"

"क्यों, तुम क्या कोर्ट में प्रैक्टिस करोगे ?"

संदीप ने कहा था, "हां, आप भी तो प्रैक्टिस करते हैं। आपने ही तो लॉ पढ़-

कर मुझे प्रैक्टिस करने कहा था—इसीलिए···"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "मैंने गलती की थी। आज मैं स्वीकार करता हूं कि माँ पढ़ने का सुझाव देकर मैंने गलती की थी। आजकल जैसा देख रहा हूं, इससे मेरी यही धारणा बनी है कि कानून से तुम किसी का कोई उपकार नहीं कर सकोगे।"

काशीनाथ बाबू की बात सुनकर सदीप अवाक् हो गया था। पूछा था, "क्यों ?"

काशीनाथ बाबू बोले थे, "अभी तुम यह सब समझ नहीं सकोगे। कभी मैंने तुम्हें चरित्र शब्द का अर्थ समझाया था, तुम्हें याद है ?"

"हां।"

"आज तुम्हें बता रहा हूं कि हाईकोर्ट ने भी अपना चरित्र खो दिया है—"

सदीप ने आश्चर्य में आकर पूछा, "क्यों ?"

काशीनाथ बाबू कहने लगे, "यह कहने लगूं तो बहुत कुछ कहना होगा। हो सकता है इस उम्र में मेरी बात तुम्हें ठीक से समझ में नहीं आए। लेकिन मैं जो कुछ कह रहा हूं उसमें सच्चाई है।"

आज से कितने साल पहले की वे बातें अब भी उसके कानों में जैसे गूंज रही हैं। काशीनाथ बाबू ने कहा था, "देखो, और-और लोगों की तरह मैंने भी स्वदेशी आन्दोलन में भाग लिया था, अंग्रेजों को देश से भगाने के लिए गांधीजी की बात पर मैंने भी खादी के कपड़े पहने थे। लेकिन अब लगता है, मैंने गलती की थी। देख रहा हूं कि अंग्रेजों के चले जाने के बाद हम लोगों की सिर्फ बर्बादी ही हुई है, काम कुछ भी नहीं हुआ है।"

सदीप काशीनाथ बाबू की बातें सुनता जा रहा था और आश्चर्य में खो रहा था। काशीनाथ बाबू यह सब क्या कह रहे हैं !

काशीनाथ बाबू कहने लगे, "तुम वकील मत बनना। इच्छा रहने पर भी तुम वकील बनकर आदमी की कोई भलाई नहीं कर सकोगे। हम लोगों के देश में जितने भी महान व्यक्ति हो चुके हैं, उन्हें अंग्रेज पैदा कर गए हैं। और अब ? अब हम जानवर पैदा कर रहे हैं।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोले, "तुम तो कलकत्ता में रहते हो। तुमने देखा है कि वहां कितनी गोलगप्पे की दुकानें हैं ? देखा है न ?"

सदीप ने कहा, "हां, देखा है।"

"कलकत्ता में कितने गोलगप्पे वाले हैं, बताओ तो ? कितने हजार ?"

"सो मालूम नहीं। गिनकर नहीं देखा है।"

काशीनाथ बाबू बोले, "कम से कम बीस हजार तो होंगे ही। उनके मालिक कितने लोग हैं, जानते हो ?"

काशीनाथ बाबू बोले, "नहीं जानते हो तो सुन लो। चार व्यक्ति ही हैं। मात्र चार मालिक बीस हजार गोलगप्पे वालों को कब्जे में रखते हैं। तुम यह सोच सकते हो ?"

सदीप इस बात का जवाब दिए बगैर चुप्पी साधे रहा।

"और कितनी पान सिगरेट की दुकानें हैं ? कुल मिलाकर पचासेक हजार से

अधिक ही होंगी। उन्हें कितने लोग कंट्रोल कर रहे हैं, जानते हो? सिर्फ बारह व्यक्ति। बताओ तो वे लोग कौन हैं?"

संदीप को यह भी मालूम नहीं था।

काशीनाथ बाबू बोले, "यह बात सुन लो कि उनमें से एक भी बंगाली नहीं है। वे ही लोग हम लोगों के व्यवसाय-वाणिज्य चला रहे हैं और हम उन्हीं की बात पर उठते-बैठते हैं। यह किसका दोष है?"

फिर भी संदीप कोई जवाब नहीं दे सका।

इसके बाद काशीनाथ बाबू बोले, "तुम कभी स्यालदह स्टेशन की तरफ गए हो?"

संदीप बोला, "बीच-बीच में जाता हूं।"

काशीनाथ बाबू बोले, "इसे ठीक-ठीक जाना नहीं कहा जाएगा। जाने पर गौर से देखोगे तो पता चलेगा कि वहां स्कूल फाइनल और बी० ए०—एम० ए० के सर्टिफिकेट बेचे जाते हैं। कोई भी रुपये से उन्हें खरीद सकता है। उन नकली सर्टिफिकेटों को ही दिखाकर आजकल के युवक नौकरी में भर्ती हो रहे हैं। वे ही लोग डॉक्टर, इंजीनियर और वकील बन रहे हैं। सो हम लोगों के देश का चरित्र इतना खराब होता जा रहा है—"

इतने सालों तक कलकत्ता में रहने के बावजूद संदीप ने यह सब नहीं देखा था और देखा भी होगा तो इस पर गौर नहीं किया था।

उसके बाद काशीनाथ बाबू ने कहा था, "इसी वजह से तुमसे कहा था कि हम लोगों के देश में जो महापुरुष हो गए हैं उन्हें अंग्रेजों ने ही पैदा किया था। उनके चले जाने के बाद यहां एक भी महान व्यक्ति ने जन्म नहीं लिया, सिर्फ जानवर ही पैदा हो रहे हैं—"

इनके बाद बहुत देर तक काशीनाथ बाबू एक भी शब्द नहीं बोले थे। उनके कलेजे के अन्दर जो तकलीफें इतने दिनों से टीस बनकर चुपचाप तड़प रही थीं, बाहर न निकल पाने के कारण निःशब्द उमड़-घुमड़ रही थीं, संदीप को पाकर वे जैसे लावे की तरह बाहर निकल आई थीं और पूरे माहौल को अपने आपमें जज्ब कर शांत हो गई थीं।

उसके बाद बहुत देर के बाद फिर बोले थे, "तुमने देखा नहीं है कि रातों-रात कलकत्ता में लॉटरी की दुकानों की भरमार हो गई है। जिधर भी आंखें दौड़ाओ लॉटरी की दुकानें दिख पड़ेंगी। इतनी लॉटरी की दुकानें क्यों खुली हैं, बता सकते हो? यह है हमारे जातीय-विनाश का लक्षण। हम करेंगे कुछ भी नहीं, लेकिन सब कुछ का उपभोग करेंगे, इसी आकांक्षा के कारण लॉटरी की दुकानों में बढ़ोत्तरी हो रही है। इस जाति का अधःपतन नहीं होगा तो किसका होगा?"

बहुत देर से बातचीत का दौर चल रहा था। न जाने क्यों उस दिन काशी बाबू इतने मुखर हो गए थे। सो भी उसके जैसे एक आधुनिक काल के युवक के सामने। लेकिन संदीप को यह सब सुनने में अच्छा लग रहा था। इस तरह की बातें इसके पहले उसने किसी से नहीं सुनी थीं।

"और एक बात सुन लो। सुनने से तुम्हें अब वकील बनने की इच्छा नहीं होगी। यहां की हाटतल्ली के पास एक गरीब आदमी था। एक दिन उसके घर में

आग लग जाने से पूरा परिवार जलकर मर गया। जिन्दा रह गया तुम्हारे हम-उम्र का एक लड़का।"

संदीप बोला, "हां, वह हम लोगों के साथ एक ही क्लास में पढ़ता था, उसका नाम है तारक घोष।"

"ओ, तुम उसे पहचानते हो। सो उसके साथ क्या वाकया हुआ, सुनो। मैंने उसकी तरफ से हाईकोर्ट में एक मुकदमा दायर कर दिया।"

"आपने मुकदमा दायर किया था ? किसके खिलाफ ?"

"जिन लोगों ने उसके घर में आग लगा दी थी, उन लोगों के खिलाफ। पुलिस भी उनके खिलाफ थी। लेकिन आखिरकार क्या हुआ, जानते हो ?"

"क्या ?"

"एक साल तक मुकदमा लड़ने के बावजूद मुजरिमों के खिलाफ कोई सबूत पेश नहीं किया जा सका। मुजरिमों को बेकसूर साबित कर रिहा कर दिया गया। और उसके बाद उस ज़मीन पर पार्टी के नाम पर एक तीन-मंज़िला पक्की इमारत खड़ी हो गई। अब उस मकान का मालिक कौन है, जानते हो ? मालिक का नाम है गोपाल हाजरा।"

"गोपाल हाजरा !!!"

"हां, वह इसी बेहापोता का एक आवारा युवक था। उसका बाप किसी ज़माने में इसी हाटतल्ली में बैठकर कुम्हड़ा वगैरह बेचा करता था। लिखने-पढ़ने के मामले में वह बिलकुल गोल था, लेकिन सुना है, अब वह एक मिनिस्टर का पी० ए० है। यह है हालत ! यही है हम लोगों का देश—"

अब शायद मा का काम-काज खत्म हो चुका था।

काशीनाथ बाबू की नज़र पड़ी तो बोले, "लो, तुम्हारी मा आ गई। बहुत दिनों के बाद तुमसे मुलाकात होने पर उसे अच्छा लगेगा ''एक बात और'''"

संदीप उठने जा रहा था, पर रुक गया।

"देखो, अपने ज़माने में हम पहले आदमी के बारे में सोचते थे, सबसे पहले देश के बारे में सोचते थे। अब सबसे पहले पार्टी की बात सोची जाती है। आदमी चाहे जहन्नुम में जाए, देश भले ही रसातल में जाए, लेकिन पार्टी आबाद रहनी चाहिए—"

घर लौटने पर मा ने पूछा था, "काशी बाबू इतनी देर तक तुझसे क्या बातें कर रहे थे ?"

संदीप के ज़ेहन में तब भी काशी बाबू की बातें मंडरा रही थीं। वह उन्हीं में डूबा हुआ था। उसने मा की बात का कोई जवाब नहीं दिया।

मा ने पूछा, "तू क्या सोच रहा है ?"

संदीप एकाएक बोला, "मां, तारक की क्या हालत होगी ?"

"तारक ? कौन तारक ? किस तारक के बारे में कह रहा है ?"

"वही तारक घोष जो हम लोगों के साथ पढ़ता था ? जिसका घर जल जाने से उसके मा-बाप-भाई-बहन सब लोग मर गए थे, वह अभी अपना खून बेचकर पेट भरता है। तारक का क्या होगा ?"

मा को गुस्सा आ गया। बोली, "तू तो बस बेवजह की चिन्ता में डूबा रहता

है। एक वार गोपाल हाजरा के बारे में सोचकर देखो तो! हाजरा बूढ़े के उस लड़के के बारे में। वह अब कितना वड़ा आदमी हो गया है। अभी वह कितना रुपया कमा रहा है। हाटतल्ली के पास कितना वड़ा मकान बनवाया है, सोचकर देखो तो!"

संदीप ने कहा, "किसी ज़माने में तुम्हीं मुझे गोपाल हाजरा से मिलने को मना करती थीं। याद नहीं है, तुम्हें?"

मां गुस्सा गई, "वस एक ही वात तू दुहराता रहता है। कब मैंने तुझे किससे मिलने को मना किया था, यही सव पुरानी बातों का तू ज़िक्र करता रहता है। कितना वड़ा मकान बनवाया है, यह तो एक वार भी नहीं सोचता है—"

मां ने तव कितना कुछ कहा था, मगर उसकी एक भी वात उसके दिमाग में नहीं समा रही थी। उस समय उसे सिर्फ तारक घोष की ही याद आ रही थी। रात में भी मां की वगल में लेटने पर उसे बहुत देर तक नींद नहीं आई थी। सिर्फ तारक की याद ही उसे मथ रही थी।

सवेरे नींद टूटते ही उसे भोर की ट्रेन पकड़ कलकत्ता पहुंचना है। रात-भर उसे नींद नहीं आई। भोर होते न होते मां उसे पुकारने लगी, "अरे मुन्ना, उठ-उठ—"

वह हड़बड़ाकर नींद से जगकर उठ बैठा था। उस समय चारों तरफ अंधेरा फैला हुआ था। फटाफट मुंह-हाथ धोकर तैयार हो गया। मां ने पिछली रात के थोड़े से भात में पानी मिलाकर रख दिया था। संदीप को वही दिया। बोली, "वचपन में तू बासी भात खाना वेहद पसंद करता था, इसीलिए तेरे लिए रख दिया था। ले, खा ले—"

खाकर संदीप ने मां के चरणों का स्पर्श किया। बोला, "मां, तुम अपनी सेहत पर ध्यान रखना। मैं चलता हूं। चिट्ठी लिखूंगा।"

तव भी चारों तरफ गहरा अंधेरा रेंग रहा था। पीछे से मां बोली, "दुर्गा-दुर्गा—"

सड़क पर निकलने के वाद संदीप ने अपने कुरते के पॉकेट में हाथ डालकर देखा। सिर्फ पांच ही रुपये हैं। ट्रेन का टिकट कटाने के वाद भी उसके साथ कुछ रुपए वच जाएंगे। हाथ में एक रुपया रहना ही काफी है। वाकी रुपये?

वाकी रुपये वह तारक को देकर जाएगा। देने के वक्त कहेगा, "एक रुपये का तू फरकी वगैरह खा लेना।"

रुपया पाकर, हो सकता है, तारक चौंक उठे। संदीप कहेगा, "अन्यथा नहीं लेना तारक। और भी रुपये पास में होते तो तुझे देता। दूसरी वार जव आऊंगा तो तुझे ढेर सारा रुपया दूंगा। अभी इससे ज़्यादा मेरे पास नहीं है भाई। ले, इस रुपये को रख ले—"

संदीप ने जो सोचा था वही हुआ। पिछली रात तारक जिस दुकान के मचान पर सोया हुआ था, भोर के वक्त भी वहीं सोया हुआ था। वह गहरी नींद में मशगूल था।

करीव जाकर संदीप ने पुकारा, "तारक, ऐ तारक—"

तारक ने कोई जवाव नहीं दिया, वह गहरी नींद में खोया हुआ है।

"ऐ तारक, तारक, मैं संदीप हूं, उठ-उठ। मेरी गाड़ी का वक्त हो गया है, उठ···"

फिर भी तारक ने जवाब नहीं दिया। कितनी नींद मे है तारक! निराहार रहने पर आदमी को इतनी गहरी नींद कैसे आती है!

अब संदीप हाथ से तारक को धक्का देने लगा। और तभी तारक की देह धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ी।

"उफ!"

अपने हाथों से संदीप जब तारक को उठाने लगा तो वह दहशत के मारे दो कदम पीछे हट गया। बर्फ के मानिंद उसका शरीर ठंडा है।

तो क्या···

हां, यही बात है। तारक का रक्तहीन शरीर तब सासारिक प्रयोजन-अप्रयोजन से ऊपर उठकर एक अलौकिक जगत मे पहुंच चुका था—वहा जाने से तमाम चाह और प्राप्ति असत्य हो जाती है।

आस-पास कही कोई आदमी नही है। खून बेचने पर पैंतालीस रुपये, एक प्याली कॉफी और एक उबला हुआ अंडा मिलता था। उसके खून की यही कीमत थी। सामने ही गोपाल हाजरा की आलीशान इमारत तब खड़े-खड़े नींद ले रही थी, जैसे उसे किसी की परवाह न हो। और संदीप के पैरों के तले तब तारक का स्थिर-निस्पंद शव था···

यह नरदेह!

कई व्यक्ति तारक को वहां उस हालत मे देखकर इकट्ठे हो गए। लेकिन उन लोगों के जलते प्रश्न का उत्तर कौन देगा? उस समय किसको इतनी फुर्सत थी? और प्रश्न करनेवाला आदमी रहे भी तो उत्तर सुननेवाले इस दुनिया मे कितने हैं? उन्हें भी जिन्दा रहना है और जिन्दा रहने के लिए उन्हें रोजगार करना है। मुरदे के सामने मुह बाए खड़े रहने से उनका काम नही चलेगा।

एकाएक दूर से किसी ट्रेन की सीटी की आवाज़ कान मे आई। उस आवाज को सुनकर संदीप की चेतना लौट आई। उसके बाद वह स्टेशन की ओर तेज़ कदमो से बढने लगा। और वह जैसे ही स्टेशन पहुंचा, ट्रेन खुल गई। संदीप जल्दी-जल्दी आगे की ओर बढते एक डिब्बे मे किसी प्रकार घुस गया और उसे लगा कि वह निश्चित मृत्यु के हाथ से बचकर चला आया।

लेकिन निश्चित मृत्यु के हाथ से छुटकारा पाना क्या इतना आसान है! मृत्यु कहां नही है? जीवन सीमित है। एक निर्धारित आयु रेखा पर पहुंचने के बाद सभी को जीवन के सामने विराम चिह्न लगाना होगा। लेकिन मृत्यु? तमाम जीवित वस्तुए एक स्थान पर पहुंचकर समाप्त हो जाती हैं। लेकिन एकमात्र मृत्यु ही एक ऐसी चीज़ है जिसकी मृत्यु नही होती।

याद है, कलकत्ता आने पर भी वह कई दिनों तक बेड़ापोता को नही भूल सका था। बेड़ापोता ने ही उसके तमाम रात और दिनों को निस्सार बना दिया था। बेडापोता का मतलब है काशीबाबू और तारक घोष।

तो क्या आदमी, समाज और देश नहीं रहेंगे, सिर्फ पार्टी ही रह जाएगी ! सच, सिर्फ पार्टी ही रह जाएगी ? सिर्फ भूतनाथ दास (भुतो), ललित मोहन माइती (लालटु), सुशील सरकार, तीन वार मैट्रिक फेल मिनिस्टर श्रीपति मिश्र और गोपाल हाजरा ही रह जाएंगे ? वे ही हमेशा से रहते आए हैं और हमेशा रहेंगे भी ?

मल्लिक चाचा काशी चले गए थे, दादी मां के गुरुदेव के पास। ए० सी० चटर्जी जी एम० ए० पास लड़की विनीता की जन्मपत्री दिखाने अपने साथ ले गए थे। उन्हें लौटने में देर होगी। इस बीच संदीप ही तमाम काम-काज चला रहा था। एक वार घर के रोज़मर्रा हिसाब वगैरह लेकर दादी मां के पास जाकर उसका ब्यौरा प्रस्तुत करने और उसके वाद फिर रसेल स्ट्रीट जाकर विशाखा के हाल-चाल का पता लगाने का काम। और कभी-कभी अपने लिए नौकरी की तलाश करने का काम।

वैंक की नौकरी संभवतः मिली नहीं।

और वकील होना तो संभव ही नहीं है। काशी वावू ने स्पष्ट तौर पर समझा दिया है कि कानून की तालीम लेने से अपनी भलाई नहीं की जा सकती है और देश की भलाई करना तो दूर की वात है। क्योंकि अंग्रेजों के चले जाने के वाद कोर्ट ने भी अपना 'चरित्र' खो दिया है।

उस दिन रसेल स्ट्रीट के मकान से वापस आने के दौरान दिन की ही रोशनी में उसे एक नया अनुभव हुआ। काशी वावू की वात विलकुल सच सावित हुई।

सड़क के एक आदमी ने उसे पुकारा, "भाई साहव, सुन रहे हैं—"

संदीप ने मुड़कर देखा। खासे साफ-सुथरे शर्ट-पैंट पहने एक आदमी उसकी ओर ताक रहा है। संदीप को देखकर उसके पास आगे वढ़ आया। कान के पास मुंह ले जाकर धीरे से कहा, "सर्टिफिकेट लेना है भाई साहव ?"

वहुत दिन पहले किसी मिनिस्टर के द्वारा हस्ताक्षर किए गए सर्टिफिकेट की वात की उसे याद आ गई। उस सर्टिफिकेट को दिखाने से राशन कार्ड पाने की सुविधा की प्रतिवद्धता जुड़ी हुई थी।

"किस चीज़ का सर्टिफिकेट ?"

"वी० ए०, एम० ए० का सर्टिफिकेट—एकदम से असली सर्टिफिकेट, जाली नहीं। ढाका यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर का हस्ताक्षर किया हुआ है, आप जांच कर लीजिएगा—"

संदीप ने पूछा, "इससे क्या होगा ?"

आदमी वोला, "आप यह क्या कह रहे हैं भाई साहव ! सर्टिफिकेट से जो-जो होता है, वही सव होगा। इसे दिखाने से नौकरी मिलेगी, शादी-व्याह भी हो जाएगा। वहुतेरे लोग शिक्षित दामाद की खोज करते हैं। इसके अलावा चाहे और कुछ न हो, ट्यूशन तो मिल ही जाएगा। ले लीजिए—"

उसके वाद वोला, "ज़रा इधर सरक आइए। यहां खुली हुई सड़क पर दिखाना नहीं चाहता, ज़रा आड़ में चले आइए। ज़्यादा दाम नहीं है, तीस रुपये में ही मिल जाएगा। आइए, इस तरफ चले आइए—"

यह आदमी पीछा छोड़नेवाला जीव नहीं है। संदीप ने कहा, "नहीं, मुझे

ज़रूरत नही है। मैंने तो यों ही बी० ए० पास कर लिया है—"

"एम० ए० का भी सर्टिफिकेट मेरे पास है। उसकी कीमत कुछ ज्यादा है। पचास रुपये। सोचकर देखिए, कितना सस्ता है। आपको वक्त जाया नहीं करना पड़ेगा, किताबें नही खरीदनी पड़ेंगी, परीक्षा की फीस भी नही देनी पड़ेगी। बगैर मेहनत किए आप एम० ए० डिग्रीधारी हो जाइएगा।"

संदीप को उधेड़बुन में देखकर वह बोला, "अच्छा ठीक है, आपको मैं स्पेशल केस के तौर पर और दस रुपया कम कर दूंगा। चालीस रुपये में ही आप ले लें। आप गरीब आदमी हैं और मैं भी गरीब हूं। ले जाइए। दो दिन देर कीजिएगा तो पछताना होगा, उस समय लाख कोशिश कीजिएगा तो भी आपको नही मिलेगा—ले जाइए।"

यह कहकर उस आदमी ने झोले के अन्दर हाथ डाला।

लेकिन अन्ततः क्या होता, कहना मुश्किल है। सुशील सरकार ने बचा दिया।

"यह क्या, आप कहां जा रहे हैं ?"

संदीप बोला, "अभी रमेल स्ट्रीट में घर लौट रहा हूं।"

सर्टिफिकेट वाला तब खुद को निरुपाय हालत में पाकर वहां से चंपत हो गया होगा। व्यर्थ ही उसका इतना वक्त बर्बाद हो गया। तब वह दूसरे ग्राहक की तलाश में और कहीं चला गया।

सुशील ने पूछा, "आपकी बैंक की उस परीक्षा का क्या फलाफल हुआ ?"

"उसके बाद कोई खबर नही भेजी गई है। शायद परीक्षा में मैं फेल कर गया।"

सुशील बोला, "मैंने तभी कहा था कि हमारी पार्टी में भर्ती हो जाइए, किसी न किसी दिन कोई न कोई गुंजाइश हो ही जाएगी।"

संदीप बोला, "आप तो किसी एक पार्टी के मेम्बर हैं, तो फिर आपकी गुंजाइश क्यों नहीं हो रही है ?"

सुशील बोला, "हमारी पार्टी अब भी सत्ता मे नही आई है। आने पर मुझे ही फर्स्ट चांस मिलेगा। इसके बाद वाले चुनाव में हमारी पार्टी अवश्य ही खड़ी होगी। हमारी पार्टी का एक भी आदमी अगर मिनिस्टर हो जाएगा तो फिर क्या कहना!"

उसके बाद ज़रा रुककर बोला, "चलिए न, कहीं चलकर ज़रा बैठें।"

संदीप ने कहा, "आज बैठ नही पाऊंगा। अभी घर जा रहा हूं। वहां से मेरे चाचाजी एक काम से काशी गए हुए हैं। आज ही उनके लौटने की बात है। इसके अलावा मेरा हिसाब वगैरह का भी बहुत काम बाकी पड़ा हुआ है। उसके पहले ही मुझे वह सब कर लेना है। अच्छा, चलता हूं।"

यह कहकर संदीप ने अपने गंतव्यस्थल की ओर कदम बढ़ाए।

इसके बाद ही सारा कुछ स्पष्ट हो गया। दादी मां के गुरुदेव ने नई पात्री की जन्मपत्री देखने के बाद बताया कि पात्री का पति-भाग्य अच्छा है। जन्मपत्री में पतिव्रता, पुत्रवती और कुललक्ष्मी होने का योग है। क्योंकि साध्वी पत्नी प्राप्त होने में धर्म-

अर्थ-काम-मोक्ष चारों विधि के फल की प्राप्ति होती है। अन्यथा जीवन मरुभूमि के समान और संसार विषवत् प्रतीत होता है।

यह नई पात्री सर्वगुणसम्पन्न, सर्वसुलक्षणयुक्त है। इसके अतिरिक्त इस पात्री के घर-गृहस्थी में आगमन के साथ ही घर आनन्दपूर्ण हो जाएगा।

यह सूचना मिलते ही दादी मां ने टेलीफोन से सारी बातों की सूचना दे दी।

मुक्तिपद यह सुनकर बेहद खुश हुए। बोले, "तो फिर मिस्टर चटर्जी को इस समाचार से अभी अवगत करा दूं? इसके बाद तुम अपना विचार तो नहीं बदलोगी?"

"अरे, तू ऐसा क्यों कह रहा है? मैंने कभी वादा कर वादाखिलाफी की है?"

मुक्तिपद ने कहा, "नहीं, तुमने नहीं किया है। लेकिन इसलिए कह रहा हूं कि आगे चलकर मुझे कहीं शर्मिन्दा न होना पड़े। तो फिर मैं आज अपनी तरफ से मिस्टर चटर्जी को ज़बान दे दूं?"

"हां, दे दे—"

मुक्तिपद ने मिस्टर चटर्जी को तुरन्त फोन किया। बोले, "मिस्टर चटर्जी, एक खुशखबरी है—"

"कहिए-कहिए? खुशखबरी क्या है?"

मुक्तिपद बोले, "नहीं, टेलीफोन से यह काम नहीं हो सकेगा। मैं अभी तुरन्त आपके पास आ रहा हूं—"

"ठीक है, आइए। मैं इन्तजार करता रहूंगा।"

लेकिन नहीं, ऑफिस के काम की मेज़ पर बैठकर यह सब घरेलू बात ठीक से नहीं हो पाएगी। मिस्टर चटर्जी मुक्तिपद को लेकर सीधे क्लब चले गए। क्लब में मिस्टर चटर्जी के लिए एक सूट आरक्षित है, साथ ही विशेष आयोजन का बन्दोबस्त भी है। एकांत में बातचीत करने के लिए यह एक आदर्श स्थान है। किसी पार्टी के आदर-सत्कार की ज़रूरत पड़ती है तो वे उसे यहीं ले आते हैं। इनकम-टैक्स के बारे में अत्यन्त गोपनीय बात करने की जरूरत पड़ती है तो उन्हें भी यहीं ले आते हैं। यहां उनके लिए हर तरह के आराम का इन्तज़ाम रहता है। अपने घर से भी यह कमरा उनके लिए ज्यादा आरामदायक है।

मिस्टर चटर्जी बोले, "बताइए, किसी कोल्ड ड्रिंक की ज़रूरत है या नहीं?"

"नहीं, किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है।"

"फिर..."

मुक्तिपद ने बीच ही में बाधा डालकर कहा, "मुझे किसी चीज़ की जरूरत नहीं है। मैं अपनी बात आपको बताकर चला जाऊंगा।"

मिस्टर चटर्जी बोले, "हां बताइए, खुशखबरी क्या है?"

मुक्तिपद बोले, "काशी से मां के गुरुदेव का ग्रीन सिग्नल मिल गया है। मां अब यह शादी करने को तैयार हैं।"

"वेरी-गुड। रिअली ए वेरी गुड न्यूज। इसके बाद? अब मुझे क्या करना है?"

मुक्तिपद बोले, "अब आप 'प्रोसीड' करें। और उधर सौम्य भी हम लोगों के लंदन ऑफिस गया हुआ है—"

"वह कब लौटकर आएगा ?"

"थोड़ी-सी देर होगी। दूसरी बात है, शादी की बात छिड़ते ही तो शादी नही हो जाती। उसके लिए भी बहुत कुछ एरेन्जमेन्ट करने की जरूरत पड़ती है। आप तो जानते ही हैं कि मेरी मां भी कंपनी की एक डाइरेक्टर है, इसके अलावा बेहद कंजर्वेटिव। किसी जमाने में पिताजी के साथ लंदन, जर्मनी, अमरीका आदि स्थानो का भ्रमण कर चुकी है। लेकिन कभी होटल में नही खाया था। साथ में इंडिया से ब्राह्मण रसोइया खाना पकाने के लिए ले जाती थी। इसीलिए पुरोहित जी पचांग देखकर जो तिथि निश्चित कर देंगे उस तिथि के अलावा किसी दूसरे दिन शादी नही कराएगी। जानते हैं, अब भी मां पूव तड़के बाबूघाट जाकर गंगा-स्नान कर आती है। चाहे कितनी ही सरदी पड़े या गरमी—किसी दिन इसमे व्यतिक्रम नही होता।"

"वेरी स्ट्रेंज !"

मुक्तिपद बोले, "इस बुढ़ापे मे भी हम मां से यम की तरह डरते हैं—"

"सचमुच अवाक् होने जैसी बात है।"

मुक्तिपद बोले, "मां अब भी निर्जला एकादशी करती है। नियम से सभी व्रत और पूजा करती है। मैं कोई एतराज नहीं करता। पिताजी भी जब तक जीवित थे उन्होंने भी कोई एतराज नहीं किया था।"

"एतराज न करना ही तो अच्छा है—"

अचानक कमरे का टेलीफोन बज उठा। मिस्टर चटर्जी ने टेलीफोन उठाया, "कौन ? हां, नाइजेरिया से। नही, कह दो, अभी मुलाकात नही हो पाएगी—"

"अयं, कल मैं हांगकांग चला जाऊंगा। नेक्स्ट महीने में आने कहो।"

यह कहकर रिसीवर रख दिया।

उसके बाद बोले, "विनीता कह रही थी, अबकी वह सोसिओलॉजी मे पी-एच० डी० करेगी।"

"सो करे न, शादी की बात तो पक्की हो ही चुकी। अब उसे जितनी मर्जी हो पढ़े।"

"आपकी मा पढाई-लिखाई करने से आपत्ति नही करेंगी न ?"

मुक्तिपद बोले, "नहीं-नही, उस मामले में वह बहुत लिबरल है। आज के जमाने मे शिक्षा-दीक्षा के बिना काम कैसे चल सकता है ? उसे सौम्य के साथ विदेश जाना पड़ जाए, तो क्या होगा ? शिक्षा-दीक्षा न हुई होती तो मा मेमसाहब रखकर भी लिखा-पढा देती। यही देखिए न, हम लोगो के बिडन स्ट्रीट के मकान का मेन गेट रात नौ बजते न बजते बन्द कर देने की हिदायत दरवान को दी गई है। नौ बजे के बाद घर से बाहर निकलने का नियम नही है। मेरा भतीजा सौम्य भी रात के नौ बजते न बजते घर आकर डिनर लेकर सो जाता है—"

"आपका नेफ्यू उस ऑर्डर का पालन करता है ?"

मुक्तिपद बोले, "मानना पड़ता है। मेरे पिताजी भी जब तक जीवित थे, मां के आदेश के अनुसार काम करते थे। हम लोगो का घर मा के हुक्म पर ही चलता है। मां के हुक्म पर हम लोगो का घर उठता-बैठता है—पहले भी ऐसा ही था और आज भी ऐसा ही है।"

दुवारा टेलीफोन घनघना उठा। मिस्टर चटर्जी को ऊब महसूस हुई। बोले, "इंडिया आने पर ही मुझे इस मुसीवत का सामना करना पड़ता है। यहां आया हूं, एकांत में दो वातें करूंगा, इसका भी उपाय नहीं है।" यह कहकर रिसीवर उठाया।

"हेलो ! हां ? अब क्या—"

"तुम लोग क्या मुझे ज़रा शांति के साथ भी रहने नहीं दोगे। क्लब आने पर भी मैं ऑफिस के बारे में सोचता रहूं ? तो फिर इतनी तनख्वाह देकर तुम लोगों को क्यों रखा है ?·· क्या बोले ?···नहीं-नहीं, मैं नहीं जा पाऊंगा, मैं हांगकांग जा रहा हूं···कह देना, मेरे पास इतना वक्त नहीं है···नहीं-नहीं, मेरे पास वक्त नहीं है···"

यह कहकर रिसीवर को झनाक्-से टेलीफोन पर रख दिया।

उसके बाद मुक्तिपद की ओर देखकर बोले, "देखा न मिस्टर मुखर्जी, ये लोग ज़रा भी शांति की सांस नहीं लेने देते हैं।"

मुक्तिपद हंसते हुए बोले, "वह सब मुझे क्या बता रहे हैं ! फिर भी गनीमत है कि आपको लेवर-ट्रवल का मुकावला नहीं करना पड़ता।"

"यह सुधीर के चलते है। सुधीर के रहने के कारण ही इस मामले में मैं 'सेफ' हूं--"

मुक्तिपद बोले, "मुझे कोई लड़का रहता तो मैं उसे लेवर-लीडर बना देता—लेकिन मुझे लड़की है—"

मिस्टर चटर्जी बोले, "इससे क्या आता-जाता है। आप उसकी शादी किसी लेवर-लीडर से कर दें।"

मुक्तिपद बोले, "वह तो अभी बहुत छोटी है, अभी शादी के लायक उसकी उम्र नहीं हुई है। तब तक कैसे चलाऊंगा ?"

"आप लोगों का अब भी क्लोजर चल रहा है ?"

मुक्तिपद बोले, "किया ही क्या जा सकता है ? वरना वे लोग और भी मशीन जला डालेंगे। एकमात्र आपका सुधीर ही हमें बचा सकता है—"

मिस्टर चटर्जी बोले, "उसकी जिम्मेदारी मैं ले रहा हूं। मुझ पर इसकी जिम्मेदारी छोड़कर आप चैन की सांस लीजिए। मैं खुद भी तो कभी बहुत गरीब था। बहुत सारे दिन मैंने बगैर खाए गुजारे हैं। उन दिनों की बात क्या मैं भूल गया हूं, आप यही कहना चाहते हैं ? लेकिन अब मेरा दिन बदल गया है, अभी मेरे ही कारण लाखों लोग भर-पेट खा पा रहे हैं। हां, एक बात और···"

"कहिए, कौन-सी बात है ?"

मिस्टर चटर्जी बोले, "आपकी मां से एक बात पूछ नहीं सका था। शादी में हम लोगों को क्या-क्या देना है ?"

"इसका मतलब ? क्या-क्या देना होगा का मतलब क्या है ?"

मिस्टर चटर्जी बोले, "यानी 'डॉवरी' कितना देना पड़ेगा ? गहने-जेवरात के बारे में भी उस दिन आपकी मां से कोई बातचीत नहीं हो सकी। उसे 'क्लियर' करना क्या अच्छा नहीं रहेगा ?"

मुक्तिपद बोले, "इस संबंध में अगर आप और कुछ बोलेंगे तो मुझे उठकर

चल देना पड़ेगा..."

यह कहकर खड़ा होने जा रहे थे, मगर मिस्टर चटर्जी ने अड़चन डाल दी। बोले, 'अच्छा-अच्छा, ठीक है, पहले से इसलिए कह रहा हूं कि बाद में चलकर हम लोगों के बीच कोई मिसअंडरस्टैंडिंग न हो जाए, गलत समझने का कोई अवसर न आए—"

मुक्तिपद फिर से बैठ गए। मिस्टर चटर्जी बड़े ही व्यस्त आदमी हैं। वे खुद चाहे जिस देश में भी हों परन्तु उनका मन सारी दुनिया की परिक्रमा करता रहता है। जब वे नाइजेरिया में रहते हैं तो वहां रहने के बावजूद जैसे वहां नहीं रहते हैं। जैसे कि कलकत्ता में रहने पर भी वे कलकत्ता में नहीं रहते हैं। लड़की की शादी हो जाएगी तो वे और भी मुक्त हो जाएंगे, तब वे बाकी तमाम लोगों के हो जाएंगे। क्लब का यह कमरा साल-दर-साल किराये पर लिए रहते हैं लेकिन साल में कितने दिन इस कमरे में घुसते हैं, यह वे उंगली पर गिनकर बता दे सकते हैं। उनकी लड़की से शादी करने को तैयार न हो, ऐसा पात्र दुनिया में ढूंढ़ने में भी कहीं नहीं मिलेगा। दुनिया में क्या उनकी लड़की के लिए पात्र का अभाव है ? उनके पास दौलत है, यही उनकी लड़की का सबसे बड़ा क्वालिफिकेशन है। अलबत्ता वे खुद भी पूछने पर यह नहीं बता सकते कि उनके पास कितने रुपये हैं। इसका पता उनके एकाउन्टेन्टों को है। सो भी एक ही एकाउन्टेंट नहीं है उनके पास। उनके पास जितनी भी कंपनियां हैं, उतने ही एकाउन्टेन्ट हैं। अपनी-अपनी कंपनी का हिसाब वे लोग ही रखते हैं। लेकिन जो आदमी कंपनियों का मालिक है उसे कंपनियों की ओर से इनकम टैक्स के मालिक को जवाबदेही देनी पड़ती है। मगर जिस तरह दुनिया की तमाम निखालिस चीजों में मिलावट रहती है, उसी तरह उस जवाबदेही में भी बदस्तूर मिलावट रहती है। मजे की बात है कि उस मिलावट का हिसाब उन्हें अपने जेहन में ही रखना पड़ता है। यही सबसे कठिन है। उस कठिन काम की जटिलता से छुटकारा पाने के लिए उन्हें इस कलकत्ता क्लब की तरह ही दुनिया के सभी देशों के सभी क्लबों का उन्हें मेम्बर बनना पड़ा है। तमाम क्लबों में उनके लिए साल-दर-साल एक-एक कमरा आरक्षित रहता है। कभी नाइजेरिया, कभी हांककांग, कभी न्यूयार्क, कभी स्विट्जरलैंड या यही दूसरी जगह उन्हें जाना पड़ता है। वे भले ही व्यक्तिगत तौर पर वहां जाते हैं लेकिन उनका मन कभी वहां नहीं रहता। अब की अपनी लड़की की शादी के सिलसिले में आए हैं। यह भी उनका पवित्र कर्त्तव्य है।

"तो फिर अब उठना चाहिए—"

इस क्लब में आने पर मुक्तिपद मुखर्जी से जो बातें हुईं उसका हिसाब भी कंपनी के खाते में लिखा जाएगा, यह भी लिखा जाएगा कि सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर के साथ लंच लेने की बाबत दो हजार रुपये खर्च हुए हैं। इनकम टैक्स ऑफिस से भी इसके लिए बाकायदा रियायत दी जाएगी।

"आप तो कल हांगकांग जा रहे हैं ? फिर कब मुलाकात होगी ?"

"मैं इंडिया लौटते ही आपसे संपर्क स्थापित करूंगा। इस बीच आप टेलेक्स से सौम्यपद को हमारे निर्णय से अवगत करा दें। कहिएगा, आपकी मां भी इस शादी के लिए सहमत हो गई हैं—"

मुक्तिपद ने कहा, "सो तो कहूंगा ही। यह शादी जितनी जल्द हो जाए मेरे लिए उतना ही अच्छा है। हम लोगों की फैक्टरी उतनी ही जल्द खुल जाएगी। कितना 'सफर' कर चुका हूं—"

मिस्टर चटर्जी बोले, "आप चिन्ता मत करें मिस्टर मुखर्जी, मेरा सुधीर सब सही रास्ते पर ला देगा। उसके यूनियन की कुल संख्या साढ़े छह लाख है।"

मिस्टर चटर्जी से आश्वासन पाकर मुक्तिपद को आशा का प्रकाश दिखाई पड़ा। गाड़ी लेकर विश्वनाथ नीचे ही खड़ा था। साहब ने गाड़ी पर सवार होते ही कहा, "अभी विडन स्ट्रीट चलो विशु। वहां से होकर बेलुड़ जाऊंगा।"

संदीप से मल्लिक चाचा ने हर तरह का समाचार पूछा। उनका भी बहुत दिनों का देस बेड़ापोता ही रहा है। कहा जा सकता है कि बेड़ापोता से उनका खून का रिश्ता है। उनके शरीर के प्रत्येक रक्तकण में बेड़ापोता की धूल मिली हुई है। वे खोद-खोदकर हर बात की तहकीकात करने लगे। यह कैसा है, वह कैसा है, वे कैसे हैं। संदीप की बातें सुनकर उन्हें लगा कि वे भी सशरीर फिर से अपनी जन्म-भूमि में पहुंच गए हैं। आखिर में काशी बाबू की चर्चा छिड़ी। काशी बाबू के बारे में सुनकर शुरू में वे कुछ भी नहीं बोले।

संदीप बोला, "काशी बाबू की बातें सुनकर मैंने बहुत सोचा है। किसी भी हालत में मैं उनकी बात भूल नहीं पाता—"

मल्लिक चाचा बोले, "सोचना तो स्वाभाविक ही है—"

संदीप ने पूछा, "आपने भी कभी इन बातों पर विचार किया है?"

मल्लिकजी बोले, "सोचा है बेटा। सभी यह सब सोचते हैं—"

"क्या सोचते हैं?"

मल्लिक चाचा बोले, "देखो, आदमी पैदा होते ही रोने लगता है। हम सभी रोए हैं। तुम भी रोए हो और मैं भी। तुम्हारे काशी बाबू भी रोए हैं। उस रुलाई का कारण उस समय शिशु समझ नहीं पाता है। लेकिन समझता तब है जब उसकी उम्र बढ़ जाती है। उम्र बढ़ने पर ही लोग समझते हैं कि पैदा होने पर वे रोए क्यों थे? जो आदमी ज़िन्दा रहने की पीड़ा बरदाश्त कर पाता है वही ज़्यादा दिनों तक जिन्दा रहता है और जो लोग उस पीड़ा को बरदाश्त नहीं कर पाते वे जल्द ही मर जाते हैं। काशी बाबू जीवन की पीड़ा बरदाश्त कर सके हैं, इसीलिए वे अब भी ज़िन्दा हैं। मेरे साथ भी यही बात है। तुम अभी छोटे हो, जब तक तुम जीवन की पीड़ा बरदाश्त कर सकोगे तब तक ज़िन्दा रहोगे। एक बात याद रखना। जीवन यद्यपि गुलाब का बगीचा है तो इसमें कांटे भी हैं। आदमी के जीवन के लिए गुलाब का फूल जितना सच है, उतना ही सच कांटा भी है—"

यह सब कितने दिन पहले की बात है। फिर भी कितनी नई, साथ-साथ कितनी ही पुरानी! जो सत्य है वह शायद कभी पुराना नहीं होता। इसीलिए तमाम लोगों की तरह संदीप के जीवन में भी हमेशा के लिए सच बना हुआ है। वरना सौम्य बाबू को बचाने के लिए उस दिन आधी रात के समय विशाखा क्यों उसके पैरों पर पछाड़ खाकर रोती? क्यों रोते-रोते संदीप के पैरों को जकड़कर कहती, "तुम

उसे बचा लो सदीप, बचा लो। तुम्हारे पैरों को पकड मैं विनती कर रही हूं कि तुम उसे बचा लो—"

लेकिन उस समय विशाखा पहले वाली विशाखा नही थी। विशाखा उस समय रूपांतरित होकर अलका हो गई थी। गुरुदेव का यही आदेश था। यह भी बहुत बाद की बात है—बहुत-बहुत बाद की बात। सो बहुत बाद की बात बहुत बाद मे कहना ही अच्छा रहेगा। अभी उस सत्यनारायण-कथा के बारे मे कह रहा हूं, जिस दिन वह घटना घटित हुई थी।

दादी मां को न मालूम क्यो, इच्छा हुई कि वे उस दिन सत्यनारायण-पूजा करेंगी। जीवन में उन्हें बहुत शोक का उत्ताप झेलना पडा है। उनके पति देवीपद मुखर्जी की अकाल मृत्यु हुई थी। उस समय वे केवल पैंतालीस साल के थे। वह भी कोई उम्र मे उम्र है? कहा जा सकता है, इसी उम्र से आदमी उन्नति करना शुरू करता है। उस कम उम्र मे ही दादी मा अनाथिनी हो गई थी। उसके बाद बडा बेटा शक्तिपद चल बसा। उस समय उनकी उम्र मात्र पैंतीस साल थी। और उसके बाद सौम्यपद की मा चल बसी। उस समय रह गए मुक्तिपद मुखर्जी और उनकी पत्नी। सो वे लोग भी इस घर मे ज्यादा दिनो तक नही रहे। बेलुड मे नया मकान बनवाकर एक दिन चले गए। इस घर मे अपने के नाम पर सिर्फ सौम्य रह गए। अंधे की लाठी अपने पोते को लेकर ही तब वे दिन गुजारने लगी। लेकिन आश्चर्य की बात है, उसी सौम्य को भी एक दिन ऑफिस के काम से दादी मां को छोडकर विदेश जाना पडा। फिर वे किसे लेकर रहे?

जिसका कोई नही है, उसके लिए अन्तर्यामी है। लिहाजा दादी मा ने तब से अपने अन्तर्यामी को ही अपना आराध्य बना लिया। कभी गृह-देवी सिंहवाहिनी, कभी एकादशी, कभी तालनवमी व्रत और कभी आश्विन-पूर्णिमा की लक्ष्मी पूजा में व्यस्त रहने लगी। उस बार पता नही क्यो उन्होंने मल्लिकजी को आगामी पूर्णिमा के दिन सत्यनारायण-पूजा के आयोजन का आदेश दिया। सत्यनारायण-पूजा दादी मां पहले भी कर चुकी हैं। उसका सारा विधि-विधान मल्लिकजी को मालूम है। घर के पुरोहितजी ही पूजा कराएंगे, लेकिन तमाम सामग्रिया एकत्र करने की जिम्मेदारी तो मल्लिकजी पर ही है।

पिछली रात तमाम व्यवस्था हो चुकी थी। सवेरे से ही पूजा के आयोजन के साथ ही नैवेद्य और प्रसाद का भी आयोजन है। मल्लिकजी सब-कुछ का इंतजाम कर चुके थे। घी-मैदा घर मे पर्याप्त मात्रा मे है। लेकिन फल-फूल तो सवेरे ही बाजार से ताजा ही खरीदना है। हर तरह का फल चाहिए। जब जो-जो फल बाजार मे उपलब्ध हैं, उन्हे खरीदना होगा। उसके बाद है मिठाई। उसके साथ दही, रबडी। यह देखना है कि कोई भी अनिमंत्रित अभ्यागत बिना खाए या आधा पेट खाकर पूजा-घर से लौट न जाए।

पुरोहितजी ने निर्धारित समय पर आकर पूजा शुरू कर दी।

चारो तरफ धूप-धूना की सुगंध और बार-बार घंटे की ध्वनि। चारो तरफ नैवेद्य की थालिया। बिन्दु, कालीदासी, फुल्लरा, कामिनी वगैरह तटस्थ हैं। नौकर-चाकर भी घर के काम-काज छोडकर हुक्म की तामील करने के लिए उपस्थित हैं। घर के रसोइए ने भी रात के आखिरी पहर में रसोई पकाने का काम समाप्त कर पूरे

हॉल में नैवेद्य की थालियां सजाई हैं। दादी मां ने उत्तर दिशा की ओर मुंह करके तांबे के वर्तन में तिल, तुलसी, त्रिपत्र, फल और गंगाजल लेकर आचमन किया।

उसके वाद ध्यान, पुष्पांजलि और उसके वाद प्रणाम-मंत्र। दिन-भर यही सिलसिला चलता रहा। संध्या में व्रत-कथा शुरू हुई :

नारायणं नमस्कृत्या नरचैञ्चनरोत्तमम्···

इसके वाद व्रत-कथा का पाठ चलने लगा। पूरा दिन कैसे वीत गया, किसी को पता नहीं चला। अरविंद ड्राइवर गाड़ी लेकर विशाखा वगैरह को लाने रसेल स्ट्रीट गया था। वे लोग भी आ गई हैं। योगमाया अपनी लड़की को सजा-धजा कर लाई थी। वे लोग सामने की पंक्ति में वैठी हैं। आंचले गले पर रख भक्ति से गद्गद हो व्रत-कथा का पाठ सुनने लगीं।

संदीप ने देखा, मौसीजी फुसफुसाकर अपनी लड़की को साड़ी का आंचल गले पर रखने कह रही हैं। मां की वात पर विशाखा ने वैसा ही किया और ध्यान से व्रत-कथा सुनने लगी।

उसके वाद मुक्तिपद अपनी पत्नी और लड़की के साथ आए। वे लोग भी भक्ति-भाव से कथा सुनने लगे। उस समय पूजा पूरे ज़ोर-शोर से चल रही थी।

सत्यनारायण के चरणों की वंदना करता हूं पहले
उसके वाद देवगण हैं जितने
करने को प्रचार सत्य-पूजा का कलियुग में
आविर्भूत हुए देवनारायण
मथुरा में था एक वहुत ही निर्धन ब्राह्मण
सुख नहीं पाता कभी, दुख न होता कभी दूर था
एक दिवस करने पर परिभ्रमण नगर का
मिला नहीं कुछ भी भिक्षा में ब्राह्मण को
वैठ गए तरु के नीचे ले विषाद वे अपने मन में
वहुत देर तक रोते रहे अभाव में वे भिक्षा के
देव सत्यनारायण ने होकर द्रवित दया से
दर्शन दिए रूप धारण करके फकीर का
वोले नारायण हे द्विज, किस कारणवश
रोते हो तुम यहां वैठकर···

इसी समय एक कांड घटित हो गया। कुछ लोग इस घर में आए। कौन आए? इस समय कौन आया? मुक्तिपद अधिक चंचल हो उठे। वे ही अधिक आग्रहशील हैं। वे उठकर खड़े हो गए। उसके वाद जो सोचा था सही सावित हुआ।

सामने धोती-कुरता पहने एक सुंदर चेहरे का व्यक्ति है। उसके पीछे एक खूवसूरत शादीशुदा महिला। और उनके साथ उनकी कुमारी लड़की।

मुक्तिपद ने मां को संवोधित करते हुए कहा, "देखो मां, कौन आए हैं। ये हैं मिस्टर चटर्जी, ये मिसेज चटर्जी और यह उनकी लड़की विनीता—"

दादी मां अव तक व्रत-कथा में तल्लीन थीं। लेकिन इन लोगों के आते ही उनके चेहरे पर वदलाव आ गया। ऐसा लगा जैसे उनके आने से उन्हें कृतार्थता

का अनुभव हुआ हो। मामूली-सी घटना रहने के बावजूद योगमाया थोड़ी-बहुत चिंतित हो उठी। उस लड़की पर नजर पड़ने पर विशाखा को भी कुतूहल हुआ।

मां की ओर मुंह घुमाकर फुसफुसाते हुए पूछा, "यह लड़की कौन है मां?"

योगमाया ने फटकारा, "चुप रह—"

मुक्तिपद मिस्टर चटर्जी वगैरह के आदर-सत्कार में व्यस्त हो उठे। वे लोग कहां बैठेंगे, कैसे उन लोगों का स्वागत-सत्कार करें, यही सोचकर व्याकुल हो उठे हैं। गण्यमान्य व्यक्तियों को सबसे पीछे बिठाया नहीं जा सकता है। उन्हें इस घर में अगली पंक्ति में बैठने का अधिकार है। दादी मां दूर से बोलीं, "यहां आकर बैठो बिटिया मेरे पास।"

लेकिन वे लोग अगर अगली पंक्ति में जाना चाहें तो सामने के बहुत सारे लोगों को अपनी जगह से हटना होगा। गृह-स्वामिनी का स्वागत-संबोधन सुनकर सभी लोग स्वेच्छा से अपनी जगह छोड़कर पीछे हट आए।

मुक्तिपद बोले, "मां इन्हें कहने की जरूरत नहीं पड़ी, सत्यनारायण-पूजा का नाम सुनते ही ये लोग चले आए हैं—"

दादी मां बोलीं, "बहुत ही अच्छा किया है बेटा, बहुत ही अच्छा। चारों तरफ से बुरी-बुरी खबरें आ रही थीं। फैक्टरी कितने दिनों से बंद है, यह सब तो तुम्हें मालूम ही है बेटा···इसीलिए···"

मिस्टर चटर्जी की पत्नी बोलीं, "हमें सबकुछ मालूम है माताजी, आपके लिए चिंता की कोई बात नहीं है। मेरा बड़ा लड़का सुधीर एक बहुत बड़ा लेबर-लीडर है। वह सारी गड़बड़ी दूर कर देगा। पहले जोड़ा तो लग जाने दीजिए।"

दादी मां बोलीं, "इसीलिए तो हर वक्त भगवान का स्मरण करती हूं। अपना कहने के नाम पर मेरे लिए उस पोते के सिवा और कोई नहीं है। पोते की शादी होते ही मैं गुरुदेव के पास काशी चली जाऊंगी ··वहीं मैं देह त्यागूंगी —"

उधर तब ज़ोर-ज़ोर से व्रत-कथा चल रही है—

द्विज से बोले नारायण
किस कारणवश रो रहे यहां हो
[illegible]

आज न भिक्षा मिली इसी का दुख है मुझको।
कहा फकीर ने हे विप्र, जाओ तुम घर अपने
[illegible]

संदीप दूर बैठकर ध्यान से विशाखा की तरफ देख रहा था।

योगमाया उस समय कान लगाकर व्रत-कथा सुन रही हैं। [illegible] महिला की ओर भी बीच-बीच में ध्यान से देख रही थीं और सोच र[illegible] कौन हैं। दादी मां से उस महिला की इतनी घनिष्ठता क्यों है? लड़का इनके कारोबार को कैसे दुरुस्त कर देगा? किससे किसका जो[illegible]

कब व्रत-कथा का पाठ समाप्त हो गया, उसका खयाल ही नहीं रहा। पूजा के बाद प्रसाद ग्रहण करने की व्यवस्था है। इसके कारण लोगों की व्यस्तता बढ़ गई। सभी अतिथि-अभ्यागत एक हॉल के फर्श पर पंक्तिवद्ध बैठ गए। उसके बाद सामने के साफ श्वेत-प्रस्तर की थाली में प्रसाद देने का काम चलने लगा।

"वहां नहीं, यहां बैठ जाइए—"

मंझले बाबू ने अत्यंत सम्मान के साथ मिस्टर चटर्जी को अपने पास बिठाया।

वहां विशाखा बैठी हुई थी। मंझले बाबू ने उससे कहा, "तुम उस तरफ सरक जाओ तो बेटी—यहां मेरी बेटी बैठेगी—"

योगमाया दूर बैठी हुई थी। बेटी से बोली, "आ विशाखा, इस तरफ चली आ। आकर मेरे पास बैठ जा।"

विशाखा अपनी जगह से उठकर मां की बगलवाले आसन की तरफ जाने लगी तो एक दुर्घटना घट गई। विशाखा के पैर से ठोकर लगकर उसका शीशे का गिलास लुढ़ककर गिर पड़ा और तत्क्षण गिलास का पानी चारों तरफ फैल गया।

एक बड़ी ही अप्रीतिकर अवस्था खड़ी हो गई। कमरे के जिस ओर विशिष्ट अतिथि बैठे हुए थे, गिलास का पानी उस ओर बहकर चला गया और पशमीने के सारे आसन भीग गए। फलस्वरूप अतिथियों को उठ जाना पड़ा।

"क्या हुआ? किसने पानी गिराया? किसने?"

मंझले बाबू के गले की आवाज़ सुनाई पड़ी। आवाज़ के लहज़े से पता चला कि उन्हें काफी ऊब महसूस हुई है। शीशे के बड़े-बड़े गिलास थे और उनमें पूरा पानी भरा हुआ था।

सबको उठकर खड़े होते देखकर दादी मां को बेहद ऊब का अहसास हुआ। अब तक उस दुर्घटना की ओर उनकी नज़र नहीं गई थी। अब नज़र पड़ते ही चौंक पड़ीं।

बोली, "किसने यह काम किया? किसने किया बिन्दु?"

बिन्दु उस समय कमरे में नहीं थी। पूजा-घर से प्रसाद लाने गई थी।

फुल्लरा बोली, "भाभीजी ने—"

"भाभीजी? किस भाभीजी ने?"

"हम लोगों की नई भाभीजी ने।"

अब योगमाया के मुंह से आवाज़ निकली, "हां दादी मां, मेरी विशाखा ने ही पानी गिराया है।"

दादी मां बोलीं, "शीशा टूट गया है क्या? देखो तो—"

बिन्दु ने चारों तरफ गौर से देखने के बाद कहा, "हां, यहीं तो शीशे का टुकड़ा पड़ा हुआ है दादी मां। यहां पर—"

"अरे, यह तो भारी मुसीबत है। अब क्या होगा? देखूं, शीशे का टुकड़ा कहां है—"

मंझले बाबू, मंझली मालकिन, पिकनिक वगैरह इस बीच अपनी-अपनी जगह छोड़कर उठ खड़े हो गए हैं। मिस्टर चटर्जी भी घबराकर उठकर खड़े हो गए हैं। बोले, "कोई हिलना-डुलना नहीं, अपनी-अपनी जगह पर खड़े रहो।"

इतनी साध लेकर सत्यनारायण-पूजा का जो आयोजन किया गया था वह एक ही पल में जैसे सबकी निगाह मे असत्य साबित हो गया। दादी मा अपने आपको संयत नही रख सकी। बोली, "मुंह बाए क्या देख रही है। कोई पोंछनी वगैरह ले आ—"

दादी मां से डरता न हो, ऐसा कोई भी आदमी इस घर में नही है। बिन्दु, फुल्लरा, कालीदासी सभी पोंछनी लाने के लिए भागी-भागी गई। बिन्दु ने एक पोंछनी लाकर जैसे ही कमरे को पोंछना चाहा, दादी मा ने उसका हाथ पकड लिया। बोली, "यह क्या ले आई है ? यह क्या ?"

बिन्दु बोली, "पोंछनी।"

"इस पोंछनी से तू घर पोंछेगी ? यह कहा था ?"

"भडारघर में।"

दादी मां बोली, "बलिहारी है तेरी बुद्धि की ! तेरी अक्ल क्या चरने चली गई है ? इस गंदे पोंछनी से तू कैसे घर पोंछने जा रही थी ? पता नही है कि आज सत्यनारायण-पूजा है ? इस मैली पोंछनी से पोंछे गए घर में भले लोगों के लड़के-लड़कियों को कैसे प्रसाद दूं ? तू क्या सठिया गई है ?"

बिन्दु की दुर्गति देखकर फुल्लरा चट से कहीं से एक साफ कपड़ा लाकर कमरा पोंछने लगी। दादी मां यह देखकर खुश हो गई। बोली, "देखा ? देखा न ? फुल्लरा को कितनी अक्ल है, देखा न तूने ? अब सीख ले कि किसे तमीज कहा जाता है।"

जब तक घर पोंछने का सिलसिला चलता रहा तब तक सब लोग अलग हटकर खडे रहे।

लेकिन संकट आया उसके बाद ही। पिकनिक कही से दौड़ती हुई आई और बोली, "विशाखा दी' मुझे पहचान रही हो ? मैं पिकनिक हूं।"

एक तो पानी का गिलास गिरा देने के कारण यों भी उसे शर्मिन्दगी का अहसास हो रहा था, उस पर परिचित की ईजाद !

"तुम यहा ?"

"यह तो मेरी दादी मां का घर है। इसी घर में मेरे कॉजिन-ब्रदर से तुम्हारी शादी होगी।"

बात सबके कान में पहुंची लेकिन उस बात के विस्मय की अनुगूंज समाप्त होने के पहले ही योगमाया की चीख मे सभी चकित हो उठे।

"बाप रे, यह खून कहा से आया ?"

उस ओर देखकर सभी चिहुक उठे। इतना खून ! इतना खून कहा से आया ? किसका खून है ?

देखने पर पता चला कि विशाखा के तलवे से अजस्र रक्त-धारा निकल रही है और कमरे का फर्श कई जगह सुर्ख हो गया है। लेकिन विशाखा खुद यह समझ नही सकी थी।

संदीप ने विशाखा के पास आकर पूछा, "किस चीज से पैर कट गया ? शीशे से ?"

लड़की का काड देखकर योगमाया उस समय मरखन्नी हो उठी। बेटी का

झोंटा पकड़ विशाखा को फर्श पर झुकाकर मुक्के वरसाने लगी, "मुंहजली, इतने-इतने आदमी हैं लेकिन किसी के पैर से गिलास नहीं टकराया और तेरे पांव की ठोकर से ही गिलास फर्श पर गिर पड़ा—इतनी बड़ी···"

योगमाया का कांड देखकर घर के तमाम लोग 'अहा हा' कर उठे और बोले, "क्या कर रही हैं आप ? क्या कर रही हैं···उसका कौन-सा दोष है···छोटी लड़की···"

"हां, छोटी लड़की है ! मुंहजली मर जाए तो मुझे शांति मिले···उसके कारण···"

दादी मां बोलीं, "अपनी लड़की को तुमने यह क्या तालीम दी है बेटी ? वह इतनी चंचल क्यों है ? तुमने लड़की को शिष्टाचार की शिक्षा नहीं दी है ? अभी उसे खरी-खोटी सुनाने से क्या होगा ? उसका कौन-सा दोष है ?"

मिस्टर चटर्जी ने मंझले वावू की तरफ ज़रा झुककर पूछा, "वे लोग कौन हैं मिस्टर मुखर्जी ?"

मुक्तिपद वोले, "इसी लड़की से मेरे भतीजे की शादी होने की वात थी—"

मिस्टर चटर्जी यह सुनकर अवाक् हो गए ।

पूछा, "तो फिर वहां शादी करने की वात कैंसल क्यों कर दी गई ?"

मुक्तिपद वोले, "इसलिए कैंसल हो गया कि उनके पास रुपये-पैसे नहीं हैं, वे निहायत गरीव हैं—"

मिस्टर चटर्जी वोले, "कैंसल करके अच्छा ही किया । गरीवों में वस एक यही दोष है कि वे अनकल्चर्ड होते हैं ।"

मुक्तिपद वोले, "आप विलकुल ठीक कह रहे हैं । देख रहे हैं न, 'मैनर्स' तो नाम मात्र का भी नहीं जानती । इतने लोग हैं पर किसी के पैर से शीशा नहीं टूटा, इसी के पैर से टूट गया । जवकि आपकी विनीता भी यहीं है लेकिन ज़रा भी इधर-उधर नहीं हिल रही है ।"

उस ओर न जाने संदीप कहां किस फ्रीज से वर्फ ले आया । उसके वाद विन्दु से डिटोल मंगाकर विशाखा के पैर में लगा दिया । उसके वाद विशाखा के पैर को अपनी गोद पर रख एक साफ कपड़े से वैंडेज भी वांध दिया । एक प्रशिक्षित नर्स जैसा काम किया है उसने ।

काम खत्म करने के वाद संदीप ने पूछा, "अव दर्द महसूस होता है ?"

विशाखा वोली, "नहीं, अव सिर्फ ज़रा-सी टीस हो रही है ।"

संदीप ने विशाखा का पैर छोड़कर कहा, "रात में एक दूसरा वैंडेज लगा लेना । पैर में पानी मत लगाना ।"

थी तो महज़ एक मामूली-सी वारदात मगर उस वारदात से सत्यनारायण-पूजा जैसा एक पवित्र माहौल उस दिन एक ही पल में विपाक्त वन गया था । योगमाया ही नहीं, वल्कि मुक्तिपद, नंदिता, मिस्टर चटर्जी, विनीता, पिकनिक—दादी मां जैसी औरत की जवान से एक भी शब्द नहीं निकला था । इस तरह की वेवकूफ, वेशर्म, वेहया लड़की भी इस दुनिया में हो सकती है, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण उस दिन उन्हें जैसे मिल गया था । और सिर्फ वे लोग ही नहीं, वल्कि घर के नौकर-चाकर-महरी वगैरह भी विशाखा के इस ओछे आचरण की छिपे-छिपे चर्चा

कर रहे थे। छि. छि, यही लड़की इस घर की बहू बनकर आएगी, दादी मां को इस कलकत्ता शहर में अपनी पौत्रवधू बनाने के लिए और कोई लड़की नहीं मिली, छिः—"

बिन्दु बोली, "ऐसी लड़की को दूर से ही प्रणाम !"

फुलरा ने भी यही राय जाहिर की। कालीदासी ने भी। सभी एक ही स्वर में कहने लगे, "यह बहू एक दिन घर-गृहस्थी जलाकर खाक कर देगी, देख लेना। उस समय हम लोगों पर गुस्सा उतारेगी—"

"कितनी सज-सवर कर आई थी, यह देखा न ? सारा ठाठ तो इस मुखर्जी-घर के पैसे पर ही है। कहावत है न, अहिबन का साग तो जुटता नहीं और मसूर की दाल में घी—यह भी वैसी ही बात है।"

कामिनी बोली, ' इसीलिए तो कह रही थी चप्पल में फीता लगाया जा रहा है।"

उस दिन मुखर्जी भवन की महरियों का परायी निन्दा और चर्चा में कैसे समय बीत गया, इसका पता किसी को नहीं चला।

पता नहीं, सत्यनारायण-पूजा के पुण्य के कारण या किसी दूसरे कारणवश, उस दिन अचानक एक पत्र आया। वह पत्र पहले मल्लिक चाचा के हाथ में ही पहुंचा था।

सदीप को पुकार कर कहा. 'यह लो, तुम्हारा पत्र है।"

"मेरा पत्र !"

सदीप अवाक् हो गया। अभी हाल में ही तो वह बेड़ापोता जाकर मां से मिल आया है। इसी बीच मां ने उसे पत्र क्यों लिखा ?

झट से चिट्ठी खोलकर देखा और वह अचकचा उठा।

उसी बैंक का पत्र है। कितने दिन पहले इम्तिहान दिया था और [illegible] नतीजा अब निकला है। उसके इम्तिहान का नतीजा अच्छा हुआ है [illegible] इंटरव्यू के लिए बुलाया गया है। स्वास्थ्य का परीक्षण कराना है। [illegible] सोमवार को है। दुबारा परीक्षा !

मल्लिक चाचा ने पूछा, "किसका पत्र है ?"

सदीप ने कहा, "मैंने जो बैंक का इम्तिहान दिया था, उसी का [illegible] पास कर गया हूं—"

"फिर तुम्हें नौकरी क्या मिल जाएगी ?"

"लगता तो यही है। लेकिन पहले डाक्टरी परीक्षण होगा। [illegible] कर जाता हूं तो नौकरी मिल जाएगी।"

"तुम्हारा स्वास्थ्य तो अच्छा है। मेडिकल-इक्जामिनेशन में [illegible] करोगे ?"

संदीप को उम्मीद है कि वह मेडिकल इक्जामिनेशन में [illegible] जाएगा। वह टेस्ट परीक्षा में बगैर किसी पैरवी के पास कर गया है [illegible] इक्जामिनेशन में भी बगैर पैरवी के पास कर जाएगा। [illegible] है। तब की बात तभी सोची जाएगी। नौकरी मिल जाएगी [illegible] काम-काज कब करेगा ? उस समय तो दिन के दस बजे से [illegible]

समय उस ऑफिस में ही बिताना होगा। ऐसी हालत में वह कब रसेल स्ट्रीट का काम-धाम करेगा ?

संदीप ने पूछा, "अच्छा मल्लिक चाचा, नौकरी यदि मिल जाएगी तो दादी मां इस घर में रहने देंगी ?"

मल्लिक चाचा बोले, "क्यों नहीं देंगी ? लेकिन तुम इस घर में हमेशा के लिए रहने के लिए नहीं आए हो। एक दिन तुम्हारी भी गृहस्थी होगी, मां को भी तुम्हें अपने पास लाकर रखना होगा। तुम्हारी मां तो हमेशा दूसरे के घर में हाथ जलाकर रसोई नहीं पकाएंगी। यह करना भी उचित नहीं होगा। इसके अलावा तुम्हें तो उस समय शादी भी करनी होगी—तुम शादी नहीं करोगे क्या ?"

संदीप को शादी करनी होगी ? किराये पर मकान लेकर मां को कलकत्ता में रखना होगा ?

यह बात खुद संदीप को भी नई जैसी लगी। इस तरह की बात उसके दिमाग में कभी नहीं आई थी।

उस दिन मल्लिक चाचा ने इस सम्बन्ध में और कोई बात नहीं की थी। जिन्दगी कितनी जल्दी गुजर जाती है ! कितनी जल्दी-जल्दी समय आगे बढ़ जाता है ! यही तो उस दिन संदीप कितनी उम्मीद और सपने लेकर ब्रिडन स्ट्रीट आया था ! उसके बाद यहां कितने साल गुज़र गए ! रसेल स्ट्रीट जाने के दौरान यही सब बात उसके दिमाग में चक्कर काट रही थी। तो उसे क्या इसके बाद विशाखा के घर पर नहीं जाना पड़ेगा ?

सत्यनारायण-पूजा के दिन जब सभी लोग अपने-अपने घर चले गए थे तो संदीप ने मल्लिक चाचा को एकांत में पाकर पूछा था, "चाचाजी, तो फिर मुझे विशाखा के घर नहीं जाना पड़ेगा ?"

मल्लिक चाचा का चेहरा तब गंभीर दिख रहा था। सिर्फ मल्लिक चाचा ही नहीं, बल्कि जो लोग इस घर में आए थे, सभी का मन इस दुर्घटना से विरक्त हो गया था।

उस दिन पूजा का प्रसाद मिलने के बाद मौसीजी ज्यादा देर तक नहीं रुकी थीं। विशाखा के आचरण में कहीं एक कांटा था जिसने चुपके से सबके मन को वेधकर उत्सव की पवित्रता को बिलकुल विषाक्त बना दिया था।

मिस्टर चटर्जी सिर्फ धनी ही नहीं, बल्कि अत्यन्त संभ्रान्त गण्यमान्य अतिथि थे। इसके अलावा वे एक भावी कुटुंब भी हैं। वे ज्यादा बातें नहीं करते, समय का भी उनके पास अभाव रहता है और यों भी वे मितभाषी हैं। हो सकता है, वे अधिक सोचते हैं, इसलिए मितभाषी हैं।

वे एकाएक बोले, "तो फिर अब चलते हैं मिस्टर मुखर्जी—"

मुक्तिपद ने मां की ओर देखकर कहा, "मां, मिस्टर चटर्जी कह रहे हैं कि अब वे जा रहे हैं—"

दादी मां बोलीं, "अभी तुरन्त ? थोड़ी देर और बैठ नहीं सकोगे बेटा ?"

मुक्तिपद बोले, "नहीं मां, अब उन्हें रोककर मत रखो, वे बहुत काम-काजी

आदमी हैं—"

चटर्जी की पत्नी भी तब जाने को तैयार हो गई थीं। उनका चेहरा देखने में लगा कि वे इस आकस्मिक दुर्घटना से तनिक विचलित हो उठी हैं। दादी मां ने उनकी ठोड़ी पकड़कर कहा, "अचानक झमेला खड़ा हो गया, इसी वजह से ठीक से बातचीत भी नहीं कर सकी। तुम और थोड़ी देर बैठ जाओ बेटी! अभी-अभी आई हो और तुरन्त चली जाओगी, यह कैसे हो सकता है?"

योगमाया अब तक एक कोने में खड़ी होकर सब कुछ देख रही थी। कितने बड़े-बड़े आदमी आए हैं! उन लोगों के बदन पर कितने मूल्यवान हीरे-मोती के गहने हैं! कितनी रंग-बिरंगी रेशमी साड़ियां पहने हैं! उनकी तुलना में उसकी दरिद्रता जैसे उसकी आंखों के सामने साकार हो गई थी। उस पर विशाखा के इस अस्वस्तिकर आचरण से उसका सिर शर्म, अपमान और धिक्कार से नीचे झुक गया था। किसी ने जिस प्रकार आन्तरिकता से उसकी अभ्यर्थना नहीं की थी उसी प्रकार बैठे रहने के लिए भी किसी ने दबाव नहीं डाला था। उस स्थिति में उसकी निगाह संदीप पर गई थी।

संदीप भी इस हालत से लज्जित और संकुचित था। संदीप मौसीजी को इस असहाय अवस्था में देखकर उसकी मदद के लिए आगे बढ़ आया। बोला, "मुझसे कुछ कहना है मौसीजी?"

मौसीजी बोली, "हम लोगों के जाने का क्या इन्तजाम होगा बेटा? कोई कुछ बोल नहीं रहा है—"

संदीप बोला, "आप लोगों को जाना है? थोड़ी देर और रुकिएगा नहीं?"

मौसीजी बोली, "नहीं बेटा, अब मुझे यहां एक मिनट भी रुकना अच्छा नहीं लग रहा है—"

संदीप बोला, "गाड़ी तो तैयार है, अरविन्द गाड़ी लेकर बैठा हुआ है—"

"तो फिर हमें ले चलो, हमें बचाओ—"

उसकी बात करुण आवेदन जैसी सुनाई पड़ी। संदीप को यह समझने में असुविधा नहीं हुई कि वे बातें मौसीजी की मानसिक यातना की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं।

और उसके बाद कतई देर नहीं हुई थी। अरविन्द तैयार ही था। पहले विशाखा जाकर गाड़ी पर बैठ गई और उसके बाद मौसीजी।

गाड़ी चलने के पहले संदीप ने एक बार विशाखा की तरफ मुखातिब होकर पूछा, "पैर का दर्द कुछ कम हुआ है?"

विशाखा के कुछ कहने के पहले ही मौसीजी ने कहा, "मुहजली का दर्द न कमे तो अच्छा है। वह मरे, मर जाए तो मुझे चैन मिले—"

और उसके बाद ही अरविन्द ने गाड़ी स्टार्ट कर दी। फिर न तो कुछ कहा गया और न ही सुनाई पड़ा।

उसके बाद धीरे-धीरे रात उतर आई थी। रात-भर उस वारदात की तसवीर संदीप की आंखों के सामने तैरती रही। इतने दिनों से इतने रुपये का खर्च होना इतने जतन, गुरुदेव को इतनी बार पूजा की दक्षिणा भेजना, गृह-देवता की नित्य दिन की सेवा—सारा कुछ जैसे आज एक मामूली घटना से एकबारगी विफलता

में परिवर्त्तित हो गया। तो फिर संदीप को माहवारी तनख्वाह देकर घर में रखने की जरूरत ही क्या थी ? सौम्य बाबू की नई पात्री से शादी हो जाएगी तो फिर संदीप इस घर का कौन-सा काम करेगा ? उस समय विशाखा कहां जाएगी ? किस निर्धारित काम के लिए उसे वेतन मिलता है ?

एकाएक मल्लिक चाचा ने पुकारा, "ओ संदीप, उठो-उठो। अब कितनी देर तक सोए रहोगे ?"

रात में देर से नींद आने के कारण वह भोर के वक्त सो गया था। लेकिन संदीप ने यह नहीं बताया। उसके बाद उसे जब पिछली रात की बातें याद आईं तो उसका चेहरा बुझ गया।

और उसके ठीक थोड़ी देर बाद ही नौकरी का पत्र आया।

लेकिन विशाखा के कल के दुर्भाग्य की घटना के सामने नौकरी मिलने की खुशी मानो फीकी पड़ गई।

सड़क पर चलने के दौरान एकाएक संदीप की आंखें सड़क के किनारे बैठे एक ज्योतिषी पर गईं। उसकी बगल में एक सफेद कागज पर लाल स्याही से निम्नलिखित पंक्तियां लिखी हुई थीं :

यहां अपना भाग्य जान जाइए।
विदेशियों के लिए अंग्रेजी में भाग्य।

संदीप ने कभी ज्योतिषी से अपना हाथ नहीं दिखाया था। शायद जरूरत भी नहीं पड़ी थी। उस समय ज्योतिषी के पास कोई ग्राहक भी नहीं था।

संदीप ज्यों ही करीब पहुंचा, ज्योतिषी बोला, "क्या बाबूजी, हाथ दिखाइएगा ?"

हाथ ? उसने अपना हाथ कभी किसी को नहीं दिखाया है। लेकिन विशाखा के भाग्य का पता चल जाता तो अच्छा हो।

संदीप बोला, "आप एक और दूसरे व्यक्ति के भाग्य के बारे में बता सकते हैं ?"

"वह कौन है ? किसका भाग्य ?"

संदीप बोला, "एक लड़की का—"

"वे कहां हैं ?"

"वे अपने घर में हैं।"

"उन्हें ले आइए।"

संदीप ने कहा, "नहीं, उसे लाना संभव नहीं है। मैं अगर उसके नाम और चेहरे का ब्यौरा दूं तो आप उनके भाग्य के बारे में बता सकते हैं ?"

सुबह से ज्योतिषी को एक भी ग्राहक नहीं मिला है। अगर एक ग्राहक मिला तो वह भी क्या हाथ से निकल जाएगा ?

बोला, "हां, जातक का हाथ देखे बगैर भी मैं उसका भाग्य बता सकता हूं।"

"आपकी दक्षिणा कितनी है ?"

ज्योतिषी बोला, "दूसरे आदमी का भाग्य देखकर मैं सवा रुपया लेता हूं। आपको मैं बारह आने में ही भाग्य बता दूंगा —"

संदीप जेब से एक अठन्नी निकाल ज्योतिषी के सामने रखकर बैठ गया।

ज्योतिषी बोला, "आपका हाथ देखूं—"

ज्योतिषी बहुत देर तक संदीप के हाथ को दबाकर और उलट-पुलटकर देखता रहा। संदीप को कुछ शक हुआ। बोला, "अरे, मैंने तो अपना भाग्य देखने नहीं कहा था। मैंने तो एक दूसरे व्यक्ति का भाग्य देखने कहा था।"

"मैं आपका हाथ देखकर ही उसका भाग्य बता दूंगा। आप जिसके भाग्य के बारे में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं वह क्या कोई लड़की है?"

"हां।"

ज्योतिषी ने जानकार की तरह हंसी हंसते हुए कहा, "हां, मुझे ठीक से मालूम है। उसकी अब भी शादी नहीं हुई है न?"

"नहीं।"

ज्योतिषी और अधिक खुश होकर बोला, "हां, मुझे मालूम है कि उसकी शादी नहीं हुई है। आप यही जानना चाहते हैं कि उससे आपकी शादी होगी या नहीं—"

संदीप बोला, "नहीं-नहीं, मैं यह नहीं चाहता कि उससे मेरी शादी हो। उसकी शादी दूसरी जगह दूसरे व्यक्ति से ठीक हो गई है। वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं—"

ज्योतिषी दुबारा संदीप के हाथ को दबाकर उलट-पुलटकर देखने लगा। बोला, "नहीं-नहीं, आपकी शादी उसी से होगी। मैं सही बात कह रहा हूं—"

संदीप बोला, "ऐसा होना संभव नहीं है। मैं दूसरी चीज़ मालूम करना चाहता हूं।"

"लड़की का नाम क्या है?"

संदीप ने कहा, "विशाखा।"

"जिससे शादी पक्की हो चुकी है, उसका नाम क्या है?"

संदीप ने कहा, "सौम्यपद—सौम्यपद मुखर्जी। वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं।"

यह कहने के बाद फिर बोला, "लेकिन इस बीच एक और पात्री आ गई है। तय किया गया है कि उसे छोड़कर उस दूसरी पात्री से ही सौम्यपद मुखर्जी की शादी होगी।"

"उसका नाम क्या है?"

संदीप बोला, "उसका नाम है विनीता। वे लोग भी बहुत पैसेवाले हैं। अब किससे सौम्य बाबू की शादी होगी, मेरा सवाल यही है। आप बता सकते हैं?"

बड़ा ही पेचीदा सवाल है। ज्योतिषी ने अब और अधिक ध्यान से संदीप का हाथ दबाकर उलट-पलटकर देखना शुरू कर दिया। उसके बाद एक स्लेट पर कोई हिसाब करने लगा। जोड़-घटाव, गुणा-भाग।

उसके बाद बोला, "इस विशाखा से आपकी शादी होगी।"

"यह क्या?"

"हां।"

संदीप बोला, "नहीं-नहीं, मैं नहीं चाहता कि उससे मेरी शादी हो। मैं बहुत ही गरीब आदमी का लड़का हूं। मेरे पिताजी ज़िन्दा नहीं हैं। विधवा मां दूसरे के घर में रसोई पकाकर पेट पालती है। मैं भी कलकत्ता में दूसरे के अन्न पर पल रहा हूं। मुझसे शादी होने से विशाखा को बहुत दुख झेलना पड़ेगा। मैं चलता

प फालतू वातें वक रहे हैं…"
दीप उठकर खड़ा होने जा रहा था। लेकिन ज्योतिषी उसके हाथ को कस-
मे रहा। उसके वाद सिर उठाकर वोला, "सुनिए, मैं एक अजीव ही घटना
हा हूं। विशाखा से आपकी शादी होगी और सौम्य वावू की भी शादी
—"
"यह क्या? एक लड़की से दो मरदों की शादी होगी? ऐसा कहीं होता है?
पागल हैं या आपका दिमाग खराव है?"
ज्योतिषी संदीप की वात से क्रोधित नहीं हुआ।
वोला, "इसमें मेरा कौन-सा दोष है वावूजी? मैं जो देख रहा हूं, वही वता
रहा हूं।"
संदीप ने अव जवरन अपना हाथ छुड़ा लिया।
ज्योतिषी वोला, "आप दोनों का मंगल वहुत वुरा है। आप दोनों का जीवन
वहुत ही दुखद है। आप दोनों की जिन्दगी वहुत कष्ट से गुज़रेगी। सावधान
रहिएगा। वावूजी—"
संदीप वोला, "लेकिन एक ही लड़की से दो व्यक्तियों की शादी कैसे हो
सकती है?"
ज्योतिषी वोला, "होती है, हां, होती है। भाग्यस्य कुटिला गतिः। यह तो
शास्त्र में ही लिखा हुआ है—"
इस वीच एक और ग्राहक आ गया है। संदीप अव वहां खड़ा नहीं रहा। लंवे-
लंवे डग भरता हुआ सामने की ओर वढ़ने लगा।

कई दिन वाद ही मिस्टर चटर्जी का फोन मुक्तिपद मुखर्जी के पास आया।
"हैलो, मैं चटर्जी वोल रहा हूं—"
"आप हांगकांग से कव आए?"
"वस, अभी तुरन्त। मां कैसी हैं? खैर, अच्छी हैं। और आप?…सौम्य वावू
का लंदन से कोई समाचार मिला?"
मुक्तिपद वोले, "वातचीत तो हर रोज़ होती है। उसका वहां का काम करीव-
करीव खत्म हो चुका है। वहां के अयंगर से भी मेरी सारी वातें हो चुकी हैं। अव
अयंगर ही वहां का सारा काम-धाम देखेगा।"
"और आप लोगों की फैक्टरी की क्या हालत है?"
'हालत पहले जैसी ही है। प्रोडक्शन वन्द है, ऑर्डर भी वन्द। कोई काम
नहीं कर रहा और न ही किसी को वेतन मिल रहा है।"
चटर्जी वोले, "इस तरह वगैर वेतन पाए वे लोग कितने दिनों तक हड़ताल
पर रह सकेंगे?"
मुक्तिपद वोले, "सुना है, उनमें से वहुतेरे लोग सड़क पर पकौड़े की दुकान
खोले हुए हैं। कोई-कोई सरो-सामान की फेरी कर रहा है और कुछ लोग भीख भी
मांग रहे हैं।"
"और वे लोग? आपके सभी एक्जेक्यूटिव?"

मुक्तिपद हंसकर बोले, "उन्हे हम बैंक डोर से जहा तक बन पड़ रहा है, वेतन दिए चल रहे हैं। वरना उनका काम कैसे चलेगा?"

"सो तो सही ही है।"

मिस्टर चटर्जी व्यस्त आदमी हैं। उन्हें बहुत काम रहता है। फिर भी इतने काम-धाम रहने के बावजूद वे मुक्तिपद को याद करते हैं, यही काफी है। "एक बात और···" यह कहकर मिस्टर चटर्जी बोले, "उस दिन आपकी मा की सत्य-नारायण-पूजा के दिन जो लोग आए थे···"

मुक्तिपद बोले, "हा, मा ने उसी लड़की से सौम्य की शादी करने की बात पक्की कर ली थी।"

मिस्टर चटर्जी बोले, "आश्चर्य की बात है! मैंने भी अपनी मिसेज़ को यही बताया था। कहां बिनीता और कहां वह लड़की! कोई मैनर्स तक नही जानती। उसकी लिखाई-पढ़ाई कहा तक हुई है?"

"लिखाई-पढ़ाई होगी कैसे? उसका बाप तो जिन्दा है नहीं। चाचा के सिर का भार बनकर रह रही थी। मेरी मा गंगा नहाने गई थी। उस पर नज़र पडी तो पसन्द कर लिया। उसके बाद मां और बेटी को हमारे रसेल स्ट्रीट के मकान में लाकर रखा गया। वहा उस लडकी को रखकर स्कूल मे पढा रही है। यानी उद्देश्य है गधे को मार-मार कर घोडा बनाना। सारा कुछ हमी लोगों के खर्च पर हो रहा है!"

"ओ, यह बात है···"

मुक्तिपद बोले, "खैर, खुशकिस्मती की बात यही है कि मा को अब अपनी गलती का अहसास हुआ है।"

"हा, उस दिन वह लडकी ऐसी हरकत कर बैठी कि शर्म से मेरा सिर झुक गया। खैर, वे लोग जल्दी चले गए यही गनीमत है।"

उसके बाद बोले, "ठीक है, सौम्य कब आ रहा है, इसकी मुझे सूचना दीजिएगा। उस समय आपकी मा से सलाह-मशविरा कर शादी का दिन तय कर लिया जाएगा।"

टेलीफोन रखते ही गृहिणी आई। पूछा, "किससे 'आप' 'जी हा' कहकर बातचीत कर रहे थे? नए कुटुम्ब से?"

"हा। मगर तुम इतना सज-संवरकर कहा जा रही हो?"

"क्यों, कहीं न जाने पर सजना-सवरना नहीं चाहिए। मैं घर मे फटेहाल औरत की तरह रह नहीं सकती। आज तुम घर पर रहोगे या बाहर निकलोगे? फैक्टरी तो बन्द है।"

मुक्तिपद बोले, "फैक्टरी चालू हालत मे रहती है तो मुझे अधिक काम नही [illegible] बढ गया है।"

[illegible]

[illegible] बाहर चली गई। शायद गुस्सा गई है। अलबत्ता उसका गुस्साना गलत नही है। पत्नी की तरफ से जिन्हे सहयोग नहीं मिलता वास्तव मे वे ही लोग अभागे हैं। जीवन मे नदिता ने कभी उनके प्रति सहानुभूति प्रकट नही की है। कहा से रुपये आ रहे हैं, किस तरह रुपये आ रहे हैं

या रुपये क्यों नहीं आ रहे हैं, क्यों रुपये की कम आमदनी हो रही है—इन बातों के सन्दर्भ में जो औरतें माथापच्ची नहीं करतीं, उनके पतियों का जीवन धिक्कार के योग्य है।

अचानक रघु ने आकर बताया, "हुजूर चटर्जी साहब आए हैं—"

नाम सुनते ही मुक्तिपद चौंक उठे। अब तक याद ही नहीं था। इस बात की याद आते ही मुक्तिपद ने पैंट-कोट-शर्ट बदल लिए। अब देर करने लायक वक्त नहीं है उनके पास। जल्दी-जल्दी नीचे आए तो देखा, चटर्जी बैठा हुआ है। विश्वनाथ से गत कल ही कह दिया था। वह भी गाड़ी लेकर पोर्टिको में हाज़िर हो गया है। मुक्तिपद बोले, "चलिए, मैं बिलकुल भूल गया था। इतने प्रकार की समस्याएं हैं कि लेबर कमिश्नर की बात ध्यान में रही ही नहीं—"

लेबर कमिश्नर का नाम है हरिहर सेन। किसने उनका नामकरण किया था, मालूम नहीं। 'हरि' या 'हर' किसी से उनका कोई सम्पर्क नहीं है।

लेकिन ज़बान से वे हर वक्त यही कहते हैं कि जो लोग कानून का पालन करते हैं, उन्हें भगवान प्राप्त होते हैं क्योंकि कानून ही भगवान है—

इसीलिए सवेरे वे जप-तप आह्निक करने के बाद ही दिन का काम शुरू करते। यही काम वे सिर्फ भक्ति के लिए करते हैं ऐसी बात नहीं। वह काम कितना वैज्ञानिक है, कोई नहीं जानता। उससे न केवल मन बल्कि स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। पुराने ज़माने के ऋषि-मुनि कितने बड़े वैज्ञानिक थे, इस बात को आज के लोग नहीं जानते। उनको दुख इसी बात का है।

दस बजते न बजते वे अपने दफ्तर में हाज़िर हो जाते। उसके पहले ही उनका जूनियर आकर गंगा जल और धूना का काम समाप्त कर लेता।

चारों तरफ की आबोहवा पवित्र होगी तभी तो न्याय पवित्र होगा।

उनका असली क्लाइंट है बरदा घोपाल। हरिहर सेन के पास जो भी सम्पत्ति या सम्पदा है, उसका आधे से अधिक भाग बरदा घोपाल के कारण ही है। बरदा घोपाल के आविर्भाव के बाद से ही हरिहर सेन की आर्थिक उन्नति में तेज़ी आई है। कहा जा सकता है कि बरदा घोपाल ही हरिहर सेन के जीवन की लक्ष्मी है।

उस दिन उनके कार्यालय में सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी के लेबर-डिपार्टमेंट की सुनवाई होनेवाली थी। बरदा घोपाल अपने दल-बल के साथ पहले से ही हाज़िर थे। गरीब श्रमिकों की कुछ-न-कुछ तरक्की करनी ही है। बरदा घोपाल के शागिर्द मालिकों की निरंकुशता कब तक बरदाश्त करेंगे!

हरिहर सेन को लेबर-कमिश्नर के उपयुक्त पहले ही दोनों तरफ से रुपये मिल चुके थे। साथ ही उनके जूनियर को भी प्राप्य राशि मिल चुकी थी।

लेकिन यह तो बिल्कुल तुच्छ राशि थी। नैवेद्य के साथ दो-चार छोटे-छोटे बेलपत्तों के मानिंद। उससे देवता का पेट भर नहीं सकता।

फिर भी हरिहर सेन के चेहरे पर शिकन नहीं थी। दोनों तरफ के वकील हाज़िर थे। वे लोग भी खासे खुश हैं। पहले भी कई दिन मुकदमे की सुनवाई चल चुकी है। कोई फैसला नहीं हुआ है। किसी भी पक्ष का वकील नहीं चाहता कि फैसला हो जाए।

जब सुनवाई शुरू हुई तो बरदा घोपाल के पक्ष के अधिवक्ता ने कहा, "हुजूर,

मेहनतकशों का हमेशा से ही शोषण होता आ रहा है। यह बात सबको मालूम है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि मेहनतकश इंसाफ के अलावा और कुछ नही चाहते।"

मुक्तिपद के वकील बोले, "फिर क्या यह समझना होगा कि हमने न्याय नही किया है। इसके अलावा मेहनतकश ही तो मालिक को खिलाते हैं। उनके प्रति हम अन्याय क्यों करेंगे?"

"अगर मेहनतकश ही मालिकों को खिला रहे हैं तो फिर मालिक लोग उनका इतना शोषण क्यों करते हैं? उनके घर की पुलिस से क्यों तलाशी कराई जाती है?"

"आप किसके बारे मे कह रहे हैं?"

"शिफ्ट इन्चार्ज वेणुगोपाल के घर में पुलिस क्यों भेजी गई? क्यों उसके घर का सर्च कराया गया? घर की तलाशी करने पर कुछ मिला था?"

"किसी के खिलाफ ऐसी शिकायत हो तो सर्च करना तो नियम के अन्तर्गत ही आता है।"

"मालिक को अगर शिकायत मिलती है तो फैक्टरी का सिक्यूरिटी डिपार्टमेंट सर्च करेगा ही, वरना सिक्यूरिटी ऑफिसर रखने का नियम क्यों है?"

"नही यह सब हैरेशमेंट के अलावा और कुछ नहीं है।"

मुक्तिपद मुखर्जी के वकील बोले, "कौन-सा हैरेशमेंट है और कौन-सा हैरेशमेंट नही है, इसका फैसला कौन करेगा?"

वरदा घोषाल के वकील बोले, "इसी का फैसला करने के लिए ही तो लेबर कमिश्नर के पद का निर्माण किया गया है।"

"हमें खबर मिली थी कि वेणुगोपाल को मशीन जलाने के लिए यूनियन की ओर से एक लाख रुपया घूस दिया गया था।"

प्रतिपक्ष के वकील बोले, "सर, आपको ही इंसाफ करना है कि यह तर्क कितना युक्तिसगत है। गरीब मेहनतकशों का यूनियन है, उन्हें जितनी तनख्वाह मिलती है, उससे वे अपने पेट का खर्च भी नही चला पाते। ऐसी हालत में वे लोग एक लाख रुपया घूस कहां से देंगे?"

मुक्तिपद मुखर्जी के वकील बोले, "बाहर से भी तो रुपया आ सकता है—"

"बाहर से का मानी?"

"यानी गवर्नमेंट से।"

यह बात कहते ही दफ्तर उत्तेजित हो उठा। शोरगुल, मेज थपथपाने की आवाज, हो-हल्ला, गाली-गलौज···

"ऑर्डर! ऑर्डर!!"

हरिहर सेन के चेहरे पर गम्भीरता तिर आई। बोले, "हमने दोनो पक्षो का वक्तव्य सुनने के लिए यहां उन्हें बुलाया है, हो-हल्ला करने के लिए नही—"

[illegible] देती है, यह बात उन्होंने [illegible] चलेगा, सबूत देना होगा, सबूत चाहिए।"

"घूस का सबूत रखकर कोई घूस नही देता।"

"लेकिन गवर्नमेंट यूनियन को घूस देगी, इससे कौन-सा स्वार्थ सधता है?"

"स्वार्थ है पार्टी। पार्टी जिन्दा रहेगी तो गवर्नमेंट भी जिन्दा रहेगी। पार्टी चाहती है कि उसी की सरकार चले। यही उसका स्वार्थ है।"

इसके बाद जरा रुककर मुक्तिपद के वकील फिर बोले, "इसलिए सरकार एक ओर जहां यह चाहती है कि मालिक ले-ऑफ, लॉक-आउट, क्लोजर डिक्लेयर करे, वहीं दूसरी ओर यह चाहती है कि मेहनतकश आन्दोलन और स्ट्राइक करें। इसी वजह से आज बंगाल में कल-कारखाने अचल हालत में हैं, इसी वजह से यहां इतनी बेकारी है, इसी वजह से यहां से कल-कारखाने हटकर इंडिया के दूसरे-दूसरे स्टेटों में चले जा रहे हैं, इसी वजह से कलकत्ता बर्बाद हो रहा है। किसी दिन इंडिया के मानचित्र से कलकत्ता मिट जाएगा और···"

तभी हरिहर सेन बोल उठे, "आज यहीं तक रहे। किसी और दिन फिर से सुनवाई का काम चलेगा।"

दोनों पक्ष निरस्त हो गए। अब दूसरा दल आएगा। अब उस पार्टी के श्रमिकों के पक्ष और प्रतिपक्ष की सुनवाई चलेगी। अभी तुम लोग जाओ, जाकर आराम करो। यथासमय तुम लोगों को दिन और समय की सूचना भेज दी जाएगी।

मुक्तिपद और कांति चटर्जी बाहर निकल गाड़ी पर बैठने जा रहे थे। तभी उनके वकील समीरण बाबू आए।

"सर, एक बात कहनी है।"

मुक्तिपद एक तरफ सरककर चले आए। समीरण बाबू बोले, "शाम के वक्त आपको फुर्सत रहेगी सर?"

"क्यों, बताइए तो।"

"आपसे एक बात करनी है। उस समय वहीं कहूंगा···"

मुक्तिपद बोले, "लेबर कमिश्नर को कुछ रुपये देना होगा?"

समीरण बाबू ने यह सुनकर दांत से जीभ काटकर कहा, "छिः छिः, आप यह क्या कह रहे हैं! वे रुपये छूते तक नहीं। नाम और काम दोनों से वे हरिहर हैं। आपसे मुझे दूसरी बात करनी है—"

"किस चीज की बाबत?"

"यह उसी समय बताऊंगा। अभी मैं चलता हूं। अभी मेरा लेबर कमिश्नर के पास एक और केस है। मैं रात आठ बजे आपसे मिलूंगा—ठीक रात आठ बजे—"

रात आठ बजे कहने का मतलब है ठीक आठ बजे ही। न तो एक मिनट आगे और न एक मिनट पीछे। वकील समीरण दे सरकारी जीवन में कभी समय का दुरुपयोग नहीं करते। कहां कलकत्ता और कहां बेलुड़! उन्हें आने में बहुत तकलीफ उठानी होगी।

लेकिन यह सब सोचने से काम-काजी लोगों का काम चल नहीं सकता।

मुक्तिपद बोले, "बोलिए, अब आप अपने काम की बात बताइए मिस्टर दे सरकार—"

समीरण बाबू ने कहा, "यह बात मैं वहां भी कह सकता था लेकिन उस समय

मेरे हाथ में और कई केस थे। इसलिए मेरा दिमाग ठीक से काम नहीं कर रहा था। इसके अलावा रुपये के बारे में कुछ कहना वहां ठीक नहीं रहता—"

"रुपये की बात? इसका मतलब? आपने तो बताया कि हरिहर सेन रुपये का स्पर्श तक नहीं करते—"

समीरण दे सरकार बोले, "सर, यह बात कतई झूठी नहीं है। आज तक उनके बड़े से बड़े दुश्मन भी उन पर यह इलजाम नहीं लगा सके हैं।"

"फिर किस चीज का रुपया?"

"यह बात मैं अभी आपको नहीं बताऊंगा।"

"इसका मतलब?"

समीरण बाबू ने कहा, "इसका मतलब यह कि मैं बाद में सारा कुछ आपको बताऊंगा। आप मुझ पर यकीन कर मुझे रुपये दे सकते हैं, इससे आपको धोखा नहीं खाना पड़ेगा। आप अपनी फैक्टरी का भला चाहते हैं न?"

"सो तो चाहता ही हूं।"

"तो यकीन मानिए कि मैं भी आपकी फैक्टरी का भला चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि आपकी फैक्टरी के स्टाफों का भी भला हो। इससे अधिक मुझसे और कुछ मत पूछिए। मैं जो कह रहा हूं, वही कीजिए। सिर्फ रुपये दे दीजिए—"

"कितना?"

"लगभग पांच हजार।"

मुक्तिपद ने चुपचाप अंदर से लाकर समीरण बाबू को दे दिया।

समीरण दे सरकार अब बिना कुछ बोले सीधे बाहर जाकर गाड़ी में बैठ गए।

समीरण दे सरकार हमेशा मुक्तिपद को सहयोग प्रदान करते आए हैं। ऐसी कोई घटना नहीं घटी है कि समीरण बाबू ने अपने विश्वास को खोने जैसा कोई काम किया हो। मुक्तिपद जानते हैं कि समीरण बाबू पर आंख मूंदकर भी विश्वास किया जा सकता है। इसलिए उनके हाथ में रुपये सौंपकर उन्होंने निश्चिन्तता का अनुभव किया।

और इधर समीरण बाबू की गाड़ी तेज रफ्तार से कलकत्ता की ओर भाग रही है। रात भी क्रमशः बढ़ती जा रही है। मगर ज्यादा देर होने के पहले ही उन्हें निर्धारित स्थान पर पहुंच जाना है। इसलिए गाड़ी जब हरिहर सेन के घर के सामने आकर रुकी तो रात के दस भी नहीं बजे थे।

समीरण बाबू ने बदस्तूर दरवाजे का कॉलिंग बेल बजाया। एक आदमी ने बाकायदा दरवाजा खोल दिया और एक महिला बाकायदा आकर उपस्थित हुई। समीरण बाबू ने बाकायदा नोटों की गड्डी महिला को सौंप दी।

महिला ने यथारीति नोटों की गड्डी हाथ में लेकर पूछा, "कितने हैं?"

समीरण बाबू बोले, "पांच..."

महिला ने बाकायदा दरवाजे को बन्द कर दिया।

यह जैसे कोई जादू हो। किसने रुपया दिया, किसे रुपया दिया गया, महिला ने समीरण बाबू से क्यों रुपया लिया, इसके बारे में किसी की ओर से सवाल नहीं किया गया। यूं चुपके से ही यह घटना घटित हो गई।

और यहीं समीरण बाबू का कर्त्तव्य समाप्त हो गया। सदर दरवाज़ा बंद होते ही गाड़ी पर बैठकर वे वहां से प्रस्थान कर गए।

असल में मजे की बात है कि मुक्तिपद मुखर्जी यह सोचकर निश्चिन्त हो गए कि लेबर-कमिश्नर के दफ्तर में उनकी जीत सुनिश्चित है और समीरण दे सरकार यह सोचकर प्रसन्न हुए कि उनका प्रैक्टिस जमा-जमाया रहेगा। हरिहर सेन के घर की महिला भी यह जानकर खुश हुई कि उसकी गृहस्थी का खर्च चलने के बाद भी कुछ अत्यंत आवश्यक विलासिता की सामग्रियां खरीदी जा सकती हैं।

और सैक्सबी के मेहनतकशों का क्या होगा ?

उनकी बात सोचे सरकार और दलालों का झुंड।

लंदन आफिस के मिस्टर अयंगर ने उसी दिन टेलेक्स से मुक्तिपद मुखर्जी से बातचीत की। कमललाल मेठा के तमाम कामों को मिस्टर अयंगर समझ गया है। अयंगर जन्मजात गणितज्ञ है। हिसाब दक्षिण भारतीयों के लिए सहजात जैसा है। सौम्यपद सब काम समझ गया है। विलायत का ऑफिस इतने दिनों तक कैसे चलता आया है और अभी किस तरह चलना चाहिए—इस संबंध में दोनों में काफी बातचीत हुई है।

"सौम्य कैसा लगा ? इंटेलिजेंट ?"

अयंगर का भावी मालिक सौम्य है तो उसके बारे में क्या राय जाहिर करनी चाहिए, इसकी तालीम अयंगर को किसी से नहीं लेनी पड़ी है। सहजात बुद्धि से ही कहा था, "हां सर, बहुत ही इंटेलिजेंट हैं—"

"ठीक वक्त पर होटल से ऑफिस आ जाता है न ?"

"हां सर, वेरी पंक्चुअल और रेगुलर हैं—"

"और सिगरेट ? बहुत ज़्यादा सिगरेट पीना शुरू कर दिया है क्या ?"

अयंगर ने कहा, "नहीं सर, मैंने कभी मिस्टर मुखर्जी को सिगरेट पीते नहीं देखा है।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहा, "मैं अकस्मात् उनके होटल भी जा चुका हूं। उस समय भी उन्हें सिगरेट पीते नहीं देखा था।"

"और ड्रिंक्स ?"

अयंगर ने कहा, "नहीं सर, वह भी नहीं।"

तीन मिनट के टेलेक्स से बोलने का कितना वक्त मिल सकता है। फिर भी मुक्तिपद को जब भी वक्त मिलता है, वे अयंगर से बातचीत करते हैं। प्रसंग अधिकांशतः सौम्य का ही रहा करता है। यह अच्छा हुआ है कि सौम्य को लंदन भेजा गया है। इधर फैक्टरी बंद है इसलिए दोनों पक्ष की बातचीत चल रही है। इसके चलते पानी की तरह पैसा बह रहा है। दूसरी ओर अतुल चटर्जी भी सौम्य के लिए उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं।

हर रोज़ टेलीफोन करते हैं, "क्या हुआ, लंदन से कोई खबर मिली ?"

मुक्तिपद कहते हैं, "मिली है।"

"क्या ?"

मुक्तिपद कहते हैं, "खबर बहुत अच्छी है। मैंने अयंगर को लंदन ऑफिस का हेड बना दिया है।"

"और सौम्य ?"

"सौम्य ने ही तो यह सब किया। उसके बारे मे एक खबर सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। वहा जाने के बावजूद वह अपने घर की बात नही भूला है। मेरी मा ने जिस तरह रहने कहा था, उसी तरह वह वहा अपने दिन गुजार रहा है। सुनने मे आया, न तो सिगरेट पीता है और न ही ड्रिंक्स का स्पर्श करता है। एक बात सुनकर आप अवाक् हो जाइएगा। मेरी मां ने जाने के दौरान उसके पॉकेट में सिंह-वाहिनी की एक तसवीर रख दी थी। उसने वादा किया था कि वह हर रोज उस तसवीर को प्रणाम करेगा। सुनने मे आया, यह ऐसा ही किया करता है—"

मिस्टर चटर्जी बोले, "वाह कितना चमत्कार को-इंसिडेंस है! विनीता भी उसी तरह की है। जानते हैं, विनीता इस उम्र मे भी हर दिन पूजाघर में जाकर पूजा करती है—"

"पूजा ? आपकी लड़की पूजा करती है ?"

"हां, यकीन कीजिए! मैं ज़रा भी बढ़ा-चढ़ाकर नही कह रहा हूं! उसको कितनी ही बार अपने साथ लेकर बाहर गया हूं। देखा है, वहा जाकर भी विनीता ने यह आदत नही छोड़ी थी। दोनों का बहुत अच्छा जोडा रहेगा!"

सचमुच दोनों का जोड़ा बहुत अच्छा रहेगा। मुक्तिपद ने इसकी सूचना दादी मा को दी। दादी मां भी सुनकर खुश हुईं। बोली, "सब मुन्ना की किस्मत की बात है—"

मुक्तिपद बोले, "मैंने जब तुमसे कहा था तो तुमने मेरी बात मानी ही नही थी—अब तो सबकुछ सुन लिया। अब तुम्हारी बहूरानी के भाग्य से यदि हम लोगों का कारखाना फिर से खड़ा हो जाए—"

दादी मा बोली, "इतने धूमधाम से इसीलिए तो सत्यनारायण की पूजा की—"

मुक्तिपद बोले, "तो फिर उन लोगो को रसेल स्ट्रीट का मकान खाली कर देने कहो।"

दादी मा बोली, "सो तो खाली करना ही होगा—"

"हा, अभी ही खाली कर देना पड़ेगा। कुछ दिन बाद ही तो सौम्य आ रहा है—"

"क्यों, तुम्हें मुन्ना ने पत्र लिखा है क्या ?"

"हां।"

"कब आ रहा है ?"

मुक्तिपद बोले, "अगले महीने ही चला आएगा।"

दादी मा बोली, "तो फिर शादी की तिथि कब तय करोगे ?"

मुक्तिपद बोले, "यह तुम्ही तय करो। मैं क्या कहूं! मिस्टर चटर्जी की क्या राय है, यह भी पूछनी है। शादी जितनी जल्द हो जाए हम लोगों के लिए उतना ही लाभदायक है। हमारी फैक्टरी भी उतनी ही जल्दी खुल जाएगी—"

"फिर एक काम कर। एक बार घर की मरम्मत करा लेना भी आवश्यक है।

वहुत दिनों से सफेदी नहीं कराई गई है।"

सो यही वंदोवस्त हुआ। तत्क्षण मल्लिकजी को वुलवाया गया। मल्लिकजी यह काम वहुत वार कर चुके हैं। उनके निर्धारित कॉन्ट्रैक्टर, ठेकेदार और राजमिस्त्री हैं। रुपया खर्च करने से लोगों की कमी नहीं होती। खासतौर से कलकत्ता शहर में। घर के सामने सीमेंट-वालू का पहाड़ जमा हो गया। एक साथ एक सौ राजमिस्त्री और दो सौ मजदूरों ने काम में हाथ लगा दिया।

सड़क से जाने के दौरान लोग अवाक् होकर मकान के सामने खड़े हो गए। वोले, "इस मकान में मिस्त्री क्यों काम में लग गए हैं भाई साहव ?"

किसी को इसका कारण मालूम नहीं। लेकिन धीरे-धीरे सवको पता चल गया। एक आदमी से सुनकर सवको इसकी जानकारी प्राप्त हो गई। इस घर के पोते की शादी होनेवाली है, इसीलिए इतनी तैयारियां चल रही हैं।

गिरिधारी को भी पहले पता नहीं था। वह मैनेजर साहव को पहचानता है। पूछा, "मकान में सफेदी क्यों हो रही है मैनेजर साहव ?"

मल्लिकजी वोले, "मुन्ना वावू की शादी होगी।"

"किस मुन्ना वावू की ?"

मल्लिकजी वोले, "अरे मुन्ना वावू इस घर में कितने हैं ? मुन्ना वावू तो एक ही हैं और वे विलायत गए हुए हैं।"

अव गिरिधारी समझा। यह वात सुनकर उसे खुशी हुई। खुशी इसलिए नहीं हुई कि मुन्ना वावू की शादी हो रही है, इसलिए हुई कि मुन्ना वावू की शादी के मौके पर गिरिधारी को ही नहीं, वल्कि जो भी अपने-पराये इस मकान में हैं उन्हें नई धोती और कुरते मिलेंगे। दादी मां की खास महरी विन्दु, तीन-मंजिले की फुल्लरा को नए कपड़े मिलेंगे। सिंहवाहिनी ठाकुरवाड़ी की नौकरानी कामिनी, पूजा करानेवाले पुरोहितजी, अरविन्द ड्राइवर को मिलेंगे। मंझले वावू के ड्राइवर विश्वनाथ को मिलेगा। ठाकुरवाड़ी के फूल-वेलपत्ता के आपूर्तिकर्त्ता कंदर्प को मिलेगा। गंगा के वावू घाट के पंडा दशरथ को मिलेगा। रसोईघर के रसोइया और नौकर-चाकर को भी मिलेगा।

मालिकों की शादी के मौके पर जिस तरह सभी को दिया गया था, पोते की शादी के अवसर पर भी दिया जाएगा। किसी को निराश नहीं किया जाएगा।

और मिठाई ?

मालूम नहीं, कैसे यह खवर मिठाई के दुकानदारों के कान में पहुंच गई थी। कलकत्ता के सभी नामी मिठाई के दुकानदार—भीमनाग से लेकर गंगूराम तक—एक-एक कर मल्लिकजी के पास आकर दरवार करने लगे।

सभी एक ही वात कहते हैं, "सुना है, आपके घर में फिर शादी होनेवाली है ?"

मल्लिकजी कहते हैं, "हां, ठीक ही सुना है, शादी होनेवाली है।"

"मिठाई का ऑर्डर किसे दे रहे हैं ?"

मल्लिकजी कहते हैं, "पहले शादी की तिथि तय हो जाए—"

"कव शादी होने जा रही है ?"

मल्लिकजी कहते हैं, "निश्चय के साथ कहना मुश्किल है। अव तक दिन तय

नही हुआ है।"

"अंदाजन ? अंदाज से भी तो कोई बात बताई जा सकती है।"

मल्लिकजी कहते हैं, "अन्दाज से कैसे बता सकता हूं। मैं तो हुक्म का बदा हूं। घर के मालिक मुझे जो-जो हुक्म देंगे, मैं वही-वही करूंगा। मैं कौन होता हूं?"

वे लोग कहते हैं, "आप ही तो मैनेजर हैं। इसके पहले जब शादी हुई थी तो आपने ही हम लोगों को मिठाई का ऑर्डर दिया था—"

लेकिन कौन किसकी बात सुनता है! सभी चले तो जाते हैं पर उम्मीद छोड़ने को तैयार नहीं हैं। इस घर के एक अनुष्ठान का ऑर्डर मिलते ही वे लोग मुकम्मल साल की आमदनी पूरी कर लेंगे। लेकिन शादी किस घर की लडकी से होने वाली है, असली सवाल यही है। वह भाग्यवती लडकी कौन है?

इस सवाल का किसी को कोई जवाब नही मिला। हमारे लिए खाना-पीना और मौज-मस्ती मनाना ही असली काम है। इसके अलावा हमें किस चीज की चिन्ता है? खाना-पीना भाड़ में जाए, सबसे पहले रुपया चाहिए। हां, सबसे पहले रुपया ही चाहिए। रुपया मिलते ही हमें धर्म-अर्थ-मोक्ष-काम सब कुछ मिल जाएगा। इस नश्वर जगत में रुपया ही एकमात्र सत्य है और बाकी सारा कुछ मिथ्या है, असत्य है।

बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट भवन के सामने बहुत सारे लोग राजमिस्त्री के खटने का दृश्य देखने को कुछ देर तक खड़े रहते हैं। ऊपर की तरफ ध्यान से देखते हैं उसके बाद अपने-अपने गतव्य स्थान को चल देते हैं।

कभी-कभी गिरिधारी से दो-चार व्यक्ति पूछते हैं, "दरवान जी, इस मकान मे इतने सारे राजमिस्त्री क्यो काम रहे हैं? क्या होने वाला है? पूजा वगैरह होगी क्या?"

गिरिधारी हरेक से एक ही बात कहता, "मुन्ना बाबू की शादी होने वाली है।" इस पर सब लोग इधर-उधर चले जाते हैं।

लेकिन उस दिन एक नए आदमी ने आकर पूछा, "दरवानजी, इस मकान मे सदीप बाबू नामक कोई व्यक्ति रहते हैं? सदीप लाहिड़ी···?"

गिरिधारी बोला, "नही बाबूजी, सदीप बाबू अभी घर में नही हैं, बाहर गए हुए हैं।"

"बाहर गए हैं? इतनी तकलीफ उठाकर इतनी दूर से आने पर भी मुलाकात नही हुई।"

आदमी बोला, "दरवानजी, संदीप बाबू आ जाए तो कह देना, उनसे मैं एक जरूरी बात करने आया था।"

"आपका शुभ नाम?"

"कहना, मैं तीन नम्बर मनसातल्ला लेन मे उनसे मिलने आया था। मेरा नाम है तपेश गागुली।"

मकान के सामने लम्बे-लम्बे बासों का मचान देखकर पूछा, "यह सब क्या हो रहा है दरवानजी? इतने राजमिस्त्री और मजदूर क्यों काम कर रहे हैं? घर मे

कोई शादी-ब्याह है क्या ?"

"जी हां, मुन्ना बाबू की शादी होने वाली है।"

"मुन्ना बाबू ? मुन्ना बाबू कौन ? जो विलायत गए हुए हैं ? उनकी शादी होगी ?"

"जी हां।"

तपेश गांगुली इससे भी निरस्त नहीं हुआ। पूछा, "कहां शादी होगी ? रसेल स्ट्रीट के मकान में तुम्हारी दादी मां जिस लड़की को रखे हुए हैं, उसी से शादी होगी ?"

देहाती दरवान गिरिधारी ने इन सब बातों के संबंध में कभी माथा नहीं खपाया है। उसको इसी बात की ख़ुशी है कि सौम्य बाबू विलायत से लौटने के बाद शराब की झोंक में उसे मुट्ठी-भर बख्शीश देंगे। ऐसे में वह अपने लड़कों को मनीऑर्डर से अपने गांव रुपया भेज सकेगा।

तपेश गांगुली बोला, "कुछ बोल नहीं रहे हो दरवानजी, रसेल स्ट्रीट की उसी लड़की से शादी होगी न ?"

गिरिधारी क्या कहे ! बोला, "जी हां।"

यह सुनकर तपेश गांगुली का मन उदास हो गया। भाग्य की बात है, सब भाग्य की बात है ! भाभी का भी भाग्य और विशाखा का भी भाग्य ! और उसके रू-ब-रू है उसकी, रानी और बिजली की फूटी हुई तकदीर।

संदीप के पास वह शिक्षक की नौकरी की उम्मीद में आया था और उसके बदले विशाखा की शादी की तैयारियों का आयोजन देखे गया। आंखों से टप-टप आंसू चूने लगे। उन्हें रूमाल से पोंछा। लोग-बाग देख लेंगे तो सोचेंगे, वह पागल है।

अब देर नहीं करनी चाहिए। तपेश गांगुली एक दो-मंज़िली बस पर सवार होकर सीधे अपने घर चला आया।

बचपन में उन लोगों की किताब में अंग्रेज़ी की एक कविता थी। कविता उसे ज़बानी याद हो गई थी। उसी समय तपेश गांगुली ने सोचा था, अगर किसी दिन बड़े होने के बाद उसके हाथ में ढेर सारे रुपये आएंगे तो उन रुपयों से वह सोना खरीदेगा।

Gold ! Gold ! Gold !
Bright and yellow, hard and cold,
Molten, graven, hammur'd and foll'd;
Heavy to get and light to hold;
Hoarded, bartir'd bought and sold
Stolen, borrow'd, squander'd, doled;
Spurned by the young but hugg'd by the old
Price of many a crime untold
Gold ! gold ! gold ! gold···[1]

---

1. सोना ! सोना ! सोना !
चमकीला और पीला, कठोर और शीतल→

सारी पंक्तियां याद नहीं आ रही हैं। तपेश गांगुली ने इसी चीज की मन-प्राणों से चाहना की थी। और मजे की बात है कि यही चीज उसे जीवन में प्राप्त नहीं हुई। लोगों का कहना है, किसी वस्तु की मन-प्राणों से तीव्रता से प्राप्त करने की इच्छा रहे तो वह प्राप्त हो जाती है। खाक मिलती है! उसने तो बचपन से ही मन-प्राणों से रुपये की ही चाह की थी, लेकिन यह वस्तु क्या उसे प्राप्त हुई है? कालीघाट के मंदिर जाकर कितनी ही बार मां काली के सामने छाती के बल लेटकर उसने रुपये-पैसे की मांग की थी। लेकिन कालीमाता ने उसे रुपया नहीं दिया।

घर जाते ही बिजली को पुकारा। पति की आवाज सुनकर रानी आई।

"क्या बात है? तुम ऑफिस नहीं गए?"

तपेश गांगुली बोले, "अब ऑफिस! उधर सर्वनाश हो गया—"

"किसका सर्वनाश? किस तरह का सर्वनाश?"

तपेश गांगुली ने पूछा, "बिजली कहां है?"

"बगल वाले कमरे में लेटी हुई है। क्यों? उसे क्या करना है?"

"उसे बुला लाओ। अभी तुम दोनों को अपने साथ ले रमेल स्ट्रीट के भाभी के मकान पर जाना है।"

रानी बोली, "एकाएक वहां क्यों जाओगे?"

तपेश गांगुली ने कहा, "बताया न कि सर्वनाश हो गया।"

"क्या सर्वनाश हुआ है, बताओगे भी?"

तपेश गांगुली बोला, "अब और मत पूछो। अबकी सचमुच ही विशाखा की शादी होने जा रही है।"

"कैसे पता चला?"

तपेश गांगुली बोला, "आज उस छोकरे की तलाश में विडन स्ट्रीट-भवन गया था। देखा, वहां ज़ोर-शोर से तैयारियां चल रही हैं। पूरे मकान को रंगाया जा रहा है। सामने के गेट पर दरवान खड़ा था। उसे पूछा तो बताया कि उस मकान के मुन्ना बाबू विलायत से आने वाले हैं। कलकत्ता पहुंचते ही उनकी शादी होगी। इसीलिए मकान को सजाया-संवारा जा रहा है।"

सुनकर रानी का चेहरा उतर गया। फिर भी उसे यकीन नहीं हुआ। पूछा, "सच कह रहे हो?"

तपेश गांगुली बोला, "सच नहीं तो क्या झूठ कह रहा हूं? भाभी इतने दिन पहले घर छोड़कर चली गई हैं। तुम एक दिन भी नहीं गईं। अभी अगर नहीं

→द्रवीभूत, उत्कीर्ण, गढ़ा हुआ, चिपटा
पाना कठिन और उठाने में हल्का
अपसंचित, विनिमय करने लायक वस्तु, खरीदी और बेची जाने वाली वस्तु, चोरी की जाने वाली वस्तु, उधार ली जाने वाली वस्तु, अपव्यय, अनुदान की वस्तु, युवकों द्वारा अवहेलना की वस्तु, लेकिन वृद्धों द्वारा चिपका कर रखने योग्य अनगिनत, अनकहे गुनाहों की वस्तु
सोना! सोना! सोना! सोना…

जाओगी तो सोचेगी, तुम भाभी से जलती हो। इसी वजह से कह रहा हूं कि अभी चलोगी तो भाभी बहुत खुश होगी। चलो न—"

रानी यह सब बात सुनकर बहुत देर तक सोचती रही।

तपेश गांगुली बोला, "क्या सोच रही हो? चलोगी?"

रानी ने इस पर भी कोई जवाब नहीं दिया।

तपेश गांगुली बोला, "अब क्या सोच रही हो? चलो-चलो, अपने भले के लिए ही तुमसे कह रहा हूं। देखो, बड़े लोगों के करीब रहना अच्छा होता है। उन लोगों के स्पर्श से हम लोगों का भला भी हो सकता है।"

यह बात रानी को भी युक्तिसंगत प्रतीत हुई। वह अब वक्त बर्बाद न कर तैयार होने के लिए अंदर चली गई।

तपेश गांगुली बोला, "तुम लोग फटाफट तैयार हो जाओ, मैं टैक्सी लाने जा रहा हूं—"

बैंक की नौकरी के प्रति संदीप को कभी लोभ नहीं था। उसकी सदैव यही इच्छा थी कि वह काशी बाबू की तरह वकील बनेगा। काशी बाबू को काले कोट में देखना उसे बड़ा ही अच्छा लगता। सोचा था, उसी तरह का काला कोट पहन वह प्रैक्टिस करेगा। लेकिन घटनाचक्र के कारण वह बैंक की परीक्षा पास कर गया।

याद है, उस दिन जब वह बैंक के सामने आकर खड़ा हुआ तो वहां काफी भीड़ थी। जितने लोगों ने इम्तिहान पास किया है, सबों को बुलाया गया है। इसके बाद जो लोग स्वास्थ्य-परीक्षण में पास कर जाएंगे उन्हें रखकर बाकी लोगों को छांट दिया जाएगा।

कोई किसी को नहीं पहचानता। थोड़ी ही देर में बहुतों से जान-पहचान हो गई। संदीप ने एक व्यक्ति को अपने सामने पाकर उससे पूछा, "हेल्थ-इक्ज़ामिनेशन में डाक्टर किस-किस चीज़ का परीक्षण करेगा?"

उस व्यक्ति ने कहा, "ज़्यादातर आंखों का परीक्षण करेगा। आपकी आंखें खराब नहीं हैं तो?"

संदीप ने कहा, "लगता है, मेरी आंखें ठीक ही हैं।"

वह व्यक्ति बोला, "आंख ठीक रहने पर भी रुपया देना पड़ेगा।"

"रुपया? क्यों? रुपया किसलिए देना पड़ेगा?"

"घूस! डाक्टर को घूस नहीं देनी है?"

यह सुनकर संदीप अवाक् रह गया। बोला, "रुपया तो मैं अपने साथ लाया नहीं हूं। कितना रुपया देना पड़ेगा?"

वह व्यक्ति बोला, "यह कहना मुश्किल है। अगर आंखें अच्छी होंगी तो कम रुपया देना पड़ेगा। पचास रुपये में ही काम चल जाएगा। लेकिन आंखों में अगर कोई खराबी होगी तो उसकी दूनी रकम देनी पड़ेगी। कम से कम एक सौ रुपया—"

संदीप मुसीबत में फंस गया। उसके पॉकेट में उतने रुपये नहीं हैं। वह क्या करेगा? बोला, "मुझे यह सब मालूम नहीं था। रुपया मैं अपने साथ नहीं

गया हूं।"

वह व्यक्ति बोला, "रुपया नहीं दीजिएगा तो डाक्टर आपको फेल कर देगा।"

इतना रुपया उसे अभी कौन देगा? अभी वक्त भी नहीं है उसके पास। घर जाकर मल्लिक चाचा से रुपया मांगकर लाया जा सकता है। उतना वक्त क्या उसे मिलेगा? कोई टैक्सी पकड़ घर जाकर उसी से वापस आने पर आधा घंटे से ज्यादा समय नहीं लगेगा।

उस व्यक्ति से संदीप ने जब अपनी समस्या का उल्लेख किया तो उसने कहा, "फिर यही कीजिए आप। डाक्टर को हर हालत में पैसा देना ही होगा, चाहे आपकी आखें खराब हों या न हों।"

उस दिन भाग्य अच्छा था कि मल्लिक चाचा घर पर ही थे। रुपया भी उनके पास था। टैक्सी रोककर संदीप उसी टैक्सी से वापस आने लगा था।

लेकिन एक सड़क के मोड़ पर आते ही ट्रैफिक बिलकुल जाम हो गया था। कतारबद्ध बहुत सारी गाडियां खड़ी हैं। किसी भी हालत में आगे बढ़ना मुश्किल है।

संदीप तब टैक्सी के अन्दर बैठा-बैठा छटपटा रहा था। सामने बहुत सारी गाड़ियां, बसें और ठेलागाडियां हैं। कोई जरा-सा भी हिल-डुल नहीं रही है। ट्रैफिक सिगनल भी बहुत दूर है। यहां से दिख नहीं रहा है।

टैक्सी छोड़कर संदीप अगर सामने की बस में चढ़ सके तो बहुत जल्द बैंक पहुंच सकता है।

बगल के रास्ते से एक आदमी को जाते देखकर संदीप ने पूछा, "क्या हुआ है भाई साहब? बता सकते हैं कि गाड़ियां क्यों रुक गई हैं?"

आदमी बोला, "पता नहीं क्या हुआ है। किसी दूसरे से पूछें, मुझे मालूम नहीं।"

यह कहकर आदमी निर्विकार भाव से अपने काम पर चला गया।

यह सब क्या हुआ? कहीं क्या कोई नियम-कानून की पाबंदी नहीं रहेगी? सभी इतने निर्विकार क्यों हैं? क्यों एक-दूसरे के सुख-दुख के बारे में नहीं सोचता, जबकि हरेक को काम है, सभी मुसीबत में फंसे हुए हैं। लेकिन हम यदि दूसरों की सुविधा-असुविधा के बारे में सोचने लगें तो देश कैसे चलेगा? दुनिया कैसे आगे बढ़ेगी?

टैक्सी ड्राइवर को कोई हड़बड़ी नहीं है। वह निश्चिन्तता के साथ स्टीयरिंग थामे बैठा हुआ है। वह क्यों बेवजह चिन्ता करे? उसके मीटर की संख्या क्रमशः बढ़ती ही जा रही है। संदीप ने उससे पूछा, "सामने क्या हुआ है भाई?"

टैक्सी ड्राइवर ने कहा, "कौन जाने, क्या हुआ है!"

संदीप ने कहा, "जरा पता लगाइए न, मुझे जल्दबाजी है।"

इससे भी टैक्सी ड्राइवर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह जिस तरह चुपचाप बैठा था, उसी तरह बैठा रहा।

एक और आदमी सड़क से पैदल चला जा रहा था। संदीप ने उसी से पूछा, "ऐ भाई साहब, सामने क्या हुआ है, बता सकते हैं?"

उस आदमी का मूड शायद पहले से ही बिगड़ा हुआ था। संदीप की बात सुनकर उसका माथा और गरम हो गया।

बोला, "पता नहीं साले को क्या हुआ है—सबके सब···"

"पुलिस ने क्या बताया?"

"पुलिस क्या बताएगी? एकमात्र घूस लेने के अलावा पुलिस और कोई काम नहीं जानती है?"

यह कहकर वह आदमी आंखों से ओझल हो गया। किसी और को गाली-गलौज करता हुआ बहुत दूर निकल गया।

अब संदीप टैक्सी के अन्दर चुपचाप बैठा नहीं रह सका। दरवाज़ा खोलकर टैक्सी से नीचे उतर पड़ा। सामने की बसों में जो लोग पायदान पर लटके हुए जा रहे थे, वे भी तब सड़क पर खड़े होकर सामने की तरफ कुतूहल-भरी दृष्टि से देख रहे थे और रहस्योद्घाटन की चेष्टा कर रहे थे। कुछ लोग यान-वाहन के आराम को त्याग कर पैदल चलने लगे हैं।

सामने एक और सज्जन को देखकर संदीप ने पूछा, "बता सकते हैं भाई साहब कि मामला क्या है?"

उस सज्जन ने संदीप को आपाद-मस्तक देखा और कहा, "आप कलकत्ता में रहते हैं?"

संदीप ने कहा, "हां, मैं कलकत्ता में ही रहता हूं। क्यों? आप यह बात क्यों पूछ रहे हैं?"

उस सज्जन ने कहा, "आप कलकत्ता में रहने के बावजूद यह पूछते हैं कि सड़क जाम क्यों हो गया है? यहां तो हर दिन ऐसा ही होता है—आप यह नहीं जानते? यहां क्या आदमी वास करते हैं? बारिश होने पर ट्राम-बस नहीं चलती, यहां मेनहोल के ढक्कन की हर रोज़ चोरी होती है, फुटपाथ पर होकरों की झोंपड़ियां खड़ी हो गई हैं। यह शहर है या नरक?"

यह कहकर वह सज्जन जा रहा था। संदीप ने फिर पूछा, "बताइए न, माजरा क्या है?"

उस सज्जन ने कहा, "सुना है, दिल्ली के प्रेसिडेंट आए हुए हैं—"

"प्रेसिडेंट? प्रेसिडेंट आए हैं तो सड़क जाम क्यों होगी?"

"अरे, यह कहने कौन जाए? प्रेसिडेंट को यदि आना हो तो रात में भी आ सकते हैं, जबकि ऑफिस-कोर्ट-कचहरी बन्द रहते हैं। कब प्रेसिडेंट आएंगे, इसका कोई ठीक नहीं। इतने पहले से पुलिस सड़क क्यों बन्द कर देती है? और यदि बन्द करना ही है तो एक दिन पहले ही अखबार या रेडियो से सूचित क्यों नहीं कर दिया जाता? समय-असमय का ठिकाना नहीं, लोगों की सुविधा-असुविधा का खयाल नहीं, फिर प्रेसिडेंट आते ही क्यों हैं?"

अब संदीप को निश्चिन्तता का बोध हुआ। कम से कम ट्रैफिक जाम का पता तो चल गया। तो फिर उसे नौकरी नहीं मिलेगी। अब तक शायद डाक्टर सबके स्वास्थ्य की जांच करके चला गया होगा। संदीप टैक्सी का किराया चुका कर तेज़ कदमों से सामने की ओर बढ़ गया।

रसेल स्ट्रीट के मकान में कालिंग बेल के बजते ही शैल ने अन्दर से पूछा, "कौन है?"

बाहर से तपेश गांगुली बोला, "हम लोग खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन से आए हैं। भाभी हैं ?"

पहचाने गले की आवाज सुनकर शैल ने दरवाजा खोल दिया और तत्क्षण रानी और बिजली अन्दर घुस गई।

बिजली ही सबसे ज्यादा खुश है। चिल्ला उठी, "अरी विशाखा, तू कहां है ?"

योगमाया और विशाखा भी इतने दिनों के बाद सबको देखकर खुश हो गईं।

बिजली बोली, "अरी, तू कितनी बड़ी हो गई है ! तू तो मुझे बिलकुल भूल गई।"

योगमाया बोल उठी, "तुम आई हो बहन तो आज तुम सबों को यहीं खाना खाना पड़ेगा, यह कहे देती हूं। मुझे इतनी प्रसन्नता हो रही है बहन, कि क्या बताऊं···"

तपेश गागुली बोला, "सो तो रात को ही हमने खाना खाया है, अभी कुछ खाने को दो भाभी। जोरों से भूख लगी है।"

योगमाया बोली, "तुम क्या खाओगे देवरजी, बताओ ? तुम जो खाना चाहोगे, वही खिलाऊंगी।"

तपेश गागुली ने कहा, "और विशाखा की शादी के वक्त हम लगातार एक हफ्ते तक यही खाना खाएंगे, यह अभी से बताए देता हूं—"

योगमाया ने कहा, "एक हफ्ता क्यों कह रहे हो देवरजी, विशाखा की शादी होने पर सात महीने तक यही खाना खाना। यह तो मेरे लिए सौभाग्य की बात होगी देवरजी। विशाखा क्या सिर्फ मेरी ही है ? विशाखा तो तुम लोगों की भी है। पता नहीं, ईश्वर की क्या मर्जी है··"

तपेश गागुली ने कहा, "इसका मतलब ?"

योगमाया ने कहा, "इसका मतलब क्या होगा देवरजी ! ईश्वर के अलावा मेरा कौन है ? ईश्वर की मर्जी होगी तो शादी अवश्य ही होगी। और नहीं होने पर नहीं होगी—"

तपेश गागुली ने कहा, "तुम इतनी अनजान बनने का भाव क्यों कर रही हो भाभी ? तुम क्या सोचती हो कि हमें कुछ मालूम नहीं ? हम घास नहीं चरते।"

योगमाया गभीर होकर बोली, "मैं समझ नहीं पा रही कि तुम क्या कह रहे हो। सच, तुमने कुछ सुना है ?"

तपेश गागुली ने कहा, "तुम्हें कुछ सुनने को नहीं मिला ?"

"क्या सुनने को मिलेगा ?"

"क्यों, विशाखा की शादी की बात।"

योगमाया जैसे आसमान से गिर पड़ी। बोली, "विशाखा की शादी की बात ? लेकिन मुझे तो किसी ने कुछ भी नहीं बताया है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह क्या ? उस दिन बिडन स्ट्रीट जाने पर मैं देख *आया कि तुम्हारे दामाद के घर में शादी की जोर-शोर से तैयारियां चल रही हैं।"*

"संदीप ने तो मुझे कुछ बताया नहीं।"

तपेश गागुली ने कहा, "शायद तुम्हें चौंका देने के खयाल से बात को दबाकर

—"

गमाया ने कहा, "तुमने क्या देखा, यह तो बताओ—"

पेश गांगुली ने कहा, "उस दिन मैंने विडन स्ट्रीट से जाने के दौरान देखा, खा की ससुराल के मकान को खूब सजाया-संवारा जा रहा है। बांस के बड़े-मचान खड़े किए गए हैं, राजमिस्त्री और मज़दूर काम कर रहे हैं। मैंने उन ं के दरवान से पूछा, घर की मरम्मत क्यों कराई जा रही है भैया? दरवान हा, उस मकान के मुन्ना बाबू विलायत से लौटकर आ रहे हैं। लौटकर आते मुन्ना बाबू की शादी होगी—"

योगमाया की आंखें आनन्द के मारे चमककर जैसे बाहर निकल आईं। ली, "दरवान ने यह बात कही?"

तपेश गांगुली ने कहा, "दरवान न कहता तो मैं कहां से सुनता?"

योगमाया बोली, "तुम्हारे मुंह में घी-शक्कर देवरजी! ईश्वर करे, तुम्हारी ात सच साबित हो—"

तपेश गांगुली बोला, "मुंह में घी-शक्कर पड़ने से मेरा पेट नहीं भरेगा भाभी। ऐसी खुशखबरी सुनाई है। अब पहले मुंह मीठा कराओ, उसके बाद घी-शक्कर जितना भी मिले, मुझे आपत्ति नहीं है।"

जिस दिन संदीप को पहली बार नौकरी मिली, उस दिन संदीप को जो प्रसन्नता हासिल हुई थी उसकी स्मृति इतने दिनों के बाद मलिन हो गई है। लेकिन मलिन होने पर भी बहुत कुछ बची-खुची हुई है। उस समय नौकरी पाने का अर्थ था अपने पैरों पर खड़े होने की क्षमता अर्जित करने की स्वतन्त्रता। अब उसे किसी के सामने पैसे के लिए हाथ फैलाना नहीं पड़ेगा; किसी के सामने अपना सर झुकाना नहीं होगा। ज़रूरत पड़ने पर किसी से कर्ज़ भी नहीं लेना होगा। शुरू में उसे जिसकी याद आई, वह थी उसकी मां। अब उसकी मां को चटर्जी बाबुओं के घर जाकर शारीरिक परिश्रम नहीं पड़ेगा। अब वह मां को ज़रा शांति और आराम देगा।

पहले-पहल जब उसे छुट्टी मिलेगी तो वह मां को यह समाचार देकर उसके चरणों का स्पर्श करेगा। वह मां से कहेगा, "अब तुम्हें कोई काम नहीं करना पड़ेगा मां, तुम दिन-भर सिर्फ बैठी रहोगी।"

यह सुनकर, हो सकता है, मां हंस दे। कहेगी, "हां, बैठकर रहने से मुझे गठिया की बीमारी हो जाए, तू यही चाहता है?"

संदीप कहेगा, "नहीं मां, ज़िन्दगी में तुमने बहुत कष्ट झेला है, अब मैं तुम्हें कष्ट झेलने नहीं दूंगा—"

मां कहेगी, "फिर गृहस्थी का इतना काम कौन करेगा, सुनूं? गृहस्थी के काम क्या कोई कम हैं? घर में झाड़ू लगाना, कपड़ा फींचना, रसोई पकाना, बर्तन मांजना, सारा कुछ तो करना होगा—"

"यह काम तुम ज़िन्दगी-भर करती रहोगी?"

मां कहेगी, "मैं नहीं करूंगी तो और कौन करेगा? तू तो सवेरे खा-पीकर

ऑफिस चला जाएगा। उसके बाद? उसके बाद घर का इतना सारा काम कौन करेगा?"

सदीप कहेगा, "काम करने के लिए मैं तनख्वाह देकर आदमी रख दूंगा, वही करेगा।"

सोचते-सोचते उसकी सोच ने एक नया मोड़ ले लिया। अरे, संदीप तो सिर्फ स्वार्थी की तरह अपनी मा के बारे में ही सोच रहा है! लेकिन उसके मल्लिक चाचा? उसके मल्लिक चाचा न होते तो उसे यह नौकरी मिलती? अचानक मल्लिक चाचा के आभार की बातो ने ही उसके मन पर अपना दखल जमा लिया। वह जो अब तक कलकत्ता की चकाचौंध मे नहीं खोया है, हजारो आघात और प्रलोभनो मे भी पराजित नही हुआ है, इसका श्रेय मल्लिक चाचा को ही है।

याद है जिस दिन वह बैंक की नौकरी का इटरव्यू देने के इरादे के बाद जब मल्लिक चाचा से रुपया मागने के लिए लौट कर घर आया था, उस समय उसके पास उतना वक्त भी नही था। लेकिन तब उसे एक सौ रुपये की निहायत जरूरत थी। सारा कुछ सुनने के बाद मल्लिक चाचा ने अपने पॉकेट से एक सौ रुपया निकालकर दिया था।

"एकाएक सौ रुपये की जरूरत क्यों पड़ गई?"

सदीप ने कहा था, "सुनने मे आया, डाक्टरी जाच में घूस देनी पडती है।"

"घूस?"

मल्लिक चाचा अवाक् हो गए। ऐसा लगा जैसे उन्हें इस बात पर यकीन नही हुआ हो या फिर सुनने मे गलती हुई है। इसके बाद बोले, "डाक्टरी जाच मे घूस?"

सदीप ने कहा, "हा।"

मल्लिक चाचा ने रुपये दिये। देने के बाद हताश होकर बोले, "इस्स! कितने बुरे दिन आ गए! पता नही, इस देश के भाग्य मे क्या है? हर काम के लिए यदि घूस देनी पड़े तो आखिर मे आदमी की क्या हालत होगी?"

उसके बाद बोले, "खैर, जो कुछ जिस पूजा का नैवेद्य है, जिस जमाने का जो कर्त्तव्य है, उसे तो करना ही होगा—चाहे इच्छा रहे या न रहे। इस युग मे धर्मराज युधिष्ठिर बनने से तुम्हारा काम नही चल सकता—"

आश्चर्य! उस युवक ने जो कहा था, अतत वही हुआ। जब सदीप की आखो का परीक्षण चल रहा था, उस समय डाक्टर ने निराशा से मिले-जुले भाव के साथ कहा, "इस्स! आपकी आखों की हालत तो बिलकुल बदतर है—"

सदीप ने कहा, "लेकिन मेरी आखो मे तो कोई दोष नही है और आप कह रहे है—"

डाक्टर ने कहा, "मैं डाक्टर होकर कह रहा हूं दोष है और आप कह रहे हैं दोष नही है? आप क्या मुझसे ज्यादा समझते हैं? अभी जाइए—"

सदीप बोला, "फिर तो मेरी नौकरी ही नही होगी।"

डाक्टर बोला, "अभी फालतू बात करने का मेरे पास वक्त नही है—आप जाइए। कपाउडर के पास चले जाइए—" यह कहकर दूसरे आदमी का नाम पुकारा। सदीप लाचार होकर कमरे के बाहर चला आया। आने के बाद एक दूसरी

पंक्ति में खड़ा हो गया। वहां लंबी लाइन थी। उसे खत्म होने में आधा घंटा लग गया। उसके बाद जब कंपाउंडर के कमरे में दाखिल हुआ तो कंपाउंडर ने उसके हाथ में एक कागज़ थमा दिया। कागज़ की ओर देखकर संदीप कुछ समझ नहीं सका। पूछा, "यहां क्या लिखा हुआ है ?"

कंपाउंडर बोला, "आपका आइ-साइट खराब है—"

संदीप ने कहा, "इसका मतलब मुझे नौकरी नहीं मिलेगी—"

कंपाउंडर बोला, "आंख खराब होने पर आपको कैसे मिल सकती है ?"

इसके बाद और क्या कहा जा सकता है ! संदीप लौटकर बाहर चला आया था। उसका मन बहुत उदास हो गया था। इतनी तकलीफ उठाकर इतना रुपया ले आने पर भी नौकरी मिली नहीं ? कमरे से निकलकर सोच रहा था कि क्या करे। पीछे से पहलेवाले व्यक्ति ने आकर पूछा, "क्या हुआ, नौकरी नहीं मिली ?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

"रुपया नहीं दिया था ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, किसी ने रुपये की मांग नहीं की थी—"

"रुपये मांगेगा क्यों ? आप रुपया दे सकते थे।"

"किसे रुपया दूंगा ? डाक्टर को ?"

"डाक्टर को क्यों ? उस कंपाउंडर को। आपको देखने को मिलता कि रुपया थमाते ही आपकी आंखें ठीक हो गई हैं।"

"अभी जाऊं ?"

"जाइए, जाकर देखिए।"

और सचमुच वही हुआ। बहुत सारे लोगों के झुंड को पार कर जब संदीप कमरे के अन्दर पहुंचा तो तकरीबन सभी लोगों को फिट-सर्टिफिकेट मिल चुका था। संदीप ने जाकर कंपाउंडर के हाथ में पचास रुपया दिया, उसने निर्लज्ज की तरह उस रकम को जेब के हवाले कर फिट-सर्टिफिकेट दे दिया। जैसे जादू हो। जादू की तरह ही सारा कुछ हो गया।

संदीप ने यह बात कभी किसी से नहीं की थी। और भी जितने नौजवानों को नौकरी मिली थी, उन लोगों ने भी किसी से नहीं कही थी। हो सकता है यह बात किसी से कहने लायक नहीं है, इसीलिए नहीं कही थी। किसी-न-किसी दिन जिस तरह लोग सारा कुछ बरदाश्त करने के अभ्यस्त हो जाते हैं, उसी तरह इसे भी बरदाश्त करने के आदी हो गए थे। उसके बाद आदमी को इतनी सारी समस्याओं के रूबरू होना पड़ता है कि वह नई समस्याओं के समाधान के वास्ते बुरी तरह व्यस्त हो जाता है और अतीत की तमाम समस्याओं की भयानकता को भूल जाना ही पसंद करने लगता है।

संदीप ने भी सोचा था, उसे क्योंकि नौकरी मिल गई इसलिए अब उसकी ज़िंदगी की सारी समस्याओं का भी खात्मा हो गया।

लेकिन संदीप को पता नहीं था कि तभी से उसके जीवन में हज़ारों समस्याओं ने जड़ जमाना शुरू कर दिया था। उन समस्याओं के बारे में सोचने पर उसे इतने दिनों के बाद भी भय का अहसास होता है। ऐसा लगता है कि उसे बैंक की नौकरी मिली ही क्यों ? बैंक की नौकरी न मिली होती तो उसके जीवन में इस

अयाचित अशांति का आगमन नहीं होता। इतने बरसों तक उसे जेल की सजा भुगतनी नहीं पड़ती। और सिर्फ जेल की ही सजा? और कोई दूसरी सजा नहीं?
जीवन भर उसने जो सजा भुगती है वह सजा क्या दुनिया के किसी और को भुगतनी पड़ी है? अक्सर उसे उन दिनों की बात याद आती। बैंक की तरक्की, विशाखा से उसका सम्पर्क, सभी की भलाई करने की उसकी पुरानी प्रवृत्ति, उसके बाद दूसरे की विपत्ति में उसका मानसिक उद्वेग—इन तरह-तरह के घटना-चक्रों के प्रभाव से उसके शरीर और मन में जो प्रतिक्रिया जगी थी, उससे जो हानि हुई थी, उसकी कोई तुलना हो सकती है?
सुशील से एक दिन रास्ते में अचानक मुलाकात हो गई थी। उसे बैंक की नौकरी मिल गई है, यह सुनकर सुशील को हैरानी हुई थी। पूछा था, "तुझे नौकरी कैसे मिली? तू तो किसी पार्टी का मेम्बर नहीं है। किसी से तेरी जान-पहचान थी?"
सदीप ने कहा था, "नहीं।"
सुशील को इस पर भी हैरानी हुई थी। उसके बाद पूछा था, "किसी को घूस देनी पड़ी थी?"
सदीप ने कहा, "डाक्टर को।"
सुशील को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या, आजकल डाक्टर लोग भी घूस लेने लगे?"
उसकी बात सुनकर सदीप को महसूस हुआ था, सुशील अपने मन में बचपन से जो विश्वास पाल रहा था उसकी चूल ही जैसे हिल उठी हो। पार्टी के अलावा भी कोई प्रभावी शक्ति विश्व में हो सकती है, इसकी उसने जैसे कल्पना ही नहीं की थी। पार्टी के अलावा भी कोई शक्ति है, इसका पता होता तो वह उसी का भजन-कीर्तन करता।
सदीप को तब जल्दबाज़ी थी। वह अब वहां खड़ा नहीं रहा। सुशील से मुलाकात होने पर उसकी निगाह में एक बात स्पष्ट हो गई कि उसे नौकरी मिलने से सुशील को प्रसन्नता नहीं हुई है। नौकरी न मिलने पर कितने ही जाने-अनजाने व्यक्तियों ने उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की थी। बहुतों ने कहा था, "हाय-हाय!" बहुतों ने तरह-तरह के उपदेश दिए थे। कहा था, "क्या करोगे, बंगाली ही बंगाली के सबसे बड़े दुश्मन होते हैं। दुख मत करो भाई, कोशिश करते रहो, किसी-न-किसी दिन तुम्हारी जीत होकर ही रहेगी।"
लेकिन नौकरी मिलने के बाद?
नौकरी मिलते ही रातों-रात जैसे सबकी शक्लें बदल गईं। आदमी की बात-चीत और व्यवहार में पहले जो सहानुभूति का पुट था, वह नहीं रहा। उस समय सदीप भी जैसे उन लोगों का एक प्रतिद्वन्द्वी हो गया। उनकी रोटी का जैसे वह भागीदार हो गया।
उस समय वे लोग कहने लगे, "अच्छा ही हुआ कि तुम्हें नौकरी मिल गई। अब समझोगे कि दुनिया क्या है, दुनिया की हकीकत क्या है।"
आश्चर्यजनक है आदमी का यह समाज और उसकी यह रीति-नीति।
बैंक का जो एक पुराना कर्मचारी था, उसने पूछा, "शादी-वादी कर चुके हो

भाई ?"

संदीप ने कहा, "मुझ जैसे गरीब आदमी से कौन अपनी लड़की की शादी करेगा ?"

वह आदमी बोला, "तुम यह क्या कह रहे हो भाई ? बैंक का मुलाजिम पात्र के तौर पर मिल जाए तो बहुत सारी लड़कियों के बाप को लगेगा कि हाथ में स्वर्ग आ गया है। यह जानते हो ?"

जो लोग पुराने बैंक के नौकरीजीवी हैं, वे नए नौकरीजीवियों से रश्क करते हैं। बहुतेरे व्यक्ति उन दिनों कम वेतन में दाखिल होकर ग्यारह-बारह बजे रात में घर लौटते थे। पहले ओवरटाइम नामक कोई चीज नहीं थी। जब तक लेजर खाते का हिसाब मिल नहीं जाता, किसी को छुट्टी नहीं मिलती थी। चाहे जितनी भी रात हो जाए तुम्हें रुपया-आना-पाई का हिसाब मिलाकर ही घर लौटना है।

पुराने दिनों की यह सब बात सुनकर संदीप कभी-कभी खुद को सौभाग्यशाली समझता है। लेकिन ऑफिस में जैसे ही छुट्टी होती उसे विडन स्ट्रीट के बारह बटे ए मकान की बात याद आ जाती, मुक्तिपद मुखर्जी, मल्लिक चाचा, विशाखा और मौसीजी की याद आ जाती। और उन लोगों की याद आते ही उसका मन उदास हो जाता। उस समय सड़क के राहगीर, बस-ट्राम-आदमी की भीड़ वगैरह से उसके मन की उदासी किसी भी हालत में दूर नहीं होती।

उस दिन मल्लिक चाचा से मुलाकात होते ही वे बोले, "क्या बात है, आज तुम्हें घर आने में इतनी देर क्यों हुई ?"

संदीप ने कहा, "आज ऑफिस से पैदल चलता हुआ घर लौटा हूं—"

"क्यों ?"

संदीप ने कहा, "बस में बेहद भीड़ थी, इसलिए सब लोग पैदल आ रहे थे। मैं भी उन लोगों से गपशप करते हुए चला आया—"

मल्लिक चाचा बोले, "तुम फरकी खाओगे ?"

"फरकी ?"

"मैंने खुद फरकी खाई है। सोचा, ऑफिस से तुम खटकर आ रहे हो, इसलिए शायद तुम्हें भूख लगी होगी।"

संदीप मल्लिक चाचा के इस स्नेह-प्यार का ऋण कभी उतार नहीं सका था। वे सिर्फ इतना ही देखकर दुनिया से विदा हो गए थे कि संदीप को बैंक की नौकरी मिली है, संदीप स्वाधीन है। उसके परवर्ती जीवन की घटनाएं देख लेते तो उन्हें सबसे अधिक दुख होता। अच्छा हुआ है कि इसके पहले ही वे दुनिया से कूच कर गए। वे अक्सर कहा करते, "दीर्घायु होना एक अभिशाप के सिवा और कुछ नहीं है—"

संदीप ने भी देख लिया कि दीर्घायु होना सचमुच ही एक अभिशाप है। दादी मां दीर्घायु नहीं होतीं तो जिंदगी के आखिरी दौर में उन्हें इतना कष्ट नहीं झेलना पड़ता। दादी मां जीवन के आखिरी दौर में कितनी तकलीफ से गुजर चुकी हैं, संदीप ने उसे अपने जीवन में देखा है। उन्हें कभी भी नींद नहीं आती। वे अपनी मानसिक पीड़ा से कितने ही दिन और कितनी ही रातें लगातार छटपट करती रही थीं। किसी पर नजर पड़ते ही वे रो-रोकर कहने लगतीं, "तुम लोगों में से

मौसीजी बोलीं, "अभी तो तुमने पेट भर खाया है, और खाओगी ?"

विशाखा बोली, "इतनी बड़ी खुशखबरी सुनने को मिली है और मात्र एक ही संदेश खाऊंगी ?"

यह कहकर एक और संदेश मुंह में डाल लिया। और तत्क्षण सदर दरवाज़े का कॉलिंग बेल बज उठा। मौसीजी बोलीं, "तेरी अंटी मेमसाहब आई है, जाकर दरवाज़ा खोल दे।"

बात सच ही थी। विशाखा अंटी मेमसाहब के पास पढ़ने चली गई।

मौसीजी धीमे स्वर में बोलीं, "तुमसे एक बात पूछना चाहती थी बेटा—"

संदीप ने कहा, "कहिए न, आप कहने में इतना संकोच क्यों कर रही हैं ?"

मौसीजी बोलीं, "उस दिन मेरा देवर यहां आया था। बताया कि तुम लोगों के घर में राजमिस्त्री काम कर रहे हैं।"

"हां-हां, राजमिस्त्री काम कर रहे हैं।"

"मेरे देवर ने बताया कि तुम लोगों के घर के दरबान ने उससे कहा, उस घर के छोटे बाबू की जल्द ही शादी होनेवाली है इसलिए राजमिस्त्री काम पर लगाए गए हैं। यह बात क्या सच है ?"

संदीप ने कहा, "मैंने भी यही सुना है, लेकिन यह सब घर का अंदरूनी मामला है न, इसलिए सच्चाई क्या है, कह नहीं सकता।"

मौसीजी बोलीं, "मेरे मन में भी इसीलिए खटका पैदा हो रहा है। खासकर उस दिन सत्यनारायण पूजा के अवसर पर कैसा कांड हो गया ! छिः छिः, मुंहजली की करतूत देखकर मेरा सिर लज्जा से झुक जाता है। इतने भले लोगों के बीच कैसी हरकत कर बैठी !"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोली, "अच्छा बेटा, वे लोग कौन थे ? देखने पर लगा, वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं। मेरी लड़की की हमउम्र एक लड़की भी थी उन लोगों के साथ। वे लोग क्या करने आए थे ? उन लोगों के कौन हैं ?"

संदीप क्या बोले ! इतने दिनों तक वह बात को दबाए हुए था। बोला, "वे लोग ? वे लोग हम लोगों के मंझले बाबू के दोस्त हैं। पूजा के उपलक्ष्य पर उस दिन मंझले बाबू ने उन लोगों को निमंत्रित किया था।"

मौसीजी बोलीं, "पता नहीं बेटा ! मैं भाग्य की मारी हूं न, इसीलिए कोई खटका होते ही डर जाती हूं। उस दिन अखबार में एक विज्ञापन देखा था। एक ज्योतिषी का विज्ञापन। उस ज्योतिषी का कहना है कि वह आदमी की जन्मपत्री देखकर उसका अतीत, वर्तमान और भविष्य बता सकता है। केवल तीस रुपये देने से ही सब कुछ बता देता है। मुझे बड़ी इच्छा हो रही है कि उस मुंहजली की जन्मपत्री लेकर एक बार उसके पास जाऊं—तुम किसी छुट्टी के दिन मुझे उसके पास ले जा सकते हो ?"

संदीप बोला, "कितनी दूर जाना होगा ?"

मौसीजी बोलीं, "ज्यादा दूर नहीं, इस कलकत्ता शहर में ही। ठहरो, मैं तुम्हें अखबार दिखाती हूं—"

यह कहकर मौसीजी ने बगल के एक कमरे से एक पुराना अखबार लाकर संदीप को दिखाया। अखबार के ऊपरी हिस्से में एक अलौकिक शक्तिसम्पन्न

योगी पुरुष की तसवीर छपी हुई है। चेहरा दाढ़ी-मूछों से भरा हुआ। सिर पर जटा-जूट।

मौसीजी बोलीं, "ज्यादा दूर नहीं है बेटा, मुझे ले चलोगे? जिस दिन तुम्हारे ऑफिस में छुट्टी रहेगी, उसी दिन चलूंगी। बेलघाटा क्या बहुत दूर है? और दक्षिणा के तौर पर मात्र तीस रुपया लेंगे। सो किसी तरह पैसा बचाकर उतना मैं जुगाड़ कर लूंगी। चलोगे बेटा, मुझे अपने साथ लेकर?"

संदीप ने कहा, "इन सब चीजों पर आप आस्था रखती हैं?"

मौसीजी बोलीं, "अभी मेरे मन की जो हालत है, आस्था-अनास्था का सवाल पैदा ही नहीं होता बेटा। अन्ततः मुंहजली की शादी होगी या नहीं, इस चिंता में मेरी ऐसी हालत हो गई है कि लगता है पागल हो जाऊंगी—"

संदीप बोला, "चलूंगा। अगले मंगलवार को मेरे बैंक में छुट्टी है, उसी दिन आपको अपने साथ ले जाऊंगा —आप तैयार रहिएगा—"

संदीप ज्यों ही उठकर खड़ा हुआ, मौसीजी बोलीं, "तुम जरूर चलोगे तो? तुम वादा कर रहे हो?"

मौसीजी के मुंह के सामने सच बात कहने में संदीप को हिचकिचाहट महसूस हुई। मौसीजी जिस विश्वास को लेकर जीवन जी रही हैं, उसकी कमजोर नसों पर वह कैसे चोट पहुंचाएगा? चाहे कुछ दिन ही सही, मौसीजी जरा आराम और शांति का अनुभव तो करें। संदीप अपने जीवन में किसी को सुख नहीं दे सका है। किसी को सुखी बनाने की क्षमता जबकि उसके पास नहीं है तो दुख देने का भी अधिकार नहीं है। इसके अलावा इस दुख के संसार में असत्य बोलकर वह अगर किसी को जरा सुकून दे सके तो यही क्या कोई कम है? मौसीजी ज्योतिषी के पास जाना चाहती हैं। वह ज्योतिषी क्या मौसीजी से अप्रिय सत्य कहेगा? उसके बाद कितनी ही तरह के रत्न, कवच-तावीज हैं जिन्हें इकट्ठा करना अनेकों के लिए दुर्मूल्य वस्तु के समान है। लेकिन दुर्मूल्य वस्तु होने के बावजूद लोग-बाग लोटा-कटोरे तक को बेचकर उन्हें पाने की कोशिश करते हैं। उसका फलाफल क्या होगा, यह बड़ी बात नहीं है। लेकिन दो क्षण, दो पल की शांति या सांत्वना क्या कोई कम मूल्यवान है?

सड़क पर निकल आने के बावजूद संदीप की आंखों में रह-रहकर आंसू आ रहे थे। विशाखा को कुछ मालूम नहीं है। अब भी उसकी धारणा है कि वह मुखर्जी भवन की बहू बनने वाली है। इतने दिनों तक मौसीजी की भी यही धारणा थी। लेकिन अब शायद उस विश्वास की बुनियाद में एक दरार पड़ गई है। इसीलिए ज्योतिषी का दरवाजा खटखटाना चाहती हैं।

लेकिन ज्योतिष शास्त्र क्या अकाट्य सत्य है? ज्योतिष भी क्या विज्ञान है?

संदीप स्वयं ज्योतिष शास्त्र नहीं जानता। जानना भी नहीं चाहता। जानने की कभी कोशिश भी नहीं करेगा। लिहाजा मौसीजी को लेकर ज्योतिषी के पास जाने में दोष ही क्या है? ज्योतिषी हो सकता है, मौसीजी से प्रिय बात ही कहे। ज्योतिषी की बात सुनकर मौसीजी शायद खुश हो जाएंगी। हो सकता है ज्योतिषी की बात पर मौसीजी को पूरा-पूरा विश्वास भी नहीं होगा। इसमें संदीप की कौन-सी हानि होनेवाली है? मौसीजी का खुश होना ही बड़ी बात है, उसके हानि-लाभ

की बात इस मामले में गौण है।

रात में घर पहुंचते ही मल्लिक चाचा ने पूछा, "क्या हालचाल है ? सब ठीक-ठाक है तो ?"

संदीप ने कहा, "हां, सब ठीक ही है। मगर···"

"फिर अगर-मगर क्यों ?"

संदीप ने कहा, "मौसीजी पहले ही एक आदमी से सुन चुकी हैं कि इस घर में जबकि राजमिस्त्रियों को काम पर लगाया गया है तो फिर विशाखा की शादी जल्दी ही होनेवाली है। यही सोचा था—"

"लेकिन अब ? अब क्या उन्हें संदेह हो रहा है ?"

संदीप ने कहा, "नहीं वैसी कोई बात नहीं है। अब मौसीजी ने अखबार में एक विज्ञापन देखा है जिसमें लिखा हुआ है कि एक ज्योतिषी जन्मपत्री देखकर आदमी के अतीत, वर्तमान और भविष्य के बारे में बता सकता है। मेरी किसी छुट्टी के दिन वह मेरे साथ उस ज्योतिषी के पास जाना चाहती हैं। मैंने वचन दिया है कि मौसीजी को अपने साथ लिए उसके पास जाऊंगा। अच्छा, यह तो बताइए, ज्योतिष शास्त्र से क्या सारी बातों का पता चल जाता है ? मुझे इसमें शक है।"

मल्लिकजी ने कहा, "यह अलग बात है। जिसको जो विश्वास हो, उस मानने में मैं या तुम क्या कर सकते हैं ? मां का मन है न, इसलिए लड़की के भविष्य के सम्बन्ध में चिंतित होना हर मां के लिए स्वाभाविक है। हमारी दादी मां के घर की बात ही सोचकर देख लो। दादी मां मुझे हर बात के लिए काशी भेजती हैं। चूंकि मैं इस घर में नौकरी करता हूं, वे जब जो आदेश देती हैं, मुझे करना पड़ता है। मैं चाहे ज्योतिष पर विश्वास करूं या न करूं, लेकिन चुपचाप उनके आदेशों का पालन करता हूं। यह तो तुम देखते ही आ रहे हो। लेकिन आज ही एक घटना घटी है जिसकी सूचना तुम्हें दे देना अच्छा रहेगा—"

संदीप ने पूछा, "कौन-सी घटना ?"

मल्लिकजी बोले, "आज तीसरे पहर दादी मां के पास जाने पर सारा कुछ सुनने को मिला। उन्होंने मुझे बताया, मंझले बाबू ने टेलीफोन से उन्हें सूचित किया है कि सौम्य बाबू इसी महीने में भारत आ रहे हैं।"

"इसी महीने में ? इस महीने का मानी कब तक ?"

"यह नहीं बताया। मैं जो सुनकर आया था, वही तुमसे बताया।"

संदीप बोला, "फिर क्या मिस्टर चटर्जी की उस लड़की से ही सौम्य बाबू की शादी होगी ?"

मल्लिकजी बोले, "यह बात मैं ठीक से नहीं बता पाऊंगा। मैं तो हुक्म का बंदा ठहरा, अभी जो सुनकर आया वही तुम्हें बताया। मगर यह सब बात रसेल स्ट्रीट के मकान की अपनी मौसीजी को मत बताना।"

उनकी बात सुनकर संदीप गुमसुम हो गया। वह कह ही क्या सकता था ! पहले उसके सामने नौकरी पाने की समस्या थी। वह समस्या भाग्यवश समाप्त हो गई है। उसे ऐसी नौकरी मिली है कि जीवन-भर के लिए उसकी आर्थिक कठिनाइयों का अन्त हो गया है। उसके फलस्वरूप उसको पराये के अन्न पर जीने का

दुर्भाग्य अब बरदाश्त नहीं करना होगा। बाकी रही विशाखा। विशाखा का क्या होगा? सौम्य बाबू से अन्ततः उसकी शादी अगर नहीं होती है तो वे लोग कहा जाएंगे?

सहसा मल्लिक चाचा बोले, "और तुम? अब तो तुम्हें एक अच्छी नौकरी मिल गई। अब तुम क्या करोगे?"

संदीप ने कहा, "इस पर मैंने नहीं सोचा है।"

मल्लिक चाचा बोले, "इतने दिनों तक नहीं सोचा था लेकिन अब सोचो। तुम्हारी मां क्या ज़िन्दगी भर वैड़ापोता के घर की रखवारी ही करेगी और चटर्जी बाबुओं के घर में रसोई पकाकर पेट भरती रहेगी? तुम मा के योग्य बेटे बन चुके हो। मां के प्रति भी तुम्हारा कोई कर्तव्य है। नहीं है क्या?"

संदीप ने कहा, "नौकरी मिलते ही मैंने मां को एक पत्र भेजा है। उसमें लिखा है, अगले महीने से मां को चटर्जी बाबुओं के घर में दाई का काम नहीं करना पड़ेगा। मैं हर महीने मां के नाम तीन सौ रुपये भेज दिया करूंगा।"

मल्लिक चाचा बोले, "वाह, बहुत अच्छा किया है, बहुत ही अच्छा!"

संदीप बोला, "लेकिन चाचाजी सारा कुछ आपके चलते ही हुआ। आप न रहते तो मैं कलकत्ता आ नहीं पाता, बी० ए० भी पास नहीं कर पाता और न ही यह नौकरी मुझे मिलती।"

मल्लिकजी बोले, "तमाम उल्लेखनीय सृष्टि के पीछे एक निमित्त का हाथ रहता है। तुम्हारा यह कलकत्ता आना, बी० ए० पास करना और नौकरी पाना कोई उल्लेखनीय कृतित्व नहीं है। रामचन्द्र जब सागर पार कर लंका गए और रावण का वध किया तो उस समय गिलहरी की भी एक छोटी-सी भूमिका थी। सेतुबंध के मामले में उसने भी थोड़ी-बहुत मदद की थी। उस दिन वह गिलहरी जिस प्रकार एक निमित्त मात्र थी, तुम्हारे मामले में मैं एक निमित्त के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हूं।"

इसके बाद उस दिन और कोई बातचीत नहीं हुई थी। खाना-पीना खत्म कर संदीप मौसीजी के बारे में सोचते-सोचते नींद में खो गया था।

इतिहास की गति बड़ी ही विचित्र होती है। चूंकि यह विचित्रता है इसीलिए जीवन इतने दुख-दर्द के बीच भी सुंदर है। इसीलिए जीवन में इतनी माधुरी है। नदी जब चलती है तो दोनों किनारे के बंधन के बीच बेरोक-टोक गति से आगे बढ़ती जाती है। लेकिन जब वह बहने के दौरान किसी किनारे को तोड़ती है, तो तत्क्षण दूसरे किनारे का निर्माण कर लेती है। इस टूटने और जुड़ने की विचित्र विडम्बना का नाम ही जीवन है।

संदीप ने इतिहास पढ़कर देखा है कि जीवन की तरह उसमें भी टूटने-जुड़ने की विडम्बना अव्याहत रही है। एक ही युग के दौरान अंग्रेज अमरीका से युद्ध में पराजित हुआ है और साथ ही भारत भी अंग्रेजों से पराजित हुआ है। एक दिन जेनरल वाशिंगटन से लार्ड कार्नवालिस अमरीका में हार गया था वही कार्नवालिस भारत में आकर राजाधिराज बनकर बैठ गया। यह जोर-तोड़ की

विडम्बना है तो परन्तु कितनी सुन्दर है !

जिस संदीप ने एक दिन सौम्यपद वाबू के घर में दया का पात्र बनकर कई वर्ष गुजारे थे, उसी संदीप के पास आकर एक दिन सौम्यपद वाबू को दया की भीख मांगनी पड़ी थी। इतिहास की तरह जीवन में भी एक विचित्र विडम्बना रहा करती है। विडम्बना तो है, लेकिन कितनी सुन्दर !

संदीप स्वयं भी उस दिन अवाक् हो गया था। उसी संदीप के वैंक में आकर सौम्यपद वाबू को अपने मुंह से कहना पड़ा था, "मुझे कुछ रुपयों का ऑवरड्राफ्ट दीजिएगा मिस्टर लाहिड़ी ?"

"कितने रुपये ?"

"यही लगभग सत्रह लाख।"

जीवन यद्यपि सुन्दर है परन्तु उसका यह सौन्दर्य वड़ा ही करुण और वेधक है। सौम्यपद वाबू की वात सुनकर संदीप की आंखों में आंसू आ गए थे। संदीप ने कहा था···

नहीं, यह वात अभी रहे। जव उसके जीवन के किनारे का निर्माण हो जाएगा और मुखर्जी वावुओं का किनारा टूट जाएगा, उसी समय यह सव कहना अच्छा रहेगा। आप लोग तव तक के लिए धैर्य धारण करें।

उस दिन मुक्तिपद मुखर्जी के क्लव-हॉल में एक आपातकालीन मीटिंग वुलाई गई थी। जव किसी तरफ से रफा-दफा करने की उम्मीद न रही तो आपातकालीन मीटिंग वुलाने के अलावा उपाय ही क्या था ? वहां सभी उपस्थित थे। जिन्हें छिपे तौर पर तनख्वाह मिल रही थी वे लोग ही। कम्पनी का चीफ एकाउंटेंट नागराजन था, वेलफेयर ऑफिसर जसवन्त भार्गव, वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी और डिप्टी वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार थे। और भी वहुत सारे अफसर मौजूद थे। सेल्स एंड आर्डर प्रोक्योरमेंट, परचेज ऑफिसर, प्रोडक्शन डिपार्टमेंट, लेवर, सिक्यूरिटी इंस्पेक्शन और क्वालिटी मेनटेनेंस डिपार्टमेंट के तमाम अफसर।

उनके अलावा मल्टीनेशनल कम्पनी चटर्जी इंटरनेशनल के मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर अतुल चटर्जी और उनके लड़के सुधीर चटर्जी थे। उनके मातहत दो लाख श्रमिक हैं। सभी को लंच पर वुलाया गया था। खाने के दौरान वातचीत चल रही थी।

मिस्टर मुखर्जी ने सभी को संवोधित करते हुए कहा, "आप सभी को मालूम है कि हमारी सैक्सवी मुखर्जी एंड कम्पनी किस 'क्राइसिस' के दौर से गुजर रही है। हजारों आदमी वेरोजगार वैठे हुए हैं। हमारे जो अफसर हैं उन्हें पूरी तनख्वाह नहीं मिल रही है। और लेवरों की वात तो जाने ही दें। इस 'क्राइसिस' से हमें कैसे छुटकारा मिलेगा ? आप लोग कोई रास्ता सुझाएं—"

वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी वोले, "मेरा विचार है, किसी ओर से जव कि कोई समाधान नहीं हो रहा है तो ऐसी हालत में वेस्ट वंगाल से इस फैक्टरी को कहीं वाहर हटाकर ले जाना ही अच्छा है।"

मिस्टर मुक्तिपद मुखर्जी वोले, "कहां हटाकर ले जाया जाएगा ?"

कांति चटर्जी वोले, "साउथ इंडिया में कहीं ले जाने से शायद अच्छा रहेगा। अभी वे लोग वाहर की सारी फैक्टरियों को इनवेस्ट कर रहे हैं। उनका कहना है

कि वहां जाने से हर तरह की सहूलियत दी जाएगी। टैक्स के मामले में भी वे लोग बहुत कुछ राहत देंगे।"

मुक्तिपद मुखर्जी बोले, "लेकिन वहा जाने से भी वेस्ट बेंगाल जैसी हालत नहीं होगी, इसकी कौन-सी गारंटी है? आज वे लोग हो सकता है पीछे पड़े हुए हैं, लेकिन कुछ दिनो के बाद वे असली चेहरे मे न आ जाएंगे, इसका कौन-सा 'एश्योरेंस' है? वहा की जो सरकार अभी हमे 'इनवाइट' कर रही है बाद में हो सकता है उसके हाथ मे सत्ता न रहे। वोट मे किसके हाथ में सत्ता आएगी और किसके हाथ से सत्ता छिन जाएगी, इसकी भविष्यवाणी की जा सकती है?"

कांति चटर्जी इस बात का कोई उत्तर नही दे सके।

अब मिस्टर चटर्जी ने बोलना शुरू किया, "मैं आप लोगों से कुछ कहना चाहता हूं। इंटरनेशनल इकोनॉमी के बारे में मुझे जानकारी है। मुझे इंटरनेशनल मार्केट की भी जानकारी है। मैं हर तरफ से सोच-समझकर कह रहा हूं कि आप लोग और कुछ दिनो तक इंतजार करें। मिस्टर मुखर्जी मेरे मित्र हैं। मेरा एड-वाइस आप लोग मानें तो आप लोग मुझे जरा सोचने का मौका दें। जरूरत पड़ने पर मैं इस सैक्सबी मुखर्जी के शेयर खरीदूंगा, उस समय आप लोग देखिएगा कि कम्पनी किस तरह चलती है।"

कांति चटर्जी बोले, "उस वक्त आप इसके लेबर-ट्रबल को कैसे 'टैकल' कीजिएगा?"

मिस्टर चटर्जी बोले, "कैसे टैकल करूंगा, इस पर मेरा लड़का सुधीर चटर्जी प्रकाश डालेगा। आप लोग इसे अवश्य ही पहचानते होंगे।"

अब सुधीर चटर्जी की बारी है।

वह उठकर खड़ा हो गया और कहने लगा, "इतिहास का टूटना-जुड़ना एक विचित्र चमत्कार है। जो एक तरफ टूटता है तो दूसरे तरफ जुड़ता भी है। इस टूटने-जुड़ने का एक 'रिदम' है। उसे पहचानना पड़ता है, जानना पड़ता है, 'फील' करना पड़ता है। मैंने उस 'रिदम' को पहचान लिया है, 'फील' कर चुका हूं, इसका मुझे गर्व नहीं है। लेकिन आपको देखने को मिलेगा कि किसी एक फैक्टरी में लेबर-ट्रबल नहीं है और वहीं उस देश में दूसरी ओर लेबर-ट्रबल का सिलसिला लगा ही रहता है। ऐसा क्यों होता है? क्यों होता है, इसे मैं आप लोगों के सामने स्पष्ट करता हूं···"

यह कहकर सुधीर चटर्जी लंबा भाषण देने लगा। सभी लोग मंत्र-मुग्ध की नाईं उसकी बात सुनने लगे।

बहुत वक्त गुजर जाने के बाद भी जब मुक्तिपद का टेलीफोन नही आया तो दादी मां ने लड़के से टेलीफोन पर संपर्क स्थापित करने को कहा। लेकिन मुक्तिपद उस समय भी घर लौटकर नही आए थे। बिन्दु से कहा कि मुक्तिपद के ऑफिस में फोन करे।

आखिर मे पूजा घर में सिंहवाहिनी की आरती समाप्त होने के बाद दादी मा जब अपने कमरे में आईं उस समय मुक्तिपद ने टेलीफोन किया।

दादी मां गुस्सा गई थीं। वोलीं, "टेलीफोन करने में इतनी देर क्यों कर दी?"

मुक्तिपद वोले, "अभी-अभी काम खत्म करने के वाद लौटा हूं। इसी वजह से तुम्हें अभी फोन कर रहा हूं। अभी तक हाथ-मुंह भी 'वाश' नहीं किया है।"

दादी मां ने पूछा, "मीटिंग में क्या तय हुआ?"

मुक्तिपद वोले, "मिस्टर चटर्जी की वात पर ही काम हुआ।"

"कैसे?"

"उन्होंने कहा ज़रूरत पड़ेगी तो वे हम लोगों की सैक्सवी मुखर्जी कम्पनी के शेयर खरीदकर इसके एडमिनिस्ट्रेशन की देखरेख करेंगे। और असली काम हुआ उनके लड़के के लेक्चर से। उसके मातहत छह लाख लेवर है। उसने सारी वातों पर प्रकाश डाला तो वात लोगों की समझ में आ गई। इसके अलावा उन लोगों का भी स्वार्थ हम लोगों की कम्पनी से जुड़ा हुआ है। सौम्य से उनकी लड़की की शादी करने से वह लड़की भी तो एक दिन कम्पनी की डाइरेक्टर वन जाएगी।"

दादी मां ने सारी वातें सुनीं।

वोलीं, "सभी लोगों की समझ में वात आ गई?"

मुक्तिपद वोले, "आएगी क्यों नहीं? सैक्सवी के साथ उन लोगों का भी तो भला-वुरा जुड़ा हुआ है। मुझसे कह रहे थे, फैक्टरी को साउथ इंडिया हटाकर ले जाने की वात। मिस्टर चटर्जी की वात पर वे शांत हो गए। हां, एक खुश ख्वरी···"

यह कहकर मुक्तिपद एक क्षण चुप रहे, उसके वाद वोले, "एक वात तुमसे कहना भूल गया था। तुम्हारा सौम्य आ रहा है···"

"सौम्य? सौम्य आ रहा है? कव?"

मुक्तिपद वोले, "लंदन से अयंगर ने आज टेलेक्स किया था। उसने वताया, सौम्य इसी महीने में आ रहा है··"

"इसी महीने में? कव? किस तारीख में?"

मुक्तिपद ने कहा, "यह नहीं वताया। अव भी फ्लाइट वुक नहीं किया है। वुक करते ही सूचित करेगा।"

"ठीक है, रख रही हूं।"

उस समय दादी मां की वगल में मल्लिक चाचा खड़े थे। उन्होंने भी यह सव सुना।

दादी मां टेलीफोन का रिसीवर रखकर वोलीं, "सुना न? लंदन ऑफिस के अयंगर ने मुक्ति को फोन किया था। सौम्य इसी महीने में आ रहा है—"

मल्लिक चाचा यह सुनने के वाद वहां खड़े नहीं रहे। पीछे से दादी मां ने पूछा, "राजमिस्त्रियों का सारा काम खत्म हो चुका है?"

मल्लिक चाचा वोले, "और एक-दो दिन का काम वाकी है। उसके वाद सारा काम खत्म हो जाएगा।"

यह कहकर वे नीचे चले आए।

योगमाया देवी रसेल स्ट्रीट के मकान में तैयार होकर वैठी थी। संदीप ने आते ही कहा, "चलिए मौसीजी, मैं टैक्सी लेकर आया हूं। चलिए—"

अब देर नही करनी चाहिए। टैक्सी के पीछे की जगह मे एक किनारे संदीप और दूसरे किनारे मौसीजी बैठ गए। मौसीजी बिलकुल गुमसुम हैं। उन्होंने विशाखा की जन्मपत्री को जतन के साथ कागज मे मोड़कर अपने साथ रख लिया है। पता नही ज्योतिषी क्या कहेगा! अब और कितने दिनों तक उन्हें इस तरह की बेचैनी के साथ वक्त गुजारना होगा? अगर लड़की की यही शादी नही होती है तो फिर क्या होगा? उस समय वह कहां रहेगी? कहां जाएगी? उस समय उसे कौन पनाह देगा?

दुनिया के भूत-वर्त्तमान और भविष्य के तमाम लोगों का आग्रह आनेवाले दिनो के सुख-दुख, शांति-अशांति पर केंद्रित रहता है। वे जानना चाहते हैं कि वे जाकर कहां पहुंचेंगे, किस बिन्दु पर पहुंचने पर उन्हें परित्राण मिलेगा। अभी से जिस सुदूर और दुर्गम यात्रा की शुरुआत हुई है उसका सफलता की मंजिल पर पहुंचने पर अंत होगा या वह विफलता के गहरे खाई-खंदक मे गिरकर व्यर्थ साबित हो जाएगी।

यह संदेह, यह कुतूहल अतीत में भी था, वर्त्तमान मे भी है और भविष्य में भी रहेगा। मैं जानता हूं कि कहा मेरा अंत है, कौन-सा मेरा गंतव्यस्थल है और कहां मेरी परिणति है। तुम मुझे सिर्फ यह बता दो कि मेरे सफर की मुहिम शुभ होगी या अशुभ। वह जिज्ञासा अनंत काल से जिज्ञासा ही बनी हुई है, इसका उत्तर आज तक न तो मिला है और न ही मिलेगा।

बेलेघाटा से वापस आने के दौरान मौसीजी बोलीं, "तीस रुपया तो दिया, मगर तुम्हारा क्या अनुमान है संदीप? यह सब क्या सच है?"

संदीप क्या उत्तर दे?

याद है, बेलेघाटा के उस जटाजूटधारी ज्योतिषी के मकान के सामने बहुत सारे लोगो की भीड़ थी। सभी की शायद एक ही समस्या थी। मुझे रुपया मिलेगा तो? मुझे नौकरी मिलेगी तो? मेरी लड़की की शादी होगी तो? मेरी बीमारी दूर हो जाएगी तो?

कितने ही आदमी, कितनी ही आकुल जिज्ञासाएं!

सबकुछ जानने के बावजूद संदीप मौसीजी के प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नही दे सका था।

सिर्फ मौसीजी को तुष्ट करने के खयाल से कहा था, "जरूर ही सच साबित होगा। वरना इतने सारे लोग इतनी तकलीफ उठाकर आते ही क्यों और इतने रुपये खर्च क्यों कर जाते?"

अलौकिक शक्ति से संपन्न हैं ज्योतिषी महाराज। बहुत देर तक विशाखा की जन्मपत्री ध्यान से देखते रहे। उसके बाद कहा था, "जातिका बहुत ही भाग्यशालिनी है। सप्तम पति लग्न में बैठकर न केवल सप्तम स्थान को ही देख रहा है, साथ ही नवम स्थान यानी भाग्य स्थान पर भी दृष्टिपात कर रहा है—इसके भाग्य में बहुत सुख है—"

उसके बाद मौसीजी की ओर देखकर ज्योतिषीजी ने पूछा, "इसकी क्या शादी की बातचीत चल रही है?"

मौसीजी ने कहा, "हां।"

"एक साल पहले से ही उसका रिश्ता तय हो चुका है ?"
मौसीजी ने कहा, "हां।"
"इसी पात्र से आपकी लड़की की शादी होगी।"
"सचमुच ही होगी ?"
ज्योतिषी महाराज बोले, "मेरा विचार कभी असत्य नहीं हुआ है और न होगा ही—"
"आप सच कह रहे हैं ?"
ज्योतिषी महाराज बोले, "मैंने तो बता ही दिया कि मेरी भविष्यवाणी कभी असत्य नहीं हुई है। सप्तम पति लग्न के ऊपर है। वह एक ही साथ लग्न को देख रहा है, पंचमस्थान को देख रहा है और साथ ही भाग्यस्थान को भी देख रहा है। इस जातिका का कभी अमंगल नहीं हो सकता। उसके बाद सप्तमपति की दशा। शास्त्र में है—कि कुवंती ग्रहे सर्वा यस्य केन्द्रे बृहस्पति—आप निश्चित होकर घर चले जाइए—"
ज्योतिषी महाराज की बातें अब भी संदीप के कानों में जैसे गूंज रही हैं।
"यह लड़की आपकी गृहलक्ष्मी है।"
मौसीजी ने कहा, "तो फिर इसके पैदा होते ही इसके पिता क्यों चल बसे ?"
ज्योतिषी बोले, "यह जातिका के दुर्भाग्य के कारण नहीं हुआ था। यह बात जातिका के पिता की जन्मपत्री दिखातीं तो मैं बता सकता था और अभी यह बात जानकर फायदा ही क्या है ? आपकी कन्या का भाग्य बहुत ही अच्छा है—"
संदीप यही सब बात अपने मन में सोच रहा था।
मौसीजी ने दुबारा पूछा, "तुम बेटा, कुछ बोल क्यों नहीं रहे ? ज्योतिषीजी ने कहा है तो फिर अच्छा ही होगा। तुम्हारा क्या विचार है ?"
संदीप तब भी मन ही मन मिस्टर चटर्जी की लड़की के बारे में ही सोच रहा था। वह एम० ए० पास है, देखने में भी खूबसूरत है। उस पर उसके पिता के पास बेशुमार पैसा है। यही नहीं, उसका भाई लेबर-यूनियन का लीडर है। सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की फैक्टरी के स्वार्थ के लिए उसकी बहन से सौम्य की शादी कराने से मुक्तिपद और दादी मां दोनों को फायदा होगा। उस पात्री को छोड़ इस बाप-मरे गरीब पात्री से शादी क्यों कराएंगे ?
लेकिन संदीप स्पष्ट तौर पर यह बात मौसीजी से कैसे कहे ?
मौसीजी फिर बोलीं, "तुम कुछ भी क्यों नहीं बोल रहे ? यहीं विशाखा की शादी होगी न ?"
संदीप ने गोल-मटोल-सा उत्तर दिया, "मुझे तो लगता है होगी ही।"
मौसीजी बोलीं, "मेरा देवर बता गया कि तुम लोगों के घर में राजमिस्त्री काम कर रहे हैं। वह खुद देख आया है। तुम लोगों के दरबान से उसने सुना है। इसके बाद भी क्या शादी रुक सकती है ?"
संदीप बोला, "सबकुछ तो ईश्वर का विधान है। इसके चलते आप इतनी चिंता क्यों करती हैं ? और अगर यह शादी नहीं होगी तो दादी मां ने आप लोगों को रसेल स्ट्रीट के मकान में रखा ही क्यों है ? सिर्फ रखने की बात ही नहीं है, खर्च भी कोई कम नहीं हो रहा है। हर महीने आप लोगों के लिए हज़ारों रुपये

गर्व कर चुकी हैं—"

मौसीजी और और दिनों के बनिस्बत जरा शांत मालूम हुई। शुरू में ज्योतिषी की भविष्यवाणी, उस पर संदीप की युक्ति—दोनों में से कोई अस्वीकार करने योग्य नहीं है। उसके बाद है भवितव्य! सचमुच भवितव्य को कौन लांघ सकता है?

टैक्सी रसेल स्ट्रीट के सामने आकर रुकी। संदीप टैक्सी का किराया चुकाकर बोला, "अच्छा, अब मैं चलता हूं मौसीजी, कल फिर आऊंगा।"

मौसीजी बोली, "तुम्हें अब रुकने के लिए कैसे कह सकती हूं? बहुत देर हो चुकी है। कल शाम को फिर आना।"

मौसीजी घर के अंदर चली गईं।

संदीप सड़क पर पैदल चलता हुआ ज्योतिषी के बारे में ही सोचता रहा। ज्योतिषी की भविष्यवाणी शुरू से अंत तक झूठी है, यह बात मौसीजी को संदीप कैसे समझाएगा? वे लोग भी तो ग्राहक का मन रखने के लिए बातें करते हैं, इसका प्रमाण आज मिल गया। किसे लग्न कहा जाता है, किसे सप्तम पति, किसे पंचम पति और किसे नवम पति—इन सारी बातों का एक भी शब्द संदीप की समझ में नहीं आया। मौसीजी तो और भी नहीं समझी होगी। और सिर्फ वे ही *क्यों, दुनिया के तमाम भद्र पुरुष और भद्र महिलाएं उन सब कठिन विषय-वस्तु* का अर्थ नहीं समझ सकेंगे।

सहसा पीछे से किसी ने उसे पुकारा, "सदीप—"

गोपाल हाजरा के गले की आवाज है। पीछे से गाड़ी आकर उसके पास खड़ी हो गई। गाड़ी से सिर निकालकर गोपाल ने पूछा, "इतनी रात में कहां जा रहा है?"

सदीप ने कहा, "अरे, तू है!"

गोपाल बोला, "कहां जा रहा है तू—घर? तो आकर पीछे बैठ जा।"

सदीप जैसे ही जीप के अंदर बैठा, जीप चलने लगी। संदीप गोपाल की ओर देखकर अवाक् होकर सोचने लगा, गोपाल पहले की तरह ही है। पहले दिन जैसा देखा था, ठीक वैसा ही। जरा भी बदलाव नहीं आया है।

गोपाल ने ही पहले पूछा, "कहां से आ रहा है?"

सदीप बोला, "रसेल स्ट्रीट से।"

गोपाल बोला, "अब भी तू वहां जाता है?"

सदीप ने कहा, "मेरी ड्यूटी तो वहीं जाने की है। चूंकि यह ड्यूटी है इसीलिए विडन स्ट्रीट में रहने की जगह और खाना-पीना रहा है। अगर ड्यूटी नहीं दी जाती तो मुझे रहने के लिए किराए पर मकान लेना पड़ता, अपने हाथ से रसोई पकानी पड़ती—।"

उसके बाद जरा चुप रहकर फिर बोला, "अब मुझे एक नौकरी मिल गई है—"

"तुझे नौकरी मिल गई है? कहां मिली?"

संदीप ने कहा, "बैंक में।"

"बैंक में? किसने नौकरी दिला दी?"

संदीप बोला, "कौन दिला देगा ? मेरा कोई ऐसा आदमी नहीं है जो नौकरी दिला दे।"

"तूने तो कहा था कि नौकरी करने के बदले तू वकालत करेगा ?"

संदीप ने कहा, "हां, मेरी मंशा यही थी, मगर काशी बाबू ने ही मना कर दिया। बेड़ापोता के काशी बाबू को तू पहचानता है न ?"

गोपाल ने अचानक फस्स से एक सिगरेट सुलगाकर, नाक से लंबे धुएं का गुबारा निकालकर कहा, "काशी बाबू को क्यों नहीं पहचानूंगा ? वही काशी बाबू तो तीन साल तक मुकदमा लड़कर मुझे फंसाना चाहता था।"

संदीप ने कहा, "किस चीज का मुकदमा दायर किया था ?"

गोपाल बोला, "अरे, मुझे एक झूठे मामले में फंसा दिया था। बिलकुल झूठा मुकदमा था। तारक घोष की तुझे याद है ? वही जो हम लोगों के साथ एक ही क्लास में पढ़ता था ?"

"हां, अच्छी तरह याद है।"

गोपाल ने कहा, "तारक घोष का फूस का मकान एक दिन आग से जल गया, साथ ही उसके मां-बाप-भाई-बहन सभी जलकर मर गए। एकमात्र तारक ही बच गया। मैं भलमनसाहत के नाते तारक को कुछ-कुछ रुपये दिया करता था। चाहे जो हो, है तो गांव का ही लड़का न ! एक साथ एक ही क्लास में पढ़ा है। वह तकलीफ में हो तो मैं क्या उसकी यथाशक्ति सहायता न करूं ? तेरा कहना क्या है ?"

संदीप ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। बस इतना ही कहा, "उसके बाद ?"

गोपाल बोला, "उसके बाद क्या हुआ, सुन ले। देख, इस जमाने में अच्छे आदमी के भाग्य में ही सारा दुख रहता है। मैं इसलिए बीच-बीच में तारक घोष को रुपये देकर मदद कर रहा था कि कहीं वह भूखों न मर जाए और उस काशी बाबू ने तारक को फरियादी बनाकर मुझ पर मामला ठोंक दिया।"

संदीप अबकी भी कुछ नहीं बोला। इतना ही कहा, "किसलिए मुकदमा दायर कर दिया ?"

"और किसलिए ? मुझे फंसाने के लिए। काशी बाबू की शिकायत थी कि तारक के घर पर अपना दखल जमाने के लिए मैंने उसके मां-बाप-भाई-बहन को जलाकर मार डाला है। एकदम से पेनल कोड की 302 धारा के अन्तर्गत। अरे, अगर यह बात सही होती तो मैं हर महीने तारक को उतना रुपया देता ही क्यों ? उसके प्रति मुझमें दया-ममता क्यों होती ? वह मेरा कौन है ? तू ही बता ?"

अबकी भी संदीप ने कुछ जवाब नहीं दिया। सिर्फ इतना ही कहा, "उसके बाद ?"

गोपाल बोला, "अरे, आज के युग में शरीफ आदमी को बहुत तकलीफ उठानी पड़ती है। शरीफ आदमी होना ही पाप है। काशी बाबू ने मुझे तरह-तरह के सेक्शन के तहत फंसा दिया। लेकिन जानते हो, हाई कोर्ट के ऊपर भी एक हाई कोर्ट है। भले आदमी को लोग चाहे जितना ही बेवकूफ क्यों न समझें लेकिन उनके ऊपर एक भगवान है।"

"उसके बाद क्या हुआ ?"

"उसके बाद क्या होगा, मैं सारे दोषारोपण से बरी हो गया। उसके बाद मुवक्किल को सौ रुपये बतौर हर्जाना मिल गया। इसके चलते तारक मुसीबत में फंस गया। वह रुपया कहां से देगा ? आखिर में बेहालपोता की हाटतल्ली के बाजार में अकेले पड़ा रहता था। काशी बाबू उसे हाथ-खर्च के लिए कुछ पैसा देता था। लेकिन उससे काम कैसे चल सकता था ? वह अस्पताल जाकर अपना खून बेचता था और पेट का खर्च चलता था। आखिर में एक दिन दिल का दौरा पड़ने से मर गया। तू यदि किसी दिन बेडापोता जाएगा तो देखने को मिलेगा कि अपनी पार्टी के नाम से मैंने वहां एक विशाल तीन-मंजिला मकान खड़ा किया है—"

गोपाल हाजरा की बात सुनने के दौरान सदीप की आंखों के सामने तारक के आखिरी दिन की तस्वीर स्पष्ट हो गई थी। यह है गोपाल हाजरा ! इसी गोपाल हाजरा ने ही अन्ततः तारक और उसके परिवार के तमाम लोगों की हत्या की थी, यह बात क्या किसी दिन किसी पार्टी के इतिहास में लिखी हुई रहेगी ? यह गोपाल हाजरा ही हो सकता है, किसी दिन इस देश का मिनिस्टर बन जाए। उस समय क्या किसी को उसके मिनिस्टर बन जाने की कहानी का पता चल सकेगा ?

"बैंक में नौकरी करने के बजाय तूने वकालत के पेशे को क्यों नहीं अपनाया ?"

सदीप ने कहा, "काशी बाबू ने मुझे मना किया।"

"क्यों, मना क्यों किया ?"

सदीप बोला, "उनका कहना था कि हाईकोर्ट ने अपना 'चरित्र' खो दिया है।"

"चरित्र ? चरित्र का मायने ?"

संदीप ने कहा, "आदमी का कोई न कोई चरित्र हुआ करता है, देश के साथ भी यही बात है। वह चरित्र एक बार यदि नष्ट हो जाता है तो सबकुछ खो जाता है, बर्बाद हो जाता है। इसी वजह से काशी बाबू ने मुझे कोर्ट में प्रैक्टिस करने में मना किया था।"

गोपाल बोला, "लगता है, काशी बाबू का दिमाग गड़बड़ा गया है। बुढ़ापे में सबके साथ यही वाकया होता है। मुझसे बहुत दिनों तक मुकदमा लड़ते-लड़ते अब वैसा हो गया है।"

एक चलती हुई गाड़ी एकाएक रुककर खड़ी हो गई। संदीप ने पहचाना, वरदा घोपाल है। उस लेबर-लीडर ने गाड़ी पर बैठे-बैठे पूछा, "क्यों जी, किधर जा रहा है ?"

गोपाल बोला, "आज हम लोगों की मीटिंग है।"

वरदा घोषाल बोला, "मैं भी वहीं चल रहा हूं। आज श्रीपति दा आ रहे हैं। सैंक्सबी मुखर्जी कम्पनी की हड़ताल के सम्बन्ध में आज श्रीपति दा प्रस्ताव रखने जा रहे हैं—"

"ऐसी बात है ? उन पट्ठों का दिमाग आसमान पर चढ़ गया है—"

वरदा घोषाल बोला, "सुनने में आया है, चटर्जी एण्ड संस का सुधीर चटर्जी मुक्तिपद को मदद देने जा रहा है। वहां की लेबर-स्ट्राइक को नाकाम बनाने को

योजना बना रहा है—"

"सच ?"

"यही तो सुनने को मिला। अगर ऐसा होगा तो हम लोग उन लोगों के यहां भी धावा बोल देंगे। श्रीपति दा बोले हैं, ऐसी हालत में किसी को भी नहीं बख्शा जाएगा।"

संदीप बोला, "मुखर्जियों की हानि कर तुम लोगों को क्या फायदा होगा? उन लोगों ने तुम लोगों का क्या बिगाड़ा है? इतने बड़े फर्म के उठ जाने से कितने आदमियों की नौकरी चली जाएगी, इसका पता नहीं है?"

गोपाल बोला, "तू चुप रह। तू पॉलिटिक्स समझता ही कितना है! बुर्जुआ लोगों का जितनी जल्द पतन हो जाए देश के लिए उतना ही हितकारी है। हम लोगों की पार्टी को भी उतनी ही सुविधा हासिल होगी। बुर्जुआ वर्ग जीवित रहेगा तो आम लोगों को किसी भी हालत में आज़ादी नहीं मिलेगी—"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोला, "इसके अलावा तेरे लिए डर की कौन-सी बात है? तुझे तो बैंक में नौकरी मिल चुकी है।"

संदीप ने कहा, "लेकिन कल-कारखाने बंद हो जाएंगे तो बैंक भी अचल हो जाएगा। बैंक में कौन रुपया रखेगा? ऐसी हालत में हमारी नौकरी रहेगी?"

गोपाल बोला, "लिख-पढ़कर भी आदमी निरा बेवकूफ हो सकता है, इसका तू जीता-जागता सबूत है। समाज के सीने में जब बीमारी होती है तो उस वक्त ड्रासटिक ट्रिटमेंट की ज़रूरत पड़ती है। श्रीपति दा ने यही कहा है। देश को नए सिरे से गढ़ने के लिए शुरू में आदमी को कष्ट उठाना पड़ता है। कुछ लोगों को जान भी निछावर करनी होगी। तू हिस्ट्री पढ़कर देख। रूस में जब क्रांति हुई तो लाखों लोगों को बलिदान होना पड़ा था। चीन में भी माओत्सेतुंग को भी यही करना पड़ा था। इसका नतीजा क्या बुरा हुआ था? अब वे कितने शक्तिशाली देश हैं!"

संदीप ने कहा, "लेकिन देश में आग लगेगी तो उसकी लपट में तुम्हारी पार्टी के लोग भी तो आ जाएंगे।"

गोपाल ने कहा, "श्रीपति दा का कहना है, हम मर जाएं तो कोई हानि नहीं, लेकिन पार्टी को ज़िन्दा रखना है।"

संदीप बोला, "यह जो हिन्दुस्तान का बंटवारा हुआ, पाकिस्तान से लाखों लोग यहां आए, इस सम्बन्ध में तुम्हारे श्रीपति दा वगैरह का क्या कहना है?"

गोपाल बोला, "श्रीपति दा का कहना है, इससे पार्टी और भी मजबूत हुई है। इसकी वजह से हम लोगों की पार्टी की संख्या में लाखों की वृद्धि हुई है। तूने हम लोगों की पार्टी की ऑफिस-बिल्डिंग देखी है? उतनी बड़ी बिल्डिंग उन लोगों के पास है? किसी ज़माने में तमाम उपभोगों पर उनका एकाधिकार था। देश के तमाम लोगों की दौलत उनके पेटों में समा गई थी। और अब? देश का बंटवारा न हुआ होता तो उनका और भी बोलबाला रहता। वे लोग और भी बड़े-बड़े दफ्तर खड़े करते। और बड़ी-बड़ी गाड़ी पर चढ़ते। अभी उस मुल्क से जो लोग घर-द्वार छोड़कर यहां आए हैं वे हमारी पार्टी में भर्ती क्यों हो गए? वे लोग बखूबी समझ गए हैं कि किनके चलते देश का बंटवारा हुआ है, किनके कारण उन्हें

अपनी बपौती जमीन-जायदाद छोड़कर फुटपाथ पर झुग्गी-झोपड़ी बनाकर रहना पड़ रहा है। उन्हें मालूम हो गया है कि हमी उनके असली लीडर हैं।"

थोड़ी देर बाद गोपाल बोला, "अब तू यहा-उतर जा। मैं यहा से दूसरी तरफ जाऊंगा।"

सदीप को सचमुच ही अब गोपाल की बातें सुनने मे अच्छी नही लग रही थी। वह सडक पर उतर गया। गोपाल गाडी चलाता हुआ विपरीत दिशा की ओर चला गया। सडक पर चलने के दौरान भी गोपाल की बातें उसके कानों में गूंज रही थी।

वास्तव मे अकेले गोपाल के मत्थे ही दोष क्यों मढा जाए? क्षमता है तो तुम दुनिया की जिस-जिस चीज की चाह करोगे, मिल जाएगी। जब तक कांग्रेस के हाथ में सत्ता थी, तब तक उसने तमाम चीजों का उपभोग किया। अब गोपाल जैसे लोगो ने सत्ता छीन ली है। अब गोपाल जैसे लोग पहले के लीडरों की तरह ही सब कुछ का उपभोग करेंगे। वे लोग न केवल पहले के लीडरों की कुर्सी पर आसीन होंगे बल्कि उन लोगो की तरह ही गाडी पर चढेंगे, उन लोगो की तरह ही गले मे फूलो की माला डालकर मैदान में लेक्चर देंगे। उन लोगों की तरह ही बात-बात में डाक्टरों से जाच कराने के लिए रूस या अमरीका जाएगे। उन लोगों ने जो-जो किया है, गोपाल वगैरह भी वही करेंगे। सहसा कांग्रेसी लीडरों की तरह हड़ताल का आह्वान करेंगे और अखबारो के पन्नो में अपनी तस्वीरें छपवाएंगे।

सदीप जब घर पहुचा तो गिरिधारी ने नियमानुसार सलाम किया।

मल्लिक चाचा शायद उसके लिए चिंतित थे। बोले, "क्या बात है, इतनी देर क्यों हुई?"

संदीप बोला, "मौसीजी को लेकर मैं उस ज्योतिषी के पास गया था—"

"ज्योतिषी ने क्या बताया?"

सदीप बोला, "और क्या बताएगा! मौसीजी की आख मे धूल झोककर तीस रुपया ठग लिया। उसके बाद कहा - लडकी की शादी सौम्य बाबू से ही होगी। लेकिन हा, बहुत बाधा-विघ्न के बाद।"

"किस चीज का बाधा-विघ्न?"

सदीप ने कहा, "इतना कुछ कहने की फुर्सत ज्योतिषी को कहा थी? हजारो आदमी तब टिकट लेकर लाइन मे खडे थे—"

मल्लिकजी ने कहा, "ज्योतिषी ने व्यर्थ ही तीस रुपया मार लिया। आजकल सभी धोखेबाज हो गए हैं।"

संदीप ने कहा, "मौसीजी की मशा ज्योतिषी के घर जाने की थी, मैं करता ही क्या! मेरा टैक्सी के किराए का रुपया पानी मे बह गया।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "बहरहाल, ।। होने को है वही होगा, हम कर ही क्या सकते है!"

आदमी के मन मे यथार्थ की दुनिया के साथ ही इच्छा की भी एक दुनिया रहा

करती है। यथार्थ की दुनिया में उसकी इच्छा की दुनिया का अधिकांश क्षेत्रों में कोई ताल-मेल नहीं रहता। जो आदमी कवि होना चाहता है उसे वाध्य होकर कभी-कभी किरानी भी वनना पड़ता है। जो आदमी स्वतंत्र रूप से व्यापार करना चाहता है उसे भाग्यचक्र के कारण कभी-कभी दूसरे के अधीन नौकरी करने का दुर्भाग्य भी वरदाश्त करना पड़ता है।

लेकिन मुखर्जी-भवन की दादी मां को यह दुर्भाग्य नहीं सहना पड़ा था। जीवन में उन्होंने जिन-जिन वस्तुओं की चाह की थी मोटे तौर पर उन्हें प्राप्त हो गई थीं। अगाध ऐश्वर्य, देवतुल्य पति, राजमहल जैसा मकान, नौकर-चाकर, दाई-महरी। उनके पास क्या नहीं था? वे जव जिस चीज़ का हुक्म देतीं, उन्हें तुरन्त मिल जाता। सिर्फ हुक्म करने की देर थी।

लेकिन किसी भी आदमी का जीवन फूलों की सेज नहीं होता। दिल्लीश्वर जगदीश्वर के जीवन में भी फूलों की सेज वहुत वार कांटों की सेज में वदल गई थी। इतिहास के पृष्ठों का जिनका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ है उन लोगों के जीवन का इतिहास भी यही रहा है।

तो भी आदमी दुख से वचना चाहता है। अशांति से कम से कम कुछ क्षणों के लिए छुटकारा पाना चाहता है। उसी अशांति से बचने के लिए उन्होंने घर में गृह-देवी सिंहवाहिनी की पूजा-आराधना करनी चाही थी। प्रत्येक दिन तड़के गंगा-स्नान के फल का पुण्य अर्जित करना चाहा था।

लेकिन दादी मां ने एक गलती की थी।

हम लोगों के देश के ऋषियों का एक कथन है—'पंचाशोर्ध्वं वनं व्रजेत'।

यानी पचास साल की उम्र में संसार छोड़कर वन चले जाओ। लेकिन वह वन वन नहीं, तपोवन है। सारी ज़िन्दगी में आदमी जो कुछ अर्जित करे, पचास साल की उम्र पार करने के वाद उस अर्जन के दान के द्वारा सार्थक वनाना चाहिए, यानी पचास साल की उम्र तक आदमी जो उपार्जित करने की चेष्टा करता है, पचास के वाद उसे त्याग के द्वारा पवित्र और परिशुद्ध करना होगा। तभी वह भय की यातना से मुक्ति पा सकता है।

लेकिन इस सारवस्तु का जवकि दुनिया में कोई पालन नहीं करता तो दादी मां ही क्यों उसका पालन करेंगी? दुनिया का कोई आदमी यह जानता है कि जीवन की भी एक पूर्णता है? कोई जानता है कि जीवन को एक स्तर पर आकर रुक जाना पड़ता है? उस रुकने का अर्थ मृत्यु नहीं है। उस रुकने का अर्थ है संपूर्णता। नदी हिमालय से उतरकर जव समुद्र से मिलती है तो नदी का अंत नहीं हो जाता। समुद्र से मिलकर नदी सम्पूर्ण हो जाती है, इसी कारण उसका प्रवाहित होना सार्थक होता है। मनुष्य के जीवन को भी उसी तरह त्याग के द्वारा सार्थक वनना पड़ता है।

परन्तु यह सव वात कौन किससे कहे और कौन समझेगा ही?

मुखर्जी-भवन के तमाम लोग तव सौम्यपद के विलायत से लौटकर अतुल चटर्जी की लड़की से शादी करने की अधीरता से प्रतीक्षा कर रहे थे और सोच रहे थे कि इस गृहस्थी की गति में दुवारा तीव्रता आ जाएगी। इस गृहस्थी का भंडार पुनः लक्ष्मी से परिपूर्ण होकर अनादि-अनंतकाल तक स्थायी रहेगा। मुक्तिपद फिर

से विस्तारहित हो जाएंगे, सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी के अनुगत कर्मचारी फिर से चैन की सांस लेंगे, दादी मां को पुनः अपना खोया हुआ गौरव प्राप्त हो जाएगा।

और वरदा घोषाल, गोपाल हाजरा और श्रीपति मिश्र? वे हार स्वीकार कर लें ऐसे धातु के बने हुए नहीं हैं वे लोग। देश में जब अशांति बढ़ेगी, अराजकता फैलेगी, बेरोजगारी की संख्या में वृद्धि होगी तो उस समय उनके पराक्रम में और अधिक तीव्रता आएगी।

उस दिन मंत्री श्रीपति मिश्र के निवास स्थान पर उसी के सम्बन्ध में छिपे तौर पर योजना बन रही थी।

वहां सभी मौजूद थे। वरदा घोषाल, गोपाल हाजरा के अलावा वेणु गोपाल भी था। सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का शिफ्ट-इन-चार्ज इंजीनियर। उसे विशेष अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की स्ट्राइक के पीछे उसी का सबसे बड़ा हाथ था।

चटर्जी एण्ड संस से मुखर्जी-भवन की घनिष्ठता हो जाने से सभी उद्विग्न थे। उसी समस्या के समाधान के लिए इस मकान में यह आपातकालीन बैठक चल रही है।

वेणु गोपाल को शुरू में अपना वक्तव्य कहने को कहा गया।

वेणु गोपाल बोला, "आप लोग सभी जानते हैं कि कंपनी ने मेरा घोर अपमान किया है, मेरे घर की तलाशी कराकर। हालांकि आपत्तिजनक कोई सामान नहीं मिला। उसका बदला लेने के लिए ही हम लोगों की यह हड़ताल चल रही है। और इसके प्रतिवाद स्वरूप कंपनी ने लॉक-आउट का एलान कर दिया है। मेरा कहना है, यह लॉक-आउट गैर कानूनी है। आप लोग ही इसका प्रतिकार करें। मैं आप लोगों से इसका इंसाफ मांगने आया हूं।"

इसके जवाब में वरदा घोषाल ने कहा, "आप लोग कुर्बानी करने को तैयार हैं? आप लोग अगर कुर्बानी करने को तैयार हों तो हम पूरी शक्ति लगाकर आप लोगों की रक्षा करेंगे। बोलिए, आप लोग कुर्बानी करने को तैयार हैं या नहीं—"

वेणु गोपाल बोला, "हम तो कुर्बानी कर ही रहे हैं, जरूरत पड़ने पर और भी करेंगे।"

"तो फिर अपनी पार्टी की ओर से वादा करता हूं कि आपको इंसाफ मिल सके, उसकी हम गारंटी देंगे।"

उसके बाद एक लमहे तक चुप रहने के बाद वरदा घोषाल फिर बोला, "मैं खुद एक सर्वहारा हूं। मैं देश के लिए दस वर्ष की जेल की सजा काट चुका हूं। जरूरत पड़ने पर और कुछ साल तक जेल में बिताने को तैयार हूं। लेकिन आप लोग वचन दें कि मेरा साथ देंगे। आप लोगों में से जो लोग मेहनतकश हैं, वे मेरी मदद करेंगे, इसका आप लोग वचन दें—"

वेणु गोपाल बोला, "कुर्बानी अब भी कर रहे हैं, जरूरत पड़ने पर उस समय भी करेंगे—"

वरदा गोपाल बोला, "बहुत ही अच्छी बात है। तो फिर मैं भी पार्टी की तरफ से कह रहा हूं कि सिर्फ कुर्बानी ही नहीं करेंगे, बल्कि जीवन की निछावर कर

देंगे। जो पार्टी पूंजीपति का दलाल है उसका खात्मा कर देंगे। यह मैं सिर्फ योंही नहीं कह रहा हूं, इसे कार्य-रूप देकर भी दिखा दूंगा। पुलिस हमारे हाथ में है। हम जो कहेंगे, पुलिस वही करेगी। अभी सिर्फ एक प्रतिवद्ध लोगों के दल की जरूरत है। इसके वाद वाली मीटिंग हम शहीद मैदान में करेंगे। वहां जाहिराना तौर पर हम अपनी योजना का ऐलान करेंगे। उसके वाद बंगाल-बंद का आयोजन करेंगे। उस दिन हम सब कुछ ठप कर देंगे। दूध, अखबार और अस्पताल को छोड़कर बाकी सारा कुछ बंद रहेगा। आप लोग आपस में मिले-जुले रहेंगे तो कोई हमारा विरोध नहीं कर सकेगा—"

सबके अन्त में श्रीपति वावू ने वोलना शुरू किया, "देखिए, विदेशी हमारे देश को छोड़कर चले गए हैं। वे लोग तमाम लोगों के दुश्मन थे। लेकिन विदेशियों के चले जाने से ही हम क्या सचमुच ही आज़ाद हो गए हैं।"

गोपाल हाजरा बोल उठा, "नहीं-नहीं, हम अब भी आज़ाद नहीं हुए हैं।"

श्रीपति वावू वोले, "हां, गोपाल बावू जो कुछ कह रहे हैं, ठीक ही कह रहे हैं। 1947 ई० में जब विदेशी ताकत चली गई तो अंग्रेज़ किन्हें सत्ता हस्तांतरित कर गए? भारत के पूंजीपतियों के हाथ में। सैक्सवी मुखर्जी कम्पनी जैसे कैपिट-लिस्टों के हाथ में। उसी समय हमने वता दिया था कि यह आज़ादी झूठी है। उस समय हमारी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। उस समय विदेशियों से लड़ने के लिए किसने अपना खून वहाया था? किन लोगों ने अपना खून वहाकर अंग्रेजों से लड़ाई लड़ी थी? न तो गांधी, न नेहरू और न ही वल्लभ भाई पटेल ने। खून बहाया था आप और मेरे जैसे सर्वहारा वर्ग के लोगों ने। उन्होंने अपना खून वहाया और आज़ादी मिली गांधी-नेहरू पटेल जैसे लोगों को। और हम? हम सर्वहारा वर्ग के लोग सर्वहारा ही रह गए। तब हम अंग्रेज़ों के गुलाम थे और अब हैं दिल्ली के आकाओं के। यह ज्यादा दिनों तक नहीं चलेगा। इस हालत को ज्यादा दिनों तक चलने देना उचित भी नहीं है। हम लोगों के पश्चिम बंगाल के लाखों मेहनतकश आज वेरोजगार हैं। जूट के सारे मिल बंद हैं। यह साजिश है। यह साजिश क्यों? हम इस साजिश को नाकाम करके फिर से मेहनतकशों को आज़ाद करेंगे। आइए, हम इस संकल्प के साथ आज एक सूत्र में बंध जाएं। जब तक देश के मेहनतकशों को आज़ादी नहीं मिलेगी तब तक आराम हमारे लिए हराम है, तब तक हम लोग···"

मुक्तिपद मुखर्जी अपने घर पर एक आदमी का इन्तजार कर रहे थे। और-और दिनों की तरह उस दिन भी उन्हें कोई व्यस्तता नहीं थी। वे इन्तजार कर रहे थे और बीच-बीच में कलाई-घड़ी की ओर देख रहे थे। घड़ी शाम के छह बजा रही है। अब भी कोई खबर नहीं मिली है। उसके बाद सात बजे, फिर आठ। नन्दिता ऊपर के कमरे में तब ध्यान से रंगीन टी० वी० देख रही थी। पिकनिक भी नहीं थी। समय के घंटे जैसे बहुत धीमी गति से बज रहे थे।

अचानक खबर मिली, अर्जुन आया है। पूछा, "क्या खबर है? जल्द वताओ। उन लोगों ने क्या तय किया?"

"तय किया गया कि दुवारा एक दिन फिर बंगाल बंद का आयोजन किया जाएगा।"

"कब ?"

"अभी तक तारीख निश्चित नहीं की गई है।"

"वहां कौन-कौन मौजूद थे ?"

अर्जुन सरकार बोला, "मेरे इनफॉरमर ने कहा, सभी लोग। सभी लोग मौजूद थे। जो-जो लोग हम लोगों के पास आकर रुपया ले गए हैं, वे ही हमारे खिलाफ हैं। सभी हमारा नमक खाकर नमकहरामी करने लगे—"

मुक्तिपद आश्चर्यचकित होकर बोले, "तुम तो जानते ही हो कि वह बरदा घोषाल मेरे पास आकर बार-बार कितने लाख रुपये ले गया है—"

"चूंकि यह जानता हूं इसलिए तो कह रहा हूं।"

"सिर्फ रुपया ही क्यों ? उन लोगों की पार्टी के कितने आदमी को हमने नौकरी दी है, यह भी जानते हो।"

अर्जुन सरकार बोला, "सर, मुझे तो सब कुछ मालूम है। उन लोगों के घर के लड़कों-लड़कियों की शादी के वक्त आप कितनी बार गाड़ी और मकान दे चुके हैं। सिर्फ गाड़ी ही नहीं, ड्राइवर और पेट्रोल भी दिया था। और सो भी एक दिन नहीं, लगातार कई दिनों तक—"

मुक्तिपद बोले, "सिर्फ लाखों रुपये ही क्यों कह रहे हो ? या गाड़ी की ही बात क्यों कह रहे हो ? उस बरदा घोषाल के लड़के को जब ऐपन डिमाइटिस हुआ तो उस समय नर्सिंग होम के बीस हजार रुपये का पेमेंट किसने किया था ?"

इसके बाद अर्जुन रुका नहीं। उसे और भी बहुत सारे काम हैं। मुक्तिपद बोले, "ठीक है, अभी तुम जाओ। बाद में जो-जो खबर हो मुझे सूचित करना।"

अर्जुन सरकार के जाते ही मुक्तिपद ने मिस्टर चटर्जी को फोन किया। रात में मिस्टर चटर्जी घर में नहीं रहते। रहते हैं तो रात एक बजे के बाद ही। यह बात उनके तमाम दोस्त-मित्रों को मालूम है।

लेकिन इतनी रात में उन्हें टेलीफोन करेंगे ? इसके अलावा साल-भर में वे कितने दिन कलकत्ता में रहते ही हैं ! कलकत्ता में जब मिस्टर चटर्जी रहते हैं तो रात एक बजे तक उनके लिए क्लब में रहना नितान्त जरूरी है। वरना उनका शरीर और मन दोनों खराब हो जाएगा। वहां जा मरना है एकमात्र यही उनकी विलासिता है।

लेकिन उस दिन मुक्तिपद का भाग्य अच्छा था। मिस्टर चटर्जी क्लब में ही मिल गए। मिस्टर चटर्जी बोले, "मैं मॉर्निंग फ्लाइट से ही कलकत्ता आया हूं—"

"कहां गए थे ?"

"जापान। वहां एक बिजिनेस डील था। खैर, यह बात रहे, उधर का क्या हालचाल है ?"

"खबर बहुत ही बुरी है। अभी तुरन्त मेरा डिपुटी वर्क्स मैनेजर खबर पहुंचा गया। लेबर-मिनिस्टर के घर में क्लोज्ड-डोर मीटिंग चल रही है। वहां तय किया गया है, वे लोग हम लोगों की फैक्टरी कलकत्ता से हटवाकर ही छोड़ेंगे।"

मिस्टर चटर्जी बोले, "कैसे हटवाएंगे ?"

मुक्तिपद बोले, "अपने पुराने टैक्टिस से।"

"इसका मतलब ?"

मुक्तिपद बोले, "उन लोगों के पास बस एक ही टैक्टिस है—बंगाल बंद।"

मिस्टर चटर्जी हो-हो कर हंस पड़े। बोले, "वह सब हथियार तो अब भोथरा हो गया है मिस्टर मुखर्जी।"

"भोथरा होने पर भी हमें तकलीफ उठानी पड़ेगी। और अभी भी तकलीफ उठानी पड़ रही है।"

मिस्टर चटर्जी बोले, "कौन कहता है कि हमें तकलीफ उठानी पड़ेगी? अगर यह बात होती तो मैं किस तरह अपना कारोबार दिन-दिन बढ़ाए जाता? मेरे कैरेंट फाइनेंसियल इयर में तो अब तक पांच करोड़ रुपये का प्रोफिट हो चुका है। अपना ऑडिट-शीट मैंने गवर्नमेंट को सबमिट कर दिया है..."

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोले, "आप चुपचाप बैठे रहिए। सिर्फ इसी पर ध्यान रखे रहिए कि उन लोगों की दौड़ कहां तक है। भूखे पेट रहकर कोई कभी मुहिम में जीत हासिल नहीं कर सकता। देखिएगा, किसी दिन वही लोग आकर आपका तलवा सहलाना शुरू कर देंगे। मुझ पर ही उन लोगों ने क्या कम ज़ुल्म किया है? असल में नरम मिट्टी देखकर बिल्लियां नोचना-खसोटना चाहती हैं। ज़रा सख्त और कठोर हो जाइए तो फिर देखिएगा, वे लोग आपके पैरों पर गिरने के लिए कतारबद्ध होकर खड़े हो जाएंगे।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोले, "आप अभी सोने जाइए, कल सवेरे सुधीर आपसे मिलने जाएगा। फिर आप निश्चिन्त हो जाइएगा तो?"

मुक्तिपद बोले, "ठीक है।" यह कहकर टेलीफोन का रिसीवर रख दिया। उसके बाद एक नींद की टिकिया लेकर बिस्तर पर लेट गए।

अब भी सुपरवाइजर परेश दा यानी परेश घर की बातें संदीप को याद हैं।

परेश-दा कहते, "खूब अच्छी तरह मन लगाकर काम करो भाई। फिर तुम मेरी ही तरह किसी दिन सुपरवाइजर बन जाओगे।"

परेश दा को एक ही नशा था और वह खाने का।

पूछते, "टिफिन खाने जा रहे हो? मेरे लिए भी कुछ टिफिन ले आना भाई। तुम लोगों के कॉनफार्मेशन के वक्त मैं अच्छी तरह रेकॉमेंड कर दूंगा—"

हर रोज़ का यही सिलसिला था। आदमी के लिहाज से बुरे नहीं थे। उस पर रेकॉमेंड करने लायक क्षमता भी उन्हें नहीं थी। चाहे कोई रेकॉमेंड करे या न करे, हरेक का कॉनफोर्मेशन हो जाएगा। संदीप को यह बात अच्छी तरह मालूम थी। सवेरे दस बजे पहुंचना पड़ता था और पांच बजे छुट्टी मिल जाती थी।

परेश दा कहते, "तुम लोगों की नौकरी तो अब आराम की नौकरी है भाई। जब मर्ज़ी होती है आते हो और जब मर्ज़ी हो चले जाते हो। हम लोगों के ज़माने में हमें कितना खटना पड़ता था, मालूम है? खटते-खटते हमारी जान निकल जाती थी। जानते हो, रात दस बजे तक खटने पर भी हमारा काम खत्म नहीं होता था। आज की तरह तब ओवरटाइम भी नहीं था। बैलेंस सीट मिलाए बगैर किसी को जाने की इजाजत नहीं मिलती थी। रात में नींद के दौरान बीच-बीच में नींद टूट

जाती थी कि कहीं जोड़ में गलती तो न हो गई। सपने में भी हम हिसाब करते रहते थे—"

पुराने जमाने की यह सब कहानी सुनाकर परेश दा बहुत ही आराम महसूस करते। सारी तकलीफें जैसे उन्हीं लोगों को उठानी पड़ी हों और मेहनत का सारा काम उन्हीं लोगों को करना पड़ा हो। संदीप वगैरह इस युग में पैदा होकर जैसे बड़े आराम का जीवन जी रहा हो। हर रोज ऑफिस से घर आते ही मल्लिक चाचा को ऑफिस के काम की रिपोर्ट देनी पड़ती।

"आज कैसा काम हुआ? फिगर मिल गया?"

संदीप कहता, "हां। आज एक चांस में ही मिल गया।"

"तुम अभी कुछ खाओगे तो?"

संदीप आने के पहले ही दुकान से खा लेता।

कहता, "नहीं, खाकर आया हूं।"

"आज क्या खाया है?"

"दो परांठे और आलू का दम।"

"कितनी कीमत लिया?"

इस तरह के तरह-तरह के सवाल करते मल्लिक चाचा। ऑफिस से आने के बाद मुंह-हाथ धोकर संदीप पैदल चलता हुआ रसेल स्ट्रीट चला जाता। वहां मौसीजी की ओर से बस एक ही प्रश्न पूछा जाता, "क्या बेटा, कोई नई खबर है?"

संदीप को जो मालूम रहता वही बताता। "फैक्टरी अब भी चालू नहीं हुई है। यूनियन के लोग अब भी गेट के सामने पहले ही की तरह हड़ताल कर रहे हैं। अभी वही हालत है—फैक्टरी का दरवाजा नहीं खुला है। मुक्तिपद बाबू पहले की तरह ही बेचैन होकर छटपटा रहे हैं।"

"और तुम लोगों की दादी मां?"

दादी मां भी पहले की तरह ही पौ फटते न फटते गंगा नहाने चली जाती हैं और शाम के समय सिंहवाहिनी की आरती के दौरान नीचे आकर गले में आंचल डाल प्रणाम कर ऊपर चली जाती हैं। और मल्लिक चाचा पहले की ही तरह अपनी रोकड़-बही लेकर जाते हैं और दादी मां को जमा-खर्च का ब्यौरा दे आते हैं। एकमात्र सेवसबी मुखर्जी कम्पनी की फैक्टरी को छोड़कर घर-गृहस्थी का सारा काम पहले की ही तरह नियमपूर्वक चल रहा है।

यह सब सुनने के बाद मौसीजी अपने दामाद के बारे में पूछताछ करती, "तुम लोगों के सौम्यपद का क्या हाल-चाल है?"

संदीप कहता, "यह तो आपको पहले ही बता चुका हूं कि वे इसी महीने आ रहे हैं।"

"इस महीने की आज तो पन्द्रह तारीख हो चुकी बेटा, अब कितनी देर होगी? अब देरी बरदाश्त नहीं हो रही है।"

"सो होने दें, आखिरकार क्या होता है यही देखिए। मकान की सफेदी हो ही चुकी है। सब कुछ तो तैयार है, बस सिर्फ छोटे बाबू के लौटकर आने का इन्तजार है—"

यह सब विशाखा भी सुनती। कहती, "देख रहे हो न संदीप, मां कैसी बातें कर रही हैं। मानो, मैं शादी करने के लिए छटपटा रही हूं। कितनी ही ऐसी लड़कियां हैं जिनकी शादी ही नहीं होती। हम लोगों के कॉलेज की कितनी ही टीचरों की शादी नहीं हुई है। इसके चलते क्या वे निराहार रह रही हैं?"

"तू चुप रह मुंहजली!"

विशाखा भड़क उठती। कहती, "मैं चुप क्यों रहूंगी? तुम मेरी शादी के लिए इतनी खुशामद क्यों कर रही हो? लड़की पैदा होकर मैंने पाप किया है?"

मौसीजी कहतीं, "तू कैसे समझेगी मुंहजली? मैं कितनी बेचैन हूं, यह तू क्योंकर समझेगी? तू जब मां बनेगी तो समझेगी कि कुमारी विवाह के योग्य लड़की रहने पर मां के मन में कितनी बेचैनी रहती है—"

बातचीत के बीच ही अंटी मेमसाहब पढ़ाने चली आती और विशाखा कमरे से निकल पढ़ने के लिए चली जाती। और उसी समय मौसीजी ने आहिस्ता से पूछा, "मुझे सच-सच बताओ बेटा? मेरी लड़की की शादी उस घर में होने जा रही है न?"

"इतना कुछ हो जाने के बावजूद आप यह क्यों पूछ रही हैं मौसीजी? एकाएक आपको इस तरह का संदेह क्यों हो रहा है?" संदीप कहता।

मौसीजी ने कहा, "जिस दिन उस मकान में सत्यनारायण की पूजा हुई, उसी दिन से मेरे मन में एक तरह का संदेह होने लगा है। विशाखा के पैर से शीशे का गिलास टकराकर गिर पड़ा और शीशे के टुकड़े से विशाखा का पैर कट गया। तभी से मेरा मन कैसा-कैसा तो कर रहा है—"

संदीप ने सांत्वना देने की मुद्रा में कहा, "आप व्यर्थ ही वह सब सोचकर अपने मन को दुखित कर रही हैं मौसीजी। आपने ज़िन्दगी में कभी किसी के अनिष्ट की चाह नहीं की है, किसी की कोई हानि नहीं की है। देखिएगा, ईश्वर आपका भला ही करेगा—"

मौसीजी बोलीं, "वे लोग कौन थे बेटा, जिनके साथ एक गोरी-सी लड़की आई थी? मेरी विशाखा की हमउम्र होगी। विनीता या ऐसा ही कुछ नाम था। वह कौन है?"

संदीप ने कहा, "वह हम लोगों के मंझले बाबू के एक दोस्त की लड़की है। वे लोग पूजा का प्रसाद लेने आए थे।"

मौसीजी ने कहा, "अब तब तुम्हें यह बात नहीं बताई थी। लेकिन उस दिन के बाद से ही मुझे लगातार शक हो रहा है कि विशाखा की शायद उस घर में शादी नहीं हो पाएगी। इसी वजह से उस दिन तुम्हें अपने साथ लेकर मैं ज्योतिषी महाराज के पास गई थी।"

संदीप इसके उत्तर में क्या कहे! वह उठकर खड़ा हो गया और जाने के दौरान बोला, "अभी मैं जा रहा हूं, अबकी सही खबर लाकर आपको दूंगा।"

यह कहकर वह सड़क पर उतर आया और चलते-चलते सोचने लगा, इस तरह का अप्रिय समाचार वह मौसीजी को कैसे सुनाएगा? कैसे वह मौसीजी के सामने इस खबर का अपने मुंह से उच्चारण करेगा?

घर पहुंचने में उसे थोड़ी देर हो गई। सीधे रास्ते से जाने के बजाय वह दूसरी

तरफ से घूमते हुए गया। लिहाजा उसका व्यर्थ ही इतना वक्त बर्बाद हो गया और वह देर से घर पहुंचा।

लेकिन घर के दरवाजे के सामने बहुत सारी गाड़ियां देखकर उसे आश्चर्य हुआ। और-और दिन इस वक्त यहां इतनी गाड़ियां नहीं रहती हैं। गिरिधारी ने उसे देखकर बाकायदा सलाम किया। संदीप ने पूछा, "इतनी सारी गाड़ियां किसकी हैं गिरिधारी?"

गिरिधारी बोला, "मंझले बाबू आए हैं और बालीगंज से चटर्जी साहब भी आए हैं।"

"क्यों?"

गिरिधारी बेचारा दरबान है। इतनी गाड़ियों के आने का सबब उसे कैसे मालूम हो सकता है! वह बोला, "मालूम नहीं बाबू।"

मल्लिक चाचा के कमरे में घुसकर देखा तो वे भी वहां नहीं थे। आमतौर से ऐसा नहीं हुआ करता है। लेकिन इस बात का उत्तर पाने के लिए तब तक इंतजार करना होगा जब तक कि मल्लिक चाचा लौटकर नहीं आते हैं। और-और दिन इस वक्त खाना खाने की बुलाहट आती थी। वह किससे पूछे और कौन इसका जवाब ही देगा!

बहुत देर बाद मल्लिक चाचा आए। संदीप को देखा तो पूछा, "तुम आ गए? अच्छा ही हुआ। मझले बाबू आए थे और बालीगंज से मिस्टर चटर्जी भी आए हुए थे। आज एक खबर है—"

संदीप बोला, "क्या खबर?"

"कल ही संदीप बाबू आ रहे हैं। इसीलिए असमय मुझे बुलवाया गया था। कल मुझे दमदम एयरपोर्ट पर मौजूद रहना होगा। मझले बाबू, दादी मां, मिस्टर चटर्जी और उनके लड़के लेबर-लीडर सुधीर चटर्जी भी जाने वाले हैं।"

"सौम्य बाबू कितने बजे पहुंच रहे हैं?"

मल्लिक चाचा बोले, "सवेरे साढ़े ग्यारह बजे।"

सवेरे साढ़े ग्यारह बजे संदीप अपने ऑफिस में रहेगा। तीसरे पहर पांच बजे वहां से चलने पर घर आते-आते तकरीबन छह बज जाएंगे। छह बजे के पहले संदीप सौम्यपद बाबू को देख नहीं पाएगा।

संदीप ने पूछा, "सौम्य बाबू की शादी की बात कुछ आगे बढ़ी?"

मल्लिक चाचा बोले, "हां, वह भी हो चुकी है।"

"किससे सौम्य बाबू की शादी होगी?"

"चटर्जी बाबू की लड़की से ही होगी। क्योंकि इन लोगों की फैक्टरी की हड़ताल चटर्जी बाबू ही समाप्त करा सकते हैं। रसेल स्ट्रीट के निवासी तो यह नहीं कर पाएंगे। उन लोगों में वह क्षमता नहीं है।"

यह खबर सुनकर संदीप निर्वाक् हो गया। उसे लगा, जैसे वज्र उसी के सिर पर गिर पड़ा हो।

संदीप को अब भी उस दिन की उत्तेजना की बात का स्मरण है। सभी आदमी के

जीवन में कभी-न-कभी उत्तेजना पैदा होती है। खास तौर से दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से। सवेरे अखबार के पृष्ठों पर नज़र पड़ते ही आदमी उत्तेजना से व्याकुल हो उठते हैं। कभी-कभी संदीप को लगता है, अखबारों के संपादक दुनिया के किसी कोने में किसी उत्तेजक घटना की सृष्टि हुई है या नहीं, इस संबंध में खोज-पड़ताल करते रहते हैं। अगर कोई मामूली-सी घटना भी घटती है तो उसमें मिर्च-मसाला मिलाकर उत्तेजक बना देते हैं, और उस पर रंग चढ़ाकर पाठक-पाठिकाओं को आकर्षित करने के लिए छापते हैं। या फिर यह भी हो सकता है कि आदमी अनजाने ही उत्तेजित होना पसंद करते हैं। अपने पॉकेट से पैसा खर्च कर उत्तेजना खरीदना चाहते हैं। वे स्वस्थ, स्वाभाविक जीवन नहीं चाहते।

नेशनल यूनियन बैंक के खुलने का समय होते ही तुरन्त काम की शुरुआत हो जाती है। उतने सवेरे ही हर काउन्टर पर एकाउन्ट होल्डरों की भीड़ लगने लगती है। खासतौर से महीने के पहले सप्ताह में। उस समय नौकरी से रिटायर किए हुए लोग एक ही समय में पेंशन लेने के लिए आ जाते हैं। कौन पहले लेगा, इसी की होड़ लग जाती है उनके बीच।

दोपहर दो बजे काउंटर बन्द हो जाता है। तब टिफिन का वक्त होता है और ज़रा आराम मिलता है। लेकिन वह आराम तमाम लोगों को मयस्सर नहीं होता। जनता के साथ जिनका कारोबार रहता है उन्हीं को आराम मिलता है। बाकी लोगों को काम से छुट्टी नहीं मिलती। लेजर के पृष्ठों पर उन्हें हिसाब का सिल-सिला जारी रखना पड़ता है। फिर भी वे समय निकाल लेते हैं। उसी के बीच ज़रा वक्त निकालकर गपशप करते हैं। मुहल्ले की बात, व्यक्तिगत बात, खेल-कूद की बात, राजनीति की बात।

परेश दा अब भी सुपरवाइजर है। संदीप की ओर मुखातिब होकर बोले, "क्या बात है संदीप, तुम्हारी तबीयत खराब है क्या? आज इतने गम्भीर क्यों दिख रहे हो?"

संदीप इसका क्या जवाब दे! सिर्फ मन रखने के लिए ही कहा, "हां, आज तबीयत कोई खास अच्छी नहीं है।"

"क्यों? इतनी कम उम्र में तबीयत खराब होना कोई अच्छी बात नहीं है। अब तुम शादी कर लो। तबीयत और मन दोनों दुरुस्त रहेंगे।"

संदीप इसका क्या उत्तर दे, यह सोच नहीं सका। परेश दा की बात का उसने उस दिन भी जवाब नहीं दिया था। लेकिन शादी करना या होना एक यातना है इसका अहसास संदीप को बहुत बाद में हुआ था। क्यों संदीप ने उस दिन शादी की थी या करने ही गया था? और उसे क्या सचमुच ही शादी करना कहा जा सकता है? इसका जवाब उसे आज भी नहीं मिला है।

उन दिनों संदीप बेड़ापोता से डेली पैसेंजरी करता था। सवेरे आठ बजे वह बेड़ापोता में ट्रेन पर सवार होता और दस बजते न बजते ऑफिस पहुंच जाता।

जिस दिन हावड़ा पुल के रास्ते में गाड़ियों का जमाव रहता, उस दिन उसे एकाध घंटे की देर भी हो जाती। तब संदीप की नौकरी में प्रोन्नति भी हो गई थी। वह जिस पद पर दाखिल हुआ था उसके बाद ही पॉसिंग आफिसर का पोस्ट था।

मा ने तब चटर्जी-भवन की नौकरी छोड़ दी थी। जिसका लड़का बैंक में बड़े ओहदे पर है वह दूसरे के घर मे रसोई पकाने का काम क्यों करेगी? चटर्जी बाबुओं की हालत भी पहले के बनिस्बत खराब हो गई थी। देखते-देखते आंखों के सामने ही दुनिया कैसे बदल जाती है यह देखकर चकित होना पड़ता है। लगता, यह तो उस दिन की बात है। यही तो उस दिन संदीप काशी बाबू के घर की लाइब्रेरी मे बैठकर ध्यान लगाकर किताब पढ़ता और उसकी मां चटर्जी-भवन के अंतःपुर मे बैठकर रसोई पकाती थी। रसोई पकाने में मां को बहुत देर हो जाती। आखिर में जब रसोई का काम खत्म होता तो उस समय आकर वह अपने लड़के को पुकारती, "अरे मुन्ना, घर चल।"

मा के हाथ में अंगोछे से ढंका एक थाली भात रहता। थाली में दोनों के खाने लायक भात, दाल-सब्जी रहती। घर जाकर संदीप और उसकी मां वही दाल-भात-सब्जी खाते। किसी-किसी दिन संदीप कहता, "मा, भात की थाली मुझे दे दो, तुम्हारा हाथ दर्द करने लगेगा।"

मां कहती, "नही रे, मुझे तकलीफ नहीं होती। तू जब बड़ा होगा तब लेना। अभी तू मन लगाकर लिख-पढ़। तेरी घरवाली आएगी तो फिर वही भात-सब्जी पकाएगी। उस समय दूसरे के घर में हाथ जलाकर खाना नही पकाऊंगी।"

संदीप कहता, "उस वक्त मैं तुझे कोई काम नही करने दूंगा मा। तुम उस वक्त लेटी रहोगी और हुक्म करती रहोगी।"

मा कहती, "इतना सुख मेरे भाग्य को बरदाश्त नही होगा। मेरी तकदीर तो फूटी हुई है।"

मां ने सिर्फ भविष्य के सुख के सपने देखने में ही ज़िन्दगी गुज़ार दी थी। संदीप अपनी मां को ज़रा भी सुख नही दे सका, यह क्षोभ उसके जीवन से दूर नही होगा। संदीप अपने खुद की ज़िन्दगी मे जैसे कभी कोई सुख हासिल नहीं कर सका है उसी तरह मां को भी कभी सुख नही दे सका था। बैंक की नौकरी मे जब वह पहले-पहल दाखिल हुआ तो माहवारी खर्च के लिए मां के हाथ मे छह सौ रुपया सौंप दिया। इतने सारे रुपये एक साथ पाकर मां चकित हो गई। मां बोली, "अरे मुन्ना, इतने सारे रुपये तुझे किसने दिए?"

संदीप बोला, "कौन देगा मां? मुझे यह पहली बार छह सौ रुपया बतौर तनख्वाह मिला है, इसलिए सारे रुपये तुम्हें ही दे दिए—"

"इतने रुपये?"

मां को जैसे शुरू में विश्वास ही नहीं हुआ। बोली, "तुझे छह सौ रुपया वेतन मिला है? सारे रुपये मुझे ही दे दिए?"

यह कहते-कहते मा का गला भर्रा गया। उसके बाद भर्राए स्वर मे ही बोली, "जो आदमी तेरे वेतन का रुपया देखकर सबसे ज्यादा खुश होता, वही आदमी आज नहीं है।" यह कहकर पल्लू से आंख पोंछ ली।

संदीप बोला, "मां, तुम इन रुपयों को कहां रखोगी? बाबूजी वाले बक्से में ही रखकर ताला बन्द कर दो—"

मां बोली, "नही बेटा, तेरे पहले महीने का यह वेतन मैं बगैर देवता के चरणों पर रखने के और कही नही रखूंगी—"

पूछा, "किस देवता के चरणों पर रखोगी ?"
ी, "क्यों, वावू लोगों के मकान में पूजाघर नहीं है ? मैं अभी वहीं
र देवता के चरणों पर रखने के वाद ले आऊंगी।"
द के आवेग से मां उस समय थर-थर कांप रही थी। उसी हालत में उन
लेकर वह वावुओं के घर पर गई। संदीप भी मां के साथ-साथ गया।
से अव देर वरदाश्त नहीं हो रही थी। कव तक मां उन रुपयों को देवता
पर रखे रहेगी, उसी का जैसे इंतज़ार कर रही हो। वावुओं के मकान
जाते ही मां पुकारने लगी, "ओ भाभीजी, कहां हो तुम ?"
कौन ? ब्राह्मणी दीदी ?"
ां वोली, "यह देखो भाभीजी, मेरे मुन्ना को वेतन मिला है। मेरे मुन्ना को
सारे रुपये वेतन में मिले हैं। अरे, भाभीजी को प्रणाम कर, प्रणाम कर—"
"अच्छा, यह वात है ! कितने रुपये मिले हैं ? नहीं-नहीं, प्रणाम करने की
रत नहीं।"
मां वोली, "छह सौ रुपये। तुम्हारे देवता के चरणों से इन्हें स्पर्श कराने के
ए ले आई हूं। तुम लोग आशीर्वाद दो कि वह दीर्घजीवी हो।"
भाभीजी वोली, "वहन, तुम खुशकिस्मती लेकर आई थी। अव अपने लड़के
की शादी करा दो। तव तुम्हें हम लोगों के घर में हाथ जलाकर रसोई नहीं पकानी
होगी।"
मां वोली, "ऐसा कहीं हो सकता है भाभीजी ? यह सव कुछ जो हुआ है,
तुम्हीं लोगों के आशीर्वाद से हुआ है। यह वात मैं भूल सकती हूं ?"
यह कहकर मां वावू लोगों के देवता के चरणों का स्पर्श कराकर लाने गई।
उसके वाद जैसे ही वाहर आई, भाभीजी वोली, "जाओ वहन, आज इस वक्त तुम्हें
रसोई पकाने के लिए नहीं आना है। इतने दिनों के वाद लड़का आया है, इसलिए
मां-वेटा जाकर ज़रा गपशप करो।"
मां वोली, "ऐसा कहीं हो सकता है भाभीजी ? इतने दिनों तक तुम लोगों ने
सेवा करने का अवसर दिया है। लड़के को नौकरी मिल गई तो इसका मानी यह
नहीं कि तुम लोग पराए हो गए। मैं हर रोज़ जिस तरह तीसरे पहर आती हूं, ठीक
उसी वक्त आ जाऊंगी—"
यह है तनख्वाह पाने के वाद मां के पास जाने की पहली वारदात। मां ने
पहली वार भी तनख्वाह के रुपये अपने पास नहीं रखे थे। मां ने पहली दफा ही
कहा था, "मुझे रुपये की क्या ज़रूरत है ? मेरे पास न तो वक्सा है और न ही
पिटेरा। और मैं घर में रहती ही हूं कितनी देर ? पूरा दिन तो वावुओं के घर में
ही वीत जाता है। सिर्फ रात के वक्त घर में रहती हूं। देस में कितने ही चोर-डाकू
हैं, किसके मन में क्या है, कौन कह सकता है !"
"तुम अव वावू लोगों के घर में काम नहीं करने जाओगी तो कौन-सा हर्ज हो
जाएगा मां ?"
मां वोली, "मैं अकेले घर में वैठकर क्या करूंगी ? फिर तो मेरे हाथ-पैर
गठिया की वीमारी हो जाएगी। वेहतर यहीं होगा कि इन रुपयों को अपने वैंक
रख दो। मुझे ज़रूरत होगी तो तुमसे मांग लूंगी।"

लेकिन सिर्फ रुपया रहने से ही क्या होगा? वह क्या खरीदेगा? किसको क्या खरीदकर देगा? इसलिए हर हफ्ते संदीप मा के लिए कुछ न कुछ खरीदकर ले आता। कभी मां के लिए कपड़ा, पेटीकोट, कभी अंगोछा और कभी खुशबूदार नारियल तेल। और कभी कलकत्ता का सबसे उम्दा रसगुल्ला और संदेश।

मा कहती, "मेरे लिए तू इतनी चीजें क्यों ले आता है मुन्ना? मैं तो अकेली औरत ठहरी। मैं कितने कपड़े पहनूंगी? यही तो पिछले साल भाभीजी ने एक साड़ी दी थी, वह अभी नई की नई है—"

उसके बाद मां कहती, "अब तू शादी कर ले बेटा। अब तो तुझे नौकरी मिल ही गई है। कितने दिनों तक कलकत्ता में दूसरे के घर में रहेगा? मुझे भी तो तेरी शादी देखकर जाने की ख्वाहिश है।"

शुरू में संदीप इन बातों पर ध्यान नहीं देता। लेकिन मा छोड़नेवाली नहीं थी।

मा कहती, "क्यों रे, मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दे रहा है?"

बहुत दबाव डालने पर संदीप कहता, "मां तुम नहीं जानती, इसीलिए यह सब कह रही हो। काश! तुम समझ पाती कि शादी करना कितना दुखदायक है। कलकत्ता में मैं जिन लोगों के घर में रहता हूं, वहां भी मुझे बहुत कुछ सीखने का मौका मिला है। तुम्हारी धारणा है, बहुत पैसा रहने से ही आदमी सुखी रहता है। लेकिन अधिक पैसा रहने से आदमी को कितनी परेशानी उठानी पड़ती है, वह मैं अपनी आंखों से हर रोज देख रहा हूं—"

मा उसकी बात समझ नहीं पाती। कहती, "तू यह क्या कह रहा है? यहां चटर्जी बाबू लोग भी तो हैं। वे लोग कितने सुख में हैं! घर में बिजली-बत्ती है, अंधेरे में दियासलाई जलाने की भी जरूरत नहीं पड़ती। चाहने पर पूरा घर रोशनी से जगमगाने लगता है। तेरे पास बहुत पैसा हो जाए तो तू भी इसी तरह की मशीन खरीद लेना—तब हम लोगों को कितना आराम मिलेगा।"

संदीप कहता, "यह बाहरी मुखौटा है मा, उसे सुख नहीं कहा जा सकता। उस तरह के सुख की तुम चाह मत करो मा। रुपया खर्च कर जो सुख मिलता है, वह अहंकार का सुख है। उसे सुख नहीं कहा जाता मां। तुम मेरी बात पर यकीन करो, वह बड़ा सुख नहीं है—"

मा को अपने लड़के की बात का ओर-छोर कुछ समझ में नहीं आता। कहती, "अरे, वह सुख नहीं है तो फिर सुख क्या है?"

संदीप कहता, "मैं जब बेड़ापोता में था तो मैं भी तुम्हारी ही तरह सोचता था मा। लेकिन कलकत्ता जाने पर मेरी आंखें खुल गई। असली सुख किसमें है, इसे मैं समझ गया हूं—"

मा अपने बेटे का एक भी शब्द समझ नहीं पाती। कहती, "यह बात क्यों कह रहा है? हमारे पास बाबू लोगों के जैसा पक्का मकान होता, गाड़ी होती, बिजली होती तो हमें सुख नहीं मिलता?"

लड़का कहता, "मा, मैं जिन बाबुओं के घर में रह रहा हूं, उन लोगों के पास सब कुछ है। तुम्हारे चटर्जी-भवन वाले के पास जो-जो है उससे हजारों गुना ज्यादा चीजें हैं उन लोगों के पास। उन लोगों के पास घर-गाड़ी-बिजली-बत्ती सारा कुछ

है। लेकिन उस घर की जो गृह-स्वामिनी हैं उनसे दुखी औरत मैंने कहीं नहीं देखी है—"

"क्यों ?"

संदीप कहता, "तुम यह नहीं समझ सकोगी मां।"

"क्यों नहीं समझूंगी ? मुझे समझाने से बेशक समझ जाऊंगी।"

संदीप कहता, "नहीं मां, तुम नहीं समझ सकोगी। कलकत्ता के लिखे-पढ़े लोग भी यह नहीं समझ सकेंगे। दुनिया का कोई आदमी इसे नहीं समझ सकेगा। जानती हो, उस घर के जो मंझले बाबू हैं, वे करोड़ों रुपये के मालिक हैं, लेकिन उन्हें नींद नहीं आती है।"

मां लड़के की बात सुनकर दंग रह जाती। कहती, "अरे, यह क्यों ? नींद नहीं आती है ? मैं तो बिछावन पर लेटते ही खर्राटे भरने लगती हूं—"

संदीप कहता, "तुम्हारे पास रुपये नहीं हैं, इसीलिए इतनी खुशकिस्मत हो। जिनके पास दौलत है, उनके पास सारा कुछ रहता है। गाड़ी रहती है, मकान रहता है, बीमार पड़ने पर बड़े-बड़े डॉक्टरों से दिखाने की सामर्थ्य रहती है, नौकर-चाकर, महरी, रसोइया, ड्राइवर सभी रहते हैं, लेकिन उन्हें नींद नहीं आती।"

"पर बगैर सोए वे ज़िन्दा कैसे रहते हैं ?"

"या तो दवा खाकर या शराब पीकर।"

"शराब ? कलकत्ता में औरतें भी शराब पीती हैं ?"

संदीप कहता, "हां मां, या तो शराब पीते हैं या ऐसी दवा खाते हैं जिसमें शराब मिली रहती है। मैं बड़े आदमी के घर में रह रहा हूं इसीलिए नहीं कह रहा हूं, हम लोगों के बैंक में जो लोग आते हैं उनमें से अनेकों लखपति-करोड़पति हैं। उनसे भी बातचीत करके देखा है। जिनके पास जितने अधिक रुपये हैं उन्हें ही अधिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है।"

मां फिर भी समझ नहीं पाती। कहती, "क्यों ? ऐसा क्यों होता है ?"

संदीप कहता, "शुरू में मुझे भी तुम्हारी ही तरह समझ में नहीं आता था। आखिर में इस पर बहुत सोचा कि ऐसा क्यों होता है ? एक तरफ कलकत्ता के फुटपाथ पर लाखों लोग बेखबर सोए रहते हैं और दूसरी तरफ हम लोगों के मंझले बाबू को वातानुकूलित कमरे में डनलप-पिलो पर लेटने पर भी नींद नहीं आती। और हम लोगों की दादी मां ? नींद नहीं आती है इसीलिए रात तीन बजे उठकर दादी मां महरी को अपने साथ ले गंगा नहाने चली जाती हैं।"

मां अपने बेटे की इन बातों का मर्म तनिक भी नहीं समझ पाती। चाहे न समझे, फिर भी संदीप कहता, "तुम इस सम्बन्ध में नहीं सोचो मां। मैं चलता हूं। फिर अगले हफ्ते आऊंगा।"

लड़के के जाने के वक्त मां उसके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद देती, "तू और तरक्की कर मुन्ना, नौकरी में दिन-ब-दिन तेरी उन्नति हो और वेतन बढ़े !"

संदीप कहता, "यह आशीर्वाद नहीं दो मां, ज़्यादा रुपये का आशीर्वाद नहीं दो। यही आशीर्वाद दो कि मैं इंसान बनूं और इंसान बनकर दसियों की भलाई कर सकूं—"

लगभग हर सप्ताह यही सिलसिला चलता। नौकरी होने के बाद से संदीप

इसी तरह हर हफ्ते शनिवार के तीसरे पहर बेड़ापोता पहुंचता और सोमवार को भोर की ट्रेन से कलकत्ता चला जाता। वे दो रात और डेढ़ दिन मां का कितनी खुशियों में बीतते, कहा नहीं जा सकता। सोमवार से लेकर फिर शनिवार के तीसरे पहर तक का वक्त मां का मुन्ना की चिन्ता में ही बीतता। घर से दूर स्टेशन के रास्ते की ओर अपलक ताकती रहती। अब तो सूर्य अस्त होने-होने पर है, पर मुन्ना अभी तक नहीं आया! मुन्ना की तबीयत कहीं खराब तो नहीं हो गई? ऐसा तो कभी नहीं होता। या फिर रेलगाड़ी आज आने में देर कर रही है?

आखिर में जब मुन्ना दूर दिख जाता तो मां को कितना चैन मिलता! जब तक मुन्ना आ नहीं जाता, मां हाथ उठाए खड़ी रहती। उसके बाद संदीप की नजर जब मां पर पड़ जाती तो वह भी दौड़ना शुरू कर देता। पास आते ही मां को अपनी बाहों में भर लेता। उस समय मां कहती, "अरे छोड़, छोड़, तुझे आने में इतनी देर होते देखकर मैं केवल सोच रही थी···"

संदीप कहता, "मैं क्या करता, ट्रेन लेट से आई—"

प्रायः हर बार ऐसा ही होता। हर बार संदीप शनिवार के तीसरे पहर के ढलने के बाद शाम होते ही घर चला आता और शनिवार को अहलेसुबह कलकत्ता चला जाता।

अचानक एक बार एक अनहोनी घटित हो गयी।

संदीप आकर बोला, "मां, अब मैं यहां तुम्हारे पास ही रहूंगा।"

मां यह सुनकर अवाक् हो गई थी। कहा था, "यह क्या? यहां क्यों रहेगा?"

संदीप ने कहा था, "हां मां, अब मैं डेली पैसेंजरी करूंगा। यहीं से हर रोज कलकत्ता जाऊंगा-आऊंगा। अब कलकत्ता में नहीं रहूंगा।"

"क्यों? तू जिस घर में रहता था, उन मुखर्जी बाबुओं को क्या हुआ? वे लोग क्या अब तुझे रहने नहीं देंगे?"

संदीप ने कहा, "नहीं मां, ऐसी बात नहीं है। अब बैंक में नौकरी मिल गई है। अब वहां बेवजह क्यों रहूं?"

मां ने पूछा, "अचानक यह सब क्यों कह रहा है? एकाएक तुझे क्या हो गया?"

संदीप ने कहा, "क्यों मां, तुम क्या यह नहीं चाहतीं कि मैं तुम्हारे पास रहूं?"

मां बोली, "ऐसा क्यों नहीं चाहूंगी? फिर तो मुझे भी बड़ा अच्छा लगेगा।"

संदीप बोला, "लेकिन मैं अकेले नहीं आऊंगा मां, मेरे साथ और दो जने आएंगे। उन्हें भी यहां रहने देना पड़ेगा—"

मां तो लड़के की बात सुनकर दंग रह गई। बोली, "दो जने? उन्हें रहने देना पड़ेगा?"

संदीप बोला, "हां मां।"

"क्यों? वे कौन हैं? कौन हैं वे दो जने?"

संदीप बोला, "वे दोनों हैं मां और बेटी।"

…ते ही संदीप की नींद टूट गई। उसने आंख खोलकर देखा और अपने … मल्लिक चाचा के कमरे में लेटा हुआ पाया। वह अब फिर क्या अब तक … सपना देख रहा था !

…मल्लिक चाचा बोले, "क्या बात है, तुम्हारी नींद इतनी देर से क्यों टूटी ?"

वह झटपट उठकर बैठ गया। सोए-सोए वह इस तरह का अजीब सपना क्यों … रहा था !

इसके एक दिन पहले मुखर्जी-भवन में एक अजीब वारदात हो चुकी है। ऐसा …गा, किसी ने यह नहीं सोचा था। संदीप हर रोज की तरह दफ्तर चला गया …। उसके दो घंटा बाद सौम्य के पहुंचने की बात थी। बैंक में काम करने के …दौरान उसे सिर्फ वही सब बात याद आ रही थी। अब शायद सौम्य बाबू पहुंच …चुके होंगे और उधर मिस्टर चटर्जी भी अपने लड़के सुधीर के साथ पहुंच चुके होंगे।

आज तो सभी के लिए खुशियां मनाने का दिन है। सौम्यपद आ रहे हैं। अब सैक्सबी मुखर्जी की तालाबंदी खत्म हो जाएगी। अब कम्पनी फिर से चालू हो जाएगी। अब पुनः उत्पादन की शुरुआत हो जाएगी। मुखर्जी भवन में फिर से शांति का माहौल लौट आएगा। मकान की मरम्मत का काम पहले ही समाप्त हो चुका था। विडन स्ट्रीट की सड़क से जाने के दौरान दिखता है कि पूरी इमारत जैसे नए सिरे से सज-संवर गई है। उसके कई दिन बाद ही उस घर में मंडप बनना शुरू हो जाएगा। तब संदीप बाबू की शादी का दिन बिलकुल निकट चला आएगा। बैंक की चहारदीवारी के अन्दर बैठे-बैठे संदीप के नथुने में जैसे पूरी तलने की खुशबू तिरकर चली आई। कानों में तिर आई नौबत की मीठी आवाज़। मल्लिक चाचा से संदीप सब कुछ सुन चुका है। इसके पहले मंझले बाबू की शादी के मौके पर जो कुछ हुआ था, इस बार भी वही होगा। बल्कि कहा जा सकता है कि अबकी सौम्य बाबू की शादी के मौके पर उससे ज्यादा जश्न मनाया जाएगा। क्योंकि कन्या-पक्ष पहले के बनिस्बत ज्यादा दौलतमंद है। वर-पक्ष से कन्या-पक्ष का अधिक दौलतमंद होने के कारण धूम-धड़ाका भी ज्यादा होना स्वाभाविक है।

परेश दा बगल में ही बैठे हुए थे। बोले, "क्यों जी, आज तुम्हें इतना छोटे-सा फिगर-वर्क करने में इतना वक्त क्यों लग रहा है? तबीयत खराब है क्या ? रात में नींद आई थी ?"

संदीप परेश दा को कैसे समझाए कि उसे फिगर-वर्क करने में आज क्यों दे… हो रही है? बैंक में दाखिल होने पर भी उसे क्यों घर की बातें याद आ रही… यह बात परेश दा कैसे समझेंगे ! आज इस बीच घर में क्या घटना घट रही हो… इसे जानने को संदीप के मन में कितना कुतूहल जग रहा है, यह बात संदी… अलावा और कोई समझ नहीं सकेगा। उसके बाद घड़ी में जब साढ़े चार बज… तो संदीप अब इन्तजार नहीं कर सका। बोला, 'परेश दा, आज ज़रा जल… सकता हूं ?"

"क्यों, अचानक क्या हुआ ?"

संदीप बोला, "आज घर में ज़रा ज़रूरी काम है—"

"तो फिर जाओ।"

इजाजत मिलने-भर की देर थी। संदीप तत्क्षण मेज की दराज का ताला बन्द कर बाहर सड़क पर चला आया। अब बाहर सड़क पर आदमी, ट्राम-बस का जुलूस शुरू हो चुका है। शुरू हो चुकी है जिन्दगी की मुहिम में सबको पीछे छोड़कर आगे बढ़ने की प्रतियोगिता। संदीप भी उस प्रतियोगिता के जुलूस में शामिल होकर तेज गति से दौड़ने लगा। सौम्य बाबू शायद अब तक कलकत्ता पहुंच चुके होंगे। हो सकता है अब घर भी पहुंच चुके होंगे। इतने दिनों के बाद घर का लड़का घर वापिस आ गया है, इसलिए आज घर में भी उत्सव जैसा माहौल होगा। दादी मां की इतने दिनों की साध आज पूरी हुई। घर के तमाम लोग इस उत्सव के नशे में विभोर होकर सौम्य बाबू की सेवा में जुटे हुए होंगे।

संदीप जब घर पहुंचा तो उसे थोड़ी-बहुत निराशा हुई। संदीप को उम्मीद थी कि घर के सामने गाड़ी का जमघट होगा। लेकिन ऐसी बात कहां है? आज घर के सामने एक भी गाड़ी नहीं खड़ी है। फिर क्या इस बीच सभी लोग जा चुके हैं? सामने और-और दिनों की तरह गिरिधारी खड़ा था, उसने संदीप को बदस्तूर सलाम किया।

संदीप ने गिरिधारी से पूछा, "छोटे बाबू आज आ चुके हैं गिरिधारी?"

गिरिधारी बोला, "जी हां, छोटे बाबू आ चुके हैं।"

संदीप को उससे और भी बहुत सारी बातें पूछनी थीं। लेकिन उसकी जरूरत नहीं, मल्लिक चाचा ही उसे सारा कुछ बताएंगे।

लेकिन अन्दर जाने पर देखा, मल्लिक चाचा के कमरे में कोई नहीं है। कैश-बॉक्स का ताला बन्द है। मल्लिक चाचा, हो सकता है, ऊपर के कमरे में गए हों, कोई नए हुक्म की तामील करने के खयाल से। यह स्वाभाविक भी है। आज इतनी बड़ी घटना घटने के कारण मल्लिक चाचा की जिम्मेदारी भी बढ़ गई होगी।

तकरीबन आधा घंटा इसी तरह कट गया। संदीप के मन में तब सारे प्रश्न जम-जमकर पहाड़ की शक्ल में बदलने लगे। सौम्य बाबू को एक बार अपनी आंखों से देखने की भी इच्छा हुई। अब सौम्य बाबू क्या देखने में और अधिक सुन्दर हो गए होंगे? इतने दिन विलायत में बिताकर आए हैं, बेशक वे और ज्यादा गोरे हो गए होंगे।

एकाएक मल्लिक चाचा कमरे में दाखिल हुए।

संदीप ने देखा, मल्लिक चाचा के चेहरे पर गम्भीरता की छाप है। जैसे और-और दिनों से ज्यादा गम्भीर हों। इतने गम्भीर क्यों हैं? इस तरह की कौन-सी वारदात हुई आज?

संदीप ने सीधे पूछा, "सौम्य बाबू आ गए हैं?"

मल्लिक चाचा ने गम्भीर स्वर में ही कहा, "हां—"

यह कहकर अपने काम में लग गए। रोकड़-बही लेकर कुछ हिसाब करने लगे। संदीप तब अधीर हो उठा था। बोला, "चाचाजी, आप सौम्य बाबू को लाने दमदम गए थे?"

मल्लिक चाचा बोले, "हां।"

"कौन-कौन गए थे?"

अब भी मल्लिक चाचा नहीं लौटे हैं। इतनी देर से डॉक्टर दादी मां की किस तरह की जांच कर रहा है? दादी मां के साथ कोई बुरा वाकया हुआ है क्या? संदीप अन्दर ही अन्दर बहुत उद्विग्न हो उठा। इसके पहले ऐसा तो कभी नहीं हुआ था। दादी मां के लिए कभी इस घर में डॉक्टर नहीं बुलाना पड़ा था।

सहसा गिरिधारी दुवारा कमरे के अन्दर आया। बोला, "हुजूर, एक आदमी आपसे मिलने आया है। यहां ले आऊं?"

गिरिधारी की बात सुनकर संदीप को अचरज हुआ। यहां उससे मिलने कौन आया है? यहां उसे कौन पहचानता है? तो गोपाल हाजरा आया है क्या?

अपनी आंखों के सामने तपेश गांगुली को पाकर उसके आश्चर्य की मात्रा दूनी हो गई। उससे मिलने तपेश गांगुली इस मकान में आया है?

"आप?"

तपेश गांगुली दांत निपोर कर हंस दिया। बोला, "क्यों भाई, मुझे क्या नहीं आना चाहिए?"

उसके बाद बोला, "इस तरफ आया था तो सोचा, क्यों न एक बार भाई साहब से मिल लूं। भाभीजी से सुनने को मिला कि तुम्हें बैंक में एक अच्छी-सी नौकरी मिल गई है। सुनकर मुझे बहुत खुशी हुई भाई, बहुत खुशी—"

संदीप इस समय तपेश गांगुली के इस आकस्मिक आविर्भाव से यों भी अप्रसन्न हो गया था, उस समय यह स्नेह बरसाना संदीप को जहर जैसा लगा। उसका यह भाव अभिनय जैसा लगा।

संदीप ने बस इतना ही कहा, "मैं अभी तुरंत ऑफिस से आया हूं, इसलिए बहुत थकावट महसूस हो रही है—"

तपेश गांगुली बोल पड़ा, "थकावट महसूस करना तो स्वाभाविक ही है भाई। यह कोई रेल की नौकरी नहीं कि काम किए बगैर भी तनख्वाह मिल जाए। बैंक की नौकरी में कम खटना पड़ता है? मेरा एक दोस्त बैंक में काम करता है। उससे सुनने को मिला है, रात-भर नींद के दरमियान हिसाब-किताब करता रहता है। बहरहाल, तुम भई, गरीब आदमी के लड़के हो, दूसरे के घर में पड़े हुए हो, खटने से डरोगे तो तुम्हारा काम कैसे चलेगा? यही तो तुम लोगों के खटने की उम्र है। अभी जी-जान से खटते जाओ, देखोगे किसी दिन मैनेजर बन जाओगे। तुम लोगों का कौन-सा बैंक है? बैंक का नाम क्या है?"

संदीप ने बैंक का नाम बताया, "नेशनल यूनियन बैंक।"

तपेश गांगुली बोला, "ओह, बहुत ही अच्छा बैंक है भाई। एक दफा किसी तरह मैनेजर हो जाओगे तो देखोगे, दोनों हाथ में रुपये बरसेंगे, रुपयों का बरसना शुरू हो जाएगा।"

संदीप को तब भी कुछ बोलते न देखकर तपेश गांगुली बोला, "क्यों भाई, मेरी बात पर विश्वास नहीं हो रहा? विश्वास करोगे ही क्यों? गरीब की बात बासी हो जाएगी तब उसका नतीजा देखने को मिलेगा—"

उसके बाद जैसे अचानक कोई बात याद आ गई हो, इस अंदाज से कहा, "अच्छा भाई, आज तुम लोगों के सौम्य बाबू के कलकत्ता पहुंचने की बात थी न?"

संदीप अब समझा कि तपेश गांगुली आज ही उसके पास क्यों आया है। पूछा, "आपसे किसने कहा ?"

"हां-हां, इस बंदे को सारी खबरों का पता रहता है भाई। बाहर से बेवकूफ जैसा दिखने पर क्या होगा, बंदे को सारी बातों का पता रहता है। सच बताओ, सौम्य बाबू के आने की बात थी या नहीं ?"

बात खत्म होने के पहले ही मल्लिक चाचा घबराए हुए कमरे के अंदर आए। आते ही तपेश गांगुली को पहचान लिया। बोले, "क्या बात है, यहां किस मकसद से आए हैं ?"

तपेश गांगुली के घर पर मल्लिक चाचा बहुत बार जा चुके हैं, उसे माहवारी वेतन देने की खातिर। लेकिन तपेश गांगुली कैसा धूर्त आदमी है, यह जानना उनके लिए बाकी नहीं है।

तपेश गांगुली कुछ जवाब दे कि उसके पहले ही मल्लिक चाचा संदीप से बोले, "तुम्हें एक काम करना है संदीप। एक बार दवा की दुकान पर जाना है।"

तपेश गांगुली समझ गया कि दोनों उसको नजरअंदाज करना चाहते हैं। दोनों के चेहरे पर एक प्रकार की विरक्ति का आभास है। यह भी समझ गया कि वह यहां के लिए एक अवांछित व्यक्ति है।

एकाएक बोला, "लगता है अभी आप लोग बहुत ही व्यस्त हैं मल्लिकजी।"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, आप तो सुन ही चुके कि हमारी दादी मां अभी बहुत बीमार हैं। अभी हमें किसी से बातचीत करने की फुर्सत नहीं है—"

"अच्छा ठीक है, अभी चलता हूं। बाद में किसी दिन आऊंगा।"

यह कहकर तपेश गांगुली उठकर खड़ा हुआ। उसके बाद जल्दी-जल्दी डग भरता हुआ एकबारगी सदर गेट पार कर बिडन स्ट्रीट चला आया। ऑफिस से दो घंटा पहले निकला था। सोचा था, भाभी की समधिन के घर जाने से कम-से-कम एक प्याली चाय तो अवश्य ही मिलेगी। न, उन लोगों का कोई दोष नहीं है। आजकल सारी दुनिया ही इस तरह की हो गई है। आजकल हर कोई एक-दूसरे की अनदेखी किए चलता है। इस जमाने में कोई किसी की भलाई बरदाश्त नहीं कर पाता। हालांकि तपेश गांगुली किसी का कुछ बिगाड़ने नहीं जाता। जिंदगी में किसी की हानि नहीं की है उसने। तुम्हारी लड़की से बड़े आदमी के पोते की शादी होने जा रही है, यह तो अच्छी बात है। इसके कारण मुझे भी खुशी है। मैं पात्री का चाचा हूं। पात्री मेरी सगी भतीजी है। उसकी शादी होने से मुझे खुशी नहीं होगी ? लेकिन कोई समझता नहीं। दुनिया के तमाम लोग जैसे स्वार्थी हो गए हैं। सबको मालूम है कि यह आदमी ऑफिस से सीधे इस मकान में आया है, कम-से-कम एक प्याली चाय तो उसे दो। तुम लोगों के पास इतने रुपये हैं, लोग-बाग लूटकर जश्न मना रहे हैं। ऐसे में एक ब्राह्मण का लड़का यदि एक प्याली चाय पीना चाहता है तो तुम लोगों की कौन-सी हानि हो जाएगी ? दरअसल, बड़ा होने से क्या होगा, नवरी कंजूस हैं ये लोग। भाभी सोचती है, उनकी लड़की की शादी बड़े आदमी के घर में होने जा रही है, इसलिए रानी जैसा प्यार मिलेगा उसको। जब इस घर में आने के बाद भूख लगने पर खाना नहीं मिलेगा तब समझेगी कि बड़े आदमी के लड़के से शादी करने में क्या मजा मिलता है।

तच, उस समय चाय के अभाव में तपेश गांगुली का सिर दर्द से टीसने लगा न वक्त पर चाय न मिलने से ऐसा ही होता है।

सहसा उसकी दृष्टि चाय की एक दुकान पर पड़ी। और तत्क्षण उसके अंदर ती तपेश गांगुली सगा गया।

वोला, "चाय है भाई ?" दुकान में तव और दो-चार चाय पी रहे थे। एक ली कुर्सी देखकर तपेश गांगुली उस पर वैठ गया।

थोड़ी देर वाद एक छोकरा एक कप चाय ले आया। चाय की शक्ल देखते ही श गांगुली का दिमाग गरम हो गया।

वोला, "यह कैसी चाय ले आए ? लिकर इतना कड़ा क्यों है ? थोड़ा-सा और ध डाल दो। इतनी कड़ी चाय पीकर मरने जाऊं ?"

छोकरा करे ही क्या। चाय में थोड़ा-सा और दूध डाल दिया।

"अहा-हा ! क्या किया ? क्या किया तुमने ? उतना सारा दूध क्यों डाल दिया ? यह क्या कोई चाय है ? यह तो पंजावियों की चाय हो गई !" उसके वाद प्याली से घूंट लेते हुए वोला, "इसमें थोड़ा-सा और लिकर डाल दो भाई—"

लाचार होकर छोकरे को लिकर लाकर देना पड़ा। लिकर देने के वाद तपेश गांगुली ने एक वार चखकर देखा।

वोला, "उहुं, हुआ नहीं, चीनी कम हो गई। थोड़ी-सी और चीनी ले आओ भाई—"

आखिर में छोकरे को फिर चीनी लाने के लिए जाना पड़ा। चीनी को चाय में मिलाकर तपेश गांगुली ने फिर से चखकर देखा।

छोकरा तव भी खड़ा था। वोला, "अव ठीक हुआ न वावू ?"

इस पर चाय का घूंट लेकर तपेश गांगुली खुश हो गया। एक घूंट लेते ही सिर का टीसना कम हो गया।

वोला, "हां ठीक है।"

उसके वाद पूरी चाय पीने के वाद दिमाग जव ठंडा हुआ तो उठकर खड़ा हुआ। जो आदमी दुकान का मालिक है वह रुपये-पैसे का हिसाव कर रहा था। उसके पास जाकर तपेश गांगुली ने पचीस पैसे का एक सिक्का रख दिया।

वगल में ही एक तश्तरी में ढेर सारी सौंफ पड़ी थी। तपेश गांगुली ने तश्तरी में रखी पूरी सौंफ को मुंह में डालकर चवाना शुरू कर दिया। चवाते हुए वाहर आ रहा था।

दुकानदार ने पूछा, "ओ भाई, सुनिए-सुनिए—"

तपेश गांगुली मुड़कर वोला, "क्या हुआ ?"

"आपने पचीस पैसे ही क्यों दिए ?"

तपेश गांगुली जैसे आकाश से गिर पड़ा हो उसी अंदाज़ से वोला, "क्यों, एक प्याली चाय का दाम तो हमेशा पचीस पैसा ही दिया करता हूं—"

दुकानदार वोला, "नहीं-नहीं, और पचीस नया पैसा देना होगा।"

"क्यों ? सौंफ की कीमत ? आप लोग सौंफ की कीमत लेते हैं क्या ? सौंफ तो हर कोई फ्री ही देता है—"

दुकानदार ने कहा, "सौंफ की कीमत नहीं। आजकल चाय की कीमत वढ़क

पचास नया पैसा हो गया है। आप कहां रहते हैं?"

"और कहां रहूंगा, कलकत्ता में ही रहता हूं।"

"कलकत्ता की दुकान में आपने इसके पहले चाय खरीदकर पी है?"

"क्यों नहीं पिऊंगा? अपने रेल-ऑफिस के कैंटीन में हर रोज चाय पीता हूं। हमेशा पचीस नया पैसा ही कीमत देता हूं।"

दुकानदार बोला, "अपने कैंटीन की बात रहने दें। बाहर की दुकान में सभी पचास नया पैसा दाम देते हैं। पूरी रकम चुकाए बगैर आपको जाने नहीं दूंगा।"

तपेश गांगुली गुस्सा गया। बोला, "इसका मतलब?"

दुकानदार बोला, "आप सीधी भाषा भी नहीं समझते? पूरी कीमत चुकाए बगैर आपको यहां से जाने नहीं दूंगा। वरना पुलिस को बुला लूंगा, कहे देता हूं—"

तपेश गांगुली ने दुकान के दूसरे-दूसरे ग्राहकों की ओर देखकर कहा, "देख रहे हैं साहब, आप लोग देख रहे हैं? आप लोगों ने दुकानदार की बात सुनी तो? मुझे अकेला पाकर दुकानदार किस तरह धमकियां दे रहा है?"

उसके बाद दुकानदार की ओर देखकर बोला, "जानते हैं, मैं ग्रेजुएट हूं। कलकत्ता यूनिवर्सिटी से फर्स्ट डिवीजन में बी० ए० पास किया है। मुझे ऐसा-वैसा आदमी नहीं समझिए। मेरे मैले कुरते-पैंट को देखकर आप सोच रहे हैं कि मैं एक गया-गुजरा आदमी हूं? मेरी भी सोसायटी में कोई प्रेस्टिज है। पुलिस का नाम लेकर मुझे डराने की कोशिश मत करें।"

और-और ग्राहक क्या बोलें! उस समय वे चाय की चुस्कियां लेकर मजा ले रहे थे।

अब दुकानदार उठकर खड़ा हो गया। नाम लेकर एक नौकर को पुकारा, "कार्तिक, दरवाजा बंद कर दो तो, देखूं, यह आदमी क्या करता है। दरवाजा बंद कर दे—"

तपेश गांगुली अब और ज्यादा खफा हो गया। बोला, "क्या? मुझे यहां रोक कर रखिएगा?"

"हां, रोक रखूंगा। बाकी पैसा चुकाए बगैर आप यहां से जा नहीं सकते।"

"इतना बड़बोलापन?"

तपेश गांगुली अब आपे से बाहर हो गया। बोला, "खबरदार, मुझसे छेड़-खानी मत कीजिए। मैं अभी पुलिस बुलाकर आपको ऐरेस्ट करा सकता हूं। मेरी भतीजी का पति कौन है, जानते हैं?"

तपेश गांगुली ने यह सवाल कर खुद ही इसका उत्तर दिया, "मेरी भतीजी का पति आप लोगों के मुहल्ले की सैकसबी एंड कंपनी का डाइरेक्टर एम० पी० मुखर्जी है, इसका पता है आपको?"

इतनी देर के बाद दुकानदार का दिमाग जरा ठंडा हुआ। उसके चेहरे की तम-तमाहट दूर हो गई।

पूछा, "आपने क्या नाम बताया?"

तपेश गांगुली ने कहा, "सौम्यपद मुखर्जी, सैक्सबी कंपनी का डाइरेक्टर। आज ही विलायत से लौटकर आया है। वह मेरी भतीजी का पति है। मेरे बड़े

भाई का दामाद—मालूम है?"

दुकान के दूसरे-दूसरे ग्राहक जो अब तक मजा ले रहे हैं, उन लोगों की आंखों में भी जैसे श्रद्धा का एक भाव उभर आया। दुकानदार से लेकर सभी ग्राहकों ने मुखर्जी बाबुओं के आडंबर, ऐश्वर्य और खानदान को देखा है। वे लोग उस मकान के वंशवृक्ष, जन्मपत्री, हैसियत और प्रतिष्ठा से भली-भांति परिचित हैं। यही तो हाल ही में मकान में रंग-रोगन लगाया गया है। वे चाहें तो अभी मुहल्ले के सैकड़ों बेरोजगार नौजवानों को नौकरी दे सकते हैं।

ग्राहकों में से एक नौजवान ने खड़े होकर कहा, "अरे, उन लोगों की बात छोड़िए जनाब, उनके लिए पचास पैसा हाथ की मैल के बराबर है। छोड़ दीजिए—"

दुकानदार इस बीच शांत हो गया था। वह फिर से अपनी कुर्सी पर बैठ गया।

नौजवान ग्राहक तो तपेश गांगुली की ओर आकर्षित हो गए थे। बोले, "और थोड़ी देर बैठिए भाई साहब। एक प्याली चाय और पीजिए।"

तपेश गांगुली बोला, "नहीं भाई, इतनी रद्दी चाय मैंने ज़िंदगी में कभी नहीं पी थी। एक प्याली चाय पीते ही मेरा जी मिचला रहा है।"

"खैर, चाय पीजिए या न पीजिए, लेकिन अपनी भतीजी के पति की फैक्टरी में हमारी नौकरी लगा दीजिए।"

तपेश गांगुली ने कहा, "आप लोगों को कब नौकरी चाहिए?"

"आज मिल जाए तो आज ही···"

तपेश गांगुली ने पूछा, "आप लोगों का क्वालिफिकेशन क्या है? आप लोग ग्रेजुएट हैं?"

"नहीं सर, अंडर ग्रेजुएट।"

तपेश गांगुली बोला, "ठीक है, तुम लोग मेरे पास एक-एक आवेदन-पत्र दे दो। मैं तुम लोगों में से सभी को नौकरी दूंगा—मेरे कहते ही तुम सबों को नौकरी मिल जाएगी।"

"आप कहां मिलेंगे?"

तपेश गांगुली बोला, "अपने घर पर···"

यह कहकर अपनी बात को सुधारा, "नहीं-नहीं, तुम लोग मेरे घर पर जाने का कष्ट क्यों उठाओगे? मैं ही किसी दिन तुम लोगों का आवेदन-पत्र लेकर अपनी भतीजी के पति को दे दूंगा। चलता हूं—"

यह कहकर सड़क पर उतर आया। उस समय शाम का खासा गहरा अंधेरा फैल चुका था। लोगों की बेहद भीड़ है। तपेश गांगुली लोगों की उस भीड़-भाड़ में खो गया। कितनी मुसीबत में फंस गया था! और थोड़ी-सी देर हो जाती तो टेंट से पचीस और नए पैसे निकल जाते। ईश्वर ने बचा दिया। तभी उसे रसेल स्ट्रीट की भाभी की याद आ गई। तपेश गांगुली ने उसी ओर कदम बढ़ाना शुरू कर दिया। वहां अभी जाने से चाय के साथ ही खाने की कुछ सामग्री भी मिल जाएगी।

उस दिन संदीप ने सोचा नहीं था कि ऐसा होगा। इस तरह सारा कुछ उलट-पुलट जाएगा। आदमी सोचता है कुछ, और होता है कुछ और। यह बात कितनी पुरानी है फिर भी कितनी नई!

जिस दिन संदीप मां को वेतन का पैसा देने गया था, उस दिन भी क्या उसने सोचा था कि ऐसा कांड होगा?

लेकिन रात का वह सपना?

याद है, उस दिन संदीप ने मां से कहा था, "मां, अबसे मैं बेड़ापोता में ही तुम्हारे पास रहूंगा। यहीं से मैं डेली-पैसेंजरी करूंगा।"

मां ने पूछा था, "क्यों रे, कलकत्ता में तू जिस घर में रहता है उसने कौन-सा दोष किया?"

संदीप ने कहा था, "उस मकान ने कोई दोष नहीं किया है मां। लेकिन अब मैं नौकरी करता हूं, अब वहां रहना अच्छा नहीं दिखता—"

उसके बाद आने के वक्त बोला था, "मा मैं यदि यहां आया तो मेरे साथ और दो जने आएंगे।"

मां उसकी बात सुनकर अवाक् हो गई थी। कहा था, "और दो जने? और दो जने कौन हैं?"

उस बात का जवाब देना नहीं हो सका था। उसके पहले ही उसकी नींद टूट गई थी। दरअसल वह मौसीजी और विशाखा की बाबत ही कहना चाहता था।

लेकिन सपना इस तरह हकीकत में बदल जाएगा, उसकी जानकारी क्या उसे उस समय थी? सपेश गांगुली के चले जाने के बाद ही उसे असली घटना का पता चला। मल्लिक चाचा ने ही उसे असली बात बताई:

दादी मां की तबीयत क्यों खराब हुई और उनके लिए डाक्टर को क्यों बुलाया गया, उस वक्त उसका पता नहीं चल सका था।

वह एक बहुत ही विपत्तिजनक और अस्वस्तिकर घटना थी। पहले से किसी ने इसकी कल्पना नहीं की थी।

उस दिन सौम्यपद को लाने सभी दमदम हवाई अड्डे पर गए हुए थे। बालीगंज से मिस्टर चटर्जी और उनके लड़के सुधीर गए थे और बेलुड़ से मुक्तिपद मुखर्जी। मुक्तिपद सौम्य की अगवानी करने के ख्याल से न्यू मार्केट से कीमती फूलों का गजरा ले गए थे।

हवाई जहाज साढ़े दस बजे पहुंचने की बात थी। लेकिन दरियाफ्त करने पर पता चला, हवाई जहाज एक घंटा लेट है।

यानी साढ़े ग्यारह बजे पहुंचेगा। उसके बाद कस्टम की चेकिंग चलेगी। उसके बाद बैगेज डिलेवरी का काम होगा। उसमें भी बहुत वक्त लग जाएगा।

सो चाहे हो, मिस्टर चटर्जी बोले, "मुझे भी फूलों का एक हार ले आना चाहिए था मिस्टर मुखर्जी। बिलकुल भूल ही गया—"

मिस्टर मुखर्जी ने कहा, "मुझे भी याद नहीं था, लेकिन मेरी मां ने फोन करके मुझे याद दिला दिया।"

"बाइ द वे, आपकी मां आजकल कैसी हैं?"

"बिलकुल अच्छी हैं। इतने दिनों से पोते के लिए मन ही मन इंतजार कर

रही थी। अब पोते की शादी हो जाए तो उसकी साध पूरी हो जाएगी। मेरी मां रात-दिन सौम्य के बारे में ही सोचती रहती है। उसे जीवन में बहुत शोक-उत्ताप का अनुभव करना पड़ा है, बहुत दुख-कष्ट झेलना पड़ा है। मेरे पिताजी का स्वर्गवास हुआ था एट द एज ऑफ फोर्टी फाइव और मेरे भैया का पचीस साल की उम्र में। हम सभी अल्पायु हैं। मुझे भी जिन झंझटों का मुकाबला करना पड़ रहा है, इससे लगता है कि मैं भी ज्यादा दिनों तक नहीं बचूंगा। एकमात्र मेरी मां ही है जो मुंह बंद किए सारा कुछ बरदाश्त करती आ रही है। मालूम नहीं, और कितने दिनों तक वह जीवित रहेगी।"

मिस्टर चटर्जी बोले, "अबकी विनीता की शादी हो जाए तो देखिएगा कि विनीता आपकी मां को बहुत दिनों तक जीवित रखेगी। मैं इसलिए नहीं कह रहा हूं कि वह मेरी लड़की है मिस्टर मुखर्जी, मैंने गौर किया है, दूसरे की सेवा करना उसके लिए एक 'रिलिजन' जैसा है।"

पीछे थोड़े-से फासले पर खड़े होकर मल्लिक चाचा सब सुन रहे थे।

एकाएक लाउड स्पीकर से घोषणा की गई कि प्लेन पहुंच गया है। थोड़ी देर बाद ही रनवे पर उतरेगा। और हुआ भी यही। लाउंज में जितने आदमी थे सभी उठकर सामने की तरफ बढ़ गए। सभी लोग सगे-संबंधी और मित्रों का स्वागत-अभिनंदन करने आए हैं। रनवे में चक्कर लगाता हुआ हवाई जहाज़ एक जगह आकर ठिठककर खड़ा हो गया। एयरपोर्ट के स्टाफ गाड़ी लेकर करीब जाकर हाजिर हो गए। सामने के दरवाजे पर सीढ़ी लगाई गई। एक-एक कर पैसेंजर उतरने लगे। उन लोगों के बीच सौम्यपद कहां है?

हां, अब सौम्यपद पर नज़र पड़ी। वह धीरे-धीरे सीढ़ियां उतर रहा है। उसके पीछे एक और महिला है। उसके पीछे बहुत सारे आदमी हैं। सभी एक-एक कर उतर रहे हैं। सामने खड़ी एक बस उन लोगों को लेकर कस्टम एनक्लोजर के सामने आकर खड़ी हो गई। सभी पैसेंजर उतरकर इमिग्रेशन के लिए अन्दर घुस गए। वहां पैसेंजरों के पासपोर्ट-विसा वगैरह की चेकिंग की जाएगी। तमाम सूटकेसों को खोलकर देखा जाएगा।

"वही सौम्य आ रहा है, एक मोटी महिला से बातें कर रहा है—"

मिस्टर चटर्जी ने कहा, "कहां?"

"वही तो किसी से बातें कर रहा है—"

अब मिस्टर चटर्जी ने देखा। मिस्टर चटर्जी को अभी पहली दफा सौम्य को देखने का मौका मिला है। बोले, "वेरी हैंडसम बॉय, मेरी विनीता के साथ बहुत फबेगा।"

सब लोग एनक्लोजर के बाहर खड़े हैं। एक दूसरे का स्वागत-सत्कार और अभिनंदन कर रहा है। मुक्तिपद ने हाथ उठाया। सौम्य की भी नज़र अपने चाचा पर पड़ी है। उसने भी हाथ उठाया। उसके बाद भीड़ ठेलकर एकदम से रेलिंग के पास चला आया। मुक्तिपद ने सौम्य के गले में गजरा डाल दिया।

"रास्ते में कोई तकलीफ नहीं हुई थी न?"

"नहीं, कष्ट किस चीज का होगा?"

"आपके साथ परिचय करा देता हूं। आप मिस्टर चटर्जी, द फमस इंडस्ट्रिय-

लिस्ट ऑफ़ इंडिया, और आप हैं मिस्टर चटर्जी के सुपुत्र सुधीर चटर्जी—"

सौम्यपद ने भी उस मोटी महिला से परिचय करा दिया, "आप हैं मेरी मिसेज —मिसेज रीटा मुखर्जी—"

महिला ने हैंडशेक के लिए हाथ बढ़ा दिया, लेकिन उसके पहले ही सभी लोगों के सिर पर बिना बादल के वज्रपात हो गया। सभी स्तंभित हैं। स्तंभित और विभ्रांत। सभी निस्पंद पुतले के मानिंद स्थिर और निस्पंद !!!

सबकुछ सुनने के बाद संदीप स्तंभित हो उठा। बोला, "उसके बाद ? उसके बाद क्या हुआ ?"

मल्लिक चाचा बोले, "उस वक्त सभी कहां अदृश्य हो गए, मालूम नहीं। मैं सौम्यपद बाबू और उनकी पत्नी को घर ले आया। दादी मां अत्यंत उत्सुकता के साथ इंतजार कर रही थीं। यह बात सुनते ही वे अचानक धड़ाम से फर्श पर गिर पड़ी। डाक्टर को बुलवाया था। उन्होंने जांच करने के बाद बताया, दिल का दौरा पड़ा है। जाओ-जाओ, अभी तुरंत तुम इन दवाओं को खरीदकर ले आओ। उन्हें घर पर रखना शायद ठीक नहीं रहेगा, नर्सिंग होम में भर्ती कराना होगा।"

"और सौम्य बाबू ?"

मल्लिक चाचा बोले, "सौम्य बाबू और उनकी मेमसाहब बीवी अभी अपने कमरे में हैं। मुझे एक बोतल व्हिस्की लाने कहा है। गिरिधारी की मारफत मैंने व्हिस्की मंगा दी है। ड्राइवर अब चला गया है। जाओ, तुम दौड़कर दवाइयां ले आओ।"

सदीप नौकरी करता था तो जरूर लेकिन उसका मन दो जगहों पर टिका रहता था। एक जगह है बेड़ापोता मां के पास और दूसरा है रसेल स्ट्रीट का मकान। उसका दिल रसेल स्ट्रीट के मकान में टिका रहता और दिमाग बेड़ापोता में।

बैंक तो उसका कार्यस्थल है। कार्यस्थल का मानी जीविका।

लेकिन जीवन और जीविका क्या एक ही है ? जीविका के कारण वहा जाना है इसीलिए जाता था, वरना वहा के प्रति कोई आकर्षण नहीं था उसके मन में।

परेश दा कहते, "क्यों जी, दिन-दिन मरियल जैसे क्यों होते जा रहे हो ? तुम्हें क्या हुआ है ?"

संदीप क्या कहे ! अगर असली कारण ही बता दे तो क्या कोई समझ पाएगा ? बैंक के तमाम लोग मजे में दिन बिताते। अखबार पढ़ते, राजनीति के बारे में चर्चा करते। या फिर कभी फुटबॉल या क्रिकेट के बारे में बातचीत करते। उन लोगों के लिए चर्चा करने लायक विषय का कोई अभाव नहीं रहता। जिस दिन चर्चा करने लायक कोई खबर नहीं होती, उस दिन उनके चेहरे बुझे-बुझे जैसे दिखते। किसी को गाली-गलौज दिए बगैर या किसी की निंदा किए बगैर सबको ऐसा महसूस होता जैसे उनके मन में खालीपन आ गया है। सभी यही उम्मीद करते कि दुनिया में कुछ न कुछ होता रहे। सड़क पर कोई निरीह आदमी गाड़ी से दबकर मर जाए, किसी देश में भूकंप होने से कुछ लोग मर जाएं या दिल्ली के किसी मिनिस्टर का

पतन हो, किसी को कैबिनेट से निकाल दिया जाए। चाहे और कुछ हो या न हो, कम से कम कलकत्ता में चंद घंटों तक लोड-शेडिंग ही चलती रहे। इसी की चर्चा कर चंद लमहों तक सरकार की कमोवेश भर्त्सना करने का सुयोग तो मिल ही जाएगा।

बंगाली का लड़का होकर नौकरी पाने के बावजूद जिसे सुख नहीं है, उसे निश्चय ही कोई न कोई व्याधि है। वरना हम सभी जब कि कैंटीन जाकर चॉप-कैटलेट खाकर और चाय की चुस्कियां लेकर आराम से मौज-मस्ती मनाते हैं तो तुम मुंह लटकाकर अलग क्यों रहोगे? हम लोग जब कि काम की अवहेलना कर हर महीने नियम से वेतन पा रहे हैं तो तुम मुंह बन्द कर, मन लगाकर काम करने में तल्लीन क्यों रहते हो? तुम ज़रूर ही हमें हीन समझते हो और नीची निगाह से देखते हो।

लेकिन कौन समझेगा कि संदीप के मन में कितने जोरों से आंधी-तूफान चल रहा है? आंधी-तूफान जिस प्रकार आकाश-पाताल, विश्व-ब्रह्माण्ड को झकझोर कर आदमी को संकट में डाल देता है, संदीप के मन में अभी वैसी ही हलचल मची हुई है। जो लोग माहवारी वेतन को ही परमार्थ समझकर मस्ती से दिन गुजारने में ही अपने आपको सुखी समझते हैं, उन्हें उसके दुख का अहसास कैसे होगा? जो लोग भारत-पाकिस्तान के बीच चलनेवाले क्रिकेट के खेल की हार-जीत में अपने आपको उलझाए रखकर उसे परितृप्ति की पराकाष्ठा समझते हैं और निश्चितता के साथ उसका उपभोग करते हैं, वे संदीप को अनुकंपा का पात्र मानेंगे ही।

परेश दा कहते, "तुम शादी कर लो भाई, तुम्हारा तमाम 'मेलेन्कोलिआ' दूर हो जाएगा।"

मल्लिक जी सौम्य बाबू के कलकत्ता पहुंचने के बाद से ही परेशान रह रहे हैं। डाक्टर और दादी मां को लेकर व्यस्तता में डूबे रहते हैं। सिर्फ मल्लिक जी के साथ ही यह बात नहीं है, दादी मां की खास महरी बिन्दु की भी यही हालत है।

और बिन्दु ही क्यों, कौन ऐसा है जो व्यस्त न हो। दो-मंज़िले की दाई कालीदासी, एक-मंज़िले की फुल्लरा, सिंहवाहिनी ठाकुरबाड़ी की नौकरानी कामिनी, तीन-मंज़िले की महरी सुधा सबको ऐसा लगता है जैसे बिना बादल के उन पर बिजली गिर पड़ी है।

किसी दिन दादी मां इस घर की सर्वेसर्वा थीं। कौन कहां नल का पानी बर्बाद कर रहा है, कहां कौन बेवजह रोशनी जलाकर गृहस्थ-घर का पैसा बर्बाद कर रहा है, यह सब देखनेवाली जो मालकिन थी, उनकी देखरेख करने के प्रति आज सभी निरासक्त हैं। रात नौ बजे सदर का दरवाज़ा न बंद करने पर भी आज गिरिधारी को कुछ कहनेवाला कोई नहीं है। इसकी ताकीद करनेवाला कोई नहीं है कि— "गिरिधारी, नौ बज गए हैं, गेट बंद कर दो।"

सच, बिडन स्ट्रीट के बारह बटे ए नंबर भवन के नियमों का सिलसिला हमेशा-हमेशा के लिए नष्ट हो गया है। जिसे जितनी मर्जी हो कर्म-कुकर्म करे, कोई कुछ नहीं बोलेगा। मुखर्जी वंश के आदिपुरुष देवीपद के द्वारा निर्मित संसार जैसे एकाएक इतने दिनों के बाद अचल हो गया है।

संदीप भी चिन्ताग्रस्त हो गया था। मल्लिक चाचा से मुलाकात होते ही

पूछता, "दादी माँ अब कैसी है चाचाजी ?"

मल्लिक चाचा उतरा हुआ चेहरा लेकर जवाब देते, "अच्छी नहीं है।"

इससे ज्यादा जवाब देने का मल्लिक चाचा के पास वक्त भी नहीं रह
कभी हिसाब लिखने बैठ जाते। उसके बाद तीनमंजिले पर चले जाते दादी
के पास। कभी-कभी मंझले बाबू आते और माँ के पास आकर कुछ क्षण बैठ
दादी माँ म्लान दृष्टि से अपने बेटे की ओर ताकतीं।

मुक्तिपद पूछते, "कैसी हो माँ ?"

दादी माँ निस्पृह दृष्टि से लड़के के चेहरे पर आँखें टिका देतीं। मुक्तिपद
सचमुच ही बहुत बुरी हालत से गुजर रहे हैं। दुबारा पूछते, "अभी कैसी हो माँ

दादी माँ सिर हिलातीं। उन्हें बात करने में तकलीफ होती। व्यथित स्व
कहतीं, "मुन्ना कहाँ है ?"

आश्चर्य की बात है! जिस मुन्ना के कारण दादी माँ इतनी तकलीफ
उसी को देखने के प्रति दादी माँ के आग्रह की जैसे कोई इयत्ता न हो। मुन्ना
शायद घर में नहीं है। माँ को सांत्वना देने के ख्याल से ही मुक्तिपद कहते, "
अभी अपने कमरे में सोया हुआ है—"

इतनी देर तक सौम्य क्यों सोया रहता है, यह प्रश्न मन में जगने पर भी
माँ उसे अपने मुँह से जाहिर नहीं कर पातीं। सिर्फ आँखों से झर-झर आँ
धारा बहती रहती। मुक्तिपद अब ज्यादा देर तक नहीं बैठते। बैठने का वक्त
शायद उनके पास नहीं रहता।

किसी देश, जाति या घर-गृहस्थी के उत्थान-पतन का नियम एक ही जैसा
है। कोई गाड़ी चलते-चलते एकाएक रुक जाती है। ऐसी हालत में गाड़ी
चालक गाड़ी से उतर उसके कल-कब्जों की जाँच-पड़ताल कर उसकी मर
करने लगता है।

लेकिन इस मुखर्जी-भवन का रथ उस दिन से जिसे अपना लक्ष्य बनाकर
लगा वह बड़ा ही जटिल था। मुखर्जी-भवन के इतिहास में इसके पहले कभी
तरह की घटना घटित नहीं हुई थी। इसके पहले देवीपद मुखर्जी व्यवसाय के
लिए में विदेश जा चुके हैं। पहले भी धन कमाने की चेष्टा की थी। पहले
विदेश-यात्रा की समाप्ति पर गौरव के साथ देश लौट आए हैं। आने पर हर
में उन पर लक्ष्मी की कृपा बरसी है। साथ ही सैंतसवी मुखर्जी कम्पनी की भी
में उठान आया है।

लन्दन हवाई अड्डे पर पहुँचते ही रथ के पहिए मानो रुक गए। लेकिन
में काम नहीं चलेगा। अपने मन की वासना की पूर्ति के लिए सौम्यपद रीटा
करने के लिए भारत आया था। रीटा ने इंडिया का नाम अपने माँ-बाप से
था। सुना था, भारत धनी देश है। वहाँ वह मिसेज मुखर्जी बनकर जाएगी तो
उसके लिए सुख की बात होगी।

विन्टर पार्टी के दौरान एक पब में बातचीत चल रही थी। सौम्य भी
घूमने के लिए वहाँ गया हुआ था। घटना चक्र से परिचय हुआ। वहीं

पूछता, "दादी मां अब कैसी हैं चाचाजी ?"

मल्लिक चाचा उतरा हुआ चेहरा लेकर जवाब देते, "अच्छी नहीं हैं।"

इससे ज्यादा जवाब देने का मल्लिक चाचा के पास वक्त भी नहीं रहता। कभी हिसाब लिखने बैठ जाते। उसके बाद तीन-मंजिले पर चले जाते दादी मां के पास। कभी-कभी मंझले बाबू आते और मां के पास जाकर कुछ क्षण बैठते। दादी मा म्लान दृष्टि से अपने बेटे की ओर ताकती।

मुक्तिपद पूछते, "कैसी हो मां ?"

दादी मा निस्पृह दृष्टि से लड़के के चेहरे पर आंखें टिका देती। मुक्तिपद अभी सचमुच ही बहुत बुरी हालत से गुजर रहे हैं। दुबारा पूछते, "अभी कैसी हो मां ?"

दादी मा सिर हिलाती। उन्हें बात करने में तकलीफ होती। व्यथित स्वर में कहतीं, "मुन्ना कहां है ?"

आश्चर्य की बात है! जिस मुन्ना के कारण दादी मां इतनी तकलीफ में हैं, उसी को देखने के प्रति दादी मा के आग्रह की जैसे कोई इयत्ता न हो। मुन्ना तब शायद घर में नही है। मां को सात्वना देने के खयाल मे ही मुक्तिपद कहते, "मुन्ना अभी अपने कमरे में सोया हुआ है—"

इतनी देर तक सौम्य क्यों सोया रहता है, यह प्रश्न मन में जगने पर भी दादी मां उसे अपने मुह से जाहिर नही कर पाती। सिर्फ आंखों से झर-झर आंसू की धारा बहती रहती। मुक्तिपद अब ज्यादा देर तक नही बैठते। बैठने का वक्त भी शायद उनके पास नही रहता।

किसी देश, जाति या घर-गृहस्थी के उत्थान-पतन का नियम एक ही जैसा होता है। कोई गाड़ी चलते-चलते एकाएक रुक जाती है। ऐसी हालत मे गाडी का चालक गाड़ी से उतर उसके कल-कब्जों की जाच-पड़ताल कर उसकी मरम्मत करने लगता है।

लेकिन इस मुखर्जी-भवन का रथ उस दिन से जिसे अपना लक्ष्य बनाकर चलने लगा वह बड़ा ही जटिल था। मुखर्जी-भवन के इतिहास में इसके पहले कभी इस तरह की घटना घटित नही हुई थी। इसके पहले देवीपद मुखर्जी व्यवसाय के सिल-सिले मे विदेश जा चुके हैं। पहले भी धन कमाने की चेष्टा की थी। पहले भी विदेश-यात्रा की समाप्ति पर गौरव के साथ देश लौट आए हैं। आने पर हर तरफ से उन पर लक्ष्मी की कृपा बरसी है। साथ ही सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी की भी गति में उठान आया है।

दमदम हवाई अड्डे पर पहुचते ही रथ के पहिए मानो रुक गए। लेकिन रुकने से काम नहीं चलेगा। अपने मन की वासना की पूर्ति के लिए सौम्यपद रीटा को अपने साथ लिए भारत आया था। रीटा ने इंडिया का नाम अपने मां-बाप से सुना था। सुना था, भरत धनी देश है। वहा वह मिसेज मुखर्जी बनकर जाएगी तो यह उसके लिए फख्र की बात होगी।

बियर पीने के दौरान एक पब मे बातचीत चल रही थी। सौम्य भी वक्त गुजारने के लिए वहा गया हुआ था। घटना चक्र से परिचय हुआ। वही यह

दुर्घटना घटी।

सौम्य तब बियर पीकर बेहोशी की हालत में था। रीटा भी वहां समय बिताने के लिए गई थी।

नशे की झोंक में सौम्य ने पूछा था, "तुम इंडिया चलोगी ?"

उत्तर में रीटा ने और दो पेग व्हिस्की का ऑर्डर दिया था।

बोली थी, "तुम सचमुच मुझे इंडिया ले चलोगे ?"

सौम्यपद ने कहा था, "यह तो मेरे लिए एक 'ग्रेट प्लेजर' की बात होगी।"

उसके बाद वही हुआ था, जो होता है। ऑफिस का ज्यादातर काम अयंगर खुद ही कर लेता था। एक तरह से जूनियर मुखर्जी को वह कोई काम करने नहीं देता था। सौम्यपद कलकत्ता में जिस तरह रह रहा था, लंदन में भी वह उसी तरह से रह रहा था। कहा जा सकता है कि रात दस बजे के बाद ही उसके दिन की शुरूआत होती थी। कोई पहरेदार नहीं था, दादी मां नहीं थीं, गिरिधारी नहीं था कि उसे हर रोज घूस देनी पड़ती। कम्पनी की गाड़ी ले वह निरुद्देश्य यात्रा पर निकल पड़ता। उसके बाद किसी बार में एक बार बैठने-भर की देर थी। उस समय पॉकेट में पैसा हो तो तुम प्रिंस हो। खासकर इंडिया का प्रिंस। एक बार ऐसे लोग मिल जाते हैं तो शराब की दूकान का मालिक उन्हें छोड़ना नहीं चाहता। पेग-दर पेग समाप्त होते जाते हैं। और खास तौर से तब जबकि उसके साथ कोई औरत हो।

बार के मालिकों की तरफ से इसका भी पक्का इंतजाम रहता है। औरतें ग्राहक बनकर ही बार में बैठी रहती हैं और उन्हें जो मर्जी होती है, पीती हैं। इसके लिए उन्हें अपना पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। उन लोगों के लिए सारी चीजों की मुफ्त में व्यवस्था रहती है। लेकिन एक शर्त्त रहती है। मोटी रकम का ग्राहक जुटाना होगा। खासकर इंडियन या पाकिस्तानी ग्राहक। वे लोग पैसा उड़ाने के खयाल से लंदन आते हैं। उस तरह की कोई दमदार पार्टी पकड़ सको तो तुम लोगों की तनख्वाह बढ़ा देंगे।

रीटा कहती, "आज जरा सरदी है, थोड़ी-सी जॉनीवाकर पिलाओ।" सो सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी के पास रुपये की क्या कोई कमी है ? कितनी जॉनीवाकर पीनी है, पियो। जॉनीवाकर पियो, जिन पियो, ब्रांडी पियो, जो मर्जी हो पियो। तुम्हारे लिए मैं सारा पैसा लुटा दे सकता हूं।

इसी तरह रीटा से जान-पहचान हुई थी। रीटा उस होटल में नौकरी कर जो कुछ कमाती है, उसी से उसकी गृहस्थी चलती है। परिवार में केवल उसकी एक बूढ़ी मां है, और कोई नहीं।

"तुमसे शादी करूंगी तो मेरी बूढ़ी मां क्या खाएगी ? कैसे उसकी गृहस्थी चलेगी ?"

सौम्य कहता, "मैं इंडिया से हर महीने तुम्हारी मां के पास रुपये भेजा करूंगा।"

"कितने रुपये भेजोगे ?"

"तुम्हारी मां को जितने रुपये की जरूरत होगी, मैं भेज दिया करूंगा—हम लोग कलकत्ता के सबसे धनी [illegible] हम लोगों की [illegible]र्जी कम्पनी

कलकाटा की 'रिचेस्ट' कम्पनी है। मैं उसका डाइरेक्टर हूं। मुझे क्या रुपये की कोई कमी है?"

इसे ही अनर्थ कहा जाता है। अर्थ भी ज्यादातर लोगों के लिए अनर्थ होता है, इसकी जलती हुई मिसाल है यह सौम्यपद मुखर्जी। कलकत्ता के नाइट क्लब से लेकर लंदन के किसी संकरे गली-कूचे के बार को नहीं छोड़ा। रास्ते की किसी औरत को भी अछूता नहीं रहने दिया। लेकिन तब तक रीटा की आंखों का परदा हट चुका था। वह समझ गई कि जब तक वह इस बड़े आदमी के आवारे लड़के के समक्ष खुद को खुले तौर पर समर्पित नहीं कर देगी, वह हाथ से निकल जाएगा। इसीलिए रीटा एक दिन सौम्य को अपने घर मां के पास ले गई। ले जाकर सारी बातें खुलकर बताईं।

मां बूढ़ी औरत है। पति नम्बरी पियक्कड़ था। कोयले की खदान में काम करता था। लेकिन जो कुछ कमाता उसका ज्यादातर हिस्सा शराबखाने में खर्च कर देता। कभी-कभी रात में वह घर भी वापस नहीं आता। उस समय वह उस अंचल के हर शराबखाने में पति की तलाश करती। आखिर जब वह किसी जगह मिलता तो वह शराब के नशे में बेहोश पड़ा हुआ रहता था। मां को उस समय उसकी कमीज के पॉकेट में जो भी पैसे मिलते, सारा बटोर कर ले आती। उसके बाद रीटा जब बड़ी हुई, मां ने उसे होटल की नौकरी में भेजा। उस नौकरी में तनख्वाह भले ही न मिले, लेकिन कमीशन मिलता है। जिस दिन वह ज्यादा शराब की बिक्री करा देगी, उस दिन उसे ज्यादा कमीशन मिलेगा। यही सिल-सिला चल रहा था।

अचानक भाग्यवश मिस्टर मुखर्जी से उसकी जान-पहचान हो गई। उसी समय से रीटा के कमीशन की रकम रफ्ता-रफ्ता बढ़ती गई। तब से शराबखाने का मालिक जितना खुश रहने लगा, रीटा भी उतनी ही खुश रहने लगी। और रीटा की मां की खुशी का तो कोई ठिकाना नहीं।

बुढ़िया मेमसाहब सौम्य को देखकर बहुत खुश हुई। बोली, "मैं इंडिया के बारे में काफी कुछ सुन चुकी हूं। इंडिया इज ए ग्रेट कंट्री। आइ लव इंडियन्स—"

रीटा कहीं से चाय बनाकर ले आई और उसे पीने को दी। चाय पीने के दौरान रीटा की मां से जमकर बातचीत होने लगी। इंडिया की कहानी, उसके हसबैंड की कहानी, रीटा की कहानी—। गपशप करते-करते आधी रात बीत गई।

आखिर में बुढ़िया बोली, "लुक हियर ब्वॉय, रीटा इज माइ ऑनली अर्निंग मेम्बर। एक मात्र रीटा पर ही मुझे भरोसा है। वह रुपया कमाती है इसीलिए अब भी मुझे खाना नसीब हो रहा है। वह तुमसे शादी कर इंडिया चली जाएगी तो ऐसी हालत में मुझे खाना कहां मिलेगा? कौन मुझे खिलाएगा? यहां तो तुम लोगों का ऑफिस है। तुम यहां नहीं रह सकते?"

सौम्य बोला, "अपनी रीटा के लिए मैं सब कुछ कर सकता हूं। रीटा इज सो नाइस गर्ल। बट···"

"बट क्या?"

सौम्य बोला, "लेकिन मैं सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का एक डाइरेक्टर हूं और वहां मेरी ओल्ड ग्रैण्डमदर हैं। मैं नहीं जाऊंगा तो वे लोग मुझे प्रोपर्टी से 'डिसऑन'

कर देंगे। वहां नहीं जाऊंगा तो मुझे आमदनी कहां से होगी ? ऐसे हालात में मैं क्या खाऊंगा और रीटा को ही क्या खिलाऊंगा ?"

बुढ़िया बोली, "ऑल राइट, तुम्हारा कहना है कि तुम रीटा से शादी करना चाहते हो और रीटा भी तुमसे शादी करने को इच्छुक है। आइ डॉन्ट वान्ट टू वि एन ऑब्सटेकल इन योर वे। मैं तुम दोनों के बीच अड़चन डालना नहीं चाहती। मगर मेरी जैसी ओल्ड विडो के बारे में भी तो तुम लोगों को सोचना है। रीटा तुमसे शादी कर इंडिया चली जाएगी तो मुझे कौन खिलाएगा ?"

सौम्य बोला, "मैं आपको हर महीने रुपया भेजा करूंगा।"

"महीने में कितना भेजोगे ? मुझे तो हर महीने खाने-पीने और पहरावे के लिए कम से कम ढाई सौ पौंड खर्च करना पड़ता है।"

सौम्य बोला, "मैं यह रकम भेजा करूंगा।"

"और अगर न भेजो तो ?"

सौम्य बोला, "मैं बॉण्ड पर हस्ताक्षर कर जाऊंगा।"

बुढ़िया बोली, "तो फिर यहां सॉलिसिटर फर्म में जाकर उस शर्त्तनामे के बॉण्ड पर हस्ताक्षर करते जाओ। इसमें मेरा सॉलिसिटर गवाह रहेगा। विटनेस की हैसियत से उसका भी उस पर हस्ताक्षर रहेगा। डू यू एग्री ? तुम राजी हो ?"

सौम्य बोला, "येस मिसेज़ रिचार्ड, आइ एग्री—"

मिसेज़ रिचर्ड बोली, "और उसमें लिखा होना चाहिए कि शर्त्तनामे को भंग करने से मैं तुम्हारे खिलाफ कॉम्पेशेसन का मुकदमा दायर कर सकती हूं, हर्जाने की मांग कर सकती हूं। डू यू एग्री ? तुम राज़ी हो ?"

सौम्य बोला, "येस, मैं राज़ी हूं।"

अन्ततः यही हुआ। मिसेज़ रिचर्ड, मिस रिचर्ड और मिस्टर एस० मुखर्जी ने सॉलिसिटर के फर्म में जाकर शर्त्तनामे पर हस्ताक्षर कर दिए। गवाह की हैसियत मे सालिसिटर ने भी वहां हस्ताक्षर कर दिया। बदस्तूर कानूनी कार्रवाई। कहीं कोई धोखाधड़ी की गुंजाइश नहीं रही।

उसके बाद बाकी रह गया मैरेज रजिस्ट्रेशन। उसके लिए भी गवाह की ज़रूरत थी। सो पैसा फेंकने से इन सब मामलों के लिए गवाह की कोई कमी नहीं होती। कमी रही भी नहीं। बाकी बचा चर्च। सौम्य भले ही हिन्दू रहे मगर ईसाई होने से उसकी हानि ही क्या है ?

उसके बाद रात-भर डिनर चलता रहा। डिनर नाममात्र का था। असली चीज़ थी अल्कोहल। उस रात कई सौ अल्कोहल की बोतलें खुलीं। इसके लिए सौम्यपद पीछे हटने वाला नहीं है। कैसे पार्टी खत्म हुई, इसका ठिकाना नहीं। उस रात निमंत्रित व्यक्तियों में से कोई सोया तक नहीं। सिर्फ अल्कोहल और नाच का सिलसिला चलता रहा। युगल नृत्य।

पार्टी जब खत्म हुई तो ग्रीनिच टाइम के अनुसार सुबह के दस बज रहे थे।

सहसा टेलीफोन की आवाज़ होते ही नशा दूर हो गया। सौम्य को ऊब महसूस हुई। किसने उसे बेवक्त फोन किया ? उसकी इतनी प्यारी नींद टूट गई।

"मैं अयंगर हूं सर।"

सौम्य बोला, "इस बेवक्त एकाएक फोन क्यों कर रहे हैं ?"

"सर कलकत्ता में मिसिज मुखर्जी फोन कर रही हैं।"

"मिसिज मुखर्जी? यू मीन दादी मा?"

"यस सर। मैं कॉल आपके पास ट्रांसफर कर रहा हूं। बात कीजिए—"

उसके बाद कलकत्ता से दादी मा का स्वर सुनाई पड़ा—

"कौन? मुन्ना?"

सौम्य ने अपने आपको जरा संयत कर लिया। बोले, "हा, दादी मां, मैं तुम्हारा सौम्य बोल रहा हूं।"

"तू कैसा है?"

सौम्य बोला, "बिलकुल ठीक।"

"आवाज भारी-भारी जैसी क्यों लग रही है? तबीयत ठीक है न?"

"हा, ठीक है।"

"खूब सावधानी से रहना। उस मुल्क में कड़ाके की ठंड पड़ती है। एक बार ठंड लग जाने के कारण मुझे बुखार हो गया था। हमेशा गले में गुलबन्द लगाए रहना।"

सौम्य बोला, "मैं हर वक्त गले में ऊनी स्कार्फ लपेटे रहता हूं।"

"हर रोज गरम पानी से नहाना। और रात नौ बजे ही तू सो जाता है न?"

सौम्य बोला, "हा दादी मा, कलकत्ता में जिस तरह रात नौ बजे ही सो जाता था, यहा भी वैसा ही करता हू।"

दादी मा बोली, "और एक बात। उस देश की औरतें बड़ी बेहया होती हैं। काले लोगो के देश के बड़े लोगो को देखकर नाज-नखरा करना शुरू कर देती हैं। उन लोगो से हेल-मेल नही बढ़ाता है तो?"

सौम्य बोला, "नही दादी मा। औरतो के चेहरो की ओर मैं ताकता भी नही हूं। कोई लड़की मुझसे हिलने-मिलने आती है तो मैं भाग खड़ा होता हूं।"

"बहुत अच्छी बात है, बहुत ही अच्छी! एक बहुत दौलतमन्द आदमी की लड़की से तेरी शादी का सारा बंदोबस्त कर चुकी हूं। तू जैसे ही आएगा, शादी की रस्म पूरी कर दूगी। लड़की एम० ए० पास है। देखने में भी बहुत ही खूबसूरत। तुम दोनो का जोड़ा बड़ा ही फबेगा।"

"और रसेल स्ट्रीट की वह लड़की?"

दादी मां बोली, "उसकी अपेक्षा यह कही अच्छी लडकी है। वह लडकी सत्य-नारायण-पूजा के दिन इस घर में आई थी। बडी ही फूहड है। अपने पैर से शीशे का गिलास तोड़कर खून बहा दिया था। अब तक शोहबत की भली-भांति तालीम नही ली है। लेकिन यह बहुत बड़े आदमी की लड़की है। मा-बाप-भाई सभी हैं। भाई बहुत ही बड़ा लेबर-लीडर है।"

"सुनने मे आया है, हम लोगों की फैक्टरी में तालाबंदी चल रही है। अघगर ने बताया था।"

दादी मां बोली, "हां, इसीलिए तो यहां शादी करा रही हूं। यहा शादी करने से लड़की का भाई हम लोगो की फैक्टरी की तालाबंदी खत्म करा देगा। वह लेबर-लीडर है न। उसके हाथ मे दो लाख लेबर है—"

उसके बाद जरा चुप रहने के बाद दादी मा फिर बोली, "और सिंहवाहिनी

कर देंगे। वहां नहीं जाऊंगा तो मुझे आमदनी कहां से होगी ? ऐसे हालात में मैं क्या खाऊंगा और रीटा को ही क्या खिलाऊंगा ?"

बुढ़िया बोली, "ऑल राइट, तुम्हारा कहना है कि तुम रीटा से शादी करना चाहते हो और रीटा भी तुमसे शादी करने को इच्छुक है। आइ डॉन्ट वान्ट टू बि एन ऑब्सटेकल इन योर वे। मैं तुम दोनों के बीच अड़चन डालना नहीं चाहती। मगर मेरी जैसी ओल्ड विडो के बारे में भी तो तुम लोगों को सोचना है। रीटा तुमसे शादी कर इंडिया चली जाएगी तो मुझे कौन खिलाएगा ?"

सौम्य बोला, "मैं आपको हर महीने रुपया भेजा करूंगा।"

"महीने में कितना भेजोगे ? मुझे तो हर महीने खाने-पीने और पहरावे के लिए कम से कम ढाई सौ पौंड खर्च करना पड़ता है।"

सौम्य बोला, "मैं यह रकम भेजा करूंगा।"

"और अगर न भेजो तो ?"

सौम्य बोला, "मैं बॉण्ड पर हस्ताक्षर कर जाऊंगा।"

बुढ़िया बोली, "तो फिर यहां सॉलिसिटर फर्म में जाकर उस शर्त्तनामे के बॉण्ड पर हस्ताक्षर करते जाओ। इसमें मेरा सॉलिसिटर गवाह रहेगा। विटनेस की हैसियत से उसका भी उस पर हस्ताक्षर रहेगा। डू यू एग्री ? तुम राजी हो ?"

सौम्य बोला, "येस मिसेज़ रिचार्ड, आइ एग्री—"

मिसेज़ रिचर्ड बोली, "और उसमें लिखा होना चाहिए कि शर्त्तनामे को भंग करने से मैं तुम्हारे खिलाफ कॉम्पेशेसन का मुकदमा दायर कर सकती हूं, हर्जाने की मांग कर सकती हूं। डू यू एग्री ? तुम राज़ी हो ?"

सौम्य बोला, "येस, मैं राज़ी हूं।"

अन्ततः यही हुआ। मिसेज़ रिचर्ड, मिस रिचर्ड और मिस्टर एस० मुखर्जी ने सॉलिसिटर के फर्म में जाकर शर्त्तनामे पर हस्ताक्षर कर दिए। गवाह की हैसियत से सालिसिटर ने भी वहां हस्ताक्षर कर दिया। बदस्तूर कानूनी कारवाई। कहीं कोई धोखाधड़ी की गुंजाइश नहीं रही।

उसके बाद बाकी रह गया मैरेज रजिस्ट्रेशन। उसके लिए भी गवाह की ज़रूरत थी। सो पैसा फेंकने से इन सब मामलों के लिए गवाह की कोई कमी नहीं होती। कमी रही भी नहीं। बाकी बचा चर्च। सौम्य भले ही हिन्दू रहे मगर ईसाई होने से उसकी हानि ही क्या है ?

उसके बाद रात-भर डिनर चलता रहा। डिनर नाममात्र का था। असली चीज़ थी अल्कोहल। उस रात कई सौ अल्कोहल की बोतलें खुलीं। इसके लिए सौम्यपद पीछे हटने वाला नहीं है। कैसे पार्टी खत्म हुई, इसका ठिकाना नहीं। उस रात निमंत्रित व्यक्तियों में से कोई सोया तक नहीं। सिर्फ अल्कोहल और नाच का सिलसिला चलता रहा। युगल नृत्य।

पार्टी जब खत्म हुई तो ग्रीनिच टाइम के अनुसार सुबह के दस बज रहे थे।

सहसा टेलीफोन की आवाज होते ही नशा दूर हो गया। सौम्य को ऊब महसूस हुई। किसने उसे बेवक्त फोन किया ? उसकी इतनी प्यारी नींद टूट गई।

"मैं अयंगर हूं सर।"

सौम्य बोला, "इस बेवक्त एकाएक फोन क्यों कर रहे हैं ?"

"सर कलकत्ता से मिसेज मुखर्जी फोन कर रही है।"

"मिसेज मुखर्जी? यू मीन दादी मां?"

"येस सर। मैं कॉल आपके पास ट्रांसफर कर रहा हूं। बात कीजिए—'

उसके बाद कलकत्ता से दादी मां का स्वर सुनाई पड़ा—

"कौन? मुन्ना?"

सौम्य ने अपने आपको जरा संयत कर लिया। बोले, "हां, दादी म तुम्हारा सौम्य बोल रहा हूं।"

"तू कैसा है?"

सौम्य बोला, "बिलकुल ठीक।"

"आवाज भारी-भारी जैसी क्यों लग रही है? तबीयत ठीक है न?"

"हां, ठीक है।"

"खूब सावधानी से रहना। उस मुल्क में कड़ाके की ठंड पड़ती है। ए ठंड लग जाने के कारण मुझे बुखार हो गया था। हमेशा गले में गुलबन्द रहना।"

सौम्य बोला, "मैं हर वक्त गले में ऊनी स्कार्फ लपेटे रहता हूं।"

"हर रोज गरम पानी से नहाना। और रात नौ बजे ही तू सो जाता है

सौम्य बोला, "हां दादी मां, कलकत्ता में जिस तरह रात नौ बजे ही सो था, यहां भी वैसा ही करता हूं।"

दादी मां बोली, "और एक बात। उस देश की औरतें बड़ी बेहया हो काले लोगों के देश के बड़े लोगों को देखकर नाज-नखरा करना शुरू कर दे उन लोगों से हेल-मेल नहीं बढ़ाता है तो?"

सौम्य बोला, "नहीं दादी मां। औरतों के चेहरों की ओर मैं ताकता भ हूं। कोई लड़की मुझसे हिलने-मिलने आती है तो मैं भाग खड़ा होता हूं।"

"बहुत अच्छी बात है, बहुत ही अच्छी! एक बहुत दौलतमन्द आद लड़की से तेरी शादी का सारा बंदोबस्त कर चुकी हूं। तू जैसे ही आएगा, की रस्म पूरी कर दूंगी। लड़की एम० ए० पास है। देखने में भी बहु खूबसूरत। तुम दोनों का जोड़ा बड़ा ही फबेगा।"

"और रसेल स्ट्रीट की वह लड़की?"

दादी मां बोली, "उसकी अपेक्षा यह कहीं अच्छी लड़की है। वह लड़की नारायण-पूजा के दिन इस घर में आई थी। बड़ी ही फूहड़ है। अपने पैर मे का गिलास तोड़कर खून बहा दिया था। अब तक शोहबत की भली-भांति त नहीं ली है। लेकिन यह बहुत बड़े आदमी की लड़की है। मां-बाप-भाई स भाई बहुत ही बड़ा लेबर-लीडर है।"

"सुनने में आया है, हम लोगों की फैक्टरी में तालाबंदी चल रही है। ने बताया था।"

दादी मां बोली, "हां, इसीलिए तो यहां शादी करा रही हूं। यहां शादी से लड़की का भाई हम लोगों की फैक्टरी की तालाबंदी खत्म करा देगा। वह लीडर है न। उसके हाथ में दो लाख लेबर है—"

उसके बाद जरा चुप रहने के बाद दादी मां फिर बोलीं, "और मिहिवा

की उस तसवीर को हमेशा अपने पॉकेट में रखे रहता है तो ?"

सौम्य वोला, ' हां, वह हमेशा मेरे पॉकेट में रहती है। नींद टूटते ही माथे से छुलाकर प्रणाम करता हूं—"

"हां, करते रहना। सिंहवाहिनी की दया से तुझे कोई कष्ट नहीं होगा—"

इसके वाद लाइन कट गई।

यह सब वहुत पहले की वात है। और आज दादी मां कुछ जान ही नहीं पा रही हैं। इतने दिनों के वाद वही सौम्य कलकत्ता लौट आया है। लेकिन इसे क्या लौटना कहते हैं ? सिंहवाहिनी की पूजा करने, हर दिन गंगा-स्नान करने का उन्हें क्या यह फल मिला ?

कभी-कभी दादी मां की चेतना वापस आती है। उस समय आंखें मटमैली जैसी दिखती हैं। देखकर लगता है, दादी मां किसी की तलाश कर रही हैं। हमेशा लोगों को पहचान भी नहीं पातीं। अगर किसी को पहचान लेतीं हैं तो धीमी आवाज़ में कहती हैं, "मुन्ना, मुन्ना आया है ?"

मल्लिकजी कहते हैं, "मुन्ना को बुला लाऊं ?"

लेकिन मुन्ना कहां है? मुन्ना ज़्यादातर वक्त घर में रहता ही नहीं। वह अपनी पत्नी के साथ कहां निकल जाता है, किसी को पता नहीं चलता। मुन्ना के आने के वाद से तीन-मंज़िले की महरी सुधा ही रीटा का काम-धाम करती है। वह वहूरानी की वात ठीक से समझ नहीं पाती। सुधा वंगला भाषा के अलावा दूसरी भाषा नहीं समझती।

सौम्य से नई वहू कहती है, "वह महरी 'वर्थलेस' है, मेरी कोई वात नहीं समझती है। उसे हटा दो डियर।"

मगर इतने दिनों की महरी को क्या यों ही भगाया जा सकता है ? इसके अलावा नौकर-चाकर को काम से हटा देने का वह मालिक नहीं है। दादी मां ही इस घर की मालकिन हैं। जव तक दादी मां जीवित हैं तव तक उनकी वात काटने की सामर्थ्य किसी को भी नहीं है।

फिर भी रीटा दवाव डालती है। कहती है, "नहीं डियर, उसे डिसचार्ज कर दो।"

सौम्य पूछता है, "क्यों हटा दें ? उसने क्या किया है ?"

"मैं जो हुक्म करती हूं, उसकी वह तालीम नहीं करती। वह मेरा 'केयर' नहीं करती। वह औरत इतनी डिसऑविडियेंट है—"

एक दिन सौम्य ने सुधा को वुलवा भेजा और पूछा, "क्यों री सुधा, तू वहूरानी की वात क्यों नहीं मानती है ?"

सुधा विलकुल भोली औरत है। इतने दिनों से वह इस घर में काम कर रही है पर दादी मां ने कभी उसे झिड़कियां नहीं सुनाई हैं। वह वोली, "मैंने तो कोई गलती नहीं की है। वहूरानी जो कहती हैं, मैं वही करती हूं।"

रीता गुस्से में आ गई, "वह झूठी है। आउट राइट लायर—तुम उसकी वात पर ध्यान मत दो। डॉन्ट विलिव हर—"

सौम्य ने पूछा, "उसने क्या गलती की है, बताओ न ?"

रीटा बोली, "मैंने उसे अपना वार्डरोब हर रोज साफ करने को कहा है, लेकिन किसी दिन वह ऐसा नहीं करती। मैं क्या इस घर की कोई नहीं हूं ? मेरे हुक्म की कोई कीमत नहीं है ? मेरा हुक्म वह क्यों नहीं मानती है ?"

सौम्य ने सुधा से पूछा, "तू बहूरानी के कपड़े की आलमारी हर रोज साफ नहीं करती है ?"

सुधा बोली, "नहीं, ऐसी बात नहीं है, मैं हर रोज साफ करती हूं। मैं मां काली की शपथ खाकर कह सकती हूं कि हर रोज साफ करती हूं—"

सौम्य ने बिगड़कर कहा, "तू क्या यह कहना चाहती है कि बहूरानी झूठ बोल रही है ?"

रीटा चिल्ला उठी, "उसकी बात पर यकीन मत करो सौम्य, यह लायर है, डैम लायर। तुम उसे डिसचार्ज कर दो, अभी तुरन्त डिसचार्ज कर दो।"

सौम्य ने महसूस किया कि इस मामले में कहीं-न-कहीं किसी गलतफहमी का हाथ है। सुधा से कहा, "जा, अभी तू यहां से चली जा। अब कभी ऐसा नहीं करना।"

लेकिन रीटा इस पर भी शांत नहीं हुई। बोली, "तुमने उससे कुछ भी नहीं कहा ? उसे फाइन क्यों नहीं किया ? ऐसा करने से दोषी व्यक्ति रास्ते पर सवार हो जाते हैं। तुमने उसे फाइन क्यों नहीं किया ?"

सौम्य बोला, "देखो, अभी मेरी ग्रैण्ड मदर जीवित हैं। ये लोग सभी मेरी ग्रैण्ड मदर के स्टाफ हैं। ग्रैण्ड मदर जब तक मर नहीं जातीं, तब तक मैं इन लोगों में से किसी को न तो डिसचार्ज कर सकता हूं और न ही फाइन कर सकता हूं।"

रीटा अवाक् हो गई। बोली, "यह क्या ! मदन में तो तुमने मुझसे कुछ और ही कहा था। तुमने तो बताया था कि तुम [illegible] कम्पनी में डाइरेक्टर हो। तुम अगर डाइरेक्टर हो तो तुम्हें सभी को डिसचार्ज करने की सामर्थ्य है।"

सौम्य बोला, "सो तो है। लेकिन जब तक मेरी ग्रैण्ड मदर जीवित रहेंगी तब तक ग्रैण्ड मदर से पूछे बगैर मैं कुछ नहीं कर सकता।"

रीटा बोली, "लेकिन तुमने तो अपने 'फैमिली' के बारे में मुझे मदन में कुछ नहीं बताया था। तुमने बताया था, तुम लोग बहुत बड़े बिजनेसमैन हो, तुम लोगों के पास बेशुमार पैसा है ! यही सुनकर तो मैं तुमसे शादी करने को तैयार हुई। वरना मैं तुमसे शादी करती ही क्यों ?"

सौम्य ने कहा, "तुम यहां आकर यह देख ही रही हो कि हम लोग कितने 'रिच' फैमिली के हैं। हम लोगों के घर में कितने स्टाफ हैं, कितनी [illegible] हैं, हमारी इनकम। हम लोगों के पास कितनी [illegible] हैं। [illegible] हैं। मैंने तो तुमसे कोई धोखाधड़ी नहीं की है। [illegible] है। मैंने तो तुम्हारी मां को भी सारी बातें [illegible] दी थीं। तुमसे भी कोई बात छिपाई नहीं थी।"

"तो फिर मैं जब शादी करती हूं तो मुझे सारी बातें क्यों नहीं [illegible] ?"

सौम्य ने कहा, "अभी मेरी ग्रैण्ड मदर की बड़ी [illegible] हुए हैं। [illegible] [illegible] अभी डॉक्टरों के यहां आना-जाना रहता है।"

रीटा ने कहा, "तो फिर मैं क्या करूं ? मुझे क्या रात-दिन घर में बंदी बनक
रहना-अच्छा लगता है ? दिन में चाहे जो हो मगर रात में ? मैंने ज़िन्दगी में कभ
रात घर पर नहीं बिताई है। तुम्हारा यह किस तरह का घर है ? कलकत्ता में क्य
सभी लोग रात घर में सोकर विता देते हैं ?"

सौम्य बोला, "ऐसी बात नहीं है। सिर्फ मेरे घर का ही यह नियम है। मेर
ग्रैण्ड मदर का हमेशा से यही नियम रहा है। हम लोगों का दरवान ठीक नौ ब
गेट वन्द कर देता है। उसके वाद न तो कोई घर के अन्दर आ सकता है और
वाहर जा सकता है।"

"माइ गॉड ! वरावर तुमने रात नौ वजे के वाद घर में सोकर वक्त गुज़ा
है?"

सौम्य ने कहा, "नहीं-नहीं, मैं हमेशा गिरिधारी को रिश्वत देकर नाइट क्ल
में जाकर रात विताता था। लंदन में जो कुछ करता था, यहां भी वराबर य
करता आ रहा था। कभी किसी को पता नहीं चलता था। लंदन में अयंगर क
भी इसकी जानकारी नहीं थी।"

रीटा वोली, "तो फिर अभी चलो न—"

"अभी ? अभी तो रात के दस वज रहे हैं।"

रीटा वोली, "रात के दस बजे हैं तो क्या होगा, नाइट इज स्टिल यंग—"

दूसरी ओर तव मुखर्जी-भवन में दादी मां को ऑक्सीजन दिया जा रहा थ
और इधर सौम्य और रीटा सज-संवरकर नैश विहार के लिए वाहर निकल गए

गिरिधारी कुछ भी नहीं वोला। मुन्ना वावू और मेमसाहव को देखकर उस
सलाम किया और गेट खोल दिया। और उसके वाद मुखर्जी परिवार के कनि
वंशधर सौम्य मुखर्जी और उसकी मेम पत्नी वाहर निकल गए। उसके वाद गा
के चक्के लुढ़कते हुए एक नाइट-क्लव में पहुंचे। वहां तव दिन का आलम था
दिन ही नहीं, दोपहर का। वहां तव तेज रोशनी के नीचे रुपया, नारी और शरा
की खरीद-विक्री चल रही थी। जिस्म की लेन-देन चल रही थी, वैभव-विला
प्राचुर्य, मौज-मस्ती, लोभ और लास्य की लेन-देन चल रही थी। वहुत दिनों
वाद रीटा की ज़िन्दगी में जैसे लंदन लौट आया था। उसकी जन्मभूमि। औ
उसका मन खुशियों से भरपूर हो गया।

वेलुड़ की सैक्सवी मुखर्जी कंपनी की उतनी वड़ी कंपनी फिलहाल चुपचा
हाहाकार कर रही है। अकर्मण्यता और आलस्य के वोझ से उस समय वह नं
जैसी हो गई है। तो भी चीफ एकाउण्टेंट नागराजन, वर्क्स मैनेजर कांति चटर्ज
वेलफेयर ऑफिसर जसवंत भार्गव और डिप्टी वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार क
वैठे-वैठे तनख्वाह मिल रही है। उन्हें विठाकर मुक्तिपद तनख्वाह देते जा रहे हैं
उन लोगों के अलावा ड्राइवर विश्वनाथ को भी तनख्वाह मिल रही है।

लेकिन विश्वनाथ को अपने कर्त्तव्य की कार्रवाई भी करनी पड़ रही है।

वीच-वीच में अर्जुन सरकार लुक-छिपकर आता है और मुक्तिपद
मुलाकात कर जाता है। कोई ज़रूरी खवर होती है तो उसे आकर सूचना दे

पड़ती है।

मुक्तिपद पूछते हैं, "क्या खबर है? कोई नई खबर?"

अर्जुन सरकार कहता है, "है। एक वर्कर ने खाना न मिलने के कारण आत्म-हत्या कर ली है।"

"किसने?"

"एक क्लास फोर स्टाफ ने।"

"उसके घर में कौन-कौन थे?"

"उसे लड़का, लड़की, पत्नी सभी थे।"

"वे लोग अब क्या कर रहे हैं?"

"क्या करेंगे, सभी निराहार रह रहे हैं, भीख मांग रहे हैं। बहुतों ने सड़क के किनारे बैठकर पकौड़े वगैरह बेचना शुरू कर दिया है ताकि कुछ पैसे मिल जाए।"

मुक्तिपद कुछ देर तक खामोश रहे। वे कहेंगे ही क्या! अर्जुन सरकार बोला, "सबकी बड़ी ही दर्दनाक स्थिति है सर। देखने में बड़ा ही दुख होता है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा सर कुछ कमसिन लड़कियां लुक-छिपकर···"

"लुक-छिपकर क्या···?"

"लुक-छिपकर ग्राहक की तलाश में कलकत्ता के फुटपाथों पर चक्कर काटती रहती हैं।"

मुक्तिपद ने पूछा, "उनके सोचने के तरीके का कुछ पता चला?"

"एक दिन सर, एक लड़की को पकड़ा था। वह मुझे पहचान नहीं सकी। एक होटल में ले जाकर भरपेट खाना खिलाया। बहुत दिनों के बाद पेट भर खाना खाने से उस लड़की का भाग्य जैसे जग गया सर। मैंने उसका नाम पूछा। परिचय पूछा। इस बात पर वह रो दी। उसने रोते हुए कहा, 'उसका बाप बेलुड़ की एक फैक्टरी में काम करता था, उस फैक्टरी में हड़ताल चलते रहने के कारण वह इस लाइन में आई है। खाना न मिलने के कारण उसका बाप मर गया।' "

यह कहते-कहते अर्जुन सरकार असहाय जैसा दिखने लगा।

मुक्तिपद ने पूछा "उसके बाद?"

अर्जुन सरकार बोला, "उसके बाद मैंने दस रुपए का एक नोट उसके हाथ में थमा दिया। रुपया पाकर लड़की को आश्चर्य हुआ। बोली, आपने मुझे अचानक रुपया क्यों दिया?"

मैंने कहा, "तुम्हारी बदतर हालत की दास्तान सुनकर।"

"लड़की ने एकाएक कहा, होटल के कमरे में ले जाकर आपने मुझे लेटने नहीं कहा!

"मैं तो दंग रह गया। कहा, लेटने क्यों कहूंगा?

"लड़की शर्म से अपना सिर झुकाए रही। उसके बाद बोली: सभी तो ऐसा कहते हैं।

"मैंने कहा, सब को कहने दो। मेरे पास गाड़ी है, चलो, मैं तुम्हें तुम्हारे घर पर पहुंचा आता हूं। अब कभी इस लाइन में मत आना।

"लड़की को शायद इस तरह का व्यवहार किसी से नहीं मिला था।"

मुक्तिपद ने पूछा, "उसके वाद ? उसके वाद तुम उसे वेलुड़ पहुंचा आए ?"
अर्जुन सरकार वोला, "नहीं, मुझे लगता है, लड़की के साथ कभी ऐसा सलूक किया था, इसलिए वह चकित हो गई थी। लेकिन मैं वहुत डर रहा था कि गाड़ी लेकर पहुंचाने के लिए जाने पर कोई मुझे पहचान न ले।"

मुक्तिपद यह सव सुनकर चुप्पी साधे रहे। इस तरह की और भी वारदातें होंगी, मगर सारी खवरें नहीं मिल रही हैं। वे अव करें ही क्या ! इतने दिनों तीन पुरखों से चली आ रही फैक्टरी को सवों ने वन्द करा दिया। इससे का भला हुआ ? मालिका का या वर्करों का ? या पार्टी का या कि लीडर ?

मुक्तिपद ने पूछा, "श्रीपति मिश्र का क्या हालचाल है ? उसे कुछ पता चला ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "उन लोगों की पार्टी को और भी रुपयों की ज़रूरत गई है—"

"क्यों ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "उन लोगों की पार्टी का कलकत्ते में जो दफ्तर का है, उसमें जगह की कमी पड़ रही है। उसे चार-मंज़िला वनाने के लिए कई रुपयों की ज़रूरत है। उसके लिए रुपया चाहिए—"

मुक्तिपद ने कहा, "उसके लिए तो कलकत्ता के हम तमाम इंडस्ट्रियलिस्ट रुपया देते आ रहे हैं।"

"उससे भी उनका खर्च पूरा नहीं हो रहा है। गांवों के पंचायत के मुखिया रुपयों की मांग कर रहे हैं। वे लोग भी उन रुपयों से अपने लिए मकान एंगे। मंत्रीगण वड़े-वड़े मकान वनवा रहे हैं तो पंचायत के मुखिया क्यों नहीं एंगे ? उन्हें मकान न वनाने देने से दल के कैडर में वृद्धि कैसे होगी ? कैडरों कहना है, उन्हें और अधिक रुपये न मिलेंगे तो वे दूसरी पार्टी में नाम दर्ज करा ।"

मुक्तिपद वोले, "यहां से यदि सारी इंडस्ट्रियां उठकर साउथ इण्डिया चली तो किनके रुपये से पार्टी चलेगी ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "उन्हें जाते-जाते दस-पंद्रह साल वीत जाएंगे, तव तक -लीडरान घर-गाड़ी वैंक-वैलेंस सव कुछ वना लेंगे। उन लोगों का वरदा ल ही तो हर रोज़ पन्द्रह लीटर पेट्रोल की खपत करता है। इसका पता वरदा ल के ड्राइवर से ही चल गया है। अभी उनके पास एक ही रास्ता है—वंगाल । इसके सिवा रुपया कमाने का और कोई उपाय नहीं है।"

"तो फिर वंगाल वन्द होगा ही ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "होगा। न होगा तो पार्टी चलेगी नहीं। रुपया कमाने त्र एक वही रास्ता उन लोगों के लिए खुला हुआ है।"

"किस वहाने वंगाल वन्द का आह्वान किया जाएगा ?"

"क्यों ? वहाना तो स्पष्ट है। सेंट्रल रुपया नहीं दे रहा है, यही वहाना है। ी के खिलाफ नारा लगाएंगे कि वहां की सरकार वंगालियों को वरदाश्त नहीं ाती। इससे तो युक्तिसंगत नारा और कुछ नहीं हो सकता।"

"कब बंगाल बन्द होगा, कुछ सुनने को मिला ?"

"सो अभी पार्टी-स्लोगन तय नहीं किया गया है। इसके अलावा यह भी सुनने को मिला कि बंगाल बन्द के पहले एक दिन पूंजीपतियों के विरोध में विशाल पदयात्रा होगी। सॉल्टलेक से स्यालदह होते हुए हावड़ा तक की। उस दिन तमाम बसें, ट्रामें, लॉरियां, ठेलागाड़ियां और रिक्शे रुके रहेंगे। हावड़ा से लेकर स्यालदह स्टेशन तक के जितने पैसेंजर उतरेंगे वे ऑफिस-कचहरी न जा सकें, इसकी व्यवस्था के बारे में तय करने के बाद पदयात्रा का रूट निश्चित किया जाएगा—"

बातें करते-करते बहुत देर हो गई थी। मुक्तिपद बोले, "ठीक है, अभी मुझे बिडन स्ट्रीट के मकान जाना है—"

"आपकी मां अभी कैसी हैं सर ?"

"पहले की तरह। ई० सी० जी० किया गया है। अब डाक्टर लोग वकील-एटर्नी जैसे हो गए हैं, वे अब केवल पैसा मारने के फेर में रहते हैं।"

यह कहकर मुक्तिपद उठ गए। अर्जुन सरकार वहां से रुखसत पाकर चला गया।

रीटा रिचर्ड्स किसी जमाने में लंदन की गली-गली छानती रहती थी; पैसे वाले काले चमड़े के ग्राहकों की उम्मीद में। उसकी जैसी तमाम लड़कियों को मालूम था कि गोरे चमड़े के लोगों के बनिस्बत काले चमड़े वाले ही ज्यादा पैसा उड़ाते हैं। सफेद चमड़े वाले बड़े ही होशियार होते हैं। हिन्दुस्तान का जब बंटवारा हुआ और मिडिल-ईस्ट के देशों ने जब अंग्रेज़ों को खदेड़कर भगा दिया तो ये ही काले चमड़े के लोग एक दिन ब्रिटेन आकर भीड़ बढ़ाने लगे—विलायती डिग्री, विलायती पौंड, विलायती नौकरी और विलायती लड़कियों के लोभ में।

उस समय विलायत जाकर बहुत सारे होटल खोले। चावल के होटल। फिश-करी, तंदूरी रोटी, चिकेन, हिलसा फिश-फ्राई—सारा कुछ लंदन में मिलने लगा। जो-जो खाने की सामग्रियां खाना, भारत, अफ्रीका, सिलोन, बर्मा में मिलती हैं, अंग्रेज़ों की खास राजधानी में भी मिलने लगीं। उनके साथ स्कॉच, ह्विस्की, जमाइका, रम, जिन, ब्राण्डी वगैरह सारा कुछ। भारत, बांगला देश, सऊदी अरब, कुवैत, दुबई से नौजवानों का दल मौज-मस्ती मनाने के लिए आने लगे। उस समय सौम्य मुखर्जी जैसे अनब्याहे युवकों के लिए काफी सहूलियत हो गई। वे लोग रेस्तरां, बार और उस किस्म की होटलों में भीड़ लगाकर इकट्ठे होने लगे—रीटा जैसी लड़कियों और उस किस्म के खाने-पीने की सामग्रियों के लोभ में।

लंदन में एक नया बाज़ार ही तैयार हो गया। पहले जो औरतें शादी की उम्मीद में सड़क-गलियों में नए मित्रों की तलाश करती रहती थीं, वे उन रास्तों को छोड़ रुपये के धंधे में काले चमड़े के युवकों के पीछे-पीछे मंडराने लगीं। इन लोगों में से कोई बाप के पैसे से विलायत पढ़ने के लिए आया है, कोई कारोबार करने आया है और कोई आया है डाक्टरी का प्रैक्टिस करने। आते ही रीटा जैसी लड़कियां आसानी से मिल गईं। ये लावारिस अभाव में जीनेवाली लड़कियां।

इंगलैंड अब अपना साम्राज्य खोकर अमरीका का नौकर हो गया है। वहां के

युवकों को नौकरी नहीं मिलती। काले लोगों के धक्के से व्यापार में भी तरक्की नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए लड़कियों को अपनी पसंद के लायक सफेद चमड़ी के पति भी नहीं मिलते। अब उपाय ही क्या है! चाहे काला ही रहे! उन लोगों के बदन का रंग भले ही काला हो लेकिन उनके पौंड-शिलिंग-पेंस तो काले नहीं हैं। उन तमाम लोगों के बाजार का भाव एक ही है।

उस पर अगर कोई शादी कर इंडिया या बर्मा या बांग्ला देश या दुबई या कि सऊदी अरब ले जाता है तो जाऊंगी। पत्नी बनकर जाऊंगी। पैसे रहेंगे तो तापमान भी बरदाश्त हो जाएगा।

इसीलिए रीटा रिचर्ड्स जब मिसेज़ मुखर्जी होकर इंडिया आई तो वह बड़ी-बड़ी उम्मीदें लेकर आई थी। किन्तु आने पर देखा, यह एक अजीब ही ससुराल है। यहां ससुर जीवित न रहने पर भी पति की ग्रैण्डमदर जीवित है। दिल का दौरा पड़ने के कारण बिस्तर पर लेटी हुई है। पोते ने मेम से शादी की है इसी से धक्का लगने के कारण दिल का दौरा पड़ा और अब मरने-मरने की हालत में है। उसके बाद यह भी सुनने को मिला कि इस घर की लड़की-बहू जब-तब घर से बाहर भी नहीं निकल सकती। और सिर्फ लड़की या बहू ही नहीं, मर्दों को भी रात नौ बजते न बजते घर लौटना ही होगा। रात नौ बजते ही सदर गेट बंद कर दरबान ताला लगा देगा।

अगर यह बात है तो बहू बनकर इण्डिया आने से उसे फायदा ही क्या हुआ? इस घर का यह हाल-चाल देखकर रीटा शुरू में विद्रोह पर उतर आई।

सौम्य से बोली, "डैम इट, मैं यह सब पाबंदी नहीं मानूंगी।"

सौम्य बोला, "यह सब न मानने से मेरी ग्रैन-मा गुस्सा जाएंगी।"

"तो फिर मेरे कमरे में ड्रिंक्स ला दो।"

"ड्रिंक्स?"

सौम्य मुसीबत में फंस गया। बोला, "हम लोगों के घर के अंदर ड्रिंक्स नहीं चल सकता है। ग्रैन-मा सुनेगी तो तैश में आ जाएगी। मुझे घर से निकाल देगी। हम दोनों को घर से निकाल देगी—"

"क्यों? ड्रिंक करना क्या बुरा है? मेरी मां तो हर रोज़ ड्रिंक करती है।"

"तुम्हारी मां की बात दीगर है। यह तुम लोगों का लंदन नहीं, इंडिया है। यहां हमारे घर के लोग बड़े ही कॉन्जरवेटिव हैं। इस घर में देखती नहीं कि हर रोज शाम के समय हम लोगों के सिंहवाहिनी के मंदिर में पूजा होती है, कांसे का घंटा बजता है। जिस तरह तुम लोगों के देश में चर्च है, 'प्रेएर' होता है, घंटा बजता है, ठीक उसी तरह यहां होता है।

रीटा खफा हो गई। बोली, "यह सब बात तुमने मुझे तब क्यों नहीं बताई थी?"

सौम्य ने कहा, "तुमने तब मुझसे यह सब नहीं पूछा था इसीलिए।"

"इसमें पूछने की कौन-सी बात है? ड्रिंक न कर पाने के कारण मेरा पेट सूज गया है, आइ एम फीलिंग अनइजी। चाहे जहां से हो, तुम मुझे व्हिस्की लाकर दो। अभी तुरन्त। हियर एण्ड नाउ।"

सौम्य मुसीबत में पड़ गया। बोला, "अभी तुरन्त? सवेरे नौ बजे?"

"हां, अभी तुरंत। पांच दिनों से तुमने मुझे ड्रिंक नहीं दिया है। अब मैं तुम्हारी कोई बात मानने को तैयार नहीं हूं। और अगर यह न हो सके तो मुझे अपने साथ लेकर किसी बार में चलो। व्हिस्की पीने को नहीं मिलेगी तो मैं पागल हो जाऊंगी।"

सौम्य बोला, "अभी मुझे व्हिस्की कहां मिलेगी?"

"क्यों, कलकत्ता में क्या व्हिस्की का बार नहीं है?"

"है, लेकिन सुबह नौ बजे कोई बार नहीं खुलता। इसके अलावा आज बृहस्पतिवार है। आज थर्सडे है। आज तो कलकत्ता का ड्राइ डे है।"

"ड्राइ डे? इसका मतलब?"

सौम्य ने बताया, "हफ्ते में एक दिन शराब की सारी दुकानें बंद रहती हैं।"

"स्ट्रेंज! वेरी स्ट्रेंज! तो फिर यहां के संभ्रांत लोग थर्सडे को क्या पीते हैं?"

"नहीं पीते हैं।"

"व्हिस्की पिए बगैर कैसे रहते हैं?"

सौम्य ने कहा, "एक दिन न पिए तो कौन-सी हानि हो जाएगी?"

रीटा बोली, "तो फिर कल मुझे क्यों नहीं बताया था? ऐसे में तो आज मेरी तबीयत खराब हो जाएगी।"

"तुम नशे की इतनी पाबंद हो?"

रीटा बोली, "और तुम नशे के पाबंद नहीं हो?"

सौम्य बोला, "मैं भी नशे का सेवन करता हूं। लेकिन तुम्हारी तरह नहीं—"

रीटा ने कहा, "यह मालूम होता तो कल ही एक बोतल आज के लिए मंगवा कर रख लेती। यह बात मुझे पहले ही क्यों नहीं बता दी? अगर आज मुझे नींद नहीं आए तो?"

"एक रात तुम नहीं सोईं तो इसमें हर्ज ही क्या है?"

रीटा बोली, "नहीं-नहीं, चलो, जहां से भी मिले एक बोतल खरीदकर ले आएंगे।"

सौम्य बोला, "वह सब ठर्रा है। उसे न पीना ही अच्छा है।"

"ठर्रा का मतलब?"

"ठर्रा का मतलब अनलाइसेंस्ड शराब। यह ज़हर है।"

इस पर रीटा खफा हो गई। बोली, "चलो डियर, चलो। चाहे अनलाइसेंस्ड ही क्यों न हो, मैं वही पियूंगी।"

अंततः सौम्य को जाना ही पड़ा। अभी रीटा नई-नई आई है। भारत आए एक सप्ताह भी नहीं हुआ है। यहां के हाल-चाल से वह अब भी वाकिफ नहीं हुई है। बचपन से ही वह हर रोज शराब पीती आ रही है। अपने पिता को भी उसने हर रोज शराब पीते देखा था। मां को भी शराब पीते देखते आ रही थी। लेकिन यह किस तरह का देश है। अगर इस देश में शराब पीने को ही नहीं मिलती तो इस देश के आदमी से शादी कर मुझे कौन-सा फायदा हुआ?

सौम्य को ठीक से मालूम नहीं था कि ड्राइ डे में कहां शराब मिलती है। उस समय शाम होने-होने को थी। दिन भर सौम्य रीटा को किसी तरह रोके हुए था। रीटा को गाउन उतारकर साड़ी पहननी पड़ी थी। शुरू में रीटा ने साड़ी पहनना

नहीं चाहा था। लेकिन अंततः सौम्य ने उसे साड़ी पहनने को बाध्य किया था।

रीटा शुरू में कहती, "यह कितना वलमजी ड्रेस है। यह मैं पहन नहीं सकूंगी।"

बहुत दिनों तक अभ्यास करने के बाद उसे साड़ी पहनने का सलीका मालूम हुआ था। लेकिन कमरे में गाउन पहनकर ही रहती। इसके चलते महरियां आपस में लुत्फ उठाती थीं। सुधा कहती, "दिन-भर लहंगा पहने रहती है, यह किस तरह की औरत है। कभी इस तरह की औरत नहीं देखी थी। न जाने, क्या-क्या देखना पड़ेगा।"

विंदु कहती, "चुप रह री, चुप रह। दादी मां के कान में वात पहुंचेगी तो अनर्थ हो जाएगा।"

लेकिन उस समय दादी मां न तो बोल पाती थीं और न सुन पाती थीं। दिन-भर विस्तर पर पड़ी रहती हैं, खोई-खोई आंखों से सब-कुछ देखती रहती हैं। सिर्फ वात करने में ही उन्हें तकलीफ होती है। दोनों वक्त वड़े-वड़े डॉक्टर आते हैं और मुट्ठी-भर नोटों के बंडल ले जाते हैं। इतनी संपन्न पार्टी हो तो कौन डॉक्टर इस मौके को हाथ से जाने देगा।

इसी तरह की दवा लिख देते हैं जो सहज ही कलकत्ता में नहीं मिलती। वंवई से मंगानी पड़ती है। अक्सर डॉक्टर ऐसी दवा का नाम लिख देते हैं जिसे तुरंत देना आवश्यक है। टिकट कटाकर आदमी प्लेन से वंवई या दिल्ली जाता है। रुपया खर्च होगा तो इसी घर से दिया जाएगा। मुक्तिपद से रुपये की मांग करते ही मुक्तिपद का आदमी भेज देता है। या फिर मल्लिकजी खुद ही रुपया पहुंचा आते हैं।

उसके वाद हैं दो मेमसाहब नर्सें। वे दिन के वक्त वारी-वारी से ड्यूटी करती हैं। उनसे से हरेक प्रतिदिन पांच सौ रुपया लेती है। कौन-सी नर्सिंग करती है, किसी को पता नहीं। किसी ज़माने में जो सास उतनी दवंग थी, उसी के गले से अव कोई शब्द नहीं निकलता है।

कालीदासी कहती है, "इसी को भगवान की मार कहते हैं। जव बुढ़िया हट्टी-कट्टी थी उस समय लोगों को जितना सताती थी, अव खुद उतना ही भोग रही है।"

फुल्लरा कहती, "इसीलिए तो कहती हूं कि औरतों का इतना तेज-तर्रार होना ठीक नहीं होता। भगवान के कत्थई खाते में सब लिखा रहता है। वे रुपया आना-पाई सव मालूम कर लेते हैं।"

किसी दिन जिन लोगों ने दादी मां का दवंग स्वभाव देखा है, वे सभी खुश हैं। किसी ही स्वर में सभी कहते हैं, "बुढ़िया मरे तो चैन की सांस लेने का मौका मिले—"

डाक्टर आकर जव कहता है, अव और ज्यादा दिनों तक तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी तो सबके चेहरे उतर जाते हैं।

संदीप को उन दिनों की वात अब भी याद है। उस समय व्रिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन में बड़ा ही दुर्दिन चल रहा था। अन्दर-बाहर अशांति का माहौल था। रुपये की आमदनी कम हो गई है, लेकिन खर्च का कोई अंत नहीं। कुछेक अफसरों

ो नियमित तौर पर वेतन देना पड़ रहा है। डाक्टर आकर नोटों के बंडल ले जा
हे हैं।

मुक्तिपद हर दिन आते हैं। दादी मां के बिछावन के पास बैठते हैं। चेहरा
तरा हुआ रहता है। सौम्य के कमरे में उससे मिलने जाते हैं। सुनने को मिलता
वह अभी तक दरवाजे की सिटकनी बंद कर सोया हुआ है। सुनकर अचकचा
उठते हैं। इतनी देर तक सोए रहता है? चकित हो जाते हैं।

और उसके बाद जिस दिन सौम्य के बारे में आकर पूछताछ करते हैं तो सुनने
ो मिलता है, दोनों में से कोई घर में नहीं है। वे लोग कहीं निकले हुए हैं।

सुधा से पूछते हैं, "कब निकले हैं?"

सुधा कहती है, "यही थोड़ी देर पहले।"

"कब लौटकर आएंगे?"

सुधा को यह मालूम नहीं। मालूम होना संभव भी नहीं है। कहती है, "यह
बता नहीं सकूंगी।"

"रात में घर लौटकर खाना खाएंगे न?"

इस बार भी सुधा कहती है, "मालूम नहीं।"

मुक्तिपद सुधा पर गुस्सा जाते हैं। कहते हैं, "अगर यह मालूम नहीं है तो तू
ग घर में क्यों है?"

इसके बाद मुक्तिपद कुछ नहीं कहते। मुक्तिपद के सामने से हट जाने पर
ुधा को राहत मिलती है। हालांकि वह सब कुछ जानती है। सौम्य और उसकी
मेमसाहब घर लौटकर कभी खाना नहीं खाते, बाहर से ही खाना खाकर आते हैं,
ार की पकी रसोई बर्बाद हो जाती है—यह सब वह अच्छी तरह जानती है। यह
ी जानती है कि सौम्य और उनकी पत्नी जब घर लौटते हैं तो उनके कदम
गमगाते हैं। उस वक्त उन लोगों का दिमाग ठिकाने नहीं रहता। उस समय मेम
ाहब को पकड़कर बिस्तर पर लिटा देना पड़ता है। वह सब कुछ जानती है।
ेकिन यह सब बात जबान से बाहर निकालना गुनाह है, इसके कारण उसकी
ौकरी चली जा सकती है। लिहाजा खामोश रहना ही बेहतर समझती है। वह
ुक्तिपद के सामने से भागकर बचने की कोशिश करती है।

उसके बाद मुक्तिपद मल्लिकजी को बुलवाते हैं। बूढ़े मल्लिकजी तीन-मंजिले
ी सीढ़ियां चढ़ते-चढ़ते हांफने लगते हैं और मुक्तिपद के पास पहुंचते हैं।

मुक्तिपद पूछते हैं, "हिसाब का खाता ले आए हैं?'

मल्लिकजी हिसाब का खाता मुक्तिपद की ओर बढ़ा देते हैं। उस समय
ुक्तिपद जमा-खाता के सभी अंकों को ध्यान से देखते हैं। देखते-देखते एक जगह
ाने पर उनकी आंखें वहां केंद्रित हो जाती हैं।

कहते हैं, "छोटे बाबू को आपने छह तारीख में तीन हजार रुपया दिया है,
उसके बाद दस तारीख को बारह हजार रुपया दिया है! इस महीने में छोटे बाबू
को इतने रुपये क्यों दिए?"

मल्लिकजी भय से थर-थर कांपने लगते हैं।

कहते हैं, "छोटे बाबू मांगेंगे तो मैं नाहीं कैसे कर सकता हूं?"

मुक्तिपद बोले, "अब रुपये की मांग करें तो कहिएगा कि पांच हजार से

अधिक लेने के वास्ते मेरी अनुमति लेनी होगी। मैं कहूंगा तभी रुपया दीजिएगा।"

मल्लिकजी अव कह ही क्या सकते हैं। वोले, "ठीक है—"

"हां, हम लोगों की फैक्टरी अभी वंद है। कोई इनकम नहीं, अभी जितना हो सके खर्च कम करने की कोशिश करें। देख ही रहे हैं कि पानी की तरह पैसा खर्च हो रहा है। इस समय इतने खर्च का पैसा कहां से आएगा?"

मल्लिकजी ने दुवारा कहा, "ठीक है—"

"और यह क्या है? यह जो रसेल स्ट्रीट के मकान में हर महीने तीन हज़ार खर्च दिखा रहे हैं, इसमें कौन-सा लाभ है?"

मल्लिकजी वोले, "हुजूर, दादी मां ने जो हुक्म दिया था, उसी तरह चलता आ रहा है—"

मुक्तिपद वोले, "उन लोगों के लिए अरविंद ड्राइवर हर रोज़ उस मकान में जाता है, उसे भी तो वेतन देना पड़ता है, साथ ही पेट्रोल की भी खपत होती है—"

"पहले जैसा हो रहा था, उसी तरह मैं रुपया देता आ रहा हूं।"

मुक्तिपद वोले, "और यह जो देख रहा हूं अंटी मेमसाहव, जयंती, डॉक्टरी जांच का खर्च, वह सव भी तो हमेशा से चलता आ रहा है। उन लोगों के पीछे हर महीने सव मिलाकर दस-वारह हज़ार रुपये खर्च हो रहे हैं...यह भी तो पानी में ही जा रहा है।"

मल्लिकजी इसके उत्तर में क्या कहें! ज़रा रुककर वोले, "हुजूर, दादी मां ने मुझे जो हुक्म दिया था उसी की तामील करता आ रहा हूं।"

"नहीं, यह सव रोकना होगा।"

यह कहकर मुक्तिपद उठकर खड़े हो गए। उनका चेहरा देखने से लगा कि मंझले वावू वहुत चिंतित हो उठे हैं। जाते-जाते मुक्तिपद ने कहा, "ठीक है, मैं कल आ रहा हूं। अव मैं जो कहूंगा वही होगा—"

मंझले वावू के चले जाने के वाद मल्लिकजी भी आहिस्ता-आहिस्ता सीढ़ियां उतरने लगे। वड़े लोगों का मूड, कव ठीक रहे और कव विगड़ जाए, समझना मुश्किल है।

नीचे तव नियम से सिंहवाहिनी की आरती हो रही थी। मंदिर की महरी कामिनी दो तश्तरियों में देवता का प्रसाद लेकर कमरे में देने आई। यह रोजमर्रा का नियम है। कुछेक केले, खीर के टुकड़े, मौसमी फल और कई वतासे। एक मल्लिकजी के लिए और दूसरा संदीप के लिए। संदीप ऑफिस से आने के वाद फरकी और वह प्रसाद खाता है। संदीप रहता है तो दे जाती है और न भी रहता है तो भी दे जाती है। जिस दिन उसे वैंक में छुट्टी रहती है उस दिन वह मां से मिलने वेड़ापोता चला जाता है। उस दिन मल्लिकजी दोनों तश्तरियों का प्रसाद खुद ही खा लेते हैं। मल्लिकजी ने एक तश्तरी पर ढक्कन रखकर दूसरी तश्तरी का प्रसाद खा लिया।

विडन स्ट्रीट का कलकत्ता और रसेल स्ट्रीट का कलकत्ता जिस तरह एक ही कलकत्ता नहीं हैं, उसी तरह वालीगंज का कलकत्ता भी एक अलग ही कलकत्ता है।

हरेक अंचल से अलग-अलग तरह की संस्कृति, हरेक की शक्ल अलग-अलग। किसी एक से दूसरे का मेल नहीं।

उसी तरह पार्क स्ट्रीट के नजदीक की रिपन स्ट्रीट, किड स्ट्रीट, कॉलिन स्ट्रीट की संस्कृति एक जैसी नहीं है। इन सबसे दूसरे इलाकों की कोई समानता नहीं है। इस मुहल्ले में रात बारह बजे के बाद शाम होती है। तभी इस अंचल में मस्ती का आलम रहता है।

उस समय तरह-तरह के मतलबों से दलालों का झुंड चक्कर काटता है। कोई ग्राहक फंसाने के लिए तो कोई ठर्रे के लिए। सड़क पर किसी प्राइवेट गाड़ी का पता चलते ही करीब आकर पूछता है, "प्राइवेट चाहिए सर, एकबारगी फ्रेश माल—"

कोई दूसरा आदमी आकर पूछता है, "ह्विस्की है सर, रिअल स्कॉच चाहिए?"

सड़क पर किसी जवान छोकरे को अकेले चहल-कदमी करते हुए देखता है तो उसके पीछे-पीछे चक्कर काटने लगता है। कहता है, "आइए सर, मेरे साथ आइए। आप जो चाह रहे हैं वही मिलेगा—"

"मैं क्या चाहता हूं?"

"मैं समझ रहा हूं सर, कि आपको क्या चाहिए। एकदम से नई अछूती आई है इस मुहल्ले में। अभी तक लाइन में नहीं उतरी है—"

युवक अगर पूछता है, कितनी दूर जाना है तो वह आदमी कहता है, "दूर नहीं है सर, इसी घर के पास है। आइए न मेरे साथ। पसंद न हो तो कहीं दूसरी जगह चले जाइएगा, एक पैसा भी नहीं देना होगा। एकदम फ्री···"

उस समय युवक अगर थोड़ी-सी उत्सुकता दिखाए तो उस आदमी के लिए पौ-बारह। वह कहेगा, "चले आइए मेरे पीछे-पीछे—"

यह कहकर वह तेज कदमों से चलना शुरू कर देता है। युवक भी उसके करीब पहुंचना चाहता है। लेकिन उस आदमी के पीछे-पीछे तेज कदमों से चलने के बावजूद युवक उसके करीब पहुंच नहीं पाता। किस रास्ते से घुसकर किस गली में जाकर कौन-सा मोड़ लेगा, यह जानना भगवान के लिए भी सम्भव नहीं। यह बहुत-कुछ काशी के विश्वनाथ मन्दिर की गली के अन्दर जाने की तरह है। काशी के पंडे भक्तों का पीछा नहीं छोड़ते और यहां ग्राहक दलालों का पीछा नहीं छोड़ते।

यह पीछे-पीछे जाने और पीछा न छोड़ने की संस्कृति है। कलकत्ता की सृष्टि के आरम्भ से ही यह संस्कृति हमेशा से यहां चलती आ रही है। चाहे हजारों सी० एम० पी० और सी० एम० डी० आए, यह संस्कृति चिरकालीन और अकृत्रिम है। इसे तोड़ने की सामर्थ्य किसी भी सरकार को नहीं है—चाहे कांग्रेस या जनता या कम्युनिस्ट सरकार के हाथ में सत्ता क्यों न चली आए। इस मुहल्ले में आने के बाद समझने का उपाय नहीं है कि यह लंदन है या मैनहैटन या पेरिस या बर्लिन या हांगकांग या भारत का कलकत्ता।

यहां की सड़क पर कलकत्ता नगर निगम के लाइट पोस्ट हैं लेकिन उनमें से अधिकांश अचल हालत में हैं। एक-दो को छोड़कर बाकी सभी लाइटपोस्टों की रोशनियां गुल रहती हैं। रोशनी जलती नहीं और जलती भी है तो खास कारणवश

उसे बुझाकर रखा जाता है। खास कारण यह कि इससे दलालों और ग्राहकों दोनों को सुविधा होती है।

इसी अंधेरे में उस दिन दनादन बम फटने की आवाज़ होने लगी। इस तरह के बमों का बीच-बीच में इस मुहल्ले में विस्फोट होता है। लेकिन इससे किसी को हैरानी नहीं होती और न ही कोई बम फटने का कारण जानना चाहता है। धुआं रहने से जिस तरह आग का होना निश्चित है उसी तरह इस तरह के दलाल रहेंगे तो बम का विस्फोट होगा ही। चूंकि दलालों के अलग-अलग दल हैं इसलिए बम फटने का सिलसिला जारी रहता है। इस युग के कलकत्ता में राजनीति, समाजनीति या सांस्कृतिक नीति को लेकर बमों का फटना स्वाभाविक है।

लेकिन इस मुहल्ले में जो नए ग्राहक आते हैं वे बमबाज़ी की वारदात से शुरू में बहुत भयभीत हो उठते हैं। गोपाल हाजरा इस मुहल्ले के हाल-चाल से पूरे तौर पर वाकिफ है। सिर्फ इसी मुहल्ले के ही नहीं, कलकत्ता के हर मुहल्ले के हाल-चाल की उसे पूरी जानकारी है। क्योंकि उसे रात-दर-रात हर मुहल्ले का चक्कर लगाना पड़ता है।

उस दिन भी जब वह जीप चलाते हुए इस मुहल्ले में आया तो जो पुलिसकर्मी वहां ड्यूटी पर था, उससे पूछा, "कौन बमबाज़ी कर रहा है रे बच्चू ? यहां इतना हो-हल्ला क्यों हो रहा है ?"

बच्चू बोला, "कोई खास बात नहीं है हुजूर। पार्टीबाज़ी के चलते हरदयाल से फटिक की हमलेबाज़ी चल रही है।"

जेब से दस रुपये का एक नोट बच्चू को देते ही उसने उसे चुपचाप अपनी जेब में रख लिया और बोला, "हुजूर, आजकल हरदयाल का दिमाग आसमान पर चढ़ गया है—"

बच्चू की बात सुनकर गोपाल स्तब्ध रह गया। फटिक बराबर हरदयाल का ही शागिर्द रहा है। देशी शराब के मामले में हरदयाल से ही फटिक ने ककहरा सीखा है। कहा जा सकता है कि हरदयाल मदद नहीं करता तो फटिक भूखों मर जाता।

गोपाल हमेशा से हरदयाल गुंडा को ही इस मुहल्ले का लीडर समझता आ रहा है। इसीलिए गोपाल ने उसे ही भट्टी की शराब के कारोबार की ज़िम्मेदारी सौंपी है। लेकिन उसका शागिर्द फटिक अब उसका ही दुश्मन बन बैठा है।

गोपाल बोला, "हरदयाल को मेरे पास बुलाकर ले आओ तो बच्चू।"

बच्चू अंधेरे में ही कहीं डूब गया। उसके बाद हरदयाल को बुला लाया। हरदयाल ने आकर गोपाल को देखा तो भक्तिपूर्वक उसे सलाम किया और बोला, "क्या हुजूर, आपने मुझे तलब किया है ?"

हरदयाल के सिर पर लम्बे-लम्बे घुंघराले बाल हैं। मुंह में पान। मुंह से तेज़ जर्दे की बू आ रही है।

गोपाल बोला, "आज इतनी बमबाज़ी क्यों चल रहा था रे हरदयाल ? बात क्या है ? क्या हुआ ?"

हरदयाल बोला, "आप तो जानते ही हैं हुजूर, कि मैं किसी झूठे झमेले में नहीं रहता। साले फटिक को एक वक्त का खाना भी नसीब नहीं होता था। मैंने उसे

तालीम देकर आदमी बनाया और वही फटिक अब मेरे साथ बेईमानी कर रहा है।"

"कौन-सी बेईमानी की ?"

साला अपना एक दल बनाकर अब लीडर बन बैठा है। यह साला ऐसा बेईमान है कि मेरे ही असामी को अपने कब्जे में रखना चाहता है। इतने बड़े हरामी का बच्चा है वह ! स्साला मुझे पहचानता नहीं। साला बेईमान का बच्चा ! मैं उसका खात्मा करके ही छोड़ूंगा। स्साला अब भी मुझे पहचानता नहीं—"

गोपाल बोला, "चिल्ला मत, साफ-साफ बता कि तेरा कौन असामी है ? वह असामी कहां है ?"

हरदयाल ने कहा, "फटिक मेरे असामी को अपने घर में रोके हुए है।"

"फटिक कहां है ?"

"फटिक ही जाने कि वह कहां है।"

बच्चू पुलिसकर्मी पास ही खड़ा होकर सब सुन रहा था। गोपाल हाजरा ने बच्चू से कहा, "फटिक को बुला लाओ तो बच्चू। जाकर कहो कि बड़े बाबू आए हैं और तुम्हें बुला रहे हैं।"

बच्चू फिर उसी अंधेरे में चला गया। चाहे जितनी ही बमबाजी क्यों न हो, बच्चू बेधड़क सब जगह पहुंच जाता है। उससे हरदयाल और फटिक दोनों डरते हैं। इसलिए नहीं डरते कि बच्चू पुलिसकर्मी है बल्कि इसलिए कि वह गोपाल हाजरा का अपना आदमी है। फटिक का डेरा कहां है, बच्चू को यह अच्छी तरह मालूम है। बड़े बाबू का नाम सुनते ही फटिक गोपाल हाजरा के सामने आकर हाजिर हुआ। आते ही सलाम किया। फटिक पर नजर पड़ते ही गोपाल हाजरा ने कहा, "क्यों रे, तूने हरदयाल से नमकहरामी की है ?"

फटिक बोला, "किसने कहा हुजूर ! मैं क्यों नमकहरामी करने लगा ? हरदयाल ने ही मेरे साथ नमकहरामी की है।"

"हरदयाल ने तेरे साथ कौन-सी नमकहरामी की है, सुनूं ?"

फटिक ने कहा, "मैं जब भी असामी का जुगाड़ करता था, हरदयाल को हमेशा उसका शेयर देता था, लेकिन हरदयाल असामी पकड़कर लाता था तो मुझे शेयर नहीं देता था। मैंने कभी उसका एक भी पैसा हजम नहीं किया है। जो आदमी वादाखिलाफी करता है, उससे मेरा कोई सरोकार नहीं है हुजूर। मैं साफ-साफ बोलनेवाला आदमी हूं। यही वजह है कि मैंने उस दल को छोड़कर नया दल बना लिया है। अब अगर उसे ताकत है तो मुझसे लड़े। देखा जाए कि किसको कितनी ताकत है !"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तुम लोग यदि आपस में इतना लड़ोगे-झगड़ोगे तो मैं तुम लोगों को कैसे सम्भालूंगा, बताओ ? इस तरह करोगे तो वरदा घोषाल बाबू को सारा कुछ बताना होगा। आखिर में इस पर भी न मानोगे तो श्रीपति बाबू को सारी बातें कहने को मुझे बाध्य होना पड़ेगा। इससे क्या तुम लोगों का भला होगा ? उस समय तुम लोगों की रोजी और रोजगार कैसे चलेगा ?"

हरदयाल और फटिक दोनों खामोश हैं। वे इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि एक बार गोपाल हाजरा कुपित हो जाएगा तो बात मंत्री तक के स्तर तक

हुंच जाएगी। इससे तो बेहतर चुपचाप रहना ही है।

गोपाल हाजरा बोला, "तुम लोग दो पैसा कमाकर गुज़र-बसर कर रहे हो इसीलिए मैं कुछ नहीं कहता। सोचता हूं, तुम लोग गरीब हो, तुम्हारी रोज़ी-रोटी छीन ली जाए, यह मैं नहीं चाहता और न बरदा घोपाल या श्रीपति बाबू चाहते हैं। बीच में अगर बमबाज़ी करोगे तो बात क्या दबी रहेगी? एक बार अखबार वालों की निगाह पड़ जाएगी तो पार्टी बदनाम हो जाएगी। उस समय पूरे कलकत्ता में बात फैल जाएगी। अगर ऐसा हो जाता है तो तुम्हारी रोज़ी-रोटी कैसे चलेगी, सुनूं? तुम लोगों की जो भी रोज़ी-रोटी चल रही है, वह मेरे ही चलते। नहीं तो इस बाज़ार में तुम लोग क्या करते, सोचकर देख लो।"

बात सोचने लायक है। इस कलकत्ता शहर के सभी मुहल्लों में जितने भी हरदयाल और फटिक हैं, वे सभी तो गोपाल हाजरा की दया पर ही जीवन जी रहे हैं। और गोपाल हाजरा का मानी है गवर्नमेंट। गवर्नमेंट जिसके विरोध में खड़ी हो जाए, तो उन लोगों की रोज़ी-रोटी कैसे चलेगी?

गोपाल हाजरा ने एकाएक पूछा, "असामी कहां है?"

हरदयाल बोला, "बहुत ही पैसेवाला असामी है बड़े बाबू। इसीलिए तो फटिक ने उन लोगों को रोक रखा है। साथ में बीबी भी है—"

"साथ में बीबी? बीबी का मतलब?"

"बीबी का मतलब पत्नी हुज़ूर।"

गोपाल हाजरा को हैरानी हुई। बोला, "पत्नी? क्या कह रहे हो तुम लोग? पत्नी के साथ कोई इस मुहल्ले में मौज मनाने आता है?"

"हां सर, आता है।"

"धत्त! बेवकूफ कहीं के। पत्नी के साथ कौन इस मुहल्ले में आएगा?"

"हां हुज़ूर, आजकल तो बहुत सारे घर की बहुओं ने भी देशी शराब पीना शुरू कर दिया है। विश्वास कीजिए।"

गोपाल हाजरा को यह सुनकर आश्चर्य हुआ।

बोला, "फिर तो तुम लोगों की किस्मत चमक गई है। तुम लोगों का तो पौ-बारह है। घर की बहुएं देशी शराब पीने के लिए इस मुहल्ले में क्यों आती हैं? होटल जाकर भी पी सकती हैं।"

फटिक ने कहा, "आज तो बृहस्पतिवार है हुज़ूर—ड्राइ डे। इस ड्राइ डे ही म
तो हमें ज़्यादा आमदनी होती है। आमदनी के बंटवारे के लिए ही तो आज बम
बाज़ी हुई।"

"ओह! बात तो सही है।"

आज बृहस्पतिवार है, गोपाल को यह बात याद ही नहीं थी। इसी वजह
इस मुहल्ले में इतने बम फट रहे हैं!

उसके बाद गोपाल हाजरा ने पूछा, "आज भी अपनी घरवाली के साथ क
असामी आया है?"

"हां हुज़ूर! शाम के वक्त ही दो असामी आकर हाजिर हो गए हैं। बहुत
पैसे वाले असामी हैं। अपनी गाड़ी चलाते हुए आए हैं। जैसा-तैसा असामी नहीं
मैंने ही उन असामियों को फंसाया है, इसीलिए हरदयाल को इतना गुस्सा

इसीलिए उसने अपने शागिर्दों को हम लोगों पर हमला करने के लिए लगा दिया है। अपने माल का हिस्सा मैं हरदयाल को क्यों दूं ? वह क्या मुझे हिस्सा देता है ?"

हरदयाल बोल उठा, "नहीं बड़े बाबू, उसकी बात पर कान मत दें, मैं उस तरह के बेईमान की औलाद नहीं हूं। मैं अपनी पूरी आमदनी शागिर्दों के बीच बराबर-बराबर बांट देता हूं।"

गोपाल हाजरा को यह सब बात अच्छी नहीं लग रही थी। बोला, 'तुम लोग बमबाजी करना बन्द कर दो। मैं कल आने पर यदि देखूंगा कि तुम लोग दुबारा बमबाजी कर रहे हो तो तुम बरदा घोषाल बाबू से कहकर तुम लोगों की ठेकेदारी बन्द करा दूंगा।"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद बोला, "असामी कहां है ?"

फटिक बोला, "अपने ठेके के मकान में मैंने उन्हें ताला बन्द करके रख दिया है। वरना हरदयाल के आदमी उन्हें देख लेंगे तो बेइज्जत करेंगे।"

"मैं खड़ा हूं, कोई उन्हें बेइज्जत नहीं कर सकता।"

फटिक बोला, 'नहीं हुजूर, आपको मालूम नहीं, हरदयाल ने उनकी कार तक को तोड़ दिया है।"

"कार कहां है ?"

फटिक बोला, "गाड़ी लेकर ड्राइवर किसी तरह अपनी जान बचाकर भाग गया। और थोड़ी देर हो जाती तो यह शैतान की औलाद गाड़ी में ही आग लगा देता। मैं अगर उन्हें घर में बन्द करके नहीं रखता तो उन्हें भी उठाकर मार देता। घच्चर है यह हरदयाल—"

"ऐ, खबरदार, गाली मत बक। तू भले आदमी का लड़का है फिर जबान से अपशब्द क्यों निकाल रहा है ? चल, देखूं तेरा असामी कहां है।"

फटिक के साथ ही गोपाल हाजरा भी गली के अन्दर घुस पड़ा। साथ में पुलिसकर्मी बच्चू भी है। पुलिसकर्मी को देखकर मुहल्ले की लड़कियों को ढाढ़स मिला। ताक-झांक कर उन लोगों ने देखा और पुलिसकर्मी पर नजर पड़ते ही दरवाजा खोलकर बाहर निकल आईं।

एक जगह आकर फटिक एक मकान के सामने खड़ा हुआ। दरवाजे पर ताला लटका हुआ है। ताला खोलते ही एक नशे में धुत व्यक्ति लड़खड़ाते कदमों से बाहर निकलकर आया। उसके साथ एक औरत है।

सामने आते ही रोशनी में चेहरा साफ-साफ दिखने लगा।

गोपाल हाजरा ने उस चेहरे को पहचानते ही कहा, "अरे—"

इससे अधिक शब्द उसके मुंह से नहीं निकले। बगलवाली औरत के चेहरे को भी गोपाल हाजरा ने गौर से देखा। चेहरे का रंग बिलकुल सफेद है। दोनों नशे के कारण लड़खड़ा रहे हैं।

"आप मिस्टर मुखर्जी हैं न ?"

नशे में धुत रहने के कारण मिस्टर मुखर्जी ने अपना नाम सुनकर भी जैसे न सुना हो।

पूछा, "कौन ?"

गोपाल ने कहा, "आप सौम्य बाबू हैं न ?"

सौम्य वावू का पूरा जिस्म उस समय शराब के नशे से सराबोर था। लड़-खड़ाती आवाज में पूछा, "आप ? आप कौन हैं ?"

"मुझे आप पहचान नहीं सके ? मैं वही गोपाल हाजरा हूं···नाइट क्लब···"

सौम्य वाबू के चेहरे को देखने से पता नहीं चला कि उन्होंने गोपाल हाजरा नामक किसी व्यक्ति को पहचाना या नहीं।

पीछे की तरफ खड़ी महिला से कहा, "कम-ऑन, कम-ऑन डार्लिंग—"

उसके वाद गोपाल हाजरा की ओर ताकते हुए वोले, "आप मेरी वाइफ हैं। मिसेज़ मुखर्जी, मिसेज़ रीटा मुखर्जी—"

मुक्तिपद को विरासत में वहुत कुछ मिला था। अर्थ और ख्याति मिली थी, हज़ारों आदमी के कर्त्ता-धर्त्ता-विधाता पुरुष का पद मिला था। लेकिन जव उन्हें यह सव प्राप्त हुआ था, उस समय उन्होंने यह सपने में भी नहीं सोचा था कि उन सवों की प्राप्ति के साथ ही उन्हें इतनी अशांति, यातना, अभिशाप और अनिद्रा की भी प्राप्ति होगी।

नंदिता लेकिन उन सव मामलों में निलिप्त है। वह अव भी पहले के मानिन्द ही आराम से सोती है, आराम से सिनेमा देखती है। जैसी मां है लड़की भी वैसी ही। उन लोगों की घर-गृहस्थी में अव भी जीवन-यात्रा पहले की तरह ही उद्वेग, उत्पात और झंझट के विना चल रही है। उतनी वड़ी फैक्टरी वन्द पड़ी हुई है, यह सोचने की उनकी ज़िम्मेदारी नहीं हो जैसे। और न केवल ज़िम्मेदारी, ज़रूरत भी नहीं है।

जव नंदिता देखती है कि मुक्तिपद कहीं वाहर निकल रहा है तो पूछती है, "अव कहां जा रहे हो ? तुम्हारी फैक्टरी वन्द है।"

मुक्तिपद कहते हैं, "फैक्टरी वन्द है तो मेरा वाहर निकलना भी वन्द है ? मुझे कोई काम नहीं रह सकता है ?"

नंदिता कहती है, "अभी ज़रा 'रेस्ट' लो—रेस्ट लेने से तुम्हारा इनसोमनिआ भी कम हो जाएगा और ब्लडप्रेशर भी।"

मुक्तिपद अपने आप कहने लगते, "काश ! ऐसा हो पाता तो मैं जी जाता। मेरे हज़ारों वर्करों को खाना नहीं मिल रहा है, वर्करों के वेरोज़गार लड़कों ने चोरी-धोखाधड़ी करना शुरू कर दिया है और लड़कियों ने वेश्यावृत्ति। यह सव सुनकर मुझे आराम करना शोभा देता है ! मेरे शरीर को आराम मिलेगा लेकिन मेरा मन ?"

नंदिता कहती है, "इसीलिए तो कह रही हूं कि किसी दिन मेरे साथ सिनेमा देखने चलो। सिनेमा देखने से तुम सव कुछ भूल जाओगे। सो तो तुम जाओगे नहीं। इसी वजह से यह 'ड्रग-हैविट' हो गया है।"

इस वात का क्या जवाव दें मुक्तिपद ! जो लोग सव कुछ देखने के वावजूद समझेंगे नहीं, आंखें वन्द किए सव कुछ विसराए रहेंगे उन लोगों की वात का वह क्या उत्तर दे !

"और सिर्फ क्या यही ?"

मुक्तिपद बोले, "एक ओर फैक्टरी में तालाबन्दी चल रही है, [illegible] नहीं मिल रहा है, दूसरी ओर मा मरने-मरने की हालत में है और [illegible] यह कांड कर बैठा ! मैं अकेले किस तरफ संभालूं ?"

"अपने सौम्य के कांड की चर्चा मत करो। वह हम सबों का [illegible] छोड़ेगा, यह कहे देती हूं। दादी मां से जो लड़का इतना लाड़ [illegible] रह सकता है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "वह बात अब कहकर क्या होगा ?"

नंदिता ने कहा, "इसका जिक्र मैंने बहुत पहले ही [illegible] मेरी बात पर ध्यान नहीं दिया।"

"तुमने मुझे यह बात कब कही थी ?"

"क्यों, पिकनिक ने तो मुझे सारा कुछ बताया था, [illegible] था। तुम्हें याद नहीं है कि सौम्य ऑफिस से भागकर [illegible] जाता था। रसेल स्ट्रीट की उस लड़की को अपने साथ ले, [illegible] बिताता था, यह जानना मेरे लिए बाकी नहीं था। [illegible] सबको मालूम हो गया था। उस लड़की का नाम [illegible] है।"

मुक्तिपद को इस बात का स्मरण हो आया।

नंदिता ने कहा, "असल में सारा दोष तुम्हारी मां का ही है। [illegible] बढ़िया खाना देकर उस घर में पाल क्यों रही है ? [illegible] लाड़ पालकर क्यों रखा था ? उस समय नहीं जानती थीं कि [illegible] नाश कांड होगा ?"

मुक्तिपद इसका क्या उत्तर दे सकते हैं ! मां की [illegible] सब बात भला कही जा सकती है !

मुक्तिपद को अब बरदाश्त नहीं हो रहा था। [illegible] थोड़ी बहुत ममता देनेवाली जो औरत थी, [illegible]। शायद सुनने की भी सामर्थ्य नहीं है उनमें। अब मुक्तिपद [illegible] खड़ा होंगे ?

उस दिन बिडन स्ट्रीट के मकान के सामने जाते ही मुक्तिपद ने देखा, एक टूटी हुई गाड़ी मकान के सामने पड़ी हुई है।

मंझले बाबू पर आंखें जाते ही गिरिधारी ने सलाम किया।

मुक्तिपद ने गिरिधारी से पूछा, "यह किसकी गाड़ी है, [illegible]"

गिरिधारी ने कहा, "मुन्ना बाबू की गाड़ी है हुजूर।"

"सौम्य की गाड़ी ? इस तरह टूट क्यों गई ?"

गाड़ी कैसे टूट गई, इसकी खबर रखना गिरिधारी का [illegible] मालिक को वह क्या जवाब दे, यह सोचकर चुप्पी साध गया।

मुक्तिपद ने पूछा, "मुन्ना बाबू घर में है ?"

गिरिधारी ने कहा, "नहीं हुजूर, अभी तुरन्त [illegible] है।"

"कैसे बाहर गया ? कौन-सी गाड़ी लेकर गया ?"

गिरिधारी ने कहा, "मुन्ना बाबू ने नई गाड़ी [illegible] है।"

मुक्तिपद गिरिधारी की बात सुनकर [illegible]।

गाड़ी टूट गई है तो एक नई गाड़ी खरीद ली ? इस दुर्दिन में सौम्य ने नई गाड़ी खरीद ली ! रुपया क्या सौम्य के लिए माटी के ढेले के समान है ? फैक्टरी वन्द, प्रोडक्शन वन्द, इसलिए इनकम भी वन्द। उस पर नई गाड़ी खरीदना !

मुक्तिपद ने अव वहां खड़े रहकर वक्त वर्वाद नहीं किया।

सीधे मल्लिकजी के कमरे के अन्दर चले गए।

मल्लिकजी ने अचकाकर कहा, "आइए-आइए, वैठिए—"

मुक्तिपद वैठे नहीं। वोले, "मुन्ना की गाड़ी कैसे टूट गई ?"

मल्लिकजी ने उठकर खड़े होते हुए कहा, "कन्हाई ने वताया, गुंडों ने उनकी गाड़ी तोड़ दी। कन्हाई ने उन्हें रोकना चाहा तो वे लोग गाड़ी में आग लगाने के लिए आने लगे। उसकी देह में काफी चोट लगी है—"

"कन्हाई ? कन्हाई कौन है ?"

"मुन्ना वावू ने जो नया ड्राइवर रखा है, उसका नाम कन्हाई है।"

मुक्तिपद ने कहा, "ओह ! उसके वाद ?"

"उसके वाद कन्हाई ने अक्ल से काम लिया और टूटी गाड़ी लेकर किसी तरह पार्क स्ट्रीट के थाने में पहुंचा। पुलिस को जाकर सारा कुछ वताया। लेकिन पुलिस उसकी केस-डायरी लेने को राजी नहीं हुई।"

"क्यों ? क्यों नहीं ली ?"

मल्लिकजी ने कहा, "क्यों नहीं ली, यह मैं वता नहीं सकता। आजकल तो सारा कुछ पार्टी का मामला है। कन्हाई से नाम-धाम पूछने पर, हो सकता है समझा हो कि ये लोग उन लोगों की पार्टी के आदमी नहीं हैं—इसीलिए डायरी लेने को राज़ी नहीं हुई।"

"तो फिर मुन्ना वहू के साथ घर कैसे लौटा ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मुन्ना वावू का कोई मित्र वहां था। उसका नाम है गोपाल हाजरा। वहां मुन्ना वावू को उस हालत में देखकर, तरस खाकर वह उन दोनों को घर पहुंचा गया।"

"और कन्हाई कहां है ? उसे एक वार वुलाइए तो। देखूं, वह क्या कहता है।"

मल्लिकजी ने कहा, "कन्हाई घर में नहीं है। वह अस्पताल में है। उसके जिस्म में कई जगह ज़ोरों से चोट लगी है।"

"तो अव मुन्ना किस गाड़ी पर चढ़ता है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मुन्ना वावू ने एक नई गाड़ी खरीदी है ?"

"नई गाड़ी खरीदी है ? यह क्या ?"

"हां।"

"कितनी कीमत देनी पड़ी ?"

"सो मुझे मालूम नहीं। मुझे कुछ वताया नहीं।"

"अव गाडी ड्राइव कौन करता है ?"

मल्लिकजी वोले, "अभी तक ड्राइवर नहीं मिला है। खुद ही चलाते हैं।"

मुक्तिपद के मुंह से ऊव की एक निरर्थक आवाज़ निकली। उसके वाद वे वहां खड़े नहीं रहे। जिस तरह तेज़ कदमों से कमरे के अन्दर आए थे उसी तरह तेज कदमों से वाहर निकल तीन-मंज़िले पर चढ़कर दादी मां के कमरे की तरफ

चले गए।

मल्लिकजी के बदन में पसीना छूटने लगा। इसी को नौकरी कहते हैं। इस नौकरी को करते हुए उन्होंने सारी जिन्दगी बर्बाद कर दी। लेकिन सान्त्वना की बात यही है कि और किसी दूसरी जगह नौकरी करते तो इतने करीब से जीवन को देख नहीं पाते। यहां इन्होंने ऐश्वर्य भी देखा और अन्याय-अपराध भी। साथ ही दरिद्रता का भी साक्षात्कार किया। सिर्फ आर्थिक दरिद्रता ही क्या बड़ी दरिद्रता है? मानसिक दरिद्रता आर्थिक दरिद्रता की अपेक्षा अधिक घृणित, भयंकर और कष्टदायक होती है। इतने करीब न रहते तो उसे क्या देख पाते? निर्धनता अभिशाप हो सकती है लेकिन मानसिक अधःपतन की तुलना में वह वरण करने योग्य ही है।

यह क्यों हुआ?

यह प्रश्न उन्होंने अपने आपसे बहुत बार किया है। कभी लगा है अर्थ की प्रचुरता ही इसके लिए जिम्मेदार है, लेकिन दूसरे ही क्षण लगा है ऐसी बात नहीं है। अर्थ तो बहुतों के पास था और अब भी है। लेकिन सबों का अधःपतन नहीं हुआ है। सोच-सोचकर उन्होंने रहस्य को ढूंढ़ निकाला। रहस्य है वैराग्य की अनुपस्थिति। अर्थ हो फिर भी उसके प्रति कोई कोशिश न हो, यह क्या यों ही कठिन वस्तु है! मुखर्जी वंशधरों में से किसी के मन में इसका आविर्भाव क्यों नहीं हुआ!

यह जो आए दिन सौम्य मुखर्जी अपनी पत्नी को साथ लेकर बाहर जाते हैं और उसके बाद वहीं रात बिताकर लड़खड़ाते कदमों से बेहोशी जैसी हालत में घर लौटकर आते हैं, देवीपद मुखर्जी के जमाने में इसकी कल्पना की जा सकती थी? उनके खानदान की तीसरी पीढ़ी में आकर सौभाग्य का वह [illegible] क्यों अस्पताल की ओर बढ़ने लगा? जबकि गुरु से दीक्षा लेने से शुरू कर घर में [illegible] वाहिनी के नित्य पूजा-पाठ या भोर-बेला में प्रत्येक दिन गंगा-स्नान में कोई [illegible] नहीं हुई थी। फिर इसका कारण क्या है?

सदीप ने भी उनसे यही सवाल किया था।

मल्लिकजी ने जो सवाल अपने मन से बार-बार किया है, [illegible] सवाल कर बैठा। "फिर क्या समझना होगा कि पूजा-पाठ दान-[illegible] और गंगा-स्नान की कोई उपयोगिता नहीं है?"

मल्लिकजी बोले, "उपयोगिता नहीं है, यह मैं कैसे कह सकता हूं [illegible] है? लेकिन सब पूजा पूजा नहीं होती, सब दीक्षा दीक्षा नहीं है [illegible] स्नान भी गंगा-स्नान नहीं है—

"इसका मतलब?"

मल्लिकजी ने कहा था, "एक होती है बुद्धिमान की पूजा और दूसरी [illegible] वान की पूजा—" उसके बाद इस बात की व्याख्या की थी, [illegible] करता है तो देवी के सामने सिर झुकाकर कहता है [illegible] तुम्हारी पूजा की है, मुझे मुकदमे में जिता दो। या यह [illegible] है कि [illegible] के टिकट में पांच लाख रुपया दिला दो।"

"और भक्तिवान की पूजा कैसी होती है?"

"भक्तिवान किसी चीज की उम्मीद में पूजा नहीं करता। वह देवी के
मने आत्म-निवेदन करके ही स्वयं को कृतार्थ समझता है। वह देवी की पूजा करने
निमित्त ही पूजा करता है। वदले में कुछ पाने की उम्मीद न करने से उसकी
जा विडंवना में परिणत नहीं होती। इसीलिए मैं कह रहा था कि दादी मां की
ूजा वुद्धिमान की पूजा थी। इसीलिए उनके जीवन में इतनी विडंवनाएं हैं—"

यह सब वात संदीप को अव भी याद है। कितने दिन पहले की हैं ये वातें।
लेकिन अव भी आंखों के सामने वह सब दृश्य तैरता रहता है।

संदीप ने व्याकुल होकर पूछा, "तो फिर उन लोगों का क्या होगा? मंझले
वावू ने कुछ वताया?"

मल्लिकजी ने कहा, "मैंने नहीं पूछा है। तुम जिस तरह नौकर हो मैं भी उसी
तरह का नौकर ही हूं। मंझले वावू से मेरा सिर्फ मालिक और नौकर का रिश्ता है।
मालिक जो कुछ पूछें उसका जवाव देने के अलावा और कुछ नहीं पूछना चाहिए।"

संदीप ने कहा, "अभी तो दादी मां वीमार हैं। मंझले वावू अगर उन्हें चले
जाने कहें तो?"

मल्लिकजी वोले "मल्लिक की वात तो मुझे माननी ही होगी। मैं उस घर में
रुपया भेजना वंद कर दूंगा।"

"उसके वाद वे लोग कहां जाएंगे?"

मल्लिकजी वोले, "उसकी चिंता न तो मुझे है और न तुम्हें ही। तुम्हें खुद के
लिए ठहरने की कोई जगह नहीं है। तुम उस वात के संवंध में माथापच्ची क्यों
करते हो?"

संदीप वोला, "मौसीजी मुझे देखकर वहुत रोने लगती हैं।"

"मौसीजी रोती हैं तो तुम्हारा क्या आता-जाता है? तुम्हें तो वैंक में नौकरी
मिल चुकी है। अव तुम्हारे लिए चिंता की कौन-सी वात है? अगर यहां की नौकरी
चली जाती है तो तुम्हारे लिए वेरोजगार होने का कोई डर नहीं है।"

संदीप ने दुवारा वही प्रश्न दुहराया, "लेकिन विशाखा का क्या होगा?"

मल्लिकजी वोले, "विशाखा के लिए तुम इतनी माथापच्ची क्यों करते हो?
उससे किसकी शादी होती है या नहीं होती है, इससे तुम्हारा क्या आता-जाता
है?"

उसके वाद जरा सोचकर फिर वोले, "इसके अलावा सौम्य वावू से उसकी
शादी न होना ही उसके लिए मंगलकारी है। यहां शादी होती तो वह लड़की ए
पियक्कड़ के पल्ले वंध जाती। यह क्या अच्छा होता, तुम यही कहना चाहते हो
उससे तो वेहतर है कि एक गरीव घर के चरित्रवान लड़के से उसकी शादी हो
उसके पास रुपया-पैसा चाहे रहे या न रहे, उसमें भी कुछ वनता-विगड़ता नहीं
सौम्य वावू का कांड सुना है तुमने? गाड़ी टूटकर चूर-चूर हो गई है, ड्राइवर
सख्त चोट लगी है, मगर नहीं यही उसका सौभाग्य है। इस किस्म के जमाई
शादी होना क्या अच्छा होता?"

संदीप इस वात पर सोचने लगा।

"लेकिन वहां मौसीजी रोते-रोते व्याकुल हो गई हैं। उन्हें मैं कैसे समझा
वह कौन-सा मुंह लेकर फिर देवर के घर जाएंगी और कैसे अपनी देवरानी

लात और मार बरदाश्त करोगे ?"

मल्लिकजी अब जरा गुस्सा गए। बोले, "उन लोगों के साथ क्या होगा या नहीं होगा, इससे तुम्हें कौन-सा वास्ता है ? तुम उन लोगों के कौन होते हो या वे ही लोग तुम्हारे कौन होते हैं ? तुम्हें उन लोगों का कौन-सा सरोकार है ? तुम अगर दुनिया के तमाम दुखी लोगों के बारे में सोचकर दुख का अनुभव करोगे तो ऐसी हालत में तुम्हें सुकून का अहसास

कितने आदमी को कितने तरह का दु

सकोगे ? कभी कोई दूर कर सका है

दुख दूर करने के कारण वे महापुरुष हो गए हैं। लेकिन तुम ? तुम क्या उस तरह के महापुरुष होना चाहते हो ? उदाहरण के लिए, सुकरात, ईसामसीह, तथागत बुद्धदेव महापुरुष हो गए हैं।"

सदीप चुप्पी ओढ़े रहा। इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

मल्लिकजी फिर कहने लगे, "अगर तुम भी वही कोशिश करोगे तो तुम्हारे दुख-कष्ट की कोई सीमा नहीं रहेगी। तुम्हें यह बताए देता हूं। वैसी हालत में तुम उस तरह का दुख-कष्ट बरदाश्त कर सकोगे ? अच्छी तरह सोचकर देख लो। सोच लो, तब मुझे जवाब देना।"

उस दिन की सारी बात सदीप को अब भी याद है। मल्लिकजी की उस दिन की बातों का अक्षरशः पालन करने के बावजूद वह क्या आज महापुरुष बन सका है ? उसने तो उस दिन तमाम दुख-कष्ट, अपमान-असम्मान को शिरोधार्य कर लिया था। उसके फलस्वरूप वह जेल में सिर्फ एक कैदी बनकर ही रह गया। आज उसकी कोई अस्मिता नहीं है। वह तो चोर है, वह तो नब्बे लाख रुपये के गबन का दागी मुजरिम है। आज समाज और संसार उसे इसी रूप में जानता है। अब उसकी कोई दूसरी पहचान नहीं है।

आज वह मल्लिकजी नहीं है कि उनसे वह यह बात पूछे। अगर वे जिन्दा होते तो सदीप उनके पास जाकर पूछता, "मैंने तो आपकी सारी बात का अक्षरशः पालन किया था। मैंने तो दूसरे का पूरा बोझ स्वेच्छा से अपने सिर पर उठा लिया था। तो फिर आज मेरी यह पहचान क्यों है कि मैं एक दागी मुजरिम हूं ! दागी मुजरिम के अलावा मेरी क्या और कोई अस्मिता नहीं है ? क्यों ? क्यों ?

नौकरी की जिन्दगी में ऐसी वारदात बहुत कम ही होती है।

आमतौर से जो लोग नौकरी में भर्ती होते हैं उन्हें अधिकांश स्थिति में साल-दर-साल नियमानुसार वेतन-वृद्धि पाकर एक पहले से तय की गई सीमा-रेखा पर पहुंचने के बाद नौकरी के जीवन से कार्य-मुक्त होना पड़ता है। उसके बाद से पेंशन की शुरुआत हो जाती है।

लेकिन इसे सदीप का सौभाग्य कहें या दुर्भाग्य, उसके मामले में इसका उल्टा ही हुआ।

यह समाचार पहले परेश दा ने उसके पास पहुंचाया।

परेश दा ने उसे बुलवा भेजा और कहा, "मुझे क्या खिलाओगे, बताओ ?"

संदीप को शुरू में कुछ समझ में नहीं आया। कहा था, "आप क्या खाना चाहते हैं, बताइए ?"

परेश दा ने कहा, "परांठे और अंडे की करी, और कुछ नहीं—"

"यह कौन-सी बड़ी बात है !" संदीप ने कहा, "चलिए, कैंटीन चलिए।"

परेश दा ने कहा, "लेकिन मैंने खाने की इच्छा जाहिर क्यों की, यह तो तुमने पूछा ही नहीं।"

संदीप ने कहा, "आपने खुद खाने की इच्छा प्रकट की, इस पर मैं क्या कह सकता हूं !"

परेश दा बोले, "एक खुशखबरी है, इसीलिए तुम्हें खिलाने के बारे में कह रहा हूं। चलो, चलो—"

कैंटीन के अन्दर जाकर परेश-दा एक कोने की मेज़ पर बैठ गए और बोले, "एकांत में ही कहना अच्छा रहेगा, नहीं तो सब लोग सुन लेंगे। अभी तक सबको मालूम नहीं है।"

संदीप को तब भी पता नहीं चला कि ऐसी कौन-सी गोपनीय बात है जो परेश दा किसी दूसरे को जानने देना नहीं चाहते।

परांठे आए, अंडे की करी भी आई। परेश दा तल्लीनता के साथ अंडे के साथ परांठे खाने लगे। उसके बाद बोले, "और दो परांठे और एक प्लेट अंडे की करी का ऑर्डर दो।"

उस समय महीने का आखिरी सप्ताह चल रहा था। संदीप को तनख्वाह नहीं मिली थी। संदीप ने पॉकेट में हाथ डालकर देख लिया। चार-पांच रुपये हैं, कोई बात नहीं।

सो फिर वह सब आया। परेश दा मन लगाकर परांठे खाने लगे। बोले, "वाह, आज अंडा बहुत ही उम्दा बना है। तुम नहीं खाओगे ?"

संदीप खुशखबरी सुनने के खिए बेताब था। बोली, "नहीं, आज मुझे कोई खास भूख नहीं है, आप खाइए—"

दरअसल उसके पॉकेट में ज्यादा पैसा नहीं है, यह बात नहीं बताई। आखिर में वह अपने को रोक नहीं सका। बोला, "क्या खुशखबरी है, यह तो आप कह ही नहीं रहे हैं।"

परेश दा बोले, "तो फिर सुनो। कल तुम्हारे घर जाने के बाद मैनेजर ने मुझे बुला भेजा था। हम लोगों के एक और ब्रांच में पॉसिंग ऑफिसर का पोस्ट सैंक्शन हो रहा। उसके लिए किसका निर्वाचन किया जाए, मैनेजर ने मुझसे यही पूछा।"

"उसके बाद ? उसके बाद ? आपने क्या कहा ?"

परेश दा ने परांठे का एक टुकड़ा मुंह में डाल, चबाते हुए कहा, "मैंने कहा, सोचकर देखूंगा। सोच रहा हूं, तुम्हारा नाम बताऊं। मैंने कहा है, तुम बहुत ऑनेस्ट और इंड्रसटियस हो। तुम कभी देर से ऑफिस नहीं आते। सोच रहा हूं, तुम्हारा ही नाम रेकॉमेंड करूं।"

संदीप अचानक एक कांड कर बैठा। चट से झुककर परेश दा के चरणों का स्पर्श कर अपने हाथ को माथे तक ले गया।

"अहा, क्या कर रहे हो, क्या ?"

संदीप ने कहा, "आपने मेरा ऐसा उपकार किया है कि क्या बताऊं! मुझे जो तनख्वाह मिल रही थी, उससे मेरा गुजारा नहीं हो रहा था। मैं तो आपको बता ही चुका हूं कि मैं अत्यंत दरिद्र आदमी का लड़का हूं। मेरी विधवा मां ने दूसरे के घर में रसोई पकाने का काम कर मुझे पाला-पोसा है। अब भी मां वही काम कर रही है। कलकत्ता में दूसरे आदमी के छोटे-मोटे काम कर देने के बदले रहने की जगह और खाना मिल जाता है। मैं आपको किन शब्दों में धन्यवाद दूं, समझ में नहीं आता—मैं आपका चिर दिन आभारी रहूंगा।"

बात करते-करते संदीप की आंखें जलने लगीं और आंसू भर आए।

परेश दा बोले, "ठीक है भाई, मुझसे इतना कहने की जरूरत नहीं। मैं खुद भी गरीब आदमी का लड़का हूं, मैं गरीबों का दुख महसूस कर सकता हूं। तुम फिक्र मत करो, तुम्हारे लिए मैं रास्ता निकाल दूंगा। मगर यह सब किसी से मत कहना।"

उसके बाद खाना खत्म होने पर दोनों अपनी-अपनी जगह पर जाकर बैठ गए।

ऑफिस से लौटने के बाद दूसरी ही चिंता ने घर लिया। ऑफिस में जो हालत रहती है, घर में भी वही। घर आते ही मल्लिकजी से सबकुछ सुनना पड़ता है। मझले बाबू ने कहा है, रसेल स्ट्रीट की मौसीजी के पीछे बेवजह हर महीने पांच-छह हजार रुपये खर्च होते हैं। उसे वे बंद कर देना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त सौम्य बाबू का अपनी पत्नी के साथ बाहर जाना, वहां से दोनों का नशे में चूर होकर घर वापस आना और उसके बाद एक दिन गाड़ी का टूटना—इन सारी बातों ने संदीप को बेचैन बना दिया है।

उसकी बगल में ही खगेन बैठता है। खगेन यानी खगेन सरकार। उसने पूछा था, "आपको परेश दा कैंटीन क्यों ले गए थे? कौन-सा मकसद था?"

संदीप ने कहा, "नहीं, ऐसी कोई बात नहीं थी। यों ही ले गए थे।"

खगेन बोला, "आप यह कहिएगा तो मैं मान लूंगा? मुझे भी उल्लू बनाकर परेश दा उसी तरह पराठे और अंडे की करी खा चुके हैं। आप परेश दा को पहचान नहीं सके।"

"आपने खिलाया था?"

"हां। मुझसे कहा था कि पॉसिंग ऑफिसर के प्रमोशन के लिए वे मैनेजर के पास मेरा नाम रेकॉमेंड कर देंगे।"

संदीप खगेन सरकार की बात पर स्तब्ध रह गया।

खगेन सरकार ने और भी बताया, "सिर्फ मेरे साथ ही वाकया नहीं हुआ है, निदिव घोष को पूछकर देख लें। निदिव घोष, माधव भट्टाचार्य, बरेन साहा सबको यही कहकर चकमा दिया है और सिर पर हाथ फेरकर पराठे और अंडे की करी खाई है। और सबसे कहा है कि किसी से मत बताना। तुम्हें ही मैं पॉसिंग ऑफिसर के पोस्ट के लिए रेकॉमेंड करूंगा।"

संदीप ने तब भी दुनिया नहीं देखी थी इसीलिए खगेन सरकार की बात सुनकर उसे बेहद आश्चर्य हुआ था। इस तरह का भी आदमी होता है! उसने गोपाल हाजरा को देखा था, तारक घोष को देखा, सौम्य बाबू को देखा था, तपेश गांगुली

को देखा था। राह-घाट में भी वहुत सारे लोगों को देखा था। कोई धर्म के नाम पर धोखा देकर रुपया कमा रहा है, कोई वेशर्मी से आदमी को ठगकर रुपया कमाने का धंधा कर रहा है। ऐसे लोगों से ही यह दुनिया भरी हुई है। संख्या की दृष्टि से कमोवेश उन्हीं लोगों की ज्यादा आवादी है। फिर?

उस कमसिन उम्र में ही संदीप जान गया था कि अगर उसे इस धरती पर टिके रहना है तो इन लोगों से समझौता करके नहीं, लड़ाई लड़कर ही अपनी सुरक्षा करनी है और जिन्दा रहना है।

वाहर से ये लोग कितने मंजे हुए, शिष्ट और शिक्षित लगते हैं। लेकिन ऐसी हरकत करते हैं!

ये लोग क्योंकि अपनी हालत से सन्तुष्ट नहीं हैं इसीलिए ऐसा करते हैं। वैंक के इन मामूली लोगों के मत्थे ही दोष मढ़ने से कौन-सा लाभ है? देश के जो नेता हैं, मंत्री हैं, आइ० ए० एस०, वी० सी० एस० हैं, जो लोग वड़े-वड़े उद्योगपति हैं, जो लोग फ़ैक्टरी के मैनेजर हैं, जो लोग एडवोकेट-वैरिस्टर हैं, वे लोग क्या परेश दा से कुछ कम हैं? क्यों सौम्य वावू सारा कुछ जानने-सुनने के वावजूद इस तरह की पियक्कड़ मेम पत्नी ले आए? वैसा नहीं करते तो दादी मां इस तरह अस्वस्थ नहीं होतीं।

मल्लिकजी के कमरे से निकल मंझले वावू सीधे तीन-मंजिले के मां के कमरे में चले गए। दादी मां की वारी-वारी से सेवा-सुश्रूषा करने के लिए दो नर्सें रखी गई हैं।

उस वक्त एक नर्स ड्यूटी पर थी। मंझले वावू पर नजर पड़ते ही चौकस हो गई।

मंझले वावू ने पूछा, "अभी पेशेंट की क्या हालत है?"

नर्स वोली, "कल से कुछ अच्छी हालत में हैं।"

नर्स ने ब्लड रिपोर्ट, यूरिन रिपोर्ट के अलावा और भी कितनी ही रिपोर्टों के कागजात मंझले वावू की तरफ़ वढ़ा दिए। मंझले वावू ने यह सव देखकर महसूस किया कि रोगी की हालत में सुधार हो रहा है। तकरीवन सारा कुछ सामान्य स्थिति की ओर वढ़ रहा है।

मंझले वावू ने उसी कमरे से डाक्टर को फोन किया। लेकिन रिसीवर उठाकर डायल करते ही क्रॉस कनक्शन हो गया।

शुरू में वे लाइन छोड़ देना चाहते थे। लेकिन एक वात कान में आते ही ध्यान से दोनों तरफ का वार्तालाप सुनने लगे।

एक तरफ से किसी ने कहा, "कितने हज़ार की जरूरत है?"

दूसरी तरफ से एक आदमी ने कहा, "कम से कम साठ हज़ार।"

"साठ हज़ार रुपया?"

"हां, हर महीने साठ हज़ार रुपये चाहिए। नहीं तो वे लोग यूनियन छोड़ देंगे। यूनियन छोड़ देंगे तो हम लोगों का कैसे चलेगा?"

उस तरफ से सवाल किया गया, "कौन लोग?"

"सैक्सवी मुखर्जी कम्पनी के सभी वेरोजगार युवक। अव वे लोग तनकर खड़े हो गए हैं। उनका कहना है: आप लोगों ने हमें समझाया था कि हड़ताल करने से

हम लोगों की तनख्वाह बढ़ जाएगी, इसी वजह से हमने हड़ताल की। अब कम्पनी में तालाबंदी होने के कारण हमें तनख्वाह नहीं मिल रही है। हम लोग कैसे पेट भरें। हम कैसे गृहस्थी चलाएंगे ? हम लोग यूनियन छोड़ देंगे।"

यह सुनकर दूसरी तरफ का आदमी बोला, "अब आपका क्या कहना है ?"

इस तरफ के आदमी ने कहा, "मैं सोचता हूं, सभी अगर यूनियन छोड़ देंगे तो हम कैसे चलाएंगे ? वे लोग हम लोगों पर बहुत ही खफा हो गए हैं।"

"यह जो बंगाल बंद के आह्वान की जो बात चली थी, उसका अगर आह्वान किया जाए तो कैसा रहेगा ?"

उस तरफ से आवाज आई, "उससे कोई खास सहूलियत नहीं होगी सर। यहां तो छह माह पहले एक बार बंगाल बंद की कार्रवाई हो चुकी है। उस बार नार्थ कैलकाटा में यह कार्रवाई उतनी कामयाब नहीं हुई थी। बहुत सारे लोग दुकान खोले हुए थे।"

"मुक्तिपद के ऑफिसरों का क्या कहना है ? उन लोगों की कुछ खबरों का जुगाड़ कर सके हो ?"

"कोशिश कर रहा हूं पर अब तक कामयाबी हासिल नहीं हो सकी है। हां, इतना अवश्य ही पता चला है गोपाल हाजरा से कि मुक्तिपद का भतीजा विलायत से मेम ब्याह कर ले आया है। इससे उम्मीद की थोड़ी-सी रोशनी दिख रही है।"

"सो कैसे ?"

"अतुल चटर्जी की लड़की से अपने भतीजे की शादी करने की मुक्तिपद ने जो योजना बनाई थी, वह खटाई में पड़ गई है। अब मंवसवी मुखर्जी की तरफ से सुधीर चटर्जी कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रहा है।"

"तो फिर यह हम लोगों के लिए एक खुशखबरी है।"

"सो तो है ही। लेकिन वर्कर लोग खफा हो गए हैं। वे अब लीडरों से माहवारी तनख्वाह की मांग कर रहे हैं।"

इधर से जवाब गया, "तुम उन्हें समझा दो कि मौजूदा महीने में वे लोग किसी तरह काम चला लें, उसके बाद देखूंगा कि दूसरी जगह से क्या इंतजाम कर पाता हूं। एक काम नहीं कर सकते ?"

"क्या ?"

"एक दिन पदयात्रा करने से कैसा रहेगा ? सिर्फ कुछेक लाख लोगों का इंतजाम करना है। उसमें ज्यादा रुपया खर्च नहीं होगा। वर्कर लोग समझेंगे कि हम लोग उनके बारे में सोच रहे हैं, उन लोगों के लिए हम आंदोलन कर रहे हैं। एकदम साउथ सियालदह से शुरू कर हावड़ा के अंदरूनी हिस्से तक पदयात्रा करनी होगी। सड़क की बस-ट्राम, टैक्सी सब कुछ बंद करना होगा। उससे चाहे कुछ हो या न हो, वर्कर लोग कम से कम इतना तो जरूर ही सोचेंगे कि लीडर लोग उन लोगों के बारे में सोच रहे हैं।"

दूसरी तरफ से आवाज आई, "आइडिया कोई बुरा नहीं है। और यदि इससे भी कुछ नहीं होगा तो एक काम करूंगा सर।"

"कौन-सा काम ?"

"एक वार मुक्तिपद मुखर्जी से मुलाकात करना कैसा रहेगा ?"

"नहीं-नहीं, इससे हम लोगों के यूनियन के कैडर को सन्देह होगा। वात दबा-कर रखना मुश्किल होगा। पता चल जाने पर व्यर्थ ही सारा कुछ खटाई में पड़ जाएगा। ऐसी हालत में यूनियन को संभालकर रखना मुश्किल होगा। उससे वेहतर एक रास्ता है—"

"क्या ?"

अचानक लाइन कट गई। उसके वाद मुक्तिपद ने वहुत वार कोशिश की पर डाक्टर नहीं मिला। लेकिन आश्चर्य इस पर हुआ कि यह संपर्क किसने स्थापित करा दिया। यह क्या दैविक संयोग है ? या सिर्फ दुर्घटना ? सोचने पर वे किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सके।

उसके वाद वे उस कमरे में वैठे नहीं रह सके। वाहर आ सीढ़ियां उतरकर एकवारगी अपनी गाड़ी के अन्दर जाकर वैठ गए। वोले, "चल, घर चल।"

घर पहुंचने पर देखा, कोई नहीं है। सुनने को मिला, मेमसाहव पिकनिक को लेकर सिनेमा गई हुई हैं। उन्होंने अर्जुन सरकार को टेलीफोन पर वुलाया।

अर्जुन सरकार उस समय घर पर ही था। टेलीफोन मिलते ही वोला, "हां सर, मैं अभी आया—पांच मिनट के अन्दर—"

यह कहकर तत्क्षण आ धमका। मुक्तिपद ने उसे सव कुछ विस्तार के साथ वताया। अर्जुन सरकार को सारी अन्दरूनी खवरों का पता रहता है।

मुक्तिपद वोले, "टेलीफोन में क्रॉस-कनक्शन न होता तो मुझे इन खवरों का पता ही नहीं चलता।"

अर्जुन ने कहा, "आपने ठीक ही सुना है सर। मैं कल ही आपको सारी वातों की सूचना देता। सोचा था, और कुछ छोटी-मोटी वातों का पता लगा लूं तो आपको सूचित करूंगा। असल में अभी क्या हुआ है, जानते हैं सर ? कई महीनों से तनख्वाह न मिलने के कारण वहां के सभी वर्कर हताश हो गए हैं। किसी दिन उन लोगों ने मुंह वन्द कर सारी तकलीफें लीडरों का मुंह जोहकर वरदाश्त कर ली थीं। लीडरान अव तक उन्हें वरावर भरोसा दे रहे थे लेकिन अव उन लोगों का विश्वास उठ गया है।"

"क्यों ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "अव कितने दिनों तक उनके प्रति आस्था रहेगी : सर ? वरदा घोषाल एक दिन उन लोगों को समझाने-वुझाने गया था। कहा था : और कुछ दिनों तक धीरज रखे रहो, मैं तुम लोगों का वेतन-स्तर वढ़वा देने की कोशिश करूंगा—देखोगे कि सवका वेतन वढ़ जाएगा।

"उसी मीटिंग के एक नौजवान ने उठकर कहा; अव और कितने दिनों तक हम इन्तजार करेंगे ?

"वरदा घोषाल वोला, और कम से कम तीन महीने तक। मालिक से हम लोगों की वातचीत चल रही है। मालिक का भी तो करोड़ों का नुकसान हो रहा है।

"एक दूसरे व्यक्ति ने कहा : मालिक ने तो करोड़ों का उपार्जन कर लिया है। वे क्या हमारे दुख-कष्ट महसूस कर पाएंगे ? हम लोग वाल-वच्चे और परिवार के

आप कब तक भूखों मरते रहेंगे ?

"एक और व्यक्ति ने कहा : आप लोग तो हमें उत्तेजित कर मटरगश्ती कर रहे हैं। हम लोगों के पैसे से आप लोगों ने मकान बनवा लिए हैं, हम लोगों का दुख आप लोग कैसे समझेंगे ? अब हमें भी कुछ वेतन देना होगा।

"बरदा घोषाल यह बात सुनकर स्तब्ध रह गया। बोला : वेतन ? यह तुम लोग क्या कह रहे हो ?

"वेतन की मांग क्यों नहीं करेंगे ? हम लोगों की पार्टी के पास करोड़ों रुपये हैं। हम लोगों की मुसीबत की घड़ी में अगर वह रुपया खर्च नहीं करते हैं तो रुपया आप लोगों के पास रखकर फायदा ही क्या है ?

"बरदा घोषाल बोला : यह क्या कह रहे हो तुम लोग ? हम लोगों के पास रुपया है ? हम लोगों के पास करोड़ों रुपये हैं ? हमारी तो सर्वहारा वर्ग की पार्टी है। हमारे पास खुद की गाड़ी और मकान है, यह तुम लोगों से किसने कहा ?

"हां, आप लोगों के पास करोड़ों रुपये हैं, यह जानना किसी के लिए बाकी नहीं रह गया है। उन रुपयों का हमें हिसाब देना होगा। हम जानना चाहते हैं कि किन रुपयों से आप लोग मकान बनवाते हैं।

"बरदा घोषाल कुछ देर तक हतप्रभ होकर चुप्पी साधे रहा। उसके बाद बोला : मेरा मकान ? यह क्या कह रहे हो तुम लोग ? बैंक में मेरे नाम से एक भी पैसा नहीं है। तुम लोग कहते हो कि मेरे पास मकान है ! तुम लोग पागल हो या दिमाग खराब हो गया है ?

"आपके पास मकान नहीं है ?

"नहीं, मेरे पास मकान नहीं है।

"लेकिन वह आदमी छोड़नेवाला जीव नहीं था। बोला : तो फिर बेहाला में उतना बड़ा तीन-मंजिला मकान किसका है ?

"बरदा घोषाल अब हो-होकर हंस पड़ा। बोला : अरे, वह मकान तो मुझे ससुराल की ओर से मिला है। मेरे ससुर मरने के पहले लड़की के नाम से वसीयत कर गए थे। और इस गाड़ी के बारे में कह रहे हो ? यह तो पार्टी की गाड़ी है, मैं तो सिर्फ इस पर चढ़ता हूं। पेट्रोल का रुपया और ड्राइवर की तनख्वाह पार्टी देती है।

"एकाएक नौजवानों का एक दल बरदा घोषाल की ओर बढ़कर आया। उन लोगों ने चिल्लाकर कहा : पार्टी के फंड से ही हमें तब तक हर महीने साठ हजार रुपया देना पड़ेगा जब तक कि हड़ताल समाप्त नहीं हो जाती।

"बरदा घोषाल ने अब उन लोगों को समझाने-बुझाने की कोशिश की। बोला : तुम लोग चुप रहो, दिमाग ठंडा रखकर काम करो। उत्तेजित मत होओ। जो कुछ कहना हो ठंडे दिमाग से कहो।

"उस पर सभी एक साथ चिल्ला उठे : यहां के हम मजदूरों को हर महीने साठ हजार रुपया देना पड़ेगा। नहीं तो हम यूनियन छोड़कर दो नम्बर का यूनियन ज्वाइन कर लेंगे।

"बरदा घोषाल बोला : ठीक है, मैं तो फैसला करने का मालिक नहीं हूं, मैं

पार्टी के हाई कमान के सामने इस वात की चर्चा करूंगा। यह कहकर वरदा घोपाल चला गया।"

मुक्तिपद अर्जुन सरकार की पूरी वात ध्यान से सुन रहे थे। पूछा, "उसके वाद क्या हुआ ?"

"उसके वाद सर, वर्करों ने वरदा घोपाल को निशाना वनाकर दो-चार ढेले फेंके। ढेले जाकर वरदा घोपाल की गाड़ी में लगे। लेकिन गाड़ी रुकी नहीं, वरदा घोपाल को लेकर सर्र से आगे वढ़ गई।"

मुक्तिपद ने कहा, "इसीलिए क्या वे लोग वंगाल-वंद का आयोजन करने जा रहे हैं ?"

अर्जुन सरकार ने कहा, "या तो वंगाल वंद का आयोजन करेंगे या फिर पद-यात्रा। कुछ न कुछ करना ही होगा वरना पार्टी का प्रेस्टिज नहीं वचेगा।"

मुक्तिपद उठकर खड़े हो गए। वोले, "ठीक है, तुम जाओ। वात का सिल-सिला आगे वढ़कर जो मोड़ लेता जाए, मुझे खवर पहुंचाते रहना।"

अर्जुन सरकार उठकर खड़ा हुआ। उसके वाद जाने के दौरान पूछा, "सर, मिस्टर चटर्जी का क्या हाल-चाल है ? आपने तो वताया था कि उसका लड़का हम लोगों की फैक्टरी के मजदूर-यूनियन का भार लेगा।"

मुक्तिपद ने उस वात का जवाव न देकर वस इतना ही कहा, "इसके वारे में वाद में वताऊंगा। अव इस संवंध में कोई नई खवर रहे तो मुझे फौरन सूचित करना।"

यह कहकर अन्दर के कमरे की तरफ चले गए। उस समय उन्हें पूरा मकान सुनसान जैसा लगा। और सिर्फ मकान ही नहीं वल्कि उनकी पूरी जिन्दगी भी खालीपन से भर गई है। कहा जा सकता है कि तव पूरी दुनिया ही उनकी निगाह में सूनी और खाली-खाली-सी लग रही थी। उन्होंने कहीं किसी किताव में पढ़ा था—जब तुम्हारे मन में अवसाद या निराशा आए तो तत्क्षण उस स्थान को छोड़-कर दूसरी जगह चले जाओ। वह स्थान चाहे जो भी हो, जितनी भी दूर क्यों न हो। उस समय तुम तनहा मत रहना। ऐसे लोगों से मिलो-जुलो जो तुम्हें विलकुल न पहचानते हों, जिनके लिए तुम विलकुल अनजाने हो।

लेकिन ऐसे हालात में वे दूर कहां जाएंगे ? मां की मरने-मरने जैसी हालत है, सौम्य की यह कारस्तानी ! इस समय मां को अकेली छोड़कर वे कहां जाएंगे ? आश्चर्य, ईश्वर ने जव इस धरती की सृष्टि की थी तो जीवों को जन्म देने के साथ-साथ शायद उनकी मृत्यु भी निश्चित कर दी थी, उनके पुण्य की रचना करने के साथ-साथ ही पाप की भी सृष्टि कर दी थी। जिस दिन मैकडोनल्ड साहव ने इस फैक्टरी का निर्माण किया था, उसी दिन शायद सौम्य मुखर्जी जैसा विनाश का भी एक वीज वो गया था। वरना उन लोगों के खानदान में ऐसा कुलांगार पैदा होता ही क्यों ?

तपेश गांगुली को वहुत दिनों से दुर्दिन का सामना करना पड़ रहा था। लोगों के दिन हमेशा अच्छे नहीं रहते। दरअसल अच्छा और वुरा लेकर ही तो आदमी का

जीवन है। लेकिन तपेश गांगुली की नजर में उससे बढ़कर बदकिस्मत दुनिया में कोई नहीं है। दफ्तर में वेतन में वृद्धि नहीं होती है और वृद्धि होती भी है तो उससे अभाव दूर नहीं होता। उसकी पत्नी भी वैसी मेहनती औरत नहीं है। महीने के एक पखवाड़े तक तपेश गांगुली को बगैर खाना खाए दफ्तर जाना पड़ता है।

तपेश गांगुली सबके सामने अपने दुख का बयान करता। कहता, "मेरा भाग्य ही फूटा हुआ है। देखो न, आज बिना खाना खाए मुझे ऑफिस आना पड़ा।"

दफ्तर का कोई-कोई दोस्त पूछता, "क्यों?"

तपेश गांगुली कहता, "इसलिए कि घरवाली की तबीयत खराब है, सवेरे से सिर-दर्द के कारण बिस्तर पर पड़ी हुई है। रसोई नहीं पकी है। मुझे आज भी कैंटीन में ही खाना खा लेना पड़ेगा।"

बहुतेरे लोग कहते, "तुम्हारी तो वह विधवा भाभी थी। वे ही तो पहले तुम्हारी गृहस्थी का सारा काम-काज करती थीं।"

तपेश गांगुली कहता, "फिर अपनी फूटी तकदीर की बातें क्यों कह रहा हूं? वह भाभी तो करोड़पति की सास है।"

"क्या मतलब?"

इसके बाद तपेश गांगुली को विस्तार से पूरी कहानी कहनी पड़ती थी। सबको बताते-बताते यह कहानी धीरे-धीरे पूरे दफ्तर में फैल गई थी। जो भी यह कहानी सुनता वह तपेश गांगुली की किस्मत से रश्क करता। बहुतेरे लोग घर जाकर अपनी-अपनी पत्नी को भी यह कहानी सुनाते। उनमें से अधिकांश लोगों के घर में विवाह के लायक लड़कियां हैं। लड़की की भविष्य में शादी करने की बात सोचकर बहुतों को रात में ठीक से नींद नहीं आती। वे लोग उस घटना की बात सुनकर भाग्य पर ईर्ष्या करते। कहते, "फूटी हुई तकदीर क्यों कह रहे हो तपेश दा? तुम्हारी जैसी फूटी हुई हमारी तकदीर होती तो हम अपने आपको भाग्यशाली समझते।"

बहुतेरे लोग तपेश गांगुली को कैंटीन ले जाकर खाना खिलाते।

तपेश गांगुली कहता, "सिर्फ चाय ही नहीं भाई। मेरी भाभी तो चाय के साथ-साथ मुझे रसगुल्ले भी खिलाती है। हां, अगर एक प्लेट मांस खिलाओ तो समझूं। बहुत दिनों से मांस नहीं खाया है भाई—"

एक टुकड़ा मांस करी का दाम है एक रुपया। इसमें हर्ज ही क्या है! तपेश दा को वही खिलाना पड़ता। एक प्लेट मांस का दाम बाजार में दो रुपया है। कैंटीन रहने के कारण ही सस्ते दाम में मिल जाता है। लेकिन आमतौर से एक प्लेट मांस से तपेश दा का पेट नहीं भरता। कभी-कभी दो-तीन प्लेट खिलाना पड़ता। बहुतों के लड़के या भतीजे घर पर बेरोजगार बैठे हैं। सैकसबी मुखर्जी कंपनी में अगर कोई नौकरी मिल जाए तो उसके लिए किसी को दो-तीन प्लेट मांस खिलाने में कोई एतराज नहीं है। तपेश गांगुली भी किसी को निराश करने वाला व्यक्ति नहीं है। तपेश गांगुली कहता है, "नौकरी दिलाना कौन-सी ऐसी बड़ी बात है! मेरी भतीजी का पति ही तो कंपनी का डाइरेक्टर है। उसकी कलम की एक लकीर से ही नौकरी हो जाएगी। न तो स्वास्थ्य की जांच करानी होगी और न ही इंटरव्यू देना पड़ेगा। आवेदन-पत्र पर हस्ताक्षर कर देने-भर की देर है।"

इसी तरह बहुत सालों से चल रहा था और सभी को नौकरी का आश्वासन देकर चॉप कटलेट और मांस-करी खाता आ रहा था।

लेकिन सहसा एक दिन गड़बड़ी पैदा हो गई।

श्याम बाज़ार से रथीन घोषाल क्रेमस सेक्शन में काम करने आता था। उसी रथीन ने एक दिन ऑफिस आने पर कहा, "तपेश दा, एक खबर सुनने को मिली है ?"

"क्या ? कौन-सी खबर ?"

"तुमने कोई खबर नहीं सुनी है ?"

"अरे, किस चीज़ की खबर, पहले यह तो बताओ।"

"तुम्हारी भतीजी का पति तो विलायत से मेम ब्याह कर ले आया है। तुम्हें पता नहीं है ?"

"यह क्या ?"

तपेश गांगुली यह सुनकर स्तंभित हो गया। बोला, "तुम्हें यह खबर कहां सुनने को मिली ?"

रथीन ने कहा, "मुहल्ले के लोगों से सुना। इस तरह की खबर क्या दबी हुई रहती है ?"

आसपास के तमाम लोगों ने गौर किया, तपेश दा का चेहरा शुरू में फक्-सा हो गया। उसके बाद ज़रा लाल और उसके बाद बैंगनी रंग का।

उसके बाद बोला, "अब तक मुझे कुछ सुनने को नहीं मिला है। तुमने ठीक-ठीक सुना है न ?"

रथीन घोषाल ने कहा, "जिसने कहा है उसने अपनी आंखों से देखा है।"

"अपनी आंखों से देखा है का मतलब ?"

"मतलब यह कि मुखर्जी-भवन के छोटे पुत्र को शाम के वक्त एक नई गाड़ी पर अपनी मेम पत्नी के साथ घर से निकलते देखा है। मेम साहब की मांग में सिंदूर था, पहरावा बनारसी साड़ी, गले और हाथ में मणि-मुक्ताओं के गहने।"

तपेश गांगुली तनकर खड़ा हो गया।

बोला, "यह कभी नहीं हो सकता। बिलकुल नामुमकिन है। वे लोग इतने बरसों से मेरी भतीजी का लालन-पालन कर रहे हैं, महीने में हज़ारों रुपये खर्च कर कॉलेज में पढ़ा रहे हैं, यह सब क्या गोबर में घी डालने के लिए कर रहे हैं ?"

"तुम क्या यह कहना चाहते हो कि मेरे दोस्त ने मुझे गलत बताया है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "गलत बताया नहीं है, गलत देखा है। किसी के बदले किसी दूसरे को देख लिया है।"

"तो फिर बाजी लगा लो।"

तपेश गांगुली बोला, "बाजी लगाने को तैयार हूं। बताओ कितने रुपये की बाजी ?"

"एक सौ रुपये।"

तपेश गांगुली एक हज़ार रुपये की बाजी लगाने को तैयार था। लेकिन सौ रुपया ही क्या कोई कम है ? वह भी राजी हो गया। बोला, "ठीक है, राजी हूं। सभी गवाह रहे, देख रहे हो न ? तुम लोग गवाह रहे—"

कहां किसके घर में कौन विलायत से मेम ब्याहकर ले आया है, इसका कोई ठीक नहीं, लेकिन रेल के ऑफिस के बाबुओं के बीच इसी को लेकर बाजी लगने लगी। जैसे रेल के उच्च पदाधिकारी इन लोगों को बाजी लगाने के लिए ही पाल-पोस रहे हों।

उसके बाद देर नहीं की। सेक्शन के बड़े बाबू के पास एक खास व्यक्तिगत काम का बहाना बनाकर ऑफिस से निकल पड़ा। सड़क पर आकर चारों तरफ निगाह दौड़ाई पर कहीं बस का नामोनिशान नहीं था। उस समय उसे देर बरदाश्त नहीं हो रही थी। सामने की तरफ एक खाली टैक्सी जा रही थी, उसे ही चिल्लाकर पुकारा, "ऐ टैक्सी—"

टैक्सी रुककर खड़ी हो गई। ड्राइवर ने पूछा, "कहां जाना है?"

"रसेल स्ट्रीट।"

टैक्सी ड्राइवर फौरन राजी हो गया। लंबा ट्रिप है। काफी पैसा मिलेगा।

लेकिन तपेश गांगुली का पॉकेट तब खाली था। कुछेक छुट्टे पैसे के अलावा कुछ नहीं था। खासकर हर महीने का आखिरी सप्ताह इसी तरह की तंगी में व्यतीत होता है। इसके लिए तपेश गांगुली को कोई फिक्र नहीं है। भाभी से कर्ज लेने से काम चल जाएगा। फिलहाल भाभी के पास बहुत पैसा है। इसी तरह जब कभी उसे रुपये की तंगी हुई है भाभी के पास जाकर उसने हाथ फैलाया है और भाभी ने भी उसे खुले हाथों रुपये दिए हैं। तपेश गांगुली को उस कर्ज को नहीं चुकाना पड़ा है। भाभी को वे रुपये वापस नहीं मिले हैं।

रसेल स्ट्रीट के मकान में पहुंचने में ज्यादा देर नहीं लगी। टैक्सी-ड्राइवर चालाक-चुस्त है। कहां किस खाली रास्ते की तलाश कर, किस गली के अन्दर घुसकर, किस बड़ी सड़क के मोड़ को पार कर एकबारगी रसेल स्ट्रीट के तीन नंबर मकान के पोर्टिको के नीचे पहुंचा दिया।

तपेश गांगुली को तब देर बरदाश्त नहीं हो रही थी। टैक्सी से उतर पड़ा। पूछा, "कितना किराया हुआ भाई?"

ड्राइवर ने कहा, "बीस रुपये तीस पैसे।"

तपेश गांगुली बोला, "ठीक है भाई, ऊपर मेरी भाभी रहती है, उससे रुपया मांगकर ले आऊंगा और तुम्हें दे जाऊंगा। तुम चले मत जाना, मैं गया और आया…"

दरवाजा खोलते ही तपेश गांगुली की नजर शैल पर पड़ी। भाभी की नहरी शैल खड़ी है।

तपेश गांगुली ने झुंझलाकर कहा, "दरवाजा खोलने में इतनी देर क्यों कर दी? देख नहीं रही कि मैं कब से कॉलिंग-बेल बजा रहा हूं। खैर, भाभी कहां है?"

"उस कमरे में लेटी हुई हैं।"

तपेश गांगुली को गुस्सा आ गया। जैसे इस वक्त लेटना भाभी के लिए कोई अपराध हो।

बोला, "बेवक्त लेटी हुई क्यों है? इतनी देर तक सोने से तबीयत खराब नहीं होगी?"

शैल बोली, "माताजी को बुखार है।"

"बुखार !" तपेश गांगुली चौंक उठा, "बुखार है ? देखूं, किस कमरे में लेटी हुई है। डाक्टर को सूचना भेजी गई है ?"

"नहीं।"

तपेश गांगुली फिर गुस्से में आ गया, "डाक्टर तो हर रोज विशाखा का हेल्थ चेक-अप करने आता है। उसे क्यों नहीं दिखाया गया ?"

यह कहते हुए तपेश गांगुली भाभी के शयन-कक्ष में घुस गया। जाने पर देखा, भाभी अज्ञान-अचेतन अवस्था में विस्तर पर लेटी हुई है।

तपेश गांगुली पुकारने लगा, "भाभी, ओ भाभी—"

भाभी की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला।

तपेश गांगुली ने दुवारा पुकारा, "भाभी, ओ भाभी —"

फिर भी भाभी अचेतन अवस्था में पड़ी रही। भाभी की तरफ से कोई जवाव नहीं मिल रहा है।

तपेश गांगुली ने अव भाभी के सिर पर हाथ रखकर देखा। तत्क्षण उसका हाथ आग से जल गया हो जैसे। अन्दाज़ लगाया एक सौ चार या पांच डिग्री बुखार होगा ही।

तपेश गांगुली वाहर आया।

पुकारा, "शैल, ओ शैल—"

शैल के आते ही कहा, "तुम लोग किस तरह के आदमी हो ! भाभी की देह तो वुखार से जल रही है। तुम लोग डाक्टर क्यों नहीं बुला रहे हो ? विशाखा कहां है ? वह दिख नहीं रही है।"

"मुन्नी रानी वाहर निकली है।"

"वाहर निकली है ? कहां गई है—कॉलेज ?"

शैल वोली, "यह मुझे मालूम नहीं।"

"मां को इतना बुखार है और उसे इस हालत में छोड़कर वेटी सैर-सपाटे करने निकली है ! बाप रे, कैसी लड़की है।"

तपेश गांगुली भारी मुसीवत में फंस गया।

शैल को पुकारकर कहा, "शैल, एक काम कर सकती हो ?"

"क्या ?"

तपेश गांगुली वोला, "मुझे वीस रुपया तीस पैसे टैक्सीवाले को देना है। तीस पैसे मेरे पास हैं। मुझे वीस रुपया दे दो तो टैक्सीवाले का किराया चुका आऊं।"

शैल वोली, "मेरे पास तो एक रुपया भी नहीं है वावू।"

"तुम्हारे पास रुपया नहीं है ? क्यों ? तुम्हारे पास रुपया क्यों नहीं है ?"

शैल वोली, "पिछले दो महीने से वेतन नहीं मिला है।"

"क्यों ?"

शैल वोली, "क्यों नहीं मिला है, यह कैसे वताऊं ?"

सर्वनाश ! टैक्सी-ड्राइवर नीचे पैसे का इंतजार कर रहा है और उधर टैक्सी के मीटर की संख्या भी तो रफ्ता-रफ्ता ऊपर की तरफ जा रही है।

तरंग गांगुली बोला, "अच्छा, यह बता सकती हो कि भाभी रुपया-पैसा कहाँ रखती है ?"

मैना बोली, "माताजी के पास एक रुपया भी नहीं है। आज दो दिन से रुपये की कमी के कारण घर में रसोई भी नहीं पक रही है।"

तरंग गांगुली मानो आकाश से जमीन पर धम से गिर पड़ा। फिर क्या होगा ?

नौकरी का मानी ही है नौकरगीरी। नौकरों के बीच जैसे छोटा-बड़ा नहीं होता उसी तरह नौकरी भी छोटी-बड़ी कोई चीज नहीं है। कई महीने की नौकरी के दौरान ही संदीप को इस बात का पूरे तौर पर अहसास हो गया है। अन्तर रहता है केवल वेतन की संख्या में। ऑफिस में सिर्फ एक ही परेश दा नहीं थे। कहा जा सकता है, सभी सुपरवाइजर परेश दा थे। सभी जबान से उसके शुभैषी थे। सभी जबान से एक ही बात कहते, "यह बहुत बुरी जगह है भाई, यहां किसी पर यकीन मत करो।"

शुरू-शुरू में वह इन बातों पर मन-ही-मन यकीन करता था।

सभी कहते, "यहां एक-दूसरे को बरदाश्त नहीं कर पाता। लेकिन बाहरी तौर पर देखोगे, सभी का एक-दूसरे से घनिष्ठ प्रेम है। वह जो सुपरवाइजर परेश-दा है, बाहर से कितना भला लगता है ! तुम्हारे मुंह के सामने तुम्हारी प्रशंसा करेगा, लेकिन आंखों की ओट में ?

संदीप यह सब बात बहुत उत्सुकता से सुनता।

वे लोग कहते, "तुम्हें प्रमोशन का लोभ दिखाकर तुम्हारे पैसे से जिस तरह मांस-करी खाएंगे उसी प्रकार दूसरे भी बहुत सारे लोगों के पैसे से मांस की करी और अंडे का आमलेट खाएंगे।"

इस बीच संदीप की दिव्य दृष्टि खुल गई है। बहुत दुख झेलने, बहुत कुछ देखने-सीखने, भोगने और छले जाने के बाद समझ गया है कि आदमी के इस संसार के जैसा अजीब विस्मय और कहीं किसी चीज में नहीं है। यहां की दरिद्रता भी उसने देखी और साथ ही यहां का तथाकथित वैभव भी उसने देखा। लेकिन असली जो आदमियत है, उसे देखने-परखने के लिए वह छटपटाने लगा।

इस बैंक की नौकरी में उसकी वह उम्मीद पूरी होगी या नहीं कौन जाने। हो सकता है पूरी नहीं हो। नौकरी के प्रथम चरण में ही स्वास्थ्य-परीक्षण के लिए डॉक्टर को जो पचास रुपये की रिश्वत देनी पड़ी थी, उस बात को वह जीवन में भूल सकेगा या नहीं, इसमें संदेह है।

उस दिन मनोज ने आकर कहा, "संदीप दा तुम्हें कोई लड़की बुलाने आई है।"

"लड़की ? मुझे ?"

संदीप चौंक उठा। बोला, "लड़की ? इसका मतलब ?"

उसे बुलाने की खातिर कौन लड़की बैंक आएगी ? किसी लड़की से उसकी जान-पहचान नहीं है। फिर क्या उसकी मां किसी मुसीबत में पड़कर कलकत्ता

आइ है ? कलकत्ता आकर उसके बैंक का पता लगाकर उससे मिलने आई है ?

खगेन से पूछा, "कैसा चेहरा है खगेन ? काली जैसी, वहुत ही उम्रदार ?"

"नहीं-नहीं, यह वहुत ही कम उम्र की है, देह का रंग बिलकुल गोरा है···"

संदीप फिर भी समझ नहीं सका। खगेन ने कहा, "वही तो है, देखो। वही उस गेट के पास।"

काउंटर पर अभी वहुत लोगों का मजमा है। उनके सिर को पार कर दूर गेट के सामने जो लड़की खड़ी है, उसकी ओर देखते ही संदीप अवाक् हो गया। विशाखा क्यों खड़ी है ? विशाखा उससे मिलने क्यों आई है ?

फौरन उठकर बाहर की ओर कदम बढ़ाते ही उसके हाथ का धक्का लगकर यादव बाबू का गिलास पानी के साथ सीमेंट के फर्श पर गिर पड़ा और चारों तरफ पानी फैल गया। और उसके साथ ही शीशे के टुकड़े छिटककर गिर पड़ने से वह जगह नंगे पांव से चलने के मामले में खतरनाक हो गई।

अचानक इस तरह की दुर्घटना घटने से सभी चकित हो उठे।

"क्या हुआ यादव ? गिलास कैसे टूट गया ? किसने तोड़ा ?"

सिर्फ गिलास के टूटने से ही वैसी कोई खास हानि नहीं थी। लेकिन उसके साथ ही यादव के लेजर के खाते पर पानी गिर जाने के कारण खाते में लिखे हुए अंक भी अपाठ्य, दुर्बोध और धुंधले हो गए, यही सबसे बड़ी हानि है।

संदीप अभी अपराधी के मानिंद खड़ा है। उसकी बोलने की शक्ति भी जैसे अभी समाप्त हो गई है। माफी मांगने की भी शक्ति नहीं है उसके अन्दर। उसने सिर्फ इतना ही कहा, "यादव-दा, दोष मेरा ही है—"

यादव बोला, "अब क्या किया जाए ? बड़े साहब क्या कहेंगे ? मेरी तो नौकरी चली जाएगी।"

संदीप बोला, "मैं पूरा खाता दुबारा लिख दूंगा। चाहे जितनी भी रात क्यों न हो जाए, मैं वादा करता हूं, मैं रात-भर जगकर दो दिन के अन्दर नए सिरे से लिख दूंगा। आप मुझे माफ कर दें।"

इस बीच बहुत सारे आदमी जमा हो गए हैं। वे लोग यादव भट्टाचार्य का सर्वनाश देखकर हाय-हाय करने लगे। अब क्या होगा ? बड़े साहब को मालूम हो जाएगा तो क्या होगा ?

संदीप ने कहा, "बड़े साहब को मालूम हो जाएगा तो मैं सारा दोष अपने मत्थे ले लूंगा। मैं कहूंगा, मेरे कारण ही यह सर्वनाश हुआ है। मुझे जो भी सजा देंगे मैं सहर्ष स्वीकार कर लूंगा।"

अभी क्लियरिंग का वक्त है। इसलिए भीड़-भाड़ करने का लोगों के पास वक्त नहीं था। सभी अपने-अपने काम पर चले गए।

संदीप इस दुर्घटना से इतना हतप्रभ हो गया था जैसे उसके चलने की ही शक्ति समाप्त हो गई हो। फौरन विशाखा के पास जाने पर देखा, विशाखा उतरा हुआ चेहरा लिए खड़ी है। पूछा, "क्या बात है, तुम एकाएक ? बैंक का पता तुम्हें कैसे चला ?"

विशाखा बोली, "लोगों से पूछकर आई।"

"किस चीज से आई ? गाड़ी से ?"

विशाखा बोली, "नहीं, गाड़ी कहां मिलेगी ? बस से आई हूं।"
संदीप ने आश्चर्य में आकर पूछा, "क्यों ? गाड़ी क्यों नहीं है ?"
विशाखा बोली, "वह लंबी कहानी है, यहां खड़े-खड़े यह सब कहना संभव नहीं है। तुम क्या बहुत व्यस्त हो ?"
संदीप बोला, "व्यस्त तो हूं ही। इसके अलावा तुम्हें देखकर तेज़ी से आना चाहा तो उन सज्जन का पानी पीने का गिलास मेरे हाथ से टकराकर गिर पड़ा और बही-खाता भीग कर बर्बाद हो गया···"
उसके बाद ज़रा चुप रहने के बाद बोला, "खैर, क्या बात है बताओ। तुम खुद ही मुझसे मिलने बैंक आओगी, यह मैंने सोचा भी नहीं था।"
विशाखा बोली, "मुसीबत में फंस जाने के कारण ही तुम्हारे पास आना पड़ा है—"
"कौन-सी मुसीबत ?"
विशाखा बोली, "मुसीबत नहीं है क्या ? पहले तुम हर रोज़ एक बार रसेल स्ट्रीट के मकान में आते थे। पिछले दो महीने से तुम दिखे ही नहीं। नौकरी मिल जाने से तुम हम लोगों को बिलकुल भुला बैठे ?"
संदीप बोला, "तुम्हें मालूम नहीं होगा कि मुझे किन विपत्तियों से गुज़रना पड़ा है।"
"तुम्हें विपत्तियों से गुज़रना पड़ा है ? तुम किस विपत्ति में फंस गए थे ?"
संदीप बोला, "मैं दो महीने से बेहालोता से डेली पैसेंजरी कर रहा हूं और इसलिए विडन स्ट्रीट के मकान पर नहीं जा सका हूं। मां बहुत बीमार थी। मेरे अलावा मां की देख-रेख करने वाला कोई नहीं था, इसलिए एक नौकरानी रख दी है और खुद डेली पैसेंजरी कर नौकरी सुरक्षित रख रहा हूं ! इन दो महीने के दरमियान कितनी मुसीबतों का सामना करना पड़ा, क्या कहूं ! एक तो नई नौकरी, छुट्टी भी नहीं ले पाता हूं···मगर मेरा मन तुम लोगों के घर पर टिका रहता है।"
विशाखा बोली, "हम लोगों के घर पर मन टिका होता तो कम-से-कम एक मिनट के लिए भी आकर हमारा हाल-चाल पूछ सकते थे—"
संदीप बोला, "जानता हूं, तुम मेरी बात पर यकीन नहीं करोगी, लेकिन ऑफिस के अंदर खड़े-खड़े यह सब कहना मुश्किल है। बाद में मुलाकात होगी तो बताऊंगा। बहरहाल, यह बताओ कि तुम किसलिए आई हो ?"
विशाखा बोली, "कहा न, कि मुसीबत में पड़कर आई हूं, अपने स्वार्थ की खातिर—"
"मुसीबत क्या है, यही बताओ।"
विशाखा बोली, "कुछ रुपयों के लिए आई हूं—"
"रुपयों के लिए ?"
"हां, रुपये की ज़रूरत न हो तो कोई किसी के ऑफिस के काम के समय आता है ?"
संदीप बोला, "पहले यह बताओ कि तुम्हें कितने रुपयों की ज़रूरत है ? मेरे रुपये इसी बैंक में जमा हैं। अब ज़्यादा वक्त नहीं है मेरे पास। बताओ, कितने रुपये चाहिए ? मैं चेक काटकर अभी तुरंत बैंक से लेकर दे दूंगा।"

विशाखा बोली, "मां के पास एक भी पैसा नहीं है, तुम जो भी दोगे ले लूंगी। इसके सिवा मैं क्या कहूं !"

संदीप बोला, "तुम ज़रा इंतज़ार करो। अभी-अभी तुरंत रुपया लेकर आया—"

यह कहकर विशाखा को वहीं छोड़ वह सीधे अंदर चला आया। संदीप का पूरे महीने का वेतन बैंक में जमा रहता है। मां ने रुपया लेना नहीं चाहा था क्योंकि उसके पास न तो बक्सा था और न संदूक। मां कहां रुपया रखेगी? इसीलिए संदीप अपने वेतन का पूरा पैसा बैंक के एकाउंट में जमा रख देता था और ज़रूरत भर जब-तब निकालता रहता था। और जब से मां बीमार थी, संदीप बेड़ापोता से ही आना-जाना करता था। उस समय मां रसोई पका नहीं पाती थी।

जीवन की गति का रास्ता कितना पेचीदा है, उसे केवल जीवित आदमी ही महसूस कर पाते हैं। मरे हुए लोगों को जानने की कोई ज़िम्मेदारी नहीं रहती। उनके सामने कोई समस्या नहीं होती। बहुत दिन पहले किताब में पढ़े गए शब्दों का संदीप को जब पूरे तौर पर अहसास हो रहा था, ठीक उसी समय विशाखा आकर उपस्थित हुई।

नेशनल यूनियन बैंक बड़ा बैंक है, इसलिए उसके काम की परिधि जितनी विशाल है, पेचदगी भी उतनी ही बड़ी है। उसके बाद दो तरह के यूनियन हैं। साथ ही दोनों यूनियनों के दफ्तर हैं। यों नाम से तो यूनियन के दफ्तर हैं लेकिन यूनियन के नाम से वहां ताश का खेल चलता है, रेडियो सुना जाता है, कैरम बोर्ड खेला जाता है। वहां एक लाइब्रेरी भी है जहां जासूसी-रहस्य-रोमांच की कहानी भी पढ़ने को मिल जाती है।

विशाखा तब भी वहां खड़ी थी और चारों तरफ ताक रही थी।

हरेन दा ने पूछा, "यह लड़की कौन है संदीप? तुमसे मिलने कौन आई है?"

संदीप तब जल्दबाज़ी में था। बोला, "बाद में आकर बताऊंगा।"

संदीप ने विशाखा के पास आकर कहा, "यह लो रुपये—"

विशाखा ने उन रुपयों को अपने बैग के अंदर रख लिया।

संदीप बोला, "पांच सौ रुपये हैं, बाद में देख लेना।"

विशाखा बोली, "अभी मैं चलती हूं, किसी दिन समय मिले तो आ जाना।"

"ज़रूर आऊंगा।"

यह कहकर संदीप विशाखा को सड़क तक छोड़ने गया। बोला, "उस मकान की किसी खबर का पता है?"

"किस मकान की?"

"वही बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन की?"

विशाखा ने सवाल किया, "तुम्हें मालूम नहीं है?"

संदीप ने कहा, "अभी की कोई खबर मालूम नहीं है। बहुत दिनों से मल्लिक-जी से मिल नहीं पाया हूं।"

विशाखा बोली, "तुम भले ही न जानो, लेकिन मुझे मालूम है। मैंने सुना है—"

"क्या सुना है?"

विशाखा ने कहा, "जिससे मेरी शादी होने वाली थी, वह विलायत से लौट आया है—"

संदीप बोला, "उसके बाद ? उसके बाद उन लोगों ने कोई खबर नहीं भेजी है ?"

विशाखा बोली, "उसके बाद क्या खबर भेजेंगे ?"

"उसके बाद से ही उन लोगों ने रुपया भेजना बन्द कर दिया है ?"

"हां।"

संदीप ने कहा, "लेकिन रुपया भेजना क्यों बन्द कर दिया, इस बात की तुम लोगों को किसी ने सूचना नहीं दी ?"

विशाखा ने कहा, "तुम्हें भी तो सारा कुछ मालूम था, लेकिन तुमने हम लोगों को सूचित क्यों नहीं किया ? असल में तुम लोग सभी एक हो; तुम लोग सुख के साथी हो।"

संदीप ने कहा, "तुम भी मेरे मत्थे दोष मढ़ रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "मढ़ूंगी नहीं ? जब हम लोगों के अच्छे दिन थे, तब तुम दोनों वक्त हम लोगों का हालचाल पूछने आते थे। और अभी, जबकि हम मुसीबत में घिर गए हैं, मुझी को तुम्हारे पास आकर भीख मांगनी पड़ी।"

"भीख ! भीख क्यों कह रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "भीख नहीं कहूंगी तो और क्या कहूं ! मेरी मां मन के दुख के कारण मरने-मरने की हालत में है। हाथ में एक भी पैसा नहीं कि डॉक्टर से दिखाऊं और दवा खरीदूं—चावल-दाल तो खरीदना दूर की बात। यह भीख मांगने में कितनी शर्म और पीड़ा का अहसास हो रहा है सो तुम क्या, कोई नहीं समझेगा।"

संदीप ने कहा, "सच कह रहा हूं, यकीन मानो, मैं मां के कारण बुरी तरह व्यस्त था। इतने दिनों से रोज गांव से ही आ-जा रहा हूं। सवेरे दो कौर भात जल्दी-जल्दी खाकर किसी तरह निकलता हूं और घर लौटते-लौटते रात का अंधेरा उतर आता है।"

विशाखा बोली, "अपनी मां के लिए खैर तुम तो मददगार हो, लेकिन मेरी मां का मददगार कौन है ? मेरा कोई भाई होता तो आज क्या बेशर्म होकर तुम्हारे पास भीख मांगने आती।"

संदीप आपत्ति करने लगा।

बोला, "बार-बार भीख मांगने की बात कहकर मुझे शर्मिन्दा क्यों कर रही हो ? मैंने कौन-सा अपराध किया है कि तुम इस तरह शब्दों के बाण से मुझे घायल कर रही हो ? 'भीख' शब्द का बार-बार उच्चारण मत करो।"

विशाखा बोली, "इसे भीख नहीं तो क्या कर्ज कहूंगी ? कर्ज मांगने की बात कहूं तो कर्ज उतारने का सवाल भी पैदा होता है। हमें क्या कर्ज उतारने की सामर्थ्य है या किसी दिन यह सामर्थ्य होगी ?"

उसके बाद विशाखा एक लमहे तक चुप रहने के बाद फिर बोली, "बहरहाल तुम्हारा बहुत वक्त जाया कर दिया, अन्यथा मत लेना ? मैं चलती हूं।"

विशाखा तेज कदमों से बस के रास्ते की ओर बढ़ गई और एक बस में

ही उस पर सवार हो गई।

और संदीप ! संदीप उसी जगह स्थाणु की तरह उस ओर ताकता हुआ निस्पंद-स्तब्ध होकर खड़ा का खड़ा रह गया।

मनुष्य के घर-संसार का मतलव है केवल चाहना और पाना। संसार केवल पाना ही चाहता है। और चूंकि पाने की चाह का कभी अन्त नहीं होता इसीलिए संसार में इतनी पीड़ा और कष्ट है। अगर कोई कहे कि संसार में जो कुछ पाने को था, मैंने पा लिया है, मुझे जो कुछ भी जमा करना था, कर लिया है, तो उसी क्षण उसकी मृत्युं हो जाती है। इस संसार का थमने का नाम ही मृत्यु है। क्योंकि आदमी का असली धर्म है पथिक-धर्म। जो इस पथिक-धर्म को त्यागकर रुक जाएगा, उसे संसार से अलग हटकर खड़ा होना पड़ेगा। क्योंकि संसार केवल सरकता रहता है, यहां या तो सरकना पड़ता है या मरना पड़ता है। यहां कोई भी चीज़ स्थिर नहीं है।

इतिहास भी इस सच्चाई का साक्षी है। कितनी ही पुरानी सभ्यताएं आईं और एक दिन विलुप्त हो गईं। कहां गया वह मोहनजोदड़ो, कहां गया वह रोम साम्राज्य ?

तो क्या कुछ भी नहीं रह जाता ?

वस, एकमात्र वही रहता है जिसमें चाह और पाने का प्रश्न जुड़ा हुआ नहीं है। प्रश्न रहता है केवल देने का। उस देने का नाम ही है प्रेम। प्रेम केवल देकर ही कृतार्थ होता है। वह केवल कहता है—लो, लो, लो। प्रतिदान में मैं कुछ भी नहीं चाहता। तुम लोगे तो इसी में मैं अपने-आपको धन्य मानूंगा।

इसी देने के वारे में कह गए हैं सुकरात, बुद्धदेव, नानक, मुहम्मद, चैतन्य, महाप्रभु, थेरो, इमर्सन, गांधीजी, मार्टिन लूथर किंग, रामकृष्ण, विवेकानंद। और इसीलिए वे मौजूद हैं। संसार इन्हें अलग हटा नहीं सका है, इनका विनाश नहीं कर सका है।

"चाचाजी—"

गले की आवाज़ सुनकर ही मुक्तिपद समझ गए थे कि सौम्य फोन कर रहा है। उनका भतीजा सौम्य मुखर्जी। जिसे विलायत जाने के पहले कितनी तालीम दी थी, कितने उपदेश दिए थे ताकि वह कम्पनी का काम-धाम ठीक से समझ ले, दुनिया में अच्छी तरह अपना दावा पेश कर सके। लेकिन उसके इस अधःपतन का परिचय पाकर वे जितने मर्माहत हुए थे उससे अधिक उन्हें विस्मय ही हुआ था।

लेकिन मुक्तिपद कैसे जान सकते हैं कि संसार में जो व्यक्ति किसी तरह की चाह करता है, उसे मरना पड़ता है ? कैसे वे जानेंगे कि जो लोग सब कुछ चाहते हैं, दुनिया उसे परे ठेल देती है ? आज सौम्य मुखर्जी के साथ जो हुआ है, वही मुक्तिपद मुखर्जी के साथ भी होगा, यह वात उन्हें कहने से क्या वे उस पर यकीन करते ?

"क्या वात है ?"

सौम्य ने दूसरे छोर से कहा, "दादी मां कैसा-कैसा तो कर रही हैं। आप अभी तुरन्त चले आइए।"

"ठीक है, मैं अभी तुरन्त पहुंच रहा हूं।"

मुखिलचंद ने अब देर नहीं की। डाक्टर को अपने साथ ले सीधे दादी मां के पास पहुंच गए। जिस दिन सौम्य भारत आया है, उसी दिन से दादी मां बीमार हैं। लेकिन इसके पहले सौम्य किसी दिन दादी मां के कमरे में नहीं गया था। दादी मा को एक बार देखने भी नहीं गया था।

उस दिन अचानक बरामदे पर सौम्य बाबू को देखकर बिंदु ने कहा था, "दादी मां कैसा-कैसा तो कर रही हैं।"

"क्या कर रही हैं?"

"मुझे लगता है, उनकी तबीयत ज्यादा खराब है।"

"चलो, देखूं!"

उसके बाद दादी मां के कमरे के सामने जाकर एक बार झांककर देखा। जिस दादी मा ने गोद में लेकर सौम्य को पाला-पोसा है, उनकी थोड़ी-सी सेवा-सुश्रूषा करनी चाहिए, सौम्य को इसका भी खयाल नहीं है। यह है संसार!

दूर से जरा झांककर सौम्य अपने कमरे में लौट आया। रीटा तब भी बिस्तर पर चित लेटी हुई थी। पिछली रात उसने ज्यादा व्हिस्की पी ली थी।

दरवाजा खोलते ही उसकी आंखों पर रोशनी पड़ी और तत्क्षण उसकी आंखें खुल गई। बड़ा ही कीमती नशा। कीमती नशा अगर किसी की असावधानी से एकाएक दूर हो जाए तो सारा मजा किरकिरा हो जाता है। रीटा फौरन क्रोधित हो उठी। लड़खड़ाती आवाज में बोल पड़ी, "ब्रूट—

सौम्य आहिस्ता-से नजदीक जाकर रीटा का सिर सहलाने लगा। बोला, "जानती हो रीटा, मेरी दादी मा बहुत बीमार हैं, शायद बचेंगी नहीं।"

रीटा ऊबकर गुस्सा गई और बोली, "बुढ़िया को मरने दो. इतने दिनों तक जिन्दा क्यों है?"

सौम्य ने अत्यन्त शांत स्वर में कहा, "छि', ऐसा नहीं कहते। उस 'ओल्ड लेडी' ने तकलीफ उठाकर मुझे पाला-पोसा है।"

रीटा को अब भी नशे का खुमार है। बोल पड़ी, "तो ओल्ड लेडी मर क्यों नहीं जाती? हाउ लॉन्ग शि विल लिव? बुढ़िया और कितने दिनों तक जिन्दा रहेगी?"

सौम्य समझ गया कि रीटा गुस्सा गई है। गुस्सा आने पर रीटा होश-हवास में नहीं रहती, यह वह लंदन में ही देख चुका है।

बोला, "तुम्हारी मा भी तो बुढ़िया है, उसके बारे में क्या कहना है?"

रीटा बोली, "मेरी मा से उस ओल्ड फूल की तुलना कर रहे हो—दैट ओल्ड फूल की?"

सौम्य समझ गया कि अब रीटा को ज्यादा चिढ़ाना अच्छा नहीं रहेगा। ऐसा होता है। किसी-किसी के हलक के नीचे थोड़ी-सी उतरते ही वह नशे में चूर हो जाता है और कोई-कोई पूरी बोतल पी लेने के बाद भी होश में रहता है। लंदन में रीटा के साथ यही वाकया होता था। एक पेग पीते ही रीटा नशे में धुत्त हो जाती

थी। ऊल-जलूल वकने लगती। उस समय उसे किसी चीज़ का ज्ञान नहीं रहता, उसे गोद में लेकर घर ले जाना पड़ता था।

उस समय रीटा उल्टे ही सौम्य पर दोष मढ़ने लगती। कहती, "तुमने मुझे इतनी क्यों पिला दी ?"

सौम्य कहता, "मैंने तुम्हें कहां पिलाई है ? तुम तो और भी पीने के लिए मुझ पर दवाव डाल रही थीं।"

उस समय रीटा के मुंह से अंधाधुंध गालियां निकलने लगतीं, "ब्लडी वैगर, वैस्टर्ड ..."

उस समय रीटा सौम्य को जितना ही गाली-गलौज करती, सौम्य को उतना ही अच्छा लगता। नशा करके अगर नशे में चूर न हुआ तो नशा करने से लाभ ही क्या ? गाली-गलौज नहीं करती तो लगता, व्यर्थ ही पैसे वर्वाद हो गए, पानी में वह गए।

सौम्य को उन दिनों की वात याद है। सौम्य कलकत्ता में नाइट क्लब भी गया है। जिन्दगी में मौज-मस्ती मनाने के जितने रास्ते हैं, सवको वह तय कर चुका है। किसी दिन उसे इसकी वजह से थकावट महसुस नहीं हुई है, एकरसता का अनुभव नहीं हुआ है। जितनी भी मौज-मस्ती मनाई है, मौज-मस्ती का नशा उतना ही वढ़ता गया है। सिर्फ क्या शराव या औरतें ही ? कलकत्ता में और भी कितने ही तरह के नशे का सेवन करने का मौका मिलता है। कलकत्ता शहर में किस नशे की कमी है या कौन ऐसी चीज है जो मिलती न हो। हाथ में पैसा हो तो चिन्ता की कोई वात नहीं। चीनियों के मुहल्ले में सांप के वच्चे का दंशन भी उपलब्ध है। सिगरेट का एक डिव्वा मुंह के सामने लाकर ढक्कन खोलते ही एक छोटा-सा सांप का वच्चा तुम्हारी जीभ को डस लेगा। और तत्क्षण तुम नशे के आराम में डूव जाओगे। वगल में ही तुम्हारे आराम के लिए धपधप सफेद गुदगुदा तोशक विछा हुआ विस्तर है। उस पर लेट जाओ। जव तक मर्जी हो नींद के आगोश में पड़े रहो, कोई अड़चन नहीं डालेगा, कोई एतराज़ नहीं करेगा।

लेकिन इन अभियानों की सूचना किसी को नहीं मिलती थी। दादी मां सोचतीं गिरिधारी ने ठीक नौ वजे गेट वन्द कर दिया है। ऐसे में कोई पाप घर के अन्दर प्रवेश नहीं कर सकेगा। क्योंकि जितने भी पाप हैं वे रात के अंधेरे में ही घटित होते हैं। इसलिए रात नौ वजे गेट वन्द कर देने से ही निश्चितता की सांस ली जा सकती है। दिन के सूर्य उगने से लेकर रात नौ वजे तक पाप के आक्रमण का कोई भय नहीं है।

उसके वाद कितनी ही रातें आईं और गईं। रात नौ वजे गिरिधारी ने गेट वन्द है या नहीं, इसे देखने की ज़िम्मेदारी किसी पर नहीं रही। जो औरत देख-रेख करती थी वह अव वेहोशी की हालत में विस्तर पर पड़ी हुई है। अव जहां भी जितने पाप हैं, वे सव आकर इस घर के अन्दर प्रवेश करें। कोई मना करनेवाला नहीं है, कोई अड़चन डालनेवाला नहीं है, कोई डांटने-फटकारने वाला नहीं है। हर ओर अराजकता की स्थिति है।

परन्तु संसार तो कभी वैठा हुआ नहीं रहेगा। वह स्वयं सरकेगा, दूसरे को भी सरकाएगा। इसलिए जव मुक्तिपद ने कहा कि वे अभी तुरंत डाक्टर लेकर आ

रहे हैं तो सौम्य जरा व्यग्र हो उठा।

उसने रीटा को पुकारा ! बोला, "उठो-उठो, गेटअप—"

रीटा बोल उठी, "क्यों उठूंगी ? क्या हुआ है ? व्हाट्स अप—"

सौम्य बोला, "मेरे अंकल आ रहे हैं।"

"अंकल आ रहे हैं तो मेरा क्या ? तुम अपने अंकल से डर सकते हो, लेकिन मैं क्यों डरूं ? वह मेरा कौन होता है ?"

सौम्य ने देखा पियक्कड़ को छेड़ने से कोई फायदा नहीं, इसीलिए देर किए बगैर ड्रेसिंग गाउन उतार, ड्रेस पहन लिया। आईने में एक बार अपना चेहरा इसलिए देख लिया कि पिछली रात की कोई छाप उसके चेहरे और आंखों में है या नहीं। पिछली रात घर लौटने में भोर हो गई थी। उन अत्याचारों की छाप कभी-कभी चेहरे और आंखों में रहती है। उस तरह की छाप है या नहीं, कौन जाने !

बाहर से विंदु ने पुकारा, "छोटे बाबू, मझले बाबू आ गए।"

"हां, अभी आया।"

इसी बीच डाक्टर को जो जांच करनी थी, जो कहना था और जो कुछ बन्दोबस्त करना था, सब कुछ करके चला गया। सौम्य के आते ही मुक्तिपद बोले, "क्या बात है, अभी सोकर उठे हो क्या ? तीसरे पहर तक सोए क्यों रहते हो ?"

सौम्य बोला, "जरा रेस्ट कर रहा था।"

"बस, यही एक बात। तुम्हें इतना कौन-सा काम रहता है कि तीसरे पहर तक 'रेस्ट' करते रहते हो ? सबेरे से तुम्हें कोई काम ही नहीं रहता। दिन-भर क्या करते हो ?"

सौम्य इस बात का क्या जवाब दे, उसकी समझ में नहीं आया। सच, दिन-भर उसे कोई काम ही नहीं रहता।

"तुम्हारी दादी मां की तबीयत खराब है। अब शायद ज्यादा दिनों तक जिंदा नहीं रहेंगी। मैं कितनी दूर से आकर मां को देख जाता हूं और तुम घर में रहने के बावजूद एक बार भी उसकी हालत देखने नहीं आते। अब तो तुम बच्चा नहीं हो, अब सब कुछ समझने-बूझने की तुम्हारी उम्र हो चुकी है। इस तरह करोगे तो कैसे चलेगा ?"

सौम्य से उन्होंने इतनी तल्ख बातें कभी नहीं कही थीं। सौम्य भी इस तरह की बातें सुनने का अभ्यस्त नहीं है। वह क्या कहे !

मुक्तिपद ने अपना कहना जारी रखा, "और तुम्हें मालूम नहीं कि अभी हम लोगों की फैक्टरी में लॉक-आउट चल रहा है ?"

सौम्य ने कहा, "जानता हूं—"

"क्यों लॉक-आउट चल रहा है, यह जानते हो ?"

सौम्य चुप्पी साधे रहा।

लेकिन मुक्तिपद चुप नहीं हुए। बोले, "चल रहा है तुम्हारे कारण। इसके लिए तुम्हीं जिम्मेवार हो। मैंने कितनी कोशिश करके तुम्हारे लिए एक ऐसी पात्री का जुगाड़ किया जिसके कारण हम लोगों का लेबर-ट्रबल समाप्त हो जाता। विख्यात लेबर-लीडर सुधीर चटर्जी की बहन थी वह पात्री। सारी बातचीत तय

कर ली थी। सोचा था, तुम इंडिया आओगे तो तुम्हारी शादी हो जाएगी और उसके बाद ही हम लोगों की फैक्टरी का लॉक-आउट खत्म हो जाएगा। लेकिन कहां से तुम किसे ब्याह कर ले आए। तत्काल उन लोगों से मिलना-जुलना बन्द हो गया। और जिस दिन तुम्हारी शादी की बात दादी मां के कान में पहुंची उसी दिन उन्हें यह दिल का दौरा पड़ा। इन सबके लिए तुम ज़िम्मेदार हो—इस पर कभी सोचा है ?"

सौम्य फिर भी चुप रहा।

मुक्तिपद बोले, "और सुनने को मिला कि तुम्हारी गाड़ी टूट गई है। कैसे टूट गई ?"

सौम्य अब पहली बार बोला, "पब्लिक ने तोड़ दी है।"

"क्यों ? पब्लिक ने क्यों तोड़ दी ? तुमने क्या किया था ?"

"मैंने कुछ भी नहीं किया था।"

"तुमने कुछ नहीं किया तो भी पब्लिक ने गाड़ी तोड़ दी ?"

सौम्य ने कहा, "आजकल कलकत्ता में इसी तरह की घटना हो रही है। गुंडे-बदमाश जहां-तहां जो-सो करते रहते हैं।"

मुक्तिपद ने कहा, "तुम्हारी गाड़ी जो टूट गई, इसके लिए थाने में डायरी की थी ?"

"नहीं।"

"डायरी क्यों नहीं की ? तुम क्या यह नहीं जानते कि डायरी किए रहने पर इंश्योरेंस कंपनी से पूरा खर्च वसूल किया जा सकता है ? अगर यह सब न समझोगे तो जब मैं मर जाऊंगा तो फैक्टरी कैसे चलाओगे ? मैं तो हमेशा ज़िन्दा नहीं रहूंगा, उस वक्त क्या होगा ? फैक्टरी उठ जाएगी ? बताओ, डायरी क्यों नहीं की ?"

सौम्य ने कहा, "मेरे एक दोस्त ने कहा था कि वह खुद जाकर थाने में डायरी कर आएगा।"

"तुम्हारे दोस्त ने ? क्या नाम है तुम्हारे दोस्त का ?"

सौम्य ने कहा, "गोपाल हाजरा। वह पार्टी का आदमी है।"

"गोपाल हाजरा ? वह तुम्हारा दोस्त है ? वह तो खुद भी एक गुंडा है। वैसे आदमी से तुम्हारी घनिष्ठता कैसे होती है ? वही गोपाल हाजरा, वरदा घोषाल वगैरह मुझसे लाखों रुपये चंदा ले जाते हैं। हमीं लोगों के पैसे से उन लोगों की पार्टी चलती है। वैसे लोगों से तुम्हारी जान-पहचान है ? आश्चर्य की बात है ! तुम उन लोगों की बात पर यकीन करते हो ? वे ही लोग तो हमारे एक नंबर दुश्मन हैं।"

सौम्य चुप्पी साधे रहा। मुक्तिपद फिर कहने लगे, "सुना, तुमने एक नई गाड़ी खरीदी है ?"

सौम्य बोला, "हां, सेकेंड हैण्ड—"

"कहां से खरीदकर ले आए ?"

"उसी गोपाल हाजरा ने मुझे खरीद दी। उसने टूटी हुई गाड़ी बेच दी और मैंने यह गाड़ी ले ली।"

"तुम्हें कितने रुपये देने पड़े ?"

"ज्यादा नहीं, चालीस हजार।"

मुक्तिपद मन ही मन हंसे—व्यंग्य की हंसी। सौम्य के लिए आज चालीस हजार रुपया कोई खास रकम नहीं है। वह नहीं जानता कि कहां से ये रुपये आए, जिन लोगों ने यह रकम दी, किनके खून-पसीने की कमाई के ये रुपये हैं। इन रुपयों की खातिर कितने हजार लोगों को दिन की फुर्सत और रात की नींद को विसर्जित करना पड़ा है—सौम्य अगर यह जानता तो वह अनायास ही गाड़ी नहीं खरीदता। कम-से-कम खरीदने के पहले हजार बार सोचता।

मुक्तिपद के मन में हुआ कि वे सौम्य के गाल पर जोर से एक तमाचा जड़ दें। तमाचा जड़ने से भी उनका आक्रोश शान्त नहीं होगा। लेकिन नहीं, उन्होंने अपने-आपको संभाल लिया। वे अगर क्रोध में आकर आपे के बाहर चले जाते हैं तो सौम्य की कोई क्षति नहीं होगी, क्षति होगी तो उन्हीं की। उनका ब्लडप्रेशर बढ़ जाएगा।

सौम्य अब भी सामने खड़ा है।

अब मुक्तिपद बोले, "तुम्हें मालूम है कि हम लोगों की फैक्टरी में लॉक-आउट चलते रहने के कारण हमें कोई आमदनी नहीं हो रही है ?"

अब एक क्षण के लिए चुप हो गए। उसके बाद सौम्य से फिर पूछा, "क्यों, तुम कोई जवाब क्यों नहीं दे रहे ? जानते हो तुम ?"

सौम्य ने संक्षेप में कहा, "जानता हूं।"

मुक्तिपद ने कहा, "तो फिर तुम इतने रुपये बर्बाद कर गाड़ी खरीद कर क्यों ले आए ?"

सौम्य ने कहा, "गाड़ी नहीं रहेगी तो मेरा काम कैसे चलेगा ?"

मुक्तिपद ने कहा, "जिन लोगों के पास गाड़ी नहीं है उन लोगों का काम नहीं चलता ?"

जरा रुककर मुक्तिपद फिर बोले, "और अगर गाड़ी की नितान्त आवश्यकता महसूस हो रही थी तो गाड़ी की मरम्मत करा लेते। वह बहुत कम ही लागत में हो जाती।"

सौम्य ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

मुक्तिपद बोले, "आदमी तो अपनी आमदनी के अनुसार ही खर्च करता है। तुम्हें मालूम नहीं कि अभी कारखाने के उत्पादन के बन्द हो जाने के कारण हमारी आमदनी कम हो गई है ? यह सब बात अभी इस उम्र में नहीं समझोगे तो कब समझोगे ? अब और कब बालिग होओगे ?"

सौम्य अब भी अपराधी की नाईं खड़ा है।

मुक्तिपद बोले, "क्यों तुम कुछ क्यों नहीं बोल रहे ? बोलो, जवाब दो।"

सौम्य तो भी चुप्पी ओढ़े रहा।

मुक्तिपद बोले, "और यह तुमने क्या किया ? यह शादी क्यों की ? बगैर कोई खबर दिए तुम किसे ब्याह कर ले आए ? वह कौन है ? किसके घर की लड़की है ?"

सौम्य अब भी चुप रहा।

मुक्तिपद बोले, "तुम्हें पता है कि तुम्हारी दादी मां तुम्हारी शादी के लिए रात-दिन सोचती रहती थीं। जिसके-तिसके हाथ में तुम्हें नहीं सौंपना है, इसी मकसद से कितने ही ज्योतिषियों को तुम्हारी जन्मपत्री दिखाई थी। वह सब जानने के बावजूद तुम यह कांड कर बैठे ! तुम एक बार गहराई से सोचकर देखो कि तुम्हारी इस शादी के कारण तुम्हारी दादी मां को कितना धक्का लगा है !"

अचानक अन्दर से एक औरताना जनाना आवाज़ आई, "सोमो, सोमो—"

मुक्तिपद समझ गए कि सौम्य की मेम पत्नी अंदर से पुकार रही है।

सौम्य बोला, "चाचाजी, मैं चलता हूं—"

"हां-हां जाओ, ज़रूर जाओ, जाओ-जाओ—"

मुक्तिपद का पूरा मन विरक्ति से तल्ख और तुर्श हो गया। दायित्वबोध न हो तो आदमी कितना हैवान हो सकता है, इसका नमूना है यह सौम्य।

मुक्तिपद इसके बाद वहां खड़े नहीं रह सके। डॉक्टर जैसा कि कह गया, मां को और कुछ दिनों तक इसी तरह पड़े रहना होगा। साथ ही इलाज भी जारी रखना पड़ेगा। सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की आज जो हालत है मां की भी वही हालत है। किसी तरफ से सुधार होने की कोई उम्मीद नहीं है। ऐसे हालात में एकमात्र उपाय है खर्च में कटौती करना। व्यर्थ का खर्च बिलकुल रोक देना होगा। तमाम बेवजह के खर्चों पर रोक लगा देने की ज़रूरत है।

यह सब सोचते हुए मुक्तिपद सीढ़ियां उतर सदर दरवाज़े की तरफ जा रहे थे। लेकिन न जाने क्या सोचकर मुनीमजी के कमरे के अन्दर चले गए।

मंझले बाबू को अन्दर आते देखकर मल्लिकजी उठकर खड़े हो गए।

मुक्तिपद ने कहा, "तमाम फालतू खर्चों में कटौती कर दी है न मुनीमजी ?"

मल्लिकजी ने कहा, "आपने जो-जो कहा था, वही किया है।"

"विधु और फटिक को काम से हटा दिया है न ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, उन लोगों का पूरा बकाया चुकाकर हटा दिया है।"

मंझले बाबू ने कहा, "और बिजली का बिल ? इस महीने में कितना आया है ?"

मल्लिकजी ने बिल हाथ में लेकर दिखाया। बिल पर लिखी हुई संख्या को देखकर बहुत खुश हुए। बोले, "खैर, इस महीने डेढ़ सौ रुपये कम का बिल आया है।"

मुक्तिपद ने और भी बहुत सारी बातों की बाबत तहकीकात की—सारा कुछ खर्च कमाने के सन्दर्भ में। उसके बाद बाहर निकलकर जा रहे थे। लेकिन फिर अचानक ठिठककर खड़े हो गए।

बोले, "और हम लोगों के रसेल स्ट्रीट के मकान में जो लोग थे, उन लोगों की क्या खबर है ? वे लोग क्या अब भी उसी मकान में हैं ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां।"

"अब भी क्यों हैं ? मैंने तो उन्हें हटा देने के लिए कहा था। इसकी सूचना भेज दी है ?"

मल्लिकजी ने अपराधी की तरह कहा, "अभी नहीं कहा है—"

"क्यों ?" मुक्तिपद बोले, "क्यों नहीं कहा है ? उन्हें महीने-भर के खर्च का

पैसा भी क्या पहले की तरह ही दिए जा रहे हैं ?"
मल्लिकजी बोले, "नहीं, सो नहीं दे रहा हूं।"
"वे लोग घर कब छोड़ेंगे ?"
मल्लिकजी मौन नहीं सके कि इस बात का क्या उत्तर दें।
"अरविन्द गाड़ी लेकर अब उन लोगों के घर नहीं जाता है न ?"
"नहीं, मैंने यह बन्द कर दिया है। गाड़ी भेजना भी बन्द कर दिया है। मास्टरों का पढ़ाना भी बन्द करा दिया है। यह सब खर्च अभी नहीं है।"
मुक्तिपद बोले, "मगर वे घर न छोड़ेंगे तो बिजली के बिल का पैसा चुकाते ही रहना पड़ेगा।"
मल्लिकजी बोले, "सो तो चुकाना ही होगा।"
"तो फिर इलेक्ट्रिक कम्पनी को लाइन काट देने को नोटिस दे दें। वे लोग जितने दिनों तक उस मकान में रहेंगे उतने दिनों तक बिल का पैसा भरना होगा। सब काम क्या मुझे कहना होगा तभी आप करेंगे ? फिर आपको रखा ही क्यों गया है ?"
उसके बाद सहसा एक और बात की याद आ गई।
बोले, "और हां, वह नौजवान ? वही आपके देस का आदमी जिसे उन लोगों की देखरेख के लिए रखा गया था ! हर महीने जिसे पन्द्रह रुपया वेतन देना पड़ता था, वह कहां है ? वह अब भी क्या इसी मकान में रहता है ?"
"उसकी मां बीमार है, वह अभी गांव पर गया हुआ है।"
"उसकी तनख्वाह बन्द कर दी है न ?"
मल्लिकजी बोले, "हां। अब उसे एक बैंक में नौकरी मिल गई है।"
मुक्तिपद बोले, "किसी को नौकरी मिले या न मिले, अब यहां एक भी फालतू आदमी को रहने मत दीजिए। अभी देश नाजुक दौर में गुजर रहा है। चारों तरफ लोगों की भीड़-भाड़ लगी रहती है, चोरी-लूटपाट आजकल बहुत बढ़ गई है। आप तो सब कुछ देख ही रहे हैं। चीजों की कीमत भी आसमान छूने लगी है। और यह कोई धर्मशाला नहीं है कि जब जो आ जाए उसे घर में रखकर दामाद की तरह उसकी खातिरदारी की जाए।"
यह कहते-कहते अचानक कलाई-घड़ी पर नजर पड़ गई और वे अचकचा उठे। न मालूम किस जरूरी काम की याद आ गई। और याद आते ही वे बाहर अपनी गाड़ी में जाकर बैठ गए।

मुक्तिपद के जाने के बाद मल्लिकजी का पसीना इस तरह चलने लगा जैसे देह का बुखार उतरा हो। इसी का नाम नौकरी है—मालिक के हुक्म की तामील करना और काम में गफलत करने पर डांट-फटकार सुनना। सच, इसी का नाम नौकरीगीरी है।
शाम के वक्त अचानक संदीप आ धमका।
मल्लिक चाचा संदीप को देखकर हैरत में आ गए।
"अरे तुम ? तुम एकाएक ? आज बेड़ापोता नहीं गए ? तुम्हें क्या हुआ है ? चेहरा इस तरह उतरा हुआ क्यों है ?"
संदीप को देखने से ही पता चल गया कि वह सीधे बैंक से आ रहा है। बहुत

देर उसके मुंह से कोई आवाज नहीं निकल रही थी।

"क्या हुआ है तुम्हें? मां की बीमारी कैसी है? हालचाल ठीक है न? बैठो—बैठो।"

संदीप बोला, "नहीं चाचाजी, अभी मैं नहीं बैठूंगा। मन बड़ा खराब हो गया है। आज रात की गाड़ी से बेड़ापोता जाऊंगा, इस गाड़ी से जाना संभव नहीं हो सका। बाद में आखिरी गाड़ी से जाऊंगा।"

मल्लिक चाचा बोले, "क्या हुआ है, यही बताओ न।"

संदीप ने कहा, "आज रसेल स्ट्रीटवाले मकान से विशाखा मेरे बैंक में आई थी। मुझे यह सब मालूम नहीं था।"

मल्लिक चाचा ने पूछा, "कौन-सी बात?"

संदीप ने कहा, "सुना उन्हें हर महीने दी जानेवाली रकम बन्द कर दी गई है। मुझे इस बात पर यकीन नहीं हुआ, इसीलिए आपसे पूछने चला आया। आपको कुछ मालूम है?"

मल्लिकजी बोले, "बेशक मालूम है। मंझले बाबू ने मुझे हर महीने दी जाने वाली रकम भेजने से मना कर दिया है। मैं तो हुक्म का नौकर हूं, लिहाजा मैंने सिर्फ हुक्म की तामील की है। विशाखा अपनी असुविधा के बारे में कहने तुम्हारे पास गई थी क्या?"

संदीप बोला, "असुविधा तो उन्हें हो ही रही है। मगर इससे बढ़कर बात यह है कि विशाखा मुझसे रुपये मांगने गई थी।"

"तुमने रुपया दिया?"

संदीप बोला, "मेरी तो पूरी रकम बैंक में ही रहती है। उसकी रोनी सूरत देखकर मुझे बहुत तकलीफ हुई इसीलिए···"

"कितना दिया?"

"फिलहाल पांच सौ रुपये दिए। कहा, छुट्टी के बाद उन लोगों के घर पर जाऊंगा। सोचा, उन लोगों के घर जाने के पहले आपसे एक बार पूछ लूं कि यह बात सच है या नहीं।"

मल्लिकजी ने कहा, "तुमने जो कुछ सुना है, सही सुना है। रुपया भेजना पहले से ही बन्द कर दिया गया है, अब उन लोगों की बिजली की लाइन काटने का भी नोटिस दिया गया है। मंझले बाबू का हुक्म—"

संदीप ने कहा, "मुझे यह सब खबर बिलकुल मालूम नहीं थी। विशाखा से जब यह सुना तो मुझे ऐसा लगा जैसे सिर पर बिजली गिर पड़ी हो।"

मल्लिकजी ने कहा, "वह लड़की तुम्हारे पास क्यों गई थी?"

"मैं तो बता ही चुका कि रुपया मांगने आई थी। मैंने पांच सौ रुपये दिए। वादा किया कि उससे ज्यादा की भी जरूरत होगी तो दूंगा। लेकिन सवाल है, अभी वे लोग इस हालत में कहां जाएंगी? तो फिर क्या उसी बुरे हालात को बरदाश्त करते मनसातल्ला लेन के मकान में चली जाएंगी? अपनी उस देवरानी के झाड़ू और लात पहले की तरह सहने के लिए चली जाए?"

मल्लिक चाचा बोले, "अगर जाना ही पड़े तो तुम या मैं क्या कर सकते हैं? मैं कुछ कर नहीं पाऊंगा। मेरे हाथ-पांव बंधे हुए हैं। और तुम क्या करोगे, यह

तुम जानो।"

संदीप ने कहा, "मंझले बाबू ने क्या कहा ?"

"मंझले बाबू और क्या कहेंगे, खर्च में कटौती करने कहा। बोले, अब किसी तरह का फालतू खर्च नहीं होना चाहिए। घर की महरियों और नौकरों को बर्खास्त करने को कहा। वे लोग रोते-रोते चले गए।"

संदीप ने कहा, "तो फिर आपका कहना है कि और कोई दूसरा उपाय नहीं है ?"

मल्लिक जी ने कहा, "इसके सिवा मैं क्या कह सकता हूं ! मैं तो उपाय बताने का मालिक नहीं हूं—जिन्हें कहने से काम हो सकता था वे तो अभी मरने-मरने की हालत में हैं। वे अब जिन्दा रहेंगी या नहीं, इसका भी कोई ठिकाना नहीं।"

संदीप बोला, "ठीक है, मैं फिर चलता हूं—"

मल्लिक चाचा खामोशी में डूब गए। संदीप बोला, "मैं अभी रसेल स्ट्रीट के मकान जा रहा हूं। मैं उन्हें इस हालत में, इस मुसीबत में फंसे हुए छोड़कर नहीं जा सकता। कोई न कोई रास्ता मुझे ढूंढना ही है।"

यह कहकर संदीप वहां से निकलकर चला गया।

आदमी ठिठककर खड़ा होना नहीं जानता। ठिठककर खड़े होने से उसे डर लगता है। क्योंकि वह सोचता है, ठिठककर खड़े हो जाने का अर्थ है मृत्यु। लेकिन थमना मृत्यु नहीं है। थमने का मानी है पूर्णता। हिमालय से नदी निकलकर चलते-चलते वहीं रुकती है जहां समुद्र है। यह उसका थमना नहीं, पूर्णता है।

मनुष्य के जीवन में भोग और दान दोनों रहते हैं। जो भोग या दान को नहीं जानता, वह केवल संचय को ही जानता है। लेकिन उस संचय की भी जहां सार्थक समाप्ति नहीं है, वहां सिर्फ लज्जा है। लज्जाजनक कृपणता।

इस लज्जा से ही संदीप सदा से डरता आया है। उसका सदैव का यही सोच रहा है कि करने के आदर्श से होने का आदर्श बड़ा होता है।

लेकिन अन्ततः वह क्या हुआ ? अन्ततः वह क्या होने में समर्थ हो सका ? क्या ? संदीप के लिए एकमात्र सांत्वना की बात यही है कि वह कुछ होने की चेष्टा करते आया है, कुछ होने की जी-जान से प्रयास करता रहा है। अतः वह अपनी दृष्टि में निर्दोष है, कानून की निगाह में वह चाहे जो हो, आदमी का समाज उसका चाहे जो भी न्याय करे, लेकिन वह अपनी दृष्टि में निष्पाप है।

उस दिन की बात उसे याद है। मल्लिक चाचा से विदा लेकर उसने रसेल स्ट्रीट की ओर ही कदम बढ़ाए थे। लेकिन वहां तब एक नाटक चल रहा था, उसको इसका पता कैसे चलेगा ?

विशाखा जब संदीप से पांच सौ रुपये लेकर रसेल स्ट्रीट के मकान के नीचे पहुंची तो देखा, एक टैक्सी मीटर नीचे कर खड़ी है। इस वक्त उसके घर में कौन आया ? कौन हो सकता है ?

दनादन सीढ़ियां तय कर ऊपर पहुंचने पर उसे अपने चाचा के गले की आवाज सुनाई पड़ी। दरवाजा खुला हुआ है।

तपेश गांगुली की विशाखा पर नज़र पड़ी तो उसे लगा कि मंझधार में किनारा मिल गया। बोला, "तू आ गई ? अच्छा ही हुआ। मुझे बीसेक रुपये दो तो बिटिया टैक्सी का किराया चुका दूं।"

रुपया मिलते ही तपेश गांगुली नीचे उतरकर गया। उसके बाद ऊपर आने पर देखा, विशाखा वहां नहीं है। वहीं से तपेश गांगुली ने पुकारा, "अरी विशाखा, कहां गई तू ? ओ विशाखा !"

विशाखा मां के कमरे में गई थी। वहीं से बोली, "मैं यहां हूं—" यह कहते हुए बाहर निकलकर आई।

तपेश गांगुली ने विशाखा पर नज़र पड़ते ही पूछा, "अरी, यह क्या सुनने को मिल रहा है ? मुखर्जी-भवन का पोता विलायत से एक मेम को ब्याह कर ले आया है ?"

विशाखा ने कहा, "हां, मैंने भी यही सुना है।"

"फिर क्या होगा ?"

विशाखा कोई उत्तर नहीं दे सकी। उसके दिमाग में तब बहुत सारी चिन्ताएं चक्कर काट रही थीं। मां की यह बीमारी, उसके साथ रुपये का अभाव और थोड़ी देर पहले ही शर्म को ताक पर रखकर संदीप के ऑफिस जाकर पांच सौ रुपया कर्ज़ लेने की बात। तमाम घटनाएं तब उसके मन को पूरी तरह मथ रही थीं। उसके बाद ठीक उसी समय चाचा का इस घर में पहुंचना !

"क्यों री, बात सच्ची है क्या ? कुछ बोल क्यों नहीं रही ?"

विशाखा ने मुर्दानी स्वर में कहा, "हां-हां, सब सच है···"

"फिर ?"

विशाखा बोली, "फिर और क्या ? जिनकी शादी नहीं होती वे क्या दुनिया में जिन्दा नहीं रहतीं ? उनका जो होता है, मेरा भी वही होगा।"

तपेश गांगुली इस पर भी शांत नहीं हुआ। बोला, "लेकिन शादी नहीं होगी तो तुम लोगों को एक दिन यह घर भी छोड़ देना होगा। वे लोग तो हमेशा रख कर खिलाएंगे-पहनाएंगे नहीं।"

इन बातों के संबंध में चर्चा करने में विशाखा को बुरा लग रहा था। लेकिन ज़बान खोलकर कुछ कह नहीं पा रही थी। बोली, "घर छोड़ने की नौबत आएगी तो छोड़ दूंगी। जिन लोगों के पास मकान नहीं है वे लोग सभी मर गए हैं ?"

तपेश गांगुली बोला, "अरे, नहीं-नहीं, वैसा क्यों होगा ? मेरा घर तो खाली ही पड़ा है। तुम लोग वहां जाकर रहोगी, जैसे कि पहले रहा करती थीं। मैं क्या तुम लोगों का पराया हूं ? मैंने तभी भाभी से कहा था, बड़े लोगों के शौक पर भरोसा नहीं किया जा सकता। वे लोग हमेशा से ऐसे ही रहे हैं। उन लोगों के वादे की कोई कीमत है ?"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहने लगा, "तू तो अभी घर में अकेली है, तेरी मां भी बहुत बीमार है। इस समय तेरी चाची को भेज दूं ? तेरी चाची बीमारी के दौरान तेरी मां की सेवा-सुश्रूषा कर सकेगी।"

विशाखा बोली, "नहीं चाचाजी, आपको तकलीफ उठाने की ज़रूरत नहीं। मैं अकेले ही सारा कुछ किसी तरह संभाल लूंगी।"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद का मतलब ?"

तरेश गांगुली ने कहा, "मतलब यह कि वे लोग जब इस घर से निकाल देंगे तो तुम लोग कहां जाओगी ?"

विशाखा ने कहा, "तब की बात तब सोची जाएगी। अभी मुझे डाक्टर के पास जाना है और दवा लानी है।"

तरेश गांगुली बोला, "मेरे पास अभी रुपये नहीं हैं, वरना मैं भी तेरे साथ चलता।"

विशाखा ने कहा, "आपको इसके लिए नहीं सोचना है चाचाजी। अभी मेरे पास काफी रुपये हैं।"

तरेश गांगुली बोला, "मासिक वेतन मिल चुका होता तो मैं भी तुझे कुछ रुपये दे सकता था। लेकिन अभी मेरा हाथ बिलकुल खाली है।"

विशाखा ने शैल को पुकारा। शैल के आते ही बोली, "शैल दी, तुम जरा मां की देखरेख करना, मैं डाक्टर साहब के यहां से आ रही हूं। दरवाजा बंद कर दो।"

तरेश गांगुली उसके साथ-साथ जाने लगा। यह पहला दिन है कि बगैर कुछ खाए आज इस घर से लौटना पड़ रहा है। सीढ़ी के नीचे आकर तरेश गांगुली बोला, "मैं जा रहा हूं विशाखा···"

विशाखा ने चाचा की तरफ एक बार मुड़कर भी नहीं देखा। जिस तरह चल रही थी उसी तरह चलती रही। तरेश गांगुली कुछ देर तक उस ओर ताकता रहा। इन कई सालों के दरमियान यह लड़की खासी जवान हो गई है। ठीक है बाबा, जब रुपयों की जरूरत पड़ेगी तो फिर मेरे सामने ही हाथ फैलाना होगा। उस वक्त मेरे ही पांव पकड़ने होंगे। तब ? तब क्या होगा ?

डाक्टर के पास जाने पर विशाखा को बहुत देर तक इन्तजार करना पड़ा। बहुत सारे लोग पहले से ही चेंबर के सामने इन्तजार में खड़े हैं। जब विशाखा की बुलाहट आई तो घड़ी की सुई तब शाम के सात के अंक को छूने-छूने पर थी। डाक्टर कई दिनों से विशाखा की मां को देख रहा था। डाक्टर का प्रेसक्रिप्शन लिखना जब खत्म हुआ तो साढ़े सात बज चुके थे। उस प्रेसक्रिप्शन को दिखाकर विशाखा जब दवा लेकर घर आई तो आठ बज रहे थे।

शैल ने जैसे ही दरवाजा खोला तो विशाखा ने देखा, सदीप बैठा हुआ है। बोली, "यह क्या ? तुम इतनी रात में ?"

सदीप बोला, "छुट्टी के बाद मैं एक बार विडन स्ट्रीट के मकान में गया था। अभी वहां से होकर सीधे यहीं आ रहा हूं।"

"उस घर का क्या हालचाल है ?"

"वहां नौकर-चाकर वगैरह बहुत सारे लोगों की छंटनी की गई है।"

विशाखा ने कहा, "तुम इतनी रात में आए तो फिर बेहाला नहीं जाना है क्या ?"

सदीप बोला, "इतनी रात में गांव कैसे जाऊं ?"

"फिर ?"

संदीप बोला, "मां तो अब कुछ बेहतर स्थिति में है, यह देख आया हूं। न भी जाऊंगा तो कोई हानि नहीं होगी। लेकिन..."

"लेकिन क्या?"

संदीप ने कहा, "मल्लिक चाचा से सुना, इस घर की बिजली की लाइन काट देने का भी नोटिस दिया जाएगा।"

विशाखा कुछ भी नहीं बोली।

संदीप बोला, "आज की रात अगर तुम्हारे यहां गुजार दूं तो तुम लोगों को कोई आपत्ति है?"

कलकत्ता एक अजीब ही किस्म का शहर है। एक पर एक आघात लगते रहे हैं इसे, लेकिन वह सबकुछ सहता हुआ बार-बार सिर ऊंचा किए खड़ा रहा है। बहुत दिन पहले सत्रहवीं शताब्दी के आखिरी दौर में जो इलाका परती ज़मीन के रूप में पड़ा था, कौन जानता था कि उसी परती जमीन पर एक आश्चर्यजनक शहर खड़ा हो जाएगा! सात समुद्र, तेरह नदियां पार कर शुरू में अपने भाग्य की परीक्षा करने के निमित्त जिन लोगों ने भूखंड पर कदम रखे थे, वे भी क्या जानते थे कि इस पानी भरी जमीन को ही केंद्र बनाकर इतिहास का उठना-गिरना इस तरह तीक्ष्ण और तिर्यक हो जाएगा!

यह सब बात इतिहास के पृष्ठों पर विस्तार से लिखी हुई है। इतिहास के पात्र और पात्रियों के काफिले-दर-काफिले जिस तरह इस मिट्टी पर आए हैं उसी तरह यहां इस उपजाऊ मिट्टी में विलीन भी हो गए हैं। उन लोगों की तरह ही संदीप अपना भाग्य आजमाने यहां आया था। यहां आकर दूसरे की रोटी पर पलता था और यहां के दूसरे-दूसरे लोगों की तरह हंसा-रोया था। यहां के तमाम लोगों से बिलकुल एकाकार हो गया था और फिर एक दिन यहां से चला भी गया था। यहां के तमाम रिश्तों को तोड़कर वह यद्यपि चला गया था परंतु यहां की मोह-ममता से अपने आपको अलग नहीं कर सका था। मोह-ममता से क्यों अलग नहीं हो सका था, इसका कारण है विशाखा।

संदीप बीच-बीच में सोचता, किस बुरे क्षण में विशाखा से उसकी भेंट [illegible] थी, कौन जाने! अगर भेंट न हुई होती तो उसे कौन-सा लाभ या हानि होत[illegible]

कोई-कोई व्यक्ति मनुष्य के जीवन का उपलक्ष्य बनकर पैदा होता है। बाद वह उस उपलक्ष्य का अतिक्रमण कर किसी दूसरे लक्ष्य तक पहुंचने के किसी एक और व्यक्ति को अपना उपलक्ष्य बनाता है। उसके बाद वह उ[illegible] भी एक दिन कहां गुम हो जाता है, इसका उसे पता नहीं चलता। उसके ब[illegible] उस आदमी की उम्र बढ़ जाती है, यात्रा का आखिरी पड़ाव आ जाता है, [illegible] उसके जीवन के सारे उपलक्ष्यों का आपस में घाल-मेल हो जाता है [illegible] विधाता उसे किसी दूसरे ध्रुव-लोक में पहुंचाकर निश्चितता की [illegible] यही तो औसत आदमियों की भाग्य-लिपि है।

लेकिन संदीप के मामले में ऐसा क्यों नहीं हुआ? क्यों [illegible] जीवन का लक्ष्य बनकर एकमात्र ध्रुवतारा बनकर रह गया?

याद है, तब मुखर्जी-भवन में दुर्दिन का दौर चल रहा था। एक ओर अन्तःपुर में जरूरत से ज्यादा नौकर-चाकर और दाइयों की छटनी हो रही थी और दूसरी ओर तीन पुश्तों से चली आ रही फैक्टरी अचल अवस्था में पड़ी हुई थी। आयात-निर्यात, माल का उत्पादन सारा कुछ ठप पड़ा हुआ है, सब बंद है। बड़े-बड़े अफसरों को बगैर काम किए वेतन पाकर संतुष्ट रहना पड़ता है। दिन-दिन रोजमर्रा की जरूरत की चीजों की कीमत बढ़ रही है। हर दफ्तर में बेरोजगारों की नौकरी की उम्मीदवारी, एम्प्लायमेंट एक्सचेंज के दफ्तरों में बेरोजगारों के नामों की लंबी सूची आए दिन सरहद लांघ रही है। तकरीबन तीन सौ साल के उम्रदराज कलकत्ता शहर की यह बुरी हालत होगी, उसकी क्या तत्कालीन कलकत्ता की नींव डालनेवाले जॉब चार्नक ने कल्पना की थी?

अब भी दीवार-दर-दीवार पर पोस्टर चिपकाने का काम लगातार चल रहा है। कोई अगर एक पोस्टर दीवार पर चिपका जाता है तो दूसरे ही दिन उस पर दूसरा पोस्टर चिपक जाता है। राजनीति के पोस्टर पर संस्कृति का पोस्टर आकर चिपक जाता है। संस्कृति के पोस्टर पर फिर दाद-मलहम या 'ऋतु-वेद' का पोस्टर चिपक जाता है। एक-एक कर जीवन-जीविका और मृत्यु एकाकार होने लगे।

अभी रात काफी गहरा चुकी है। रसेल-स्ट्रीट से एक गाड़ी तक के चलने की आवाज भी नहीं आ रही है।

विशाखा चुपके से सदीप के कमरे में आई। सदीप अब भी विशाखा के आने की उम्मीद में बिस्तर पर बैठा हुआ है। विशाखा जैसे ही कमरे के अंदर प्रवेश करती है, सदीप बिस्तर पर उठकर बैठ जाता है।

विशाखा सामने की कुर्सी पर बैठकर कहती है, "तुम अब भी जगे हुए हो?"

सदीप उस बात का उत्तर न देकर कहता है, "मां क्या कर रही है?"

विशाखा कहती है, "मां अब सो गई है।"

"अभी कितना बुखार है? बुखार देखा है?"

"दवा खिलाई है?"

"हां, दवा खाने के कारण ही अब थोड़ी-सी नींद आ गई है। अब तक मां के माथे पर आइस-बैग रख रही थी। मां को सोई हुई हालत में देखकर तुम्हारे पास आई। तुम क्या कहना चाहते थे, कहो।"

सदीप कहता है, "तुम लोगों के बारे में ही कहना था। जो होने को था, हो चुका। अब तुम लोग कहां जाओगी, यही बताओ। यह मकान तो तुम लोगों को छोड़ ही देना पड़ेगा। मकान खाली करना होगा। इस मकान का बिजली कनेक्शन भी वे लोग काट देंगे। आज मैं मल्लिक चाचा से सारी खबर सुनकर आ रहा हूं। इसके बाद तुम लोग कहां जाओगी, बताओ। दुबारा वही खिदिरपुर के मनसातल्ला मकान में जाओगी?"

विशाखा कहती है, "इसके सिवा हम लोगों के लिए दूसरा उपाय ही क्या है? कौन दूसरा आदमी हमें अपने घर में रहने देगा?"

"मगर वहां जाने से तुम्हारी मां को तुम्हारी चाची का गाली-गलौज सुनना पड़ेगा।"

"इसके अलावा हमारे लिए और कोई रास्ता नहीं है—"

संदीप कहता है, "तुम जब मेरे बैंक गई थीं, मैं तभी से इसी के संबंध में सोच
हूं। यह सब सोचते-सोचते मैं अपने बैंक के लेजर खाते में सारा कुछ गलत
ो कर बैठा था। तमाम एंट्री को मुझे नए सिरे से करना पड़ा है। हर वक्त तुम्हीं
गों की याद आती रही। इसलिए छुट्टी होते ही आंख और मुंह पर पानी के छींटे
लकर सीधे विडन स्ट्रीट-भवन चला गया था। वहां जाने पर भी कोई उपाय न
ख पाने के कारण सीधे तुम लोगों के पास चला आया।"

विशाखा कहती है, "तुम हम लोगों के बारे में इतना क्यों सोचते हो? तुम्हारी
कौन-सी ज़िम्मेदारी है?"

संदीप कहता है, "ज़िम्मेदारी नहीं है? किसी दिन तुम लोगों के घर में रुपया
भेजने के लिए मुझे नौकरी मिली थी। उसके बाद इस रसेल स्ट्रीट के मकान में
आने के बाद मेरा काम था तुम लोगों की देख-रेख करना। अभी तुम लोगों की इस
मुसीबत की घड़ी में मैं कैसे चुपचाप बैठे रहूं, बताओ? अभी मुझे दूसरी नौकरी
मिली है तो रातों-रात तुम लोग क्या बेगाने हो गए? ऐसा कहीं होता है?"

विशाखा इसका क्या उत्तर दे, यह सोच न पाने के कारण चुप्पी में डूब जाती
है। उसके बाद कहती है, "आज तुम घर नहीं गए तो तुम्हारी मां क्या बहुत ही
चिंतित नहीं होंगी?"

संदीप कहता है, "चिंता तो बेशक करेगी, लेकिन मुझे तुम लोगों के बारे में
भी सोचना है। मैं अकेला आदमी हूं, कहां जाऊं, बताओ? यों भी मल्लिक
चाचाजी से बातें करते-करते रात हो गई, उसके बाद यह सब कहने के लिए तुम
लोगों के यहां भी आना पड़ा। उसके बाद कोई ट्रेन नहीं थी कि मैं बेड़ापोता
जाता।"

अब रात और गहरा गई है। एकाएक संदीप कहता है, "एक काम करोगी
विशाखा?"

"क्या?"

"अन्यथा मत लेना, हम लोगों के बेड़ापोता जाने में तुम लोगों को कोई
आपत्ति है?"

"तुम लोगों के देस?"

संदीप कहता है, "इतना ज़रूर है कि वह शहर नहीं, देहात है। वह मकान
रसेल स्ट्रीट के मकान जैसा नहीं है। माटी की दीवार है, माटी का फर्श। यहां की
तरह बिजली की रोशनी भी नहीं है। जानता हूं, वहां रहने से तुम लोगों को बहुत
तकलीफ होगी..."

यह कहकर संदीप चुप हो जाता है। इस प्रस्ताव को विशाखा किस रूप में
लेगी, यही सोचने लगता है। विशाखा कहती है, "तुम हम लोगों का भार
उठाओगे?"

संदीप कहता है, "भार उठा सकूं तो मुझे खुशी ही होगी, मगर तुम लोग वहां
चलोगी या नहीं, इसी पर गहराई से सोचकर देख लो।"

विशाखा कहती है, "पेड़ के तले जाकर खड़े होने से तो यह कहीं अच्छा
है।"

संदीप कहता है, "मैं चूंकि यहां पैदा हुआ हूं इसलिए यहां के प्रति मुझमें मोह या ममता होना स्वाभाविक है। लेकिन तुम? तुम तो शहर ही में पैदा हुई हो, शहर ही में बड़ी हुई हो। यहां रहने से तुम लोगों को तकलीफ होगी, यह मैं पहले ही बता देता हूं—"

विशाखा कई दिनों से रात में जग रही थी। उस पर था रुपये का अभाव। संदीप की बात के जवाब में कहती है, "कितनी तकलीफ होने पर कोई आदमी पराये के सामने हाथ फैला सकता है, यह तुम समझ नहीं सकोगे। अगर समझते तो फिर यह बात नहीं कहते—"

संदीप कहता है, "फिर भी पहले ही इसलिए बताए दे रहा हूं कि बाद में कहीं तुम तमाम तकलीफों के लिए हम लोगों को जिम्मेदार न समझ बैठो—"

विशाखा कहती है, "इतने दिनों तक मुझसे हिलने-मिलने के बावजूद अगर तुम्हारी यही धारणा है तो मुझे कुछ नहीं कहना—"

संदीप कहता है, "तुम गलत मत समझो विशाखा। तुम्हें और मौसीजी को मैं गैर नहीं समझता, इसीलिए यह बात साफ तौर पर कही।"

उसके बाद जरा रुककर संदीप फिर कहने लगता है, "जानती हो विशाखा, मेरी मां ने दूसरे के घर में खाना पकाकर मुझे पाला-पोसा है। इसलिए समझ सकती हो कि किसे दरिद्रता कहते हैं, किसे भूखों रहना कहते हैं, इसका अहसास मुझे बचपन से ही है। लेकिन जो नहीं देखा था, उसे कलकत्ता आने पर देखा···"

"देखकर क्या महसूस किया?"

संदीप कहता है, "सिर्फ क्या मुखर्जी बाबुओं को ही मैंने देखा? बैंक में नौकरी करने पर और भी बहुत कुछ देखा, जो देखना मेरे लिए बाकी था।"

विशाखा कहती है, "रात काफी गहरा गई है, तुम्हें नींद नहीं आ रही?"

संदीप कहता है, "आज रात-भर जगकर तुमसे बातें ही करता रहूंगा, यही सोचकर कलकत्ता से वापस नहीं गया। तुम्हें नींद आ रही हो तो तुम सोने जा सकती हो।"

विशाखा कहती है, "तुम स्वयं को लेकर दूसरे के बारे में धारणा बनाते हो, इसीलिए आदमी पहचानने में तुम गलती कर बैठते हो।"

संदीप कहता है, "तो तुम सच कह रही हो कि इतनी रात तक जगकर मुझसे बातें करने में तुम्हें भी अच्छा लग रहा है?"

विशाखा कहती है, "मुंह की बात हमेशा मन की बात नहीं भी हो सकती है।"

संदीप अब सामने की तरफ झुककर बैठ जाता है। कहता है, "जिन्दगी-भर यह बात याद रख पाऊंगा तो विशाखा?"

विशाखा अब उठकर खड़ी हो जाती है। कहती है, "नहीं, तुमसे जीत सकना मुश्किल है। अभी तो कुल मिलाकर मेरी जिन्दगी की शुरुआत हुई है। ऐसे में सारी जिन्दगी की गारंटी कैसे दे सकती हूं?"

संदीप कहता है, "तुम क्या यह सोच रही हो कि तुमसे वही गारंटी मांगने आज मैं तुम्हारे घर में रात बिताने आया हूं। मैं निर्बोध नहीं हूं।"

विशाखा कहती है, "न:, तुम बड़े ही सेन्टिमेंटल हो। इतना सेन्टिमेंटल होने से..."

"क्या कहा? क्या कहा तुमने? एक बार और कहो।"

"यही कहा कि इतने सेंटिमेंटल होने से तुम जीवन में सुखी नहीं हो सकोगे—"

संदीप कहता है, "यह तुम क्या कह रही हो? सेंटिमेंटल क्या तुच्छ वस्तु है? हमारी पूरी धरती सेंटिमेंटल से ही चल रही है। सेंटिमेंट न होता तो एक राजकुमार क्या समाज-संसार-स्त्री, राजपाट सारा कुछ छोड़कर रास्ते का राहगीर बन पाता है? सेंटिमेंट को इतनी तुच्छ वस्तु मत समझो—"

विशाखा कहती हैं, "लो, तुम गुस्सा गए। मेरी हर बात पर तुम्हें यदि गुस्सा आने लगे तो मेरा यहां से चले जाना ही बेहतर है—"

यह कहकर वह खड़ी होती है। संदीप कहता है, "लेकिन असली बात बगैर कहे तुम चली जा रही हो?"

"तुम्हारी कौन-सी असली बात है?"

अचानक बाहर से शैल की आवाज आती है। शैल कहती है, "माताजी कैसी-कैसी तो कर रही हैं। एक बार चलकर देख लो।"

यह सुनते ही विशाखा बाहर निकल मां के कमरे की ओर चली जाती है। संदीप भी अब देर नहीं करता है। वह भी उसके पीछे-पीछे जाने लगता है।

आदमी की दुनिया के लिए ईर्ष्या कोई नई चीज नहीं है। किसी की तरक्की होने से दूसरों को तकलीफ होना स्वाभाविक है। जिस दिन से आदमी का समाज बना है, उसी दिन से इसका अस्तित्व है। सिर्फ समाज में ही नहीं, अलग-अलग परिवारों में भी इसका अस्तित्व है। देशों के सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है। कोई देश अगर तरक्की करता है तो उसके बगलवाला देश ईर्ष्या से जलने लगता है। उस समय वह कोशिश करता है कि कैसे उसकी तरक्की के रास्ते में रुकावट डाली जाए।

यह चीज समाज बनने के आदिकाल से है। यानी आज से तकरीबन पांच हजार बरस पहले से यह होता आया है। तुम्हारे दुख में मैं सहानुभूति का प्रदर्शन करूंगा, हाय-हाय करूंगा। जरूरत पड़ने पर मदद भी करूंगा, लेकिन सुख के दिनों में? तुम्हारे सुख से मेरे चेहरे पर मुसकराहट आएगी या मुझे खुशी होगी, इस तरह की घटना की नजीर आदमी के इतिहास में कहीं नहीं मिलेगी। इसी वजह से दुनिया में दो महायुद्ध हो चुके हैं। अभी एक और विश्वयुद्ध छेड़ने के लिए पूरी दुनिया में अस्त्र-शस्त्रों पर सान चढ़ाने की प्रतियोगिता चल रही है।

तपेश गांगुली इतने दिनों से बुझा-बुझा जैसा चेहरा लिए रहता था। भाभी की लड़की की समस्या का कितनी आसानी से हल हो गया, एक पैसा भी खर्च नहीं हुआ, एक करोड़पति से शादी पक्की हो गई! और उसकी बिजली? बिजली भी उम्रदार हो चुकी है। विशाखा की हमउम्र ही है बिजली। उस समय तपेश गांगुली शादी का कोई इन्तजाम नहीं कर सका था। जाने भगवान की इतनी

कुदृष्टि क्यों है बिजली पर ! भगवान के सामने सरेश गांगुली ने कौन-सा ऐसा पाप किया है ?

इतने दिनों से सभी ऑफिस में कहते आ रहे थे, "सरेश दा बड़े भाग्यशाली हैं ! सरेश दा के जैसा कितने लोगों का भाग्य है ?"

सरेश गांगुली भाग्यवान पुरुष है, इस बात पर शुरू में वह खुद भी गर्व किया करता था। सच, सरेश गांगुली को अपने पॉकिट से एक भी पैसा खर्च नहीं करना पड़ा और उसकी अनाथ भतीजी की शादी निर्विघ्न हो गई।

उसके बाद बड़े आदमी के घर में एक बार कुटुम्बिता का रिश्ता हो जाएगा तो आने-जाने रहने से सरेश गांगुली से भी क्रमशः घनिष्ठता बढ़ती जाएगी। उस समय काम-काज, उत्सव-अनुष्ठान के अवसर पर सरेश गांगुली को भी निमन्त्रित किया जाएगा। उस समय उसे सुस्वादपूर्ण भोजन खाने का भी मौका मिलेगा। और उसके बाद नया दामाद क्या बिजली की शादी के लिए कोई इन्तजाम नहीं कर देगा ? इसके अलावा बड़े आदमी से घनिष्ठ सम्बन्ध होना भी तो एक अच्छी बात है, सुनने में भी यह बात अच्छी लगेगी।

बिजली बार-बार विशाखा से मिलने की बात कहती है। कितनी ही बार वह अपने बाप से कह चुकी है, "एक बार मुझे विशाखा के पास ले चलिए न बाबूजी ?"

सरेश गांगुली उसे ले जाना चाहता है। दौलतमंद बहन के पास जाकर बिजली कुछ दिन बिताएगी तो इसमें हर्ज ही क्या है ? कुछेक दिन वह विशाखा के घर में जाकर बिता आए ! वहां अच्छी-अच्छी चीजें खाने को मिलेंगी और उससे गपशप करने में उसका समय भी बीत जाएगा। कितने ही लोगों के लिए जाने की बहुत सारी जगहें होती हैं। कितने ही लोगों के मामा के घर भी होते हैं। बिजली के लिए वह सब नहीं है। सरेश गांगुली की ससुराल के खानदान का कोई ऐसा आदमी कहीं नहीं है जहां वह अपनी पत्नी और लड़की को लेकर कुछ दिन बिता आए। हालांकि उसे जाने के लिए ट्रेन का किराया भी नहीं देना होगा, क्योंकि ऑफिस से फ्री पास मिलता है।

लेकिन नहीं, रानी जाने नहीं देगी। न तो वह खुद जाएगी और न ही बिजली को जाने देगी। कहेगी : "बड़े आदमी के घर पर जाकर क्या होगा, सुनू ? वे लोग तुम्हें राजा बना देंगे ? चार हाथ-पैर निकल आएंगे ?"

ऐसी बेवकूफ औरत ही सरेश गांगुली के जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है। खुद एक तिनका तक नहीं हटाएगी, उस पर कोई आगे बढ़कर सहायता करने आएगा तो अड़ंगा लगाएगी।

सरेश गांगुली का दिमाग कभी-कभी गरम हो जाता। कहता, "रसेल स्ट्रीट जाने से तुम्हारे सम्मान में कौन-सी पोट लगती है, सुनू ? भाभी तो कोई गैर नहीं है, तुम्हारी अपनी जेठानी है—"

रानी कहती, "मैं नहीं जाऊंगी, तुम्हें मर्जी है तो जाओ। मैंने तुम्हें जाने से एक बार भी मना किया है ? तुम्हें जितनी बार मर्जी हो, जाओ—मुझे ले जाने को इतने उतावले क्यों हो ?"

सरेश गांगुली कहता, "तुम्हारे भले के लिए ही जाने कह रहा हूं। बड़े लोगों

से कुटुंब का रिश्ता कायम होगा, अभी से थोड़ी-सी जान-पहचान रखने में दोष ही क्या है ? एक-न-एक दिन बिजली की भी शादी करनी होगी, उस समय उन लोगों से संपर्क रखने का फल तो हमें मिलेगा ही।"

रानी बोली, "तो भी मैं नहीं जाऊंगी, तुम्हें मर्जी हो तो जाओ—"

"तो फिर अकेली बिजली को ही लेकर चलता हूं—"

रानी ने कहा, "नहीं, मैं उसे भी नहीं जाने दूंगी। जाना है तो तुम अकेले ही जाओ—"

हमेशा यही होता है। बहुत समझाने-बुझाने के बाद भी तपेश गांगुली रानी को रसेल स्ट्रीट नहीं ले जा सका था।

उसके बाद जिस दिन ऑफिस के रथीन घोषाल से मुखर्जी-परिवार के पोते की मेम से ब्याह करने की बात सुनी, उस दिन भी तपेश गांगुली को विश्वास नहीं हुआ था। लेकिन उसके बाद जब वह बात सच्ची साबित हो गई तो उसकी मानसिक स्थिति इस कदर बरदाश्त के बाहर हो गई कि रानी को बिना कहे उसे शांति नहीं मिल रही थी।

इसलिए सीधे घर आकर चिल्ला उठा, "अजी सुन रही हो, अजी—"

उसकी चिल्लाहट सुन रानी कमरे से बाहर निकल कर आई। बोली, "क्या हुआ, चिल्ला क्यों रहे हो ?"

"और क्या होगा, जो सोचा था वही हुआ।"

"क्या सोचा था तुमने ?"

तपेश गांगुली बोला, "जानती हो, सब घमण्ड से चूर हो गई थी। बहुत ही अहंकार हो गया था। उस समय मैंने कहा था, सिर के ऊपर दर्पहारी मधुसूदन हैं। उस वक्त मैंने जो कहा था, वही हुआ।"

रानी को तब भी कुछ समझ में नहीं आया। ऊब के साथ बोली, "बात क्या है, यही बताओ न।"

तपेश गांगुली ने कहा, "विशाखा की शादी मुअत्तल हो गई—"

"मुअत्तल हो गई ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां, मैंने तुमसे कहा नहीं था कि यह शादी नहीं हो सकती है ?"

रानी यह सुनकर कैसी-कैसी तो हो गई। हंसे या रोए, तय नहीं कर पा रही है। बस, इतना ही कहा, "यह खबर तुम्हें कहां मिली ? किसने तुम्हें यह खबर सुनाई ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "और कौन कहेगा ? हम लोगों के दफ्तर के रथीन घोषाल ने ही शुरू में मुझे यह खबर सुनाई। उस समय मुझे इस बात पर यकीन नहीं हुआ। उससे एक सौ रुपये की बाजी लगा बैठा। उसके बाद एक टैक्सी पर चढ़कर रसेल स्ट्रीट चला गया। जाने पर देखा, जो कुछ सुना है, सच है।"

"जाने पर क्या देखा ?"

"और क्या देखूंगा ? देखा कि भाभी बीमार है। एकदम से बेहोश होकर बिस्तर पर पड़ी हुई है। थोड़ी देर के बाद विशाखा आई। उससे भी यही सुनने को मिला। सुना कि बाबुओं के यहां से रुपया आना बन्द हो गया है। गाड़ी भेजना

भी बन्द कर दिया गया है। घर की महरी को दो महीने से वेतन नहीं मिला है।"
"तो फिर उन लोगों का खाना-पीना कैसे चल रहा है?"
"चल नहीं रहा है।"
"चल नहीं रहा है का मतलब? सभी भूखे रह रहे हैं?"
"एक तरह से यही हालत है। अब तुम एक बार चलो न। तुम जाओगी तो उनकी समझ में आएगा कि हालत क्या है। मैं तभी समझ गया था कि इतना घमण्ड अच्छा नहीं होता।"
रानी चुप रही। क्या कहे, समझ नहीं सकी। उसके बाद बोली, "अभी जाना क्या अच्छा रहेगा? जेठानी सोचेगी, मैं उसकी मुसीबत में मजा लेने आई हूं।"
"ऐसा ही सोचे तो इसमें दोष ही क्या है?"
रानी बोली, "ऐसी हालत में देखकर तो यूं ही वापस आना नहीं हो सकेगा। हो सकता है हम लोगों के घर में आने के लिए दबाव डाले।"
तरंग सांगुली ने कहा, "तो फिर किया ही क्या जा सकता है! वे लोग तो हमारे गैर नहीं हैं। इसके अलावा तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। घटते-घटते तुम्हारा शरीर टूटता जा रहा है। एक कामगार रखने से उसे खाना और कपड़ा देना पड़ता, इसके अलावा कम-से-कम चालीस-पचास रुपया वेतन भी देना पड़ता। यह हम लोगों की सगी है। सगे-सम्बन्धी को वेतन नहीं देना पड़ेगा। चोरी-छोनाझपटी नहीं करेगी। कितनी सुविधा रहेगी! चलोगी? चलना हो तो बताओ?"
यह बात सोचने लायक है। इस कलकत्ता शहर में बगैर तनख्वाह दिए काम-गार पाना क्या कोई आसान बात है? जब तक इस घर में रानी की जेठानी थी, तब तक उसे किसी असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता था। दस बजे दिन में उठने पर भी गृहस्थी का चक्का नियम से चलता था। जेठानी के चले जाने के बाद से गृहस्वामी महीने में आधे दिन ठीक वक्त पर भात नहीं खा पाता है। आधे दिन बिजली कॉलेज नहीं जा पाती है। नियम से राशन का चावल, दाल, चीनी-तेल लाने में तरंग सांगुली को ऑफिस जाने में देर हो जाती है। उस पर है बाजार करना।
तरंग सांगुली ने मोटी तनख्वाह पर काम करने के लिए एक आदमी भी रखा था। खाना उसे अपने घर पर खाना पड़ता था। खाना पकाना, बाजार करना और राशन लाना उसका काम था—इसी के लिए सत्तर रुपया वेतन लेता था। लेकिन बहुत ही नागा करता था। यह कहना, बारिश में भीगने से उसका बदन दर्द से टूटने लगता है। उस पर चोरी करने की आदत थी उसे। बाजार करने जाता तो पैसे का हिसाब ठीक से नहीं मिलता।
इस तरह के सिर्फ एक ही नहीं, दो-चार व्यक्तियों को रखा गया था। लेकिन अन्ततः उन सबों को हटा देना पड़ा था। इसलिए विशाखा और उसकी मां को अगर यहां ले आएगा तो इस तरह की समस्या से टकराना नहीं पड़ेगा। भाभी अकेले ही सब काम सम्भाल लेगी।
तरंग सांगुली ने कहा, "चलो, अब इस सम्बन्ध में मत सोचो। भाभी के आने से कम-से-कम नौकर-महरी से तो छुटकारा मिल जाएगा—"
कुछ देर तक सोचने के बाद रानी बोली, "लेकिन तुम्हीं ने तो बताया कि

मेरी जेठानी अभी बीमार है। अभी उस हालत में उसे यहां लाने से हम दवा और डॉक्टर के खर्च से तबाह हो जाएंगे। इतने दिनों तक बरदाश्त करती आई हूं तो और कुछ दिन बरदाश्त कर लूं। बीमारी बिलकुल खत्म हो जाएगी तभी उन लोगों को लाया जाएगा—"

तपेश गांगुली ने कहा, "बात तो सही ही कही तुमने। महीना खत्म हो जाए तब वेतन के पैसे भी मिल जाएंगे। उस समय हम टैक्सी लेकर जाएंगे।"

अन्ततः यही तय हुआ। वे दोनों किसी दिन रसेल स्ट्रीट जाकर भाभी और विशाखा को इस घर में ले आएंगे। जिस तरह अहंकार से भाभी इस घर को छोड़कर चली गई थी उसी तरह मुंह लटकाकर दुबारा उसे देवर के इसी घर में आश्रय की तलाश करनी पड़ेगी।

तपेश गांगुली ने कहा, "अदृष्ट ही सब कुछ है भई, वरना ऐसा रिश्ता कहीं टूटता है!"

रानी बोली, "अदृष्ट नहीं, अहंकार कहो, अहंकार!"

बात तो सच ही है। अहंकार ही इस घटना की जड़ में है। ऑफिस जाते ही रथीन घोषाल ने पूछा, "क्या हुआ तपेश दा? मैंने जो कहा था उस पर विश्वास नहीं हुआ?"

बाजी हार जाने के कारण तपेश गांगुली का मन यों भी बुझा-बुझा जैसा था। उस पर रथीन घोषाल की बात हरे जख्म पर नमक का काम कर गई। बोला, "कैसे समझ सकता था भाई, कि ऐसा होगा! हजारों रुपये जिसके पीछे खर्च किया, उसकी ऐसी दुर्दशा करेगा, यह कैसे समझता?"

भवेश दास ने परले छोर से कहा, "अब तुम्हारी भाभी और भतीजी का क्या होगा?"

"अब और क्या होगा, वे लोग मेरे सिर के बोझ बनेंगी।"

भवेश दास ने कहा, "यह तो तुम्हारे लिए अच्छा ही हुआ, अब दाई-नौकर का झमेला नहीं रहेगा। खर्च में भी कमी आ जाएगी।"

रथीन घोषाल बोला, "मेरी उस बाजी का क्या होगा?"

"किस चीज़ की बाजी?"

"वह जो सौ रुपये की बाजी लगाई थी, वह बिलकुल भूल गए?"

तपेश गांगुली जैसे आसमान से गिर पड़ा। बोला, "मैंने बाजी लगाई थी? कब बाजी लगाई थी?"

रथीन घोषाल बोला, "बाजी नहीं लगाई थी? यहां के सभी लोग गवाह हैं। सबसे पूछकर देख लो।"

जो लोग आसपास बैठे हुए थे उनसे बाजी लगाने की बात की पूछताछ की। उन लोगों ने कहा, "रथीन दा की बात सही है तपेश दा। आपने तो बाजी लगाई थी।"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैंने बाजी लगाई थी? यह कभी नहीं हो सकता। मेरे पास रुपया कहां है जो बाजी लगाने जाऊं? मैं क्या पागल हूं?"

रथीन घोषाल बोला, "खैर, जाने दो इस बात को। एक सौ रुपया के लिए मैं गरीब नहीं हो जाऊंगा।"

तपेश गांगुली बोला, "मैं भी एक सौ रुपया जाने से गरीब नहीं हो जाऊंगा—"

अन्ततः बहसबाजी का क्या नतीजा निकलता, कहा नहीं जा सकता। अचानक बड़े साहब के कमरे से हृदय चपरासी ने आकर तपेश गांगुली को बुलाया। स्टेटमेंट लेकर साहब के कमरे में जाना है पर स्टेटमेंट तैयार नहीं है। तपेश गांगुली हृदय को कमरे के बाहर बरामदे के कोने पर ले गया। पॉकेट से एक रुपया निकालकर हृदय को दिया।

हृदय बहुत पुराना चपरासी है। बोला, "यह रुपया किसलिए दे रहे हैं बाबू?"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह तुम्हें पान खाने के लिए दिया। पान खाना।"

हृदय को आश्चर्य हुआ। बोला, "एक रुपये का पान? मैं पान नहीं खाता गांगुली बाबू।"

तपेश गांगुली बोला, "अरे, पान नहीं खाते तो मिठाई खा लेना। रसगुल्ला खरीद कर खा लेना या फिर अपने लड़के को दे देना। उसकी जो मर्जी होगी खाएगा। तुम साहब से जाकर कहो कि तपेश गांगुली आए थे मगर पेट में दर्द होने के कारण घर चले गए हैं।"

हृदय चपरासी तमाम बाबुओं को पहचानता है। फिर भी वह मुंह बाए कुछ देर तक तपेश गांगुली के चेहरे की ओर देखता रहा। तपेश गांगुली बोला, "अरे, तुम क्या सोच रहे हो? इतना डर क्यों कर रहे हो? आदमी के पेट में क्या दर्द नहीं होता?"

हृदय इस बीच रुपये को अपनी जेब के हवाले कर चुका है। बोला, "मैं जाकर झूठ बोलूं बाबू? अगर पकड़ा जाऊं?"

तपेश गांगुली बोला, "अरे, तुम पकड़े क्यों जाओगे? मैं अभी तुरन्त घर चला जाता हूं। मैं कल आकर स्टेटमेंट दे दूंगा तो काम हो जाएगा।"

फिर भी हृदय चपरासी समझ नहीं पा रहा था कि वह क्या करे। तपेश गांगुली उसे बड़े साहब के कमरे की तरफ ठेलने लगा। बोला, "अरे, तुम इतने पुराने आदमी हो, तुम इतना सोच क्यों रहे हो? अरे, रेल का चक्का क्या मेरे या तुम्हारे न रहने से थम जाएगा? रेल का चक्का चलता ही रहेगा, चाहे तुम्हारे बड़े साहब रहें या न रहें। जाओ-जाओ, बड़े साहब से जाकर यही बात कह दो। कहना, मैं ऑफिस आया था मगर पेट में दर्द होने के कारण चला गया। और अगर यह कहने में डर लगे तो लो और एक रुपया रख लो।"

यह कहकर जेब से एक और रुपया निकाल हृदय के कुरते के पॉकेट में ठूंस दिया। उसके बाद उसे ठेलते-ठेलते बड़े साहब के कमरे की ओर भेज दिया। उसके बाद ऑफिस के कमरे में आकर जल्दी-जल्दी मेज की दराज में ताला बन्द कर चला जा रहा था।

पीछे से रथीन घोषाल ने पूछा, "क्या हुआ तपेश दा? कहां जा रहे हैं? साहब ने क्या कहा?"

तपेश गांगुली के पास उस समय बातें करने की फुर्सत नहीं थी। बोला, "भाई, साहब से बातचीत करने के दौरान पेट में दर्द उठ गया। चलता हूं—"

यह कहकर ऑफिस से सीधे सड़क पर चला आया। और उस समय जो गया तो फिर ऑफिस लौटकर आया ही नहीं।

रानी ने कहा, "क्या हुआ, तुम ऑफिस नहीं जाओगे ?"

तपेश गांगुली बोला, "नहीं, ऑफिस से छुट्टी ले ली है। अब तनख्वाह जिस दिन मिलेगी उसी दिन जाऊंगा।"

आमतौर से वेतन मिलने के दिन रेल के ऑफिस में कोई भी गैरहाज़िर नहीं रहता। इस बीच दूसरे आदमी से स्टेटमेंट तैयार करा लिया गया। हृदय चपरासी भी रुपया पाकर खुश है। तपेश गांगुली जानता है कि हृदय चपरासी को घूस देकर बड़े साहब को धोखा दिया जा सकता है। लेकिन महाकाल ? वहां के किसी चपरासी को घूस देकर महाकाल को धोखा नहीं दिया जा सकता। मगर वह बात अभी रहे।

उस समय कुल मिलाकर वेतन का पैसा तपेश गांगुली के हाथ में आ गया था। तनख्वाह मिलने के बाद कई दिनों तक तपेश गांगुली और रईसजादे में कोई अन्तर नहीं रह गया। तब उनका मिजाज़ बड़े साहब जैसा बुलन्दी पर था। सड़क से ही एकदम-से एक टैक्सी बुलाकर ले आया।

दूसरी ओर रानी भी एक कीमती साड़ी पहने है। बिजली के साथ भी यही बात है। सभी विशाखा के रसेल स्ट्रीट के घर पर जाएंगे। उन लोगों की दुर्गति अपनी आंखों से देख आएंगे। सुख के दिन में कोई नहीं गया था लेकिन दुख के दिन में जाकर सहानुभूति प्रकट करेंगे, 'हाय-हाय' कहेंगे। उसके बाद जरूरत होगी तो उन्हें अपने साथ मनसातल्ला लेन ले आएंगे।

टैक्सी तेज रफ्तार से कलकत्ता के सीने को चीरती हुई आगे बढ़ने लगी। टैक्सी के मीटर में रुपये की संख्या तेज गति से ऊपर उठती जा रही है। सो हो, तपेश गांगुली के खर्च की सारी राशि भाभी को घर ले आने पर वसूल हो जाएगी। उस समय महरी का खर्च बच जाएगा, रानी को सवेरे-सवेरे रसोईघर में खटने की जरूरत नहीं पड़ेगी। वह सिर्फ बिस्तर पर पड़े-पड़े हुक्म करेगी। हुक्म करते ही फौरन हुक्म की तामील हो जाएगी। तपेश गांगुली को भी अब महीने के आधे दिन बिना खाए ऑफिस नहीं जाना पड़ेगा। बिजली भी मन लगाकर कॉलेज की किताबें पढ़ सकेगी। उस समय उसे गृहस्थी का कोई काम नहीं करना होगा।

उन दिनों के आराम की बातें सोचते-सोचते तपेश गांगुली मन ही मन आराम का अनुभव करने लगा। ऐसा आराम रानी को बहुत दिनों से मयस्सर नहीं हुआ है।

मैदान के पास आने पर रानी ने पूछा, "वह क्या है जी ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "कौन-सा ?"

"वह जो सफेद रंग का मकान है, जिसके चारों तरफ बगीचा है ?"

"उसका नाम है विक्टोरिया मेमोरियल। अंग्रेज़ों के जमाने में रानी के नाम पर वह इमारत खड़ी की गई थी।"

रानी बहुत दिनों से मनसातल्ला लेन के मकान से बाहर नहीं निकल पाई थी। हमेशा अंधेरे घर के अन्दर ही ज़िन्दगी बिताई है। तपेश गांगुली ने कहा, "अब की भाभी के आने के बाद एक दिन तुम्हें अपने साथ ले इस बगीचे में घूमने-

फिरने आऊंगा।"

रानी बोली, "रहने दो, तुम मुझे अपने साथ लेकर घूमने निकलोगे !"

तपेश गांगुली ने कहा, "देख लेना, अबकी तुम्हें लेकर जरूर घूमने निकलूंगा। कलकत्ता मे जितनी भी देखने लायक चीजें हैं तुम्हें दिखाऊंगा। भाभी के आने पर तुम्हें कोई काम नही करना होगा। दाई-नौकर का भी खर्च बच जाएगा। उन रुपयो मे तुम्हें जहां भी मर्जी हो, घूम-फिर आना।"

रानी ने कहा, "तुम तो रेल में नौकरी करते हो, रेल का पास मिलता है मगर कभी कही घुमाने ले गए हो ?"

तपेश गांगुली बोला, "अब की ज़रूर चलूगा, देख लेना। भाभी और विशाखा घर-गृहस्थी की देखरेख करेंगी और हम हर छुट्टी में सैर-सपाटे करने निकलेंगे। पुरी चलेंगे, काशी चलेंगे, दार्जिलिंग चलेंगे। हर जगह जाएंगे। भाभी आ जाएगी तो तमाम झमेले खत्म हो जाएगे। वैसा विश्वासी आदमी तो हज़ार रुपया तनख्वाह देने पर भी नही मिलेगा—"

अचानक एक जगह जाकर टैक्सी रुक गई।

"क्या हुआ भई, क्या हुआ ? टैक्सी रोक क्यो दी ?"

टैक्सी-ड्राइवर बोला, "देख नही रहे हैं कि रास्ता बन्द कर दिया है।"

"रास्ता बन्द कर दिया गया है ? क्यो ?"

तपेश गांगुली चारों तरफ गौर से देखने लगा। केवल उन लोगों की टैक्सी नही, और भी बहुत सारी बसें, गाड़ियां, टेम्पो रुके हुए हैं। आसपास बहुत सारे स्कूटर भी रुके हुए हैं।

"क्या हुआ है भाई साहब ? क्या हुआ है ?"

किसी को पता नही कि क्या हुआ है। जानने की जरूरत भी नही है। थोड़ी देर बाद देखने को मिला कि एक विशाल जुलूस नारे लगाते हुए जा रहा है। दनादन पटाखे फट रहे हैं। लम्बी-लम्बी लाठियों के ऊपरी सिरे में बड़े-बड़े पोस्टर हैं। पोस्टरों मे लिखा हुआ है :

रथतल्ला यूथ क्लब की सरस्वती पूजा
रजत जयंती वर्ष

तपेश गांगुली बोला, "अरे, वैशाख महीने मे सरस्वती-पूजा ! यह क्या !"

बगल मे ही एक व्यक्ति स्कूटर पर बैठा हुआ था। उसने कहा, "नही साहब, पूजा माघ महीने में हुई है, अब देवी का विसर्जन वैशाख महीने में हो रहा है।"

"तीन महीने तक मूर्ति को क्लब में रखे हुए थे ?"

उस व्यक्ति ने कहा, "अरे नहीं, ऐसी बात नहीं है। विसर्जन के लिए भी तो रुपये की जरूरत पड़ती है। चंदे मे जो रुपये मिले थे, वे शराब पीने और मास खाने मे ही खत्म हो गए थे। विसर्जन करने का रुपया कहा से मिलेगा ?"

"ऐसी बात हो तो भी क्या माघ महीने की मूर्ति का वैशाख महीने में विसर्जन किया जाएगा ? इतना धीरज है उन्हें ?"

एक मील से भी बड़ा जुलूस है। उसके बीच लॉरी पर सरस्वती की मूर्ति है। जुलूस के तमाम लोग नारे लगा रहे हैं—सरस्वती माता की जय। कुछेक लड़के-लड़कियां चलती हुई लॉरी पर भी नाच रहे हैं।

सचमुच कलकत्ता एक अजीब शहर है। यहां जितनी ही गरीबी है उतना ही आडंबर। यहां जितना अभाव है उतना ही तामझाम। यह चीज़ मद्रास या बम्बई में नहीं मिलेगी। तपेश गांगुली ने टैक्सी के मीटर की तरफ गौर से देखा। इसी बीच तेरह रुपये की संख्या तक मीटर उठ चुका है। अब भी काफी फासला तय करना है। आखिर में जब रसेल स्ट्रीट पहुंचेगा तो हो सकता है मीटर की राशि चालीस रुपये तक पहुंच जाए। उस समय वह क्या करेगा?

काफी वक्त गुज़रने के बाद कलकत्ता ने हिलना-डुलना और चलना शुरू किया। चलने की शुरुआत करते ही तमाम गाड़ियों, बसों, टेम्पों और स्कूटरों में आगे बढ़ने की होड़ लग गई।

आखिर में टैक्सी तीन नंबर रसेल स्ट्रीट के मकान के सामने पहुंची। तपेश गांगुली बोला, "रुको-रुको, ठीक जगह पर पहुंच गया हूं—"

उस समय मीटर की रुपये की राशि चालीस नहीं, बल्कि तीस रुपये पहुंच गई थी। सो हो, भाभी को घर ले जाते ही यह रकम एक महीने में ही वसूल हो जाएगी। टैक्सी के पैसे देकर तपेश गांगुली सबके साथ गेट के अन्दर घुसा और वहां जाते ही देखा कि दरवाज़े पर ताला लटका हुआ है।

"ताला क्यों है? फिर क्या घर में कोई नहीं है?"

सामने के आंगन में एक-दो कमरे में कुछ लोग काम कर रहे थे। तपेश गांगुली ने उनमें से एक व्यक्ति से पूछा, "इस घर में जो लोग थे वे कहां चले गए भाई?"

उस व्यक्ति ने कहा, "वे लोग चले गए हैं हुजूर।"

तपेश गांगुली ने कहा, "वे लोग कहां गए हैं, मालूम है?"

"नहीं हुज़ूर।"

"फिर कब आएंगे, मालूम है?"

उस व्यक्ति ने कहा, "वे लोग अब नहीं आएंगे हुजूर। कोठी के मालिकों ने उन्हें यहां से हटा दिया है।"

तपेश गांगुली मानो आकाश से गिर पड़ा। साथ में थी रानी और बिजली। उन्होंने भी उस व्यक्ति की बात सुनी है। फिर क्या होगा? इतनी देर करके आने की वजह से ही क्या ऐसा हुआ? ऐसा होगा, यह मालूम रहता तो इतने दिनों तक इन्तज़ार किए बगैर उसी दिन उन्हें आना चाहिए था। व्यर्थ ही इतने रुपये बर्बाद हो गए और उन लोगों से मुलाकात भी नहीं हुई। यह भी शायद नियति या भवितव्य है। दरअसल तपेश गांगुली की तकदीर ही फूटी हुई है!!

जिस रास्ते से आदमी अनवरत आते-जाते हैं, उस रास्ते में कंटीली झाड़ियों को सहज ही पैदा होने का मौका नहीं मिलता है। ज़िंदगी की राह में जो आदमी हमेशा चलता रहता है, हमेशा संघर्ष करते रहता है, मुसीबतों का आतंक उस पर आक्रामक रवैया नहीं अपनाता। यह सब बात संदीप ने कभी पुस्तक पढ़कर ही जानी थी। और सिर्फ यही क्यों? उसने यह भी जाना था कि जो आदमी सिर्फ पाना ही चाहता है उसका दुख कभी दूर नहीं होता। लेकिन जो आदमी सिर्फ देना ही चाहता है और बदले में कुछ पाना नहीं चाहता, उसके जीवन की रोकड़-बही

मे सबकुछ जमा ही रहता है, खर्च का खाना खाली ही पड़ा रहता है।

संदीप ने क्या केवल पाना ही चाहा है ? या देना है ? अगर दिया ही है तो क्या दिया है ? यह प्रश्न बार-बार उसे झकझोरता।'

वह जानता था कि प्रवृत्ति के प्रबल आवेग से सबकुछ को छोड़ने की कोशिश नही करनी चाहिए। सबसे बड़ा बनूगा, सबसे ज्यादा सफल होऊंगा, इसी को जीवन का मूल मंत्र नही बनाना चाहिए। इस रास्ते में बहुतों को बहुत कुछ मिला है, बहुतो ने बहुत कुछ का संचय किया है, बहुतेरे लोग काफी प्रतापशाली हो चुके हैं—यह वह जानता था। वह लेकिन यह भी जानता था कि तुम चाह मत करो, *तुम संचय मत करो, तुम प्रतापशाली मत बनो। तुम विनम्र होना सीखो।* तुम्हारा मस्तक विनत होकर उसी स्थान का स्पर्श करेगा, जहां छोटे-बड़े सभी मिलकर एकाकार हो गए हैं। तभी तुम्हे शांति और मुक्ति मिलेगी।

दिन-भर बैंक की चारदीवारी के अंदर संदीप इसी वजह से सब कुछ से विलग होकर रहने की चेष्टा करता। चेष्टा करता कि जुड़कर रहने पर भी मुक्त होकर रहेगा। गणित की जटिलता के जाल मे फंस जाने पर भी वह निःसंगता का अनुभव करता। उसके बाद सभी लोग जब कैंटीन जाकर आनंद-उच्छ्वास और बातचीत में *तल्लीन रहते, उस समय भी वह स्वयं को भूल नही पाता। अगल-बगल के तमाम* लोग कहते, "अरे, तुम्हे किस चीज की चिंता ? तुमने शादी-वादी तो की नही। न आगे नाथ न पीछे पगहा, बिलकुल बेफिक्र आदमी। तुम्हारा पैसा कौन भोगेगा ?"

संदीप हंस देता। उन लोगो की बात का कोई जवाब नही देता। सबकी अनदेखी कर जाता। किसी से तर्क-वितर्क नही करता। न किसी से सद्भाव और न किसी से अलगाव। और उसके बाद जब छुट्टी हो जाती तो हावडा स्टेशन की तरफ रवाना हो जाता। रास्ते मे किसी दुकानदार से कहता, "एक किलो चीनी *दीजिए तो—"*

किसी दिन चीनी, किसी दिन हल्दी, और किसी दिन मिर्च और किसी दिन साबुन खरीदता। एकबारगी यथार्थ की दुनिया मे लौट आता। उन चीजों से संदीप के आदर्श का कोई सरोकार नही रहता। घर से मा जो लाने कहती, वही खरीद कर ले जाता संदीप।

और सिर्फ यही नही। और भी कितनी ही ऐसी चीजें खरीदनी पडती जिसका कोई ठिकाना नही। हावड़ा स्टेशन घुसने के ठीक पहले फुटपाथ पर हर रोज *आवश्यक वस्तुओ का बाजार लगता। आलू, परवल, कुम्हड़ा से लेकर चार जनों* की गृहस्थी के सारे सरो-समान खरीद लेता। उसके बाद उन चीज़ो का झोला हाथ मे लिए ट्रेन पर सवार होता और निश्चित समय पर बेडापोता के स्टेशन पहुंचकर उतर जाता। संदीप को मालूम था कि तीन जने उसके इंतज़ार मे बैठे होगे। सुबह जो घर से निकलता तो फिर घर-संसार का चक्र उसे केंद्र बनाकर घूमता रहता। उनकी सुख-सुविधा, उनके भले-बुरे की देख-रेख करना ही उसका काम था।

याद है, जिस दिन पहले-पहल मौसीजी और विशाखा को लेकर गाव के घर पर गया था, मा कितनी खुश हुई थी ! खुशी के साथ-साथ विस्मय भी हुआ था। गरीब के घर में उन दोनो को कहा रखेगी, कैसे उन लोगो की खातिरदारी

करेगी—सोच नहीं सकी थी। मौसीजी खुशी की शिद्दत के मारे रो दी थीं। ज़िंदगी में काफी दुख और तकलीफ उठाकर उस समय योगमाया देवी प्रस्तर जैसी हो गई थी। मां ने कहा था, "यहां रहने में तुम लोगों को बहुत तकलीफ होगी दीदी—"

"तकलीफ !"

मौसीजी ने रोना चाहा था पर रो नहीं सकी थी। बोली, "आपके लड़के ने हमें किन आंखों से देखा है, मैं यह नहीं जानती। संदीप न होता तो मैं मौत का शिकार हो जाती—"

मां ने कहा, "तुम लोग आशीर्वाद दो दीदी कि वह बचा रहे और तरक्की करता रहे। इसके सिवा मैं कुछ नहीं चाहती।"

मौसीजी ने कहा था, "मेरा सगा देवर था लेकिन वह एक बार मिलने तक नहीं आया। हम लोग ज़िंदा हैं या मर गए, इसका भी पता लगाने एक बार भी नहीं आया। आखिर में डाक्टर को दिखाने और दवा लाने का सारा काम आपके संदीप ने किया। मैं संदीप की कौन हूं जो वह देखभाल करता? भगवान इसका खयाल रखेंगे—"

मां को शर्मिन्दगी का अहसास हो रहा था। इस टीन की छत और माटी की दीवार के मकान में उन्हें कहां कैसे रखेगी, कहां सोने देगी, क्या खाना देगी? वे लोग कलकत्ता के निवासी हैं, इस देहात में कैसे रहेंगी?

इसके अलावा सवाल यह है कि इस जवान लड़की को लेकर घर के अंदर कैसे रहेगी? गांव के लोग क्या कहेंगे? मां उन दोनों को काशी बाबू के घर पर भी ले गई थी। मां ने कहा था, "यह देखो भाभी, तुम लोगों के घर पर किन लोगों को ले आई हूं—उन्हीं लोगों को जिनके बारे में तुम्हें बताया था।"

भाभी अवाक् हो गई। कहा था, "अरे, ये वही लोग हैं?"

मां ने मौसीजी की ओर ताककर कहा, "इन्हीं लोगों की दया से इतने दिनों तक मुन्ना को खिला-पिलाकर पालती रही हूं। मेरे पास जो कुछ देख रही हो, इन्हीं लोगों की बदौलत है। ये लोग अगर देख-रेख न करते तो हम मां-बेटा मर गए होते—"

भाभी बोली, "यह आपकी लड़की है? अभी तक शादी नहीं हुई है—"

मौसीजी की तरफ से मां ने जवाब दिया, "शादी की बातचीत चल रही है, अब शादी होगी। इसके पिताजी नहीं हैं, इसीलिए देर हो रही है—"

यह कहने के बाद मां वहां रुकी नहीं। बोली, "अभी चलती हूं भाभी। मुन्ना अभी इसी ट्रेन से घर आएगा।"

भाभी बोली, "अब अपने लड़के की शादी कर दो बहन। अब तो उसे नौकरी मिल गई है। ज़िंदगी-भर तो तुम खटती ही आई हो, अब ज़रा बहू से सेवा-जतन भी कराओ।"

मां बोली, "मैं क्या ऐसी तकदीर लेकर आई हूं बहन। सब ईश्वर की मर्जी पर निर्भर करता है।"

बात झूठी नहीं है। जिस दिन उसके पति चल बसे तब संदीप कितना छोटा था! उस समय क्या सोचा था कि उसके बेटे को ऐसी अच्छी नौकरी मिल जाएगी,

और-और लोगों की तरह उसकी हैसियत होगी, इस तरह अपने पैरों पर खड़ा हो सकेगा !

लेकिन मा के पास यह सब सोचने का वक्त नहीं रहता है। इतने सालों तक जो मां बाबू लोगों के घर पर काम करती रही थी, उसे संदीप ने दूसरे के घर में खाना पकाने का काम करने नहीं दिया। इतने दिनों तक तकलीफ उठा चुकी है, अब मां अपने घर में ही रहा करे। तभी से संदीप खाना पकाने, बर्तन माजने और झाड़ू देने के लिए एक आदमी की तलाश में था। जितना भी वेतन मागेगा, संदीप देगा। शैल राजी हुई होती तो संदीप उसे ही बेड़ापोता ले आया होता। लेकिन कलकत्ता छोड़ वह बेड़ापोता जैसे घोर देहात में अपने को राजी नहीं हुई थी। इसके अलावा वह उतनी तनख्वाह भी नहीं दे पाता। उससे बहुत कम पैसे में यहां काम करने के लिए आदमी मिल जाएगा। उस दिन भी हावड़ा पुल के रास्ते पर से झोली-भर सामान खरीदकर संदीप ट्रेन से उतरा। उतरकर सीधे विनोद चाचा की मिठाई की दुकान पर पहुंचा। विनोद चाचा तब ग्राहकों के चलते व्यस्त थे। संदीप ग्राहकों के पीछे से चिल्लाकर बोला, "विनोद चाचा, आ गई है।"

विनोद चाचा ने उस पर नजर जाते ही कहा, "आओ कमला की मां—"

विनोद चाचा ने कमला की मा के बारे में ही जिक्र किया था। माहवारी तनख्वाह के तौर पर चालीस रुपया लेगी, इसके अलावा खाना और कपड़ा। लेकिन संदीप के मकान में रहने का कमरा न होने के कारण अपनी झोपड़ी में रहेगी। उसके बाद संदीप अगर और कोई कमरा बनवा लेता है तो संदीप के घर में ही रहेगी।

कमला की मा बहुत देर से संदीप का इंतजार कर रही थी। संदीप ने उससे कहा, "आओ-आओ कमला की मा। आज ट्रेन लेट थी इसीलिए मुझे आने में देर हो गई। आओ—"

कमला की मा के हाथ में सरो-सामान से भरे झोले को थमाकर संदीप तेज क़दमों से घर की ओर जाने लगा! उसके पीछे हाथ में झोला लिए कमला की मां है।

मा तीसरे पहर से ही हर रोज कान खड़े किए रहती है। ट्रेन आने की धम-धम आवाज सुनते ही कहती है, "अब मुन्ना आ चला।"

और तत्क्षण विशाखा घर के सामने आ सामने की सड़क की ओर ताकती रहती है।

मौसीजी भी आकर खड़ी हो जाती हैं। मा भी उनकी बगल में आकर खड़ी हो जाती है। जितनी दूर तक संभव हो सकता है आंखें दौड़ाकर देखती हैं कि संदीप कहा है, कितने फासले पर है।

मुन्ना के लिए मां इस बीच नाश्ता बनाकर रख देती है। मौसीजी और विशाखा दोनों संदीप के लिए खाना बनाने में हाथ बंटाती हैं। सवेरे आठ बजे खाना खाकर निकला है वह और अब आ चला। उन लोगों के लिए वह क्या कोई कम परिश्रम कर रहा है? लिहाजा सब कोई मिलकर उसके परिश्रम को ज़रा हल्का बनाने की कोशिश करती हैं।

और उसके बाद दिन-भर वे लोग क्षण-अनुक्षण गिनती रहती हैं। अब दो

बजे है। अभी शायद संदीप के टिफिन का वक्त होगा। अब पांच बज गए, अब शायद संदीप को छुट्टी मिल गई होगी। अब शायद ऑफिस से निकल सड़क माप रहा होगा। अब शायद उसकी ट्रेन खुल गई होगी। ऐसा हर रोज होता है।

उस दिन भी सभी घर से निकल घर के रास्ते के सामने आकर खड़ी हो गई थीं। ट्रेन की आवाज़ जब कि सुनाई पड़ रही है तो संदीप भी जरूर ही आ चुका होगा। अब ज्यादा देर नहीं है। इतना कम फासला तय करने में कितनी देर ही लगेगी? ज्यादा-से-ज्यादा आठ-दस मिनट। उसके बाद वही हुआ जो सोचा था। संदीप आ रहा है। उसके पीछे हाथ में झोली लटकाए एक औरत है। संदीप कई दिनों से इसके बारे में कह रहा था। शायद वही नई महरी है।

उसके बाद संदीप घर आ गया। आते ही बोला, "मां, कमला की मां को ले आया हूं, अब से यही हम लोगों का खाना पकाने वगैरह का काम करेगी। इससे बातचीत कर लो—

मां ने कमला की मां से पूछा, "हम लोग चार जने हैं, खाना पकाने वगैरह का काम कर सकोगी तो?"

कमला की मां बोली, "क्यों नहीं कर सकूंगी माताजी? ज़िन्दगी-भर तो खाना पकाने वगैरह का काम अपने हाथों से करती आई हूं।"

मां बोली, "तो अन्दर चली आओ बिटिया, तुम्हें सारा काम-काज समझा देती हूं।"

ज़रा एकांत होने पर मौसीजी के पास आया। संदीप तब तक हाथ-मुंह धोकर तैयार हो चुका था। संदीप ने कहा, "मौसीजी, आज भी पांच-छह चिट्ठियां आई हैं, यह देखिए—"

यह कहकर कमीज के पॉकेट से चिट्ठियां निकालीं।

"यह देखिए, इन्हें आज ही अखबार के दफ्तर से मेरे बैंक में भेज दिया है। इसमें एक अच्छे-से पात्र की खबर है। पात्र के और दो भाई हैं, उपाधि है मुखर्जी। दोनों बड़े भाइयों की शादी हो चुकी है। कलकत्ता में अपना पैतृक मकान है। कोई बहन वगैरह नहीं है। पिता जीवित हैं। मां नहीं है। यही छोटा है। अभी-अभी इंडिया से एम० एस-सी० की डिग्री हासिल कर स्कॉलरशिप लेकर अमरीका गया है। वहीं एक नौकरी कर रहा है। तकरीबन दस हज़ार रुपया मासिक वेतन मिल रहा है। उसके पिताजी गरीब घर की लिखी-पढ़ी खूबसूरत लड़की चाहते हैं। स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। दहेज की कोई मांग नहीं है।"

यह सुनते ही मौसीजी बोलीं, "नहीं बेटा, उन विलायत से लौटे पात्र की बात मत कहो। विलायत से लौटे हुए पात्रों के प्रति मुझे घृणा हो गई है। हम गरीब हैं, गरीबों के यहां रिश्ता कायम करना हम लोगों के लिए बेहतर है। तुम दूसरे पात्र की तलाश करो--गृहस्थ के घर में पले अपने बराबर के हैसियतवाले पात्र से ही काम चल जाएगा। और कोई मांग वगैरह न रहे तो सबसे अच्छा। मेरे पास रुपये-पैसे नहीं हैं कि लड़की को कुछ दे सकूं। लेकिन चरित्रवान पात्र होना चाहिए। वही असली चीज़ है बेटा। मैं और कुछ नहीं चाहती—"

संदीप ने कहा, "अगर कोई मांग रहेगी तो उसका इंतज़ाम मैं कर दूंगा। इसके संबंध में आपको कुछ सोचना नहीं है।"

"तुम कौन-सा इंतज़ाम करोगे ?"

संदीप बोला, "यह देखिए न, एक और चिट्ठी है। पात्र ग्रेजुएट है। उपाधि चक्रवर्ती। पोर्ट कमिश्नर ऑफिस में नौकरी करता है, वेतन लगभग सात सौ रुपया। उससे विशाखा की शादी कीजिएगा ?"

मौसीजी यह सुनकर बेहद खुश होकर बोली, "क्यों नहीं करूंगी बेटा ? तुम इस पात्र को जाकर देख आओ। इसी तरह का पात्र अच्छा रहेगा। बहुत बड़े आदमी की तलाश मत करना बेटा। बड़े लोग अच्छे नहीं होते। बड़े लोगों के प्रति मुझे नफरत हो गई है। तुम इसी पात्र को देखो—"

संदीप बोला, "और भी बहुत सारी चिट्ठियां हैं। पहले सबको देख लीजिए, उसके बाद आप जो कहिएगा, वही करूंगा। पहले दूसरी चिट्ठियां भी देख लो···"

यह कहकर संदीप एक-एक कर बाकी चिट्ठियों को पढ़ने जा रहा था। लेकिन अचानक विशाखा ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया और संदीप के हाथ से चिट्ठियां लेकर उन्हें फाड़ने लगी।

"यह क्या किया, क्या किया···यह क्या···"

मौसीजी भी अपनी लड़की की हरकत देखकर चिल्ला उठी, "यह क्या किया मुहजली, यह क्या किया ? तू पागल हो गई है क्या मुहजली···"

विशाखा उस समय भी चिट्ठियों को चिन्दी-चिन्दी कर रही थी। कहने लगी, "फाड़कर ठीक ही किया है, और फाड़ूंगी···यह देख लो···"

मौसीजी ने विशाखा का झोटा कसकर खींच लिया। बोली, "मुहजली, तेवर चढ़ा रही है ? क्यों मरने के लिए तू मेरी कोख में आई···तेरी मौत नहीं होती, तू···"

संदीप इस हालत में क्या करे, यह तय करने के पहले ही एकाएक मां रसोई-घर से आई और झट से मौसीजी का हाथ पकड़ लिया। बोली, "क्या कर रही हो दीदी, उसे इतना क्यों मार रही हो ? ठहरो, ठहरो···"

मौसीजी का गुस्सा तब भी शांत नहीं हुआ था। कहने लगी, "मारूंगी नहीं ? मुंहजली को और कोई जगह नहीं मिली, मेरे घर में मरने क्यों आई ? आज मैं उसकी हत्या कर डालूंगी। तभी छोड़ूंगी। मुझे छोड़िए, छोड़ दीजिए···उसने अपने बाप को खाया है, अब मुझे खाए बगैर नहीं छोड़ेगी—"

मां ने इस बीच विशाखा को मौसीजी से छुड़ाकर अपने सीने में खींच लिया है। विशाखा संदीप की मां की छाती में मुंह छिपाकर फूट-फूटकर रोने लगी। मां उसे सान्त्वना देने के लिए कमरे के बाहर ले गई। कहने लगी, "रोओ मत बेटी, मत रोओ। तुम जब लड़की की मां होओगी तो समझोगी कि मां होना कितना तकलीफदेह होता है। मत रोओ, छिः···"

यह कहकर अपनी साड़ी के पल्लू से विशाखा की आंखें पोंछने लगी।

कभी-कभी संदीप सोचता, यह क्या हुआ ? ऐसा क्यों हुआ ? मनुष्य के भाग्य-विधाता का यह कैसा परिहास है। विधाता पुरुष ने अगर मौसीजी के भले की ही

कामना की थी तो इस तरह उसका सत्यानाश उन्होंने क्यों किया ? उनके मुंह के सामने खाने की वस्तु लाकर क्यों उसे छीन लिया ? इससे उनके किस महान उद्देश्य की पूर्ति हुई ? और इसके लिए भाग्यविधाता ज़िम्मेदार नहीं हैं तो फिर कौन ज़िम्मेदार है ? दादी मां ? सौम्य बाबू ?

सोचते-सोचते संदीप किसी निर्णय पर नहीं पहुंच पाता है। कलकत्ता जाने के रास्ते में गांव, आदमी, गाय-भैंस, खेत-खलिहान की ओर देखते हुए संदीप एकाग्रता के साथ केवल यही बात सोचता रहता है। आसमान, दरख्त और आदमी को भी देखकर उसे पूछने की इच्छा होती है : तुम लोगों में से कोई मेरी बात का जवाब दो कि क्यों ऐसा हुआ ? क्यों मौसीजी और विशाखा का इस तरह सर्वनाश हुआ ? जवाब दो कि कौन उनके सर्वनाश के लिए ज़िम्मेदार है ?

खगेन ने उस दिन पूछा था, "वह लड़की कौन है संदीप दा ?"

संदीप समझ नहीं सका था। पूछा था, "कौन-सी लड़की ?"

"वही जो सवेरे तुम्हें खोजने के लिए हम लोगों के बैंक में आई थी ? वह कौन है ?"

"मेरी अपनी कोई नहीं है ?"

"अपनी कोई नहीं है का मतलब ? अपनी कोई नहीं है तो बैंक क्यों आई ? बातचीत करने के बाद तुमने एकाउंट से रुपया क्यों निकाला ? उसे रुपया दिया क्या ?"

"हां।"

लेकिन इतने छोटे से उत्तर से कोई खुश नहीं हुआ। क्योंकि किसी लड़की पर नजर पड़ते ही हरेक की जीभ से राल टपकने लगती है। खासकर यदि वह कमसिन और विशाखा जैसी खूबसूरत हो।

खगेन भी उस छोटे से उत्तर से खुश नहीं हुआ था। कहा था, "वह तुम्हारी कौन होती है ?"

संदीप ने कहा, "मेरी कोई नहीं है।"

"अगर कोई नहीं है तो हमारे बैंक में क्यों आई और तुमने उसे रुपया क्यों दिया ?"

संदीप ने कहा, "वे लोग बहुत गरीब हैं। भारी मुसीबत में पड़ जाने के कारण ही रुपया मांगने आई थी।"

खगेन सरकार को लेकिन इस कैफियत पर यकीन नहीं हुआ था। कहा था, "ज़रूर ही कोई न कोई लगती है, वरना इतने लोगों के रहते तुम्हारे ही पास रुपया क्यों मांगने आई ?"

संदीप ने कहा था, "मेरी जान-पहचान की लड़की तो है ही, लेकिन मुझसे कोई रिश्तेदारी नहीं है।"

खगेन क्या इतनी आसानी से भुलावे में आनेवाला है। बोला, "ज़रूर ही कोई न कोई रिश्ता है, कुछ रिश्ता न रहे तो कोई किसी के पास रुपये मांगने आता है ?"

संदीप ने कहा, "आदमी मुसीबत में पड़ जाए तो क्या करे, तुम्हीं बताओ ? मुसीबत में पड़ जाने पर आदमी जिसके-तिसके सामने भी हाथ फैलाता है।"

तो भी खगेन पीछा छोड़नेवाला आदमी नहीं है। बोला, "छिपा क्यों रहे हो संदीप दा, मैं तो किसी से कहने नहीं जा रहा हूं—"

संदीप ने कहा, "कहोगे भी तो मुझे कोई एतराज नहीं है। मैंने ऐसा कोई गलत काम नहीं किया है कि कह देने से मेरी बदनामी होगी—"

खगेन ने कहा, "तुमने उसे कितने रुपये दिए?"

संदीप ने कहा, "पांच सौ।"

खगेन को रुपये की राशि के बारे में सुनकर और भी आश्चर्य हुआ। इतने सारे रुपये संदीप दा ने एक लड़की को दे दिए और कह रहा है कि मुझसे उसका कोई रिश्ता नहीं है! उस दिन और भी बहुत सारे काम पड़ जाने के कारण बातचीत का सिलसिला आगे नहीं बढ़ सका। संदीप को उस दिन खगेन के जिरह से छुटकारा मिल गया था।

लेकिन इतनी चटपटी खबर क्या आसानी से थमने का नाम लेती है?

कुछेक दिन गुजरते ही संदीप के नाम से बहुत सारे अखबार आने लगे। अखबार का प्यून हर रोज आकर संदीप को अखबार देने लगा। कौन संदीप के पास इतने अखबार भेजता है, शुरू में किसी को यह बात समझ में नहीं आई। इतने सारे अखबार लेकर संदीप क्या करेगा, यह भी नहीं समझ सके। स्टेट्समैन से लेकर जितने भी दैनिक कलकत्ता में छपते हैं, वे सभी संदीप के पास पहुंचते हैं। संदीप एक कागज पर हस्ताक्षर कर उन्हें ले लेता है। उसके बाद चिट्ठियां आती हैं। बहुत सारी चिट्ठियां। चिट्ठियों के पुलिन्दे। प्यून सारी चिट्ठियां दे जाता है और संदीप हस्ताक्षर कर उन्हें ले लेता है।

शुरू-शुरू में बैंक के किसी कर्मचारी ने इस पर सिर नहीं खपाया। मगर दो-तीन दिन के बाद ही सबके अन्दर कुतूहल पैदा हो गया।

खगेन सरकार ने पूछा, "यह सब किस चीज़ के बाबत चिट्ठियां आ रही हैं संदीप दा?"

संदीप ने कहा, "मैंने बॉक्स नंबर देकर विज्ञापन दिया था, यह सब उसी के अखबार और चिट्ठियां हैं।"

"तुमने विज्ञापन दिया था, बॉक्स नंबर देकर? क्यों?"

संदीप ने कहा, "एक शादी के बारे में।"

"शादी? किसकी शादी? अपनी शादी के लिए?"

संदीप ने कहा, "नहीं-नहीं, अपने एक आत्मीय की लड़की के बारे में—"

संदीप का कोई सगा-संबंधी नहीं था, यह बात आफिस के सभी जानते थे। सभी जानते थे कि एक विधवा मां के सिवा उसका कोई सगा-संबंधी नहीं है। इसलिए यह बात संदेहजनक है।

तमाम बैंकों में जितने काम होते हैं उससे ज्यादा फालतू काम ही होता है। इस फालतू काम के दौरान यह बात फैल गई कि संदीप के भी एक आत्मीय की विवाह योग्य लड़की है। टिफिन के वक्त इसी सम्बन्ध में बातचीत चलने लगी। आत्मीय की लड़की होना स्वाभाविक नहीं है। लेकिन उस लड़की की शादी के लिए संदीप के द्वारा इतना रुपया खर्च कर अखबारों में विज्ञापन देना क्या अस्वाभाविक नहीं है?

तभी से संदेह की शुरूआत हुई और प्रश्नों के बाण छोड़े जाने लगे। सभी पूछने लगे, "वह लड़की कौन है संदीप दा? कौन है?"

संदीप कहने लगा, "वह लड़की मेरी कोई नहीं है।"

"तो फिर तुम उसके लिए इतनी माथापच्ची क्यों कर रहे हो?"

संदीप ने कहा, "वे बहुत गरीब हैं।"

खगेन सरकार ने कहा, "मुल्क में क्या गरीब आदमियों की कमी है? उन सबों के लिए माथापच्ची न कर केवल एक गरीब लड़की के लिए तुम माथापच्ची क्यों कर रहे हो, सुनूं? बात क्या है?"

संदीप इस बात का क्या उत्तर दे? उसने कहा, "जिसकी शादी के लिए कोशिश कर रहा हूं वह बहुत ही दुखिया है भाई। उसके एक विधवा मां के अलावा और कोई नहीं है। मेरे भी विधवा मां के अलावा कोई नहीं है, लेकिन उससे मेरा बहुत अंतर है। मुझे फिर भी गांव पर एक पैतृक छोटा-मोटा मकान है, उस पर मुझे एक नौकरी भी है, लेकिन इसके पास न तो मकान है और न रुपये-पैसे। वह बिलकुल दूसरे की दया पर निर्भर कर रही है और सिर का भार है।"

"इतने लोगों के रहते तुम उसी पर तरस क्यों खा रहे हो?"

यह सब तर्क कोई समझना नहीं चाहता। वह इतना तरस क्यों खा रहा है, यह कहने से ही कोई समझेगा? सभी तो खुले तौर अपने आपको लेकर व्यस्त और आत्म-केंद्रित हैं। उस छोटी-सी परिधि के बाहर जाकर कोई कुछ करना चाहता है तो सबों को उसमें स्वार्थ की गंध लगती है। ऐसे में सभी संदेह करना शुरू कर देते हैं। सोचते हैं इसके पीछे कोई न कोई दुरभि संधि है। हर चीज़ को सहज रूप में लेने की बात आजकल लोग भूल गए हैं। धुआं देखते ही जिस प्रकार लोग आग के अस्तित्व की कल्पना करते हैं, यह भी बहुत कुछ वैसा ही है। किसी लड़की से किसी मर्द पुरुष की उदारता के सम्बन्ध को बुराई और कलंक का एक पहलू मानकर वे आनंदित होना चाहते हैं, "डूब-डूबकर पानी पी रहे हो संदीप दा। सोचते हो, हम कुछ अंदाज़ नहीं लगा पाते?"

इन सारी स्थितियों में भी संदीप अपने कर्त्तव्य के प्रति उदासीन नहीं होता। वह सिर्फ अपनी जेब से पैसा ही नहीं खर्च करता बल्कि सीधे पत्राचार भी करता। बैंक में छुट्टी होने पर उन निर्धारित मकानों पर भी जाता। सीधे जाकर उन चिट्ठी लिखनेवालों के मुकाम पर पहुंच उनसे मिलता।

अपना परिचय बताते ही सभी स्वागत करते हुए उसे घर में बिठाते। कहां वह बेहला, कहां कालीघाट या कसबा के किसी गृहस्थ का घर। लड़के बैंक के मुलाज़िम होते या पोर्ट कमीशन के दफ्तर के मुलाज़िम। वेतन मोटे तौर पर ठीक ही है।

सभी पूछते हैं, "लड़की देखने में कैसी है?"

संदीप कहता है, "बहुत ही खूबसूरत।"

"स्वास्थ्य?"

"स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा।"

"उम्र?"

"अठारह-उन्नीस के करीब।"

उसके बाद पूछता, "आप पात्री के कौन हैं ?"

संदीप कहता, "मैं पात्री का कोई नहीं हू। लड़की का अपने सगे के नाम पर एक चाचा है। उनका नाम है तपेश गागुली। वे रेल के हेड ऑफिस गार्डन रिच मे काम करते हैं। उनका डेरा खिदिरपुर के तीन नंबर मनसातल्ला लेन में है। वहाँ जाकर भी आप लोग दरियाफ्त कर सकते हैं। इसके अलावा एक विधवा मा है।"

"पात्री की विधवा मा और पात्री अपने चाचा के डेरे पर रहने के बजाय आपके बेड़ापोता के मकान मे आप लोगों के साथ क्यों रहती हैं ?"

इन सवालो का जवाब देते-देते संदीप को ऊब महसूस होने लगती। कोई यह समझना नही चाहता कि सगोत्र के शत्रु से बढ़कर दुनिया मे कोई शत्रु नही होता। गृहस्थ जीवन में इससे बढ़कर भी वेधक सच्चाई को देखने-सुनने और भोगने के पश्चात् भी कोई शादी का रिश्ता तय करने को तैयार नही होता। सोचता, अपने चाचा से ही पात्री और उसकी मां का जब कि अच्छा सबंध नही है तो जरूर ही कही न कही कोई गडबडी या गलती है।

उसके बाद पूछता, "आपसे पात्री का कौन-सा रिश्ता है ?"

सदीप कहता, "कोई रिश्ता नही। उन लोगो की बुरी हालत देखकर ही मैंने उन्हे अपने घर मे रहने दिया है—बस इतना ही। वे लोग बहुत तकलीफ में थे। उनकी तकलीफ देखकर ही मैं और मेरी मा ने उन्हें अपने घर में रहने दिया है—"

"लेन-देन की बात किससे होगी ?"

संदीप कहता, "मुझसे ही होगी। मेरे सिवा उनका कोई नही है।"

उसके बाद जरा चुप रहने के बाद फिर कहता, "इसके अलावा वे लोग कुछ देने की हालत में नही हैं—पात्री के जन्म लेने के कुछ साल बाद ही बाप मर गया। तभी से मा ने उसे पाला-पोसा है। यह शादी हो जाएगी तो मां को शाति मिलेगी।"

"पात्री देखने में कैसी है ?"

संदीप इस मामले में खुलकर बताता, "बेजोड़ ख़ूबसुरत। जो भी देखेगा, टकटकी बध जाएगी। आप लोग दया कर बेडापोता जा सकें तो हम अपने आपको धन्य समझेंगे। पात्री की शिक्षा-दीक्षा, स्वभाव-चरित्र की खोज-खबर लेने पर आप लोगों को पता चल जाएगा।" सब कुछ बताने के बाद संदीप उनके पास बेड़ापोता का पता रखकर चला आता। आने के दौरान कहता, "मैं तो हर रोज कलकत्ता आता हूं। इस बैंक के पते पर चिट्ठी भी भेज सकते हैं या इस नबर पर मुझे टेलीफोन भी कर सकते हैं। रविवार के अलावा हर दिन ऑफिस के काम के दौरान मुझसे मिल सकते हैं।"

यह कहकर सदीप एक कागज पर बैंक का नाम, पता और टेलीफोन नंबर लिखकर चला आता।

इस तरह का सिलसिला हर रोज चलता। बैंक की छुट्टी के बाद विभिन्न ऐसे पात्री की खोज मे निकल जाता जो मिल सकें। बहुत ही खुशामद-चिरौरी करता। कोई-कोई चाय-बिस्कुट देता। कोई-कोई वह सब भी नही देता। कोई निराश नही करता।

लेकिन बहुत इन्तजार करने पर भी कोई भी आदमी पत्र नही लिखता और न

ही टेलीफोन करता। उसका परिश्रम व्यर्थ जाता। और उसके बाद जब बस-ट्राम पकड़ हावड़ा स्टेशन पहुंचता तो आखिरी ट्रेन खुलने-खुलने की हालत में रहती। आखिरी ट्रेन पकड़ने का मानी था रात बारह बजे बेड़ापोता पहुंचना। विनोद चाचा की मिठाई की टट्टरबंद दुकान तब खामोशी में डूबी हुई होती।

संदीप के लिए उस समय घर की सारी औरतें भूखी बैठी रहतीं या उसके आने की उम्मीद में रास्ते पर खड़ी-खड़ी अपलक ताकती रहतीं।

जितनी बार ट्रेन आने की आवाज़ होती, उन्हें उत्कंठा होती। लगता, अब संदीप आ चला। अब संदीप पहुंच जाएगा।

"क्यों रे, तुझे इतनी देर क्यों हो गई?"

संदीप के हाथ से सरो-सामान का झोला लेकर मां उसे तुरन्त भार-मुक्त कर देती है। उसके बाद अंदर जाते ही अपने बेटे को ताड़ का पंखा झलने लगती है। संदीप मां के हाथ से पंखा छीन कर ले लेता है और कहता है, "रहने दो, मुझे कोई तकलीफ नहीं हुई है। तुम जाकर खाना खा लो।"

मौसीजी और विशाखा भी जगी हुई रहती हैं।

कमला की मां संदीप के सामने भात की थाली परोस देती है।

संदीप मुंह-हाथ-पैर धोने के बाद आकर देखता है, सिर्फ उसी को खाने की थाली परोसी गई है। कहता है, "यह क्या, मैं अकेले ही क्यों खाऊंगा? तुम लोग भी खाने बैठो। हम लोग सभी एक साथ ही खाना खाएंगे। काफी रात हो चुकी है। कल तो फिर सभी को सवेरे-सवेरे जगना है। अब तक तुम लोग सभी बिना खाना खाए क्यों हो, खा ले सकती थीं।"

मौसीजी कहती हैं, "ऐसा कहीं होता है बेटा! तुम घर के बाहर रहोगे और हम खाना खा लें? हम लोग बाद में खाना खाएंगे, तुम अभी खा लो।"

उसके बाद सभी एक साथ खाना खाने बैठते हैं। मौसीजी खाना खाते-खाते कहती हैं, "हम लोगों के चलते तुम्हें बहुत तकलीफ उठानी पड़ रही है बेटा। मगर क्या करूं, मेरी तकदीर ही खराब है।" यह कहकर चुपके से आंख के आंसू पोंछ लेती है।

संदीप कहता, "आप इतना सोचती क्यों हैं मौसीजी? और किसी के क्या वयस्क कुमारी लड़की नहीं है? कितनी लड़कियों की मां को अपनी लड़की की शादी के बारे में सोचते-सोचते कोई कूल-किनारा नहीं मिलता, यह तो आप जानती ही नहीं। मैं तो हूं ही। मैं जब तक हूं आपके लिए फिक्र करने की कौन-सी बात है?"

"और कहीं गए थे? और किसी पात्र का पता चला?"

संदीप कहता, "हर रोज़ तो बैंक से निकल इधर-उधर जाया करता हूं। कोशिश करने में मैंने कोई कोताही नहीं की है। सबकी ज़बान से बस एक ही बात निकलती है···"

संदीप कहता, "वही लेन-देन की बात। मैं लड़की के बारे में तफसील से बताता हूं। कहता हूं, लड़की परी-जैसी सुन्दर है। पर उस बात पर कोई कान नहीं देता। सिर्फ यही कहते हैं कि दहेज में क्या-क्या दिया जाएगा।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर सांत्वना भरे स्वर में कहता, "आप फिक्र मत

करें मौसीजी, मैं आसानी से हार नहीं मानूंगा। मैं अन्त तक अपनी मुहिम जारी रखूंगा। मुझे देखना है कि दुनिया में इंसान है या नहीं। इंसान नहीं है, इस बात पर मैं यकीन नहीं करता। मैं इंसान की तलाश करके ही छोड़ूंगा। अब भी मुझे विश्वास है कि सारे आदमी जानवर नही हो गए हैं।"

उस रात एकाएक एक कांड घटित हो गया।

बगल वाले कमरे में मौसीजी और विशाखा नीद मे मशगूल हैं। संदीप भी उस समय गहरी नीद में खोया हुआ था। दिन-भर अथक परिश्रम करने के बाद संदीप अचेत जैसा पड़ा हुआ था। अचानक कोई उसके बदन को झकझोर रहा है, उसे ऐसा ही लगा।

संदीप चिल्ला उठा, "कौन ? कौन ? कौन है ?"

उसे लगा कि उसकी चिल्लाहट सुन कोई चुपचाप उसके कमरे से भागकर चला गया। संदीप ने तुरन्त उठकर लालटेन जलाई। कही कोई नहीं है। फिर वह क्या सपना देख रहा था ? उसने देखा, कमरे से बाहर जाने के दरवाजे पर सिटकनी ज्यों की त्यों बंद है। उसके कमरे में कोई नही घुसा था। फिर उसे ऐसा क्यों लगा ?

सवेरे नीद से जगने के बाद रात की घटना की उसे फिर से याद आ गई। आश्चर्य ! उसने ऐसा सपना क्यों देखा ? सचमुच, कौन उतनी रात में उसे हाथ से ठेलने जाएगा ?

लेकिन असली घटना का बाद में पता चला। अभी वह बात न कहना ही अच्छा रहेगा। बाद में कहने से काम चल जाएगा। अभी दूसरी तरफ की बात कहना ही ठीक रहेगा।

उस दिन विशाखा के लिए पात्र की तलाश में संदीप कालीघाट की तरफ गया था। एक सज्जन ने उसका विज्ञापन पढ़कर उसे मिलने के लिए पत्र लिखा था।

वहां भी बस वही बात। माना, लड़की सुन्दर है, मगर लेन-देन का क्या होगा ?

इस नुक्ते पर पहुंचकर तमाम लोगों की बातों का सिलसिला थम जाता है। "पात्री-पक्ष अपनी लडकी को भले ही दस तोला सोना न दे, उससे कोई हानि नही। लेकिन घर-खर्च ? घर-खर्च पात्र-पक्ष तो अपनी जेब से नही करेगा। कम से कम पांचेक सौ व्यक्तियों को शादी के मौके पर निमंत्रित करना ही होगा। आज के जमाने मे वह खर्च ही क्या कोई कम है ? लगभग बारह हज़ार रुपये खर्च हो ही जाएंगे। पात्र-पक्ष वह खर्च अपनी जेब से क्यो करने जाएगा ? लड़के को पढ़ाने-लिखाने का खर्च अब तक मैं अपने घर से करता रहा हूं, अब उसकी शादी का खर्च क्या मैं अकेले ढोऊं ? आप ही बताइए। अभी आप बैंक मे नौकरी कर रहे हैं, आपने शादी के वक्त कितने रुपये लिए हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैंने अब भी शादी नही की है—"

"शादी नहीं की है ? क्यों ? शादी की उम्र तो आपकी हो चुकी है—"

अपनी शादी के संदर्भ में बातचीत करना संदीप को अच्छा नही लगता। फिर

भी वह आखिरी हथियार के तौर पर बोला, "अच्छा तो फिर मैं चलता हूं। मौसीजी से जाकर कहूंगा। देखूं, वे क्या कहती हैं—"

उस दिन भी संदीप बस पर चढ़कर हावड़ा स्टेशन की तरफ वापस आ रहा था। एकाएक मल्लिक चाचा से मुलाकात हो गई। चलती हुई बस में वे तकलीफ के साथ खड़े थे।

संदीप ने तुरन्त खड़े होकर कहा, "मल्लिक चाचाजी !"

संदीप पर आंखें जाते ही मल्लिक चाचा भी अवाक् हो गए।

"अरे, संदीप, तुम कहां से आ रहे हो ?"

संदीप ने अपने बैठने की जगह की ओर इशारा करके कहा, "आप खड़े-खड़े तकलीफ क्यों उठा रहे हैं ? यहां बैठ जाइए।"

"तुम खड़े रहोगे ?"

संदीप ने कहा, "मुझे खड़े रहने की आदत है। इतनी देर तक मैं बैठा-बैठा ही आ रहा हूं। आप बैठ जाइए।"

मल्लिक चाचा को अपनी जगह पर बिठाकर संदीप ने कहा, "बहुत दिनों से आपसे मिल नहीं सका। आप लोग कैसे हैं ? मुझे कोई खबर नहीं मिल रही है—"

मल्लिक चाचा ने पूछा, "तुम कैसे हो ? उसी बैंक में नौकरी कर रहे हो न ?"

संदीप ने कहा, "इसके अलावा और क्या करूंगा ? अब बेड़ापोता से ही डेली पैसेंजरी करता हूं। खूब तड़के घर से निकलता हूं और अभी इस रात के वक्त हावड़ा स्टेशन में ट्रेन पकड़कर बेड़ापोता लौट जाता हूं—लौटते-लौटते रात के ग्यारह बज जाते हैं। किसी-किसी दिन रात के बारह भी बज जाते हैं।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "तुम बहुत दुबले हो गए हो। ऑफिस से निकलने में इतनी देर क्यों हो जाती है ? तुम्हारा बैंक तो पांच बजे ही बंद हो जाता है।"

संदीप ने कहा, "बैंक में पांच बजे छुट्टी हो जाती है लेकिन उसके बाद ढेर सारा काम रहता है। उन कामों को निबटाने में रात हो जाती है।"

"तुम्हें इतना कौन-सा काम रहता है ?"

संदीप ने कहा, "मौसीजी और विशाखा को मैं अपने बेड़ापोता के घर ले गया हूं, यह बात आपको मालूम नहीं है ?"

"अच्छा, यह बात ? लेकिन क्यों ? उसके देवर तपेश गांगुली का घर तो मनसातल्ला लेन में था, वहां जा सकती थीं—"

संदीप ने कहा, "आप तो तपेश गांगुली को पहचानते हैं। आप सब कुछ जान-सुनकर भी यह बात कह रहे हैं ?"

मल्लिक जी ने कहा, "फिर तो तुम्हें बहुत तकलीफ होती होगी।"

संदीप ने कहा, "फिर कर ही क्या सकता हूं ! तकलीफ की बात सोचकर उन्हें उस तरह मुसीबत के मुंह में धकेलकर आ नहीं सकता था—"

"और विशाखा ? उसकी शादी का क्या हुआ ? शादी हो गई है ?"

संदीप ने कहा, "शादी कैसे होगी ? उसकी शादी के लिए ही तो चारों तरफ मारा-मारा फिरता हूं। हर कोई रुपये की मांग करता है। रुपये के साथ-साथ दस-

बारह तोले सोने की भी मांग करता है। मौसीजी बेचारी विधवा औरत हैं, कहां से रुपये देंगी ?"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद फिर बोला, "और आप मेरी हालत से भी वाकिफ है। मैं ही उतने रुपये का जुगाड़ कहां से करूं ? मुझे कोई काट भी डाले तो उतने रुपये नहीं निकलेंगे।"

मल्लिक चाचा क्या कहें, समझ में नहीं आया। बस उस समय तीर की रफ्तार से भाग रही थी। उसके बाद कहने लगे, "मैं तुम्हारे भले के लिए ही तुम्हें कलकत्ता ले आया था, लेकिन सब कुछ जैसे गड़बड़ हो गया। किस कांड के बदले कौन-सा कांड हो गया और बीच में तुम्हारी ही किस्मत पर इसका दबाव पड़ा। मैं क्या करूं, कहो ? मैंने तो तुम्हारा भला ही चाहा था, दादी मां भी सबका भला चाहती थीं, लेकिन ऐसा क्यों हुआ, कौन जाने !"

याद है, उस दिन मल्लिक चाचा अपने गंतव्यस्थल पर पहुंचकर उतर गए थे और उनके साथ सदीप भी उतर गया था।

मल्लिक चाचा ने कहा था, "तुम क्यों उतर गए ?"

संदीप ने कहा था, "न होगा तो मैं लास्ट ट्रेन से ही जाऊंगा। बहुत दिनों के बाद आपसे मुलाकात हुई है। उस मकान का क्या हालचाल है ? अब दादी मा कैसी हैं ?"

"लगता है, दादी मां अब इस झटके से उबर गई हैं, ग्रह कट गया है।"

"और उन लोगों की फैक्टरी की क्या हालत है ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "बेहतर यही है कि इन सब बातों के बारे में मत पूछो।"

सदीप ने उस दिन मल्लिक चाचा के मुंह से जो कुछ सुना, वह बड़ा ही खौफनाक था। उतने दिनों की फैक्टरी, उतने दिनों का कारोबार इस तरह बर्बाद हो जा सकता है, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। मुक्तिपद जितना ही संभालने की कोशिश करते हैं विपत्ति उतनी ही चारों तरफ से घिर आती है। सिर्फ फैक्टरी की ही बात नहीं, घर-गृहस्थी की ओर से सहयोग न मिलने के कारण वे बहुत कष्ट में हैं।

मुक्तिपद के लिए वे दिन बड़े ही मनहूस साबित रहे थे। आमदनी नहीं है लेकिन इनकम टैक्स का झमेला है। बड़ा ही अजीब देश है यह भारत ! डलहौजी स्क्वायर के ऑफिस से नागराजन ने टेलीफोन किया था, "सर, इनकम टैक्स ऑफिस से एक नोटिस आया है—"

मुक्तिपद आश्चर्यचकित हो गए। कहा, "नोटिस ? किस चीज का नोटिस ?"

"पेनल्टी का नोटिस।"

मुक्तिपद ने अचकचाकर कहा, "क्यों ? पेनेल्टी क्यों ? टैक्स पेमेन्ट नहीं किया गया है ?"

नागराजन ने कहा, "इनकम टैक्स ऑफिसर ने तो यही लिखा है।"

"क्या लिखा है ?"

नागराजन ने कहा, "हम लोगों के टैक्स का ठीक से पेमेन्ट नहीं किया गया है।"

यह खबर सुनकर मुक्तिपद चौंक उठे। ऐसा तो नहीं हुआ करता है। सैक्सवी मुखर्जी फर्म के इतिहास में तो इस तरह की घटना घटित नहीं हुई है।

बोले, "ऐसा क्यों हुआ ?"

नागराजन चीफ एकाउंटेन्ट है। उसी की हिफाजत में सारा हिसाब-किताब रहता है। जहां करोड़ों रुपये का लेन-देन होता है, उसका सर्वेसर्वा मालिक नागराजन ही है। टैक्स पेमेंट अगर ठीक से नहीं हुआ होगा तो उसका ज़िम्मेदार नागराजन ही है।

नागराजन ने कहा, "मैं अभी तुरंत देख रहा हूं कि ऐसा क्यों हुआ ?"

मुक्तिपद बोले, "हां, अभी तुरंत देखो और अगर ज़रूरत पड़े तो विजयेश बाबू को एक बार टेलीफोन कर सूचित कर दो। हम लोगों के टैक्स-कन्सलटेंट विजयेश बाबू को—"

नागराजन ने कहा, "ठीक है सर।"

मुक्तिपद ने टेलीफोन का रिसीवर रख दिया। पहले की तरह उन्हें शारीरिक व्यस्तता नहीं है लेकिन मानसिक व्यस्तता ? वही अधिक कष्टदायक है। इसके अलावा उत्पादन नहीं है लेकिन खर्च तो है ही। किसी भी तरह खर्च में कटौती करना संभव नहीं हो रहा है। वर्करों को अलबत्ता वेतन नहीं देना पड़ता है लेकिन ऑफिस के अफसरों को तो वेतन देना ही पड़ता है। सामने के अखबार को फिर से अपनी ओर खींच लिया। प्रथम पृष्ठ पर ही चिन्ताजनक खबर है। सवेरे एक बार अखबार पढ़ चुके हैं। तो भी उस पर एक बार और नज़र दौड़ाने लगे। पश्चिम बंगाल में इन लोगों की हरकत से अब कोई भी फैक्टरी नहीं चलाई जा सकती। हर जगह हड़ताल, क्लोजर, तालाबंदी। हर जगह श्रमिक-संकट। इसी तरह की हालत रही तो वे किस तरह फैक्टरी को चालू रखेंगे ? और अर्जुन सरकार की बात में यदि सच्चाई है तो और भी भयंकर बात है। बंगाल बंद और अब एक नया हथियार मिला है 'पदयात्रा'। यह भी एक तरह से अति प्रसिद्धि पाने की कोशिश है, यह भी तो एक तरह की पब्लिसिटी की चालबाजी है। इन कैरियरिस्टों के चलते पूरा देश क्या रसातल में पहुंच जाएगा ?

नीचे से दरबान आया और उसने सूचना दी कि एक व्यक्ति उनसे मिलना चाहता है।

"कौन ? नाम क्या है ?"

दरबान को मालूम नहीं है।

"कोई कार्ड दिया है ?"

"नहीं हुजूर।"

मुक्तिपद ने कहा, "नाम पूछकर आओ।"

दरबान जा रहा था लेकिन उन्होंने उससे दुबारा कहा, "और किसलिए मिलना चाहता है यह भी पूछ लेना। जाओ—"

मुक्तिपद बहुत सोचकर भी यह तय नहीं कर सके कि इस समय उनसे कौन मिलना चाहता है। उसका उद्देश्य क्या हो सकता है ? इस तरह पहले से सूचना दिए बगैर उनके पास कोई भी नहीं आता।

दरबान के पीछे-पीछे एक नौजवान आया। एकबारगी अनपहचाना जैसा

चेहरा। नौजवान ने पैरों के पास झुककर प्रणाम किया। देखकर लगा, नौजवान की उम्र ज्यादा से ज्यादा बीस या बाईस साल होगी।

मुक्तिपद ने पूछा, "तुम कौन हो ?"

नौजवान के उतरे चेहरे और प्रणाम करने की भंगिमा देखकर उन्होंने सोचा था कि वह उनके पास नौकरी की तलाश में आया है। आमतौर से यही होना स्वाभाविक है।

नौजवान बैठा नहीं। खड़े-खड़े ही कहा, "मैं सैक्सबी कंपनी के इंजीनियर वेणु गोपाल का लड़का हूं। मेरा नाम है रंगनाथ—"

"वेणु गोपाल का लड़का ? क्या चाहिए तुम्हें ? नौकरी ?"

वेणु गोपाल का नाम सुनते ही मुक्तिपद का दिमाग गुस्से से गरम हो गया था।

नौजवान बोला, "नहीं सर, नौकरी नहीं—"

"फिर ? फिर क्या चाहिए ?"

रंगनाथ बोला, "मैं अपने पिताजी का एक पत्र आपको देने आया हूं।"

"वेणु गोपाल का पत्र ? वह स्काउन्ड्रेल अब क्या चाहता है ? मेरा सत्यानाश करने के बाद भी उसकी उम्मीद पूरी नहीं हुई है ? अब वह क्या चाहता है ?"

रंगनाथ अपने बाप के खिलाफ गाली-गलौज सुनकर घबरा गया। उसके बाद क्या कहे, समझ में नहीं आया।

उसके बाद अपनी पैंट के पॉकेट से एक मुड़ा हुआ पत्र निकाल सामने की तरफ बढ़ा दिया।

मुक्तिपद ने उस पत्र को अपने हाथ में नहीं लिया। बोले, "पत्र पढ़ने का वक्त नहीं है मेरे पास। वेणु गोपाल ने क्या लिखा है, यही बताओ।"

रंगनाथ इस बात से जरा सकते में आ गया। उसके बाद बोला, "उस पत्र में पिताजी ने आपको लिखा है कि सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की एक डेढ़ लाख रुपये की कीमती मशीन जलाकर मैंने बहुत हानि पहुंचाई है—"

मुक्तिपद बोले, "अब यह बात स्वीकारने से मुझे क्या फायदा होगा ? उस समय याद नहीं था ? तुम्हारे पिता वेणु गोपाल के चलते ही मेरी फैक्टरी में तालाबंदी हुई—"

रंगनाथ ने कहा, "आप पत्र पढ़कर यह समझ जाइएगा कि मेरे पिताजी ने स्वीकार किया है अपनी पार्टी से एक लाख रुपये की घूस लेकर उन्होंने यह काम किया था।"

मुक्तिपद बोले, "यह बात तो सबको मालूम है। और क्योंकि मालूम है इसीलिए तुम लोगों के घर की खानातलाशी कराई गई थी। लेकिन खानातलाशी करने पर भी वे रुपये नहीं मिले थे—"

रंगनाथ बोला, "इसलिए नहीं मिले कि आपका ड्राइवर खानातलाशी के पहले ही रात के वक्त छिपकर मेरे पिताजी के पास खबर पहुंचा आया था—"

मुक्तिपद को घोर आश्चर्य हुआ। बोले, "मेरा ड्राइवर ? विश्वनाथ ?"

रंगनाथ ने कहा, "जी हां।"

"तुम्हें इस बात का पता कैसे चला ?"

रंगनाथ ने कहा, "पिताजी के इस पत्र को पढ़ने पर ही मुझे इसका पता चला। और इसके लिए मेरे पिताजी को भी काफी दुख पहुंचा है। क्योंकि उन्होंने लिखा है, आज जो सैक्सबी मुखर्जी के हज़ारों आदमी बेरोज़गार हैं और भूखों मर रहे हैं, इसके लिए वे ही जिम्मेदार हैं।"

मुक्तिपद बोले, "सो तो है ही। तुम लोगों के घर की खानातलाशी लेने के बाद ही तमाम लोग हड़ताल करने पर उतारू हो गए---इसके लिए तो तुम्हारा पिता ही ज़िम्मेदार है।"

रंगनाथ बोला, "यह बात पिताजी ने खुद ही लिखी है—"

मुक्तिपद चिल्ला उठे, "यह बात लिखकर सूचित करने से मुझे कौन-सा फायदा होगा? इस बात की सूचना देने वह खुद नहीं आ सका?"

रंगनाथ बोला, "वे खुद कैसे आते? उनकी तो मौत हो चुकी है।"

"मौत हो चुकी है!!!"

इतनी देर बाद रंगनाथ की आंखें फटकर जैसे ख़ून के चकत्ते निकल आए। बोला, "पिताजी ने आत्महत्या कर ली है।"

मुक्तिपद को तब भी जैसे इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा था। बोले, "तुम कह रहे हो कि वेणु गोपाल ने आत्महत्या कर ली है? कब? किस वक्त?"

"तीन दिन पहले।"

"यह क्या? क्यों? वेणु गोपाल ने अकस्मात् आत्महत्या क्यों कर ली?"

रंगनाथ बोला, "कुछ महीने पहले मेरी बहन लापता हो गई थी। स्ट्राइक के कारण लगभग हर रोज़ हम लोग निराहार रह रहे थे। उस समय मेरी बहन हर रोज़ तीसरे पहर से निकलकर बाहर चली जाती थी और रात गहराने के बाद वापस आती थी। एक दिन इसी तरह रात गहराने के बाद लौटने पर मेरे पिताजी ने दीदी को डांटा-फटकारा था। कहा था: इतनी रात तक तू कहां रहती है, बता?

"मेरी दीदी ने कोई जवाब नहीं दिया था। इस पर मेरे पिताजी ने उसके गाल पर एक तमाचा जड़ दिया था। पिताजी का तमाचा खाने के बाद दीदी ने अपने बैग से एक सौ रुपये का एक नोट फेंकते हुए कहा था: मैं रात गहराने पर क्यों वापस आती हूं, यह देख लीजिए। आपके मुंह में भात का कौर डालने के लिए ही मैं रात गहराने पर वापस आती हूं। अब कभी आप पूछिएगा कि क्यों मैं रात गहराने पर घर वापस आती हूं और किस वजह से मुझे आने में देर होती है···? बताइए, पूछिएगा?

"और उसी रात मेरी दीदी ने गले में फंदा डालकर आत्महत्या कर ली। और उसके दूसरे दिन मेरे पिताजी ने भी एक शीशी नींद की टिकिया खाकर आत्महत्या कर ली। उनके कमरे में जाने पर हमें यह पत्र मिला। यह पत्र आपको ही लिखा है इसीलिए आपके पास यह पत्र पहुंचा गया—"

मुक्तिपद पत्र लेकर पढ़ने लगे। जो सब बात उस लड़के ने बताई थी, वेणु गोपाल ने वही सब बात उन्हें संबोधित करते हुए लिखा है। आखिरी पंक्तियों में लिखा है, "सर, जो कुछ मैंने ऊपर लिखा है सब सच है। मेरे कारण ही सैक्सबी मुखर्जी कंपनी में हड़ताल हुई थी। मैंने कंपनी की डेढ़ लाख रुपये की मशीन जला

दी थी, एक लाख रुपये घूस के रूप में लेकर। उस एक लाख रुपये की घूस के चलते ही हम लोगों के घर की खानातलाशी ली गई, उस एक लाख रुपये की घूस के कारण ही सभी कर्मचारी आज भूखों मर रहे हैं, उस एक लाख की रकम के कारण ही मेरी वेश्या लड़की को आत्महत्या करनी पड़ी और उसी एक लाख रुपये की घूस लेने के कारण आज मैं एक शीशी नींद की टिकिया खाकर आत्महत्या कर रहा हूं। मैंने आप लोगों का और अपने तमाम सहकर्मियों का विनाश किया है। एक लाख रुपये की घूस लेकर मैंने जो पाप किया है, किससे एक लाख रुपये की घूस ली थी, किसने मुझे एक लाख रुपये की घूस दी थी, उसका नाम बताकर मैं अपने पाप का बोझ बढ़ाना नहीं चाहता। अंत में आपसे एक ही अनुरोध कर रहा हूं कि आप मुझे क्षमा कर दें। मैं क्षमा के अयोग्य हूं, मुझे नरक में भी जगह नहीं मिलेगी।"

संदीप अब तक ध्यान से मल्लिकजी की बातें सुन रहा था।

पूछा, "उसके बाद ? मुक्तिपद बाबू चिट्ठी पढ़कर क्या बोले ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मुक्तिपद बाबू की आंखें आंसुओं से तर हो गई थीं।"

रंगनाथ ने कहा, "तो फिर अब मैं चलता हूं सर।"

मुक्तिपद बोले, "नहीं, तुम एक क्षण रुके रहो।"

यह कहकर मुक्तिपद अन्दर गए। उसके बाद मुक्तिपद एक मिनट में ही फिर से लौटकर चले आए। उनके हाथ में नोटों की एक गड्डी थी।

रंगनाथ से बोले, "इन रुपयों को तुम रख लो रंगनाथ। इसमें एक हजार रुपया है। बाद में और दूंगा—"

"रुपया ?"

यह सुनकर रंगनाथ का चेहरा फक् से हो गया।

मुक्तिपद बोले, "अभी यह एक हजार ही ले जाओ, बाद में और अधिक रुपया दूंगा।"

रंगनाथ कठोर जैसा हो गया। बोला, "नहीं सर, मैं यह रुपया नहीं ले सकता—"

मुक्तिपद ने पूछा, "क्यों, रुपये क्यों नहीं लोगे ? ले लो। अपनी मुसीबत के वक्त रुपये न लोगे तो फिर कब लोगे ?"

रंगनाथ इस पर भी चुप्पी साधे रहा। बोला, "अब किसके लिए रुपये लूंगा ?"

"क्यों तुम्हारी मां ? तुम्हारी मां तो है, तुम भी तो अभी छोटे हो—"

रंगनाथ बोला, "मेरा कोई भविष्य नहीं है सर। मैं अकेला आदमी हूं, किसी तरह पेट का खर्च चला लूंगा। पिताजी के हाथ की सोने की अंगूठी है, दादी का सोने का हार है। उन्हें बेचकर जो पैसा मिलेगा, उसे लेकर देस चला जाऊंगा। अब मैं फिर बंगाल नहीं आऊंगा सर—मैं चलता हूं—"

छोटा-सा लड़का है। लेकिन उस छोटे-से लड़के में कितना स्वाभिमान है! मुक्तिपद के हाथ से रुपया लिए बिना वह कमरे से निकलकर चला गया।

मुक्तिपद के हाथ में तब भी वेणु गोपाल की चिट्ठी थी। वे अन्यमनस्क की तरह उसे पढ़ने लगे। वेणु गोपाल ने अवश्य ही आत्महत्या की है लेकिन पूरी

चिट्ठी में जैसे भर्त्सना उड़ेल दी है। एक हज़ार रुपया देकर उन्होंने वेणु गोपाल का कर्ज़ उतारना चाहा था। लेकिन वह मुक्तिपद की जो क्षति कर गया है, उसकी पूर्त्ति क्या रुपये देने से हो सकती है ? वेणु गोपाल ने उनकी क्षति की है या उन्होंने एक हज़ार रुपये की क्षति-पूर्त्ति की इच्छा प्रकट कर वेणु गोपाल की क्षति करनी चाही थी ? कौन-सी वात सही है ? उस समय उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था।

संदीप मुक्तिपद वावू की कहानी ध्यान से सुन रहा था।

पूछा, "उसके वाद क्या हुआ ?"

मल्लिक चाचा कहने लगे, "मेरे पास आकर इस कहानी को कहते-कहते मंझले वावू चुप हो गए। वोले, 'आपने हेनरी फोर्ड का नाम सुना है मुनीमजी, जिनके नाम पर फोर्ड मोटर कंपनी थी' ?"

मल्लिकजी वोले, "हां—"

"उस हेनरी फोर्ड की फैक्टरी में हर मिनट एक मोटर गाड़ी वनकर तैयार होती थी। उस ज़माने में उनकी प्रतिदिन की आय थी सोलह लाख रुपये। उतना दौलतमन्द आदमी जिस दिन स्वर्गवासी हुआ तो जानते हैं तव क्या हुआ था ? मैंने उनकी जीवनी पढ़कर जाना है कि रुपये से कुछ खरीदा नहीं जा सकता मुनीमजी। वह आदमी जव मरने-मरने पर था तो डाक्टर को टेलीफोन से वुलाने के लिए टेलीफोन के पास जाने पर पता चला कि वह काम नहीं कर रहा है। आखिर में जव वहुत देर के वाद डाक्टर आया तो फोर्ड साहव की नरदेह में प्राण नहीं था। सिर्फ टेलीफोन की गड़वड़ी के कारण ही वह करोड़पति उस दिन विना इलाज मर गया।"

कहते-कहते मंझले वावू की आंखें भींग गई थीं। अपनी कमज़ोरी पकड़ लिए जाने के कारण ही शायद मंझले वावू उठकर खड़े हो गए। उसके वाद अपनी गाड़ी में बैठकर घर चले गए।

संदीप ने पूछा, "और उस इनकम टैक्स वाले मामले का क्या हुआ ? जिस चिट्ठी के चलते उतनी अशांति थी, उस पेनेल्टी की मांग की चिट्ठी का क्या हुआ ?"

"ओह, वह चिट्ठी ! उस चिट्ठी के चलते क्या कोई कम झमेला खड़ा हुआ ? नागराजन से लेकर विजयेश कानूनगो, टैक्स स्पेशलिस्ट थर-थर कांप रहे थे। एक ओर उत्पादन वन्द और दूसरी ओर इनकम टैक्स का झमेला। आखिर में खाते को उलटने-पुलटने पर पता चला कि पूरी रकम का भुगतान हो चुका है। फिर पेनल्टी क्यों हुई ?

"इनकम टैक्स ऑफिस उस समय कई दिनों के लिए वन्द था। होली, गुड-फ्राइडे की छुट्टियां और रविवार एक साथ पड़ गया था। उसके फलस्वरूप ऑफिस के सभी काम-काज वन्द थे। और दूसरी ओर दुश्चिंता और उत्तेजना की भरमार थी।

"आखिर में ऑफिस जव खुला तो नागराजन को ऑफिस जाने में असली वात का पता चला।" संदीप ने पूछा, "जाकर क्या देखा ? असली वात क्या थी ?"

"असली बात थी ऑफिस के क्लर्कों की गलती। सैक्टन एण्ड कंपनी की जगह सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कंपनी का नाम लिख दिया था। उसके फलस्वरूप तीन रात मुक्तिपद बाबू को नींद नहीं आई, इसका हर्जाना कौन देगा बताओ तो? कौन इसकी क्षति पूर्ति करेगा? किसको तुम इसके लिए जिम्मेदार ठहराओगे?"

संदीप भी नहीं समझ सका कि किसके दोष के कारण आदमी किसको जिम्मेदार ठहराएगा। हर आदमी रिश्वत लेगा, गलती करेगा लेकिन कोई उसकी जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार नहीं है। इस तरह का काम क्या अंग्रेज़ों के जमाने में होता था? या फिर देश आजाद होने का यही सबसे बड़ा अभिशाप है? उन लोगों के बैंक की भी यही हालत है। कोई काम नहीं करेगा लेकिन वेतन की बढ़ोत्तरी के मामले में लोग जुलूस निकालेंगे, नारे लगाएंगे, यूनियन बनाएंगे और 'गो-स्लो' करेंगे।

उसके बैंक के ब्रांच मैनेजर मालव्य साहब भी कहते, "जानते हो लाहिड़ी, दुनिया के किसी देश में ऐसा नहीं होता। तुम्हीं लोगों की वजह से मुझे रविवार और छुट्टी के दिन भी दफ्तर आना पड़ता है। मुझे जीवन में कोई छुट्टी नहीं है। हालांकि मैं भी किसी दिन तुम्हीं लोगों की तरह जूनियर स्टाफ था। मैं रातों-रात एक ही दिन में मैनेजर नहीं बना हूं—"

करमचन्द मालव्य कहते, "तुम बंगालियों में ही काम न कर वेतन पाने की प्रवृत्ति है। इस तरह धोखा देने की प्रवृत्ति किसी भी प्रांत के आदमी में नहीं है। जानते हो, ऐसा क्यों हुआ? अंग्रेज जब भारत की राजधानी कलकत्ता से हटाकर दिल्ली ले गए, उसी दिन से बंगालियों में यह गिरावट आनी शुरू हो गई। अंग्रेज़ों के बहुत सारे गुणों में से एक गुण है दूरदृष्टि। यह दूरदृष्टि एशिया की किसी जाति में नहीं है। उन्होंने देखा था, इन बंगालियों के प्रांत में हिन्दुस्तान की राजधानी रखने से किसी न किसी दिन उन्हें हिन्दुस्तान छोड़कर चला जाना होगा। बंगाली हिन्दुस्तान की सबसे धोखेबाज जात है. लिहाजा यहां से राजधानी हटा लेने से वे कम से कम और कुछ दिनों तक हिन्दुस्तान में टिके रहेंगे। उनकी दूरदृष्टि का अंजाम आज देखने को मिल रहा है। यही वजह है कि जो दिल्ली शहर किसी दिन किरानियों का शहर था वही आज सबसे बड़ा औद्योगिक शहर बन गया है। वहां देश के बंटवारे के बाद से बड़े-बड़े उद्योग फल-फूल रहे हैं। जैसे श्रीराम नन्दा, मोदी, थापर ग्रुप···वहां इतनी हड़तालें नहीं होतीं, इतने क्लोजर नहीं हैं, कुछ भी नहीं—"

करमचन्द मालव्य कहते, "तुम बंगाली हो। बंगालियों की निंदा सुनना तुम्हें अवश्य ही बुरा लगता होगा। लेकिन जो सच्चाई है, मैं वही कह रहा हूं। एक दिन इस बंगाल में जितनी भी बड़ी-बड़ी फैक्टरियां और उद्योग थे, कहीं और उतने नहीं थे। लेकिन अब? अब क्यों इतनी फैक्टरियां, इतने उद्योग-धन्धे बंगाल को छोड़कर दूसरे-दूसरे प्रांतों में चले जा रहे हैं?"

संदीप इसका सही-सही कोई जवाब नहीं दे सका था। लेकिन इस सम्बन्ध में उसने गहराई से सोचा है। किसी बंगाली का अगर भला होता है तो अन्य बंगालियों का कलेजा फटने लगता है। लेकिन अगर किसी गुजराती या मारवाड़ी या पंजाबी का भला होता है तो किसी बंगाली का कलेजा नहीं फटता, किसी

बंगाली की आंखों में गुस्सा नहीं उतरता।

. उस दिन आखिरी ट्रेन अन्तिम क्षण में पकड़ बेड़ापोता जाने के दौरान उसे सिर्फ मुक्तिपद बाबू की बातें याद आती रही थीं। करोड़पति हेनरी फोर्ड की मौत एक टेलीफोन में खराबी आ जाने के कारण हुई थी। इसके अलावा करमचंद मालव्य की बातों का स्मरण हो आया था।

करमचंद जी संदीप को बहुत प्यार करते थे। कहते, "मन लगाकर काम करते जाओ लाहिड़ी, कभी काम में गफलत मत करो। जिन लोगों का कहना है कि मन न लगाकर काम करने से भी भला होता है, वे गलत कहते हैं। गफलत का बीज ज़हर जैसा होता है। ज़हर के बीज का फल देर से अपना असर दिखाता है। चूंकि उसका असर देर से होता है इसीलिए लोग वैसी बात करते हैं। असल में अच्छे काम का भी असर देर से होता है। आदमी को धीरज नहीं खोना चाहिए। बैंक में कौन-कौन काम कर रहे हैं और कौन-कौन गफलतबाज़ी कर रहे हैं, मैं सब कुछ गौर करता हूं। लेकिन कहता कुछ भी नहीं। न कहने का कारण यह है कि जो लोग सोचते हैं गफलतबाज़ी से ही वे किला फतह कर रहे हैं, एक दिन उन्हें ही धोखा खाना पड़ेगा। उस समय वे लोग भाग्य को दोष देंगे। लेकिन वे नहीं जानते कि आदमी के सिर के ऊपर जो सूर्य, चन्द्रमा, तारे और नक्षत्र हैं उन्हें भी आंखें हैं। वे गफलत नहीं करते इसी वज़ह से अब भी हम जीवित हैं, गफलत नहीं करतें इसीलिए आज भी धरती घूम रही है। लेकिन अगर वे गफलत करते? उस दिन की बात सोचकर तो देखो।"

पता नहीं क्यों करमचंद जी संदीप को पहले दिन से ही अच्छी नज़र से देखने लगे थे। संदीप को इसका कारण मालूम नहीं था। हां, यह हो सकता है कि संदीप गरीब घर का लड़का है, यह बात वे जानते थे। लेकिन यह तो सहानुभूति है। सहानुभूति और प्यार क्या एक ही वस्तु है? वे उसे प्यार क्यों करते थे? बाद में संदीप उसी बैंक के एक ब्रांच का मैनेजर हो सका था और ऐसा करमचंदजी की संस्तुति के कारण ही हुआ था। यह भी तो उनके प्यार का ही अंजाम है। रुपये का ऋण तो खैर किसी तरह चुकाया जा सकता है लेकिन प्रेम का ऋण क्या चुकाया जा सकता है?

उस रात भी पहले की रात की तरह ही एक घटना घटी।

तब वह गहरी नींद में खोया हुआ था, अचानक किसी ने उसके बदन को धक्का दिया। वह तत्क्षण चिल्ला उठा, "कौन? कौन है?"

लेकिन तभी किसी ने अपने हाथ से उसका मुंह दबा दिया और चिल्लाने नहीं दिया।

दिन-भर की अथक मेहनत के बाद थकावट से गहरी नींद में खो जाना कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। उस दिन भी उसकी यही हालत थी। एक हाथ में सरो-सामान से भरा हुआ झोला था। उस भारी बोझे को लिए, पैदल चलता हुआ, लम्बा प्लेटफार्म पार करने के बाद एक तरह से दौड़ते हुए ट्रेन पर चढ़ा था। उसके बाद बेड़ापोता स्टेशन पर जब उतरा था तब विनोद चाचा की मिठाई की

दुकान बन्द हो चुकी थी। मिठाई दुकान के पास ही सार्वजनिक हाट की जगह है। हाट तब उठ चुकी थी। लेकिन लोग-बाग रोशनी बुझाकर सरो-सामान गठरी में बांध बगल में सो रहे थे। उनकी नाकें बज रही थीं षड्ज स्वर में। उसके उत्तर में ही गोपाल हाजरा का तीन-मंजिला पार्टी का मकान है।

उधर से पार होते ही संदीप को हमेशा तारक घोष की याद आ जाती है। और तारक घोष की याद आते ही गोपाल हाजरा का स्मरण हो आता। संदीप के जीवन से गोपाल हाजरा किस तरह कसकर जुड़ गया था, यही आश्चर्य की बात है। गोपाल हाजरा ने बचपन में ही कहा था: "लिख-पढ़कर तू क्या करेगा, कलकत्ता चल, वहां रुपये हवा में उड़ते हैं—"

तो क्या वेणु गोपाल को गोपाल हाजरा ने ही एक लाख रुपया दिया था?

गोपाल हाजरा को कहां से रुपये मिलते हैं? किन रुपयों से उसने बेडापोता में तीन-मंजिला इमारत खड़ी की है? नाइट-क्लब जाकर वह इतने रुपये कैसे खर्च कर आता है? फिरंगी मुहल्ले में जाकर वह गुण्डों से क्यों इस तरह हिलता-मिलता है? कलकत्ता के मोड़-मोड़ पर पुलिसकर्मियों को इतने सारे रुपये खुले हाथ क्यों देता है? गोपाल हाजरा को यह मालूम नहीं है कि रुपया-पैसा आदमी के साथ नहीं जाता? हेनरी फोर्ड के पास करोड़ों रुपये रहने के बावजूद बगैर इलाज के मरने की खबर उसने क्या किसी से नहीं सुनी है? या दिग्विजयी सम्राट सिकन्दर के बारे में? उसके बारे में भी गोपाल हाजरा ने नहीं सुना है?

संदीप ने तो वह कहानी स्कूल की किताब में पढ़ी थी? उन लोगों ने क्यों नहीं पढ़ी है?

घर आते ही मौसीजी ने और-और दिनों की तरह पूछा था, "क्यों बेटा, आज कोई खबर मिली?"

संदीप ने कहा था, "नहीं। सभी बस एक ही बात दुहराते हैं। सभी कहते हैं, लेन-देन का क्या हिसाब रहेगा। मैं तो कहता हूं, लड़की बेहद खूबसूरत है, एक बार पात्री को देख जाइए। लेकिन देखने को तैयार नहीं होते। उस तरह की बात सुनकर मुझे बहुत गुस्सा आ जाता है—"

मौसीजी सांत्वना देती हैं, "नहीं बेटा, तुम गुस्सा मत करो—लोग तो उस तरह की बातें करेंगे ही। देश के तमाम लोग बुरे नहीं हो गए हैं। कहीं न कहीं भले आदमी भी हैं—"

संदीप उनकी इस बात पर हामी भरते हुए कहता, "सभी लोग बुरे हो गए हैं, इस बात पर मैं यकीन नहीं करता। ऐसा न होता तो दुनिया अब भी कैसे चल रही है?"

उस समय किसी के पास ज्यादा बातचीत करने का वक्त भी नहीं रहता। संदीप के खाना खा लेने के बाद मां, मौसीजी और विशाखा एक साथ खाना खाने बैठ जाती। कमला की मां ही सबसे अन्त में खाना खाकर, बर्तन आदि मांजने के बाद जाती। लेकिन वह सब आवाज़ तक संदीप के कानों में नहीं आती। बिस्तर पर लेटते ही नींद से बोझिल उसकी आंखें बन्द हो जातीं और वह गहरी नींद की बाहों में लिपट जाता। नींद आने के एकाध क्षण पहले कभी दादी मां की याद आ जाती, कभी मुक्तिपद बाबू की, कभी मल्लिक चाचा की और कभी करमचंद की।

उसके वाद एक लम्वी नींद में रात गुज़र जाती ।

उस रात संदीप नींद के समुद्र के अतल में समा गया था और तभी किसी ने उसे धक्का दिया था। संदीप अकस्मात धक्का खाकर चिल्लाने जा रहा था, "कौन ? कौन है ?"

अचानक किसी ने उसके मुंह को अपने हाथ से दबाकर कहा था, "चुप रहो, चुप।"

"तुम ? तुम इतनी रात में किसलिए आई हो ?"

संदीप विशाखा की आवाज़ सुनकर दंग रह गया था।

विशाखा ने कहा था, "चुप रहो, चिल्लाओ मत। तुमसे वातें करनी हैं—"

"कौन-सी वात ?"

विशाखा ने कहा, "ज़रा वाहर चलो, यहां कहने से कोई सुन ले सकता है।"

उसके वाद उसे वाहर ले जाकर धीमे स्वर में कहा, "मेरी शादी के लिए तुम इतना चक्कर क्यों काट रहे हो और क्यों इतने रुपये खर्च कर रहे हो ? मैं शादी नहीं करूंगी—"

संदीप और अधिक विस्मित-स्तंभित हो गया। वोला, "इसका मतलव ?"

विशाखा वोली, "मैंने जो कुछ कहा है, ठीक ही कहा है। मैं शादी नहीं करूंगी। कोई विना पैसे के भी मुझसे शादी करना चाहे तो मैं नहीं करूंगी। इसके वाद भी अगर तुम मेरी शादी के लिए कोशिश करोगे तो मैं गले में फंदा डालकर खुदकुशी कर लूंगी। मैं क्या वकरी या भेड़ हूं कि सभी इस तरह मेरा जिवह करेंगे ? तुम लोग मुझे क्या सोचते हो, क्या ? इस पर भी अगर तुम मेरी शादी के लिए दूसरे के पैर पकड़ने जाओगे तो सच कह रही हूं, मैं गले में फंदा डालकर अवश्य ही खुदकुशी कर लूंगी—"

संदीप हक्का-वक्का हो उठा। कुछ देर तक उसके मुंह से आवाज़ ही नहीं निकली। उसके वाद पूछा, "अगर शादी नहीं करोगी तो फिर क्या करोगी ?"

विशाखा वोली, "डरो मत, मैं तुम्हारे पैसे से वैठ-वैठकर नहीं खाऊंगी। मैं नौकरी कर अपना और मां का पेट भरूंगी। इससे वह कहीं वेहतर रहेगा।"

"नौकरी ?" संदीप ने कहा।

विशाखा वोली, "हां नौकरी। तुम नौकरी कर सकते हो और मैं क्योंकि लड़की हूं तो नौकरी नहीं कर सकती ?"

"मगर तुम इतनी तकलीफ क्यों उठाने जाओगी ? मैं तो हूं ही।"

विशाखा वोली, "तुम हो तो इसका मतलव यह नहीं कि मैं अपनी मां के साथ तुम्हारे सिर का वोझ वनी रहूं और तुम्हारा अनाज खाती रहूं।"

संदीप वोला, "छिः, तुमने किस मुंह से ऐसी वात कही। तुम क्या मुझे इतना पराया समझती हो ?"

विशाखा वोली, "पराया नहीं तो और क्या समझूं ? तुम हम लोगों के कौन होते हो जो जिंदगी-भर विठाकर खाना खिलाओगे ?"

संदीप वोला, "इतने दिन, इतने सालों से तुम मुझे देखती आ रही हो और आज तुमने अपनी ज़वान खोलकर यह वात कही ? शादी नहीं करनी है तो नौकरी किसलिए करोगी ? किसके लिए ?"

विशाखा बोली, "और-और लोग जिस मकसद से नौकरी करते हैं, मैं भी उसी मकसद से नौकरी करूंगी। रुपये के लिए—"

"रुपये के लिए ?"

"हां, रुपया ही तो दुनिया में सब-कुछ है। रुपये की खातिर ही तो मेरी मां मुखर्जी के लड़के से मेरी शादी कराने को तैयार हुई थी। मैं भी उन्हें दिखा दूंगी कि मैं भी रुपया कमा सकती हूं, हम लोग भी भिखमंगे नहीं हैं। हमारा भी मान-सम्मान है, हमें भी आत्म-सम्मान का बोध है।"

उसके बाद जरा सुस्ता कर बोली, "इसके अलावा मुझे नौकरी भी मिल गई है, सिर्फ इंटरव्यू बाकी है।"

"कहां नौकरी मिली है ? किस ऑफिस में ? तुम्हें नौकरी की सूचना कैसे मिली ?"

"अखबार से। तुम घर पर जो अखबार ले आते थे, उसी से। उसमें विज्ञापन देखकर मैंने आवेदन पत्र भेज दिया था। आज अपनी तस्वीर भी भेज दी है—"

संदीप ने पूछा, "किस चीज का दफ्तर है ?"

विशाखा ने संदीप की ओर देखते हुए एक कागज बढ़ा दिया। बोली, "इसी में सब कुछ लिखा है। अभी अंधेरे में तुम्हें कुछ दिखाई नहीं पड़ेगा। कल सवेरे देख लेना। सिर्फ यही कहने के लिए तुम्हारी नींद तोड़कर तुम्हें तकलीफ दी थी कि मेरी शादी की कोशिश मत करो। मैं शादी नहीं करूंगी—चाहे वे लोग कितने ही धनी-मानी क्यों न हों—"

उसके बाद बोली, "अच्छा, चलती हूं—"

यह कहकर विशाखा अंधेरे में ही अपने कमरे की तरफ चली गई।

संदीप विस्मय से ठगा-ठगा अकेले ही वहां बहुत देर तक खड़ा रहा। उसे लगा, अब उसे नींद नहीं आएगी।

उस रात विडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन में आधी रात में दादी मां की नींद अचानक टूट गई। यों भी कम सोने से इस उम्र में उन्हें जितनी नींद आती है उनके लिए पर्याप्त है। सवेरे चार बजे के बाद उन्हें नींद नहीं आती और न ही नींद की जरूरत पड़ती है। नींद टूटने पर उन्हें सबसे पहले सौम्य की याद आई। बचपन में सौम्य उन्हीं के पास सोता था।

सौम्य के मां-बाप की मृत्यु कम उम्र में ही हो गई थी। उस समय उसकी यह उम्र नहीं थी कि समझ सके कि किसे जीवन और किसे मृत्यु कहते हैं। कभी पूछता भी नहीं कि उसके मां-बाप कहां हैं। उनका अभाव सौम्य महसूस नहीं कर सके, दादी मां रात-दिन इसी की कोशिश करती। अक्सर उसे गाड़ी पर बिठाकर घुमाने-फिराने ले जाती।

गाड़ी में बैठे-बैठे वह जो कुछ देखता उन सबों के प्रति उसके अन्दर कुतूहल जगता।

कहता, "वह क्या है दादी मां ?"

दादी मां कहती, "वह मकान है।"

"वह क्या है ?"

"वह खेलने का मैदान है ।"

"वहां कौन लोग खेलते हैं ?"

दादी मां कहतीं, "जितने भी शरारती लड़के हैं, वहां खेलते हैं ।"

"मैं उन लोगों के साथ खेलूं ?"

दादी मां कहतीं, "छि: निचले तबके के लोगों से हिलना-मिलना नहीं चाहिए—"

"निचले तबके के लोगों से हिलने-मिलने से क्या होता है ?"

दादी मां कहतीं, "निचले तबके के लोगों से हिलने-मिलने से आदमी बदमाश हो जाता है ।"

"बदमाश होने से क्या होता है ?"

दादी मां उसके बाद उस तरह के मैदानों की ओर नहीं ले जातीं । ड्राइवर से कहतीं, इडेन गार्डेन की तरफ ले जाने के लिए । बहुत दिनों के बाद इडेन गार्डेन की दुर्दशा देखकर उन्हें खुद भी दुख होता । वहां भी अब निचले तबके के लोगों की भीड़-भाड़ होना शुरू हो गया है । वे मन-ही-मन सोचतीं, वे नहीं रहेंगी तो सौम्य का क्या होगा ? उस समय कौन निचले तबके के लोगों के संस्पर्श से बचाएगा ?

सौम्य पूछता, "निचले तबके के लोगों की मानी क्या है दादी मां ?"

दादी मां कहतीं, "निचले तबके के लोगों का मानी है जिन लोगों के पास रुपये-पैसे नहीं हैं, जो लिखना-पढ़ना नहीं जानते, जिनके पास रहने का मकान नहीं है ।"

उस समय निचले तबके के लोगों के संबंध में दादी मां की भी यही धारणा थी । अब भी बहुत सारे लोगों की यही धारणा है । उस समय दादी मां को यदि मालूम होता कि जिन्हें वे निचले तबके के लोग कहा करती थीं, वे ही लोग आगे चलकर देश के राजा हो जाएंगे तो वह सब बात मुंह से उच्चारण भी नहीं करतीं । या यदि उन्हें मालूम होता कि वे ही निचले तबके के लोग उन लोगों की फैक्टरी के मालिक को बेइज्जत करेंगे तो वे कभी जबान से वह सब बात नहीं कहतीं ।

यही वजह है कि दादी मां की आंखों के सामने ही जब सारी दुनिया बदल गई तो उनके मन को भरपूर तकलीफ पहुंची लेकिन मुंह से किसी से कुछ नहीं कहा । अपनी आंखों से उन्होंने देखा कि सरो-सामान का मूल्य जिस अनुपात से बढ़ रहा है, आदमी का हाव-भाव, चाल-चलन और बातचीत के मूल्य में उसी अनुपात से गिरावट आ रही है । जिस अनुपात में उन लोगों की फैक्टरी की आमदनी बढ़ रही है उसी अनुपात में उनकी सुख-सुविधा में भी कमी आ रही है । इस संदर्भ में मल्लिकजी से वे बीच-बीच में शिकायत भी करतीं । कहतीं, "इस महीने में खर्च में इतनी बढ़ोत्तरी क्यों आ गई मुनीमजी ।"

मल्लिकजी कहते, "चीजों की कीमत बढ़ती जा रही है दादी मां ।"

पहले बिजली कंपनी का माहवारी बिल जितनी रकम का आता था, आहिस्ता-आहिस्ता वह दुगुना होने लगा । पहले-पहल उन्हें लगता कि कोई अकारण ही बहुत रात तक रोशनी जलाकर रखता है, या तार में शायद कहीं कोई सूराख है, जहां से सारा करेंट निकलकर बर्बाद हो जाता है । उस समय बिजली के मिस्त्री से

मकान की सभी लाइनों की जांच कराई गई। लेकिन जांच कराने पर भी कोई खोट देखने को नहीं मिला। उस समय उन्होंने सोचा, कहीं कोई गड़बड़ी नहीं है। असली गड़बड़ी है ज़माने की। युग भी बदल गया है और उसके साथ ही सारी वस्तुओं के मूल्य में भी बदलाव आ गया है। सिर्फ़ रुपये के मूल्य में ही बदलाव नहीं आया है, आदमी की आदमियत के मूल्य में भी बदलाव आ रहा है।

उसी समय उन्होंने निर्णय लिया, लगाम ढीली करने से काम नहीं चलेगा।

तभी से गिरिधारी को हुक्म दिया कि सदर का फाटक रात नौ बजते न बजते बंद कर दिया जाए। कहा जा सकता है कि सौम्य को मद्देनज़र रखकर ही यह हुक्म जारी किया। क्योंकि गाड़ी पर चढ़कर वे जब बाहर जातीं तो देखतीं, बड़ी-बड़ी जवान लड़कियां अकेले सड़क पर घूम रही हैं या ट्राम-बस पर चढ़कर मर्दों से देह सटाकर चल रही हैं। यह देखकर वे सिहर उठी थीं। उनका पोता सौम्य भी तो कम उम्र का लड़का है। वह कहीं उन लड़कियों के चक्कर में न फंस जाए। वह भी कहीं उन राक्षसियों के फेर में पड़ न जाए!

इसलिए जितने भी कड़े कदम उठाए जा सकते हैं, उन सबका उन्होंने इंतज़ाम किया। सिर्फ़ गिरिधारी को ही रात नौ बजे सदर के फाटक पर ताला बंद करने का हुक्म नहीं दिया था, स्कूल या कॉलेज जाने के दौरान ड्राइवर से कह देतीं कि वह नज़र रखा करे कि सौम्य किसी लड़की से हिलता-मिलता है या नहीं।

लेकिन उनकी यह सब सतर्कता नाकाम साबित हो गई। यह विक्षोभ वे किनके सामने प्रकट करें? इस विक्षोभ से उन्हें कौन छुटकारा दिलाएगा?

मुक्तिपद कई दिनों तक एक-दो बार आकर उन्हें देख गए हैं। ज़रूरत पड़ने पर डाक्टर को बुला लाए हैं। उन्हें ज़िंदा रखने की बहुत कोशिशें की हैं, ढेर सारे रुपये भी खर्च किए हैं। मुक्तिपद न होते तो यह सब कौन करता?

होश में आने के बाद उन्होंने अपने जीवन के प्रारंभ से लेकर अब तक की बार-बार परिक्रमा की है। खासकर सौम्य के जन्म लेने के बाद से ही वे इस पोते के साथ-साथ घर-गृहस्थी में जुड़ गई थीं। सौम्य उन्हीं के पास लेटकर सोता। सोने पर वे सपना देखतीं, सौम्य रो रहा है। वे तुरत जगकर उठ जातीं।

लेकिन गौर करतीं, सौम्य उनके पास जिस स्थिति में सोया था, उसी तरह सोया हुआ है। न रो रहा है न कुछ कर रहा है। फिर वे वैसा सपना क्यों देखतीं? क्यों ऐसा सपना देखतीं, पता नहीं।

शायद इसी को माया-ममता कहा जाता है। दादी मां महसूस करतीं, जिस उम्र में आदमी को माया का जाल तोड़कर मुक्ति पाने की चेष्टा करनी चाहिए, उस उम्र में वे माया के जाल में और अधिक फंस गई हैं।

उस रात भी सौम्य के कमरे की तरफ़ से आवाज़ आई। वे कान खड़ा करके सुनने की कोशिश करने लगीं। उसके बाद पुकारा, "बिंदु—"

बिंदु हमेशा उनके पैरों के पास पलंग के नीचे लेटी रहती है।

"जी, माताजी।"

दादी मां बोलीं, "कहां से आवाज़ आ रही है? यह किन लोगों के गले की आवाज़ है?"

दिन-भर दादी मां की फरमाइशें पूरी करते-करते बिंदु की जान निकल जाती

है। उसके बाद रात में थोड़ी-सी झपकी लेगी, इसका भी उपाय नहीं। उस समय भी हर मिनट बस बिंदु को ही पुकारती रहती हैं।

आदमी दो घड़ी सो सके, इसका भी उपाय नहीं है इस खूसट बुड्ढी के चलते।

"अरी बिंदु, यह आवाज़ कहां से आ रही है?"

बिंदु सारा कुछ जानती है। रात-भर मुन्ना बाबू अपनी विलायती जोरू से झगड़ते रहते हैं, यह जानना घर के किसी व्यक्ति के लिए बाकी नहीं रह गया है। सिर्फ दादी मां को ही यह जानने नहीं दिया गया है। अरे, वह क्या मामूली झगड़ा हुआ करता है? सुनने पर लगता है अन्दर दोनों में जानलेवा कांड हो रहा है। सारी बात तो वह समझ नहीं पाती। मेम बहू की बात तो बिलकुल उसकी समझ के परे है।

"निकलो-निकलो, गेट आउट, गेट आउट···"

"मैं क्यों निकलूंगी, तुम बाहर निकल जाओ। नहीं निकलोगे तो मैं तुम्हें खींचकर बाहर कर दूंगी।"

"नहीं, मैं नहीं जाऊंगा। मेरा घर है, मैं घर में रहूंगा। तुम्हीं को निकलना है—"

मेम अब शायद खफा हो गई है। खफा हो जाती है तो उसे होश-हवास नहीं रहता। हाथ के पास जो भी मिल जाता है उसी को फेंककर मारने लगती है। उस समय कमरे में धड़ाम-धड़ाम आवाज़ होती है। उसके धक्के से कुर्सी, ड्रेसिंग टेबल वगैरह उलट-पुलट जाते हैं। उतना खूबसूरत शृंगार-दर्पण टूटकर एक दिन चूर-चूर हो गया। शीशे का टुकड़ा मेम के पांव में लगकर अजस्र रक्त की धारा निकलने लगी। उतनी रात में डाक्टर आया। दवा देकर डाक्टर ने पैर में पट्टी बांध दी तब कहीं जाकर शांति मिली।

दरअसल सुधा को ही सारी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। सिर्फ झाड़ू लगाकर ही कमरा साफ नहीं करना होगा, पोंछना लेकर सुधा को ही पूरा कमरा पोंछना होगा। शीशे का टुकड़ा कहीं पड़ा रह जाएगा तो उसी के पैर में चुभ सकता है। वह तो महरी है, उसके पैर में कांच का टुकड़ा चुभ जाएगा तो उसके लिए न तो डाक्टर आएगा और न दवा ही मंगाई जाएगी।

एक दिन सचमुच ही मुन्ना बाबू ने मेम को कमरे से बाहर निकाल दिया था।

उस दिन भी बदस्तूर और-और दिनों की तरह आधी रात में लौटने के बाद जिस तरह दोनों में तर्क-वितर्क से आगे बढ़कर स्थिति गाली-गलौज और चिल्लाहट की सरहद तक पहुंचकर समाप्त होती है, उस दिन भी शुरू में ऐसा ही हुआ था। सुधा के लिए यह मामूली घटना है। इसके चलते घर में कोई सिर नहीं खपाता।

सुधा ने उसके पहले ही घर-द्वार सजाकर झाड़-बुहार दिया था। जग में ठंडा पानी रखना उसका काम है। मैले तौलिए, बिस्तर के नीचे के पांव-पोश—सब कुछ को बदल, झाड़-पोंछकर, चादर, तकिया, गावतकिये को सहेजकर रखना उसका रोज़मर्रा का काम है।

यह सब काम खत्म करने के बाद वह अपनी जगह पर सोने चली गई थी।

पुकारे आने पर हड़बड़ाकर उठकर रोशनी जला दी थी। समझ गई थी कि मुन्ना बाबू और मेमसाहब आ गए हैं। अक्सर मुन्ना बाबू मेम को अपने हाथ से थामे ले आते। शराब पीने के बाद वह होश-हवास में नहीं रहती थी। उसके बाद बदस्तूर उन लोगों की चिल्लाहट, शोर-शराबे और गाली-गलौज की शुरुआत हो गई।

यह भी कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। इस घर की दाई-महरियां इसकी अभ्यस्त हो चुकी हैं। इसके लिए सुधा भी माथा-पच्ची नहीं करती।

उस समय अन्दर से मुन्ना बाबू और उनकी मेमसाहब की चिल्ला-चिल्लाकर बातें करने की आवाज़ कान में आ रही थी। इससे भी सुधा की नींद में कोई खास खलल नहीं पड़ा था।

लेकिन अचानक मुन्ना बाबू की आवाज़ बेसुरा जैसी सुनाई पड़ी।

"फिर गाली बक रही हो?"

मेम बीवी बोली, "गाली-गलौज किया है तो ठीक ही किया है—आइ मस्ट एब्यूज यू'''स्काउन्ड्रेल—"

मुन्ना बाबू बोले, "स्काउन्ड्रेल किसे कह रही हो—"

"कह रही हूं तुम्हारे जैसे बैस्टर्ड को—"

"मुंह संभालकर बातें करो, कहे देता हूं—"

सुधा को सारी बात का अर्थ समझ में नहीं आ रहा था। सिर्फ यही समझ रही थी कि दोनों के बीच घटिया किस्म का गाली-गलौज चल रहा है। उसके बाद बहुत देर तक कोई आवाज़ नहीं आई। सुधा को इस अन्तराल में हल्की-सी झपकी आ गई थी।

सहसा मुन्ना बाबू की आवाज़ सुनकर सुधा की नींद टूट गई। वह हड़बड़ाकर उठ बैठी।

"बचाओ सुधा, मुझे बचाओ, मार डालेगी—"

सुधा दौड़कर मुन्ना बाबू के कमरे की तरफ गई। जाने पर देखा, कमरे का दरवाज़ा बन्द करना वे लोग भूल गए हैं। बत्ती बुझाना भी भूल गए हैं। सुधा ने अन्दर जाकर देखा, मेम बीवी मुन्ना बाबू को कमरे के फर्श पर पटक कर उनकी छाती पर बैठी है और दोनों हाथों से उनका गला दबाए हुए है। मुन्ना बाबू जोरों से चिल्ला रहे हैं, "बचाओ सुधा, बचाओ, मुझे मार डालेगी—"

यह दृश्य देखकर सुधा का पूरा शरीर थर-थर कांपने लगा। उस हालत में उसे क्या करना चाहिए, वह तय नहीं कर सकी। एक बार सोचा, मेमसाहब को खींचकर मुन्ना बाबू की छाती से अलग हटा दे। लेकिन दूसरे ही क्षण उसने महसूस किया कि देह की ताकत के मामले में वह क्या मेमसाहब से बीस साबित हो सकेगी!

लेकिन उपाय ही क्या है!

उस समय यह सब सोचने का वक्त नहीं था। उसने चट से मेमसाहब का हाथ पकड़कर उसे खींचना चाहा था। लेकिन उसके पहले ही मेमसाहब ने मुन्ना बाबू का गला छोड़कर सुधा के सिर पर एक थप्पड़ मारकर उसे फर्श पर गिरा दिया। लेकिन भाग्यवश उसे ज्यादा चोट नहीं लगी। गिरते ही वह उठकर खड़ी हो गई

और कमरे से भाग गई।

सौम्य उस अन्तराल में उठकर खड़ा हो गया था, लेकिन रीटा ने दुबारा उन्हें फर्श पर पटक दिया और उनकी छाती पर बैठकर गला दबाने लगी। बोली, "दो रुपया दो, रुपया दो—"

और सौम्य दर्द से छटपटाते हुए किसी तरह कह रहा है, "बचाओ सुधा, मुझे मार डालेगी—"

दादी मां की नींद पहले ही टूट चुकी थी। उन्हें लग रहा था कि वे सपना देख रही हैं। लेकिन अचानक विन्दु की आवाज़ सुनकर वे उठकर बैठ गईं।

"क्या हुआ है री विन्दु? तू पुकार क्यों रही है? क्या हुआ है?"

विन्दु ने कहा, "सुधा आकर क्या कह रही है, सुनिए।"

"कहां है सुधा? उसे मेरे पास बुला ला।"

जो कुछ घटित हुआ था सुधा ने संक्षेप में बताया। उसके बाद बोली, "आप एक बार चलिए दादी मां, वरना वह मुन्ना बाबू को मार डालेगी—"

दादी मां कुल मिलाकर बीमारी से अच्छी हुई हैं। बहुत सारे डाक्टरों को दिखाने और ढेर सारी दवा खाने के बाद सेहत में मामूली सुधार हुआ है। उठ नहीं पाती थीं। बहुत तकलीफ होती थी उठने में। उधर से तब सौम्य की आवाज़ कान में आ रही थी, "बचाओ···बचाओ···मार डालेगी···"

"चल, देख आती हूं—"

दादी मां आगे-आगे जाने लगीं। उनके पीछे-पीछे सुधा और विन्दु आने लगीं। दादी मां ने सौम्य के कमरे में आकर जो दृश्य देखा, उनकी आंखें विस्मय से विस्फारित हो गईं।

"मुन्ना!"

सौम्य तब दादी मां की बात का जवाब देने की हालत में नहीं था। उसकी बीवी उस समय छाती पर बैठ सौम्य का गला दबाए हुए थी और कह रही थी, "दो रुपया, रुपया दो—"

दादी मां अब स्वयं को संयत नहीं रख सकीं। सीधे कमरे के अन्दर घुसकर बोलीं, "विन्दु, सुधा, तुम दोनों आओ और इस चुड़ैल को पकड़कर बाहर निकाल लाओ और मकान के बाहर फेंक दो—"

शुरू में विन्दु और सुधा दुविधा महसूस कर रही थीं। लेकिन दादी मां ने और ज़ोरों से तकाज़ा किया, "क्या हुआ, मेरी बात तुम लोगों के कान में नहीं पहुंच रही है?"

इस पर विन्दु और सुधा दोनों मिलकर मेमसाहब का हाथ खींचने लगीं।

दादी मां बोलीं, "ज़ोर से खींचो, तुम लोगों की देह में ताकत नहीं है क्या?"

यह कहकर उन्होंने भी अपना हाथ लगाया। इस पर मेमसाहब ने सौम्य को छोड़कर दादी मां को पकड़ लिया। पकड़कर दादी मां का हाथ दांत से काट लिया।

दांत से काटते ही दादी मां चिल्ला उठीं, "हाय, जान गई, जान गई···"

और तत्क्षण ही सुधा और विन्दु ने मेमसाहब को दबोच लिया।

"अब बताओ तो हरामजादी!"

यह कहकर जैसे ही उन दोनों ने मेमसाहब को दबोच लिया, उसने दादी मां का हाथ छोड़ दिया। इस बीच दादी मां ने सौम्य का हाथ पकड़ उससे कहा, "चल, तू मेरे घर में जाकर सो रह। यह चुड़ैल किसी-न-किसी दिन तुझे जान से मार डालेगी। तुझे उसके कमरे में नहीं सोना है। चल-चल, मेरे कमरे में चल—"

बिन्दु और सुधा तब मेमसाहब को सभालने लगी।

दादी मा सौम्य का हाथ थामे उसे अपने कमरे की ओर ले जाने लगी। बहुत दिन पहले का सौम्य जैसे दुबारा शिशु बनकर दादी मां के पास लौट आया है।

दादी मा बोली, "अब से तू मेरे पास सोएगा, समझा? उस चुड़ैल के पास अब तुझे नही सोना है। किसी-न-किसी दिन वह तेरा खून कर डालेगी—"

सदीप का शराब का नशा तब भी दूर नहीं हुआ था। तब भी वह लड़खड़ा रहा था। लड़खड़ाते कदमों से दादी मां के कमरे की ओर जाने लगा।

सौम्य को अपने विशाल पलंग के एक किनारे की जगह दिखाकर दादी मां बोली, "पलग पर चढ़कर सो रह—"

सौम्य के द्वारा अपनी जगह पर लेटने के बाद दादी मा कमरे की बत्ती बुझाकर उसकी बगल में लेट गई। मा-बाप के मरने के बाद सौम्य जब अकेला हो गया था, उस समय भी उसी स्थान पर सोता था। उन दिनों दादी मां उसे यहा लिटाकर थपथपाती, कहानिया सुनाया करती। इतने दिनों के बाद सौम्य जैसे फिर से अपने बचपन में लौट आया है, फिर से शिशु हो गया है।

तब काफी रात हो चुकी थी। दादी मा कहने लगी, "क्यों बेटा, तू उस चुड़ैल से शादी करने गया? तेरे भाग्य में क्या कोई अच्छी लड़की नहीं थी?"

उसके बाद सौम्य का कोई जवाब न पाकर पूछा, "वह तेरा गला क्यों दबा रही थी? तूने कौन-सा अपराध किया था?"

सौम्य बोला, "मैंने दादी मां, रीटा की शादी के मौके पर उसकी मा से वादा किया था कि मैं हर महीने उसे दो सौ पौंड भेजा करूंगा, लेकिन कई महीनों से रुपया नही भेज पा रहा हूं इसीलिए···"

दादी मां बोली, "भेज नही सका तो क्या हुआ? तू तो फैक्टरी की हालत देख ही रहा है। कितने ही सालों से फैक्टरी में लॉक-आउट चल रहा है। सारा प्रोडक्शन बन्द है। एक पैसे की भी आमदनी नही हो रही है। तू कहा से रुपया भेजेगा?"

सौम्य बोला, "इसी वजह से हर रोज मुझे भय दिखाती रहती है। हर रोज मेरा गला दबोचती है। हर रोज मेरा खून करना चाहती है। मैं क्या करूं, बताओ।"

"तो तू यह क्यों नही कहता कि अभी हम लोगों की फैक्टरी की यह हालत है, तू अभी रुपया नही भेज सकेगा?"

सौम्य ने क[illegible] से बस एक यही बात निकलती [illegible] तालाबंदी चल रही है तो इसके लिए [illegible] उठाएगी? उस समय मुझे घटिया किस्म की गालियां देती है। कहती है, तुम्हें अपना वादा पूरा

करना ही होगा। मेरा गला कसकर दबाने लगती है—"

दादी मां इस बात के उत्तर में क्या कहें ! थोड़ी देर तक चुप्पी में डूबी रहने के बाद सौम्य के दुख से दुखित हो अंधेरे में ही आंसू बहाने लगीं। रात का अंधेरा होने के कारण सौम्य कुछ नहीं देख सका। दिन का वक्त होता तो देख पाता। समझ पाता कि उसके लिए दादी मां को मन-ही-मन कितना कष्ट हो रहा है।

सौम्य बिना कुछ बोले, ज्यों का त्यों लेटा रहा।

उसके बाद दादी मां जैसे अपने आपसे कहने लगीं, "सारा दोष मेरे भाग्य का ही है मुन्ना ! वरना तेरे लिए कितनी अच्छी एक पात्री देखकर रखी थी, कितनी खूबसूरत ! उन लोगों के पीछे कितने रुपये खर्च किए ! उन्हें रहने को घर दिया था। कितनी मास्टरनियां रखी थीं उसे लिखाने-पढ़ाने को। मुनीमजी से सुना था, वह बहुत अच्छी अंग्रेज़ी बोल लेती है। और आखिर में तू एक पियक्कड़ औरत को ब्याह कर ले आया।"

उसके बाद दादी मां फिर कहने लगीं, "लंदन जाने के दौरान तुझे बार-बार मना किया था वहां की औरतों से हिलने-मिलने को। और मैंने जो मना किया तू वही कर बैठा? तूने मेरी बात पर एक बार भी गौर नहीं किया? मैं तो तेरे भले के लिए ही कहती थी, अब मेरा क्या? मैं तो आज हूं कल नहीं रहूंगी। एक दिन तुझे ही यह गृहस्थी चलानी है, तुझे ही इन सब चीज़ों की देखरेख करनी है। तब? तब क्या होगा? कौन तेरी देखरेख करेगा।"

उसके बाद ज़रा रुकने के बाद फिर बोली, "अहा, कितनी खूबसूरत लड़की थी वह ! देखते तो ठगे-से रह जाते ! गरीब की लड़की होने से क्या होगा? कितनी अक्लमंद और होशियार थी ! जैसी लड़की थी, वैसी ही उसकी मां··· मैंने काशी के गुरुदेव को जन्मपत्री दिखाने के बाद ही उसे पसन्द किया था···"

बात करते-करते उन्हें भी झपकी आ गई थी, यह वे महसूस नहीं कर सकी थीं। जब आंखें खुलीं तो देखा, सौम्य बगल में नहीं है। कहां गया वह? उनकी बगल में ही तो मुन्ना सोया हुआ था। वह कहां चला गया?

"बिन्दु, बिन्दु···"

रात-भर इसी तरह बुलाहट पर बुलाहट होती रहे तो आदमी कैसे सोए? इस बुड्ढी की हरकत के कारण ज़रा सोना भी मुश्किल है ! सारा दिन और सारी रात बस बिन्दु और बिन्दु ! इस बुढ़िया के मुंह से भगवान का नाम क्यों नहीं निकलता ! एक बार तो मरने-मरने को थी। देह में थोड़ी-सी ताकत आई है तो बस बिन्दु और बिन्दु की रट लगाए रहती है···

"क्या दादी मां?"

दादी मां बोलीं, "मुन्ना को तो लाकर अपने बिस्तर पर लिटा दिया था, अब वह कहां चला गया?"

बिन्दु चली गई और थोड़ी देर के बाद वापस आकर बोली, "मुन्ना बाबू तो अपने कमरे में चले गए हैं।"

"यह क्या? कब चला गया वह?"

आश्चर्य ! थोड़ी देर पहले जिसकी नाक की घरघराहट सुनी थी, वही फिर अपनी पत्नी के कमरे में सोने चला गया ! तुरन्त झगड़ा और तुरन्त मेल ! मुन्ना

की यह कैसी हरकत है ! यहा के लड़को का हाव-भाव देखकर वह जैसे आकाश से नीचे गिर पड़ी। इन्हें समझना मुश्किल है ! इस जमाने के लड़के-लड़कियां···

"मिस विशाखा गांगुली ! मिस विशाखा गांगुली !"

यह एक नया अनुभव था विशाखा के जीवन के लिए। अहलेस्सुवह घर से निकल संदीप और उसने एक ही साथ बेड़ापोता मे रेलगाड़ी पकड़ी थी।

मां ने आपत्ति की थी। कहा था, "यह कठिन परिश्रम तू क्या बरदाश्त कर सकेगी बेटी ? लड़का होती तो कुछ और ही बात थी। तेरा शरीर इतनी मेहनत बरदाश्त कर सकेगा ?"

सदीप ने कहा था, "आप ही बताइए मौसीजी ! कलकत्ता शहर होता तो किसी तरह काम चल सकता था, लेकिन मैं तो खुद डेली-पैसेंजरी करके देख चुका हूं। इसमें हमी लोगो को कष्ट होता है और वह तो लड़की है। वह नही जानती कि डेली-पैसेंजरी की तकलीफ क्या होती है। इसीलिए इस ज़िद पर उतर आई है—"

विशाखा ने कहा था, "ऐसा होने पर भी क्या मैं दूसरे को हानि पहुंचाकर हमेशा उसका दिया हुआ खाना खाऊंगी और कपडे पहनूगी ? मुझमें क्या हया-शर्म नामक कोई चीज नही है ? मैं औरत हो सकती हू पर मनुष्य ही हूं। मेरे शरीर मे भी तो मनुष्य का चमड़ा है, नहीं है क्या···"

कई दिनों तक इसी तरह घर मे बहसबाजी चलती रही थी।

सदीप कहता, "मौसीजी, आप उसे ज़रा समझा-बुझाकर कहिए न, मेरी बात मानने को वह तैयार नही है—मैंने तो उससे कहा है, मैं हूं ही; तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नही है।"

उसके बाद एक लमहे तक चुप रहने के बाद फिर कहता, "और सो भी अगर पोस्टऑफिस, रेल या बैंक की नौकरी होती तो कोई बात थी। यह कही कोई कंपनी है, जिसका मैंने नाम भी नहीं सुना है—"

मौसीजी ने कहा था, "उसे इस नौकरी का पता कैसे चला बेटा ?"

संदीप ने कहा था, "वही जो मैं ढेर सारे अखबार ले आया था, उन्हीं अखबारो मे से किसी में पता देखकर खुद ही आवेदन पत्र भेज दिया था। मुझे कुछ बताया भी नही था।"

"तुम यह पता क्यों नहीं लगाकर आए कि वह किस चीज का दफ्तर है और वे लोग किस किस्म के आदमी हैं—"

संदीप ने कहा था, "देख आया था। वह एक छोटा-सा ऑफिस है। उन लोगों ने नया-नया ऑफिस चालू किया है। उन लोगो के सरो-सामान बेचने के लिए सेल्स गर्ल्स की नौकरी है।"

"कितनी तनख्वाह देगा ?"

"नया ऑफिस है, कितनी तनख्वाह देगा ही—चार सौ, पाच सौ या ज्यादा-से-ज्यादा छह सौ। इसके अलावा वह ऑफिस कितने दिनों तक टिका रहेगा, इसका कोई ठिकाना नही।"

मौसीजी ने कहा था, "फिर ऐसे ऑफिस में नौकरी करने की ज़रूरत ही क्या है ?"

संदीप ने कहा था, "यही बात आप उसे एक बार समझाकर कहिए न। मेरी बात की वह परवाह ही नहीं करती।"

"तुम्हारी बात की परवाह नहीं करती है तो मेरी बात की परवाह करेगी ? वह क्या पहली ही जैसी लड़की है ? इतने दिनों में भी तुम उसे पहचान नहीं सके ?"

यह सब बात पहले दिन से ही चल रही थी। लेकिन विशाखा ने जो जिद पकड़ी थी उससे वह तिलमात्र भी नहीं डिगी। उसने कह दिया था कि वह किसी के सिर का बोझ बनकर खाना नहीं खाएगी। इससे उसके आत्म-सम्मान को धक्का लगता है।

"इतने दिनों तक मुखर्जी बाबुओं के सिर का बोझ बनकर जो खाती रही, इस सम्बन्ध में क्या कहना है ?"

"तब मैं छोटी थी, कुछ समझ नहीं पाती थी। उस समय की बात अलहदा है। मगर अब मैं बड़ी हो गई हूं, मुझमें समझदारी आ गई है। अब वैसा नहीं करूंगी।"

मौसीजी ने कहा था, "लड़की होकर पैदा हुई है, किसी दिन शादी तो होगी ही, तब ?"

विशाखा ने कहा था, "मैं शादी कभी नहीं करूंगी।"

"तो हमेशा तू वयस्क कुमारी ही रहेगी ? वयस्क कुमारी रहोगी तो तेरे हाथ का छुआ कोई खाएगा ?"

"क्यों नहीं खाएगा ? हम लोगों के कॉलेज की बहुत सारी प्रोफेसरों ने शादी नहीं की है। उन लोगों का छुआ हुआ क्या कोई खाता नहीं ? रुपया मिलने से सब शुद्ध हो जाता है। रुपये में ऐसा गुण है।"

रुपये में कितने गुण हैं, इसके बारे में मौसीजी से बढ़कर किसे अन्दाजा है ! रुपये-पैसे होते तो योगमाया को अपने देवर के घर में लात-झाड़ू सहकर जीवन जीना पड़ता ?

मां-बेटी के झगड़े के दौरान संदीप की मां आकर बराबर समझौता करा दिया करती। कहती, "तुम चुप रहो दीदी, हम लोग पुराने जमाने के हैं। वे लोग जो अच्छा समझेंगे वही करेंगे। देख ही रही हो कि मेरा संदीप जो अच्छा समझता है वही करता है। मैं उसमें नाक घुसड़ने नहीं जाती।"

मौसीजी कहतीं, "तुम्हारा संदीप तो हीरे का टुकड़ा है। पिछले जन्म में तुमने बहुत पुण्य किया होगा, इसीलिए ऐसा बेटा मिला। मेरी विशाखा लड़की के बदले लड़का होती तो मैं क्या इतना सोचती ? तुम्हारे लड़के जैसा कोई जमाई मिल जाता तो मेरा भाग्य चमक जाता दीदी। हां, चमक जाता।"

यह कहकर मौसीजी पल्लू से अपनी आंखें पोंछतीं। लेकिन दोनों को इस बात पर विश्वास था कि जिसके भाग्य में जो लिखा है वह होकर ही रहेगा। इसमें आदमी कोई रुकावट नहीं डाल सकता। सिर नवाकर सबकुछ मान लेना ही जीवन है।

उसके बाद जिस दिन विशाखा को इंटरव्यू देने के लिए जाने की बात थी, उस दिन भोर से ही घर में व्यस्तता का माहौल था। उसके एक दिन पहले संदीप विशाखा के लिए एक साड़ी खरीदकर ले आया था। मौसीजी ने कहा, "साड़ी क्यों ले आए बेटा ?"

संदीप ने कहा था, "विशाखा कल इंटरव्यू देने जा रही है। मैंने देखा था, उसके पास कोई अच्छी साड़ी नहीं है—"

"और वह पैकेट में क्या है ?"

संदीप ने कहा, "वह कुछ भी नहीं है। आजकल लड़कियां जिन चीजों का उपयोग करती हैं, यह वही स्नो, क्रीम, पाउडर···यही सब···"

मौसीजी ने कहा था, "तुमने यह सब क्यों खरीदा बेटा ? व्यर्थ ही इतने सारे पैसे खर्च किए···"

संदीप ने कहा था, "इसमें हर्ज ही क्या है मौसीजी ? मेरे कोई बहन होती तो उसे भी यह सब खरीदकर देना पड़ता—आजकल तो सभी लड़कियां इन सब चीजों का उपयोग करती हैं—"

मां ने संदीप का पक्ष लेते हुए कहा था, "सचमुच संदीप के बहन नहीं है इसीलिए। वरना बहन रहती तो उसे भी सब कुछ खरीदकर देना पड़ता। संदीप ने खरीदकर अच्छा ही किया है—"

दूसरे दिन खूब तड़के ही वे दोनों ट्रेन पकड़ने के लिए निकले थे। विशाखा संदीप के द्वारा खरीदी गई वही साड़ी पहने थी। मौसीजी और मां दोनों सदर दरवाजे पर आकर खड़ी हुईं। मन-ही-मन दुर्गा का स्मरण किया।

हावड़ा स्टेशन पर उतर संदीप ने कहा था, "चलो, पहले तुम्हें तुम्हारे ऑफिस तक पहुंचा आता हूं—"

विशाखा ने कहा था, "पहुंचाने की जरूरत नहीं। मेरे पास तो पता है ही। मैं खुद ही पूछते-पूछते वहां तक पहुंच जाऊंगी।"

संदीप ने कहा था, "तुम्हारा इंटरव्यू खत्म होने में कितना वक्त लगेगा ?"

विशाखा ने कहा था, "ज्यादा-से-ज्यादा दो घंटा। अभी साढ़े नौ बज रहे हैं। दोपहर एक बजे तक सबका इंटरव्यू खत्म हो जाएगा।"

संदीप ने कहा था, "नहीं चलो, मैं तुम्हें पहुंचा आता हूं। तुम्हें अकेले छोड़कर जाना मेरे लिए उचित नहीं है।"

"क्यों, मैं क्या अकेले नहीं जा सकती ?"

संदीप ने कहा था, "जानती हो, आज के जमाने में कलकत्ता के किसी आदमी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। तुम्हारी जैसी लड़कियों को देखकर वे बहुत ही बुरे बर्ताव करते हैं। नहीं चलो, मैं तुम्हें उस ठिकाने पर पहुंचा आता हूं—"

"क्यों ? तुम मेरे लिए इतनी तकलीफ क्यों उठाओगे ?"

संदीप ने कहा था, "आज सजने-संवरने से तुम बहुत ही अच्छी दिख रही हो। इस हालत में तुम्हें अकेले छोड़ देना मेरे लिए उचित नहीं है। इसके अलावा मौसीजी क्या सोचेंगी ? कहेंगी, संदीप पर जिम्मेदारी सौंपकर विशाखा को जाने दिया और वह विशाखा को ऑफिस जाकर भी नहीं पहुंचा आया—"

विशाखा ने कहा था, "नहीं-नहीं, मां ऐसा नहीं सोचेंगी—"

मौसीजी ने कहा था, "फिर ऐसे ऑफिस में नौकरी करने की ज़रूरत ही क्या है ?"

संदीप ने कहा था, "यही बात आप उसे एक बार समझाकर कहिए न। मेरी बात की वह परवाह ही नहीं करती।"

"तुम्हारी बात की परवाह नहीं करती है तो मेरी बात की परवाह करेगी ? वह क्या पहली ही जैसी लड़की है ? इतने दिनों में भी तुम उसे पहचान नहीं सके ?"

यह सब बात पहले दिन से ही चल रही थी। लेकिन विशाखा ने जो ज़िद पकड़ी थी उससे वह तिलमात्र भी नहीं डिगी। उसने कह दिया था कि वह किसी के सिर का बोझ बनकर खाना नहीं खाएगी। इससे उसके आत्म-सम्मान को धक्का लगता है।

"इतने दिनों तक मुखर्जी बाबुओं के सिर का बोझ बनकर जो खाती रही, इस सम्बन्ध में क्या कहना है ?"

"तब मैं छोटी थी, कुछ समझ नहीं पाती थी। उस समय की बात अलहदा है। मगर अब मैं बड़ी हो गई हूं, मुझमें समझदारी आ गई है। अब वैसा नहीं करूंगी।"

मौसीजी ने कहा था, "लड़की होकर पैदा हुई है, किसी दिन शादी तो होगी ही, तब ?"

विशाखा ने कहा था, "मैं शादी कभी नहीं करूंगी।"

"तो हमेशा तू वयस्क कुमारी ही रहेगी ? वयस्क कुमारी रहोगी तो तेरे हाथ का छुआ कोई खाएगा ?"

"क्यों नहीं खाएगा ? हम लोगों के कॉलेज की बहुत सारी प्रोफेसरों ने शादी नहीं की है। उन लोगों का छुआ हुआ क्या कोई खाता नहीं ? रुपया मिलने से सब शुद्ध हो जाता है। रुपये में ऐसा गुण है।"

रुपये में कितने गुण हैं, इसके बारे में मौसीजी से बढ़कर किसे अन्दाजा है ! रुपये-पैसे होते तो योगमाया को अपने देवर के घर में लात-झाड़ू सहकर जीवन जीना पड़ता ?

मां-बेटी के झगड़े के दौरान संदीप की मां आकर बराबर समझौता करा दिया करती। कहती, "तुम चुप रहो दीदी, हम लोग पुराने ज़माने के हैं। वे लोग जो अच्छा समझेंगे वही करेंगे। देख ही रही हो कि मेरा संदीप जो अच्छा समझता है वही करता है। मैं उसमें नाक घुसड़ने नहीं जाती।"

मौसीजी कहतीं, "तुम्हारा संदीप तो हीरे का टुकड़ा है। पिछले जन्म में तुमने बहुत पुण्य किया होगा, इसीलिए ऐसा बेटा मिला। मेरी विशाखा लड़की के बदले लड़का होती तो मैं क्या इतना सोचती ? तुम्हारे लड़के जैसा कोई जमाई मिल जाता तो मेरा भाग्य चमक जाता दीदी। हां, चमक जाता।"

यह कहकर मौसीजी पल्लू से अपनी आंखें पोंछतीं। लेकिन दोनों को इस बात पर विश्वास था कि जिसके भाग्य में जो लिखा है वह होकर ही रहेगा। इसमें आदमी कोई रुकावट नहीं डाल सकता। सिर नवाकर सबकुछ मान लेना ही जीवन है।

उसके बाद जिस दिन विशाखा को इंटरव्यू देने के लिए जाने की बात थी, उस दिन भोर से ही घर में व्यस्तता का माहौल था। उसके एक दिन पहले संदीप विशाखा के लिए एक साड़ी खरीदकर ले आया था। मौसीजी ने कहा, "साड़ी क्यों ले आए बेटा?"

संदीप ने कहा था, "विशाखा कल इंटरव्यू देने जा रही है। मैंने देखा था, उसके पास कोई अच्छी साड़ी नहीं है—"

"और यह पैकेट में क्या है?"

संदीप ने कहा, "यह कुछ भी नहीं है। आजकल लड़कियां जिन चीजों का उपयोग करती हैं, यह वही स्नो, क्रीम, पाउडर···यही सब···"

मौसीजी ने कहा था, "तुमने यह सब क्यों खरीदा बेटा? व्यर्थ ही इतने सारे पैसे खर्च किए···"

संदीप ने कहा था, "इसमें हर्ज ही क्या है मौसीजी? मेरे कोई बहन होती तो उसे भी यह सब खरीदकर देना पड़ता—आजकल तो सभी लड़कियां इन सब चीजों का उपयोग करती हैं—"

मां ने संदीप का पक्ष लेते हुए कहा था, "सचमुच संदीप के बहन नहीं है इसीलिए। वरना बहन रहती तो उसे भी सब कुछ खरीदकर देना पड़ता। संदीप ने खरीदकर अच्छा ही किया है—"

दूसरे दिन खूब तड़के ही वे दोनों ट्रेन पकड़ने के लिए निकले थे। विशाखा संदीप के द्वारा खरीदी गई वही साड़ी पहने थी। मौसीजी और मां दोनों सदर दरवाजे पर आकर खड़ी हुईं। मन-ही-मन दुर्गा का स्मरण किया।

हावड़ा स्टेशन पर उतर संदीप ने कहा था, "चलो, पहले तुम्हें तुम्हारे ऑफिस तक पहुंचा आता हूं—"

विशाखा ने कहा था, "पहुंचाने की जरूरत नहीं। मेरे पास तो पता है ही। मैं खुद ही पूछते-पूछते वहां तक पहुंच जाऊंगी।"

संदीप ने कहा था, "तुम्हारा इंटरव्यू खत्म होने में कितना वक्त लगेगा?"

विशाखा ने कहा था, "ज्यादा-से-ज्यादा दो घंटा। अभी साढ़े नौ बज रहे हैं। दोपहर एक बजे तक सबका इंटरव्यू खत्म हो जाएगा।"

संदीप ने कहा था, "नहीं चलो, मैं तुम्हें पहुंचा आता हूं। तुम्हें अकेले छोड़कर जाना मेरे लिए उचित नहीं है।"

"क्यों, मैं क्या अकेले नहीं जा सकती?"

संदीप ने कहा था, "जानती हो, आज के जमाने में कलकत्ता के किसी आदमी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। तुम्हारी जैसी लड़कियों को देखकर वे बहुत ही बुरे बर्ताव करते हैं। नहीं चलो, मैं तुम्हें उस ठिकाने पर पहुंचा आता हूं—"

"क्यों? तुम मेरे लिए इतनी तकलीफ क्यों उठाओगे?"

संदीप ने कहा था, "आज सजने-संवरने से तुम बहुत ही अच्छी दिख रही हो। इस हालत में तुम्हें अकेले छोड़ देना मेरे लिए उचित नहीं है। इसके अलावा मौसीजी क्या सोचेंगी? कहेंगी, संदीप पर जिम्मेदारी सौंपकर विशाखा को जाने दिया और वह विशाखा को ऑफिस जाकर भी नहीं पहुंचा आया—"

विशाखा ने कहा था, "नहीं-नहीं, मां ऐसा नहीं सोचेंगी—"

संदीप ने कहा था, "तुम्हारे कहने से क्या होगा ! तुम खुद समझ नहीं पा रही हो कि आज कितनी सुन्दर दिख रही हो। तुम इतना साज-सिंगार करने ही क्यों गई ? मैं तो देख रहा था कि ट्रेन में मुसाफिरों का झुंड तुम्हारी ओर ऐसे घूर रहा था जैसे तुम्हें आंखों से निगल जाएगा।"

विशाखा ने कहा था, "इसकी वजह से तुम्हें वहुत ईर्ष्या हो रही थी ?"

संदीप ने कहा था, "नहीं, मज़ाक की वात नहीं, सचमुच आज तुम्हारा इतना सजना-संवरना ठीक नहीं हुआ। वहरहाल, तुम्हें मैं मुकाम पर पहुंचा आता हूं, चलो—"

इसके वाद दोनों ठीक जगह पर पहुंच गए। वह जगह डलहौजी स्क्वायर और नेताजी सुभाष रोड के मोड़ के आसपास था। वहुत खोज-पड़ताल करने के वाद वह ऑफिस मिला। ऑफिस के सामने के साइनवोर्ड पर लिखा हुआ है—आइडियल फूड प्रोडक्ट्स (प्राइवेट) लिमिटेड। ऑफिस भी मिल गया और ठिकाना भी। मकान के दो-मंजिले पर एक कमरे में कुछेक महिलाएं वैठी हुई हैं।

संदीप ने कहा था, "तुम अंदर जाकर वैठो। मैं चल रहा हूं—"

यह कहकर जाने के पहले वापस आकर वोला था, "एक वात और। इंटरव्यू खत्म होने के वाद तुम यहीं रहना। मैं दोपहर एक वजे तक आ जाऊंगा। मैं जव तक न आ जाऊं तुम कहीं मत जाना—"

विशाखा ने सिर हिलाकर कहा, "ठीक है—"

"एक वात और—"

संदीप ने वापस आकर कहा था, "इन रुपयों को तुम रख लो—"

यह कहकर दस के पांच नोट दिए थे। कहा था, "तुम्हारे पास कुछ रुपये रहना अच्छा है, मुसीवत के वक्त काम में आ सकता है—"

उसके वाद कहा था, "मैं जव तक लौट कर न आऊं, कहीं मत जाना, समझीं ? मैं ऑफिस से आध घंटे की छुट्टी लेकर तुम्हारे पास आ जाऊंगा—"

इसके वाद संदीप वहां रुका नहीं। वह अपने वैंक चला गया था।

उसके वाद विशाखा उस कमरे में जाकर एक खाली जगह पर वैठ गई। और भी छह-सात महिलाएं उस समय वहां इंतजार में वैठी थीं। कोई किसी को पहचानती नहीं। समझ में आ गया कि सभी ने इस नौकरी के लिए आवेदन-पत्र भेजा है। इसलिए वे आज इंटरव्यू देने आई हैं। सभी के साथ कोई-न-कोई मर्द आया था। वे लोग औरतों को पहुंचाकर अपने-अपने काम पर चले गए थे।

विशाखा हरेक की तरफ ताक रही थी। कोई किसी को नहीं पहचानती। लेकिन सभी एक ही उद्देश्य से आई हैं। सभी का उद्देश्य स्वावलंवी होना या पैसा कमाना है। सभी को रुपये चाहिए। जिसके पास रुपया-पैसा है। वे भी रुपया-पैसा चाहते हैं और जिनके पास पेट भरने का पैसा नहीं है, उसे भी रुपया-पैसा चाहिए। उनमें से वहुतों की मांग में सिंदूर है। कुछ ऐसी भी हैं जिनकी मांग में सिंदूर नहीं है। हो सकता है वे विशाखा जैसी ही हों। नौकरी पाने से स्वावलंवी हो जाएंगी और विधवा मां, भाई और वहनों के खाने-पहनने के लिए सुविधा प्राप्त कर सकेंगी।

विशाखा को थोड़ी-वहुत शर्म का अहसास होने लगा। कोई दूसरी महिला

उसकी तरह साज-सिंगार करके नहीं आई है। वह क्यों इतना सज-संवरकर आई? कोई भी उसकी तरह गाल और मुखड़े में स्नो-क्रीम पाउडर लगाकर नहीं आई है। उसकी तरह होंठों पर किसी ने लिपस्टिक नहीं लगाया है। विशाखा की छाती अब भी धड़क रही है।

बीच-बीच में उसे मां की याद आ रही थी। उसके वास्ते मां ने अपनी सारी जिन्दगी तकलीफ में बिता दी। मां ने बहुत बार कहा था: "तू लड़की के बदले लड़का होती तो मुझे यह कष्ट नहीं झेलना पड़ता। तू लड़का होकर पैदा क्यों नहीं हुई?"

अब की विशाखा मां को दिखा देगी कि लड़की होकर पैदा होने के बावजूद वह लड़के का काम कर रही है। वह लड़की होकर पैदा हुई है, इसके लिए मां को कोई दुख नहीं होगा। लड़के की तरह ही वह मां का सारा दुख दूर कर देगी। लड़का होने से वह मां का जो उपकार कर पाती, लड़की होने के बावजूद वह मां का वही उपकार करेगी।

"मिसेज कनक प्रभा सरकार—"

अब इंटरव्यू शुरू हुआ। उपस्थित महिलाओं में से एक उठकर अन्दर गई। बीसेक मिनट के बाद वह निकलकर बाहर चली गई।

"मिस शिप्रा घोष—"

उपस्थित महिलाओं में से एक दूसरी महिला अन्दर गई। उसका इंटरव्यू एक घंटे तक चलता रहा। कमरे से निकल वह भी बिना किसी से कुछ बोले बाहर चली गई। सभी महिलाओं के लिए एक-एक मर्द बाहर इन्तज़ार में खड़ा था। महिलाओं के निकलते ही वे आगे बढ़कर उन्हें लेकर चले जाते थे।

"मिसेज सुदीप्ता सान्याल—"

अबकी भी एक महिला उठकर अन्दर गई। कुछ देर बाद निश्चित समय पर लौटकर वह अपने पुरुष-साथी के साथ बातचीत करती हुई नीचे की सीढ़ियां उतर कहीं चली गई।

"मिस विशाखा गांगुली—मिस विशाखा गांगुली—"

उस समय सभी महिलाएं जा चुकी थीं। केवल वही बुलाहट की प्रतीक्षा कर रही थी। वह अपने स्थान से उठकर अंदर गई। दो-तीन सज्जन बैठे हुए थे। विशाखा ने कमरे के अंदर जाकर उन लोगों को नमस्कार किया।

एक व्यक्ति ने सामने की ओर बैठने का उसे इंगित किया।

"बैठिए—"

"आपकी गृहस्थी में और कौन-कौन हैं?"

विशाखा ने कहा, "एक विधवा मां के अतिरिक्त मेरा अपना कोई नहीं है।"

"चाचा, ताऊ, चचेरा भाई-बहन कोई है?"

विशाखा बोली, "मेरे एक चाचा हैं। लेकिन वे हमारी देखरेख नहीं करते। एक चचेरी बहन मेरी उम्र के बराबर की है। बचपन में मैं अपनी मां के साथ चाचा के पास ही रहती थी लेकिन अब नहीं रहती हूं।"

"तो फिर आप लोग अभी कहां रहती हैं?"

विशाखा ने कहा, "हम लोग बेहापोता में रहती हैं।"

"वह जगह कहां है ?"

"हावड़ा स्टेशन से ट्रेन पकड़कर जाना पड़ता है। हावड़ा से खड़गपुर की ओर डेढ़-दो घंटे का रास्ता है।"

उस सज्जन ने पूछा, "वहां आप लोगों का निजी मकान है ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, एक भले आदमी ने मुझे और मेरी मां को अपने मकान में दया करके रुकने की जगह दी है।"

"उनसे आप लोगों का कौन-सा रिश्ता है ?"

विशाखा ने कहा, "कुछ भी नहीं।"

"कोई रिश्ता न रहने पर भी उन्होंने आप लोगों को अपने मकान में रहने की जगह क्यों दी है ?"

विशाखा ने कहा "दुनिया में अब भी बहुत सारे अच्छे आदमी हैं। वे भी उसी किस्म के एक भले आदमी हैं। हम लोगों का दुख-कष्ट देखकर उन्होंने अपने मकान में रहने दिया है।"

"इसके लिए आप लोगों को कोई खर्च देना पड़ता है ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं।"

"तो फिर उनका कौन-सा स्वार्थ है ?"

विशाखा ने कहा, "वे एक निःस्वार्थ व्यक्ति हैं।"

"वे क्या करते हैं ?"

विशाखा ने कहा, "वे एक बैंक में मुलाजिम हैं।"

"उनकी गृहस्थी में कौन-कौन हैं ?"

"मेरी जैसी एक विधवा मां के अलावा उनका और कोई अपना नहीं है। वे खर्च के लिए रुपये नहीं लेते हैं इसलिए हमें शर्म का अहसास होता है। मैं ज्यादा दिनों तक उनके सिर का बोझ बनकर रहना नहीं चाहती। इसलिए यह नौकरी मिल जाए तो मेरा बड़ा ही उपकार होगा। चाहे जैसा भी काम हो, जैसी भी नौकरी हो, जो भी वेतन हो, मेरा काम चल जाएगा।"

"आप जिसके घर में रहती हैं, जो कि बैंक में नौकरी करते हैं, उनका नाम क्या है ?"

विशाखा ने कहा, "श्री संदीप लाहिड़ी।"

उसके बाद उन लोगों ने और कई सवाल किए। आवेदन पत्र में सारा कुछ लिखा हुआ था। फिर भी उन्होंने कई सवाल किए। पूछा, "आपने शादी नहीं की है ?"

विशाखा इसका क्या उत्तर दे ? कहना होगा तो उसे शादी के संबंध में पूरा इतिहास बताना होगा। यह सब बात इन लोगों से कहना निरर्थक है।

सिर्फ इतना ही कहा, "मेरी मां बहुत गरीब है और पिताजी भी जिन्दा नहीं हैं, इसलिए शादी नहीं हुई है।"

इसके बाद उन लोगों ने कहा, "ठीक है, आप जाइए। बाद में आपको पत्र भेजकर सूचना दी जाएगी।"

विशाखा उठकर खड़ी हुई, दुबारा उन्हें नमस्कार किया और बाहर निकल आई। बाहर निकलने पर देखा, घड़ी में सिर्फ बारह ही बज रहे हैं। दूसरी जो

सब महिलाएं इंटरव्यू देने आई थीं, वे बहुत पहले ही अपने-अपने पुरुष-साथी के साथ जा चुकी हैं।

अब विशाखा क्या करे? एक बजने में तो अभी और एक घंटा बाकी है। इतना वक्त वह कैसे गुजारेगी? संदीप से एक बजे आने को कहा था। तभी उसे टिफिन की छुट्टी मिलती है। सड़क पर अकेले खड़ा रहना भी असोभनीय जैसा लगता है। सभी के कुतूहल की पात्री होना बड़ा ही बुरा है। बेहतर यही है कि इतना वक्त किसी चायघर में बिता दिया जाए। उसके पास तो संदीप के द्वारा दिए गए बहुत सारे रुपये हैं। लिहाजा उसके लिए चिन्ता की कौन-सी बात है?

विशाखा फुटपाथ पकड़ एक बढ़िया चायघर की तलाश में सीधे आगे की ओर जाने लगी। एक दिन विशाखा इसी शहर में कार पर बैठकर सैर-सपाटा करती थी। और आज उसे दूसरों लोगों की तरह पैदल चलना पड़ रहा है।

एक रेस्तरां मिल गया। उस समय दफ्तर-मुहल्ले के लोगों की भीड़-भाड़ शुरू नहीं हुई थी। विशाखा उसी के अन्दर तीन तरफ से ढंके और एक तरफ पर्दा टंगे केबिन के अन्दर जाकर बैठ गई।

होटल के छोकरे ने आकर पूछा, "क्या चाहिए?"

विशाखा यहां खाने के लिए नहीं, वक्त गुजारने के लिए आई है, यह बात तो उससे कही नहीं जा सकती। इसलिए पूछा, "क्या-क्या है?"

"सब कुछ मिल जाएगा। कॉफी, चाय, आमलेट, समोसा, मोगलाई पराठे, चॉप, कटलेट, चिकेन फ्राइ, तंदूरी चिकेन, फिश-फिंगर..."

विशाखा ने इसके बाद सुनना नहीं चाहा। बोली, "मुझे कोई हड़बड़ी नहीं है, चिकेन फ्राइ और चाय ले आओ।"

छोकरा ऑर्डर लेकर चला गया। विशाखा ने सोचा, यह आदमी खाने की सामग्री लाने में जितनी देर करे उतना ही अच्छा। दरअसल वह खाने नहीं, वक्त गुजारने आई है। उसे मां की याद आने लगी। मां, हो सकता है, अभी बेड़ापोता के घर में बैठकर बहुत ही सोच रही होगी। लड़की को नौकरी मिलने पर किसी के सिर का बोझ बनकर नहीं रहना होगा, इससे बढ़कर इज्जत की क्या बात हो सकती है? इसके सिवा आजकल तो ऐसे बहुत सारे पात्र हैं जो नौकरीपेशा लड़की से शादी करना चाहते हैं। आजकल अकेले किसी के उपार्जन से गृहस्थी नहीं चलती। मां ने संभवतः यह सब सोचकर चरम दुख के बीच प्रकाश की एक झलक देखी है।

थोड़ी देर बाद छोकरा चिकेन फ्राइ दे गया और उसके साथ छुरी और कांटा।

वक्त गुजारने के लिए आहिस्ता-आहिस्ता खाना होगा। अभी हाथ में काफी वक्त है। जल्दी खाना खत्म हो जाए तो संदीप के लिए उसी सड़क के फुटपाथ पर जाकर इन्तजार करना होगा। उसका खाना खत्म हो जाएगा तो ये लोग उसे एक मिनट भी यहां बैठने नहीं देंगे। तब दूसरे ग्राहकों के लिए उसे केबिन खाली कर देना पड़ेगा। विशाखा ने दुबारा घड़ी की ओर देखा।

वक्त जैसे टलने का नाम ही नहीं ले रहा। वक्त सहसा इतनी धीमी गति से आगे बढ़ रहा है?

घड़ी में जब पौने एक बज रहा था, विशाखा खाना खाकर उठी। बिल का पैसा चुकाकर सड़क पर आई। तब सड़क पर लोगों की खासी अच्छी भीड़ हो गई थी। बहुत सारे दफ्तरों में तब टिफिन होना शुरू हो चुका था।

गली के पार सदर रास्ते पर गाड़ियों की भीड़ है। फुटपाथ पर भी काफी लोगों का चलना-फिरना शुरू हो गया है।

अचानक वह चौंक उठी।

एक किनारे से किसी की आवाज़ आई, "आप मिस विशाखा गांगुली हैं न ?"

विशाखा ने उस ओर देखा। लेकिन उस आदमी को पहचान नहीं सकी।

आदमी बोला, "मुझे आप पहचान नहीं सकीं ?"

विशाखा असमंजस में पड़ गई, "मैं तो आपको ठीक..."

"आप आइडियल फूड प्रोडक्ट्स में इंटरव्यू देने गई थीं न ? अब पहचाना ?"

विशाखा को तो भी उस आदमी का चेहरा पहचाना जैसा नहीं लगा।

"आपका इंटरव्यू तो बारह बजे ही हो चुका है। इतनी देर तक क्या कर रही थीं ? आप इतनी देर तक कहां थीं ?"

विशाखा बोली, "मैं एक आदमी की प्रतीक्षा कर रही थी।"

आदमी बोला, "आपको तलाशने संदीप लाहिड़ी हमारे दफ्तर में आए थे। हमने बताया कि मिस गांगुली बारह बजे ही घर चली गई हैं।"

"वे तो दोपहर एक बजे आने वाले थे। मैं वक्त गुज़ारने के लिए चाय की दुकान में चली गई थी। वे इतने पहले आ गए थे ?"

उसके बाद ज़रा रुककर विशाखा ने पूछा, "वे कहां हैं ?"

आदमी बोला, "यह तो उन्होंने बताया नहीं। लगता है, आपकी तलाश में वे बेड़ापोता चले गए।"

विशाखा भारी मुसीबत में फंस गई। फिर क्या संदीप ने उसके लिए आधे दिन की छुट्टी ले ली है ? यह हो सकता है। ऐसा होगा, विशाखा ने यह नहीं सोचा था। अगर यह बात मालूम होती तो इसी सड़क पर वह संदीप का इंतज़ार करती।

आदमी बोला, "अभी आपको किस ओर जाना है ?"

विशाखा बोली, "कहां जाऊं, यही सोच रही हूं—"

आदमी बोला, "आप अगर कहीं जाना चाहें तो मैं आपको अपनी गाड़ी पहुचा दे सकता हूं।"

विशाखा तय नहीं कर सकी कि वह कहां जाए। तो क्या संदीप अपने वापस चला गया ? या फिर आधे दिन की छुट्टी लेकर विशाखा को न प बेड़ापोता ही वापस चला गया ?

विशाखा बोली, "आप अगर मुझे श्याम बाज़ार के नेशनल बैंक के पास प दें तो मेरा बड़ा ही उपकार हो।"

आदमी बोला, "आप इतनी कुंठित क्यों हो रही हैं। चलिए, आपको पहुंचा आता हूं।"

यह कहकर पार्किंग की जगह से गाड़ी लाकर विशाखा को अपनी ब बिठा लिया। गाड़ी श्याम बाज़ार की तरफ जाने लगी। डलहौजी स्क्व श्याम बाज़ार पांचवें मोड़ पर अवस्थित है। फासला कोई कम नहीं है।

आदमी बोला, "आजकल कलकत्ता की ऐसी हालत हो गई है कि पैदल चलना तो दूर की बात, गाड़ी चलाते हुए जाना भी मुश्किल है। यहां के किसी आदमी में 'रोड-सेन्स' नही है, 'सिविक सेन्स' नही है। सबसे बढ़कर 'मिनेस' हैं यहां की मिनि बसें। ये लोग किस तरह गाड़ियां चला रहे हैं, देख रही हैं न?"

एक मिनि बस चलते-चलते उस आदमी की कार से बिलकुल टकराने जैसी स्थिति में आ गई थी। आदमी ने एक झटके में खुद को संभाल लिया।

विशाखा बोली, "आपको मैंने बहुत तकलीफ दी।"

आदमी बोला, "इस मुसीबत से आपका उद्धार कर लूं। तभी समझूंगा मेरा कष्ट करना सार्थक है वरना···"

आदमी सड़क पर आंख गड़ाए चुपचाप गाड़ी चलाने लगा।

विशाखा ने थोड़ी देर के बाद कहा, "अच्छा एक बात पूछूं?"

"कहिए, क्या?"

"मुझे यह नौकरी मिलेगी?"

आदमी बोला, "देखिए इस नौकरी में जो असली क्वालिफिकेशन है वह है गुडलुकिंग एपियरेंस। आज जो-जो इंटरव्यू देने आई थी, उनमें से केवल आपमें वह क्वालिफिकेशन है। आपकी तुलना मे वे सभी ज़ीरो है। इसके अलावा आपकी शिक्षा-दीक्षा लॉरेट में हुई है—"

विशाखा बोली, "आपका बहुत-बहुत धन्यवाद! आप जानते हैं, हम लोगों की आर्थिक अवस्था बहुत ही खराब है। खराब रहने के कारण ही हम दूसरे के सिर का बोझ बनी हुई हैं। दूसरे के सिर का बोझ बने रहने से बढकर दुनिया में कोई अपमान नही हो सकता है—

आदमी बोला, "यह तो बिलकुल सही बात।"

विशाखा बोली, "मुझे अगर यह नौकरी मिल जाएगी तो मैं हमेशा आप लोगों की आभारी रहूंगी—"

आदमी बोला, "मेरी सामर्थ्य ही कितनी है। सब कुछ तो ऊपरवाले पर निर्भर करता है। उनसे कहिए, उनके प्रति आभारी रहिए। करने का होगा तो वे ही सब कुछ करेंगे। मैं कोई नहीं हूं—"

विशाखा बोली, "तो भी तो कोई कोई निमित्त का भागीदार होता है। आप कुछ नहीं कीजिएगा तो कोई कुछ नही करेगा—"

तब तक नेशनल बैंक के पास गाड़ी पहुंच चुकी थी।

आदमी ने बैंक के पास गाड़ी पार्क करके विशाखा से कहा, "आप बैठी रहिए, मैं मिस्टर साहिड़ी का पता लगाकर आता हूं।"

विशाखा गाड़ी के अन्दर बैठी रही। आदमी कुछ ही क्षणों के बाद लौटकर चला आया।

विशाखा ने पूछा, "क्या पता चला?"

आदमी बोला, "नहीं, मिस्टर साहिड़ी नहीं हैं। आपने जो सोचा था वही बात है। मिस्टर साहिड़ी ने 'हाफ डे' की छुट्टी ली है।"

उसके बाद गाड़ी घुमाकर पूछा, "अब कहां जाना चाहती हैं? जहा जाना चाहती हैं, वहीं चलिए।"

विशाखा बोली, "और कहां जाऊंगी ! कृपया मुझे हावड़ा स्टेशन तक पहुंचा दें।"

आदमी बोला, "चलिए। लेकिन पहले कहीं चलकर गला ज़रा तर कर लूं।"

यह कहकर आदमी विपरीत दिशा की तरफ चल दिया।

उन दिनों की बात संदीप को अब भी याद है। यह सब कितने पहले की बात है ! आज उन दिनों की हरेक छोटी-मोटी बात की याद आ रही है।

खगेन सरकार, त्रिदिव घोष, यादव भट्टाचार्य और हरेन साहा की बातें।

विशाखा जिस दिन पहले-पहल संदीप के बैंक गई थी उसी दिन से उन लोगों ने संदीप को शक की नजरों से देखना शुरू कर दिया था।

संदीप उस दिन देर से ऑफिस पहुंचा था। दसेक मिनट देर से।

परेश दा ने पूछा था, "क्या बात है, आज भी ट्रेन लेट थी क्या ?"

संदीप ने कहा था, "नहीं, ट्रेन का दोष नहीं है, आज मैं एक जगह का चक्कर लगाकर आया हूं। इसी के चलते देर हो गई।"

उसके बाद चेहरे पर संकोच लाते हुए कहा था, "आज मुझे आधे दिन की छुट्टी चाहिए परेश दा।"

"क्यों ? एकाएक छुट्टी क्यों ? एक तो सवेरे तुम दस मिनट लेटकर पहुंचे, उस पर आधे दिन की छुट्टी ? बात क्या है ?"

संदीप ने कहा था, "एक ज़रूरी काम है।"

परेश-दा ने कहा, "तो फिर कल कैंटीन में एक प्लेट मांस-करी और मोगलाई परांठे खिलाने पड़ेंगे।"

जो लोग खाना पाकर सन्तुष्ट और रुपया पाकर खुश हो जाते हैं वे सरल प्रकृति के होते हैं। दुनिया में उसके चलते मुसीबत में फंसना नहीं पड़ता। लेकिन जो लोग परमार्थ चाहते हैं ?

इस तरह के कितने आदमी होते हैं ?

संदीप जिन्दगी भर यही देखता आ रहा है कि खाना और रुपये के अतिरिक्त सौ में निन्यानवे आदमी और कुछ नहीं चाहते। उनमें से कुछेक लोगों को खाना और रुपया दोनों मिल जाते हैं। लेकिन उसके बाद ? संदीप ने वैसे लोगों का अन्त भी देखा है।

आदमी के लिए सिर्फ इसी की चाह करना कितनी गलत है, इसे संदीप से बढ़कर किसने देखा है ? जिस पेट के प्रति परेश दा में इतनी आसक्ति है वही किसी दिन विद्रोह कर बैठेगा। रुपया-पैसा, शक्ति-सामर्थ्य आदि असत्य नहीं हैं, यह बात एक बच्चा भी जानता है। लेकिन कोई यह नहीं जानता कि जो नाव उसे तीव्र गति से धारा की ओर खींचकर ले जा रहा, किसी दिन भाटे के खिंचाव के कारण उसी नाव को खींचते-ठेलते हुए उसे मृत्यु का वरण करना होगा।

ऐसा क्यों होता है ?

इसलिए कि सबके ज़बान पर एक ही बात रहती है—दो, दो, दो—

लेकिन कोई यहां यह नहीं कहता कि लो, लो, लो—

जितने दिन तक यह 'दो-दो' शब्द रहेंगे तब तक अशांति रहेगी, असंतोष रहेगा, असमानता रहेगी, अभाव रहेगा।

मगर जब कोई 'लो-लो' कहना सीख जाएगा तभी शांति आएगी, संतोष आएगा, सुख आएगा।

खैर, यह सब तो बाद की बात है, इसे पहले ही क्यों कह रहा हूं ?

याद है, उस दिन बैंक में सभी ने पूछा था, "आज तुम्हें क्या हुआ है संदीप दा ? इतने अनमने जैसे क्यों दिख रहे हो ? तबीयत खराब है क्या ?"

इस बात का जवाब देता तो फिर वही प्रसंग उठ खड़ा होता। वही हंसी-मजाक और चुहलबाजी। इसलिए बस इतना ही कहा, "आज तबीयत ठीक नहीं लग रही है—"

"तबीयत ठीक क्यों नहीं है ? उसी लड़की की बात सोचते-सोचते खराब हो गई है ?"

जिस दिन से विशाखा को उन लोगों ने देखा है उसी दिन से उसके बारे में तरह-तरह की कानाफूसी की शुरुआत हो गई है। संदीप के अलावा सबकी शादी हो चुकी है। अपवादस्वरूप एकमात्र वही है इस दफ्तर में।

वह अपने आधे दिन की छुट्टी की बाबत मालव्य से भी कह आया था।

मालव्यजी बोले थे, "ठीक है, तुम सुपरवाइजर से अपनी छुट्टी की बात जाकर कह आओ।"

"मैं कह चुका हूं—"

उसके बाद घड़ी में बारह बजते ही संदीप बैंक से निकल सीधे नेताजी सुभाष मार्ग चला गया। फिर भी उसे जाने में आधे घंटे का समय लगा।

जब भागा-भागा वहां पहुंचा तो कोई नहीं था। पहले जिन महिलाओं को जहां बैठे हुए देखा था वह कमरा खाली था। एक भी महिला वहां नहीं थी। विशाखा कहां गई ? विशाखा को तो वहां रुकने की बात थी। कहीं सड़क पर तो नहीं खड़ी है ?

आखिर में संदीप ऑफिस के अंदर घुस गया। वहां जो भी सामने मिल गया उसी से पूछा, "आज यहां जिन महिलाओं के इंटरव्यू होने की बात थी, वह इंटरव्यू क्या हो गया ?"

आदमी बोला, "हां, दोपहर बारह बजे ही हो गया है।"

संदीप ने कहा, "मिस विशाखा नामक किसी महिला का इंटरव्यू हुआ था या नहीं, यह बता सकते हैं ?"

आदमी बोला, "हां, उनका इंटरव्यू भी बारह बजे ही समाप्त हो गया है। वे जा चुकी हैं। आप उनके कौन हैं ?"

संदीप बोला, "मैं उनका कोई नहीं हूं—यदि वे लौटकर आएं तो बता दीजिएगा कि मैं उन्हें खोजने यहां आया था। कहिएगा, संदीप लाहिड़ी उन्हें खोजने आया था।"

"और कुछ कहना होगा ?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

आदमी बोला, "उनसे तो पता चला था कि वे हावड़ा लाइन में बेड़ापोता में

रहती हैं। हो सकता है वहीं चली गई हों—"

संदीप अब कुछ नहीं बोला। फटाफट सीढ़ियां उतर दो-मंज़िले से एक-मंज़िले पर चला आया। उसके बाद सड़क के फुटपाथ पर आकर इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगा। कहीं विशाखा के अस्तित्व की कोई झलक नहीं मिल रही है। कितने ही औरत-मर्द इधर से उधर जा रहे हैं। विशाखा क्या संदीप को देर करते देखकर हावड़ा स्टेशन में ट्रेन पकड़कर बेड़ापोता लौट गई? कहीं भी उसकी कोई झलक नहीं मिल रही है? क्यों वह चली गई? कहां गई?

तकरीबन आधे घंटे तक खड़े रहने पर भी विशाखा का जब कोई पता नहीं चला तो वह इस निर्णय पर पहुंचा कि वह अवश्य ही बेड़ापोता लौट गई होगी।

सामने की तरफ से हावड़ा जानेवाली एक बस आ रही थी, किसी तरह उस पर लटककर हावड़ा की तरफ जाने लगा। जैसे ही बस हावड़ा स्टेशन के पास पहुंची वह तेज़ कदमों से प्लेटफार्म की ओर भागा। संदीप ने सोचा था, विशाखा प्लेटफार्म पर कहीं न कहीं होगी।

हावड़ा स्टेशन के प्लेटफार्मों की संख्या भी कोई कम नहीं है। कितनी ही दिशाओं से कितनी ट्रेनें आ रही हैं और कितनी ही ट्रेनें हावड़ा से कितनी ही दिशाओं की तरफ जा रही हैं। सभी प्लेटफार्मों में खोजने में कोई कम वक्त नहीं लगता। उस पर कितनी ही ट्रेनों में कितनी महिलाएं बैठी हुई हैं। सबके चेहरे देखकर संदीप पहचानने की कोशिश करने लगा। कोई पीछे से विशाखा जैसी लगती है तो सामने जाकर देखता है और उसकी गलतफहमी दूर हो जाती है। इसके अलावा चुन-चुनकर औरतों के चेहरे की ओर देखने की उसकी चेष्टा बहुतों के मन में संदेह जगा सकती है। अगर कोई कह बैठे, "औरतों की तरफ इतना क्यों निहार रहे हैं जनाब?" तो वह क्या उत्तर देगा?

तब तक काफी देर हो चुकी थी। बेड़ापोता जाने के लिए उस समय एक लोकल ट्रेन खुलनेवाली थी। संदीप उसी चलती ट्रेन के आखिरी छोर के एक डिब्बे में झट से चढ़ गया। उसके बाद हर स्टेशन पर जब ट्रेन रुकती तो संदीप सोचता, ट्रेन खुलने में इतनी देर क्यों हो रही है? और-और दिनों की अपेक्षा आज ट्रेन बहुत धीमी गति से चल रही है। उसे लगा कि बैंक के कर्मचारियों की तरह इंजिन ड्राइवर भी अपने काम में लापरवाही बरत रहे हैं। और-और दिन उसे ऐसा नहीं लगता था।

गाड़ी जैसे ही स्टेशन पर रुकी संदीप नीचे उतर गया और मुकम्मल रास्ते को एक तरह से दौड़ते-दौड़ते तय कर जब वह घर पहुंचा तो मां और विशाखा ने एक ही सवाल किया, "विशाखा कहां गई? वह आई क्यों नहीं?"

संदीप ने जब सुना कि विशाखा घर नहीं पहुंची तो वह अवाक् हो गया। वह कहां चली गई? ऑफिस में नहीं थी, हावड़ा स्टेशन पर नहीं, घर में नहीं तो फिर गई कहां?

संदीप ने कहा, "मैंने तो विशाखा से कह दिया था कि आधे दिन की छुट्टी लेकर उससे मुलाकात करूंगा और वह मेरे इन्तज़ार में बैठी रहे। पर जब मैं उसके दफ्तर में पहुंचा तो पता चला कि विशाखा बहुत पहले ही वहां से निकल चुकी है—"

मौसीजी बोलीं, "हो सकता है इसके बादवाली ट्रेन मे आए—"

आखिरी ट्रेन भी साढ़े दस बजे आकर चली गई। रफ्ता-रफ्ता ट्रेन की आवाज भी हवा में खो गई। संदीप, मा और मौसीजी रास्ते पर आ स्टेशन की राह की तरफ निहारते रहे। लेकिन नहीं, विशाखा आखिरी ट्रेन मे भी नहीं आई।

अन्ततः किसी ने खाना नहीं खाया। कमला की मा खाना खाकर अपने घर चली गई। मा बोली, "तुम कब तक बैठी रहोगी बेटी। तुम अपने घर चली जाओ, कल सवेरे ही तुम्हें फिर काम पर आना है।"

संदीप से मा ने कहा, "तू खा ले मुन्ना। तड़के ही खाना खाकर ऑफिस गया था। तू खाना खा ले। हम लोग बाद मे खा लेंगे।"

संदीप ने कहा, "नहीं, मैं अभी खाना नहीं खाऊंगा, मुझे भूख नहीं है। तुम लोग व्यर्थ ही बिना खाए क्यो रहोगी ? तुम लोग खा लो—"

अन्ततः किसी ने खाना नहीं खाया उस दिन। पकाया हुआ चावल पड़ा ही रह गया। धीरे-धीरे रात के बारह बज गए, उसके बाद एक, फिर दो, उसके बाद तीन। संदीप, मा, मौसीजी के मन मे एक ही सवाल घुमड़ता रहा—विशाखा कहा गई ? कहा गई विशाखा ?

उस दिन बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन मे एक और अनहोनी घटना घट गई।

आदमी का जीवन हमेशा एक ही स्वर-लय और ताल पर नहीं चलता, यह बात सभी जानते है। अनाड़ी गायक हो तो वह बीच-बीच मे बेसुरा नहीं हो जाएगा, ऐसी बात नहीं। लेकिन उसके साथ बेताल हो जाने की दुर्घटना भी घट जाती है। इतिहास मे इसकी बहुत सारी नजीरें हैं। लेकिन यह कहकर अभी लाभ क्या ?

किसी दिन दादी मा को पता चल जाता और किसी दिन पता नहीं चलता था। सुधा, मुन्ना बाबू और मेम बहू के सोने के कमरे के आसपास ही सोती। जिससे कि पुकारते ही उसका जवाब मिल सके। वह यही जानती थी कि रात में उनके वापस आने के बाद उसे उठकर दोनों के हुक्म की तामील करनी होगी। आमतौर पर उनके अंदर ठीक से खड़े होने की ताकत भी नहीं रहती। किसी-किसी दिन मेम बहू को धर-पकड़कर सुलाना पड़ता। और उस हालत में मेम बहू यदि कोई गाली देती तो उसे मुंह बंदकर बरदाश्त करना पड़ता। कहा जा सकता है इसी के लिए उसे तनख्वाह मिलती है। मेम बहू अलबत्ता जो गाली-गलौज बकती है, वह अंग्रेजी भाषा में। सुख की बात यही है कि वह सो सब समझ नहीं पाती है। उसकी बातों का अर्थ समझ पाती तो हो सकता था वह नौकरी छोड़ अपने देस के मकान में चली जाती। फिर वह यह नौकरी नहीं करती।

दिन के वक्त उसको किसी असुविधा का सामना नहीं करना पड़ता। जो भी अशांति रहती वह रात के वक्त। रात नौ बजे के बाद वे जो घर से निकलते तो आधी रात बीतने के बाद ही लौटते।

एक तरह से उसी वक्त से सुधा के काम की शुरुआत होती। तब किसी-किसी दिन मेम बहू के बदन पर साड़ी भी नहीं रहती। सिर्फ शमीज जैसी कोई चीज

पहने तीहर जो वदन से अटकी रहती। उस समय मेम साहव को खड़ी रखना क्या आसान काम था ? एक तो नशे में चूर उस पर मोटी औरत।

मेम साहव बोली, "नाइटी—नाइटी—गिव मि नाइटी—"

सोने के वक्त नाइटी पहनना मेमसाहव की आदत थी। उस हालत में मेम-साहव की देह से शमीज़ उतार नाइटी पहनाना क्या आसान काम है ! कुछ हो आखिर है तो औरत ही। थोड़ी-सी हया-शरम तो होनी ही चाहिए। सुधा ने अपनी ज़िन्दगी में ऐसी वेहया औरत कभी नहीं देखी है। उस पतली शमीज़ को उतारने में ज़रा देर हो जाती तो तहलका मच जाता। मेम साहव चिल्लाकर कहती : "ऐ ब्लडि विच—"

भाग्यवश सुधा अंग्रेजी नहीं समझती, यही खैरियत है। एक दिन सुधा ने बिन्दु से पूछा था, "वल्डी विच का अर्थ क्या होता है ?"

विन्दु ही क्या अंग्रेजी जानती है कि इन शब्दों का अर्थ वता दे ! अगर जानती होती तो वे क्या धावधाड़ा गोविंदपुर छोड़कर मालकिन की झिड़कियां सुनने कलकत्ता में नौकरी करने आतीं।

आजीवन-काल से ऐसा ही चलता रहा है और आजीवन-काल तक ऐसा ही चलता रहेगा। वरना सिर के ऊपर रहनेवाले वे उपन्यास-सम्राट किनके वारे में अनादि अनंतकाल से अपना महान उपन्यास लिखेंगे ? वे ही तो इस संदीप, विशाखा, मुक्तिपद, योगमाया, सौम्यपद, रीटा, तपेश गांगुली, मल्लिकजी, विन्दु, कालीदासी, फुल्लरा, गोपाल आदि के सृष्टिकर्त्ता हैं। उनकी उंगली के इशारे पर ही वे सभी लोग हंस रहे हैं, रो रहे हैं, रुपये-पैसे के पीछे भाग रहे हैं और धीरे-धीरे महाप्रस्थान की ओर वढ़ते जा रहे हैं।

और यह जो मैं दिन रात जगकर यह उपन्यास 'नरदेह' लिख रहा हूं, जिसे आप तकलीफ उठाकर पढ़ रहे हैं—वह भी तो उसी उपन्यास-सम्राट की रचना है। यहां उनके निर्देश पर ही हम लोगों में से किसी को मरना पड़ता है और किसी को जीना पड़ता है। किसी को संघर्ष कर सफलता की चोटी पर चढ़ना पड़ता है और किसी को लड़ते-लड़ते नाकामयावी के खड्ड में गिरकर विलीन हो जाना पड़ता है। किसी दुनियावी अदालत में उनके विरुद्ध कोई अनुरोध, अभियोग या अनुयोग करने की प्रणाली आज तक प्रचलित नहीं हुई है और न ही उनके खिलाफ अपील करने की किसी उच्चतम न्यायालय की आज तक स्थापना हुई है।

यही वजह है कि इस मुखर्जी वावुओं के घर में मेम साहव वहू के आने के वाद से जो एक अत्यंत अस्वस्तिकर परिस्थिति पैदा हुई, यह भी उन्हीं की करतूत है।

उस दिन मुक्तिपद जैसे ही घर में आया दादी मां ने इसी वात का जिक्र किया।

मुक्तिपद ने आते ही पूछा था, "तुम कैसी हो मां ?"

दादी मां वेटे पर वहुत दिनों से खफा थीं ही। वोलीं, "तू अपनी वता। तूने क्या हमें त्याग दिया है ?"

मुक्तिपद वोले, "तुम यह क्या कह रही हो मां ?"

दादी मां वोलीं, "हम कितनी तकलीफ में है इसके वारे में पता लगाना भी तुझे याद नहीं रहता ? मानती हूं, तुम्हारी पत्नी ने हमें त्याग दिया है। उस

हरामजादी ने मेरी बीमारी के दौरान इस घर में एक बार भी कदम नहीं रखा। सो वह तो पराये घर की लड़की है, इस मकान में कदम नहीं रखा तो मेरी बला से। पर तू ? तू तो मेरी कोख से पैदा हुआ है, दस महीना दस दिन तक तुझे पेट में रखा था, लेकिन तूने भी इस तरह की नमक हरामी की ? मैंने कौन-सा गुनाह किया है, बता सकता है ?"

यह शिकायत सुन मुक्तिपद जैसे आकाश से गिर पड़े। बोले, "तुम मुझसे यह क्या कह रही हो ? मैं तो कुछ दिनों के लिए हैदराबाद चला गया था। जाने के पहले तुमसे कह गया था कि मैं हैदराबाद जा रहा हूं। और इसी बीच तुम यह बात भूल गईं ?"

दादी मां बोली, "अरे मेरी जैसी हालत होती तो तेरा भी दिमाग खराब हो गया होता। अब तक जो पागल नहीं हुई हूं, यह मेरे गुरुदेव की दया है। पर मैं अब मैं एक क्षण भी ठहर नहीं सकती। जैसे ही तू मुझे काशी भेज दे, मैं वहीं मरना चाहती हूं। यहां रहने से मुझे मरने पर भी शांति नहीं मिलेगी—"

मुक्तिपद बोले, "बात क्या है, यही बताओ न। तुम्हें रुपये की जरूरत हो तो बताओ। मैं तुम्हें कुछ रुपये भेज दूंगा।"

दादी मां बोली, "यह रुपया ही मेरे लिए काल हो गया है। अब समझ में आ रहा है, जिनके पास रुपये नहीं हैं वे ही सुखी हैं। रुपया न रहता तो तेरी पत्नी तुझे मुझसे छीन नहीं पाती और मुन्ना भी विलायत से इस चुड़ैल को ब्याह कर नहीं ला पाता—"

"क्यों ? सौम्य ने तुम्हारे साथ क्या बर्ताव किया ?"

"मुन्ना ने क्या नहीं किया है, मुझसे यही पूछो। मुन्ना और उसकी विलायती पत्नी ने मेरी पसली ढीली कर दी—"

मुक्तिपद ने कहा, "मुन्ना क्या तुम्हें सता रहा है ?"

"ऐसा-वैसा सता रहा है ' वरना उस मेम चुड़ैल के आते ही मेरे लिए सोना हराम क्यों हो जाता। हर वक्त डर बना रहता है कि कहीं किसी दिन पुलिस की चपेट में फंसकर मान-सम्मान न खोना पड़े।"

"क्यों, थाना-पुलिस के चक्कर में फंसने क्यों जाओगी ?"

दादी मां ने कहा, "घर में अगर खून-खराबा हो जाए तो पुलिस क्या छोड़ देगी ?"

"क्या ? कौन किसका खून कर डालेगा ? मैं तो कुछ नहीं समझ पा रहा हूं। सौम्य खून कर डालेगा ?"

दादी मां बोली, "सौम्य क्यों खून करेगा ? वह विलायती बहू ही करेगी। उस विलायती बहू ने आज मुन्ना की हत्या करने की चेष्टा की थी। आखिर में किसी दिन वही मेरा ही खून न कर डाले।"

मुक्तिपद ने उत्तेजित होकर कहा, "इसका मतलब ? सौम्य की पत्नी ने सौम्य की हत्या करने की कोशिश की थी ? यह क्या कह रही हो तुम !"

दादी मां ने कहा, "खून करने की कोशिश की है या नहीं, यह बात तू मुन्ना से ही पूछकर देख ले—"

उसके बाद दादी मां ने बिन्दु से कहा, "अरी बिंदु, सुधा से जाकर कह आ कि

वह मुन्ना को बुलाकर ले आए।"

विन्दु ने वदस्तूर सुधा के पास खवर पहुंचाई। सुधा ने आकर बताया, "मुन्ना वावू अभी सो रहे हैं।"

मुक्तिपद हैरत में आ गए, "इस शाम के वक्त सो क्यों रहा है?"

दादी मां ने सुधा से कहा, "नींद से जगाकर बुला ला। जाकर कह, मंझले वावू आए हैं, वे मुन्ना वावू से मिलना चाहते हैं।"

सुधा दुवारा चली गई। थोड़ी देर वाद वह फिर लौटकर चली आई। वोली, "मेम बहूरानी ने जगाने से मना किया—"

दादी मां ने कहा, "तूने वताया कि मंझले वावू आए हुए हैं?"

"हां, बताया था। फिर भी वोलीं, अभी नहीं जाएंगे, मुन्ना वावू सोए हुए हैं—"

मुक्तिपद को अव गुस्सा आ गया। वोले, "इस उम्र में सौम्य शाम के वक्त सोया हुआ है? सौम्य के कमरे के सामने जाकर पुकारने लगे, "सौम्य, सौम्य—"

अन्दर से कोई आवाज़ नहीं आती है। कमरे का दरवाज़ा खुला हुआ है, परदा झूल रहा है।

मुक्तिपद ने फिर पुकारा, "सौम्य, सौम्य—"

"हूज दैट? कौन है?"

औरताना गले की आवाज़। सौम्य की पत्नी की आवाज़।

मुक्तिपद वोले, "मैं मुक्तिपद हूं—सौम्य का अंकल, सौम्य का चाचा। उसे एक वार भेज दो।"

औरताना गले की आवाज़ आई, "वह अभी सोया हुआ है, अभी जा नहीं सकेगा—"

मुक्तिपद ने तेज़ आवाज़ में कहा, "हां, उसे आना पड़ेगा। उसे तुम भेज दो।"

अव परदा हटा गाउन पहने ही मेम वाहर निकल आई। वोली, "क्यों डिस्टर्ब कर रहे हो? हि इज एस्लीप।"

मुक्तिपद को लगा कि दिन के वक्त भी मेम शराव पिए हुए है। वोले, "चाहे सोया हुआ ही क्यों न रहे, उसे तुम जगाकर भेज दो। मुझे ज़रूरी काम है।"

मेम वोली, "चाहे ज़रूरी ही क्यों न रहे, मैं अभी उसे नहीं पुकारूंगी।"

मुक्तिपद के शरीर में भी नीला रक्त है। वे चिल्ला उठे, "नो, यू मस्ट। तुम्हें पुकारना ही होगा। यह मेरा ऑर्डर है।"

इधर शोरगुल से सौम्य की नींद टूट गई है। चाचा के गले की आवाज़ वह पहचानता है। वह हड़वड़ाकर जैसे ही वाहर आया, मुक्तिपद वोले, "इस शाम के वक्त तुम सो रहे हो? आओ मेरे साथ, दादी मां के कमरे में आओ।"

सौम्य ने जाने के लिए कदम उठाया था। लेकिन उसकी मेम पत्नी ने उसे रोक लिया। वोली, "नहीं, तुम्हें नहीं जाना है। यू वोन्ट—"

पर मुक्तिपद के सामने अपनी मेम पत्नी की वात मानने की उसे हिम्मत नहीं है।

वह वोला, "नहीं, मैं जाऊंगा।"

रीटा बोली, "नो, यू वोन्ट—"

मुक्तिपद के पीछे-पीछे उसने जैसे ही जाना शुरू किया कि रीटा सामने आकर खड़ी हो गई। बोली, "तुम नही जा सकते।"

सौम्य तनकर खड़ा हो गया। बोला, "तुम मुझे बाधा देनेवाली कौन होती हो? मैं जाऊंगा ही—"

यह कहकर रीटा को धक्का देकर हटा दिया और चाचा के पीछे-पीछे जाने लगा। उसके बाद दादी मां के कमरे मे ज्यों ही पहुंचा, उन्होंने कहा, "तू शाम के वक्त क्यों सोया हुआ था? तुझे बुलाने के लिए जाने पर तेरी पत्नी तुझे भेजती क्यों नही है?"

सौम्य अब बोल ही क्या सकता है!

दादी मा ने कहा, "सुधा बता रही थी कि तुम दोनो रात-भर झगड़ते रहते हो।" फिर भी उसकी जबान से एक भी शब्द नही निकला। मुक्तिपद ने कहा, "तुम लोग किस बात के लिए झगड़ते हो?" फिर भी सौम्य चुप्पी साधे रहा। मुक्तिपद ने कहा, "क्या बात है? मेरी बात का जवाब क्यों नही दे रहे हो?"

दादी मा ने कहा, "तू गूगा हो गया है क्या? जवाब दे।"

सौम्य की नीद का खुमार शायद तब भी दूर नही हुआ था। बोला, "मैं क्या कहूं?"

मुक्तिपद ने कहा, "यही बताओ कि रात-भर झगड़ा क्यो होता रहता है? तुमने तो खुद देख-सुनकर, पसद करने के बाद शादी की थी। तो फिर तुम दोनो मे इतना झगड़ा क्यों होता है?"

सौम्य ने कहा, "वह सिर्फ रुपये ही मागती रहती है।"

"रुपया?"

सौम्य ने कहा, "हा, केवल रुपया ही। रुपया और शराब के सिवा उसकी जबान से और कोई शब्द नही निकलता।"

दादी मा ने पूछा, "रुपया क्यो चाहती है? तेरी पत्नी को खाना-पीना, कपडा-लत्ता-लिबास वगैरह सारी चीजें मिल रही हैं। फिर रुपया किसलिए चाहिए? शराब पीने के लिए? सो वह भी तो तू दे रहा है। तो फिर किसलिए रुपये चाहिए?"

सौम्य ने कहा, "शादी के वक्त मैंने वादा किया था कि उसकी मा को हर महीने दो सौ पौंड भेजता रहूंगा। बहुत दिनो से भेज नही पा रहा हू—"

मुक्तिपद ने कहा, "यह क्यों नही बताया कि हम लोगो की फैक्टरी बन्द है, ऐसी हालत मे रुपया कहा से भेजूं? फैक्टरी बन्द रहने के कारण हमें पैसे की तंगी का सामना करना पड़ रहा है।"

"कहा था, लेकिन सुनने को तैयार नही है। कहती है: तुम लोगो की फैक्टरी बन्द है तो इसके लिए मेरी मा तकलीफ क्यो उठाए? मेरी मा के पास तुम्हें रुपया भेजना ही होगा।"

मुक्तिपद ने कहा, "अगर ऐसी बात है तो तुम अपनी पत्नी को तलाक दे दो। जो औरत रात-दिन सिर्फ रुपये की ही मांग करती रहे और सताती रहे वैसी औरत पत्नी नही, जल्लाद है। तुम उसे तलाक दे दो।"

दादी मां ने कहा, "मुक्ति ठीक ही कह रहा है। जो औरत रात-दिन रुपया-रुपया करती रहे, वह जल्लाद है। तू उसे तलाक दे दे!"

सौम्य ने कहा, "मैंने उससे यह बात भी कही थी। वह कहती है, मैं उसे बीस हज़ार पौंड दूंगा, तभी वह मुझे तलाक देगी।"

मुक्तिपद तत्क्षण बोल उठे, "तो फिर यही करो। बीस हज़ार पौंड लेकर वह तुम्हें तलाक दे दे तो मैं देने को राजी हूं। तुम उसे डिवोर्स कर दो। मुझे चाहे जो भी कष्ट उठाना पड़े, चाहे जहां से भी इन्तज़ाम करना पड़े, बीस हज़ार पौंड का इन्तज़ाम कर दूंगा। फिर तो मेरी जान बच जाए। सुना है, मिस्टर अतुल चटर्जी की लड़की की अब तक शादी नहीं हुई है। उससे शादी हो जाए तो मेरी फैक्टरी भी बच जाएगी और यह बीस हज़ार पौंड की रकम भी वसूल हो जाएगी।"

दादी मां ने मुक्तिपद का समर्थन करते हुए कहा, "हां-हां, यही कर। बीस हज़ार पौंड लेकर तेरी यह मेम छोकरी यदि चली जाए तो मैं यह रकम दे दूंगी। इससे तू भी राहत की सांस ले सकेगा और हम भी ले सकेंगे। उसके बाद न होगा तो कोई अच्छी-सी लड़की देखकर तेरी शादी करा दूंगी—"

मुक्तिपद ने कहा, "क्या सोच रहे हो? ऐसा करने को राजी हो? बताओ—"

दादी मां ने कहा, "चुप क्यों है? डिवोर्स करेगा—"

सौम्य ने कहा, "ठीक है, यही करूंगा।"

दादी मां ने कहा, "बहुत ही अच्छी बात है। मरखनी गाय से सूना खटाल कहीं अच्छा। आखिर तुझे सुबुद्धि आई है, यह अच्छी बात है। मैं आज ही मल्लिक जी से कहती हूं कि वे पता लगाकर आएं कि विशाखा नामक उस लड़की की शादी हुई है या नहीं।"

उसी समय फोन आया। दादी मां ने कहा, "यहां अभी मुझे कौन टेलीफोन करेगा, यह ज़रूर ही मुक्तिपद का टेलीफोन होगा।"

दादी मां ने बिन्दु को बुलाकर कहा, "बिन्दु, मुनीमजी को जाकर बुला ला। मुक्ति के रूबरू ही बातें हो जाएं। वे पता लगाकर आएं कि रसेल स्ट्रीट की उस गांगुली घर की लड़की की अब तक शादी हुई या नहीं। लगता है, अभी मनसातल्ला लेन के चाचा के घर पर ही होगी—और जाएगी ही कहां?"

पुरानी दुनिया की शक्ल में तब काफी कुछ बदलाव आ गया था। कहा जा सकता है कि दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से ही ज़्यादा बदलाव आया था। जो सब देश विशेष उन्नत नहीं थे, उन्हीं में यह बदलाव ज्यादा दिखाई पड़ता है। शुरू में अमरीका के दिमाग में यह दुश्चिन्ता पैदा हुई कि इस विश्वव्यापी युद्ध के थमने के बाद 'ट्रेड-डिप्रेशन' का बोझा क्या पहले की ही तरह अबकी भी ज़्यादा वज़नदार हो जाएगा? फिर से क्या सारी वस्तुओं की कीमत घटकर आदमी की क्रय-शक्ति में ह्रास आ जाएगा? फिर क्या लाखों आदमी उस बार की तरह ही बेरोज़गार हो जाएंगे? अबकी भी क्या उस बार की तरह ही सारे बैंक फेल हो जाएंगे? अबकी भी क्या बाज़ार में चीज़ें ठसाठस भर जाएंगी और उनके खरीददार नहीं मिलेंगे?

यह तो बड़ी ही भयंकर स्थिति होगी।

अबकी, इस महायुद्ध के बाद, जिससे कि उस बार की घटना की पुनरावृत्ति न हो, इस संबंध में एक गोरांग व्यक्ति के दिमाग में एक योजना ने जन्म लिया। उनके नाम पर ही इस योजना का नाम रखा गया—'मार्शल एड प्लान'। इस योजना के तहत तमाम अविकसित देशों को करोड़ो रुपये का ऋण दिया जाने लगा। उस ऋण को तुम्हें अभी ही चुकाना है, इसका कोई मानी नहीं। बीस या पच्चीस-तीस सालों में किश्तों में चुका सकते हो। अभी तुम लोग रुपये लो। कर्ज लेकर हम लोगों के देश की चीज़ों की खरीददारी करो। वरना हमें अपने देश में तैयार किए गए माल को समुद्र के गर्भ में फेंक देना होगा, हम लोगों के कारखानों के मालिक भी अपने-अपने दरवाज़े के पल्ले बन्द कर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे और हमारे करोड़ों श्रमिक भी इसकी वजह से बेरोज़गार हो जाएंगे।

निर्धन देश-समूह तब पश्चिम साम्राज्यवादी शक्तियों के हाथ से हाल-हाल में छुटकारा पाकर राजनीतिक तौर पर स्वाधीन हुए थे। लेकिन तब उनका खजाना खाली था। उन्होंने एक ही साथ भीख की झोली फैला दी। बोले, "दो रुपये, जितना भी दे सको, दो। पहले तो हम अपनी रोटी का जुगाड़ कर लें, बाद में तुम्हारा कर्ज वसूल करने की बात सोचेंगे। पेट भरेगा तो हममें बरदाश्त करने की भी शक्ति आ जाएगी।

इसी मार्शल एड से ही यात्रा का शुभारंभ हुआ। उसके बाद आया अन्तर राष्ट्रीय मनीटरी फण्ड, विश्व बैंक इत्यादि संस्थाएं। उसके बाद आया पी० एल० 480 समझौता। पश्चिम के बाजार में एक-एक कर अनुदान का सिलसिला बढ़ता गया और यहां के मानव का मूल्य शून्य पर उतर आया।

इधर भारत-पाकिस्तान-बांग्ला देश में भी एक साथ कोलाहल शुरू हो गया—'दो-दो-दो' और वे लोग भी एक ही साथ कहने लगे—'लो-लो-लो।' तुम लोग लेकर हमें धन्य करो, कृतार्थ करो।

इस देने और लेने की रस्साकशी के बीच पड़कर यहां के लोगों की हालत त्रिशंकु जैसी हो गई। पहले था 'मिलिटरी कॉनक्वेस्ट', अब शुरू हो गया 'इकोनोमिक कॉनक्वेस्ट'। वही पुराने नियम की पुनरावृत्ति। यहां से हम पहले की तरह ही कच्चे माल की आपूर्ति करने लगे और बदले में वहां से आने लगा गेहूं, चावल, चीनी और कितनी ही दूसरी-दूसरी तरह की चीज़ें। विश्व बैंक के लॉकर में तब हमारी विदेशी जमा राशि में सिर्फ कमी ही आती गई। देश के सालाना बजट में भी घाटे की रकम बढ़ती गई। इसकी रोक-थाम कैसे होगी?

कागज के नोट छापकर और बैंक का सूद बढ़ाकर ही इसकी रोकथाम की जा सकती है। जितने भी घाटे के बजट तैयार होंगे बैंक का सूद उतना ही बढ़ता जाता। इसके फलस्वरूप पहले तीस रुपया महावारी तनख्वाह पाकर राजा-रजवाड़े की तरह रहा जा सकता था, अब तीन हज़ार रुपया माहवारी तनख्वाह पाकर भी उस आराम से नहीं रहा जा सकता है। अभी एक रुपये की कीमत कम कर एक पैसे के बराबर हो गई।

बैंक का सूद बढ़ रहा है इसलिए बैंक का काम भी बढ़ रहा है। चुनांचे और आदमी की भर्ती करो। चारों तरफ बैंक के और ब्रांच खोलो। नतीजतन बैंक के

कर्मचारियों की तनख्वाह तेज रफ्तार से बढ़ने लगी—चाहे वे काम करें या न करें। नेशनल यूनियन बैंक के श्याम बाजार ब्रांच में एक दिन एक बूढ़े सज्जन ने आकर कहा, "कृपया संदीप लाहिड़ी को एक बार बुला दे सकते हैं?"

"हां, आपका नाम क्या बताऊंगा?"

"कहिएगा, मल्लिकजी उनसे एक बार मिलना चाहते हैं।"

"मल्लिकजी कहने से वे पहचान लेंगे तो।"

"हां-हां, कहिएगा बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन के मल्लिकजी। यह नाम कहते ही पहचान लेंगे।"

दादी मां ने पता लगाने को कहा है कि खिदिरपूर के मनसातल्ला लेन की गांगुली परिवार की लड़की की शादी हुई है या नहीं। सौम्य बाबू जैसे ही मेमसाहब पत्नी को तलाक दे देंगे, इस विशाखा नामक लड़की से ही दादी मां अपने पोते की शादी करा देंगी। फिर उनके लिए कोई समस्या नहीं रह जाएगी। हमेशा के लिए उनके झमेलों का खात्मा हो जाएगा।

याद है, एक दिन बस से आने के दौरान संदीप से मल्लिकजी की मुलाकात हो गई थी। उसी समय संदीप ने बताया था कि वह विशाखा और उसकी मां को बेड़ापोता अपने घर पर ले गया है। यह बहुत दिन पहले की बात है। अब भी वे लोग जरूर ही वहीं होंगी। इसके अलावा जाएंगी ही कहां?

अपनी एक ही ज़िन्दगी में मल्लिकजी कितना कुछ देख चुके हैं। मुखर्जी बाबुओं की चलती भी देख चुके हैं और अब यह गिरती हुई हालत भी देख रहे हैं। ज़िन्दा रहने पर उन्हें और कितना कुछ देखना होगा, इसका कोई ठिकाना है?

"संदीप लाहिड़ी आज ऑफिस नहीं आए हैं—"

एकाएक मल्लिकजी का ध्यान टूटा। पूछा, "आए नहीं हैं?"

"नहीं।"

मल्लिकजी ने कहा, "वे क्या छुट्टी पर हैं या सिर्फ आज ही बैंक नहीं आए हैं?"

वह आदमी उस समय बहुत व्यस्त था। और भी बहुत सारे आदमी उसे घेरे हुए हैं। उनके पास ज्यादा बातें करने का वक्त नहीं है। फिर भी उसने जवाब देने की जो थोड़ी-बहुत कृपा की, यही काफी है। उसके बाद सभी लोगों के चले जाने के बाद उसने मल्लिकजी की ओर देखते हुए एकाएक पूछा, "आपको क्या चाहिए?"

मल्लिकजी बोले, "मैं जानना चाहता हूं कि संदीप लाहिड़ी ने क्या बैंक से छुट्टी ली है?"

तब उस आदमी को उस बात की याद आई। बोला, "कल वे आए थे, यह मैंने देखा है। आप फिर कल एक बार आइएगा, मुलाकात हो जाएगी।"

मल्लिकजी बोले, "कल वे आएं तो बता दीजिएगा कि मैं आज आया था। कल मैं फिर एक बार आऊंगा।"

"हां, ठीक है।"

इस बीच एक और शख्स के आते ही वह आदमी उसके कारण व्यस्त हो गया और दुबारा मल्लिकजी की ओर निहारने का उसे वक्त ही नहीं मिला। मल्लिकजी

ने उसके बाद विडन स्ट्रीट भवन में आकर दादी मां से मुलाकात की।

सब कुछ सुनने के बाद दादी मां बोलीं, "तो फिर आप कल एक बार वहां जाइएगा—"

आने लगे तो दादी मां ने दुबारा पुकारकर कहा, "और अगर वह वहां न मिले तो आप एक बार खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के उसके चाचा के घर जाकर भी दरियाफ्त कर आ सकते हैं। वहां भी तो वे लोग वापस जा सकती हैं। ठीक-ठीक कुछ कहना मुश्किल है···"

"वहां जाकर उन लोगों से क्या कहूंगा?"

"पहले पूछिएगा कि उन लोगों की उस लड़की की शादी हुई है या नहीं। अगर बताएं कि शादी नहीं हुई है तो कहिएगा शादी करना वे लोग कुछ दिन रोक-कर रखें। सौम्य का तलाक होते ही उस लड़की से सौम्य की शादी करा दूंगी।"

मल्लिकजी हुक्म के बंदे हैं। उन्हें जो-जो कहा जाएगा वे वही करेंगे। उन्हें यदि हुक्म मिलेगा कि बकरे को पैर की तरफ से काटें तो वे यही करेंगे। वे इस घर के नौकर हैं। उनमें कोई स्वतन्त्र इच्छा नहीं हो सकती, होना भी गलत है। लिहाजा वे दूसरे दिन भी बैंक गए।

जिस आदमी ने गत कल मल्लिकजी से बातें की थीं, उसके सामने बेहद भीड़ थी। उस दिन मल्लिकजी एक दूसरे आदमी के पास पहुंचे। उससे भी वही सवाल किया। उसने कहा, "संदीप दा? आप संदीप लाहिड़ी की तलाश कर रहे हैं?"

मल्लिकजी बोले, "हां-हां, मैं कल भी आया था और पता चला था कि वे नहीं आए हैं—"

वह आदमी बोला, "वे तो कई दिनों से बैंक नहीं आ रहे हैं।"

"उसने छुट्टी ली है क्या? क्यों नहीं आ रहा है? तबीयत-वबीयत खराब है क्या?"

आदमी बोला, "यह मैं कैसे बता सकता हूं? वे कलकत्ता में तो रहते नहीं। वे मुफस्सिल में डेली-पैसेंजरी करते हैं—"

मल्लिकजी अब क्या करें! लौट रहे थे। लौटने के पहले बोले, "बैंक आएं तो उससे कहिएगा कि विडन स्ट्रीट-भवन से मल्लिकजी उनकी तलाश में यहां आए थे। भूलिएगा नहीं, ठीक-ठीक बता दीजिएगा।"

मल्लिकजी उस दिन फिर लौटकर घर चले आए। दादी मां को जाकर सूचना दी। सब कुछ सुनने के बाद दादी मां बोलीं, "तो फिर एक बार खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के पात्री के चाचा के घर जाकर पता लगा आइए। वे लोग वहां भी जा सकती हैं—"

मल्लिकजी के रोजमर्रा की कार्य-तालिका के अन्तर्गत आने वाले कामों के बाहर के ये झमेले हैं। इतने सारे लोगों के खाने-पहनने-रहने का हिसाब तो रखना ही पड़ता है, उसके साथ अब एक और नया काम आकर जुड़ गया। इसलिए दूसरे दिन सारे कामों को जल्दी-जल्दी निबटाकर मनसातल्ला लेन के तपेश गांगुली के घर पर पहुंचे।

उसके बाद सदर दरवाजे की कुंडी को खटखटाकर पुकारा, "तपेश बाबू, तपेश बाबू—"

तपेश गांगुली तब सब मिलाकर भात खाकर आफिस जाने की तैयारियां कर रहा था। बाहर से किसी की आवाज़ सुनकर बाहर निकला। उसके बाद मल्लिकजी पर दृष्टि जाते ही उसे लगा कि आकाश का चांद जैसे हाथ में आ गया हो। बोला, "आप हैं ? क्या बात है ?"

मल्लिकजी बोले, "आपकी वह भतीजी क्या आपके घर में है ?"

इतने दिनों के बाद मल्लिकजी को देखकर यों भी आश्चर्यचकित हो गया था, उस पर विशाखा का प्रसंग छिड़ते ही अचकचा उठा।

बोला, "अचानक इतने दिनों के बाद उन लोगों की खोज कर रहे हैं, बात क्या है ?"

मल्लिकजी बोले, "मुझे उन्हें खोजकर निकालने का हुक्म मिला है—"

"क्यों ? आप लोगों का पोता तो विलायत से मेम ब्याह कर ले आया है। उसके बाद भी उनकी पड़ताल क्यों कर रहे हैं ?"

मल्लिकजी इन बातों का उत्तर देने नहीं आए हैं। इसलिए चुप्पी ओढ़े रहे। सिर्फ इतना ही पूछा, "वे लोग यहां आपके पास हैं या नहीं, सिर्फ इतना ही बताइए। मैं यह जानकर घर चला जाऊंगा।"

लेकिन तपेश गांगुली आसानी से छोड़ देने वाला व्यक्ति नहीं है।

कहा, "सच-सच बताइए न मैनेजर साहब, बात क्या है, यही बताइए—"

मल्लिकजी बोले, "मैं तो कह ही चुका हूं कि मैं यही जानने आया हूं कि वे लोग यहां हैं या नहीं। इससे ज्यादा कुछ मुझे मालूम नहीं है।"

तपेश गांगुली बोला, "सच-सच बताइए न मैनेजर साहब—आपको सब कुछ मालूम है, पर आप बता नहीं रहे हैं—"

मल्लिकजी बात को जितनी ही दबाने की कोशिश करते हैं तपेश गांगुली जानने को उतना ही दबाव डाले जा रहा है। बोला, "बताइए न, कि सही बात क्या है ?"

"और यह तो भारी मुसीबत में फंस गया। आपको तो ऑफिस जाने में देर हो रही है—"

तपेश गांगुली बोला, "देर होने दीजिए। मेरी तो सवा रुपये रोज़ की रेल की नौकरी है—वहां जाऊंगा तो तनख्वाह मिलेगी और न जाऊंगा तो भी तनख्वाह मिलेगी। आप बताइए न ?"

अंततः तपेश गांगुली ने अन्दर से कमरे की सिटकनी बंद कर दी। बोला, "नहीं बताइएगा तो मैं आपको नहीं छोड़ूंगा मैनेजर साहब। बताइए न कि माजरा क्या है ? फिर आप लोगों के पोते साहब क्या दो शादियां करेंगे ?"

"अगर यही करें तो आपका क्या आता-जाता है ?"

तपेश गांगुली की आंखों में आंसू छलक आए। बोले, "विशाखा के बदले मेरी बिजली से शादी का इंतज़ाम करा दें।"

मल्लिकजी को गुस्सा आ गया। बोले, "आपका दिमाग खराब हो गया है क्या ? एक औरत के रहते कोई कहीं दूसरी शादी करता है ? आप खुद लड़की के बाप होकर यह बात कह रहे हैं ? सौत के घर लड़की की शादी कीजिएगा ?"

तपेश गांगुली बोला, "इसमें दोष ही क्या है ? जमाई के पास धन-दौलत तो

है। विशाखा से अगर शादी हो सकती है तो बिजली से शादी होने में दोष ही क्या है? [illegible] मापने में बुरी है?"

"ऐ बिजली, बिजली यहां आकर जरा सुन जा सा [illegible]।

बिजली को आते न देखकर तपेश गांगुली खुद ही घर के अन्दर चला गया। उस समय रानी रसोईघर में थी। तपेश गांगुली ने कहा, "बिजली कहां है जी?"

रानी ने कहा, "क्या बात है? इतना चिल्ला क्यों रहे हो?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे, चिल्ला क्या यूं ही रहा हूं? विडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन का वही मैनेजर आया है। विशाखा इस घर में है कि नहीं, यही पूछ रहा है वह—

"बिजली को मैनेजर को दिखाऊंगा। अपनी आंखों से देख ले कि विशाखा से मेरी बिजली किसी अंश में कम नहीं है। कहां गई वह? ठीक काम के वक्त ही लापता हो जाती है। उसे एक बार बुलाओ न—"

अचानक बिजली वहीं से आकर हाजिर हो गई। उस पर नजर पड़ते ही तपेश गांगुली बोला, "तू कहां रहती है? बता तू कहां रहती है? ले, जल्द-से-जल्द एक साड़ी पहन ले। मुखर्जियों का मैनेजर तुझे देखने आया है—"

उसके बाद रानी को संबोधित करते हुए कहा, "उसे एक अच्छी-सी साड़ी पहना दो और बाल-संवार दो। देर मत करो—"

यही किया गया। रानी ने एक कीमती साड़ी निकालकर बिजली को पहनने के लिए दीया। उसके बाद जूड़ा बांध दिया।

तपेश गांगुली बोला, "बहुत देर हो रही है भई, जरा जल्दी-जल्दी करो—"

लड़कियों को सजने-संवरने कहे तो सजना-संवरना क्या इतनी आसानी से हो जाता है? चेहरे पर जरा स्नो पाउडर भी तो लगाना होगा। होंठों पर लिपस्टिक भी लगाना होगा। बार-बार आईने में अपना चेहरा भी देखना होगा।

"और इसी बीच तुम एक प्याली चाय बना दो। मैं बिजली को लेकर बाहर वाले कमरे में जा रहा हूं—"

तपेश गांगुली बिजली को लेकर बाहर के कमरे में पहुंचा तो उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही। वहां चला गया वह मैनेजर! कहां चला गया? भाग गया क्या?

अंदर से रानी बोली, "अजी चाय ले जाओ, चाय तैयार है।"

तपेश गांगुली मन-ही-मन बुड़बुड़ाने लगा, "बेटा हरामजादा! मुझसे ऐसी धोखा-धड़ी! इसका बदला न लूं तो मैं ब्राह्मण का बेटा नहीं।"

अन्दर से रानी बोली, 'क्यों जी, चाय क्यों नहीं ले जा रहे हो?"

तपेश गांगुली ने कहा, "जानती हो, मैनेजर ने मुझे कैसा धोखा दिया। मुझसे कहा कि अपनी लड़की को ले आइए, मैं आपकी लड़की को देखूंगा। और चुपचाप चंपत···"

अंततः संदीप को पुलिस की ही मदद लेनी पड़ी। कलकत्ता शहर बुरा है, संदीप यह जानता था, पर इतना बुरा होगा यह कौन जानता है!

उस रात की वात संदीप को अब भी याद है—उस रात की जब उन तीनों ने जागकर एक साथ रात बिता दी थी। शुरू में रात के दस बज गए तो उन लोगों ने सोचा, इस ट्रेन से विशाखा संभवतः आ रही है। मां, मौसीजी और संदीप तीनों जने घर से बाहर निकल रास्ते पर खड़े हो गए। उसके बाद आधा घंटा बीत गया। विशाखा नहीं आई।

खाना पड़ा का पड़ा रह गया। किसी ने कुछ भी नहीं खाया।

मां ने कहा, "मुन्ना, तू खाएगा नहीं ? खा ले—"

संदीप ने कहा, "तुम लोग खा लो, मुझे भूख नहीं है—"

संदीप ने खाना नहीं खाया इसलिए किसी ने भी खाना नहीं खाया। सबसे दयनीय स्थिति थी मौसीजी की। कई दिनों के दरमियान मौसीजी जैसे एकदम से गूंगी हो गई थी। खाना-पीना, सोना, बातचीत करना बिलकुल बंद। मौसीजी की हालत भयावह जैसी हो गई थी।

याद है, उस दिन सवेरे की ट्रेन से ही संदीप घर से चल पड़ा था। जाने के पहले केवल मां को पुकार कर कह गया था, "दरवाजा बन्द कर दो मां, मैं जा रहा हूं।"

मां ने सिर्फ इतना ही पूछा था, "तू कब वापस आएगा ?"

संदीप ने कहा था, "कोई ठीक नहीं—"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद कहा था, "अगर मैं रात में घर न आऊं तो तुम लोग चिन्ता नहीं करना।" यह कहकर घर से निकलने के बाद वह शुरू में 'आइडियल फूड प्रोडक्ट्स' कंपनी गया था।

इतने सवेरे मिल्क बूथ या सरकारी दूध की दुकान के अलावा कलकत्ता का कोई दफ्तर नहीं खुलता। 'फूड प्रोडक्ट्स' ऑफिस का पता उसे मालूम है। उन लोगों से पूछने पर पता चल जा सकता है कि विशाखा कहां है, वह देस लौटकर क्यों नहीं गई वगैरह-वगैरह

मकान के सामने की सीढ़ियां चढ़कर दो-मंजिले पर पहुंचने पर ऑफिस मिलता है। ऊपर जाने पर संदीप ने देखा, ऑफिस के दरवाज़े पर ताला लटका हुआ है। घड़ी तब सवेरे के नौ बजा रही थी। आमतौर से कलकत्ता के ऑफिस साढ़े दस बजे ही खुलते हैं, उसके पहले नहीं।

आसपास कहीं जाकर बाकी वक्त गुजारेगा, यह सोचकर बगल की एक गली के अन्दर गया और वहां एक साधारण किस्म की चाय की दुकान दिख पड़ी। घर से वह कुछ खाकर भी नहीं निकला था। कहा जा सकता है कि खाने की उसे इच्छा भी नहीं थी। विशाखा ही उसके मन पर इस कदर छाई हुई थी कि वहां दूसरी किसी चिन्ता या सोच के प्रवेश की गुंजाइश नहीं थी। उसे सिर्फ यही लग रहा था कि उसने ऐसा अपराध किया है जो अक्षम्य है। क्यों वह उसे अकेली छोड़कर चला गया था ? बेहतर यही होता कि वह उसे इंटरव्यू खत्म होने के बाद अपने साथ ही बेड़ापोता पहुंचा आता। एक दिन बैंक न ही जाता तो उसकी कौन-सी हानि हो जाती ! इसके अतिरिक्त विशाखा को नौकरी करने की आवश्यकता ही क्या थी ? किसने उसे यह सलाह दी ? वह नौकरी क्यों करेगी ? स्वाधीन होने के लिए ? किस चीज की स्वाधीनता ? वह क्यों स्वयं को संदीप के माथे का बोझ समझती है ?

संदीप ने उसे बहुत समझाया था। संदीप ने मौसीजी से कहा था, "मौसीजी, आप ही जरा उसे समझाएं। उसे तकलीफ उठाकर नौकरी करने की क्या जरूरत है? मैं तो हूं ही। मेरे पास रुपये की कोई कमी नहीं है। ऑफिस से मुझे जितनी रकम मिलती है उससे हम चार जनों की गृहस्थी मजे में चल जाएगी।"

मौसीजी ने उसे बहुत समझाया था, "तू नौकरी करना क्यों चाहती है बेटी? संदीप तो ठीक ही कह रहा है। नौकरी करने में कितनी परेशानी का सामना करना पड़ता है! तू जानती नहीं इसलिए जिद पर उतर आई है। मर्दों की बात दीगर है। तू लड़की होकर पैदा हुई है, घर-गृहस्थी का काम ही औरतों को शोभा देता है। तू क्या इतना परिश्रम बरदाश्त कर सकेगी?"

विशाखा ने कहा था, "तुम नहीं जानती हो, अब तुम लोगों का जमाना नहीं है। अब बहुत सारी औरतें सड़क पर ट्राम-बस में घूमती-फिरती हैं। तुम नहीं जानती इसीलिए कह रही हो—"

लेकिन अब वह क्या जवाब देगा?

मौसीजी एक रात ही विशाखा को न देखकर निस्पंद जैसी हो गई थी। जैसे बहुत दिनों से खाना न खाया हो, ऐसा ही चेहरा हो गया था मौसीजी का। मौसीजी की तरफ देखने में भी संदीप को भय का अहसास हो रहा था। मौसीजी ने सिर्फ एक बार पूछा था, "विशाखा यदि न लौटे तो क्या होगा बेटा?"

मां ने मौसीजी को सांत्वना देते हुए कहा था, "तुम इतनी चिन्ता क्यों कर रही हो बहन, मेरा संदीप तो है ही, संदीप उसे अवश्य ही खोजकर ले आएगा। तुम चिन्ता मत करो—"

मौसीजी रो दी थी। रोते-रोते बोली थी, "मैं तो मुसीबत की मारी हूं बहन। किसी तरह की कोई आशंका होते ही मुझे सारी बातें याद आ जाती हैं। विशाखा लड़की के बजाय लड़का होती तो मैं क्या इतना सोचती?"

संदीप अब उठकर खड़ा हुआ। चाय-टोस्ट का दाम देकर दुबारा उसी ऑफिस के दरवाजे के सामने आकर उपस्थित हुआ।

उस वक्त ताला खुल चुका था। संदीप ने अंदर घुसकर देखा, एक आदमी कुर्सी पर बैठा हुआ है। संदीप को देखकर उसने पूछा, "आपको क्या चाहिए?"

संदीप ने कहा, "मैं विशाखा गांगुली की खोज में आया हूं।"

"विशाखा गांगुली?"

यह नाम सुनकर वह जैसे आसमान से गिर पड़ा।

बोला, "विशाखा गांगुली? वे तो यहां नहीं आई हैं।"

संदीप ने याद दिलाने के लिए सारी घटना का ब्यौरा दिया। उसके बाद कहा, "वे बस यहां से लौटकर घर नहीं पहुंची हैं।"

आदमी बोला, "यह मैं बता नहीं सकता। कल और भी बहुत सारी महिलाएं इंटरव्यू देने आई थीं। दोपहर बारह बजे तक सभी चली गई थीं। वे क्यों नहीं घर वापस गई हैं, यह मैं नहीं बता सकता।"

संदीप ने कहा, "कल भी मैं आया था। आने पर देखा, सभी महिलाएं उसके पहले ही जा चुकी थीं। एक सज्जन से मुलाकात हुई थी। वे इस कुर्सी पर बैठे हुए थे। मुझसे बताया था कि उन्होंने मिस गांगुली को जाते हुए देखा था। मिस गांगुली

हावड़ा स्टेशन पर गाड़ी पकड़कर चली गई हैं—यह सुनकर मैं हावड़ा स्टेशन गया था। लेकिन कल वे घर वापस नहीं लौटीं। हम लोग रात-भर इन्तज़ार करते रहे, लेकिन वे आई नहीं। उनकी मां को रो-रोकर व्याकुल होते देखकर मैं खूब तड़के ही यहां पहुंच गया हूं।"

आदमी इसका क्या उत्तर दे!

सिर्फ इतना ही कहा, "मैं इसके बारे में क्या कर सकता हूं, बताइए?"

संदीप ने कहा, "लेकिन वे सज्जन कहां हैं?"

"कौन-से सज्जन? उनका नाम क्या है?"

संदीप ने कहा, "नाम तो मालूम नहीं। गोरे चिट्टे जैसे, दाढ़ी-मूछें बनी हुई। बुश्शर्ट पहने हुए..."

"ओह, वे तो मिस्टर साहा हैं—भवतोष साहा। वे हम लोगों के डाइरेक्टर हैं—"

संदीप ने कहा, "वे आज ऑफिस नहीं आएंगे?"

आदमी बोला, "आने की बात तो है। लेकिन कब आएंगे, ठीक से बता नहीं सकता। अभी आ सकते हैं और यह भी हो सकता है कि आज आएं ही नहीं।"

संदीप क्या बोले, समझ में नहीं आया। फिर क्या वह यहीं भवतोष साहा का इंतज़ार करे या एकाध घंटे के बाद घूम-फिर कर आए?

लेकिन कब तक इंतज़ार करता रहेगा? यदि आज मिस्टर साहा ऑफिस न आएं तो फिर क्या होगा! रफ्ता-रफ्ता ऑफिस के कई कर्मचारी ऑफिस के अंदर आए और अपनी-अपनी जगह पर जाकर काम में व्यस्त हो गए। दो-चार महिलाएं भी आईं। देखने पर पता चला कि वे ऑफिस की कर्मचारी हैं।

संदीप बाहर आकर खड़ा हो गया। बरामदे से बाहर का रास्ता दिखाई पड़ता है। ट्राम-बस-गाड़ी-टैक्सी तेज़ रफ्तार से भागी जा रही हैं। कोई किसी की परवाह नहीं कर रहा है। यहां तुम लोग किसी से दया की प्रत्याशा नहीं करो, वरना छले जाओगे। यहां इस विशाल शहर में केवल प्रयोजन ही है। प्रयोजनवश हम भाग-दौड़ रहे हैं। हम दुनिया की शांति की चाह नहीं करते, स्नेह-प्रेम-प्यार कुछ नहीं चाहते। सिर्फ आवश्यकता को ही प्राथमिकता देते हैं। आवश्यकता के तकाजे के कारण ही हम सवेरे से गहरी रात तक इस तरह मारे-मारे सब जगह घूमते रहते हैं। अगर तुम लोग कुछ देना चाहते हो तो बताओ, इसके लिए हम तुम लोगों की खुशामद करेंगे, तुम लोगों की पूजा करेंगे, तुम लोगों की प्रशंसा करेंगे, तलवे सहलाएंगे। इसीलिए हम सबों के मन की एक ही बात है—"दो, दो—और दो—"

सहसा पीछे की तरफ से किसी के पैरों की आहट होते ही संदीप ने मुड़कर देखा—कल का वही सज्जन ऑफिस आ रहा है। संदीप तत्क्षण उसके पास पहुंचा और हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

सज्जन ठिठक कर खड़ा हो गया। बोला, "नमस्कार! आपको क्या चाहिए?"

संदीप ने कहा, "आप मुझे पहचान नहीं रहे? कल आपसे इसी ऑफिस में मिला था। आपका ही नाम भवतोष साहा है न?"

"हां, लेकिन मैं तो ठीक···"

"मेरा नाम संदीप लाहिड़ी है। मैं मिस विशाखा गांगुली के बारे में आपसे जानकारी प्राप्त करने आया था। आपने बताया था, वे हावड़ा स्टेशन चली गई हैं। लेकिन बेड़ापोता जाने पर मुझे दूसरी ही बात सुनने को मिली। कल वे बेड़ापोता पहुंची ही नहीं।"

मवतोष साहा ने कहा, "वे क्यों घर नहीं गईं, यह मैं कैसे बता सकता हूं ?"

संदीप ने कहा, "विशाखा के घर न पहुंचने से उसकी मां बेतरह रो-धो रही हैं। कल रात कोई भी नहीं सोया, किसी ने मुंह में एक दाना भी नहीं डाला। मैंने कुछ भी नहीं खाया और न मैं सोया ही। इसी वजह से पहली ट्रेन पकड़ सीधे कलकत्ता चला आया हूं—आपसे मिलने के इरादे से। मैं दस बजे से आपका इंतजार कर रहा हूं···"

मिस्टर साहा ने कहा, "लेकिन मैं आपकी क्या सहायता करूं, समझ में नहीं आ रहा।। एकमात्र पुलिस ही मिस गांगुली को खोज-ढूंढकर निकाल सकती है। आपने लाल बाजार के पुलिस थाने को सूचना दी है ?"

संदीप ने कहा, "नहीं। चूंकि आप लोगों के ऑफिस में ही इंटरव्यू देने आई थी इसलिए पहले-पहल आपके ऑफिस ही आया।"

"यहां आने से फायदा ही क्या है ? हम क्या पुलिस हैं जो सबकी अंदरूनी बातों की खोज-खबर रखें ? आप लाल बाजार के पुलिस हेड क्वार्टर जाइए। वहां जाकर 'मिसिंग स्क्वाड' डिपार्टमेंट में जाकर सूचना दीजिए। वे लोग मिस गांगुली का पता लगा देंगे। और-और महिलाओं के साथ उनके अभिभावक भी आए थे और वे लोग अपने-अपने घर चली गई थीं।"

संदीप ने कहा, "मैं भी तो मिस गांगुली को घर ले जाने के लिए आया था—"

"मगर आप जब आए थे, उस समय इंटरव्यू लेना खत्म हो चुका था। उसके पहले ही मिस गांगुली जा चुकी थीं। आपने आने में इतनी देर क्यों कर दी ? आप तो जानते ही हैं कि खूबसूरत औरतों के लिए कलकत्ता शहर अब नरक में तब्दील हो गया है। नहीं जानते थे क्या ?"

"जानता हूं, लेकिन मैं श्याम बाजार के एक बैंक में नौकरी करता हूं, इसलिए वहां से निकलकर बस पकड़ने में मुझे देर हो गई थी। मेरे आने का इन्तजार न कर उसका यहां से चले जाना ही गलत है। वह अकेले ही क्यों चली गई।"

मिस्टर साहा का तब शायद काम का वक्त हो चुका था। बोले, "आप लोगों का आपसी मामला है, आप लोग ही इसे तय कीजिएगा। मैं इस संबंध में क्या कह सकता हूं ? मैंने जो कहा, वही कीजिए। लाल बाजार के हेड क्वार्टर जाकर 'मिसिंग स्क्वाड' में जाकर सूचित कर आइए।" यह कहकर वह अपने दफ्तर में चला गया।

अभी भी याद है कि वह बेचैनी कितनी असह्य थी ! कितनी यातना भरी थी वह प्रतीक्षा ! रात भर न सोना, दिन-भर मुंह में एक दाना न डालना, मन की अवसन्नता की कातरता और उस पर विशाखा का रहस्यमय ढंग से गायब हो जाना—इन सारी वारदात ने उसे पागल जैसा कर दिया था

की वात, उसके उस उद्वेग का व्यौरा दुनिया में कभी कोई जान नहीं पाएगा, कोई किसी दिन इसका अहसास नहीं कर पाएगा और शायद कभी कोई इसकी कल्पना भी नहीं कर सकेगा। लाल वाजार के 'मिसिंग स्क्वाड' जाने पर भी क्या कम समस्या का सामना करना पड़ा था! तरह-तरह के सवालों, तरह-तरह के कुतूहलों और तरह-तरह के अभियोगों की वौछारें।

"हाइट कितनी है? यानी लंवाई कितनी है?"

सिर्फ नाम वताने से ही काम नहीं चलेगा। इसके साथ ही ऐसे वहुत सारे तथ्य प्रस्तुत करने होंगे जिनके वारे में संदीप को जानकारी नहीं है।

"फोटो है?"

फोटो तो वह लाया नहीं है। उसका फोटो उसे कहां मिलेगा?

अचानक उसे स्मरण हो आया कि विशाखा ने जव 'आइडियल फूड प्रोडक्ट्स' कंपनी में नौकरी के लिए आवेदन-पत्र भेजा था तो आवेदन-पत्र के साथ उसने अपना एक फोटो भी संलग्न कर दिया था। याद है, यह वात खुद विशाखा ने संदीप को वताई थी।

संदीप ने कहा, "ठहरिए, मैं एक घंटे के दरमियान उसका एक फोटो ला देता हूं।"

उसके वाद वह लाल वाज़ार पुलिस के हैड क्वार्टर से दुवारा 'आइडियल फूड प्रोडक्ट्स' कंपनी के दफ्तर में पहुंचा। दुवारा भवतोष साहा से मुलाकात की।

संदीप ने कहा, "मिस गांगुली ने आवेदन-पत्र के साथ एक फोटो भी दे दिया था।"

"हां, सभी को आवेदन-पत्र के साथ फोटो भेजने को कहा था। उन्होंने भी अवश्य ही अपना फोटो भेजा होगा।"

"लाल वाज़ार में एक फोटो की मांग की है—अपनी फाइल में ढूंढ़कर देखिए न।"

फाइल ढूंढ़ने पर अन्ततः वह फोटो मिल गया।

मिस्टर साहा ने कहा, "काम हो जाए तो उसे फिर से लाकर दे जाइएगा।"

"हां, अवश्य ही वापस कर जाऊंगा।"

उसके वाद फिर लाल वाज़ार का चक्कर। वहां फोटो देने के वाद संदीप को छुटकारा मिला।

"अव फिर कव खवर लेने आऊं?"

पुलिस अफसर वोला, "आपका पता तो है ही। हमारे पास कोई सूचना आते ही आपके पते पर सूचित कर दिया जाएगा।"

संदीप फिर वाहर ट्राम के रास्ते पर आकर खड़ा हो गया। घड़ी तव दो वजकर दस मिनट वजा रही थी। अव उसके दफ्तर का कैश काउन्टर वंद हो गया है। घर में फिलहाल क्या हो रहा है, कौन जाने! मां ने शायद आज खाना नहीं पकाया होगा। लेकिन कमला की मां? वह तो खाएगी ही। चाहे कोई और खाना खाए या न खाए पर कमला की मां खाएगी ही। वह क्यों भूखी रहेगी? किसके लिए वह निराहार रहेगी? उसका रिश्ता माहवारी तनख्वाह से है। खाना न मिलने से वह रहेगी क्यों, काम क्यों करेगी?

सामने की ओर से एक ट्राम हावड़ा जा रही थी। संदीप उसी पर चढ़ गया। थोड़ी दूर जाने पर उसे एकाएक याद आई, अखबारों में विज्ञापन देना कैसा रहेगा! उसमें भी तो उसने लापता, गुमशुदा और प्राप्त व्यक्तियों के छपे हुए विज्ञापन देखे हैं। संदीप तत्क्षण चलती हुई ट्राम से नीचे उतर गया। उसके बाद विपरीत दिशा की ओर जाती हुई एक बस पर सवार होकर अखबार के विज्ञापन-विभाग में जा पहुंचा।

बहुत बड़ा दफ्तर। यहां पूछने पर पता चला कि कम से कम पंक्तियों के विज्ञापन के लिए लगभग एक सौ पचास रुपया खर्च करना होगा।

"रुपया क्या नकद ही देना होगा?"

"जरूर। यहां कोई काम उधार नहीं चलता।"

"अभी मेरे पास उतने रुपये नहीं हैं।"

"तो फिर कल इसी वक्त नकद पैसे लेते आइएगा। पब्लिक से हम चेक या ड्राफ्ट नहीं लेते।"

इसके बाद बेड़ापोता लौट जाने के सिवा दूसरा कोई चारा नहीं था। वहां से फिर बेड़ापोता के लिए चल पड़ा। बेड़ापोता पहुंचते-पहुंचते शाम हो गई।

मां पागल की नाईं रास्ते की ओर ताक रही थी। संदीप पर निगाह पड़ते ही पूछा, "क्या कुछ पता चला?"

संदीप ने कहा, "विशाखा नहीं आई है?"

मां बोली, "यह कैसा सर्वनाश हुआ, बताओ तो? दूसरे की लड़की को तू कहां छोड़कर चला आया? अब क्या होगा? तू ही उसे कलकत्ता से यहां ले आया था। अब उसे खोजकर निकालने की पूरी जिम्मेदारी तेरी ही है—"

"मौसीजी क्या कर रही हैं?"

"तेरी मौसीजी की पागल जैसी हालत हो गई है। वह कल से ही एक ही करवट लेटी हुई है, उसके बाद न तो करवट बदली है, न बैठी है और न उठकर खड़ी ही हुई है। मुंह में एक दाना भी नहीं डाला है। कमला की मां हर रोज जिस तरह आती है, आज भी आई थी। खाना पकाकर अपने लिए खाना लेकर चली गई। दीदी से कितनी ही बार कहा कि कुछ खा ले मगर मुंह में एक दाना तक नहीं डाला।"

"और तुम?"

"तेरी मौसीजी ने खाना नहीं खाया, तूने नहीं खाया तो मैं कैसे अन्न को ताक पर रखकर निवाले निगल लूं?"

संदीप बोला, "दिन-भर मैं मारा-मारा फिरता रहा। एक बार उस ऑफिस में गया। वहां उन लोगों ने बताया कि वह घर चली गई है। उसके बाद थाने पर गया, वहां उसका नाम-पता-फोटो दे आया हूं। आखिर में अखबार के दफ्तर गया। सोचा, विशाखा के बारे में एक विज्ञापन दे दूं, अगर किसी की उस पर नजर पड़ेगी तो सूचना भेजेगा। लेकिन मेरे पास रुपये नहीं थे। इसलिए कल डेढ़ सौ रुपये लेकर सवेरे ही निकलना होगा।"

"तू अपने ऑफिस नहीं गया था?"

संदीप ने कहा, "ऑफिस जाने का वक्त कहां मिला कि ऑफिस जाता। पूरा

दिन तो रास्ते की धूल छानते ही बीत गया।"

"खाना खाया था?"

"खाने का वक्त कहां मिला कि खाता? एक आदमी का दफ्तर बंद था, इसलिए कुछ देर तक इंतज़ार करना पड़ा। उस दरमियान वक्त गुज़ारने के लिए एक दुकान में जाकर सिर्फ दो अदद टोस्ट खाया और एक प्याली चाय पी थी।"

"तो अभी खाना खाएगा तो? तेरे लिए चावल पकाकर रख दिया गया है।"

"और तुम?"

"मेरी बात छोड़ो। तेरी मौसीजी ने नहीं खाया, तूने नहीं खाया फिर मैं कैसे खा लूं?"

संदीप ने कहा, "चलो, मैं मौसीजी से जाकर कहता हूं। इस तरह बगैर खाए रहने से कैसे चलेगा? उससे तो शरीर और भी टूट जाएगा। चलो, मैं मौसीजी से जाकर कहता हूं—"

आज भी संदीप की आंखों के सामने मौसीजी की वे आंखें, मुंह और शक्ल तसवीर की नाई तैर रहे हैं। देखने से लग रहा था कि मौसीजी ने जैसे बहुत दिनों से खाना नहीं खाया है, बहुत दिनों से वह सोई नहीं है। लेकिन आखिर में संदीप ने कहा था, "मौसीजी, आप अगर खाना नहीं खाएंगी तो मैं भी खाना नहीं खाऊंगा। मैं यह प्रतिज्ञा कर रहा हूं—"

मौसीजी ने कहा था, "अब मैं जिन्दा रहना नहीं चाहती बेटी। तुम बल्कि मेरा गला टीप कर मुझे मार दो···मगर मुझसे खाना खाने मत कहो···"

साधारण से कुछेक शब्द, लेकिन इन साधारण शब्दों को कहने में मौसीजी का गला बार-बार रुलाई से रुंध जाता था।

संसार में दुख-शोक-ताप चाहे जितना भी रहे लेकिन संसार किसी के लिए थमक कर नहीं रहता। तुम चाहे जिन्दा रहो या मर जाओ लेकिन वह अपने दावे का पाई-पाई वसूल करने के बाद ही तुम्हें छुटकारा देगा। दिन है तो इसका मतलब क्या यह कि हमेशा दिन ही रहेगा, रात नहीं होगी? और रात है तो बराबर क्या रात ही रहेगी, सवेरा नहीं होगा? वैसा होता तो आदमी अधूरा रह जाता। धरती पर जन्म लेने पर जो दुख नहीं जी सका वह अपने सृष्टिकर्त्ता से अपना बकाया वसूल ही नहीं कर सका। जीवन-यात्रा में उसके पाथेय का हिस्सा कम ही रह गया।

बड़े लोगों और गरीबों की रात एक ही समय में बीतती है। बड़े लोगों और गरीबों को देखकर दिन-रात की माप में कोई असंतुलन नहीं होता, यही नियम चिरकाल से आ रहा है। इसलिए संदीप के जीवन में वह रात एक समय की सीमा-अवधि में समाप्त हो गई। जाने के वक्त मां से कह गया, "मैं जिस तरह मौसीजी को खाना खिलाकर जा रहा हूं उसी तरह तुम भी खाना खिला देना। कहना आज नहीं खाओगी तो मैं बहुत ही नाराज होऊंगी।"

उसके बाद वह यथासमय हावड़ा स्टेशन पहुंचा। और-और लोगों के साथ उसने जैसे ही प्लेटफार्म पर कदम बढ़ाया कि मल्लिकजी से मुलाकात हो गई।

"चाचाजी आप?"

मल्लिकजी हैरत में आ गए। बोले, "अरे तुम! तुम कहां जा रहे हो? मैं तो

तुमसे ही मिलने बेहाला जा रहा था। यह देखो, टिकट कटा लिया है।"

"क्यों? मुझसे मिलने की कौन-सी ऐसी आवश्यकता पड़ गई?"

मल्लिक चाचा बोले, "तुमसे मिलने के लिए दो बार तुम्हारे बैंक में जा चुका हूं। तुम मिले नहीं। आखिर में खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के सरोज गांगुली के घर पर भी गया था। वहां भी कुछ पता न चलने पर आखिरकार इस बुढ़ापे का शरीर लिए बेहाला जा रहा था। बहरहाल तुमसे मुलाकात हो गई—"

संदीप बोला, "अचानक मेरी कौन-सी जरूरत पड़ गई?"

"दुबारा दादी मां का हुक्म मिला है—"

"क्या?"

मल्लिक चाचा बोले, "कुछ मत पूछो, दादी मां ने मुझे हुक्म दिया है कि विशाखा नामक लड़की की शादी अब भी हुई है या नहीं, इसका पता लगा आऊं। और अगर शादी न हुई हो तो शादी की रस्म आठ-नौ महीने के लिए रोककर रखें—"

"क्यों?"

मल्लिक चाचा बोले, "वह जो सौम्य बाबू की मेमसाहब पत्नी है उसके कारण बड़ी फजीहत हो रही है। कमरे के अन्दर दोनों में हर रोज झगड़ा-टंटा और मार-पीट होती रहती है। एक दिन वह औरत सौम्य बाबू की छाती पर चढ़ उनका गला दबाकर मारने की कोशिश करने लगी।"

"क्यों?"

"और क्यों, रुपये की खातिर! हर महीने विलायत में सास को दो सौ पौंड भेजा नहीं जा रहा है, इसलिए मेम बहू हर रोज मार डालने की धमकियां देती है। अब यही फैसला हुआ है कि बीस हजार पौंड क्षतिपूर्ति के रूप में देने पर बहू सौम्य बाबू को तलाक दे देगी।"

यह बात सुनकर संदीप चंद लमहों के लिए खामोशी में डूब गया।

मल्लिक चाचा बोले, "तुम तो विशाखा और उसकी मां को अपने बेहाला के घर में लाकर रखे हुए हो। विशाखा की शादी अब तक नहीं हुई है न?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

"वे लोग कैसी हैं? अच्छी तरह हैं न?"

संदीप बोला, "यह बहुत बड़ा कांड है चाचाजी। विशाखा परसों से लापता है। मैं उसी को खोजने जा रहा हूं।"

यह सुनकर मल्लिक चाचा को घोर आश्चर्य हुआ। बोले, "यह क्या कह रहे हो तुम? कहां जा रहे हो?"

संदीप ने कहा, "कल लाल बाजार के थाने में इसकी सूचना दर्ज करा आया हूं आज अखबार में विज्ञापन देने जा रहा हूं।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "तुम्हें तुम्हारे बैंक में न पाकर सोचा, तुम बीमार हो, इसलिए बेहाला जाने के लिए निकला था। अच्छा हुआ कि तुमसे मुलाकात हो गई। मैं हैरान होने से बच गया। हां, यह बताए देता हूं कि तुम लोग हड़बड़ी में विशाखा की शादी मत कर देना, समझे?"

संदीप ने कहा, "सो तो समझा, लेकिन पहले विशाखा का पता तो चल जाए,

उसके बाद ही तो शादी हो सकती है। लड़की के लापता हो जाने के बाद से विशाखा की मां ने खाना-पीना वन्द कर दिया है। मेरी मां ने भी। और मैं ऑफिस नागा कर चरखी की तरह चारों तरफ चक्कर काट रहा हूं।"

मल्लिक चाचा बोले, "और उधर एक दूसरा ही झमेला खड़ा हो गया है—"

"क्या ? फिर क्या हुआ ?"

मल्लिक चाचा बोले, "परेशानी एक ही है! मंझले बाबू ने निर्णय लिया है कि वे अपनी फैक्टरी हैदराबाद हटाकर ले जाएंगे।"

"हैदराबाद ? इतने दिनों की फैक्टरी, कितने ही बंगालियों को रोजगार मिल रहा था और उसे यहां से हटाकर हैदराबाद ले जाएंगे ?"

मल्लिक चाचा बोले, "इसके सिवा और कर ही क्या सकते हैं ? बंगालियों ने सबसे ज्यादा दुश्मनी करना ठान लिया। बंगाली ही तो बंगाली के सबसे बड़े दुश्मन होते हैं—"

संदीप बोला, "ठीक है, किसी दिन फुर्सत मिलने पर मैं आपसे सब कुछ सुन आऊंगा।"

तब कुछ और ही जमाना था। यह बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय के जमाने की बात है। उस समय हम लोग ओसारे पर बैठ तम्बाकू पीते, दोपहर के समय कचहरी जाते। उसके बाद शाम से ताश खेलना शुरू कर देते थे। शतरंज की मजलिस में बैठ राजा-मंत्री-हाथी लेकर हार-जीत के नशे में मशगूल हो जाते। वह खासा अच्छा जमाना था।

उसके बाद इस बीच कब अंग्रेजों ने आकर हम पर अपना अधिकार जमा लिया, इसका पता नहीं चला। जब होश आया तो काफी देर हो चुकी थी। लकड़ी के बने राजा-मंत्री-हाथी के नशे में डूबे हमारे रक्त-मांस के राजा-मंत्री-हाथी को हटाकर, सात समुद्र तेरह नदी पार कर विदेशियों के काफिले ने आकर हमारे शासन की बागडोर थाम ली। इसका अन्दाज़ा लगाने की हमें फुर्सत ही नहीं मिली। उस समय से रुपये का अवमूल्यन होने लगा और समय के मूल्य में वृद्धि होने लगी। तब हम लोग गांव छोड़कर रोजगार और रुपये की उम्मीद में शहर आने लगे। सात दिन शहर के किसी मेस में बिताकर शनिवार को तीसरे पहर की रेलगाड़ी से गांव के मकान पर पहुंचने लगे। वहां रविवार को पूरे दिन ताश-शतरंज जुआ खेल, अड्डेबाजी कर सोमवार को खूब तड़के शहर की [illegible]ना होने लगे।

बरना बाधारन यह देश छोड़कर चले गए। हम न तो राज्य चलाना जानते थे और न ऑफिस चलाना ही। जिन्दगी भर तो हम अंग्रेजों के कारखाने में कोल्हू के बैल की तरह चक्कर काटते रहे। फिर देश चलेगा कैसे? सिर्फ हमारी ही नहीं, इजिप्ट, ईरान, थाइलैंड, कोरिया, वियतनाम, बर्मा, सिलोन, पाकिस्तान, बांग्ला देश—सबकी एक जैसी हालत है।

लेकिन इन देशों के स्वतंत्र हो जाने के बाद व्यवसायियों को मुश्किलों का सामना करना पड़ा। सभी ने टैरिफ बोर्ड की दीवार खींचकर आयात-निर्यात के रास्ते बंद कर दिए हैं। फिर हमारा पेट कैसे भरेगा? हम लोग यानी जो तस्कर हैं, जो चोरबाजारी करते हैं, जो इस देश से उस देश में सोने की आपूर्ति कर करोड़ों रुपये का मुनाफा कमाते हैं उनका कारोबार कैसे चलेगा।

उस समय दुनिया के तमाम लोगों के शोषण के एक नए रास्ते की खोज की गई। उस रास्ते का नाम है कोकेन।

इस कोकेन का आविष्कार 1860 ई० में पहले पहल जर्मनी में हुआ था। जर्मनी का अलबर्ट नइन नामक एक व्यक्ति इसका पहला आविष्कारक है। उससे हेरोइन की खोज की गई। बारह टन अफीम से एक टन हेरोइन तैयार होता है। एक किलोग्राम हेरोइन की कीमत मणिपुर और बर्मा के सीमांत प्रदेश में पचीस हजार रुपया है। और उसी एक किलो हेरोइन की कीमत इस्ताल आने पर एक लाख रुपया हो जाता है। नेपाली रुपये के अनुसार उसकी कीमत है ढाई लाख रुपये।

यह एक अजीब ही व्यवसाय है। किसी दिन पश्चिम के निवासियों ने तमाम लोगों को ईसाई बनाने की साजिश की थी। राममोहन राय और परमहंसदेव के कारण इसमें कामयाब नहीं हो सके। लेकिन अबकी? अबकी तुम लोगों को कौन बचाएगा? इस कोकिन, हेरोइन, मरिजुआना, हैशिश और एस० एस० डी० के माध्यम से हम तुम सबों पर जीत हासिल कर लेंगे। देखें, अब तुम लोगों को कौन बचाता है?

अब पान के मसाले में हेरोइन मिला देंगे, गोलगप्पे में हेरोइन मिला देंगे, कोल्ड ड्रिंक्स में हेरोइन मिला देंगे। देखें, अब तुम लोगों को कौन बचाता है?

उसके बाद दुनिया में, खासकर विकासशील देशों में कुकुरमुत्ते की तरह हर सड़क पर खाद्य पदार्थों की दुकानों की कतार खड़ी हो गई। दीवारों से सटकर पान की दुकानें खुल गईं। जो एकबार वह पान खाएगा उसे दूसरा पान अच्छा नहीं लगेगा। चाहे वह जिस मुहल्ले का हो, पान की कीमत चाहे जो हो, घूम-फिर कर उसे इस मुहल्ले में पान खाने के लिए आना ही होगा। इस दुकान के पान में इतना कशिश है। लेकिन क्यों?

इस 'क्यों' का जवाब किसी को मालूम नहीं। जो लोग जानते हैं वे सभी बाहर के सुशिक्षित व्यक्ति हैं। कोई उन्हें देखकर किसी तरह का कोई संदेह नहीं करेगा, बल्कि प्रणाम करेगा, प्रशंसा करेगा। संदीप भी क्या पहले यह सब जानता था? सिर्फ संदीप ही क्यों, मल्लिकजी, मुक्तिपद बाबू, सौम्य बाबू, तपेश गांगुली या नेशनल बैंक के करमचंद मालम्यजी, परेश दा आदि नहीं जानते थे। फिर कौन जानता था?

मालूम था केवल इस मुहल्ले के हरदयाल और फटिक को। उनके बारे में पहले ही बता चुका हूं। हरदयाल सिर्फ गुण्डा ही नहीं, बल्कि ऊंचे तबके का व्यापारी भी है। फटिक के साथ भी यही बात है। वे चाहे कैसी ही पोशाक में क्यों न रहें लेकिन वे इस कलकत्ता शहर के अगाध पैसे के मालिक हैं। उनके भी पत्नियां और बाल-बच्चे हैं। उनके लड़के-लड़की बस पर चढ़कर अंग्रेजी स्कूल में पढ़ने जाते हैं। वे जिन चीजों का कारोबार करते हैं वे हिंदुस्तान के बाहर से आती हैं। थाईलैंड, पेशावर, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, मणिपुर, इम्फाल और नेपाल से आकर उनके पास पहुंचती हैं। वह सब लाखों का कारोबार नहीं, करोड़ों का भी कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जो लोग इन कारोबारों के सरगना हैं, वे बेशक उन कारोबारों का अधिकांश भाग लेते हैं, लेकिन हरदयाल और फटिक को जो हिस्सा मिलता है वह भी कोई कम नहीं।

लेकिन उन हिस्सों से उन्हें थोड़ा-बहुत कुछ लोगों को देकर संतुष्ट रखना पड़ता है।

उस दिन सवेरे हरदयाल अखबार पढ़ते ही चौंक उठा। अरे, यह किसकी तसवीर है? यह लड़की तो पहचानी-पहचानी जैसी लगती है।

तसवीर के ऊपर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ है 'लापता'। उसके नीचे लड़की का जो नाम लिखा हुआ है उस नाम को उसने कभी नहीं सुना है। लड़की की उम्र कितनी है, ऊंचाई कितनी है, देह का रंग कैसा है, यह भी लिखा हुआ है। लड़की का नाम है विशाखा गांगुली।

हरदयाल अब खड़ा नहीं रहा। और-और दिन कुछ वक्त यों ही गुजार देता था।

सड़क पर जाकर हरदयाल ने तत्क्षण एक टैक्सी पकड़ी।

टैक्सी ड्राइवर पहचाना हुआ आदमी है। हरदयाल इसके पहले कई बार उसकी टैक्सी पर बैठ चुका था। जनाब कहां-कहां जाते हैं, यह भी उसे मालूम है। रात-बेरात भी उसे लेकर बहुत जगह जा चुका है।

"कहां चलूं बाबू? सोनागाछी?"

हरदयाल गुस्सा गया।

बोला, "धत्त तेरी की, दिन के वक्त कोई सोनागाछी जाता है? यह क्या कह रहा है तू?"

"तो फिर फ्रिड स्ट्रीट?"

हरदयाल ने कहा, "नहीं-नहीं, एकबार पार्क स्ट्रीट चलो और वहां से होकर कॉलिन्स स्ट्रीट। वहां एक काम है।"

टैक्सी ड्राइवर कॉलिन्स स्ट्रीट भी बहुत बार जा चुका है। लेकिन इस बाबू के पास रुपया पैसा न हो, ऐसी बात नहीं है। टैक्सी ड्राइवर ने गाड़ी चलाते हुए ही पूछा, "बाबू आप गाड़ी क्यों नहीं खरीद लेते?"

"गाड़ी? तू यह क्या कह रहा है दुलाल? मेरे पास गाड़ी खरीदने का पैसा कहां है? गाड़ी खरीदने का पैसा होता तो मैं तेरी टैक्सी में चढ़कर घूमता? मुझे देखकर क्या तुझे लगता है कि मैं दौलतमंद आदमी हूं?"

टैक्सी ड्राइवर पुराना अनुभवी आदमी है। कलकत्ता के बहुत सारे धनी-मानी

मध्यवित्त और गरीब व्यक्तियों को अपनी टैक्सी पर बिठाकर उनके मुकाम पर पहुंचा चुका है। बहुत सारे दूल्हे-दुलहनों को उनके बाप के घर से ससुराल पहुंचा चुका है। उसके निजी जीवन में जिन अनुभवों की कमी थी, टैक्सी पर मुसाफिरों को बिठाकर चलते रहने के कारण उनकी पूर्ति करने के साथ ही उनके दायरों को भी हजारों गुना बढ़ा लिया है।

हरदयाल की ही हालत वह किसी दिन दूसरी ही तरह देख चुका है। फटी हुई चप्पलें पहने रहता, बाल कटाने का पैसा भी उसके पास नहीं रहता। टैक्सी पर चढ़ने की बात तो दूर, बीड़ी खरीदने का भी पैसा उसकी जेब में नहीं होता। एक ही बीड़ी को बार-बार सुलगाकर और बुझा-बुझाकर पीता, पैसा बचाने के ख्याल से। उसी हरदयाल की स्थिति अब दूसरी तरह की हो गई है। अब उसके हाथ में सिगरेट की डिबिया होती है। लेकिन इतने रुपये उसके हाथ में कैसे आए, समझ नहीं पाता है हालांकि हरदयाल न तो नौकरी करता है और न ही व्यवसाय। इन कई बातों के दरमियान उसने कैसे अपना एक मकान बनवा लिया?

"हरदयाल बाबू!"

हरदयाल बोला, "क्या?"

"उस दिन मुझे जो चॉकलेट दिया था, उस तरह का दूसरा चॉकलेट आपके पास नहीं है?"

"क्यों, तुझे क्या खाने में बहुत ही अच्छा लगा?"

दुलाल बोला, "उस दिन चॉकलेट खाकर एक गजब का काड हो गया—"

"क्या?"

दुलाल बोला, "टैक्सी चलाने के दौरान मुह में रखते ही लगा कि मैं स्वर्ग पहुंच गया हूं। जब घर पहुंचा तो मेरी औरत ने कहा . तुम्हें क्या हुआ है आज? आज तुम्हारी तबीयत इतनी खुशहाल क्यों है? ढेर सारा रुपया कमाया है क्या?"

"उसके बाद?"

दुलाल बोला, "टैक्सी चलाना तो दूर की बात, उस दिन टैक्सी लेकर सिर्फ श्याम बाजार के मोड़ पर बैठा रहा। एक भी सवार नहीं बिठाया। जो भी टैक्सी पर बैठने आया, उसे भगा दिया। कहा, पेट्रोल नहीं है—"

"उसके बाद?"

"उसके बाद दो दिन निकला ही नहीं। सच, ऐसा लगा जैसे बैंक में मेरा पद्रह लाख रुपया जमा हो। मैं बादशाह या वजीर हो गया हू। मुझे खटकर पेट नहीं भरना होगा, पैर पर पैर रखे बैठे रहने में ही सिर से रुपये की बौछार होने लगेगी—"

"उसके बाद?"

"उसके बाद दो दिन बाहर नहीं निकला। आराम करना बड़ा ही अच्छा लगा।"

हरदयाल के लिए यह कोई नई खबर नहीं है। वह जानता है इसीलिए आज उसकी स्थिति इतनी अच्छी हो गई है। उसके नाम से बहुत सारे बेनामी मकान और सपत्ति है। बाहर के लोगों को यह सब मालूम नहीं है, लेकिन वह जानता है।"

दुलाल बोला, "एक दिन बाबू वही चॉकलेट—"

गाड़ी तब तक कॉलिन्स स्ट्रीट के आसपास पहुंच चुकी थी। टैक्सी का किराया देते हुए हरदयाल बोला, "दूंगा, और एक दिन दूंगा—"

यह कहकर वह अखबार लिए नीचे उतर गया। हरदयाल बहुत सारी चिन्ताओं, कामों, समस्याओं और अशांति से घिरा रहता है। जब इतनी चिन्ता, अशांति और समस्या रहे तो उस चॉकलेट को खाने से ही काम चल जाएगा। दुलाल की तरह एक अदद चॉकलेट खा लेने से काम चल जाएगा। और सिर्फ चॉकलेट ही क्यों, हैशिश या स्मैक भी खा लेने से काम चल जा सकता है। या उस तरह का कोई इंजेक्शन लेने से। लेकिन नहीं, वह ऐसा नहीं करेगा। हलवाई क्या खुद के द्वारा बनाए गए संदेश या रसगुल्ले खाता है?

उसके बाद हरदयाल मकान के अंदर घुस गया। यह मकान ही हरदयाल का असली साम्राज्य है और वह इस साम्राज्य का सम्राट है। उसकी बात पर ही उसकी यहां की प्रजा उठती-बैठती है और मालगुज़ारी देती है। प्रजा बेशक मालगुज़ारी देती है लेकिन यहां वास नहीं करती है। यहां सारा कारोबार नकद चलता है। पैसा फेंको, तमाशा देखो, यहां के ज़्यादातर ग्राहक स्टूडेंट हैं। उस स्टूडेंट के दल में लड़के और लड़कियां दोनों हैं। वे लोग टेंट से पैसा निकालकर माल खरीदते हैं और यहीं कुछ घंटे बिता देते हैं। बिस्तर-तकिया-पलंग और पीने के पानी का खासा अच्छा इंतजाम रहता है। इसके अलावा जो लोग रात गुज़ारने आते हैं उनके लिए भी हरदयाल ने पक्का इन्तज़ाम कर दिया है।

लेकिन इन सबों की निगरानी के लिए अंटी को सरगना के तौर पर मुकर्रर किया गया है। अंटी हालांकि एंग्लोइंडियन है लेकिन कलकत्ता ही उनका जन्मस्थान और कार्यस्थल होने के कारण वह चुस्त-दुरुस्त बंगला बोलती है।

पुलिस को इन बातों की जानकारी है। क्योंकि पुलिस की आंखों के सामने ही सारा कुछ होता है। गाय-बछड़े में अगर प्रेम हो तो खटाल क्या करेगा? पुलिस बाजाब्ता आती है और अपना पगार ले जाती है। अंटी उस दिन भी अपने रोज़मर्रा के काम की छानबीन कर रही थी। एकाएक हरदयाल आकर हाजिर हो गया। हरदयाल आमतौर से शाम के बाद ही इस मकान में आता है। आज सवेरे उसे देखकर चकित हो गई।

बोली, "बाबूजी आप? इतने सवेरे-सवेरे? हैल्थ खराब है क्या?"

हरदयाल बोला, "हैल्थ खराब नहीं है, यह अखबार ले आया हूं। देखो—"

यह कहकर अखबार अंटी की ओर बढ़ा दिया। अंटी अखबार देखकर बोली, "अरे, यह तो तेरह नंबर कमरे की असामी है—"

हरदयाल बोला, "यह लड़की हमीं लोगों के यहां है न? अभी वह लड़की किस हालत में है? तसवीर देखते ही याद आ गया कि यह तो पहचाना जैसा चेहरा है। यही वजह है कि सवेरे-सवेरे अखबार लिए यहां चला आया—"

अंटी ने भी छपी हुई तसवीर को बहुत देर तक ध्यान से देखा। बोली, "हां यह तो तेरह नंबर के कमरे की असामी जैसी लगती है। वैसा ही मुखड़ा, वैसी ही आंखें—"

हरदयाल ने कहा, "हां, मुझे भी ऐसा ही लगा। उसे यहां कौन ले आया था?

अकेली ही आई थी या किसी के साथ ?"

इस मुहल्ले में अनेकों अकेली ही आती हैं। अनेकों दल बांधकर भी आती हैं।

अंटी बोली, "एक बाबू साहब एक दिन उसे लेकर आया था—उसके बाद फिर नहीं आया।"

"बाबू साहब ? बाबू साहब कौन-से ? कौन-से बाबू साहब ?"

अंटी बोली, "यह तो मालूम नहीं। उसका नाम मैंने नहीं पूछा था। एक रात बिताने के बाद वह आदमी इसे छोड़कर भाग गया।"

"पेमेंट किया था ?"

"हां, एडवांस पेमेंट किया था।"

हरदयाल ने पूछा, "उसके बाद ?"

अंटी बोली, "तब से अगामी यहीं पड़ी हुई है, कोई उसे लेने नहीं आया है। रात-दिन नींद में मशगूल रहती है। लगता है हेल्थ बड़ा ही 'वीक' है, बिस्तर छोड़कर उठ नहीं पा रही है। केवल सोई रहती है। शायद डोज ज्यादा हो गया है।"

"कुछ खाया नहीं है ?"

अंटी बोली, "उसेगी तभी न उठ सकती है। मैं जब-जब आई, उसे सोई हुई हालत में ही देखा। उसके साथ क्या किया जाए, समझ में नहीं आता। न खाती-पीती है और न जगती है।"

हरदयाल बोला, "चलो, उस लड़की को एकबार देख आऊं—"

अंटी के कमरे से निकलने पर बरामदा मिलता है। टूटा-फूटा मकान। दीवार से चूना और रेत झड़ रही है। खिड़की-दरवाजे का रंग पुंछकर लकड़ी का रंग बाहर निकल आया है। ईंटों की दरार में खर-पतवार उग आए हैं। दीवार के बीच-बीच में गड्ढे हैं। उनमें कबूतरों ने दरबे बना लिए हैं। पुराने जमाने का मकान होने से जैसा कि हुआ करता है...

अंटी के साथ-साथ हरदयाल भी तेरह नंबर कमरे की ओर जाने लगा। बोला, "चलो-चलो, देखें माजरा क्या है !"

नेशनल यूनियन बैंक में तब काम का पहाड़ जमा हो गया था। साल तमामी के पहले हमेशा यही होता है। उस समय सबके लिए ओवरटाइम का मुअवज़ार आता है। ओवरटाइम का अर्थ ही है रुपया। जो आदमी सालों-भर काम में ढिलाई बरतता है, साल तमामी के समय वह सहसा सजग हो उठता है। लेकिन आश्चर्य-जनक कारनामा है सदीप लाहिड़ी का ! इसी समय उसने नागा किया ? बीच में मां की बीमारी का बहाना बनाकर उसने पत्र दिया था कि इसकी वजह से कुछ-कुछ दिनों तक दफ्तर नहीं आ सकेगा।

साल तमामी का काम खत्म हो गया और उसके बाद ही सदीप आकर हाजिर हुआ।

उसका चेहरा देखकर सभी अवाक् हो गए। कैसा चेहरा हो गया है उसका !

परेश दा ने पूछा, "क्या हुआ था संदीप ? तुम्हारा चेहरा इस तरह का क्यों हो गया है ?"

संदीप क्या कहे ! उसे क्या हुआ था, इसकी सूचना तो उसने पत्र के माध्यम से ही दे दी थी। परेश दा बोला, "अब तुम्हारी मां अच्छी हैं न ?"

परेश के लिए मां और मौसीजी में कौन-सा अलगाव है ? इसलिए कहा, "नहीं, अभी हालत और बदतर हो गई है। डाक्टर से दिखा रहा हूं। उसने कहा है और बहुत दिनों तक इलाज कराते रहना पड़ेगा।"

यादव भट्टाचार्य बोला, "फिर तो तुम्हें काफी असुविधा का सामना करना पड़ता होगा। खाना पकाना, उसके साथ रोगी की सेवा-सुश्रूषा करना, डाक्टर और दवा के पीछे खर्च—सबकुछ का बोझ तुम्हारे सिर पर ही पड़ गया है—"

खगेन बोला, "इसलिए तुमसे इतना कह रहा था कि शादी कर लो। पत्नी होती तो इस मुसीबत के दौरान कम-से-कम तुम्हारी मां की सेवा-सुश्रूषा तो करती।"

संदीप ने कहा, "शादी करने के बजाय कोई महरी रख लेने से भी वह काम चल सकता है।"

खगेन बोला, "पत्नी और महरी का दर्जा क्या एक ही है ? महरी रखने पर तुम्हें वेतन देना पड़ेगा, लेकिन पत्नी रहेगी तो वेतन नहीं देना पड़ेगा। बगैर वेतन की महरी मिल जाएगी।"

यह सब बात संदीप को कभी अच्छी नहीं लगती। इसलिए इस संबंध में बिना कुछ बोले अपने काम में तल्लीन होने की कोशिश की। लेकिन घर की बातों को क्या इतनी आसानी से भुलाया जा सकता है ? उसकी जो समस्या है उसे दूसरा कैसे महसूस करेगा ? विशाखा दूसरे की लड़की है। उससे खून का भी रिश्ता नहीं है। उसकी मुसीबत संदीप की मुसीबत है, यह कहने पर कौन यकीन करेगा ?

याद है, उस दिन संदीप ने घर जाने के बाद मां को. एकांत में बुलाकर कहा था, "जानती हो मां, आज हावड़ा स्टेशन पर मल्लिक चाचा से मुलाकात हुई थी। वे मुझसे मिलने बेड़ापोता ही आ रहे थे। अचानक हावड़ा स्टेशन पर मुलाकात होने पर वहीं बातचीत हो गई।"

"क्यों, बात क्या है ?"

"मुझसे यह कहने आ रहे थे कि विशाखा की अगर शादी न हुई हो तो शादी कुछ दिनों तक रोककर रखी जाए।"

मां को आश्चर्य हुआ। बोली, "क्यों ? अचानक इतने दिनों के बाद क्या हुआ ? वे लोग क्या फिर अपने पोते से उसकी शादी करना चाहते हैं ?"

संदीप ने कहा, "मल्लिक चाचा ने तो यही बताया। पहलेवाली मेम साहब को उनका पोता तलाक देने जा रहा है।"

यह सुनकर मां को बहुत खुशी हुई। बोली, "सो तो हुआ, मगर विशाखा कहां है, इसका कुछ पता चला ?"

संदीप ने कहा, "मुझे कुछ भी नहीं समझ में आ रहा कि वह कहां जाकर ठहरी हुई है। अब सोचता हूं, उन्हें यहां क्यों ले आया था ! दूसरे की झंझट अपने कंधे पर लेने में यही दोष है। वरना न तो मुझे इतना चक्कर काटना पड़ता और

न हो। तुम्हें इतना कष्ट भोगना पड़ता।"

मां बोली, "मेरी बात छोड़ दे। मुझे तकलीफ झेलने की आदत है। मरने के बाद ही मुझे शांति नसीब होगी। लेकिन तेरी तकलीफ देखकर ही मुझे दुख होता है। ऑफिस से गैर-हाजिर रहकर और कितने दिनों तक इस तरह चक्कर काटता रहेगा?"

सदीप ने पूछा, "मौसीजी कैसी है?"

मां बोली, "उसकी पहली ही जैसी हालत है। मुंह से बोलना तो कुछ दिनों से बंद ही कर दिया था, अब खाना भी नहीं खाना चाहती। मैंने आज जबरन खिलाया। लेकिन खाते ही उल्टी कर दी। पेट में कुछ भी नहीं जा रहा है। ईश्वर की क्या मंशा, कौन जाने!"

उसके बाद जरा रुककर पूछा, "कल ऑफिस जाएगा तो? बहुत दिनों से ऑफिस नहीं गया है। तेरी नौकरी पर ही इतने लोगों को भरोसा है। इस पर भी सोचकर देख ले—"

सदीप ने कहा था, "हां, कल जाऊंगा—अब सोचकर क्या होगा, जो होने को है, होगा ही।"

ऑफिस आने से क्या होगा! सिर्फ उसका शरीर ही ऑफिस आया है लेकिन मन विशाखा के गिर्द टिका हुआ है। वह कहां गई! और-और दिन ऑफिस आता तो दूसरों से कितनी बातचीत होती थी, दूसरों की कितनी बातें कान में आती थीं। आज कोई शब्द, कोई प्रकाश उसके मन के अंदर प्रवेश नहीं कर पा रहा है। छुट्टी होने पर यंत्र की नाई और-और लोगों की तरह वह भी सड़क पर निकल पड़ा। ऑफिस आने के दौरान लाल बाजार के पुलिस हेडक्वार्टर में जाकर एक बार दरियाफ्त कर आया था, "कुछ सूचना मिली है सर?"

पुलिसकर्मी ने कहा, "खबर मिलेगी तो आपको सूचित कर दिया जाएगा।"

हर रोज एक ही बंधा-बंधाया उत्तर मिलता है। ऑफिस से घर जाने के दौरान वहां जाकर फिर वही एक सवाल—"कुछ सूचना मिली है सर?"

हर रोज एक ही प्रश्न और एक ही उत्तर की पुनरावृत्ति। मौसीजी का शरीर दिन-ब-दिन टूटता जा रहा है। उस दिन भी घर पहुंचते ही मां ने कहा, "तेरी मौसीजी को अब इस हालत में रखे रहने में बड़ा ही डर लग रहा है। किसी डाक्टर से दिखाना अच्छा रहेगा, मुझे लक्षण अच्छा नहीं लग रहा है।"

मां और लड़की की जिम्मेदारी का भार सदीप ने जिस दिन अपने कंधे पर लिया है, इन झमेलों की जिम्मेदारियों को अलिखित तौर पर अपने कंधे पर उठाने का भार भी उसने स्वीकार कर लिया है। अब वह इस दायित्व की कौन-सा बहाना बनाकर अनदेखी करेगा?

बेहरामपाड़ा गांव में अलबत्ता एक डाक्टर है। लेकिन कभी उसको बुलाने की जरूरत नहीं पड़ी थी'''या उसकी सलाह लेने की अनिवार्यता का अहसास नहीं हुआ था।

अब जरूरत पड़ी। सब कुछ सुनने के बाद डाक्टर ने एक प्रेसक्रिप्शन लिख दिया। उसी को दिखाकर उसके दवाखाने से मिक्सचर मंगाकर खिलाया गया।

मौसीजी एक तो अपनी लड़की के हादसे से बेचैन है, उस पर अपनी बीमारी

के इलाज का भार इन लोगों के कंधे पर लादकर शर्मिन्दगी महसूस कर रही है।

बोली, "अब मैं दवा नहीं खाऊंगी दीदी, मुझे दवा मत खाने कहो।"

संदीप ने कहा, "मैं आपके लिए कुछ भी नहीं कर पा रहा हूं। कम-से-कम इतना तो करने दीजिए। मेरी अपनी मौसी होती तो उनके लिए करना ही पड़ता। आप क्या मेरी अपनी मौसी से कुछ कम हैं?"

इस बात पर मौसीजी अब एतराज नहीं कर सकी। संदीप के आफिस चले जाने के बाद एक दिन मौसी बोली, "लड़का न रहने के कारण मुझे बड़ा ही दुख था दीदी, लेकिन संदीप ने मेरी वह साध पूरी कर दी।"

शनिवार को जल्दी ही बैंक में छुट्टी हो जाती है। उस दिन लाल बाजार से निकल संदीप हावड़ा स्टेशन जाने के बजाय सीधे बिडन स्ट्रीट के भवन के अन्दर चला गया। गिरिधारी से गेट के सामने ही मुलाकात हो गई। संदीप पर नजर पड़ते ही गिरिधारी ने पहले की तरह ही सलाम किया। बोला, "राम-राम बाबूजी।"

संदीप ने पूछा, "तुम अच्छी तरह हो न गिरिधारी?"

गिरिधारी ने कहा, "बहुत दिनों से आप हुजूर तशरीफ नहीं लाए थे।"

संदीप ने कहा, "अब मैं कलकत्ता में नहीं रहता। देस से ही आता-जाता हूं तुम्हारे देस का क्या हालचाल है?"

"ठीक है बाबूजी। रामजी की कृपा से सब ठीक-ठाक हैं। लेकिन इस घर की खबर ठीक नहीं है बाबूजी। आपके जाने के बाद से सब कुछ गड़बड़ हो गया—"

"क्यों क्या बात है?"

"हां, हुजूर। सुना है, हम लोगों की नौकरी भी नहीं रहेगी।"

संदीप ने पूछा, "ऐसा क्यों?"

"हां, बाबूजी। विधु और फटिक को नौकरी से छुट्टी कर दिया गया है। बहुत दिनों से फैक्टरी बन्द हो गई है। मैनेजर साहब को सब मालूम है—"

"मैनेजर साहब अन्दर हैं?"

मल्लिकजी तब वहीं थे। संदीप पर आंखें जाते ही मल्लिकजी पलंग पर जाकर बैठ गए। बोले, "आओ-आओ—"

उसके बाद बोले, "उसका कुछ पता चला?"

संदीप ने कहा, "हर रोज थाने का चक्कर लगा रहा हूं। अखबार में विज्ञापन भी दिया है। क्या हुआ, समझ में नहीं आ रहा। उधर विशाखा के शोक में उसकी मां भी सख्त बीमारी की चपेट में आ गई थी। उन्हें दिखाने को डाक्टर बुलाना पड़ा। अपने कंधे पर जिम्मेदारी ले ली है तो पीछे हटने से तो काम नहीं चलेगा। फिलहाल यहां का क्या हालचाल है, वही बताइए। आपने उस दिन बताया था कि सौम्य बाबू मेमसाहब को डिवॉर्स कर देंगे।"

मल्लिकजी ने कहा, "फिलहाल इस घर में यही सब कांड चल रहा है। सौम्य बाबू जब विलायत से शादी कर लौटे थे उस समय जैसा तहलका मचा था, वैसा ही तहलका अब भी मचा हुआ है। मेम बहू अभी घर में तहलका मचाए हुए है—"

"ऐसा क्यों?"

"और क्यों, सिर्फ रुपये के लिए। एक बदचलन मेम को ब्याह कर लाने से ऐसा कांड नही होगा? उन लोगों के देश मे क्या भली मेम नही है? अनगिनत हैं। वैसी भली मेमें सौम्य बाबू से शादी करेगी ही क्यों?"

सहसा गेट की तरफ एक गाड़ी के रुकने की आवाज हुई।

मल्लिकजी व्यस्त हो उठे। यह आवाज उनकी पहचानी हुई है। बोले, "मंझले बाबू आए हैं। अभी तुरन्त मेरी बुलाहट होगी।"

संदीप ने पूछा, "क्यो?"

"आजकल मंझले बाबू हर रोज आया करते हैं।"

संदीप ने पूछा, "क्यों?"

मल्लिकजी बोले, "कुछ मत पूछो। घर में अभी कुरुक्षेत्र का युद्ध चल रहा है—मेम बहू सौम्य बाबू पर कसकर दबाव डाल रही है—"

"दबाव क्यो डाल रही है? किस चीज के लिए?"

"रुपये के अलावा और किस चीज के लिए! कहती है, बीस हजार पौंड देगा तभी मेम उसे तलाक देगी। साथ ही लन्दन वापस जाने का किराया भी देना होगा—"

एकाएक ऊपर से आवाज आई, "मंझले बाबू बुला रहे हैं, ऊपर आइए मुनीमजी।"

मल्लिक चाचा हड़बड़ाकर खड़े हो गए और बोले, "बुलाहट आई है, चल रहा हूं।"

संदीप बोला, "फिर मैं भी चलता हूं।"

"लेकिन मेरी बात ध्यान मे रखना। विशाखा की शादी कुछ महीने तक रोके रखना। हो सकता है विशाखा से ही सौम्य बाबू की फिर शादी हो जाए।"

संदीप ने कहा, "और वो जो किसी चटर्जी बाबू की लड़की से शादी की बात चल रही थी, उसका क्या हुआ?"

मल्लिकजी बोले, "वह पात्री क्या इतने दिनो तक बैठी रहेगी? उसकी एक दूसरे पात्र से शादी हो चुकी है।" इतना कहकर तुरन्त चले गए। जाने के पहले कह गए, "मेरी बात याद रखना, समझे?"

संदीप ने आहिस्ता-आहिस्ता सड़क की तरफ कदम बढ़ाए। उसके जेहन में सारा कुछ गड़मड़ जैसा हो गया है। जब विशाखा थी उस समय यह खबर मिली होती तो मौसीजी कितनी खुश होती। तो फिर मौसीजी को इतनी बदकिस्मती का सामना नही करना पड़ता। विशाखा भी नौकरी करने के लिए इतनी उतावली नही हुई होती और उसके फलस्वरूप इस तरह लापता भी नही हो गई होती।

बहुत दिन पहले, यानी सत्रहवी सदी मे जब पाश्चात्य देशों में नवयुग की [illegible] सबसे मुख्य हथियार था यंत्र। उन्हीं यंत्रों [illegible]। इससे यंत्रहीन देशों को पैरों पर झुकाने [illegible]

लेकिन कब तक वे पैरों पर झुके रहेंगे? एक दिन उन्हें पता चल गया कि दूसरे के खरीदे हुए गुलाम बनकर ही वे जिन्दगी बसर कर रहे हैं। उनको अपने देश से उखाड़ फेंको। दुश्मनों के देश में जो ईसाई पादरी आए थे वे तब मुक्त हस्त

से दान कर रहे थे। लेकिन उनका मकसद था सबको ईसाई बनाना। उस समय लोगों ने आक्रोश में आकर खून-खराबा शुरू कर दिया। देश से बाहर निकले हुए आक्रमणकारी भागने लगे।

जब कहीं किसी तरफ सुविधा का कोई रास्ता नहीं निकला तो निर्धन देशों को रुपया देना शुरू कर दिया। बेशुमार रुपया-पैसा। तुम्हें जितने भी रुपये चाहिए, लो। यह कर्ज तुम्हें अभी तुरन्त चुकाना है, ऐसी बात नहीं। बाद में चुका देना। बीस-पच्चीस साल के बाद चुकाने से भी कोई हर्ज नहीं। उस समय ब्याज चुका देना। मूलधन न चुकाने से भी काम चल जाएगा। यह जैसे पुराने जमाने के काबुलियों जैसा ही व्यवहार था।

उसका नतीजा यह हुआ कि सरो-सामान की कीमत बढ़कर आसमान छूने लगी। फिर भी बाहर से कर्ज देने की होड़ लग गई। उन लोगों ने कहना शुरू किया, "तुम लोग हमसे कर्ज लो, कर्ज लेकर अपने देशवासियों को बचाओ।"

उससे भी जब काम नहीं बना तो उन्होंने दूसरा रास्ता अख्तियार किया। कहीं से एक नई चीज का निर्यात करने लगे। सचमुच वह एक नई चीज थी। पहले अफीम और कोकेन था। लेकिन अब वे उन चीजों का निर्यात पान के मसाले, चॉकलेट के पैकेट और बहुत सारी दूसरी-दूसरी चीजों में करने लगे। अब देखना है! तुम लोगों को इन चीजों का नाम मालूम नहीं है। वह सब जहर चाय की डिबिया में मिला दी गई। लो, अब तुम लोग कैसे ज़िन्दा रहते हो! देखें, तुम लोग कैसे सिर ऊंचा करके रहते हो। हमें अपमानित करके जो भगाया है, अब उसका बदला लेंगे। अब तुम्हारे देश के निवासियों के द्वारा ही तुम्हें अपमानित कराएंगे। यही वजह है कि अपने माल के दलाल हम तुम्हारे देश के हर शहर में रखे हुए हैं। वे ही तुम्हारे राष्ट्र की रीढ़ की हड्डी तोड़कर चकनाचूर कर देंगे। वैसे ही दलाल हैं भवतोष साहा, गोपाल हाजरा, हरदयाल, फटिक, बच्चू पुलिसकर्मी और अंटी मेमसाहब।

उस दिन भी संदीप बाकायदा ठीक वक्त पर बैंक पहुंचा। आकर अपने काम में मशगूल हो गया। सभी बाजाब्ता बैंक आते हैं। सिर्फ खगेन सरकार पर ही नज़र नहीं पड़ रही थी। बैंक में एक आदमी के काम से दूसरे आदमी के काम का सरोकार रहता है, इसलिए कोई अनुपस्थित रहता है तो सबको इसका पता चल जाता है। जब खगेन पहुंचा तो उस समय तक सबका लगभग आधा काम खतम हो हो चुका था। खगेन को देखकर सभी उत्सुक हो उठे।

"क्यों जी, इतनी देर क्यों हुई?"

बैंक का कोई कर्मचारी देर करके पहुंचता है तो उसे अपने सहकर्मियों को कुछ न कुछ कैफियत देनी ही पड़ती है। कोई कहता है, ट्रेन लेट थी। कोई कहता है, सड़क पर ट्रैफिक जाम था। बहाने की कभी कोई कमी नहीं होती है उनके पास।

लेकिन उस दिन खगेन ने जो बहाना पेश किया, उसे सुनकर संदीप चौंक पड़ा।

खगेन सरकार ने कहा, "हम लोगों की बस ठीक समय पर ही आ रही थी, लेकिन अचानक एक जगह आकर रुक गई। वहां से वह टस से मस होने का नाम नहीं ले रही थी। उस समय सभी को अपने-अपने निश्चित स्थान पर पहुंचने की

हड़बड़ी थी। लोग-बाग चिल्ला उठे : बस चल क्यों नहीं रही है? ऐ ड्राइवर, बस को क्या हुआ? चलाओ, ऑफिस जाने में देर हो रही है—"

पर बस चले तो कैसे चले? सड़क पर हजारों आदमी की भीड़ है। बस के सामने बहुत सारी ट्रामें-टैक्सियां, कारें और बसें रुककर खड़ी हैं। वे खिसकेंगी नहीं तो बस कैसे आगे बढ़ेगी? दूसरे रास्ते में घूमकर अपने गतव्य स्थान पर जाएगी, इसका भी उपाय नहीं। पीछे की भी सारी सवारियां रुकी हुई हैं। भीड़ देखकर भीड़ बढ़ने लगती है। उस भीड़ के जमते-जमते आदमी की कतार-दर-कतार भीड़ लग गई है।

"उसके बाद?"

लेकिन कलकत्ता के लोगों के लिए यह कोई नई घटना नहीं है। जिस दिन से देश का बटवारा हुआ है उसी दिन से कलकत्ता शहर की रोजमर्रा की यही शक्ल है।

लेकिन असली बात यह नहीं है। असली बात है एक लड़की।

"लड़की का मतलब?"

खगेन ने कहा, "बस से उतर बहुत तकलीफ के साथ जब अन्दर घुसा तो देखा, "एक लड़की···"

"लड़की?"

खगेन सरकार ने कहा, "हां, एक अठारह-बीस साल की लड़की—"

सदीप के कान में आवाज जाते ही वह चौकन्ना हो गया। पूछा, "अठारह-बीस साल की एक लड़की?"

खगेन सरकार ने कहा, "हां, देह पर एक गुलाबी साड़ी लिपटी हुई थी—"

"गुलाबी रंग की साड़ी? देह का रंग गोरा-चिट्ठा?"

खगेन बोला, "हां, खूब निखरा गोरा रंग—"

"उसके बाद? उसके बाद क्या हुआ?"

खगेन सरकार कहने लगा, "देखा, लड़की बेहोशी की हालत में सड़क पर पड़ी है। देखकर लगा, लड़की मरकर पड़ी हुई है। शुरू में लोगों ने यही सोचा था। लेकिन देखने पर पता चला, बात ऐसी नहीं है। उस समय भी लड़की में जान थी। छाती हौले-हौले धड़क रही थी—"

सदीप ने कहा, "उसके बाद?"

"उसके बाद और क्या? पुलिस ने आकर सब लोगों को हटाकर रास्ता साफ कर दिया। हम लोग भी अपनी-अपनी बस-ट्राम पर चढ़ गए और ऑफिस चले आए।"

"उसके बाद? उसके बाद उस लड़की का क्या हुआ? लड़की क्या सड़क पर ही पड़ी रही?"

खगेन सरकार ने कहा, "क्या हुआ, इसका पता कहां चला? हम लोगों को ऑफिस आने में देर हो रही थी, इसलिए बस पर चढ़ गए और आते आए यहां···"

"लड़की वहीं पड़ी रही?"

"हां। बेशक अब भी वहीं पड़ी हुई होगी—"

हिन्दी में पूछताछ की।

मोची जूता मरम्मत कर पैसा कमाने के लिए कलकत्ता आया है। वह फालतू कर अपना वक्त वर्वाद नहीं करना चाहता। उसने सिर झुकाकर अपना काम हुए कहा, "मुझे मालूम नहीं वावू।"

संदीप ने और भी साफ तौर पर, जहां तक हो सके, शुद्ध हिन्दी में पूछताछ

मोची ने अव वंगला में कहा, "मेरे पास वक्त नहीं है वावू, आप पुलिस से ए।"

संदीप ने अव नज़र दौड़ाकर देखा, सड़क के मोड़ पर एक पुलिसकर्मी ड्यूटी ा रहा है। अव तक जल्दवाज़ी की वजह से उस पर नज़र नहीं पड़ी थी।

संदीप आहिस्ता-आहिस्ता पुलिसकर्मी के पास जाकर खड़ा हुआ। पुलिसकर्मी व चलती हुई वस-ट्राम को संभालने में व्यस्त था। वोला, "सिपाहीजी—"

संदीप की तरफ देखते हुए सिपाहीजी ने कहा, "क्या ?"

संदीप ने उससे भी वही सवाल किया—यहां कोई लड़की क्या सड़क पर पड़ी हुई थी ? तकरीवन दो घंटा पहले ?

सिपाही तव अपने काम में वेतरह व्यस्त था। चारों तरफ की वस, ठेलागाड़ी, ट्राम, रिक्शा, आदमी, साइकिल, ट्रक, स्कूटर वगैरह के यातायात को नियन्त्रित करने में वुरी तरह व्यस्त था। संदीप ने दुवारा वही प्रश्न उसकी ओर उछाला।

अव ज़रा-सी फुर्सत मिली तो सिपाही ने कहा, "हां वावूजी, एक औरत वेचैन होकर सड़क के वीच वहुत देर तक पड़ी हुई थी। तव ऑफिस-टाइम था। उसके वाद पुलिस की गाड़ी आकर उसे उठाकर थाने ले गई।"

"किस थाने से ?"

ट्रैफिक पुलिस को इतनी सारी वातों की जानकारी नहीं है। उस समय वह ड्यूटी पर नहीं था। इसके पहले जो ड्यूटी पर था उसे इस वात की जानकारी हो सकती है।

सिपाही फिर से ट्रैफिक संभालने में व्यस्त हो गया।

संदीप ने पूछा, "किस थाने में जाकर पूछताछ करूं सिपाहीजी ? कहां के किस थाने की गाड़ी उसे उठाकर ले गई है ? मेहरवानी कर ज़रा वताइए न सिपाहीजी—"

सिपाही अपनी ड्यूटी करेगा या उसके ऊल-जलूल सवाल का जवाव देगा। दुनिया में एकमात्र पागल के अतिरिक्त किसी के पास समय नहीं होता। सभी या तो ड्यूटी वजाने में व्यस्त रहते हैं या पैसा कमाने में। अचानक तव एक भारी ट्रक गैर-कानूनी तरीके से हड़वड़ाकर सड़क पर घुस आया था। सिपाही तत्क्षण चौकन्ना हो गया। वह हाथ वढ़ाकर ट्रक की गति रोकने जा रहा था लेकिन ट्रक उतनी आसानी से उससे डरेगा क्यों ? आखिर में उस चलते हुए ट्रक के पायदा पर वह उछलकर चढ़ पड़ा। जितनी दूर तक देखा जा सकता है, संदीप ने आं दौड़ाकर देखा। चलता हुआ ट्रक वाईं तरफ की पान की एक दुकान के साम जाकर रुक गया और ट्रैफिक के पुलिसकर्मी ने हाथ में कुछ लेकर पॉकेट के अन्द डाल लिया। उसके वाद वह पायदान से नीचे उतर अपनी ड्यूटी के स्थान की अ

कदम बढ़ाने लगा। तब उसके चेहरे पर विरक्ति की कोई छाप नहीं थी। वह बेहद खुश था। पॉकिट से खैनी निकाल बाएं हाथ की हथेली पर रख दाहिने हाथ से उसे रगड़ा और मुंह के अन्दर डाल लिया।

उसके बाद इतमीनान की एक लम्बी सास ली। सदीप की दृष्टि चायघर की घड़ी की ओर गई। घड़ी देखकर वह चौंक पड़ा—तीन बजने में दस मिनट बाकी हैं। अब वह क्या दस मिनट में बैंक पहुंच सकेगा!

इसके बाद जो घटना घटी वह भी ठीक इसी समय घटी। उसी दिन रात के आखिरी पहर में।

मिस्टर वरदराजन गुरुस्वामी इनकम टैक्स ऑफिसर हैं। वे सेंट्रल ऐवन्यू के एक फ्लैट में रहते हैं। हर रोज रात के आखिरी पहर में चार बजे सोकर उठने हैं। तब उनका प्रात. भ्रमण का समय हुआ करता है। वे सेन्ट्रल ऐवन्यू से निकल बिडन स्ट्रीट पकड़ते हुए कर्नवालिस स्ट्रीट जाते हैं। उसके बाद कर्नवालिस स्ट्रीट की ट्राम लाइन पार कर कर्नवालिस स्क्वायर।

यह उनकी बहुत पुरानी आदत है। दिन-भर गणित के कीड़े उनके जेहन में कुलबुलाते रहते हैं। उन कीड़ों को मारने के लिए उन्हें ऑक्सीजन की जरूरत पड़ती है। रात के आखिरी पहर के अलावा कलकत्ता में ऑक्सीजन रहता ही कहा है! दिन-भर तो कार्बन-डाइआक्साइड और नाइट्रोजन का बोलबाला रहता है। बस-गाड़ी-कोयले का धुआ और डिजल की गैस नाक और मुह के अन्दर समाकर देह को झाझर बना देती है।

उसी जहर से छुटकारा पाने के लिए मिस्टर गुरुस्वामी अहलेस्सुबह टहलने निकलते हैं।

कर्नवालिस स्क्वायर में एक बहुत बड़ा तालाब है। तालाब के चारों तरफ रास्ता बना हुआ है। उस तालाब के चारों तरफ दस-बारह बार चक्कर लगाना उनका बहुत दिनों से चला आ रहा अभ्यास है।

लेकिन उस दिन अचानक एक काड हो गया।

कांड कहने के बजाय उसे दुर्घटना कहना ही अच्छा रहेगा। वे अपने इष्ट मंत्र का जाप करते हुए चहलकदमी कर रहे थे। उनका मन भी तब इहलोक पार कर उर्ध्वलोक मे विचरण कर रहा था। इसलिए सड़क पर उनकी निगाह टिकी हुई नही थी।

अपने सामने जैसे उन्होंने अकस्मात् एक जिन्दा साप देख लिया हो उसी अंदाज से पीछे हट गए।

क्या है वह? क्या है?

उसके बाद गौर से देखा तो चौंक पड़े। यह तो एक आदमी है। एक आदमी उनके रास्ते के सामने पड़ा हुआ है।

तब चारों तरफ कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। मुहल्ले के लोग रजाई-कबल में लिपटे हुए नीद में बेहोश पड़े थे।

कर्नवालिस स्ट्रीट की तरफ से एक गाड़ी के हेडलाइट की रोशनी छिटककर

उस आदमी पर पड़ी। लेकिन सिर्फ आधे मिनट के लिए ही। फिर भी उतने कम समय के दरमियान ही उन्होंने देख लिया कि जो आदमी रास्ते पर पड़ा हुआ है वह मर्द नहीं, औरत है।

मिस्टर गुरुस्वामी ने ऊपर की तरफ आंख उठाकर देखा। देखा कि एक तीन-मंज़िली इमारत है। सामने की सड़क की तरफ एक छज्जा है। उस तरफ देखने पर उन्होंने अन्दाज़ा लगाया, उस छज्जे से ही वह औरत कूदकर नीचे गिर पड़ी है या उसे ऊपर ही मारकर रास्ते पर फेंक दिया गया है।

उनका दिमाग अभी रोमांच और दहशत से चकराने लगा है। क्या करें, उनकी समझ में नहीं आया। उन्होंने सोचा, अभी तुरंत नजदीक के किसी थाने में जाकर इसकी सूचना दे देनी चाहिए। क्योंकि तब शायद वे ही इस दुर्घटना के प्रथम प्रत्यक्षदर्शी थे।

तुरंत उस इमारत के पास जा उन्होंने उसका पता लगाने की कोशिश की। देखा, अंग्रेजी में सफेद संगमरमर के टैबलेट पर मालिक का पता लिखा हुआ है—देवीपद मुखर्जी, 19/ए, विडन स्ट्रीट, कलकत्ता। उन्होंने अब देर नहीं की।

थाने पर उस वक्त जो लोग ड्यूटी पर थे वे ठंड से सिकुड़-सिमट कर कंबल लपेटे मेज पर सोए हुए थे। थाने के अन्दर उनके पहुंचते ही जो आदमी सोया हुआ था, उसने मुंह पर से कंबल हटा अधसोई हालत में ही पूछा, "कौन?"

मिस्टर गुरुस्वामी ने कहा, "मैं एफ० आइ० आर० कराने आया हूं, ओ० सी० कहां हैं?"

उस आदमी ने लेटे-लेटे ही कहा, "वे अपने क्वार्टर में हैं। आप कौन हैं? थोड़ी देर बाद आइएगा।"

मिस्टर गुरुस्वामी बोले, "यह बड़ा ही अर्जेन्ट केस है। मैं उनसे अभी तुरंत मिलना चाहता हूं।"

आदमी ने पूछा, "आप कौन हैं? आपका नाम क्या है?"

मिस्टर गुरुस्वामी बोले, "मेरा नाम है वरदाराजन गुरुस्वामी, मैं इनकम टैक्स ऑफिसर हूं।"

यह सुनते ही आदमी हड़बड़ा कर उठ बैठा। कंबल फेंककर बोला, "आप बैठ जाइए, सर।"

यह कहकर कुर्सी आगे बढ़ा दी। उसके बाद तुरन्त खाता लेकर लिखने लगा। "आपने अपना क्या नाम बताया?"

"वरदाराजन गुरुस्वामी।"

आदमी बोला, "आप इनकम टैक्स ऑफिसर हैं न? किस डिविज़न के? और आपके घर का पता क्या है?"

मिस्टर गुरुस्वामी ने अपने घर का पता बताया तो उसने दर्ज कर लिया। उसके बाद बोला, "केस क्या है सर?"

मिस्टर गुरुस्वामी ने जो कुछ देखा था, बताया। विडन स्ट्रीट के भवन का नंबर है बारह बटे ए। भवन के मालिक का नाम देवीपद मुखर्जी।

"एक्सिडेंट का केस है?"

मिस्टर गुरुस्वामी बोले, "एक्सिडेंट है या मर्डर या सुसाइड केस, यह मैं नहीं

बता सकता। देखा, एक महिला की लाश सामने के रास्ते पर पड़ी हुई है।"

"महिला की उम्र क्या है?"

मिस्टर गुरुस्वामी बोले, "यह मैं नहीं बता सकता हूं। अठारह भी हो सकती है, पचीस भी हो सकती है।"

"देह का रंग कैसा था?"

"ठीक-ठीक बता नहीं सकता। क्योंकि उस समय वहां गहरा अंधेरा था, अच्छी तरह देख नहीं सका। आप लोग खुद जाकर सारा कुछ देख सकते हैं।"

एफ० आइ० आर० दर्ज होने के बाद मिस्टर गुरुस्वामी अपने घर चले गए। उस दिन उनका सवेरे का टहलना नहीं हो सका।

याद है, एक दिन बाद जब संदीप ने इस वारदात की खबर अखबार में पढ़ी तो उसे सर्वप्रथम बेड़ापोता में देखे हुए 'बिल्वमंगल' नाटक का स्मरण हो आया था। 'बिल्वमंगल' नाटक मंचित हो रहा है। चटर्जी बाबुओं के मकान के काशीनाथ बाबू चिन्तामणि की भूमिका में उतरे थे और निवारण चाचा बिल्वमंगल की भूमिका में। एक दिन में धाको और चिन्तामणि ने प्रवेश किया। चिन्तामणि ने पूछा, इस आंधी-बारिश में तुम कैसे तैर कर आए?

बिल्वमंगल वेशधारी निवारण चाचा ने कहा, "लकड़ी के इस कुंदे पर चढ़कर।"

चिन्तामणि वेशधारी काशीनाथ बोले, "यह क्या, यह तो शवदेह है—"

उस समय निवारण चाचा चिहुंक उठे। बोले—

"यह नरदेह
वह जाता जल में
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है

यह नारी—इसका भी परिणाम यही
नश्वर इस जग में।
हाय, प्राण दे रहे किन्तु क्यों
किसके हित शव का करके आलिंगन?
कठिन बंध में रखते बांध
यह उषा, यह छाया
मिथ्या, हा मिथ्या है यह सब
देख रहा हूं गहन अंधेरा आज
मैं किसका, मेरा कौन यहां है?…"

अखबार पढ़ते-पढ़ते संदीप भी सोचने लगा—बात तो सही है, फिर वह विशाखा के बारे में इतना क्यों सोच रहा है! विशाखा तो उसकी अपनी कोई नहीं है। विशाखा के भले-बुरे के लिए वह इतनी मायापच्ची क्यों करता है! उसे जो मर्जी हो, करे; जहां मर्जी हो, जाए। वह चाहे हेरोइन खाए या कोई दूसरे नशे का सेवन ही क्यों न करे, संदीप अब किसी के बारे में नहीं सोचेगा।

रात में घर जाने पर मां को अखबार दिखाया। बोला, "देखो मां, यह हरकत।"

मां तो पढ़ना नहीं जानती । वोली, "क्या हुआ है ? क्या लिखा है, तू ही वता न ?"

संदीप ने कहा, "उसी मुखर्जी परिवार के विडन स्ट्रीट-भवन में क्या एक्सिडेंट आ है, सुनो । उस सौम्य वावू की मेम पत्नी को तीन-मंजिले में मारकर रास्ते पर ंक दिया गया है । पुलिस को संदेह है कि किसी ने जरूर ही उसकी हत्या की है । इसीलिए पुलिस ने सौम्य वावू को गिरफ्तार कर हवालात में ठूंस दिया है—"

उसके वाद जैसे वात याद आ गई हो, इस अन्दाज से पूछा, "मौसीजी की तवीयत कैसी है ? अव कितना वुखार है ?"

मां वोली, "डाक्टर साहव तीसरे पहर आकर वुखार देख गए हैं । उस समय एक सौ पांच डिग्री वुखार था ।"

"इतना ? दवा दी है ?"

मां वोली, "हां मैंने कमला की मां को भेजकर डाक्टर साहव की दुकान से दवा मंगा ली है । एक डोज दवा भी खिला दी है ।···विशाखा का कुछ पता चला ?"

संदीप ने वस इतना ही कहा, "नहीं···"

मुक्तिपद वैसे लोगों के तवके के हैं जो वाहर से देखने पर सुखी लगते हैं । वाहर के लोग उन्हें देखेंगे तो उनसे ईर्ष्या करेंगे । सोचेंगे, इनका जैसा जीवन होता तो हम सुखी होते । हर वक्त मजे से कार पर घूमते रहते हैं, एक आलीशान इमारत और खूवसूरत गाड़ी के मालिक हैं, हर क्षण अधीनस्थ कर्मचारी उन्हें सलाम करते हैं ।

सिर्फ वाहरी लोगों पर ही दोष क्यों मढ़ा जाए ? उनके नजदीकी आदमी भी यही सोचते । वेलफेयर ऑफिसर जशवंत भार्गव, चीफ एकाउन्टेंट नागराजन, वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी, डिप्टी मैनेजर अर्जुन सरकार वगैरह भी सोचते कि मुक्तिपद मुखर्जी भाग्यशाली व्यक्ति हैं । वड़े आदमी का पुत्र होकर पैदा होने के नाते न केवल वेशुमार पैसे के मालिक हैं वल्कि वहुत सारे लोगों के हर्त्ता-कर्त्ता-विधाता होने का भी उन्हें अधिकार प्राप्त हुआ है ।

लेकिन दरअसल किसी को क्या पता है कि मुक्तिपद रात में सोते हैं या नहीं और अगर सोते हैं तो कितनी देर तक सोते हैं ?

उन्हें खवर रखने की जरूरत ही क्या है ? वे जानते हैं कि फैक्टरी न भी चले तो उनके घर में वाजाव्ता तनख्वाह के रुपये पहुंच जाएंगे ।

लेकिन कव तक ? डाइरेक्टर लोग और कितने दिनों तक घाटे वरदाश्त क फैक्टरी चलाएंगे ?

अतः इसके लिए वे भले ही चिन्तित हों पर उनकी चिन्ता मुक्तिपद की चि के सामने नहीं के वरावर है—इस वात को वे नहीं समझते थे ।

वीच-वीच में वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी और डिप्टी मैनेजर अर्जुन सरका साथ कैमरा मीटिंग चलती । उन्हें वे हैदरावाद भेजते, मध्यप्रदेश भी भेजते । भी वहुत सारी जगह भेजते ।

मुक्तिपद कहते, "वेस्ट वंगाल में अव किसी दिन कोई उद्योग-धंधा

सकता है, मुझे ऐसा नहीं लगता।"

वर्क्स मैनेजर उनकी हां में हां मिलाता। कहता, "जिस दिन से देश का बंटवारा हुआ है उसी दिन से सब कुछ चौपट हो गया है।"

अर्जुन सरकार कहता, "इन सबों की जड़ में राजनीति के अलावा और कुछ नही है।"

मुक्तिपद कहते, "इस संबंध में मेरी बहुत सारे विदेशियों से बातें हुई थीं। इंगलैंड, फ्रांस, वेस्ट जर्मनी जब भी मैं जहां जाता था, वहीं वे लोग कहा करते थे, इंडिया इतनी बड़ी कंट्री है कि इसका पार्टिशन न होगा तो दुनिया के बैलेंस ऑफ पावर को एक बहुत बड़ा धक्का लगेगा। ग्रेट ब्रिटेन इसे मानने को तैयार नही था। इसीलिए माउन्टबेटन और उसकी खूबसूरत बीवी के द्वारा यह विनाश कराया गया। इस मामले में वे कितने धुरंधर थे इसका पता अब चलता है। उस समय भारत को अपना गुलाम बनाकर वे जो बिजनेस करते थे आज वह बिजिनेस दुगुना हो गया है। इसके फलस्वरूप उनकी आमदनी भी अब दुगुनी हो गई है।"

इन बातों की चर्चा करने से कोई लाभ नही, यह सोचकर वे दूसरे मुद्दे पर चर्चा करते। उस समय चर्चा चलती कि कहां किस प्रदेश में फैक्टरी हटाकर ले जाई जाए। दक्षिण भारत या उत्तर प्रदेश या मध्य प्रदेश?

मुक्तिपद कई बार खुद भी उन जगहों से हो आए थे। अर्जुन सरकार को भी कई बार मध्यप्रदेश भेजा था। उन दोनों को जो जानकारी प्राप्त हुई उससे वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि बंगालियों को कोई पसन्द नही करता। सबको पता चल गया कि जहां एक भी बंगाली जाता है वहां बंगालियों का हुजूम पहुंच जाता है। और वे जाते हैं तो यूनियनबाजी करने लगते है! साथ ही स्थानीय लोगों को नौकरी मिलने की सुविधा भी कम हो जाती है।

यह सब समस्या जब विराट रूप धारण करने लगी तो उसी समय एक नई समस्या पैदा हो गई। ठीक उसी वक्त सौम्य विलायत से एक मेम को ब्याह कर ले आया तो मां को दिल का दौरा पड़ा। और तब आदमी और यम के बीच खींचतान शुरू हो गई।

और वह झमेला जब कुछ कम हुआ तो मुक्तिपद के जीवन में एक और झमेला आकर खड़ा हो गया। उस समय रुपये के चलते सौम्य का अपनी पत्नी से झगड़ा-टंटा पराकाष्ठा तक पहुंच गया। तब तलाक देने की बात उठी। बीस हजार पौंड देकर जब तलाक का मामला रफा-दफा करने की बात चल रही थी, उस समय मां ने एक दिन मुक्तिपद को बुला भेजा।

मां बोली, "एक बार तू आ जा मुक्ति, मुझसे अब सहा नही जा रहा है—"

मुक्तिपद ने कहा, "क्यों, फिर क्या हुआ?"

मां बोली, "और क्या होगा! उस मेम बहू ने फिर से झगड़ना शुरू कर दिया है। झगड़े के शोर-शराबे के कारण सबका बुरी हालत है।"

"क्यों? फिर से झगड़ा होना क्यों शुरू हो गया? मैंने तो कहा है कि उसकी बीस हजार पौंड की मांग मैं पूरी कर दूंगा। लेकिन डिवॉर्स कहने से ही तो तुरंत डिवॉर्स नहीं हो जाता। वकील-एटर्नी के साथ बैठकर बातें करनी होंगी। उसमें भी काफी वक्त लग जाएगा। इधर फैक्टरी हटाकर ले जाने की बात चल रही है"

भी सोचता हूं फैक्टरी हटाकर हैदराबाद ले जाऊं और कभी सोचता हूं मध्यप्रदेश चलूं। मैं अकेला आदमी, किस-किस तरफ निगरानी रखूं—"

मां बोली, "पहले तू मुझे बचा उसके बाद मेरे मरने के बाद तुझे जो मर्जी हो करना। सौम्य मुझे बहुत तंग कर रहा है, मुझसे सहा नहीं जाता—"

मुक्तिपद ने कहा था, "ठीक है, परसों मेरे स्टाफ की मीटिंग है। मीटिंग खत्म होते ही तुमसे मिलूंगा।"

लेकिन उसके पहले ही सारा कुछ उलटा-पुलटा हो गया। दूसरे दिन सवेरे पांच बजे ही मुक्तिपद का टेलीफोन घनघना उठा।

"कौन?"

मां बोली, "अरे मुक्ति, मैं हूं—"

मुक्तिपद ने अचकचाकर पूछा, "मां तुम्हें क्या हुआ? फिर बीमार हो गईं क्या?"

"अरे नहीं, मैं मारी गई..."

कहते-कहते मां रोने लगीं और उसके साथ ही टेलीफोन की लाइन कट गई। दुबारा मां को फोन लिया। उस तरफ टेलीफोन की घंटी बज उठी। बजती रही, बजती रही पर किसी ने नहीं उठाया। बहुत देर तक इंतजार करते रहने पर भी जब किसी ने नहीं उठाया तो मुक्तिपद ने सोचा, शायद लाइन में कोई गड़बड़ी हो गई।

उसके बाद मुक्तिपद को नींद नहीं आई। फिर से टेलीफोन करने की बात ध्यान में नहीं आई। लेकिन एक घंटे के बाद जब टेलीफ़ोन फिर बज उठा तो मुक्तिपद अपनी ऊब दबाकर नहीं रख सके। पूछा, "कौन?"

बगल के एक पलंग पर नंदिता सोई हुई थी। उस आवाज से वह झुंझला उठी। बोली, "उफ्, टेलीफोन की यातना से तो तंग-तंग आ गई। अब सहा नहीं जाता—"

मुक्तिपद उस समय चिल्ला रहे थे, "मार डाला है?"

उधर से क्या कहा गया, नंदिता सुन नहीं सकी। लेकिन मुक्तिपद ने पूछा, "क्या कह रही हो? पुलिस आई है? और सौम्य? वह क्या कह रहा है? कहां गिर गई है? ठीक मकान के सामने? अच्छा, मैं अभी तुरंत आ रहा हूं—"

यह कहकर मुक्तिपद ने टेलीफोन का रिसीवर रख दिया। उसके बाद सीधे कमरे के बाहर चले गए।

नंदिता को इतनी देर के बाद मानो चैन की सांस लेने का मौका मिला। किसको क्या हुआ है, यह वह नहीं जानती।

लेकिन विडन स्ट्रीट भवन के तमाम लोगों को तब घटना की जानकारी प्राप्त हो चुकी थी। वहां भय से सबके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं। सच, घर के सामने ही तब भी मेम साहब मरी हुई हालत में पड़ी थी। सड़क पर तब आदमी की खासी भीड़ हो गई थी। जैसे सबको बड़ा ही मजा आ रहा हो। सूचना मिलते ही पुलिस की गाड़ी के साथ अस्पताल का एम्बुलेंस आया और मेम साहब के शरीर को अंदर रख दिया गया।

मकान के सामने तब गिरिधारी की छाती जोरों से धड़क रही थी। उसे सि

इसी बात का खौफ है कि कहीं पुलिस उसे पकड़कर जेल में ठूंस न दे।

गिरिधारी की ड्यूटी चौबीसों घंटे की रहती है। उसकी ड्यूटी है कब कौन घर के अंदर आता है और कब कौन घर के अंदर घुसता है, इस पर निगरानी रखना। इतने बड़े खून की घटना उसके करीब ही घटित हो गई और वह कुछ भी न देख सका और न जान सका। यह तो उसकी लापरवाही है। पुलिस के द्वारा दरवाजा खटखटाने पर वही पहले नींद से जग गया था। घर का दरवाजा खोलने के बाद पुलिस पर नजर पड़ते ही वह चिहुंक उठा।

"तुम कौन हो? तुम्हारा नाम क्या है?"

गिरिधारी ने कांपती हुई आवाज मे कहा, "हुजूर, मैं गिरिधारी···"

उसके बाद पुलिस उसे सड़क पर खींचकर ले गई।

"वह किसकी लाश है?"

लाश शब्द सुनते ही उसका चेहरा सफेद पड गया। वह मेम साहब को अच्छी तरह पहचानता है। रात के समय जब वह मुन्ना बाबू के साथ निकलती उस समय देखा है और रात खत्म होने पर जब नशे में चूर होकर लौटती उस समय भी मेम साहब को देखा है।

"बताओ, यह किसकी लाश है?"

गिरिधारी ने सारा कुछ सच-सच बताया। बोला, "हुजूर यह मुन्ना बाबू की मेम साहब बहूजी—"

"बहूजी? उसे यहां किसने फेंका?"

गिरिधारी ने कहा, "मुझे कुछ मालूम नहीं हुजूर। मैं अपने कमरे में सोया हुआ था हुजूर।"

इस बीच पुलिस दल के और-और कर्मचारी भी खुले हुए गेट से अन्दर जाकर, एकबारगी दो-मंजिला पार कर तीन-मंजिले पर पहुच गए थे। सरदियों की ठिठुरन के मारे घर के तमाम लोग नींद में बेखबर पड़े हुए थे। सिर्फ बिन्दु की ही आंखों में नींद नहीं थी। दादी मां के तकाजे के कारण उसे ठंड में ही जगना पड़ा है। उतने सारे लोगों के बूट की आवाज सुनकर उसने कहा, "कौन? कौन है उधर?"

दादी मां अपने कमरे में तल्लीनता के साथ जप कर रही थी। पूछा, "कौन है बिन्दु? तू किसे कह रही है? मुन्ना बहू से फिर झगड रहा है क्या?"

नीचे मल्लिकजी की नींद खूब तड़के ही टूट जाती है। लेकिन हां, सरदियों के मौसम में जब ठंड ज्यादा पड़ने लगती है तो थोड़ी देर हो जाती है। उस ओर गिरिधारी किसी से बातें कर रहा था, इसीलिए उनकी तंद्रा टूट गई थी। उन्होंने भी बाहर निकलने के बाद जब पुलिसकर्मियों को देखा तो अवाक् हो गए।

पुलिस ने उनसे पूछताछ शुरू कर दी, "आप क्या इसी मकान में रहते हैं?"

ठीक गिरिधारी से जिस तरह जिरह करना शुरू कर दिया था, उनसे भी करना शुरू कर दिया।

पुलिस ने मल्लिकजी का नाम-पता वगैरह कुछ दर्ज कर लिया। यहां तक कि उन्हें कितनी तनख्वाह मिलती है, यह भी पूछ लिया। उसके बाद मल्लिकजी से कहा, "आइए, बाहर आइए।" यह कहकर उन्हें बाहर सड़क पर ले गए।

उस समय वहां लाश पड़ी हुई थी।

ते ही मल्लिकजी सिहर उठे।

ए, यह कौन है? आप इसे पहचानते हैं?"

कजी तब विभ्रांत जैसी स्थिति में थे। इसे न पहचानेंगे तो किसे

उस वक्त सारी जगह खून से लथपथ थी। अंधेरा पूरे तौर पर नहीं

फिर भी चेहरा देखने से साफ तौर पर पहचान में आ जाता है। यही तो

मुन्ना बाबू उसे विलायत से ब्याह कर ले आए थे! हाय-हाय, उसी की

गति! इसे ही तलाक देने की बातचीत चल रही थी। इसे ही मंझले बाबू

हज़ार पौंड देने का वादा किया था। मल्लिकजी की छाती रह-रहकर धड़क

ा।

"बताइए, आप इसे पहचानते हैं?"

पुलिस की आवाज़ में डांट का पुट है। मल्लिकजी ने कहा, "हां, पहचानता

दुबारा पुलिस का सवाल, "यह कौन है?"

मल्लिकजी बोले, "ये इस घर की मालकिन के पोते की पत्नी हैं। इस घर का

ता सौम्यपद इस मेम साहब को विलायत से ब्याह कर ले आया था—"

"इसकी हत्या की गई है?"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं यह कैसे बता सकता हूं?"

"पति-पत्नी में झगड़ा होता था?"

मल्लिकजी ने कहा, "यह मैं कैसे बता सकता हूं? मैं तो नीचे इस कमरे में

रहता हूं। यहां दिन के वक्त रहता हूं और रात में भी—"

"आपने कभी सुना नहीं था कि इन दोनों में आपस में झगड़ा होता है या

नहीं?"

मल्लिकजी इस बात का क्या उत्तर दें, उनकी समझ में नहीं आया। अंततः वे

क्या से क्या कह बैठें। ऐसी हालत में वे भी पुलिस की गिरफ्त में फंस जाएंगे।

"बोलिए-बोलिए, पति-पत्नी में झगड़ा होता था या नहीं?"

मल्लिकजी को खौफ का अहसास हुआ।

"बोलिए।"

"हां, झगड़ा होता था।"

"क्यों होता था?"

मल्लिकजी ने कहा, "रुपये-पैसे के लिए।"

"रुपये-पैसे के लिए झगड़ा क्यों होता था?"

मल्लिकजी ने कहा, "मेम साहब रुपये-पैसे के लिए सौम्य बाबू को बहुत तंग

करती थी।"

उस समय मकान के तीन-मंज़िले पर बिन्दु पुकार रही थी, "दादी मां, दा

मां, पुलिस आई—"

दादी मां का तब जप समाप्त नहीं हुआ था। जप के बीच ही उठ ग

पुलिस का नाम सुनते ही कलेजा धक् से कर उठा। पुलिस? पुलिस क्यों आई

"पुलिस? पुलिस कहां है?"

पुलिसकर्मी के हाथ में टार्च था। उसे जलाकर पुलिसकर्मी आगे बढ़ आ

दादी मां बोली, "तुम कौन हो भैया ? बिन्दु ने बताया, पुलिस आई है। तुम पुलिसकर्मी हो ?"

पुलिसकर्मी बोला, "हां, हम लोग आपके घर की खानातलाशी करेंगे।"

"खानातलाशी करोगे ? क्यों ? क्या हुआ है ?"

"आपके घर में खून हुआ है।"

"खून ?"

पुलिसकर्मी ने कहा, "हां, खून की सूचना पाकर हम आपके घर पर आए हैं—"

दादी मां बोली, "तुम लोग अंदर कैसे पहुंच गए ? गेट किसने खोल दिया ?"

"आपके घर के दरवान ने।"

"गिरिधारी ! गिरिधारी ने गेट खोल दिया था ? लेकिन मैंने तो गिरिधारी को हुक्म दे रखा है कि रात नौ बजे से सवेरे दस बजे के बीच वह गेट नहीं खोले। अभी छह बजे है। अभी तुम लोग कैसे अंदर घुस आए ?"

"आपके घर में खून हुआ है ?"

"खून···"

दादी मां को शायद इस बात पर यकीन नहीं हुआ। वे घर की मालकिन हैं। उन्हें मालूम नहीं हो सका और उनके घर में ही खून-खराबा हो गया ?

बोली, "मेरे घर में खून होता तो मुझे मालूम न हुआ होता ? ऐसा कहीं हो सकता है ?"

"हां, आपके घर में खून हुआ है। हमें मालूम है।"

दादी मां ने बिन्दु को पुकारा, "बिन्दु, मैनेजर बाबू को बुला लाओ तो।"

बिन्दु खुद ही नीचे जाकर मल्लिकजी को बुलाकर ले आई। मल्लिकजी तब अन्दर ही अन्दर भय से कांप रहे थे। एक तो पुलिस के जिरह में फसकर क्या से क्या बोल गए हैं और उसी से परेशान हैं, उस पर दादी मां की बुलाहट। वे जैसे ही ऊपर पहुंचे, दादी मां बोली, "मल्लिकजी, आप एकबार मुक्ति को फोन कीजिए—"

मल्लिकजी बोले, "इतने सवेरे-सवेरे टेलीफोन करूं ?"

दादी मां बोली, "हां, कहिए घर के अंदर पुलिस घुस आई है—"

मल्लिकजी बोले, "इतने सवेरे-सवेरे फोन करने से वे अगर खफा हो जाएं तो ? वे तो नींद की टिकिया लेकर सोते हैं—"

दादी मां बोली, "कहिए कि मैंने जरूरी काम से टेलीफोन करने को कहा है। कहिए घर में खून हुआ है, पुलिस आई है।"

इस बीच पुलिसकर्मियों ने पूरे मकान में तहलका मचाकर छानबीन शुरू कर दी है। उन लोगों ने सुधा से भी जिरह करना शुरू कर दिया है। सुधा बेचारी डरपोक औरत है। कभी किसी काम से वह घर से बाहर नहीं निकली है। पुलिस पर नजर पड़ते ही उसने घूंघट से मुंह छिपा लिया था।

"तुम किसके काम की देखरेख करती हो ?"

सुधा बोली, "मैं मेम भाभी का काम-काज करती हूं।"

"तुम्हारी मेम भाभी किस किस्म की औरत थी ?"

सुधा जवाब देने जा रही थी पर खामोश हो गई।
पुलिसकर्मी ने कहा, "बोलो-बोलो। तुम्हारे लिए डरने की कोई बात नहीं बोलो।"
सुधा के मुंह से फिर भी कोई शब्द नहीं निकला।
"बोलो-बोलो, बोल क्यों नहीं रही हो?"
पुलिसकर्मी ने इसके बाद कहा, "तुम्हारी मेम,भाभी क्या बहुत डांटती थी?"
सुधा ने कहा, "नहीं।"
"तुम्हें बहुत खटाती थी?"
"नहीं।"
पुलिसकर्मी बोला, "जो सच है वही बताओ। तुम्हारी कोई हानि नहीं होगी।"
सुधा बोली, "रात में मुन्ना बाबू से बेतरह झगड़ा हुआ करता था।"
इसके बाद बोली, "मैं तो अंग्रेजी समझ नहीं पाती, इसलिए किस सिलसिले में झगड़ा होता था, यह मैं नहीं बता सकती हूं हुजूर।"
"तुमसे भी झगड़ा होता था?"
सुधा बोली, "बेहद शराब पी लेती तो मुझे भी गालियां देती थी।"
"क्या कहकर गालियां देती थीं?"
"कहती—ब्लडी बिच—"
पुलिसकर्मी बोला, "ब्लडी बिच? तुम ब्लडी बिच का अर्थ समझती हो?"
"नहीं हुजूर, मैं अंग्रेजी नहीं समझती। मैंने बिन्दु से इसका मायने पूछा था। पर वह भी अंग्रेजी नहीं जानती। वह कैसे इसका मायने समझाएगी?"
पुलिसकर्मी ने पूछा, "कल रात फिर झगड़ा हुआ था?"
सुधा बोली, "हां, कल रात आकर दोनों बहुत झगड़े थे। लगता है, कल रात दोनों ने कुछ ज्यादा शराब पी ली थी। उनके झगड़े के शोर-शराबे से मुझे ठीक से नींद भी नहीं आई थी।"
पुलिसकर्मी ने पूछा, "उसके बाद क्या हुआ?"
सुधा बोली, "उसके बाद यही थोड़ी देर पहले बिन्दु ने मुझे पुकारा। उससे मुझे सारा कुछ सुनने को मिला—"
"तुम्हारे मुन्ना बाबू अभी कमरे में हैं?"
"हां! दरवाजे की सिटकनी अन्दर से बंद है। आप लोग दरवाजा ठेलिए—"
पुलिसकर्मी दरवाजे पर धक्का देने लगा। लेकिन किसी ने जवाब नहीं दिया। कहीं से एक साबल या ऐसी ही कोई चीज लाकर दरवाजे पर चोट करने लगा। बहुत देर तक धक्का लगाने के बाद दरवाजा टूट गया।
दरवाजे के टूटने के बाद देखने को मिला···
ठीक उसी समय मुक्तिपद आ धमके।
बोले, "क्या हुआ है यहां? आप लोग इस मकान में क्यों आए हैं?"
पुलिस का ओ० सी० किसी दूसरे कमरे में किसी से पूछताछ कर रहा था। वह भी उसी समय आ गया। दरवाजा तोड़ने का हुक्म देकर वह दूसरे काम पर चला गया था। जब आया तो दरवाजा टूट चुका था। एक सर्जेन्ट पिस्तौल उठाकर

अन्दर गया।

मुक्तिपद रोकने जा रहे थे। लेकिन ओ० सी० के आ जाने के कारण उसने पूछा, "आप क्या इस मकान में रहते हो?"

मुक्तिपद बोले, "नहीं, मुझे अभी टेलीफोन से खबर मिली तो चला आया। मैं सौम्यपद मुखर्जी का चाचा मुक्तिपद मुखर्जी हूं। आप लोग···"

ओ० सी० बोला, "आप लोगों के मकान के सामने की सड़क पर एक औरत की लाश मिली है। हमें शक है कि उसकी हत्या की गई है।"

"लाश कहां है?"

"उसे अस्पताल भेज दिया गया है। अभी हम अपराधी को पकड़ने आए हैं। आपका भतीजा ही अपराधी है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "आपने कैसे समझा कि मेरा भतीजा ही अपराधी है?"

ओ० सी० बोला, "आपके भतीजे के अलावा कोई मर्द यहां नहीं रहता। इसके अलावा मैंने सबसे 'क्रॉस' किया है। सभी ने एक स्वर में बताया कि वे लोग पति-पत्नी हैं। दोनों रोज बाहर ड्रिंक करने के बाद देर रात से घर लौटते थे। और ड्रिंक करने पर रात-भर झगड़ते रहते थे। इस मकान की तमाम मेड सर्वेन्टों ने इसी तरह की गवाही दी है।"

सार्जेंट तब तक सौम्य के हाथ में हथकड़ी पहना चुका था। पूरे मकान के आदमी के चेहरे पर डर की छाप है। कहीं से हल्की सी भी कोई आवाज नहीं आ रही। किसी जादू की छड़ी ने जैसे सबको निर्वाक् कर दिया हो।

मुक्तिपद बोले, "अपने भतीजे की जमानत के लिए दरख्वास्त दूं?"

ओ० सी० बोला, "कल हम मिस्टर मुखर्जी को कोर्ट ले जाएंगे। उस समय आप अपने वकील को अपनी तरफ से खड़े होने कहिएगा।"

यह कहकर अपने दल के कर्मचारियों के साथ सौम्य को लेकर चला गया। मुक्तिपद स्तंभित जैसे कुछ देर तक वहीं खड़े रहे, उसके बाद बिन्दु आकर जब खड़ी हुई तो उनका ध्यान टूटा।

पूछा, "दादी मां क्या कह रही हैं?"

बिन्दु बोली, "लेटी हुई हैं। लेटी-लेटी रो रही हैं—"

मुक्तिपद बोले, "चल, मैं चलता हूं।"

यह कहकर दादी मां के कमरे की तरफ कदम बढ़ाए।

उस दिन भी संदीप बाकायदा सवेरे ही ऑफिस जाने के लिए घर से निकला था। मां ने पीछे से आकर कहा, "तेरी मौसीजी का बुखार फिर बढ़ गया है।"

बुखार फिर बढ़ गया! यह सुनकर संदीप का चेहरा बुझ गया। बोला, "ठीक है, ऑफिस से लौटने के दौरान मैं डाक्टर साहब के पास से होता हुआ आऊंगा। बुखार कितना बढ़ गया है?"

"कल इस वक्त एक सौ तीन था, आज अभी एक सौ पांच है—"

संदीप का मन बुझ गया। तीन दिन से मौसीजी को बुखार है पर उतरने का नाम नहीं ले रहा है। शुरू में सोचा था ठंड लगने के कारण बुखार आ गया है।

यानी इनफ्लूयेंजा है। डाक्टर ने एक मामूली-सी दवा दी थी। लेकिन उससे कोई फायदा नहीं हुआ। बुखार बढ़ता ही जा रहा था।

बैंक जाने पर काम के दौरान भी मौसीजी की याद हमेशा ताक-झांक करती रही। आदमी के जीवन का अर्थ ही है तीती टिकिया। आदमी होकर जो भी पैदा हुआ है उसे ज़िन्दगी-भर इस तीती टिकिया को खाकर ज़िन्दा रहना पड़ा है। ज़िंदा भी रहूं और तीती टिकिया भी खाता रहूं—यह तो सबसे बड़ा अभिशाप है। बहुत दिन पहले किसी पुस्तक में उसने यह बात पढ़ी थी। तब इस बात का अर्थ उसे ठीक से समझ में नहीं आया था, लेकिन अब समझ रहा है। कहां गया उसका सपना, कहां चली गई उसकी उम्मीद ! पहले सोचता, नौकरी मिलते ही उसकी तमाम उम्मीदें मुकम्मल हो जाएंगी। पहले लगता, विशाखा की शादी होते ही उसकी तमाम समस्याओं का समाधान हो जाएगा। उससे भी पहले लगता था कि मां को काशी बाबू के घर के कामों से छुटकारा मिल जाएगा तो उसकी सारी समस्याओं का हल निकल आएगा। लेकिन अब ?

अब उसकी मां को पराए के घर की दासी के काम से छुटकारा मिल गया है। उसे भी मोटे तौर पर एक अच्छी-सी नौकरी मिल गई है। बाकी है विशाखा। लेकिन उसे वह सुखी नहीं बना सका। मौसीजी का दुख भी वह दूर नहीं कर सका। फिर क्या हमेशा ही उसे समस्याओं का सामना करना होगा ?

बैंक में उसके गिर्द काम करने वाले उसके दोस्त-मित्र कितनी ही तरह की बातचीत करते रहते हैं। कितनी बार कैंटीन से चाय पी आते हैं ! कभी खेल के बारे में बातचीत करते हैं, कभी राजनीति के संबंध में बहसबाज़ी करते हैं।

लेकिन संदीप अकेले ही चुपचाप काम करने में निमग्न रहता है।

एकाएक घड़ी की ओर नज़र जाते ही वह चौंक उठा। पांच बज गए हैं !

उन दिनों की बात सोचने पर संदीप के रोएं अब भी खड़े हो जाते हैं। उतनी तकलीफ, उतनी पीड़ा कोई आदमी सह सकता है ?

ऑफिस से निकल बस-स्टैण्ड की ओर जाने के दौरान देखा, एक गली के मोड़ पर बहुत सारे लोगों की भीड़ इकट्ठी है। किस चीज़ की भीड़ है ? वहां क्या हुआ है ? कुतूहल वश संदीप वहां देखने के ख़याल से गया।

सहसा एक आदमी की तेज़ आवाज़ कान में आई। मानना होगा कि उस आदमी के गले में बहुत ज़ोर है। वह कहता हुआ आगे बढ़ रहा है, "आप लोग देख-समझकर चलिए, भविष्य में आप लोगों के सामने भारी मुसीबत आने वाली है। बहुत सावधानी से चलें-फिरें—"

संदीप ने एक आदमी से पूछा, "यहां क्या हो रहा है भाई साहब ? इतनी भीड़ क्यों है ?"

वह अजनबी तब लोगों की भीड़ के बीच खड़े उस आदमी की बात सुन रहा था। संदीप की बात उसके कान में नहीं पहुंची। संदीप ने एक दूसरे व्यक्ति से पूछा, "यहां क्या हो रहा है भाई साहब, बता सकते हैं ?"

लेकिन कौन किसकी सुने ? लोग-बाग तब ध्यान से उस आदमी की बात सुन रहे थे।

सचमुच कलकत्ता एक अजूबा शहर है। यहां लोगों को इकट्ठा करना इतना

सरल है इसीलिए यहां इतने विरोध के जुलूस निकलते हैं, शांति के जुलूस निकलते हैं, आम लोगों के जुलूस निकलते है। यहा की जनता चूंकि इतना आन्दोलन करती रहती है इसीलिए यहा इतनी पार्टीबाजी और पार्टी तोड़ने का सिलसिला चलता है। यहा एक व्यक्ति किसी दूसरे की उन्नति देखकर इतना क्षुब्ध हो जाता है कि कब सब मिलकर उसे पटकनिया देकर गिरा देंगे, इसी चिन्ता में विभोर रहता है।

सहसा संदीप के कान मे आवाज आई—"बीसवी सदी का यह एक आश्चर्य-जनक आविष्कार है। आप लोग सावधान हो जाइए, होशियार हो जाइए। वरना आप लोग भारी मुसीबत में फंस जाएंगे। हम लोगों के आर्यभट्ट जो कुछ कह गए हैं अब उसका उलटा हो रहा है। कोपरनिकस, गैलीलियो जो कुछ कह गए हैं वह अब झूठा साबित हो रहा है···"

दूसरी तरफ हावड़ा जाने वाली बस दिख नही रही है। संदीप भीड़ ठेलकर और अन्दर चला गया।

"पहले सूर्य के चारो तरफ धरती घूमती थी, अब धरती के चारों तरफ सूर्य घूमना शुरू करेगा। आप लोग सावधान हो जाएं। इस पुस्तक को पढ़ने से आप लोगों को इस विपत्ति से बचने का उपाय मालूम हो जाएगा। अगर जानना चाहते हो तो इस पुस्तक को खरीदिए। दाम केवल पांच रुपया। सिर्फ पांच रुपये में आपको अपना अमूल्य जीवन वापस मिल जाएगा! अगर नतीजा न निकले तो कीमत वापस।"

और सबसे आश्चर्य की बात है कि दो चार जने पाच रुपये देकर उस पुस्तक को खरीद रहे हैं।

उस आदमी का चेहरा और वेश-भूषा भी अजीब किस्म का है। पहरावा एक काली पैंट। पैंट पांव के टखनो से घुटने तक मुडी हुई। बदन पर बिना बाहवाली एक स्पोर्ट्स शर्ट। एक ही बात को बार-बार दुहरा रहा है और पुस्तक को सामने की तरफ बढ़ाकर पकड़े हुए है। सबसे कह रहा है—"आप लोग सावधानी से रहें। दुनिया के आदमी के बहुत ही बुरे दिन आ रहे हैं। मात्र पाच रुपये मे पुस्तक खरीदकर पाच लाख कमाइए—"

संदीप कुछ देर तक खड़ा रहकर तमाशा देखता रहा। उसके सामने ही पुस्तक की कई प्रतिया बिक गई। बहुत दिन पहले विश्व शांति के यज्ञ के निमित्त सड़क के हर मोड़ पर चंदा मागा जाता था। यह भी क्या उसी किस्म का कोई पाखंड है?

संदीप उन दिनों बेशक बेरोजगार था। मुखर्जी परिवार के मकान में पेट भरने की खातिर पन्द्रह रुपये की नौकरी करता था। रहना और खाना मुफ्त का था। उन दिनो उसने विश्व शांति यज्ञ के निमित्त चंदा नही दिया था। और अब तो प्रश्न खड़ा ही नही होता। लेकिन ऐसे भी कुछ आदमी हैं जो भविष्य की विपत्ति की आशका से जेब से पाच रुपये निकालकर पुस्तक खरीद रहे हैं।

वह फिर बस की सड़क पर आकर खड़ा हो गया।

अचानक उसने देखा, एक भलामानस उस पुस्तक को पढ़ते हुए उसी की ओर आ रहा है। फुटपाथ पर पुस्तक पर नजर रखे सामने की तरफ बढ़ रहा है। फुटपाथ पर हॉकरों का झुंड अपने सरो-सामान का बाजार लगाए बैठा है। उस

ी नज़र उस ओर नहीं है। नज़रें टिकी हैं तो पुस्तक के पृष्ठ पर। फुट-
लोगों से टकरा सकता है, इसबात का उसे खयाल नहीं है। इस तरह की
ा में डूबा हुआ है वह।

रीब आते ही संदीप आगे बढ़कर आया।

ोला, "आप फोर टून्टी की गिरफ्त में फंस..ए न?"

वह आदमी अजनबी को देखकर पहले चौंक उठा। बोला, "आप?"

संदीप ने कहा, "वहां एक आदमी पुस्तक बेच रहा था न।"

आदमी बोला, "हां।"

"आपने वहीं से यह पुस्तक खरीदी है न?"

"हां, लेकिन आपको इसका पता कैसे चला?"

संदीप बोला, "मैं खड़े-खड़े सारा कुछ सुन रहा था। आपने क्यों खरीदा? यह
ो फोर टून्टी का मामला है—"

आदमी संदीप की बात सुनकर 'हो-हो' कर हंसने लगा।

उसके बाद बोला, "आपने कैसे समझा कि फोर टून्टी है?"

संदीप बोला, "फोर टून्टी न हो तो कोई कह सकता है कि सूर्य धरती के चारों तरफ घूमता है?"

आदमी दुबारा हंसने लगा। बोला, "किसी जमाने में कोपरनिकस और गैलीलियो को पागल करार कर दिया गया था। इस संबंध में आपको क्या कहना है?"

संदीप ने कहा, "आप किससे किसकी तुलना कर रहे हैं? यह आदमी तो नंबरी धोखेबाज है। चेहरा देखकर समझ नहीं सके?"

आदमी तब भी मुस्करा रहा था।

संदीप ने कहा, "आप हंस रहे हैं? उस आदमी ने आपसे पांच रुपया ठग लिया, फिर भी आप हंस रहे हैं?"

आदमी जैसे अब स्वाभाविक स्थिति में आया। बोला, "हंसूंगा नहीं? उस आदमी को हम पहचानते हैं।"

"आप उस आदमी को पहचानते हैं? फिर भी पांद रुपया देकर वह रद्दी पुस्तक खरीदी?"

आदमी बोला, "मैंने पांच रुपया देकर पुस्तक नहीं खरीदी। वह रकम तो उसी के द्वारा दी गई थी। उसका दिया हुआ पांच रुपया उसे ही वापस क
दिया।"

संदीप यह बात सुनकर सन्न रह गया। बोला, "उसी के द्वारा दिया ग
रुपया का मानी?"

मानी यह कि वह आदमी पैसे-पैसे का मुंहताज है। नौकरी नहीं मिली
पैसे की तंगी के कारण खाना-कपड़ा जुटा नहीं पाता है। लेकिन रुपया कम
लिए यह जाल फैलाया है। लोग-बाग तो आसानी से किताब खरीदते नहीं।
लिए कोपरनिकस और गैलीलियो के नाम तुड़ाकर पुस्तक बेच-बेचकर पैसा
का तरीका निकाला है। हम लोगों के कुछेक दोस्त-मित्रों ने ही पांच-पांच रु
हैं। हमें पुस्तक खरीदते देखकर कुछेक बाहर के आदमी भी पुस्तक खरीदे

लिए यह कौशल रचा है—"

आदमी की बात सुनकर संदीप का आश्चर्य दुगुना हो गया। बोला, "इससे पुस्तक की बिक्री होती है ?"

आदमी बोला, "आप यह क्या कह रहे हैं जनाब ? पिछले महीने उस बोगस पुस्तक को बेचकर उसने तीन सौ रुपया कमाया था। उसने बताया कि इस महीने उसे पांच सौ रुपये की आमदनी होगी।"

"कलकत्ता में क्या इतने सारे बेवकूफ आदमी हैं ?"

आदमी बोला, "बेवकूफ आदमी नहीं हैं क्या ? कलकत्ता में बेवकूफ आदमी नहीं रहेंगे तो कहां रहेंगे ? पाकिस्तान बनने के बाद ढाका से जो लाखों आदमी कलकत्ता आए हैं वे अपनी रोजी-रोटी कैसे चलाएंगे। लिहाजा इसी तरह लोगों को धोखा देकर वे अपनी रोजी-रोटी चला रहे हैं। वह भी तो ढाका या टांगाइल का आदमी है। देह पर सिर्फ एक वस्त्र लिए यहां आया है और धोखाधड़ी के इस रास्ते को अपनाया है। यहां इस कलकत्ता में जितने धोखेबाज हैं उतने ही बेवकूफ आदमी भी हैं। आपको मालूम है कि इस कलकत्ता शहर में कितने तरह के बोगस धंधे चल रहे हैं ?"

यह सब सुनने में संदीप को मजा आ रहा था। पूछा, "किस तरह के ?"

आदमी उम्रदार हो चुका है। उसे भी कहने में मजा आ रहा था। कहने लगा, "हर शनिवार को आप ठनठन की कालीबाड़ी जाइएगा। देखिएगा, हजारों आदमी मां को दक्षिणा का चंदा दे रहे हैं। हरेक शनिवार को पुजारियों को हजारों रुपये की आमदनी होती है। यह लोगों की आंख में धूल झोंकने का धन्धा नहीं है ? जितना दोष है वह हमारे इस निवारण का ही ?"

"निवारण ? निवारण कौन है ?"

"वही आदमी जो पांच रुपये में पुस्तक बेच रहा था उसी का नाम निवारण है। अगर वह धोखाधड़ी ही करता है तो इसमें उसका कौन-सा दोष है ? काली-बाड़ी के पुजारी ही निखालिस सत्यवादी युधिष्ठिर हैं ?"

आदमी की बात सुनने में संदीप को बड़ा ही अच्छा लग रहा था।

आदमी फिर कहने लगा, "वे लोग गरीब हैं। निवारण जैसे ही गरीब। लेकिन बड़े-बड़े आदमी क्या कर रहे हैं, मालूम है ?

नहीं, संदीप नहीं जानता कि बड़े-बड़े लोग क्या करते हैं।

"जो लोग बड़े-बड़े आदमी हैं, दौलतमंद हैं, वे कलकत्ता की दीवारों से लगी हुई जितनी पान की दुकानें हैं, उनके मालिक हैं। वे पान के साथ कोकन मिला देते हैं। चाय के साथ कोकन मिला देते हैं। इससे इस तरह का नशा होता है कि उन दुकानों के पान या उस ब्रांण्ड की चाय मिले बगैर लोगों का काम नहीं चलता। और चॉकलेट ?"

जरा चुप रहने के बाद फिर कहना शुरू किया, "चॉकलेट ऐसी-ऐसी कंपनियां तैयार कर रही हैं, जो बड़े-बड़े नाम रख रहे हैं। आपने आइडियल फूड प्रोडक्ट्स का नाम सुना है ?"

"आइडियल फूड प्रोडक्ट्स ? हां-हां, नाम सुना है। उसके साथ कौन-सा वाकया हुआ है ?"

"आपने देखा नहीं था कि अखवार के पृष्ठ पर वड़े-वड़े विज्ञापन छपवाता था ?"

संदीप जैसे नींद से जग पड़ा हो। वोला, "नहीं, सुना नहीं···"

"उन लोगों की कंपनी उठ गई है। उसके मालिकों को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया है। वे लोग जैम-जेली-कोल्ड ड्रिंक्स तैयार जरते थे। वे लोग अपने फूड प्रोडक्ट्स में हेरोइन, हैशिश, चरस मिला देते थे। दोष सिर्फ निवारण के मत्थे मढ़ने से क्या होगा ? जो लोग वड़े-वड़े फर्म खोलकर लोगों को ठग रहे हैं कोई उन्हें कुछ नहीं कहता। शनिदेव के नाम पर जो लोग जनता को ठग रहे है, उन्हें गवर्नमेन्ट कुछ नहीं कहती। शनि-पूजा वंद करने को तो कोई नहीं कहता।"

संदीप को और वातें भी सुनने की इच्छा हो रही थी। लेकिन दूर से बस आती हुई दिख पड़ी।

उसने जल्दी-जल्दी पूछा, "फिर तो आइडियल फूड प्रोडक्ट्स कंपनी बंद हो गई होगी ?"

आदमी वोला, "हां-हां, आपको मालूम नहीं था ? आप कहां रहते हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं वेड़ापोता में रहता हूं—डेली-पैसेंजरी करता हूं। आपको ठीक से मालूम है कि कंपनी वंद हो गई है ?"

वस के आते ही संदीप पायदान पर चढ़ गया।

पीछे से आदमी की आवाज़ आई, "आप कहां हैं ? सूर्य ने तो अव धरती के चारों तरफ घूमना शुरू कर दिया है।"

वस खुलने के वाद बहुत देर तक वे वातें संदीप के कान के पास वार-वार गूंजती रहीं। सचमुच, निवारण सही वात ही कह रहा है। पहले की तरह अब धरती सूर्य के चारों तरफ नहीं घूमती। कोपरनिकस, गैलीलियो जो कुछ कह गए हैं, वह सव गलत है। अव सूर्य ही हम लोगों के चारों तरफ घूम रहा है। वरना चारों तरफ इस तरह की उलटी-सुलटी घटनाएं घटती ही क्यों ? क्यों मेम साहब को सौम्य वावू तलाक दे रहे हैं ? क्यों विशाखा की शादी इस तरह एकाएक रुक गई ? क्यों मौसीजी को अचानक बुखार आ गया ? क्यों विशाखा इस तरह एकाएक लापता हो गई ?

उस आदमी की वातें तब भी उसके दिमाग में चक्कर काट रही थीं। शनिदेव के नाम पर इस प्रकार क्यों हज़ारों रुपये की लूट हो रही है ? क्यों पान की हर दुकान में पान के साथ कोकन मिलाया जा रहा है ? क्यों चाय की डिविया में चाय के साथ कोकन मिलाया जा रहा है ? आइडियल फूड प्रोडक्ट्स कंपनी के आदमियों को गिरफ्तार किया गया है ? फिर क्या उन लोगों के द्वारा तैयार किए गए जैम-जेली अचार और कोल्ड ड्रिंक्स में हेरोइन मिलाया जा रहा था ?

वस जैसे ही लाल बाजार के सामने के रास्ते पर पहुंची, संदीप वस से उतर गया। उसके वाद अंदर जाकर मिसिंग स्काण्ड डिपार्टमेन्ट के पास जाकर पूछा, "सर उस विशाखा गांगुली के केस का कुछ पता चला ?"

कितनी विशाखा गांगुली कलकत्ता में लापता हो जाती हैं, उसका हिसाब रहना क्या आसान है ? हर रोज़ कितने लोग पैदा होते हैं और कितने मरते हैं, इसका हिसाब रखना जिस तरह असंभव है, यह भी उसी तरह की बात है। इस

कलकत्ता शहर में कितने आदमी लापता हो जाते हैं, उसका ठीक-ठीक हिसाब रखना भी क्या आसान काम है ?

"केस नंबर कितना है ?"

संदीप उधेड़-बुन में पड़ गया। केस नंबर तो उसे याद नहीं। बोला, "केस नंबर तो ठीक से याद नहीं आ रहा है। आप कृपया जरा खोजकर देख लें। नाम तो बताया ही विशाखा गांगुली···"

पुलिसकर्मी बोला, "केस नंबर बताए बगैर खोजना क्या आसान है ? अब सभी लोग घर चले गए हैं, आप इतनी देर करके क्यों आए ?"

संदीप ने कहा, "जरा खोजकर देखिए न···"

पुलिसकर्मी बोला, "तो फिर कुछ खर्च करना होगा—"।

"खर्च ? कितना ?"

पुलिस कर्मचारी बोला, "पचास रुपये दीजिए—"

"पचास ? इतने रुपये तो मेरे पास नहीं हैं। देखूं, कितने रुपये हैं—"

उसके बाद पॉकेट टटोलकर देखा, सिर्फ पंद्रह रुपये। उन रुपयों को पुलिसकर्मी की ओर बढ़ाते हुए कहा, "यह पंद्रह रुपया ही लीजिए। इससे ज्यादा मेरे पास नहीं है। कृपया बता दें कि विशाखा का कोई पता चला या नहीं।"

संदीप को लगा, पुलिसकर्मी भलामानस है। पहले चेहरे पर जितनी कठोरता थी, अब नहीं है। बोला, "आपने मुझे बहुत परेशानी में डाल दिया।"

इतना कहने के बाद संदीप के द्वारा दिए गए रुपयों को पॉकेट में रखते हुए बोला, "देखूं, आपके लिए क्या कर पाता हूं। ऑफिस के तमाम लोग तो जा चुके हैं—"

संदीप काउन्टर पर खड़ा होकर देखने लगा कि वह आदमी क्या कर रहा है। पुलिसकर्मी कभी इस कागज को देखता है तो कभी उस कागज को। विशाखा से संबंधित फाइल कहीं नहीं मिल रही है। आखिर में बड़ी मुश्किल के बाद असली कागज मिला। शायद पंद्रह रुपया मिलने के कारण ही इतना जल्दी मिल गया।

"लीजिए, मिल गया साहब —"

यह सुनकर संदीप को खुशी हुई। पूछा, "मिल गया ? आपको बहुत-बहुत धन्यवाद!"

पुलिस कर्मचारी बोला, "आपकी विशाखा आखिरकार कहां मिली, जानते हैं ?"

"कहां ?"

वेलिंगटन स्ट्रीट और धर्मतल्ला स्ट्रीट के मोड़ के पास एक दिन बेहोशी की हालत में आपकी विशाखा गांगुली मिली। यह सूचना पाकर पुलिस उसे मुचिपाड़ा थाने में ले आई। उसके बाद लाल बाजार से प्रेसिडेंसी जेल में भेज दिया गया है। आपकी विशाखा गांगुली अभी वहीं है।"

संदीप ने यह खबर सुनी तो उसे हैरानी हुई। बोला, "विशाखा प्रेसीडेंसी जेल में है ?"

"हां, फाइल में तो यही लिखा हुआ है। आप इसे देखिए—"

यह कह उसने फाइल संदीप की ओर बढ़ा दी।

संदीप ने ध्यान से देखा। सचमुच यह आदमी जो कह रहा है बिलकुल ठीक है।

"आपके ऑफिस में जब मैं विशाखा के लापता होने की सूचना दी थी तो उस समय अपना पता भी आप लोगों को दे गया था। आप लोगों ने विशाखा के बारे में मेरे पास सूचना भेजने के बजाय उसे प्रेसीडेंसी जेल क्यों भेज दिया ?"

पुलिसकर्मी को अब गुस्सा आ गया। बोला, "आप क्या कह रहे हैं जनाब ? हमें क्या सिर्फ एक ही विशाखा गांगुली के लिए मायापच्ची करनी पड़ती है ? हम लोगों के पास उस तरह की हज़ारों विशाखा गांगुली की खबर पहुंचती है। एक ही व्यक्ति के लिए सिर खपाने से हमारा काम चल नहीं सकता। यह जनाब कोई आप लोगों की ऑफिस की नौकरी नहीं है कि किसी तरह बस में धक्कम-धुक्का भी ऑफिस पहुंच जाएं। हम लोगों के ऑफिस में खटकर पेट भरना पड़ता है।"

ज़रा चुप रहने के बाद बोला, "और आपकी विशाखा गांगुली तो घोर पागल है।"

संदीप ने पूछा, "कैसे समझा कि वह पागल है ?"

"और कैसे, उसका चाल-चलन ही देखकर पता चल गया। कोई बात पूछने पर उसका जवाब नहीं दे सकी। नाम-पता ठीक से बता नहीं सकी। इसी वजह से हमने उसे कैदखाने में भेज दिया है।"

संदीप ने पूछा; "तो मैं अब क्या करूं ?"

पुलिसकर्मी बोला, "और क्या कीजिएगा, प्रेसीडेंसी जेल जाइए। एक वकील लेकर कोर्ट जाइए। कोर्ट में जाकर एक दरख्वास्त दीजिए। जज यदि राजी हो जाते हैं तो आपका वकील विशाखा गांगुली को जेल से बाहर निकाल उससे जिरह करेगा। अगर साबित हो जाएगा कि विशाखा गांगुली पागल नहीं है तो कोर्ट उसे छोड़ देगा—"

संदीप ने कहा, "अभी तो कोर्ट बंद हो गया होगा।"

पुलिसकर्मी बोला, "बंद हो गया है तो क्या हुआ ? कल या परसों भी तो जा सकते हैं। जिस दिन आपकी मर्जी हो।"

संदीप का दिमाग अभी चकरा रहा है। हालत कहां से कहां पहुंच गई ! ऑफिस से छुट्टी लेना कठिन काम नहीं है। लेकिन समस्या तो इससे संबंधित नहीं है। समस्या है रुपये की। कोर्ट जाने का मतलब ही है काले कोटों के चंगुल में फंसना। वे लोग मिलकर उसे नोंच डालेंगे। वहां वे लोग मोवक्किलों को निगलने के ताक में बैठे हुए हैं। एकबार उनके चंगुल में फंस जाने से छुटकारा पाना मुश्किल है।

संदीप लाल बाज़ार पुलिस ऑफिस से निकल सड़क पर आकर खड़ा हुआ देखा, हज़ारों-लाखों लोग तरह-तरह के इरादे से धूमकेतु की तरह दौड़ रहे हैं। उन लोगों को भी क्या संदीप की जैसी ही समस्या का सामना करना पड़ रहा है ! नहीं, यह कैसे हो सकता है ? किसी को रुपये की समस्या है, किसी को सेहत की, किसी को मुकदमे की, किसी को संभवतः दांपत्य जीवन की, किसी को संभवतः लड़की की शादी की और किसी को मकान के किराये की। कितनी ही तरह की समस्याओं से लोग परेशान और संकटग्रस्त हैं।

लेकिन वह ? लेकिन संदीप ?

संदीप ने तो स्वेच्छा से दूसरों की समस्या अपने कंधे पर उठा ली। उसकी एक तरह से कोई निजी समस्या नहीं थी। फिर आगे बढ़कर मौसीजी और विशाखा की समस्याओं का बोझ वह अपने कंधे पर उठाने क्यों गया ?

लेकिन वह चूंकि आदमी होकर पैदा हुआ है इसलिए खुद को लेकर ही जीवन जीना कोई मानी नहीं रखता। दूसरों के बुरे में यदि उनके पास जाकर खड़ा न होऊं तो फिर आदमी होकर पैदा ही क्यों हुआ ? इसी का नाम तो इंसानियत है।

वह आदमी भले ही पागल, धूर्त या धोखेबाज क्यों न हो लेकिन उसने जो कुछ कहा था, गलत नहीं है। इस तरह सब चीजों में तब्दीली क्यों आ गई ? दुनिया के तमाम इंसान इस तरह आंखों से ओझल क्यों हो गए। जब कि कितने ही महापुरुष कितनी ही अच्छी बातें कहकर चले गए हैं। उनकी बातों को लोग इस तरह भूल क्यों गए ? तो क्या सचमुच ही सूर्य ने धरती के चारों तरफ घूमना शुरू कर दिया है ? यह विशाल विश्व-ब्रह्माण्ड भी क्या अपने शाश्वत नियम को तोड़कर विपरीत पथ पर परिक्रमा करने लगा है ?

तमाम लोगों के मन में बीते दिनों के प्रति एक आकर्षण होता है। इसीलिए सब कहते हैं—ओह, उस जमाने में कितनी अच्छी तरह से था ! कितना सस्ता जमाना था वह ! उस समय लोग कितने अच्छे और ईमानदार थे ! और अब ?

आज के तमाम लोग बुरे हैं। आज के आदमी और इतिहास को सभी लोग नापसन्द करते हैं। सबके मुंह में बस यही एक बात रहती है। लेकिन संदीप के संदर्भ में इससे ठीक उल्टी ही बातें हैं। अतीत की याद आते ही उसके मन में दहशत का अंधेरा घिर आता है। यदि उसका अतीत फिर लौटकर चला आए ? कहीं उसका अतीत उदित होकर उसे ग्रसित न कर लें। कहीं उसके सृष्टिकर्ता उसे उस समय और युग में लौटकर न ले जाएं।

वह खबर सुनकर मां के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। बोली, "जेल में ? विशाखा को जेल में बंद करके रखा है ? क्यों, उसने क्या किया था ?"

संदीप ने अपने मुंह पर उंगली रखकर कहा, "चुप रहो, जोर से बातें मत करो। उस कमरे में मौसीजी है, सुन लेंगी।"

मां का उस ओर ध्यान नहीं था। विशाखा जेल में है, यह सुनकर मां इतना चौंक उठी थी कि मौसीजी बगल के कमरे में लेटी हुई है, यह बात बिलकुल भूल गई थी। उसके बाद धीमे स्वर में पूछा, "जेल में क्यों है ?"

संदीप बोला, "मैं यह सब बता नहीं पाऊंगा। कल जाकर पता लगाऊंगा तो बताऊंगा। सुना, वह अपना नाम पता वगैरह नहीं बता पा रही थी। इसीलिए पुलिस ने उसे जेल भेज दिया है जिससे कि उसे किसी मुसीबत का सामना न करना पड़े।"

उसके बाद जरा रुककर पूछा, "मौसीजी आज कैसी है ?"

मां बोली, "उसी तरह।"

"आज छाती का दर्द कैसा है ?"

मां बोली, "दोपहर में दर्द बहुत बढ़ गया था, छटपटा रही थी। तभी डाक्टर की दवा खिला दी थी, उससे दर्द थोड़ा कम हो गया। तब के सोई हुई है। मैंने पुकारा नहीं है—"

संदीप सोच में पड़ गया। डाक्टर भी मौसीजी की बीमारी को ठीक से पहचान नही सका है। कहा था: "और कुछ दिन देख लीजिए, यदि इस दवा से भी नहीं ठीक होती हैं तो कलकत्ता जाकर एक्सरे करा लेना अच्छा रहेगा—"

संदीप ने पूछा था, "इतनो दर्द क्यों होता है? किसी भी हालत में कम क्यों नहीं हो रहा है? यह क्या कोई गैसट्रिक पेन है?"

डाक्टर ने कहा था, "इतने दिनों तक तो गैसट्रिक की ही दवा दे रहा था। उससे भी जब कोई फायदा नहीं हुआ तो फिर एक्स-रे कराने से पता चल जाएगा कि किस तरह की बीमारी है।"

संदीप ने डरते हुए पूछा था, "मैलिग नैन ट्यूमर हो सकता है क्या?"

डाक्टर ने कहा था, "यह कैसे बता सकता हूं? सब कुछ हो सकता है। एक्स-रे प्लेट देखने पर ही बताया जा सकता है—"

संदीप के वे दिन कितनी दहशत में बीते हैं! उन बातों को सोचने पर संदीप का कलेजा आज भी दहल उठता है। फिर भी असीम धीरज के साथ संदीप ने अकेले ही चारों तरफ के झमेलों का मुकाबला किया था। एक तरफ घर के लोगों के खाने-पीने की चीजों का जुगाड़ करना और उसके साथ मौसीजी की वह बीमारी। उस पर विशाखा के लिए अलग से चिन्ता। अक्सर वह सोचता, क्यों वह उन दोनों को बेड़ापोता ले आया। उन्हें बेड़ापोता न ले आया होता तो वह मां के साथ आराम से रह सकता था।

लेकिन मां ने उन लोगों को ले आने के संबंध में कभी कोई शिकवा-शिकायत नहीं की थी। एक दिन भी नहीं कहा था: "तू बेटा, उन्हें यहां क्यों ले आए?" उनके पीछे संदीप का बहुत रुपया खर्च हो रहा है, यह बात भी कभी मां के मुंह से नहीं निकली थी।

सचमुच उसे अपनी मां से जो कुछ प्राप्त हुआ है इसके लिए वह ईश्वर का हृदय से कृतज्ञ है। उसकी मां के अलावा और कोई मां होती तो वह अवश्य ही अपने बेटे की इच्छा को ठुकरा देती। लेकिन संदीप की मां केवल संदीप की ही मां थी इसलिए संदीप आज संदीप हो सका है।

कहां प्रेसिडेंसी जेल और कहां अलीपुर कोर्ट! वकीलों-बैरिस्टरों से मिलने-जुलने या उन्हें जानने का उसे कभी कोई मौका नहीं मिला था, बस एकमात्र काशी बाबू को छोड़कर। काशी बाबू से ही संदीप ने एक दिन सुना था कि हाईकोर्ट अपना चरित्र खो बैठा है। इसी वजह से उन्होंने वकालत करना छोड़ दिया था। लेकिन उसी संदीप को किसी दिन उसी कोर्ट में जाना पड़ेगा, उसने यह सोचा तक नहीं था।

कोर्ट में वह किसी को नहीं पहचानता है। इसके पहले वह कोर्ट के अंदर गया भी नहीं है। पहले जब वह काशी बाबू को देखकर वकील बनना चाहता था उस समय कोर्ट के बारे में उसकी दूसरी ही धारणा थी। लेकिन उस दिन वकीलों के सिरिश्तेदारों के चेहरे देखकर वह चकित रह गया। वह अगर वकील होता तो

उसे भी इस टूटी झोंपड़ी में ही अपनी पूरी जिन्दगी गुजारनी पड़ती। फिर किसने उसकी रक्षा की है ? किसने ?

सभी उसे देखकर समझ गए थे कि वह एक वकील की तलाश में आया है।

झोंपड़ी के अन्दर से किसी ने पूछा, "आपको कुछ चाहिए ? वकील साहब को खोज रहे हैं ? लेकिन अभी तो वे अदालत गए हुए हैं···"

सदीप उस दिन कोर्ट के चारों तरफ मारा-मारा फिरता रहा था। सभी वकील व्यस्त हैं। किसी के पास वक्त नहीं है। सभी रुपये कमाने के फेर में चरखी की तरह चक्कर काट रहे हैं। उन सबों का ध्यान-ज्ञान सारा कुछ रुपया ही है। रुपये के अलावा और किसी वस्तु की वे कामना नहीं करते। चक्कर काटते-काटते हैरान हो जाने के बाद आखिर में वह एक टीन के छज्जे के मकान में एक तिपाई पर जाकर बैठ गया। अपने बैंक में उसने जिन लोगों को देखा है वे भी रुपये के लिए बेहाल रहते हैं। कुछ लोग तीन-चार झूठमूठ के नाम से बैंक में रुपये जमा रखते हैं। कभी-कभी उसके मन में ख्याल आता है कि इन वकीलों की तरह उन लोगों से भी वह पूछे कि इतना सारा रुपया वे क्यों जमा कर रहे हैं। इस जीवन के बाद तो सबको किसी-न-किसी दिन एक-दूसरे ही देश में बसा जाना पड़ेगा। लेकिन उस देश में क्या इस देश के सिक्के चलेंगे ? उस देश में क्या बैंक है ? इस देश का एकाउंट क्या उस देश में स्थानान्तरित किया जा सकता है ?

उधर देर हो रही है। सदीप सीधे जाकर एक जज की अदालत में घुस गया। उस समय वहा बेहद भीड़ थी। काले लिबास पहने दो वकील न मालूम क्या-क्या बातें कर रहे हैं। जज साहब बैठकर किसी कागज पर कुछ लिख रहे हैं। जो लोग कमरे में हैं वे खामोशी के साथ दोनों वकीलों की बातें सुन रहे हैं। सदीप अपनी जिन्दगी में पहली बार मजबूरी के कारण कोर्ट गया था। उसके पहले कभी कोर्ट नहीं गया था। लेकिन बाद में उसने ईश्वर से प्रार्थना की है—"हे ईश्वर, तुम मुझे चाहे और कुछ अभिशाप दो लेकिन मुझे कभी कोर्ट जाने का अभिशाप मत दो—"

मगर वह बात अभी रहे···

आखिर में जज कोर्ट के ऑफिस में घुसने पर देखा, एक कुर्सी पर एक सज्जन बैठकर कुछ लिख रहा है। सदीप उसके पास जाकर खड़ा हो गया।

उस सज्जन ने गर्दन उठाकर पूछा, "आपको क्या चाहिए ?"

सदीप ने कोर्ट आने का कारण बताया। उसके बाद बोला, "अभी मुझे क्या करना चाहिए, समझ में नहीं आ रहा है। कृपया मेरी थोड़ी-सी मदद करें। जो भी खर्चा करना होगा, मैं दूंगा।"

उस सज्जन ने पूछा, "आपने क्या नाम बताया ?"

सदीप ने कहा, "विशाखा गांगुली।"

"कुमारी है या विवाहिता ?"

सदीप ने कहा, "कुमारी।"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद फिर बोला, "विशाखा मेरी अपनी कोई नहीं है। जो लोग अपने हैं वे उसकी देखरेख नहीं करते हैं। उसकी मा है पर वह विधवा है। वे बीमार हैं। डाक्टरों को संदेह है कि उन्हें कैंसर की बीमारी है—"

उस सज्जन ने पूछा, "और आप ? आप उनके कौन होते हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं उनका कोई नहीं हूं।"

"आप कहां रहते हैं ?"

"वेड़ापोता में। मैं एक वैंक में नौकरी करता हूं। डेली-पैसेंजरी करता हूं
ड़ापोता से कलकत्ते का।"

अव वह सज्जन ज़रा हिल-डुलकर वैठा। पूछा, "विशाखा आपकी जवकि
ोई नहीं है तो फिर आप उसके लिए इतना कर-धर क्यों कर रहे हैं ?"

संदीप ने कहा, "क्यों कर-धर रहा हूं, इसका मैं कोई जवाव नहीं दे सकूंगा।
कह सकते हैं कि भगवान ने ही उन लोगों से मेरा संपर्क स्थापित करा दिया है।
नहीं तो मां और वेटी दोनों का क्या होता, कहा नहीं जा सकता।"

उसके वाद ज़रा रुककर वोला, "मुझसे उन लोगों के संपर्क होने का कारण
एक दैविक घटना है। उस कहानी को कहने में वहुत वक्त लग जाएगा। मैं किसी
दिन आकर सारा कुछ आपको वता जाऊंगा। मुझे लाल वाज़ार पुलिस के 'मिसिंग
स्क्वाड' ऑफिस में सूचना मिली कि विशाखा को प्रेसिडेंसी जेल के हवालात में
रखा गया है। उन्हीं लोगों ने मुझसे कहा कि इस कोर्ट में आकर दरखास्त दूं। मैं
ज़िन्दगी में कभी कोर्ट नहीं आया था। मुझे कोर्ट का कोई नियम-कानून मालूम नहीं
है। आप इस संवंध में अगर मेरी थोड़ी सहायता करें तो मैं चिर दिन आपका
कृतज्ञ रहूंगा।"

कहावत है भाग्यवान का वोझा भगवान ढोता है।

लेकिन संदीप तो भाग्यवान नहीं है। फिर उसके भाग्य से इतना परोपकारी
आदमी कैसे मिल गया ! उस सज्जन के मन में क्या हुआ, कौन जाने ! वोला,
"आप थोड़ी देर यहां वैठिए, देखूं, मैं आपके लिए क्या कर पाता हूं—"

यह कहकर वह वाहर निकल गया। संदीप उस कुर्सी पर अकेले ही वैठा
रहा। वहां वैठे-वैठे उसे लगा कि वह जैसे अनंतकाल से वैठा हुआ है और उसकी
आंखों के सामने से ही दिन, महीने, वर्ष, युग और कल्पलोक एक-एक कर दूर चले
जा रहे हैं। अन्ततः जव युग-युगांत अतिवाहित हो गया तो किसी के गले की
आवाज़ सुनकर वह चौंक उठा।

"इतनी देर से पुकार रहा हूं, आप सुन नहीं रहे हैं ?"

उस सज्जन ने अपने हाथ से उसे झकझोरा। संदीप ने खड़े होकर कहा
"आएं ?"

सज्जन ने कहा, "मैं वहुत देर से आपको पुकार रहा हूं, आप किस सोच
डूवे हुए थे ?"

संदीप ने लज्जित होकर कहा, "मैं ज़रा अन्यमनस्क हो गया था।"

सज्जन वोला, "समझ गया। मुसीवत में पड़ जाने पर सवके साथ यही
होती है। आप मेरे साथ आइए। आपके लिए चिन्ता की कोई वात नहीं। आ
एक प्लीडर के पास लिए चलता हूं। वे ही आपका सारा कुछ ठीक-ठाक
देंगे—"

संदीप ने पूछा, "उन्हें कितना देना पड़ेगा ?"

सज्जन वोला, "आपको जो भी मर्जी हो दे दीजिएगा। वे वड़े ही परो

प्लीडर हैं। रुपया न दीजिएगा तो भी काम हो जाएगा—"

संदीप उस सज्जन के साथ जाने लगा। वह सज्जन संदीप को जहां ले गया वह बार लाइब्रेरी थी। वहां बहुत सारे काले कोट पहने एडवोकेट बैठे हुए हैं। वह सज्जन संदीप को एक बुजुर्ग आदमी के पास ले गया और परिचय करा दिया। संदीप से उसने जो कुछ सुना था, बता दिया।

उसके बाद क्या-से-क्या हो गया वह एक अलौकिक कांड ही था। विस्तार से कहा जाए तो भी लोगों को यकीन नहीं होगा।

यह कहकर खुद आगे-आगे चलने लगे। संदीप भी उनके पीछे-पीछे चलने लगा। लेकिन वह कहां जा रहा है? स्वर्ग की ओर या नरक की ओर? विशाखा क्या सचमुच ही मिल जाएगी?

आज भी उन कई दिनों की उत्तेजना, व्याकुलता और उद्देश्यों से पूर्ण उन अस्वस्तिकर क्षणों की याद ताजी है। विपत्ति जब आती है तो कोई सूचना देकर नहीं आती। पूरी दुनिया तब उसके लिए बेरवाद हो जाती है। वैसी ही हालत में पड़ जाने पर आदमी खुदकुशी करने को उतारू हो जाता है। संदीप ने उस दिन खुदकुशी क्यों नहीं की उसके कारण की वह आज भी पड़ताल नहीं कर सका है।

घर जाते ही मां कहती, "तेरी मौसीजी की हालत देखकर मुझे बड़ा ही डर लगता है। इस तरह बगैर खाए रहने पर आदमी का शरीर कब तक टिका रह सकता है!"

संदीप कहता, "तो फिर मैं क्या करूं, बताओ? मैं तो अकेला आदमी हूं, इस हालत में मैं अपनी नौकरी संभालूं या विशाखा की खोज करूं? अभी मुझ पर अगर कोई मुसीबत आ जाए तो तुम लोगों की देखभाल कौन करेगा? किसके भरोसे तुम लोग जिन्दा रहोगी?"

मां इस बात का क्या उत्तर दे? उस समय मां के मुंह से कोई शब्द नहीं निकलता।

यह एक अजीब ही गृहस्थी है। मात्र चार व्यक्तियों की गृहस्थी। उनमें से एक जानलेवा बीमारी की शिकार है, दूसरी लापता। किसकी सेवा कौन करे? हालांकि ये दोनों इस परिवार की कोई नहीं हैं, वे बाहरी आदमी हैं। उन दो बाहरी प्राणियों के लिए बाकी दो प्राणियों को अथक परिश्रम करना पड़ रहा है।

संदीप सवेरे ही घर से खाना खाकर निकल जाता और आखिरी ट्रेन से घर लौटता। थकावट से चूर-चूर होकर। जाने के वक्त भी एक ही प्रश्न और एक ही उत्तर और वापस आने के बाद भी एक ही प्रश्न और एक ही उत्तर। संदीप के जीवन की यह एक बंधी-बंधाई रात हो गई थी।

संदीप घर आते ही पहला सवाल करता, "मौसीजी आज कैसी है?"

मां जवाब देती, "पहले की ही तरह।"

घर से निकलने के दौरान मां पूछती, "आज भी तुझे घर लौटने में देर होगी?"

संदीप कहता, "आज भी हाफ-डे की छुट्टी लेकर अलीपुर जेल जाना होगा।"

शाखा कब तक घर वापस आएगी ?"

प कहता, "हर रोज़ तो वकील साहब कहते हैं कि जज आज ही ऑर्डर
ाक्षर करेंगे। कोर्ट की बात ही जुदा होती है।"

स बात के बाद मां और क्या कहे! संदीप ही और क्या कर सकता है! क्यों
ा उस दिन सड़क पर बेहोश पड़ी हुई थी और पुलिस ने उसे जेल के अंदर
यों कर दिया, उसकी जवाबदेही देने वाला कोई नहीं है। इसकी ज़िम्मेदारी
लेगा? गवर्नमेन्ट या पब्लिक? यह सवाल वह किससे करेगा? फिर क्या सूर्य
ती के चारों तरफ चक्कर लगाता है?

लेकिन उस दिन सचमुच ही जज साहब ने हुक्म जारी कर दिया कि जहां तक
भव हो सके जल्द से जल्द पुलिस विशाखा गांगुली को कोर्ट में हाज़िर करे।

यह हुक्म जारी करना ही काफी नहीं है, इसे पुलिस के पास पहुंचने में ज़माना
लग जाएगा। वकील ने जब देखा कि पुलिस इस बात पर ध्यान नहीं दे रही है तो
बोले, "आपको अब मेरे साथ आने की ज़रूरत नहीं, मैं ही सारा बंदोबस्त कर
दूंगा—"

संदीप ने पूछा, "तो फिर मैं आपसे कब मिलूं?"

वकील साहब बोले, "अगले मंगलवार को आइए। भरसक इस अरसे के
दरमियान ही उस लड़की को कोर्ट में हाज़िर कराने में मुझे कामयाबी मिल
जाएगी।"

अंततः यही हुआ। उस दिन संदीप बैंक की उपस्थिति पुस्तिका में हस्ताक्षर
कर सीधे कोर्ट चला आया। पता लगाकर संदीप जब जज की अदालत में पहुंचा तो
देखा, विशाखा सचमुच ही कटघरे में मौजूद है। जज ने उसे एक कुर्सी पर बैठने की
अनुमति दी है। उस समय जिरह करना खत्म हो चुका था।

वकील साहब ने उस समय संदीप की ओर इशारा करते हुए कहा, "सर,
विशाखा के रिश्तेदार आ गए हैं। इनका नाम है संदीप लाहिड़ी—ये ही क्लेमेंट हैं,
श्रीमती विशाखा गांगुली के गार्जियन—"

जज ने सरसरी निगाह से संदीप की ओर देखा और उसके बाद विशाखा से
पूछा, "आप उनकी ओर गौर से देखिए और बताइए कि आप उन्हें पहचानती
हैं?"

विशाखा ने संदीप की ओर देखकर कहा, "हां—"

"उनका नाम क्या है?"

विशाखा ने कहा, "संदीप लाहिड़ी।"

जज ने पूछा, "आप उनके साथ जाने को राजी हैं?"

विशाखा ने अबकी भी कहा, "हां—"

जज साहब ने जल्दी-जल्दी कुछ लिखा। अब गरदन उठाकर अपने पे
को कुछ लिखकर दे दिया।

वकील साहब बेंच-क्लर्क के पास जाकर कुछ बातचीत करने लगे। उस
संदीप को अपने पास बुलाया। संदीप को एक जगह हस्ताक्षर करने कहा।
साहब बोले, "नीचे तारीख दर्ज कर दीजिए।"

संदीप के हाथ की उंगलियां तब थर-थर कांप रही थीं।

संदीप के बाद उन्होंने विशाखा को पुकारा। बोले, "आप भी संदीप साहिरी के नाम के नीचे अपना दस्तखत कर दीजिए।"

विशाखा के हाथ की उंगलियां भी थरथर कांप रही थीं। वकील साहब बोले, "आप डर क्यों रही हैं? दस्तखत कीजिए। नाम के नीचे तारीख लिख दीजिए। डरने की कौन-सी बात है? अब मौज मनाइए। अब डरने की कोई बात नहीं है।"

उसके बाद जब सारा कुछ समाप्त हो गया तो जज साहब ने एक दूसरे मुकदमे की कार्रवाई शुरू कर दी। बेंच-क्लर्क के आदमी ने तब दूसरे मुजरिम को हाजिर होने के लिए पुकारा।

बाहर निकलकर संदीप ने पूछा, "अब कहां जाना पड़ेगा?"

साथ में विशाखा भी थी। वकील साहब बोले, "और कहां जाइएगा, घर जाइए—"

"घर?"

"हां-हां घर, घर नहीं जाइएगा तो और कहां जाइएगा?"

संदीप ने कहा, "लेकिन···"

"अब लेकिन-वेकिन क्यों? अब 'लेकिन' नहीं।"

"आपने मेरे लिए इतना कुछ किया, आपको कुछ···"

वकील साहब बोले, "नहीं। आप रुपये की बाबत कहना चाहते हैं? इस केस में मैं कुछ भी नहीं लूंगा···आप घर जाइए, सुख से रहिए, मैं चलता हूं। एक और कमरे में मेरी सुनवाई है, मैं चलता हूं··"

बहुत दिन पहले काशी बाबू से सुना था कि कोर्ट अपना 'चरित्र' खो बैठा है, इसलिए उन्होंने प्रैक्टिस करना बंद कर दिया है। लेकिन इस वकील साहब ने तो उससे एक भी पैसे की मांग नहीं की। संदीप को इसीलिए आज भी उनका नाम याद है। केशव चंद्र घोष। एडवोकेट। तारक घोष के मामले में गोपाल हाजरा के खिलाफ कोई कार्रवाई न करा पाने के कारण काशी बाबू ने संदीप को वकील बनने से मना किया था। और केशवचंद्र घोष शुरू से ही इतने काम करते रहे, इतनी मेहनत की, इतना वक्त दिया लेकिन फिर भी एक पैसे तक की मांग न की! तो दुनिया में अब भी इमान है। अब भी केशव बाबू जैसे मनुष्य हैं इसलिए यह दुनिया आज भी चल रही है। हो सकता है, इसी वजह से इस दुनिया के चलने के क्रम में कोई अवरोध पैदा नहीं हुआ है।

संदीप चंद लमहों के लिए अन्यमनस्क हो गया था। अब एकाएक खयाल आया कि विशाखा उसके पास खड़ी है। विशाखा को देखने से ही पता चल गया कि अभी वह अपने पैरों के सहारे खड़ी नहीं हो पा रही है।

संदीप ने तत्क्षण विशाखा का एक हाथ थाम लिया। हाथ थाम न लिया होता तो हो सकता था वह गिर पड़ती। पूछा, "क्या हुआ, तबीयत खराब लग रही है?"

विशाखा की आंखों की दृष्टि में एक किस्म का धुंधलापन छाया हुआ है। संदीप की बात का जवाब न देकर पूछा, "मैं कहां हू?"

संदीप समझ गया कि विशाखा स्वाभाविक स्थिति में नहीं है हालांकि कोर्ट

के अंदर ऐसा कुछ नहीं लगा था। जज के प्रश्न का विशाखा ने सही-सही उत्तर दिया था।

संदीप ने पूछा, "मुझे ठीक से पहचान पा रही हो न ?"

विशाखा ने कहा, "हां—"

संदीप ने पूछा, "मैं कौन हूं, बताओ तो ? मेरा नाम क्या है ?"

विशाखा दहाड़ मारकर रोने लगी।

संदीप भारी मुसीबत में फंस गया। पूछा, "रो क्यों रही हो ?"

विशाखा बोली, "मेरा क्या होगा ?"

संदीप ने महसूस किया, इतने दिनों तक जेल के अंदर रहने के कारण विशाखा के दिमाग में थोड़ी गड़बड़ी आ गई है। पहले की तरह वह बस या ट्राम से हावड़ा स्टेशन नहीं जा पाएगी। अकस्मात् एक टैक्सी पर उसकी नजर पड़ गई। उसी पर विशाखा को बिठाकर बोला, "चलो हावड़ा स्टेशन।"

उस समय भी विशाखा अपलक बाहर की ओर ताक रही थी। बगल में ही संदीप बैठा है, इस बात का उसे खयाल ही नहीं है।

संदीप ने विशाखा के कंधे पर हाथ रखकर उसका ध्यान तोड़ा। कहा, "तुम कुछ बोल क्यों नहीं रही हो ? कुछ बोलो।"

विशाखा ने इस बात के उत्तर में कहा, "मेरी मां कहां है ?"

संदीप ने कहा, "बेड़ापोता में। तुम्हारी मां जहां थीं वहीं हैं—"

यह सुनकर विशाखा को जैसे थोड़ी- बहुत शांति का अहसास हुआ। बोली, "मुझे मेरी मां के पास ले चलो न। मां को देखने की मुझे बहुत ही इच्छा हो रही है—"

संदीप ने कहा, "तुम्हारी मां के पास ही तुम्हें ले जा रहा हूं।"

विशाखा ने कहा, "वे लोग मुझे पकड़कर नहीं ले जाएंगे ?"

"कौन ? कौन तुम्हें पकड़कर ले जाएंगे ? मेरे रहते तुम्हें कोई पकड़कर ले जा सकता है ?"

विशाखा के चेहरे पर तब भी भय की छाप थी। संदीप ने विशाखा की तरफ देखते हुए पूछा, "तुम्हें कौन पकड़कर ले गया था ? तुम्हें किसका डर लग रहा है ? उसका नाम क्या है ?"

विशाखा ने कहना चाहा पर डर के मारे कह नहीं सकी।

संदीप ने कहा, "कहो, कहो, उसका नाम क्या है बताओ ? डरने की कोई जरूरत नहीं। देखा नहीं कि तुम्हें किस तरह जेल से छुड़ाकर ले आया।"

यह सुनकर विशाखा जैसे आसमान से नीचे गिर पड़ी। बोली, "मुझे जेल भेजा गया था ? क्यों ? मैंने क्या किया था ?"

संदीप ने कहा, "तुमने क्या किया था सो तुम जानो। मगर तुम जेल में थीं।"

विशाखा को अब जैसे सारा कुछ याद आ गया। बोली, "हां-हां, मेरे साथ और दस-बारह लड़कियां थीं।"

संदीप ने पूछा, "उन्हें जेल क्यों भेजा गया था ? उन लोगों ने कौन-सा अपराध किया था ?"

विशाखा बोली, "यह मालूम नहीं। कई बांग्ला देश की औरतें भी थीं।"

"उन लोगों ने क्या किया था?"

विशाखा ने कहा, "नौकरी के लोभ में वे हिन्दुस्तान आई थीं।"

टैक्सी तीव्र गति से आगे बढ़ रही थी। विशाखा मिचमिचाती आंखों से तब भी बाहर की तरफ टकटकी लगाकर देख रही थी। एकाएक बोली, "यह किले का मैदान है न?"

संदीप ने कहा, "हां, तुमने तो ठीक-ठीक पहचान लिया।"

अचानक विशाखा बोली, "मुझे एक अदद चॉकलेट खरीद दोगे?"

संदीप चिहुंक उठा। बोला, "क्या कह रही हो?"

विशाखा बोली, "चॉकलेट। मुझे चॉकलेट खाने में बड़ा ही अच्छा लगता है—"

संदीप चॉकलेट की बात सुनकर अवाक् हो गया। इतनी-इतनी चीजों के रहने के बावजूद विशाखा चॉकलेट खाना क्यों चाहती है? विशाखा को क्या जोरों से भूख लगी है? संदीप ने पूछा, "सवेरे तुमने कुछ खाया था?"

विशाखा बोली, "नहीं।"

संदीप बोला, "फिर हम यहां उतर जाते हैं। पहले हम यहां कुछ खा लें। घर तक पहुंचने में काफी देर लग जाएगी। तब तुम खाए बिना कैसे रहोगी?"

टैक्सी रोककर संदीप ने उसका किराया चुका दिया। उसके बाद विशाखा का हाथ थामकर रास्ता पार किया और उसे एक रेस्तरां के अन्दर ले गया।

"क्या खाओगी, बोलो? मोगलई पराठे खाओगी?"

विशाखा बोली, "नहीं, चॉकलेट खरीद दो।"

संदीप की समझ में नहीं आया कि विशाखा चॉकलेट खाने के लिए इतना दबाव क्यों डाल रही है? पहले तो विशाखा इस तरह की नहीं थी। एकाएक उसमें चॉकलेट खाने का नशा पैदा क्यों हो गया?

विशाखा की बात पर ध्यान न देकर संदीप ने एक व्यक्ति के लिए खाना लाने का आदेश दिया। खाना भी बाकायदा आ गया। खाते-खाते विशाखा बोली, "चॉकलेट नहीं दिया मुझे?"

संदीप ने कहा, "तुम बार-बार चॉकलेट खाने की मांग क्यों करती हो?"

विशाखा बोली, "चॉकलेट खाने में मुझे बहुत अच्छा लगता है—"

उसकी बात सुनकर संदीप के मन में एक तरह का संदेह पैदा हुआ। बोला, "पहले तो तुम्हें चॉकलेट खाने का नशा नहीं था। अब चॉकलेट के प्रति इतना रुझान क्यों हो गया?"

विशाखा बोली, "मिस्टर साहा ने मुझे चॉकलेट खाने को दिया था। वह खाने में कितना अच्छा लग रहा था! उसे खाने के बाद मुझे बड़ा ही आराम महसूस होता। मिस्टर साहा के बाद हरदयाल बाबू भी मुझे चॉकलेट खाने को देते थे—"

"मिस्टर साहा? हरदयाल बाबू?—ये लोग कौन हैं?"

सहसा संदीप को सारी बातों का स्मरण हो आया। उसी आइडियल फूड प्रोडक्ट्स का मिस्टर भवतोष साहा! वहीं तो विशाखा नौकरी के लिए इंटरव्यू देने गई थी। उसके बाद ऑफिस से आने पर संदीप की उस पर नजर नहीं पड़ी थी। तभी से विशाखा लापता हो गई थी। उसके बाद इतने दिनों पर संदीप

ार कर ले आया है। तो क्या उन्हीं लोगों ने विशाखा की यह हालत की

प ने कहा, "तुम तो आइडियल फूड प्रोडक्ट्स कंपनी के दफ्तर में इंटरव्यू
थी। तुम्हें यह सब बात याद है? बताओ, वह सब बात तुम्हें याद है?"
शाखा के चेहरे पर दयनीयता का एक भाव उभर आया। जैसे एक-एक
रानी बातों की उसे याद आने लगी। बोली, "अब मैं क्या करूं?"
संदीप ने कहा, "कहो, मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं! मैंने तो तुम्हें
रों बार नौकरी करने से मना किया था। तो फिर मुझे बगैर जताए तुमने वहां
री के लिए आवेदन-पत्र क्यों भेजा?"
विशाखा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।
संदीप ने कहा, "बताओ, उसके बाद क्या हुआ? जरा याद करने की कोशिश
रो। मैंने तो कहा था कि ऑफिस से छुट्टी लेकर मैं तुम्हें अपने साथ ले जाने के
लिए आऊंगा। याद है कि मैंने कहा था?"
"हां।"
"फिर तुमने मेरे लिए इन्तज़ार क्यों नहीं किया? किसने तुम्हें ऑफिस से
निकल जाने को कहा? तुम किसके साथ निकल गईं?"
विशाखा बोली, "मिस्टर साहा। अब याद आ रहा है मिस्टर भवतोष
साहा—"
"वह कौन है?"
"मैंने तो उन्हीं के सामने इंटरव्यू दिया था। सोचा, नौकरी देने के मालिक तो
वही हैं, इसलिए उनकी बात मानना ठीक रहेगा।"
"उसके बाद क्या हुआ?"
"उसके बाद वे बोले कि अपनी गाड़ी से हावड़ा स्टेशन पहुंचा देंगे।"
"उसके बाद?"
"उसके बाद..." कहते-कहते सारा कुछ दिमाग में गड्मड हो गया।
संदीप ने कहा, "बोलो, उसके बाद क्या हुआ? याद करने की कोशिश
रो।"
विशाखा ने कहा, "उसके बाद गाड़ी पर बैठने के बाद वे मुझे बहुत सारी
जगह ले गए। मैंने कहा—मुझे हावड़ा स्टेशन ले चलिए। उन्होंने कहा—नहीं
उसके पहले कहीं कुछ खा लेना चाहिए। वे मुझे एक होटल में ले गए। लेकिन व
होटल नहीं, एक मकान था—"
"मकान था?"
"हां, एक मकान। वह दुकान नहीं थी। वहां जाते ही एक औरत स
आई। उसे सब लोग अन्टी कहकर पुकारते थे। वह अन्टी हम लोगों के लि
सारा खाना ले आई। उसे खाने पर मुझे नींद आ गई। उस समय मुझे को
नहीं रहा।"
यह कहते-कहते विशाखा को झपकी आ गई।
संदीप ने कहा, "उसके बाद क्या हुआ? बोलो, क्या हुआ?"
"उसके बाद क्या हुआ, मुझे मालूम नहीं।"

"मालूम नहीं है का मतलब ? याद करने की कोशिश करो।"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद की बात याद नहीं आ रही है।"

संदीप ने कहा, "फिर भी याद करने की कोशिश करो—"

विशाखा ने कहा, "याद करने की कोशिश तो करती हूं।···हां, अब थोड़ी-बहुत याद आ रही है। वहां हरदयाल हर रोज मेरे पास आता था। और मुझे चॉकलेट खाने को देता था।"

"चॉकलेट ?"

"हां। उस चॉकलेट को खाते ही आंखों में झपकी जैसी आ जाती और थोड़ी देर बाद ही मैं गहरी नींद में खो जाती थी। उस वक्त मुझे बहुत आराम महसूस होता था। उसके बाद क्या हुआ, मालूम नहीं। मैंने देखा, हरदयाल एक अखबार हाथ में थामे यहां आए। मुझसे पूछा—आपका नाम क्या है ? मैंने जैसे ही अपना नाम बताया, वे चौंक पड़े। उसके बाद अखबार की एक तसवीर से मेरे चेहरे का मिलान करने लगे। उसके बाद पूछा—भवतोष साहा आपके कौन होते हैं ? मैंने कहा, 'कोई नहीं।'

"उसके बाद उन लोगों ने मुझे और एक चॉकलेट खाने को दिया। मैं फिर गहरी नींद में डूब गई। उसके बाद कितने दिनों तक सोई रही, मुझे मालूम नहीं। जब होश आया तो देखा···"

"उस वक्त क्या देखा ?"

विशाखा बोली, "देखा कि मैं कैदखाने में हूं···"

इस बीच खाना खत्म हो चुका है। संदीप ने बिल के पैसे का भुगतान कर दिया। बोला, "चलो, एक टैक्सी पकड़ हावड़ा स्टेशन चलते हैं। मौसीजी तुम्हारे लिए बहुत चिन्तित हैं।"

विशाखा उठकर खड़ी हुई और बोली, "चलो—"

सड़क पर निकल टैक्सी पकड़नी है। सड़क पर बेहद भीड़ है। उस समय तीसरा पहर नहीं हुआ था। और थोड़ी देर बाद ही दफ्तरों में छुट्टी हो जाएगी। उस समय भीड़ और बढ़ जाएगी। तब लाख कोशिश करने पर भी टैक्सी नहीं मिलेगी।

विशाखा एकाएक चिल्ला उठी, "वही तो हरदयाल बाबू हैं—"

"कहां ?"

विशाखा ने चिल्लाकर पुकारा, "ओ हरदयाल बाबू—"

विशाखा की दृष्टि का अनुसरण करने पर उसने देखा, सड़क पर चहलकदमी करते हुए दो आदमी एक जीप के पास गए और उस पर बैठ गए। उन दोनों में से एक व्यक्ति को संदीप ने पहचान लिया। वह गोपाल हाजरा है। उसके साथ एक और अनजाना व्यक्ति है। संदीप उसे पहचान नहीं सका।

संदीप ने विशाखा का मुंह अपने हाथ से दबा दिया। बोला, "चुप रहो, पुकारो मत—"

विशाखा तो भी पुकारने की कोशिश कर रही थी। लेकिन संदीप ने विशाखा का मुंह और जोर से दबा दिया। तब तक जीप चालू होकर जा चुकी थी।

संदीप ने हाथ हटाकर पूछा, "किसे पुकार रही थी ? हरदयाल बाबू कौन है?"

उसका उद्धार कर ले आया है। तो क्या उन्हीं लोगों ने विशाखा की यह हालत की है ?

संदीप ने कहा, "तुम.तो आइडियल फूड प्रोडक्ट्स कंपनी के दफ्तर में इंटरव्यू देने गई थी। तुम्हें यह सब बात याद है ? बताओ, वह सब बात तुम्हें याद है ?"

विशाखा के चेहरे पर दयनीयता का एक भाव उभर आया। जैसे एक-एक कर पुरानी बातों की उसे याद आने लगी। बोली, "अब मैं क्या करूं ?"

संदीप ने कहा, "कहो, मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं ! मैंने तो तुम्हें हज़ारों बार नौकरी करने से मना किया था। तो फिर मुझे बगैर जताए तुमने वहां नौकरी के लिए आवेदन-पत्र क्यों भेजा ?"

विशाखा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

संदीप ने कहा, "बताओ, उसके बाद क्या हुआ ? ज़रा याद करने की कोशिश करो। मैंने तो कहा था कि ऑफिस से छुट्टी लेकर मैं तुम्हें अपने साथ ले जाने के लिए आऊंगा। याद है कि मैंने कहा था ?"

"हां।"

"फिर तुमने मेरे लिए इन्तजार क्यों नहीं किया ? किसने तुम्हें ऑफिस से निकल जाने को कहा ? तुम किसके साथ निकल गईं ?"

विशाखा बोली, "मिस्टर साहा। अब याद आ रहा है मिस्टर भवतोष साहा—"

"वह कौन है ?"

"मैंने तो उन्हीं के सामने इंटरव्यू दिया था। सोचा, नौकरी देने के मालिक तो वही हैं, इसलिए उनकी बात मानना ठीक रहेगा।"

"उसके बाद क्या हुआ ?"

"उसके बाद वे बोले कि अपनी गाड़ी से हावड़ा स्टेशन पहुंचा देंगे।"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद···" कहते-कहते सारा कुछ दिमाग में गड्मड हो गया।

संदीप ने कहा, "बोलो, उसके बाद क्या हुआ ? याद करने की कोशिश करो।"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद गाड़ी पर बैठने के बाद वे मुझे बहुत सारी जगह ले गए। मैंने कहा—मुझे हावड़ा स्टेशन ले चलिए। उन्होंने कहा—नहीं, उसके पहले कहीं कुछ खा लेना चाहिए। वे मुझे एक होटल में ले गए। लेकिन वह होटल नहीं, एक मकान था—"

"मकान था ?"

"हां, एक मकान। वह दुकान नहीं थी। वहां जाते ही एक औरत सामने आई। उसे सब लोग अन्टी कहकर पुकारते थे। वह अन्टी हम लोगों के लिए ढेर सारा खाना ले आई। उसे खाने पर मुझे नींद आ गई। उस समय मुझे कोई होश नहीं रहा।"

यह कहते-कहते विशाखा को झपकी आ गई।

संदीप ने कहा, "उसके बाद क्या हुआ ? बोलो, क्या हुआ ?"

"उसके बाद क्या हुआ, मुझे मालूम नहीं।"

"मालूम नहीं है का मतलब ? याद करने की कोशिश करो।"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद की बात याद नहीं आ रही है।"

संदीप ने कहा, "फिर भी याद करने की कोशिश करो—"

विशाखा ने कहा, "याद करने की कोशिश तो करती हूं।···हां, अब थोड़ी-बहुत याद आ रही है। वहां हरदयाल हर रोज मेरे पास आता था। और मुझे चॉकलेट खाने को देता था।"

"चॉकलेट ?"

"हां। उस चॉकलेट को खाते ही आंखों में झपकी जैसी आ जाती और थोड़ी देर बाद ही मैं गहरी नींद में खो जाती थी। उस वक्त मुझे बहुत आराम महसूस होता था। उसके बाद क्या हुआ, मालूम नहीं। मैंने देखा, हरदयाल एक अखबार हाथ में थामे यहां आए। मुझसे पूछा—आपका नाम क्या है ? मैंने जैसे ही अपना नाम बताया, वे चौंक पड़े। उसके बाद अखबार की एक तसवीर से मेरे चेहरे का मिलान करने लगे। उसके बाद पूछा—भवतोष साहा आपके कौन होते हैं ? मैंने कहा, 'कोई नहीं।'

"उसके बाद उन लोगों ने मुझे और एक चॉकलेट खाने को दिया। मैं फिर गहरी नींद में डूब गई। उसके बाद कितने दिनों तक सोई रही, मुझे मालूम नहीं। जब होश आया तो देखा···"

"उस वक्त क्या देखा ?"

विशाखा बोली, "देखा कि मैं कैदखाने में हूं···"

इस बीच खाना खत्म हो चुका है। संदीप ने बिल के पैसे का भुगतान कर दिया। बोला, "चलो, एक टैक्सी पकड़ हावड़ा स्टेशन चलते हैं। मौसीजी तुम्हारे लिए बहुत चिन्तित हैं।"

विशाखा उठकर खड़ी हुई और बोली, "चलो—"

सड़क पर निकल टैक्सी पकड़नी है। सड़क पर बेहद भीड़ है। उस समय तीसरा पहर नहीं हुआ था। और थोड़ी देर बाद ही दफ्तरों में छुट्टी हो जाएगी। उस समय भीड़ और बढ़ जाएगी। तब लाख कोशिश करने पर भी टैक्सी नहीं मिलेगी।

विशाखा एकाएक चिल्ला उठी, "वही तो हरदयाल बाबू हैं—"

"कहां ?"

विशाखा ने चिल्लाकर पुकारा, "ओ हरदयाल बाबू—"

विशाखा की दृष्टि का अनुसरण करने पर उसने देखा, सड़क पर चहलकदमी करते हुए दो आदमी एक जीप के पास गए और उस पर बैठ गए। उन दोनों में से एक व्यक्ति को संदीप ने पहचान लिया। वह गोपाल हाजरा है। उसके साथ एक और अनजाना व्यक्ति है। संदीप उसे पहचान नहीं सका।

संदीप ने विशाखा का मुंह अपने हाथ से दबा दिया। बोला, "चुप रहो, पुकारो मत—"

विशाखा तो भी पुकारने की कोशिश कर रही थी। लेकिन संदीप ने विशाखा का मुंह और जोर से दबा दिया। तब तक जीप चालू होकर जा चुकी थी।

संदीप ने हाथ हटाकर पूछा, "किसे पुकार रही थी? हरदयाल बाबू कौन है?"

विशाखा ने कहा, "हरदयाल बाबू ने मुझे ढेर सारा चॉकलेट खाने को दिया था—"

संदीप यह नाम सुनकर आश्चर्यचकित हो गया। हरदयाल बाबू जो भी हो लेकिन गोपाल हाजरा से उसका कौन-सा संपर्क है? गोपाल हाजरा से हरदयाल की इतनी घनिष्ठता क्यों है? गोपाल हाजरा जीप चलाते हुए रात-भर पुलिस-कर्मियों को रिश्वत देकर वह अपने किस स्वार्थ की सिद्धि करता है? फिर क्या उस स्वार्थ से हरदयाल का भी स्वार्थ जुड़ा हुआ है? विशाखा को इतने चॉकलेट खिलाकर यह गोपाल हाजरा की ही स्वार्थ सिद्धि करता है?

आइडियल फूड प्रोडक्ट्स के भवतोष साहा का भी क्या कोई स्वार्थ है इस मामले में? संदीप गोपाल हाजरा को देखकर अवाक् हो गया। हर चीज संदीप को रहस्यजनक जैसी लगी। उन लोगों के बेड़ापोता के युवक गोपाल हाजरा का इतना दबदबा! जबकि वह लिखा-पढ़ा हुआ बिलकुल नहीं है। उन दिनों उसने कितनी ही बार संदीप से कहा था कि लिखाई-पढ़ाई से आदमी का कोई उपकार नहीं होता। तो फिर किससे आदमी का उपकार होता है?

गोपाल हाजरा कहता, "आदमी किसलिए लिखता-पढ़ता है? रुपया कमाने के लिए ही न! अगर रुपया कमाना ही आदमी का प्रमुख उद्देश्य है तो उसके लिए बहुत सारे रास्ते खुले हुए हैं। तू कलकत्ता चला जा, वहां जाने पर तुझे देखने को मिलेगा कि जो लोग बेशुमार दौलतमंद हैं, उन्होंने जिन्दगी में कोई लिखाई-पढ़ाई नहीं की है। तुम लोगों की धारणा गलत है संदीप, गलत है! लिखाई-पढ़ाई में वक्त बर्बाद न कर मेरी ही तरह रुपया कमाने के धंधे की तलाश कर। फिर तेरे पास ढेर सारे रुपये हो जाएंगे। और जैसे ही तू बेशुमार पैसे का मालिक हो जाएगा तो तुझे देखने को मिलेगा कि जिन्दगी में तूने जिन चीजों की कामना की थी, वे तेरे चरणों पर आकर लोट रही हैं। ऐसे हालात में तुझे सबका प्रेम मिलेगा, लोग-बाग तेरे सामने हाथ जोड़कर खड़े होंगे। सभी तुझे श्रद्धा की दृष्टि से देखेंगे, तुझसे डरेंगे, तेरे प्रति भक्ति प्रकट करेंगे।"

संदीप गोपाल हाजरा की बातें ध्यान से सुनता। हो सकता है, उसकी बातों पर थोड़ा-बहुत विश्वास भी होता। संदीप सोचता, वह कलकत्ता जाकर ढेर सारा रुपया कमाएगा तो मां सुख से रह सकेगी। उस समय मा को कोई तकलीफ नहीं होगी। वह आराम से पैर पर पैर रखकर नौकर-चाकरों को हुक्म देती रहेगी।

लेकिन बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के मकान में आने के बाद उसे गोपाल हाजरा की बातों का बेतुकापन समझ में आया। वहां उसे समझ में आया कि रुपया-पैसा ही दुनिया के सारे अनर्थों का मूल है। बहुत ज्यादा रुपया-पैसा होना कितना दुखदायी है, सौम्य बाबू और मुक्तिपद बाबू को अगर उसने न देखा होता तो यह बात तो उसकी समझ में न आई होती। वह उन लोगों के उतने करीब न रहता तो उसे पता नहीं चलता कि रुपये के पीछे कितनी निद्राहीन रातों की ग्लानि जुड़ी रहती है, इनकम टैक्स के कितने अत्याचार उन्हें अम्लान वदन सहना पड़ता है, लेबरयूनियन की कितनी घिनौनी मांगें जीवन को विभीषिकामय बना देती हैं। सचमुच, रुपये से बिस्तर खरीदा जा सकता है, लेकिन नींद नहीं खरीदी जा सकती। दवा खरीदी जा सकती है पर तंदुरुस्ती क्या खरीदी जा सकती है?

रुपये से किताबें खरीदी जा सकती हैं, लेकिन प्रतिभा क्या खरीदी जा सकती है?
रुपये से मकान खरीदा जा सकता है पर गृह-सुख क्या खरीदा जा सकता है?

आज उन रुपयों के साथ एक उपद्रव का आविर्भाव हुआ है और वह है चॉकलेट। सिर्फ चॉकलेट ही नहीं, बल्कि गोलगप्पे का आविर्भाव हुआ है, पान-मसाले का आविर्भाव हुआ है। इसके अलावा और भी कितने ही ऐसे उपद्रवों का आविर्भाव हुआ है जो गिने नहीं जा सकते।

सदीप ने गोपाल हाजरा और हरदयाल के जीप की ओर ताकते हुए सोचा, सिर्फ उन्हीं लोगों ने ही इन उपद्रवों को जीवित रखा हो, ऐसी बात नहीं। इस दुनिया के द्वितीय महायुद्ध के बाद तमाम लोग इसके लिए जिम्मेदार ठहराए जा सकते हैं। लोग-बाग केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही परेशान हैं, प्रेम और प्यार के लिए किसी के हृदय में स्थान नहीं है। सभी क्षण और पल के लिए ही चिंतित हैं, शाश्वत के लिए किसी को चिन्ता नहीं है।

एक खाली टैक्सी सामने आते ही सदीप ने हाथ उठाकर उसे रोका। उसके बाद विशाखा के साथ बैठते हुए कहा, "चलो हावड़ा स्टेशन।"

संसार में जो लोग विघ्न-बाधा और उपद्रव से बचकर निश्चिन्तता के साथ जीवन जीना चाहते हैं वे अपने मकान के चारों तरफ दीवार खींचकर दरवाजा-खिड़की बन्द कर वास करते हैं। उनका मकसद होता है तमाम परेशानियों से अपनी रक्षा करना। लेकिन असल में वे अपने घर को प्यार नहीं करते।

दरअसल वे ही अपने घर में प्रेम करते हैं जो दरवाजे और खिड़कियों को बंद किए बिना बाहर की रोशनी, हवा, पानी और ताप को अन्दर घुसने देते हैं। बाहर से भीतर का जितना आदान-प्रदान होता है गृहस्थों के लिए वह उतना ही लाभदायक है। लेकिन इस बात को वे एकबार भी नहीं सोचते।

दादी माँ ने अपने मकान के सदर दरवाजे को नौ बजे रात में ही बन्द करने का आदेश देकर सोचा था कि निश्चिन्तता के साथ रह सकेंगी। घर के बाहर से कोई पाप अन्दर प्रवेश नहीं कर सकेगा। लेकिन उससे घर में प्रदूषण फैल जाएगा, उस तरफ ध्यान देने का उन्हें समय नहीं मिला था।

इसका अर्थ यह है कि वे घर से प्रेम नहीं करती थीं। इसलिए उस दिन सवेरे-सवेरे पुलिस आकर जब उनके पोते को खून के अपराध में पकड़कर ले गई तो अपनी बेंत-कुर्सी पर वे माथा पीटने लगीं। उसके बाद वे बेहोश हो गईं।

उस समय मुक्तिपद की क्या हालत हो सकती है, इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है।

उन्होंने तत्क्षण अपने डाक्टर को फोन कर उसे घर पर बुला लिया। डाक्टर ने आकर सारी स्थितियों पर गौर कर जो दवा दी इसका पता किसी को चल नहीं सकता है। इसलिए किसी को इसकी जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। उस दवा को खाकर वे जो अचेतावस्था में पड़ी रहीं तो तीन दिन तक उसका प्रभाव दूर नहीं हुआ।

उनके सोए रहने से मुखर्जी-भवन के मुलाजिमों का काम तो चल जाता है पर

मुक्तिपद बाबू का काम नहीं चलता। उन्हें अकेले ही चारों तरफ का काम संभालना है। उनकी फैक्टरी बर्बाद हो रही है, कंपनी रसातल में जा रही है, इन सब बातों के अलावा उन्हें अपनी पत्नी और लड़की का झमेला भी बरदाश्त करना होगा। साथ-साथ मां और सौम्य के बारे में भी उन्हें अकेले ही सोचना होगा। लाखों रुपये के मालिक होने के बावजूद उन्हें सहायता करनेवाला एक भी आदमी नहीं है।

पुलिस तो सौम्य को पकड़कर ले गई। अब उन्हें हाथ पर हाथ धरे चुपचाप बैठे रहना नहीं है। उन्हें तो कोर्ट, पुलिस और एडवोकेटों से सलाह-परामर्श करना ही है। लेकिन वे किस एडवोकेट के पास जाएंगे?

एकाएक उन्हें मिस्टर दासगुप्त का स्मरण हो आया। बड़ा ही व्यस्त आदमी है मिस्टर दासगुप्त। मिस्टर एन० आर० दासगुप्त। बहुत दिन पहले एक मुकदमे के सिलसिले में एक क्लब में उनसे जान-पहचान हुई थी। उस समय मुक्तिपद ने उनसे पूछा था, "आप इतने व्यस्त आदमी हैं, फिर आपको क्लब में आने का समय कैसे मिल जाता है?"

नीरद बाबू ने हंसते हुए कहा था, "समय क्या किसी को मिलता है? समय निकालना पड़ता है।"

"आप समय कैसे निकाल लेते हैं?"

नीरद बाबू ने कहा था, "सब कुछ भूला-बिसरा कर।"

"भुला-बिसरा कर का मतलब?"

नीरद बाबू ने कहा था, "हम हिन्दुओं के अनगिनत देवताओं के बीच एक देवता का नाम है शिव। वे सब कुछ भूले रहते हैं इसीलिए उनका नाम है 'भोलानाथ'। भूल जाना भी तो एक किस्म की कला है। भूलने के लिए वे भंग पीकर, धतूरे के फूल खाकर सृष्टि-स्थित प्रलय की पीड़ा भूल जाते हैं। मैं भी यही करता हूं। मैं काम करता रहूं और चौबीसों घंटा मोवक्किलों के बारे में ही सोचता रहूं तो मुझे क्या नींद आएगी? ऐसा कहीं होता है? इसलिए भोलानाथ जो खाते थे, मैं वही खाता हूं।"

"आप भांग खाते हैं?"

नीरद बाबू ने कहा था, "भांग क्यों खाऊंगा, मैं उसका मोडर्न संस्करण खाता हूं।" वह कहकर हो-होकर हंस पड़े थे। उसके बाद हंसना बन्द करके बोले थे, "पहले के बनिस्बत आदमी का जीवन जटिल हो गया है। अब आदमी को पहले की अपेक्षा लम्बी आयु प्राप्त हो गई है। आधुनिक काल के आदमी का जीवन जटिल होने के कारण उसकी परमायु में वृद्धि क्यों हो गई है? वृद्धि होने का कारण है लैबरोटरी में नई किस्म की भांग का आविष्कार किया है। मैं उसी का सेवन करता हूं—"

"कौन-कौन-सी दवा का आप सेवन करते हैं?"

नीरद बाबू ने कहा, "जिस दिन जितना सोना चाहता हूं, उतना ही खाता हूं। और उससे अधिक सोना चाहता हूं तो दवा की मात्रा बढ़ा देता हूं।"

मुक्तिपद कहते, "इसका मतलब?"

नीरद बाबू कहते, "असल में आपको खोलकर ही बताता हूं—यह जो मैं

आया हूं, यह भी मेरा एक तरह से भागकर ही आना है। मैं जो भी आराम करता हूं वह भारत में विदेश भागकर। तभी एक तरह से मुझे असली छुट्टी मिलती है। उस वक्त खुद को बिलकुल भूल जाता हूं—"

मुक्तिपद बाबू पूछते, "आप खुद को भूल सकते हैं ?"

नीरद बाबू कहते, "भूल पाता हूं, यह नहीं कह सकता। भूलने की कोशिश करता हूं, बस इतना ही—"

तो भी नीरद बाबू हर रोज क्लब आते, ऐसी बात नहीं। दो महीने या तीन महीने पर शौक से किसी शनिवार को क्लब आते और सबसे हंसी-मज़ाक में समय बिताकर चले जाते। क्योंकि शनिवार उनके साप्ताहिक छुट्टी के दिन हुआ करते थे। उस दिन मोवक्किलों के लिए उनका चैंबर बन्द रहता।

सौम्य के गिरफ्तार होने के बाद मुक्तिपद बाबू को शुरू में उन्हीं का स्मरण आया। तत्क्षण टेलीफोन-गाइड से नंबर देखकर उन्हें फोन किया।

दूसरे छोर से नीरद बाबू का कंठस्वर तैर कर आया, "आप हैं ? इतने दिनों के बाद।"

मुक्तिपद बोले, "भारी मुसीबतों में फंस गया हूं, मुसीबत में ही फंसकर आपकी शरण में आया हूं—आपको मेरी रक्षा करनी है।"

"क्या बात है ? मैं आपकी रक्षा करूंगा ? मुझमें क्या इतनी सामर्थ्य है ?"

मुक्तिपद बोले, "हां, सेवनन थी हंड्रेड टू का केस है। आपके अतिरिक्त मेरा कोई नहीं है—कब आऊं, बता दीजिए—"

नीरद बाबू बोले, "आपके लिए मेरे पास हमेशा वक्त है।"

"ठीक है, मैं आ रहा हूं।"

नीरद रंजन दासगुप्त का अर्थ ही है इंडिया के पेनल कोड का विश्वकोश। ऐसा कोई कानून नहीं जो उन्हें ज़बानी याद न हो। खासकर क्रिमिनल कोड। वे बराबर मोवक्किलों से कहते, "हम जब भी कोई ब्रीफ लेते हैं तो सोचते हैं कि every man is innocent in his eyes;* उसके बाद एविडेंस। यह एविडेंस जिसके विरुद्ध पाया जाएगा, उसी का नाम है जस्टिस।"

मुक्तिपद बाबू जब मिस्टर दासगुप्त के चैंबर में आए तो वहां और-और दिनों की तरह ही मोवक्किलों की भीड़ थी। लेकिन नीरद बाबू ने एक-एक कर तमाम मोवक्किलों को विदा कर दिया। उस समय घड़ी साढ़े आठ बजा रही थी। एक घंटे के दरमियान नीरद बाबू को कोर्ट के लिए निकल जाना पड़ेगा। मुक्तिपद बाबू का चेहरा देखकर नीरद बाबू हैरत में आ गए। बोले, "यह क्या ? आपका चेहरा इस तरह का क्यों हो गया है ?"

मुक्तिपद बाबू बोले, "ऐसा न होता तो आपके पास आता ? अब आप ही मुझे इस विपत्ति से छुटकारा दिला सकते हैं।" इतना कहने के बाद शुरू से अन्त तक की सारी घटना का ब्योरा प्रस्तुत किया।

आखिर में बोले, "बताइए, अभी मैं क्या करूं ? अपनी मा की मैं जो हालत देख आया हूं उससे मैं बड़ा ही भयभीत हो गया हूं। जिन्दगी के आखिरी दौर में मा

---

* प्रत्येक आदमी अपनी निगाह में निर्दोष है।

को शायद जिन्दा नहीं रख पाऊंगा।"

नीरद वावू वोले, "आप मां को जिन्दा रखने के लिए जो कुछ कर सकते हैं, जाकर कीजिए, मैं इस मामले को संभाल लूंगा।"

उसके वाद अपने स्टेनोग्राफर की ओर देखकर उससे एक फार्म मंगाया और मुक्तिपद की ओर वढ़ाते हुए वोले, "अपनी मां से इस जगह एक दस्तखत कराकर ले आइए। आपका भतीजा अपनी दादी मां के पास रहता है न ?"

"हां।"

"एक वात और। आपके भतीजे से जिस मेम की शादी हुई थी, उसके देश में उसके अपने कौन-कौन रिश्तेदार हैं ? मां-वाप, भाई-वहन···"

"सुना है, उसकी विधवा मां के अलावा और कोई नहीं है। उसे हर महीने दो सौ पौंड भेजने की शर्त थी। वह रकम वक्त पर भेजी नहीं जाती थी इसलिए दोनों में अक्सर झड़प होती थी। एक दिन वह मेम सोए हुए सौम्य की छाती पर वैठ उसका गला दवाकर मारने की कोशिश कर रही थी···"

"अयं, ऐसी वात ? तो फिर क्या हुआ ?"

"उसके वाद और क्या, सौम्य के चिल्लाने पर दाई-नौकर शोर-शरावा करने लगे। इस पर मां सौम्य को खींचकर अपने पास ले गई और रात में अपने कमरे में ही सुलाया। उस रात सौम्य और उसकी पत्नी एक ही विस्तर पर नहीं सोए थे।"

"उसके वाद ?"

"उसके वाद मां ने मेरे पास खवर भेजी। मैंने जाकर अपने भतीजे से वातें कीं। उसने वताया, मेम उसे डिवॉर्स करने को राजी है वशर्ते उसे वीस हज़ार पौंड कंपेनशेन्स दिया जाए। मैं इस पर सहमत हो गया। वीस हज़ार पौंड देने से ही यह मुसीवत यदि टल जाए तो मैं दूंगा।"

"उसके वाद ?"

मुक्तिपद वोले, "यही सव वातचीत चल ही रही थी कि यह कांड हो गया। यह खवर सुनकर मैं विडन स्ट्रीट के भवन में गया तो देखा, पुलिस आकर घर के दाई-नौकर वगैरह का स्टेटमेंट ले रही है। मेरे भतीजे को पुलिसकर्मी गिरफ्तार करके ले गए। उस समय आपकी याद आ गई। सोचा, आपके अलावा मुझे कौन इस मुसीवत से वचा सकता है ! लिहाज़ा आपको टेलीफोन किया।"

तव घड़ी साढ़े नौ वजा रही थी। नीरद वावू के कोर्ट जाने का समय होने-होने पर है। उन्होंने जैसे ही घड़ी की ओर देखा, मुक्तिपद वावू वोले, "मैं चलता हूं, आपको देर हो रही है···अव यह वताइए कि मुझे क्या करना है ?"

नीरद वावू वोले, "आपको कुछ नहीं करना है। सारा कुछ मैं करूंगा। मैंने आपकी सारी वातों को 'जॉट-डाउन' कर लिया है। आज मैं आपके भतीजे की जमानत के लिए दरख्वास्त दे दूंगा।"

"मर्डर-केस में जमानत मिल जाती है ?"

नीरद वावू वोले, "इसकी चिन्ता आपको नहीं करनी है। यह मुझे सोचना है। डैनियल डिफोर की एक वात मैं हर क्लाइन्ट से कहता हूं : Every man is innocent in his eyes., अभी वेल एप्लिकेशन तो कर दूं, उसके वाद देखा जाए क्या होता है।"

मुक्तिपद नमस्कार करबाहर निकले और गाड़ी मे बैठ गए। ड्राइवर से कहा, "घर चलो—"

जहां आदमी दल बनाकर काम करते हैं, वहा धोखेबाजी की गुंजाइश रहती है। उदाहरण के लिए, दफ्तर। उसमे कौन काम कर रहा है, कौन काम से जी चुरा रहा है, यह पता लगाना बडा ही मुश्किल काम है। दस के बीच यदि एक आदमी अनुपस्थित रहता है तो इस पर लोगों का ध्यान नही जाता। एक आदमी के काम की कमी को नौ आदमी पूरा कर देते हैं।

लेकिन दुनिया में ऐसे भी बहुत से आदमी हैं, जो बाहर के दसियों लोगों से मिलजुल कर रहने के बावजूद असल में अकेले हैं। राजनीति एक आदमी को लेकर नही की जा सकती। सिनेमा भी एक ही आदमी से नही होता। खेल-कूद के साथ भी यही बात है। वह सब दलबद्ध काम है।

लेकिन कवि? दार्शनिक? अकेले चलना ही उनकी विधि लिपि है। उन्हें कोई नही पहचानता, कोई उत्साहित नही करता, कोई उनके साथ एकजुट होकर काम नही करता। तो भी वे अकेले ही अपनी मुहिम जारी रखते हैं। किसी से समझौता नही करते।

सदीप वैसे ही मुट्ठी-भर लोगो मे से एक है। उसका संघर्ष एकल संघर्ष है। इसलिए उसके संघर्ष में गफलतबाजी नहीं है। वरना वह विशाखा और उसकी मा को लाकर अपने घर में रखता ही क्यो? इसमें उसका कोई स्वार्थ था? उसने स्वयं से भी यह प्रश्न बार-बार किया है। लेकिन उस प्रश्न का उसे एक ही उत्तर मिला है। उसका उत्तर है—'नहीं'।

रात की ट्रेन से जब वह बेडापोता पहुंचा तो और-और दिनों की तरह मां अपने बेटे के लिए अकेले ही इंतजार कर रही थी।

बेटे के गले की आवाज सुनकर वह चौकन्ना हो उठी। दरवाजा खोलकर कुछ कहने जा रही थी। लेकिन उसके पहले ही संदीप बोल उठा, "यह देखो मा, किसे ले आया हूं—"

विशाखा पर नजर पडते ही मा ने उसे बाहो मे भर लिया।

बोली, "अरे, यह कैसा चेहरा हो गया है इस लड़की का? इसकी यह हालत किसने कर दी?"

विशाखा ने भी मा को देखकर रोना शुरू कर दिया। मा बोली, "रो क्यों रही हो बेटी? तुम इतने दिनो तक कहा थी? तुम्हारी ऐसी हालत किसने कर दी?"

विशाखा ने जवाब देना चाहा पर जवाब देने के बदले वह और जोर-जोर से रोने लगी।

एक बार सिर्फ इतना ही कहा, "मेरी मा कहा है? मा नहीं है क्या?"

मा बोली, "तुम्हारी मा बगल के कमरे में लेटी हुई है।"

यह सुनकर विशाखा बगल के कमरे में जा रही थी लेकिन संदीप ने उसे रोक दिया। बोला, "तुम्हारी मा अभी सोई हुई है, तुम जाओगी तो मौसीजी की नींद

टूट जाएगी।"

विशाखा बोली, "मुझे मां से मिलने की बहुत इच्छा हो रही है—"

सचमुच तब दवा खिलाकर मां को रखा गया था।

विशाखा ने पूछा, "मां को दवा खिलाकर सुलाकर क्यों रखा गया है ? मां को क्या हुआ है ? मां क्या बीमार हैं ? तुमने तो पहले मुझे कुछ बताया नहीं।"

संदीप ने कहा, "तुम्हारे बारे में ही सोचते-सोचते मौसीजी की तबीयत खराब हो गई थी। लड़की खोजने पर मिल नहीं रही हो तो ऐसी हालत में मां के मन में चिन्ता नहीं होगी ? तुम तो जानती नहीं कि हम तुम्हारे लिए कितने चिन्तित थे। मुझे कितने ही दिनों तक ऑफिस से गैर हाजिर रहना पड़ा है। तुम्हारे लिए मैंने सारे कलकत्ता को कितनी बार छान मारा है। कितनी ही बार लाल बाजार के पुलिस के दरवाज़े को जाकर खटखटाया है। मुझे जो यह सब परेशानी उठानी पड़ी है वह तुम्हारी हठधर्मिता के कारण ही।"

विशाखा बोली, "मुझे क्या तकलीफ नहीं उठानी पड़ी है। मुझे कितनी तकलीफ उठानी पड़ी है, तुम्हें तो यह पहले ही बता चुकी हूं।"

संदीप बोला, "तुम्हें जो तकलीफ उठानी पड़ी है इसके लिए तुम खुद ही ज़िम्मेदार हो। तुम्हीं तो बार-बार कहती थी कि मैं किसी के सिर का बोझ बनकर नहीं रहना चाहती। तुम मेरे घर में रह रही हो तो इसका मतलब क्या यह कि तुम मेरे सिर का बोझ हो ? तुम क्या मेरे लिए परायी हो ? मेरी अपनी बहन होती तो उसकी जिम्मेदारी मुझे ही उठानी पड़ती—"

उसके बाद ज़रा रुककर बोला, "बहरहाल, अब तुम जबकि खोजने पर मिल गई तो उसके बारे में बहस करने से कोई फायदा नहीं। आज तुम्हारा पूरा दिन परेशानियों में गुज़रा है, खा-पीकर अच्छी तरह सो रहो—"

अचानक बगल के कमरे से मौसीजी की आवाज़ आई, "अरी विशाखा तू आ गई बेटी ?"

मां के गले की आवाज़ सुनकर विशाखा चौंक उठी। बोली, "वही तो मां जग गई है—मां-मां—"

यह कहते हुए विशाखा बगल के कमरे के अन्दर चली गई। साथ-साथ संदीप भी बगल के कमरे में पहुंच गया। लड़की पर नजर पड़ते ही मां ने उसे अपनी बांहों में भर लिया।

विशाखा भी मां की गोद में मुंह छिपाकर बिलख-बिलख कर रोने लगी। बोली, "तुम्हें बहुत दिनों से देख न पाने के कारण मेरा मन बहुत घबरा रहा था। तुम्हें क्या हुआ है मां ?"

मौसीजी लड़की को बांहों में कसकर दबाए हुए रोने लगी, "तू इतने दिनों तक कहां थी ? तेरे लिए रोते-रोते मैं पागल हो गई थी···"

संदीप मौसीजी और विशाखा की यह रुलाई देखकर डर गया। डाक्टर हिदायत दे गया था कि मरीज को खूब शांत रहना चाहिए। उत्तेजित होना मरीज के लिए बड़ा बुरा होगा। मरीज को अधिक से अधिक समय तक आराम करते रहना चाहिए। नींद के लिए एक दवा भी दी थी। कहा था : ज़रा भी दर्द या उत्तेजना हो तो यह दवा दीजिएगा।

संदीप ने कहा, "विशाखा, उठो-उठो। तुम्हारी मां की तबीयत खराब है, उसे जरा सोने दो।"

लेकिन संदीप की बात पर कौन ध्यान दे! इधर यह हालत देखकर मां भी कमरे के अन्दर चली आई है। मां-बेटी का यह काड देखकर मा भी भयभीत हो गई। कहीं मरीज के सीने में पुराना दर्द न होने लगे! कहीं डाक्टर को फिर से बुलाना न पड़ जाए!

मां कहने लगी, "ओ दीदी, दीदी, विशाखा को छोड़ दीजिए, विशाखा को छोड़ दीजिए—आपकी तबीयत खराब हो जाएगी, विशाखा को छोड़ दीजिए···"

अन्ततः किसी ने जब बात नहीं मानी तो मां ने अपने लड़के से कहा, "दीदी को नींद की वही दवा खिला दो, डाक्टर साहब कह गए हैं।"

संदीप अब क्या करे! अन्ततः कोई उपाय न देखकर जबरन दवा की एक टिकिया गले में ठूंस दी। बोला, "मौसीजी, इसे खा लीजिए, आपका दवा खाने का वक्त हो गया है—"

दवा के गुण से या और किसी कारणवश मालूम नही, लेकिन दवा खाते ही मौसीजी जरा शात हो गई। मा बोली, "विशाखा, अब उठ जाओ बिटिया, मां को अब जरा सोने दो—"

विशाखा ने मा की बात मान ली। वह उठकर खड़ी हो गई। बोली, "मां को इस तरह की बीमारी नही थी—"

संदीप ने कहा, "यह सब तुम्हारे चलते हुआ है। तुम्हारे कारण ही मौसीजी को यह बीमारी हुई है। तुम्हारे लिए चिंता में डूबी रहने के कारण मौसीजी कुछ भी नही खाती थी। न खाने के कारण ही यह बीमारी हुई है—"

"कब से यह बीमारी हुई है?"

संदीप ने कहा, "जिस दिन तुम लापता हो गई उसी दिन से मौसीजी ने खाना-पीना बन्द कर दिया। बार-बार कहने पर भी मौसीजी कुछ नही खाती थी।"

जब देखा मां थोड़ी-बहुत शात हो गई है तो विशाखा को भी थोड़ी-बहुत शांति का अहसास हुआ। मां बोली, "अब तुम खाना खा लो बेटी। दिन-भर तुम परेशानियों से जूझती रही हो। तुम भी कहीं बीमार हो गईं तो हम जिन्दा नही रह पाएंगे—"

कमला की मा दिन-भर काम करते रहने के कारण थककर चूर हो गई थी। अब वह भी खाना लेकर अपने घर चली जाएगी। उसे अगले दिन खूब तड़के आना है।

विशाखा बोली, "मां तो सो गई। वह क्या कुछ नही खाएगी?"

मां बोली, "इसके लिए तुम्हें चिन्ता नही करनी है। पहले तुम खाना खा लो। कहीं तुम बीमार हो गईं तो हम तो मर जाएंगे—"

रात तब काफी गहरा चुकी थी। खाना-पीना खत्म होने के बाद कमला की मां अपने लिए खाना लेकर घर चली गई। विशाखा को बहुत कुछ कहने-सुनने के बाद वह भी खाना खाने को राजी हो गई।

संदीप सोने जा रहा था। एकाएक मां ने कमरे के अंदर प्रवेश किया। बोली, "मुन्ना, तेरी एक चिट्ठी आई थी। मैं तुम्हें देना भूल गई थी।"

। संदीप को आश्चर्य हुआ। उसे कौन चिट्ठी देगा! वह तो जीवन-
हा व्यक्ति रहा है। किसी से उसकी घनिष्ठता या दोस्ती हुई हो, ऐसा
याद नहीं है। एकमात्र तारक घोष से थोड़ी-बहुत दोस्ती थी। पर वह
ौर कष्ट से अपना खून बेच-बेचकर दुनिया से विदा हो चुका है। एक
क्त था हाजरा बूढ़े का लड़का गोपाल हाजरा। वह तो अब बेशुमार रुपये
लक बन बैठा है। अब वह संदीप के बनिस्बत बहुत बड़ा आदमी हो गया
नी जिसे बी० आइ०पी० कहा जाता है। अब वह संदीप को आदमी समझता
ां। तो फिर उसे कौन चिट्ठी लिख सकता है?
नहीं, उसके किसी दोस्त ने उसे चिट्ठी नहीं लिखी है। लिखी तो है मल्लिक
। ने जो उसके पिता के मित्र थे। उन्होंने लिखा है—

बेटा संदीप,

उम्मीद है, तुम लोग सकुशल हो। इधर मुखर्जी भवन में मुसीबत का बेइन्तहा
र चल रहा है। तुमने शायद अखबार में पढ़ा होगा कि फिलहाल इस मकान में
लिस आई थी और खून के अपराध में सौम्य बाबू को गिरफ्तार कर थाना ले गई
है। इस घटना के घटने के बाद दादी मां ने खाट पकड़ ली है। उन्हें होश नहीं
आया है। मंझले बाबू डाक्टर और वकील के पीछे दौड़ते-दौड़ते परेशान हो गए
हैं। उनकी भी तबीयत ठीक नहीं है। उनकी फैक्टरी अब भी चालू नहीं हुई है।
वे भी अस्वस्थ हैं। ऐसे हालात में मैं किस मुसीबत में दिन बिता रहा हूं, क्या
बताऊं! अलबत्ता इतना जानता हूं कि विपत्ति में फंसने पर भयभीत होने से काम
नहीं चलेगा। कर्त्तव्य करते ही रहना पड़ेगा।

अब वह बात बता रहा हूं जिसके कारण यह चिट्ठी लिख रहा हूं। तुम्हारे
घर में तपेश गांगुली की भाभी और भतीजी विशाखा हैं। अभी विशाखा की शादी
के लिए कहीं बातचीत या कोशिश मत करना। ईश्वर की क्या मर्जी है, कह नहीं
सकता। सिर्फ इतना ही जानता हूं कि वे मंगलमय हैं। उस मंगलमय की इच्छा
के पालन में ही हमारा मंगल निहित है। तुम मेरा आशीर्वाद स्वीकारो और अपनी
मां को मेरी शुभकामना जताना।

शुभैषी,
परमेश चंद्र मल्लिक

नेशनल यूनियन बैंक छोटा बैंक नहीं है। हर साल एक हजार करोड़ रुपया जमा
होता है। तो भी स्टाफ के माहवारी वेतन के बारे में शिकायत रहती है। बीच-
बीच में इस संदर्भ में यूनियन की बैठक होती है। वहां मैनेजर को सुना-सुनाकर
नारे लगाए जाते हैं। बीच-बीच में हड़ताल होती है। उस समय जुलूस निकालकर
सड़क की बस-गाड़ी-ट्राम रोक दी जाती है। संदीप चूंकि दफ्तर में नौकरी कर
है इसलिए दफ्तर से जुड़े तमाम मामलों से उसे जुड़ा रहना पड़ता है।

उस दिन परेश दा ने बुलाया। बोला, "क्या बात है, आजकल तुम दिखते
नहीं? घर पर कुशल है न?"

संदीप बोला, "नहीं, हालचाल खास अच्छा नहीं है।"

परेश दा ने कहा, "तुम पहले की तरह मांस वगैरह नहीं खिला रहे हो, तुम्हारे दिन अच्छे रहेंगे कैसे ? उस दिन बस में जाने के दौरान देखा, तुम रविवार को भी मेडिकल कॉलेज के आसपास चक्कर लगा रहे हो।"

संदीप बोला, "मेरे बड़े ही दुर्दिन चल रहे हैं—"

"दुर्दिन ? तुम्हें कौन-सी विपत्ति आई ?"

संदीप ने कहा, "मेरे घर मे एक व्यक्ति बहुत बीमार है।"

"बीमार ? कौन बीमार है जी ? तुम्हारे घर में तो सिर्फ तुम और तुम्हारी मां दो जने हैं। तुम तो निश्चिन्त आदमी हो। तुम्हारा जैसा सुखी आदमी कौन है ? पूरी तनख्वाह भी खर्च नही होती होगी। किसी दिन मांस-वास खिलाना चाहिए, सो भी नहीं करते। और टिफिन के वक्त कैंटीन चलो न—"

संदीप बोला, "नही परेश दा, आज सचमुच ही मैं भारी मुसीबत में हूं। आज मेरे पास वक्त नही है—"

यह कहकर संदीप अपना काम खत्म कर सिर झुका लेता है। किसी से बातचीत करने का न तो उसके पास वक्त है और न ही इच्छा। चूंकि सवेरे ऑफिस आना पड़ता है इसीलिए आता है और छुट्टी होते ही बाहर निकल जाता है।

उस दिन एकाएक बहुत दिनों के बाद सुशील सरकार से मुलाकात हो गई।

"यह क्या, आप हैं ? आप इधर क्यों आए हैं ?"

संदीप ने कहा, "और आप इधर किसलिए आए हैं ?"

सुशील सरकार जब उसके साथ लॉ कॉलेज मे पढ़ता था, उस समय उसका चेहरा कितना सुंदर था। उन दिनों वह पार्टी का काम करता था। इसलिए नही कि वह पार्टी का भक्त था। बल्कि इसलिए पार्टी का मेम्बर बना था कि उसे नौकरी मिल जाएगी। संदीप से उसने पार्टी का मेम्बर होने कहा था। उस समय संदीप भी नौकरी की तलाश मे चरखी की तरह चक्कर काट रहा था। लेकिन घटनाचक्र के कारण उसे नौकरी मिल गई थी। लिहाजा उसे किसी पार्टी का मेम्बर बनने की जरूरत नही पड़ी थी। उसके बाद एकबार मैदान में मुलाकात हुई थी। वह पार्टी के जुलूस के साथ आया था। उस दौरान अलबत्ता उससे कोई बातचीत नहीं हुई थी। संदीप ने दूर से उसे देखा था। अब उससे फिर मुलाकात हो गई।

सुशील ने कहा, "मेरा एक रिश्तेदार अस्पताल मे है—मेरा बड़ा ही घनिष्ठ रिश्तेदार। उन्ही को देखने आया था। आपको यहां कौन-सा काम है ?"

संदीप ने कहा, "मैं अपने एक रिश्तेदार को भर्ती करना चाहता हूं, इसी के बारे मे पूछताछ करने आया हूं। कितने रुपये लगेंगे !"

इसके बाद कहा, "कुछ समझ में नही आ रहा। डाक्टर भी कुछ बता नही पा रहे हैं। कहते हैं, किसी अस्पताल या नर्सिंग होम मे रखना अच्छा रहेगा। लेकिन नर्सिंग होम में बहुत खर्च होगा, इतना रुपया मैं कहां से दूंगा ?"

सुशील ने कहा, "आप अभी किस पार्टी में हैं ?"

संदीप ने कहा, "मैं अब भी किसी पार्टी का मेम्बर नही बना हूं।"

सुशील के चेहरे पर हताशा के बादल घुमड़ आए। बोला, "यहां का स्टाफ एसोसियेशन तो वामपंथी है, लेफ्ट पार्टी का हुए बगैर आपको जेनरल बेड़ नही मिलेगा।"

संदीप ने कहा, "यहां भी ?"

"लेकिन हां, डाक्टरों का जो एसोसियेशन है वह कांग्रेसी है। उनसे 'फेवर' पाने के लिए आपका वगैर किसी पार्टी का मेम्बर हुए भी काम चल सकता है।"

याद है, संदीप उतने दिनों से कलकत्ता में था परंतु वह इन खबरों से वाकिफ नहीं था। रातोंरात कलकत्ता शहर में तब्दीलियां आ रही थीं। शुरू में डक्टर ने मौसीजी की बीमारी के लिए तरह-तरह की दवाइयां लिखकर दी थीं। सारी दवाएं खिलाने पर भी जब बीमारी दूर नहीं हुई तो जांच कराने कहा। उससे भी पता नहीं चला कि कौन-सी बीमारी है। आखिर में बहुत तरह की दवाओं के इंजेक्शन दिए। बाजार में जितनी तरह की दवाएं उपलब्ध हैं उनमें से तकरीबन सभी के इंजेक्शन देना शुरू कर दिया। साथ ही तरह-तरह के विटामिन की टिकियां।

लेकिन उससे भी सुधार का कोई लक्षण नहीं दिख पड़ा। हर रोज संदीप ऑफिस जाने के दौरान डाक्टर से मिलकर मरीज की हालत के बारे में सूचना देता। सुनकर डाक्टर और कुछ नई दवाओं का नाम लिख देता। बैंक से लौटने के दौरान उन्हीं दवाओं को खरीदकर वह घर आता।

मां और विशाखा संदीप के इंतजार में दरवाजे के पास खड़ी रहतीं। लड़के के आते ही मां फौरन लड़के के हाथ से सरो-सामान का झोला ले लेती। पूछती, "डाक्टर ने क्या कहा ?"

संदीप कहता, "और क्या कहेंगे, नई दवा लिख दी है—यह लो, खाना खाने के बाद यह दवा तीन बार खाने कहा है।"

यह कहकर दवा का पैकेट विशाखा के हाथ में थमा देता। मां से पूछता, "आज मौसीजी कैसी हैं ?"

मां कहती, "और कैसी रहेंगी, पहले की तरह ही हैं—"

सच, बीमारी में न तो कोई सुधार ही आ रहा था और न ही गिरावट। पूरे जिस्म में कमजोरी आ गई है, उसके साथ भूख का न लगना भी शामिल है। खाने के प्रति कोई रुचि भी नहीं है। दिन-रात लेटे रहने के अलावा और कोई काम करने की शक्ति भी नहीं थी।

संदीप करीब जाता तो मौसीजी रोने लगती। कहती, "अब मैं जिन्दा नहीं रहूंगी बेटा। तुम मेरी लडकी का कोई अवलंबन ढूंढ़ दो, मैं दुनिया से विदा होने के पहले यह देख जाना चाहती हूं—"

संदीप मौसीजी को और कितनी झूठमूठ की सांत्वना देगा! वह तो विशाखा के लिए बहुत सारे अखबारों में कितनी ही बार विज्ञापन दे चुका है। बहुत सारे पात्र पक्षों से बातचीत भी कर चुका है। लेकिन फिर भी कोई रास्ता नहीं निकल पाया है। आखिर में विशाखा जब अपना पराक्रम दिखाने गई तो विपत्ति आन खड़ी हुई। उस विपत्ति से अन्ततः उसका उद्धार किया गया, यही काफी है। वह जो जीवित लौट आई है, इसके लिए उन्हें भगवान का कृतज्ञ होना चाहिए।

संदीप मौसीजी से कहता, "विशाखा की चिंता के कारण ही आपको बीमारी हुई थी। अब विशाखा को मैं वापस ले आया हूं। अब तो आपको कोई कष्ट नहीं है। अब आप उठकर बैठिए, अच्छी तरह खाना खाइए—"

मौसीजी तो भी रोना बंद नहीं करतीं। बोलतीं, "मेरे गले के नीचे भात का कौर उतरता ही नहीं बेटा। मैं कैसे खाना खाऊं? तुम मेरी विशाखा के लिए कोई सहारा ढूंढ दो बेटा। अब मैं उसे जवान कुमारी रूप में देखकर बेचैन हो उठती हूं—"

संदीप कहता, "आप चिन्ता मत कीजिए मौसीजी। मैं विशाखा की शादी का कोई न कोई बंदोबस्त करके ही रहूंगा, आपको वचन देता हूं।"

उस दिन विशाखा को एकान्त में ले जाकर कहा, "अन्ततः तुमने क्या निर्णय लिया विशाखा? तुम्हें अपने मल्लिक चाचा का पत्र पढ़ने दिया ही था। उस संदर्भ में तुमने कुछ सोचा-विचारा है?"

विशाखा बोली, "मैं क्या सोचूंगी?"

संदीप ने कहा, "तुम नहीं सोचोगी तो और कौन सोचेगा? मैं सोचूंगा?"

विशाखा इसके उत्तर में कुछ नहीं कहती। चुप्पी साध लेती।

संदीप ने कहा, "तुम चुप्पी साधे क्यों हो? कुछ जवाब दो—"

तो भी विशाखा खामोशी में डूबी रही। इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

संदीप ने कहा, "जवाब क्यों नहीं दे रही हो? अभी तक क्या किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सकी हो, यही बात है न? तुम इस पर और सोचकर देख लो। मैं तुम्हें सोचने-विचारने का और भी समय देता हूं।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "मल्लिक चाचा की चिट्ठी का कुछ न कुछ जवाब देना ही होगा। तुम जो कहोगी वही उन्हें लिखूंगा। मल्लिक चाचा मेरी चिट्ठी के इंतजार में होंगे।"

अब इतनी देर के बाद विशाखा के मुंह से आवाज निकली, "तुम लिख दो मैं सौम्य से शादी नहीं करूंगी—"

संदीप ने पूछा, "क्यों? क्यों तुम सौम्य से शादी नहीं करोगी? तुमसे शादी करने के लिए दादी मां ने सारा कुछ ठीक करके रखा था। उन्हीं लोगों ने तो अपने घर में रखकर तुम्हें लिखाया-पढ़ाया था। दादी मां ने तुम्हारे लिए हजारों रुपये खर्च किए थे। सौम्य बाबू विलायत से मेम ब्याह कर न लाए होते तो इस बीच तुम दोनों की शादी हो गई होती। लेकिन उस मेम के मर जाने से अब वह समस्या दूर हो गई है। अब उससे शादी करने में तुम्हें किस बात का एतराज है?"

विशाखा ने कहा, "मैं शादी नहीं करूंगी, नौकरी करूंगी।"

संदीप ने कहा, "फिर नौकरी करोगी? नौकरी करने के दुख का तो एक बार अनुभव कर चुकी हो। इस पर भी कह रही हो कि नौकरी करोगी?"

विशाखा ने कहा, "नौकरी इसलिए करना चाहती हूं कि मैं तुम्हारे सिर का बोझ बनकर रहना नहीं चाहती—"

संदीप ने कहा, "मेरे सिर का बोझ बनकर नहीं रहना चाहती, यह तो अच्छी बात है। लेकिन सौम्य बाबू से अगर तुम शादी कर लेती हो तो तुम्हें मेरे सिर का

संदीप ने कहा, "यहां भी ?"

"लेकिन हां, डाक्टरों का जो एसोसियेशन है वह कांग्रेसी है। उनसे 'फेवर' पाने के लिए आपका वगैर किसी पार्टी का मेम्बर हुए भी काम चल सकता है।"

याद है, संदीप उतने दिनों से कलकत्ता में था परंतु वह इन खबरों से वाकिफ नहीं था। रातोंरात कलकत्ता शहर में तब्दीलियां आ रही थीं। शुरू में डक्टर ने मौसीजी की बीमारी के लिए तरह-तरह की दवाइयां लिखकर दी थीं। सारी दवाएं खिलाने पर भी जब बीमारी दूर नहीं हुई तो जांच कराने कहा। उससे भी पता नहीं चला कि कौन-सी बीमारी है। आखिर में बहुत तरह की दवाओं के इंजेक्शन दिए। बाज़ार में जितनी तरह की दवाएं उपलब्ध हैं उनमें से तकरीबन सभी के इंजेक्शन देना शुरू कर दिया। साथ ही तरह-तरह के विटामिन की टिकियां।

लेकिन उससे भी सुधार का कोई लक्षण नहीं दिख पड़ा। हर रोज़ संदीप ऑफिस जाने के दौरान डाक्टर से मिलकर मरीज़ की हालत के बारे में सूचना देता। सुनकर डाक्टर और कुछ नई दवाओं का नाम लिख देता। बैंक से लौटने के दौरान उन्हीं दवाओं को खरीदकर वह घर आता।

मां और विशाखा संदीप के इंतज़ार में दरवाज़े के पास खड़ी रहतीं। लड़के के आते ही मां फौरन लड़के के हाथ से सरो-सामान का झोला ले लेती। पूछती, "डाक्टर ने क्या कहा ?"

संदीप कहता, "और क्या कहेंगे, नई दवा लिख दी है—यह लो, खाना खाने के बाद यह दवा तीन बार खाने कहा है।"

यह कहकर दवा का पैकेट विशाखा के हाथ में थमा देता। मां से पूछता, "आज मौसीजी कैसी हैं ?"

मां कहती, "और कैसी रहेंगी, पहले की तरह ही हैं—"

सच, बीमारी में न तो कोई सुधार ही आ रहा था और न ही गिरावट। पूरे जिस्म में कमज़ोरी आ गई है, उसके साथ भूख का न लगना भी शामिल है। खाने के प्रति कोई रुचि भी नहीं है। दिन-रात लेटे रहने के अलावा और कोई काम करने की शक्ति भी नहीं थी।

संदीप करीब जाता तो मौसीजी रोने लगती। कहती, "अब मैं ज़िन्दा नहीं रहूंगी बेटा। तुम मेरी लडकी का कोई अवलंबन ढूंढ़ दो, मैं दुनिया से विदा होने के पहले यह देख जाना चाहती हूं—"

संदीप मौसीजी को और कितनी झूठमूठ की सांत्वना देगा ! वह तो विशाखा के लिए बहुत सारे अखबारों में कितनी ही बार विज्ञापन दे चुका है। बहुत सारे पात्र पक्षों से बातचीत भी कर चुका है। लेकिन फिर भी कोई रास्ता नहीं निकल पाया है। आखिर में विशाखा जब अपना पराक्रम दिखाने गई तो विपत्ति आन खड़ी हुई। उस विपत्ति से अन्ततः उसका उद्धार किया गया, यही काफी है। वह जो जीवित लौट आई है, इसके लिए उन्हें भगवान का कृतज्ञ होना चाहिए।

संदीप मौसीजी से कहता, "विशाखा की चिंता के कारण ही आपको बीमारी हुई थी। अब विशाखा को मैं वापस ले आया हूं। अब तो आपको कोई कष्ट नहीं है। अब आप उठकर बैठिए, अच्छी तरह खाना खाइए—"

मौसीजी तो भी रोना बंद नहीं करतीं। बोलतीं, "मेरे गले के नीचे भात का कौर उतरता ही नहीं बेटा। मैं कैसे खाना खाऊं? तुम मेरी विशाखा के लिए कोई सहारा ढूंढ़ दो बेटा। अब मैं उसे जवान कुमारी रूप में देखकर बेचैन हो उठती हूं—"

संदीप कहता, "आप चिन्ता मत कीजिए मौसीजी। मैं विशाखा की शादी का कोई न कोई बंदोबस्त करके ही रहूंगा, आपको वचन देता हूं।"

उस दिन विशाखा को एकांत में ले जाकर कहा, "अन्ततः तुमने क्या निर्णय लिया विशाखा? तुम्हें अपने मल्लिक चाचा का पत्र पढ़ने दिया ही था। उस संदर्भ में तुमने कुछ सोचा-विचारा है?"

विशाखा बोली, "मैं क्या सोचूंगी?"

संदीप ने कहा, "तुम नहीं सोचोगी तो और कौन सोचेगा? मैं सोचूंगा?"

विशाखा इसके उत्तर में कुछ नहीं कहती। चुप्पी साध लेती।

संदीप ने कहा, "तुम चुप्पी साधे क्यों हो? कुछ जवाब दो—"

तो भी विशाखा खामोशी में डूबी रही। इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

संदीप ने कहा, "जवाब क्यों नहीं दे रही हो? अभी तक क्या किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सकी हो, यही बात है न? तुम इस पर और सोचकर देख लो। मैं तुम्हें सोचने-विचारने का और भी समय देता हूं।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "मल्लिक चाचा की चिट्ठी का कुछ न कुछ जवाब देना ही होगा। तुम जो कहोगी वही उन्हें लिखूंगा। मल्लिक चाचा मेरी चिट्ठी के इंतजार में होंगे।"

अब इतनी देर के बाद विशाखा के मुंह से आवाज निकली, "तुम लिख दो मैं सौम्य से शादी नहीं करूंगी—"

संदीप ने पूछा, "क्यों? क्यों तुम सौम्य से शादी नहीं करोगी? तुमसे शादी करने के लिए दादी मां ने सारा कुछ ठीक करके रखा था। उन्हीं लोगों ने तो अपने घर में रखकर तुम्हें लिखाया-पढ़ाया था। दादी मां ने तुम्हारे लिए हजारों रुपये खर्च किए थे। सौम्य बाबू विलायत में मेम ब्याह कर न लाए होते तो इस बीच तुम दोनों की शादी हो गई होती। लेकिन उस मेम के मर जाने से अब वह समस्या दूर हो गई है। अब उससे शादी करने में तुम्हें किस बात का एतराज है?"

विशाखा ने कहा, "मैं शादी नहीं करूंगी, नौकरी करूंगी।"

संदीप ने कहा, "फिर नौकरी करोगी? नौकरी करने के दश का तो एक बार अनुभव कर चुकी हो। इस पर भी कह रही हो कि नौकरी करोगी?"

विशाखा ने कहा, "नौकरी इसलिए करना चाहती हूं कि मैं तुम्हारे सिर का बोझ बनकर रहना नहीं चाहती—"

संदीप ने कहा, "मेरे सिर का बोझ बनकर नहीं रहना चाहती, यह तो अच्छी बात है। लेकिन सौम्य बाबू से अगर तुम शादी कर लेती हो तो तुम्हें मेरे सिर का

कोश बनकर रहना नहीं पड़ेगा। इसके अलावा मेरा सवाल उठता ही क्यों है ? मैं कौन हूं ? मैं चाहता हूं, तुम सुखी होओ। मौसीजी भी यही चाहती हैं। कम-से-कम मौसीजी की हालत देखकर तुम्हारे लिए सौम्य बाबू से शादी करने को राजी हो जाना उचित है—"

विशाखा ने कहा, "कौन काम करना उचित है और कौन करना उचित नहीं है, मुझे यह तुमसे सीखना नहीं है—"

यह सुनकर संदीप ज़रा गंभीर हो गया। बोला, "अगर तुममें उचित-अनुचित की समझदारी है तो भवतोषसाहा और हरदयाल के हाथ से वह सब चीज़ खाने क्यों गई ?"

"मैंने कौन-सी चीज खाई है ?"

संदीप ने कहा, "हेरोइन। जानती नहीं कि आजकल जिसके-तिसके हाथ से कोई चीज नहीं खानी चाहिए ? जानती नहीं कि आजकल कलकत्ता में लड़कियों के लिए मुसीबत ही मुसीबत है ? खासकर वैसी लड़कियों के लिए जो तुम्हारी जैसी खूबसूरत हैं !"

विशाखा क्या जवाब दे समझ नहीं सकी। संदीप तब भी कहे जा रहा था, "सोचकर देखो, तुम्हारे कारण मुझे कितनी परेशानियों का सामना करना पड़ा है। लगातार कितने दिनों तक मुझे लाल बाज़ार और कोर्ट का कितना चक्कर लगाना पड़ा है। कितने दिनों तक मुझे ऑफिस मे गैरहाज़िर रहना पड़ा है। उसके कारण मेरी माहवारी वेतन की रकम में से पैसे काट लिए गए हैं।"

उसके बाद ज़रा सुस्ताकर फिर बोला, "खैर, जो हो चुका है उसके बारे में सोचने मे कोई फायदा नहीं। मेरी जो भी हानि हुई है, होने दो, पर तुम्हें मौसीजी की सेहत का भी तो खयाल रखना है। तुम्हारे कारण ही तुम्हारी मां को यह बीमारी हुई है। उनकी बीमारी की वजह से डाक्टर और दवा के पीछे कितना खर्च हो रहा है, इस पर भी तो तुम्हें सोचना चाहिए।"

विशाखा बोली, "लेकिन जो आदमी व्याहता पत्नी का खून कर सकता है, उससे मैं कैसे शादी कर सकती हूं ? सब कुछ जानने-सुनने के बावजूद तुम मुझे एक खूनी से शादी करने की राय देते हो ?"

संदीप ने कहा, "वह पत्नी क्या सचमुच की पत्नी थी ? सौम्य बाबू ने उसकी हत्या की है तो अच्छा ही किया है। उस लड़की ने ब्लैकमेल करने के लिए सौम्य बाबू से शादी की थी। ब्लैकमेलर की हत्या करना क्या गलत काम है ?"

विशाखा बोली, "कौन गलत है और सही, यह मुझे तुमसे नहीं सीखना है।"

बातचीत के बीच ही एकाएक मां ने उस कमरे में प्रवेश किया। बोली, "मुन्ना, तू विशाखा को इतना डांट-डपट क्यों रहा है ?"

यह कहकर हाथ बढ़ाकर विशाखा को अपने आलिंगन में भर लिया। बोली, "देख नहीं रहा कि इस लड़की की तबीयत ठीक नहीं है और तू इसे खरी-खोटी सुना रहा है ? आओ बिटिया, मेरी लाड़ली बेटी ! तुम चलकर खाना खा लो। मेरा बेटा वैसा ही है ! कब किससे क्या कहना चाहिए, नहीं जानता।"

संदीप बोला, "तुम तो सिर्फ मुझी में खोट निकालती हो। मैंने उससे कौन-सी

...प उठाकर पुलिस ने उसे जेल में ठूंस दिया था। मैं न होता तो वह हमेशा-...ा के लिए जेल में ही पड़ी रहती।"

"अरे, वही बात! जेल में क्यों ठूंस दिया था? तुमने क्या किया था बेटी? ... कारण तुम्हें जेल भेजा गया था?"

विशाखा ने शर्म से मां के सीने में अपना मुंह छिपा लिया। उसने कोई जवाब ...ं दिया। उसकी तरफ से संदीप ने कहा, "वह बात बताऊं तो तुम भय से चिहुंक ...ोगी मां। आजकल खाने-पीने की हर सामग्री में लोग ज़हर मिला देते हैं..."

मां चिहुंक उठी, "ज़हर? यह क्या कह रहा है तू?"

संदीप ने कहा, "हां मां, ज़हर। तुम दुकान में चाय पियोगी तो उसमें ज़हर, पान खाओगी तो उसमें ज़हर है, चॉकलेट खाओगी तो उसमें भी ज़हर है। ज़ह... तमाम खाने-पीने की चीज़ें आजकल ज़हरीली हो गई हैं।"

मां बोली, "ज़हर? ज़हर खाने से तो आदमी मर जाता है!"

संदीप बोला, "नहीं मां, वह उस तरह की ज़हर नहीं है। यह ज़हर बहुत ही मीठी होती है। इसे खाने से नशा आ जाता है। खाने से आदमी को आराम महसूस होता है। इस मिठास से मिश्रित चीज़ों की आज देश में भरमार हो गई है। और अगर कोई ज़्यादा मात्रा में खा लेता है तो तीन-चार दिन तक आराम से सोया रहता है। उस समय आदमी को कोई होश-हवास नहीं रहता। नींद टूटने पर फिर वही ज़हर खाना चाहता है। तुम्हारी लड़की को किसी ने वही ज़हर खिला दी थी और उसके बाद ट्राम-रास्ते पर फेंककर चला गया था। बेड़ापोता के हाजरा बूढ़े की तुम्हें याद है? वही जो हाट में बैठकर लौकी-कुम्हड़ा बेचता था? उसका लड़का गोपाल हाजरा मेरे साथ पढ़ा करता था। तुम मुझे उससे मिलने को मना करती थीं। वह गोपाल अब क्या हो गया है, जानती हो?"

मां बोली, "क्या? क्या हो गया है?"

"करोड़पति हो गया है। यहां के तारक घोष के मकान को उसी ने जला दिया था। अब उसी जमीन पर तीन-मंजिली इमारत खड़ी कर ली है। यह तो तुम जानती ही हो।"

मां ने पूछा, "उसे इतना रुपया कहां से मिला? किसने उसे रुपया दिया है?"

संदीप बोला, "कौन देगा? उस ज़हर को बेचकर ही उसने इतना रुपया कमाया है। पाकिस्तान में एक किलो ज़हर की कीमत है तीस हजार रुपया, बंबई में पहुंचते ही उसकी कीमत एक लाख रुपया हो जाती है और अमरीका में उसी ज़हर की कीमत है साढ़े बारह लाख रुपया। कितना फायदा होता है, बताओ तो? गोपाल हाजरा इसी ज़हर का कारोबार कर इतना रुपया कमा रहा है। यही वजह है कि ऑफिस के टिफिन के दौरान मैं केवल फरकी ही चबाता हूं। गोपाल हाजरा कब फरकी में भी ज़हर मिला देगा, कहना मुश्किल है। उस समय फरकी खाना भी बन्द कर देना पड़ेगा।"

सहसा कमला की मां ने आकर कहा, "मां, दीदीजी कैसी-कैसी तो कर रही है, जल्दी आओ—"

"क्या कर रही है?"

कमला की मां बोली, "दीदीजी लेटी-लेटी छटपटा रही है, मुंह से फेन निकल

उसके साथ टेबल के आमने-सामने थे। लेकिन खून के उस वारदात के बाद से उससे मुलाकात ही नहीं होती।

एक दिन मुलाकात होने पर नंदिता ने पूछा था, "उस मकान का क्या हाल-चाल है?"

मुक्तिपद ने कहा था, "हालचाल बहुत खराब है। मा को तो किसी तरह बचा लिया मगर सौम्य को शायद नहीं बचा पाऊंगा—"

नंदिता ने कहा था, "उसे फांसी होना ही उचित है।"

मुक्तिपद ने कहा था, "तुम पराई हो, इसलिए ऐसा कह रही हो। लेकिन मा जब तक जिन्दा रहेंगी, मुझे तब तक उन्हें जिन्दा रखने की कोशिश करनी है। मैं सारा कुछ जानने-सुनने के बाद खामोश नहीं रह सकता।"

नंदिता ने कहा था, "कोशिश करने से भी कुछ नहीं होगा, नाहक पैसा बर्बाद होगा। मैं होती तो चुपचाप हाथ पर हाथ धरे बैठी रहती। तुम्हारा अपना हेल्थ बड़ा है या तुम्हारे भतीजे की जिन्दगी?"

मुक्तिपद ने कहा था, "तुम क्या कहना चाहती हो कि मैं यह नहीं जानता? सब कुछ जानता हूं। लेकिन एक बार मेरी मा के बारे में भी तो सोचो। उनकी इस बुढ़ापे की हालत पर एक बार गौर करो। एक दिन हम भी बूढ़े हो जाएंगे, तब? क्या हालत होगी?"

नंदिता ने कहा था, "तुम बूढ़े हो सकते हो लेकिन मैं बूढ़ी नहीं होऊंगी—"

"तुम बूढ़ी नहीं होओगी? यह क्या कह रही हो तुम?"

नंदिता ने कहा था, "मैं उतने दिनों तक जिन्दा ही नहीं रहूंगी। बूढ़ी होने के पहले ही मर जाऊंगी।" इतना कहकर नंदिता उस दिन बाहर चली गई थी।

पीछे से मुक्तिपद ने पूछा था, "कहां जा रही हो?"

मुक्तिपद जानते थे कि नंदिता हर रोज इस समय ब्यूटी पार्लर जाती है। वहां जाकर स्लिमिंग और मैसेजिंग करके आती है। मुक्तिपद के चारों तरफ यह जो विपत्ति घिरती आ रही थी, इसकी जिम्मेदारी जैसे उसके सोच के दायरे में न आती हो। तब वह ब्यूटी पार्लर और क्लब में व्यस्त रहेगी। मुक्तिपद चाहे फटेहाल हो जाए, उसकी मा और भतीजे की चाहे बदतर हालत हो जाए, उसके लिए वह चिन्ता करने क्यों जाए! वह इस बीच अपनी आवश्यकता के मसले पर सोचेगी। नंदिता के लिए आवश्यकता ही बड़ी चीज है, प्यार का मूल्य उसके लिए शून्य के बराबर है। मुक्तिपद के जीवन के लिए यह भी एक अभिशाप है। और उनकी लड़की प्रीतिमयी? पीपी? पिकनिक?

सड़क से होकर जाने के दौरान उनकी आंखों के सामने कितने ही दृश्य तैर रहे थे। आदमी, गाड़ी, बस, ट्राम, लॉरी आदि कितना कुछ। लेकिन उन्हें लग कि यह-सब जैसे जलछवि है। वह सब उनके मन पर कोई स्थाई छाप नहीं छोड़ रहा था। उन सबों को अतिक्रम कर उनकी आंखों के सामने केवल ... सौम्य के चेहरे और फैक्टरी की शक्ल तैरती रही। जितने दिन ... तस्वीरें उतनी ही स्पष्ट से स्पष्टतर होती जा रही हैं।

अचानक एक जगह आकर गाड़ी रुक गई। मुक्तिपद ... में लौट आए। देखा, सामने जितनी दूर तक दृष्टि जा रही है

हैं। आदमी का दिगंत तक फैला हुआ जुलूस और उसके सामने लाल रंग
का। उस पर सफेद अक्षरों में जो कुछ लिखा हुआ है वह पढ़ नहीं पा रहे
पढ़ने की भी इच्छा नहीं हुई उन्हें।

कलकत्ता के निवासी इन जुलूसों के अभ्यस्त हो चुके हैं। उन्हें पता चल
है कि कलकत्ता शहर में ज़िन्दा रहने का अर्थ ही है महीने-भर के हर दिन
स के आमने-सामने होकर परेशानियों को बर्दाश्त करना।

मुक्तिपद ने घड़ी की ओर देखा और देखते ही सिहर उठे। इसी बीच साढ़े
बज चुके हैं। मिस्टर तारापद जोशी को दिन के ग्यारह बजे का वक्त दिया
या है। ग्यारह बजे उनसे मिलने की बात है। वे होटल में आकर टिके हैं।

ड्राइवर से कहा, "यहां कब तक रुके रहोगे? मुझे तो ग्रैण्ड होटल में ग्यारह
बजे जोशी साहब से मिलना है—"

विश्वनाथ ने सामने की ओर दृष्टि दौड़ाई। सामने जहां तक आंखें जा सकती
हैं, आदमियों का ही सैलाब है। सभी नारे लगा-लगाकर विक्षोभ प्रकट कर रहे
हैं। इन सब जुलूसों के उपद्रवों के कारण माथापच्ची करने से कलकत्ता के
निवासियों का काम चल नहीं सकता। कलकत्ता इतने दिनों के दरमियान जुलूस-
प्रूफ हो गया है। जुलूसों का उपद्रव यद्यपि अंग्रेज़ों के ज़माने में ही शुरू हुआ था
लेकिन जितने भी दिन गुज़रते जा रहे हैं, उसका प्रकोप उतना ही बढ़ता जा रहा
है। उसके साथ जमीन के नीचे चलनेवाली रेल का उत्पात शुरू हो गया है। जमीन
के नीचे चलनेवाली ट्रेन चालू हो, कलकत्ते में रहने वालों की भलाई हो, मुक्तिपद
यही चाहते हैं। हालांकि मुक्तिपद को इससे कोई फायदा नहीं होनेवाला है क्योंकि
वे उतने दिन तक जीवित नहीं रहेंगे।

मिस्टर जोशी ने कहा था, "बेहतर यही होगा कि आप अपनी कंपनी को
उठाकर राजस्थान ले चलें। वहां रहने से आपकी कंपनी जीवित रहेगी, साथ-साथ
आप भी। वहां की आबोहवा अच्छी है, पानी भी अच्छा है और लेबर-ट्रबल भी
नहीं है—"

मुक्तिपद ने कहा था, "और पावर? पावर शॉर्टेज?"

मिस्टर जोशी ने कहा था, "हम लोगों के यहां इस तरह की लोड-शेडिंग नहीं
है। और सबसे बड़ी बात है, हम आपको पांच साल के लिए टैक्स से छुटका
देंगे—"

बातचीत का सिलसिला शुरू में पत्राचार से हुआ था। उसके बाद जोशी
बार आकर पहले दौर की बातचीत कर गए थे। जमीन का इन्तज़ाम राजस
सरकार कर देगी। राजस्थान सरकार चाहती है कि पश्चिम बंगाल के कुछ उ
धंधे उसके प्रान्त में जाएं। इससे यहां के उद्योग धंधों के बंगाली मालिक
सुविधा होगी, साथ ही राजस्थान के बाशिन्दों को भी रोज़गार मिलेगा।
दिन राजस्थान के बाशिन्दों ने ही बंगाल में आकर उद्योग-धन्धों की शुरु
थी, अब बंगाली उद्यमी राजस्थान जाएंगे। राजस्थान में सबसे बड़ी सुविध
कि वहां श्रमिक संकट का झमेला नहीं है।

"लेकिन पानी? पानी तो उद्योग-धंधे का एक प्रमुख उपादान है।"

मिस्टर जोशी ने कहा था, "हमने इसका भी बंदोबस्त किया है।

एक बार राजस्थान चलें। हमने पानी के लिए कितना किया। प्रोजेक्ट किया है, यह अपनी आंखों से देख आइएगा।"

यह सब कई महीने पहले की बात है। उसके बाद मिस्टर जोशी दुबारा इस मसले पर बातचीत करने आए हैं। इस सन्दर्भ में बकर्स मैनेजर कांत चटर्जी, नागराजन, यशवंत भार्गव, चीफ एकाउंटेंट अर्जुन सरकार और डिप्टी वर्क्स मैनेजर से मुक्तिपद ने विचार-विमर्श किया है। सभी की राय है, पश्चिम बंगाल में उद्यम खड़े करने के लायक आबोहवा नहीं है। यदि पश्चिम बंगाल छोड़कर जाना ही है तो दक्षिण भारत जाना उचित है। क्योंकि दक्षिण भारत में पानी की कोई समस्या नहीं है। इतने दिनों से उन्हीं लोगों के साथ पत्राचार चल रहा था। अचानक इस बीच राजस्थान की बातचीत चली। होटल में जब मिस्टर जोशी के कमरे में मुक्तिपद ने कार्ड भेजा तो दोपहर के बारह बज रहे थे।

मिस्टर जोशी राजस्थान के वाणिज्य मंत्री के सचिव हैं। इसके पहले भी एक बार कलकत्ता आ चुके हैं, यहां के उद्योगपतियों को राजस्थान आने का निमन्त्रण देने के ख्याल से। बहुतों से बातचीत की है, सुयोग और सुविधा पर भी गौर करने को कहा है। अब की भी उनके आने का यही उद्देश्य है। इसी सिलसिले में एक-एक कर बहुतों को बुला भेजा है। सभी एक-एक कर आए हैं। अंत में मुक्तिपद को बुलाया भेजा गया है। उनसे मिलने के बाद चले जाएंगे।

मुक्तिपद ने उसी एक बात की चर्चा की। बोले, "मैंने अपनी कम्पनी के अफसरों से बातचीत की है, लेकिन सबकी एक ही राय है। उनका कहना है, हम लोगों का जिस किस्म का उत्पादन है उसके लिए पानी ही सबसे जरूरी चीज है। कलकत्ता में पानी प्रचुर मात्रा में है, लेकिन कलकत्ता की सबसे बड़ी खराबी है लेबर-प्रोब्लेम। आपके यहां इससे विपरीत स्थिति है। आपके यहां लेबर-ट्रबल नहीं है, लेकिन जल की आपूर्ति की कमी है। दक्षिण भारत में लेबर-ट्रबल नहीं है और पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। ऐसी हालत में दक्षिण भारत जाना ही हम बेहतर समझते हैं—"

मिस्टर जोशी बोले, "ठीक है, मैं आज ही लौट रहा हूं। कलकत्ता आया तो सोचा, आपसे एक बार मिल लूं···"

उसके बाद बोले, "और सब हालचाल ठीक है न ? उस बार मिसेज मुखर्जी से बातचीत कर बड़ी प्रसन्नता हुई थी। वे कैसी हैं ? आलराइट ?"

उस बार मिस्टर मुखर्जी और मिसेज मुखर्जी ने मिस्टर जोशी को क्लब में एक पार्टी दी थी।

बोले, "ऑलराइट, थैंक्स ! वे अब भी आपको याद करती हैं—"

मिस्टर जोशी विदा देने के दौरान बार-बार कहने लगे, "मेरा थैंक्स उन तक पहुंचा दीजिएगा, ओके, बाइ···"

मुक्तिपद ने अपनी पूरी जिन्दगी विलायती शिष्टाचार में बिता दी। मन में चाहे हजारों अशांति की आग क्यों न जलती रहे, लेकिन बाहर से किसी को इसका पता न चले, इस अन्दाज के साथ मुस्कराना है। इसी अभिनय का नाम है विलायती शिष्टाचार। मुक्तिपद हजारों मुसीबत के दौरान इसी तरह मुस्कराते आए हैं। अब की भी उसी कायदे के साथ मुस्कराए। उसके बाद कमरे से निकल नीचे उतरने

संदीप ने कहा, "गिरिधारी से सब कुछ सुना। सौम्य बाबू ने अचानक अपनी पत्नी की हत्या क्यों कर दी ?"

मल्लिक चाचा बोले, "क्या बताऊं! वह सब अब बासी खबर हो गई है। किसी दिन गृहस्वामी के जमाने मे कितना तामझाम देख चुका हूं और आज इतने दिनों के बाद यह दिन देखने को मिला। तुम भी कभी यही रहा करते थे, यहां की सारी बातों की तुम्हें जानकारी है। इसके बावजूद तुम पूछ रहे हो कि सौम्य बाबू ने अपनी पत्नी की हत्या क्यों की ?"

संदीप ने पूछा, "दादी मा का क्या हालचाल है ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "शुरू मे कई दिनों तक होश नहीं आया। अब ज़रा ठीक है। दरअसल बहुत दिनों तक जिन्दा रहना ही एक अभिशाप है। किसके भाग्य मे क्या है, कोई नही बता सकता। बहुत मजबूत कलेजा है इसीलिए सारा कुछ बरदाश्त कर रही है। अब भी मुझे बुलाकर हिसाब-किताब समझ लेती हैं। मंझले बाबू हर रोज एक बार आते है। आकर अपनी मा का हालचाल पूछ जाते हैं।"

"और उन लोगों की फैक्टरी का क्या हालचाल है ?"

"वह जिस तरह बन्द थी उसी तरह बन्द ही है। अभी कारखाने के बारे मे कोई नही सोच रहा है। सोचते है तो केवल सौम्य बाबू के बारे में। सौम्य बाबू को हाकिम ने अब तक जमानत पर रिहा नही किया है। पुलिस की हवालात में बन्द पड़े हुए हैं। पुलिस की हवालात मे बन्द रहने का मतलब क्या है, जानते हो न ? यही बात की जानकारी प्राप्त करने के लिए वहा हर तरह की सजा दी जाती है। मंझले बाबू के वकील ने उन्हे जेल की हवालात में रखने के लिए बहुत दरख्वास्तें दी हैं लेकिन हाकिम कुछ सुन नही रहा है।"

"तो आखिरकार क्या होगा ?"

मल्लिक चाचा बोले, "यही बात सोचते-सोचते तो दादी मा के लिए सोना हराम हो गया है। मझले बाबू हर रोज आकर अपनी मा को देख जाते हैं। उन्हे हर रोज रात के वक्त नीद की टिकिया खिलाकर सुलाया जाता है।"

उसके बाद एक क्षण रुककर पूछा, "तुम्हारी मा का क्या हालचाल है ?"

संदीप ने कहा, "मा मोटे तौर पर ठीक ही है।"

"तुम्हारी नौकरी ?"

"सरकारी नौकरी है इसलिए अब तक बरकरार है।"

"और विशाखा का क्या हालचाल है ?"

संदीप ने कहा, "विशाखा का कांड आपको बता नहीं सका था। उसने मुझे भारी चिन्ता में डाल दिया था। उसे और मौसीजी को जब मै बेंटापोता ले गया था तभी से उसकी शादी के लिए चक्कर काट रहा था। लेकिन विशाखा अब शादी करने को तैयार नहीं है।"

मल्लिक चाचा बोले, "क्यों, शादी करना क्यों नही चाहती ?"

संदीप बोला, "कहती है, शादी के प्रति अब उसे नफरत हो गई है। जब से सौम्य बाबू से शादी होने का रिश्ता टूट गया है तभी से सिर्फ नौकरी करने की ही बात कहती है।"

"नौकरी ?"

"हां, एक वार खुद ही नौकरी के लिए एक आवेदन-पत्र भेजा था। मुझे इसके
में कोई जानकारी न थी। आखिर में उसे न मालूम क्या खिला दिया कि
के नशे से एक दिन एकवारगी सड़क के मोड़ पर वेहोशी की हालत में पड़ी हुई
..."

इतना कहने के वाद सारी वारदात शुरू से अंत तक कह गया। सव कुछ सुनने
के वाद मल्लिकजी ने कहा, "मैं यह सव नहीं जानता था। आजकल इस तरह की
घटना हो रही है?"

संदीप ने कहा, "मैं भी नहीं जानता था कि यह सव हो रहा है। वाद में कोर्ट
जाने पर सारी वातों का पता चला। सुना है, समूचे भारत में औरतों को फंसाने
के लिए इस तरह का जाल विछाया जा रहा है। मेरे जो वकील थे, उनका नाम है
केशवचन्द्र घोष। उन्होंने वताया, जेल के अन्दर विशाखा जैसी और भी पन्द्रह-
सोलह कुमारी लड़कियां हैं। वे सभी इसी नशे की शिकार हो गई हैं..."

मल्लिक चाचा यह सुनकर कुछ देर तक स्तम्भित जैसे रह गए। उसके वाद
वोले, "तो भी तुम्हें वता रहा हूं कि और कुछ दिनों तक विशाखा की शादी रोके
रहो। इधर सौम्य वावू के साथ क्या होता है, यह देखकर जो उचित समझो,
करो। दादी मां की तीव्र इच्छा थी कि विशाखा को ही पौत्रवधू वनाकर अपने घर
लाएं। काशी के गुरुदेव ने जन्मपत्री देखकर यही वताया था—"

संदीप ने कहा, "लेकिन विशाखा की मां अव देर करना वरदाश्त नहीं कर
पा रही हैं। वे वहुत ही दवाव डाल रही हैं। डाक्टर ने मौसीजी के खून की जांच
कराने को कहा है।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "क्यों? खून जांच कराने को क्यों कहा है? कौन-सी
वीमारी है?"

"डाक्टर का कहना है, सव कुछ की जांच करा लेना अच्छा रहेगा। सो हर
तरह की जांच हो चुकी है। अव वायोपसी कराने के वारे में कह रहे हैं—"

"इसका मानी?"

संदीप ने कहा, "डाक्टर का शक है कि कैंसर है।"

"कैंसर?"

संदीप ने कहा, "व्लड लेकर एक दिन मेडिकल कॉलिज गया था। देख
ग क्या रिपोर्ट देते हैं—उस रिपोर्ट को देखने के वाद दूसरी तरह का ट्रि
किया जाएगा। अभी मैं उसी रिपोर्ट के इन्तजार में हूं..."

जव संदीप छोटा था, वह सोचता, जिस दिन उसने जन्म लिया है धरती
जन्म उसी दिन हुआ है। उसके जन्म के पहले इस धरती का कोई अस्ति
था। यह वात सिर्फ उसी के साथ नहीं थी, उसके दोस्त गोपाल हाजरा, त
की भी यही धारणा थी। वे लोग यह भी सोचते कि तव धरती का आ
आयतन छोटा था। वे अक्सर चहल-कदमी करते हुए वहुत दूर निकल ज
चलते हुए जव मैदान के परले सिरे पर पहुंच जाते तो देखते, आकाश
के छोर पर झुका हुआ है वहां कोई मकान और लोगों की आवादी नह

जंगल ही जंगल है।

सदीप कहता, "चलो, उस तरफ चलें—"

तारक शुरू से ही डरपोक था। बोलता, "नहीं, उधर बाघ है, वहां मत जाना—"

लेकिन गोपाल शुरू से ही दुस्साहसी था। कहता, "धत, बाघ-वाघ फालतू चीज है। चलो, मैं तुम लोगों के साथ चलने को तैयार हूं। तुम लोगों के लिए डरने की कोई बात नहीं है—"

गोपाल चाहे जितना भी कहे, जितना भी अभयदान करे, तारक और सदीप उसकी बात पर ध्यान नहीं देते। जो लोग खेत-खलिहान में काम करते उनसे मुलाकात होने पर सदीप पूछता, "उस तरफ क्या है? जंगल के उस पार?"

लोग-बाग उन्हें कौतूहल देखकर डराते, "उधर बाघ है मुन्ना, उधर मत जाना।"

उन लोगों की बात सुनकर तारक और सदीप के मन में और अधिक डर पैदा हो जाता। गोपाल को भी आगे जाने का साहस नहीं होता। ऐसे में तीनों घर की तरफ वापस आ जाते। उसी समय से दूर के प्रति उनमें जितनी उत्सुकता थी, उसी मात्रा में भय भी था। तारक ही दूर से ज्यादा डरता। और आश्चर्य की बात है, वही तीनों में से पहले दूर जाकर अदृश्य शामिल हो गया।

बाकी रह गए वह और गोपाल। गोपाल बीच-बीच में कहता, "तारक ने हमें हरा दिया भाई—"

जबकि गोपाल ने ही तारक को धकेल कर दूर भेज दिया। तारक के दूर जाने का कारण गोपाल हालदार ही है। उसके बाद गोपाल भी किसी दिन आंखों से ओझल हो गया। बाद में जब एक दिन उससे सदीप की सहसा मुलाकात हो गई तो गोपाल ने ही बताया कि वह कलकत्ता चला गया है। उस समय गोपाल की बातचीत से ही उसे पता चला कि कलकत्ता गए बगैर आदमी को पता नहीं चल सकता कि दुनिया कितनी बड़ी है। उस कलकत्ता के बाशिन्दे बहुत अमीर हैं। वहां के लोगों के पास बेशुमार पैसे हैं। यह भी कहा कि जिन लोगों के पास पैसा नहीं है, वे आदमी नहीं, जानवर हैं। कलकत्ता में भाग्य उड़ते रहते हैं। बस, चुनने भर की देर है। कलकत्ता जाने के बजाय कोई बड़ाबाजार में ही रह जाएगा तो वह कभी किसी दिन आदमी नहीं बन पाएगा, वह हमेशा के लिए जानवर ही रह जाएगा।

गोपाल ने ही उस दिन बताया था, "अगर तू आदमी बनना चाहता है तो कलकत्ता चला जा।"

तो कलकत्ता क्या वह आसानी से जा सका था? बहुत [illegible] मल्लिक चाचा को चिट्ठी लिखने के बाद ही कलकत्ता जा [illegible] कलकत्ता जाने पर उसने क्या देखा? देखा कि जो लोग आदमी [illegible] वहां घूमते-फिरते हैं वे न तो आदमी हैं न जानवर, बल्कि एक [illegible] जो लोग उसके बैंक में रुपया जमा करने और निकालने आते हैं [illegible] असली नाम नहीं है। अलग-अलग बैंकों में उनके अलग-अलग [illegible] का किसी एक बैंक में रमेशचन्द्र सेन नाम है तो दूसरे बैंक में [illegible]

वैनर्जी । और भी पन्द्रह-सोलह वैंकों में एक ही व्यक्ति के पन्द्रह-सोलह
कृष्ण के शत सहस्र नामों की तरह ही कलकत्ता के अमीर लोगों के शत
नाम हैं । शुरू-शुरू में संदीप को इस वात की जानकारी नहीं थी । एक दिन
ना पर नज़र पड़ते ही संदीप अवाक् हो गया था । यादव वावू से कहा था,
आदमी ने तो उस दिन रमेश चन्द्र के नाम से चेक जमा किया था यादव
! वात क्या है ?"

यादव वावू ने कहा था, "इससे क्या हुआ ? दो व्यक्तियों के चेहरे क्या एक
नहीं हो सकते ? पता तो अलग-अलग है न ?"

संदीप ने कहा, "हां, दूसरा ही है—"

यादव वावू ने कहा था, "वस, इतना ही काफी है । इससे ज़्यादा ध्यान रखने
की तुम्हें ज़रूरत नहीं ।"

इससे अधिक उस दिन वातें नहीं हुई थी और न ही इसका मौका था । लेकिन
संदीप ने गौर किया था, जिस दिन रमेशचन्द्र सेन या कालीदास वनर्जी आते,
परेश दा को वे कैंटीन ले जाते । वे सज्जन परेश दा को मांस-पराठे खिलाते । मांस
खाकर परेश दा का मिज़ाज तरोताजा हो जाता ।

उस दिन डाक्टर के पास जाकर संदीप ने उसे ब्लड-रिपोर्ट दी । एक तो यों
भी गांव का डाक्टर, उस पर मरीज़ों की तादाद वहुत ज़्यादा । हमेशा उसकी
डिसपेंसरी में भीड़ लगी रहती । उसके पास जाने पर वातचीत करने का सुयोग
पाने के लिए काफी वक्त तक इन्तज़ार करना पड़ता है ।

ब्लड-रिपोर्ट देखकर उसने वहुत देर तक सोचा । उसके वाद कहा, "अच्छा,
मैं दवा लिख देता हूं, इसे सात दिन खिलाइए । देखा जाए क्या नतीजा निकलता
है—"

इतनी कम मेहनत के लिए डाक्टर को पचीस रुपया देना पड़ा । उसके वाद है
दवा की कीमत । उसमें भी दस-पन्द्रह रुपये लग जाएंगे । दवा लेकर घर आते ही
मां ने पूछा, "डाक्टर ने क्या वताया ?"

संदीप ने कहा, "अव भी उनकी समझ में वीमारी नहीं आई है । एक और
दवा लिख दी है । वोले : देखिए, क्या नतीजा निकलता है···यह लो दवा । दिन में
तीन वार खाने कहा है—सवेरे, दोपहर और रात में सोने के पहले—"

मां ने कहा, "और नींद की दवा ?"

संदीप ने नींद की दवा दूसरे पॉकेट में रखा था । वोला, "ओह, यह लो—"

मां समझ गई कि वेटे का अंधाधुंध पैसा खर्च हो रहा है । लेकिन कोई उपा
भी नहीं है । उसके वाद है इतने सारे लोगों को खाने-पहनने की समस्या । सभी
तमाम मांगों की पूर्त्ति करनी होगी तभी गृहस्थी में अमन चैन का माहौल रहे
और मांगों की पूर्त्ति करने के लिए सिर्फ एक ही आदमी है । उसके अके
उपार्जन से इतने सारे लोगों की गृहस्थी चलेगी ।

मां ने ज़वान से कुछ नहीं कहा । जीवन में घर-संसार चलाने की पीड़
परेशानियों को महसूस करने के पहले ही संदीप के पिता दुनिया से चल ब
उस समय जायदाद के नाम पर सिर्फ यही मकान था । इसके अलावा औ

नहीं था। वे चटर्जी-भवन में बही-खाता लिखने का काम करते थे। उससे तीस या चालीस रुपये की जो रकम मिलती उससे गृहस्थी का खर्च किसी तरह चल जाता था। उस समय चीज़ों की कीमत कम थी। उस तीस-चालीस रुपये की रकम से ही तमाम अभाव दूर हो जाता था। लेकिन अचानक मौत हो जाने से सारा सिलसिला खत्म हो गया। उस समय चटर्जी बाबुओं ने ही घर के रसोई-पानी के काम का भार संदीप की मां पर सौंप दिया था। उद्देश्य था उनके परिवार की थोड़ी-बहुत सहायता करना।

लाहिड़ी खानदान के इतिहास में किसी औरत ने जो काम कभी नहीं किया था, संदीप की मां को वही काम अपने बेटे की खातिर करना पड़ा। संदीप तब बहुत ही छोटा था। चटर्जी बाबुओं ने ही उसका स्कूल में दाखिला करा दिया था। उसकी स्थिति और संकट के बारे में सोचकर उसे फीस देने की जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया गया था।

थोड़ी उम्र बढ़ जाने के बाद संदीप को अपने घर-संसार की स्थिति का अहसास हुआ था। उसने महसूस किया था कि वे लोग गरीब हैं। वे लोग दूसरे की दया पर निर्भर रहकर जीवन जी रहे हैं।

मां भी बेटे से कहती, "हम लोग गरीब हैं बेटे! मन लगाकर लिखो-पढ़ो। जरा सोच-समझकर चलो। एक दिन तुम्हीं पर इस गृहस्थी का भार पड़ेगा। उस वक्त तुम्हारी अपनी गृहस्थी होगी। उस समय दूसरे के घर में मुझे खटना नहीं पड़े, इसका ध्यान रखना।"

वही संदीप आज बड़ा हो गया है। अब उसकी मां को दूसरे के घर में महरी का काम कर गृहस्थी नहीं चलानी पड़ती है। अब संदीप मल्लिक बाबा की दया के कारण बी० ए० पास कर गया है। यही नहीं, उसे एक अच्छी-सी नौकरी भी मिल गई है।

लेकिन इतना कुछ होने के बावजूद मां अब भी सुख की सूरत नहीं देख सकी है। मां अपने बेटे की शादी कराकर पुत्रवधू के हाथ में गृहस्थी का भार सौंप देगी और आराम करेगी, इसका उपाय नहीं है। ममता की मां भले ही है पर गृहस्थी के बहुत सारे काम अपने हाथ से ही करना पड़ता है। जब पिताजी जीवित थे उस समय मां अपने हाथ से एक भी पैसे का स्पर्श नहीं करती और अब जबकि बेटा नौकरी कर वेतन पा रहा है, मां ने एक पैसे को भी अपने हाथ से नहीं छुआ है। संदीप को जो भी वेतन मिलता, वह सारा पैसा अपने बैंक के सेविंग्स एकाउन्ट में जमा कर देता। ऐसा ही हमेशा से होता आ रहा था। हमेशा का मतलब है जब विशाखा और उसकी मां बेहाला नहीं आई थीं।

और आश्चर्य की बात है, जब बेटे को नौकरी मिली तो मां थोड़ा आराम करेगी, यह भी नहीं हो सका। उसकी मां उन दोनों को अपने घर में रखकर जी-जान से उनकी सेवा कर रही है। ऐसी हालत में भी संदीप से एक पैसे की भी मांग नहीं करती। मौसीजी के इलाज में बेटे के पसीने की कमाई के पैसे जो पानी की तरह बह रहे हैं, इसके लिए कभी कोई शिकवा-शिकायत नहीं की है। जबकि वे लोग उसके कौन होते हैं? कोई नहीं। सच कहा जाए तो कोई नहीं है। बल्कि अपने बेटे से कहती है, "मौसीजी के खाने के लिए फल वगैरह कहीं से लाए?"

जैसे मौसीजी मां की कितने करीब की रिश्तेदार हो।

एक दिन काशीनाथ बाबू की गृहिणी आई थीं। मां उन्हें देखकर चकित हो गई थी। बोली थी, "बहूरानी तुम आई हो? मेरे लिए कितने सौभाग्य की बात है!"

काशी बाबू की पत्नी ने कहा था, "तुम लोग कैसी हो, यही देखने चली आई बहन—"

"आओ बहूरानी, बैठो। अब भी तुम लोगों ने हमें याद रखा है, यही क्या हमारे लिए कोई कम बात है!"

उसी समय विशाखा वहां आ गई। उसे देखकर पूछा, "यह कौन है?"

मां बोली, "यह मेरी बेटी के समान ही है। इसे अपने साथ लेकर ही तो तुम्हारे घर गई थी बहूरानी। तुम्हें याद नहीं है?"

"ओह, हां-हां, याद आ गई। याद आ गई...तुम तो लिखी-पढ़ी लड़की हो। तुम्हारी मां भी तो साथ में थी? तुम्हारी मां कहां है?"

मां बोली, "उसकी मां बगल के कमरे में है। उसकी तबीयत बहुत खराब है।"

"बहुत बीमार है? क्या हुआ है?"

मां बोली, "मालूम नहीं बहूरानी। यहां आकर इतनी तकलीफ फैल रही है। किसी भी हालत में बीमारी खत्म होने का नाम नहीं ले रही है। मुन्ना ऑफिस से निकलते ही डाक्टर के यहां चक्कर काटता रहता है। मुन्ना का ढेरों पैसा खर्च हो रहा है। क्या करूं, समझ में नहीं आता—"

चटर्जी की गृहिणी बोली, "मां बीमार है तो बेटी क्या हमेशा कुमारी ही रहेगी? तुम इसकी कहीं शादी करा दो बहन!"

मां बोली, "मैं शादी करानेवाली कौन होती हूं? शादी कराने के जो मालिक हैं वे ऊपर से सब कुछ देख-सुन रहे हैं। इसीलिए तो मैं रात-दिन उनका स्मरण करती हूं। मैं कहती हूं: प्रभो, तुम इस लड़की का बेड़ा पार लगा दो। मुन्ना भी कितनी ही कोशिशें कर रहा है, लेकिन भाग्य के विधान को कौन टाल सकता है बहूरानी!"

चटर्जी-गृहिणी बोली, "सो कोई दूसरा पात्र भले न मिले मगर तुम्हारा मुन्ना तो है। इन लोगों के घर में तुम लोगों के यहां शादी का रिश्ता हो सकता है। तुम्हारे मुन्ना को यह लड़की क्या पसन्द नहीं आई? अलबत्ता लेन-देन के बारे में मैं कुछ कह नहीं सकती। तुम्हारा मुन्ना अभी शादी करना चाहे तो कितनी ही लड़कियों के बाप नोटों की गड्डियां और जेवरात लेकर दौड़े-दौड़े आएंगे। हजार रुपया माहवारी वेतन पानेवाला तुम्हारा बेटा हज़ारों में एक है। उसके लिए देस में क्या लड़कियों का अकाल पड़ गया है, तुम्हीं बताओ—"

अचानक उन्होंने गौर किया कि विशाखा उनके अनजाने ही कब कमरे से निकलकर बाहर चली गई है।

चटर्जी-गृहिणी ने अपनी आवाज़ को धीमा बनाकर कहा, "मेरी बात पर वह लड़की गुस्सा गई क्या?"

मां बोली, "नहीं, हो सकता है शरमा गई हो। अपनी शादी की बात सुनकर

शरमाना स्वाभाविक है। इसके अलावा शिक्षित लड़की है, उम्र हो चुकी है—"

चटर्जी-गृहिणी बोली, "अपने मुन्ना से शादी करने में तुम्हें किस बात की आपत्ति है?"

मां बोली, "मुझे आपत्ति क्यों होगी बहूरानी, वही शादी करने को राजी नहीं है—"

चटर्जी-गृहिणी ने आश्चर्य में आकर अपना गाल कुहनी पर टिका दिया, "बाप रे, यह कैसी बात है! लड़की की उम्र शादी की हो चुकी है, फिर भी शादी करने को तैयार नहीं है? शादी न करेगी तो हमेशा कुमारी ही रहेगी?"

मां बोली, "यह बात नहीं है बहूरानी। उसका कहना है कि वह नौकरी करेगी···"

"नौकरी करेगी? यह कैसी बात है!"

मां बोली, "मुन्ना ने बताया है कि आजकल कलकत्ता में लड़कियां लड़कों के साथ एक ही मेज पर बैठकर नौकरी करती हैं। मुन्ना के बैंक में उसके साथ लड़कियां भी नौकरी करती हैं।"

चटर्जी-गृहिणी भय से चिहुंक उठी। बोली, "तो फिर अब देर मत करो बहन। चाहे जैसे हो दोनों की शादी करा दो। इससे तुम्हें भी राहत मिलेगी और तुम्हारे बेटे को भी। खबरदार! खबरदार! लड़की को नौकरी करने मत देना, नहीं तो जान चली जाएगी।"

मां बोली, "लेकिन वह किसी की बात मानने को तैयार नहीं है बहूरानी। हठ ठान लिया है कि वह नौकरी करेगी ही।"

चटर्जी-गृहिणी ने उठकर जाने के दौरान कहा, "तुम उसे किसी भी हालत में नौकरी करने मत देना बहन—कभी नहीं।"

मां कुछ बोले कि एकाएक सदीप ने कमरे के अंदर प्रवेश किया। चेहरा उतरा-उतरा जैसा, पूरा शरीर पसीने से तर-बतर। सामने काशीनाथ बाबू की पत्नी को देखकर पैर छूकर उन्हें प्रणाम किया। बोला, "अच्छी तरह हैं न?"

"हां बेटा, तुम कैसे हो?"

"ठीक ही हूं। काशीनाथ बाबू सकुशल हैं न? बहुत दिनों से आप लोगों के घर आ नहीं पाया हूं—"

"हां, किसी दिन आओ बेटा। चलती हूं—"

यह कहकर चटर्जी-गृहिणी अपने घर की तरफ चली गई। मां बोली, "तू अचानक इतनी जल्दी ऑफिस से क्यों चला आया? ऑफिस में छुट्टी हो गई है?"

"नहीं मां, आज ऑफिस में क्लीयरिंग के बाद छुट्टी लेकर सीधे कोर्ट चला गया था—"

मां को आश्चर्य हुआ। बोली, "कोर्ट? कोर्ट क्या करने गए थे? कोई मुकदमा था क्या?"

सदीप ने कहा, "विडन स्ट्रीट के मुखर्जी-परिवार के सौम्य बाबू का मुकदमा था—"

विशाखा तभी उस कमरे से इस कमरे के अन्दर आई।

मां बोली, "सौम्य बाबू का मुकदमा? हाकिम ने आज फैसला सुना दिया क्या?"

संदीप ने कहा, "हां, वह फैसला सुनकर मेरा मन बड़ा ही उदास हो गया। अभी उस मकान में क्या हो रहा होगा, कौन जाने ! मैं तब से सिर्फ दादी मां के बारे में ही सोच रहा हूं। दादी मां का क्या होगा ? दादी मां की सारी समस्याएं उस पोते के कारण ही थीं। जिन्दगी-भर उसी पोते की चिन्ता में डूबी रहीं। अब क्या होगा ? अब शायद दादी मां जीवित नहीं रहेंगी। यही नहीं, उधर उन लोगों के कारखाने में हड़ताल भी चल रही है—"

मां बोली, "हड़ताल तो बहुत दिनों से चल रही थी। अभी तक खत्म नहीं हुई ?"

संदीप ने कहा, "नहीं मां।"

"फिर उन लोगों का गुजर-बसर कैसे हो रहा है ?"

संदीप ने कहा, "जो रकम जमा करके रखी है, उसीसे खर्च चल रहा है। हम सोचते हैं, धनी-मानी व्यक्ति सुखी होते हैं। उनके मन में अपार शांति रहती है और जितनी अशांति है वह हम जैसे गरीब लोगों को ही। उन लोगों के घर नहीं जाता तो समझ नहीं पाता कि धन-दौलत होना कितना दुखदायी है। पैसा न होने की पीड़ा से पैसा होना ही ज्यादा पीड़ादायक है मां।"

मां बोली, "इस तरह वे कितने दिनों तक गुजर-बसर करेंगे ?"

संदीप ने कहा, "पता नहीं, कब तक गुजर-बसर करेंगे। सुराही का पानी बार-बार ढालकर पीने से क्या किसी का हमेशा के लिए काम चल सकता है ? किसी-न-किसी दिन वह पानी खत्म हो ही जाएगा।"

मां बोली, "यह सब सोच-सोचकर तू कहीं अपनी सेहत बिगाड़ मत लेना। यह जो तूने अभी चटर्जी-गृहिणी को देखा, इन लोगों के पास भी तो बेशुमार पैसा है। लेकिन उन्हें कितनी परेशानियां हैं, यह मैं जानती हूं। रुपये की इन लोगों के पास कोई कमी नहीं है। बहरहाल, तू खाना खा ले, तेरा खाना पक चुका है—"

संदीप ने कहा, "मुझे अभी भूख नहीं है मां—"

मां बोली, "अभी पराए के बारे में फिक्र करके तू क्या करेगा ? उन लोगों के बारे में सोचनेवाले बहुतेरे व्यक्ति हैं—"

संदीप बोला, "नहीं मां, जब तक उनका कारखाना चालू हालत में था तब तक उनके बहुत सारे अंतरंग मित्र थे। उन लोगों के बारे में सोचनेवाले बहुत सारे आदमी थे। लेकिन जब से उनका बुरा वक्त आया है, उस दिन से उनके लिए अपने के नाम पर कोई नहीं है। मल्लिक चाचा से मैंने सुना है—"

उसके बाद एक क्षण खामोश रहने के बाद फिर बोला, "मल्लिक चाचा से सुनने को मिला कि मंझले बाबू अपना कारखाना यहां से हटाकर दक्षिण भारत ले जा रहे हैं।"

"क्यों ?"

"यहां हर रोज हड़ताल होती रहेगी तो क्या करें ! वहां कारखाना ले जाने से उस इलाके के लोग मंझले बाबू को काफी सुयोग और सुविधा देंगे। मंझले बाबू अगर कलकत्ता छोड़कर चले जाते हैं तो सौम्य बाबू का मुकदमा कौन लड़ेगा ?"

मां बोली, "अरे, वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं, उनके बारे में सोचनेवाले बहुतेरे लोग हैं। लेकिन तेरे बारे में कौन सोचेगा पहले इस बात पर गौर कर। तेरी

कमाई पर हम इतने सारे लोग गुज़र-बसर करते हैं, यह भूलना नहीं। पहले अपनी सेहत का ख्याल कर। मैं खाना पका देती हूं, पहले तू खाना खा ले—"

"नहीं मां, आज मैं कुछ नहीं खाऊंगा।"

तो भी मां खाना पकाने चली गई। विशाखा तब भी खड़ी ही थी। बोली, "तुम खाना क्यों नहीं खाओगे? मुझ पर गुस्सा है?"

संदीप ने कहा, "बताया न, कि मेरा मन ठीक नहीं है। कोर्ट जाने पर आज सिर में दर्द हो गया है। और तुम पर गुस्साऊंगा ही क्यों? तुमने कौन-सा गुनाह किया है?"

"इसलिए कि मैं सौम्यपद से शादी करने को राजी नहीं हुई।"

संदीप ने कहा, "अब मैं तुमसे यह अनुरोध नहीं करूंगा।"

"क्यों? अचानक तुम्हारे विचार में बदलाव क्यों आ गया?"

संदीप ने कहा, "क्योंकि अब यह सवाल खड़ा ही नहीं होता।"

"क्यों? यह सवाल अब खड़ा क्यों नहीं होता? ऐसा क्या घटित हुआ कि यह सवाल अब खड़ा नहीं होता?"

संदीप ने कहा, "आज बैंकशाल कोर्ट में जज ने सौम्य बाबू को फांसी की सजा दी है।"

दुनिया में तीन किस्म के आदमी हैं।

जो लोग प्रकृति का अनुसरण करते हुए चलते हैं, इस धरती पर एक दिन जन्म लेते हैं, उसके बाद एक दिन बड़े होते हैं, फिर किसी दिन शादी या व्यापार करते हैं, उसके बाद एक दिन बाल-बच्चे होते हैं, एक फ्लैट या मकान बनवाते हैं, उसके बाद बूढ़े होकर एक दिन मर जाते हैं। चलताऊ भाषा में उन्हें कोल्हू का बैल कहा जाता है।

संदीप सोचता, वह भी एक कोल्हू का बैल है। खुद को कोल्हू के बैल के तौर पर रेखांकित करने से उसे शर्म का अहसास होता, लेकिन उससे ऊपर उठना उसकी सामर्थ्य के परे की बात थी। इस वजह से मन-ही-मन वह दुख का भी अनुभव करता। हालांकि दुनिया के सौ में से सौ कोल्हू के बैल ही होते हैं। न इससे अधिक होना कुछ नहीं चाहते, न जानने और न होना ही चाहते हैं।

इस प्रकृति के अनुसरण करने के दौरान विकल होने पर कोई-कोई विकृतियों का भी अनुसरण करने लगता है। उनमें से कोई पियक्कड़ बन जाता है, कोई वेश्या बन जाती है और कोई गुण्डा-बदमाश बन जाता है। साथ ही ऐसे लोगों में से कोई-कोई देश का तानाशाह, देशद्रोही या समाज विरोधी बन जाता है। ऐसी हालत में या तो ऐसे लोग अपने दल की गोली से शिकार होते हैं या फिर राष्ट्र उसे फांसी के तख्ते पर लटका देता है।

इसके बाद है संस्कृति। जो लोग संस्कृति का अनुसरण करते हैं वे नई दुनिया, नए समाज, नई सभ्यता, नए आदर्श, नए मनुष्य, नए साहित्य, नए विज्ञान आदि तमाम नई वस्तुओं का निर्माण करते हैं। ऐसे ही लोगों में से हैं बुद्धदेव, रामकृष्ण देव, रवीन्द्रनाथ, महात्मा गांधी वगैरह-वगैरह।

संदीप को यह सब मालूम था। बचपन से ही उसे इस बात की जानकारी थी। वह केवल यही सोचता कि क्यों वह प्रकृति का अनुसरण कर कोल्हू का बैल बने? अपने इर्द-गिर्द वह जिसे भी देखता है वह कोल्हू का बैल है। सैक्सबी मुखर्जी के मुक्तिपद बाबू से शुरू कर तपेश गांगुली, मल्लिक चाचा, काशीनाथ बाबू और तारक घोष ही नहीं, बल्कि उसके बैंक के मैनेजर करमचंद मालव्यजी, परेश दा, सुशील सरकार, मन्त्री श्रीपति मिश्र, गोपाल हाजरा—सब के सब कोल्हू के बैल के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं। उन्हें रुपया मिलना चाहिए; बस वे खुश रहेंगे। सिर्फ खाना मिलना चाहिए, दूसरे की आंख में धूल झोंककर खुद जिन्दा रहने के सिवा वे और कुछ नहीं चाहते। उनके पहले भी करोड़ों कोल्हू के बैल पैदा हो चुके हैं, भविष्य में भी करोड़ों ऐसे लोग पैदा होंगे। एक निर्धारित समय आने पर वे मर जाएंगे, यह जानने के बावजूद वे अपने स्वभाव में कोई तब्दीली नहीं लाएंगे। वे धरती का बोझ बढ़ाने के अतिरिक्त दूसरा कोई काम नहीं करेंगे और न करने की कोशिश ही करेंगे।

उस दिन बैंक के मैनेजर करमचंद जी ने उसे बुला भेजा। उस वक्त दिन के तीन बज चुके थे। काम का दबाव भी कम हो गया था।

संदीप ने जैसे ही उनके कमरे के अन्दर प्रवेश किया वे बोले, "बैठिए, आपने फिर छुट्टी का आवेदनपत्र क्यों दिया है? इतनी छुट्टी की आपको क्या ज़रूरत पड़ती है?"

संदीप इसका क्या उत्तर दे!

इसके बाद करमचंदजी फिर बोले, "आपने तो अब तक शादी नहीं की है?"

संदीप ने कहा, "नहीं, शादी नहीं की है। शादी करने लायक मेरी आर्थिक स्थिति नहीं है—"

करमचंदजी बोले, "आप यह क्या कर रहे हैं! आपको अपना मकान है, एकमात्र विधवा मां के सिवा आपका कोई अपना आदमी नहीं है मुझे इसकी जानकारी है। तो फिर आपके वेतन के पैसे से आपका खर्च पूरा क्यों नहीं होता? आपको तो वेतन के तौर पर काफी रुपये मिलते हैं। आप इतना कर्ज़ क्यों लेते हैं?"

संदीप कुछ कहने जा रहा था, लेकिन उसके पहले ही करमचंदजी बोले, "इतनी बात पूछ रहा हूं, इसके लिए अन्यथा न सोचें। मैं सबको देख चुका हूं। सब लोग काम कैसे करते हैं, इसकी मुझे जानकारी है। लेकिन एकमात्र आप ही इसके एक्सेप्शन यानी अपवाद हैं। लेकिन आप इतना नागा क्यों करते हैं? इससे आपका सर्विस-रेकार्ड खराब हो रहा है। और यही कहने के लिए मैंने आपको बुलाया है—"

संदीप कुछ देर तक सिर झुकाए रहा।

करमचंदजी बोले, "आप चुप क्यों हैं?"

संदीप ने अब अपना चेहरा उठाया।

बोला, "आपने ऐसा सवाल किया है जिसका जवाब एक ही वाक्य में नहीं दिया जा सकता।"

"इसका मतलब?"

संदीप ने कहा, "इसे कहने में बहुत वक्त लगेगा। आप उतना वक्त बर्बाद कर सकिएगा ?"

करमचंदजी ने कहा, "मैं आपके स्वार्थ की ही बात कह रहा हूं, आपके भले के लिए ही कह रहा हूं। इस मामले में मेरा कोई स्वार्थ जुड़ा हुआ नहीं है—"

संदीप पुनः खामोश हो गया।

अचानक करमचंदजी बोले, "आप रो रहे हैं क्या ? आप रो क्यों रो रहे हैं ? मैंने तो ऐसी कोई बात नहीं कही कि आप रो दें।

संदीप ने फौरन पॉकेट से रूमाल निकाल आंखें पोंछ ली।

करमचंदजी ने कहा, "आप बेहद सेन्टिमेंटल जान पड़ते हैं।"

संदीप कुछ बोले कि इसके पहले ही करमचंदजी कहने लगे, "सेंटिमेंटल होना बुरा है, मैं यह नहीं कहता। हमारी यह दुनिया सेंटिमेंट के कारण ही चल रही है। लेकिन जिन्दगी इतनी सरल या आसान नहीं है। यहां कोई भी आपके सेंटिमेंट की कीमत नहीं चुकाएगा। आपको अपना प्राप्य जबरन छीनकर लेना होगा। यहां जो अपना सिर झुकाए रहेगा, सभी मिलकर उसके सिर को जबरन नीचे ही झुकाए रखेंगे। आप अपना सिर ऊंचा करें, हां, ऊंचा करें—"

संदीप ने अपना सिर उठाकर फिर से झुका लिया।

बोला, "आप मुझे इतना प्यार करते हैं, इसका पता मुझे इसके पहले नहीं था।"

करमचंद बोले, "याद रखिएगा, दुनिया बड़ी ही कठिन जगह है। खास तौर से कलकत्ता या पश्चिम बंगाल। ये बंगाली एक ओर जहां बेहद प्यार कर सकते हैं वहीं दूसरी ओर सख्त चोट भी पहुंचा सकते हैं। यहां जब अंग्रेजों का जमाना था उस समय बंगालियों ने उन्हें जितनी चोट पहुंचाई थी, भारत का कोई दूसरा प्रांत इतनी चोट नहीं पहुंचा सका ? दूसरी ओर बंगालियों ने अंग्रेजों के जितने तलवे सहलाए हैं, उतने दूसरे प्रांत के लोगों ने नहीं सहलाए हैं ?"

संदीप इस बात का उत्तर न देकर सिर झुकाए रहा।

करमचंदजी बोले, "बहरहाल, आपकी गृहस्थी इतनी छोटी रहने के बावजूद आपको प्रोविडेण्ट फंड से इतना कर्ज क्यों लेना पड़ता है या छुट्टी ही क्यों लेनी पड़ती है ?"

संदीप ने कहा, "जब मैं छोटा था तो सोचता, कोई नौकरी मिल जाएगी तो मेरा सारा दुख दूर हो जाएगा, लेकिन नौकरी पाने के बाद महसूस किया कि अपने दुख को बड़ा बनाकर देखना गलती है। देखा, ऐसे बहुत सारे लोग हैं जिनका दुख मेरे दुख से हजारों गुना बड़ा है। तब से जी-जान लगाकर मुझे दूसरे का दुख दूर करने के लिए इतना रुपया खर्च करना पड़ रहा है, इतनी छुट्टियां लेनी पड़ रही हैं—और इसकी वजह से मेरा सर्विस रेकार्ड खराब हो रहा है—"

करमचंदजी को कुछ भी समझ में नहीं आया। पूछा, "मतलब ? वे लोग आपके कोई नहीं हैं ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, वे लोग मेरे कोई अपने नहीं हैं।"

"वे लोग आपके कोई नहीं हैं तो फिर आप उनके लिए इतनी हानि क्यों बरदाश्त कर रहे हैं ?"

संदीप वोला, "यह वात मैं किसी को समझा नहीं सकता। कोशिश करूंगा तो भी समझा नहीं सकूंगा।"

करमचंदजी वोले, "वेरी स्ट्रेंज ! आप मुझसे कह सकते हैं, मैं समझने की कोशिश करूंगा..."

संदीप एकवारगी शुरू से ही अपने जीवन की तमाम घटनाओं को ब्यौरेवार कहने लगा। किस तरह वह पितृविहीन होकर एक दिन कलकत्ता आया था। आकर एक धनी-मानी व्यक्ति के यहां ठहरा था। वहां उसे कौन सा काम करना पड़ता और उस काम के लिए उसे कितना मासिक वेतन मिलता था। उसके वाद किस तरह उस परिवार का पोता विलायत जाकर एक मेम को व्याह कर ले आया, उसके परिणामस्वरूप वह विशाखा को कैसे अपने घर ले आया, उसके वाद नौकरी के लिए इंटरव्यू देने के लिए जाने पर किस तरह विशाखा मुसीवत में फंस गई... सारी वातें वता गया।

करमचंदजी ने सारा कुछ ध्यान से सुना। पूछा, "इसके वाद क्या कीजिएगा ?"

संदीप ने कहा, "डाक्टरों ने कहा है, मौसीजी की वायोपसी करानी होगी। तभी समझ में आएगा कि वीमारी क्या है—मैलिगनैन्ट या ऑर्डनरी ट्यूमर—"

करमचंदजी वोले, "यह भी तो वहुत खर्च का मामला है।"

संदीप ने कहा, "मैं भी यही सोच रहा हूं। मालूम नहीं अन्ततः क्या होगा। और आखिर में यदि ऑपरेशन कराना ही पड़े तो कहां कराऊंगा। आजकल के डाक्टरों पर भी भरोसा नहीं किया जा सकता। उनमें भी अव वदलाव आ गया है। इस पर सौम्य वावू पर वैंकशाल कोर्ट में खून का मुकदमा चल रहा है। अगर सौम्यपद वावू को फांसी की सजा हो जाती है तो ऐसी हालत में दादी मां क्या जिन्दा रहेंगी ? उनके लिए भी मुझे दुख होता है।"

करमचंदजी ने कहा, "आप उन लोगों के वारे में चिन्ता क्यों करते हैं ? उनसे तो अव आपका कोई संपर्क नहीं है।"

संदीप ने कहा, "अभी नहीं है लेकिन पहले तो था। एक दिन मुसीवत के समय उन्होंने मुझे माथा टिकाने के लिए जगह दी थी। उसे क्या भुलाया जा सकता है या भूलना उचित है ?"

करमचंदजी ने कहा, "आपकी तकदीर में वहुत दुख है मिस्टर लाहिड़ी। इतने सारे लोगों के वारे में सोचते रहिएगा तो आप जीवन में कभी सुखी नहीं हो पाइएगा। लाखों रुपया वेतन मिलने पर भी आपका दुख कभी दूर नहीं होगा।"

संदीप को आज भी करमचंदजी की वे वातें याद हैं। वे अगर उसे इस तरह प्यार न करते होते तो उस दिन वह सव वात नहीं कहते। लेकिन तव उनके पास ज्यादा वातें करने का वक्त भी नहीं था। संदीप छुट्टी लेकर फौरन वैंकशाल कोर्ट चला गया था। लेकिन वहां पहुंचने में उसे वहुत देर हो गई थी।

उस समय कोर्ट से तमाम लोग वाहर निकल रहे थे। एक-एक कर काला कोट पहने एडवोकेट दिन का काम खत्म कर घर लौट रहे थे। उनमें से किसी को वह पहचानता नहीं है। हालांकि संदीप को अपने परवर्त्ती जीवन में एक दिन वकील वनने की ही अभिलाषा थी। लेकिन काशी वावू की वात पर उसने उस रास्ते पर

कदम नहीं रखा था।

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "जानते हो बेटा, तुम्हारी ही तरह मुझे भी अभिलाषा थी कि बड़ा होने पर मैं एक दिन वकील बनूंगा। मैं बना भी वही। लेकिन एडवोकेट होने के बाद अब मैं महसूस करता हूं कि वहां जाने के हजारों दरवाज़े खुले हुए हैं, पर बाहर निकलने का एक भी रास्ता नहीं है—

संदीप ने कहा था, "क्यों ? आप ऐसा क्यों कह रहे हैं ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "देखो बेटा, मैं जब कोर्ट में दाखिल हुआ था, उस समय हाईकोर्ट में मात्र बारह जज थे लेकिन अब उनचालीस जज होने के बावजूद वे काम खत्म नहीं कर पा रहे हैं—"

"क्यों ?"

[illegible]

है। ह [illegible]

नहीं ह [illegible]

निकल पाता है—"

यह सब बात काशीनाथ बाबू से बहुत पहले सुनी थी। उसके बाद कितने ही दिन बीत गए। अब वकील-एडवोकेटों की संख्या में भी वृद्धि हो गई है। मुकदमे की संख्या भी बढ़ गई है और इस वजह से सच और झूठ के अर्थ भी बदल गए हैं—फिर भी देश यह सब लेकर ही आगे बढ़ रहा है। देश तो चल ही रहा है इतिहास भी चल रहा है। चल तो जरूर रहा है पर आगे की ओर चल रहा है या पीछे की ओर, यह कौन बताएगा !

संदीप जल्दी-जल्दी आगे बढ़ा तो देखा, मझले बाबू अपनी गाड़ी में बैठने जा रहे थे और मल्लिक चाचा कुछ बातें करते हुए उनके पीछे-पीछे आ रहे थे। मंझले बाबू की गाड़ी वहां से जाते ही संदीप ने पीछे से पुकारा, "चाचाजी—"

संदीप पर नजर पड़ते ही मल्लिक चाचा बोले, "तुम आए हो ? थोड़ी देर पहले आए होते तो सौम्य बाबू को देख पाते। सौम्य बाबू बहुत ही दुबले हो गए हैं। इन कई दिनों के दरमियान चेहरा बिलकुल सूख गया है। देखकर बहुत तक-लीफ हुई।"

संदीप ने पूछा, "कुछ बातचीत हुई ?"

मल्लिक चाचा बोले, "बातचीत कैसे होगी ! कठघरे में पुलिस के पहरे में खड़े थे। उन्हें देखकर दादी मां बेहद रो रही थीं। यह देखकर मझले बाबू ने उन्हें तुरन्त घर भेज दिया। पुलिस की हिरासत में रहना कितना कष्टदायक होता है, इसके बारे में सुन चुका था। वहां मुजरिम से सच्चाई उगलवाने के लिए कितना जुल्म किया जाता है, यह तो सभी जानते हैं। यह देखकर तो मुझे ही रुलाई आ रही थी और दादी मां !"

संदीप ने कहा, "दादी मां अपनी सेहत खराब रहने के बावजूद कोर्ट क्यों आई थीं ? पोते को देखने के खयाल से ही आई होंगी ?"

"नहीं-नहीं, गवाह बनकर आई थीं। उन्हें तो गवाह बनना ही पड़ेगा।"

संदीप ने कहा, "दादी मां ने क्या कहा ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "बोलेंगी ही क्या ! बोलते-बोलते इस तरह रोने लगीं

...उन्हें ...ज्यादा पूछताछ नहीं की गई। मंझले वावू जज की अनुमति लेकर ...वा आए थे—"

...उसके वाद संदीप ने और जो कुछ सुना वह वड़ा ही दुखद था। घर के बहुतेरे ...नौकरों ने कोर्ट में खड़े होकर वताया है कि मुन्ना वावू को उन्होंने शराव के ...में होश-हवास गंवाते देखा है। विन्दु से वकील ने पूछा था, "तुमने क्या इस ...रिम को शराव पीकर अपनी पत्नी से झगड़ते देखा है?"

विन्दु तव भय से थर-थर कांप रही थी। क्या से क्या वोल वैठे, यह तय नहीं ...र पा रही थी। दुवारा प्रश्न उछाला गया, "जवाव क्यों नहीं दे रही हो? वोलो, ...त मुजरिम को कभी शराव पीकर अपनी औरत से झगड़ते देखा था?"

विन्दु ने डर से कहा, "हुं—"

"ठीक से कहो कि देखा है—"

विन्दु कह वैठी, "देखा है—"

सवसे अधिक जिसे मुजरिम और उसकी पत्नी मेम की जानकारी थी, वह है सुधा। वही उन लोगों की व्यक्तिगत महरी थी। सुधा ही उन लोगों का कमरा साफ-सुथरा करती, विस्तर विछा देती, कपड़े-लत्ते फींच देती, मच्छरदानी टांग देती। कमरे के अन्दर के सारे काम का भार सुधा पर था। उसी से पूछने पर पता चलता कि सौम्य वावू और उनकी पत्नी कव कमरे से वाहर जाते और कितनी रात में घर लौटकर आते।

उसे भी गवाह के कठघरे में खड़ा होना पड़ा। उससे भी पूछा गया, "जिस दिन मेम वहू की मौत हुई उस दिन सौम्य वावू कव घर लौटे थे?"

"तव रात के तीन वज चुके थे—"

"उस दिन सौम्य वावू ने वहुत ज्यादा शराव पी थी?"

सुधा वोली, "यह मुझे कैसे मालूम हो सकता है वावू? ज्यादा पी थी या कम पी थी, यह ठीक-ठीक वता नहीं सकूंगी।"

"तुमने कभी शराव पी है?"

"नहीं वावू, मैंने कभी नहीं पी है। सुना है, शराव पीने से आदमी को होश-हवास नहीं रहता।"

"शराव पीकर वे लोग तुम्हें डांटते-फटकारते थे?"

"हां वावू, डांटते-फटकारते थे।"

"क्या कहकर डांटते-फटकारते थे?"

"कहती, ब्लडी-विच—"

"उसके वाद? जिस रात मेम वहू और सौम्य वावू में झगड़ा हुआ, उस आखिर में क्या हुआ?"

"वे लोग तो हर रोज झगड़ते थे। उस रात भी झगड़ा हुआ था।"

"और उस झगड़े के दौरान तुम क्या करती थीं?"

"मैं झगड़ा सुनते-सुनते सो जाती थी।"

"ऐसा किसी रात हुआ था कि झगड़े की आवाज़ से तुम्हारी नींद ... हो?"

"एक रात मेरी नींद टूट गई थी। उस रात मेम वहू सौम्य वावू के...

चढ़कर उनका गला टीप रही थी।"

"उसके बाद क्या हुआ ?"

"उसके बाद यह आवाज सुनकर मैंने दादी मां को पुकारा। दादी मां दरवाजा खोलकर सौम्य बाबू को ले गई और अपने पलंग पर लिटा दिया।"

"और जिस दिन तुम लोगों के घर में पुलिस आई थी, तुम्हें झगड़े की कोई आवाज सुनाई पड़ी थी ?"

"हां, सुनाई पड़ी थी। मगर उस तरह का झगड़ा तो हर रोज हुआ करता था।"

"पुलिस ने आकर तुमसे क्या पूछताछ की ?"

"पुलिस ने आकर पूछा कि मैं कुछ जानती हूं या नहीं—"

सिर्फ बिन्दु या सुधा ही नहीं, मुखर्जी-भवन का जो भी आदमी जहां था, उस दिन सबसे पूछताछ की गई। सबसे ज्यादा जुल्म हुआ दादी मां पर। दादी मां के साथ एक डाक्टर भी था। जब बातें करते-करते दादी मां बेहोश हो गईं तो उनको देखरेख करने डाक्टर आगे बढ़ आया।

पूरा कोर्ट-घर तब सांस रोककर दादी मां को देखने लगा। उस उम्र में उस तरह का धक्का कोई आदमी बरदाश्त कर सकता है !

जज साहब को शायद दया आ गई। वे भी तो आखिरकार मनुष्य ही हैं न ! गवाही देने की यातना से उन्होंने दादी मां को मुक्त कर दिया। बोले, "उन्हें घर भेज दीजिए—"

इस पर मंझले बाबू दादी मां को गाड़ी पर बिठाकर घर पहुंचाने चले गए।

मल्लिक चाचा से उस दिन का सारा ब्यौरा सुनते-सुनते सदीप पत्थर जैसा जड़ हो गया था।

पूछा, "और सौम्य बाबू की अभी क्या हालत है ?"

"उनके बारे में कुछ मत पूछो। साधारण आदमी कोई काम करने के दौरान आगे-पीछे के बारे में कतई नहीं सोचता। जिस तरह कि घर के बारे जानकारी न हो तो घर के आंगन के बारे में भी जानकारी नहीं रहती। पड़ोसी के बारे में जानकारी न हो तो मुहल्ले या समाज की जानकारी नहीं रहती, जीवन की जानकारी न हो तो जीवन के भले-बुरे की भी समझ नहीं होती। हमारे सौम्य बाबू के साथ भी यही बात है। तुम या हम कोल्हू के बैल हैं। यहां के जज-एडवोकेट-डॉक्टर-इंजीनियर-मंत्री-लेबर-लीडर सभी कोल्हू के बैल हैं।"

"लेकिन सौम्य बाबू ?"

"सौम्य बाबू विकृति के शिकार हैं। उन्हीं जैसे लोगों को लेकर हमें चलना पड़ता है। देश के जो लोग मालिक हैं वे भी चाहते हैं कि ये लोग बराबर विकृति के शिकार बने रहें। इसी में उन्हें सहूलियत हासिल होती है। देश के मालिक चाहते हैं कि उनके जेहन में स्वतंत्र चिंतन की बला न रहे। मालिक लोग यह भी चाहते हैं कि जब वे कहें—'वंदे मातरम्' तो विकृति के शिकार लोगों का समुदाय भी सबके स्वर में स्वर मिलाकर कहे—'वंदे मातरम्'। या जब वे कहें 'इन्कलाब जिन्दाबाद' तो ये लोग भी सम्मिलित स्वर में कहें 'इन्कलाब जिन्दाबाद'। विकृति के शिकार लोगों का समुदाय ही दुनिया के तमाम देशों के मालिकों को जिलाए रखता है।

यह कोई नई बात नहीं है। महाभारत या रामायण के युग में भी यही स्थिति थी और आज के युग में भी यही स्थिति है। ये ही लोग बहुसंख्यक हैं। जिन लोगों ने इनके स्वर में स्वर मिलाया है उन्हें ही मालिकों ने जेल में ठूंसा है या फांसी पर लटका दिया है।"

इसके बाद ज़रा रुककर मल्लिक चाचा फिर बोले, "देश के मालिक उन्हें यद्यपि प्रश्रय देते हैं लेकिन वे जब ज़्यादती करने लगते हैं तो उन्हें क्षमा नहीं करते। उन्होंने एक दिन सुकरात की हत्या की है, ईसामसीह की हत्या की है, गांधीजी की भी हत्या की है। हत्या करने के कारण हैं—उन्होंने उन लोगों के नारे के स्वर के साथ अपना स्वर नहीं मिलाया। लेकिन सौम्यपद उस कोटि का नहीं है। ऐसे लोग विकृति के शिकार हैं। इन लोगों ने ज़्यादती की है इसीलिए इन्हें सज़ा दी जाती है, मृत्युदंड दिया जाता है। ये लोग मौत के शिकार हो जाते हैं। लेकिन सुकरात या ईसामसीह या महात्मा गांधी की हत्या करने पर भी वे हज़ारों गुना जीवन लेकर जिन्दा बच जाते हैं। उस समय उन्हें संस्कृति का शिकार कहा जाता है। इसलिए मैंने कहा था—प्रकृति का जो शिकार होता है उसे कोल्हू का बैल कहा जाता है। और सौम्यपद बाबू जैसे लोग विकृति के शिकार हैं।"

"लेकिन संस्कृति ?"

"सुकरात, ईसामसीह और गांधीजी जैसे लोग ही संस्कृतिवान मनुष्य हैं। इसलिए मरने के बावजूद वे चिरकाल तक अमर होकर जीवित रहते हैं—और तुम्हारे और मेरे जैसे लोग सिर्फ कोल्हू के बैल हैं, और कुछ भी नहीं—"

किस बात से किस बात की चर्चा छिड़ गई ! संदीप ने कहा, "तो फिर मैं अब चलता हूं चाचाजी। बाद में जो कुछ होगा, आपको सूचित करूंगा।"

मल्लिक चाचा बोले, "तुम लोगों के बारे में तो कुछ पूछ ही नहीं सका। तुम्हारी मां कैसी हैं ?"

संदीप ने कहा, "मां तो सकुशल ही हैं लेकिन मौसीजी के चलते मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है—"

"खून-जांच की रिपोर्ट डाक्टर को तुमने दिखाई थी ?"

संदीप ने कहा, "दिखाई थी, लेकिन डाक्टरों ने कहा, ऑपरेशन किए बगैर कुछ पता नहीं चलेगा। हम लोगों के बेड़ापोता में कोई अस्पताल नहीं है। ऑपरेशन कराना होगा तो कलकत्ता के ही किसी अस्पताल में भर्ती कराना होगा। मैं अकेला आदमी किस-किस पहलू पर गौर करूं, समझ में नहीं आता।"

मल्लिक चाचा ने पूछा, "डाक्टरों का कहना क्या है ? कैंसर है ?"

"बायोप्सी कराए बिना पता नहीं चलेगा कि कैंसर है या नहीं। इतने दिनों से कलकत्ता में हूं, नौकरी के सिलसिले में भी इतने दिनों से कलकत्ता में रहा हूं मगर देखने को तो यही मिल रहा है कि कोई शांति से नहीं है। मुखर्जी बाबुओं के घर में खून के मुकदमे की परेशानी से सभी बेहाल हैं और मेरे घर में इस तरह की बीमारी है। दोनों चीज़ एक ही जैसी हैं—रुपया-पैसा रहने पर जो हालत, न रहने पर भी वही हालत···"

यह सब बात कितने दिन पहले की है ! इतने दिनों के बाद उसे सारा कुछ याद आ रहा है। कहां से क्या तो हो गया, यह सोचने पर आश्चर्य होता है। वही मल्लिक चाचा, सौम्यपद बाबू, दादी मा, मुक्तिपद बाबू, सैक्सबी मुखर्जी कंपनी, गोपाल, विशाखा वगैरह जैसे उसे केंद्र बनाकर उसके चारों तरफ मानो परिक्रमा कर रहे हों।

उस दिन हरदयाल सब मिलाकर कॉलिन्स स्ट्रीट के मकान में पहुंचा ही था कि एकाएक देखा, कुछेक नौजवान दरवाज़े के सामने जाकर पुकार रहे हैं, "अंटी, अंटी—"

हरदयाल के लिए यह सब दृश्य कोई मानी नहीं रखता। ये लोग इस तरह अक्सर आते ही रहते हैं। उनके आने का मतलब है हरदयाल को रुपये की आमदनी होना। सबको इस ठिकाने की जानकारी नहीं है।

उन्हें अनदेखा कर हरदयाल अंदर चला गया।

इन इलाकों में अधिकतर अंधेरे का आलम ही रहता है। रात होने पर भी सड़कों पर बत्तियां नहीं जलतीं। अगर जलती भी हैं तो उन्हें तुरंत बुझा देने का इंतजाम रहता है।

हरदयाल के घुसते ही अंटी आगे बढ़ आई। हरदयाल बहुत खुश है। बोला, "बाहर कुछ लोग तुम्हें पुकार रहे हैं।"

अंटी के चेहरे पर भी भरपूर मुस्कराहट है। बोली, "हां, ये लोग हर रोज़ इसी वक्त आते हैं—"

हरदयाल ने कहा, "देखने पर लगता है ये लोग बहुत पैसेवालों के औलाद हैं—"

अंटी बोली, "पहले इन लोगों में से एक-दो व्यक्ति ही आते थे, लेकिन अब ये लोग झुंड बनाकर आते हैं। उन लोगों के साथ कई लड़कियां भी हैं—"

"लड़कियां भी हैं ?"

"हां, एक-एक पुड़िया पांच रुपये में लेते हैं। हर रोज़ लगभग चालीस-पचास पुड़िया बिक जाती हैं—"

यह समाचार सुनकर हरदयाल के चेहरे पर और भी खुशी की रौनक छा गई।

बोला, "उधर वाले फटिक ने काफी रुपये जमा कर लिए हैं। सुनने में आया है, दमदम में एक और नया मकान खरीद लिया है। सुना है, कल उसने एक-एक पुड़िया दस रुपये में बेची है।"

अंटी बोली, "हम भी दर बढ़ाकर दस रुपया कर सकते हैं।"

हरदयाल बोला, "इससे यदि बिक्री कम हो जाए तो ? सुना, उस 'आइडियल फूड प्रोडक्ट्स' कंपनी को पुलिस ने बंद कर दिया है।"

"पुलिस ने बंद क्यों कर दिया ? उन्हें तो अपनी दस्तूरी ठीक समय पर मिल जाती थी।"

हरदयाल बोला, "पुलिस कर्मचारियों में भी बंटवारे के चलते गड़बड़ी चल रही थी। सारा माल एक ही आदमी हड़प ले तो काम कैसे चल सकता है ? इसके अलावा एक औरत के कारण कोर्ट में मुकदमा भी चला।"

"किस औरत के कारण ?"

हरदयाल ने कहा, "जिस औरत को हमने यहां से ले जाकर वाहर सड़क पर फेंक दिया था। विशाखा गांगुली या ऐसा ही कुछ नाम था उसका। गुमशुदा के कॉलम में जिसके वारे में तस्वीर के साथ विज्ञापन छपा था।"

अंटी वोली, "वह क्या मिल गई है ?"

"हां-हां, वही जिसे एक आदमी इस मकान के तेरह नंवर कमरे में छोड़कर चला गया था। आखिर में वह प्रेसिडेंसी जेल में मिली। यह वात अखवार में छपी थी। तुम्हें याद नहीं है ?"

"उसके वाद क्या हुआ ?"

"उसके वाद पता चला कि अलीपुर जेल में उस तरह की पुड़िया खाई हुई पंद्रह-सोलह और लड़कियां हैं। उसके वाद ही आइडियल फूड कंपनी वोरिया-वस्ता समेटकर लापता हो गई।"

अंटी वोली, "मुझे तो यह सव खवर मालूम ही नहीं थी।"

हरदयाल वोला, "मैं इसके वारे में पूरी तरह खवर रखा करता हूं। रुपया कमाऊं और पुलिस को उस आमदनी का ज़्यादा हिस्सा न दूं तो कहीं विजिनेस चल सकता है ? ग़ैरकानूनी व्यापार में भी एक किस्म की ईमानदारी निवाहनी पड़ती है। अगर यह न मानूं तो उस तरह के व्यापार को वंद कर वोरिया-वस्ता समेट गायव हो जाना पड़ेगा। और तुमसे भी कहता हूं : किसी अनजाने व्यक्ति पर नजर पड़े तो उसे अंदर घुसने मत दो। सुना है आजकल पुलिस का भी एक नया सेल हेरोइन की धर-पकड़ के लिए वना है।"

अंटी वोली, "पुलिस को तो हम हमेशा से उसका हिस्सा देते आ रहे हैं।"

हरदयाल ने कहा, "देने से क्या होगा, अव तो भागीदारों की संख्या में और भी वढ़ोत्तरी हो गई। अव उन्हें और ज़्यादा हिस्सा देना होगा।"

जो लोग पुड़िया खाने आए थे वे अव तक वगलवाले कमरे में शोर-शरावा कर रहे थे। उनके शोर-शरावे की आवाज़ कान में पहुंच रही थी। हरदयाल ने पूछा, "वे लोग कौन हैं ?"

अंटी वोली, "वे लोग स्टूडेंट हैं। सभी कॉलिज में पढ़ते हैं।"

"तुम उन लोगों को पहचानती हो न ?"

"पहचानूंगी नहीं ? वे लोग मेरे रेगुलर कस्टमर हैं। उन लोगों के साथ वहुत सारी लड़कियां भी आती हैं। शुरू में एक-दो व्यक्ति आते थे, उसके वाद वे लोग ही अपने दोस्त-मित्रों को इकट्ठे कर ले आते हैं। पुड़िया के साथ-साथ वे जो कुछ भी खाना चाहते हैं उनकी आपूर्त्ति की जाती है।"

"लड़कियां भी आती हैं ?"

अंटी ने कहा, "लड़के आएंगे तो लड़कियां नहीं आएंगी ? वे लोग एक ही कॉलिज में पढ़ते हैं। उनमें से कुछ धनी-मानी लोगों के लड़की-लड़के भी हैं। वहुतेरे लड़के-लड़कियां गाड़ी लेकर आते हैं। गाड़ियां पार्क स्ट्रीट में पार्क कर देते हैं और यहां पैदल चलकर आते हैं।"

यह खवर सुनकर हरदयाल खुश हुआ। मन ही मन वह सपना देखता है, उसकी पुड़िया की कीमत पांच रुपया से वढ़कर वीस रुपया हो गई है। उन रुपयों

से वह और अधिक सुखी-संपन्न हो गया है। अब वह फटिक से ज्यादा पैसेवाला हो जाएगा। अभी उसका एक अपना मकान है। अब वह फटिक की तरह ही एक और नया मकान बनवाएगा। उसके बाद एक और मकान। उसके बाद एक और। फटिक को दिखा देगा कि उसके साथ नमकहरामी करने से वह उसका बदला ले सकता है।

थोड़ी देर बाद बगलवाले कमरे का शोरगुल कम हो गया। अंटी बोली, "अब तमाम लोग नशे से धुत्त होकर निढाल पड़ गए हैं—अब उन लोगों की कोई आवाज नहीं आ रही।"

हरदयाल ने कहा, "मकान का किराया चुका दिया है न ?"

"हां, मैंने पहले ही ले लिया है। फी घंटा दस रुपया की दर से किराया उन लोगों ने चुका दिया है—दो घंटा रहेगा तो बीस रुपया देना होगा। इसलिए दस रुपया कमरे का किराया पेशगी ही ले लिया है। वे लोग छह जने हैं। पांच रुपये दर से पुड़िया की कीमत हुई तीस रुपया और दस रुपया कमरे का किराया। कुल मिलाकर चालीस रुपया लेकर रख लिया है। और खाने-पीने की सारी चीजें नकद मंगवाई गई हैं।"

अंटी का सारा काम पुख्ता होता है। इतने दिनों से वह यह काम चलाती आ रही है लेकिन हिसाब में कभी गड़बड़ी नहीं हुई है। हरदयाल भी नमकहराम नहीं है। उसकी आमदनी जैसे-जैसे बढ़ती जा रही थी वह अंटी की तनख्वाह भी बढ़ाता आ रहा था। लेकिन तनख्वाह बढ़ाने के बजाय अंटी से कमीशन-सिस्टम पर बात तय करने से ज्यादा फायदा होने लगा। जितनी आय होगी उस पर दस प्रतिशत कमीशन। वह सिस्टम चालू होते ही अंटी को भी अधिक आमदनी होने लगी। साथ ही हरदयाल की भी आय में वृद्धि होने लगी।

एक घंटा पूरा होते ही कमरा खाली कर देने की बात है। अंटी के वेतनभोगी कर्मचारी इस बात का ख्याल रखते हैं। वे लोग कमरा खाली कर देंगे तो दूसरे ग्राहक आकर कमरा किराये पर ले सकेंगे। इसलिए तकाजा कर कमरा खाली कराना पड़ता है और कमरे में ताला बंद कर चाबी अंटी को सुपुर्द करनी पड़ती है। अंटी के इस कमरे का यही नियम है।

कमरे से निकल लड़कों और लड़कियों का दल चुपचाप चला जा रहा था। अचानक अंटी बोली, "यह देखिए बाबू, यह देखिए। सामने जो गोरी-चिट्टी लड़की जा रही है, उसे देखिए—"

हरदयाल ने देखा। पूछा, "वह कौन है ?"

अंटी बोली, "वह बहुत बड़े आदमी की लड़की है। उसका नाम है पिकनिक—"

"कैसे पता चला कि वह बहुत बड़े आदमी की लड़की है ?"

"उसके नशे के संगी-साथियों ने ही बताया है। बेलुड़ की सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के जो मालिक हैं, उसी की यह लड़की है।"

हरदयाल बोला, "उसका मालिक तो मुक्तिपद मुखर्जी है। अभी उस कारखाने में लॉकआउट चल रहा है। हजारों आदमी बेरोजगार हो गए हैं। यह उसी की लड़की है ? उसकी आखिरकार यह हालत !"

अंटी बोली, "हां, उसका नाम पिकनिक है !"

वह सुनकर हरदयाल जैसा गुंडों का सरदार भी छिः-छिः करने लगा। बोला, "इस्स ! सब साले मिलकर देश को रसातल में ले गए—"

इतने दिन पहले की बात सोचकर बहुतों को बड़ी ही खुशी होती है। व्यतीत के बारे में सोचना सबको अच्छा लगता है। क्योंकि तब दुख के घटनाक्रमों को आदमी भूल जाता है और सिर्फ सुख के अंश ही स्मरण रहते हैं। पर संदीप ने अपनी जिन्दगी में सुख नामक किसी वस्तु का अहसास किया था? संदीप के जीवन में वर्तमान की तरह व्यतीत भी दुख से भरा हुआ था। सच, संदीप जिस तरह कभी अपने जीवन में सुख नहीं जी सका, उसी तरह हजारों कोशिश करने के बावजूद किसी को सुखी नहीं बना सका था।

सवाल खड़ा होता है—सुख क्या है? 'सुख' शब्द क्या शब्दकोश के अन्दर आबद्ध होकर रहने लायक ही वस्तु है? संदीप के जो भी करीबी थे, एक-एक कर चले गए हैं। जब वे थे उस समय ही क्या उसे कोई सुख था? सुख की व्याख्या के लिए वह कितनी ही पुस्तकें पढ़ चुका है, कितने ही लोगों से पूछ चुका है, कितने ही स्थानों का परिभ्रमण कर चुका है, आकाश के सूर्य की ओर देखकर उसने कितनी ही बार प्रश्न उछाला है। कहा है, "हे विश्व-ब्रह्मांड के केन्द्र, मुझे बता दो कि सुख क्या है? क्या प्राप्त होने से मैं सुखी हो पाऊंगा?"

सूर्य ने आज तक उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है।

कार्ल मार्क्स से एक बार सवाल किया गया था—"सुख क्या है?"

कार्ल मार्क्स ने जवाब दिया था—"संघर्ष।"

अगर संघर्ष ही सुख है तो वह बेशक सुखी है। लेकिन वह तो महसूस ही नहीं कर पाता है कि वह सुखी है।

हरद्वार के एक साधु से उसने यही प्रश्न किया था। साधु बाबा पहुंचे हुए ज्ञानी थे। उन्होंने कहा था, "जगत के बीच जो मनुष्य जगदीश्वर को देख पाता है और आत्मा के भीतर परमात्मा को देख पाता है, वही सुखी है।"

संदीप उस समय उस बात का मर्म नहीं समझ सका था और आज भी नहीं समझ पा रहा है।

सुख की खोज करते-करते उसे इसका उत्तर एक पुस्तक के एक पृष्ठ में मिला था। उसमें संस्कृत का एक श्लोक लिखा हुआ था। श्लोक था—नाल्पे सुखमस्ति भूमैव सुखम। अर्थात् अल्प में सुख नहीं है, भूमा में ही सुख है।

लेकिन इस 'भूमा' का अर्थ क्या है?

भूमा का अर्थ है वृहत् या महत्। लेकिन लोग वृहत् या महत् नहीं चाहते। वे चाहते हैं रुपया, मकान, गाड़ी, भोग के समस्त उपकरण। बेटे की नौकरी, लड़की की शादी, रोग-व्याधि से मुक्ति, कीमती कपड़े-लत्ते, सुन्दर पत्नी। इसी तरह की कितनी ही छोटी-छोटी चीजें। लेकिन ये सब वस्तुएं मनुष्य को सुखी नहीं बनातीं, क्योंकि एक बार इन वस्तुओं के प्राप्त होने से चाह और प्राप्ति समाप्त हो जाती है। लेकिन दुनिया में ऐसी वस्तुएं भी हैं जो प्राप्त हो जाने पर भी लगता है कि पूरे

तौर पर प्राप्त नहीं हुई। और भी प्राप्त होती तो अच्छा रहता। भूख लगने पर खाने के लिए कोई वस्तु मिलते ही खाने की चाह समाप्त हो जाती है।

लेकिन विश्व में क्या ऐसी भी वस्तु है जो प्राप्त होने पर लगे कि संपूर्ण को प्राप्त नहीं कर सका?

इतने दिनों तक जेल में रहने के दौरान उसका मन केवल अतीत के इर्द-गिर्द ही चक्कर काटता रहता। संदीप ने स्वयं कभी सुखी होना नहीं चाहा था। उसने दूसरे को सुखी बनाने की चेष्टा में बार-बार स्वयं को न्योछावर किया है। बार-बार कामना की है, जो जहां है, वहीं सुखी रहे। उसका विश्वास यही रहा है कि प्राप्ति में सुख नहीं है, सुख केवल देने में है। यही वजह है कि गोपाल हाजरा ने जब-जब उसे रुपये-पैसे के बारे में उपदेश दिया है, अपने खुद के विचार और विश्वास पर अडिग रहकर उसने जीवन जीना चाहा है। क्योंकि बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी परिवार के भवन में कई वर्ष बिताने के बाद उसने महसूस किया था कि सुख की व्याख्या अलग ही किस्म की है। सुख से रुपये-पैसे का कोई सरोकार नहीं है, यही वजह है कि जिस रास्ते को उसने गलत समझा है उसका उसने परित्याग कर दिया है। अपनी आंखों से गोपाल हाजरा का दृष्टांत देखा है लेकिन वह दृष्टान्त कभी उसके विश्वास की नींव को नहीं हिला सका है। गोपाल हाजरा चाहे कार पर चढ़कर सैर-सपाटा करे, रुपया-पैसा कमाए, जितनी भी मर्जी हो नशा करे, जितनी मर्जी हो मिनिस्टरों से घनिष्ठता बढ़ाए लेकिन वह आजीवन अपने विश्वास पर टिका रहेगा—इसी सिद्धान्त पर वह हमेशा अटल रहा है।

लेकिन अबकी उसके विश्वास की नींव जरा हिल उठी। उसे लगा, वह शायद इतने दिनों से गलती ही करता आ रहा है। गोपाल हाजरा ही सही रास्ते पर है [illegible]

नर्सिंग होम से सड़क पर आते ही चारों तरफ का भूगोल जैसे उसकी आंखों के सामने घूमने लगा। ऐसा महसूस हुआ जैसे सड़क पर पैर रखते ही वह गाड़ी के तले दबकर कुचल जाएगा।

पीछे से किसी एक आदमी ने उसे थाम लिया।

संदीप ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा, बिलकुल अनजाना-अनपहचाना व्यक्ति। इसके पहले उसे कभी नहीं देखा था।

उस सज्जन ने पूछा, "आपको क्या हुआ है? तबीयत खराब है क्या?"

संदीप ने पूछा, "आप कौन हैं?"

सज्जन बोला, "मैं कोई नहीं हूं। सड़क पर चलने के दौरान लगा कि आप लड़खड़ा रहे हैं। आपको ब्लडप्रेशर है क्या?"

संदीप ने कहा, "नहीं।"

"फिर? फिर आप लड़खड़ा क्यों रहे हैं? देखकर लगा कि आप अभी तुरन्त लड़खड़ाकर सड़क पर गिर जाइएगा, यही वजह है कि मैंने आपका हाथ थाम लिया—"

संदीप क्या कहे, उसकी समझ में नहीं आया। आश्चर्य! वह खुद नहीं जान

ह लड़खड़ा रहा है ।

आपको घर पहुंचा दूं ?"

प वोला, "नहीं, मैं अकेले ही घर चला जाऊंगा ।"

न वोला, "लेकिन इस हालत में आप घर कैसे जाइएगा ? आपका घर ?"

दीप वोला, "वह यहां से वहुत दूर है । वेड़ापोता ।"

ज्जन वोला, "वहां कैसे जाइएगा ?"

ंदीप वोला, "चाहे जैसे हो चला जाऊंगा । आप चिन्ता नहीं करें—"

सज्जन कौन है, कहां उनका मकान है, संदीप को यह सव मालूम नहीं था ।
विपन्न व्यक्ति को सहायता करने के लिए आगे वढ़ने की यह मिसाल संदीप
ीवन में कभी नहीं देखी थी ।

सज्जन वोला, "वस-ट्राम से घर मत जाइएगा । अगर कहिए तो एक टैक्सी
ला दूं…"

संदीप ने कहा, "इसकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी । आपका वहुत-वहुत धन्यवाद !
ैं खुद ही चला जाऊंगा ।"

सज्जन चला गया । संदीप कुछ क्षण वहां चुपचाप खड़ा रहा । सड़क से तब
जन-सैलाव और ट्राम-वस-टैक्सी तेज़ गति से आगे वढ़ रहे थे । किसी को किसी की
ओर देखने का वक्त नहीं है । सवका एक ही उद्देश्य है—या तो अपना काम
निकालना या रुपया कमाना । इन दो के अलावा कलकत्ता के जन-समुदाय का और
कोई दूसरा उद्देश्य नहीं है—संदीप की सदा से यही धारणा थी । लेकिन आज उस
सज्जन का व्यवहार देखकर संदीप आश्चर्य-चकित रह गया था । यह तो एक
अपवाद ही है !

डाक्टर की वात तव भी उसके जेहन में चक्कर काट रही थी । इतने दिनों तक
इतना रुपया खर्च कर जो इलाज कराया वह व्यर्थ ही सावित हो जाएगा ?

संदीप ने डाक्टर से पूछा था, "तो फिर मैं क्या करूं डाक्टर साहव ?"

डाक्टर के लिए समय वड़ा ही मूल्यवान है । उसके लिए समय का मतलव है
या । वाहर वहुत सारे मरीज उसके लिए इन्तज़ार में खड़े हैं । संदीप कमरे से
ाहर निकलेगा तो वे अन्दर जाएंगे ।

डाक्टर वोला, "कैंसर ठीक नहीं होता है तो इसका मतलव यह नहीं कि हाथ
पर हाथ धरे वैठे रहिए । पहले रुपये का वन्दोवस्त कर लीजिए ।"

संदीप ने पूछा, "कितने रुपये खर्च हो सकते हैं ?"

डाक्टर ने पूछा, "मरीजा आपकी कौन है ?"

संदीप ने कहा, "मेरी कोई नहीं है—"

"मतलव ? आपकी कोई नहीं है तो आप उसके लिए इतनी तकलीफ क
उठा रहे हैं ? इनका अपना कोई सगा-सम्वन्धी है ?"

संदीप ने कहा, "कोई नहीं—"

"कोई नहीं ? आश्चर्य की वात है !"

संदीप वोला, "एक व्यक्ति ज़रूर है, वह है इनकी लड़की । लेकिन उस ल
की अभी शादी नहीं हुई है । वह लड़की भी अभी मेरे सिर का वोझ है ।"

फिर भी डाक्टर की समझ में कुछ नहीं आया। इसके अलावा उतना कुछ पूछने का भी वक्त नहीं था उसके पास। दूसरे बहुत सारे मरीज उसके इन्तजार में खड़े थे।

बोला, "ठीक है, आप जो निर्णय लीजिएगा, मुझे सूचित कीजिएगा। मैं उसी के अनुरूप बन्दोबस्त करूंगा।"

संदीप ने दुबारा पूछा, "आपका कहना है कि रोगी का एक पैर का काट देना होगा?"

"हां।"

"कितना खर्च लगेगा?"

डाक्टर ने कहा, "आपको तो बता ही चुका हूं कि मेरा ऑपरेशन फीस है दो हजार रुपया और नर्सिंग होम का खर्च रोजाना लगभग तीन सौ रुपया। कुल मिलाकर तकरीबन बीस हजार रुपया, इससे ज्यादा नहीं—"

इस बात को सुनने के बाद क्या हुआ, संदीप को याद नहीं है। कब वह डाक्टर के चेम्बर से बाहर आया, कब सड़क पर आया और कब वह सड़क पार कर विपरीत दिशा की सड़क की तरफ चलने लगा था, उसे कुछ याद नहीं आ रहा है। उस अनजाने सज्जन ने पकड़ न लिया होता तो वह गाड़ी के नीचे दबकर मर गया होता। लेकिन जिसने उसे बचाया वह कौन है? उसे किसने भेजा? तो क्या ईश्वर चाहते हैं कि वह जिन्दा रहे?

संदीप वहां खड़ा होकर आकाश-पताल सोचने लगा। ईश्वर ने उसकी रक्षा क्यों की? अभी उसे बीस हजार रुपया कहां मिलेगा? कौन उसे बीस हजार रुपया देगा? अगर वह किसी काबुली से इतनी रकम कर्ज के तौर पर ले तो उसे कितना ब्याज देना होगा? उस रकम को वह कैसे चुकाएगा?

वह फिर चारों तरफ ध्यान से देखने लगा। उसने महसूस किया कि उसका दिमाग पुनः चकराने लगा है।

अभी समस्या है—अपनी इस शारीरिक हालत में कैसे बेड़ापोता जाएगा? वह कैसे यह बात अपनी मां से कहेगा? विशाखा से वह क्या कहेगा? मौसीजी को ही वह क्या कहकर सांत्वना देगा?

उस पर है रुपये का सवाल। प्रोविडेण्ट फंड से वह काफी रुपया कर्ज ले चुका है। उस कर्ज को वह अब तक चुका नहीं पाया है। दूसरी ओर सरो-सामान की कीमत तेज रफ्तार से बढ़ती जा रही है। लेकिन पूरी गृहस्थी का खर्च उसके माहवारी वेतन से ही चल रहा है। ऐसी हालत में वह बीस हजार रुपये का बोझा कैसे ढोएगा?

अब तक वह फुटपाथ के एक स्थान पर चुपचाप खड़ा था। अब जैसे वह यथार्थ की दुनिया में लौटकर चला आया।

डाक्टर की बातें तब भी उसके कानों में गूंज रही थी—बीस हजार रुपये में मैं आपका सारा काम कर दूंगा। आप चिन्ता नहीं कीजिए। और कोई दूसरा आदमी होता तो मैं तीस हजार बताता। लेकिन चूंकि आप कह रहे हैं कि पेशेन्ट आपकी कोई नहीं है'''

डाक्टर साहब तीस हजार की जगह बीस हजार रुपये में ही सब कुछ कर

देने की कृपा कर रहे हैं, इसके लिए तो संदीप को खुश होना चाहिए। कितने दयालु डाक्टर हैं! ऐसा दयालु डाक्टर उसे कहां मिलेगा? ऐसे दयालु डाक्टर के प्रति उसे कृतज्ञ ही होना चाहिए।

संदीप ने बहुतों से सुना है कि वकील और डाक्टर के चक्कर में फंस जाने से फिर छुटकारा नहीं मिलता। वे लोग मोवक्किल या मरीज़ को अपने चंगुल में फंसा लेते हैं तो रास्ते का भिखमंगा बनाकर छोड़ते हैं।

लेकिन अलीपुर कोर्ट के एडवोकेट शिवकुमार घोष ने विशाखा को जेल से छुड़ाकर लाने के लिए एक पैसा भी तो नहीं लिया था!

यह बात सुनकर उस वक्त मां को आश्चर्य हुआ था। पूछा था, "विशाखा को छुड़ाने में तेरा कितना रुपया खर्च हुआ?"

संदीप ने कहा था, "मेरा एक भी पैसा खर्च नहीं हुआ—"

यह सुनकर मां को शुरू में आश्चर्य हुआ था। बोली थी, "अयं, तेरा एक भी पैसा खर्च नहीं हुआ?"

संदीप ने कहा था, "नहीं मां, मेरा एक भी पैसा खर्च नहीं हुआ—यकीन करो, मेरा एक भी पैसा खर्च नहीं हुआ—"

मां ने कहा था, "यह भगवान की असीम दया है, असीम दया! तूने खुद ही उन्हें कुछ क्यों नहीं दिया?"

संदीप ने कहा, "उस समय मैं विशाखा के चलते इतना व्यस्त था कि यह सब सोचने का मुझे वक्त ही नहीं मिला। याद नहीं है कि किस तरह वह 'चॉकलेट-चॉकलेट' कहकर चिल्ला रही थी! बहुत दिनों तक बगैर खाना खिलाए जेल में ठूंसकर रख दिया था। उस समय कोर्ट से निकल मैंने उसे एक रेस्तरां में ले जाकर भर-पेट खाना खिलाया तब जाकर शांत हुई—"

मां बोली, "खैर, किसी दिन दुकान से एक पैकेट संदेश खरीदकर वकील साहब के पास पहुंचा आना।"

लेकिन अबकी?

किस किस्म का यह डाक्टर है, कौन जाने! शहर में तो बहुत ख्याति है इसकी। इसके चेम्बर में रोगियों की ठसाठस भीड़ रहती है। संदीप ने जिससे भी पूछा है, उसने कहा है, "अरे डाक्टर लाहिड़ी! वह तो धनवंतरि हैं, धनवंतरि। ऐसे डाक्टर बहुत कम ही देखने को मिलते हैं।"

बैंक के भी बहुत सारे लोगों से संदीप ने पूछा है। डाक्टर विकास लाहिड़ी का नाम सुनते ही सबने खुलकर उसकी प्रशंसा की है। एक शब्द में कहा जाए तो डाक्टर लाहिड़ी और स्वयं भगवान एक ही व्यक्ति हैं। सभी ने किसी न किसी अपने सगे-संबंधी का इलाज डाक्टर लाहिड़ी से कराया है। उसके नर्सिंग होम में भर्ती होकर सभी स्वस्थ और अच्छे होकर घर लौट आए हैं। डाक्टर लाहिड़ी ने कैंसर बताया है तो फिर कुछ दूसरा संदेह नहीं किया जा सकता। आप निर्भय होकर उनसे दिखा सकते हैं। एक शब्द में कहा जाए तो उनके पास ले जाने का मतलब है भगवान के पास ले जाना। उन्हें ज्यादा दिनों तक घर में नहीं रखें, पूरे जिस्म में फैल जाएगा।

डाक्टर लाहिड़ी के चेम्बर में संदीप गोस्वामी का पहले-पहल जिस दिन

दिखाने ले गया था, उसी दिन उसने बताया था, "यह कैंसर है।"

"कैंसर !!!"

यह सुनते ही संदीप का सिर से पैर तक का पूरा हिस्सा दहशत से सिहर उठा था।

डाक्टर लाहिड़ी ने एकांत में ले जाकर कहा था, "आप अपनी मौसीजी से अभी यह सब नहीं बताएं। इसका मतलब यह कि अपनी मां या उनकी लड़की से यह सब बताने की जरूरत नहीं। वे बेवजह डर जाएंगे। मैं हूं, डरने की कौन-सी बात है?"

संदीप ने कहा था, "उनकी यह बीमारी दूर हो जाएगी तो?"

डाक्टर ने कहा था, "अवश्य ही दूर हो जाएगी। मैंने कितने ही मरीजों को ठीक कर दिया है।"

संदीप ने दस रुपये के पांच नोट बढ़ा दिए थे और डाक्टर लाहिड़ी ने बिना गिने ही उन नोटों को पेंट के पॉकेट में रख लिया था। उसके बाद वह मौसीजी को घर लौटाकर ले आया था। मरीज को बेड़ापोता से कलकत्ता ले आना और वहां से लौटाकर ले जाना क्या आसान काम है? उद्विग्नता और खर्च की बात अगर छोड़ भी दी जाए तो भी मरीज की हालत पर गौर करना पड़ेगा। जो औरत पैर के दर्द के कारण घर के अन्दर एक भी कदम चल नहीं पाती, उसे कलकत्ता ले जाकर फिर घर लौटाकर ले आना क्या आसान काम है?

पैर में दर्द! पैर में किस चीज का दर्द है, दर्द क्यों है और उसके साथ इतना बुखार क्यों रहता है, कोई डाक्टर इसका अनुमान नहीं लगा सका था। अनुमान का पता पहले-पहले डाक्टर लाहिड़ी ने लगाया। पहले जिन डाक्टरों को दिखाया गया था, उन्होंने कहा था—यह कुछ भी नहीं है। पेट की गड़बड़ी के कारण हुआ है। दो-चार टिकिया खिला देने से ही ठीक हो जाएगा।

इसी तरह बहुत दिनों से चल रहा था। शुरू-शुरू में मौसीजी कहती, "चलने के दौरान पैर में तकलीफ महसूस होती है बेटा—"

शुरू में इस मामूली दर्द के लिए किसी ने माथापच्ची नहीं की थी। सभी सोचते, विशाखा की शादी के बारे में चिन्तित रहने के कारण उसे यह बीमारी है। इसीलिए नींद की टिकिया खिलाकर उन्हें रखा जाता था। आखिर में बहुत तलाशने के बाद जब विशाखा मिल गई, उस समय भी मौसीजी की सेहत में कोई सुधार नहीं हुआ। दिन-दिन सेहत में गिरावट आती गई। उसके बाद देखने को मिला कि बाएं पैर के घुटने के पास एक जगह सूजन है और उसे दबाने से दर्द होता है। उसके बाद उस सूजन में और भी वृद्धि हो गई। उस समय गांव के डाक्टर को दिखाकर कुछ दवाइयां खिलाई गई। उससे भी दर्द में कोई कमी नहीं आई।

ऐसी हालत में सभी मन ही मन भयभीत हो उठे।

सब कुछ देखने-सुनने के बाद मां ने एक दिन अपने बेटे को एकान्त में बुलाकर कहा, "अरे मुन्ना, मुझे लक्षण अच्छा नहीं दिख रहा है—"

संदीप ने कहा, "क्यों मां, क्या हुआ है?"

"तेरी मौसीजी के बाएं पैर की सूजन और बढ़ गई है।"

संदीप तब गधे की तरह खटकर कुल मिलाकर घर लौटा था। उसका शरीर और मन तब बेबस हालत में था। बोला, "मैं अब क्या करूं, कितना करूं! कितने ही डाक्टरों को दिखाया पर कोई कुछ बता नहीं पा रहा है।"

मां बोली, "यह बात अभी कहोगे तो काम चलने वाला नहीं है बेटा। कुछ न कुछ करना ही है। तू न करेगा तो कौन करेगा? और ही है कौन हम लोगों का? तुम्हारे भरोसे ही यह गृहस्थी चल रही है—"

एक ही दिन नहीं बल्कि रोज-रोज मां का यह शिकवा-शिकायत सुनते-सुनते संदीप विरक्त जैसा हो गया था। लेकिन विरक्त होने से काम तो चलेगा नहीं। दूसरे की ज़िम्मेदारी जबकि स्वेच्छा से अपने कंधे पर उठा ली है तो अमृत के साथ-साथ विष भी उसे हंसते हुए निगलना होगा। विष निगलने से नकारने पर उसकी गणना अमानुस के रूप में होगी।

उसके बाद ही वह इस उस डाक्टर की खोज करने लगा। मौसीजी को वह बहुत सारे डाक्टरों के पास दिखाने ले गया। हर डाक्टर अलग-अलग तरह की राय ज़ाहिर करने लगा। सभी ने अपने-अपने नर्सिंग होम में भर्ती कराने का सुझाव दिया।

और सरकारी अस्पताल?

सभी ने कहा, "वहां भूलकर भी मत रखना। वहां स्वस्थ आदमी को भी रखा जाए तो वह अस्वस्थ हो जाएगा। वह मर जाएगा। अस्पताल के मालिक डाक्टर नहीं, असली मालिक हैं अस्पताल के मेहतर और झाड़ूदार। उन्हें रिश्वत दिए बगैर रोगी को वहां दाखिल भी नहीं कराया जा सकता—यह है यहां के अस्पताल की हालत—"

इसी तरह एक ओर नौकरी और दूसरी ओर गृहस्थी की चक्की चलाते-चलाते संदीप का जीवन घिस गया था। ठीक उसी समय डाक्टर विकास लाहिड़ी से मुलाकात हो गई। उसी ने पहले पहल बताया कि कैंसर है।

उसके बाद जब उसने खर्च की रकम की चर्चा की तो संदीप का दिमाग शून्य हो गया। डाक्टर लाहिड़ी के चेम्बर से निकलते ही उसका दिमाग चकराने लगा। बीस हजार रुपया! बीस हजार रुपये का वह कैसे और कहां से जुगाड़ करेगा?

अचानक संदीप ने आंखें खोलीं तो देखा बहुत सारे लोग उसकी ओर अपलक निहार रहे हैं। उनमें से एक ने पूछा, "अभी आप कैसा महसूस कर रहे हैं?"

पता नहीं, यह बात किसकी जबान से निकली। संदीप ने सरसरी निगाह से चारों तरफ देखा। वह कहां है अभी? ये लोग कौन हैं जो उसकी तरफ अपलक निहार रहे हैं? यह कौन-सी जगह है? उसे क्या हुआ है? उसके मुंह से कोई शब्द क्यों नहीं निकल रहा है? वह यहां क्यों लेटा हुआ है? क्यों वह उठकर खड़ा नहीं हो पा रहा है? क्यों कोई उसकी बात का जवाब नहीं दे रहा है?

फिर वही सवाल, "अभी आप कैसा महसूस कर रहे हैं?"

सच, तब वहां बहुत सारे लोगों का मजमा लगा हुआ था। आदमी की भीड़ से फुटपाथ पर अवरोध पैदा हो गया है। भीड़ ही भीड़ को आकर्षित करती है। पीछे से एक आदमी ने किसी दूसरे आदमी से पूछा, "यहां क्या हुआ है भाई साहब? इतनी भीड़ क्यों है?"

उत्तर में एक व्यक्ति ने कहा, "यहां एक आदमी बेहोश पड़ा हुआ है—"

"कौन है ? उस आदमी का नाम क्या है ?"

उस आदमी ने कहा, "कैसे बताऊं, वह आदमी तो बोल ही नहीं पा रहा है। बेहोश होकर पड़ा हुआ है।"

दुनिया में उपदेश देनेवालों की कमी किसी जमाने में कहीं कमी नहीं हुई है। शहर, गांव, कस्बे में निकम्मे लोगों की भीड़ इकट्ठी करने के लिए किसी युग में कमी नहीं होती। इसीलिए उस दिन दोपहर तीन बजे दिन की रोशनी के तले संदीप के बेहोश शरीर को घेर कर व्यस्त शहर भी एकाएक स्तब्ध और स्थाणु हो गया। सबकी जबान पर एक ही सवाल, "यह कौन है ? इसका घर कहां है ? यह इस हालत में क्यों पड़ा हुआ है ? इसका नाम क्या है ?"

एक आदमी ने भीड़ के अन्दर से झाककर देखा और बोला, "अरे, यही तो कुछ क्षण पहले मैंने यहां इस आदमी को खड़े-खड़े लड़खड़ाते हुए देखा था। उसी समय संदेह हुआ था कि इस आदमी को कुछ न कुछ बीमारी है—"

"आपने कब देखा था ? कितनी देर पहले ?"

वह आदमी बोला, "यही तो लगभग दो घंटा पहले मैं यहां से होकर जा रहा था। मैंने उसका हाथ थाम न लिया होता तो वह गिर ही पड़ता।"

"उसके बाद क्या हुआ ?"

"इसके बाद और क्या करता ! मैंने उसे स्वस्थ होते देखा तो सरो-सामान खरीदने न्यू मार्केट चला गया। उसके बाद लौटने के दौरान यह कांड देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा है—"

इस संबंध में क्या करना चाहिए, इसका सुझाव कोई नहीं दे रहा है। जबकि एक आदमी यहां निरुपाय हालत में मौत का शिकार हो जाएगा। कोई कुछ नहीं कर रहा है तो फिर क्या होगा ?

एक आदमी बोला, "थाने में सूचना भेजना बेहतर रहेगा। ऐसी हालत में पुलिस आकर कोई कदम उठा सकती है या उसके घर पर पहुंचा दे सकती है।"

एक दूसरा आदमी बोला, "यहां की पुलिस की बात की चर्चा करना व्यर्थ है। पुलिस को सूचित करने से कुछ नहीं होगा, मेहनत व्यर्थ साबित होगी। इससे तो बेहतर यही है कि अस्पताल में खबर भेजी जाए, शायद वे लोग एम्बुलेंस भेज दें।"

लेकिन इस पर भी किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। अस्पताल, एम्बुलेंस, डाक्टर, पुलिस सारा कुछ देश में है। यह सब हालांकि जनता के लिए है लेकिन जनता का कोई उपकार नहीं होता। वे सब केवल माहवारी तनख्वाह लेने के लिए हैं। महीने के शुरू में ही वे हाथ में वेतन का पैसा आते ही निश्चिन्त हो जाते हैं। उससे अधिक किसी की कोई जिम्मेदारी न हो जैसे।

लेकिन कहावत है जिसका कोई नहीं, उसके लिए ईश्वर है। अचानक कहीं से वह ईश्वर ही वहां सशरीर उपस्थित हो गया। गाड़ी से जाने के दौरान वह फुटपाथ पर भीड़-भाड़ देखकर रुक गया और भीड़ के बीच संदीप का आधा चेहरा देखकर गाड़ी से उतर पड़ा। पूरी भीड़ को ठेलकर संदीप का पूरा चेहरा जब देखा तो बोल पड़ा, "अरे, इस भलेमानस को तो मैं पहचानता हूं। वे यहां पड़े हुए क्यों हैं ?"

बहुतों के चेहरे पर उम्मीद की एक रोशनी उभर आई। उन्होंने पूछा, "आप इन्हें पहचानते हैं ? इनका मकान कहां है ?"

वह सज्जन बोला, "मैंने इन्हें नेशनल यूनियन बैंक में नौकरी करते देखा है। वहां मेरा एकाउन्ट है—मुझे अक्सर वहां जाना पड़ता है।"

उसके बाद बोला, "फिलहाल मैं उसी बैंक में पहुंचा आ सकता हूं, इन्हें पकड़-कर आप लोगों में कोई मेरी गाड़ी पर रख दे सकते हैं..."

तत्क्षण कुछ आदमी उसे उठाने के लिए आगे बढ़ आए। उस सज्जन ने लोगों को धन्यवाद दिया। गाड़ी सामने की तरफ बढ़ गई।

उस सज्जन ने ड्राइवर से कहा, "चलो, श्याम बाज़ार—"

कोई आदमी जब किसी को अभिशाप देता है तो कहता है—तेरे घर में मामला मुकदमा घुसे ! दुनिया में इससे बढ़कर सज़ा की कोई कल्पना नहीं कर सकता, इसीलिए शायद यह कहावत चल पड़ी है। संदीप जब नौकरी में नहीं घुसा था तो उसने एक किताब में फ्रांसिस बेकन के बारे में एक बात पढ़ी थी। वे इतने बड़े विद्वान और ज्ञानी होने के बावजूद रिश्वत के एक मामले में फंस गए थे।

वे ही लिख गए हैं—There is no worse torture than the torture of law.*

यह बात पढ़कर संदीप ने काशीनाथ बाबू से पूछा था, "यह बात क्या सच है ?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "इससे बढ़कर सत्य दुनिया में और कोई नहीं है। हमारे देश के सुभाष बोस के प्रति जो न्याय किया गया है वह क्या उचित न्याय है ? सभी लोग यही कहते हैं कि महात्मा गांधी के कारण ही देश आज़ाद हुआ, यह क्या सच है ? कांग्रेस ने ही देश को स्वतन्त्र बनाया है या जिन्ना साहब ने ही स्वतंत्र बनाया है ? अदालत के जितने कानून हैं वे अंग्रेज़ों के द्वारा बनाए गए हैं। अभी देश में अंग्रेज़ नहीं हैं पर काले चमड़े के अंग्रेजों को तो वे इसी देश में छोड़ गए हैं।"

कहां से बात की चर्चा छिड़ी थी और कहां पहुंच गई थी ! सच, जीवन बड़ा ही जटिल है। और उससे भी जटिल है आदमी के द्वारा बनाया गया कोर्ट। विडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के घर जाकर संदीप यही बात सोचता। किसी दिन जब यह खानदान देवीपद मुखर्जी के ज़माने में उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुंच गया था उस समय उन्होंने क्या कल्पना की थी कि खानदान की तीसरी या चौथी पीढ़ी इस तरह के दुर्भाग्य के दलदल में फंस जाएगी ! सिर्फ सौम्यपद ही क्यों, मुक्तिपद ने भी क्या इसकी कल्पना की थी ? अपनी सैक्सबी मुखर्जी कंपनी को बचाने की उन्होंने जी-तोड़ कोशिश की थी। तमाम सरकारी, गैर-सरकारी प्रतिष्ठानों को उन्होंने दोनों हाथों से अनगिनत रुपये दिए थे, यूनियन के नेताओं को उन्होंने लाखों रुपया दिया था ताकि उनकी फैक्टरी यहां रह जाए। लेकिन अंततः अपनी फैक्टरी

---

* कानून से बदतर कोई यातना नहीं होती।

लेकर उन्हें क्यों पश्चिम बंगाल में जाना पड़ा ?

उस समय गोम्पन्द पर मुकदमा चल रहा था। एकमात्र पोता खून का मुजरिम है। इस वक्त दादी मां अगर घर के अंदर बिस्तर पर लेटी रहें तो मुकदमे की पैरवी कौन करेगा ? मुकदमे की पैरवी करनेवाले तो वकील-बैरिस्टर-सोलिसिटर हैं, लेकिन उनके पास कौन दौड़-धूप करेगा ?

उस समय दादी मां को आराम करने की फुर्सत नहीं थी। तब उन्हें तड़के उठकर गंगा-स्नान का नियम छोड़ना पड़ा था। इसके फलस्वरूप बिन्दु को जरा आराम मिला है। उसे रात साढ़े तीन बजे बिस्तर छोड़कर उठना नहीं पड़ता है। अब सवेरा होने में थोड़ी देर होती है।

लेकिन सवेरा अगर देर से शुरू होता है तो रात भी तो देर से होती है। अभी गिरिधारी को भी रात नौ बजे गेट बन्द नहीं करना पड़ता है। और-और नियमों की तरह यह नियम भी अब बन्द हो गया है। आजकल गिरिधारी गेट के सामने रात दस बजे तक और कभी-कभी ग्यारह बजे तक प्रतीक्षा में खड़ा रहता है।

गिरिधारी इस मकान में बहुत दिनों से है। बचपन में यहां मुलाजिम बनकर आया था। उसके बाद वह कितने ही कांड देख चुका है। अपनी आंखों के सामने ही इतिहास के पृष्ठ उलटते-पुलटते अब वह बुढ़ापे के कगार पर पहुंच चुका है। कब वह छुट्टी पर देस गया था, उसकी याद भी नहीं है उसे। जब-जब वह देस जाता तो बदले में दूसरा आदमी रख जाता। देस से आदमी आकर उसकी जगह काम करता और फिर देस लौट जाता। मात्र कुछ दिनों की छुट्टी मिलती उसे। उस छुट्टी के दौरान पत्नी से मुलाकात होती। कितने महीने, कितने सालों के बाद देस जाता। लेकिन वहां जाने पर भी उसे कलकत्ता की याद आती। बीच-बीच में अचानक आधी रात में उसकी नींद टूट जाती। नींद में वह सपना देखता, मुन्ना बाबू घर लौटकर बन्द दरवाजे के सामने खड़े हैं और वह अब भी सोया हुआ ही है।

नींद की जड़ता में ही गिरिधारी चिल्ला उठता—"हुजूर···"

गिरिधारी की चिल्लाहट से बगल में सोई उसकी पत्नी की नींद टूट जाती। वह गिरिधारी से कहती, "क्या हुआ है तुम्हें ? चिल्ला क्यों रहे हो ?"

पत्नी के धक्के से गिरिधारी की नींद टूट जाती। कहता, "हां···"

पत्नी कहती, "तुम नींद में इतना चिल्ला क्यों रहे थे ?"

पत्नी के गले की आवाज सुनकर गिरिधारी की समझ में आता कि वह अब तक सपना देख रहा था। उसकी समझ में आता कि वह कलकत्ता से छुट्टियों पर देस आया है और अपने घर में पत्नी की बगल में सोया हुआ है।

उसके बाद जब वह कलकत्ता वापस आता तो अपने बदले में रखे आदमी को उसका मेहनताना चुकाकर अपनी तिपाई पर बैठ जाता और जब रात गहराने पर सम्पूर्ण कलकत्ता में सन्नाटा तैरने लगता तो वह रामचरित मानस का सस्वर पाठ करता। लेकिन अब कलकत्ता पहले जैसा कलकत्ता न रहा और न ही मुखर्जी-परिवार की पहले जैसी हालत। कई पुराने नौकरों को काम से हटा दिया गया है।

पहले तड़के तीन-चार बजे दादी मां गाड़ी ले बिन्दु के साथ गंगा-स्नान करने जाती थीं। अब गंगा-स्नान पूरे तौर पर बंद हो गया है। उसके बदले सिंहवाहिनी

की पूजा के वाद ही दादी मां मैनेजर साहव के साथ वकील के घर जाती हैं। घर लौटते-लौटते रात के ग्यारह वज जाते हैं।

इसी वजह से गिरिधारी को इतनी रात तक जगना पड़ता है। दादी मां घर लौट आती हैं तो गिरिधारी को चैन की सांस लेने का मौका मिलता है। इसके वाद गिरिधारी अपने विस्तर पर जाकर लेट जाता है। गिरिधारी ने मैनेजर साहव से पूछा था, "अच्छा हुजूर, आपसे एक वात पूछूं?"

मुनीमजी ने कहा था, "कौन-सी वात?"

गिरिधारी ने कहा था, "मुन्नावावू पर तो मुकदमा चल रहा है—"

"हां-हां, चल रहा है। तुम क्या जानना चाहते हो?"

"मुन्ना वावू रिहा हो जाएंगे?"

मुनीमजी झुंझला उठे थे। वोले थे, "इसके लिए तुम मायापच्ची क्यों करते हो?"

"तुम्हारा काम है तनख्वाह पाना। तनख्वाह तो मिल गई, अव तुम जाओ। मालिकों के काम-काज में मेरे या तुम्हारे लिए उत्सुकता प्रकट करना ठीक नहीं है, जाओ—"

केवल गिरिधारी नहीं वल्कि मकान के दूसरे कर्मचारियों ने भी मल्लिकजी से यह सवाल किया है। सभी को अपना मासिक वेतन लेने के लिए मल्लिकजी के पास आना पड़ता है। घर के नौकर-चाकरों के अलावा मौका मिलने पर मुहल्ले के लोग भी मल्लिकजी से पूछते। मल्लिकजी जव कभी रास्ते से होकर जाते दो-चार जाने-पहचाने आदमी कहते, "क्या हालचाल है मैनेजर साहव?"

यह प्रश्न दरअसल इसके वाद पूछे जानेवाले प्रश्न की भूमिका का काम निभाता था।

उसके वाद ही वे असली प्रश्न पर उतर आते, "हां, यह तो वताइए कि आपके मकान के खून के मुकदमे का क्या हुआ? कुछ फैसला हुआ?"

मल्लिकजी की इच्छा होती कि पूछनेवाले के मुंह पर तमाचा जड़ दें। अपने मन के अंदर की छिपी इच्छा को दवाकर वाहर से सगे-सम्वन्धी और दोस्त-मित्रों के मुखौटे पहनकर अभिनय करनेवाले लोगों को मल्लिकजी कतई पसंद नहीं करते। वे उनके तमाम कुतूहल और प्रश्न का उत्तर एक ही वात में देते, "देखा जाए क्या होता है—"

मल्लिकजी हुक्म के नौकर थे। वहुत कुछ जानने और सीखने के वाद वे ज्ञानवान हो गए थे। इसके फलस्वरूप जव भी कोई पूछता तो वे कहते, "देखा जाए, क्या होता है—"

उतने वड़े खानदान, उतने पैसेवाले परिवार का होने के वावजूद जवकि उसका इतना वड़ा अध:पतन हो गया तो यह कहने के अलावा उनके लिए दूसरा उपाय ही क्या था! इसीलिए वे सवकी तमाम जिज्ञासाओं का एक ही उत्तर देते: देखा जाए क्या होता है—

या हो सकता है तव भी उन्हें उम्मीद थी कि मुखर्जी-परिवार के लोगों को अपना पहले का गौरव प्राप्त हो जाएगा। हो सकता है, सौम्यवावू को खून के मामले से रिहा कर दिया जाएगा और उसके वाद पहले से पसन्द की गई लड़की से

उनकी शादी करा दी जाएगी।

उस रात भी दादी मां और मुनीमजी काफी रात गुजरने के बाद वापस आए। उसके बाद सामने की सीट से मुनीमजी उतरे।

उस दिन गाड़ी से उतरने में रात काफी हो चुकी थी। और-और दिन वे रात के ग्यारह बजे तक ही घर लौटकर चले आते थे लेकिन उस दिन रात के बारह बज गए थे।

गाड़ी से उतरते ही दादी मां बोलीं, "हां, एक बात। आपको मनसातल्ला लेन की विशाखा नामक लड़की की कोई खबर मिली?"

मल्लिकजी ने कहा, "नहीं, उसके बाद पता लगाने का समय ही नहीं मिला। इस मुकदमे के काम में ही व्यस्त रहा।"

दादी मां ने कहा, "बीच में एक दिन कोर्ट बन्द रहेगा। उस दिन हमें नहीं जाना है। उसी दिन आप जाकर मिल आएं।"

मल्लिकजी बोले, "हां, मैं सवेरे की ट्रेन से ही बेड़ापोता के लिए निकल पड़ूंगा।"

"हां, यही कीजिए।"

उसके बाद बोले, "मैं एक और काम कर सकता हूं?"

"क्या?"

"मुझे कलकत्ता में ही इसकी जानकारी प्राप्त हो सकती है।"

"कलकत्ता में कैसे जानकारी प्राप्त होगी?"

"वह नौजवान संदीप लाहिड़ी, जो मेरे साथ काम करता था, आजकल कलकत्ता के एक बैंक में ही नौकरी करता है। मैं उसके बैंक में भी जाकर उससे मिल सकता हूं। तीसरे पहर पांच बजे बैंक में छुट्टी होने के पहले ही उससे मिल आऊंगा। उसे क्या कहना होगा?"

"कहिएगा कि उस लड़की की शादी अभी न करे। और कुछ दिनों तक शादी रोके रहे।"

यह कहकर दादी मां दो-मंजिले की सीढ़ियां चढ़कर ऊपर चली गईं। मुनीमजी भी अपने कमरे की तरफ जा रहे थे। गिरिधारी लंबे डग भरते हुए उनके पास आया। उसे देखकर मल्लिकजी ने कहा, "क्या गिरिधारी कुछ कहना है?"

गिरिधारी बोला, "एक बात कहनी है हुजूर…"

मल्लिकजी ने कहा, "क्या कहना है, कहो।"

गिरिधारी ने धीमे स्वर में कहा, "मुन्ना बाबू को क्या फांसी दे दी जाएगी हुजूर?"

मुनीमजी ने कहा, "क्यों, तुम यह बात क्यों कह रहे हो? तुमसे किसी ने कुछ कहा है क्या?"

गिरिधारी उधेड़-बुन में पड़ गया। मुनीमजी ने कहा, "कहो न, इतना डर क्यों रहे हो? बताओ, तुमसे किसने कहा है?"

गिरिधारी ने कहा, "मैं उन्हें पहचानता नहीं हूं बाबूजी। वे लोग राहगीर थे, यहां से जाने के दौरान वे आपस में बातचीत कर रहे थे कि इस मकान के एक युवक ने अपनी पत्नी का खून कर डाला है, इसलिए उसे फांसी की सजा दी

जाएगी—"

मुनीमजी बोले, "उन बातों पर तुम कान मत दो गिरिधारी। तुम अपना काम करो। सिर के ऊपर भगवान हैं, वे जो करेंगे, वही होगा। तुम या मैं कोई नहीं हैं, हम वेतन लेते हैं, काम करते हैं, जिस दिन नौकरी चली जाएगी, हम भी चले जाएंगे। हममें से कोई हमेशा के लिए रहने नहीं आया है। एक दिन हम सबों को चले जाना है—इस बात को याद रखना···"

"यह तो सही बात है।" यह कहकर गिरिधारी अपने कमरे की ओर चला गया।

मल्लिकजी भी अपने कमरे की ओर चले गए। लेकिन हर दिन की तरह उस दिन भी सौम्य बाबू की बातें जेहन में चक्कर काटती रहीं। उस दिन जज साहब की अनुमति ले दादी मां के साथ जेल की हवालात में सौम्य बाबू से मिलने गए थे।

बहुत दरख्वास्त करने के बाद उससे मिलने की अनुमति मिली थी। कितने दिन बाद पोते के रूबरू होंगी—दादी मां दोपहर से ही यह बात सोच रही थीं। मल्लिकजी से ही ऐन मौके पर तैयार रहने को कहा था। सिर्फ आधे घंटे के लिए मुलाकात होगी। उसी के दरमियान इतनी बातें खत्म होंगी? मुन्ना उन बातों का जवाब ही क्या देगा?

तो भी दोनों गए थे। ठीक दो बजे मुलाकात होने की बात थी। कहीं देर न हो जाए इसलिए पहले ही जाना बेहतर रहेगा। लिहाजा दोपहर बारह बजे ही मल्लिकजी को ताकीद कर दी गई। बिन्दु बारह बजे आकर ही दादी मां का हुक्म सुना चुकी थी। कहा था, "आप तैयार हैं न मैनेजर साहब?"

मल्लिकजी दादी मां की मनोदशा से अवगत थे। इतने दिनों के बाद पोते से मुलाकात होगी, अतः उनके अंदर व्यस्तता रहना स्वाभाविक है। कहा था, "हां, दादी मां से जाकर कह दो कि मैं तैयार हूं—"

केवल उन्हें नहीं, अरविन्द को भी तैयार रहने को कहा गया। वह भी गाड़ी लिए तैयार होकर बैठा था। तो भी बिन्दु निश्चिन्त नहीं हुई थी। कहा था, "गाड़ी में पेट्रोल भरा हुआ है न? अच्छी तरह देख लो।"

अरविन्द ने कहा, "हां, पेट्रोल भर लिया है—"

मगर साढ़े बारह बजे बिन्दु दुबारा आई। बोली, "आप तैयार हैं न मैनेजर साहब?"

इस बार भी मल्लिकजी ने कहा, "हां-हां, मैं तो बता ही चुका हूं कि मैं तैयार हूं। तुम जाकर दादी मां को बता दो।"

मल्लिकजी समझ गए थे कि दादी मां असल में अपने पोते से मिलने की व्यस्तता के कारण अपनी विकलता संभाल नहीं पा रही हैं। कभी एक शमीज पहनती हैं तो फिर उसे उतारकर दूसरी शमीज पहनती हैं। बगल में खड़ी बिन्दु सबकुछ को देख रही थी। दादी मां फिर बोलीं, "अरी बिन्दु, एक बार जाकर देख आ कि मैनेजर साहब तैयार हैं या नहीं—"

उस समय दोपहर का एक भी नहीं बजा था, पर दादी मां बिन्दु के साथ नीचे चली आईं। मल्लिकजी कमरे के बाहर खड़े होकर इंतजार कर रहे थे। बिन्दु और दादी मां गाड़ी के पीछे की सीट पर बैठ गईं और मल्लिकजी अरविन्द की बगल में।

जब गाड़ी जेल के पास पहुंची तो दोपहर के डेढ़ बज रहे थे। मल्लिकजी गाड़ी से उतर चारो तरफ चहलकदमी करने लगे। साथ में कोर्ट का ऑर्डर और जेलर का पत्र है। कोई कुछ सुनने को तैयार नहीं। सभी व्यस्त हैं। यह कहता है वहां जाइए, वह कहता है यहां जाइए। आखिर में जब अंदर जाने की इजाजत मिली तब दो बजकर पांच मिनट हो चुके थे। दादी मां तब मन ही मन मल्लिकजी पर झुंझला उठी थी। कोई भी काम के लायक नहीं। जैसे पांच मिनट की देर होने के जिम्मेवार मल्लिकजी ही हों। काफी रास्ता तय करने के बाद जब पहुंचे तो वहां सौम्य बाबू दूसरी तरफ खड़े थे और इस तरफ थे मल्लिकजी, दादी मां और बिन्दु।

सौम्य को देखकर दादी मां हैरत में आ गईं। बोली, "रा यह कैसा चेहरा हो गया है मुन्ना?" यह कहते-कहते वे रोने लगी।

सौम्य का चेहरा तब दाढ़ी-मूछों से भरा था। चेहरा सूखकर बिलकुल दुबला गया है। वह भी दादी मां को देखकर रो पड़ा।

"बेटा, तुझे यहां भर-पेट खाना दिया जाता है?"

यह कहकर सींखचों के अन्दर हाथ डालकर सौम्य के गाल पर के आंसू पोंछने लगीं।

"क्यों, कुछ बोल क्यों नहीं रहा है? कुछ तो बोल।"

सौम्य क्या बात करे, वह और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

"ये लोग तुझे खाना देते हैं?"

सौम्य ने सिर हिलाया।

दादी मां ने कहा, "बहुत दिनों से तुझे नहीं देखा था मुन्ना। मालूम है, तेरे बारे में सोचते रहने के कारण रात में मुझे नींद नहीं आती है। आज इतने दिनों के बाद तुझे देखा और तू चुपचाप है? तू ज़रा बातचीत कर—"

फिर भी सौम्य के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला।

दादी मां सींखचों के अन्दर हाथ घुसाकर सौम्य के दोनों हाथ कसकर पकड़े हुए हैं। बोलीं, "इतना दुबला कैसे हो गया बेटा? रात में नींद आती है?"

सौम्य ने दुबारा अपना सिर हिलाया।

दादी मां बोली, "नींद नहीं आती है? क्यों, नींद क्यों नहीं आती है? चिन्ता से?"

सौम्य ने फिर अपना सिर हिलाया।

दादी मां ने कहा, "फिर ऐसा काम क्यों किया बेटा? किसने तुझे ऐसा करने कहा था? उस चुड़ैल से शादी ही क्यों की?"

सौम्य ने अबकी भी किसी बात का जवाब नहीं दिया।

"तू चिन्ता मत करना बेटा। तेरे लिए मैंने कलकत्ता का सबसे बड़ा वकील ठीक किया है। तेरे लिए लाखों रुपये खर्च किए हैं। तू चिन्ता मत करना। तेरे लिए अपनी पूरी जायदाद बेचकर मुकदमा लड़ूंगी। तू सोच-सोचकर तबीयत मत खराब कर।"

उसके बाद सौम्य की आंखें अपने हाथ से पोंछ दीं।

बोली, "तेरे बारे में सोचते रहने के कारण मुझे नींद नहीं आती। अब की

जेल से बाहर निकल आएगा तो एक अच्छी-सी लड़की से तेरी शादी करा दूंगी। जन्मपत्री मिलाकर, राज पोटक दिखाने के बाद ही तेरी शादी करूंगी। तेरे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं है मुन्ना, चिन्ता की कोई बात नहीं। मैं हूं ही। मैं अब तक मरी नहीं हूं—"

इतनी सारी बातें कहने के बावजूद सौम्य के मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। जैसे वह कान से कुछ सुन न पा रहा हो, उसके मुंह से जैसे कोई आवाज़ नहीं निकल रही हो। सिर्फ आंखों से अनवरत आंसू की बूंदें टपक रही हैं।

"तू एक भी शब्द नहीं बोलेगा? तो फिर तुमसे मिलने की इतनी कोशिशें क्यों कीं? तेरे सिवा आज मेरा कोई नहीं है। तेरा चाचा मुझे छोड़कर बाहर चला गया। जाने के पहले मुझसे एकबार मिला तक नहीं। दरअसल अभी आमदनी भी बन्द हो गई है। मैं क्या करूं, बताओ तो! तू अगर इस तरह चुप्पी साधे रहेगा, तो मैं कैसे ज़िन्दा रहूंगी, क्या लेकर ज़िन्दा रहूंगी? किसकी उम्मीद में कलेजे में हिम्मत बांधकर घर-गृहस्थी चलाऊं? तेरे सिवा मेरा और कोई नहीं है—"

सौम्य अब भी पत्थर की मूरत की नाई खड़ा है और उसकी आंखों से झर-झर आंसू की बूंदें गिर रही हैं।

अब पुलिसकर्मी आगे बढ़कर आया। बोला, "आधा घंटा बीत चुका है, अब आप चली जाएं माताजी। अब वक्त नहीं दिया जाएगा—"

दादी मां ने अनुनयभरे स्वर में कहा, "और थोड़ा-सा वक्त दो सिपाही जी, देख रहे हो न, यह मेरे खानदान का एकमात्र चिराग है, इसके अलावा मेरा कोई नहीं है बेटा—"

पुलिसकर्मी बोला, "अब वक्त नहीं दिया जाएगा माताजी। आधा घंटा हो चुका है, मेरी नौकरी चली जाएगी।"

"रहम करो बेटा!" यह कहकर दादी मां ने मल्लिकजी की ओर देखते हुए कहा, "मैनेजर साहब, सिपाही जी को दो रुपया दे दीजिए।"

पुलिसकर्मी बोला, "नहीं माताजी, मैं रिश्वत नहीं लूंगा, मेरी नौकरी चली जाएगी। आप लोग यहां से चले जाइए, जाइए—"

यह कहकर हाथ की लाठी उठानी चाही। और तभी सौम्यपद लोहे की सलाखों के पीछे से शेर की तरह चिल्ला उठा, "ऐ सूअर का औलाद, खबरदार! संभलकर बात कर—"

अब तक जिस आदमी के मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला था, अचानक उसका नीला रक्त क्यों गरम हो गया, कौन जाने! पुलिसकर्मी मुजरिम के इस आकस्मिक व्यवहार से हतप्रभ हो गया। उसने कोई उपाय न देखकर अपने पॉकेट से एक सीटी निकालकर बजा दी और उसके बाद ही जेल के अन्दर उथल-पुथल मच गई। तत्क्षण कहीं से किसी ने जेल की पगली घंटी बजा दी और बहुत सारे हथियारबन्द सिपाही वहां आकर इकट्ठे हो गए। दादी मां, बिन्दु और मल्लिकजी आतंकग्रस्त होकर वहीं खड़े रहे। अन्दर से किसी ने आकर सौम्य बाबू के हाथ हथकड़ी पहना दी और उन्हें पकड़कर अन्दर ले गया। उसके बाद उन पर फिर नज़र नहीं पड़ी।

समझे-भर में एक ऐसी वारदात हो गई कि दादी मां और मल्लिकजी ठगे से रह गए। शुरू में दादी मां के मुंह से ही आवाज निकली, "चलिए मैनेजर साहब, हम लोग यहां से बाहर चले जाएं।"

इसके बाद तीनों हाईकोर्ट के वकील के चेम्बर की ओर चले गए। वहां से निकलकर दूसरे व्यक्ति के चेम्बर में चले गए। वहां भी काफी देर हो गई। उसके बाद जब रात में घर लौटे तो ग्यारह बज रहे थे।

खाना खाकर मल्लिकजी जब बिस्तर पर लेटने गए तो रात के लगभग बारह बज चुके थे। नींद आने के पहले भी सौम्य का वह चेहरा उनकी आंखों के सामने तैरता रहा। कभी आंसू से भरा हुआ चेहरा और कभी आक्रोश से तमतमाया चेहरा। क्यों ऐसा हुआ? फिर क्या इसकी जड़ में रुपया-पैसा है? आदमी की दुनिया में जब रुपये-पैसे की चाह ही एकमात्र लक्ष्य हो जाती है तो उस समय वह रुपये के अलावा तमाम वस्तुओं का तिरस्कार करने लगता है—इंसानियत और सारी अपार्थिव वस्तुओं का तिरस्कार करने लगता है। और तभी संभवतः उसकी हालत सौम्यपद जैसी होती है। जो लोग पैसा कमाने को ही जीवन का श्रेष्ठतम कार्य समझते हैं वे ही शायद अन्त में सौम्यपद जैसे हो जाते हैं··· इसी तरह हरेक व्यक्ति सौम्यपद बनकर रोता है और असमर्थ की नाईं क्रोध का शिकार होता है···

दिन-भर के अथक परिश्रम के बाद मल्लिकजी गहरी नींद की बांहों में सो गए।

उस दिन संदीप की जब पहले-पहल आंख खुली तो उसकी नजर करमचंदजी पर पड़ी। देखा, उसके बैंक के मैनेजर उसकी ओर ताक रहे हैं।

सदीप ने पूछा, "मैं कहां हूं···?"

वहां सिर्फ करमचंदजी ही नहीं, बल्कि बगल में एक डाक्टर भी था। एक नर्स भी। संदीप ने देखकर महसूस किया कि वह या तो किसी अस्पताल या नर्सिंग होम में है।

बोला, "मुझे अस्पताल क्यों ले आए हैं? मुझे क्या हुआ है?"

करमचंदजी बोले, "तुम चुपचाप पड़े रहो।"

तो भी संदीप ने दुबारा पूछा, "मैं कहां···"

संदीप के सवाल का किसी ने जवाब नहीं दिया। जैसे वे लोग डरे हुए हों, परेशान और सतर्क हों।

अब डाक्टर बोला, "ठीक है, अब मैं चलता हूं।"

नर्स ने आगे बढ़कर कहा, *"इसे खा लीजिए।"*

संदीप ने कुछ बोले बगैर नर्स के द्वारा दी गई चीज खा ली।

अब करमचंदजी बगल में आकर खड़े हुए और बोले, "अब मैं चलता हूं साहिब, ऑफिस में मेरा बहुत सारा काम बाकी है।"

संदीप ने कहा, "बताइए न, मैं यहां कैसे आया, इस अस्पताल में···?"

करमचंदजी ने कहा, "आप जिन्दा बच गए, यही काफी है। हम लोग सभी

बहुत डर गए थे···"

"मुझे क्या हो गया था?"

करमचंदजी ने कहा, "आप सड़क पर बेहोश होकर पड़े हुए थे। एक सज्जन अपनी गाड़ी में आपको उठाकर हमारे बैंक पहुंचा गए थे। संयोग ही कहिए कि आप ज़िन्दा बच गए—आप चिंता मत कीजिए, मैंने आपके घर पर खबर भेज दी है—"

इतनी देर बाद रफ्ता-रफ्ता उसे सारी बातें याद आने लगीं। डाक्टर के चेम्बर से निकलते ही उसका दिमाग चकराने लगा था। एक आदमी ने उसे पकड़ न लिया होता तो संभवतः वहीं गिर पड़ता। उसके फलस्वरूप वह गाड़ी से दबकर मर गया होता। लेकिन उसका दिमाग क्यों चकराने लगा था, यह कोई नहीं जानता। उसके जैसे गरीब आदमी के लिए डाक्टर की बीस हज़ार रुपये की मांग की पूर्ति करना क्या कम दुश्चिन्ता की बात है! कहां की किस मौसीजी की बीमारी के लिए बीस हज़ार रुपये की ज़िम्मेदारी उसे अपने कंधे पर उठानी है। और अगर ज़िम्मेदारी उठानी ही है तो वह कहां से इतने रुपयों का इंतज़ाम करेगा? और अगर किसी से कर्ज़ लेता है तो कहां से वह कर्ज़ चुकाएगा?

नर्स फिर आई। बोली, "एक महिला आपसे मिलना चाहती है, उसे आने दूं?"

संदीप ने कहा, "महिला? वे कौन हैं?"

नर्स बोली, "वे तीन दिन से यहीं हैं।"

"तीन दिन से यहीं हैं? मैं यहां तीन दिन से हूं?"

नर्स बोली, "आज का दिन जोड़ा जाए तो आप सात दिनों से यहीं हैं···"

"सात दिन?"

नर्स बोली, "चार-पांच दिन के बाद खबर मिलते ही वे यहां चली आई हैं। यहां वे नर्सों के क्वार्टर में हैं। तीन दिनों से उन्होंने खाना-पीना-सोना बन्द कर दिया है, हर वक्त आपके बारे में ही पूछती रहती हैं···डाक्टर साहब ने उन्हें मरीज के पास आने से मना कर दिया था। उन्हें आने कहूं? अभी आपकी तबीयत कुछ ठीक है, इसलिए डाक्टर साहब ने आने की इजाजत दी है—"

संदीप ने कहा, "हां-हां, उन्हें आने कहिए। मुझे ठीक से समझ में नहीं आ रहा है···"

उसके बाद कमरे के अन्दर जो महिला आई उसे देखकर संदीप चौंक उठा।

"तुम?"

विशाखा के चेहरे पर भय की छाप है। विशाखा का यह कैसा चेहरा हो गया है!

संदीप उत्तेजना में आकर उठने जा रहा था, लेकिन विशाखा ने करीब आकर उसे रोक दिया। बोली, "उठो मत, उठो मत, लेटे रहो—"

संदीप बोला, "तुम तीन दिन से यहां बिना खाए-पीए और सोए पड़ी हुई हो और किसी ने मुझे इसकी सूचना नहीं दी।"

विशाखा ने संदीप के दोनों हाथों को पकड़कर कहा, "तुम उठकर मत बैठो, लेटे रहो—"

संदीप ने बैठे-बैठे कहा, "सुना तुम तीन दिन से यहां हो, मुंह में एक भी दाना नहीं डाला है और न ही सोई हो। बात क्या है?"

विशाखा बोली, "तुम बीमार हो, बीमारी की हालत में बेहोश पड़े हुए थे और मैं खाना खाऊं और सोऊं? यह तुम क्या कह रहे हो!"

संदीप बोला, "लगता है, तुम मुझे असमय रुलाए बगैर छोड़ोगी नहीं—"

विशाखा संदीप के सिर को अपने हाथ से सहलाती हुई बोली, "तुम गुस्सा मत करो, तुम्हारे सिवा हम लोगों का कौन है? तुम्हारे बैंक के मैनेजर का पत्र न मिला होता तो हमें पता ही नहीं चलता कि तुम इस मुसीबत में हो। उस पत्र के मिलते ही मैं भागी-भागी आई हूं।"

"लेकिन मेरा तो ऑफिस है, वहां के लोगों ने मुझे जिन्दा रखा है। लेकिन तुम? तुम बीमार हो जाओगी तो कौन देख-रेख करेगा?"

अचानक एक नर्स ने प्रवेश किया और बोली, "अब नहीं, टाइम ओवर हो चुका है। अब आप जाइए—"

संदीप ने कहा, "उसे और थोड़ी देर रहने दीजिए न—"

नर्स बोली, "नहीं, मेट्रॉन आ गई हैं, वे देख लेंगी तो एतराज करेंगी—"

यह कहकर नर्स विशाखा को अपने साथ लेकर चली गई। जाने के दौरान संदीप से कहा, "आप लेट जाइए, मैं थर्मामीटर ले आती हूं। मेट्रॉन आकर फिवर-चार्ट देखना चाहेंगी।

किसी ने कभी कहा था—अतीत केवल स्मृति और भविष्य सपना है। जेलखाने में बैठे-बैठे संदीप ने इस बात का अर्थ साफ तौर पर समझा था। समझा था कि उसके सामने जो भविष्य है वह सपने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। हां, केवल सपना। सपने का अर्थ ही है असत्य। मिथ्या। वह सपना सच भी हो सकता है और नहीं भी हो सकता है। लेकिन अतीत?

जो लोग उम्रदार हो चुके हैं उनके लिए अतीत से बढ़कर और कोई सच नहीं है। वह अतीत कभी उसे हंसाता है, कभी रुलाता है और कभी सोचने को बाध्य करता है। जेल के अन्दर जो वार्डर संदीप की देखरेख करता वह भी उसे देखकर बीच-बीच में अवाक् हो जाता। पूछता, "मैनेजर साहब, आज आपने कुछ भी क्यों नहीं खाया? खाना क्या अच्छा नहीं पका है?"

संदीप को वह आदमी 'मैनेजर साहब' कहकर संबोधित करता। उसने सुना था, यह कैदी किसी बैंक का मैनेजर रह चुका है। नब्बे लाख रुपये की हेरा-फेरी के अपराध में मुजरिम बनकर जेल की सजा भुगत रहा है। यह जानने के बावजूद वह संदीप की बेहद खातिरदारी करता। वह कहता, "आपसे एक बात पूछूं मैनेजर साहब?"

संदीप कहता, "जो पूछना है, पूछो।"

वह कहता, "सुना है, आपने बैंक के रुपये की हेराफेरी की थी। लेकिन मुझे इस बात पर यकीन नहीं होता। आप जैसा भला आदमी यह काम कर ही नहीं सकता। मैं इतने दिनों से इतने आदमी को देखता आ रहा हूं—"

संदीप को यह सुनकर बड़ा ही मजा आता। कहता, "क्यों, बताओ तो? मैं क्या देखने में दूसरी तरह का लगता हूं?"

वह आदमी कहता, "हां, दूसरी तरह के। चोर, गुंडा, नशाखोर, भला आदमी कोई भी ऐसा नहीं है जिसे मैंने न देखा हो। मैंने कितने ही कैदियों को बाहर से शराब और अफीम खरीदकर लाकर दी है। कितनी ही चिट्ठियां और चिट्ठियों का उत्तर बाहर से लाकर दिया है लेकिन यह पहली बार देख रहा हूं कि आप उस किस्म के नहीं हैं। सो आपने कैसे रुपये का गबन किया यह मामला मेरी समझ में नहीं आता—"

संदीप इसका क्या उत्तर दे! बोला, "आदमी पहचानना यदि इतना सहज होता तो फिर चिन्ता की कोई बात ही नहीं रहती सहदेव—"

वार्डर का नाम सहदेव है। सहदेव से संदीप बहुत घुलमिल गया था। सहदेव ने बहुत बार बहुत तरह के लोभ दिखाए थे संदीप को। बाहर से बहुत सारी वर्जित वस्तुएं अंदर ले आने का प्रस्ताव भी रखा था लेकिन संदीप ने हमेशा मना कर दिया था, "मैं गरीब आदमी हूं सहदेव, तुम मुझे यह सब लोभ मत दिखाओ—"

"आप कहें तो मैं आपके लिए विदेशी शराब भी ला दे सकता हूं मैनेजर साहब। आपको उसके लिए पैसा खर्च नहीं करना होगा।"

संदीप ने कहा था, "मैं बड़े आदमी का बेटा नहीं हूं सहदेव, मैंने जिन्दगी में कभी किसी तरह की विलासिता नहीं की है—मैं बहुत गरीब हूं। मेरे लिए तुम्हें कुछ स्पेशल नहीं करना है।"

सहदेव ने कहा था, "तो फिर आपने बैंक के नब्बे लाख रुपये का जो गबन किया है, वह झूठी बात है?"

संदीप ने कहा था, "नहीं, यह झूठ नहीं है, मैंने गबन किया है।"

"लेकिन आपको देखने पर तो ऐसा नहीं लगता।"

संदीप ने हंसकर कहा था, "यही तो मज़े की बात है सहदेव। आदमी का चेहरा देखकर उसकी पहचान हो जाती तो फिर दुनिया में इतनी गड़बड़ी ही नहीं रहती। सरकार को भी इतने सारे वकील-बैरिस्टर, जज-मैजिस्ट्रेटों की बहाली नहीं करनी पड़ती।"

इस बात से सहदेव खुश नहीं हुआ था। खुश होने जैसी बात भी नहीं थी। उसने अपनी सहज बुद्धि से जो कुछ अनुमान लगाया था वही कहा था। और सहदेव से कहने से ही क्या होगा, दुनिया के तमाम लोग मूर्त्तिमान सहदेव ही हैं। जिन लोगों ने मुक्तिपद मुखर्जी को कलकत्ता से खदेड़ दिया, हज़ारों आदमी को बेरोजगार बना दिया वे खुद ही क्या जानते थे कि मुक्तिपद मुखर्जी की सैबसबी एंड मुखर्जी कंपनी को देश से खदेड़ कर वे अपने लिए ही कब्र खोद रहे हैं?

तमाम आदमी को हमेशा के लिए बेवकूफ बनाकर नहीं रखा जा सकता। किसी न किसी दिन कोई आदमी उस धोखाधड़ी को पकड़ लेगा। उस वक्त? उस वक्त मूल और ब्याज के साथ सिर्फ उसे ही नहीं बल्कि संपूर्ण देश और जाति को उसका कर्ज़ चुकाना पड़ेगा। इतिहास तो यही बताता है। लार्ड क्लाइव के 1757 ई० के पाप का कर्ज़ 1947 ई० के 15 अगस्त को लार्ड माउंटबेटन को चुकाना पड़ा था। और उसी पाप का फल अब भी ग्रेट ब्रिटेन को भोगना पड़ रहा

है, अमरीका की दुम बनकर।

एक दिन जिन लोगों ने 'मंगलवी और मुखर्जी' को पश्चिम बंगाल से सुदूर मध्य प्रदेश के इंदौर शहर में भेज दिया वे किसकी दुम बनेंगे, यह अब भी कोई देख नहीं पा रहा है। मगर इतिहास किसी दिन उनके पाप का भी बदला लेगा।

उस दिन दादी मां यही सोच रही थीं। जीवन के शुरुआती दिनों में उनके सामने यह समस्या नहीं थी। जिन्दगी के आखिरी दौर में उन्हें यह क्यों सहना पड़ रहा है?

मुक्तिपद तब रोजना मां को देखने नहीं आ पा रहे थे। मां उस समय भी कहतीं, "तू चला जाएगा तो मैं मुन्ना के मुकदमे के सिलसिले में कैसे दौड़-धूप करूंगी?"

मुक्तिपद कहते, "मेरे चले जाने से भी तुम्हें किसी असुविधा का सामना नहीं करना होगा मां। मैं नीरद बाबू को सारा कुछ कह-सुन आया हूं। इंदौर जा रहा हू तो इसका मानी यह नहीं कि मुझे कलकत्ता नहीं आना है। भारत में व्यवसाय करना है तो जिस तरह दिल्ली जाना होगा उसी तरह बंबई, मद्रास और कलकत्ता भी आना है। एकबार वहां जाकर फैक्टरी को चालू कर दूंगा तो इंदौर में हमेशा न रहने से भी काम चल जाएगा।"

मां की समझ में आया कि नहीं, इसका पता नहीं चला।

मां ने कहा, "तू जो अच्छा समझे वही कर। मैं तो कोई नहीं हूं, मुझसे तू कुछ कहने मत आना।"

मुक्तिपद समझ गया, यह सब अभिमान की बात है। बोला, "मां तुम न समझोगी तो मैं कहां जाऊंगा! किसके सामने जाकर खड़ा होऊंगा?"

अब मां को गुस्सा आ गया। बोली, "तू अपनी औरत के पास जा, वह जो कहेगी, वही करना। मेरे पास तू क्यों आता है?"

मुक्तिपद ने कहा, "शादी तो मैंने खुद नहीं की है, तुम्हीं लोगों ने मेरी शादी कराई है—"

मां ने कहा, "जा, तू अभी चला जा। अभी यह सब सुनने का मेरे पास वक्त नहीं है। मैं मर जाऊंगी तो तुझे खबर भेज दी जाएगी। उस वक्त यदि मर्जी होगी तो श्राद्ध करना और न होगी तो मत करना।"

यह कहकर उठकर खड़ी हो गईं। बोलीं, "मैं अभी चलती हू, मुझे बहुत काम है। तू चला जा—"

मुक्तिपद उठकर खड़े हो गए। गाड़ी पर बैठने के बाद मुक्तिपद ने महसूस किया, वे एक बिलकुल तनहा आदमी हैं। उनके लिए मां ही एकमात्र संगी थीं। वही मां अगर विमुख हो जाती तो उनके लिए क्या बाकी बचा रहेगा? नंदिता रहने के बावजूद कोई नहीं है। वह अपनी दुनिया में मगन रहे। वहां मुक्तिपद के लिए कोई स्थान नहीं है। पिकनिक भी बड़ी हो चुकी है। अब उसके लिए भी मुक्तिपद की आवश्यकता समाप्त हो गई है। हालांकि मुक्तिपद के कारण ही वे दोनों अब तक बचे हुए हैं, उन्हीं के कारण वे अपनी दुनिया में गौरव के साथ सिर ऊंचा किए टिकी हुई हैं। लेकिन इस बात को वे आज भी स्वीकार नहीं करतीं। नागराजन बीच-बीच में कलकत्ता आता है फिर इंदौर चला जाता है। इंदौर में वे

लोग नई फैक्टरी बिठा रहे हैं। बीच-बीच में मुक्तिपद भी वहां जाते हैं।

मुक्तिपद जाकर स्थिति का जायजा लेते हैं। नागराजन पर ही उन्होंने सारे काम की जिम्मेदारी थोप दी है। जब तक घर के बाहर रहते हैं तभी तक उन्हें सुकून का अहसास होता है। जब कलकत्ता में रहते हैं और वेलुड़ की पुरानी फैक्टरी के पास जाते हैं तो उसके अहाते की तरफ नज़र दौड़ाते ही उनकी आंखें भर आती हैं। लेकिन वे इस फैक्टरी के मालिक हैं, उन्हें रोना नहीं चाहिए। उन्हें रोते देखेंगे तो लोग खिल्ली उड़ाएंगे, खुश होंगे। सिर्फ अपने घर के लोग ही नहीं, पूरा देश उनका दुश्मन बन बैठा है। आसपास के मकानों में रहनेवाले खिड़की से उनकी ओर निहारते हैं। जो लोग उनकी ओर निहारते हैं, हो सकता है वे अन्दर ही अन्दर खुश होते होंगे। उनमें से बहुतेरे लोग अपने स्वजनों के लिए एक दिन नौकरी की मांग करने आए थे। नौकरी न पाने के कारण बहुत सारे लोग मुक्तिपद से नाराज़ थे। लेकिन अपनी नाराज़गी उस वक्त मुंह से ज़ाहिर नहीं कर सके थे। आज वे मुक्त मन से मुक्तिपद का पतन देखकर प्रसन्न हैं।

मुक्तिपद जब काम-काज की निगरानी करने आते हैं तो वे दूर से उन्हें देखते हैं। सामने अलबत्ता वे कुछ नहीं कहते। किसी बंगाली परिवार का पतन हुआ है, यह देखकर वे मन ही मन खुश हैं। कहते हैं, "अच्छी गत बनी है सालों की? उस समय जितना अहंकार था अब उतनी ही दुर्गति हो रही है।"

एक बंगाली दूसरे बंगाली की बर्बादी देखकर जितना खुश होता है, यहां भी यही हुआ। मुहल्ले के दो-चार बड़े बुजुर्ग इकट्ठे होते ही इसी के संदर्भ में चर्चा होती। एक पड़ोसी से दूसरे पड़ोसी की मुलाकात होती तो यही बात छिड़ जाती है।

मुहल्ले के वृद्ध बुजुर्ग घोपालजी सड़क पर सरकार को जाते देखते तो पुकारते, "ओ सरकारजी किधर जा रहे हैं?"

सरकार ने पीछे से खुद को पुकारते देखा तो रुक गए। बोले, "ज़रा बाज़ार की तरफ जा रहा हूं—"

घोपालजी बोले, "मुखर्जियों की कंपनी का हालचाल देख रहे हैं न—"

सरकार बोले, "मैं तो देख ही रहा हूं, अब आप लोग देखिए—"

घोपालजी बोले, "मैं तो पहले ही देख चुका हूं, अब आपको देखने कह रहा हूं। मैंने जब पहले-पहल कहा था तो सब मेरी बात की खिल्ली उड़ाते थे, अब क्या हुआ? गरीब की बात बासी होने पर फलती है, ताज़ी रहती है तो फलती नहीं।"

सरकार ने कहा, "अजी जनाब, अहंकार का पतन किसी न किसी दिन होता ही है, यह बात हमने बचपन में ही पढ़ी है। उस समय हम कहते थे, इतना तनकर मत चलो, लुढ़ककर गिर पड़ोगे। आखिर में यही हुआ।"

जितने भी दिन बीतते जाते, फैक्टरी की एक-एक मशीन खोली जाती। विराट् आकार के कल-पुर्जे आते। कान फाड़नेवाली आवाज़ से पूरा मुहल्ला बेजान जैसा हो जाता।

उस समय कुछेक अजनबी आते। वे दूर खड़े होकर देखते। मन ही मन हिसाब लगाते कि इस ज़मीन को कितने लाख रुपये में खरीदने से कितना फायदा हो सकता है।

कभी-कभी मिस्टर मुखर्जी के बेलुड़ स्थित भवन में आकर पता लगाते कि वे कलकत्ता में हैं या नहीं। मकान का दरवान कहता, "साहब घर पर नहीं हैं।"

वे लोग पूछते, "साहब कब आएंगे?"

दरवान कहता, "मालूम नहीं।"

"कहां गए हैं?"

"जी, वह भी मालूम नहीं।"

दरवान मासिक वेतन पाने वाला कर्मचारी है। उसे सिर्फ इतना ही मालूम है कि उसकी ड्यूटी क्या है। ड्यूटी है घर पर पहरा देना। उससे अधिक जानने का उसे अधिकार भी नहीं है।

जब वह एक दिन नौकरी में दाखिल हुआ था तब से आज तक एक लंबा, बहुत लंबा अरसा गुजर चुका है। वह जिन्दगी-भर घर की पहरेदारी ही करता आ रहा है। विडन स्ट्रीट के गिरिधारी की तरह वह भी घर पर पहरा देता आ रहा है। वह गिरिधारी के देस का आदमी है। गिरिधारी जैसे ही लोगों को मुखर्जी जैसे दौलतमन्दों को चोर-डाकू-गुण्डों के हाथों से बचाने का गुर मालूम है। उससे अधिक वे लोग कुछ नहीं जानते। कब किस छिद्र से घर की लक्ष्मी अन्दर से निकल बाहर जाकर लापता हो गई, यह जानना उनकी ड्यूटी नहीं है। वह न तो साहब की गतिविधि से अवगत है न ही मेमसाहब की गतिविधि से।

उसके बाद है मिसि बाबा। कभी-कभी मिसि बाबा की खोज में भी कुछेक लोग आते हैं। मेमसाहब जिस तरह अक्सर रात गहराने पर घर वापस आती हैं उसी तरह मिसि बाबा भी कभी-कभी घर लौटने में देर कर देती हैं।

साहब जब घर पर नहीं रहते तो मेमसाहब और मिसि बाबा को घर लौटने में रात हो जाती है। लेकिन जब साहब घर पर रहते हैं तो वे जल्दी ही घर लौट आती हैं। उस समय घर का नियम-कानून मानो बदल जाता है।

वे चाहे ठीक समय पर घर लौटें या न लौटें उसे हर हालत में अपनी ड्यूटी पर तैनात रहना है। इसी के निमित्त उसे रखा गया है, इसी के निमित्त उसे महीना-दर-महीना, साल-दर-साल वेतन दिया जा रहा है।

जिस दिन से साहब का कारखाना उठने लगा है, उसी दिन से तरह-तरह के लोगों ने आना शुरू कर दिया है। उसी समय से वे गाड़ी से घर के पास आते हैं और पूछते हैं, "मुखर्जी साहब हैं?"

वह कहता है, "साहब घर में नहीं हैं।"

"साहब कब आएंगे?"

वह कहता है, "मुझे यह मालूम नहीं।"

वे लोग पूछते हैं, "इन्दौर गए हुए हैं?"

"मालूम नहीं साब।"

उसके बाद सवाल किया जाता है, "इन्दौर का पता मालूम है?"

"जी नहीं।"

इसी तरह मुक्तिपद मुखर्जी का घर-संसार चल रहा है। दरवान हर रोज की तरह पहरा देता है। साहब अचानक किसी दिन आ जाते हैं, उसके बाद एक-दो दिन रहकर कहीं चले जाते हैं। वह बस इतना ही समझता है कि साहब को बहुत

काम-काज रहता है। पहले जब साहब की फैक्टरी कलकत्ता में थी तो वे इतना व्यस्त नहीं रहते थे। ज़्यादा-से-ज़्यादा साल में एक-दो महीने के लिए बाहर जाते थे। कंपनी के बड़े-बड़े अफ़सरों को साहब घर पर बुलाते। उनसे बातचीत खत्म होते ही वे अपने-अपने घर चले जाते।

लेकिन इस बार साहब के पहुंचने के एक दिन बाद एक दूसरे साहब आए। आकर पूछा, "साहब हैं ?"

"जी हां हुज़ूर, हैं।"

यह कहकर सदर दरवाज़ा खोलकर सलाम किया।

मुक्तिपद मुखर्जी से सारी बातें टेलीफोन पर ही तय हो गई थीं। तो भी इन सब मामलों के लिए आमने-सामने मुलाक़ात होना आवश्यक है। साहब जैसे ही अन्दर पहुंचे मुक्तिपद चेहरे पर मुस्कराहट लिए गलियारे की ओर बढ़कर आए। वे पहले से ही तैयार थे। कहा, "आइए, आइए !"

मिस्टर चटर्जी ने कहा, "और एक दिन आकर मैं वापस चला गया था। हां, इतना ज़रूर है कि उस समय मैं टेलीफोन करके नहीं आया था।"

दोनों अन्दर जाकर पार्लर में बैठ गए। मिस्टर चटर्जी बोले, "मेरी इकलौती बेटी विनीता की शादी है, पार्टी में आपको पूरी फैमिली के साथ शरीक होना है।"

मुक्तिपद रंगीन निमंत्रण-पत्र पढ़ने लगे। याद आ गई बीते दिनों की सारी बातें। इसी लड़की से एक दिन सौम्य की शादी की बात पक्की हो गई थी। यहां शादी हुई होती तो कोई समस्या नहीं रह जाती। उन्हें अपनी फैक्टरी बाहर हटा कर ले जाने की बदकिस्मती का मुकाबला नहीं करना पड़ता। उसी विनीता की शादी अब एक दूसरे पात्र से होने वाली है। यह पार्टी भी आर्थिक संपन्नता, वंश-परम्परा और ख्याति की दृष्टि से समाज में सुरक्षित है। लेकिन···

"आपको सबके साथ आना है।"

मुक्तिपद ने कहा, "ज़रूर जाऊंगा। बशर्ते कलकत्ता में रहा तो···"

मिस्टर चटर्जी बोले, "आप लोगों का वह मर्डर केस किस स्थिति में है ?"

मुक्तिपद बोले, "अभी चल रहा है। लेकिन मैं हमेशा कलकत्ता में नहीं रह पा रहा हूं। मेरी मां ही सारा कुछ 'टैक्ल' कर रही हैं। मैं अगर यह सब लेकर सिर खपाता रहा तो मेरी फैक्टरी की देखरेख कौन करेगा ?"

मिस्टर चटर्जी बोले, "रंगत कैसी दिख रही है ?"

मुक्तिपद बोले, "कैसे समझ सकता हूं ! कैपिटल पनिशमेन्ट मिलेगा ही—"

"यह क्या ?"

मुक्तिपद बोले, "मां से अलबत्ता मैंने यह बात नहीं कही है। कहने से मां का चेहरा फक् हो जाएगा। ख़ासतौर पर इस उम्र में।"

मिस्टर चटर्जी की आवाज़ में सहानुभूति का स्वर बज उठा। बोले, "बात तो सच ही है—"

उसके बाद चंद लमहे तक खामोश रहने के बाद फिर बोले, "उन दोनों में झगड़ा क्यों होता था ? किस चीज़ के चलते ?"

मुक्तिपद बोले, "रुपये के अलावा और किसलिए होगा ! रुपये की बाबत ही

हर रोज झमेला होता था। एक दिन वह औरत सौम्य की छाती पर बैठ खून करने के इरादे से उसका गला टीप रही थी। मेरी मां ने आकर उसे बचाया। ऐसा न होता तो उसी दिन सौम्य मारा जाता।"

"तो उस वक्त डिवोर्स का इन्तजाम क्यों नहीं कर दिया?"

मुक्तिपद बोले, "इसका भी सुझाव दिया था। मेम बोली थी, पच्चीस हजार पौंड देने से वह सौम्य को डिवोर्स कर देगी। मैं देने को राजी हो गया था, लेकिन नशाखोरी करने का जो अंजाम होता है, वही हुआ।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोले, "बहरहाल, जो होने को था, हो चुका है। इन दिनों मैं कभी इन्दौर जाता हूं और कभी कलकत्ता लौटकर आता हूं। फैक्टरी ही फिलहाल मेरा एकमात्र सिरदर्द है। मुकदमे की झंझट को अपने पास फटकने नहीं देता। उसे पूरे तौर पर मां के हाथ सौंपकर मैं फैक्टरी के काम में व्यस्त हूं। मेरे लिए यही सात्वना की बात है कि इन्दौर जाने से मुझे लेबर-ट्रबल से छुटकारा मिल जाएगा—उसके बाद पश्चिम बंगाल नहीं आऊंगा—"

मिस्टर चटर्जी अब जाने के लिए उठ खड़े हुए। उन्हें अभी बहुत सारा काम है। बोले, "बताइए तो, बगाली लोग इस किस्म के क्यों हो गए? विद्यासागर, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विवेकानन्द जैसे व्यक्तियों ने बंगालियों को गाली क्यों दी है, बताइए तो! आप तो दुनिया के सभी देशों से हो आए हैं, वहां बहुत दिनों तक रह चुके हैं, लेकिन इस किस्म की शरारती जात कहीं देखी है! यहां तक कि दिल्ली, बम्बई, मद्रास, केरल वगैरह भी गया हूं लेकिन कहीं इस तरह के लोग देखने को नहीं मिले। यहां हरेक बंगाली सवेरे नींद टूटते ही सोचता है, आज किसका सर्वनाश करना है—"

किन्तु अभी इन सब बातों की चर्चा करने का वक्त दोनों में से किसी के पास नहीं था। मिस्टर चटर्जी अब रुके नहीं, बाहर की तरफ कदम बढ़ाते हुए बोले, "पूरी फैमिली के साथ जरूर ही आइएगा, कॉकटेल का इन्तजाम रहेगा।"

मिस्टर चटर्जी के चले जाने के बाद मुक्तिपद को बीते दिनों की बातें बहुत देर तक याद आती रहीं। उसी विनीता की शादी होने वाली है। किसी दिन उसके गिर्द ही उन्होंने कितने ही सपने देखे थे। वह लड़की यदि उस दिन सौम्य की पत्नी बनकर आती तो आज उन्हें बंगाल छोड़ सुदूर मध्यप्रदेश नहीं जाना पड़ता। मां को भी वहां अकेले नहीं छोड़ना पड़ता।

मुक्तिपद ने पुकारा, "अरे कौन है?"

कहीं से बैजू आकर सामने उपस्थित हुआ।

मुक्तिपद ने कहा, "मेमसाहब कहां हैं?"

बैजू ने कहा, "मेमसाहब सोई हुई हैं हुजूर।"

"इतनी देर तक सोई हुई हैं?"

यह कहकर नंदिता के कमरे की तरफ खुद ही गए। कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द है। वे दरवाजा ठेलते हुए पुकारने लगे, "नंदिता, नंदिता—"

अन्दर तब नंदिता की आंखों में शायद आधी रात की नींद थी। बहुत ठेलने के बाद शायद जाग गई। मुक्तिपद ने हताशा के स्वर में बैजू से पूछा, "मिसि बाबा कहां है?"

बैजू ने कहा, "मिसि बाबा कल रात घर लौटकर नहीं आई थीं हुजूर—"

"घर लौटकर नहीं आई थी ? मतलब ?"

जैसे उन्हें इस बात पर यकीन न हो रहा हो।

पीछे की तरफ नंदिता के कमरे के खुलने की आवाज़ सुनते ही उस तरफ गए। नंदिता तब पुनः सोने की तैयारी कर रही थी। सामने मुक्तिपद को देखकर अवाक् हो गई, "अयं, तुम ! कब आए ?"

"मैं सवेरे पांच बजे हवाई जहाज़ से उतरा हूं। अभी तो दस बज रहे हैं। तुम अब भी सोई हुई हो ?"

नंदिता ने कहा, "कल रात लौटने में देर हो गई थी..."

"क्यों ?"

"कल लास्ट शो में एक सिनेमा देखने गई थी, वहां से लौटने में देर हो गई थी..."

मुक्तिपद ने कहा, "और पिकनिक ? वह कहां गई है ?"

नंदिता ने कहा, "क्यों ? वह नहीं आई है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "लड़की घर नहीं आई है, तुम उसकी मां होकर भी यह नहीं जानती। मैं बाहर रहता हूं, इसकी जानकारी मुझे रखनी है ?"

नंदिता ने कहा, "उस वक्त मुझे बहुत नींद आ रही थी, इसलिए मैं खाना खाकर बिस्तर पर लेटते ही नींद में खो गई। सोचा, वह खा-पीकर अपने कमरे में सोई हुई होगी।"

मुक्तिपद को गुस्सा आ गया। बोले, "सो तो सोचोगी ही। मैं कलकत्ता में नहीं हूं तो तुम मां-बेटी को सुर्खाब के पर निकल आए हैं। यही वजह है कि मेरी मां से तुम्हारा बनाव नहीं होता है।"

"क्या कहा ?"

नंदिता सांप की तरह फुंफकार उठी।

मुक्तिपद ने कहा, "हां, ठीक ही कहा है। आज यदि तुम बिडन स्ट्रीट के मकान में होतीं तो मेरी लड़की इस तरह घर से बाहर रात नहीं गुज़ारती।"

नंदिता ने कहा, "तुम्हारी मां के पास कोई आदमी रह सकता है ? तुम्हारी मां के पास मैं होती तो किसी दिन मेरा भी खून हो गया होता—"

मुक्तिपद ने कहा, "चुप रहो, जो नहीं जानती हो, उसके बारे में बातें मत करो।"

नंदिता ने कहा, "क्यों, चुप क्यों रहूंगी ? मैं क्या किसी का दिया हुआ खाती या पहनती हूं ?"

मुक्तिपद ने कहा, "पागल की तरह बड़बड़ मत करो। लगता है, तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है।"

नंदिता ने कहा, "मेरा दिमाग खराब नहीं हुआ है, खराब हुआ है तुम्हारा। तुम्हारा दिमाग ठीक होता तो कारखाने को उठाकर जंगल में नहीं ले जाते !"

मुक्तिपद ने कहा, "क्या बोली ? इन्दौर जंगल है ?"

"इन्दौर जंगल नहीं तो और क्या है ? वहां क्या भलेमानस हैं ? वहां कलकत्ता की तरह इतने क्लब हैं ? वहां क्या कलकत्ता की तरह इतने बार हैं ? वहां क्या..."

नंदिता को मुक्तिपद ने बीच ही में टोका, "क्लब या बार का होना सभ्यता का नमूना नहीं है। इन्दौर में सात्विक विचार के आदमी हैं, कलकत्ता की तरह इतने जानवर नहीं हैं। बात-बात में वहां इतने जुलूस निकालकर 'जुग-जुग जियो' जैसे नारे नहीं लगाए जाते। वहां के लोग दिन के दस बजे सोकर नहीं उठते, वहां की कुमारी लड़कियां पूरी रात घर से बाहर नहीं गुजारतीं—तुम मुझे कलकत्ता मत दिखाओ, कलकत्ता के चप्पे-चप्पे को मैं देख चुका हूं—"

नंदिता ने बीच में ही मुक्तिपद को रोक दिया। बोली, "जाओ, बाहर निकलो, मेरे कमरे से बाहर निकल जाओ, गेट आउट—"

मुक्तिपद निकलकर बाहर चले आए। उन दोनों पति-पत्नी के झगड़े की आवाज घर के नौकर-चाकर, दाई-महरी सभी सुन रहे हैं। और अधिक देर तक झगड़ा चलता रहेगा तो वे लोग भी खिल्ली उड़ाना शुरू कर देंगे।

बाहर निकल मुक्तिपद ड्राइंगरूम में चले आए और पुलिस को फोन करने लगे। घर की लड़की घर के बाहर रात बिताएगी और बाप होने के नाते मुक्तिपद इसे कैसे बरदाश्त कर सकते हैं! टेलीफोन डायल करने हो जा रहे थे कि बैजू ने आकर बताया, "हुजूर मिसि बाबा आ गई हैं—"

"आ गई है?" टेलीफोन रख मुक्तिपद ने पूछा, "कहां है?"

मुक्तिपद ने चिल्लाकर पुकारा, "पिकनिक—"

गलियारे से होकर सीधे अपने कमरे की तरफ जाती हुई पिकनिक थमककर खड़ी हो गई और पीछे मुड़कर देखा। मुक्तिपद को देखकर बोली, "बाबूजी, आप कब आए?"

मुक्तिपद का चेहरा क्रोध से कठोर हो गया। बोले, "रात-भर कहां थी?"

पिकनिक शुरू में डर गई। बोली, "क्यों, किशन ने कुछ नहीं बताया?"

मुक्तिपद ने कहा, "किशन क्या बताएगा? मैं तो घर नहीं था, आज आया हूं।"

पिकनिक ने कहा, "मैंने तो किशन से कह दिया था कि मां को बता दे कि आज मुझे घर लौटने में देर होगी, क्योंकि हम लोगों के क्लब में देर रात तक फंक्शन चलता रहेगा—"

"किस चीज का फंक्शन?"

"तरह-तरह के नृत्य और संगीत का फंक्शन—"

मुक्तिपद गुस्सा गए। बोले, "रात-भर नृत्य-संगीत का फंक्शन चलता रहा?"

"हां, बंबई से बहुत सारे आर्टिस्ट हमारे चैरिटी के फंक्शन में···"

"चैरिटी? किस चीज की चैरिटी?"

पिकनिक ने कहा, "बाढ़ से राहत पाने के लिए हम लोगों के क्लब की ओर से चैरिटी की जाएगी। गवर्नमेंट की ओर से फादर के पास रिक्वेस्ट आया था इसीलिए···"

मुक्तिपद गवर्नमेंट का नाम सुनते ही झुंझला उठे। बोले, "गवर्नमेंट? रबिश! जो गवर्नमेंट हजारों लोगों को बेरोजगार बना देती है, जो गवर्नमेंट यहां की इंडस्ट्री को किक आउट करती है, उस गवर्नमेंट का रहना या न रहना एक जैसा है। उसका

रिक्वेस्ट ! उसकी चैरिटी ?"

यह कहकर जरा सुस्ताने के वाद फिर वोले, "ठीक है, अव तुम्हें यहां पढ़ना नहीं है, अव तुम्हें इन्दौर के कॉलेज में भर्ती करा दूंगा, जाओ—"

यह कहकर वे अपने कमरे की ओर चले गए। उन्हें लगा, वंगाल के तमाम लोग उनका सर्वनाश करने पर तुले गए हैं। वे देख लेंगे कि लोग उन्हें कैसे दवाकर रखते हैं। ठीक है...

"क्यों मुन्ना, आज तेरी तवीयत कैसी है ?"

जिस दिन से संदीप वेड़ापोता के मकान में आया है, उस दिन से हर रोज़ सवेरे मां अपने वेटे से यही सवाल करती है। यह केवल संदीप की मां का ही प्रश्न नहीं है वल्कि चिरकाल से चला आ रहा संतान से मां का यही प्रश्न है। लेकिन तमाम माताएं क्या संदीप की मां जैसी होती हैं?

अस्वस्थ शरीर ले संदीप लेटे-लेटे यही सव सोचता रहता। वह उस दिन फुट-पाथ के वजाय सड़क पर गिर गया होता तो गाड़ी से दवकर मर जाता। उस दिन अगर उसकी मौत हो जाती तो इन लोगों पर क्या गुजरती ? कौन इन लोगों की देखरेख करता ? कौन उसकी गृहस्थी चलाता ? कौन मौसीजी के इलाज के खर्च का जुगाड़ करता ?

उस दिन उसे इसका उत्तर नहीं मिला था और अव भी नहीं मिला है। हो सकता है किसी भी दिन इसका उत्तर न मिले। शायद इसका उत्तर किसी को कभी भी नहीं मिलता। तो भी रुके रहने से आदमी का काम चल नहीं सकता। तमाम विरोधी शक्तियों से लड़ते रहने का ही नाम संसार है। इस संसार में रहना भी है साथ ही साथ इस संसार की तमाम शक्तियों के खिलाफ जेहाद छेड़कर जीवन जीने की कोशिश भी करनी है—यही है आदमी की भाग्य-लिपि।

फिर ? फिर क्या निश्चित पराजय का वोध रहने के वावजूद मोर्चे पर डटे रहना है ? फिर क्या 'शांति' नामक शव्द क्या शव्दकोश की ही शोभा वढ़ाने के लिए विराजमान रहेगा ? या फिर संघर्ष का ही दूसरा नाम शान्ति है ?

"क्यों मुन्ना, आज तेरी तवीयत कैसी है ? ठीक है न ?"

वही एकरस प्रश्न और वही एकरस उत्तर—'हां।'

उस दिन संदीप लेटा हुआ नहीं रह सका और न लेटे रहने की इच्छा ही हुई उसे। इस तरह गुमसुम पड़े रहना वेमानी है। या तो वह लड़ाई लड़कर खत्म हो जाएगा या फिर सारी विरोधी शक्तियों के समक्ष आत्म-समर्पण कर अमर हो जाएगा। क्योंकि लेटे रहने का अर्थ ही है समझौता करना। किसी से समझौता करना संदीप के सिद्धान्त के परे है। वह न तो गोपाल हाजरा है और न तारक घोप। यहां तक कि सुशील सरकार भी नहीं। उसका संघर्ष अकेले का संघर्ष है। पार्टी या दल या प्रतिष्ठान का सहारा लेने का मतलव है धोखाधड़ी। ज़िन्दगी में उसने कभी धोखाधड़ी नहीं की है और करेगा भी नहीं। लिहाजा विस्तर पर पड़े रहकर दुख जीने का अर्थ है धोखाधड़ी।

"क्यों रे उठ क्यों रहा है ? कहां जाएगा?"

संदीप ने कहा, "मैं आज ऑफिस जाऊंगा मां।"

"यह क्या! अभी हाल ही में तो बुखार उतरा है। अभी जाने में परेशानी बरदाश्त कर सकेगा?"

"हां, सकूंगा।"

मां बोली, "ऐसा कमजोर शरीर लेकर वहां जाने से यदि कुछ हो जाए तो?"

संदीप ने कहा, "नही मां, लेटे रहने से महसूस करता हूं कि मैं मर गया हूं। इतनी आसानी से मैं मरना नही चाहता।"

सचमुच, संदीप बहुत दिन पहले एक किताब में पढ़ी बात पर बार-बार सोचता। किसी ने कहा है—जंग लगकर मरने की अपेक्षा घिस-घिसकर ध्वस्त हो जाना कहीं अच्छा है। लेटे रहने का अर्थ ही है जंग लगना। बोला, "क्या होगा मां?"

मां ने कहा, "तू अच्छा हो जाएगा, इसके अलावा और क्या हो सकता है!"

संदीप ने कहा, "मैं यह नही कह रहा हूं। मुझे बीस हजार रुपया कहां मिलेगा?"

मां ने कहा, "यह सोच-सोचकर तू अपनी तबीयत खराब मत कर।"

संदीप ने कहा, "मैं नही सोचूंगा तो कौन सोचेगा, तुम्ही बताओ? मेरा क्या कोई और है?"

"और चाहे कोई हो या न हो मैं तो हूं।"

"तुम इतने रुपये का कहां से इन्तजाम करोगी? तुम्हारे पास सोने का एक भी गहना नही है कि उसे बंधक रखकर रुपयों का इन्तजाम करूं—"

मा ने कहा, "गहना भले ही मेरे पास न हो लेकिन यह मकान तो है। चाहे मकान गिरवी रखकर या बेचकर उस रकम का इन्तजाम हो सकता है।"

संदीप ने कहा, "मा सचमुच तुम ऐसा करने कह रही हो?"

"सच नही तो तेरा मन रखने के लिए यह कह रही हूं?"

"तो फिर हम कहां रहेंगे?"

"किसी तरह इसका इन्तजाम हो जाएगा। इसके लिए तू चिन्ता क्यों करता है? पहले आदमी की जिन्दगी है या मकान? जिन लोगों के पास मकान नही है वे क्या सड़क पर खड़े हैं? वे भी जिन्दा ही हैं। न होगा तो तू एक कमरा किराए पर ले लेना। उसी कमरे में हम लोग किसी तरह रह लेंगे। तू रह नही सकेगा? तुझे तकलीफ होगी?"

संदीप खुशी के मारे स्वयं को संयत नहीं रख सका। बोला, "मा तुम कितनी अच्छी हो!"

बात करते-करते संदीप की आंखों से आंसू की धारा बहने लगी। मां ने कपड़े के आंचल से बेटे की आंखें पोंछते हुए कहा, "अरे मुन्ना, रो मत। तेरे सिवा मेरा कोई नही है, तेरा सुख ही मेरा सुख है। तुझे कष्ट होने से मुझे कितना कष्ट होता है, यह तू समझ नही सकेगा। जिस दिन कलकत्ता से तेरी बीमारी की खबर पहुंची, उसी दिन से मैं भगवान का नाम ले रही हूं। विशाखा थी इसीलिए मैं जिन्दा बच गई। उस दिन विशाखा न होती तो हम क्या करती, बताओ तो! इतनी छोटी-

सी लड़की, फिर भी बोली, "आप लोग बैठी रहिए मौसीजी, मैं जा रही हूं—यह कहकर वह चली गई—"

संदीप ध्यान से बातें सुन रहा था।

मां इसके बाद बोली, "उस दिन वह न होती तो क्या होता बताओ तो! सचमुच लड़की होने से क्या होगा, वह मेरी कोख के लड़के से भी मेरे लिए बड़ी है।"

संदीप ने यह सुना पर कुछ बोला नहीं। थोड़ी देर बाद बोला, "फिर वही करता हूं इस मकान को बेच देने का इन्तज़ाम करता हूं।"

मां ने कहा, "हां, यही कर। उन रुपयों से दीदी का इलाज कराया जाएगा। उसके बाद जीना या मरना तो भगवान के हाथ में है—"

मां की बात सुनकर संदीप के शरीर और मन में जैसे नई स्फूर्ति आ गई। बोला, "तुम्हारी बात सुनकर मां, मुझमें साहस लौट आया है। अब मेरी सारी बीमारी दूर हो गई। मैं आज ही मकान बेचने का इन्तज़ाम कर लूंगा—"

"लेकिन इसके पहले अपने ऑफिस के आसपास कोई मकान ढूंढ़ ले। इस मकान को छोड़ने के बाद कहां जाकर टिकेंगे, इसके लिए कोई व्यवस्था करनी है—"

संदीप ने कहा, "सो मैं खोज-पड़ताल करूंगा। मगर एक बात। मौसीजी या विशाखा को यह मालूम नहीं होना चाहिए कि उनके इलाज के लिए मैं यह मकान बेच रहा हूं।"

"नहीं-नहीं, बताऊंगी नहीं।"

संदीप ने कहा, "विशाखा कहां है?"

"वह सोई हुई है। तुम्हारी बीमारी के दौरान उसे बहुत शारीरिक तकलीफ झेलनी पड़ी है। उस पर आजकल वह कम खाना खाने लगी है।"

संदीप ने कहा, "क्यों? विशाखा कुछ भी नहीं खा रही है?"

"खाएगी कैसे? तेरी बीमारी के चलते न कोई बाज़ार करने जा रहा था और न ही खाना पक रहा था। विशाखा ही सरो-सामान खरीदने बाज़ार जाती थी। इतनी छोटी लड़की, अकेले कितना काम करेगी? मां की सेवा करेगी या बाज़ार करेगी या कि रसोई के तरफ ध्यान देगी!"

यह कहकर वहां रुकी नहीं। बोली, "अब मैं रुकूंगी नहीं। कमला की मां अब तक आई नहीं है। मैं उसके पहले ही चूल्हा जला लूं। आज तू ऑफिस जाएगा। तैयार हो जा, इस बीच मैं चावल पका देती हूं।"

घर के अन्दर जाते ही विशाखा ने शायद मां के पांवों की आहट सुनी थी। नींद टूटते ही मौसीजी पर नज़र पड़ी और वह बिस्तर पर उठकर बैठ गई। बोली, "मुझे जगा क्यों नहीं दिया मौसीजी? वक्त क्या हो रहा है?"

मां बोली, "तुम सोई रहो बिटिया। उठ क्यों रही हो? मैं चूल्हा जलाने जा रही हूं। कमला की मां अभी तक नहीं आई है। तुम थोड़ी देर और सोई रहो। आज मुन्ना को जल्द ही भात खाने को देना है। उसने बताया है कि आज वह ऑफिस जाएगा।"

"ऑफिस जाएगा?"

बिस्तर से उठकर विशाखा सीधे बगल के कमरे में चली गई। देखा, कमरे

का बिस्तर समेटा जा चुका है। विशाखा पर नज़र जाते ही संदीप ने कहा, "तुम? कैसी हो? सुना, तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है।"
विशाखा ने कहा, "किसने बताया?"
संदीप ने कहा, "मां के अलावा और कौन कहेगा!"
विशाखा ने कहा, "मेरी बात रहने दो। तुम क्या आज सचमुच ही ऑफिस जा रहे हो?"
संदीप ने कहा, "बहुत दिन नागा हो गया। वेतन भी कट रहा है, और कितने दिनों तक यों चुपचाप पड़ा रहूंगा?"
विशाखा ने कहा, "जा सकोगे?"
संदीप ने कहा, "चाहे जा सकूं या न सकूं, दुनिया तो मानने को तैयार नहीं होती कि मेरी तबीयत खराब है।"
इसके बाद चंद लमहों तक खामोश रहने के बाद फिर बोला, "सुना, आजकल तुम्हें ही हाट-बाजार करना पड़ता है।"
"किसने कहा?"
"मां के अलावा कौन कहेगा। मैं रसेल स्ट्रीट के मकान से तुम लोगों को यहां शांति देने के ख्याल से ले आया था। सो खूब शांति दी! अपने हाथ से तुमने जो सब कभी नहीं किया था, आज तुम्हें वही करना पड़ रहा है। यह है मेरा शांति देने का नमूना!"
विशाखा ने कहा, "कोई क्या किसी को शांति दे सकता है? मैं ही क्या थोड़ी-सी भी शांति दे सकी हूं?"
"चाहो तो तुम मुझे शांति दे सकती हो।"
"कैसे?"
संदीप ने कहा, "शादी करके।"
"बस, तुम्हारी एक ही रट! जिन लोगों ने शादी की है वे लोग सभी क्या शांति से हैं?"
संदीप ने कहा, "लेकिन उनकी मां असहाय, संबलहीन विधवा नहीं हैं।"
"हां-हां, कहो, और कहो। वे केवल असहाय संबलहीन विधवा नहीं, बल्कि किसी के सिर के बोझ नहीं हैं। दूसरे का सिर का बोझ बनकर रहना कितना कष्टदायक होता है, तुम यह समझते तो ऐसी बात नहीं बोलते।"
संदीप ने कहा, "मैंने कभी यह बात तुमसे कही है?"
"मुंह से कहना ही क्या कहना होता है? मन ही मन कहना क्या कहना नहीं है?"
संदीप ने कहा, "मेरे सीने पर कान रखती तो तुम मेरे मन की बात सुन पातीं।"
"सीने पर कान रखने का अधिकार सभी क्या सबको देते हैं? उस अधिकार को अर्जित करना पड़ता है। सिर के जो लोग बोझ होते हैं उन्हें यह अधिकार प्राप्त नहीं होता—"
अचानक बाहर से मा के गले की आवाज सुनाई पड़ी। मां बोली, "अरे गुन्ना, अब तक नहाया नहीं है? मैंने भात की हांडी चूल्हे पर चढ़ा दी है—"

संदीप ने कहा, "मैं अभी-अभी नहाकर आया मां—"

विशाखा बोली, "तुम जाकर नहा लो, मैं चलती हूं—"

"हां, सिर के बोझे का जो काम होता है, तुम जाकर वही करो।" संदीप ने कहा।

विशाखा बोली, "यह कहकर तुम मुझसे प्रतिशोध लेना चाहते हो। लेकिन मेरी किस्मत ऐसी है कि किसी के प्रतिशोध के जवाब में मैं किसी से प्रतिशोध नहीं ले सकी—"

संदीप ने कहा, "तो भी कोशिश करती रहो, किसी न किसी दिन मुझसे प्रतिशोध लेने में कामयाब हो जाओगी।"

विशाखा ने जाते-जाते कहा, "मर्द होकर पैदा होती तो हो सकता था कामयाबी हासिल हो जाती, लेकिन भगवान ने मुझे औरत बनाया है। औरत होकर पैदा होना कितना बड़ा पाप है, यह तुम नहीं समझोगे—"

यह कहकर विशाखा कमरे के बाहर चली गई।

युक्ति और तर्क से जीवन को एक सीधी रेखा में खींचकर लाया जाता है। अदालत या कोर्ट ही इसका प्रमाण है। यहां ईमानदारी-बेईमानी या सच-झूठ की कोई बला नहीं है। बहुत से निरपराध व्यक्तियों को भी सजा मिल सकती है और इसकी अनगिनत मिसालें हैं। हालांकि अदालत के कठघरे में खड़े होकर वादी-प्रतिवादी के सभी गवाहों को कहना पड़ता है—मैं सत्य के अलावा झूठ नहीं बोलूंगा।

लेकिन यह क्या वास्तविक सच्चाई है?

सत्य कभी सीधे रास्ते में चलना नहीं जानता। वह टेढ़ी-मेढ़ी तंग गलियों से गुज़रकर एक अन्तिम क्षण में गोलाकार होने के बाद ही सच होता है। जन्म से शुरू कर मृत्यु तक पहुंचने के बाद वह पुन: जन्म में आकर समाहित हो जाता है। जहां से उसके सफर की शुरुआत होती है वहीं मिलकर वह संपूर्ण का रूप लेता है।

संदीप के साथ भी यही बात है। और सिर्फ अकेले संदीप ही नहीं, दादी मां, परमेश मल्लिक, मुक्तिपद, नंदिता, पिकनिक, मौसीजी, सौम्यपद, विशाखा, गोपाल हाजरा, तपेश गांगुली, नौकर-नौकरानी, ड्राइवर वगैरह जिन लोगों ने इस उपन्यास में सफर की शुरुआत की है, वे सभी इस धरती के प्रतीक, सत्य के प्रतीक हैं। वे यदि इस उपन्यास में गोलाकार हो जाएं, यानी सत्य हो जाएं, तभी यह उपन्यास सार्थक होगा, वरना नहीं होगा।

लेकिन ऐसा होने पर भी हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से लोगों का काम नहीं चल सकता। उसे सुनिश्चित अंत को अपना लक्ष्य बनाकर तेज गति से दौड़ना पड़ता है। लिहाज़ा मुक्तिपद कलकत्ता में रहें या न रहें, उनकी फैक्टरी कलकत्ता में रहे या न रहे, दादी मां को अपना काम जारी रखना है। हताश होकर, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से उनका काम चलनेवाला नहीं है। इसलिए उनके शरीर में जितनी भी प्राण-शक्ति थी, उसे लेकर ही अदालत जातीं, एडवोकेट के चेम्बर में जातीं। ज़रूरत पड़ने पर अदालत जाकर गवाही देतीं, वकीलों से सलाह-मशविरा करतीं। जिसका जो भी प्राप्य होता यथासमय चुका देतीं। फिर भी अपने पूर्व-

जन्म में अर्जित पाप से छुटकारा पाने की कोशिश करने के बावजूद पूरे तौर पर छुटकारा नहीं पाती। बिन्दु से कहती, "पूर्वजन्म में मैंने बहुत पाप किया था, इसी-लिए इतना कोर्ट-कचहरी का चक्कर काटना पड़ता है—"

मल्लिकजी सांत्वना देते, "क्या कीजिएगा दादी मां, यह भी उस सर्वशक्तिमान परमेश्वर की इच्छा के अलावा और कुछ नहीं है।"

दादी मां कहती, "जीवन के आखिरी दौर में मुझे यह कैसी सजा मिल रही है! लड़का शहर से बाहर रह रहा है, पोता जेलखाने में है और मुझे इस बुढ़ापे में कोर्ट आना पड़ता है! पाप न करे तो किसी को कहीं कोर्ट आना पड़ता है!"

मल्लिकजी इसका क्या जवाब दें। वे इस मकान के उत्थानकाल से आज तक की स्थिति से परिचित हैं। उस समय उन्होंने इस इमारत का ऐश्वर्य देखा था और अब विपर्यय भी देख रहे हैं। अपनी आंखों से इस घर के मालिक का देहान्त देखा है और बड़े लड़के और उनकी पत्नी की मृत्यु भी देखी है। साथ ही शादी की रस्म, पूजा-पाठ और किसी पारिवारिक उत्सव का समारोह भी देखा है। वे बराबर सुख-दुख, विपदा आदि के साक्षी रहे हैं।

लेकिन सब कुछ के जोड़-घटाव के अंत में हासिल क्या बचा?

संभवतः अपने बही खाते में यह देखने का अवसर तब भी उनके लिए नहीं आया था। यही वजह है कि जब भी वे दादी मां के साथ वकील बैरिस्टर के घर जाते हैं तो बाहर से सब कुछ देखने-सुनने के बावजूद मन के भीतर वे मुखर और सवाक् रहते हैं। वहां वे केवल अपने आपसे सवाल करते हैं और स्वयं ही उसका जवाब देते हैं।

वे अपने आपसे सवाल करते हैं: "इतना देखने-सुनने के बाद तुम्हें क्या प्राप्त हुआ?"

वे खुद ही इसका जवाब देते हैं: "निरासक्ति।"

ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती जा रही थी वे क्रमशः हर मामले में निरासक्त होते जा रहे थे। वे कहते, "भगवान, तुम मुझे यह सब दिखाकर अपने किस उद्देश्य की पूर्ति कर रहे हो?"

भगवान की ओर से वे स्वयं उत्तर देते: "निरासक्ति! निरासक्ति ही सुख है। संसार में इससे बढ़कर कोई सुख नहीं है—"

"लेकिन मेरा तो घर-संसार के नाम पर कुछ भी नहीं है। तुमने मुझे घर-संसार नामक कोई चीज नहीं दी है—"

"तुझे घर-संसार न देने पर भी तू घर-संसार से जुड़ा हुआ है। घर-संसार न रहने पर तेरी मां क्या किसी दुख में है?"

"नहीं।"

"तुझे किसी प्रकार का दुख न रहे, यही सोचकर तुझे घर-संसार नहीं दिया है। तुम्हें अपना कोई घर-संसार न देने पर भी इसलिए दूसरे के घर-संसार से जुड़ा हुआ रखा है कि तुझे किसी प्रकार का क्षोभ न रहे। संसार से युक्त रहकर भी मुक्त रहने का फल तुझे अनायास ही मिल गया। इतना फल तो हजार वर्ष साधना करने पर भी किसी को प्राप्त नहीं होता। इसके लिए तो तुझे मेरा कृतज्ञ होना चाहिए।"

वकील-एटर्नी-बैरिस्टर के इर्द-गिर्द रहने से आदमी को श्मशान-वास का सौभाग्य प्राप्त होता है। तो फिर तांत्रिक श्मशान जाकर क्यों साधना करते हैं, कौन जाने ! श्मशान जाने के बजाय यदि वे वकील-बैरिस्टर के चेम्बर में बैठते तो और भी अधिक सहजता से उन्हें वैराग्य प्राप्त हो जाता। आदमी कितना लोभी और दयालु, कितना निष्ठुर और निर्लोभ, कितना निम्न और उच्च स्तर का हो सकता है, कितना धनी और निर्धन हो सकता है, कितना विषयासक्त और वैरागी हो सकता है—उसे जानना हो तो वकील-बैरिस्टरों के चेम्बर में ही इसकी पूर्ण उपलब्धि हो सकती है।

मल्लिकजी को इसकी जानकारी प्राप्त हो गई थी, साल-दर-साल वकीलों और बैरिस्टरों के चेम्बर में जाते-जाते। वे लोग जो कुछ कहते मल्लिकजी उसे ध्यान से सुनते और उन्हें लगता कि वे भागवत-पाठ सुन रहे हैं। महाभारत में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को विश्वरूप का दर्शन कराया था। मल्लिकजी को लगता कि वकील और बैरिस्टर उन्हें विश्वरूप का दर्शन करा रहे हैं।

उन्हें दादी मां की बातें याद आतीं। दादी मां कहतीं, "जीवन के आखिरी दौर में मुझे यह कैसी सजा मिल रही है ! लड़का शहर के बाहर है, पोता जेलखाने में है और मुझे इस बुढ़ापे में अदालत आना पड़ता है। बेहिसाब पाप किए बिना क्या किसी को अदालत में आना पड़ता है ?"

यह सब मन के दुख की बातें वे जिस प्रकार मल्लिकजी से कहतीं, संदीप से मुलाकात होने पर मल्लिकजी भी यही सब बात कहते।

संदीप कहता, "जानते हैं चाचाजी, कानून के संदर्भ में न सिर्फ मेरे देश के निवासियों का ही यह कहना है बल्कि विदेश के भी बहुत सारे आदमी इस तरह के दुख की बातें कह गए हैं। फ्रांसिस बेकन ने कहा है—No torture is worse than the torture of law. और सुना है महात्मा गांधी का कहना था : Lowyer's profession is a liar's profession[1] क्या सच है, क्या झूठ है, मालूम नहीं।

संदीप कहता, "जानते हैं चाचाजी, काशीनाथ बाबू ने मुझे एक कहानी सुनाई थी, उस कहानी को सुनिए—

एक आदमी एक दिन एक कब्रगाह से गुज़र रहा था। एकाएक देखा, एक कब्र पर श्वेत संगमरमर के स्मृति-फलक पर दो पंक्तियां काले अक्षरों में लिखी हुई हैं—

Here lies a lawyer
And
An honest man[2]

उस भले मानस ने उन दो पंक्तियों को दो बार पढ़ा पर उसका अर्थ समझ नहीं सका। सोचा, एक ही कब्र में दो व्यक्तियों को कैसे दफनाया गया ?

सो यही है अदालत और कानून का पेशा करनेवालों के प्रति आम लोगों की धारणा। कानून का पेशा करनेवाले के बारे में जिस तरह यह सब बात प्रचलित है उसी तरह राजनीतिकों के बारे में भी बहुत सारी बातें प्रचलित हैं। उदाहरण के

1. वकीलों का पेशा मिथ्यावादियों का पेशा है।
2. यहां एक वकील और ईमानदार आदमी चिरनिद्रा में निमग्न है।

लिए, सैमएल जॉनसन ने कहा है—Politics is the last resor' of a scoundrel. इसका अर्थ यह कि शैतानों का आखिरी आश्रय है राजनीति।

लेकिन राजनीतिक और कानून का पेशा करनेवालों को दरकिनार कर दिया जाए तो आज की दुनिया क्या चल सकती है? संसार में वास करने पर इनके हाथ से खुद को बचाकर जीवन जीना क्या संभव है?

दादी मां को लेकर मल्लिकजी जब कोर्ट या वकील बैरिस्टर के चेम्बर में जाते तो यह सब बात उनके मन में उथल-पुथल मचाने लगती।

सौम्य बाबू का खून का मामला बैंकशाल कोर्ट से चीफ प्रेसिडेंसी मैजिस्ट्रेट के कोर्ट में चला गया। यह जाने की गति इतनी धीमी, इतनी जटिल और उद्वेग-जर्जर है कि किसी भी आदमी को विक्षिप्त बना दे सकती है। लेकिन दादी मां चूंकि अन्दर से सशक्त थीं, इसलिए बरदाश्त कर लेती थीं। उनकी जगह और कोई होता तो हो सकता है वह यातना से मुक्ति पाने के लिए आत्महत्या कर लेता।

दादी मां ने एक दिन अपने एडवोकेट से पूछा, "आपको हालात कैसे लग रहे हैं?"

मिस्टर दासगुप्त ने कहा, "ठीक नहीं लग रहा है—"

"इसका मतलब? हम हार जाएंगे?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "लगता तो यही है—"

"मतलब?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "आप अपने को इसी स्थिति का सामना करने को तैयार कर लें—"

"क्यों?"

"एविडेंस हमारे खिलाफ है।"

"इसका मतलब कि सौम्य को फांसी हो जाएगी?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "हर स्थिति के लिए प्रस्तुत होने का अर्थ है मनुष्यता। सुख में विगतस्पृह और दुख में अनुद्विग्न होने का उपदेश हमारे ऋषि-मुनि दे गए हैं। जो इस तरह रह सकता है उसी को स्थितिप्रज्ञ कहा जाता है।"

"आप यह क्या कह रहे हैं? आपके रहते मैं अपने पोते की मृत्यु देखूंगी? [illegible] फिर क्या लेकर मैं जिन्दा रहूंगी? मेरे इतने रुपये-पैसे, इतनी [illegible] किसी काम में नहीं आएगी?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "कोई दूसरा वकील होता, तो हो सकता है [illegible] इस तरह का आश्वासन देता, लेकिन मैं आपको [illegible] बातें [illegible] रखना नहीं चाहता—"

"तो फिर इसका प्रतिकार क्या है?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "प्रतिकार और क्या हो सकता है? [illegible] यही है कि आप हर तरह की दुर्घटना का सामना करने को [illegible] में प्रार्थना कीजिए या फिर मंदिर के देवता के पास जाकर [illegible] इससे ज्यादा क्या कर सकता है?"

दादी मां बोलीं, "यही करना होता तो इतने [illegible] वकील के तौर पर नियुक्त क्यों करती? आपको [illegible]

मिस्टर दासगुप्त बोले, "मैं कोई देवता नहीं हूं । ज़्यादा-से-ज़्यादा मैं कोशिश कर सकता हूं, बस इतना ही । इससे अधिक कुछ करना मेरी सामर्थ्य के परे है—"

उसके बाद चंद लमहों तक चुप रहने के बाद फिर बोले, "आप एक और काम कर सकती हैं ?"

दादी मां को उम्मीद की हल्की-सी रोशनी दिखाई पड़ी। पूछा, "कौन-सा काम ?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "मैं जो कहूंगा, वह आप कर सकती हैं या नहीं, पहले यही बताइए। आप वह काम कर सकती हैं ?"

बगल में बैठे मल्लिकजी उत्तेजित हो उठे।

दादी मां बोलीं, "कौन-सा काम ?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "आप अपने पोते की शादी का इन्तज़ाम कर सकती हैं ?"

दादी मां सिहर उठीं। वकील साहब का दिमाग क्या गड़बड़ा गया है ?

बोलीं, "अपने पोते की शादी ? आप यह क्या कह रहे हैं ?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "हां-हां, मैं ठीक ही कह रहा हूं। आपके तो बस एक ही पोता है। उसकी शादी का इन्तज़ाम कर सकती हैं ?"

दादी मां और मल्लिकजी स्तंभित जैसे हो गए हैं।

दादी मां बोलीं, "लेकिन मेरा पोता तो फांसी का मुजरिम है। उससे कौन शादी करेगी ? कौन मां-बाप अपनी बेटी की शादी फांसी के मुजरिम से करने को तैयार होंगे ?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "तैयार क्यों नहीं होंगे ? रुपये के लिए आज के ज़माने में आदमी सब कुछ करने को राजी हो जाता है—यह तो आप जानती ही हैं।"

दादी मां बोलीं, "हां, हो तो ज़रूर जाते हैं। लेकिन ऐसा होने से भी आज के युग में कोई फांसी के मुज़रिम से जान-सुनकर अपनी लड़की की शादी करने को तैयार होगा ?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "हां-हां, राज़ी हो जाएगा। मैं इतने दिनों से कोर्ट में वकालत कर रहा हूं। मैं बता सकता हूं कि बाप होकर भी आदमी अगर अपने बेटे का खून कर सकता है, तो फांसी के मुज़रिम से भी अपनी लड़की की शादी कर सकता है। और अगर ऐसा नहीं कर सकिएगा तो आपके पोते को बचाया नहीं जा सकता है।"

आदमी के जीवन का जहां से प्रारम्भ होता है घूम-फिर कर वहीं आकर एक दिन अंत हो जाता है। उसका आरम्भ यदि शून्य से होता है तो शून्य में आकर ही उसका अंत होता है।

यही सौ में से निन्यानबे आदमी का गणित है।

पर इसका अपवाद भी है। लेकिन संसार में ऐसे कितने आदमी हैं ? उतने सौभाग्यशाली कितने आदमी हैं ? सुकरात के जीवन की शुरुआत शून्य से हुई थी, लेकिन अंत हुआ पूर्णांक में। राजकुमार सिद्धार्थ के साथ भी यही हुआ था। उनका

प्रारम्भ हुआ था सिद्धार्थ से और अंत हुआ गौतम बुद्ध के रूप में। ठीक इसी तरह कामरपुकुर के गदाधर ने शून्य से अपनी यात्रा का आरम्भ किया था और उसका अंत हुआ था दक्षिणेश्वर के परमहंसदेव के रूप में।

ऐसे लोगों की संख्या आदमी की दस उंगलियों में गिनी जा सकती है।

संदीप की हस्ती इन लोगों के समक्ष कितनी बड़ी है? वह अत्यन्त मामूली आदमी होकर पैदा हुआ था।

लेकिन आखिरी पड़ाव पर पहुंच कर?

अब तो उसके अन्त का क्षण निकट आ गया है। अब जेल से निकल वह देख रहा है कि उसने शून्य से आरम्भ किया था और अब शून्य की ओर ही पहुंचने जा रहा है।

हालांकि तब उसके मन में कितनी आशा और अभिलाषा थी! कितना आनन्द, उत्साह और आदर्श!

सबसे बड़ी खुशी उसे तब हुई जब बहुत दिनों के बाद उसके ब्रांच मैनेजर करमचंदजी ने उसे अपने कमरे में बुला भेजा।

कमरे में पहुंचते ही मालव्यजी बोले, "बैठो लाहिड़ी।"

इस तरह मालव्यजी ने उसे कभी बैठने नहीं कहा था।

संदीप उनके सामने एक कुर्सी पर बैठ गया।

मालव्यजी ने पूछा, "अब तुम्हारी तबियत कैसी है?"

संदीप इसका क्या जवाब दे! बस इतना ही कहा, "ठीक हूं।"

"घर का क्या हालचाल है?"

संदीप समझ नहीं सका कि इसका वह क्या उत्तर दे कि मैनेजर साहब को प्रसन्नता हो। वह कुछ उत्तर दे कि इसके पहले ही मालव्यजी बोले, "तुम्हारे घर का हालचाल ठीक नहीं है, मैं यह जानता हूं, फिर भी मैंने यों ही पूछ लिया!"

इस पर भी संदीप गुमसुम बैठा रहा। मालव्यजी ने कहा, "ठीक है, मेरी बात का तुम्हें जवाब नहीं देना है। अब एक दूसरी बात पूछ रहा हूं।"

"कहिए।"

"तुम्हारी बीमारी के दौरान मैं तुम्हारे नर्सिंग होम तकरीबन हर रोज जाता था। तुम्हें इसका पता नहीं चलता था। आखिर में एक-दो दिन तुम्हें पता चला था—इसके अलावा मैं नहीं चाहता था कि मेरी मौजूदगी का तुम्हें पता चले। नर्सिंग होम के डॉक्टर ने हिदायत दी थी कि तुमसे कोई नहीं मिले। इससे तुम्हारी बीमारी बढ़ सकती है।"

एकाएक मालव्यजी ने कहा, "यह क्या, तुम रो क्यों रहे हो?"

संदीप ने झट से पॉकेट से रुमाल निकाल आंसू पोंछ लिए। लेकिन तो भी उसकी रुलाई थमने का जैसे नाम नहीं ले रही थी।

"फिर रो रहे हो?"

अब संदीप बहुत मुश्किल से अपनी रुलाई रोकने की कोशिश करने लगा।

मालव्यजी बोले, "रुलाई आ रही है तो रोको मत। मैं तुम्हें बाधा नहीं दूंगा। तुम लोगों के किसी बंगाली महापुरुष का कहना है कि रोना अच्छा रहता है। रोने से कुंभक होता है।"

बाद ज़रा रुककर फिर बोले, "सुना है, जो लोग गुण्डे, लफं
ोते हैं वे कभी नहीं रोते। वे अगर ज़रा रो सकते तो गुण्डे, लफंगे और
नहीं होते। यही वजह है कि तुम्हारा रोना मुझे अच्छा लग रहा है—"
के बाद थोड़ी देर चुप रहे।
के बाद फिर कहना शुरू किया, "लेकिन जीवन सिर्फ रुलाई ही नहीं है,
है रुलाई और हंसी का योगफल। सुना है, संस्कृत भाषा में एक शब्द है।
द है 'कल्याण'। दुनिया के किसी और देश की किसी भाषा में ऐसा शब्द
। कल्याण का अर्थ सुख नहीं है। हालांकि सभी निहायत सुख ही चाहते
लेकिन निहायत सुख इतिहास में किसी को नहीं मिला है। जब कोई किसी
आशीर्वाद देता है तो यह नहीं कहता—'सुखी होओ'। कहता है—'तुम्हारा
याण हो।' सुख और दुख मिलाकर ही तो हमारी यह धरती और जीवन है।
लिए 'कल्याण' का अर्थ है सुख और दुख का समन्वय। यही वजह है कि अपने
क के जब तमाम लोगों को देखता हूं तो उन्हें देखकर मुझे बहुत दुख होता है
ोचता हूं, इन लोगों ने कभी इतिहास नहीं पढ़ा है, दुनिया नहीं देखी है और
जीवन का भी साक्षात्कार नहीं किया है। मुझे लगता है, ये लोग आदमी नहीं,
आदमी के अपभ्रंश हैं। मुझे लगता है, एकमात्र तुम्हीं आदमी हो।"

अब संदीप चौंक पड़ा। मालव्यजी ने कहा, "नहीं, चौंको मत। मुझे तुम्हारे
बारे में सब कुछ पता चल गया है।"

संदीप निर्वाक् हो गया। वह कुछ कहने जा रहा था लेकिन मालव्यजी ने उसे
रोक दिया।

बोले, "नर्सिंग होम में न गया होता तो तुम्हारी अस्मिता का पता नहीं चला
होता। यह भी एक कांड ही है। एक नर्स ने ही मुझे बताया कि एक महिला
तुम्हारी खातिर बिना खाए-पिए उन लोगों के पास पड़ी हुई है। यह सुनकर शुरू में
मुझे हैरानी हुई थी—"

मैंने नर्स से पूछा था, "वह कौन है? वह क्या मरीज़ की मां है?"

नर्स ने कहा, "नहीं, मां नहीं है।"

"तो फिर कौन है?"

नर्स ने जवाब दिया, "पेशेन्ट से उसका कोई रिश्ता नहीं है। वह एक कुमारी
लड़की है। उसकी अब तक शादी नहीं हुई है।"

मैंने कहा, "वह कहां है?"

मेरी बात सुनकर नर्स ने बताया कि वह उन लोगों के क्वार्टर में है। तीन
दिन से बिना खाए और सोए सुस्त पड़ी हुई है। आप अगर हमारे नर्सेस-क्वार्टर
जाएं तो उससे मुलाकात हो जाएगी। उसमें पैदल चलकर आने की सामर्थ्य न
है।

यह कैसे किया जा सकता है! नर्सों के क्वार्टर में बाहरी आदमी को प्र
करने का अधिकार नहीं है। लेकिन खास मामला होने के कारण मुझे जाना प
जाने पर देखा, एक बिस्तर पर एक महिला लेटी हुई है। देखने से पता चल
महिला बहुत कमज़ोर है। उठकर बैठने की ताकत नहीं है उसके अन्दर। न
पुकारने पर महिला ने आंखें खोलीं। आंख खोलने पर मुझे सामने देखा तो

बैठने की कोशिश की। लेकिन नर्स ने उसे रोक दिया। कहा: तुम्हें उठना नहीं है बहन, लेटी रहो। मैं इन्हें बुलाकर ले आई हूं। मिस्टर लाहिड़ी जिस बैंक में नौकरी करते हैं वे उसी बैंक के मैनेजर हैं। इन्होंने ही मिस्टर लाहिड़ी को हम लोगों के नर्सिंग होम में भेजा था। मैंने तुम्हारे बारे में बताया तो तुम्हें देखने चले आए—

यह सुनकर उस महिला ने कुछ जवाब नहीं दिया। मैंने पूछा: 'आप कौन हैं?'

महिला ने कोई जवाब नहीं दिया।

मैंने दुबारा पूछा, 'आप संदीप लाहिड़ी से मिलने आई हैं?'

अब महिला ने सिर हिलाकर कहा: 'हां।'

मैंने इसके बाद कहा, 'मैंने ही संदीप लाहिड़ी की बीमारी की सूचना उसके देस के पते पर भेजी थी। आप लोगों को वह पत्र मिला था?'

लड़की बोली: 'उसी पत्र को पाने के बाद मैं यहां आई हूं।'

'संदीप की मां को यह खबर मालूम है?'

लड़की बोली: 'हां मालूम है।'

'आप लोगों के घर में संदीप का और कोई नहीं रहता है?'

'मैं और मेरी मां भी उसी घर में रहती हैं। लेकिन उनकी काफी उम्र हो चुकी है। इसी वजह से मैं ही चली आई। संदीप के अलावा हम लोगों का कोई नहीं है। संदीप को अगर कुछ हो जाता है तो हम लोगों की क्या हालत होगी, कौन हम लोगों की देखरेख करेगा? यह सोच-सोचकर मेरी पागल जैसी हालत हो गई और मैं भागी-भागी यहां चली आई। हम लोगों के घर में संदीप के अलावा और कोई मर्द नहीं है।'

मैंने पूछा, 'आप लोगों का संदीप से कौन-सा रिश्ता है? संदीप आप लोगों का कौन है?'

महिला ने कहा: 'कोई नहीं।'

'अगर कोई नहीं है तो आप लोग उसके घर में क्यों रहती हैं?'

यह प्रश्न सुन महिला चंद लमहों तक चुप्पी साधे रही। उसके बाद बोली: 'दुनिया में क्या खून का रिश्ता ही सबसे बड़ा होता है? और कोई रिश्ता क्या दुनिया में नहीं होना चाहिए?'

इस सवाल का मैं कोई जवाब नहीं दे सका। इसलिए चुप हो गया।

अब महिला ने खुद ही कहा, 'आप किसी तरह संदीप को बचा लें, मैं आपके पैरों पड़ती हूं। संदीप का कुछ बुरा होगा तो हम बेमौत मर जाएंगी। मेरी मां को कैंसर हो गया है। संदीप को नौकरी करने पर जो वेतन मिलता है उसका पूरा पैसा इलाज के पीछे ही खर्च हो जाता है। उसमें कुछ बच जाता है तो हम किसी तरह अपना पेट भरती हैं।'

महिला की बात सुनकर मैं निर्वाक् हो गया। कुछेक क्षण तक मेरे मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। तब मुझे याद आया कि तुमसे यह सब बात मैं पहले ही सुन चुका हूं। तुम्हीं ने एक दिन मुझे यह सब बताया था। उसके बाद मैंने महिला से कहा, 'आप बिना खाना खाए यहां क्यों पड़ी हुई हैं? आप यूं बिना खाए पड़े रहिएगा तो संदीप क्या स्वस्थ हो जाएगा? एक तो वह आपकी मां के कैंसर के

इलाज की चिन्ता से बेचैन है, उस पर अगर आपकी तबीयत खराब हो जाती है तो उसकी क्या हालत होगी, इस पर गहराई से सोचकर देख लीजिए।'

मेरी बात सुनकर महिला ने शुरू में कोई उत्तर नहीं दिया। उसके बाद बोली, 'मैं हर दिन देवता से मनौती करती रहती हूं—'

'मनौती करती है, इसका मतलब ?'

'यह कहकर मनौती करती रहती हूं कि संदीप जब तक स्वस्थ नहीं हो जाता है, तब तक मैं पानी तक नहीं पिऊंगी।'

महिला की बात सुनकर मुझे लगा, यह कोई साधारण स्त्री नहीं है। इसे अपने निश्चय से डिगाना आसान काम नहीं है। इस तरह की लड़की मैंने अपनी जिन्दगी में नहीं देखी है। और न केवल मैंने, बल्कि किसी ने नहीं देखी होगी।

संदीप मालव्यजी की बातें तन्मयता के साथ सुन रहा था।

मालव्यजी बोले, "एक दिन मैंने तुमसे पूछा था कि तुम ऑफिस से इतना कर्ज़ क्यों लेते हो तो इस पर तुमने अपनी पारिवारिक समस्या का उल्लेख किया था। तुम्हारा कथन इन्हीं लोगों के सन्दर्भ में था ?"

संदीप ने सिर हिलाकर कहा, "हां सर।"

मालव्यजी ने पूछा, "इसी का नाम विशाखा है ?"

संदीप ने कहा, "हां सर।"

"इसी की मां को कैंसर है ?"

"हां सर।"

"इसी की शादी के लिए तुम चारों तरफ का चक्कर काट रहे हो ?"

"हां सर।"

"इन लोगों का अपना कोई आदमी नहीं है ?"

"नहीं, वह सब तो आपको बता ही चुका हूं। इस पर उसकी मां को कैंसर है, डाक्टरों को यही सन्देह है। इस हालत में पागल जैसा हो गया हूं। क्या करूं, समझ में नहीं आता। जो उन लोगों के सगे-सम्बन्धी हैं उनके पास भी भेजने का साहस नहीं हो रहा है।"

मालव्यजी ने कहा, "तो ऐसी हालत में तुम विशाखा से शादी कर सकते हो ?"

यह प्रस्ताव सुनकर संदीप चिहुंक उठा, "मैं ?"

मालव्यजी ने कहा, "क्यों ? यह सुनकर तुम चौंक क्यों पड़े ? उससे शादी करने में तुम्हें कौन-सी आपत्ति है ? उससे शादी कर लोगे तो उन लोगों की भलाई ही होगी और तुम्हारी मां के कंधे से गृहस्थी का काम-धाम का भार भी उतर जाएगा। तुम्हारी मां उम्रदार हो चुकी हैं। संसार में कोई हमेशा के लिए जिन्दा रहने नहीं आया है। इस पर भी एक बार गौर करो। तब तुम्हारी देखरेख करने वाला कौन रहेगा ?"

इस बात का क्या जवाब दे संदीप !

मालव्यजी ने अपना कथन जारी रखा, "इसके अलावा तुम्हारी शादी की उम्र भी हो चुकी है—आखिर में तुम्हें एक दिन शादी करनी ही है। सो यदि करनी ही है तो अभी करने में कौन-सा दोष है ?"

अबकी भी संदीप ने कोई उत्तर नहीं दिया।

उस समय बैंक का काम जोर-शोर से चल रहा था। क्लाइंट आ-जा रहे थे। रुपये का लेन-देन भी चल रहा था। सभी अपने-अपने काम में व्यस्त थे।

लेकिन जो व्यक्ति उस प्रतिष्ठान का संचालक है वह अपने चेम्बर में संदीप के साथ क्यों व्यस्त है, किसी की समझ में नहीं आ रहा है। ऐसा तो कभी नहीं होता। इसके अलावा संदीप जैसे एक तुच्छ कर्मचारी के इलाज के लिए उस प्रतिष्ठान के संचालक ने इतने हजार रुपये क्यों खर्च किए? संदीप लाहिड़ी तो एक मामूली औसत दर्जे का कर्मचारी है। उसे नर्सिंग होम भेजकर स्वस्थ कराने हेतु बैंक का इतना रुपया खर्च करने का मानी क्या है?

इन प्रश्नों का उत्तर सब किसी को नहीं मिल रहा था। जब कि ये सारे प्रश्न तमाम लोगों को परेशानी में डाले हुए थे। परेश दा ने कहा, "मैं जानता हूं, सारा कुछ जानता हूं।"

सभी ने पूछा, "कारण क्या है परेश दा? आपको क्या मालूम है?"

परेश दा इतने सहज ढंग से सस्ते में उत्तर देने वाला शख्स नहीं है।

फिर भी लोगों का दबाव बढ़ता जा रहा है। वे पूछने लगे, "कहिए न परेश दा, कारण क्या है?"

परेश दा ने कहा, "तो फिर वादा करो कि तुम लोग चंदा करके मुझे मोगलई पराठे और शोरबेदार मांस खिलाओगे?"

"हां परेश दा, वादा करते हैं कि खिलाएंगे।"

"वादा कर रहे हो न?"

"हां परेश दा, हम वादा करते हैं कि आपको लगातार चार दिनों तक पराठे और शोरबेदार मांस खिलाएंगे।"

परेश दा ने कहा, "आखिर में कोई वादा खिलाफी नहीं करेगा न?"

"नहीं, हम वादा खिलाफी नहीं करेंगे।"

"तो आज टिफिन के वक्त खाने के दौरान इसका रहस्य बताऊंगा।"

उस ओर तब मालव्यजी संदीप को समझा रहे थे, "सच-सच बताओ, शादी करने में तुम्हें आपत्ति क्यों है?"

संदीप इस बात का कोई युक्तिसंगत उत्तर नहीं दे पा रहा था। वह उत्तर ही क्या दे! कौन-सा उसका उत्तर सही होगा?

अचानक जो उत्तर उसके जेहन में आया, वही कहने जा रहा था। तभी टेलीफोन आया। टेलीफोन आते ही मालव्यजी अन्यमनस्क हो गए। बहुत ही आवश्यक फोन है। हेड ऑफिस से फोन आया है।

संदीप ने महसूस किया कि टेलीफोन पर जो वार्तालाप हो रहा है वह बैंक से संबंधित और गोपनीय है, इसलिए उसका वहां बैठे रहना उचित नहीं है। वह वहां से तुरन्त उठकर चेम्बर के बाहर चला आया।

किसी-किसी आदमी की जिन्दगी इस बैंक के मैनेजर के चेम्बर की तरह ही चारों तरफ दीवार से घिरी होती है। वहां वह एकाकी, निःसंग रहा करता है। बाहर के तमाम लोगों से तरह-तरह के कारणों से जुड़े रहने और घुलने-मिलने रहने के

बावजूद उसके एकाकीपन के चेम्बर में किसी को प्रवेश करने का अधिकार नहीं होता।

संदीप भी बचपन से कितने ही लोगों के संपर्क में आया है। कितने ही लोगों से उसके भावों का आदान-प्रदान हुआ है। लेकिन अपने संगीहीन गोपन चेम्बर में उसने क्या किसी को प्रवेश करने का अधिकार दिया है? यहां तक कि उसकी मां भी क्या उसके निभृत कक्ष में प्रवेश कर सकी हैं! वहां वह स्वतंत्र और स्वार्थी है। उस अकेलेपन के जगत का वह प्रजाहीन सम्राट है।

तो फिर वह मालव्यजी को क्यों अपने गोपन चेम्बर में प्रवेश करने देगा?

रामचंद्र को चौदह वर्ष के वनवास की सजा दी गई थी। साथ में थे सीता और लक्ष्मण। रामायण-काल से ही यह कहानी सबको मालूम है। लेकिन किसी को तत्कालीन रामचंद्र की निःसंग मानसिकता का समाचार मालूम है?

वह समाचार न तो तुलसीदास के रामचरितमानस में लिखा हुआ है, न कृत्तिवास की रामायण में और न ही वाल्मीकि की संस्कृत की रामायण में।

रामचंद्र के मन की बातों का पता एकमात्र रामचंद्र को ही था। उनके मन के चेम्बर के अन्दर घुस सके, ऐसा एक भी आदमी नहीं था। चौदह वर्ष के वनवास के दरमियान भी सीता रामचंद्र को पहचान नहीं सकी। पहचान पाती तो न राम-रावण का युद्ध होता, न सीता-हरण होता और न ही सीता को पाताल में प्रवेश करना पड़ता।

संदीप को जिस तरह मां समझ नहीं पाती थी, विशाखा भी उसे समझ नहीं पाती थी।

नर्सिंग होम से घर जाने पर मां कहती, "क्यों रे, तेरा चेहरा इस तरह का क्यों हो गया? चिन्ता से? इतनी चिन्ता मत किया कर। जो होने को है, होगा ही। सोच-सोचकर सेहत बिगाड़ने से फायदा ही क्या है? विधि के विधान को कोई मिटा नहीं सकता।"

संदीप कहता, "विधि का क्या विधान है यही सोच-सोचकर तो परेशान हो रहा हूं—"

मां कहती, "अगर किसी को यह मालूम होता तो दुनिया उलट गई होती। हज़ारों कोशिश करने पर भी जिसे जाना नहीं जा सकता, उसकी चिन्ता करना छोड़ दे—"

संदीप कहता, "ऐसा कर पाता मां, तो मैं बीमार ही क्यों पड़ता? या मुझे अच्छी-सी नौकरी मिलने के बाद भी तुम्हें इस बुढ़ापे में इतना कष्ट क्यों उठाना पड़ता? मैं तुम्हें थोड़ा-सा भी आराम नहीं दे सका।"

मां कहती, "मेरे बारे में सोचना तू छोड़ दे। मेरी जिन्दगी का तीन हिस्सा बीत चुका है और अब चौथा चल रहा है। मैं चल बसूं तो जी जाऊं! तू मेरे बारे में चिन्ता मत कर—"

संदीप कहता, "तुम इस तरह की बातें मत किया करो मां। तुम लोगों को मालूम नहीं है मां, कि तुम्हारे बारे में सोचते रहने के कारण रात में मुझे नींद भी नहीं आती। नर्सिंग होम में लेटा-लेटा सिर्फ तुम्हारे ही बारे में सोचा करता था। मैं सिर्फ यही सोचता रहता हूं कि तुम्हारा बेटा होकर भी मैं तुम्हें थोड़ी-सी शांति

क्यों नहीं दे सका।"

मां कहती, "तुम्हारी इतनी उम्र हो चुकी है फिर भी तुम्हारा पागलपन दूर नहीं हुआ। तू अब भी मेरी गोद का नन्हा-सा शिशु ही बना हुआ है—"

संदीप कहता, "मैं हमेशा तुम्हारी गोद का बच्चा ही बनकर रहना चाहता हूं मां, मैं अब बड़ा होना नहीं चाहता।"

मां कहती, "तू क्या बोलता है, इसका कोई ठिकाना नहीं। तू हमेशा मेरी गोद का बच्चा बनकर रहना चाहेगा तो क्या होगा? मुझे तो एक दिन मरना ही है। तू क्या यह सोचता है कि मैं हमेशा जीवित रहूंगी? धत्त, पागल कहीं का! किसी के मां-बाप क्या हमेशा जिन्दा रहते हैं या जिन्दा रहना उनके लिए उचित है?"

संदीप कहता, "नहीं मां, तुम ऐसा मत कहो। मेरे पिताजी भले ही मर गए हैं, पर तुम हमेशा जिन्दा रहो मां। तुम मर जाओगी तो मैं किसके पास रहूंगा, कौन मेरी देखरेख करेगा, कौन मेरे बारे में सोचेगा? तुम हमेशा-हमेशा के लिए जीवित रहो मां, तुम्हारे पैरों पड़ता हूं, तुम हमेशा जिन्दा रहो—"

मां हसती, "तू बिलकुल पागल है, पागल! तुझे किसी दिन शादी नहीं करनी है? तू हमेशा कुआरा ही रहेगा? तेरी एक दिन गृहस्थी होगी, एक दिन तेरी शादी कर मैं बहू घर पर ले आऊंगी—यह मेरी कितने दिनों की साध है!"

नर्सिंग होम से वापस आने के बाद मां से बेटे की अक्सर इसी तरह की बातें होतीं। बहुत दिनों के बाद बेटा मां के आसपास है। इस तरह का सुयोग इसके पहले कभी नहीं आया था। मुन्ना बचपन में ही परमेश देवरजी के पास चला गया था। उस समय चटर्जी बाबुओं ने ही मां को अपने घर के सदस्य जैसा बना लिया था। यदि कभी-कभार लड़का बेड़ापोता आता तो सो भी महज एक दिन या एक रात के लिए। आकर दूसरे ही दिन कलकत्ता लौटकर चला जाता। ऐसा ही था मुन्ना के तत्कालीन जीवन-यात्रा का नियम।

उसके बाद मां ने चटर्जी भवन का काम-काज छोड़ दिया। लड़का भी बेड़ा-पोता से रोजाना नौकरी करने के लिए कलकत्ता जाता है। इससे बढ़कर सुख मनुष्य के लिए और क्या हो सकता है!

लेकिन अचानक यह क्या से क्या हो गया! सारा कुछ जैसे एक ही पल में उलट-पुलट गया। बहुत दिनों तक खोजने-ढूंढ़ने पर भी विशाखा नहीं मिली। आखिर में मिली कहां तो जेलखाने में।

खोजने-ढूंढ़ने पर मिली भी तो उसकी मां बीमारी के चंगुल में फंस गई। और यह एक ऐसी बीमारी है जिसे राज-रोग ही कहा जा सकता है। हां, राज-रोग ही है। इस तरह की बीमारियां राजा-रजवाड़े के घर ही शोभा पा सकती हैं। बीस हजार रुपया खर्च करने पर यह बीमारी अच्छी हो सकती है और नहीं भी हो सकती है।

"विशाखा कहां है मां?"

मां कहती, "वह भी तेरे बारे में सोचते-सोचते टूट गई है। बगल के कमरे में लेटी हुई है।"

संदीप ने कहा, "नर्सिंग होम की नर्सों से सुनने को मिला कि अब तक तुम्हें

होश नहीं आया था, उस दरमियान विशाखा ने खाना-पीना बंद कर दिया था।"

मां ने कहा, "जितने दिनों तक तुम्हारी खबर नहीं मिली थी, बेहद छटपटाती रही। जिस दिन तुम्हारे बैंक के मैनेजर की चिट्ठी मिली, उसी दिन जो कपड़ा पहने थी, वही पहने तुम्हें देखने कलकत्ता रवाना हो गई थी। हम लोगों की बात मानी ही नहीं—"

संदीप ने कहा, "तुम लोग उसे रोक नहीं सके? वह अगर बीमार हो जाती तो क्या होता? ऐसे में तो हालात और नाजुक हो जाते।"

मां बोली, "मैं उस लड़की को भला रोक सकती हूं? इतनी ज़िद्दी लड़की को रोकना मेरे बूते की बात है? वह किसी की बात माननेवाली है? तू उसे पहचानता नहीं?"

संदीप ने कहा, "मैं तो यही सोच रहा हूं मां। कलकत्ता जाने पर कहीं उन नशाखोरों के चंगुल में फंस जाती तो क्या होता! ईश्वर ने मुझे बचा दिया। उन लोगों के चंगुल में फंस जाती तो कौन उसे बचाता? मैं तनहा आदमी, किस-किस तरफ ध्यान रखूं?"

ज़रा रुककर संदीप ने कहा, "इतने दिनों तक तुम लोगों का बाज़ार कौन करता था मां?"

मां ने कहा, "कमला की मां के अलावा और कौन करता?"

"और रसोई-पानी?"

मां ने कहा, "जो कुछ बन पड़ता था मैं अकेले ही करती थी। खाना पकाने में मुझे तकलीफ़ नहीं होती। ज़िन्दगी-भर तो बस एक यही काम करती आई हूं। दिन-रात तेरे बारे में ही सोचती रहती थी और भगवान को पुकारती रहती थी। वे दिन मेरे किस तरह बीते हैं वह या तो मैं जानती हूं या भगवान ही जानते हैं।"

उसके बाद बोली, "चलूं, तेरे लिए दूध ले आऊं। तेरा दूध पीने का वक्त हो चुका है।"

संदीप ने कहा, "नहीं, तुम मेरे पास बैठो, मैं दूध नहीं पियूंगा—"

"अरे, दूध क्यों नहीं पियेगा? दूध ने कौन-सा दोष किया?"

संदीप ने कहा, "इससे तो अच्छा यही है कि तुम मेरे पास बैठी रहो मां। तुमसे थोड़ी-सी बातचीत करूंगा तो मैं जल्द से जल्द अच्छा हो जाऊंगा। बचपन में तुम मुझे अपने पास लिटाकर कितनी कहानियां कहती थीं, याद है?"

मां ने कहा, "अरे उन दिनों की बात रहने दो। उस समय तू कितना छोटा था! ज़माना भी दूसरी ही तरह का था। उस समय मैं सोचती, तू बड़ा हो जाएगा तो मेरा सारा दुख दूर हो जाएगा। लेकिन आदमी सोचता कुछ है और होता कुछ और ही है—"

इतना कहकर कमरे के बाहर जा कटोरे में दूध ले आई। बोली, "यह ले, पी ले।"

अब संदीप ने दूध पीने में आनाकानी नहीं की। मां ने कपड़े के पल्लू से संदीप का मुंह पोंछ दिया। संदीप ने कहा, "देखो मां, पैसे के अभाव में मैं तुम्हें थोड़ा-सा दूध पीने को नहीं दे पाता और मैं स्वार्थी की तरह दूध पी रहा हूं—"

मां बोली, "तू चुप रह, तू फिजूल की बकवास करता रहता है। तू खून-पसीना एक कर रोजी-रोटी कमा रहा है और तुझे भूखा रखकर मैं दूध पियूं ? कोई मां ऐसा कर सकती है ? फिर कभी इस तरह की बात जबान पर लाया तो समझ लेना—"

संदीप ने झट से मां के हाथ पकड़ लिए ; बोला, "नहीं मां, तुम जाना मत, मेरे पास जरा बैठी रहो—"

मां बोल उठी, "यह तो पागल के पल्ले पड़ गई मैं। मुझे क्या घर-गृहस्थी का कोई काम नहीं है ? तेरे पास बैठे रहने से ही मेरा काम निपट जाएगा ? हाथ छोड़, अरे हाथ छोड़ दे—"

एकाएक विशाखा ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। उसके हाथ में एक गिलास पानी है।

मां बोली, "अरे तू क्यों कष्ट करने आई ? मैं तो हूं ही। अभी मुन्ना को दूध पिलाया है।"

विशाखा ने कहा, "अब संदीप के दवा खाने का वक्त हो गया है, दवा ले आई हूं।"

मां ने कहा, "मुझसे कह सकती थी। तुम्हारी तो तबीयत खराब है। तुम तकलीफ उठाकर क्यों आई ?"

विशाखा बोली, "अब मुझे कौन-सी तकलीफ है मौसीजी !"

मां बोली, "दो, मुझे दवा और पानी का गिलास दे दो। मैं दवा खिला देती हूं। तुम लेटी थीं, फिर जाकर लेट जाओ।"

विशाखा के चेहरे पर फीकी मुसकान तिर आई। बोली, "नहीं-नहीं, मैं अच्छी हो गई हूं। मेरे लिए आप चिन्ता नहीं करें—"

इतना कहकर संदीप के पास आई और दवा की टिकिया उसकी ओर बढ़ाते हुए बोली, "लो, मुंह बाओ—"

संदीप ने और-और दिनों की तरह मुंह बा दिया और विशाखा ने टिकिया उसके मुंह के अन्दर डाल दी। उसके बाद पानी का गिलास संदीप की ओर बढ़ा दिया।

संदीप ने पानी पीकर कहा, "कल से मुझे दवा मत देना—"

विशाखा ने कहा, "क्यों ? दवा क्यों नहीं खाओगे ?"

मां ने पूछा, "क्यों रे, दवा क्यों नहीं खाएगा ?"

संदीप ने कहा, "मैं अब अच्छा हो गया हूं, दवा कब तक खाता रहूंगा ?"

विशाखा ने कहा, "सुन रही हैं मौसीजी, आपका बेटा क्या कह रहा है ?"

मां ने संदीप की ओर ताकते हुए कहा, "तू कहां अच्छा हुआ है ? तू खुद नहीं देख पा रहा है कि कितना दुबला हो गया है !"

संदीप ने कहा, "और कितने दिनों तक दवा खाता रहूं ? और कितने दिनों तक लेटा हुआ रहूं ? हमेशा लेटे-लेटे दवा खाने से ही काम चल जाएगा ? ऑफिस में मेरे वेतन का पैसा कट रहा है। अगले महीने वेतन के तौर पर कुछ भी नहीं मिलेगा। उस समय कैसे चलेगा, यह तो मुझे ही सोचना है। मेरे अलावा और कौन सोचेगा ?"

बात करते-करते संदीप बेहद थक जाता।

विशाखा ने कहा, "मौसीजी, आप अपने लड़के को ज़रा कम बातें करने कहिए न।"

मां बोली, "मेरे कहने से ही क्या मुन्ना मान जाएगा?"

विशाखा ने कहा, "आने के दौरान डाक्टर साहब ने मुझसे बार-बार कहा था, मरीज़ ज़्यादा बातें न करे, इस पर ध्यान रखिएगा। हमें भी जहां तक हो सके, उससे कम बातें करनी चाहिए।"

मां बोली, "मैं भी तो उससे यही कहती हूं। लेकिन वह मेरी बात क्यों मानने लगा?"

संदीप ने कहा, "बातचीत क्या यूं ही करता हूं? तुम लोगों के बारे में ही सोचकर बातें करता हूं।"

मां बोली, "तुम्हें हम लोगों के बारे में नहीं सोचना है। हम चाहे मरें या जिएं, यह हम सोचेंगे। और किस्मत में जो है तो उसे तो कोई मेट नहीं सकता। तू चाहे लाख सोच पर कोई रास्ता नहीं निकल पाएगा।"

संदीप ने कहा, "अगर ऐसी ही बात हो तो फिर विशाखा क्यों इतनी जल्दी कलकत्ता के नर्सिंग होम जाकर तीन दिन तीन रात इस तरह बिना खाए और सोए पड़ी रही? और अगर उसे कोई बीमारी हो जाए तो मुझे ही डाक्टर और दवा के लिए दौड़-धूप करनी होगी। उस समय तो घर में कोई मददगार नहीं रहेगा—"

विशाखा बोली, "चलिए, हम लोग कमरे के बाहर चले चलें। हम लोग रहेंगी तो आपका लड़का अंट-संट बकता रहेगा और अपनी सेहत और बिगाड़ लेगा—चलिए।"

इतना कहकर वह मौसीजी के साथ बाहर चली गई।

वह भले ही बातें न करे लेकिन मन? मन को वह कैसे चुप कराएगा? आदमी का मन आराम लेने का नाम नहीं लेता। जब तक किसी को नींद नहीं आ जाती तब तक उसे वह पीड़ित करता रहता है। अतीत, वर्त्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में वह अपने आपसे बातें करता रहता है। वह अपने मन के हाथ से जिस चीज़ को गढ़ता है, मन के पैर से उसे तोड़ता है। और जो लोग मन-सर्वस्व मनुष्य हैं वे ही दुनिया के सबसे दुखी मनुष्य हैं। उन्हें शांति देगा, ऐसे विधाता-पुरुष का सृजन किसने किया है?

इसी तरह आहिस्ता-आहिस्ता संदीप दवा, सेवा-सुश्रूषा और विश्राम से थोड़ा-बहुत स्वस्थ होता जा रहा था। ऐसे में ऑफिस से ज़्यादा गैर-हाजिर रहने से काम नहीं चल सकता। नागा करने से अगले महीने सबको निराहार रहना पड़ेगा। मां शुरू में थोड़ी-बहुत भयभीत थी। बोली थी, "अब ही जाएगा? और कुछ दिन तक विश्राम करने से अच्छा रहता। सेहत बिलकुल ठीक हो जाती।"

संदीप ने कहा था, "पहले एक महीने की छुट्टी ली थी, उसके बाद और एक महीने की छुट्टी ली। अब छुट्टी लेने से तुम सबों को निराहार रहना पड़ेगा।"

अन्ततः मां कह ही क्या सकती थी! मन-ही-मन देवता का स्मरण करने लगी। विशाखा ने भी सुना। मौसीजी के कान में भी यह बात पहुंची। मौसीजी

ऐसी स्थिति में मां बोली, "दीदी, उसे रोककर मत रखो, बीमारी से उठने के बाद आज ऑफिस जा रहा है। अब देर करेगा तो ट्रेन छूट जाएगी। उसे अभी छोड़ दो, कहीं उसकी गाड़ी न छूट जाए—"

इस पर मौसीजी ज़रा शान्त हुई। संदीप का हाथ छोड़ते ही वह तेज़ कदमों से स्टेशन की ओर भागने लगा।

तो भी मां दरवाज़े तक आई और सतर्क करती हुई बोली, "इतना मत दौड़, बीमारी से उठा है। अभी ज़रा आहिस्ता-आहिस्ता जा बेटा, आहिस्ता-आहिस्ता—"

जितनी दूर तक नज़र जा सकती है, मां अपने बेटे की ओर अपलक ताकती रही। उसके बाद संदीप जब आंखों से ओझल हो गया तो आंखें मूंदकर अदृश्य देवता को हाथ जोड़कर मन-ही-मन प्रार्थना की: "प्रभो, मेरे मुन्ना का खयाल रखना, उसका कोई नहीं है, तुम्हीं उसका खयाल रखना—"

ट्रेन से जाने के दौरान संदीप को मौसीजी की याद आने लगी। सिर्फ़ मौसीजी की ही नहीं, बल्कि तमाम लोगों की। उसके अंदर एक यही दोष है। हर क्षण वह दूसरों के बारे में क्यों सोचता है? वही तपेश गांगुली, दादी मां, मुक्तिपद मुखर्जी, सौम्यपद, गोपाल हाजरा, मौसीजी, विशाखा वगैरह उसे सोचने को क्यों विवश करते हैं? जबकि उसके खुद के बारे में सोचनेवाला कोई नहीं है—सिवा मां के।

यह सब सोचते-सोचते उसके जेहन में तरह-तरह की चिन्ताएं चक्कर काटने लगती हैं। वह सोचता है, आदमी पैदा क्यों होता है? पैदा होने के पहले आदमी कहां था, क्यों और किस काम को करने वह दुनिया में आया है, मृत्यु के बाद वह कहां जाएगा?

संदीप के अतिरिक्त और किसी ने इस पर सोचा है?

हां, सोचा है। बहुत दिन पहले संदीप ने टॉमस कार्लाइल के द्वारा लिखी गई एक कविता पढ़ी थी। उस समय उसे पता चला था कि कार्लाइल साहब ने इस पर चिन्तन किया था। उस समय उस कविता की कुछ पंक्तियां उसे याद थीं। वे पंक्तियां थीं:

What is man ? A foolish baby
Daily Strives, and fights, and frets
Demanding all, deserving nothing
One small grave is what he gets.

आदमी ज्ञानहीन शिशु के अतिरिक्त कुछ नहीं है। दिन-रात सिर्फ़ झगड़ा-टंटा, मारपीट और गुस्सा करता रहता है। उतना झगड़ा-टंटा, मारपीट और गुस्सा करने का कारण क्या है? कारण यह कि उसके अन्दर चाहे योग्यता हो या न हो लेकिन उसे हर चीज़ चाहिए। लेकिन उसके बदले उसे क्या मिलता है महज़ तीन हाथ की कब्र और कुछ भी नहीं।

ऑफिस जाते ही जब मालव्यजी को इसका पता चल गया कि संदीप ऑफिस आया है तो उसे बुला भेजा। संदीप जैसे ही उनके कमरे के अन्दर पहुंचा उन्होंने बहुत सारी बातें छेड़ दीं। खासकर विशाखा के सन्दर्भ में कहने लगे। वे जब तक बातें करते रहे संदीप खामोश बैठा रहा। उस दिन अचानक टेलीफोन-कॉल न

आना होता तो विशाखा के सन्दर्भ में और काफी देर तक बातचीत चलती रहती।

मैनेजर साहब के कमरे से निकलते ही ऑफिस के तमाम लोग संदीप के पास इकट्ठे हो गए।

सभी एक ही प्रश्न उछालने लगे—साहब संदीप को अब तक क्या कह रहे थे? अपने काम की क्षति कर साहब तो किसी से इस तरह बातें नहीं करते। फिर···?

संदीप उन प्रश्नों को टालने की कोशिश करने लगा। लेकिन वे लोग छोड़ने-वाले नहीं हैं।

बोले, "बताओ न संदीप दा, तुमसे क्या बातें की?"

एक तरफ संदीप कुछ बताने को तैयार नहीं और दूसरी ओर वे लोग भी जान छोड़ने को तैयार नहीं।

बैंक का जो काम खत्म नहीं हुआ है, उसे तो करना ही है। उसी के अन्तराल में जिरह चलने लगा। जिरहों की बौछार से संदीप पस्त हो गया। फिर भी उसने एक भी शब्द नहीं कहा। ऐसे में उन्होंने तय किया, छुट्टी के पहले जब काम से फुर्सत मिलेगी तो अक्षौहिणी सेना की तरह वे लोग संदीप की धर-पकड़ करेंगे, उसका घेराव करेंगे।

लेकिन उनका सारा संकल्प, सारी योजना ठप पड़ गई।

छुट्टी के एक घंटा पहले मालब्यजी ने दुबारा संदीप को बुला भेजा।

मालब्यजी ने संदीप को बुलाकर कहा, "टेलीफोन आ जाने के कारण उस समय हमारी बातचीत में रुकावट पैदा हो गई। अब बताओ, तुम क्या करोगे? तुम उस लड़की से शादी कर सकते हो?"

संदीप ने कहा, "इस पर सोचने का अब तक मुझे वक्त नहीं मिला है।"

"अब कब सोचोगे? तुम्हारी उम्र बढ़ती जा रही है और साथ-ही-साथ विशाखा की भी उम्र बढ़ती जा रही है। मैं उस लड़की को कई दिन देख चुका हूं। मुझे लगता है, आज के जमाने में ऐसी लड़की शायद ही देखने को मिलती है। साथ ही यह पढ़ी-लिखी हुई भी है।"

संदीप ने कहा, "लेकिन शादी करने पर मैं गृहस्थी कैसे चलाऊंगा? मुझे जितना वेतन मिलता है, यह तो आप जानते ही हैं। उस पर उसकी मां बीमार है। उनके इलाज के लिए डाक्टर ने बीस हजार रुपये की फेहरिस्त दी है। यह सब खर्च मैं कैसे उठाऊंगा? इतना जरूर है कि मुझे मकान का किराया नहीं देना पड़ता है।"

मालब्यजी ने एक क्षण सोचा उसके बाद बोले, "अगर मैं तुम्हारा वेतन बढ़ा दूं—"

"आप कैसे मेरा वेतन बढ़ाइएगा?"

मालब्यजी ने कहा, "यह मेरा मामला है, मैं समझूंगा। वेतन बढ़ाने से तुम शादी करोगे या नहीं, यही बताओ।"

तो भी संदीप उधेड़बुन में पड़ा रहा। सवेरे योगीजी इसी मसले पर हठ ठाने हुई थी। विशाखा से शादी करने के लिए संदीप से वादा कराने की कोशिश की थी। उस समय भी वह वचन नहीं दे सका था। मां कमरे के अंदर चली आई थी

ी वजह से वह किसी तरह टाल-मटोलकर चला आया था। एक तरह से वह
सका पलायन ही था।

लेकिन संदीप मालव्यजी के सामने टालमटोल कर कैसे भाग सकता है?

मालव्यजी ने कहा, "मेरी वात का जवाव दो। तुम्हारा वेतन वढ़ा दूं तो तुम
शादी क[illegible] राजी हो?"

संदीप ने कहा, "लेकिन मां से वगैर वातचीत किए मैं कैसे शादी कर सकता
हूं?"

"तो मां से जाकर कहो कि तुम्हारा वेतन वढ़ाने का भार मैंने लिया है।"

"आप मुझ पर इतनी कृपा क्यों कर रहे हैं?" संदीप ने पूछा।

मालव्यजी ने कहा, "कृपा तुम पर नहीं, वल्कि उस लड़की पर कर रहा हूं।
उस लड़की से वातचीत करने पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि इससे शादी करने
के वजाय अगर तुम किसी दूसरी लड़की से शादी करोगे तो छले जाओगे। मैं तुम्हारे
भले के लिए ही कह रहा हूं कि तुम विशाखा से शादी कर लो।"

संदीप ने कहा, "लेकिन आप मेरा वेतन कैसे वढ़ा दीजिएगा?"

मालव्यजी ने कहा, "तुमसे एक कॉनफिडेंशियल वात वता रहा हूं, अभी किसी
को मत वताना। शीघ्र ही हम लोगों का एक नया ब्रांच खुलने जा रहा है। मैं तुम्हें
उस ब्रांच का मैनेजर वना दे सकता हूं। वह सामर्थ्य मुझे है। अव तुम वताओ कि
उस लड़की से शादी करने को तैयार हो या नहीं?"

शादी! शादी के दिन ही यह दुर्घटना घटी। दुनिया में हर रोज़ करोड़ों शादि
होती हैं। तुम चाहे किसी भी देश का क्यों न रहो, किसी भी धर्म का अनुयायी क
न रहो, पर शादी के मामले में कहीं कोई निषेधाज्ञा नहीं है। आदिवासी, ता
कथित अशिक्षितों के वीच भी विवाह की प्रथा प्रचलित है।

तव संदीप की प्रोन्नति हो चुकी थी। अव वह हावड़ा के नए ब्रांच का मैने
है। इतने लोगों के रहने के वावजूद उसे ही मैनेजर वनाया गया है। इससे
सारे सहकर्मियों को जलन हुई है। यह स्वाभाविक भी है। खासतौर से वंगा
के लिए।

परेश दा ने कहा था, "संदीप डूव-डूवकर पानी पी रहा है, इसका तो अ
ही नहीं चला—"

लेकिन ज़वान खोलकर कुछ कहने की किसी में हिम्मत नहीं है। क्य
प्रोन्नति के लिए वाकायदा परीक्षा हुई थी। जिन लोगों ने आवेदन-पत्र
नियमानुसार सभी ने परीक्षा दी थी। कोई यह नहीं कह सकता कि कि
पक्षपात किया गया है। परीक्षा में अव्वल होने का गौरव एकमात्र सं
प्राप्त हुआ है। यह संदीप के जीवन का एक उल्लेखनीय अध्याय है।

नए ब्रांच का मैनेजर होने का अर्थ है वेतन में वढ़ोत्तरी। लगभ
वेतन मिलेगा, इसके अलावा ऊपरी आमदनी। मां वोली, "अव तु
वेटा—"

संदीप ने कहा, "लेकिन मौसीजी का इलाज कैसे होगा? उस

रुपया खर्च होगा। वह अभी कैसे आएगा?"

मौसीजी बोलीं, "नहीं बेटा, मेरा इलाज कराना अभी छोड़ो। विशाखा की शादी हो जाए तो मुझे मरने में भी कोई दुख नहीं होगा।"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद फिर बोलीं, "विशाखा की अगर शादी नहीं होती है तो मेरी बीमारी दूर होने से फायदा ही क्या? मेरी बीमारी के पीछे तुम्हारा सारा पैसा खर्च हो जाता है। लेटे-लेटे मैं सारा कुछ देखती रहती हूं। मेरे भाग्य में अगर सुख होता तो विशाखा के बापू की मौत ही क्यों होती?"

बातें करते-करते मौसीजी रो देती। वह रुलाई थमने का नाम ही नहीं लेती। घंटा-दर-घंटा वह रुलाई बेरोक-टोक चलती रहती।

मां मौसीजी की इस रुलाई की अभ्यस्त हो चुकी थी। जो आदमी हर रोज बीमार ही रहता है उसकी सेवा-सुश्रुषा से आदमी कभी-न-कभी ढिलाई बरतता ही है।

और जिससे शादी होने की बात है वह विशाखा जैसे प्रस्तर की मूर्ति हो गई है।

एक दिन खाने के वक्त संदीप ने पुकारा, "सुनो विशाखा।"

विशाखा उन दिनों घर गृहस्थी के काम में ही ज्यादातर उलझी रहती। संदीप की पुकार सुनकर रुक गई। बोली, "कुछ कहना है?"

संदीप ने कहा, "तुमसे मुझे कुछ बातें करनी हैं—"

"क्या?"

संदीप ने कहा, "हम लोगों की शादी—"

विशाखा ने कहा, "सो सब सुनने के लिए तो बहुत समय की आवश्यकता है। अभी तुम ऑफिस जा रहे हो, अभी तुम्हारे पास भी बातचीत करने का वक्त नहीं है—"

"तो फिर तुम कब सुनोगी? कब फुर्सत में रहोगी?"

विशाखा ने कहा, "तुम जो कुछ कहोगे, मुझे मालूम है।"

"क्या जानती हो, बताओ तो?"

विशाखा ने कहा, "तुम मुझसे पूछोगे कि मैं इस शादी के लिए सहमत हूं या नहीं—"

संदीप ने कहा, "तुमने ठीक ही कहा है। हिन्दुओं की शादी में अलबत्ता लड़की की राय नहीं पूछी जाती, सिर्फ मर्द की राय पर ही फैसला किया जाता है।"

विशाखा ने कहा, "वह सब मैं जानती हूं।"

संदीप ने कहा, "तो भी तुमसे जानना चाहता हूं कि इस शादी के मामले में तुम असहमत तो नहीं हो?"

विशाखा ने कहा, "इस शादी के बारे में अपनी असहमति प्रकट करूं, ऐसा उपाय भी नहीं है। तुम मेरी मां के इलाज के लिए हजारों रुपये खर्च करोगे और मैं किस बूते पर अपनी असहमति प्रकट करूं?"

संदीप ने कहा, "सिर्फ इसी वजह से तुम मुझसे शादी करने को राजी हो? और कोई दूसरी वजह नहीं है?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, यह सिर्फ लेन-देन का मामला है।"

संदीप ने कहा, "सिर्फ लेन-देन ? और कुछ भी नहीं ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं।"

संदीप ने कहा, "तुम मुझसे शादी न करोगी तो भी मैं तुम्हारी मां का इलाज कराता रहूंगा—इसमें कोई रुकावट नहीं आएगी। मेरे लिए मेरी मां और मौसीजी एक जैसी हैं।"

विशाखा ने कहा, "मुझे यह भी मालूम है।"

संदीप ने कहा, "यही नहीं, मेरे बैंक के संचालक, जिन्होंने मुझे प्रमोशन दिया है, उनका विशेष अनुरोध है कि मैं तुमसे शादी करूं।"

विशाखा ने कहा, "मेरी शादी से उनका कौन-सा स्वार्थ जुड़ा हुआ है ?"

संदीप ने कहा, "यह मुझे मालूम नहीं, लेकिन उन्होंने तुम्हें देखा है।"

"मुझे उन्होंने देखा है ?"

संदीप ने कहा, "हां, न केवल देखा है बल्कि तुमसे बातें भी की हैं।"

"उन्होंने मुझे कहां देखा है ?"

संदीप ने कहा, "नर्सिंग होम में। मैं बेहोश पड़ा हुआ था। और तभी से वे मुझे अक्सर तकाजे कर रहे हैं कि तुमसे शादी कर लूं। बोले थे : उससे तुम शादी नहीं करोगे तो आखिर में तुम्हें पछताना पड़ेगा।"

विशाखा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। बोली, "उसके बाद ?"

संदीप ने कहा, "उसके बाद मेरी शादी होने पर जिससे कि मेरी आर्थिक उन्नति हो सके और मेरी आमदनी में वृद्धि हो सके, यह सोचकर उन्होंने मुझे हावड़ा के नए ब्रांच का मैनेजर बना दिया है। इन सबों के मूल में तुम हो।"

विशाखा ने सीधे इस बात का उत्तर न देकर कहा, "तुम्हें ऑफिस जाने में देर हो रही है। तुम्हारी गाड़ी छूट जाएगी—"

संदीप ने कहा, "मेरी बात का उत्तर क्या यही है ?"

विशाखा ने कहा, "मैं अगर सचमुच ही इस बात का उत्तर देने जाऊं तो ऑफिस जाने में तुम्हें देर हो जाएगी।"

संदीप ने कहा, "तुम्हें ज्यादा बातें नहीं कहनी हैं। सिर्फ 'हां' या 'ना' में जवाब देने से ही काम चल जाएगा।"

विशाखा चुप्पी साधे रही। अचानक मां ने कमरे के अन्दर आकर दोनों को इस हालत में देखकर कहा, "क्यों रे मुन्ना, अभी तक तेरा खाना खत्म नहीं हुआ ? आखिर में ट्रेन छूट जाएगी।"

संदीप ने कहा, "मैं विशाखा से पूछ रहा था कि मुझसे शादी करने में उसे कोई एतराज है या नहीं ?"

मां बोली, "यह भी कोई बात है भला ! विशाखा के मन की बात तुम समझ नहीं पाते ? वह क्या इस तरह की लड़की है कि सरे-बाज़ार खड़ी होकर कहे, अजी, मैं तुमसे शादी करूंगी ? कोई लड़की क्या जबान से इस तरह की बात निकाल सकती है ?"

संदीप अब क्या कहे ! झट से खाना खत्म किया। उसके बाद हाथ-मुंह धोकर जल्दी-जल्दी शर्ट पहन रास्ते पर निकल आया। वह चूंकि बैंक का मैनेजर है इस-

लिए देर करने से उसका काम नहीं चल सकता। ऑफिस में घुसते ही तरह-तरह के आवेदन लेकर तरह-तरह के लोग उपस्थित होते हैं। उसके काम का आरंभ जो साढ़े दस बजे होता है तो उसका अन्त होता है शाम सात या साढ़े सात बजे। उसके बाद ताला बन्द करने के बाद ही उसे छुट्टी मिलती है। पर आखिरी ट्रेन से ही जाना पड़ता है। घर के तमाम लोग सदीप की राह जोहते रहते हैं।

जब वह घर पहुंचता है तो थककर चूर-चूर हो जाता है।

मां पूछती है, "आजकल तुझे आने में इतनी देर क्यों होती है ?"

सदीप कहता है, "मेरा प्रमोशन हुआ है, तनख्वाह बढ़ गई है तो फिर देर नहीं होगी ? मैं ही तो उस ऑफिस का संचालक हूं। सारा काम समझाने-बुझाने के बाद ही आना पड़ता है।"

मां ने पूछा, "कुछ खाया है ?"

सदीप ने कहा, "नहीं मां, आज एक-एक कर इस तरह के कामों का सिल-सिला चल पड़ा कि खाने का वक्त ही नहीं मिला।"

"तो फिर बातचीत अभी बंद, पहले तेरे खाने का इन्तजाम कर दूं—"

यह कहकर विशाखा को पुकार कर कहा, "आओ तो बेटी, जरा आटा गूंध दो, मैं फटाफट रोटियां सेंक लूंगी। आओ।"

उस दिन सुबह-सुबह दादी मां के कमरे में टेलीफोन घनघना उठा।

हमेशा की तरह बिन्दु ने ही टेलीफोन उठाया। आवाज सुनकर दादी मां को दे दिया। बोली, "दादी मां, मझले बाबू ने इन्दौर से फोन किया है—"

दादी मां ने रिसीवर हाथ में लेकर कहा, "मुक्ति, क्या खबर है ? तू मजे में है न ?"

दूसरी तरफ से मुक्तिपद ने कहा, "सौम्य की क्या खबर है ?"

दादी मां ने कहा, "खबर बहुत बुरी है—"

"क्यों ? बुरी क्यों ?"

"तेरे एडवोकेट दासगुप्त ने कहा है, मुन्ना को बचाया नहीं जा सकता।"

"क्यों ?"

दादी मां ने कहा, "एविडेंस सौम्य के खिलाफ है। उसने ठंडे दिमाग से अपनी बीवी की हत्या की है।"

"फिर क्या होगा ?"

"इसीलिए दासगुप्त साहब ने कहा है, सौम्य की शादी करा देना अच्छा रहेगा।"

मुक्तिपद ने कहा, "मिस्टर दासगुप्त पागल है क्या ? फांसी के मुजरिम से कौन अपनी लड़की की शादी करने को तैयार होगा ?"

दादी मां ने कहा, "दासगुप्त साहब ने बताया, तैयार हो जाएगा। बाप होकर अगर कोई अपने बेटे की हत्या कर सकता है तो फांसी के मुजरिम से भी अपनी लड़की की शादी करने को तैयार हो जाएगा। वे इतने दिनों से कोर्ट में वकालत कर रहे हैं और यह भी नहीं जानेंगे ?"

मुक्तिपद इसका क्या जवाव दें, उनकी समझ में नहीं आया।

दादी मां ने कहा, "तुम्हारे इंदौर में कोई अच्छा ज्योतिषी है ?"

"ज्योतिषी है या नहीं, मालूम नहीं। क्यों? ज्योतिषी क्या करेगा ?"

दादी मां ने कहा, "एक ऐसी विवाह-योग्य लड़की की जन्मपत्री चाहिए, जिसका वैधव्य-योग नहीं हो।"

मुक्तिपद अवाक् हो गए मां की वात सुनकर। दादी मां वोली, "अगर कोई ज्योतिषी हो तो पता लगाकर मुझे सूचित करना।"

वात करते-करते तीन मिनट का वक्त खत्म हो गया। मुक्तिपद ने कॉल को और तीन मिनट के लिए वढ़ा दिया।

दादी मां वोलीं, "ज्योतिषियों के पास तो वहुत सारे लोग लड़कियों की शादी के संवंध में जाते हैं, वैसा कोई ज्योतिषी हो तो मुझे सूचित करना। वह लड़की चाहे कानी हो, लंगड़ी हो, किसी जात की हो। ब्राह्मण ही हो, ऐसी कोई वात नहीं। मेहतर की लड़की हो तो भी काम चल जाएगा। मोटी वात, लड़की की जन्मपत्री में वैधव्य-योग नहीं होना चाहिए।"

मुक्तिपद निर्वाक् हो दादी मां की वातें सुन रहे थे।

सिर्फ इतना ही कहा, "तुम पागल हो गई हो क्या मां ?"

दादी मां वोलीं, "अरे, मैं पागल नहीं हुई हूं। पागल हो जाती तो जी जाती। इसके वाद अगर ज्यादा दिनों तक मुकदमा चलता रहेगा तो मुझे पागल होकर गले में फंदा डालकर मर जाना होगा। उस समय मुझे राहत मिलेगी और तुम लोगों को भी।"

मुक्तिपद ने कहा, "मां, तुम इस तरह की वातें क्यों कर रही हो ?"

दादी मां वोलीं, "कहूंगी नहीं ? तू मेरी कोख से पैदा होकर मुझे इस नरक में अकेले छोड़कर जा सकता है तो मैं किसके भरोसे जिन्दा रहूंगी, तू ही वता ? इस वुढ़ापे में मेरी तकदीर में इतना दुख है, पहले से इसकी जानकारी होती तो मैं बहुत पहले ही गले में फंदा डाल चुकी होती। ऐसी हालत में तुझसे इतनी वातें भी नहीं करनी पड़तीं, साथ ही तुझे और मुझे दोनों को राहत की सांस लेने का मौका मिलता।"

उसके वाद प्रसंग वदलकर वोलीं, "खैर, यह वात रहे, तू एक ज्योतिषी का पता लगाना। यहां भी मैं ज्योतिषी की खोज कर रही हूं। देखा जाए, क्या होता है !"

"सुना है, भाटपाड़ा नामक एक जगह है, वहां वहुत सारे ज्योतिषी हैं—वहां भी जा सकती हो—"

दादी मां वोलीं, "वहां जाना भी क्या वाकी रखा है। उन लोगों ने पैसा ठगने के अलावा कोई काम नहीं किया। किसी ने मन के लायक कोई काम नहीं किया।"

"सुना है, काशी में भी वहुत सारे ज्योतिषी हैं। वहां तो तुम्हारे गुरुदेव हैं। वहां भी तो पता लगा सकती हो।"

दादी मां गुस्सा गईं। वोलीं, "तुझे इस वूढ़ी औरत को हुक्म देने में शर्म का अहसास नहीं होता ? तेरे जैसे जवान लड़के के रहते मैं दिल्ली, बनारस भटकती

रहूं ? तो फिर मैंने तुझे कोख में रखा ही क्यों था ? तूने मेरा कोई उपकार तक नहीं किया।"

अब मुक्तिपद ने अपने दुख का बयान कर मां को शांत करने की कोशिश की, "काश, तुम्हें पता होता मां, कि मैं कितने कष्ट में हूं ! मुझे मदद करने वाला ऐसा कोई आदमी नहीं है जिस पर मैं विश्वास कर चैन की सांस ले सकूं।"

दादी मां बोलीं, "क्यों तेरी जोरू कहां है ? तू तो जोरू का गुलाम है। उसके रहते तेरी देखरेख करने वाले की कमी हो सकती है ? और मेरे बारे में एक बार गौर कर तो।"

"सब समझता हूं मां, सब समझता हूं। नहीं तो सवेरे-सवेरे तुम्हें फोन ही क्यों करता ? मेरी देखरेख करने वाला एक भी आदमी नहीं है। हां, एक भी आदमी नहीं है मां। मेरी हालत तुम्हारी ही जैसी है। मेरा भी कोई नहीं है—"

दादी मां बोलीं, "क्यों ? बहूरानी क्या सिर्फ खाना खाती है और सोई रहती है ?"

"नहीं मां, सिर्फ सिनेमा देखती है। हर हफ्ता चौदह-पन्द्रह सिनेमा देखती है—"

"यह क्या कह रहा है तू !"

"और उसके बाद बाकी समय ब्यूटी-पार्लर में गुजारती है।"

"ब्यूटी-पार्लर में ? वह कौन-सी चीज है ?"

मुक्तिपद बोले, "वह अपने हाथ से जूड़ा नहीं बांधती। ब्यूटी-पार्लर जाकर जूड़ा बंधवा आती है। देह-हाथ-पैर में क्रीम-स्नो लगवाकर आती है। यहां के धनी-मानी लोगों की बीवियों में से बहुतेरी औरतें ऐसा ही कराती हैं—"

दादी मां बोलीं, "इसके लिए वे लोग रुपया लेते होंगे ?"

"रुपया लेंगे नहीं ? उन लोगों का तो यही धंधा है। रोजाना एक सौ रुपया चार्ज करते हैं। मां की देखा-देखी पिकनिक ने भी यही करना शुरू कर दिया है—सिर्फ जूड़ा बंधवाने में हर रोज दो सौ रुपये खर्च होते हैं—"

यह सुनकर दादी मां को ऊब का अहसास हुआ। बोलीं, "अब मत कह। यह सुनना भी पाप···"

बात खत्म होने के पहले ही टेलीफोन की लाइन खट् से कट गई। दादी मा ने रिसीवर रख दिया।

अब दादी मां पहले की तरह गंगा स्नान करने नहीं जा पाती हैं। क्योंकि वकील-एडवोकेटों के घर से लौटने में किसी-किसी दिन काफी रात हो जाती है। उसके बाद नींद आने में भी विलंब हो जाता है। आजकल गृहदेवी सिंहवाहिनी की आरती के समय रहना संभव नहीं हो पाता है।

और उस पर अब एक नया काम सिर पर सवार हो गया है। वह है ज्योतिषियों की खोज करने का काम।

मल्लिकजी का काम पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा हो गया है। तमाम अखबारों में ज्योतिषियों के बारे में जो विज्ञापन छपते हैं, उन्हें पढ़ना पड़ता है। पढ़कर उनके पते खाते में दर्ज करने पड़ते हैं। बाहर का पता होता है तो उन ज्योतिषियों को पत्र लिखना पड़ता है। कलकत्ता या उसके आसपास का होने से वहां सीधे

जाना पड़ता है। किसी ज्योतिषी से मिलने का समय निश्चित होता है साढ़े दस बजे, किसी से शाम सात बजे और किसी से रात आठ बजे। किसी का फीस है दस रुपया या पचीस रुपया और किसी का एक सौ से डेढ़ सौ रुपये तक।

सवाल बस एक ही रहता है—ऐसी कोई अनव्याही लड़की है या नहीं, जिसकी जन्मपत्री में वैधव्य-योग नहीं हो। अर्थात् जन्मपत्री में लग्न का सप्तम स्थान या सप्तम पति का अवस्थान शुभ द्योतक होना चाहिए। उसके साथ सौम्य की जन्म-पत्री भी दिखानी पड़ती है और सारी घटना की विस्तार से चर्चा करनी पड़ती है।

दूसरी ओर वक्त का भी अभाव रहता है उनके पास। सीमा के आखिरी छोर का समय करीब आता जा रहा है। सौम्यपद के सिर पर मौत का खांड़ा झूल रहा है। किसी भी वक्त वह खांड़ा सिर पर गिर सकता है।

सभी ज्योतिषी एक ही बात बताते हैं। महामृत्युंजय कवच ही इस मामले में अचूक साबित होगा। किसी तरह पात्र के हाथ या गले में इसे बांध दिया जाए तो उसकी फांसी का हुक्म रद्द हो जाएगा। कीमत कोई ज्यादा नहीं, मात्र एक हज़ार रुपया।

लेकिन फांसी के मुजरिम को कौन कवच बांधने जाएगा या बांधेगा ही कैसे?

दरअसल ज्योतिषी के पास जाने का इरादा कोई समझ नहीं पाता है।

मल्लिकजी सभी को यह बात समझाते हैं।

वे कहते हैं, "हम ताबीज या कवच के लिए नहीं आते हैं। हम सिर्फ एक ऐसी अनव्याही लड़की का पता चाहते हैं, जिसके भाग्य में वैधव्य-योग नहीं हो।"

बहुतेरे ज्योतिषी बातें सुनते हैं पर कोई खास समाधान नहीं बता पाते हैं।

उसके बाद उन्हें एडवोकेट के पास जाना पड़ता है।

सारा कुछ सुनने के बाद एडवोकेट दासगुप्त कहते हैं, "लेकिन ऐसा नहीं होगा तो मैं कुछ नहीं कर पाऊंगा। आप लोग और भी खोज-बीन करिए। जितनी जल्द हो सके खोजकर पता लगाइए—"

मल्लिकजी घर लौटकर दादी मां को यह बात बताते हैं। दादी मां यह सुनकर कुछ देर तक सोचती रहती हैं। कहती हैं, "फिर क्या होगा? आप और खोज-पड़ताल कीजिए—"

मल्लिकजी के लिए यह सबसे मुश्किल काम हो गया है। एक बीघा या दो बीघा जमीन खोदना आसान काम है। लेकिन अच्छे ज्योतिषी की पड़ताल करना क्या आसान काम है?

कलकत्ता की जितनी भी गहने-जेवरात की दुकानें हैं वहां जाकर भी खोज-पड़ताल की गई। किसी-किसी गहने-जेवरात की दुकान में आठ-दस ज्योतिषी जन्म-पत्री देखकर आदमी की समस्या का समाधान कर देते हैं। ज़रूरत होती है तो रत्न-धारण करने का भी उपदेश देते हैं। किसी को हीरा देते हैं, किसी को पन्ना, किसी को चुन्नी और किसी को मोती। उससे दुकान की आमदनी बढ़ती है। साथ ही ज्योतिषी भी कुछ रुपये कमा लेते हैं।

कलकत्ता में जितने भी ज्योतिषी-प्रतिष्ठान हैं सभी को छान मारा। कभी बहू बाज़ार, कभी श्याम बाज़ार और कभी गड़ियाहाट अंचल। रुपये के साथ-साथ

वक्त भी बर्बाद हो रहा है। बूढ़ा आदमी मल्लिकजी परेशान-परेशान हो उठे हैं।

दो-चार ऐसी लड़कियों का पता लेकर चलता है, मगर वहां जाने पर जानकारी मिलती है कि ऐसी लड़कियों की शादी छह महीने पहले ही हो चुकी है। ऐसे में पैसा और परिश्रम व्यर्थ साबित हुआ है। हर दिन वापस आने के बाद दादी मां को कई बार इसके बारे में रिपोर्ट देनी पड़ती है। दोपहर, तीसरे पहर और शाम के वक्त मल्लिकजी को जो कुछ देखने-सुनने को मिलता है, जो कुछ उनकी समझ में आता है, उसके बारे में दादी मां को ब्योरेवार बताते हैं।

उस दिन कोई आदमी पीछे से उनका नाम लेकर पुकारने लगा, "ओ मल्लिकजी—"

मल्लिकजी तब कुछ मिलाकर बस से उतरे थे और एक दुकान की ओर बढ़ रहे थे। अचानक उनका नाम लेकर कौन पुकार रहा है, यह देखने के ख्याल से पीछे की तरफ मुड़े। जो आदमी उन्हें पुकार रहा था वह लंबा डग भरता हुआ उन्हीं की तरफ आ रहा था।

जरा सी चूक हो जाती तो वह आदमी गाड़ी के नीचे दब जाता।

करीब आने पर भी मल्लिकजी उसे पहचान नहीं सके। करीब आने के बाद वह आदमी हांफने लगा। मल्लिकजी ने पूछा, "मुझे पुकार रहे हैं ?"

आदमी बोला, "आप मुझे पहचान नहीं सके मैनेजर साहब ?"

"आप कौन हैं, बताइए तो ? मैं पहचान नहीं सका।"

आदमी बोला, "आप ही विडन स्ट्रीट में मुखर्जी-भवन के मैनेजर हैं न ? आप मुझे पहचान नहीं सके ?"

मल्लिकजी जल्दबाजी में थे। बोले, "आप कौन हैं, बताइए न।"

आदमी बोला, "यह क्या मैनेजर साहब, इसी बुद्धि को लेकर आप मैनेजरी कर रहे हैं ? इस तरह के भुलक्कड़ होकर आप मैनेजरी का काम कैसे सम्भालते हैं ?"

मल्लिकजी बोले, "मैं जरा जल्दबाजी में हूं···"

आदमी बोला, जल्दबाजी तो हरेक को रहती है जनाब। सिर्फ आपको ही जल्दबाजी है ? मुझे क्या जल्दबाजी नहीं है ? हमें भी जल्दबाजी है मैनेजर साहब, हमें भी काम-धाम कर रोजी-रोटी का जुगाड़ करना पड़ता है। हमें भी बाप-दादे से कोई जमींदारी नहीं मिली है—"

मल्लिकजी भारी मुश्किल में पड़ गए। बोले, "मैं बूढ़ा हो चुका हूं, आप लोगों की उम्र से मेरी उम्र बहुत ज्यादा है। गलती होना स्वाभाविक है—"

अब वह आदमी बोला, "नरेश गांगुली का नाम आपको याद है ?"

नरेश गांगुली ! मल्लिकजी जैसे आसमान से नीचे गिर पड़े।

बोले, "ओह, आप नरेश गांगुली हैं ! आपका चेहरा ऐसा क्यों हो गया ? आप बीमार थे क्या ?"

नरेश गांगुली ने कहा, "जिन्दगी-भर तो मैं बीमारी ही भोगता आ रहा हूं—"

मल्लिकजी ने कहा, "इसके पहले तो कभी आपको बीमार नहीं देखा था।"

नरेश गांगुली ने कहा, "यह बीमारी बाहर से दिखाई नहीं पड़ती है मैनेजर

साहब। वह शरीर के अन्दर की बीमारी है।"

"शरीर के अन्दर की बीमारी का मतलब ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "आपको तो सारा कुछ मालूम ही है। रुपये-पैसे की कमी का चिह्न बाहर से नहीं दिखाई पड़ता है।"

मल्लिकजी ने कहा, "ठीक है। मैं अभी एक जरूरी काम से आया हूं। देर होने से दुकान बन्द हो जाएगी।"

"किस चीज की दुकान ?"

मल्लिकजी ने कहा, "ज्वेलरी की दुकान।"

"ज्वेलरी की दुकान ? गहना-जेवरात खरीदना है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मैं गहना-जेवरात खरीदूंगा ? मेरे पास क्या इतने रुपये हैं ? इसके अलावा अभी सोने की इतनी कीमत है कि कितने आदमी गहने-जेवरात खरीद सकते हैं ! मैं ज्योतिषी से सलाह-मशविरा करने आया हूं।"

"ज्योतिषी ? ज्योतिषी क्या करेगा ?"

मल्लिकजी बोले, "एक कुमारी लड़की की जन्मपत्री की खोज में आया हूं—"

"कुमारी लड़की की जन्मपत्री की खोज में ? क्यों ?"

"एक शादी का मामला है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "किसकी शादी ?"

"एक पात्र की।"

"किस जात की ?"

मल्लिकजी ने कहा, "चाहे किसी भी जात की हो।"

"किसी जात का मायने ?"

"मायने पात्र को किसी खास जात की लड़की नहीं चाहिए। किसी भी जात की लड़की होने से काम चल जाएगा—"

तपेश गांगुली ने कहा, "फिर मेरी ही तो लड़की है। मेरी इकलौती बेटी। देखने में भी खूबसूरत है। जिसे डैनाविहीन परी कहा जाता है।"

मल्लिकजी ने पूछा, "आपकी लड़की की जन्मपत्री है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां, है। कहिए तो कल आप लोगों के घर ले जाकर दिखा आ सकता हूं।"

मल्लिकजी बोले, "लेकिन जन्मपत्री में वैधव्य-योग रहने से काम नहीं चलेगा।"

"मतलब ?"

मल्लिकजी बोले, "मतलब यह कि पात्री के पति की कभी मृत्यु न हो। मृत्यु तो सबकी किसी न किसी दिन होती ही है, लेकिन पात्री के जीवन-काल में पात्र की न हो—"

तपेश गांगुली ने कहा, "आपने तो मेरी लड़की को देखा है मल्लिकजी। बताइए बिजली सुंदरी है या नहीं ?"

मल्लिकजी बोले, "यह तो बहुत पहले की बात है। अभी क्या वह याद है ?"

तपेश गांगुली बोला, "अभी आप उसे एकबार देखना चाहेंगे? मैं आपको किसी भी दिन दिखा सकता हूं। बताइए, कब देखिएगा?"

मल्लिकजी कुछ कहें कि इसके पहले ही तपेश गांगुली बोला, "देखने पर आपको पता चल जाएगा कि मेरी बिजली के रूप में विधाता ने कहीं ज्यादा निखार ला दिया है। आप कृपया किसी दिन मेरे मनसातल्ला लेन के मकान में आने का कष्ट करें।"

मल्लिकजी ने कहा, "यदि समय मिला तो आऊंगा, आज बड़ा ही व्यस्त हूं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "तो फिर मैं ही किसी दिन बिजली को अपने साथ ले आप लोगों के विडन स्ट्रीट के घर जाऊंगा—"

"नहीं-नहीं, ऐसा काम मत कीजिएगा। आजकल मैं कब घर पर रहता हूं और कब नहीं रहता हूं, इसका कोई ठिकाना नहीं। मुझे दादी मां के साथ दिन-भर घर के बाहर रहना पड़ता है—"

तपेश गांगुली तो भी छोड़नेवाला जीव नहीं है। बोला, "मैनेजर साहब मैं सवेरे पांच बजे के पहले ही बिजली को लेकर पहुंच जाऊंगा। इतने सवेरे तो आप लोग बाहर नहीं निकलिएगा।"

"अरे नहीं-नहीं, आपको अपनी लड़की को लेकर नहीं आना है। आप अपनी लड़की की जन्मपत्री ले आइएगा तो इसी से काम बन जाएगा। सिर्फ ज्योतिषियों को दिखाना है कि आपकी लड़की की जन्मपत्री में वैधव्य-योग है या नहीं—"

तपेश गांगुली बोला, "नहीं मैनेजर साहब, आप सिर्फ एक बार मेरी लड़की को देखकर बता दीजिएगा कि वह रूपसी है या नहीं—"

मल्लिकजी बोले, "यह तो भारी मुश्किल में फंस गया। कह रहा हूं कि हम लोगों का सौम्यपद फांसी का मुजरिम है। फांसी के मुजरिम से आप अपनी इकलौती लड़की की शादी करने को तैयार हैं?"

तपेश गांगुली बोला, "हां-हां, फांसी का मुजरिम है तो इसमें हर्ज ही क्या है? पात्र के पास दौलत है। पात्र के पास करोड़ों रुपया तो है। पात्र को अगर फांसी ही दे दी जाती है तो धन-दौलत तो उसके साथ नहीं जाएगी। पात्र के करोड़ों रुपये बैंक ही में रह जाएंगे—"

मल्लिकजी उससे जितनी ही जान छुड़ाने की कोशिश करते हैं वह उतना ही उनके रास्ते में अवरोध पैदा करके खड़ा हो जाता है। आखिर में मल्लिकजी ने उसे एक तरह से ठेलकर जाने के लिए रास्ता बनाने का प्रयास किया।

लेकिन तपेश गांगुली तभी एक कांड कर बैठा। मल्लिकजी के सामने पीठ के बल लेट गया। कहने लगा, "आपको यह भलाई करनी ही है मैनेजर साहब। मैं आपके पैरों को कसकर पकड़ रहा हूं। देखना है, आप बगैर जबान दिए कैसे चले जाते हैं। इस ब्राह्मण के बेटे को वचन दीजिए, वचन दीजिए—"

मल्लिकजी की उस समय त्रिशंकु जैसी हालत हो गई। न खड़ा रह पा रहे हैं और न जा पा रहे हैं। इस बीच तमाशा देखने के लिए एक-एक कर लोगों की भीड़ इकट्ठी होने लगी। सभी आकुल होकर एक ही प्रश्न उठा रहे हैं: "क्या हुआ है भाई? क्या हुआ है?"

पर चढ़ने से ही टिकट कटाना पड़ता है।

भीड़-भाड़ रहती है तो टिकट कटाने का झमेला नहीं रहता। थोड़ी दूर जाकर उतर जाने से ही काम चल जाता है। उतरकर दूसरी ट्राम पर चढ़ जाता है। इसी तरह एक के बाद दूसरी ट्राम पर चढ़ते-चढ़ते अपने ठिकाने पर पहुंच जाओ, तुम्हें टिकट कटाने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

ट्राम पर चढ़ तपेश गांगुली किसी बेंच पर नहीं बैठता। खड़े-खड़े या लटकते हुए जाना ही पसन्द करता है तपेश गांगुली। उसमें एक दृष्टि से असुविधा रहने पर भी पैसे के मामले में सुविधा रहती है। पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। इसी तरह की एक ट्राम पर चढ़ते ही देखा; सामने की सीट पर मल्लिकजी बैठे हैं।

तपेश गांगुली भीड़ ठेलता हुआ एकबारगी मैनेजर साहब के सामने जाकर खड़ा हो गया।

बोला, "अरे आप यहां हैं! और मैं आपको खोजते-खोजते हैरान हो गया।"

मल्लिकजी तपेश गांगुली को अनदेखा करना चाहते थे। शुरू में कुछ भी नहीं बोले। जिस तरह खिड़की से बाहर की तरफ ताक रहे थे उसी तरह ताकते रहे। लेकिन तपेश गांगुली इतनी आसानी से छोड़नेवाला नहीं है।

बोला, "ओ मैनेजर साहब, एकबार इधर देखिए। मैं तपेश गांगुली हूं। एकबार मेरी ओर देखें तो सही।"

मल्लिकजी तपेश गांगुली के व्यवहार से बेइंतहा ऊब गए हैं। लिहाजा एकबार उसकी ओर देखा तक नहीं।

लेकिन मल्लिकजी का वक्त शायद बहुत खराब चल रहा था। एक तो दादी मां के सारे काम का बोझ उन्हीं के कंधे पर पड़ गया था और उस पर तपेश गांगुली का यह जुल्म।

बगल में बैठा हुआ आदमी शायद अपने मुकाम पर पहुंच गया था, इसलिए वह जैसे ही उठकर खड़ा हुआ, तपेश गांगुली झट से वहां बैठ गया। बैठकर मल्लिकजी के पैर पर हाथ रखकर उनका ध्यान आकर्षित करने लगा, "ऐ मैनेजर साहब, एकबार इस तरफ मुड़िए न; ऐ मैनेजर साहब—"

मल्लिकजी ने खुद को बुरे फंसा हुआ देखकर कहा, "मैं आपसे बार-बार कह चुका हूं कि फांसी के मुजरिम से अपनी लड़की की शादी कीजिएगा तो दो दिन [illegible] फिर भी आप मेरे पीछे क्यों पड़ गए हैं?"

[illegible] कहा है कि लड़की अगर विधवा [illegible] को रुपया मिलने से ही काम चल जाएगा—"

मल्लिकजी ने कहा, "आप बाप हैं या कसाई? आपको रुपये का इतना लालच है?"

तपेश गांगुली ने पहले की तरह ही मल्लिकजी के पैर पकड़ना चाहा।

लेकिन तब मल्लिकजी के लिए यह सब बरदाश्त के बाहर की चीज हो गया था। वे तुरन्त सीट छोड़कर खड़े हो गए और ट्राम से उतरने के लिए दरवाजे की तरफ बढ़ने लगे। उसके बाद ट्राम जैसे ही एक जगह आकर रुकी, वे झट से नीचे उतर गए।

मगर तपेश गांगुली ने तब भी उनका पीछा नहीं छोड़ा। वह भी तुरंत ट्राम से नीचे उतरकर पुकारने लगा, "ऐ मैनेजर साहब, मैनेजर साहब, रुकिए-रुकिए।"

मल्लिकजी रुके नहीं। सामने एक टैक्सी देखकर बोले, "चलो भाई श्याम बाज़ार—"

टैक्सी तेज़ रफ्तार से सामने की तरफ दौड़ने लगी। लेकिन तब भी तपेश गांगुली की आवाज़ उनके कान में आ रही थी—"ऐ मैनेजर साहब, मैनेजर साहब—"

उस दिन संदीप के चेम्बर में एकाएक गोपाल हाजरा ने प्रवेश किया। बोला, "अरे तू ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तू तो मेरे बारे में कोई जानकारी नहीं रखता, लेकिन गोपाल हाजरा उतना नमकहराम नहीं है।"

"क्या बात है ? अचानक मेरे बैंक में आना क्यों हुआ ?"

"तू इस ब्रांच का मैनेजर नियुक्त हुआ है, यह खबर मिलते ही तुझसे मिलने चला आया। तुझे तो इस ब्रांच का डिपोजिट बढ़ाना होगा।"

संदीप ने कहा, "डिपोजिट तो बढ़ाना ही है—"

"तू जो एकाएक मैनेजर हो गया तो इसके लिए तुझे कितना पैसा खर्च करना पड़ा ?"

संदीप उसकी बात समझ नहीं सका। बोला, "खर्च करने का मतलब ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "इसका मतलब यह कि तुम्हें कितना 'किक-बैक' देना पड़ा ?"

"किक-बैक ? किक-बैक का मतलब ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "इतने दिनों से बैंक में नौकरी कर रहा है, बैंक का मैनेजर हो गया और किक-बैंक का मतलब नहीं समझता ? दलालीजी, दलाली। जिसे उस ज़माने में घूस कहा जाता था।"

संदीप ने कहा, "ओह, तुम्हारे कहने का मतलब यह है ! लेकिन नौकरी में प्रोन्नति हुई है इक्ज़ामिनेशन देने के बाद। किसी को घूस क्यों देना पड़ेगा ?"

गोपाल हाजरा मानो आसमान से नीचे गिर पड़ा। जैसे इस तरह की बात उसने जिन्दगी में पहली बार सुनी हो। बोला, "यह क्या कह रहा है तू ? नौकरी में तेरा प्रमोशन होगा, आमदनी बढ़ेगी और किक-बैक नहीं देना पड़ेगा ? यह क्या कह रहा है तू ? लगता है, इस नौकरी में तू तरक्की नहीं कर पाएगा।"

संदीप ने कहा, "अगर नौकरी में तरक्की नहीं कर सका तो जहां जिस पोस्ट पर हूं, उसी पोस्ट पर रहूंगा। नौकरी तो जाएगी नहीं।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "देख रहा हूं कि इतने दिनों तक कलकत्ता में रहने के बावजूद तूने कुछ नहीं सीखा। देहाती का देहाती ही रह गया।"

संदीप ने कहा, "मेरी बात रहने दे—"

"क्यों, रहने क्यों दूंगा। इतने दिनों से शहर में है, यहां कुछ कमा-धमा ले।

कमरे में कोई नहीं है। सभी मौसीजी के कमरे में हैं। सभी के चेहरे पर गंभीरता और चिन्ता की छाप है। बीच में मौसीजी बेहोशी की हालत में पड़ी हुई है और मुहल्ले का डाक्टर स्टेथिस्कोप लेकर मौसीजी की छाती की जाच कर रहा है।

संदीप कमरे के अन्दर आया है, इस तरफ जैसे किसी का ध्यान नहीं गया हो। ऑफिस से उसके लौट आने पर उन्हें शान्ति मिली है, इसकी झलक किसी के चेहरे पर देखने को नहीं मिली।

मुहल्ले का डाक्टर जाच का काम खत्म कर चुका है। स्टेथिस्कोप कान से निकालकर बक्से के अन्दर डालते हुए बोला, "मुझे अच्छा लक्षण नहीं दिख रहा है। मेरा विचार है मरीज को जितनी भी जल्द हो सके किसी अस्पताल या नर्सिंग-होम में भेज देना चाहिए। बड़ा ही सीरियस केस है -"

वह रात उस घर के रहनेवालों ने कैसे बिताई थी, इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। महज अनुमान ही लगाया जा सकता है।

मा काफी उम्रदार हो चुकी है। इस उम्र में आदमी को खुद के लिए दूसरे की सेवा-सुश्रूषा की आवश्यकता महसूस होती है। लेकिन बुढ़ापे की सरहद पर पहुंचने के बावजूद मा को यह खुशकिस्मती हासिल नहीं हुई। उसकी सेवा करने को कोई भी आगे बढ़कर नहीं आया।

संदीप खड़ा था। मा ने कहा, "अरे, तू जगा हुआ क्यों है? जाकर सो रह। कल तुझे सवेरे से दौड़-धूप करनी है। जा, जरा आराम कर ले। यहा की स्थिति हम संभाल लेंगे।"

बहुत दबाव डालने के बाद संदीप अपने कमरे में गया।

लेकिन नींद? नींद बहुत जबर्दस्त दावेदार होती है। बगैर पाई-पाई वसूले वह किसी के सामने झुकने का नाम नहीं लेती। सो चाहे तुम राजा रहो या प्रजा। मेरे लिए राजा-प्रजा एक जैसे हैं। जो नींद के लिए मेरी अवहेलना करेगा मैं उसे सजा दूंगा और सजा इस किस्म की कि वह इसे आजीवन भूल नहीं सकेगा।

नींद नहीं आती है तो तमाम बुरी घटनाएं दिमाग में चक्कर काटती रहती हैं। वे घटनाएं हैं सौम्य बाबू का मुकदमा, मुक्तिपद की फैक्टरी की दुर्घटना। इसके अलावा विशाखा की बातें। लेकिन सबसे पहले रुपये की चिन्ता चक्कर काटती है।

मौसीजी को कलकत्ता ले जाकर उनका इलाज कराया जाए तो उसके लिए रुपयों का जुगाड़ कैसे करेगा? अगर कर्ज लेना पड़े तो उतना रुपया कौन देगा? अगर कोई दे भी तो उसे चुकाया कैसे जाएगा? फिलहाल उसके द्वारा लिए गए कर्ज के रुपये हर महीने किस्तों में उसकी तनख्वाह से काट लिए जाते हैं। कितने दिनों में वह कर्ज चुकेगा, इसका कोई हिसाब नहीं। उस पर वह फिर कर्ज ले तो एक भी पैसा हाथ में नहीं आएगा। ऐसे हालात में चार जनों की यह गृहस्थी कैसे चलेगी?

अचानक मा की याद आई। मा ने कहा था, इस मकान को गिरवी रखने या बेच देने से बहुत सारे रुपये मिलेंगे। लेकिन वैसी हालत में वे लोग कहा रहेंगे? किसके पास मकान गिरवी रखेगा? कौन मकान को गिरवी रखकर रुपया देगा?

अचानक लगा, अंधेरे में किसी ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। कहीं उसकी नींद टूट न जाए, यह सोचकर बत्ती नहीं जलाई।

उसके कमरे के अन्दर कौन आ सकता है ? जिसने कमरे के अन्दर प्रवेश किया है वह चुपचाप अपना काम कर रहा है। कमरे के एक किनारे एक टीन की पेटी है। उस पेटी को खोलने की आवाज़ हुई।

"कौन ?"

जवाव दिया मां ने, "क्यों, तू अब तक सोया नहीं है क्या ?"

संदीप ने कहा, "नींद नहीं आ रही है मां।"

मां ने कहा, "सोने की कोशिश कर। दिन-भर खटने के वाद अगर ज़रा आराम नहीं करेगा तो कल दिन-भर जूझेगा कैसे ?"

संदीप ने कहा, "तुम्हारे वारे में ही सोच रहा हूं। तुम इतनी तकलीफ कैसे वरदाश्त करोगी ?"

मां ने कहा, "मेरे वारे में तू फिक्र मत कर। औरतों की जान इतनी जल्दी हार नहीं मानती। मेरे वारे में अब फिक्र मत करना, नहीं तो तू जिन्दा नहीं बच सकेगा। तू है इसी वज़ह से आज भी हमें खाना नसीव हो रहा है। अब भी ज़िन्दा हैं। तू सो रह, मैं चलती हूं—"

संदीप ने कहा, "नहीं मां, तुम मत जाओ। तुमसे दो-चार बातें करनी हैं—"

"क्या, वता ?" मां ने कहा।

संदीप ने कहा, "बहुत दिन पहले तुमने कहा था कि हम अपना मकान गिरवीं रखकर मौसीजी का इलाज कराएंगे। तुम्हें याद है यह ?"

मां ने कहा, "हां, कहा था। क्यों ? यह वात अभी क्यों कह रहा है ?"

संदीप ने कहा, "मौसीजी को कल ही कलकत्ता ले जाकर अस्पताल में भर्ती कराना है। अभी तो महीने के आखिरी दिन चल रहे हैं, मैं रुपये का इन्तज़ाम कहां से करूंगा ?"

मां ने कहा, "इसके लिए तू फिक्र मत कर। मेरा पुराना सोने का एक जोड़ा कंगन है। उन्हें वेच दोगे तो तुझे काफी रुपये मिल जाएंगे।"

संदीप ने कहा, "वेटा होने के नाते मेरा फर्ज था कि तुम्हारे लिए गहने वनवा दूं, सो तो कर नहीं सका और वापू के दिए हुए गहने वेच दूं ? मैं यह नहीं कर सकता मां, चाहे तुम जो भी कहो।"

मां ने कहा, "नहीं रे मुन्ना, अवूझ जैसी वातें मत कर, उन लोगों का कोई नहीं है। मैं सारा कुछ सुन चुकी हूं। नौकरी में तरक्की हो जाएगी तो मेरे लिए सोने के कंगन वनवा देना—"

यह कहकर एक जोड़ा कंगन लड़के की ओर वढ़ा दिया। वोली, "अभी इसी से काम चला ले। उसके वाद यह मकान है ही। इसे वेचने या गिरवीं रखने से पचीस हज़ार रुपया मिल ही जाएगा। तेरी मौसीजी का डाक्टरी खर्च इसी से पूरा हो जाएगा।"

संदीप की ओर से कोई जवाव नहीं मिला।

शायद वह सो गया है, यह सोचकर मां वहां खड़ी नहीं रही। जिस तरह दवे पांवों आई थी, उसी तरह दवे पांवों वगल के कमरे में चली गई।

मेरे सामने से। वरना गिरिधारी से लाठी मरवाकर घर से निकाल दूंगी।"

इतने दिनों के बाद मुक्तिपद जबकि कलकत्ता छोड़ इन्दौर चला गया है और सौम्यपद के मुकदमे के कारण बेहाल हो रही हैं तो पुरानी बातें याद आती हैं।

साथ में रहते हैं मल्लिकजी। मल्लिकजी भी काफी उम्रदार हो चुके हैं। घूमने-फिरने में उन्हें भी तकलीफ होती है। कलकत्ता में कोई ऐसा ज्योतिषी नहीं, जिसके पास वे नहीं गए हों। मल्लिकजी अकेले ही हरेक ज्योतिषी के दरवाज़े खटखटा रहे हैं। सभी को दक्षिणा के तौर पर मोटी रकम भी देनी पड़ी है। मल्लिकजी का निवेदन एक ही है और वह यह कि एक ऐसी पात्री की जन्मपत्री चाहिए जिसके सप्तम स्थान में शुभ हो। यानी जिसके भाग्य में वैधव्य-योग नहीं हो।

सभी ज्योतिषी एक ही बात कहते हैं, "किसी की जन्मपत्री हम लोगों के पास नहीं रहती। आप यदि किसी लड़की की जन्मपत्री ले आएं तो बता दे सकते हैं कि लड़की का वैधव्य-योग है या नहीं।"

वैसी लड़की मल्लिकजी को कहां मिलेगी? घर जाकर दादी मां को रिपोर्ट देते हैं। सारी खबरें बताते हैं। लेकिन वैसी लड़की की जन्मपत्री कहां मिलेगी?

ऐसा होने पर भी हाथ पर हाथ धरे बैठा नहीं रहा जा सकता। कोशिश जारी रखनी पड़ी। दादी मां एडवोकेट दासगुप्त के पास जाती हैं। कहती हैं, "उस तरह की जन्मपत्री नहीं मिल रही है—"

दासगुप्त कहते हैं, "चाहे जैसे हो उस तरह की जन्मपत्री की पड़ताल करनी ही है। कलकत्ता में नहीं मिल रही है तो कलकत्ता के बाहर खोजनी है। ज़रूरत पड़ने पर तमाम भारत में जितने ज्योतिषी हैं सभी से संपर्क स्थापित करना पड़ेगा। इस मामले में कोई कंजूसी करने से काम नहीं चलेगा। आदमी के जीवन से जुड़ी हुई समस्या है तो वकील जो कह रहा है, करना ही पड़ेगा।

दादी मां मल्लिकजी से बोलीं, "आप एक बार काशीधाम जाइए, वहां भी तो बहुत सारे ज्योतिषी हैं।"

मल्लिकजी ने यही किया। एक दिन जेब में कई हज़ार रुपये लेकर और बोरिया-बस्ता बांधकर काशी के लिए रवाना हो गए। धर्मशाला में रहने से रुपये-पैसे की चोरी हो सकती है। इसलिए होटल में ठहरना ही अच्छा रहेगा।

वहां जाकर सवेरे से ही ज्योतिषियों के निवास-स्थानों का चक्कर काटने लगे।

रुपया फेंकने से क्या नहीं होता! बहुत सारी लड़कियों की जन्मपत्रियां मिलीं। उनमें से किसी के भाग्य में वैधव्य-योग नहीं है। उन लोगों का पता भी मिल गया।

एक ज्योतिषी ने कहा, "आप मेरठ जा सकते हैं?"

मल्लिकजी ने कहा, "क्यों नहीं जा सकता हूं? आप पता बता दीजिए।"

पता मांगने पर कोई बिना रुपये लिए देने को तैयार नहीं है। उसके लिए दक्षिणा देनी पड़ती है और वह दक्षिणा निहायत सस्ती भी नहीं है। हर पते के लिए पचास रुपये दक्षिणा चाहिए।

मल्लिकजी अपने साथ ढेर सारे रुपये लेकर गए थे—इसलिए कि रुपये के

अभाव के कारण काम में रुकावट पैदा न हो सके। उन्हें हर रोज दादी मां को टेलिग्राम से सूचना देनी पड़ती है कि दिन-भर में उन्होंने कौन-कौन से काम किए। मेरठ, सहारनपुर, टेहरी, गढ़वाल आदि उत्तर भारत के जिन-जिन स्थानों का उन्हें पता चला, दे गए।

ज्यादातर लड़कियों की शादी पहले ही हो चुकी है। जिनकी शादियां नहीं हुई हैं उनके अभिभावक मल्लिकजी का प्रस्ताव सुनकर अचम्भे में आ गए। उन्हें गुस्सा आ गया। बहुतों ने चिल्लाकर कहा, "निकलिए, मेरे घर से निकलकर बाहर जाइए।"

मल्लिकजी कहते हैं, "आप लोगों को जितना भी रुपया चाहिए, हम देने को तैयार हैं। तीन लाख, चार लाख या पांच लाख रुपया भी मांगिएगा तो देने को तैयार हैं। इतना गुस्सा क्यों रहे हैं?"

जिन-जिन लड़कियों के पिताजी की आर्थिक हालत गई-गुजरी है, जिन लड़कियों की शादी पैसे के अभाव के कारण नहीं हो पा रही है, मल्लिकजी उन्हीं लड़कियों के मां-बाप को रुपये का लोभ दिखाते हैं।

लेकिन जैसे ही उन्हें पता चलता है कि पात्र फांसी का मुजरिम है तो वे इनकार कर जाते हैं। बहुतेरे लोग जूता मारने के लिए आगे बढ़ आते हैं।

हर रोज समय निकालकर मल्लिकजी टेलिग्राम से दादी मां को घटनाक्रम की सूचना भेजते हैं।

और कलकत्ता में बैठी दादी मां आकुलता के साथ मैनेजर साहब के टेलिग्राम का इंतजार करती रहती है। किसी-किसी दिन टेलिग्राम नहीं आता है। जिस दिन टेलिग्राम या कोई खत नहीं आता उस दिन दादी मां का मूड बिगड़ जाता है। सबको दुतकारने-फटकारने लगती हैं। किसी आदमी को पोस्ट-ऑफिस भेजकर पता लगाने कहती हैं। वे सोचती हैं, मैनेजर साहब अवश्य ही खत या टेलिग्राम भेजते होंगे पर पोस्ट-ऑफिस के कर्मचारियों की लापरवाही से उन्हें नहीं मिल रहा है। टेलिग्राम में ज्यादा बातें लिखी नहीं जा सकती हैं, इसलिए दादी मां ने साथ-साथ प्रतिदिन पत्र भेजने को भी कहा था।

और दूसरी ओर मल्लिकजी किसी अनजाने शहर में पैर रखते ही किसी शिक्षित व्यक्ति से दरियाफ्त करते हैं: "यहां कोई ज्योतिषी है?"

शुरू में लोग अवाक् होकर कहते, "ज्योतिषी?"

मल्लिकजी कहते, "हां-हां, ज्योतिषी।"

इस पर कोई कहता, "आप यहां के बाजार की तरफ जाइए, हो सकता है वहां आपको कोई ज्योतिषी मिल जाए।"

"बाजार किस तरफ है?"

"स्टेशन से बस खुलनेवाली है, उस बस पर चढ़कर बता दीजिएगा कि आपको बाजार जाना है। बसवाला आपको बाजार में उतार देगा।"

बनारस में नाकाम होने के बाद वे इलाहाबाद जाते हैं। वहां भी ऐसी ही स्थिति का सामना करना पड़ता है। यहां भी होटल में कमरा किराए पर लेना पड़ता है। सस्ते होटल में ठहरने से काम नहीं चलेगा। वहां चोरी होने का डर रहता है। साथ में ढेर सारे रुपये हैं, इसलिए सतर्क रहना पड़ता है।

इलाहाबाद में भी कोई कामयाबी हासिल नहीं हुई। ज्योतिषी वहां भी हैं लेकिन कम संख्या में। विवाह के लायक वैधव्य-योग विहीन पात्री का पता न दे सकने में असमर्थ हैं।

वहां से हरिद्वार जाते हैं। हरिद्वार में अनगिनत मंदिर हैं। जहां अधिक मंदिर हों तो मानना पड़ेगा कि वहां के लोग भगवान पर अधिक विश्वास करते हैं। इसके अलावा ईश्वर पर आस्था रखनेवाले आदमी भी वहां काफी तादाद में पहुंचते हैं।

किसी को सन्तान नहीं है, किसी की लड़की की शादी नहीं हो रही है, किसी को नौकरी नहीं मिल रही है और कोई असाध्य बीमारी से ग्रस्त है। तमाम लोगों के सामने समस्या है। तमाम लोग समस्या से पीड़ित हैं, उनकी समस्याओं का निवारण कौन कर सकता है?

निवारण कर सकनेवाले दो ही हैं। एक, मन्दिर की मूर्त्ति और दूसरा, ज्योतिषी।

मन्दिर की मूर्त्ति बात तो कर नहीं सकती। मन्दिर के पण्डे ही चढ़ावा के सारे रुपये अपनी टेंट में खोंस लेते हैं। देवता के नैवेद्य पुरोहित और पण्डे ही हड़प-कर अपनी पेट-पूजा करते हैं। लेकिन ज्योतिषी?

ज्योतिषी बातचीत कर सकते हैं। जन्म का क्षण, तिथि और स्थान बता देने से वे पात्र और पात्री की जन्मपत्री तैयार कर देते हैं। वे मन्दिर के देवता की तरह मूक-बधिर नहीं होते।

मल्लिकजी हरिद्वार जाकर ज्योतिषियों की शरण में गए। वहां भी उन्होंने अपनी अर्जी पेश की। साथ ही यह भी कहा कि अगर उनका मतलब पूरा हो जाएगा तो वे ज्योतिषी को मोटी रकम देंगे।

तमाम ज्योतिषियों ने रुपये के लोभ में विवाह योग्य, वैधव्य-योग विहीन लड़कियों की जन्मपत्री दी और पता बताया। उन पतों को एकत्र कर मल्लिकजी उन स्थानों में गए और पात्रियों के पिता से साक्षात्कार किया।

वहां जाने पर भी उन्हें एक ही बात सुनने को मिली। सुनने को मिला कि किसी लड़की की शादी दो साल पहले हो चुकी है।

और जिनकी नहीं हुई है उनके अभिभावक मल्लिकजी का प्रस्ताव सुनते हैं तो मारने-पीटने के लिए तैयार हो जाते हैं।

यह हिम्मत! हम कुमारी लड़की के पिता हैं तो इसका मतलब यह कि हम पिशाच हैं? इससे तो बेहतर है कि लड़की के गले में घड़ा बांधकर उसे नदी में डुबो दें। हम गरीब हैं तो इसका मतलब यह नहीं कि हममें दया-ममता नहीं है।

एक पात्री के पते पर जाने के बाद मल्लिकजी को उम्मीद की हल्की-सी रोशनी दिख पड़ी।

जिस दिन मल्लिकजी उस पते पर पहुंचे उसी दिन पात्री के पिता का देहांत हुआ था। सभी शोकाकुल थे, मुरदे के गिर्द खड़े थे। तब न तो उन्हें बात करने की फुर्सत थी और न ही मानसिक अवस्था ही उस तरह की थी।

पात्री को रहने का एक पक्का मकान भी नहीं था। मिट्टी की दीवार और उस पर खपड़े की छावनी थी। पात्री का भाई नौकरी पाकर बिहार चला गया था।

बाद मैं लड़की की मां के सामने प्रस्ताव रखूंगा। वे लोग बहुत गरीब हैं। सिर टिकाने के लिए उन लोगों के पास एक पक्का मकान भी नहीं है। लड़की का इकलौता भाई यहां से बहुत दूर नौकरी कर रहा है, वहीं उसने शादी कर ली है और मां और बहन को असहाय छोड़ दिया है। यहां तक कि उन्हें एक चिट्ठी भी नहीं भेजता। पिता के श्राद्ध की खबर उसके पास भेजी गई है। लेकिन वह शायद अपने पिता के श्राद्ध के समय नहीं आएगा। मैं इस मौके से फायदा उठाकर लड़की की मां को रुपये का लालच दिखाऊंगा। मुझे लगता है, इतने रुपये का लोभ लड़की की मां नहीं ठुकराएगी। बहरहाल, मैं यथासमय आपको पत्र के द्वारा सूचित करूंगा। आप मेरा प्रणाम स्वीकार करें। आज्ञाकारी परमेश मल्लिक।

दादी मां को यह पत्र यथासमय मिल गया। उन्होंने उसे बार-बार पढ़ा। पत्र पढ़कर मन ज़रा शांत हुआ। इतने दिनों तक मल्लिकजी ने जितने पत्र लिखे थे किसी में निश्चित आशा की झलक नहीं थी। यह उस तरह का पहला पत्र है जिससे उनके मन में थोड़ी-बहुत आशा बंधी।

उसी दिन शाम के वक्त दादी मां वकील के चेम्बर में गईं और उन्हें यह पत्र दिखाया।

वकील साहब ने चिट्ठी पढ़ी और पढ़कर आशान्वित हुए।

दादी मां बोलीं, "आप और कुछ दिनों तक मुकदमे की सुनवाई रोके रहिए। मुझे लगता है इस लड़की से अन्ततः मेरे पोते की शादी हो जाएगी—"

वकील साहब राजी हो गए। और राजी न होंगे तो उपाय ही क्या है! मुकदमा तो उनके हाथ में नहीं है। हाकिम जो करेंगे वही होगा। वे सिर्फ कोशिश करते रहेंगे।

उस दिन से दादी मां जैसे दूसरी ही तरह की हो गईं। पहले हमेशा उनका मूड बिगड़ा रहता था। मामूली बात पर आग-बबूला हो जाती थीं। मकान के तमाम लोगों को हर वक्त डांटती-फटकारती रहती थीं। बात-बात में सबको गाली-गलौज करने लगती थीं। ठीक समय पर नल बंद किया गया या नहीं, गिरिधारी ने रात नौ बजे गेट बंद किया या नहीं, इन सब कारणों से शोर-शराबा मचाने लगती थीं।

अब मल्लिकजी का पत्र पाकर ज़रा शांत हुई। उस दिन बिन्दु ने आकर खबर पहुंचाई कि एक सज्जन उनसे मिलना चाहते हैं।

दादी मां ने कहा, "कह दे मुलाकात नहीं होगी।"

बिन्दु ने यही बात गिरिधारी को जाकर बताई। गिरिधारी ने भी उस सज्जन से यही कहा। उस सज्जन ने कहा, "मैनेजर साहब कहां हैं?"

गिरिधारी ने कहा, "मैनेजर साहब बाहर गए हुए हैं।"

उस सज्जन ने कहा, "तो फिर मैं ज़रा बैठ जाता हूं—"

गिरिधारी ने कहा, "आप कब तक बैठे रहिएगा?"

उस सज्जन ने कहा, "जब तक मैनेजर साहब लौटकर नहीं आते हैं तब तक मैं बैठा रहूंगा। वे खाना खाने घर तो आएंगे ही।"

"नहीं, वे खाना खाने नहीं आएंगे।"

"क्यों?"

गिरिधारी ने कहा, "वे कलकत्ता से बाहर गए हुए हैं। उन्हें लौटने में देर होगी।"

"कितनी देर होगी?"

गिरिधारी ने कहा, "यह मैं नहीं बता सकता।"

उस सज्जन ने पूछा, "कौन बता सकता है?"

गिरिधारी ने कहा, "घर की मालकिन बता सकती हैं।"

"तो अपनी मालकिन से पूछ आओ कि मैनेजर साहब कब तक कलकत्ता लौटकर आएंगे। मुझे बहुत ही जरूरी काम है दरवानजी, बहुत ही जरूरी।"

आखिर में वह सज्जन मैनेजर साहब की खबर जानने के लिए बेहद दबाव डालने लगा। यहां तक कि पॉकेट से एक रुपया निकालकर देना चाहा। गिरिधारी रुपया देखकर आश्चर्यचकित हो गया। बोला, "यह किस चीज के लिए रुपया दे रहे हैं बाबूजी?"

उस सज्जन ने कहा, "तुम इस रुपये को ले लो, यह बख्शीश है। तुम्हें पान खाने के लिए दे रहा हूं। तुम अन्यथा मत लेना दरबानजी, समझे?"

उसके बाद रुपया मिलने पर गिरिधारी शायद खुश ही हुआ। मुफ्त में रुपया मिल जाए तो दुनिया में कौन ऐसा है जो खुश न होता हो! रुपये को अपनी टेंट में रख वह अंदर गया। जाने के दौरान कह गया, "आप यहां जरा खड़े रहिए बाबूजी। आपका नाम क्या बताऊंगा?"

"तपेश गांगुली। बताओ तो, क्या नाम बताया?"

गिरिधारी ने कहा, "तपेश गागुली।"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां, तपेश गागुली। जाकर कहना, मैं एक अच्छी लड़की की जन्मपत्री ले आया हूं। उस लड़की को विधवा होने का योग नहीं है। समझे? ठीक से समझे तो? उस लड़की की जन्मपत्री में विधवा होने का योग नहीं है—"

गिरिधारी समझ सका या नहीं, इसका पता नहीं चला। थोड़ी देर बाद ही लौटकर चला आया। बोला, "मैनेजर साहब लौटकर आएंगे तो आप उनसे मिलिएगा बाबूजी। मालकिन अभी मुलाकात नहीं करेंगी।"

"मुलाकात नहीं करेंगी?"

गिरिधारी ने कहा, "नहीं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "तुम ठीक-ठीक कह रहे हो कि मुलाकात नहीं करेंगी?"

गिरिधारी ने कहा, "हां बाबूजी, मालकिन के पास अभी वक्त नहीं है।"

"वक्त नहीं है? मिलने का वक्त नहीं है?"

तपेश गांगुली मन ही मन क्रोधित हो उठा। तपेश गांगुली जानता है कि उसे गुस्सा आ जाए तो वह किसी की परवाह नहीं करता। गुस्सा आने पर वह हड़कंप मचा दे सकता है। इसलिए वह गुस्से को पचा गया। तब वह घर की तरफ ही लौट रहा था। लेकिन नहीं, गिरिधारी के पास ही लौटकर चला आया। बोला, "तो फिर बख्शीश वापस कर दो। उस रुपये को लौटा दो···"

शुरू में गिरिधारी भौंचक-सा रह गया।

तपेश गांगुली ने कहा, "इस तरह वेवकूफ़ की तरह क्या सोच रहे हो ? मेरा काम नहीं बना तो फिर तुम्हें बख्शीश देकर फ़ायदा ही क्या ? बोलो, खामोश क्यों हो ? मुझे कुछ लाभ हुआ ?"

गिरिधारी ने कहा, "नहीं !"

तपेश गांगुली ने कहा, "तो फिर मेरा रुपया मुझे वापस कर दो—"

अब उसका तर्क गिरिधारी की समझ में आया। उसने महसूस किया कि रुपया लेना गलत हुआ है। उसे लौटा ही देना चाहिए।

उसने टेंट से रुपया निकाल तपेश गांगुली को वापस कर दिया। इस पर तपेश गांगुली खुश हो गया। और थोड़ी देर हो जाती तो व्यर्थ ही उसे नुकसान उठाना पड़ता। रुपया लेकर उसने बुक-पॉकेट के अन्दर रख लिया।

उसके बाद ट्राम रास्ते पर जाकर चलती हुई ट्राम पर चढ़ गया। आज का दिन उसका व्यर्थ ही नष्ट हो गया। ट्राम खिदिरपुर का पुल पार कर जैसे ही मोड़ पर पहुंचा, वह तुरन्त उतर गया। अब खड़ा नहीं रहा, सीधे अपने घर की ओर चल दिया।

'महाकाली आश्रम' नामी ज्योतिषी-कार्यालय है। ज्योतिषीजी उस समय ग्राहक की उम्मीद में अकेले बैठे हुए रास्ते की ओर ताक रहे थे। तपेश गांगुली को आते देखकर पुकारने लगे, "ओ तपेश बाबू, तपेश बाबू, आइए-आइए, अंदर आइए।"

पुकारे जाने पर तपेश गांगुली अंदर चले गए। ज्योतिषी बोले, "आपसे तो मुलाकात ही नहीं होती साहब। मुझसे अपनी लड़की की जन्मपत्री बनवाकर जो गए तो फिर आपके दर्शन ही नहीं हुए। क्या बात है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "उस लड़की की अब भी शादी नहीं हुई है। पहले लड़की की शादी हो जाए तभी न रुपया दूंगा।"

"आप यह क्या कह रहे हैं ! आपकी लड़की की शादी अगर नहीं होती है तो मुझे रुपया नहीं मिलेगा ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैंने तो आपसे कहा था कि लड़की की शादी होने पर ही आपका बकाया चुका दूंगा। मैं एक दिन के लिए भी आपका रुपया रोककर नहीं रखूंगा।"

ज्योतिषी अवाक् हो गए। बोले, "यह क्या जनाब, आपकी लड़की की शादी नहीं होगी तो मेरे हक का रुपया मुझे नहीं मिलेगा ? आपने तो कहा था कि अगले महीने की तनख्वाह मिलते ही बकाया चुका दूंगा।"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैंने तो अपनी लड़की की शादी के लिए आपसे जन्म-पत्री बनवाई थी। सो पहले शादी हो जाने दीजिए। आप तो बड़े ही बेअक्कल आदमी हैं। शादी अभी हुई नहीं और रुपये का तकाज़ा करना शुरू कर दिया !"

ज्योतिषीजी ने कहा, "मैंने आपका काम कर दिया और मुझे अपना मेहनताना नहीं मिलेगा ? रुपये के लिए तकाज़ा किया तो मैं बेअक्कल हो गया ! आपकी लड़की की जन्मपत्री बनाने में मुझे क्या कोई कम मेहनत करनी पड़ी है, सोचिए तो सही ! आपकी लड़की की जन्मपत्री में वैधव्य-योग नहीं रहे, इसके लिए आपकी लड़की की उम्र में इधर-उधर कर बृहस्पति-लग्न को सप्तम में बिठा दिया था,

लग्नपति को तुंग में कर दिया, नवम पति को नवम स्थान में कर दिया। इससे ज्यादा मैं क्या कर सकता हूं?"

तपेश गांगुली ने कहा, "तो फिर मेरी लड़की की शादी क्यों नहीं हो रही है?"

ज्योतिषीजी बोले, "आपकी लड़की की शादी होने में देर लगेगी। आपकी लड़की की असली जन्मपत्री में अभी विवाह का योग नहीं है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "जिससे कि मेरी लड़की की जन्मपत्री में विवाह का योग अभी हो जाए, वैसा ही कर दीजिए। वरना आप किस काम के ज्योतिषी हैं? आपके 'महाकाली आश्रम' के साइन बोर्ड में क्यों लिखा हुआ है कि लड़का-लड़की की शादी के मामले में आप सहायता कर सकते हैं?"

ज्योतिषीजी ने कहा, "सहायता कर सकता हूं। लेकिन आपकी लड़की की असली जन्मपत्री में सप्तम में मंगल है, यह जानते हैं? मैंने उसे बदलकर वहां बृहस्पति बिठा दिया है। दरअसल आपकी लड़की की जन्मपत्री में 'भौम-दोष' है—"

"भौम-दोष? इसका मतलब?"

ज्योतिषी ने कहा, "भौम-दोष का मतलब यह कि विवाह होने के कुछ दिन बाद ही स्त्री जातिका पतिहीन हो जाएगी और पुरुष-जातक विपत्नीक हो जाएगा।"

तपेश गांगुली भय से सिहर उठा। बोला, "मेरी लड़की की जन्मपत्री में यही है?"

"हां जनाब, हां।"

तपेश गांगुली बोला, "सो लड़की चाहे विधवा हो जाए तो कोई हानि नहीं, मगर लड़की को रुपया मिलेगा तो? विधवा होने पर भी लड़की दौलतमंद स्वामी के रुपये-पैसे की उत्तराधिकारी हो जाती है। मेरी लड़की को वे रुपये मिलेंगे तो?"

ज्योतिषीजी ने कहा, "आप यह क्या कह रहे हैं? बाप होकर भी आप लड़की के वैधव्य में रुपये-पैसे को ही ज्यादा महत्त्व देते हैं? आप किस तरह के बाप हैं जनाब?"

तपेश गांगुली ने कहा, "क्यों? मैंने कौन-सी गलत बात कही है? दुनिया में पैसे से भी बढ़कर कोई चीज़ है?"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "आप अपनी ही बात लीजिए। यह 'महाकाली आश्रम' खोलकर आपने लोगों को ठगने का जो धंधा अपनाया है, वह किसलिए? रुपया कमाने के लिए ही न? और मैं जो रेल के ऑफिस में नौकरी करता हूं, महीने के आधे दिन ऑफिस ही नहीं जाता हूं। यह किसलिए? रुपये के लिए ही न? यह जो सामने एक सिनेमाघर है, वह किसलिए है? रुपये के लिए ही न! यह जो तमाम आदमी भेड़-बकरी की तरह बस-ट्राम पर चमगादड़ की नाईं प्राणों को हथेली पर रख लटकते हुए जा रहे हैं, वह किसलिए? रुपये के लिए ही न!"

अब ज्योतिषीजी को गुस्सा आ गया।

बोले, "आपको यदि पैसे का ही रोग है तो फिर आपने शादी ही क्यों की ? शादी नहीं करते तो आपकी लड़की भी पैदा नहीं हुई होती और लड़की की शादी के लिए नकली जन्मपत्री भी नहीं बनवानी पड़ती। और मुझे रुपये के लिए तकाज़ा भी नहीं करना पड़ता।"

तपेश गांगुली ने कहा, "असली चीज़ तकदीर है साहब, तकदीर ! बाज़ार जाने पर देखने को मिलता है, कोई-कोई आदमी चालीस-पचास रुपये किलो बिकनेवाली मछली के लिए दर-दाम तक नहीं करता, हर रोज़ एक किलो, डेढ़ किलो खरीदकर ले जाता है। कहां से उसके पास इतने रुपये आते हैं, समझ में नहीं आता। शायद सबका सब काला धन है—"

ज्योतिषीजी बोले, "मेरा रुपया आप कब दे रहे हैं ?"

तपेश गांगुली ने पॉकेट से मनीबैग निकाला उससे एक रुपया निकालकर ज्योतिषी की ओर बढ़ा दिया। उस रुपये को उसने गिरिधारी से वापस ले लिया था। बोला, "इतनी बात की कोई ज़रूरत नहीं, यह लीजिए आपका रुपया—"

"सिर्फ एक ही रुपया ?"

तपेश गांगुली बोला, "अभी एक ही रुपया रख लें। बाद में लड़की की शादी हो जाएगी तो आपकी पूरी रकम सूद-मूल सहित वापस कर दूंगा। लीजिए—"

यह कहकर वहां रुका नहीं, सीधे मनसातल्ला लेन की तरफ कदम बढ़ाए।

जन्म लेने के मामले में मनुष्य का अपना कोई हाथ नहीं रहता। लेकिन मृत्यु ? मृत्यु का एक इतिहास है। क्रोध के औरस से उसकी बहन हिंसा के गर्भ से कलि का जन्म हुआ है, ऐसा कहा जाता है। कलि ने भी अपनी बहन दुरुक्ति से विवाह किया। उनके दो संतानें हुईं। पुत्र का नाम है भय और पुत्री का मृत्यु। यह सब सुनी हुई बात है। यानी किंवदन्ती।

तो क्या सत्य, त्रेता या द्वापर युग में मृत्यु नहीं थी ?

थी जरूर। लेकिन वह दूसरी ही तरह की मृत्यु थी। उस मृत्यु का नाम था जीवन का तिरोभाव। आज की तमाम मृत्युएं अपघात की मृत्यु हैं। इस अपघात मृत्यु के सभी कारणों का स्रष्टा मनुष्य नामक पशु है। जो इंजेक्शन नहीं देना चाहिए वही इंजेक्शन देना होगा। जो शल्य-चिकित्सा अपरिहार्य नहीं है वही शल्य-चिकित्सा अभी करनी है। जो दवा न खाने से ही आदमी का भला हो सकता है, वही दवा अभी खानी है। इससे मरीज को फायदा हो या न हो, लेकिन दवा की कंपनियों और डाक्टरों को फायदा अवश्य ही होता है।

पूरी रकम की ज़िम्मेदारी ली थी चटर्जी परिवार की बहूरानी ने। उन्होंने कहा था, "यह कैसी बात है बहन, कि रुपये के अभाव में आदमी का इलाज नहीं होगा ? ऐसा कहीं होता है ?"

लेकिन संदीप मुफ्त में रुपया लेने को राजी नहीं है। कहा था, "संपत्ति के नाम पर अगर मेरे पास कुछ है तो वह है यह टूटा हुआ पैतृक मकान। इसे गिरवीं रखना ही होगा। उसके बदले आप फिलहाल मुझे बीस हज़ार रुपया दीजिए। यह रकम मिलते ही डाक्टर साहब इलाज करने को राजी हो जाएंगे।"

चटर्जी-गृहिणी भी एतराज नहीं कर सकी। हैण्डनोट अपने पास रख लिया था। उस रकम को लेकर रविवार को डाक्टर के पास जाने की बात थी। लेकिन मौसीजी ने कहा था, "मैं किसी भी हालत में अस्पताल नहीं जाऊंगी। विशाखा की शादी हुए बगैर मैं डाक्टर के पास नहीं जाऊंगी।"

संदीप ने कहा था, "लेकिन आपका जीवन अधिक महत्वपूर्ण है या विशाखा की शादी?"

मौसीजी ने कहा था, "मेरे लिए विशाखा की शादी ही अधिक महत्वपूर्ण है।"

संदीप ने कहा था, "लेकिन शादी तो एक ही बात में नहीं हो सकती है मौसीजी। उसके लिए तैयारी करने में भी तो वक्त लगेगा। उतने दिनों तक आप कितना भुगतते रहिएगा?"

मौसीजी बातें कर रही थी और रो रही थी। कहा था, "विशाखा की शादी हो जाए तो मरने पर भी मुझे सुख मिलेगा। विशाखा मेरे सिर का बोझ है। जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती, तब तक जिन्दा रहने पर भी मुझे सुख नहीं मिलेगा। उस लड़की के कारण मुझे बहुत दंश सहना पड़ा है। अब वह दंश मुझसे बरदाश्त नहीं हो रहा—"

संदीप अब विशाखा के पास गया। जाकर धीमे स्वर में कहा, "तुम अपनी मां को जरा समझाओ। तुम्हारी बात मौसीजी ठुकरा नहीं सकेगी। मौसीजी हम लोगों की बात मानने को तैयार नहीं हैं। तुम जाकर कहो, मैंने कहा है कि तुमसे शादी करूंगा।"

मां भी बोली, "हां बेटी, तुम जरा अपनी मा को समझाओ। इस तरह अबूझ बनने से काम चल सकता है? चट लगन पट ब्याह तो नहीं हो सकता। उसमें भी तो कुछ समय लगेगा। तुम खुद जाकर कहोगी तो तुम्हारी मा बात मान लेगी। हमारी बात दीदी सुनने को तैयार नहीं है।"

विशाखा अन्ततः मा के बिस्तर के पास गई। बोली, "मां, सुन रही हो? ओ मा!" मौसीजी ने आखें खोलीं।

विशाखा ने मां के मुह के पास अपना मुंह ले जाकर कहा, "मां, मैं विशाखा बोल रही हूं।"

मां ने शायद अपनी बेटी को पहचाना। विशाखा को देखकर मां की आंखों से टप-टप कर आंसू की बूंदें चूने लगीं।

विशाखा ने अपनी साड़ी के पल्लू से मा की आखें पोछ दी।

बोली, "मा, तुम मेरी शादी के लिए इतना घबरा क्यों रही हो? पहले तुम अच्छी हो जाओ उसके बाद ही मेरी शादी होगी। संदीप ने मुझसे वादा किया है कि वह मुझसे शादी करेगा। तुम्हारी बीमारी ठीक होते ही हम लोगों की शादी हो जाएगी। संदीप ने मुझे वचन दिया है—"

मा गुस्सा गई। उसकी आखों से और भी आसू की बूंदें टपकने लगीं।

बोली, "मुंहजली, तू निकल जा मेरे सामने से। निकल, निकल जा। तुझे वयस्क कुमारी के रूप में देखकर मेरी देह में आग लग जाती है—"

यह कहकर और जोर-जोर से रोने लगी।

विशाखा इसके वाद क्या करे, समझ नहीं सकी। संदीप के पास आई। संदीप की मां भी वहीं खड़ी थी। वे लोग भी दूर से सब कुछ देख-सुन रहे थे।

विशाखा अपना-सा चेहरा लेकर खड़ी हो गई। वोली, "मां ने मुझे दुतकार कर भगा दिया—"

कहने की ज़रूरत नहीं थी। क्योंकि मौसीजी ने विशाखा से जो कुछ कहा था, दोनों ने सुना था।

संदीप ने मां की ओर मुखातिव होकर कहा, "मां अव क्या किया जाए ?"

मां वोली, "और क्या करेगा ! दीदी जिद पर अड़ गई है तो किसकी मजाल कि उसे राजी कर ले। तो फिर पहले शादी ही हो जाए, इलाज वाद में कराया जाएगा !"

उस क्षण संदीप के मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। वह उस समय निर्वाक् हो गया था। संदीप के साथ-साथ विशाखा भी चुप्पी में डूब गई। संदीप की मां को लगा, आदमी की यह पुरानी धरती भी मानो एकाएक सारा कुछ देखने-सुनने के वाद मौन, निःस्तब्ध और खामोश हो गई है। धरती भी जैसे यह अजीव-सा कांड देखकर वातें करना भूल गई है।

अभी इतने दिन, इतने वरसों के वाद संदीप को लगता है, वह खुद ही अपराधी है। दूसरे पर अपराध का वोझ लादकर सभी अपराध से वरी होना चाहते हैं। अपनी सजा का वोझ हल्का करने के खयाल से दूसरे पर दोष मढ़कर अपने विवेक के सामने निष्पाप होना चाहते हैं। नियम भी यही है। सबसे सहज सरल रास्ता भी यही है। इससे वाहरी आदमी की नज़र में निर्दोष वनकर रहा जा सकता है।

इजलास में खड़े होकर जज के सामने भी उसने यही वात कही थी। उसने स्वीकार किया था कि अपने अपराध के लिए वह किसी दूसरे को दोषी नहीं समझता। किसी को वह ज़िम्मेदार नहीं मानता। असली अपराधी वही है।

सरकारी वकील ने पूछा था, "क्यों इतने रुपये का गवन किया था ?"

संदीप ने कहा था, "आदमी जिस कारणवश गवन करता है, मैंने भी उसी कारणवश गवन किया था।"

"आदमी गवन क्यों करता है ?"

संदीप ने कहा था, "आदमी लोभ में आकर गवन करता है। इसके अलावा अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए भी गवन करता है।"

सरकारी वकील ने पूछा था, "आप तो तनहा आदमी हैं। आपके पत्नी और वाल-वच्चे नहीं हैं। एक तरह से आपकी कोई गृहस्थी भी नहीं है। ऐसी हालत में आपने इतने रुपयों का गवन क्यों किया ?"

उस दिन संदीप ने वहां खड़े होकर जो कुछ कहा था, आज इतने दिनों के वाद वही दृश्य उसकी आंखों के सामने तैर रहा था, वही सब वात उसके कानों में प्रतिध्वनित हो रही थी। तव वह जानता था कि वह अपराधी है और अव भी जानता है कि वह अपराधी था। वह अपने अपराध का पाप किसी के सिर पर मढ़कर अपनी मुक्ति नहीं चाहता।

संदीप ने हाशिम को बुलाया। कहा, "इसका श्रेय तुम्हीं को है हाशिम साहब। तुम पार्टियों से जिस प्रकार का मधुर व्यवहार करते हो, उसी के परिणाम-स्वरूप डिपोजिट में वृद्धि हुई है। लेकिन ख्याति मुझे मिली। हो सकता है इसकी वजह से मेरा प्रमोशन भी हो जाए। लेकिन मुझे यह अच्छा नहीं लग रहा—"

हाशिम ने कहा, "लेकिन आप ही तो इस ब्रांच के मैनेजर हैं। आपकी प्रशंसा न होगी तो किसकी होगी ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, यह मुझे मालूम नहीं। तुम न रहते तो आज इस ब्रांच की इतनी तरक्की नहीं हुई होती। मैं जानता हूं कि ऑफिस की छुट्टी के बाद तुम पार्टियों के घर पर जाकर हम लोगों के ब्रांच के लिए कैनवसिंग करते हो।"

यह सुनकर हाशिम अपने कमरे में चला गया।

लेकिन उसके पंद्रह दिन बाद हाशिम ही एक पत्र लेकर एकाएक आया। बोला, "आपने यह क्या किया है सर ?"

"क्या ?"

हाशिम ने कहा, "आपने ही तो मुझे यह पत्र भेजा है।"

संदीप ने कहा, "तुम्हें नहीं भेजूंगा तो क्या करूंगा ? यह तो तुम्हारे ही स्पेशल ग्रेड-प्रमोशन का मसला है। उसे तुम इस्टेबलिशमेंट सेक्शन में भेज दो। अगले महीने की सैलेरी-बिल के साथ और पांच सौ रुपये जुड़ जाएंगे। वह तुम्हारी पर्सनल फाइल में रहेगा।"

हाशिम अवाक् होकर ताकता रहा मैनेजर साहब की तरफ। आज के ज़माने में यह संभव है ! यह मैनेजर किस किस्म का आदमी है ! बोला, "सर, इंडिया के किसी बैंक के इतिहास में इस तरह की बात इसके पहले कभी नहीं हुई है। आप मैनेजर हैं, प्रमोशन होने को है तो आपका ही होगा। मेरा क्यों ग्रेड-प्रमोशन होगा ?"

संदीप ने कहा, "मैंने जोरदार शब्दों में हेड ऑफिस को पत्र भेजा था। लिखा था, जिस आदमी के कारण यह अकलपनीय डिपोजिट जमा हुआ है। उसे स्वीकृति न देने से स्टाफ के कर्मियों में उत्साह का संचार नहीं होगा। उन्हें उत्साह देना आवश्यक है—"

"आपने लिखा था ?"

संदीप ने कहा, "क्यों नहीं लिखूंगा ? काम किया तुमने और प्रमोशन मैं लूंगा ?"

हाशिम ने कहा, "लेकिन हर जगह का नियम तो यही है। इसी तरह का सिलसिला हमारे बैंक में चला आ रहा है—"

संदीप ने कहा, "सिर्फ इसी बैंक में नहीं, बल्कि हर बैंक में यही सिलसिला जारी था। और सिर्फ बैंक में ही नहीं, बल्कि हर जगह। इस दुनिया में भी तो इतने दिनों से यही नियम चलता आ रहा है। कोई गलत काम अगर हमेशा से चलता आ रहा है तो उसे क्या सही कदम कहा जाएगा ? तुम्हीं बताओ ?"

हाशिम चुप्पी साधे रहा, क्या जवाब दे उसकी समझ में नहीं आया।

"क्यों, चुप्पी क्यों साध ली ?"

हाशिम ने कहा, "इस तरह की घटना दुनिया में कभी हुई है, मुझे यह मालूम

नहीं है सर।"

संदीप ने कहा, "देखो हाशिम, हम हिन्दुओं में एक बात चालू है कि देवता का नैवेद्य अगर पुरोहित चुराकर खा ले तो वह भोग देवता के नैवेद्य के भोग के काम में नहीं आता। हम लोगों की दुनिया में हमेशा से यही चला आ रहा था। दुनिया का मतलब है भारत से। यह भारत जिसके कारण आजाद हुआ उस आदमी का नाम है सुभाष बोस। लेकिन सुभाष बोस को क्या हमने उपयुक्त सम्मान दिया है? तुम्हीं बताओ, दिया है?"

उसके बाद चंद लमहों तक खामोशी में डूबा हुआ रहने के बाद फिर कहना शुरू किया, "नहीं, सम्मान नहीं दिया है। हमने पुरोहित बनकर देवता का नैवेद्य चुराकर खा लिया है। और इसी वजह से आज हमारे देश की यह बदतर हालत है। हमने किसी को उसका प्राप्य सम्मान नहीं दिया है। इसलिए प्रसन्न होने के बदले अपने देश के देवता का हमने अभिशाप पाया है और अब भी पा रहे हैं—"

"लेकिन इस समय तो आपको पैसे की नितांत आवश्यकता है। मैंने सारा कुछ सुना है।"

संदीप ने कहा, "सिर्फ मुझे ही नहीं, बल्कि हममें से हरेक को पैसे की जरूरत है। दुनिया में ऐसा कोई आदमी तुम ढूढ़कर निकाल सकते हो जो कहे कि उसे रुपये की जरूरत नहीं है? ऐसा आदमी ढूढ़कर निकाल सकते हो? बोलो हाशिम, जवाब दो, चुप मत रहो—"

हाशिम साहब ने तब भी कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप खड़ा रहा। संदीप ने फिर कहना शुरू किया "देखो, रुपये की जरूरत हरेक को है। जिसके पास रुपया नहीं है उसे तो रुपये की जरूरत रहेगी ही, मगर जिसके पास बहुत ज्यादा रुपया-पैसा है, वे और अधिक रुपया-पैसा चाहते हैं। ऐसा क्यों होता है? रुपये की जरूरत मुझे और तुम्हें दोनों को है। लेकिन जो जितना पाने के काबिल है उसे उतना ही मिलना चाहिए। लेकिन आज की दुनिया में क्या ऐसा होता है? जो आदमी अयोग्य है उसे ही सारा कुछ मिल जाता है और जो योग्य है उसके नसीब में कुछ भी नहीं जुटता।"

तब भी हाशिम साहब को खड़े देखकर संदीप ने पूछा, "क्या हुआ? तुम्हें अपनी बात का जवाब नहीं मिला?"

हाशिम साहब ने कहा, "लेकिन अभी तो आपको भी रुपये की जरूरत है।"

"मानता हूं, मुझे रुपये की जरूरत है। लेकिन तुम्हें तुम्हारा प्राप्य क्यों नहीं मिलेगा? दरअसल तुम्हारी ही वजह से ब्रांच का इतना डिपोजिट बढ़ा है। चाहे कोई जाने या न जाने लेकिन मैं इसे अच्छी तरह जानता हूं। मैंने हेड-ऑफिस को इसी बात का उल्लेख करते हुए पत्र लिखा था और इसीलिए तुम्हारा यह प्रमोशन—"

हाशिम साहब और कुछ बोले बिना कमरे के बाहर चला गया।

अब संदीप के लिए अपना काम करने की बारी है। काम तो केवल एक नहीं है। घर जाने पर वही दुश्चिन्ता और ऑफिस आने पर भी वही हालत। तो भी ऑफिस आने पर तुलनात्मक दृष्टि से थोड़ी-सी शांति मिलती है। यहां काम के साथ-साथ काम के झमेले भी हैं। लेकिन काम के अंतराल में घर की याद आने

...और बीस हज़ार रुपये ...
है। याद आती है मौसीजी की, विशाखा की और बीस हज़ार रुपये ... घर गिरवीं रखने की बात। इसके अलावा बहुत सारी बातों की याद आती ...

लेकिन तत्क्षण वह सचेत हो उठता है। नहीं, ऑफिस में बैठ घर की बात ...ना गैरकानूनी है। ऑफिस की कुर्सी पर बैठ घर के बारे में सोचने का मानी ...ाम में लापरवाही बरतकर माहवारी तनख्वाह लेना।

वह तुरन्त अपने-आपको संयत कर लेता है। सवेरे से ही उसकी मेज़ पर काम ...पहाड़ जमा हो जाता है। एक दिन इसी बैंक के श्याम बाज़ार ब्रांच में पहले-...ल नौकरी पाकर उसने जीवन की शुरुआत की थीं। और उसके बाद कुछ अपनी ...ग्यता और कुछ करमचंद मालव्य की दया से इस कुर्सी पर बैठा है। आज ...अलवत्ता उसके वेतन में वृद्धि हो गई है लेकिन आर्थिक दृष्टि से उसके भाग्य की ...अवनति ही हुई है।

दिन के दो बजे के बाद उसका काम थोड़ा-बहुत हल्का हो जाता है। उस समय उसने ज़रा चैन की सांस ली ही थी कि तभी अचानक श्याम बाज़ार ब्रांच के मैनेजर मालव्यजी ने अचानक उसके कमरे में प्रवेश किया।

मालव्यजी पर नज़र पड़ते ही संदीप उठकर खड़ा हो गया। बोला, "सर, आप ? एकाएक ?"

मालव्यजी ने कहा, "बैठो, बैठो—"

यह कहकर खुद भी सामने की कुर्सी पर बैठ गए। बोले, "न आऊं तो क्या करूं ? टेलीफोन करने पर तुम मिले नहीं। टेलीफोन ठीक होता तो मुझे यहां तुम्हारे पास नहीं आना पड़ता। कमप्लेन कर दिया है न ?"

"हां। मगर आप मुझे बुलवा लेते। आपने आने का कष्ट क्यों किया ?"

मालव्यजी ने कहा, "बिना आए रह नहीं सका। मुहम्मद हाशिम के बारे में खबर सुनने को मिली। इसी वजह से तो आया हूं। तुमने हाशिम का वेतन बढ़ाने के संबंध में हेड ऑफिस को लिखा था ?"

"हां सर। मैंने उसे दो इनक्रिमेन्ट देने की अनुशंसा की थी।"

"लेकिन ब्रांच के मैनेजर तुम हो, तुम्हारी ही दो इनक्रिमेन्ट होना चाहि... था। तुमसे हाशिम की अनुशंसा करने को किसने कहा था ? हाशिम ने ?"

संदीप ने कहा, "नहीं सर, नहीं। हाशिम उस किस्म का आदमी नहीं है... बल्कि इसके विपरीत स्वभाव का है। थोड़ी देर पहले वह इस संदर्भ में बातें क... आया था। उसने कहा, चूंकि मैं इस ब्रांच का मैनेजर हूं इसलिए क्रेडिट मुझे मिलना चाहिए था। लेकिन मैंने कहा, जिस आदमी की वजह से यह रेकार्ड है, उसका श्रेय मुझे नहीं, हाशिम को ही है। हाशिम ने ही इस मुहल्ले में घूम-कर तमाम पैसेवाले लोगों से मीठी-मीठी बातें कर असंभव को संभव बनाय... इसलिए जितना कुछ बेनिफिट है उसे ही मिलना चाहिए।"

मालव्यजी बोले, "लेकिन मैं तो तुम्हारी घर-गृहस्थी की हालत से वाकि... तुम्हारी घर-गृहस्थी की बात मुझसे अधिक कोई बाहरी आदमी नहीं जानत... सौ रुपये की वह रकम तुम्हें इस मुसीबत की घड़ी में बहुत मदद पहुंचाती—"

संदीप ने कहा, "मदद तो पहुंचाती ज़रूर।"

"इसके अलावा 'लोन' लेने के कारण पूरा वेतन तुम्हें नहीं मिलता है। काफी रुपये हर महीने काट लिए जाते हैं। मुझे तो सारा कुछ मालूम है। यही वजह है कि मैं तुम्हें इस ब्रांच का मैनेजर बनाने के लिए बंबई ऑफिस जाकर पैरवी कर आया था।"

संदीप ने कहा, "इसके लिए मैं आपका आजीवन कृतज्ञ रहूंगा। मैंने यह बात मां को बताई थी। मेरी मां हम लोगों के गांव के काली मंदिर में जाकर आपके लिए पूजा कर आई थी।"

मालव्यजी बोले, "तुम्हें दो इनक्रिमेन्ट मिल गए होते तो तुम्हारा बहुत ही उपकार होता। तुम्हारे कर्ज का बोझ थोड़ा-बहुत हल्का हो गया होता।"

संदीप ने इसे स्वीकार करते हुए कहा, "मैं सबकुछ समझता हूं सर। वह रकम मिल गई होती तो हो सकता है, मुसीबत की इस घड़ी में मुझे बहुत लाभ होता। लेकिन अपने विवेक को मैं कैसे सांत्वना देता?"

मालव्यजी ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। हो सकता है वे इस बात का कोई उत्तर सोचने पर भी नहीं पा सके। थोड़ी देर बाद बोले, "ठीक है, तुमने जो अच्छा समझा, वही किया। इस संबंध में मैं और क्या कह सकता हूं?"

उसके बाद जरा रुककर पूछा, "तुम्हारी मौसीजी की क्या हालत है?"

संदीप ने कहा, "हालत पहले जैसी ही है। कोई तरक्की नहीं हुई है।"

"अस्पताल भेज दिया है?"

"नहीं सर, वे अपना इलाज नहीं कराएंगी।"

"क्यों?"

संदीप ने कहा, "वे नहीं चाहतीं कि उनके इलाज के लिए उतने रुपये खर्च किए जाएं।"

मालव्यजी बोले, "यह क्यों?"

संदीप ने कहा, "सर, मैंने मौसीजी का इलाज कराने के खयाल से अपना छोटा-सा मकान गिरवी भी रख दिया है।"

"मकान गिरवी रख दिया है?"

"हां सर।"

मालव्यजी बोले, "तो फिर तुम्हें उस बीस हजार रुपये की रकम के लिए हर महीने ब्याज भी तो देना पड़ेगा।"

संदीप ने कहा, "वे लोग ब्याज नहीं लेंगे। मकान गिरवी रखने को भी वे तैयार नहीं थे। लेकिन मैं बिना लिखा-पढ़ी किए रुपया न लूंगा, यह कह एक हैण्डनोट लिख दिया। और हर महीने बाजाब्ता पांच प्रतिशत ब्याज भी देता रहूंगा। क्योंकि बाहरी आदमी से रुपया कर्ज लेना मेरे उसूल के खिलाफ है—"

"रुपया मिल चुका है तो फिर इलाज कराने में इतनी देर क्यों कर रहे हो? वे जितनी ही जल्दी स्वस्थ हो जाएंगी उतनी ही जल्दी तुम उनकी लड़की से शादी कर उन्हें कन्यादान की जिम्मेदारी से मुक्त कर सकोगे।"

संदीप ने कहा, "मेरी मौसीजी चाहती हैं कि पहले मुझे उनकी लड़की से शादी करनी है, उसके बाद ही वे अपना इलाज कराएंगी। उनका कहना है कि उनकी जिन्दगी से उनकी लड़की की शादी ज्यादा जरूरी है। वे पहले अपनी लड़की

की शादी अपनी आंखों से देखना चाहती हैं। उसके बाद चाहे वे जिन्दा रहें या मरें इससे उनका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं—"

"फिर ? फिर तुमने क्या निर्णय लिया ?"

संदीप ने कहा, "मेरी मां ने कहा कि पहले तू शादी कर ले—"

"तो तुमने क्या तय किया है ?"

संदीप ने कहा, "मैंने तय किया है कि मां की ही बात मानूंगा। यानी पहले शादी करूंगा उसके बाद ही मौसीजी का इलाज कराऊंगा। तब तक मेरे ऑफिस का कर्ज भी चुक जाएगा—उसके लिए तो मेरा बीस हज़ार रुपया है ही—"

मालव्यजी ने कहा, "लेकिन शादी में भी तो कुछ खर्च होगा। वह खर्च कहां से आएगा ?"

संदीप ने कहा, "मां ने कहा है, इस शादी में कोई खर्च करने की ज़रूरत नहीं। लोगों को भी खिलाना-पिलाना नहीं है। सोने के किसी गहने की भी ज़रूरत नहीं है। मां के पास एक जोड़ा सोने के कंगन हैं। वही देकर मां बहू को आशीर्वाद देंगी—"

मालव्यजी बोले, "ठीक है, अपनी मां की सलाह मानकर ही चलना। सगे-संबंधियों या दूसरे लोगों को खिलाने का बंदोबस्त मत करना। बंगाली और मारवाड़ियों की यही एक बुरी आदत है। हां, तो शादी कब हो रही है ?"

संदीप ने कहा, "शादी का दिन अब तक तय नहीं हुआ है। यह काम किसी छुट्टी के दिन या रविवार को किया जाएगा ताकि ऑफिस से गैरहाजिर न रहना पड़े—"

मालव्यजी ने कहा, "एक दिन में तो होगा नहीं। यदि ज़रूरत पड़े तो और दो दिन की छुट्टी ले लेना। इससे तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी। यों तुम्हारी छुट्टी भी बाकी है न ?"

संदीप ने कहा, "नहीं सर, बीमारी के दौरान में काफी छुट्टी ले चुका हूं—"

मालव्यजी अब उठकर खड़े हो गए।

बोले, "अब मैं चलता हूं, तुम्हारा बहुत सारा काम पड़ा हुआ है—"

उसके बाद जाते-जाते भी ज़रा रुक गए। बोले, "एक बात और। जिस दिन तुम्हारी शादी होगी, उसकी सूचना देना। मैं उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहूंगा—"

मालव्यजी अब रुके नहीं। संदीप उन्हें छोड़ने बैंक के दरवाज़े तक आया। सोचा, आश्चर्य है, दुनिया में ऐसे भी आदमी हैं! दुनिया में जिस तरह गोपाल हाजरा और तपेश गांगुली जैसे आदमी हैं, उसी तरह मालव्यजी जैसे भी आदमी हैं। इसके अलावा शिवप्रसाद घोष जैसे वकील भी हैं जिन्होंने कोर्ट के सामने खड़े होकर विशाखा को जेल से छुड़ाने के लिए आवेदन किया और विशाखा को संदीप लाहिड़ी के हवाले सौंप दिया, परन्तु खर्च वगैरह की बाबत एक भी पैसा नहीं लिया। ऐसे लोग नहीं रहते तो दुनिया कैसे चलती ?

उस दिन खूब तड़के ही मुक्तिपद ने इन्दौर से दादी मां को टेलीफोन किया। टेलीफोन उठाया बिन्दु ने।

"मां हूं? मैं इन्दौर से बोल रहा हूं।"

दादी मां तब एकाग्र होकर जप कर रही थीं। गुरुदेव के द्वारा दिए गए दीक्षा-मंत्र का उन दिनों वे और भी मनोयोग से जप करती थी। उनकी जितनी भी उम्र बढ़ रही है, जितनी ही विपदा गहराती जा रही है, वे उतने ही मनोयोग से जप कर रही हैं। रात के समय उन्हें जप-तप आह्निक करने का समय नहीं मिलता। वकीलों और बैरिस्टरों के यहां से लौटने में उन्हें अक्सर बहुत देर हो जाती है। उस समय नियमपूर्वक जप-तप आह्निक भलीभांति करने का उन्हें समय या सुयोग नहीं मिलता है।

सवेरे वह सब करने का उनके पास काफी वक्त रहता है।

पहले रात तीन बजे उनकी नींद टूट जाती थी। उस समय वे हाथ-मुंह-पैर धोकर तैयार हो जाती थीं। बिन्दु को पुकारतीं। बिन्दु भी तैयार हो जाती थी।

उस समय गंगा-स्नान का दौर चलता था। बिन्दु को लेकर गंगा-स्नान करने चली जाती थीं।

गंगा-स्नान के दौरान ही एक छोटी-सी लड़की पर उनकी नजर पड़ी थी और उसी से अपने पोते की शादी करने का निर्णय लिया था।

यह कितने दिन पहले की बात है!

उनके भाग्य का ही यह दोष है। भाग्य का दोष न होता तो ऐसा होता ही क्यों? उस कच्ची उम्र की लड़की को देखकर उनके मन ने मानो कहा था—यही उनकी लक्ष्मी है। इस कच्ची उम्र की लड़की को यदि अपनी पौत्र-वधू बनाकर अपने घर ला सकें तो उनके घर में माता लक्ष्मी के आने जैसा सौभाग्य प्राप्त होगा। उनके घर में पुन: माता लक्ष्मी का आविर्भाव होगा।

सच, वह कितने दिन पहले की बात है!

उसी क्षण दादी मां ने गंगा घाट पर ही बिन्दु के द्वारा उस लड़की का पता लेकर मैनेजर साहब को उन लोगों के घर पर भेजा था। मकसद था लड़की के जन्म के वर्ष, तिथि आदि की जानकारी प्राप्त करना।

उस लड़की की जन्मपत्री लेकर वे गुरुदेव के पास काशी गई थीं। लेकिन उनके पोते की जन्मपत्री बनवाई नहीं गई थी। क्योंकि पोते के पैदा होते ही उसकी मां बीमार हो गई थी। लिहाजा इसी के चलते सभी व्यस्त हो गए थे। पोते के भविष्य की तरफ ध्यान देने या सोचने की किसी को फुर्सत नहीं मिली।

उसके बाद गुरुदेव की बात पर वे उसी लड़की को हर महीने रुपया देने लगीं। लिखाने-पढ़ाने का इन्तजाम किया, लेकिन जब देखा कि उनके द्वारा हर महीने दिए जानेवाले रुपये घर के दूसरे लोगों के मौज-मस्ती में खर्च हो रहे हैं तो उन्होंने उस लड़की और उसकी विधवा मां को लाकर अपने रसेल स्ट्रीट के मकान में रखा। और वहीं रखकर उस लड़की को लिखाने-पढ़ाने से लेकर बड़े आदमी के घर की बहू होने के लायक बनाने लगीं। उन लोगों की देखरेख करने के लिए मल्लिकजी के गांव के एक नौजवान को माहवारी तनख्वाह पर नियुक्त किया।

सचमुच, वह कितने पहले की बात है!

"तुम कैसी हो मां?"

दादी मां बोली, "तुम लोग अब भी मुझे याद रखे हुए हो? यह तो अच्छी

बात है।"

"बताओ न; कैसी हो ? मुकदमे की क्या खबर है ?"

दादी मां ने कहा, "नरक में हूं रे मुक्ति, नरक में। नरक में वास कर रही हूं।"

"अब भी मुकदमा खत्म नहीं हुआ है ?"

दादी मां बोलीं, "मुकदमा कैसे खत्म होगा ? यह क्या तुम्हारी फैक्टरी है कि हड़ताल हुई और फैक्टरी उठाकर बाहर ले गए। खैर, यह बताओ कि तुम लोग कैसे हो ?"

मुक्तिपद ने कहा, "पिकनिक तुम्हारे पास गई है ?"

दादी मां मुक्तिपद की बात सुनकर जैसे आकाश से नीचे गिर पड़ीं। बोलीं, "पिकनिक ? तुम्हारी लड़की ? कलकत्ता ? क्या कह रहा है तू ?"

"हां, कई दिनों से वह घर नहीं आ रही है। बम्बई ट्रंक-कॉल किया है, इन्दौर में नहीं है। दिल्ली खबर भेजी है। वहां भी खोज-पड़ताल हो रही है। सोचा, हो सकता है, तुम्हारे पास कलकत्ता गई हो, इसीलिए…"

दादी मां बोलीं, "अब खोज-पड़ताल करने पर वह कहीं भी नहीं मिलेगी—"

"क्यों, खोज-पड़ताल करने पर क्यों नहीं मिलेगी ?"

"जिसकी मां को घर-गृहस्थी पर नज़र रखने का वक्त नहीं है उसकी लड़की घर छोड़कर न भागेगी तो क्या करेगी ?"

इसके उत्तर में मुक्तिपद कुछ कह सकने में असमर्थ है। वह कुछ बोले कि उसके पहले ही दादी मां ने कहा, "तुझे किसी ज्योतिषी का पता चला है ?"

"ज्योतिषी ? मुझे समय नहीं मिला है मां।"

दादी मां बोलीं, "समय मिलेगा कैसे ? समय मिलेगा तो मेरा भला होगा, इसीलिए समय नहीं मिला है।"

"नहीं मां, ऐसी बात नहीं है। मैं बहुत सारे झमेलों में फंसा हुआ हूं। यह तुम समझ नहीं सकोगी। सभी को सिर्फ तनख्वाह बढ़वाने से मतलब है, काम कोई नहीं करना चाहता। उस पर है घूस।"

"घूस ?"

"हां, माल का ऑर्डर लाने के लिए जाने पर सभी घूस की मांग करते हैं।"

दादी मां बोलीं, "घूस तो यहां भी देनी पड़ती थी। यह कौन-सी नई बात है ?"

मुक्तिपद बोले, "वहां लेबर-यूनियन के लोग घूस लेते थे लेकिन यहां मिनिस्टरों को घूस चाहिए। एकबारगी खुले तौर पर घूस की मांग करते हैं। आंख की लाज नामक चीज किसी में नहीं है। पहले सोचता था, सिर्फ वेस्ट बंगाल में ही घूस का कारोबार चलता है, लेकिन यहां आने पर देख रहा हूं घूस का खुला हुआ बाजार है। इसके फलस्वरूप चीजों की कीमत बढ़ती जा रही है। यूनियन के नेतागण भी लेबरों की तनख्वाह बढ़ाने के लिए घूस की मांग करते हैं। अब मैं क्या करूं, समझ में नहीं आता। अब शायद मैं पागल हो जाऊंगा—"

दादी मां बोलीं, "तो फिर तू फैक्टरी बन्द कर दे—"

मुक्तिपद ने कहा, "फैक्टरी बन्द कर दूंगा तो मैं क्या खाऊंगा या तुम ही क्या

पाओगी ?"

इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया गया। एकाएक टेलीफोन की लाइन कट जाने से संपर्क टूट गया।

दादी मां इस ओर से चिल्लाने लगीं, "हैलो, हैलो—"

उस तरफ से मुक्तिपद भी चिल्लाने लगे, "हैलो, हैलो—"

इस युग में आदमी से आदमी का सम्बन्ध भी इतना यान्त्रिक हो गया है कि वहां भी आत्मीयता का सूत्र एकाएक टूट जाता है और लाख कोशिश करने पर भी वह सम्बन्ध जुड़ नहीं पाता। कहां एक घर में एक लड़का पैदा हुआ और वह मां को छोड़कर कितनी दूर अलग जाकर रहने लगा! इतनी दूर कि इच्छा करने पर भी वह नजदीक में नहीं मिलता है। उसे पास रखा नहीं जा सकता। ऐसा क्यों हुआ?

यह भी शायद यंत्र के कारण ही हुआ है। यंत्र ने आदमी को बहुत तरह के आराम दिए हैं लेकिन साथ ही अनगिन यातनाएं भी बीच में सिर्फ एक आदमी दूसरे आदमी के सिर पर दोष मढ़कर दिन-ब-दिन अलग होकर आत्म-निर्वासन का दंड भोगता है। इस मामले में भी यही हुआ है। इस मंत्र को न तो इसे रखना संभव हो पा रहा है और न ही इसे छोड़ना संभव हो रहा है। रखने या छोड़ने दोनों हालत में कष्ट का अहसास होता है।

एकाएक टेलीफोन दुबारा घनघना उठा।

"कौन? मुक्ति?"

दूसरी तरफ से मुक्तिपद बोले, "हां, लाइन एकाएक कट गई थी। आजकल तुम लोगों के कलकत्ता का टेलीफोन ऐसा हो गया है कि लाइन मिलना ही मुश्किल है। लाइन पाने के लिए घूस देनी पड़ती है। टेलीफोन के माध्यम से पिकनिक की खोज करने में इस बीच मेरा सात हज़ार रुपया खर्च हो चुका है।"

"वह भाग क्यों गई? वह क्या लड़कों से बहुत हिलती-मिलती थी?"

"ऐसा तो करती ही थी।"

"ऐसा करने क्यों देता था? मालूम नहीं कि आजकल वक्त कितना खराब है? सौम्य के साथ भी यही बात हुई थी। तू उसे अगर विलायत नहीं भेजता तो आज क्या यह कांड होता? तेरे चलते ही मुझे आज इतनी झंझटों का सामना करना पड़ रहा है। हो सके तो जल्द उसकी शादी कर दे—"

मुक्तिपद ने कहा, "पिकनिक मिलेगी तभी न शादी कराऊंगा। और मौजूदा हालत में इस इन्दौर में अच्छा पात्र कहां मिलेगा? तुम किसी पात्र की खोज कर दो न।"

"मैं?" दादी मां ने झुंझलाकर कहा, "तू मुझे अपनी लड़की के लिए पात्र तलाशने कह रहा है? मैं पोते की शादी करने को परेशान-परेशान हो रही हूं और उस पर अपनी पोती की शादी का झमेला अपने कंधे पर लूंगी? आखिर में यदि कोई झमेला खड़ा हो जाए तो तेरी बीवी क्या मुझे जिन्दा रहने देगी? यह सब मुझसे नहीं हो सकेगा। इससे तो बेहतर यही है कि तू एकबार कलकत्ता आकर खुद ही खोज-खबर ले। मुझे इसके बीच घसीटने की कोशिश मत कर।" उस प्रसंग को समाप्त कर बोली, "आज कुछ रुपये भेज देना—"

"कितना ?"

"यही एकाध लाख ।"

मुक्तिपद बोले, "यही तो उस दिन तुम्हें दो लाख भेजा था—"

"वह बहुत पहले ही खत्म हो चुका है। सौम्य के लिए पात्री की खोज में पानी की तरह पैसा खर्च हो रहा है। ज्योतिषियों के पैसे का लोभ पूरा करते-करते फटे-हाल हो गई—"

मुक्तिपद बोले, "झाड़-फूंक जैसी बातों में तुम अब भी विश्वास करती हो ? उन लोगों के पल्ले पड़ जाओगी तो तुम आखिर में थककर चूर-चूर हो जाओगी। वह सब बन्द करो।"

"तो फिर क्या करूं, बताओ ? सौम्य को फांसी हो जाए, तू क्या यही चाहता है ?"

मुक्तिपद ने कहा, "ऐसा क्यों चाहूंगा !"

"तो फिर मैं बूढ़ी औरत वही कर रही हूं जो मुझसे होना मुमकिन है। मैनेजर साहब को भेजा है। वे काशी, मथुरा, वृन्दावन, हरिद्वार आदि स्थानों का चक्कर लगा रहे हैं। ज्योतिषी जितने रुपये की मांग करते हैं, दिए जा रहे हैं। जितने रुपये की मांग करते हैं, भेज दिया करती हूं। जो भी जो कुछ कहता है वही करती हूं। अब मैनेजर साहब को दक्षिण भारत भेजूंगी। इधर हाथ में वक्त नहीं है। वकील सिर्फ तकाजे पर तकाजे करते हैं और उनके ऑफिस जाने पर कहते हैं: "काम हुआ ? पात्री मिल गई ?"

मुक्तिपद बोले, "अब मैं यह सब बात सोच नहीं सकता। पिकनिक की वजह से मैं इतना व्यस्त हूं कि मैं कोई दूसरी बात सोच भी नहीं पाता—"

"तू कलकत्ता कब आ रहा है ?"

"देखूं, कब वक्त निकाल पाता हूं।"

"अब तुझे नींद आती है ?"

मुक्तिपद बोले, "नींद अब आएगी नहीं। यह सब बात छोड़ दो—"

"क्यों ? छोड़ क्यों दूं ? पहले तुझे अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना है। तू खुद ज़िन्दा रहेगा तभी तो सब लोग ज़िन्दा रह सकते हैं।"

मुक्तिपद बोले, "जानती हो मां, मेरे मजदूर ही दरअसल सुखी आदमी हैं। वे जिस तरह सब कुछ खाकर पचा लेते हैं उसी तरह खर्राटे के साथ नींद भी लेते हैं। उन्हें देखकर मुझे रश्क होता है। सोचता हूं, ये लोग कितने खुशकिस्मत हैं !"

"तेरा वो अर्जुन सरकार है ? और नागराजन ? वे दोनों बड़े ही भले आदमी हैं।"

"हां हैं, मैं जल्द ही कलकत्ता आऊंगा। रख रहा हूं—"

मल्लिकजी पुन: एक बार कलकत्ता आए। वे बीच-बीच में कलकत्ता आते हैं और उसके बाद फिर चले जाते हैं। कहीं जाकर भी कोई रास्ता नहीं निकाल पाते हैं।

उस बार जैसे ही आए, तपेश गांगुली ने आकर उन्हें पकड़ लिया। मल्लिकजी

ने पूछा, "क्या बात है ? फिर क्यों आ धमके ?"

"वही जन्मपत्री···"

"फिर जन्मपत्री ?"

तपेश गांगुली ने जेब से एक मुड़ा हुआ पीला कागज निकाला और कहा, "इसे खिदिरपुर के 'श्री-श्री महाकाली आश्रम' से बनवाकर ले आया हूं। इसके लिए नकद दो सौ रुपया खर्च किया है। बिल्कुल सही जन्मपत्री है। देखिए, इसका स्थान कितना शक्तिशाली है। इससे जिसकी भी शादी होगी उसका भाग्य एकाएक चमक उठेगा। ज्योतिषीजी ने यह गारंटी दी है।"

मल्लिकजी ने कहा, "अरे, आपको तो बता ही चुका हूं कि अब मुझे जन्मपत्री नहीं चाहिए। मैं अभी-अभी दो महीने के बाद कलकत्ता आया हूं। अभी तक हाथ-मुंह भी नहीं धोया है। और इसी वक्त आप आ धमके ?"

तपेश गांगुली बोला, "मैं हर रोज आया करता हूं मैनेजर साहब। मैं हर रोज आकर पता लगा जाता था कि आप कब आ रहे हैं। आपके कारण मुझे कितने दिनों तक ऑफिस नागा करना पड़ा है, इसका कोई ठिकाना नहीं। रेल की नौकरी रहने के कारण ही बची हुई है नहीं तो कब की छूट गई होती। आज इस गरीब पर एक बार कृपा-दृष्टि डालिए। भगवान आपका भला करेंगे।"

मल्लिकजी रात-भर ट्रेन में जागकर आए हैं। रिजर्वेशन नहीं मिल सका था। टिकट-चेकर के हाथ में दस रुपया थमाने के बाद डिब्बे के फर्श पर किसी तरह बैठ सके थे। हावड़ा स्टेशन पहुंच टैक्सी पकड़ सीधे घर पहुंचे हैं। और तभी तपेश गांगुली ने हमला कर दिया।

"मैं अभी [illegible] घर जाइए—"

[illegible] छोड़ने को तैयार नहीं है। बोला, [illegible] गुस्ल लीजिए, मैं तब तक बैठा रहूंगा।

"अरे, आप बैठे रहिएगा तो मेरा काम-धाम हो सकेगा ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "आप आराम से गुस्ल लीजिए। मैं अगर यहां चुपचाप बैठा रहूं तो इसमें भी आपको आपत्ति है ?"

इस पर मल्लिकजी ने अपने आखिरी हथियार का इस्तेमाल किया। बोले, "तो फिर सुन लीजिए, मैं जो चाहता था मिल गया।"

"मतलब ?"

"मतलब यह कि फांसी के मुजरिम के लिए मुझे एक ऐसी कुमारी लड़की की जन्मपत्री की जरूरत थी, जिसे वैधव्य-योग न हो। वह मुझे मिल गई है।"

"मिल गई है ?"

यह बात सुनकर तपेश गांगुली की आंखों में आंसू छलक आए। दुबारा पूछा "मिल गई है ?"

"हां।"

तपेश गांगुली को जैसे उनकी बात पर यकीन नहीं हुआ।

पूछा, "लड़कीवाले ने कितना रुपया लिया ? एक लाख [illegible]

मल्लिकजी ने कहा, "तीन लाख।"

"तीन्न ला-ख ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, चार लाख मांग रहा था, बहुत दर-दाम और खींच-तान करने पर तीन लाख में राजी हो गया। मैंने भी उन्हें तीन लाख दे दिया।"

"उसके वाद ?"

तपेश गांगुली की आवाज़ में तव रुलाई का स्वर फूट पड़ा, "तीन लाख दे दिया—" उसके लहज़े से ऐसा लगा जैसे उसकी कमीज़ के पॉकेट से तीन लाख रुपयें की चोरी हो गई हो। वोला, "किस जात की है ?"

"और कौन-सी जात···ब्राह्मण। स्वजाति।"

"फांसी के मुजरिम को दामाद वनाने को राजी हो गया ?"

मल्लिकजी अव तपेश गांगुली की वात से ऊब गए।

वोले, "राजी क्यों नहीं होगा ? रुपया देने से क्या नहीं होता है ?"

तपेश गांगुली वोला, "लगता है मेरे जैसे अभागे आदमी दुनिया में और भी हैं।"

इस पर भी तपेश गांगुली को वैठा हुआ देखकर मल्लिकजी वोले, "अव आप दफा हो जाइए। यहां वैठे-वैठे वक्त वर्वाद करने से क्या होगा ? सोचने से तो कोई रास्ता नहीं निकलेगा।"

तपेश गांगुली ने अव वाकई रोना शुरू कर दिया है।

मल्लिकजी को थोड़ी-सी दया हुई।

वोले, "सोच-सोचकर तवीयत खराव करने से फायदा ही क्या ? अव आप घर चले जाइए—"

तपेश गांगुली ने कहा, "और किसी फांसी के मुज़रिम का पता है आपके पास ?"

मल्लिकजी ने कहा, "फिलहाल कोई जानकारी नहीं है। वाद में पता चलेगा तो आपको सूचित करूंगा।"

"सचमुच सूचित कीजिएगा ?"

"हां, निश्चय ही।"

तपेश गांगुली वोला, "आप व्यस्त आदमी हैं, मुझे सूचना देना भूल जाइएगा। इससे अच्छा यही रहेगा कि मैं ही वीच-वीच में आपके पास आकर पता लगाता रहूं।···और एक वात···"

"क्या ? कहिए।"

तपेश गांगुली वोला, "अगर तीन लाख न भी दे तो मैं दो लाख में राजी हो जाऊंगा। आदमी की तकदीर वहुत खराव होती है तो वह लड़की का वाप होता है।" यह कहकर रूमाल से अपनी आंखें पोंछ लीं।

उसके वाद फिर वोला, "अव सोचता हूं, शादी क्यों की मैंने। न करता तो मेरी यह लड़की पैदा नहीं हुई होती और लड़की के लिए मुझे इतने आदमी के पैर पकड़ रोना-विलखना भी नहीं पड़ता। आपने शादी न करके वहुत ही अच्छा किया है मैनेजर साहव। आप वच गए। हां, आप परेशानी से वच गए···"

मल्लिकजी ने कहा, "अरे, यह तो भारी मुसीवत में फंस गया ! उठिए-उठिए, मुझे अपना काम-काज करना है। उठिए।"

सतोष गांगुली तो भी कहने लगा, "और भगवान ने यदि लड़की ही दी तो रुपया क्यों नहीं दिया ? जेब में पैसा क्यों नहीं दिया ?"

अब मल्लिकजी बरदाश्त नहीं कर सके। गिरिधारी को पुकारा। गिरिधारी जैसे ही आया, बोले, "गिरिधारी, इन्हें घर से बाहर निकाल दो, एकदम से गेट के बाहर।"

हरेक बैंक की तरह संदीप वगैरह के नेशनल बैंक में भी 'सेफ डिपॉजिट वोल्ट' नामक एक वस्तु थी। बैंक के जो लोग पृष्ठपोषक और डिपॉजिटर हैं वे अपने कीमती कागजात, दस्तावेज, सोने की छड़ें, हीरे-जवाहरात उसके अन्दर छिपाकर रखते। कीमती चीजों के लिए वह एक निरापद स्थान है। वहा बाहरी लोगों को जाने की मनाही है। उसके लिए सभी जगह एक निश्चित मूल्य लागू है।

हरेक आदमी के मन के अन्दर भी उसी तरह का एक सेफ डिपॉजिट वोल्ट रहता है। वहा की छिपी सपत्ति का ब्यौरा बाहरी आदमी को जानने का अधिकार नहीं है। वहा स्वयं के अलावा अन्य किसी का प्रवेश वर्जित है।

संदीप के मन में भी उसी किस्म का एक सेफ डिपॉजिट वोल्ट था। वहा की खबर से उसकी मा भी अनभिज्ञ थी। लेकिन अब ?

अब तो उसकी शादी होने जा रही है। अब भी वह क्या अपने मन के सेफ डिपॉजिट-वोल्ट की सुरक्षितता बरकरार रख सकेगा ? यानी विशाखा क्या सचमुच ही उसके सुख-दुख की भागीदार हो सकेगी, उसे अपने वास्तविक सुख-दुख की भागीदार बनाने से उसके उस सेफ डिपॉजिट वोल्ट की सुरक्षितता में बाधा पहुंच सकती है, उस पर से उसका एकाधिकार समाप्त हो जा सकता है। आश्चर्य ! जब वह अपने एकाधिकार स्वत्व के लोप होने के भय से सिहर उठा था, उस समय भी उसे मालूम नहीं था कि निकट भविष्य में और कितनी बड़ी दहशत उसे अपने शिकंजे में फंसाने के लिए मौके की तलाश में है।

याद है, मालव्यजी ने बार-बार कहा था, "शादी के समय लोगों को खिलाने-पिलाने का आयोजन मत करना। ठीक है न ? वचन दे रहो न ?"

इस बात का उत्तर देने में संदीप को शुरू में थोड़ी-बहुत दुविधा महसूस हुई थी।

मालव्यजी ने इसके बाद कहा था, "याद रखना, और-और लोगों की तरह तुम्हारी यह शादी भोग के लिए नहीं, आत्मदान के लिए है। आत्मदान के माध्यम से ही तुम्हें अपनी तृप्ति का आस्वादन प्राप्त करना है। पाना नहीं, देना है। यह इस तरह का देना है जिससे पाने का कोई संबंध नहीं। तुम इस संसार में पाने के लिए नहीं, सिर्फ देने के लिए आए हो।"

मामूली एक बैंक के मैनेजर हैं वे। साधु-महात्मा या महापुरुष नहीं। साधारण चेहरे के आदमी में इस तरह का असाधारण मन छिपा हुआ रहता है, संदीप ने यह अपने परवर्ती जीवन में बहुत देखा है। संदीप के लिए यह एक सौभाग्य की बात है कि नौकरी के प्रारंभिक दौर में उसे इस तरह का एक शुभैषी मिला था।

खिलाने-पिलाने की बात ही नहीं, गहना या बनारसी साड़ी की भी विलासिता

"ती-न ला-ख ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, चार लाख मांग रहा था, वहुत दर-दाम और खींच-तान करने पर तीन लाख में राजी हो गया। मैंने भी उन्हें तीन लाख दे दिया।"

"उसके वाद ?"

तपेश गांगुली की आवाज़ में तव रुलाई का स्वर फूट पड़ा, "तीन लाख दे दिया—" उसके लहजे से ऐसा लगा जैसे उसकी कमीज़ के पॉकेट से तीन लाख रुपयें की चोरी हो गई हो। बोला, "किस जात की है ?"

"और कौन-सी जात···ब्राह्मण। स्वजाति।"

"फांसी के मुजरिम को दामाद वनाने को राजी हो गया ?"

मल्लिकजी अव तपेश गांगुली की वात से ऊव गए।

वोले, "राजी क्यों नहीं होगा ? रुपया देने से क्या नहीं होता है ?"

तपेश गांगुली वोला, "लगता है मेरे जैसे अभागे आदमी दुनिया में और भी हैं।"

इस पर भी तपेश गांगुली को वैठा हुआ देखकर मल्लिकजी वोले, "अव आप दफा हो जाइए। यहां वैठे-वैठे वक्त वर्वाद करने से क्या होगा ? सोचने से तो कोई रास्ता नहीं निकलेगा।"

तपेश गांगुली ने अव वाकई रोना शुरू कर दिया है।

मल्लिकजी को थोड़ी-सी दया हुई।

वोले, "सोच-सोचकर तवीयत खराव करने से फायदा ही क्या ? अव आप घर चले जाइए—"

तपेश गांगुली ने कहा, "और किसी फांसी के मुजरिम का पता है आपके पास ?"

मल्लिकजी ने कहा, "फिलहाल कोई जानकारी नहीं है। वाद में पता चलेगा तो आपको सूचित करूंगा।"

"सचमुच सूचित कीजिएगा ?"

"हां, निश्चय ही।"

तपेश गांगुली वोला, "आप व्यस्त आदमी हैं, मुझे सूचना देना भूल जाइएगा। इससे अच्छा यही रहेगा कि मैं ही वीच-वीच में आपके पास आकर पता लगाता रहूं।···और एक वात···"

"क्या ? कहिए।"

तपेश गांगुली वोला, "अगर तीन लाख न भी दे तो मैं दो लाख में राजी हो जाऊंगा। आदमी की तकदीर वहुत खराव होती है तो वह लड़की का वाप होता है।" यह कहकर रूमाल से अपनी आंखें पोंछ लीं।

उसके वाद फिर वोला, "अव सोचता हूं, शादी क्यों की मैंने। न करता तो मेरी यह लड़की पैदा नहीं हुई होती और लड़की के लिए मुझे इतने आदमी के पैर पकड़ रोना-विलखना भी नहीं पड़ता। आपने शादी न करके वहुत ही अच्छा किया है मैनेजर साहव। आप वच गए। हां, आप परेशानी से वच गए···"

मल्लिकजी ने कहा, "अरे, यह तो भारी मुसीवत में फंस गया ! उठिए-उठिए, मुझे अपना काम-काज करना है। उठिए।"

उमेश गांगुली तो भी कहने लगा, "और भगवान ने यदि लड़की ही दी तो रुपया क्यों नहीं दिया ? जेब में पैसा क्यों नहीं दिया ?"

अब मल्लिकजी बरदाश्त नहीं कर सके। गिरिधारी को पुकारा। गिरिधारी जैसे ही आया, बोले, "गिरिधारी, इन्हें घर से बाहर निकाल दो, एकदम से गेट के बाहर।"

हरेक बैंक की तरह संदीप वगैरह के नेशनल बैंक में भी 'सेफ डिपोजिट वोल्ट' नामक एक वस्तु थी। बैंक के जो लोग पृष्ठपोषक और डिपोजिटर हैं वे अपने कीमती कागजात, दस्तावेज, सोने की छड़ें, हीरे-जवाहरात उसके अन्दर छिपाकर रखते। कीमती चीजों के लिए यह एक निरापद स्थान है। वहां बाहरी लोगों को जाने की मनाही है। उसके लिए सभी जगह एक निश्चित मूल्य लागू है।

हरेक आदमी के मन के अन्दर भी उसी तरह का एक सेफ डिपोजिट वोल्ट रहता है। वहां की छिपी सपत्ति का ब्योरा बाहरी आदमी को जानने का अधिकार नहीं है। वहां स्वयं के अलावा अन्य किसी का प्रवेश वर्जित है।

संदीप के मन में भी उसी किस्म का एक सेफ डिपोजिट वोल्ट था। वहां की खबर से उसकी मां भी अनभिज्ञ थी। लेकिन अब ?

अब तो उसकी शादी होने जा रही है। अब भी वह क्या अपने मन के सेफ डिपोजिट-वोल्ट की सुरक्षितता बरकरार रख सकेगा ? यानी विशाखा क्या सचमुच ही उसके सुख-दुख की भागीदार हो सकेगी, उसे अपने वास्तविक सुख-दुख की भागीदार बनाने से उसके उस सेफ डिपोजिट वोल्ट की सुरक्षितता में बाधा पहुंच सकती है, उस पर से उसका एकाधिकार समाप्त हो जा सकता है। आश्चर्य ! जब वह अपने एकाधिकार स्वत्व के लोप होने के भय से सिहर उठा था, उस समय भी उसे मालूम नहीं था कि निकट भविष्य में और कितनी बड़ी दहशत उसे अपने शिकंजे में फंसाने के लिए मौके की तलाश में है।

याद है, मालव्यजी ने बार-बार कहा था, "शादी के समय लोगों को खिलाने-पिलाने का आयोजन मत करना। ठीक है न ? वचन दे रहो न ?"

इस बात का उत्तर देने में संदीप को शुरू में थोड़ी-बहुत दुविधा महसूस हुई थी।

मालव्यजी ने इसके बाद कहा था, "याद रखना, और-और लोगों की तरह तुम्हारी यह शादी भोग के लिए नहीं, आत्मदान के लिए है। आत्मदान के माध्यम से ही तुम्हें अपनी तृप्ति का आस्वादन प्राप्त करना है। पाना नहीं, देना है। यह इस तरह का देना है जिससे पाने का कोई संबंध नहीं। तुम इस संसार में पाने के लिए नहीं, सिर्फ देने के लिए आए हो।"

मामूली एक बैंक के मैनेजर हैं वे। साधु-महात्मा या महापुरुष नहीं। साधारण चेहरे के आदमी में इस तरह का असाधारण मन छिपा हुआ रहता है, संदीप ने यह अपने परवर्ती जीवन में बहुत देखा है। संदीप के लिए यह एक सौभाग्य की बात है कि नौकरी के प्रारंभिक दौर में उसे इस तरह का एक शुभैषी मिला था।

खिलाने-पिलाने की बात ही नहीं, गहना या बनारसी साड़ी की भी विलासिता

"तीन लाख ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, चार लाख मांग रहा था, वहुत दर-दाम और खींच-तान करने पर तीन लाख में राजी हो गया। मैंने भी उन्हें तीन लाख दे दिया।"

"उसके वाद ?"

तपेश गांगुली की आवाज़ में तव रुलाई का स्वर फूट पड़ा, "तीन लाख दे दिया—" उसके लहजे से ऐसा लगा जैसे उसकी कमीज़ के पॉकेट से तीन लाख रुपयें की चोरी हो गई हो। वोला, "किस जात की है ?"

"और कौन-सी जात···ब्राह्मण। स्वजाति।"

"फांसी के मुजरिम को दामाद वनाने को राजी हो गया ?"

मल्लिकजी अव तपेश गांगुली की वात से ऊव गए।

वोले, "राजी क्यों नहीं होगा ? रुपया देने से क्या नहीं होता है ?"

तपेश गांगुली वोला, "लगता है मेरे जैसे अभागे आदमी दुनिया में और भी हैं।"

इस पर भी तपेश गांगुली को वैठा हुआ देखकर मल्लिकजी वोले, "अव आप दफा हो जाइए। यहां वैठे-वैठे वक्त वर्वाद करने से क्या होगा ? सोचने से तो कोई रास्ता नहीं निकलेगा।"

तपेश गांगुली ने अव वाकई रोना शुरू कर दिया है।

मल्लिकजी को थोड़ी-सी दया हुई।

वोले, "सोच-सोचकर तवीयत खराव करने से फायदा ही क्या ? अव आप घर चले जाइए—"

तपेश गांगुली ने कहा, "और किसी फांसी के मुजरिम का पता है आपके पास ?"

मल्लिकजी ने कहा, "फिलहाल कोई जानकारी नहीं है। वाद में पता चलेगा तो आपको सूचित करूंगा।"

"सचमुच सूचित कीजिएगा ?"

"हां, निश्चय ही।"

तपेश गांगुली वोला, "आप व्यस्त आदमी हैं, मुझे सूचना देना भूल जाइएगा। इससे अच्छा यही रहेगा कि मैं ही वीच-वीच में आपके पास आकर पता लगाता रहूं।···और एक वात···"

"क्या ? कहिए।"

तपेश गांगुली वोला, "अगर तीन लाख न भी दे तो मैं दो लाख में राजी हो जाऊंगा। आदमी की तकदीर वहुत खराव होती है तो वह लड़की का वाप होता है।" यह कहकर रूमाल से अपनी आंखें पोंछ लीं।

उसके वाद फिर वोला, "अव सोचता हूं, शादी क्यों की मैंने। न करता तो मेरी यह लड़की पैदा नहीं हुई होती और लड़की के लिए मुझे इतने आदमी के पैर पकड़ रोना-विलखना भी नहीं पड़ता। आपने शादी न करके वहुत ही अच्छा किया है मैनेजर साहव। आप वच गए। हां, आप परेशानी से वच गए···"

मल्लिकजी ने कहा, "अरे, यह तो भारी मुसीवत में फंस गया! उठिए-उठिए, मुझे अपना काम-काज करना है। उठिए।"

सतीश गांगुली तो भी कहने लगा, "और भगवान ने यदि लड़की ही दी तो रुपया क्यों नहीं दिया ? जेब में पैसा क्यों नहीं दिया ?"

अब मल्लिकजी बरदाश्त नहीं कर सके। गिरिधारी को पुकारा। गिरिधारी जैसे ही आया, बोले, "गिरिधारी, इन्हें घर से बाहर निकाल दो, एकदम से गेट के बाहर।"

हरेक बैंक की तरह गदीप वगैरह के नेशनल बैंक में भी 'सेफ डिपॉजिट वोल्ट' नामक एक वस्तु थी। बैंक के जो लोग पृष्ठपोषक और डिपोजिटर हैं वे अपने कीमती कागजात, दस्तावेज, सोने की छड़ें, हीरे-जवाहरात उसके अन्दर छिपाकर रखते। कीमती चीजों के लिए यह एक निरापद स्थान है। वहां बाहरी लोगों को जाने की मनाही है। उसके लिए सभी जगह एक निश्चित मूल्य लागू है।

हरेक आदमी के मन के अन्दर भी उसी तरह का एक सेफ डिपॉजिट वोल्ट रहता है। वहां की छिपी सपत्ति का ब्योरा बाहरी आदमी को जानने का अधिकार नहीं है। वहां स्वयं के अलावा अन्य किसी का प्रवेश वर्जित है।

संदीप के मन में भी उसी किस्म का एक सेफ डिपोजिट वोल्ट था। वहां की खबर से उसकी मां भी अनभिज्ञ थी। लेकिन अब ?

अब तो उसकी शादी होने जा रही है। अब भी वह क्या अपने मन के सेफ डिपोजिट-वोल्ट की सुरक्षितता बरकरार रख सकेगा ? यानी विशाखा क्या सचमुच ही उसके सुख-दुख की भागीदार हो सकेगी, उसे अपने वास्तविक सुख-दुख की भागीदार बनाने से उसके उस सेफ डिपोजिट वोल्ट की सुरक्षितता में बाधा पहुंच सकती है, उस पर से उसका एकाधिकार समाप्त हो जा सकता है। आश्चर्य ! जब वह अपने एकाधिकार स्वत्व के लोप होने के भय से सिहर उठा था, उस समय भी उसे मालूम नहीं था कि निकट भविष्य में और कितनी बड़ी दहशत उसे अपने शिकंजे में फंसाने के लिए मौके की तलाश में है।

याद है, मालव्यजी ने बार-बार कहा था, "शादी के समय लोगों को खिलाने-पिलाने का आयोजन मत करना। ठीक है न ? वचन दे रहे हो न ?"

इस बात का उत्तर देने में संदीप को शुरू में थोड़ी-बहुत दुविधा महसूस हुई थी।

मालव्यजी ने इसके बाद कहा था, "याद रखना, और-और लोगों की तरह तुम्हारी यह शादी भोग के लिए नहीं, आत्मदान के लिए है। आत्मदान के माध्यम से ही तुम्हें अपनी तृप्ति का आस्वादन प्राप्त करना है। पाना नहीं, देना है। यह इस तरह का देना है जिससे पाने का कोई संबंध नहीं। तुम इस संसार में पाने के लिए नहीं, सिर्फ देने के लिए आए हो।"

मामूली एक बैंक के मैनेजर हैं वे। साधु-महात्मा या महापुरुष नहीं। साधारण चेहरे के आदमी में इस तरह का असाधारण मन छिपा हुआ रहता है, संदीप ने यह अपने परवर्ती जीवन में बहुत देखा है। संदीप के लिए यह एक सौभाग्य की बात है कि नौकरी के प्रारंभिक दौर में उसे इस तरह का एक शुभैषी मिला था।

खिलाने-पिलाने की बात ही नहीं, गहना या बनारसी साड़ी की भी विलासिता

"ती-न ला-ख ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, चार लाख मांग रहा था, बहुत दर-दाम और खींच-तान करने पर तीन लाख में राजी हो गया। मैंने भी उन्हें तीन लाख दे दिया।"

"उसके बाद ?"

तपेश गांगुली की आवाज़ में तब रुलाई का स्वर फूट पड़ा, "तीन लाख दे दिया—" उसके लहज़े से ऐसा लगा जैसे उसकी कमीज़ के पॉकेट से तीन लाख रुपयें की चोरी हो गई हो। बोला, "किस जात की है ?"

"और कौन-सी जात···ब्राह्मण। स्वजाति।"

"फांसी के मुजरिम को दामाद बनाने को राजी हो गया ?"

मल्लिकजी अब तपेश गांगुली की बात से ऊब गए।

बोले, "राजी क्यों नहीं होगा ? रुपया देने से क्या नहीं होता है ?"

तपेश गांगुली बोला, "लगता है मेरे जैसे अभागे आदमी दुनिया में और भी हैं।"

इस पर भी तपेश गांगुली को बैठा हुआ देखकर मल्लिकजी बोले, "अब आप दफा हो जाइए। यहां बैठे-बैठे वक्त बर्बाद करने से क्या होगा ? सोचने से तो कोई रास्ता नहीं निकलेगा।"

तपेश गांगुली ने अब वाकई रोना शुरू कर दिया है।

मल्लिकजी को थोड़ी-सी दया हुई।

बोले, "सोच-सोचकर तबीयत खराब करने से फायदा ही क्या ? अब आप घर चले जाइए—"

तपेश गांगुली ने कहा, "और किसी फांसी के मुजरिम का पता है आपके पास ?"

मल्लिकजी ने कहा, "फिलहाल कोई जानकारी नहीं है। बाद में पता चलेगा तो आपको सूचित करूंगा।"

"सचमुच सूचित कीजिएगा ?"

"हां, निश्चय ही।"

तपेश गांगुली बोला, "आप व्यस्त आदमी हैं, मुझे सूचना देना भूल जाइएगा। इससे अच्छा यही रहेगा कि मैं ही बीच-बीच में आपके पास आकर पता लगाता रहूं।···और एक बात···"

"क्या ? कहिए।"

तपेश गांगुली बोला, "अगर तीन लाख न भी दे तो मैं दो लाख में राजी हो जाऊंगा। आदमी की तकदीर बहुत खराब होती है तो वह लड़की का बाप होता है।" यह कहकर रूमाल से अपनी आंखें पोंछ लीं।

उसके बाद फिर बोला, "अब सोचता हूं, शादी क्यों की मैंने। न करता तो मेरी यह लड़की पैदा नहीं हुई होती और लड़की के लिए मुझे इतने आदमी के पैर पकड़ रोना-बिलखना भी नहीं पड़ता। आपने शादी न करके बहुत ही अच्छा किया है मैनेजर साहब। आप बच गए। हां, आप परेशानी से बच गए···"

मल्लिकजी ने कहा, "अरे, यह तो भारी मुसीबत में फंस गया ! उठिए-उठिए, मुझे अपना काम-काज करना है। उठिए।"

तपेश गांगुली तो भी कहने लगा, "और भगवान ने यदि लड़की ही दी तो रुपया क्यों नहीं दिया? जेब में पैसा क्यों नहीं दिया?"

अब मल्लिकजी बरदाश्त नहीं कर सके। गिरिधारी को पुकारा। गिरिधारी जैसे ही आया, बोले, "गिरिधारी, इन्हें घर से बाहर निकाल दो, एकदम से गेट के बाहर।"

हरेक बैंक की तरह संदीप वगैरह के नेशनल बैंक में भी 'सेफ डिपोजिट वोल्ट' नामक एक वस्तु थी। बैंक के जो लोग पृष्ठपोषक और डिपोजिटर हैं वे अपने कीमती कागजात, दस्तावेज, सोने की छड़ें, हीरे-जवाहरात उसके अन्दर छिपाकर रखते। कीमती चीजों के लिए वह एक निरापद स्थान है। वहां बाहरी लोगों को जाने की मनाही है। उसके लिए सभी जगह एक निश्चित मूल्य लागू है।

हरेक आदमी के मन के अन्दर भी उसी तरह का एक सेफ डिपोजिट वोल्ट रहता है। वहां की छिपी संपत्ति का ब्योरा बाहरी आदमी को जानने का अधिकार नहीं है। वहां स्वयं के अलावा अन्य किसी का प्रवेश वर्जित है।

संदीप के मन में भी उसी किस्म का एक सेफ डिपोजिट वोल्ट था। वहां की खबर से उसकी मां भी अनभिज्ञ थी। लेकिन अब?

अब तो उसकी शादी होने जा रही है। अब भी वह क्या अपने मन के सेफ डिपोजिट-वोल्ट की सुरक्षितता बरकरार रख सकेगा? यानी विशाखा क्या सचमुच ही उसके सुख-दुख की भागीदार हो सकेगी, उसे अपने वास्तविक सुख-दुख की भागीदार बनाने से उसके उस सेफ डिपोजिट वोल्ट की सुरक्षितता में बाधा पहुंच सकती है, उस पर से उसका एकाधिकार समाप्त हो जा सकता है। आश्चर्य! जब वह अपने एकाधिकार स्वत्व के लोप होने के भय से सिहर उठा था, उस समय भी उसे मालूम नहीं था कि निकट भविष्य में और कितनी बड़ी दहशत उसे अपने शिकंजे में फंसाने के लिए मौके की तलाश में है।

याद है, मालव्यजी ने बार-बार कहा था, "शादी के समय लोगों को खिलाने-पिलाने का आयोजन मत करना। ठीक है न? वचन दे रहे हो न?"

इस बात का उत्तर देने में संदीप को शुरू में थोड़ी-बहुत दुविधा महसूस हुई थी।

मालव्यजी ने इसके बाद कहा था, "याद रखना, और-और लोगों की तरह तुम्हारी यह शादी भोग के लिए नहीं, आत्मदान के लिए है। आत्मदान के माध्यम से ही तुम्हें अपनी तृप्ति का आस्वादन प्राप्त करना है। पाना नहीं, देना है। यह इस तरह का देना है जिससे पाने का कोई संबंध नहीं। तुम इस संसार में पाने के लिए नहीं, सिर्फ देने के लिए आए हो।"

मामूली एक बैंक के मैनेजर हैं वे। साधु-महात्मा या महापुरुष नहीं। साधारण चेहरे के आदमी में इस तरह का असाधारण मन छिपा हुआ रहता है, संदीप ने यह अपने परवर्ती जीवन में बहुत देखा है। संदीप के लिए यह एक सौभाग्य की बात है कि नौकरी के प्रारंभिक दौर में उसे इस तरह का एक शुभैषी मिला था।

खिलाने-पिलाने की बात ही नहीं, गहना या बनारसी साड़ी की भी विलासिता

नहीं करनी है। बस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूब और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की जरूरत है।

यह सुनकर मां वोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तजाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके बाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। बहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सब खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं बल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के बीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहब को बाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, बाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीबाबू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक बिना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुबह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उबटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के बाद उसे बिना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए बगैर तेरा काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की बात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी की बदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उबटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की बात थी। उसका सारा इन्तजाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जब ऑफिस से घर लौटकर आया तो बेला ढल चुकी थी। मां बेचैनी से लड़के का इन्तजार कर रही थी।

बोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोली।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उसकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी की क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उसके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थी। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय समर का कुर्ता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकल जा रहा था।

नहीं करनी है। वस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूब और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की जरूरत है।

यह सुनकर मां वोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तजाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके वाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। वहुत सारे जरूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सव खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं वल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के बीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहव को वाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, वाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीवावू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक विना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुवह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उवटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के वाद उसे विना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए वगैर तेरा काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की जिम्मेदारी की वात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी की वदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उवटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की वात थी। उसका सारा इन्तजाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जव ऑफिस से घर लौटकर आया तो वेला ढल चुकी थी। मां वेचैनी से लड़के का इन्तजार कर रही थी।

वोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी माँ···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोलीं।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी को क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उसके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थीं। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय तसर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

नहीं करनी है। वस, इतना ही करना है जिसके विना काम नहीं चल सकता उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूव और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की ज़रूरत है।

यह सुनकर मां वोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तज़ाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके वाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होनेवाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। वहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सव खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं वल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के वीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहव को वाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, वाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीवावू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक विना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुवह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उवटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के वाद उसे विना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा? आज ऑफिस गए वगैर तेरा काम नहीं चलेगा?"

मां ऑफिस की जिम्मेदारी की वात कैसे समझ सकती है? उसी नौकरी की वदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता!

देह में उवटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की वात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जव ऑफिस से घर लौटकर आया तो वेला ढल चुकी थी। मां वेचैनी से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

वोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला?"

"आज ट्रेन लेट थी माँ···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आँखें खोलीं।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आँखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी को क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उसके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थीं। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। वहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे ?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय तसर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकल जा रहा था।

नहीं करनी है। वस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूव और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की ज़रूरत है।

यह सुनकर मां वोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तज़ाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके वाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। वहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सव खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं वल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के वीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहव को वाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, वाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीवावू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफ़ी रात तक विना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुवह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उवटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के वाद उसे विना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए वगैर तेरा काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की वात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी की वदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उवटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की वात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जव ऑफिस से घर लौटकर आया तो वेला ढल चुकी थी। मां वेचैनी से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

वोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोली।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नही करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूगा। आप चिन्ता नही करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनकी आखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दी।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी को क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उनके पास उतना बोलने का वक्त नही था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थी। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नही। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नही। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहा विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय लगर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

नहीं करनी है। बस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूब और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की ज़रूरत है।

यह सुनकर मां बोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तज़ाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके बाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। बहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सब खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं बल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के बीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहब को बाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, बाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीबाबू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक बिना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुबह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उबटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के बाद उसे बिना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा? आज ऑफिस गए बगैर तेरा काम नहीं चलेगा?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की बात कैसे समझ सकती है? उसी नौकरी की बदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता!

देह में उबटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की बात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जब ऑफिस से घर लौटकर आया तो बेला ढल चुकी थी। मां बेचैनी से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

बोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है?"
यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।
मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोलीं।
संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"
मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।
जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"
मौसीजी की क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उनके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।
यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थी। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।
रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।
मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"
चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।
"कैसे जाओगे?"
संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"
मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"
संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"
वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।
नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय तसर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

नहीं करनी है। बस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूब और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की ज़रूरत है।

यह सुनकर मां बोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तज़ाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके बाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। बहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सब खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं बल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के बीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहब को बाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, बाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीबाबू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक बिना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुबह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उबटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के बाद उसे बिना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए बगैर तेरा काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की बात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी की बदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उबटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की बात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जब ऑफिस से घर लौटकर आया तो बेला ढल चुकी थी। मां बेचैनी से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

बोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोली।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उसकी आंखों से सिर्फ आंसू की धार बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी को क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उसके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थी। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय समर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहने से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

नी है। वस, इतना ही करना है जिसके विना काम नहीं चल सकता।
ण के लिए, फूलों के हार, धान-दूव और एक कुल-पुरोहित और उसकी दक्षिणा भर की ज़रूरत है।

यह सुनकर मां वोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तज़ाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार। वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके वाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा ा, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने ाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। वहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सव खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं वल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के वीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहव को वाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, वाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीवावू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफ़ी रात तक विना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुवह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उवटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के वाद उसे विना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए वगैर तेर काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की वात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी वदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उवटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने वात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख था।

संदीप जव ऑफिस से घर लौटकर आया तो वेला ढल चुकी थी। मां से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

वोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोली।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नही करें। शादी हो जाते ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नही करें। अब आप जल्द-से-जल्द अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उसकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी को क्या समझ में आया, कौन जाने! लेकिन उस समय उसके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकलीफ का अहसास कर रही थी। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ संभाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। कहां विशाखा की शादी एक बहुत ही सुखी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा हो! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? कन्हाई? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय तसर का कुरता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

नहीं करनी है। बस, इतना ही करना है जिसके बिना काम नहीं चल सकता। उदाहरण के लिए, फूलों के हार, धान-दूब और एक कुल-पुरोहित और उसकी उचित दक्षिणा भर की जरूरत है।

यह सुनकर मां बोली थी, "कमला की मां से कहूं कि पुरोहित को बुला लाए ? वे जो-जो कहेंगे उसीके अनुसार इन्तजाम किया जाएगा।"

शादी की तारीख संदीप को आज भी याद है। 13 फागुन, शनिवार।

वह शनिवार छुट्टी का दिन था। उसके बाद ही रविवार। शुक्रवार की आधी रात में शादी होनेवाली थी।

उसे शुक्रवार को ऑफिस आते देखकर हाशिम को आश्चर्य हुआ था। कहा था, "यह क्या सर, आप आज भी ऑफिस आए हैं। आज तो आपकी शादी होने वाली है।"

"शादी तो आज आधी रात में होनेवाली है। बहुत सारे ज़रूरी काम पड़े हुए हैं, इसीलिए आया। वह सब खत्म कर मैं चला जाऊंगा।"

सिर्फ हाशिम ने ही नहीं बल्कि ऑफिस के सभी कर्मचारियों ने उस दिन अपने मैनेजर मिस्टर लाहिड़ी को हैरतभरी निगाहों से देखा था। लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि यह उसका आत्मदान है। यह उसके आत्मदान की शादी है। यह उसका पाना नहीं, आत्मदान है। यह उसका लेना नहीं, देना है। स्वयं को देने के माध्यम से ही अपने जीवन की सार्थकता की साधना करनी है। स्वयं को देने के बीच ही प्रत्येक आदमी के जीवन की सार्थकता निहित है।

दोपहर में ही संदीप हाशिम साहब को बाकी काम समझाकर घर चला गया था। जाने के दौरान कह गया था, "मैं सोमवार को ऑफिस आऊंगा, बाकी काम तुम संभाल लेना।"

कन्यादान का भार काशीबाबू ने पहले ही स्वेच्छा से अपने ऊपर ले लिया था। उस समय वे काफी उम्रदार हो चुके थे। कन्यादान के निमित्त उन्हें काफी रात तक बिना खाना खाए रहना पड़ेगा। दूसरी ओर संदीप को भी सुबह का उजास फैलने के पहले ही जग जाना पड़ा है। उस समय देह में उबटन लगाने का अनुष्ठान हुआ। उस अनुष्ठान के समाप्त होने के बाद उसे बिना खाना खाए ऑफिस चला जाना पड़ा था।

मां ने कहा था, "अरे आज तू ऑफिस जाएगा ? आज ऑफिस गए बगैर तेरा काम नहीं चलेगा ?"

मां ऑफिस की ज़िम्मेदारी की बात कैसे समझ सकती है ? उसी नौकरी की बदौलत ही घर के पांच जनों का खाना-पीना और इलाज का खर्च चल रहा है। ऑफिस की नौकरी न मिली होती तो क्या होता !

देह में उबटन लगाने की सामग्री दोपहर को ही कन्या के घर भेज देने की बात थी। उसका सारा इन्तज़ाम संदीप ने इसके एक दिन पहले ही करके रख दिया था।

संदीप जब ऑफिस से घर लौटकर आया तो बेला ढल चुकी थी। मां बेचैनी से लड़के का इन्तज़ार कर रही थी।

बोली, "आज इतनी देर करनी चाहिए थी भला ?"

"आज ट्रेन लेट थी मां···मौसीजी कैसी है ?"

यह कह सीधे घर के अन्दर जाकर मौसीजी का सिर छूकर देखा।

मौसीजी लेटी हुई थी। संदीप के हाथ का स्पर्श महसूस कर आंखें खोलीं।

संदीप ने मौसीजी के मुंह के सामने अपना मुंह ले जाकर कहा, "मौसीजी, मैं ऑफिस से आ गया हूं। आज मैं विशाखा से शादी करने जा रहा हूं, आप चिन्ता नहीं करें। शादी हो जाने ही मैं आपको डाक्टर के पास ले चलूंगा। आप चिन्ता नहीं करें। अब आप जल्दी-से-जल्दी अच्छी हो जाइए—"

मौसीजी ने इसका प्रत्युत्तर नहीं दिया। उनकी आंखों से सिर्फ आंसू की धारा बहने लगी। संदीप ने जेब से रूमाल निकाल मौसीजी की आंखें पोंछ दीं।

जाने के पहले संदीप बोला, "मैं फिर कह रहा हूं मौसीजी, आप जरा भी चिन्ता न करें। आज आपकी विशाखा से मैं शादी करने जा रहा हूं। मैंने आपकी बात रख ली है। आज ही आपकी विशाखा की शादी है, चटर्जी बाबू कन्यादान करेंगे। विशाखा अभी चटर्जी साहब के घर गई हुई है। वहीं उसी मकान में उसकी शादी होगी। आज आधी रात में हम लोगों की शादी होगी—"

मौसीजी की क्या समझ में आया, कौन जाने ! लेकिन उस समय उनके पास उतना बोलने का वक्त नहीं था।

यह किस तरह की शादी है ! मौसीजी शायद मन-ही-मन तकदीर का अहसास कर रही थीं। कोई बाजा-गाजा नहीं, नौबत-शहनाई की आवाज नहीं। अतिथियों और निमन्त्रितों की भीड़-भाड़ नहीं। कुछेक लोग काम कर रहे हैं, वे ही खाना खाएंगे। कमला की मां अकेले ही सारा कुछ सम्भाल रही है।

रात हुई। तब रात के आठ बज रहे थे फिर भी संदीप मन-ही-मन बेचैनी महसूस कर रहा था। वहां विशाखा की शादी एक बहुत ही खुशी-सम्पन्न घर में होने जा रही थी और आखिर में उद्धार करने का भार संदीप पर पड़ा।

मां ने करीब आकर कहा, "क्यों रे, क्या सोच रहा है? चटर्जी बाबू के घर से आदमी बुलाने आया है। तू देर करेगा तो उन लोगों को खाने-पीने में देर हो जाएगी। जा—"

चटर्जी बाबू के घर जाने में कितना वक्त लगेगा ही ! पांच मिनट से भी कम ही।

"कैसे जाओगे ?"

संदीप ने कहा, "पैदल ही। दूरी तो नाम मात्र की भी नहीं है।"

मां बोली, "ऐसा कहीं होता है? वर क्या कभी पैदल चलकर शादी करने जाता है?"

संदीप ने कहा, "हां-हां जाता है। नाई कहां गया? पुरोहित? और पुरोहित-जी—"

वे लोग तब सचमुच ही तैयार होकर बैठे हुए थे। देर होने से उन्हें भी कष्ट होगा।

नहीं, संदीप अब देर नहीं करेगा। वह भी तुरन्त तैयार हो गया। शादी के समय सूतर का कुर्ता पहनना पड़ता है। वह पहले से ही तैयार था। इसके अलावा रेशमी धोती पहन ली। संदीप उसी स्थिति में बाहर निकलने जा रहा था।

लेकिन मां ने मना किया और कन्हाई नाई को एक रिक्शा बुला लाने कहा।

आखिर में उसी रिक्शे पर सवार होकर संदीप जब पुरोहितजी और कन्हाई के साथ चटर्जी बाबू के मकान में पहुंचा तो रात के नौ बज रहे थे।

काशीबाबू ने अपनी जान-पहचान के कुछ सज्जनों को निमन्त्रित किया था। सभी आ चुके हैं। वे भूखे हैं। अब कितनी देर तक वे लोग इन्तज़ार करेंगे?

रात दस बजे से शुभ विवाह के लग्न का आरम्भ होने का समय है।

काशीबाबू ने दिन-भर उपवास किया है। वे उम्रदार हो चुके हैं। सभी उन्हीं के लिए चिन्तित हैं। लेकिन लड़की का पिता या कोई अभिभावक न होने के कारण उन्होंने स्वेच्छा से यह भार अपने कंधे पर ले लिया है।

काशी बाबू ने कहा, "अब देर मत कीजिए पुरोहितजी, शुरू कर दीजिए—"

वर की वेश-भूषा धारण कर संदीप अन्दर गया। मुहल्ले की लड़कियों ने मंगल-ध्वनि से वर की अभ्यर्थना की। एक साथ ही बहुत सारे शंख भी बज उठे।

चटर्जी-गृहिणी ने शाम के समय विशाखा का साज-शृंगार कर दिया है। पूरे चेहरे पर चंदन की बिंदी उकेर दी है। चटर्जी-गृहिणी ने अपने रुपये से विशाखा के लिए बनारसी साड़ी खरीदकर उसे पहना दी है। विशाखा की मां की बहुत सालों की साध आज पूरी होनेवाली है। संदीप भी इसलिए निश्चिन्त है कि उसने मौसीजी को जो वचन दिया था, उसे आज पूरा करने जा रहा है।

तमाम स्त्रियोचित आचार-विचारों का निर्वाह बखूबी हो गया। इसके बाद कन्यादान की बारी है।

काशी बाबू कन्यादान करने बैठ गए। उनके एक बाजू में विशाखा है और दूसरे में संदीप। और उनके रूबरू हैं कुल-पुरोहित निवारण भट्टाचार्य।

तैयारी करते रात के तकरीबन दस बज गए।

थोड़ी देर पहले संदीप से विशाखा की शुभ दृष्टि का अनुष्ठान समाप्त हो चुका है।

शुभ दृष्टि तो महज़-रस्म अदायगी के लिए है। कहा जा सकता है, जिस दिन संदीप मल्लिकजी के साथ विशाखा वगैरह के खिदिरपुर के घर गया था, उसी दिन उन लोगों की शुभ दृष्टि की रस्म पूरी हो चुकी थी। उस दिन उसने कल्पना भी नहीं की थी कि किसी दिन उसी से शादी कर उसे ही गोद की लक्ष्मी बनाएगा। किसी दिन जिस सेफ डिपोजिट वोल्ट को खोल उसने अपने अन्तर्मन की समस्त आशा-आकांक्षा-अभिलाषा-कामना को सबकी दृष्टि से बचाकर संचित करके रखा था, उसकी चाबी एक दिन विशाखा को ही थाम देनी होगी।

संदीप और विशाखा हाथ से हाथ मिलाकर मंत्रोच्चार करने जा ही रहे थे कि यह दुर्घटना घटित हुई। उसके जीवन की चरमतम दुर्घटना।

और वह ऐसी दुर्घटना थी जो दुनिया के इतिहास में शायद ही किसी के जीवन में घटित हुई हो।

अब उसे लगता है, उसके जीवन में वह दुर्घटना घटी ही तो अच्छा ही हुआ। वह न घटी होती तो वह दुनिया को अच्छी तरह पहचान नहीं पाता। इस दुनिया में देने में जो इतना सुख और पाने में इतना दुख है, इसका अहसास उसे कैसे हो पाता?

अच्छा ही हुआ कि उस दिन वह दुर्घटना घटित हुई। और थोड़ी देर बाद घटती तो उसका सर्वनाश हो गया होता। याद है, तब कन्यादान की रस्म पूरी नहीं हुई थी। उसके पहले ही बाहर शोरगुल मच गया था।

"यहां संदीप नामक कोई व्यक्ति नहीं रहता? यही संदीप लाहिड़ी का मकान है न? हरिपद लाहिड़ी के लड़के संदीप लाहिड़ी का?"

संदीप की मां गाड़ी की आवाज सुनकर बाहर आई थी?

उन्हें देखकर मल्लिकजी ने पहचान लिया। बोला, "मैं परमेश मल्लिक हूं भाभीजी। भाभीजी, मैं संदीप की तलाश में आया हूं। वह कहां है?"

मां बोली, "वह तो अभी घर पर नहीं है देवरजी। आज उसकी शादी है।"

"शादी? शादी करने कहां गया है? कलकत्ता?"

मां बोली, "नहीं देवरजी, काशी बाबू के घर में। आप तो उन लोगों को पहचानते हैं।"

"यहीं विशाखा और उसकी मां रहती थीं न? वे लोग क्या अब भी घर में हैं?"

मां बोली, "नहीं, उसी विशाखा से मुन्ना की आज शादी हो रही है। काशी बाबू के घर में अब कन्यादान की रस्म शायद शुरू हो गई होगी—"

"यह क्या? फिर तो सर्वनाश हो जाएगा।"

यह कहकर मल्लिकजी ने ड्राइवर को गाड़ी घुमाने कहा। साथ में और भी तीन गाड़ियां थीं। मल्लिकजी जिस गाड़ी में बैठे थे उसमें पीछे की तरफ एक बूढ़ी महिला भी बैठी हुई थीं। वे काफी उम्रदार हैं, देखने से ऐसी लगीं।

उस गाड़ी के पीछे और दो गाड़ियां खड़ी थीं। उन गाड़ियों में बहुत सारे पुलिसकर्मी थे। दोनों गाड़ियां मल्लिकजी के पीछे-पीछे चलने लगीं। मल्लिकजी एकाएक गाड़ी लिए बेडापोता क्यों आए हैं? गाड़ी में बैठी हुई वह महिला कौन है?

विवाह-घर तो है जरूर, मगर अभी मां और मौसीजी के सिवा और कोई यहां नहीं है। सभी चटर्जी बाबू के घर चले गए हैं। वहीं वे लोग विवाह-घर के भोज में शरीक होंगे। संदीप की मां को एक किस्म के भय ने दबोच लिया। कहीं कोई अनहोनी घटित न हो जाए! अचानक इतने बरसों बाद देवरजी इस घर में क्यों आए? और आए भी तो साथ में पुलिस का दल क्यों ले आए?

बगल के कमरे में जाते ही विशाखा की मां ने पूछा, "तुम किससे बातें कर रही थीं? कौन आया था?"

मां बोली, "मल्लिकजी।"

"मल्लिकजी? कलकत्ता के मुखर्जी-भवन के मैनेजर साहब?"

"हां।"

विशाखा की मा ने पूछा, "वे लोग अचानक अभी क्यों आए थे? क्या पूछ रहे थे?"

मां बोली, "पूछ रहे थे कि विशाखा और उसकी मां इस घर में है या नहीं। मैंने कहा, आज विशाखा की शादी हो रही है। विशाखा चटर्जी बाबू के विवाह-घर में है। यह कहने पर वे लोग रुके नहीं। तुरन्त गाड़ी घुमाकर चटर्जी बाबू के

मकान की ओर चले गए। साथ में दो गाड़ियों में पुलिस के आदमी थे।"

"पुलिस ? पुलिस क्यों ? पुलिस क्या करने आई है ?"

मां बोली, "कौन जाने, पुलिस क्या करने आई है !"

यह कहकर मां मन ही मन इष्ट नाम का जप करने लगी---"हे प्रभु, तुम मुन्ना का मंगल करो। मेरे अलावा मुन्ना का कोई नहीं है। वह बड़ा ही दुखी है। तुम्हीं आदमी के दुख का हरण करते हो, इसीलिए तो तुम्हारा एक दूसरा नाम है दुःखहरण। मेरे मुन्ना का भला करो प्रभु ! भला करो ! उसने कोई दोष नहीं किया है, उसने किसी की कोई हानि नहीं की है। उसका विवाह अच्छी तरह हो जाए प्रभु···"